॥ श्रीवीतरागाय नमः ॥

स्वर्गीय पंडित दौलतरामजी कृत

श्रीपद्मपुराणजी भाषा वचनिका

(मूलग्रन्थ–कर्ता श्रीमद्–रविषेणाचार्य)

भाषाकारका मंगलाचरण ।

दोहा ।

चिदानन्द चैतन्यके, गुण अनन्त उर धार । भाषा पद्मपुराणको, भाषूं श्रुति अनुसार ॥१॥
पंच परमपद पद प्रणमि, प्रणमि जिनेश्वरबानि । नमि जिनप्रतिमा जिनभवन जिनमारग उर आनि ॥२॥
ऋषभ अजित संभव प्रणमि, नमि अभिनन्दन देव । सुमति जु पद्म सुपार्श्व नमि,करि चन्द्रप्रभ सेव ॥३॥
पुष्पदंत शीतल प्रणमि, श्री श्रेयांसको ध्याय । वासुपूज्य विमलेश नमि, नमि अनंतके पाय ॥४॥
धर्म शांति जिन कुन्थु नमि और मल्लि यशगाय । मुनिसुव्रत नमि नेमि नमि, नमि पारसके पाय ॥५॥
वर्द्धमान वरवीर नमि, गुरुगौतम मुनि वंद । सकल जिनंद मुनिन्द नमि, जैनधर्म अभिनन्द ॥६॥
निर्वाणादि अतीत जिन, नमों नाथ चौवीस । महापद्म परमुख प्रभू, चौवीसों जगदीश ॥७॥

होंगे तिनको वंदिकर, द्वादशांग उरलाय। सीमंधर आदिक नमूं, दश दूने जिनराय ॥ ८ ॥
विहरमान भगवान ये, क्षेत्र विदेहमझारि। पूजैं जिनको सुरपती, नागपती निरधार ॥ ९ ॥
द्वीप अढाईकेविषै, भये जिनेन्द्र अनंत। होंगे केवलज्ञानमय, नाथ अनंतानंत ॥१०॥
सबको वंदन कर सदा, गणधर मुनिवर ध्याय। केवलि श्रुतिकेवलि नमूं, आचारज उवझाय ॥११॥
वंदूं शुद्ध स्वभावको, धर सिद्धनको ध्यान। संतनको परणाम कर, नमि दृग व्रत निज ज्ञान ॥१२॥
शिवपुरदायक सुगुरु नमि, सिद्धलोक यश गाय। केवल दर्शन ज्ञानको, पूजूं मन वच काय ॥१३॥
यथाख्यातचारित्र अरु, क्षपकश्रेणि गुण ध्याय। धर्म शुक्ल निज ध्यानको, वंदूं भाव लगाय ॥१४॥
उपशम वेदक क्षायिका, सम्यग्दर्शन सार। कर वंदन समभावको, पूजूं पंचाचार ॥१५॥
मूलोत्तर गुण मुनिनके, पंच महाव्रत आदि। पंच समिति अरु गुप्तित्रय, ये शिवमूल अनादि ॥१६॥
अनित्य आदिक भावना, सेऊं चित्त लगाय। अध्यातम आगम नमूं, शांतिभाव उरलाय ॥१७॥
अनुप्रेक्षा द्वादश महा, चितवैं श्रीजिनराय। तिनकी थुति करि भावसों, षोडशकारण ध्याय ॥१८॥
दशलक्षणमय धर्मकी, धर सरधा मनमांहि। जीवदया सत् शील तप, जिनकर पाप नसांहि ॥१९॥
तीर्थंकर भगवानके, पूजूं पांच कल्याण। अवर केवलिनको नमूं, केवल अरु निर्वाण ॥२०॥
श्रीजिनतीरथक्षेत्रनमि, प्रणमि उभयविध धर्म। थुतिकर चउविध संघकी, तजकर मिथ्या भर्म ॥२१॥
वंदूं गौतम स्वामिके, चरण कमल सुखदाय। वंदूं धर्म मुनींद्रको, जंबू केवलि ध्याय ॥२२॥
भद्रबाहुको कर प्रणति, भद्र भाव उरलाय। वंदि समाधि सुतंत्रको, ज्ञानतणे गुणगाय ॥२३॥
महाधवल अरु जयधवल, तथा धवल जिनग्रंथ। वंदूं तन मन वचन कर, जे शिवपुरके पंथ ॥२४॥
षट्पाहुड नाटक जु त्रय, तत्त्वारथसूत्रादि। तिनको वंदूं भाव कर, हरैं दोष रागादि ॥२५॥

गोमटसार अगाध श्रुत, लब्धिसार जगसार। क्षपणसार भवताप है, योगसार रसधार ॥२६॥
ज्ञानार्णव है ज्ञानमय, नमूं ध्यानका मूल। पद्मनंदिपच्चीसिका, करै कर्म उन्मूल ॥२७॥
यत्याचार विचार नमि, नमूं श्रावकाचार। द्रव्यसंग्रह नयचक्र फुनि, नमूं शांति रसधार ॥२८॥
आदिपुराणादिक सबै, जैनपुराण बखान। वंदू मन वच काय कर, दायक पद निर्वान ॥२९॥
तत्त्वसार आराधना, –सार महारस धार। परमातमपरकाशको, पूजूं बारंबार ॥३०॥
बंदु विशाखाचार्यवर, अनुभवके गुणगाय। कुन्दकुन्दपद धोक दे, कहूं कथा सुखदाय ॥३१॥
कुमुदचंद अकलंक नमि, नेमिचंद्र गुण ध्याय। पात्रकेशरीको प्रणमि, समंतभद्र यशगाय ॥३२॥
अमृतचंद्र यतिचंद्रको, उमास्वामिको वंद। पूज्यपादको कर प्रणति, पूजादिक अभिनंद ॥३३॥
ब्रह्मचर्यव्रत बंदिकर, दानादिक उरलाय। श्रीयोगीन्द्रमुनींद्रको, वंदू मन वच काय ॥३४॥
वंदू मुनि शुभचंद्रको, देवसेनको पूज। करि वंदन जिनसेनको, जिनके सम नहिं दूज ॥३५॥
पद्मपुराणनिधानको, हाथ जोड़ि सिरनाय। ताकी भाषा वचनिका, भाखूं सब सुखदाय ॥३६॥
पद्मनाम बलभद्रका, रामचंद्र बलभद्र। भये आठवें धार नर, धारक श्रीजिनमुद्र ॥३७॥
तापीछे मुनिसुव्रतके, प्रगटे अतिगुणधाम। सुरनरवंदित धर्ममय, दशरथके सुत राम ॥३८॥
शिवगामी नामी महा, –ज्ञानी करुणावंत। न्यायवंत बलवंत अति, कर्महरण जयवंत ॥३९॥
जिनके लक्ष्मण वीर हरि, महाबली गुणवंत। भ्रातृभक्त अनुरक्त अति, जैनधर्म यशवंत ॥४०॥
चंद्र सूर्यसे वीर ये, हरैं सदा परपीर। कथा तिनोंकी शुभमहा, भाषी गौतम धीर ॥४१॥
सुनी सबै श्रेणिक नृपति, धर सरधा मनमाहिं। सो भाषी रविषेणने, यामैं संशय नाहिं ॥४२॥
महा सती सीता शुभा, रामचंद्र की नारि। भरत शत्रुघन अनुज हैं, यही बात उरधारि ॥४३॥

तद्भव शिवगामी भरत, अरु, लवअंकुश पूत । मुक्त भये मुनिवरत धरि, नमैं तिनै पुरहूत ॥४४॥
रामचंद्र को करि प्रणति, नमि रविषेण ऋषीश । रामकथा भाखूं यथा, नमि जिनश्रुति मुनिईश ॥४५॥

संस्कृत ग्रंथकारका मंगलाचरण ।

सिद्धं संपूर्णभव्यार्थं सिद्धेः कारणमुत्तमम् । प्रशस्तदर्शनज्ञानचारित्रप्रतिपादनम् ॥१॥
सुरेन्द्रमुकुटाश्लिष्टपादपद्मांशुकेसरम् । प्रणमामि महावीरं लोकत्रितयमंगलम् ॥२॥

अर्थ--सिद्ध कहिये कृतकृत्य हैं और सम्पूर्ण भए हैं सर्व सुन्दर अर्थ जिनके, अथवा भव्य जीवोंके सर्वअर्थ पूर्ण करैं हैं, आप उत्तम अर्थात् मुक्त हैं, औरोंको मुक्तिके कारण हैं। प्रशंसायोग्य दर्शन ज्ञान और चारित्रके प्रकाशनहारे हैं। बहुरि सुरेंद्रके मुकुटकर पूज्य हैं किरणरूप केसर ताकों धरें चरणकमल जिनके, ऐसे भगवान महावीर, तीन लोकके प्राणियोंका मंगलरूप हैं, तिनको नमस्कार करूं हूं।

भावार्थ--सिद्धि कहिए मुक्ति अर्थात् सर्व बाधारहित, उपमारहित, अनुपम अविनाशी जो सुख ताकी प्राप्तिके कारण श्रीमहावीर स्वामी जो काम, क्रोध, मान, मद, माया, मत्सर, लोभ, अहंकार, पाखंड, दुर्जनता, क्षुधा, त्रिषा, व्याधि, वेदना, जरा, भय, रोग, शोक, हर्ष, जन्म, मरणादि रहित हैं। शिव कहिये अविनश्वर हैं, द्रव्यार्थिकनयसे जिनकी आदि भी नाहीं और अंत भी नाहीं, अछेद्य अभेद्य क्लेशरहित, शोकरहित, सर्वव्यापी, सर्वसम्मुख, सर्व विद्याके ईश्वर हैं। यह उपमा औरोंको नाहीं बने है। जो मीमांसक, सांख्य, नैयायिक, वैशेषिक, बौद्धादिक मत हैं तिनके कर्त्ता जैमिनि, कपिल, काणभिक्ष, अक्षपाद, कणादबुद्ध हैं वे मुक्तिके कारण नाहीं। जटा मृगछाला वस्त्र

अस्त्र शस्त्र स्त्री रुद्राक्ष कपालमाला के धारक हैं और जीवोंके दहन घातन छेदनविषै प्रवृत्त हैं। विरुद्ध अर्थ कथन करनेवाले हैं। मीमांसी तो धर्म का अहिंसा लक्षण बताय हिंसाविषै प्रवृत्ते हैं और सांख्य जो हैं सो आत्माको अकर्ता और निर्गुण भोक्ता मानै है और प्रकृतिहीको कर्त्ता माने हैं। और नैयायिक वैशेषिक आत्माको ज्ञान रहितजड़ माने हैं। और जगतकर्त्ता ईश्वर मानै हैं। और बौद्ध क्षण-भंगुर मानै हैं। शून्यवादी शून्य मानै है। और वेदान्तवादी एक ही आत्मा त्रैलोक्यव्यापी नर नारक देव तिर्यंच मोक्ष सुख दुःखादि अवस्था विषै माने हैं। तातैं ये सर्व ही मुक्तिके कारण नाहीं। मोक्षका कारण एक जिनशासन ही है जो सर्व जीवमात्रका मित्र है। और सम्यग्दर्शन, ज्ञान, चारित्र का प्रकट करने वाला है। ऐसे जिनशासनको श्रीवीतराग देव प्रकट कर दिखावैं हैं। कैसे हैं श्रीवर्द्धमान, वीतरागदेव ? वह सिद्ध कहिये जीवनमुक्त हैं और सर्व अर्थकरि पूर्ण हैं, मुक्तिके कारण हैं, सर्वोत्तम हैं और सम्यक्दर्शन ज्ञान-चारित्रके प्रकाशनहारे हैं। बहुरि कैसे हैं ? इंद्रनिके मुकुटनिकर स्पर्शे गये हैं चरणारविंद जिनके ऐसे श्रीमहावीर वर्द्धमान सन्मतिनाथ अंतिम तीर्थंकर तिनकूं नमस्कार करूं हूं। तीनलोकके सर्व प्राणियों को महामंगलरूप हैं, महा योगीश्वर हैं, मोहमल्लके जीतनहारे हैं, अनंत बलके धारक हैं, संसारसमुद्रविषै डूबरहे जे प्राणी तिनके उद्धार करनहारे हैं। शिव, विष्णु, दामोदर, त्र्यम्बक, चतुर्मुख बुद्ध, ब्रह्मा, हरि, शंकर, रुद्र, नारायण, हर, भास्कर, परममूर्ति इत्यादि जिनके अनेक नाम हैं तिनको शास्त्र की आदिविषै महा मंगलके अर्थि सर्व विघ्नके विनाशवे निमित्त मन वचन कायकर नमस्कार करूं हूं।

इस अवसर्पिणीकालमें प्रथम ही भगवान श्रीऋषभदेव भए, सर्व योगीश्वरनिके नाथ, सर्व विद्याके निधान स्वयम्भू तिनको हमारा नमस्कार होहु। जिनके प्रसाद कर अनेक भव्यजीव

भवसागरसे तिरे। बहुरि दूजा श्रीअजितनाथस्वामी, जीते हैं बाह्य अभ्यंतर शत्रु जिन्होंने, हमको रागादिक रहित करहु। अर तीजे संभवनाथ, जिनकरि जीवनको सुख होय और चौथे श्रीअभिनंदन स्वामी आनंदके करनहारे हैं, अर पांचवें सुमति के देनहारे सुमतिनाथ मिथ्यात्वके नाशक हैं और छठे श्रीपद्मप्रभ, ऊगते सूर्यकी किरणों कर प्रफुल्लित कमलके समान हैं प्रभा जिनकी, अर सातवें श्रीसुपार्श्वनाथस्वामी सर्वके वेत्ता सर्वज्ञ सबनिके निकटवर्ती ही हैं। बहुरि शरद की पूर्णमांसीके चंद्रमा समान है प्रभा जिनकी ऐसे आठवें श्रीचंद्रप्रभ, ते हमारे भवताप हरो। बहुरि प्रफुल्लित कुन्दके पुष्प समान उज्ज्वल हैं दंत जिनके ऐसे नवमे श्रीपुष्पदंत जगतके कंत हैं और दशवें शीतलनाथ शुक्ल-ध्यानके दाता परमइष्ट, ते हमारे क्रोधादिक अनिष्ट हरो। अर जीवनिकूं सकल कल्याण के कर्त्ता धर्मके उपदेशक ग्यारहवें श्रीश्रेयासनाथ स्वामी ते हमको परम आनंद करो। अर देवनिकूं पूज्य संतोंके ईश्वर कर्म शत्रुओं के जीतनेहारे बारहवें श्रीवासुपूज्य स्वामी ते हमको निज वास देवो, और संसारके मूल जो रागादि मल तिनसे अत्यंत दूर ऐसे तेरहवें श्रीबिमलनाथ देव, ते हमारे कर्मकलंक हरो, अर अनंत ज्ञानके धरनहारे, सुन्दर है दर्शन जिनका ऐसे चौदहवें श्रीअनन्तनाथ देवाधिदेव हमको अनंतज्ञानकी प्राप्ति करो। और धर्म की धुराके धारक पन्द्रहवें श्रीधर्मनाथ स्वामी हमारे अधर्मको हरकर परम धर्म की प्राप्ति करो। बहुरि जीते हैं ज्ञानावरणादिक शत्रु जिन्होंने ऐसे सोलहवें श्रीशांतिनाथ परमशांत हमको शांतभावकी प्राप्ति करो। अर कुंथु आदि सर्व जीवोंके हितकारी सतरहवें श्रीकुंथुनाथ स्वामी हमको भ्रमरहित करो। समस्त क्लेशसे रहित मोक्षके मूल अनन्त सुखके भण्डार अठारहवें श्रीअरनाथ स्वामी कर्मरजरहित करो। संसार के तारक मोहमल्लके जीतने हारे बाह्याभ्यन्तर मलरहित ऐसे उन्नीसवें श्रीमल्लिनाथ स्वामी ते अनन्तवीर्यकी प्राप्ति करो। अर भले

वृतोंके उपदेशक समस्त दोषोंके विदारक बीसवें श्रीमुनिसुव्रतनाथ जिनके तीर्थविषै श्रीरामचन्द्रका शुभचरित्र प्रगट भया ते हमारे अव्रत मेट महाव्रतकी प्राप्ति करो। और नम्रीभूत भये हैं सुर नर असुरोंके इन्द्र जिनको ऐसे इक्कीसवें श्रीनमिनाथ प्रभु ते हमको निर्वाणकी प्राप्ति करो। अर समस्त अशुभकर्म, तेई भये अरिष्ट तिनके काटिवेंकू चक्रकी धारा समान बाईसवें श्रीअरिष्टनेमि भगवान् हरिवंशके तिलक श्रीनेमिनाथ स्वामी ते हमको यम नियमादि अष्टांग योग सिद्धि करो और तेईसवें श्रीपार्श्वनाथ देवाधिदेव इन्द्र नागेन्द्र चन्द्र सूर्य्यादिक कर पूजित हमारे भव सन्ताप हरो। अर चौबीसवें श्रीमहावीर स्वामी जो चतुर्थकालके अन्तमें भये हैं ते हमारे महा मंगल करो। और भी जो गणधरादिक महामुनि तिनको मन, वचन, काय कर बारम्बार नमस्कार कर श्रीरामचन्द्रके चरित्र का व्याख्यान करूं हूं।

कैसे हैं श्रीराम? लक्ष्मीकर आलिंगित है हृदय जिनका और प्रफुल्लित है मुखरूपी कमल जिनका, महापुण्याधिकारी हैं, महाबुद्धिमान् हैं, गुणनके मंदिर हैं, उदार है चरित्र जिनका, जिनका चरित्र केवलज्ञानके ही गम्य है ऐसे जो श्रीरामचन्द्र उनका चरित्र श्रीगणधरदेव ही किंचित् मात्र कहनेको समर्थ हैं। यह बड़ा आश्चर्य है कि—जो हम सारिखे अल्पबुद्धि पुरुष भी उनके चरित्र को कहे हैं। यद्यपि हम सारिखे इस चरित्र को कहने को समर्थ नाहीं तथापि परंपरासे महामुनि जिस प्रकार कहते आए हैं उनके कहे अनुसार कुछ इक संक्षेपता कर कहैं हैं जैसे जिस मार्ग विषैं मदमाते हाथी चालें, तिस मार्ग विषैं मृग भी गमन करैं हैं और जैसे युद्धविषैं महा सुभट आगै होय कर शस्त्रपात करे हैं तिनके पीछैं और भी पुरुष रणविषै जाय हैं, अर सूर्य करि प्रकाशित जे पदार्थ तिनकू नेत्रवारे लोक सुखसू देखे हैं अर जैसे वज्रसूचीके मुख कर भेदी जो मणि उस विषै सूत्र भी

प्रवेश करे हैं तैसै ज्ञानीनकी पंकति कर भाषा हुआ चला आया जो रामसम्बन्धी चरित्र ताके कहनेको भक्ति कर प्रेरी जो हमारी अल्प बुद्धि सो भी उद्यमवती भई है। बड़े पुरुषके चितवन कर उपजा जो पुण्य ताके प्रसाद कर हमारी शक्ति प्रकट भई है, महा पुरुषनके यशकीर्त्तनसे बुद्धिकी वृद्धि होय है और यश अत्यन्त निर्मल होय है और पाप दूर जाय है।

यह प्राणीनका शरीर अनेक रोगोंकर भरा है। इसकी स्थिति अल्पकाल है अर सत्पुरुषकी कथा कर उपज्या जो यश सो जब तक चांद सूर्य्य हैं तब तक रहे हैं। इसलिए जो आत्मवेदी पुरुष हैं वे सर्व यत्नकर महापुरुषनके यश कीर्तनसे अपना अपना यश स्थित करे हैं। जिसने सज्जनोंको आनंदकी देनहारी जो सत्पुरुषनकी रमणीक कथा उसका आरम्भ किया उसने दोनों लोकका फल लिया। जो कान सत्पुरुषन की कथा श्रवण विषै प्रवृत्ते हैं वे ही कान उत्तम हैं और जे कुकथाके सुननेहारे कान हैं वे कान नहीं, वृथा आकारकू धरैं हैं। और जे मस्तक सत्पुरुषनकी चेष्टाके वर्णन विषै घूमे हैं ते ही मस्तक धन्य हैं और जे शेष मस्तक हैं वे थोथे नारियल समान जानने। अर सत्पुरुषनके यशकीर्तन रूप अमृत के आस्वाद विषैं जो रसना प्रवरती सोई धन्य है और रसना दुर्वचनकी बोलन हारी छुरी के अग्रभाग समान जाननी। अर सत्पुरुषनके यशकीर्तन विषै प्रवृत्ते जे होंठ ते ही श्रेष्ठ हैं और जे शेष होंठ हैं ते जोंककी पीठ समान विफल जानने। जे पुरुष सत्पुरुषन की कथाके प्रसंग विषै अनुरागको प्राप्त भये उनहीका जन्म सफल है। और मुख वे ही हैं जो मुख्य पुरुषनकी कथा के विषै रत भये। शेष मुख मलका भरचा दांतरूपी कीडनका बिल समान हैं। और जो सत्पुरुषनकी कथा के वक्ता हैं अथवा श्रोता हैं सो ही पुरुष प्रशंसायोग्य हैं और शेष पुरुष चित्राम समान जानने। गुण और दोषन के संग्रहविषै जे उत्तम पुरुष हैं ते गुणन ही को ग्रहण

करै हैं, जैसे दुग्ध और पानी के मिलाप विषै हंस दुग्ध ही को ग्रहण करै है। और गुण दोषनके मिलाप विषै जे नीच पुरुष हैं ते दोषनही को ग्रहण करै हैं। जैसे गजकै मस्तकविषै मोती मांस दोऊ हैं तिन विषै काग मोती को तज मांस ही को ग्रहण करै हैं। जो दुष्ट हैं ते निर्दोष रचनाको भी दोष रूप देखे हैं, जैसे उल्लू सूर्यके बिम्बको तमाल वृक्षके पत्र समान स्याम देखे है। जे दुर्जन हैं ते सरोवरमें जल आनेका जाली समान हैं, जैसे जाली जल को तज तृण पत्रादि कंटकादिकका ग्रहण करै है तैसे दुर्जन गुणको तज दोषनही को धारै हैं। इसलिये सज्जन और दुर्जनका ऐसा स्वभाव जानकर जो साधु पुरुष हैं ते अपने कल्याणनिमित्त सत्पुरुषनकी कथा के प्रबंध विषैही प्रवृत्त हैं। सत्पुरुषनकी कथाके श्रवणसे मनुष्योंको परम सुख होय है। जे विवेकी पुरुष हैं उनको धर्मकथा पुण्यके उपजावनेका कारण है। सो जैसा कथन श्रीवर्द्धमान जिनेंद्रकी दिव्यध्वनिमें खिरा तिसका अर्थ गौतम गणधर धारते भये। अर गौतमसे सुधर्माचार्य धारते भये। ता पीछे जंबूस्वामी प्रकाशते भये। जंबूस्वामीके पीछे पांच श्रुतकेवली और भए वे भी उसी भांति कथन करते भये। इसी प्रकार महापुरुषनकी परम्पराकर कथन चला आया उसके अनुसार रविषेणाचार्य ब्याख्यान करते भये। यह सर्व रामचन्द्रका चरित्र सज्जन पुरुष सावधान होकर सुनो। यह चरित्र सिद्धपदरूप मंदिरकी प्राप्तिका कारण है और सर्वप्रकारके सुख का देनहारा है। और जे मनुष्य श्रीरामचन्द्रकों आदि दे जे महापुरुष तिनको चितवन करे हैं वे अतिशयकर भावनके समूहकर नम्रीभूत होय प्रमोदकों धरे हैं। तिनका अनेक जन्मोंका संचित किया जो पाप सो नाशको प्राप्त होय है। और जे सम्पूर्ण पुराण का श्रवण करें तिनका पाप दूर अवश्य ही होय, यामें संदेह नाहीं। कैसा है पुराण? चन्द्रमा समान उज्ज्वल है। इसलिये जे विवेकी चतुर पुरुष हैं ते इस चरित्रका सेवन करें। यह चरित्र बड़े पुरुषनिकर सेवन योग्य है।

इस ग्रन्थ विषै ६ महा अधिकार हैं। तिन विषै अवांतर अधिकार बहुत हैं। मूल अधिकारनके नाम कहै हैं। प्रथम ही १ लोकस्थिति, बहुरि २ वंशनिकी उत्पत्ति, पीछे ३ वनविहार अर संग्राम तथा ४ लवणांकुशकी उत्पत्ति ,बहुरि ५ भव निरूपण अर ६ रामचन्द्रका निर्वाण। ते सर्व कथनके वक्ता हैं, जिनको अति वीर कहिये वा महावीर कहिये हैं। रामचरित्रहूके कथनहारे हैं। श्रीवर्धमान देवाधिदेव जातैं ताके कारण श्री महावीर स्वामी हैं, तातैं प्रथम ही तिनका कथन कीजिये है।

विपुलाचल पर्वतके शिखर पर समोसरणविषै श्रीवर्धमान स्वामी विराजे। तहां श्रेणिकराजा गौतमस्वामीसों प्रश्न करते भये। कैसे हैं गौतमस्वामी ? भगवानके मुख्य गणधर हैं, महा महंत हैं, जिनका इन्द्रभूति भी नाम है। आगे श्रीगौतम स्वामी कहै हैं तहां प्रश्न विषै प्रथम ही युगनिका कथन है। बहुरि कुलकरनिकी उत्पत्ति, अकस्मात् चन्द्र सूर्य के अवलोकनतैं जुगलियानिकूं भयका उपजना, सो प्रथम कुलकर प्रतिश्रुतके ऊपदेशतैं भयका दूर होना, बहुरि नाभिराजा अन्तके कुलकर तिनके घर श्रीऋषभदेव का जन्म, सुमेरु पर्वत विषै इंद्रादिक देवनिकर जन्माभिषेक। बहुरि बाललीला अर राज्याभिषेक, कल्प वृक्षनिके वियोगकरि उपज्या प्रजानिकूं दुःख, सो कर्मभूमिकी विधिके बतावने करि दूर होना। बहुरि भगवानका वैराग्य, केवलोत्पत्ति, समोसरनकी रचना, जीवनिकूं धर्मोपदेश बहुरि भगवान का निर्वाणगमन, भरत चक्रवर्ती अर बाहुबलिके परस्पर युद्ध। बहुरि विप्रनकी उत्पत्ति, इक्ष्वाकु आदि वंशनिका कथन, विद्याधरनिका वर्णन, तिनकै वंशविषै राजा विद्युद्दंष्ट्र का जन्म। संजयंत स्वामीकूं विद्युद्दंष्ट्रने उपसर्ग किया सो उपसर्ग सहि करि अंतकृत्केवली होइ करि निर्वाण गये। विद्युद्दंष्ट्रने उपसर्ग किया यह जानि धरणेंद्रने तासूं कोप किया, ताकी विद्या छेद करी। बहुरि श्री अजितनाथ स्वामीका जन्म, पूर्णमेघ विद्याधर भगवानके शरणें आया। राक्षस द्वीपका स्वामी व्यन्तर

देवताने प्रसन्न होइ पूर्णमेघकूं राक्षसद्वीप दिया। बहुरि सगरचक्रवर्तीकी उत्पत्तिका कथन, पुत्रनिके दुःख करि दीक्षा ग्रहण, अर मोक्ष प्राप्ति, पूर्णमेघके वंशविषै महारक्षका जन्म, अर वानरवंशी विद्याधरनिकी उत्पत्तिका कथन, बहुरि विद्युत्केशी विद्याधरका चरित्र, बहुरि उदधिविक्रम अर अमर-विक्रम विद्याधरका कथन, वानरवंशीनिकै किष्किधापुरका निवास, अर अंधक विद्याधरका कथन, श्रीमाला विद्याधरीका संगम, विजयसंघके मरणतैं अशनिवेगके क्रोधका उपजना और सुकेशीके पुत्रनिका लंका आवनेका निरूपण, निर्घात विद्याधरके वधतैं माली नाम विद्याधर रावण के दादेका बड़ा भाई, ताके संपदा की प्राप्ति का कथन, अर विजयार्द्धकी दक्षिणकी श्रेणी विषै रथनूपुर नगरमें इंद्रनामा विद्याधरका जन्म, इंद्र सर्व विद्याधरनिका अधिपति है। इंद्रके अर मालीकै युद्ध विषै मालीका मरण, अर लंकाविषै इंद्रका राज्य अर वैश्रवण नामा विद्याधर का थाणै रहना। अर सुमालीके पुत्र रत्नश्रवाका पुष्पांतक नामा नगर बसावना, अर केकसीका परणना और केकसीके शुभस्वप्नका अवलोकन, रावणका जन्म। अर विद्यानिका साधन, विद्यानिके साधन विषै अनावृत देव आय विघ्न किया तहां रावण का अचल रहना। बहुरि बहुत विद्यानि का सिद्ध होना अर अनावृत देवका वश होना, अपने नगर आय माता पितासूं मिलना, बहुरि अपने पिताका पिता जो राजा सुमाली, ताकूं बहुत आदरसूं बुलावना, बहुरी मंदोदरीका रावणसों विवाह और बहुत राजानिकी कन्याका व्याहना, कुंभकरणका चरित्र, वैश्रवणका कोप, यक्ष अर राक्षस कहावैं ऐसे विद्याधर तिनका बड़ा संग्राम, वैश्रवणका भागना बहुरि तप धरना, अर रावणका लंकामैं कटुम्ब सहित आवना अर सब राक्षसनिकूं धीरज बंधावना, अर ठौर ठौर जिनमंदिरनका निर्मापण करना, अर जिनधर्मका उद्योत करना और श्रीहरिषेण चक्रवर्ती का चरित्र राजा सुमालीने रावणकूं

कह्या सो भावसहित सुनना ।।

कैसा है हरिषेण चक्रवर्तीका चरित्र ? पापनिका नाश करणहारा, बहुरि त्रिलोकमंडण हाथी का वश करना, अर राजा इंद्रका लोकपाल यम नामा विद्याधर ताने वानरवंशीनिका राजा सूर्यरजकूं पकड़कर बंदीखाने डारचा, सो रावण सम्मेदशिखरकी यात्रा करि डेरा आये थे सो सूर्यरजके समाचार सुनि ताही समय गमन करना, अर जाय यमकूं जीतना । यमके थाने उठावना अर यमका भाजना, राजा सूर्यरजकूं बंदीखानेतैं छुडावना अर किष्कन्धापुरका राज्य देना । बहुरि रावणकी बहिन सूर्पनखा ताकूं खरदूषण हरि लेगया सो वाहीकूं परिणाय देना, अर ताहि पाताल लंकाका राज्य देना, सो खरदूषणका पाताललंका जाना अर चंद्रोदरकौं युद्ध विषैं हनना, अर चंद्रोदरकी रानी अनुराधाकूं पतिके वियोगतैं महा दुःखका होना, अर चंद्रोदरके पुत्र विराधितका राज्यभ्रष्ट होइ कहूं का कहूं रहना अर बाल्यका वैराग्य होना, सुग्रीवकूं राज्यकी प्राप्ति अर कैलाशपर्वतविषै बाल्यका विराजना, रावणका बाल्यसूं कोपकरि कैलाश उठावना, अर चैत्यालयनिकी भक्तिके निमित्त बाल्य पगका अंगूठा दाब्या तब रावणका दबिकर रोवना, अर रानीनिकी वीनतीतैं बाली का अंगुष्ठका ढीला करना । अर बाल्यके भाई सुग्रीव का सुतारासूं विवाह अर साहसगति विद्याधर के सुताराकी अभिलाषा हुती सो अलाभतैं संतापका होना अर राजा अनारण्य अर सहसरश्मिका वैराग्य होना, अर रावणने यज्ञ नाश किया ताका वर्णन, अर राजा मधुके पूर्व भवका व्याख्यान, अर रावणकी पुत्री उपरंभाका मधुसों विवाह, अर रावणका इंद्रपर जाना, इंद्रपर विद्याधरकों युद्धकरि जीतना, पकरिकरि लंकामें ल्यावना बहुरि छोड़ना, अर ताका वैराग्य लेय निर्वाण होना अर रावण का प्रताप अर सुमेरु पर्वत गमन बहुरि पाछा आवना, अर अनंतवीर्य मुनिकूं केवलज्ञानकी प्राप्ति, रावणका नेम ग्रहण–जो परस्त्री मोहि न अभिलाषै ताहि मैं न सेवूं बहुरि हनुमानकी उत्पत्ति

कैसे है ? हनुमान बानरवंशीनिविषै महात्मा हैं अर कैलाश पर्वतविषै अंजनीका पिता जो राजा महेन्द्र तानैं पवनंजयका पिता जो राजा प्रह्लाद तासों सम्भाषण किया—जो हमारी पुत्रीका तुम्हारे पुत्रसूं सम्बन्ध करहु । सो राजा प्रह्लादने प्रमाण किया । अंजनीका पवनंजयसूं विवाह होना, बहुरि पवनंजयका अंजनीसों कोप, अर चकवा चकवीके बियोगका वृत्तांत देखि अंजनीसूं प्रसन्न होना, अंजनीके गर्भका रहना । अर हनुमान के पूर्व जन्म वनमें अंजनीकूं मुनि ने कहा । अर हनुमान का गिरिकी गुफाविषै जन्म, बहुरि अनुरुद्ध द्वीपमें वृद्धि, प्रतिसूर्य मामाने अंजनीकूं बहुत आदरसों राखी, बहुरि पवनंजयका भूताटवीविषै प्रवेश अर पवनंजयके हाथी कूं देखि सूर्यका तहां आवना, पवनंजयकूं अंजनीके मिलाप का परम उत्साह होना, पुत्रका मिलाप होना अर पवनंजयका रावणके निकट जाना । अर आज्ञातैं वरुणसूं युद्धकरि ताहि जीतना । रावणके बडे राज्यका वर्णन, तीर्थंकरों की आयु काय अंतरालका वर्णन, बलभद्र, नारायण, प्रतिनारायण, चक्रवर्तीनिके सकल चरित्रका वर्णन । अर राजा दशरथकी उत्पत्ति, अर केकईकूं वरदानका देना, राम, लक्ष्मण, भरत, शत्रुघ्न का जन्म, सीताकी उत्पत्ति, भामंडलका हरण, अर ताकी माताकूं शोकका होना । अर नारदने सीताका चरित्र चित्रपट भामण्डलकूं दिखाया सो देखकर मोहित होना । बहुरि जनककैं स्वयंबर मंडपका वृत्तांत, अर धनुष रतनका स्वयंबर मंडपमें धरना, श्रीरामचन्द्रका आवना, धनुषका चढ़ावना अर सीताकूं विवाहना । अर सर्वभूतशरण्यमुनिके निकट दशरथका दीक्षा लेना । अर भामडण्लकों पूर्व जन्मका ज्ञान होना । अर सीताका दर्शन । बहुरि केकयीके वरतैं भरतका राज्य, अर राम लक्ष्मण सीताका दक्षिण दिशाकूं गमन करना । वज्रकिरणका चरित्र, लक्ष्मणकूं कल्याणमालाका लाभ, अर रुद्रभूतकों वश करना अर बालखिल्यका छुडावना, अर अरुणग्रामविषै श्रीराम आए तहां

वनमें देवतानिने नगर बसाये तहां चौमासे रहना । लक्ष्मणके वनमालाका संगम, अतिवीर्यका वैराग्य, बहुरि लक्ष्मणके जितपद्माकी प्राप्ति, अर कुलभूषण देशभूषण मुनिका चरित्र अर श्रीरामने वंशस्थल पर्वतविषै भगवान के मंदिर कराए तिनका वर्णन, अर जटायु पंखीने नेमकी प्राप्ति, पात्रदानके फलकी महिमा, सम्बुकका मरण, सूर्पनखाका मिलाप, खरदूषणसू लक्ष्मणका युद्ध, सीताका हरण, सीताकू रामके वियोगका अत्यन्त शोक, अर रामकू सीताके वियोगका अत्यन्त शोक बहुरि विराधितविद्याधरका आगमन अर खरदूषणका मरण, अर रतनजटीकैं रावणकरि विद्याका छेद, अर सुग्रीवका रामके निकट आवना, बहुरि सुग्रीवके कारण श्रीरामने साहसगतिको मारचा, अर सीताका वृत्तांत रतनजटीने श्रीरामसू कह्या । श्रीरामका लंका उपरि गमन । राम रावणके युद्ध । राम लक्ष्मणकू सिंहवाहिनी गरुडवाहिनी विद्याकी प्राप्ति । लक्ष्मणके रावणकी शक्तिका लगना, अर विशल्याके प्रसादतैं शक्ति दूर होना, रावणका शांतिनाथके मंदिर विषै बहुरूपिणी विद्याका साधना अर रामके कटकके विद्याधर कुमारनिका लंकाविषैं प्रवेश, अर रावणके चित्तके डिगावनेका उपाय, पूर्णभद्र मानभद्रके प्रभावतें विद्याधर कुमारनिका कटकमें पाछा आवना । रावणकू विद्याकी सिद्धि, बहुरि राम रावणके युद्ध, रावणका चक्र लक्ष्मण के हाथ आवना । अर रावणका परलोक गमन, रावणकी स्त्रीनिका विलाप । बहुरि केवलीका लंकाके वनविषै आगमन । इंद्रजीत कुंभकर्णादिका दीक्षा ग्रहण । अर रावणकी स्त्रीनिका दीक्षा ग्रहण । अर श्रीरामका सीतासू मिलाप । विभीषण के भोजन, कैइक दिन लंकाविषै निवास, बहुरि नारद का रामके निकट आवना । रामका अयोध्यागमन भरतके अर त्रिलोकमंडन हाथी के पूर्व भवका वर्णन । भरतका वैराग्य, राम लक्ष्मणका राज्य अर रणविषै मधुका अर लवणका मरण । मथुराविषै शत्रुघ्नका

राज्य, मथुराविषै अर सकलदेशविषै धरणींद्रके कोपतैं रोगानिकी उत्पत्ति, बहुरि सप्तऋषिनिके प्रभावतैं रोगनिकी निवृत्ति। अर लोकापवादतैं सीताका वनविषैं त्यजन अर वज्रजंघ राजाका वनविषैं आगमन, सीताकूं बहुत आदरतैं ले जाना। तहां लवणांकुशका जन्म। अर लवणांकुश बडे होई अनेक राजानिकूं जीति वज्रजंघके राज्य का विस्तार किया। बहुरि अयोध्या जाय श्रीरामसूं युद्ध किया। अर सर्वभूषण मुनिकूं केवलज्ञानकी प्राप्ति, देवनिका आगमन। सीताके शीलतैं अग्नि-कुण्डका शीतल होना। अर विभीषणके पूर्वभवका वर्णन। कृतांतवक्रका तप लेना। स्वयम्बर मण्डपविषै रामके पुत्रनितैं लक्ष्मणके पुत्रनिका विरोध। बहुरि लक्ष्मणके पुत्रनिका वैराग्य। अर विद्युत्पाततैं भामण्डलका मरण। हनुमान का वैराग्य। लक्ष्मण की मृत्यु। रामके पुत्रनिका तप। श्रीरामकूं लक्ष्मण के वियोगतैं अत्यन्त शोक अर देवतानिके प्रतिबोधतैं मुनिव्रतका अंगीकार, केवल ज्ञानकी प्राप्ति। निर्वाण गमन।

यह सब रामचन्द्रका चरित्र सज्जन पुरुष मनकूं समाधान करिके सुनहु। यह चरित्र सिद्धपदरूप मंदिरकी प्राप्तिका सिवाण है, अर सर्वप्रकार सुखनिका दायक है। श्रीरामचन्द्रको आदि दे जे महामुनि तिनका जे मनुष्य चितवन करै हैं, अर अतिशयपणेकरि भावनिके समूह करि नम्रीभूत होइ प्रमोदकूं धरै हैं तिनका अनेक जन्मनिका संचित जो पाप सो नाश होइ है। सम्पूर्ण पुराणका जे श्रवण करैं तिनका पाप दूर होय ही होय, तामें संदेह कहा? कैसा है पुराण? चन्द्रमा समान उज्ज्वल है। तातैं जो विवेकी चतुर पुरुष हैं ते या चरित्रका सेवन करहु। कैसा है चरित्र? बड़े पुरुषनिकरि सेइवे योग्य है। जैसे सूर्यकरि प्रकाश्या जो मार्ग तांविषै भले नेत्रनिके धारक पुरुष काहेकूं डिगे?

इति श्रीरविषेणाचार्य विरचित पद्मपुराण संस्कृत ग्रन्थ की भाषावचनिकाविषै पीठबंध विधान नामा प्रथम पर्व पूर्ण भया ॥१॥

अथ लोकस्थिति महा अधिकार ।

मगधदेशके राजगृह नगरमें श्रीमहावीर स्वामीके समोसरणका आना और राजा श्रेणिकका श्रीरामचंद्रजीकी कथा पूछना।

जम्बूद्वीपके भरतक्षेत्रमें मगधदेश अति सुन्दर है, जहां पुण्याधिकारी बसै हैं, इन्द्रके लोक समान सदा भोगोपभोग करै हैं, जहां योग्य व्यवहार से लोक पूर्ण मर्यादारूप प्रवृत्ते हैं और जहां सरोवर में कमल फूल रहे हैं और भूमिमें अमृतसमान मीठे सांठेनके बाड़े शोभायमान हैं और जहां नाना प्रकारके अन्नोंके समूहके पर्वत समान ढेर होय रहे, अरहटकी घडीसे सींचे जीरानके धणाके खेत हरित होय रहे हैं, जहां भूमि अत्यन्त श्रेष्ठ है, सर्व वस्तु निपजे हैं। चावलों के खेत शोभायमान और मूंग मौठ ठौर२ फल रहे हैं। गेहूं आदि सर्व अन्नकूं काहू भांति विघ्न नाहीं और जहां भैंसकी पीठपर चढ़े ग्वाला गावें हैं, गऊओंके समूह अनेक वर्णके हैं, जिनके गलेमें घंटा बाजे हैं और दुग्ध झरती अत्यन्त शोभे हैं, जहां दूधमयी धरती होरही है, अत्यन्त स्वादु रसके भरे तृण तिनको चरकर गाय भैंस पुष्ट होय रही हैं और श्याम सुन्दर हिरण हजारों विचरे हैं, मानो इन्द्रके हजारों नेत्र ही हैं। जहां जीवनको कोई बाधा नहीं। जिनधर्मियोंका राज्य है और बनके प्रदेश केतककी धूलिकरि धूसरित होय रहे हैं, फूलों से धवल होय रहे हैं, गंगा के पुलिन समान उज्ज्वल बहुत शोभायमान हैं और जहां केसरकी क्यारी अति मनोहर हैं और जहां ठौर ठौर नारियलके वृक्ष हैं और अनेक प्रकार के शाक पत्रसे खेत हरित होरहे हैं और वनपाल नारेल आदि मेवानका आस्वाद करे हैं और जहां दाडम के बहुत वृक्ष हैं। जहां सूवादि अनेक पक्षी बहुत प्रकार के फल भक्षण करे हैं, जहां बंदर अनेक प्रकार किलोल करे हैं, बिजौराके वृक्ष फल रहे हैं। बहुत स्वादरूप अनेक जाति के फल तिनका रस पीकर

पंखी सुखसों सोय रहे हैं और दाखके मण्डप छाय रहे हैं। जहां वन विषै देव विहार करे हैं, जहां खजूरको पथिक भक्षण करे है, केलाके वन फल रहे हैं। ऊंचे ऊंचे अरजुन वृक्षों के वन सोहे हैं और नदी के तट गोकुलनके शब्दसे रमणीक हैं। नदियोंमें मच्छीनिके समूह किलोल करैं हैं, तरंगके समूह उठे हैं। मानो नदी नृत्य ही करे है और हंसोंके मधुर शब्दों कर मानों नदी गान ही करे है, जहां सरोवरके तीरपर सारस क्रीडा करे हैं और वस्त्र आभरण सुगन्धादि सहित मनुष्योंके समूह तिष्ठे हैं, कमलोंके समूह फूल रहे हैं, और अनेक जीव क्रीडा करे हैं। जहां हंसों के समूह उत्तम मनुष्योंके गुणोंके समान उज्ज्वल सुन्दर शब्द, सुन्दर चालवाले तिनकर वन धवल होय रहा है। जहां कोकिलानके रमणीक शब्द और भंवरोंका गुंजार, मोरोंके मनोहर शब्द, संगीतकी ध्वनि, बीन मृदंगोंका बाजना, इनकरि दशों दिशा रमणीक होय रही हैं और वह देश गुणवंत पुरुषोंसे भरा है, जहां दयावान क्षमावान शीलवान उदारचित्त तपस्वी त्यागी विवेकी आचारी लोग बसे हैं, मुनि विचरैं हैं, आर्यिका विहार करे हैं, उत्तम श्रावक श्राविका बसे हैं। शरदकी पूर्णमासी के चन्द्रमाके समान है चित्तकी वृत्ति जिनकी, मुक्ताफल समान उज्ज्वल हैं। आनन्दके देनेहारे हैं, और वह देश बड़े बड़े गृहस्थीन कर मनोहर है। कैसे हैं गृहस्थी ? कल्पवृक्ष समान हैं, तृप्त किये हैं अनेक पथिक जिन्होंने। जहां अनेक शुभ ग्राम हैं। जिनमें भलेभले किसान बसे हैं, और उस देश विषै कस्तूरी कर्पूरादि सुगन्ध द्रव्य बहुत हैं और भांति भांतिके वस्त्र आभूषणों कर मण्डित नर नारी विचरे हैं, मानो देव देवी ही हैं। जहां जैन वचनरूपी अंजन [सुरमा] से मिथ्यात्वरूपी दृष्टिविकार दूर होवे है। और महा मुनियोंके तप रूपी अग्निसे पाप रूपी वन भस्म होय है। ऐसा धर्मरूपी महा मनोहर मगध देश बसै है ॥

मगधदेश में राजगृह नामा नगर महा मनोहर, पुष्पोंकी वासकर महा सुगन्धित, अनेक सम्पदा कर

भरया है। मानो तीन भुवनका यौवन ही है और वह नगर इन्द्रके नगर समान मनका मोहने वाला है। इन्द्रके नगरमें तो इन्द्राणी कुंकुम कर लिप्त शरीर विचरै है, और इस नगरमें राजा की रानी सुगन्ध कर लिप्त शरीर विचरे हैं। महिषी ऐसा नाम रानीका है, और भैंसका भी है, सो जहां भैंस भी केसरकी क्यारीमें लोटकर केसरसों लिप्त भई फिरे है। और सुन्दर उज्ज्वल घरों की पंक्ति और टाकीनके घड़े सफेद पाषाण तिनकी शिलानिकरि मंदिर बने हैं, मानो चंद्रकांति मणिनका नगर बना है। मुनियोंको तो वह नगर तपोवन भासै है (मालूम होताहै) वेश्याको काम मंदिर। नृत्यकारनीको नृत्यका मंदिर और वैरीको यमपुर है, सुभटको वीरनिका स्थान, याचकनिको चिंतामणि, विद्यार्थीको गुरुगृह, गीतशास्त्रके पाठीको गंधर्व नगर, चतुरनकूं सर्वकला (चतुराई) सीखनेका स्थान और ठगनिको धूर्तनिका मंदिर भासे है। संतनको साधुओंका संगम, व्यापारीको लाभभूमि, शरणागतको वज्रपिंजर, नीतिके वेत्ताको नीतिका मंदिर, कौतुकी (खिलारियों) को कौतुकका निवास, कामिनिको अप्सराओंका नगर, सुखियाको आनन्दका निवास भासे है। जहां गजगामिनी शीलवंती व्रतवंती रूपवंती अनेक स्त्री हैं। जिनके शरीरकी पद्मरागमणिकीसी प्रभा है और चन्द्रकांति मणि जैसा वदन है, सुकुमार अंग हैं, पतिव्रता हैं, व्यभिचारीको अगम्य हैं, महा सौन्दर्य हैं, मिष्ट वचनकी बोलनेहारी हैं, और सदा हर्षरूप मनोहर हैं मुख जिनके और प्रमाद रहित है चेष्टा जिनकी, सामायिक प्रोषध प्रतिक्रमणकी करनेहारी हैं, व्रत नेमादि विषै सावधान हैं, अन्नका शोधन, जलका छानना, पात्रनिकूं भक्तिकरि दान देना और दुखित भुखित जीवको दयाकर दान देना इत्यादि शुभ क्रियामें सावधान हैं। जहां महा मनोहर जिनमंदिर हैं, जिनेश्वरकी भक्ति और सिद्धांतकी चरचा ठौर ठौर है। ऐसा राजगृह नगर बसा है जिसकी उपमा कथनमें न आवे। स्वर्ग लोक तो केवल भोगही का

विलास है, और यह नगर भोग और योग दोनों ही का निवास है। जहां पर्वत समान तो ऊंचा कोट है, और महागम्भीर खाई है, जिसमें वैरी प्रवेश नहीं कर सकते, ऐसा देवलोक समान शोभायमान राजगृह नगर बसे है।

राजगृह नगरमें राजाश्रेणिक राज्य करे है, जो इन्द्र समान विख्यात है। बड़ा योद्धा, कल्याण-रूप है प्रकृति जिसकी। कल्याण ऐसा नाम स्वर्णका भी है और मंगलका भी है। सुमेरु तो सुवर्ण रूप है, और राजा कल्याणरूप है। वह राजा समुद्र समान गम्भीर है, मर्यादा उलंघनका है भय जिसको, कलाके ग्रहणमें चन्द्रमाके समान है, प्रतापमें सूर्य समान है, धन सम्पदामें कुवेरके समान है, शूरवीरपनेमें प्रसिद्ध है, लोकका रक्षक है, महा न्यायवंत है। लक्ष्मीकरि पूर्ण है, गर्वसे दूषित नहीं, सब शत्रुओंको विजय कर बैठा है तथापि शस्त्र (हथियार) का अभ्यास रखता है और जे आपसे नम्रीभूत भये हैं तिनके मानका बढावनहारा है। जे आपतें कठोर हैं तिनके मानका मोडनहारा है। और आपदा विषै उद्वेगचित्त नाहीं, सम्पदा विषै मदोन्मत्त नाहीं। जाकी निर्मल साधुनिविषै रतबुद्धि है, और रत्नके विषै पाषाणबुद्धि है, जो दानयुक्त क्रियामें बड़ा सावधान है, और ऐसा सामन्त है कि मदोन्मत्त हाथीको कीट समान जाने है और दीन पर दयालु है, जिसकी जिनशासनमें परम प्रीति है। धन और जीतव्यमें जीर्ण तृण समान बुद्धि है, दशों दिशा वश करी है, प्रजा के प्रतिपालनमें सावधान है, और स्त्रियोंको चर्मकी पुतली के समान देखे है, धनको रज समान गिने है, गुणनकर नम्रीभूत जो धनुष ताहीको अपना सहाई जाने है, चतुरंग सेनाको केवल शोभारूप माने है। (भावार्थ) अपने बल पराक्रमसे राज करे है। जिसके राजमें पवन भी वस्त्रादिका हरण नहीं करे तो ठग चोरोंकी क्या बात? जिसके राजमें क्रूर पशु भी हिंसा न करते भये तो मनुष्य हिंसा कैसे करे? यद्यपि

राजा श्रेणिकसे वासुदेव बड़े होते हैं, परन्तु उन्होंने वृष कहिए वृषासुरका पराभव किया है, और यह राजा श्रेणिक वृष कहिये धर्म ताका प्रतिपालक है, इसलिए उनसे श्रेष्ठ है। और पिनाकी कहिये शंकर उसने राजा दक्षके वर्गकू आताप किया। अर यह दक्ष अर्थात् चतुर पुरुषोंको आनन्दकारी है, इसलिए शंकरसे भी अधिक है। और इंद्रके वंश नाहीं, अर यह वंश करि विस्तीर्ण है। और दक्षिण दिशाका दिग्पाल जो यम, सो कठोर है, यह राजा कोमल चित्त है। और पश्चिम दिशाका दिग्पाल जो वरुण सो दुष्ट जलचरोंका अधिपति है, इसके दुष्टोंका अधिकार ही नाहीं। और उत्तर दिशाका अधिपति जो कुवेर, वह धनका रक्षक है, यह धनका त्यागी है। और बौद्धके समान क्षणिकमती नाहीं, चन्द्रमाकी नाईं कलंकी नाहीं। यह राजा श्रेणिक सर्वोत्कृष्ट है। जिसके त्यागका अर्थी पार न पावै, जिसकी बुद्धिका पार पण्डित न पावते भये। शूरवीर जिसके साहसका पार न पावते भये। जिसकी कीर्ति दशों दिशा में विस्तरी है, जिनके गुणनकी संख्या नाहीं, सम्पदा का क्षय नाहीं। सेना अर बहुत बड़े बड़े सामंत सेवा करै है। हाथी घोड़े रथ पयादे सब ही राजा का ठाठ सबसे अधिक है। और पृथिवीविषै प्राणीका चित्त जिससे अति अनुरागी होता भया, जिसके प्रतापका शत्रु पार न पावते भए। सब कलाविषै प्रवीण है, इसलिए हम सरीखे पुरुष वाके गुण कैसैं गा सकैं? जिसके क्षायिक सम्यक्त्वकी महिमा इन्द्र अपनी सभा विषै सदा ही करै है, वह राजा मुनिराजके समूहमें वेतकी लताके समान नम्रीभूत है। अर उद्धत वैरीनिको वज्रदण्डसैं वश करनेवाला है। जिसने अपनी भुजाओंसे पृथिवीकी रक्षा करी। कोट खाई तो नगरकी शोभामात्र है। जिनचैत्यालयों का करानेवाला, जिनपूजाका करानेवाला है। जिसके चेलना नामा रानी महा पतिवृता शीलवंती गुणवंती रूपवंती कुलवंती शुद्ध सम्यग्दर्शन की धरनहारी, श्राविकाके वृत पालनेवाली, सर्व-कला-निपुण, उसका वर्णन

कहा लग करैं ? ऐसा उपमा कर रहित राजा श्रेणिक गुणोंका समूह राजगृह नगरमें राज करे है ।

आगैं अन्तिम तीर्थंकरका समवसरणका आगमन जानि राजा श्रेणिक उछाहसहित भए ताका वर्णन करिए हैं—

एक समय राजगृह नगरके समीप विपुलाचल पर्वतके ऊपर भगवान महावीर अन्तिम तीर्थंकर समोसरण सहित आय विराजे । तब भगवानके आगमनका वृत्तांत वनपालने आकर राजासे कहा और छहों ऋतुओंके फल फूल लाकर आगै धरे । तब राजाने सिंहासन से उठकर सात पैंड पर्वतके सम्मुख जाय भगवानको अष्टांग नमस्कार किया और वनपालको अपने सर्व आभरण उतारकर पारितोषिकमें देकर भगवानके दर्शनों की तैयारी करता भया ।

श्रीवर्धमान भगवानके चरण-कमल सुर नर असुरोंसे नमस्कार करने योग्य हैं । गर्भकल्याणविषै छप्पन कुमारियोंने शोधा जो माताका उदर, उसमें तीन ज्ञान संयुक्त अच्युत स्वर्गसे आय विराजे हैं । और इन्द्रके आदेशसे धनपतिने गर्भमें आवनेसे छहमास पहिले से रत्नवृष्टि करके जिनके पिताका घर पूरया है । अर जन्मकल्याणकमें सुमेरपर्वतके मस्तक पर इन्द्रादि देवोंने क्षीरसागर के जलकर जिनका जन्माभिषेक किया है और धरा है महावीर नाम जिनका । और बाल अवस्थामें इन्द्रने जो देवकुमार रखे तिन सहित जिन्होंने क्रीडा करी है । और जिनके जन्समें माता पितानकूं तथा अन्य समस्त परिवारकूं अर प्रजाकूं और तीन लोकके जीवनिकूं परम आनन्द हुआ । नारकियोंका भी त्रास एक मुहूरत के वास्ते मिट गया । जिनके प्रभावकरि पिताके बहुत दिनोंके विरोधी जो राजा थे, वे स्वयमेव ही आय नम्रीभूत भये और हाथी घोड़े रथ रत्नादिक अनेक प्रकारके भेंट किये और छत्र चमर वाहनादिक तज, दीन होय हाथ जोड़ आय पायन पड़े । और नाना देशों की प्रजा आयकर
निवास करती भई । जिन भगवान का चित्त जोगविषैं सदारत, भोगनिविषैंरत न भया । जैसे सरोवर

में कमल जलसे निर्लेप रहै तैसे भगवान जगतकी मायासे अलिप्त रहे। वह भगवान स्वयंबुद्ध बिजली के चमत्कारवत् जगतकी मायाको चंचल जान वरागी भये। और किया है लौकांतिक देवोंने स्तवन जिनका, मुनिव्रतको धारण कर सम्यग्दर्शन ज्ञान चारित्रका आराधनकर घातिया कर्मों का नाशकर केवलज्ञानको प्राप्त भये। वह केवलज्ञान समस्त लोकालोकका प्रकाशक है। ऐसे केवलज्ञानके धारक भगवानने जगतके भव्य जीवोंके उपकारके निमित्त धर्मतीर्थ प्रगट किया। वह श्रीभगवान मलरहित पसेवसे रहित हैं। जिनका रुधिर क्षीर (दूध) समान है और सुगन्धित शरीर, शुभलक्षण, अतुलबल मिष्टवचन, महा सुन्दर स्वरूप, समचतुरस्रसंस्थान, वज्रवृषभनाराच संहनन के धारक हैं। जिनके, विहारमें चारोंही दिशाओंमें दुर्भिक्ष नाहीं। सकल ईति भीतिका अभाव रहै है, और सर्वविद्याके परमेश्वर हैं। जिनका शरीर निर्मल स्फटिक समान है, अर आंखों की पलक नाहीं लागै। अर नख केश बढ़ै नाहीं, समस्त जीवोंमें मैत्रीभाव रहता है, और शीतल मन्द सुगन्ध पवन पीछे लगी आवै है। छह ऋतुके फल फूल फलै हैं, और धरती दर्पण समान निर्मल हो जाती है, और पवनकुमार देव एक योजन पर्यंत भूमि तृण पाषाण कंटकादि रहित करै हैं। और मेघकुमार देव पीछे गंधोदककी सुवृष्टि महा उत्साहसे करै और प्रभुके विहारमें देव चरणकमलके तलै स्वर्णमयी कमल रचै हैं। चरणों को भूमि का स्पर्श नाहीं, आकाशमें ही गमन करै है। धरतीपर छह ऋतुके सर्व धान्य फलै हैं। शरद के सरोवरके समान आकाश निर्मल होय है। अर दशों दिशा धूम्रादिरहित निर्मल हो रही है, सूर्यकी कांतिको हरणेवाला सहस्र आरोंसे युक्त धर्मचक्र भगवान के आगे चलै है। इस भांति आर्य खण्ड में २२
विहार कर श्रीमहावीर स्वामी विपुलाचल पर्वत ऊपर आय विराजे है। उस पर्वत पर नाना प्रकारके जलके निरझरने झरै हैं, उनका शब्द मनका हरणहारा है। जहां बेलि और वृक्ष शोभायमान हैं। और

जहां जातिविरोधी जीवोंने भी वैर छोड़ दिया है। पक्षी बोल रहे हैं, उनके शब्दों से मानो पहाड़ गुञ्जार ही करै है, और भ्रमरोंके नादसे मानो पहाड़ गान ही करै है। सघन वृक्षों के तलैं हाथियों के समूह बैठे हैं। गुफाओंके मध्य सिंह तिष्ठै हैं। जैसे कैलाश पर्वतपर भगवान ऋषभदेव विराजे थे तैसे विपुलाचलपर श्रीवर्द्धमान स्वामी विराजै है॥

जब श्रीभगवान समोसरणमें केवलज्ञान संयुक्त विराजमान भये, तब इन्द्रका आसन कम्पायमान भया, तदि इन्द्र जानी कि भगवान केवलज्ञानसंयुक्त विराजै हैं, मैं जायकर वंदना करूं। सो इन्द्र ऐरावत हाथीपर चढकर आए। वह हाथी शरदके बादल समान उज्ज्वल है। मानो कैलाश पर्वत सुवर्णकी सांकलनिकरि संयुक्त है। जिसका कुम्भस्थलभ्रमरोंकी पंक्तिकरि मंडित है, जिसने दशों दिशा सुगन्ध से व्याप्त करी है, महा मदोन्मत्त है, जिसके नख सचिक्कण हैं, जिसके रोम कठोर हैं जिसका मस्तक भले शिष्यके समान बहुत विनयवान और कोमल है, जिसका अंग दृढ़ है, और, दीर्घ काय है, जिसका स्कंध छोटा है, मद झरै है, अर नारदसमान कलहप्रिय है। जैसे गरुड नागको जीतै तैसें यह नाग अर्थात् हाथियों को जीतै है। जैसें रात्रि नक्षत्रों की माला कहिए पंकति ताकरि शोभै है। तैसें यह नक्षत्रमाला जो आभरण तासों शोभै है। सिंदूर कर अरुण (लाल) ऊंचा जो कुंभस्थल उससे देव मनुष्यों के मनको हरै है। ऐसे ऐरावत गजपर चढ़कर सुरपति आए। और भी देव अपने अपने वाहनों पर चढ़कर इन्द्रके संग आए, जिनके मुख कमल जिनेंद्रके दर्शनके उत्साह से फूल रहे हैं। सोलह ही स्वर्गोंके समस्त देव और भवनवासी, व्यंतर, ज्योतिषी सर्वही आए। कमलायुध आदि अखिल विद्याधर अपनी स्त्रियों सहित आए। वे विद्याधर रूप और विभवमें देवोंके समान हैं।

तहां समोसरणविषै इन्द्र भगवानकी ऐसे स्तुति करते भए। हे नाथ! महामोहरूपी निद्रामें सोता

यह जगत् तुमने ज्ञानरूप सूर्यके उदयसे जगाया। हे सर्वज्ञ वीतराग! तुमकौ नमस्कार होहु, तुम परमात्मा पुरुषोत्तम हो, संसार समुद्रके पार तिष्ठो हो। तुम बड़े सार्थवाही हो। भव्य जीव चेतनरूपी धनके व्यापारी तुम्हारे संग निर्वाण द्वीपको जायेंगे तो मार्गमें दोषरूपी चोरोंसे नाहीं लुटेंगे। तुमने मोक्षाभिलाषियोंको निर्मल मोक्षका पंथ दिखाया और ध्यानरूपी अग्नि कर कर्म ईंधनको भस्म किया है। जिनके कोई बांधव नाहीं, नाथ नाहीं, दुःखरूपी अग्निके ताप कर संतापित जगतके प्राणी तिनके तुम भाई हो और नाथ हो, परम प्रतापरूप प्रगट भए हो। हम तुम्हारे गुण कैसे वर्णन कर सकें। तुम्हारे गुण उपमारहित अनन्त हैं, सो केवलज्ञानगोचर हैं। इस भांति इन्द्र भगवानकी स्तुति कर अष्टांग नमस्कार करते भये। समोसरणकी विभूति देख बहुत आश्चर्यको प्राप्त भये सो संक्षेपकरि वर्णन करिये है—

वह समोसरण नाना वर्णके अनेक महारत्न और स्वर्णसे रचा हुवा। जिसमें प्रथमही रत्नकी धूलि का धूलिसाल कोट है। और उसके ऊपर तीन कोट हैं, एक एक कोट के चार चार द्वार हैं, द्वारे २ अष्ट मंगल द्रव्य है, और जहां रमणीक वापी हैं, सरोवर हैं। अर धुजा अद्भुत शोभा धरै है। तहां स्फटिक मणिकी भीति (दिवार) करि बाहर कोठे प्रदक्षिणरूप बने हैं। एक कोठेमें मुनिराज हैं। दूसरेमें कल्पवासी देवोंकी देवांगना हैं। तीसरेमें आर्यिका हैं। चौथेमें ज्योतिषी देवोंकी देवी हैं। पांचवेंमें व्यन्तर देवी हैं, छठेमें भवनवासिनी देवी हैं। सातवेंमें ज्योतिषी देव हैं। आठवेंमें व्यंतर देव हैं। नववेंमें भवनवासी, दशवेंमें कल्पवासी, ग्यारवेंमें मनुष्य, बारहवेंमें तिर्यंच। सर्व जीव परस्पर वैर भाव रहित तिष्ठैं हैं। भगवान् अशोक वृक्षके समीप सिंहासनपर विराजैं हैं। वह अशोकवृक्ष प्राणियों के शोकको दूर करै है। और सिंहासन नाना प्रकार के रत्नों के उद्योत से इन्द्रधनुषके समान अनेक

रंगोंको धरै है, इन्द्रके मुकुटमें जो रत्न लगे हैं, उनकी कांति के समूहको जीतै हैं। तीन लोक की ईश्वरताके चिह्न जो तीन छत्र उनसे श्रीभगवान शोभायमान हैं। और देव पुष्पोंकी वर्षा करै हैं। चौसठ चमर सिरपर ढुरै हैं। दुंदुभी बाजे बजै हैं। उनकी अत्यन्त सुन्दर ध्वनि होय रही है।

राजगृह नगरसे राजा श्रेणिक आवते भये। अपना मन्त्री तथा परिवार और नगरवासियों सहित समवसरणके पास पहुंच, समवसरणको देख दूरहीसे छत्र चमर वाहनादिक तज कर स्तुति पूर्वक नमस्कार करते भये। पीछे आयकर मनुष्योंके कोठे में बैठे, अर कुंवर वारिषेण, अभयकुमार, विजय-बाहु इत्यादिक राजपुत्र भी नमस्कार कर आय बैठे। जहां भगवान की दिव्यध्वनि खिरै है, देव मनुष्य तिर्यंच सबही अपनी अपनी भाषामें समझै हैं। वह ध्वनि मेघके शब्दको जीतै है। देव और सूर्यकी कांतिको जीतने वाला भामण्डल शोभै है। सिंहासन पर जो कमल है, उसपर आप अलिप्त विराजैं हैं। गणधर प्रश्न करै हैं, और दिव्यध्वनि विषै सबका उत्तर होय है।

गणधर देवने प्रश्न किया कि हे प्रभो! तत्त्वके स्वरूपका व्याख्यान करो। तब भगवान् तत्त्वनिका निरूपण करते भये। तत्त्व दो प्रकार के हैं एक जीव दूसरा अजीव। जीवोंके दो भेद हैं——सिद्ध और संसारी। संसारी के दो भेद हैं—एक भव्य दूसरा अभव्य। मुक्त होने योग्य को भव्य कहिए और कोरडू (कुडकू) मूंग समान जो कभी भी न सीझै तिसको अभव्य कहिए। भगवान्के भाषे तत्वों का श्रद्धान भव्य जीवोंके ही होय अभव्यको न होय। और संसारी जीवोंके एकेंद्रिय आदि भेद और गति काय आदि चौदह मार्गणाका स्वरूप कहा और उपशमश्रेणी क्षपकश्रेणी दोनों का स्वरूप कहा और संसारी जीव दुःखरूप कहे, सो मूढों को दुःखरूप अवस्था सुखरूप भासै है। चारों ही गति दुःख रूप हैं। नारकियोंको तो आंखके पलकमात्र भी सुख नाहीं, मारण, ताडन, छेदन, भेदन शूलारोपणादिक अनेक प्रकारके दुःख निरन्तर हैं। अर तिर्यंचोंको ताडन, मारण, लादन, शीत-उष्ण, भूख-प्यास आदिके अनेक दुःख हैं। और मनुष्योंको इष्टवियोग और अनिष्टसंयोग आदि अनेक दुःख हैं। और देवोंको बडे देवोंकी

विभूति देखकर संताप उपजै है और दूसरे देवोंका मरण देख बहुत दुःख उपजै है, तथा अपनी देवांगनाओं का मरण देख वियोग उपजै है और जब अपना मरण निकट आवै तब अत्यन्त विलाप कर झूरै हैं। इसी भांति महादुःख कर संयुक्त चतुर्गतिमें जीव भ्रमण करै हैं। कर्मभूमिमें जो मनुष्य जन्म पाकर सुकृत (पुण्य) नाहीं करै हैं, उनके हस्तमें प्राप्त हुआ अमृत जाता रहै है। संसारमें अनेक योनियोंमें भ्रमण करता हुआ यह जीव अनंत कालमें कभी ही मनुष्य जन्म पावै है। तब भीलादिक नीच कुलमें उपजा तो क्या हुआ? अर म्लेच्छ खंडों में उपजा तो क्या हुआ? और कदाचित् आर्यखण्ड में उत्तम कुलमें उपज्या, और अंगहीन हुआ तो क्या, और सुन्दररूप हुआ और रोग संयुक्त हुआ तो क्या? और सब ही सामग्री योग्य भी मिली परन्तु विषयाभिलाषी होकर धर्ममें अनुरागी न भया तो कुछ भी नहीं। इसलिए धर्मकी प्राप्ति अत्यन्त दुर्लभ है। कई एक तो पराये किंकर होकर अत्यन्त दुःखसे पेट भरै हैं, कई एक संग्राममें प्रवेश करै हैं। संग्राम शस्त्रके पातसे भयानक है और रुधिर के कर्दम (कीचड) से महा ग्लानि रूप है। और कई एक किसाण वृत्तिकर क्लेश से कुटुम्बका भरण पोषण करै हैं, जिसमें अनेक जीवोंकी हिंसा करनी पड़ती है। इसभांति अनेक उद्यम प्राणी करै हैं। उनमें दुःख क्लेशही भोगै हैं। संसारी जीव विषयसुखके अत्यन्त अभिलाषी है। कई एक तो दरिद्रता से महादुखी हैं, कई एकधन पायकर चोर वा अग्नि वा जल वा राजादिके भयथे सदा आकुलतारूप रहे हैं। और कई एक द्रव्यको भोगते है। परन्तु तृष्णारूप अग्निके बढ़नेसे जलैहैं, कई एकको धर्मकी रुचि उपजी है, परन्तु उनको दुष्ट जीव संसार ही के मार्ग में डारै हैं। परिग्रहधारियोंके चित्त की निर्मलता कहांसे होय, और चित्त की निर्मलता बिना धर्म का सेवन कैसैं होय? जब तक परिग्रह की आसक्तता है तब तक जीव हिंसा-विषै प्रवृत्तै है और हिंसा से नरक निगोद आदि कुयोनिमें महा दुःख भोगै है संसारभ्रमण का मूल हिंसा ही है। अर जीवदया मोक्ष का मूल है। परिग्रह के संयोग से राग द्वेष उपजै है सो राग द्वेष ही संसार के दुःख के कारण हैं। कई एक जीव दर्शन मोह के अभाव से सम्यग्दर्शन को भी

पावै हैं, परन्तु चारित्रमोह के उदय से चारित्र को नहीं धरि सकै हैं, और कई एक चारित्र को भी धारकर बाईस परीषहों से पीड़ित होकर चारित्र से भ्रष्ट होय हैं। कई एक अणुव्रत ही धारै हैं और कई एक अणुव्रत भी धार नहीं सके हैं, केवल अव्रत सम्यक्त्वी ही होय हैं। अर संसार के अनंत जीव सम्यक्त्व से रहित मिथ्यादृष्टि ही हैं। जो मिथ्यादृष्टि हैं वे बार बार जन्म मरण करै हैं, दुःखरूप अग्नि से तप्तायमान भवसंकटमैं पड़े हैं। मिथ्यादृष्टि जीव जीभ के लोलुपी हैं और काम कलंक से मलीन हैं, क्रोध मान माया लोभ मैं प्रवृत्ते हैं। और जो पुण्याधिकारी जीव संसार शरीर भोगनितैं विरक्त होइ करि शीघ्र ही चारित्र को धारै हैं, और निवाहैं हैं और संयम मैं प्रवृत्तै हैं। वे महाधीर परम समाधि से शरीर छोड़कर स्वर्ग में बड़े देव होकर अद्भुत सुख भोगै हैं। वहां से चयकर उत्तम मनुष्य होकर मोक्ष पावै हैं। कई एक मुनि तपकर अनुत्तर विमान मैं अहिमेन्द्र होय हैं, तहांतै चयकर तीर्थंकर पद पावै हैं, कई एक चक्रवर्ती बलदेव कामदेव पद पावै हैं। कई एक मुनि महातप कर निदान बांध स्वर्ग में जाय वहां से चयकर वासुदेव होय हैं। वे भोग को नाहीं तज सकै हैं। इस प्रकार श्रीवर्द्धमान स्वामी के मुख से धर्मोपदेश श्रवण कर देव मनुष्य तिर्यंच अनेक जीव ज्ञान को प्राप्त भये। कई एक उत्तम पुरुष मुनि भए, कई एक श्रावक भए, कई एक तिर्यंच भी श्रावक भए। देव व्रत नहीं धारण कर सकते हैं तातैं अव्रत सम्यक्त्वको ही प्राप्त भए। अपनी अपनी शक्ति अनुसार अनेक जीव धर्ममें प्रवृत्त पापकर्मके उपार्जन से विरक्त भए। धर्म श्रवण कर भगवानको नमस्कार कर अपने अपने स्थान गए। श्रेणिक महाराज भी जिनवचन श्रवण कर हर्षित होय अपने नगरको गए।

अथानंतर सन्ध्या समय सूर्य अस्त होनेको सम्मुख भया, अस्ताचलके निकट आया, अत्यन्त आरक्तता (सुरखी) को प्राप्त भया, किरण मन्द भई, सो यह बात उचितही है। जब सूर्यका अस्त होय तब किरण मंद होय ही होय, जैसे अपने स्वामीको आपदा परें तब किसके तेजकी वृद्धि रहे? चकवीनके अश्रुपात सहित जे नेत्र तिनको देख मानो दयाकर सूर्य अस्त भया। भगवानके समवसरणविषै तो सदा

प्रकाश ही रहै है, रात्रि दिनका विचार नाहीं। अर सब पृथ्वीविषै रात्रि पडी, सन्ध्यासमय दिशा लाल भई सो मानो धर्म श्रवणकर प्राणियोंके चित्तसे नष्ट भया जो राग, सो सन्ध्याके छलकर दशों दिशानमें प्रवेश करता भया। (भावार्थ) रागका स्वरूप भी लाल होय है, अर दिशाविषै भी ललाई भई। अर सूर्यके अस्त होने से लोगोंके नेत्र देखनेसे रहित भए, क्योंकि सूर्यके उदयसे जो देखने की शक्ति प्रकट भई थी सो अस्त होनेसे नष्ट भई, अर कमल संकुचित भए। जैसे बड़े राजाओं के अस्त भए चौरादिक दुर्जन जगत विषै परधन हरणादिक कुचेष्टा करैं तैसैं सूर्यके अस्त होनेसे पृथ्वी विषै अंधकार फैल गया। रात्रि समय घर घर चम्पेकी कली के समान जो दीपक तिनका प्रकाश भया। वह दीपक मानो रात्रिरूप स्त्री के आभूषण ही हैं। कमलके रससे तृप्त होकर राजहंस शयन करते भए, अर रात्रिसम्बन्धी शीतल मंद सुगन्ध पवन चलती भई, मानो निशा (रात) का स्वास ही है। अर भ्रमरोंके समूह कमलोंमें विश्राम करते भए। अर जैसें भगवानके वचनोंकर तीन लोक के प्राणी धर्मका साधनकर शोभायमान होय हैं, तैसें मनोज्ञ तारोंके समूहसे आकाश शोभायमान भया। अर जैसे जिनेन्द्रके उपदेशसे एकांतवादियोंका संशय विलाय जाय तैसे चन्द्रमाकी किरणों से अन्धकार विलाय गया। लोगोंके नेत्रोको आनंदका करनहारा चंद्रमा उद्योत समय कम्पायमान भया, मानो अन्धकारपर अत्यन्त कोप भया। [भावार्थ] क्रोध समय प्राणी कम्पायमान होय है। अन्धकार कर जे लोक खेदको प्राप्त भए थे वे चन्द्रमाके उद्योतकर हर्षको प्राप्त भए। अर चन्द्रमाकी किरणको स्पर्श कर कुमुद प्रफुल्लित भए। इस भांति रात्रिका समय लोगोंको विश्रामका देनहारा प्रगट भया। राजा श्रेणिकको सन्ध्यासमय सामायिकपाठ करते, जिनेन्द्रकी कथा करते करते घनी रात्रि गई, सोने को उद्यमी भया। कैसा है रात्रिका समय, जिसमें स्त्री पुरुषोंके हितकी वृद्धि होय है। राजाके शयनका महल गंगाके पुलिन [किनारों] समान उज्ज्वल है, अर रत्नोंकी ज्योतिसे अति उद्योत रूप है। अर फूलोंकी सुगंधि जहां झरोखोंके द्वारा आवै है, अर महलके समीप सुन्दर स्त्री मनोहर गीत गाय रही

हैं। अर महलके चौगिरद सावधान सामंतों की चौकी है, अर अति शोभा बन रही है। सेजपर अति कोमल बिछौने बिछ रहे हैं। वह राजा भगवानके पवित्र चरण अपने मस्तक पर धारै हैं, अर स्वप्न में भी बारम्बार भगवान हीका दर्शन करै है। अर स्वप्नमें गणधरदेवसे भी प्रश्न करै है। इस भांति सुखसे रात्रि पूर्ण भई, पीछे मेघकी ध्वनिके समान प्रभातके वादित्र बाजते भए। उनके नादसे राजा निद्रासे रहित भया।

प्रभात समय देहक्रिया करि राजा श्रेणिक अपने मनमें विचार करता भया कि भगवान की दिव्यध्वनिमें तीर्थंकर चक्रवर्त्यादिकके जो चरित्र कहे गए वे मैंने सावधान होकर सुने। अब श्रीरामचन्द्रके चरित्र सुनने में मेरी अभिलाषा है। लौकिक ग्रन्थोंमें रावणादिकको मांसभक्षी राक्षस कहा है परन्तु वे विद्याधर महाकुलवंत कैसे मद्य मांस रुधिरादिकका भक्षण करें? अर रावणके भाई कुम्भकरणको कहै है कि वह छै महीनेकी निद्रा लेता था। अर उसके ऊपर हाथी फेरते अर ताते तेलसे कान पूरते तो भी छह महीना से पहले नहीं जागता, तब ऐसी भूख प्यास लगती कि अनेक हस्ती महिषी (भैंसा) आदि तिर्यंच, अर मनुष्यों को भक्षण कर जाता था। अर राधि रुधिरका पान करता तौ भी तृप्ति नहीं होती थी। अर सुग्रीव हनुमानादिकको बानर कहे हैं। परन्तु वे तो बड़े राजा विद्याधर थे, बड़े पुरुष को विपरीत कहने में महा पापका बंध होय है। जैसे अग्नि के संयोग से शीतलता न होय, अर तुषार (बर्फ) के संयोग से उष्णता (गरमी) न होय, जलके मथन से घी की प्राप्ति न होय, अर बालू रेत के पेलने से तैल की प्राप्ति न होय, तैसे महापुरुषों के चरित्र विरुद्ध सुनने से पुण्य न होय। अर लोक ऐसा कहै हैं कि देवों के स्वामी इन्द्र को रावण ने जीता, परन्तु यह बात न बनै। कहां वह देवों का इन्द्र ? अर कहां यह मनुष्य—जो इन्द्र के कोपमात्र से ही भस्म हो जाय, जाके ऐरावत हस्ती, वज्रसा आयुध, जिसकी ऐसी सामर्थ कि सर्व पृथिवी को वशकर ले। सो ऐसे स्वर्ग के स्वामी इन्द्र को यह अल्प शक्ति का धनी मनुष्य विद्याधर कैसे लाकर बन्दी में डारै है, मृगसे

सिंह को कैसे बाधा होय ? तिलसे शिला को पीसना, अर गिंडोले से सांप का मारना, अर श्वान से गजेंद्र का हनना कैसै होय ? अर लोक कहै हैं कि रामचन्द्र मृगादिककी हिंसा करते थे सो यह बात न बनैं। वे वृती विवेकी दयावान् महापुरुष कैसैं जीवों की हिंसा करैं, अर कैसैं अभक्ष्यका भक्षण करैं ? अर सुग्रीव का बड़ा भाई बाली को कहै हैं कि उसने सुग्रीव की स्त्री अंगीकार करी। सो बड़ा भाई जो बाप समान है कैसैं छोटे भाई की स्त्री अंगीकार करै, सो यह सर्व बात संभवै नाहीं । इसलिए गणधर देवको पूछकर श्रीरामचन्द्र की यथार्थ कथा श्रवण करूं। ऐसा विचार श्रेणिक महाराज ने किया। बहुरि मनमें विचारै है कि नित्य गुरुनिके दर्शन किए,धर्म के प्रश्न किए, तत्त्व निश्चय किएतैं परम सुख होय है। ये आनन्द के कारण हैं। ऐसा विचार कर राजा सेज से उठे,अर रानी अपने स्थान गई। कैसी है रानी ? जिसकी कांति लक्ष्मी समान है,महा पतिवृता अर पतिकी बहुत विनयवान है। अर कैसा है राजा ? जिसका चित्त अत्यन्त धर्मानुराग में निष्कम्प है। दोनों प्रभात क्रिया का साधन करते भए। अर जैसैं सूर्य शरद के बादलों से बाहिर आवै तैसैं राजा सुफेद कमलके समान उज्ज्वल सुगंध महल से बाहिर आवतैं भए। उस सुगंध महल में भंवर गुंजार करै हैं।

इति श्री रविषेणाचार्यविरचित महा पद्मपुराणकी भाषा टीकाविषैं श्रेणिकने रामचन्द्र रावण के चरित्र सुनने के अर्थ प्रश्न करने का विचार किया ऐसा द्वितीय अधिकार संपूर्ण भया ॥ २ ॥

आगैं राजा सभा मैं आय सर्व आभरण सहित बिराजे ताकी शोभा कहिये हैं। प्रभात ही बड़े बड़े सामन्त आये,उनको द्वारपालने राजाका दर्शन कराया। सामंतों के वस्त्र आभूषण सुन्दर हैं। उन समेत राजा हाथी पर चढ़कर नगर से समोसरण को चाले । आगैं बन्दीजन विरद बखानते जाय हैं। राजा समोसरण के पास पहुँचे। कैसा है समोसरण–जहां अनंत महिमाके निवास महावीर स्वामी विराजै है। तिनके समीप गौतम गणधर तिष्ठै है। तत्त्वों के व्याख्यानमें तत्पर अर कांति में चन्द्रमा के तुल्य, प्रकाश में सूर्यके समान, जिनके चरण वा नेत्ररूपी कमल अशोक वृक्ष के पल्लव समान

लाल हैं, अर अपनी शांतिताकरि जगत को शांत करै हैं,मुनियों के समूह के स्वामी हैं। राजा दूर से ही समोसरण को देख करि हाथी से उतर समोसरण गए। हर्ष कर फूल रहे हैं मुखकमल जिनके सो भगवानकी तीन प्रदक्षिणा दे हाथ जोड़ नमस्कार कर मनुष्यों की सभा में बैठे ।।

प्रथम ही राजा श्रेणिक ने श्रीगणधरदेव को 'नमोऽस्तु' कहकर समाधान (कुशल) पूछकर प्रश्न किया—भगवन् ! मैं रामचरित्र सुनने की इच्छा करूं हूं। यह कथा जगत में लोगों ने और भांति प्ररूपी है। इसलिए हे प्रभो ! कृपाधार संदेहरूप कीचडतैं जीवनिको काढो।

राजा श्रेणिकका प्रश्न सुन श्रीगणधरदेव अपने दांतों की किरणसे जगतको उज्ज्वल करते गंभीर मेघ ध्वनि समान भगवानकी दिव्यध्वनिके अनुसार व्याख्यान करते भए। हे राजा ! तू सुन, मैं जिन आज्ञाप्रमाण कहूं हूं। जिनवचन तत्त्वके कथनमें तत्पर हैं। तू यह निश्चय कर कि रावण राक्षस नहीं, मनुष्य है, मांसका आहारी नहीं, विद्याधरोंका अधिपति है; राजा विनमिके वंशमें उपज्या है। अर सुग्रीवादिक बन्दर नहीं, ये बड़े राजा मनुष्य हैं, विद्याधर हैं। जैसैं नींव बिना मंदिरका मांडण न होय तैसैं जिन-वचन-रूपी मूल बिना कथाकी प्रमाणता न होय है। इसलिए प्रथम ही क्षेत्र कालादिकका वर्णन सुन, अर फिर महा पुरुषों का चरित्र जो पापका विनाशनहारा है सो सुन।

लोकालोक कालचक्र कुलकर नाभिराजा और श्रीऋषभदेव और भरतका वर्णन।

गौतम स्वामी कहै हैं कि हे राजा श्रेणिक ! अनन्तप्रदेशी जो अलोकाकाश, ता मध्य तीन बातवलयतैं वेष्टित तीनलोक तिष्ठै है। तीनलोकके मध्य यह मध्यलोक है। इसमें असंख्यातद्वीप और समुद्र हैं। तिनके बीच लवणसमुद्रकरि बेढ्या लक्षयोजनप्रमाण यह जंबूद्वीप है। उसके मध्य सुमेर पर्वत है,वह मूलमें बज्रमणिमयी है, अर ऊपर समस्त सुवर्णमयी है, अनेक रत्नोंसे संयुक्त है। संध्या समय रक्तताको धरै है, मेघोंके समूहके समान स्वर्गपर्यंत ऊंचा शिखर है। शिखरके और सौधर्म्मस्वर्गके बीचमें एक बालकी अणीका अन्तर है। सुमेरु पर्वत निन्यानवें हजार योजन ऊंचा है। अर एक हजार योजन

स्कंद है । अर पृथ्वीविषै तो दशहजार योजन चौड़ा है, अर शिखर पर एक हजार योजन चौड़ा है। मानो मध्य लोकके नापनेका दंड ही है । जम्बूद्वीपमें एक देवकुरु एक उत्तरकुरु भोगभूमि है, अर भरत आदि सप्त क्षेत्र हैं, षट्कुलाचलोंसे जिनका विभाग है । जम्बू अर शालमली यह दोय वृक्ष हैं । जम्बूद्वीपमें चौतीस विजयार्ध पर्वत हैं । एक एक विजयार्धमें एक सौ दश दश विद्याधरोंकी नगरी हैं। एक एक नगरीकू कोटि कोटि ग्राम लागै है । अर जम्बूद्वीपमैं बत्तीस विदेह, एक भरत, एक ऐरावत ऐसैं चौतीस क्षेत्र हैं । एक एक क्षेत्र मैं एक एक राजधानी है । अर जम्बूद्वीपमैं गंगा आदिक १४ महानदी हैं, अर छह भोगभूमि हैं । एक एक विजयार्धपर्वतमैं दोय दोय गुफा हैं । सो चौतीस विजयार्धके अडसठ गुफा हैं । षट्कुलाचलों मैं अर विजयार्ध पर्वतों मैं तथा वक्षार पर्वतों मैं सर्वत्र भगवानके अकृत्रिम चैत्यालय हैं, अर जम्बूद्वीप अर शालमली वृक्ष मैं भगवान के अकृत्रिम चैत्यालय हैं जो रत्नों की ज्योति से शोभायमान हैं । जंबूद्वीपकी दक्षिण दिशाकी ओर राक्षसद्वीप है,अर ऐरावत क्षेत्र की उत्तर दिशामैं गन्धर्व नामा द्वीप है,अर पूर्व विदेहकी पूर्व दिशामैं वरुण द्वीप है,अर पश्चिम विदेहकी पश्चिम दिशामें किन्नर द्वीप है । वे चारों ही द्वीप जिन मन्दिरों से मण्डित हैं ॥

जैसैं एक मास में शुक्लपक्ष अर कृष्णपक्ष यह दोय पक्ष होय हैं तैसैं ही एक कल्पमें अवसर्पिणी अर उत्सर्पिणी दोनों काल प्रवर्त्तैं हैं । अवसर्पिणी काल मैं प्रथम ही सुखमासुखमा, काल की प्रवृत्ति होयहै, फिर दूसरा सुखमा, तीसरा सुखमादुखमा, चौथा दुखमासुखमा, पांचवा दुखमा अर छठा दुखमदुखमा प्रवर्त्तै है। तिसके पीछे उत्सर्पिणी काल प्रवर्त्तैहै । उसकी आदिमें प्रथम ही छठा काल दुखमादुखमा प्रवर्त्तै है, फिर पांचवां दुखमा, फिर चौथा दुखमासुखमा फिर तीसरा सुखमादुखमा, फिर दूसरा सुखमा,फिर पहला सुखमासुखमा । इसी प्रकार अरहटकी घडी समान अवसर्पिणी के पीछे उत्सर्पिणी अर उत्सर्पिणी पीछे अवसर्पिणी है । सदा यह कालचक्र इसी प्रकार फिरता रहता है,परन्तु इस काल का पलटना केवल भरत अर ऐरावत क्षेत्र में ही है । तातैं इनमें ही आयु कायादिककी हानि वृद्धि होय है । अर महावि-

देह क्षेत्रादि में तथा स्वर्ग पाताल में, अर भोग भूमि आदिक में तथा सर्व द्वीप समुद्रादिक में कालचक्र नाहीं फिरता, इसलिये उनमें रीति पलट नाहीं,एक ही रीति रहै है। देवलोकविषै तो सुखमासुखमा जो पहला काल है सदा उसकी ही रीति रहै है। अर उत्कृष्ट भोगभूमिमें भी सुखमासुखमा कालकी रीति रहै है, अर मध्य भोगभूमि में सुखमा अर्थात् दूजे काल की रीति रहै है,अर जघन्य भोगभूमिमें सुखमा-दुखमा जो तीसरा काल है, उसकी रीति रहै है। अर महा विदेह क्षेत्रोंमें दुखमासुखमा जो चौथा काल है, उसकी रीति रहै है। अर अढ़ाई द्वीपके परे अन्तके आधे स्वयंभूरमण द्वीप पर्यंत बीचके असंख्यात द्वीपसमुद्रमें जघन्य भोगभूमिविषै सदा तीजे कालकी रीति है। अर अंतके आधे द्वीपविषै तथा अंतमें स्वयंभूरमणसमुद्रविषै तथा चारों कोणमें दुखमा अर्थात् पंचम कालकी रीति सदा रहै है। अर नरकमें दुखमादुखमा जो छठा काल उसकी रीति रहै है। अर भरत ऐरावत क्षेत्रोंमें छहों काल प्रवर्त्तै है। जब पहला सुखमासुखमा काल ही प्रवर्त्तै है, तब यहां देवकुरु उत्तरकुरु भोगभूमिकी रचना होय है, कल्पवृक्षोंसे मंडित भूमि सुखमयी शोभै है, अर मनुष्यनिके शरीर तीन कोष ऊंचे अर तीन पल्यकी आयु सब ही मनुष्य तथा पंचेंद्रिय तिर्यंचनिकी होय है, अर ऊगते सूर्य समान मनुष्यकी कांति होय है। सब लक्षणपूर्ण लोक शोभै है। स्त्री पुरुष युगल ही उपजै है, अर साथ ही मरै है। स्त्री पुरुषों में अत्यन्त प्रीति होय है, मरकर देवगति पावै है। भूमि कालके प्रभावसे रत्न सुवर्णमयी है। अर कल्पवृक्ष दश जातिके सर्व ही मनवांछित पूर्ण करै है। जहां चार चार अंगुलके महासुगंध महामिष्ट अत्यन्त कोमल तृणोंसे भूमि आच्छादित है सर्व ऋतुकेफल फूलोंसे वृक्ष शोभैहैं। अर जहां हाथी घोड़े गाय भैंस आदि अनेक जातिके पशु सुखसे रहै हैं। अर कल्पवृक्षकरि उत्पन्न महा मनोहर आहार मनुष्य करै हैं। जहां सिंहादिक भी हिंसक नाहीं, मांसका आहार नाहीं, योग्य आहार करै हैं। अर जहां वापी सुवर्ण अर रत्ननिकै सिवाण तिनकरि संयुक्त कमलनकर शोभित दुग्ध दही घी मिष्टान्नकी भरी अत्यन्त शोभाको धरै हैं। अर पहाड़ अत्यन्त ऊंचे नाना प्रकार रत्नकी किरणोंसे मनोज्ञ, सर्व प्राणियों

को सुखके देनहारे, पांच प्रकारके वर्णको धरैं विराजै हैं। अर जहां नदी जलचरादि जन्तुरहित महा-
रमणीक दुग्ध (दूध) घी मिष्टान्न जलकी भरी अत्यन्त स्वाद संयुक्त प्रवाहरूप बहै है,जिनके तट रत्न-
निकी ज्योति से शोभायमान हैं। जहां बेइंद्री तेइंद्री चौइंद्री असैनी पंचेन्द्री तथा जलचरादि असैनी
पंचेन्द्री जीव नाहीं,जहां थलचर,नभचर गर्भज, तिर्यंच हैं,सो तिर्यंच भी युगल उपजै हैं। वहां शीत उष्ण
वर्षा नाहीं,तीव्र पवन नाहीं। शीतल मंद सुगंध पवनचलै है। अर काहू प्रकारका भय नाहीं,सदा अद्भुत
उछाहही प्रवर्त्तै है। अर ज्योतिरांग जाति के कल्पवृक्षोंकी ज्योति कर चांद सूर्य नजर नाहीं आवै हैं।
अर दशही जातिके कल्पवृक्ष सर्वही इन्द्रियनिके सुखास्वादके देनहारे शोभैहैं, जहां खाना, पीना, सोना,
बैठना, वस्त्र, आभूषण, सुगंधादिक सर्वही कल्पवृक्षोंसे उपजै हैं। यह कल्पवृक्ष वनस्पतिकाय नाहीं,अर
देवाधिष्ठित भी नाहीं, केवल पृथ्वीकायरूप सार वस्तु हैं। तहां मनुष्योंके युगल ऐसे रमैं हैं जैसे स्वर्ग-
लोकमें देव। या भांति गणधर देवने भोगभूमिका वर्णन किया।

आगैं राजा श्रेणिक भोगभूमिमें उपजनैका कारण पूछते भये तो गणधर देव कहै हैं:—जे सरल-
चित्त साधुनकूं आहारादिक दानके देनहारे ते भोगभूमिविषै मनुष्य होय हैं। जैसै भले खेतमें बोया
बीज बहुतगुणा होकर फलै है, अर इक्षु (सांठे) में प्राप्त हुआ जल मिष्ट होय है, अर गायने पिया
जो जल सो दूध होय परिणमै है। तैसैं व्रतनिकर मंडित परिग्रहरहित मुनिको दिया जो दान सो महा-
फल को फलै है। अर जैसै नीरस क्षेत्रमें बोया बीज अल्पफलको प्राप्त होय, अर नींबमें गया जल
कटुक होय हैं तैसे ही भोगतृष्णासे जे कुदान करैं हैं ते भोगभूमिमें पशुजन्म पावै हैं। भावार्थ—दान
चार प्रकारका है—एक आहारदान, दूजा औषधदान, तीजा शास्त्रदान,चौथा अभयदान। तिसमें मुनि
आर्यिका उत्कृष्ट श्रावकोंको भक्तिकर देना पात्रदान हैं। अर गुणोंकर आप समान साधर्मीजनोंको
देना समदान है। अर दुखित जीवको दया भावकर देना करुणादान है। सर्व त्याग करके मुनिव्रत
लेना सकलदान है। ये दानके भेदकहे। आगे कालचक्रको रीति कहैं हैं। जैसैं एक मास विषैं शुक्लपक्ष

अर कृष्णपक्ष दोय होय हैं तैसैं एक कल्पविषै अवसर्पिणी उत्सर्पिणी दो काल प्रवर्त्तैं हैं। अवसर्पिणी काल विषैं प्रथम ही सुखमासुखमा,प्रवर्त्या बहुरि दूजा सुखमा,तीजे कालमें पल्यका आठवां भाग बाकी रहा तब कुलकर उपजे। प्रथम कुलकर प्रतिश्रुति भये। तिनके वचन सुनकर लोक आनन्दको प्राप्त भये। वह कुलकर अपने तीन जन्मको जाने हैं। अर उनकी चेष्टा सुन्दर है, अर वह कर्मभूमि में व्यवहारका उपदेशक है। अर तिनके पीछे सहस्र कोटि असंख्यात वर्षगये दूजा कुलकर सन्मति भया। तिनके पीछे तीसरा कुलकर क्षेमंकर, चौथा क्षेमंधर, पांचवां सीमंकर, छठा सीमंधर, सातवां विमलवाहन, आठवां चक्षुष्मान्, नवां यशस्वी, दशवां अभिचन्द्र, ग्यारहवां चन्द्राभ, बारहवां मरुदेव, तेरहवां प्रसेनजित, चौदहवां नाभिराज, यह चौदह कुलकर प्रजाके पिता समान शुभ कर्मसे उत्पन्न भये। जब ज्योतिराग जातिके कल्पवृक्षों की ज्योति मंद भई, अर चांदसूर्य नजर आए, तिनको देखकर लोग भयभीत भये। कुलकरोंको पूछते भये—हे नाथ! यह आकाशमें क्या दीखै हैं? तब कुलकरने कहा कि अब भोगभूमि समाप्त हुई, कर्मभूमिका आगमन है। ज्योतिरांग जातिके कल्पवृक्षोंकी ज्योति मंद भई है, इसलिए चांदसूर्य नजर आए हैं। देव चार प्रकारके हैं—कल्पवासी, भवनवासी, व्यन्तर, अर ज्योतिषी। तिनमें चांदसूर्य ज्योतिषियोंके इन्द्र प्रतींद्र हैं। चन्द्रमा तो शीत किरण है,अर सूर्य उष्णकिरण है। जब सूर्य अस्त होय है तब चन्द्रमा कांतिकों धरै है। अर आकाश विषै नक्षत्रोंके समूह प्रगट होय हैं, सूर्यकी कांतिसे नक्षत्रादि नहीं भासै हैं। इसी प्रकार पहिले कल्पवृक्षों की ज्योति से चन्द्रमा सूर्यादिक नाहीं भासते थे, अब कल्पवृक्षोंकी ज्योति मंद भई, तातैं भासै हैं। यह कालका स्वभाव जानकर तुम भय तजो। यह कुलकरका वचन सुनिकर तिनका भय निवृत्त भया।

अथानन्तर चौदहवें कुलकर श्रीनाभिराजा जगत्पूज्य तिनके समयमें सब ही कल्पवृक्षोंका अभाव
भया। अर युगल उत्पत्ति मिटी। ते अकेले ही उत्पन्न भये, तिनके मरुदेवी राणी मनको हरणहारी, उत्तम पतिवृता, जैसे चंद्रमाके रोहिणी,समुद्रके गंगा,राजहंसके हंसिनी तैसे यह नाभिराजाकेहोती भई।

कैसी है राणी ? सदा राजाके मन विषै बसै है, जाकी हंसिनीकीसी चाल अर कोयल कैसे वचन हैं। जैसे चकवीकी चकवेसों प्रीति होय है तैसे राणीकी राजासौं प्रीति होती भई। राणी कूं क्या उपमा दी जाय--वह पदार्थ राणीसें न्यून दीखै है। सर्व लोकपूज्य मरुदेवी--जैसे धर्मके दया होय तैसे त्रैलोक्यपूज्य जो नाभिराजा--उसके परमप्रिय होती भई। मानो यह राणी आतापकी हरणहारी चंद्रकलानि ही कर निरमयी (बनाई) है आत्मस्वरूपकी जाननहारी--सिद्धपदका है ध्यान जिसको त्रैलोक्यकी माता पुण्याधिकारणी मानूं जिनवाणी ही है। अर अमृतका स्वरूप तृष्णाकी हरणहारी मानूं रत्नवृष्टि ही है। सखियोंको आनन्दकी उपजावनहारी महा रूपवंती कामकी स्त्री जो रति उससे भी अति सुन्दरी है। महा आनन्दरूप माता जिसका शरीर ही सर्व आभूषण है, जिसके नेत्रों के समान नीलकमल नाहीं, अर जाकै केश भ्रमरहुतैं अधिक श्याम, सो केश ही ललाटके शृंगार हैं, यद्यपि इनको आभूषणोंकी अभिलाष नाहीं, तथापि पतिकी आज्ञा प्रमाण कर कर्णफूलादि आभूषण पहिरे हैं। जिनके मुखका हास्य ही सुगन्धित चूर्ण है–उन समान कपूरकी रज कहा ? अर जिनकी वाणी बीणाके स्वरको जीते है, उनके शरीरके रंगके आगे स्वर्ण कुंकुमादिक का रंग कहा ? जिनके चरणारबिन्दनि पर भ्रमर गुंजार करैं हैं। नाभिराजा करि सहित मरुदेवी राणी के यशका वर्णन सैकड़ों ग्रन्थों में भी न हो सकै तो थोड़े से श्लोकोंमैं कैसे होय ?

जब मरुदेवीके गर्भविषै भगवानके छह महीना बाकी रहे तब इन्द्रकी आज्ञासें छप्पन कुमारिका हर्षित भईथकी माताकी सेवा करती भईं। अर १ श्री २ ह्री ३ धृति ४ कीर्ति ५ बुद्धि ६ लक्ष्मी यह षट् (६) कुमारिका स्तुति करती भई–हे मात ! तुम आनन्दरूप हो, हमको आज्ञा करहु, तुम्हारी आयु दीर्घ होऊ। या भांति मनोहर शब्द कहती भईं। अर नाना प्रकारकी सेवा करती भई। कई एक बीणा बजाय महा सुन्दर गान कर माताको रिझावती भईं। अर कई एक आसन बिछावती भई, अर कईएक कोमल हाथोंसे माताके पांव पलोटती भई। कईएक देवी माताको तांबूल (पान) देती

भई । कई एक खड्ग हाथमें धारणकर माता की चौकी देतीभई । कईएक बाहरले द्वारमें सुवर्ण आसे लिये खड़ी होती भई । अर कईएक चँवर ढोरती भई । कईएक आभूषण पहरावती भई, कईएक सेज बिछावती भई, कईएक स्नान करावती भई, कईएक आंगन बहारती भई, कईएक फूलोंके हार गूथती भई, कईएक सुगन्ध लगावती भई, कईएक खाने पीनेकी विधिमें सावधान होती भई, कईएक जिसको बुलावै उसकों बुलावती भई । या भांति सर्व कार्य देवी करती भई;माताकूं काहु प्रकारकी भी चिन्ता न रहती भई ।

एक दिन माता कोमल सेज पर शयन करती हुती, उसने रात्रिके पिछले पहर अत्यन्त कल्याणकारी सोलह स्वप्न देखे । १ पहले स्वप्नमें ऐसा चन्द्र समान उज्ज्वल मद झरता गाजता हाथी देखा जिसपर भ्रमर गुंजार करै हैं । २ दूजे स्वप्नमें शरदके मेघ समान उज्ज्वल धवल दहाडता हुआ बैल देखा जिसके बड़े-बड़े कन्धे हैं । ३ तीसरे स्वप्नमें चन्द्रमाकी किरण समान सफेद केशावली विराजमान सिंह देखा । ४ चौथे स्वप्नमें लक्ष्मीको हाथी सुवर्णके कलशोंसे स्नान करावता देखा, वह लक्ष्मी प्रफुल्लित कमलपर निश्चल तिष्ठै है । ५ पांचवें स्वप्नमें दो पुष्पोंकीमाला आकाशमें लटकती हुई देखीं जिनपर भ्रमर गुंजारकर रहे हैं । ६ छठे स्वप्नमें उदयाचल पर्वत के शिखर पर तिमिर के हरण हारे मेघपटलरहित सूर्यकूं देख्या । ७सातवें स्वप्नमें कुमुदिनी को प्रफुल्लित करण हारा रात्रिका आभूषण-जिसने किरणोंसे दशोंदिशा उज्ज्वल करी है, ऐसा तारोंका पति चन्द्रमा देख्या । ८ आठवें स्वप्नमें निर्मलजलमें कलोल करते अत्यन्त प्रेमके भरे हुवे महामनोहर मीन युगल (दो मच्छ) देखे । ९ नवमें स्वप्नमें जिनके गलेमें मोतियोंके हार अर पुष्पोंकी माला शोभायमान है ऐसी पंच प्रकारके रत्नों कर पूर्ण स्वर्णके कलश देखे । अर १०दशवें स्वप्नमें नानाप्रकारके पक्षियोंसे संयुक्त, कमलोंकर मण्डित, सुन्दर सिवाण (पैड़ी) कर शोभित, निर्मल जलकर भरया महा सरोवर देख्या । ११ ग्यारहवें स्वप्न में आकाश तुल्य निर्मल समुद्र देख्या जिसमें अनेक प्रकार के जलचर केलि करैं हैं, अर उतंग लहरें

उठे हैं। १२ बारहवें स्वप्नमें अत्यन्त ऊंचा नाना प्रकारके रत्नोंकर जड़ित स्वर्णका सिंहासन देख्या। १३तेरहवें स्वप्नमें देवताओंके विमान आवते देखे जो सुमेरुके शिखर समान, अर रत्ननिकरि मंडित चामरादिकरि शोभित देखे। अर१४ चौदहवें स्वप्नमैं धरणेन्द्रका भवन देख्या। कैसा है भवन?जाके अनेक खण (मंजिल) है, अर मोतियों की मालाकरमंडित, रत्नोंकी ज्योतिकर उद्योत मानो कल्पवृक्ष कर शोभित हैं। १५ पंद्रहवें स्वप्नमें पंचवर्णके महारत्ननिकी राशि अत्यन्त ऊंची देखी,जहां परस्पर रत्नोंकी किरणोंके उद्योतसे इन्द्रधनुष चढ़ रहा है' १६ सोलहवें स्वप्नमें, निर्धूम अग्नि ज्वाला के समूहकरि प्रज्वलित देखी। अथानन्तर सुन्दर है दर्शन जिनका ऐसे सोलह स्वप्न देखकर मंगल शब्दनिके श्रवणकरि माता प्रबोधकू प्राप्त भई। जिन मंगल शब्दनिका कथन सुनहु।

सखी जन कहै है–हे देवी! तेरे मुखरूप चंद्रमाकी कांतितैं लज्जावान हुआ जो यह निशाकर (चंद्रमा), सो मानो कांतिकररहित हुआ है। अर उदयाचलपर्वतके मस्तकपर सूर्य उदयहोनेको संमुख भया है, मानो मंगलके अर्थ सिंदूरसे लिप्त स्वर्णका कलश ही है। अर तुम्हारे मुखकी ज्योतिसे, अर शरीरकी प्रभासे तिमिरका क्षय होयगा।अपना उद्योत वृथा जान दीपक मंद ज्योति भये है। अर पक्षियों के समूह मनोहर शब्द करै हैं, सो मानो तिहारे अर्थ मंगल ही पढै हैं। अर जो यह मंदिरमें बाग है, ताके वृक्षोंके पत्र प्रभातकी शीतल मंद सुगंध पवनतैं हालै हैं, अर मन्दिरकी वापिकामें सूर्यके बिम्बके विलोकनसे चकवी हर्षित भई, मिष्ट शब्द करती संती चकवेको बुलावै है। अर ये हंस तिहारी चाल देखकरि करी है–अति अभिलाषा जिन्होंने–सो हर्षित होय महामनोहर शब्दकरै हैं। अर सारसनिके समूहनि करि सुन्दर शब्द होय रहे हैं। तातै हे देवी! अब रात्रि पूर्ण भई, तुम निद्राको तजो। यह शब्द सुनकर माता सेजसे उठी। कैसी है सेज? बिखर रहे हैं कल्पवृक्षनिके फूल अर मोती जाविषै, मानो तारानिकरि संयुक्त आकाश ही है।

मरुदेवी माता सुगन्ध महलसे बाहिर आईं,अर सकल प्रभात की क्रियाकर जैसे सूर्यकी प्रभा सूर्य

के समीप जाय तैसें नाभिराजाके समीप गई। राजा देखकर सिंहासनतैं उठे,राणी बराबर आय बैठी,
हाथ जोडकर स्वप्ननिके समाचार कहे। तब राजाने कहा–हे कल्याणरूपिणी ! तेरे त्रैलोक्यका नाथ
श्रीआदीश्वर स्वामी प्रकट होयगा। यह शब्द सुनकर कमलनयनी चन्द्रवदनी परमहर्षको प्राप्त भई।
अर इन्द्रकी आज्ञासे कुवेर पन्द्रह महिनोंतक रत्नोंकी वर्षा करते भए। जिनके गर्भमें आए छै मास
पहिलेसे ही रत्नोंकी वरषा भई। इसलिए इन्द्रादिक देव इनका हिरण्यगर्भ ऐसा नाम कहि स्तुतिकरते
भए। अर तीनज्ञानकर संयुक्तभगवान माताके गर्भमें आय विराजे। माताकूं काहू प्रकारकी पीड़ा न भई।

जैसें निर्मल स्फटिककमहलसे बाहिर निकसिए तैसेंनवमें महीने ऋषभदेव स्वामीगर्भसे बाहिरआए,
तब नाभिराजाने पुत्रके जन्मका महान उत्सव किया। त्रैलोक्यके प्राणी अति हर्षितभए। इन्द्रके आसन
कम्पायमान भए। अर भवनवासी देवनिके यहां बिना बजाये शंख बाजे। अर व्यंतरनि के स्वयमेवही
ढोल बाजे,अर ज्योतिषीनिके देवोंके अकस्मात् सिंहनाद बाजे, अर कल्पवासीनके बिना बजाये घंटा
बाजे, या भांतिशुभ चेष्टानि करि तीर्थंकर देवका जन्मजान इन्द्रादिक देवता नाभिराजा के घर आये।
कैसे हैं इन्द्र ? ऐरावत हाथीपर चढ़े हैं,अर नानाप्रकारके आभूषण पहरे हैं। अनेक प्रकारके देव नृत्य
करते भए। देवनिके शब्दकरि दशोंदिशा गुंजार करती भई। अयोध्यापुरीकी तीन प्रदक्षिणा देयकरि
राजाके आंगनमें आए। कैसी है अयोध्या ? धनपतिनेरची है,पर्वत समान ऊंचेकोटसे मंडितहै,जिसकी
गंभीर खाई है, अर जहां नानाप्रकारके रत्नोंके उद्योतसे घर ज्योतिरूप होय रहेहैं। तब इन्द्रनेइन्द्राणी
कूं भगवानकेलावनेको माताके पास भेजी। इन्द्राणीजाय नमस्कार कर मायामयी बालककूं माताके
निकट राखि, भगवानको लाय इन्द्रके हाथमें दिया। कैसे हैं भगवान? त्रैलोक्यके रूपको जीतै ऐसा है
रूप जिनका। सो इन्द्र हजारनेत्रनिकरि भगवानकारूप देखता तृप्त न भया। बहुरि भगवानकूं सौधर्म
इन्द्र गोद में लेय हस्ती पर चढे.ईसान इन्द्रने छत्र धरे,अर सनत्कुमार–महेंद्र चमर ढोरते भये। अन्य
सकल इन्द्र अर देव जय जयकार शब्द उच्चारते भए। फिर सुमेरु पर्वतके शिखरपर पांडुक शिलापर

सिंहासन ऊपर धराये, अर अनेक बाजोंका शब्द होता भया,जैसा समुद्र गरजै । अर यक्ष किन्नर गंधर्व तुंबरु नारद अपनी स्त्रियों सहित गान करते भये । कैसा है वह गान? मन अर श्रोत (कान)का हरण-हारा है । जहां बीन आदि अनेक वादित्र बाजते भए,अप्सरा हाव भावकर नृत्य करती भई, अर इन्द्र स्नानके अर्थ क्षीरसागरके जलतैं स्वर्णकलश भर अभिषेक करनेको उद्यमीभए । कैसेहैं कलश? जिनका मुख एक योजनका है, अर चार योजनका उदर है, आठ योजन ओंड़े, अर कमल तथा पल्लवनि करि ढके हैं मुख जिनके । असे एक हजार आठ कलशोंसे इन्द्रने अभिषेक कराया । विक्रिया ऋद्धिकी समर्थतासे इन्द्रने अपने अनेक रूप किए । अर इन्द्रोंके लोकपाल सोम वरुण यम कुबेर सर्वहीअभिषेक करावते भए । इन्द्राणी आदि देवी अपने हाथोंसे भगवानके शरीर पर सुगंधका लेपन करती भई । कैसी हैं इन्द्राणी ? पल्लव (पत्र) समान हैं कर जाके । महागिरि समान जो भगवान तिनको मेघ समान कलशनितैं अभिषेक कराया, गहना पहरावननेका उद्यम किया । चांद सूर्य समान दोय कुंडल कानोंमें पहराये, अर पद्मरागमणिके आभूषण मस्तक विषै पहराए, जिनकी कांति दशों दिशाविषै प्रकट होती भई, अर अर्द्धचन्द्राकार ललाटविषै चंदनका तिलक किया, अर दोनों भुजानविषै रत्नों के बाजूबंद पहराए, अर श्रीवत्सलक्षणकरयुक्त जो हृदय उसपर नक्षत्रमाला समान मोतियों का सत्ताईस लड़ीका हार पहराया, अर अनेक लक्षणके धारक भगवान को महामणि मई कडे पहराए, अर रत्नमयी कटिसूत्रसे नितंब शोभायमान भया, जैसा पहाड़का तट सांझकी बिजली कर शोभै, अर सर्वअंगुरियोंविषै रत्नजडित मुद्रिका पहराई ।

इसभांति भक्तिकरि देवियोंने सर्व आभूषण पहराये, सो त्रैलोक्यके आभूषण जो श्री भगवान तिनके शरीरकी ज्योतितैं आभूषण अत्यन्त ज्योतिको धारते भए । अर आभूषणोंकी आपके शरीरको कहा शोभा होय ? अर कल्पवृक्षके फूलोंसे युक्त जो उत्तरासन सो भी दिया । जैसैं तारानितैं आकाश शोभै है तैसै पुष्पन कर यह उत्तरासन शोभै है । बहुरि पारिजातसन्तानकादिक जे कल्पवृक्ष तिनके

पुष्पनिकरि सेहरा रच्या, सिरपर पधराया जापर भ्रमर गुंजार करै हैं। या भांति त्रैलोक्यभूषणको आभूषण पहराए। इन्द्रादिक देव स्तुति करते भए, हे देव! कालके प्रभावकरि नष्ट हो गया है धर्म जाविषै ऐसा यह जगत् महा अज्ञान अन्धकारकरि भरचा है। ताविषै भ्रमण करते भव्य जीव, तेई भए कमल; तिनको प्रफुल्लित करने को, अर मोहतिमिरके हरणको तुम सूर्य उगे हो। हे जिनचंद्र! तुम्हारे वचनरूप किरणोंसे भव्य जीवरूपी कुमुदनीकी पंक्ति प्रफुल्लित होगी। भव्योंको तत्त्व दिखावनेके अर्थि इस जगत्रूप घरमें तुम केवलज्ञानमयी दीपक प्रकट भए हो। अर पापरूप शत्रुओं के नाशनेके अर्थि मानो तुम तीक्ष्ण वाण ही हो। अर तुम ध्यानाग्निकरि भवअटवीको भस्म करनेवाले हो। अर दुष्ट इन्द्रियरूप जो सर्प तिनके वशिकरवेकें अर्थि तुम गरुडरूप ही हो। अर संदेहरूप जे मेघ तिनके उडावनेको महा प्रबलपवन ही हो। हे नाथ! भव्यजीवरूपी पपैए तिहारे धर्मामृतरूप वचनके तिसाए तुमहीको महामेघ जानकरि सन्मुख भए देखैं हैं। तुम्हारी अत्यन्त निर्मल कीर्ति तीन लोकमें गाई जाती है, तुम्हारे ताईं नमस्कार होहु। अर तुम कल्पवृक्ष हो, गुणरूपपुष्पनिकरि मण्डित मनबांछित फलके देनेहारे हो, कर्मरूप काष्ठके काटने को तीक्ष्ण धारके धरण हारे महा कुठाररूप हो, तातैं हे भगवन्! तुम्हारे अर्थि हमारा बारम्बार नमस्कार होहु। अर मोहरूप पर्वतके भंजिवे को महा वज्ररूप ही हो, अर दुःखरूप अग्निके बुझावनेको तुम जलरूप ही हो, या अर्थि तुमको बारम्बार नमस्कार करूं हूं। हे निर्मलस्वरूप! तुम कर्मरूपरजके समूहसे रहित केवल आकाशरूप ही हो। या भांति इन्द्रादिक देव भगवान्की स्तुति करि बारम्बार नमस्कार करि, ऐरावत गजपर चढाय, अयोध्यामैं लावनेको सन्मुख भए। अयोध्या आए। इन्द्र माताकी गोद विषैं भगवानको पधराय कर परम आनन्दित हो तांडव नृत्य करते भए। या भांति जन्मोत्सव कर देव अपने अपने स्थान को गए। माता पिता भगवान को देखकर बहुत हर्षित भए। कैसे हैं श्रीभगवान्? अद्भुत आभूषणनितैं विभूषित हैं। बहुरि परम सुगन्धके लेपतैं चरचित हैं, अर सुन्दर चारित्रहैं जिनके। अपने शरीरकी कांतिसे

दशोंदिशा प्रकाशित हो रही है, महा कोमल शरीर है । माता भगवान को देख करि महा हर्षको प्राप्त भई । अर कहनेमें न आवैं सुख जिसका,ऐसे परमानंद सागरमैं मग्न भई । वह माता भगवानको गोदमें लिए ऐसी शोभती भई जैसैं ऊगते सूर्यतैं पूर्वदिशा शोभै । अर त्रैलोक्य के ईश्वर को देख नाभिराजा आपको कृतार्थ मानते भए, पुत्रके गात्रको स्पर्शकर नेत्र हर्षित भए,मन आनंदित भया । समस्तजगत-विषै मुख्य ऐसे जे जिनराज तिनका ऋषभ नाम धर माता पिता सेवा करते भए । हाथके अंगुष्ठमेंइंद्रने अमृत रस मेल्या,उसको पान कर शरीर वृद्धिको प्राप्त भया । बहुरि प्रभुकी वय (उमर)प्रमाण इंद्रने देवकुमार राखे, तिन सहित निःपाप क्रीड़ा (खेल) करते भए । कैसी है वह क्रीडा ? माता पिता को अतिसुख देनहारी है ।

अथानन्तर भगवानके आसन शयन सवारी वस्त्र आभूषण अशन पान सुगंधादि-विलेपन गीत नृत्य वादित्रादि सब सामग्री देवोपनीत होती भई । थोड़ेही कालमैं अनेक गुणनिकी वृद्धि होती भई । उनका रूप अत्यन्त सुन्दर जो वर्णनमें न आवै, मन अर नेत्रनिका तृप्त करनहारा,मेरुकी भीति समान महा-उन्नत, महादृढ़ वृक्षस्थल शोभता भया । अर दिग्गजनिके थंभसमान बाहु होती भई । कैसीहै वह बाहु? जगतकेअर्थ पूर्ण करनेको कल्पवृक्ष ही है । बहुरि दोऊ जंघा त्रैलोक्यरूपघरके थांभवेको थंभही हैं, अर मुख महासुन्दर मनोहर जिसने अपनी कांतितैं चंद्रमाको जीता है, अर दीप्तिकरि जीता है सूर्य जिसने अर दोऊ हाथ कोमलहूते अति कोमल, अर लाल है हथेली जिनकी, अर केश महासुन्दर सघन दीर्घ वक्र पतले चीकने श्याम हैं । मानो सुमेरुके शिखरपर नीलाचल ही विराजै हैं । अर रूप महा अद्भुत अनुपम सर्वलोकके लोचनको प्रिय, जिसपर अनेक कामदेव वारि नाखिए । ऐसे सर्व उपमा को उलंघै, सबका मन अर नेत्र हरै । या भांति भगवान कुमार अवस्थामें भी जगतको सुखदायक होते भए । उस समय कल्पवृक्ष सर्वथा नष्ट भए, अर बिना चाहे धान आपतैं आप ऊगे । तिनतैं पृथ्वी शोभती भई । अर लोक निपट भोले, षट्कर्मतैं अनजान, उन्होंने प्रथम इक्षुरसका आहार किया । वह आहार कांति

अर वीर्यादिकके करनेको समर्थ है । कईएक दिन पीछे लोगोंको क्षुधा बढी जो इक्षु रसतै तृप्ति न भई । तब सर्व लोक नाभिराजाके निकट आए, अर नमस्कारकर विनती करते भए कि–हे नाथ ! कल्पवृक्ष समस्त क्षय हो गए, अर हम क्षुधा तृषाकर पीडित हैं; तुम्हारे शरण आए हैं, तुम रक्षा करो । यह कितनेक फलयुक्त वृक्ष पृथ्वीपर प्रकट भए हैं इनकी विधि हम जानते नहीं हैं । इनमें कौन भक्ष्य है कौन अभक्ष्य है । अर गाय भैंसके थनोंसे कुछ झरै है,पर वह क्या है? अर यह व्याघ्र सिंहादिक पहले सरल थे, अब वक्रतारूप दीखै हैं । अर ये महामनोहर स्थलपर अर जलमें पुष्प दीखैं हैं सो कहा हैं ? हे प्रभु ! तुम्हारे प्रसाद कर आजीविकाका उपाय जानैं तो हम सुखसों जीवैं । यह वचन प्रजाके सुन करि नाभिराजाको दया उपजी । नाभिराजा महाधीर तिनसों कहते भए कि या संसारविषै ऋषभ-देव समान और कोऊ भी नाहीं । जिनकी उत्पत्तिमें रत्नोंकी वृष्टि, अर इन्द्रादिक देवों का आगमन भया, लोकनिको हर्ष उपज्या, वह भगवान महा अतिशय संयुक्त हैं । तिनके निकट जायकर हम तुम आजीवकाका उपाय पूछैं, भगवानका ज्ञान मोहतिमिरसे अंतातिष्ठचा है । तिन प्रजासहित नाभिराजा भगवानके समीप गए अर समस्त प्रजा नमस्कार कर भगवानकी स्तुति करती भई–हे देव ! तुम्हारा शरीर सब लोकनिको उलंघकर तेजमय भासै है । सर्व लक्षणसंपूर्ण महा शोभायमान है, अर तुम्हारे अत्यन्त निर्मलगुण सब जगतमैं व्याप रहे हैं, वे गुण चन्द्रमाकी किरण समान उज्ज्वल महा आनंदके करणहारे हैं । हे प्रभु ! हम या कार्यके अर्थ तुम्हारे पिताके पास आये थे सो ये तुम्हारे निकट लाए हैं । तुम महापुरुष महाविद्वान् महा अतिशयकरमंडित हो, जो ऐसैं बड़े पुरुष भी तुमको सेवैं हैं, इस-लिए तुम दयालु हो, हमारी रक्षा करो । क्षुधा–तृषा हरनेका उपाय कहो,अर जाकरि सिंहादिक क्रूर जीवनिका भी भय मिटै सो उपाय बताओ । तब भगवान कृपानिधि,कोमल है हृदय जिनका, इंद्रको कर्मभूमिकी रीति प्रकट करनेको आज्ञा करते भए । प्रथम नगर ग्राम गृहादिक की रचना भई । अर जे मनुष्य शूरवीर जाने, तिनको क्षत्री वर्ण ठहराए, अर उनको यह आज्ञा भई कि–तुम दीन अनाथनिकी

रक्षा करो। कईएकनको वाणिज्यादिक कर्म बताकर वैश्य ठहराए। अर जो सेवादिक अनेक कर्मके करनहारें थे,उनको शूद्र ठहराए। या भांति भगवानने किया जो यह कर्मभूमिरूप युग उसको प्रजा कृत-युग (सत्ययुग) कहते भए अर परम हर्षको प्राप्त भए। श्रीऋषभदेवके सुनंदा अर नंदा यह दो राणी भई। बड़ी राणीके भरतादिक सौ पुत्र अर एक ब्राह्मी पुत्री भई। अर दूसरी राणीके बाहुबल एक पुत्र अर सुन्दरी एक पुत्री भई। ऐसै भगवान ने त्रेसठ लाखपूर्वकाल तक राज किया,अर पहले बीसलाख पूर्व कुमार रहे। या भांति तिरासीलाख पूर्व गृहमें रहै।

एक दिन नीलांजना अप्सरा भगवानके निकट नृत्य करती करती विलाय (मर) गई, ताकों देखकर भगवानकी बुद्धि वैराग्यमें तत्पर भई। वह विचारने लगे कि ये संसारके प्राणी वृथाही इंद्रियों को रिझाकर उन्मत्त चारित्रनिकी विडंबना करै हैं, अपने शरीरको खेदका कारण जो जगतकी चेष्टा, तातैं जगतके जीव सुख मानै हैं। इस जगतके कईएक तो पराधीन चाकर होय रहे हैं। कईएक आपको स्वामी मान तिनपर आज्ञा करै हैं, जिनके वचन गर्वतैं भरे हैं। धिक्कार है या संसार को, जामैं जीव दुःख ही भोगै हैं, अर दुःखहीको सुख मान रहे हैं। तातैं मैं जगतके विषय-सुखोंको तजकर तपसंयमादि शुभ चेष्टा कर मोक्षसुखकी प्राप्तिकेअर्थि यत्न करू। यह विषयसुख क्षणभंगुर हैं,अर कर्मके उदय से उपजे हैं, इसलिए कृत्रिम (बनावटी) हैं। या भांति श्रीऋषभदेवका मन वैराग्यचितवन में प्रवरत्या। तब ही लौकांतिक देव आय स्तुति करते भए कि—हे नाथ! तुमने भली विचारी। त्रैलोक्य में कल्याण का कारण यह ही है। भरतक्षेत्रमें मोक्षका मार्ग विच्छेद भया था,सो आपके प्रसादतैं अब प्रवरतैगा। ये जीव तुम्हारे दिखाए मार्गसे लोकशिखर अर्थात् निर्वाणको प्राप्त होंगे। या भांति लौकांतिक देव स्तुतिकर अपने धाम गए। अर इन्द्रादिक देव आयकर तपकल्याणका समय साधते भए। रतन जडित सुदर्शन नामा पालकीमें भगवानको चढाया। कैसी है वह पालकी? कल्पवृक्षनिके फूलों की मालातैं महा सुगंधित है, अर मोतिनके हारोंसे शोभायमान है। भगवान ता पालकीपर चढकर घरतैं वनकों

चले। नानाप्रकारके वादित्रोंके शब्द अर देवों के नृत्यसे दशोंदिशा शब्दरूप भई। अर महा विभूति संयुक्त तिलकनामा उद्यानमें गए। माता पितादिक सर्व कुटुंबतें क्षमाभाव कराकर अर सिद्धों को नमस्कारकर मुनिपद अंगीकार किया। समस्त वस्त्र आभूषण तजे। अर केशोंका लोंच किया। वे केश इन्द्रने रत्नोंके पिटारेमें रखकर क्षीरसागरमें डारे। भगवान जब मुनिराज भए, तदि चार हजार राजा मुनिपदको न जानते हुवे केवल स्वामीकी भक्तिके कारण तिनके साथ नग्नरूप भए। भगवानने छः महिने पर्यंत निश्चल कायोत्सर्ग धरचा। अर्थात् सुमेरु पर्वत समान निश्चल होय तिष्ठे, अर इंद्रियनिका निरोध किया।

अथानंतर कच्छ महाकच्छादिक राजा जो नग्नरूप धारण करि दीक्षित भए हुते ते सर्व ही क्षुधा तृषादि परीषहनिकरि चलायमान भए। कईएक तो परीषहरूप पवनके मारे भूमिपर गिर पड़े। कई एक जो महा बलवान हुते, वो भूमिपर तो न पड़े परन्तु बैठ गए। कई एक कायोत्सर्गको तज क्षुधा तृषातें पीडित होय फलादिक आहार करते भए। अर कई एक गरमीतैं तप्तायमान होयकर शीतल-जलमें प्रवेश करते भए। तिनकी यह चेष्टा देखकर आकाश में देववाणी भई कि 'मुनिरूप धारकर तुम ऐसा काम मत करो। यह रूप धार तुमको ऐसा कार्य करना नरकादि दुःखनिका कारण है। तदि वे नग्नमुद्रा तजकर बल्कल पत्र धारते भए, कई एक चरमादि धारते (पहनते) भए। कई एक दर्भ (कुशादिक) धारते भए अर फलादिकतैं क्षुधाको, शीतल जलतैं तृषाको निवारते भए। या प्रकार ये लोग चरित्र-भ्रष्ट होयकर, अर स्वेच्छाचारी बनकर भगवानके मतसे पराङ्मुख होय शरीर का पोषण करते भए। किसीने पूछा कि तुम यह कार्य भगवानकी आज्ञातैं करो हो? तब उन्होंने कह्या कि भगवान तो मौनरूप हैं, कुछ कहते नाहीं। हम क्षुधा तृषा शीत उष्णसे पीडित होइकर यह कार्य करैं हैं। बहुरि कईएक परस्पर (आपसमें) कहते भए, कि आवो गृहमैं जाय कर पुत्र दारादिक का अवलोकन करैं। तदि उनमेंतैं किसीने कहा—जो हम घरमैं जावैंगे तो भरत घरमें तौं निकास देइंगे।

अर तीव्रदंड देंगे, इसलिए घर नहीं जाना। तदि बन ही में रहे। इन सबमें महामानी मारीच भरतका पुत्र, भगवानका पोता भगवे वस्त्र पहनकर परिब्राजिक (सन्यासीका) मार्ग प्रकट करता भया।

अथानन्तर कच्छ महाकच्छके पुत्र नमि विनमि आयकर भगबानके चरणों में पड़े, अर कहने लगे कि हे प्रभु! तुमने सबको राज्य दिया, हमको भी दीजिये। या भांति याचना करते भए। तब धरणींद्र का आसन कम्पायमान भया। धरणींद्रने आयकर इनको विजयार्द्ध का राज दिया। कैसा है वह विजयार्द्ध पर्वत? भोगभूमिके समान है। पृथ्वी तलसे पच्चीस योजना ऊंचा है, अर सवा छै योजनका केन्द्र है, अर भूमिपर पचास योजन चौडा है; अर भूमितै दश योजन ऊंचे उठिए तहां दश दश योजनि की दोय श्रेणी हैं:-एक दक्षिणश्रेणी, एक उत्तरश्रेणी। इन दोनों श्रेणियोंमें विद्याधर बसै हैं। दक्षिण श्रेणीकी नगरी पचास, अर उत्तर श्रेणीकी साठ। एक-एक नगरीको कोटि कोटि ग्राम लागै है। अर दश योजनसे बहुरि ऊपर दश योजन जाइये तहां गंधर्वकिन्नर देवोंके निवास हैं। अर पांच योजन ऊपर जाइये तहां नवशिखर हैं। उनमें प्रथम सिद्धकूट उसमें भगवान के अकृत्रिम चैत्यालय हैं, अर देवोंके स्थान हैं। सिद्धकूटपर चारणमुनि आयकर ध्यान धरै हैं। विद्याधरोंकी दक्षिणश्रेणी की जो पचास नगरी हैं उनमें रथनूपुर मुख्य है। अर उत्तरश्रेणी की जो साठ नगरी हैं उनमें अलकावती नगरी मुख्य है। कैसा है वह विद्याधरनिका लोक? स्वर्गलोकसमान है सुख जहां, सदा उत्साह ही प्रवर्त्तै है। नगरीके बडे बडे दरवाजे, अर कपाटयुगल, अर सुवर्णके कोट, गम्भीर खाई, अर वन उपवन वापी कूप सरोवरादिसे महाशोभायमान है। जहां सब ऋतुके धान अर सर्व ऋतुके फलफूल सदा पाइए हैं। जहां सर्व औषधि सदा पाइये हैं, जहां सर्व कामका साधन है, सरोवर कमलोंसे भरे जिनमें हंस क्रीडा करै हैं, अर जहां दधिदुग्धघृतमिष्टान्नोंके नीझरने बहै हैं। कैसी है वापी? जिनके मणिसुवर्ण के सिवान (पैडी) हैं और कमलके मकरंदोंसे शोभायमान है। जहां कामधेनुसमान गाय हैं, अर पर्वत समान अनाजके ढेर हैं, अर मार्ग धूलकंटकादिरहित हैं, मोटे वृक्षोंकी छाया है। अर महामनोहर जलके

पद्म पुराण ४७

निवाण हैं। चौमासेमें मेघ मनवांछित बरसै हैं, अर मेघोंकी आनन्दकारी ध्वनि होय है। शीतकालमें शीतकी विशेष बाधा नाहीं। अर ग्रीष्मऋतुमें विशेष आताप नाहीं। जहां छहोंऋतुके विलास हैं,जहां स्त्री सर्वआभूषणमंडित कोमलअंगवाली हैं अर सर्वकलानिमैं प्रवीण षट्कुमारिका समान प्रभावाली हैं। कैसी हैं वे विद्याधरी ? कई एक तो कमलके गर्भ समान प्रभाको धरै हैं, कईएक श्यामसुन्दर नील कमलकी प्रभाको धारै हैं, कईएक सिहकनाके फूलसमान रंगकूं धरै हैं, कई एक विद्युत समान ज्योतिको धरै हैं। ये विद्याधरी, महासुगंधित शरीरवाली हैं मानों नंदनवनकी पवनहीसे बनाई हैं। सुन्दर फूलों के गहने पहरे हैं सो मानो बसन्तकी पुत्री ही हैं। अर चन्द्रमा समान कांति है मानो अपनी ज्योतिरूप सरोवरमें तिरै ही हैं। अर श्याम श्वेत सुरंग तीन वर्णके नेत्रनि की शोभा को धरणहारी, मृगसमान हैं नेत्र जिनके, हंसनी समान है चाल जिनकी, वे विद्याधरी देवांगना समान शोभै हैं। अर पुरुष विद्याधर महासुन्दर शूरवीर सिंहसमान पराक्रमी हैं। महाबाहु, महापराक्रमी, आकाशगमनविषैं समर्थ, भले लक्षण–भली क्रियाके धरणहारे, न्यायमार्गी, देवोंके समान हैं प्रभा जिनकी, ऐसी अपनी स्त्रियों सहित विमानमें बैठे अढाई द्वीपमैं जहां इच्छा होय तहां ही गमन करै हैं। या भांति दोनों श्रेणियोंमें वे विद्याधर देवतुल्य इष्टभोगनिको भोगते महाविद्याओं को धरै हैं। कामदेवसमान है रूप जिनका, अर चन्द्रमाके समान है वदन जिनका, धर्मके प्रसाद से प्राणी सुख सम्पति पावै हैं। तातैं एक धर्म ही विषैं यत्न करो, अर ज्ञान रूप सूर्य अज्ञानरूप तिमिरको हरो।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराणकी भाषाटीकाविषैं विद्याधर लोकका कथन जाविषैं है ऐसा तीसरा अधिकार संपूर्ण भया ॥ ३॥

अथानन्तर वे भगवान ऋषभदेव महाध्यानी, सुवर्ण समान प्रभाके धरणहारे प्रभु, जगतके हित करने निमित्त छैमास पीछैं आहार लेनेको प्रवृत्ते। लोक मुनिके आहारकी विधि जानै नाहीं। अनेक

नगर ग्रामविषै विहार किया,मानो अद्भुत सूर्य ही विहार करै हैं। जिन्होंने अपने देहकी कांतिसे पृथ्वी-मंडल पर प्रकाश कर दिया है, जिनके कांधे सुमेरुके शिखर समान दैदीप्यमान हैं, अर परम समाधानरूप अधोदृष्टि देखते, जीव दया पालते, विहार करैं हैं। पुर ग्रामादिमें लोक अज्ञानी नाना प्रकार के वस्त्र रत्न हाथी घोड़े रथ कन्यादिक भेट करते सो प्रभुके कुछ भी प्रयोजन नाहीं। या कारण प्रभु फिर वनको चले जाय हैं। या भांति छै महीने तक विधिपूर्वक आहारकी प्राप्ति न भई अर्थात् दीक्षा समयसे एक वर्ष बिना आहार बीता। पीछै विहार करते हुए हस्तिनापुर आये। तदि सर्व ही लोक पुरुषोत्तम भगवानको देखकर आश्चर्यको प्राप्तभये। राजा सोमप्रभ अर तिनके लघुभ्राता श्रेयांस ये दोनों ही भाई उठकर सन्मुख चाले। श्रेयांसको भगवानके देखनतैं ही पूर्वभवका स्मरण भया, अर मुनिके आहारकी विधि जानी। वह नृप भगवानकी प्रदक्षिणा देते ऐसे शोभै हैं मानो सुमेरुकी प्रदक्षिणा सूर्य ही दे रहा है। अर बारम्बार नमस्कार कर रत्नपात्रतैं अर्घ देय चरणारविन्द धोय,अर अपने शिर के केशनितैं पोंछे। तदि आनन्दके अश्रुपात आये,अर गदगद बाणी भई। श्रेयांसने–जिसका चित्तभगवान के गुणनिमैं अनुरागी भया है, महा पवित्र रत्नन के कलशोंमें रखे हुवे महा शीतल मिष्ट इक्षुरसका आहार दिया। परम श्रद्धा अर नवधा भक्तिसे दान दिया। वर्षोपवास पारणा भया ताके अतिशयतैं देव हर्षित होय पांच आश्चर्य करते भए। प्रथम ही रत्ननिकी वर्षा भई। बहुरि कल्पवृक्षों के पंच प्रकारके पुष्प बरसे। शीतल मंद सुगन्ध पवन चाली। अर अनेक प्रकार दुन्दुभी बाजे बाजे। अर यह देव-वाणी भई कि धन्य यह पात्र, अर धन्य यह दान, अर दानका देनहारा श्रेयांस! ऐसे शब्द देवताओं के आकाशमें भये। श्रेयांसकी कीर्ति देखकर दानकी रीति प्रकट भई। देवतानिकर श्रेयांस प्रशंसा योग्य भए, अर भरतने अयोध्यातैं आयकर श्रेयांसकी बहुत स्तुति करी, अति प्रीति जनाई। भगवान आहार लेयकर वनमें गये।

अथानन्तर भगवानने एक हजार वर्षपर्यंत महातप किया। अर शुक्लध्यानतै मोहका नाशकर

केवलज्ञान उपजाया। कैसा है वह केवलज्ञान? लोकालोकका अवलोकन है जाविषै। जब भगवान् केवलज्ञानको प्राप्त भए तदि अष्ट प्रातिहार्य प्रकटे, प्रथम तो आपके शरीरकी कांतिका ऐसा मंडल हुआ जातैं चंद्र सूर्यादिका प्रकाश मंद नजर आवै, रात्रि दिवसका भेद नजर न आवे। अर अशोकवृक्ष रत्नमई पुष्पोंसे शोभित, रक्त हैं पल्लव जाके। अर आकाशतैं देवोंने फूलों की वर्षा करी, जिनकी सुगंध से भ्रमर गुंजार करै हैं। महा दुंदुभी बाजोंकी ध्वनि होती भई, जो समुद्रके शब्दनितैं भी अधिक देवोंने बाजे बजाए। कैसे हैं देव? जिनका शरीर मायामई करि दीखता नाहिं। अर चन्द्रमाकी किरणतैं भी अधिक उज्ज्वल चमर इंद्रादिक ढारते भए, अरु सुमेरुके शिखरतुल्य पृथ्वीका मुकुट सिंहासन आपके विराजनेंको प्रकट भया। कैसा है सिंहासन? अपनी ज्योतिकर जीतो है सूर्यादिककी ज्योति जानै, अर तीन लोकको प्रभुताके चिह्न मोतियोंकी झालरसे शोभायमान तीन छत्र अति शोभैं हैं, मानो भगवान के निर्मल यश ही हैं। अर समोसरणमैं भगवान सिंहासन पर विराजे सो समोसरणकी शोभा कहने केवली ही समर्थ हैं, और नाहीं। चतुरनिकायके देव सबही बंदना करनेको आए। भगवानके मुख्य गणधर वृषभसेन भये। आपके द्वितीय पुत्र अर अन्य भी बहुत जे मुनि भए थे वे महा वैराग्यके करणहारे मुनि आदि बारह सभाके प्राणी अपने अपने स्थानकविषै बैठे। तदनन्तर भगवानकी दिव्यध्वनि होती भई, जो अपने नादकर दुंदुभी बाजोंकी ध्वनिको जीतै है। भगवान जीवोंके कल्याणनिमित्त तत्त्वार्थका कथन करते भये कि—तीनलोकमें जीवोंको धर्म ही परम शरण है। याहीतैं परम सुख होय है। सुखके अर्थि सभी चेष्टा करै हैं, अर सुख धर्मके निमित्तसे ही होय है। ऐसा जानकर धर्मका यत्न करहु। जैसे मेघ बिना वर्षा नाहीं, बीज बिना धान्य नाहीं, तैसैं जीवनिके धर्म बिना सुख नाहीं। अर जैसे कोई पंगु (लंगडा) पुरुष चलने की इच्छा करै, अर गूंगा बोलनेकी इच्छा करै, अर अंधा देखनेकी इच्छा करै, तैसैं मूढप्राणी धर्म विना सुखकी इच्छा करै है। जैसैं परमाणुतैं और कोई अल्प (सूक्ष्म) नाहीं, अर आकाशतैं कोई महान् (बड़ा) नाहीं, तैसैं धर्म समान जीवोंका अन्य कोई मित्र नाहीं, अर दया समान कोई धर्म नाहीं।

मनुष्यके भोग, अर स्वर्ग के भोग, अर सिद्धनके परमसुख धर्महीतैं होय हैं। तातैं धर्म बिना और उद्यमकर कहा? जे पंडित जीवदयाकर निर्मल धर्मको सेवैं हैं, तिनहीका ऊर्ध्वगमन है,दूसरे अधोगति जाय हैं। यद्यपि द्रव्यलिंगी मुनि तपकी शक्तितैं स्वर्गलोकमैं जाय हैं, तथापि बड़े देवोंके किंकर होयकर तिनकी सेवा करै हैं। देवलोकमैं नीच देव होना देव—दुर्गति है। सो देवदुर्गतिके दुःखको भोगकर तिर्यंच गतिके दुखको भोगै हैं। अर जे सम्यग्दृष्टि जिनशासनके अभ्यासी, तपसंयमके धरणहारे, देवलोकमैं जाय हैं, ते इन्द्रादिक बड़े देव होयकर बहुत काल सुख भोग, देवलोकतैं चय, मनुष्य होय मोक्ष पावै हैं। सो धर्म दोय प्रकारका है—एक यतिधर्म दूसरा श्रावक धर्म। तीजा धर्म जो मानै हैं वे मोहअग्निसे दग्ध हैं। पांच अणुव्रत, तीन गुणव्रत, चार शिक्षाव्रत यह श्रावकका धर्म है। श्रावक मरण समय सर्व आरम्भ तज शरीरतैं भी निर्ममत्व होय, समाधिमरण करि उत्तमगतिको जाय है। अर यतीनको धर्म पंच महाव्रत, पंच समिति,तीन गुप्ति यह तेरह प्रकारका चारित्र है। दशों दिशा ही यतिके वस्त्र हैं। जो पुरुष यतिका धर्मधारै हैं, वे शुद्धोपयोगके प्रसाद करि निर्वाण पावै हैं। अर जिनके शुभोपयोगकी मुख्यता है ते स्वर्ग पावै हैं, परम्पराय मोक्ष जाय हैं। अर जे भावोंसे मुनियोंकी स्तुति करै हैं ते हू धर्मको प्राप्त होय हैं? कैसे हैं मुनि? परम ब्रह्मचर्य्यकेधारण हारे हैं। यह प्राणी धर्मके प्रभावतैं सर्व पापोंसे छूटै है अर ज्ञानकूं पावै है। इत्यादिक धर्मका कथन देवाधिदेवने किया सो सुनकर सर्व पापनितैं निवृत्त भए। अर देव मनुष्य सर्व ही परम हर्षकूं प्राप्त भए। कईएक तो सम्यक्त्वको धारण करते भए, कईएक सम्यक्त्व सहित श्रावकके व्रतकूं धारते भए, कईएक मुनिव्रत धारते भए। बहुरि सुर असुर मनुष्य धर्मश्रवण कर अपने अपने धाम गए। भगवानने जिन जिन देशोंमैं गमन किया उन उन देशोंमें धर्मका उद्योत भया। आप जहां जहां विराजे तहां तहां सौ सौ योजन तक दुर्भिक्षादिक सर्व बाधा मिटी। प्रभुके चौरासी गणधर भए, अर चौरासी हजार साधु भए। इनकरि मंडित सर्व उत्तम देशनिविषै विहार किया।

अथानन्तर भरत चक्रवर्तीपदकूं प्राप्त भए, अर भरतके भाई सब ही मुनिव्रत धार परमपदको

प्राप्त भए। भरतने कुछ काल छै खंडका राज्य किया, अयोध्या राजधानी, नवनिधि चौदह रत्न, प्रत्येक की हजार हजार देव सेवा करैं, तीन कोटि गाय, एक कोटि हल, चौरासी लाख हाथी, इतने ही रथ, अठारा कोड घोड़े, बत्तीस हजार मुकुटबंद राजा अर इतने ही देश महासंपदाके भरे, छियानवे हजार रानी देवांगना समान, इत्यादिक चक्रवर्तीके विभवका कहां तक वर्णन करिए। पोदनापुरमें दूसरी माताका पुत्र बाहुबली, सो भरतकी आज्ञा न मानते भए। कह्या कि–हम भी ऋषभदेव के पुत्र हैं, किसकी आज्ञा मानें? तब भरत बाहुबलिपर चढे, सेनाका युद्ध न ठहरा, दोऊ भाई परस्पर युद्ध करैं–ठहरा। तीन युद्ध थापे १ दृष्टियुद्ध, २ जलयुद्ध, अर ३ मल्लयुद्ध। तीनोंही युद्धोंमें बाहुबली जीते, अर भरत हारे। तब भरतने बाहुबलीपर चक्र चलाया, वह उनके चरम शरीरपर घात न कर सका, लौटकर भरतके हाथपर आया। भरत लज्जित भए, बाहुबली सर्व भोग त्याग कर वैरागी भए। एकवर्षपर्यंत कायोत्सर्ग धरि निश्चल तिष्ठे, शरीर बेलोंसे वेष्टित भया, सापोंने बिल किए। एक वर्ष पीछे केवलज्ञान उपज्या। भरतचक्रवर्तीने आय कर केवलीकी पूजा करी। बाहुबली केवली कुछ कालमैं निर्वाणको प्राप्त भए। अवसर्पिणीकालमैं प्रथम मोक्षको गमन किया। भरत चक्रवर्तीने निष्कंटक छै खंडका राज्य किया। जिसके राज्यमैं विद्याधरोंके समान सर्व संपदाके भरे, अर देवलोक समान नगर, महा विभूति कर मंडित, जिनमें देवों समान मनुष्य नानप्रकारके वस्त्राभरण करि शोभायमान अनेक प्रकारकी शुभ चेष्टा कर रमते हैं। लोक भोगभूमि समान सुखी, अर लोकपाल समान राजा। अर मदनके निवासकी भूमि, अप्सरा समान नारियां। जैसैं स्वर्गविषै इन्द्र राज करै तैसैं भरतने एक छत्र पृथिवीविषै राज किया। भरतके सुभद्रा राणी इन्द्रानी समान भई। जिसकी हजार देव सेवा करैं। चक्रीके अनेक पुत्र भए तिनकों पृथ्वीका राज दिया। इस प्रकार गौतम स्वामी ने भरतका चरित्र श्रेणिक राजा से कहा।

अथानन्तर श्रेणिकने पूछा–हे प्रभो! तीन वर्णकी उत्पत्ति तुमने कही सो मैंने सुनी, अब विप्रों

की उत्पत्ति सुना चाहू हूं सो कृपाकर कहो। गणधर देव जिनका हृदय जीवदयाकर कोमल है, अर मदमत्सरकर रहित हैं, वे कहते भए कि एक दिन भरतने अयोध्याके समीप भगवान का आगमन जान, समोसरणमैं जाय बंदना कर मुनिके आहारकी विधि पूछी। तब भगवानकी आज्ञा भई कि मुनि तृष्णाकर रहित, जितेंद्री, अनेकमासोपवास करैं, पराए घर निर्दोष आहार लेय अंतराय पडै तो भोजन न करैं, प्राणरक्षानिमित्त निर्दोष आहार करैं, अर धर्मके हेतु प्राणको राखैं, अर मोक्षके हेतु उस धर्मको आचरैं, जिसमैं किसी भी प्राणीको बाधा नाहीं। यह मुनिका धर्म सुन कर चक्रवर्ती विचारै है–'अहो ! यह जैनका व्रत महा दुर्धर है। मुनि शरीरसे भी निःस्पृह (निर्ममत्व) तिष्ठे हैं तो अन्य वस्तुमैं तो उनकी वांछा कैसे होय ? मुनि महा निर्ग्रंथ निर्लोभी सर्व जीवोंकी दयाविषै तत्पर हैं। मेरे विभूति बहुत है, मैं अणुव्रती श्रावकको भक्ति कर दूं, अर दीन लोकनिको दया कर दूं। ये श्रावक भी मुनिके लघु भ्राता हैं। ऐसा विचारकर लोकनिको भोजनके अर्थि बुलाए, अर व्रतियोंकी परीक्षा निमित्त–आंगणमें जो शालि धान उर्द मूंगनि बोए थे, तिनके अंकुर ऊगे। सो अविवेकी लोक तो हरितकायको खूंदते आए। अर जे विवेकी थे, वे अंकुर जान खड़े होय रहे। तिनको भरत अंकुरहित जो मार्ग उसपर बुलाया, अर व्रती जान बहुत आदर किया। अर यज्ञोपवीत(जनेऊ) कंठमैं डाला, आदरसे भोजन कराया, वस्त्राभरण दिये, अर मनवांछित दान दिये। अर अंकुरको दल मलते आए थे, तिनको अव्रती जान उनका आदर नहिं किया। अर व्रतियोंको ब्राह्मण ठहराए, चक्रवर्तीके माननेसे कई एक तो गर्वको प्राप्त भए, अर कईएक लोभकी अधिकतातैं धनवान् लोकनिको देखकर याचनाको प्रवर्त्तै।

तब मतिसमुद्र मंत्रीने भरतसे कहा–समोसरणमें मैंने भगवानके मुखसे ऐसा सुना है कि जो तुमने विप्र धर्माधिकारी जानकर माने हैं, ते पंचमकालमैं महा मदोन्मत्त होयंगे, अर हिंसामैं धर्म जानकर जीवोंको हनेंगे, अर महा कषायसंयुक्त सदा पाप क्रियामैं प्रवर्त्तेंगे, अर हिंसाके प्ररूपक ग्रंथों को अकृत्रिम मानकर समस्त प्रजाको लोभ उपजावैंगे। महा आरम्भविषैं आसक्त, परिग्रहमैं तत्पर, जिनभा-

षित जो मार्ग ताकी सदा निंदा करैंगे। निर्ग्रंथ मुनिको देख महा क्रोध करैंगे। ए वचन सुन भरत इन पर क्रोधायमान भए। तब यह भगवानके शरण गए। भगवानने भरतको कहा– हे भरत! जो कलिकालविषै ऐसा ही होना है, तुम कषाय मत करो। इसभांति विप्रोंकी प्रवृत्ति भई, अर जो भगवानके साथ वैराग्यको निकले ते चारित्रभ्रष्ट भए। तिनमेंतैं कच्छादिक कईएक तो सुलटे। अर मारीचादिक नहीं सुलटे। तिनके शिष्य प्रतिशिष्यादिक सांख्य योगमैं प्रवर्त्ते, कोपीन (लंगोटी) पहरी, बल्कलादि धारे। यह विप्रनिकी अर परिव्राजक कहिए दंडीनिकी प्रवृत्ति कही।

अथानन्तर अनेक जीवनिको भवसागरसे तारकर भगवान ऋषभ कैलाशके शिखर से लोकशिखर जो निर्वाण उसको प्राप्त भए। अर भरत भी कुछकाल राज्य कर जीर्ण तृणवत् राज्यको छोडकर वैराग्यको प्राप्त भए। अन्तर्मुहूर्तमैं केवलज्ञान उपज्या। पीछै आयु पूर्णकर निर्वाणको प्राप्त भए।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराणकी भाषाटीकाविषैं श्रीऋषभका कथन जाविषैं है ऐसा चौथा अधिकार संपूर्ण भया ॥४॥

अथ वंशोत्पत्ति नामा महाधिकार ॥५॥

अथानन्तर गौतम स्वामी राजा श्रेणिकसे वंशोंकी उत्पत्ति कहते भए कि–हे श्रेणिक इस जगतविषैं महावंश जो चार तिनके अनेक भेद हैं।

१ प्रथम इक्ष्वाकु वंश। यह लोकका आभूषण है, इसमैंसे सूर्य वंश प्रवर्त्या है। २ दूसरा सोम (चन्द्र) वंश, चंद्रमाकी किरण समान निर्मल है। ३ तीसरा विद्याधरोंका वंश अत्यन्त मनोहर है। ४ चौथा हरिवंश जगत विषै प्रसिद्ध है। अब इनका भिन्न भिन्न विस्तार कहैं हैं–

इक्ष्वाकुवंशमैं भगवान ऋषभदेव उपजे, तिनके पुत्र भरत भए, भरतके पुत्र अर्ककीर्ति भए। राजा अर्ककीर्ति महा तेजस्वी राजा हुए। इनके नामतैं सूर्यवंश प्रवर्त्या है। अर्क नाम सूर्यका है, अर्ककीर्तिका वंश सूर्यवंश कहलाता है। इस सूर्यवंशमैं राजा अर्ककीर्तिके सतयश नामा पुत्र भए। इनके बलांक, तिनके सुबल, रवितेज, तिनके महाबल, महाबलके अतिबल, तिनके अमृत, अमृतके सुभद्र, तिनके

सागर, तिनके भद्र, तिनके रवितेज, तिनके शशी, तिनके प्रभूततेज, तिनके तेजस्वी, तिनके तपबल, महाप्रतापी, तिनके अतिवीर्य, तिनके सुवीर्य, तिनके उदितपराक्रम, तिनके सूर्य, तिनके इंद्रद्युमणि, तिनके महेन्द्रजित, तिनके प्रभूत, तिनके विभु, तिनके अविध्वंस, तिनके वीतभी, तिनके वृषभध्वज, तिनके करुणांक, तिनके मृगांक। इस भांति सूर्यवंशविषै अनेक राजा भए, ते संसारके भ्रमणतैं भयभीत पुत्रोंको राज देय मुनिव्रतक धारक भए, महा निर्ग्रन्थ, शरीरसे भी निस्पृही। या सूर्यवंशकी उत्पत्ति तुझे कही। अब सोमवंशकी उत्पत्ति तुझे कहिये है सो सुन।

ऋषभदेवकी दूसरी राणीके पुत्र बाहुबली, तिनके सोमयश, तिनके सौम्य, तिनके महाबल, तिनके सुबल, तिनके भुजबली, इत्यादि अनेक राजा भये, निर्मल है चेष्टा जिनकी मुनिव्रत धार परम धाम को प्राप्त भए। कईएक देव होय मनुष्य जन्म लेकर सिद्ध भए। यह सोमवंशकी उत्पत्ति कही। अब विद्याधरनके वंशकी उत्पत्ति सुनहु।

नमि, रत्नमाली, तिनके रत्नवज्र, तिनके रत्नरथ, तिनके रत्नचित्र, तिनके चन्द्ररथ, तिनके वज्रजंघ, तिनके वज्रसेन, तिनके वज्रदंष्ट्र, तिनके बज्रध्वज, तिनके बज्रायुध, तिनके वज्र, तिनके सुवज्र, तिनके बज्रभृत, तिनके वज्राभ, तिनके वज्रबाहु, तिनके बज्रांक, तिनके बज्रसुन्दर, तिनके बज्रास्य, तिनके बज्रापाणि, तिनके बज्रभानु, तिनके वज्रवान, तिनके विद्युन्मुख, तिनके सुवक्र, तिनके विद्युद्दंष्ट्र, अर उनके पुत्र विद्युत, अर विद्युदाभ, अर विद्युद्वेग, अर विद्युत इत्यादि विद्याधरोंके वंशमैं अनेक राजा भए। अपने अपने पुत्रनिको राज देय जिनदीक्षा धर, रागद्वेषका नाशकर सिद्धपदको प्राप्त भए। कई एक देवलोक गये। जे मोहपाश से बंधे हुते ते राज्यविषै ही मरकर कुगतिको गए।

अब संजयतिमुनिके उपसर्गका कारण कहै हैं कि—विद्युद्दंष्ट्र नामा राजा दोऊं श्रेणीका अधिपति विद्याबलसे उद्धत विमानमैं बैठा विदेहक्षेत्रमैं गया। तहां संजयतिस्वामीको ध्यानारूढ देख्या, जिनका शरीर पर्वत समान निश्चल है। उस पापीने मुनिको देखकर पूर्वजन्मके विरोधसे उनको उठाकर पंचगिरि

पर्वतपर धरे, अर लोकोंको कहा कि इसे मारो। पापी जीवोंने यष्टि मुष्टि पाषाणादि अनेक प्रकार से उनको मारया। मुनिको शम भावके प्रसादसे रंचमात्र भी क्लेश न उपज्या, दुस्सह उपसर्गको जीत लोकालोकका प्रकाशक केवलज्ञान उपार्ज्या, सर्वदेव वंदनाको आए। धरणींद्र भी आए। वह धरणींद्र पूर्वभवमें मुनिके भाई थे, इसलिए क्रोधकर सब विद्याधरनिको नागफांससे बांधे। तब सबनने विनती करी कि यह अपराध विद्युद्दंष्ट्रका है। तब और तो छोड़े, अर विद्युद्दंष्ट्रको न छोडया, मारनेको उद्यमी भए। तदि देवोंने प्रार्थना करके छुडाया सो छोडया, परन्तु विद्या हर ली, तब याने प्रार्थना करी कि हे प्रभो! मुझे विद्या कैसे सिद्ध होयगी। धरणींद्रने कहा कि संजयतिस्वामीकी प्रतिमाके समीप तप क्लेश करनेसे तुमको विद्या सिद्ध होयगी, परन्तु चैत्यालयके उल्लंघनसे तथा मुनियोंके उल्लंघनसे विद्याका नाश होवैगा। इसलिए तुमको तिनकी वंदना करके आगैं गमन करना योग्य है। तब धरणींद्र ने संजयतिस्वामीको पूछया कि—हे प्रभो! विद्युद्दंष्ट्रने आपको उपसर्ग क्यों किया? भगवान संजयति स्वामीने कहा—कि मैं चतुर्गतिविषै भ्रमण करता शकट नामा ग्राममें दयावान प्रियवादी हितकार नामा महाजन भया। निष्कपटस्वभाव साधुसेवामें तत्पर, सो समाधिमरण कर कुमुदावती नगरीमें न्यायमार्गी श्रीवर्धन नामा राजा हुआ। उस ग्राममें एक ब्राह्मण जो अज्ञान तपकर कुदेव हुआ था तहांसे चयकर राजा श्रीवर्धनसे बह्निशिख नामा पुरोहित भया। वह महादुष्ट अकार्यका करणहारा आपको सत्यघोष कहावै। एक नेमिदत्त सेठके रत्न हरे। राणी रामदत्ताने जूवामें पुरोहितकी अंगूठी जीती अर दासीके हाथ पुरोहितके घर भेजकर रत्न मंगाये, अर सेठको दिए। राजाने पुरोहितको तीव्र दंड दिया। वह पुरोहित मरकर एकभवके पश्चात् यह विद्याधरोंका अधिपति भया, अर राजा मुनिव्रत धार कर देव भए। कईएक भवके पश्चात् यह हम संजयति भए, सो इसने पूर्वभवके प्रसंगसे हमको उपसर्ग किया। यह कथा सुन नागेन्द्र अपने स्थानको गए।

अथानन्तर उस विद्याधरके दृढरथ भए, ताके अश्वधर्मा पुत्र भए, उसके अश्वाय, उसके अश्वध्वज,

उसके पद्मनाभि, उसके पद्ममाली, उसके पद्मरथ, उसके सिंहजातिन, उसके मृगोधर्मा, उसके मेघास्त्र, उसके सिंहप्रभ, उसके सिंहकेतु, उसके शशांक, उसके चंद्राह्ण,उसके चन्द्रशेखर,उसके इंद्ररथ, ताके चंद्ररथ ताके वज्रधर्मा, ताके वज्रायुध, उसके चक्रधर्मा, उसके चक्रायुध, उसके चक्रध्वज, उसके मणिग्रीव, उसके मण्यंक, उसके मणिभासुर, उसके मणिरथ, उसके मन्यभास, उसके बिम्बोष्ठ, उसके लंबिताधर, उसके रक्तोष्ठ, उसके हरिचन्द्र, उसके पूर्णचन्द्र, उसके बालेंद्र, उसके चन्द्रमा, उसके चूड़, उसके व्योमचंद्र, उसके उडपानन, उसके एकचूड़, उसके द्विचूड़, उसके त्रिचूड़, उसके वज्रचूड़, उसके भूरिचूड़, उसके अर्कचूड़, उसके वन्हिजटी, उसके वन्हितेज, याभांति अनेक राजा भए। तिनमैं कई एक पुत्रनिको राज देय मुनि होय मोक्ष गए। कईएक स्वर्ग गये, कईएक भोगासक्त होय, वैरागी न भए, सो नरक तिर्यंचगतिको प्राप्त भए। या भांति विद्याधरका वंश कह्या। आगैं द्वितीय तीर्थंकर श्री अजितनाथ स्वामी उनकी उत्पत्ति कहै हैं।

जब ऋषभदेवको मुक्ति गए पचास लाख कोटिसागर भये, चतुर्थकाल आधा व्यतीत भया। जीवनिकी आयु, काय, पराक्रम घटते गए। जगतमैं काम लोभादिककी प्रवृत्ति बढ़ती भई। अथानंतर इक्ष्वाकुकुलमें ऋषभदेव हीके वंशमें अयोध्या नगरमें राजा धरणीधर भए। तिनके पुत्र त्रिदशजय देवोंके जीतनेहारे, तिनके इन्द्ररेखा रानी, ताके जितशत्रु पुत्र भया। सो पोदनापुरके राजा भव्यानन्द, तिनके अंभोदमाला राणी, ताकी पुत्री विजया जितशत्रुने परणी। जितशत्रुको राज देयकर राजा त्रिदश जय कैलाश पर्वतपर निर्वाणको प्राप्त भए। अथानन्तर–राजा जितशत्रुकी राणी विजयादेवीके अजितनाथ तीर्थंकर भए। तिनका जन्माभिषेकादिकका वर्णन ऋषभदेववत् जानना। जिनके जन्म होते ही राजा जितशत्रुने सर्व राजा जीते। तातैं भगवानका अजित नाम धर्या। अजितनाथके सुनया, नन्दा आदि अनेक राणी भई। जिनके रूपकी समानता इंद्राणी भी न करसकै। एक दिन भगवान अजितनाथ राजलोक सहित प्रभातसमयमें ही वनक्रीडाको गए, सो कमलोंका वन फूल्या हुवा देख्या।

अर सूर्यास्त समय उसही वनको सँकुचा हुआ देख्या, सो लक्ष्मीकी अनित्यता मानकर परम वैराग्यको प्राप्त भए। माता पितादि सर्व कुटुम्बतैं क्षमाभावकर ऋषभदेवकी भांति दीक्षा धरी। दशहजार राजा साथ निकसे। भगवाननें बेला पारणा अंगीकार किया। ब्रह्मदत्त राजाके घर आहार लिया। चौदह वर्ष तप करके केवलज्ञान उपजाया। चौतीस अतिशय तथा आठ प्रातिहार्य प्रकट भए। भगवानके नव्वे गणधर भए, अर एक लाख मुनि भए।

अजितनाथके काका विजयसागर जिनकी ज्योति सूर्यसमान है, तिनकी राणी सुमंगला, तिनके पुत्र सगर द्वितीय चक्रवर्ती भए। सो नवनिधि चौदहरत्न आदि इनकी विभूति भरत चकवर्तीके समान जाननी। तिनके समयमैं एक वृत्तान्त भया सो हे–श्रेणिक! तुम सुनहु। भरतक्षेत्रके विजयार्धकी दक्षिणश्रेणीमें चक्रवाल नगर, तहां राजा पूर्णघन विद्याधरनिके अधिपति, महाप्रभाव-मंडित, विद्याबलकरि अधिक, तिनने विहायतिलक नगरके राजा सुलोचनकी कन्या उत्पलमती जाची। राजा सुलोचनने निमित्तज्ञानीके कहनेतैं ताकूं न दीनी, अर सगर चक्रवर्तीकूं देनी विचारी। तब पूर्णघन सुलोचन पर चढ़ि आए। सुलोचनके पुत्र सहस्रनयन अपनी बहिनको लेकर भागे, सो बनमें छिप रहे। पूर्णघनने युद्धमें सुलोचनको मार नगरमें जाय कन्या ढूंढी, परन्तु न पाई। तदि अपने नगरको चले गये। सहस्रनयन निर्बल, सो बापका बध सुन पूर्णमेघ पर क्रोधायमान भए, परन्तु कछु कर नाहीं सकै। छिद्र हेरै। गहरे बनमें घुसा रहे। कैसा है वह वन? सिंह व्याघ्र अष्टापदादिकनिकर भरया है। पश्चात् चक्रवर्तीको एक मायामई अश्व लेय उड्या, सो जिस बनमें सहस्रनयन हुते, तहां आये। उत्पलमतीने चक्रवर्तीको देखकर भाईको कह्या कि चक्रवर्ती आप ही यहां पधारे हैं। तदि भाई प्रसन्न होयकर चक्रवर्तीको बहिन परणाई। सो यह उत्पलमती चक्रवर्तीकी पटराणी स्त्रीरत्न भई। अर चक्रवर्तीने कृपा करि सहस्रनयनको दोनों श्रेणीका अधिपति किया। सो सहस्रनयनने पूर्णघन पर चढ़कर युद्धमें पूर्णघनको मारया, अर बापका बैर लिया। चक्रवर्ती छहखंड पृथ्वीका राज करै।

अर सहस्रनयन चक्रवर्तीका साला विद्याधरनिकी दोऊ श्रेणीका राज करै। अर पूर्णमेघका बेटा मेघवाहन भयकर भाग्या। सहस्रनयनके योधा मारनेको लारें (पीछे) दौडे सो मेघवाहनने समोसरणमें श्रीअजितनाथकी शरण आया। इन्द्रने भयका कारण पूछ्या। तब मेघवाहनने कहा—'हमारे बापने सुलोचनको मारचा था। सो सुलोचनके पुत्र सहस्रनयनने चक्रवर्तीका बल पाय, हमारे पिताको मारचा, अर हमारे बंधु क्षय किये, अर मेरे मारनेके उद्यममें है। सो मैं मंदिर तैं हंसोंके साथ उड़कर भगवानकी शरण आया हूं'। ऐसा कहिकर मनुष्यनिके कोठेमें बैठ्या। अर सहस्रनयनके योधा याके मारणे को आये हुते इसको समोसरणमें आया जान, पाछे गए। अर सहस्रनयनको सकल वृत्तान्त कह्या। तब वह भी समोसरणमें आया। भगवानके चरणारबिंदके प्रसादतैं दोनों निर्वैर होय तिष्ठे। तदि गणधरने भगवानकूं इनके पिताका चरित्र पूछ्या। भगवान कहै हैं कि—जम्बूद्वीपके भरतक्षेत्रविषैं सद्गति नामा नगर, तहाँ भावन नामा बणिक, ताके आतकी नामा स्त्री, अर हरिदास नामा पुत्र, सो भावन चार कोटि द्रव्यका धनी हुता तो भी लोभ करि व्यापार निमित्त देशांतरको चाल्या। सो चलते समय पुत्रको सब धन सौंप्या, अर द्यूतादिक कुव्यसन न सेवनेकी शिक्षा दीनी। हे पुत्र! यह द्यूतादि (जूवा) कुव्यसन सब दोषनिका कारण है, इनको सर्वथा तजने, इत्यादि शिक्षा देकर आप धनतृष्णा के कारण जहाजके द्वारा द्वीपांतरको गया। पिताके गए पीछैं पुत्रने सर्व धन वेश्या, जूआ अर सुरापान इत्यादिक कुव्यसनकरि खोया। जब सर्व धन जाता रह्या, अर जुआरीनका देनदार होय गया तदि द्रव्यके अर्थि सुरंग लगाय राजाके महलमें चोरी को गया। सो राजाके महलतैं द्रव्य लावै अर कुव्यसन सेवै। कईएक दिनोंमें भावन परदेशतैं आया। घरमें पुत्रको न देख्या तदि स्त्रीको पूछ्या। स्त्री ने कही कि "इस सुरंगमें होयकर राजाके महिलमें चोरीको गया है।" तब यह पिता, पुत्रके मरण की आशंका करि ताके लावनेको सुरंगमें पैठ्या। सो वह तो जावै था, अर पुत्र आवै था सो पुत्रने जान्या यह कोई बैरी आवै है, सो उसने बैरी जानि खड्गसे मारचा। पीछे स्पर्शकर जान्या यह तो

मेरा बाप है, तब महादुखी होय, डरकर भाग्या। अर अनेक देश भ्रमणकरि मरचा। सो पिता पुत्र दोन्यों कुत्ते भए। फिर गीदड, फिर मार्जार भए, फिर रींछ भये, फिर न्योला भये, फिर भैंसे भये, फिर बलध भये, सो इतने जन्मोंमैं परस्पर घातकरि मरे। फिर विदेहक्षेत्रविषै पुष्कलावती देश में मनुष्य भये। उग्र तप करि एकादश स्वर्ग में उत्तर अनुत्तर नामा देव भए। तहांतैं आयकर जो भावन नामा पिता हुता वह तो पूर्णमेघ विद्याधर भया, अर हरिदास नामा पुत्र हुता सो सुलोचन नामा विद्याधर भया। या ही पूर्णमेघने सुलोचनको मारचा।

तब गणधर देवने सहस्रनयनको अर मेघवाहनको कह्याः—तुम अपने पिताओंका या भांति चरित्र जान संसारका बैर तजकर समताभावकूं धरो। अर सगरचक्रवर्तीने गणधरदेवको पूछाकि हे महाराज! मेघवाहन, अर सहस्रनयनका बैर क्यों भया? तदि भगवानकी दिव्यध्वनिमें आज्ञा भई कि जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्रविषै पद्मक नामा नगर है। तहां आरम्भ नामा गणितशास्त्रका पाठी महाधनवंत, ताके दोय शिष्य एक चन्द्र एक आवली भये। इन दोनोंमें मित्रता हुती, अर दोनों धनवान गुणवान विख्यात हुए। सो इनके गुरु आरम्भने जो अनेक नयचक्रमें अति विचक्षण हुता, मनमें विचारी कि कदाचित यह दोनों मेरा पदभंग करें। ऐसा जानकर इन दोनोंके चित्त जुदे कर डारे। एक दिन चन्द्र गाय बेचवेकूं गोपालके घर गया सो गाय बेचकर वह तो घर आवता हुआ, अर आवलीको उसी गायको गोपालतै खरीदकर लावता देख्या, इस कारण मार्गमें चन्द्रने आवलीको मारचा। सो म्लेच्छ भया, अर चन्द्र मरकर बलध भया, सो म्लेच्छने बलधको भख्या। म्लेच्छ नरक तिर्यंच योनिमैं भ्रमणकरि मूसा भया, अर चन्द्रका जीव मार्जार भया। मार्जारने मूसा भख्या। फिर ये दोऊ पापकर्मके योगतैं अनेक योनिमैं भ्रमणकरकाशीमें संभ्रमदेवकी दासीके पुत्र दोऊ भाई भए। एकका नाम कूट अर एकका
नाम करवट, सो इन दोनोंको संभ्रम देवने चैत्यालयकी टहलकूं राखे। सो मरकर पुण्यके योगतैं रूपानन्द अर स्वरूपानंद नामा व्यंतरदेव भए। रूपानंद तो चंद्रका जीव, अर स्वरूपानन्द आवलीका जीव। फिर

रूपानन्द तो चयकर कलूंवीका पुत्र कुलंधर भया। अर स्वरूपानन्द पुरोहितका पुत्र पुष्पभूत भया। ए दोनों परस्पर मित्र एक हालीके अर्थि बैरको प्राप्त भये, अर कुलंधर पुष्पभूतके मारवेको प्रवृत्या। एक वृक्षके तलै साधु विराजते हुते तिनसों धर्म श्रवणकर कुलंधर शांत भया। राजाने याको सामंत जान बहुत बढाया। पुष्पभूत, कुलंधरको जिनधर्मके प्रसादतैं संपत्तिवाहन देखकरि जैनी भया। वृतधर तीसरे स्वर्ग गया, अर कुलंधर भी तीसरें स्वर्ग गया। स्वर्गतैं चयकर दोनों धातकीखंडके विदेहविषैं अरिंजय पिता अर जयावती माताके पुत्र भये। एकका नाम अमरश्रुत दूजेका नाम धनश्रुत। ये दोनों भाई बड़े योधा सहस्रशिरसके एतवारी चाकर जगतमें प्रसिद्ध हुवे। एक दिन राजा सहस्रशिरस हाथी पकड़नेको बनमें गया। ये दोनों भाई साथ गये। बनमें भगवान केवली बिराजे हुते, तिनके प्रतापतैं सिंह मृगादिक जातिविरोधी जीवोंको एक ठौर बैठे देख राजा आश्चर्यको प्राप्त भया, आगै जाकर केवलीका दर्शन किया। राजा तो मुनि होय निर्वाण गये, अर ये दोनों मुनि होय; ग्यारहवें स्वर्ग गए। तहांतैं चयकर चन्द्रका जीव अमरश्रुत तो मेघवाहन भया, अर आवलीका जीव धनश्रुत सो सहस्रनयन भया। यह इन दोनोंके बैरका वृत्तांत है। फिर सगरचक्रवर्तीने भगवानकूं पूछ्या कि हे प्रभो! सहस्रनयनसों मेरा जो अतिहित है, सो इसमैं क्या कारण है, तदि भगवानने कह्या कि वह आरम्भ नामा गणित शास्त्रका पाठी मुनिनको आहार दान देकर देवकुरुभोगभूमि गया। तहांतैं प्रथम स्वर्गका देव होय कर पीछे चन्द्रपुरमें राजा हरि राणी धरादेवीके प्यारा पुत्र व्रतकीर्तन भया। मुनिपद धार स्वर्ग गया, अर विदेहक्षेत्रमें रत्नसंचयपुरमें महाघोष पिता चन्द्राणी माताके पयोबलनामा पुत्र होय, मुनिव्रत धार, चौदहवें स्वर्ग गया। तहांतैं चयकर भरतक्षेत्रमें पृथ्वीपुर नगरमें यशोधर राजा, अर राणी जयाके घर जयकीर्तन नामा पुत्र भया। सो पिताके निकट जिनदीक्षा लेकर विजय विमान गया। तहांतैं चयकर तू सगरचक्रवर्ती भया, अर आरम्भके भवमें आवली शिष्यके साथ तेरा स्नेह हुता सो अब आवलीका जीव सहस्रनयन, तासों तेरा अधिक स्नेह है। यह कथा सुन चक्रवर्तीके विशेष

धर्मरुचि हुई। अर मेघवाहन तथा सहस्रनयन दोनों अपने पिताके, अर अपने पूर्वभव श्रवणकर
निर्वैर भए, परस्पर मित्र भए। अर इनकी धर्मविषैं अतिरुचि उपजी। पूर्वभव दोनोंको याद आये।
महाश्रद्धावंत होय भगवानकी स्तुति करते भए कि हे नाथ! आप अनाथके नाथ हैं। ये संसार के
प्राणी महादुखी हैं, तिनको धर्मोपदेश देकर उपकार करो हो, तुम्हारा किसीसे भी कुछ प्रयोजन
नाहीं। तुम निःकारण जगतके बंधु हो, तुम्हारा रूप उपमा रहित है। अर अप्रमाण बलके धरणहारे
हो, इस जगतमैं तुम समान और नाहीं। तुम पूर्ण परमानन्द हो, कृतकृत्य हो, सदा सर्वदर्शी सबके
बल्लभ हो, किसीके चितवनमें नहीं आते हो, जाने हैं सर्व पदार्थ जिनने, सबकै अतर्यामी, सर्वज्ञ,
जगतके हितु हो, हे जिनेन्द्र! संसाररूप अंधकूपमें पड़े ये प्राणी, तिनको धर्मोपदेशरूप हस्तावलंबन
ही हो। इत्यादिक बहुत स्तुति करी। अर यह दोनों मेघवाहन अर सहस्रनयन गद्गद वाणी होय,
अश्रुपातकरि भीज गए हैं नेत्र जिनके, परम हर्षको प्राप्त भए। अर विधिपूर्वक नमस्कार कर तिष्ठे।
सिंहवीर्यादिक मुनि, इन्द्रादिक देव, सगरादिक राजा परम आश्चर्यको प्राप्त भये॥

अथानन्तर भगवानके समोसरणविषै राक्षसोंका इंद्र भीम अर सुभीम मेघवाहनतैं प्रसन्न भए
अर कहते भए; कि—हे विद्याधरके बालक मेघवाहन, तू धन्य है—जो भगवान अजितनाथकी शरणमैं
आया। हम तेरैपर अति प्रसन्न भए हैं। हम तेरी स्थिरताका कारण कहै हैं। तू सुन—इस लवणसमुद्र
में अत्यन्त विषम महारमणीक हजारों अंतरद्वीप हैं। लवणसमुद्रमें मगर मच्छादिकके समूह रमैं हैं। अर
तिन अंतर्द्वीपोंमें कहीं तो गंधर्व क्रीड़ा करैं हैं, कहीं किन्नरोंके समूह रमैं हैं, कहीं यक्षोंके समूह कोला-
हल करैं हैं, कहीं किंपुरुष जातिके देव केलि करैं हैं। उनके मध्यमें एक राक्षसद्वीप है, जो सातसौ
योजन चौड़ा, अर सातसौ योजन लम्बा है। उसके मध्यमें त्रिकूटाचल पर्वत है जो अत्यन्त दुष्प्रवेश
है, शरणकी ठौर है, पर्वतके शिखर सुमेरुके शिखर समान मनोहर हैं। अर पर्वत नवयोजन ऊंचा,
पचास योजन चौड़ा है। नाना प्रकारकी रत्नोंकी ज्योतिके समूहकर जडित है। जाके सुवर्णमयी सुन्दर

तट हैं। नानाप्रकारकी बेलों कर मंडित कल्पवृक्षनिकर पूर्ण हैं। ताके तलैं तीसयोजन प्रमाण लंका नामा नगरी है। रत्न अर सुवर्णके महलनिकर अत्यन्त शोभै है। जहां मनोहर उद्यान हे, कमलनिकर मंडित सरोवर हैं, बड़े बड़े चैत्यालय हैं, वह नगरी इंद्रपुरी समान है। दक्षिण दिशाका मंडन (भूषण) है। हे विद्याधर! तू समस्त बांधववर्गकर सहित तहां बसिकर सुखसे रहो। ऐसा कहकर भीमा नामा राक्षसनिका इन्द्र ताकूं रत्नमई हार देता भया, वह हार अपनी किरणोंसे महाउद्योत करै हैं। तथा धरतीके बीचमें पाताललंका जिसमें अलंकारोदय नगर, छै योजन ओंडा, अर एकसौं साढ़े इकतीस योजन, अर डेढकला चौड़ा यह भी दिया। उस नगरमें बैरियोंका मन भी प्रवेश न कर सके, स्वर्ग समान महा मनोहर है। राक्षसोंके इन्द्रने कहा–कदाचित तुझकूं परचक्रका भय हो तो इस पाताल-लंकामैं सकल वंशसहित सुखसों रहियो, लंका तो राजधानी, अर पाताललंका भय निवारणका स्थान है। याभांति भीम सुभीमने पूर्णघनके पुत्र मेघवाहनको कह्या।

तब मेघवाहन परमहर्षको प्राप्त भया, भगवानकूं नमस्कार करकै उठ्या। तदि राक्षसोंके इन्द्रने राक्षसविद्या दीनी, सो आकाशमार्गसे विमानमें चढकर लंकाको चले, तदि सर्व भाइयोंने सुनी कि–मेघवाहनको राक्षसोंके इन्द्रने अति प्रसन्न होय, लंका दी है सो समस्त ही बंधुवर्गोंके मन प्रफुल्लित भए। जैसैं सूर्यके उदयतैं समस्त ही कमल प्रफुल्लित होंय, तैसैं सर्व ही विद्याधर मेघवाहनपै आए। तिनकरि मंडित मेघवाहन चालें। कईएक तो राजा आगैं जाय हैं, कईएक पाछैं, कईएक दाहिने, कई एक बांये, कईएक हाथियों पर चढे, कईएक तुरंगनि (घोड़ों) पर चढ़े, कईएक रथोंपर चढ़े जाय हैं, कईएक पालकीपर चढ़े जांय हैं। अर अनेक पियादे ही जांय हैं। जय जय शब्द होय रहे हैं। दुंदुभी बाजे बाजै हैं, राजा पर छत्र फिरै हैं। अर चमर ढुरै हैं, अनेक निशान (झंडे) चले जाय हैं। अनेक विद्याधर शीस निवावै हैं। या भांति राजा चलते चलते लवणसमुद्र ऊपर आए। वह समुद्र आकाश समान विस्तीर्ण, अर पाताल समान ऊंडा, तमालवन समान श्याम है तरंगोंके समूहतैं भरचा है। अनेक

मगरमच्छ जिसमें कल्लोल करै हैं । उस समुद्रको देख राजा हर्षित भए, पर्वतके अधोभागमें कोट, अर दरवाजे अर खाइयोंकर संयुक्त लंकानामा महापुरी है, तहां प्रवेश किया । लंकापुरीमें रत्नोंकी ज्योति करि आकाश संध्यासमान अरुण (लाल) होय रह्या है, कुंदके पुष्प समान उज्ज्वल ऊंचे भगवानके चैत्यालयनिकरि मंडित पुरी शोभै है । चैत्यालयोंपर ध्वजा फहरा रही हैं । चैत्यालयोंकी बन्दना कर राजाने महलमें प्रवेश किया, और भी यथायोग्य घरोंमैं तिष्ठे रत्नोंकी शोभासे उसके मन अर नेत्र हरे गए ।

अथानन्तर किन्नरगीतनामा नगरविषै राजा रतिमयूख, अर राणी अनुमती तिनके सुप्रभा नामा कन्या, नेत्र अर मनकी चौरनहारी, कामका निवास, लक्ष्मीरूप, कुमुदनीके प्रफुल्लित करनेकूं चंद्रमा की चांदनी, लावण्यरूप जलकी सरोवरी, आभूषणोंका आभूषण, इन्द्रियनकों प्रमोदकी करणहारी, सो राजा मेघवाहनने ताकूं महा उत्साह करि परणी । ताके महारक्षनामा पुत्र भया । जैसैं स्वर्गमैं इन्द्र इन्द्राणीसहित तिष्ठै तैसैं राजा मेघवाहन राणी सुप्रभा सहित लंकाविषैं बहुत काल राज किया ।

अथानन्तर एक दिन राजा मेघवाहन अजितनाथके बंदनाके अर्थि समोसरणमें गए । तहां और कथा हो चुकी तदि सगरने भगवानकूं नमस्कारकरि पूछ्या कि हे–प्रभो ! इस अवसर्पिणीकालविषैं धर्मचक्रके स्वामी तुम सारिखे जिनेश्वर कितने भए, अर कितने होवेंगे ? तुम तीन लोकके देने वाले हो, तुम सारिखे पुरुषोंकी उत्पत्ति लोकविषैं आश्चर्यकारिणी है । अर चक्ररत्नके स्वामी कितने होवेंगे तथा वासुदेव, प्रतिवासुदेव, बलभद्र कितने होवेंगे ? या भांति सगरने प्रश्न किया । तब भगवान अपनी ध्वनि करि देवदुंदुभीनिकी ध्वनिको निराकरण करते हुए व्याख्यान करते भए । अर्धमागधीभाषाके भाषण-हारे भगवान तिनके होंठ न हालैं, यह बड़ा आश्चर्य है । कैसी है दिव्यध्वनि ? उपजाया है, श्रोतानिके कानोंको उत्साह जाने । उत्सर्पिणी अवसर्पिणी प्रत्येक कालविषै चौबीस तीर्थंकर होय हैं । मोहरूप अंधकारकरि समस्त जगत आच्छादित हुवा, जा समय धर्मका विचार नाहीं, और कोई भी राजा नाहीं,

ता समय भगवान ऋषभदेव उपजे, तिनने कर्मभूमिकी रचना करी । तबतैं कृतयुग कहाया । भगवानने क्रियाके भेदसे तीन वर्ण थापे । अर उनके पुत्र भरतने विप्र वर्ण थापा । भरतका तेज भी ऋषभ समान है, भगवान ऋषभदेवने जिनदीक्षा धरी, अर भवतापकर पीडित भव्यजीवनिकों शमभावरूप जलकरि शांत किया । श्रावकके धर्म, अर यतीके धर्म दोऊ प्रकट किए । जिनके गुणनिकी उपमाकूं जगत-विषैं कोऊ पदार्थ नाहीं, कैलाशके शिखरतैं आप निर्वाण पधारे । ऋषभदेवकी शरण पाय अनेक साधु सिद्ध भए, अर कईएक स्वर्गके सुखको प्राप्त भए, कईएक भद्रपरिणामी मनुष्यभवको प्राप्त भए, अर कईएक मरीचादि मिथ्यात्वके रागकरि संयुक्त अत्यन्त उज्ज्वल जो भगवानका मार्ग ताहि न अवलोकन करते भए, जैसे घुग्घू (उल्लू) सूर्यके प्रकाशको न जानैं तैसैं कुधर्मकूं अंगीकारकरि कुदेव भए, बहुरि नरकतिर्यंचगतिकूं प्राप्त भये । भगवान ऋषभदेवको मुक्ति गये पचास लाख कोटि सागर गये, तब सर्वार्थसिद्धिसे चय करि द्वितीय तीर्थंकर हम अजित भए । जब धर्मकी ग्लानि होय, अर मिथ्यादृष्टीनिका अधिकार होय, आचारका अभाव होय, तब भगवान तीर्थंकर प्रकट होय धर्मका उद्योत करैं है । अर भव्यजीव धर्मको पाय सिद्धस्थानकों प्राप्त होय हैं । अब हमको मोक्ष गये पीछे बाईस तीर्थंकर और होंगे । तीनलोकविषै उद्योत करनेंवाले ते सर्व मो सारिखे कांति वीर्य विभूतिके धनी त्रैलोक्यपूज्य ज्ञानदर्शनरूप होंगे । तिनमें तीन तीर्थंकर शांति, कुंथु, अर ए तीन चक्रवर्ती पदके भी धारक होवेंगे । तिनि चौबीसौंके नाम सुनहुः—ऋषभ १, अजित २, संभव ३, अभिनन्दन ४, सुमति ५, पद्मप्रभ ६, सुपार्श्व ७, चन्द्रप्रभ ८, पुष्पदंत ९, शीतल १०, श्रेयांस ११, वासुपूज्य १२, विमल १३, अनन्त १४, धर्म १५, शांति १६, कुंथु १७, अर १८, मल्लि १९, मुनिसुव्रत २०, नमि २१, नेमि २२, पार्श्वनाथ २३, महावीर २४, ये सबही देवाधिदेव जिनमार्गके धुरंधर होहिंगे । अर सर्वके गर्भावतारविषै रत्ननिकी वर्षा होयगी । सर्वके जन्मकल्याणक सुमेरुपर्वतपर क्षीरसागरके जल-करि होवेंगे । उपमारहित है तेजरूप सुख अर बल जिनके, ऐसे सर्व ही कर्मशत्रुनिके नाशनहारे

महावीर स्वामीरूपी सूर्यके अस्त भए पीछे पाखंडरूप अज्ञानी चमत्कार करेंगे। ते पाखंडी संसाररूपी कूपविषै आप पडैंगे अर औरनिकों पाडैंगे। चक्रवर्त्तिनिमें प्रथम तो भरत भए, दूसरा तू सगर भया, अर तीसरा मघवा, चौथा सनत्कुमार, अर पांचवां शांति, छठा कुंथु, सातवां अर, आठवां सुभूम, नवमां महापद्म, दसवाँ हरिषेण, ग्यारहवां जयसेन, बारहवां ब्रह्मदत्त, ये बारह चक्रवर्ती, अर वासुदेव नव, अर प्रतिवासुदेव नव, बलभद्र नव होहिंगे। इनका धर्मविषै सावधान चित्त होगा। ये अवसर्पणीके महापुरुष कहे। याही भांति उत्सर्पणीविषै भरत ऐरावतमें जानने। या भांति महापुरुषोंकी विभूति अर कालकी प्रवृति अर कर्मनिके वशतैं संसारका भ्रमण, अर कर्म रहितोंको मुक्तिका निरुपम-सुख–यह सर्वकथन मेघवाहनने सुना। यह विचक्षण चित्तविषै विचारता भया कि हाय! हाय!! जिन कर्मनिकर यह जीव आतापको प्राप्त होय है तिन्ही कर्मनिको मोहमदिराकरि उन्मत्त भया यह जीव बांधै है। यह विषय विषवत् प्राणनिके हरणहारे कल्पनामात्र मनोज्ञ हैं। दुःखके उपजावनहारे हैं। इनमें रति कहा? या जीवने धन स्त्री कुटुंबादिविषै अनेकभव राग किया परन्तु ये पदार्थ याके नाहीं हुये। यह सदा अकेला संसारविषै परिभ्रमण करै है, अर सर्व कुटुम्बादिक तब तक ही स्नेह करै हैं जबतक दानकरि उनका सम्मान करै है, जैसे श्वानके बालककों जब लग टूक डारिए, तोलग अपना है। अंतकालमें पुत्रकलत्रबांधवमित्रधनादिकके लार (साथ) कौन गया? अर ये कौन के साथ गये? ये भोग हैं, ये कालसर्पके फण समान भयानक हैं। नरकके कारण हैं, तिनविषै कौन बुद्धिमान संग करै, अहो यह बड़ा आश्चर्य है। लक्ष्मी ठगनी अपने आश्रितनिकों ठगै है या समान और दुष्टता कहां! जैसैं स्वप्नविषै किसी वस्तु का समागम होय है, तैसैं कुटुम्बका समागम जानना, अर जैसैं इन्द्रधनुष क्षण-भंगुर है, तैसैं परिवारका सुख क्षणभंगुर जानना। यह शरीर जलके बुदबुदा समान असार है, अर यह जीवितव्य बिजलीके चमत्कारवत् असार चंचल है। तातैं इन सबनिको तजिकरि एक धर्म ही का सहाय अंगीकार करूं। धर्म कैसा है? सदा कल्याणकारी ही है, कदापि विघ्नकारी नाहीं अर संसार

शरीर भोगादिक चतुरगतिके भ्रमणके कारण हैं, महा दुखरूप हैं। ऐसा जानकरि उस राजा मेघवाहनने जिसके बकतर महा वैराग्य ही है, महारक्ष नामा पुत्रको राज्य देकर भगवान श्रीअजितनाथ के निकट दीक्षा धारी, राजाके साथ एकसौ दश राजा वैराग्य पाय घररूप बंदीखानेतैं निकसे।

अथानन्तर मेघवाहनका पुत्र महारक्ष राजपर बैठ्या। सो चन्द्रमा समान दानरूपी किरणनिकरि कुटुम्बरूपी समुद्रको पूर्ण करता संता लंकारूपी आकाशविषैं प्रकाश करता भया। बड़े २ विद्याधरनिके राजा स्वप्नविषै भी ताकी आज्ञाको पायकर आदरतैं प्रतिबोध होय, हाथ जोड़ नमस्कार करते भए। उस महारक्षके विमलप्रभा राणी होती भई। कैसी है वह राणी? मानो छाया समान पतिकी अनुगामिनी है। ताके अमररक्ष, उदधिरक्ष, भानुरक्ष ये तीन पुत्र भए। कैसे हैं वे पुत्र? नानाप्रकारके शुभकर्म करि पूर्ण जिनका बड़ा विस्तार, अति ऊंचे, जगतविषै प्रसिद्ध मानो तीन लोक ही हैं।

अथानन्तर अजितनाथ स्वामी अनेक भव्यजीवनिका निस्तारकर सम्मेदशिखरतैं सिद्धपदको प्राप्त भए। सगरके छाणवें हजार राणी इन्द्राणी तुल्य, अर पुत्र साठ हजार ते कदाचित् बंदनाकूं कैलाश पर्वतपर आए। भगवानके चैत्यालयनिकी बंदनाकर दंडरत्नतैं कैलाशके चौगिरद खाई खोदते भए। सो तिनको क्रोधकी दृष्टि करि नागेंद्रने देख्या, सो ये सब भस्म होगए! उनमेंतैं दोय आयुकर्मके योगतैं बचे, एक भीमरथ, अर दूसरा भगीरथ। तब सबनिने विचारी जो अचानक यह समाचार चक्रवर्ती को कहेंगे तो चक्रवर्ती तत्काल प्राण तजैंगे। ऐसा जान इनको मिलनेतैं, अर कहवेतैं पंडित लोकोंने मना किए। सर्व राजा अर मंत्री जा विधि आए थे, ताही विधि आए, विनयकरि चाक्रवर्तीके पास अपने अपने स्थानपर बैठे। तासमय एक वृद्ध ब्राह्मण कहता भया कि 'हे सगर! देखहु या संसारकी अनित्यता जिसको देखकर भव्यजीविनिका मन संसारविषै न प्रवर्त्तै। तो आगैं तुम्हारे समान पराक्रमी राजा भरत भए, जिनने छै खंड पृथ्वी दासी समान वश करी, ताके अर्ककीर्ति पुत्र भये—महापराक्रमी जिनके नामतैं सूर्यवंश प्रवृत्या। या भांति जे अनेक राजा भये ते सर्वकालवश भये। सो राजानिकी

बात तो दूर ही रहो, जे स्वर्गलोकके इन्द्र महा विभव करि युक्त हैं तेहू क्षणमें विलाय जाय हैं। अर जे भगवान तीर्थंकर तीनों लोककू आनन्द करणहारे हैं, ते हू आयुके अंत होनेपर शरीरको तज निर्वाण पधारै हैं। जैसें पक्षी एक वृक्षपर रात्रिको आय बसै हैं प्रभात अनेक दिशानिकूं गमन करैं हैं। यह प्राणी कुटुम्बरूपी वृक्षविषै आय बसै हैं, स्थिति पूरीकर अपने कर्मकेवशतैं चतुर्गतिविषै गमन करै हैं। सबनितैं बलवान महाबली यह काल है, जाने बड़े २ बलवान निबल किये। अहो! बड़ा आश्चर्य है! बड़े पुरुषनिका विनाश देखकर हमारा हृदय नाहीं फट जाय। इन जीवनिका शरीर संपदा अर कुटुम्बका संयोग, सर्व इन्द्रधनुष, वा स्वप्न वा बिजली, वा झाग, वा बुदबुदा तिन समान जानना। इस जगतविषै ऐसा कोई नाहीं जो कालतैं बचै। एक सिद्ध ही अविनाशी हैं। अर जो पुरुष पहाड़को हाथतैं चूर्णकर डारै, अर समुद्र शोष जावै तेहू कालके वदनमैं प्राप्त होय हैं। यह मृत्यु अलंघ्य है। यह त्रैलोक्य मृत्युके वश है। केवल महामुनि ही जिनधर्मके प्रसादकरि मृत्युकों जीतै हैं। ऐसे अनेक राजा कालवश भए तैसैं हमहू कालवश होवेंगे। तीन लोकका यह मार्ग है। ऐसा जानकर ज्ञानी पुरुष शोक न करै, शोक संसारका कारण है। या भांति वृद्ध पुरुषने कही, अर याही भांति सर्व सभाके लोगोंने कही। ताही समय चक्रवर्तीने दोऊ बालक देखे। तब ये मनमें विचारी कि सदा ये साठहजार भेले होय मेरे पास आवते हुते, नमस्कार करते, अर आज ये दोनों ही दीनवदन दीखै हैं, तातैं जानिये है कि और सब कालवशि भए। अर ये राजा मुझे अन्योक्तिकर समझावैं है। मेरा दुःख देखबेको असमर्थ हैं। ऐसा जानि राजा शोकरूप सर्पका डसा हुआ भी प्राणनिकों न तजता भया। मंत्रियोंके वचनतैं शोकको दबाय, संसारको कदलीके गर्भवत् असार जानि, इन्द्रियनिके सुख छोड़, भगीरथको राज देय जिनदीक्षा आदरी। यह संपूर्ण छै खंड पृथ्वी जीर्ण तृण समान जान तजी। भीमरथ सहित श्रीअजितनाथके निकट मुनि होय केवलज्ञान उपाय सिद्धपद को प्राप्त भए।

अथानन्तर एक समय सगरके पुत्र भगीरथ श्रुतसागर मुनिको पूछते भये कि हे प्रभो! जो हमारे

भाई एक ही साथ मरणको प्राप्त भये, तिनविषैं मैं बचा, सो काहेतैं बचा? तब मुनि बोले कि एक समय चतुर्विधसंघ वंदना निमित्त संमेदशिखरको जाते हुते, सो चलते २ अंतिकग्राममें आय निकसे। तिनको देखकर अंतिकग्रामके लोक दुर्वचन बोलते भए, हंसते भए। तहां एक कुम्हारने तिनको मनै करी। अर मुनियोंकी स्तुति करता भया, तदनन्तर ता ग्रामके एक मनुष्यने चोरी करी। सो राजाने सर्व ग्राम जला दिया। उस दिन वह कुम्हार काहू ग्रामको गया हुता सो ही बचा। वह कुम्हार मरकर वणिक भया, अर अन्य जे ग्रामके मरे थे द्विइंद्री, कौडी भये। कुम्हारके जीव महाजनने सर्व कौड़ी खरीदी। बहुरि वह महाजन मरकर राजा भया, अर कौडी मरकर गिजाई भई, सो हाथीके पगके तले चूरी गई। राजा मुनि होय कर देव भये, देवतैं तू भगीरथ भया। ग्रामके लोक कईएक भव लेय सगरके पुत्र भये। सो मुनिके संघकी निंदाके पापतैं जन्मजन्ममें कुगति पाई, अर तू स्तुति करनेतैं ऐसा भया। यह पूर्वभव सुन अर भगीरथ प्रतिबोधको पाय मुनिराजका व्रत धर परमपदको प्राप्त भये।

बहुरि गौतम स्वामी राजा श्रेणिकसे कहै हैं–हे श्रेणिक! यह सगरका चरित्र तो तुझे कह्या। आगे लंकाकी कथा कहिये है, सो सुनहु। महारिक्ष नामा विद्याधर बड़ी सम्पदाकरि पूर्ण लंकाविषै निःकंटक राज्य करै। सो एक दिन प्रमद नामा उद्यानविषै राजलोक सहित क्रीडाकूं गये। कैसा है प्रमद नामा उद्यान? ऊंचे पर्वतोंसे महा रमणीक है, अर सुगंधित पुष्पोंसे फूल रहे वृक्षोंके समूहसे मंडित, अर मिष्ट शब्दोंके बोलनहारे पक्षियोंके समूहसे अतिसुन्दर है, जहां रत्नोंकी राशि है, अर अति सघन पत्र पल्लवन कर मंडित लताओं (बेलों) के मंडप तिनकरि छाय रह्या है। ऐसे बनमें राजा राजलोकनिसहित नानाप्रकारकी क्रीडा करि रतिसागरविषै मग्न हुवा, जैसे नन्दनवनविषै इन्द्र क्रीडा करै तैसैं क्रीडा करी।

अथानन्तर सूर्यके अस्त भये पीछैं कमल संकोचको प्राप्त भये। तिनविषै भ्रमरको दबकर मूवा देखि राजाके चिंता उपजी। कैसा है राजा? मोहकी भइ है मंदता जाके, अर भवसागरतै पार होने का इच्छा

उपजी है। राजा विचारै है कि देखो मकरंदके रसमैं आसक्त यह मूढ भौंरा गंधतैं तृप्त न भया, तातैं मृत्युकूं प्राप्त भया। धिक्कार होहु या इच्छाकूं। जैसे यह कमलके रसका आसक्त मधुकर मूवा, तैसैं

मैं स्त्रियोंके मुखरूप कमलका भ्रमर हुआ मरकर कुगतिको प्राप्त होऊंगा। जो यह एक नासिका इंद्रियका लोलुपी नाशको प्राप्त भया, तो मैं तो पंच इन्द्रियोंका लोभी हूं मेरी क्या बात? अथवा यह चोइंद्री जीव अज्ञानी भूलै तो भूलै, मैं ज्ञानसम्पन्न विषयनिके वशि क्यों भया? शहदकी लपेटी खड्गकी धाराके चाटनेतैं सुख कहा? जीभहीके खंड होय हैं, तैसे विषयसेवनमें सुख कहा? अनन्त दुःखोंका उपार्जन ही होय है। विषफल तुल्य ये विषय तिनतैं पराङ्मुख हैं, तिनको मैं मनवचकाय करि नमस्कार करूं हूं। हाय! हाय!! यह बड़ा कष्ट है जो मैं पापी घने दिनतक इन दुष्ट विषय-निकरि ठगाया गया। इन विषयनिका प्रसंग विषम है। विष तो एक भव प्राण हरै है, अर ये विषय अनन्तभव प्राण हरै हैं। यह विचार राजाने किया तासमय वनमें श्रुतसागरमुनि आये। वह मुनि अपने रूप करि चन्द्रमाकी चांदनीको जीतै हैं, अर दीप्तिकरि सूर्यकूं जीतै हैं, स्थिरताकरि सुमेरुतैं अधिक हैं। जिनका मन एक धर्मध्यानविषै ही आसक्त है, अर जीते हैं रागद्वेष दोय जिन्होंने, और तजे हैं मनवच-कायके अपराध जिन्होंने, चार कषायोंके जीतनेहारे, पांच इन्द्रियनिके वश करणहारे, छह कायके जीवनिपर दयालु, अर सप्तभयवर्जित, आठमदरहित, नव नयके वेत्ता, शीलके नववाडिके धारक, दश-लक्षणधर्मके स्वरूप परमतपके धरणहारे, साधुवोंके समूह सहित, स्वामी पधारे। सो जीव जंतुरहित पवित्रस्थान देख वनमें तिष्ठे। जिनके शरीरकी ज्योतिका दशों दिशामें उद्योत हो गया।

अथानन्तर वनपालके मुखतैं स्वामीको आया सुन राजा महारिक्ष विद्याधर वनमें आये! कैसे हैं राजा? भक्तिभाव करि विनयरूप है मन जिनका। वह राजा आयकरि मुनिके पांव पड़े। कैसे हैं
मुनि? अति प्रसन्न है मन जिनका, अर कल्याणके देनहारे हैं चरण कमल जिनके राजा समस्त संघको नमस्कार करि समाधान (कुशल) पूछ एक क्षण बैठिकरि भक्तिभावतैं मुनि धर्मका स्वरूप पूछते

भये। मुनिके हृदयमें शांतिभावरूपी चन्द्रमा प्रकाश कर रहा था सो वचनरूपी किरणनिकरि उद्योत करते संते व्याख्यान करते भये कि–हे राजा! धर्मका लक्षण जीवदया ही है। अर ये सत्य वचनादि सर्व धर्महीका परिवार है। यह जीव कर्मके प्रभावतैं जिस गतिमें जाय है ताही शरीरमें मोहित होय है। इसलिए तीनलोककी संपदा जो कोई देय तौहू प्राणी अपने प्राणको न तजै। सब जीवनिको प्राण समान और कुछ प्यारा नाहीं। सब ही जीवनैको इच्छै हैं, मरनेको कोई भी न इच्छै। बहुत कहवेकरि कहा? जैसैं आपको अपने प्राण प्यारे हैं तैसैं ही सबनिको प्यारे हैं। तातैं जो मूरख परजीवनिके प्राण हरैं हैं ते दुष्टकर्मी नरकमें पड़ै हैं। उन समान और कोऊ पापी नाहीं। यह जीव जीवनिके प्राण हरि अनेक जन्म कुगतिमें दुःख पावै है। जैसैं लोहका पिंड पानीमें डूबि जाय है तैसैं हिंसक जीव भव-सागरमें डूबै हैं। जे वचनकर मीठे बोल बोलै हैं, अर हृदयमें विषके भरे हैं, इन्द्रियनिके वशि भए मलीन मन हैं, भले आचारतैं रहित, स्वेच्छाचारी, कामके सेवनहारे हैं ते नरक तिर्यंच गतिविषै भ्रमण करै हैं। प्रथम तो या संसारविषै जीवनिको मनुष्यदेह दुर्लभ है, बहुरि उत्तमकुल, आर्यक्षेत्र, सुन्दरता, धन-करपूर्णता, विद्याका समागम, तत्वका जानना, धर्मका आचरण ये सब अति दुर्लभ हैं। धर्मके प्रसाद तैं कईएक तो सिद्धपद पावै हैं, कईएक स्वर्गलोकविषै सुख पायकरि परम्पराय मोक्षको जाय हैं, अर कई एक मिथ्यादृष्टि अज्ञान तपकरि देव होय स्थावरयोनिमें आय पड़ैं हैं। कईएक पशु होय हैं, कई एक मनुष्यजन्ममें आवैं हैं। कैसा है माताकागर्भ? मलमूत्रकर भरचा है, अर कृमियोंके समूहकर पूर्ण है, महादुर्गंध अत्यन्त दुस्सह, ताविषै पित्त श्लेष्मके मध्य चर्मके जालतैं ढके ये प्राणी, जननी के आहार का जो रसांश ताहि चाटैं हैं। जिनके सर्व अंग संकुचि रहे हैं। दुःखके भारकर पीडित नवमहीना उदरविषै बसिकरि योनिके द्वारतैं निकसै हैं। मनुष्यदेह पाय पापी धर्मको भूलै हैं। मनुष्यदेह सर्व-योनियोंमें उत्तम है। मिथ्यादृष्टि नेम धर्म आचारवर्जित पापी विषयनिको सेवै हैं। जे ज्ञानरहित कामके वशि बड़े स्त्रीके वशी होय हैं, ते महादुःख भोगवते हुए संसारसमुद्रविषै डूबे हैं। तातैं विषयकषाय न

सेवने । हिंसाका वचन जामैं परजीवनिको पीड़ा होय सो न बोलना । हिंसा ही संसारका कारण है । चोरी न करनी, सांच बोलना, स्त्रीकी संगति न करनी, धनकी वांछा न रखनी, सर्वपापारम्भ तजने, परोपकार करना, पर पीडा न करनी । यह मुनिकी आज्ञा सुनकर धर्मका स्वरूप जान राजा वैराग्यको प्राप्त भए । मुनिकों नमस्कार करि अपने पूर्वभव पूछे । चार ज्ञानके धारक मुनि श्रुतसागर संक्षेपताकरि पूर्वभव कहते भए कि हे राजन् ! पोदनापुरविषैं हित नामा एक मनुष्य, ताके माधवी नामा स्त्री, ताके प्रीतम नामा तू पुत्र भया । अर ताही नगरविषैं राजा उदयाचल, राणी उदयश्री, ताका पुत्र हेमरथ राज करें । सो एक दिन जिनमंदिरविषैं महापूजा करवाई । वह पूजा आनन्दकी करणहारी है, सो ताके जयजय-कार शब्द सुनकर तूनें भी जयजयकार शब्द किया सो पुण्य उपार्ज्या । कालपाय मुवा, अर यक्षोंमें महायक्ष हुवा । एकदिन विदेहक्षेत्रविषैं कांचनपुर नगरके वनमें मुनियोंको पूर्वभवके शत्रुने उपसर्ग किया सो यक्षने ताको डराकर भगा दिया अर मुनिनकी रक्षा करी, सो अति पुण्यकी राशि उपार्जी । कईएक दिन आयु पूरी करि यक्ष तडिदंगद नामा विद्याधर, ताकी श्रीप्रभा स्त्रीके उदित नामा पुत्र भया । अमरविक्रम विद्या-धरोंके ईश वंदनाके निमित्त मुनिके निकट आये थे । तिनको देखकरि निदान किया । महा तपकर दूसरे स्वर्ग जाय तहांतैं चयकर तू मेघवाहनके पुत्र हुवा । हे राजा ! तूने सूर्यके रथकी नाईं संसारमें भ्रमण किया । जिह्वाका लोलुपी स्त्रियोंके वशवर्ती होय, तैं अनन्तभव धरे । तेरे शरीर या संसारमें एते व्यतीत भए जो उनको एकत्र करिए तो तीनलोकमें न समावै । अर सागरोंकी आयु स्वर्गविषैं तेरी भई । जब स्वर्गहीके भोगनितैं तू तृप्त न भया तो विद्याधरोंके अल्प भोगनितैं तू कहा तृप्त होइगा ? अर तेरी आयु भी अब आठ दिन बाकी है; यातैं स्वप्न इन्द्रजाल समान जे भोग तिनतैं निवृत होहु । ऐसा सुन अपना मरण जान्या तोहू विषादको न प्राप्त भया । प्रथम तो जिन चैत्यालयविषैं बड़ी पूजा कराई । पीछैं अनन्त संसारके भ्रमणतैं भयभीत होकर अपने बड़े पुत्र अमररक्षको राज देय, अर लघु-पुत्र भानुरक्षको युवराजपद देय, आप परिग्रहको त्यागकरि तत्त्वज्ञानविषैं मग्न होय, पाषाणके थंभ

तुल्य निश्चल होय ध्यानमैं तिष्ठे, अर लोभकर रहित भए। खानपानका त्यागकर शत्रुमित्रमें समान बुद्धि धार निश्चल होय कर मौनव्रतके धारक समाधिमरणकरि स्वर्गविषै उत्तम देव भए।

अथानन्तर किन्नरनाद नामा नगरविषै श्रीधर नामा विद्याधर राजा, ताकै विद्या नामा राणी, ताकै अरिंजयानामा कन्या, सो अमररक्षने परणी। अर गंधर्वगीतनगरविषै सुरसन्निभ राजा, ताकै पुत्री गंधर्वा सो भानुरक्षने परणी। बड़े भाई अमररक्षके दश पुत्र भए, अर देवांगना समान छह पुत्री भई, जिनके गुण ही आभूषण हैं। अर लघु भाई भानुरक्षके दश पुत्र अर छह पुत्री भई। सो उन पुत्रोंने अपने अपने नामके नगर बसाए। कैसे हैं वे पुत्र ? शत्रुनिके जीतनेहारे, पृथ्वीके रक्षक हैं। हे श्रेणिक ! उन नगरोंके नाम सुनो:—सन्ध्याकार १, सुवेल २, मनोह्लाद ३, मनोहर ४, हंसद्वीप ५, हरि ६, जोध ७, समुद्र ८, कांचन ९, अर्धस्वर्ग १०, ए दश नगर तो अमररक्षके पुत्रनिने बसाए। अर आवर्तनगर १, विघट २, अम्भोद ३, उतकट ४, स्फुट ५, रतुग्रह ६, तट ७, तोय ८, आवली ९, रत्नद्वीप १० ये दश नगर भानुरक्षके पुत्रोंने बसाए। कैसे हैं वे नगर ? जिनमें नानाप्रकारके रत्नोंसे उद्योत होरहा है, सुवर्णकी भांति तिनकरि देदीप्यमान वे नगर क्रीडाके अर्थी राक्षसोंके निवास होते भए। बड़े बड़े विद्याधर देशान्तरोंके वासी तहां आये, महा उत्साहकरि निवास करते भए।

अथानन्तर पुत्रनिको राज देय अमररक्ष भानुरक्ष यह दोनों भाई मुनि होय महातपकर मोक्षपदको प्राप्त भए। या भांति राजा मेघवाहनके वंशमें बड़े बड़े राजा भए। ते न्यायवंत प्रजापालन कर सकल वस्तुनितैं विरक्त होय मुनिके व्रत धार कईएक मोक्षको गए, कईएक स्वर्गविषै देव भए। ता वंशविषै एक राजा महारक्ष भए, तिनकी राणी मनोवेगा, ताके पुत्र राक्षस नामा राजा भए। तिनके नामते राक्षसवंश कहाया। ये विद्याधर मनुष्य हैं, राक्षसयोनि नाहीं। राजा राक्षसके राणी सुप्रभा, ताके दोय पुत्र भए। आदित्यगति नामा बड़ा पुत्र अर छोटा बृहत्कीर्ति। ये दोऊ चन्द्र सूर्य समान अन्यायरूप अन्धकारको दूर करते भए। तिन पुत्रनिको राज देय राजा राक्षस मुनि होय देवलोक गए।

राजा आदित्यगति राज्य करें, अर छोटा भाई युवराज हुवा। बड़े भाईकी स्त्री सवनपद्मा अर छोटे भाईकी स्त्री पुष्पनखा भई। आदित्यगतिका पुत्र भीमप्रभ भया। ताकै हजार राणी देवांगना समान, अर एकसौ आठ पुत्र भए सो पृथ्वीके स्तम्भ होते भए। उनमें बड़े पुत्रको राज्य देय राजा भीमप्रभ वैराग्यको प्राप्त होय परमपदको प्राप्त भए। पूर्व राक्षसनिके इन्द्र भीम सुभीमने कृपाकर मेघवाहनको राक्षसद्वीप दिया सो मेघवाहनके वंशमें बड़े बड़े राजा राक्षसद्वीपके रक्षक भए। भीमप्रभका बड़ा पुत्र पूजार्ह सोहू अपने पुत्र जितभास्करकों राज्य देय मुनि भए। अर जितभास्कर संपरकीर्ति नामा पुत्र को राज्य देय मुनि भए। अर संपरकीर्ति सुग्रीव नामा पुत्रको राज्य देय मुनि भए। सुग्रीव हरिग्रीव को राज्य देय उग्रतपकरि देवलोक गया। अर हरिग्रीव श्रीग्रीवको राज्य देय वैराग्यको प्राप्त भए। अर श्रीग्रीव सुखमुख नामा पुत्रको राज्य देय मुनि भए। अपने बड़ों ही का मार्ग अंगीकार किया अर सुखमुख भी सुव्यक्तको राज देय आप परम ऋषि भए। अर सुव्यक्त अमृतवेगको राज देय वैरागी भए। अर अमृतवेग भानुगतिको राज देय यति भए। अर वेहू चिंतागतिको राज देय निश्चिन्त भए, मुनिवृत आदरतैं भये, अर चिन्तागति भी इन्द्रको राजदेय मुनीन्द्र भए। या भांति राक्षसवंशमें अनेक राजा भये। तथा राजा इन्द्रके इन्द्रप्रभ, ताकै मेघ, ताकै मृगीदमन, ताकै इन्द्रजीत, ताकै भानुवर्मा, ताकै भानु सूर्यसमान तेजस्वी, ताकै मुरारी, ताकै त्रिजित्, ताकैभीम, ताकै मोहन, ताकै उद्धारक, ताकै रवि, ताकै चाकार, ताकै बज्रमध्य, ताकै प्रबोध, ताकै सिंहविक्रम, ताकै चामुंड, ताकै मारण, ताकै भीष्म, ताकै द्युपवाहन, ताकै अरिमदन, ताकै निर्वाणभक्ति, ताकै उग्रश्री, ताकै अर्हद्भक्त, ताकै अनुत्तर, ताकै गतभ्रम, ताकै अनिल, ताकै लंक, ताकै चंड, ताकै मयूरवाहन, ताकै महाबाहु, ताकै मनोम्य, ताकै भास्करप्रभ, ताकै बृहद्गति, ताकै बृहत्कांत, अर ताकै अरिसंत्रास, ताकै चन्द्रावर्त, ताकै महारव, ताकै मेघध्वांत, ताकै ग्रहक्षोभ, ताकै नक्षत्रदमन। या भांति कोटिक राजा भए। बड़े विद्याधर महाबल करि मंडित, महाकांतिके धारी, पराक्रमी, परदाराके त्यागी, निजस्त्रीमें है संतोष जिनके, ऐसे लंकाकेस्वामी, महासुन्दर, ७३

अस्त्रशस्त्रकलाके धारक, स्वर्गलोकके आए अनेक राजा भए। ते अपने पुत्रनिकों राज देय, जगततैं उदास होय, जिनदीक्षा धारि, कईएक तो कर्म काट निर्वाणको गए, जो तीन लोकका शिखर है। अर कईएक राजा पुण्यके प्रभावतैं प्रथमस्वर्गकों आदि देय सर्वार्थसिद्धिपर्यन्त प्राप्त भए। या भांति अनेक राजा व्यतीत भए—जैसैं स्वर्गविषैं इन्द्र राज्य करैं। लंकाका अधिपति धनप्रभ ताकी राणी पद्माका पुत्र कीर्तिधवल प्रसिद्ध भया। अनेक विद्याधर जिसके आज्ञाकारी, जैसे स्वर्गमें इन्द्र राज करे तैसे लंकामें कीर्तिधवल राज करता भया। या भांति पूर्वभवविषै किया जो तप, ताके बल करि यह जीव देवगतिके तथा मनुष्यगतिके सुख भोगवै है। अर सर्वत्यागकर महाव्रत धरि, आठ कर्म भस्म करि सिद्ध होय है। अर जे पापी जीव खोटे कर्मनिविषै आसक्त हैं ते याही भवविषैं लोकनिंद्य होय मरकर कुयोनिमें जाय हैं। अर अनेक प्रकार दुःख भोगवै हैं। ऐसा जान पापरूप अंधकारके हरवेको सूर्य समान जो शुद्धोपयोग ताको भजो।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराणकी भाषाटीकाविषैं राक्षसका कथन जाविषं है ऐसा पांचवां अधिकार संपूर्ण भया ॥५॥

अथानन्तर गौतम स्वामी कहै हैं—हे राजा श्रेणिक! यह राक्षसवंश अर विद्याधरनिके वंशका वृत्तांत तो तुझसे कह्या। आगैं वानर वंशनिका कथन सुन। स्वर्ग समान जो विजयार्धगिरि ताकी दक्षिणश्रेणी विषैं मेघपुर नामा नगर ऊंचे महलों से शोभित है। तहां विद्याधरनिका राजा अतींद्र पृथ्वीविषै प्रसिद्ध भोगसंपदामें इन्द्रतुल्य, ताकै श्रीमती नामा रानी लक्ष्मी समान हुई। ताके मुखकी चांदनीकरि सदा पूर्णमासी समान प्रकाश होय है। ताके श्रीकंठ नामा पुत्र भया। शास्त्रमें प्रवीण, जिसके नामको सुनकरि विचक्षण पुरुष हर्षको प्राप्त होंय। अर ताकै छोटी बहिन महामनोहर देवी नामा हुई, जाके नेत्र कामके बाण ही हैं।

अथानन्तर रत्नपुर नामा नगर अति सुन्दर तहां पुष्पोत्तर नाम राजा विद्याधर महाबलवान्, ताकै

पद्माभा नाम पुत्री देवांगना समान अर पद्मोत्तर नामा पुत्र महा गुणवान, जाके देखनेतैं अति आनंद होय। सो राजा पुष्पोत्तर अपने पुत्रके निमित्त राजा अतीन्द्रकी पुत्री देवीको बहुत बार याचना करी, तोहू श्रीकंठ भाई ने अपनी बहिन लंका के धनी कीर्तिधवलकों दीनी, अर पद्मोत्तरको न दीनी। यह बात सुन राजा पुष्पोत्तरने अति कोप किया; अर कहा कि देखो हममें कुछ दोष नाहीं। दारिद्र दोष नाहीं, मेरा पुत्र कुरूप नाहीं, अर हमारे उनके कुछ वैर भी नाहीं, तथापि मेरे पुत्रको श्रीकंठने अपनी बहिन न परणाई, यह क्या युक्त किया ?

एक दिन श्रीकंठ चैत्यालयनिकी वंदनाके निमित्त सुमेरु पर्वत पर विमानमैं बैठकर गए। कैसा है विमान? पवन समान वेगवाला, अर अतिमनोहर है। सो वंदनाकर आवते हुते। मार्गमें पुष्पोत्तरकी पुत्री पद्माभाका राग सुण्या, अर बीनका बजाना सुण्या। कैसा है राग ? मन और श्रोत्रका हरनहारा, सो राग सुन मन मोहित भया। तब अवलोकन किया, सो गुरु समीप संगीत गृहविषै बीण बजावती पद्माभा देखी। ताके रूपसमुद्रविषै उसका मन मग्न होगया, मनकूं काढिवेको असमर्थ भया। बाँकी ओर देखता रह्या। अर यह भी अति रूपवान, सो याके देखवेकरि वह भी मोहित भई। ये दोनों परस्पर प्रेमसूतकर बंधे। सो ताका मन जान श्रीकंठ ताहि आकाशमैं लेयचल्या। तब परिवारके लोगोंने राजा पुष्पोत्तरपै पुकार करी कि तुम्हारी पुत्रीको राजा श्रीकंठ लेगया। सो राजा पुष्पोत्तरके पुत्रकी श्रीकंठ ने अपनी बहिन न परणाई, ताकरि वह क्रोधरूप था ही। अब अपनी पुत्रीके हरवेकरि अत्यन्त कुपित होय सब सेना लेय श्रीकंठके मारवेको पीछे लग्या। दांतनिकरि होंठनिको पीसता, क्रोधकरि जिसके नेत्र लाल हो रहे हैं, ऐसे महाबलीको आवते देख श्रीकंठ डरचा। अर भाजकर अपने बहनेऊ लंकाके धनी कीर्तिधवलकी शरण आया। सो समय पाय बड़ोंके शरणै जाय यह न्यायही है। राजा कीर्तिधवल
श्रीकंठको देखि अपना साला जान बहुत स्नेह करि सामा आय मिल्या, छातीसों लगाय बहुत सन्मान किया। इनमें आपसमें कुशलवार्ता हो रही थी कि पुष्पोत्तर सेना सहित आकाशसें आए। कीर्तिधवल

ने उनको दूरतैं देख्या। राजा पुष्पोत्तरके संग अनेक विद्याधरोंके समूह महा तेजवान हैं। खड्ग, सेल, धनुषवाण इत्यादि शस्त्रनिके समूहकरि आकाशमैं तेज होय रह्या है। ऐसे मायामई तुरंग--वायुके समान है वेग जिनका, अर काली घटासमान मायामई गज-चलायमान है घंटा अर सूंड जिनकी, मायामई सिंह, अर बड़े २ विमान तिनकरि मंडित आकाश देख्या। उत्तर दिशाकी ओर सेनाका समूह देख राजा कीर्तिधवल क्रोधसहित हँसकर मंत्रियोंको युद्ध करनेकी आज्ञा दीनीं। तदि श्रीकंठ लज्जातैं नीचे होय गए। अर श्रीकंठने कीर्तिधवलसे कह्या जो मेरी स्त्री अर मेरे कुटुम्बकी तो रक्षा आप करौ अर मैं आपके प्रतापतैं युद्धमैं शत्रुनिको जीत आऊंगा। तब कीर्तिधवल कहते भए कि यह बात तुमको कहना अयुक्त है। तुम सुखसो तिष्ठो, युद्ध करनेको हम घने ही हैं। जो यह दुर्जन नरमीतैं शांत होय, तौ भला ही है, नहीं तो इनको मृत्युके मुखमैं देखोगे। ऐसा कहि अपने स्त्रीके भाईको सुखसैं अपने महलमैं राखि पुष्पोत्तरके निकट बड़ी बुद्धिके धारक दूत भेजे। ते दूत जाय पुष्पोत्तरसों कहते भए। जो हमारे मुखतैं तुमको राजा कीर्तिधवल बहुत आदरतैं कहै हैं-कि तुम बड़े कुलमें उपजे हो, तुम्हारी चेष्टा निर्मल है। तुम सर्व शास्त्रके वेत्ता हो, जगतमैं प्रसिद्ध हो, अर सबनिमैं वयकर बड़े हो। तुमने जो मर्यादाकी रीत देखी है सो काहूने काननिसे सुनी नाहीं। यह श्रीकंठ हू चंद्रमाकी किरण समान निर्मल कुलविषै उपज्या है। अर धनवान है, विनयवान है, सुन्दर है, सर्वकलामैं निपुण है, यह कन्या ऐसे ही वरको देने योग्य है। कन्याके अर याकै रूप अर कुल समान हैं। तातैं तुम्हारी सेनाका क्षय कौन अर्थ करावना ? यह तो कन्यानिका स्वभाव ही है कि जो पराए गृहका सेवन करैं। दूत जबलग यह बात कह ही रहे थे कि पद्माभाकी भेजी सखी पुष्पोत्तरके निकट आई, अर कहती भई कि तुम्हारी पुत्रीने तुम्हारे चरणारबिंदको नमस्कार कर वीनती करी है। जो मैं तो लज्जा करि तुम्हारे समीप नहीं आई, तातैं सखीको पठाई है। 'हे पिता! याँ श्रीकंठका रंचमात्रहू दूषन नाहीं, अल्पहू अपराध नाहीं। मैं कर्मानुभव करि याके संग आई हूं। जे बड़े कुलमें उपजी स्त्री हैं तिनके एक ही

वर होय है, तातैं यां टालि (इसके सिवाय) मेरे अन्य पुरुषका त्याग है । ऐसें आय सखीने वीनती करी
तब राजा सचिन्त होय रहे, मनमें विचारी कि मैं सर्व बातोंमें समर्थ हूं, युद्धमें लंकाके धनीको जीत
श्रीकंठ को बांधकर ले जाऊं । परन्तु मेरी कन्याहीनें इसको वरया, तो मैं याकूं कहा करूं ? ऐसा जान
युद्ध न किया । अर जो कीर्तिधवलके दूत आये हुते तिनको सन्मान करि विदा किये । अर जो पुत्रीकी
सखी आई थी ताको भी सन्मानकर विदा दीनी । ते हर्ष करि भरे लंका अर राजा पुष्पोत्तर सर्व अर्थ
के वेत्ता पुत्रीकी वीनतीतैं श्रीकंठ पर क्रोध तजि अपने स्थानको गए । *

अथानन्तर मार्गशिर सुदी पडवाके दिन श्रीकंठ अर पद्माभा का विवाह भया । अर कीर्तिधवलने
श्रीकंठसों कही जो 'तुम्हारे वैरी विजयार्धमें बहुत हैं, तातैं तुम इहां ही समुद्रके मध्यमें जो द्वीप है
तहां तिष्ठो, तुम्हारे मनको जो स्थानक रुचे सो लेवो, मेरा मन तुमको छाँड़ि नाहीं सकैं है । अर
तुमहू मेरी प्रीतिका बंधन तुडाय कैसें जावोगे ? ऐसें श्रीकंठसों कहिकर अपने आनन्दनामा मंत्रीसों
कही-'जो तुम महाबुद्धिमान हो, अर हमारे दादेके मुह आगिले हो, तुमतैं सार असार किछू छाना
नाहीं । या श्रीकंठके योग्य जो स्थानक होय सो बताओ । तदि आनन्द कहते भये कि-महाराज !
आपके सब ही स्थानक मनोहर हैं । तथापि आपही देखकरि जो दृष्टिमें रुचै सो देहु । समुद्रके मध्यमें
बहुत द्वीप हैं, कल्पवृक्षसमान वृक्षोंसे मंडित जहां नाना प्रकारके रत्ननिकरि शोभित बड़े बड़े पहाड़ हैं ।
जहां देव क्रीडा करैं हैं । तिन द्वीपोंमें महारमणीक नगर हैं, जहां स्वर्ण रत्ननिके महल हैं, सो तिनके
नाम सुनहु-संध्याकार, सुवेल, कांचन, हरिपुर, जोधन, जलधिध्वान, हंसद्वीप, भरक्षमठ अर्धस्वर्ग,
कूटावर्त, विघट, रोधन, अमलकांत, स्फुटतट, रत्नद्वीप, तोयावली, सर अलंघन, नभोभान, क्षेम इत्यादि
मनोज्ञ स्थानक हैं । जहां देव भी उपद्रव न कर सकैं । यहांतैं उत्तरभागविषैं तीनसौ योजन समुद्रके ७७
मध्य बानरद्वीप है, जो पृथ्वीमें प्रसिद्ध है, जहां अवांतरद्वीप बहुत ही रमणीक है । कईएक तो सूर्य-
कांत मणिनकी ज्योतिसे देदीप्यमान है । अर कईएक हरितमणिनिकी कांतिकरि ऐसे शोभैं हैं मानो

उगते हरे तृणोंसे भूमि व्याप्त होय रही है। अर कईएक श्याम इन्द्रनीलमणिकी कांतिके समूहसे ऐसे शोभै हैं मानो सूर्यके भयतैं अंधकार वहां शरण आयकरि रह्या है। अर कहूं लाल जे पद्मरागमणिनके समूहकरि मानो रक्त कमलोंका वन ही शोभै है। अर जहां ऐसी सुगंध पवन चालै है कि आकाशमें उडते पक्षी भी सुगंधसे मग्न हो जाय हैं, अर तहां वृक्षनिपर आय बैठे हैं। अर स्फटिकमणिनिके मध्य मिली जो पद्मरागमणि तिनकरि सरोवरमें कमल जाने जांय हैं। उन मणिनिकी ज्योति करि कमलनिके रंग न जाने जाय हैं। जहां फूलनिकी बासतैं पक्षी उन्मत्त भए ऐसैं उन्मत्त सुन्दर शब्द करै हैं मानो समीपके द्वीपनिसों अनुराग भरी बातैं करै है। जहां औषधिनिकी प्रभाके समूहकरि अंधकार दूर होय है, सो अंधारे पक्षमें भी उद्योत ही रहै है। जहां फल पुष्पनिकरि मंडित वृक्षोंका आकार छत्र समान है। जिनके बड़े बड़े डाले हैं, उनपर पक्षी मिष्ट शब्द कर रहे हैं। जहां बिना बाहे धान आपसे ही उगे हैं। कैसे हैं वे धान? वीर्य, अर कांतिको विस्तीरणहारे सो मंद पवनकरि हिलते हुए शोभै हैं। तिनकरि पृथ्वी मानो कंचुकी (चोली) पहरे है। अर जहां लालकमल फूल रहे हैं। जिनपर भ्रमरोंके समूह गुंजार करै है, सो मानो सरोवरी ही नेत्रनिकरि पृथ्वीका विलास देखै है। नीलकमल तो सरोवरीनके नेत्र भए, अर भ्रमर भोहैं भए। जहां पौढे अर सांठानिकी विस्तीर्ण बाड हैं। सो पवनकरि हालनेतैं शब्द करै हैं। ऐसा सुन्दर बानरद्वीप है। उसके मध्यविषै किहकुंदा नामा पर्वत है। वह पर्वत रत्न अर स्वर्णकी शिलाके समूहकरि शोभायमान है। जैसा यह त्रिकुटाचल मनोज्ञ है, तैसा ही किहकुंद पर्वत मनोज्ञ है। अपने शिखरनिकरि दिशारूपी कांताको स्पर्श करै है। आनन्द मंत्रीके ऐसे वचन सुनकर राजा कीर्तिधवल बहुत आनन्द रूप भए, अर बानरद्वीप श्रीकंठको दिया। तब चैतके प्रथम दिन श्रीकंठ परिवारसहित वानरद्वीपमें गए। मार्गमें पृथ्वीकी शोभा देखते चले जांय हैं। वह पृथ्वी नीलमणिनिकी ज्योतिकरि आकाश समान शोभै है, अर महाग्रहोंके समूहकरि संयुक्त समुद्रको देखि आश्चर्यको प्राप्त भए बानरद्वीप जाय पहुंचे। वानरद्वीप मानो दूसरा स्वर्ग ही

है। अपने नीझरनोंके शब्दसे मानों राजा श्रीकंठको बुलावै ही है। नीझरनेके छींटे आकाशको उछलै हैं, सो मानो राजाके आवेकरि अति हर्षको प्राप्त भए आनन्दकर हंसै हैं। नानाप्रकारकी मणिनिकी कांतिकरि उपज्या जो कांतिका सुन्दर समूह ताकरि मानों तोरणनिके समूह ही ऊंचे चढ रहे हैं। अब राजा वानरद्वीपमें उतरे, अर सर्व ओर चौगिरद अपनी नीलकमलसमान दृष्टि सर्वत्र विस्तारी। छुहारे, आंवले, कथ, अगरचन्दन, लाख, पीपरली, अर्जुन कहिए सहीजणा अर कदम्ब, आमली, चारोली केला, दाडिम, सुपारी, इलायची, लवंग, मौलश्री अर सर्व जातिके मेवोंसे युक्त नानाप्रकारके वृक्षनिकरि द्वीप शोभायमान देख्या। ऐसी मनोहर भूमि देखी जिसके देखे और ठौर दृष्टि न जाय। जहां वृक्ष सरल अर विस्तीर्ण ऊपरि छत्रसे बन रहे हैं। सघन सुन्दर पल्लव अर शाखा फूलनिके समूहकरि शोभै हैं, अर महा रसीले स्वादिष्ट, मिष्ट फलनिकर नम्रीभूत होय रहे हैं। अर वृक्ष अति रसीले, अति ऊंचे हू नाहीं अति नीचे हू नाहीं, मानों कल्पवृक्ष ही शोभै हैं। अर जहां बेलनिपर फूलोंके गुच्छे लगरहे हैं, जिनपर भ्रमर गुंजार करै हैं सो मानों यह बेलि तो स्त्री है, उनके जो पल्लव हैं सो हाथोंकी हथेली हैं, अर फूलोंके गुच्छे कुच हैं, अर भ्रमर नेत्र हैं, वृक्षोंसे लग रहे हैं। अर ऐसे ही तो सुन्दर पक्षी बोलै हैं, अर ऐसे ही मनोहर भ्रमर गुंजार करै हैं, मानों परस्पर आलाप करै हैं। जहां कईएक देश तो स्वर्णसमान कांतिको धरै हैं, कईएक कमल समान, कईएक वैडूर्य मणि समान हैं। ते देश नानाप्रकारके वृक्षनिकरि मंडित हैं, जिनको देखकर स्वर्गभूमि हू नाहीं रुचै है। जहां देव क्रीडा करै हैं। जहां हंस सारिस, सूवा, मैना, कबूतर, कमेड़ी इत्यादि अनेक जातिके पक्षीनिके युगल क्रीडा करै हैं। जहां जीवनिकों किसीप्रकारकी बाधा नाहीं। नानाप्रकारके वृक्षनिकी छायाके मंडप, रत्न स्वर्णके अनेक निवास, पुष्पनिकी अति सुगंधी, ऐसे उपवनमें सुन्दर शिलानिके ऊपर राजा जाय विराजे, अर सेना भी सकल
वनमें उतरी। हंसों, सारिसों, मयूरोंके नाना प्रकारके शब्द सुने अर फल फूलोंकी शोभा देखी। सरोवरनिमें मीन केल करते देखे। वृक्षोंके फूल गिरै हैं, अर पक्षियोंके शब्द होय रहे हैं। सो मानों वह

बन राजाके आवनेतैं फूलनिकी वर्षा ही करै हैं, अर जयजयकार शब्द करैं हैं। नानाप्रकारके रत्ननिकरि मंडित पृथ्वीमंडल की शोभा देखि विद्याधरनिका चित्त बहुत सुखी भया। बहुरि नन्दनवन सारिखा वह बन तामें राजा श्रीकंठने क्रीडा करते संते बहुत बानर देखे। जिनकी अनेक प्रकारकी चेष्टा है। राजा देखकरि मनमें चितवने लगा कि–तिर्यंच योनिके ये प्राणी मनुष्य समान लीला करै हैं। जिनके हाथ पग सर्व आकार मनुष्यकासा है, सो इनकी चेष्टा देखि राजा चकित होय रहै। निकटवर्ती पुरुषनिसों कही जो 'इनको मेरे समीप लाओ'। सो राजाकी आज्ञातैं कईएक बानरनिको पकरि लाए सो राजाने उनको बहुत प्रीतिसौं राखे। अर तिनिको नृत्य करणा सिखाया, अर उनके सफेद दांत दाडिमके फूलनिसों रंगकर तमाशे देखे। अर उनके मुखमें सोनेके तार लगाय कौतूहल करावता भया। वे आपसमें परस्पर जूवां काढैं तिनके तमाशे देखे, अर वे आपसमैं स्नेह करैं, वा कलह करैं तिनके तमाशे देखे। राजाने ते कपि पुरुषनिकूं रक्षा निमित्त सोंपे। अर मीठे मीठे भोजनकरि तिनको पोखे। तिन बानरोंको साथ लेकर किहकुंद पर्वत पर चढ़े। राजाका चित्त सुन्दर वृक्ष बेलि पानीके नीझरणों से हरा गया। तहां पर्वतके ऊपर विषमतारहित विस्तीर्ण भूमि देखी। तहां किहकुंद नामा नगर बसाया। कैसा है वह नगर? जहां वैरियोंका मन भी प्रवेश न कर सकै। चौदह योजन लंबा और चौदह योजन चौड़ा, अर जो परिक्रमा करिए तो बियालीस योजन कछुइक अधिक होय। जाके मणियोंके कोट, रत्नोंके दरवाजे वा रत्नोंके महल। रत्नोंका कोट इतना ऊंचा है कि अपने शिखरकरि मानो आकाशसों ही लग रह्या है, अर दरवाजे ऊंचे मणियों से ऐसे शोभै हैं मानो यह अपनी ज्योतिसे थिरीभूत होय रहे हैं। घरनिकी देहली पद्मराग मणिनकी है, सो अत्यन्त लाल है, मानो यह नगरी नारी स्वरूप है, सो तांबूलकरि अपने अधर (होंठ) लाल कर रही है। अर दरवाजे मोतिनकी मालाकरि युक्त हैं, सो मानों समस्त लोककी संपदाको हंसै हैं। अर महलनिके शिखरिन पर चन्द्रकांति मणि लगि रही है, सो रात्रिमैं ऐसा भासैं है, मानो अंधेरी रात्रिमैं चन्द्र उग रहा है। अर नानाप्रकारके रत्नोंकी प्रभाकी पंक्ति करि मानो ऊंचे तोरण चढ़ रहे

हैं। तहां घरनिकी पंक्ति विद्याधरनिकी बनाई हुई बहुत शोभै है। घरनिके चौक मणिनके हैं, अर जहाँ नगरके राजमार्ग बाजार बहुत सीधे हैं, तिनमें वक्रता नाहीं। अति विस्तीर्ण हैं, मानो रत्ननिके सागर ही हैं। सागर जलरूप हैं, यह स्थलरूप हैं। अर मन्दिरके ऊपर लोगोंने कबूतरनिके निवास निमित्त नीलमणिनिके स्थान कर राखे हैं। सो कैसे शोभै हैं– मानो रत्ननिके तेजने अंधकार नगरीतैं काढ दिया है, सो शरण आयकर समीप पड्या है। इत्यादि नगरका वर्णन कहां तक करिए। इन्द्र के नगरके समान वह नगर जिसमें राजा श्रीकंठ पद्माभा राणीसहित जैसें स्वर्गविषै शचीसहित सुरेश रमैं है, तैसें बहुतकाल रमते भए। जो वस्तु भद्रशालवनमें तथा सोमनसवनमें तथा नन्दनवनमें न पाइए ते राजाके वनमें पाई जावैं।

एक दिन राजा महल ऊपर विराज रहे थे, सो अष्टाह्निकाके दिनोंमें इन्द्र चतुरनिकायके देवनि सहित नन्दीश्वर द्वीपको जाते देखे, अर देवनिके मुकुटनिकी प्रभाके समूहसे आकाशको अनेक रंगरूप ज्योतिसहित देख्या। अर बाजा बजानेवालोंके समूहकरि दशों दिशा शब्दरूप देखी। किसीको किसी का शब्द सुनाई न देवै। कईएक देव मायामई हंसनपर तथा तुरंगनिपर तथा हंसनि पर अनेकप्रकार के वाहननिपर चढे जाते देखे। सो देवोंके शरीरकी सुगंधतासे दशोंदिशा व्याप्त हो गई। तब राजा यह अद्भुत चरित्र देखि मनमें विचारी कि नंदीश्वर द्वीपको देव जाय हैं। यह राजा हू अपने विद्याधरों सहित नंदीश्वर द्वीपको जानेकी इच्छा करते भए। बिना विवेक विमान पर चढकरि राणी सहित आकाशके पथसे चाले, परन्तु मानुषोत्तरके आगैं इनका विमान न चल सक्या, देवता चले गए, यह अटक रहे। तब राजाने बहुत विलाप किया, मनका उत्साह भंग होय गया। कांति और ही होय गई। मनमें विचारैं है कि हाय! बड़ा कष्ट है, हम हीनशक्तिके धनी विद्याधर मनुष्य अभिमानको धरें सो धिक्कार है हमको। मेरे मनमें यह हुती कि नन्दीश्वर द्वीपमें भगवानके अकृत्रिम चैत्यालय हैं उनका मैं भावसहित दर्शन करूंगा, अर महामनोहर नानाप्रकारके पुष्प, धूप, गंध इत्यादि अष्ट

द्रव्यनिकरि पूजा करूंगा, बारंबार धरतीपर मस्तक लगाय नमस्कार करूंगा, इत्यादि जो मनोरथ किये हुते ते पूर्वोपार्जित अशुभ कर्मकरि मेरे मंदभागीके भाग्यमें न भए। अथवा मैंने आगैं अनेक बार यह बात सुनी हुती कि मानुषोत्तर पर्वतको उल्लंघकर मनुष्य आगै न जाय है, तथापि अत्यन्त भक्ति रागकर यह बात भूल गया। अब ऐसे कर्म करूं जो अन्य जन्मविषै नन्दीश्वर द्वीप जाने की मेरी शक्ति हो। यह निश्चयकर वज्रकंठ नामा पुत्रको राजदेय सर्व परिग्रहको त्यागकर राजा श्रीकंठ मुनि भए। एक दिन वज्रकंठने अपने पिताके पूर्वभव पूछनेका अभिलाष किया। तब वृद्ध पुरुष वज्रकंठको कहते भए कि जो हमको मुनियोंने उनके पूर्वभव ऐसे कहे हुते--जो पूर्वभवमें दो भाई वणिक हुते। तिनमें प्रीत बहुत हुती, सो स्त्रियोंने वे जुदे किए। तिनमें छोटा भाई दरिद्री अर बड़ा भाई धनवान। सो बड़ा भाई सेठकी संगतितैं श्रावक भया। अर छोटा भाई कुव्यसनी दुखसों दिन पूरे करै। बड़े भाईने छोटे भाईकी यह दशा देखि बहुत धन दिया। अर भाईको उपदेश देय व्रत लिवाए, अर आप स्त्रीका त्यागकर मुनि होय समाधिमरण करि इन्द्र भए। अर छोटा भाई शांतपरिणामी होय, शरीर छोड़ देव हुवा। देवसे चयकरि श्रीकंठ भया। बड़े भाईका जीव इन्द्र भया था; सो छोटे भाईके स्नेहतैं अपना स्वरूप दिखावता संता नन्दीश्वर द्वीप गया सो इंद्रको देखि राजा श्रीकंठको जातिस्मरण हुवा,सो वैरागी भए। यह अपने पिताका व्याख्यान सुन राजा वज्रकंठहू इन्द्रायुधप्रभ पुत्रको राज देय मुनि भए। अर इन्द्रायुधप्रभ भी इन्द्रभूत पुत्रको राज्य देय मुनि भए, तिनकैं मेरु, मेरुकैं मंदिर तिनकैं समीरणगति, तिनकैं रविप्रभ, तिनकैं अमरप्रभ पुत्र हुआ। सो लंकाके धनीकी बेटी गुणवती परणी, सो गुणवती राजा अमरप्रभके महलमें अनेक भांतिके चित्राम देखती भई। कहीं तो शुभ सरोवर देखे जिनमें कमल फूल रहे हैं, अर भ्रमर गुंजार करै हैं। कहीं नीलकमल फूल रहे हैं। हंसके युगल क्रीडा कर रहे हैं, जिनकी चूंचनिमें कमलनिके तंतु, ऐसे हंसनिके युगल क्रीडा करै हैं। अर क्रोंच, सारस इत्यादि अनेक पक्षियोंके चित्राम देखे सो प्रसन्न भई। अर एक ठौर पंच प्रकारके रत्नोंके चूर्णसे वानरोंके स्वरूप देखे।

वे विद्याधरोंने चितेरे हैं, सो राणी वानरोंके चित्राम देखि भयभीत होय कांपने लगी। रोमांच होय आए। पसेवकी बूंदोंसे माथेका तिलक बिगड़ गया, अर आंखोंके तारे फिरने लगे। राजा अमरप्रभ यह वृत्तांत देखि घरके चाकरोंसे बहुत खिझे कि मेरे विवाहमें ये चित्राम किसने कराए। मेरी प्यारी राणी इनको देखि डरी। तदि बड़े लोगोंने अरज करी कि महाराज! इसमें किसीका अपराध नहीं। आपनैं कही जो यह चित्राम करावणेहारे इनको विपरीत भाव दिखाया, सो ऐसा कौन है जो आपकी आज्ञा सिवाय काम करै? सबनिके जीवनमूल आप हो, आप प्रसन्न होयकर हमारी विनती सुनो।

आगैं तुम्हारे वंशमें पृथ्वीपर प्रसिद्ध राजा श्रीकंठ भए। जिनने यह स्वर्ग समान नगर बसाया, अर नानाप्रकारके कौतूहलका धारणहारा जो यह देश ताके वे मूलकारण ऐसे होते भए जैसैं कर्मोंका मूलकारण रागादिक प्रपंच है। वननिके मध्य लतागृहमें सुखसों तिष्ठी हुई किन्नरी जिनके गुण गावै हैं, अर किन्नर हू गावै हैं। इन्द्र समान जिनकी शक्ति थी ऐसे वे राजा, तिन्होंने अपनी स्थिर प्रकृतितैं लक्ष्मीकी चंचलता करि उपज्या जो अपयश सो दूर किया। सो राजा श्रीकंठ इन वानरों को देखकर आश्चर्य को प्राप्त भए अर इन सहित रमे, मीठे २ भोजन इनको दिये। अर इनके चित्राम कढाये। पीछे उनके वंशमें जो राजा भए, तिनने मंगलीक कार्योंमें इनके चित्राम मँडाए, अर वानरनिसों बहुत प्रीत राखी? तातैं पूर्वरीत प्रमाण अब हू लिखे हैं। ऐसा कह्या तदि राजा क्रोध तजि प्रसन्न होय आज्ञा करते भये—जो हमारे बड़ेनिने मंगलकार्यमें इनके चित्राम दिखाए तो अब भूमिमें मत डारो जहां मनुष्यनिके पांव लगैं, मैं इनको मुकुटविषैं राखूंगा। अर ध्वजाओंमें इनके चिन्ह कराओ, अर महलोंके शिखर तथा छत्रोंके शिखरपर इनके चिन्ह करावो। यह आज्ञा मंत्रियोंको करीसो मंत्रियोंने उस ही भांति किया। राजाने गुणवती राणीसहित परम सुख भोगते विजयार्धकी दोऊ श्रेणीके जीतने का मन किया। बड़ी चतुरंग सेना लेकर विजयार्ध गये। राजाकी ध्वजाओंमें अर मुकुटोंमें कपिनिके चिन्ह हैं। राजाने विजयार्ध जायकर दोऊ श्रेणी जीत करि सब राजा वश किए। सर्व देश अपनी

आज्ञामें किए। किसी का भी धन न लिया। जो बड़े पुरुष हैं तिनका यह व्रत है जो राजानिको नवावैं, अपनी आज्ञामें करैं, किसीका धन न हरैं। सो राजा विद्याधरनिको आज्ञामें कर पीछे किहकूपुर आए। विजयार्धके बड़े २ राजा साथ आए। सब विद्याधरोंका अधिपति होय घने दिनतक राज्य किया। लक्ष्मी चंचल हुती सो नीतिकी बेडी डालि निश्चल करी। तिनके पुत्र कपिकेतु भए, जिनके श्रीप्रभा राणी बहुत गुणकी धरणहारी। ते राजा कपिकेतु अपने पुत्र विक्रमसंपन्नको राज्य देय वैरागी भए। अर विक्रमसम्पन्न प्रतिबल पुत्रको राज्य देय वैरागी भए। यह राज्यलक्ष्मी विषकी बेलके समान जानो। बड़े पुरुषोंके पूर्वोपार्जित पुण्यके प्रभावकरि यह लक्ष्मी विना ही यत्न मिलै है। परन्तु उनके लक्ष्मीमें विशेष प्रीति नाहीं। लक्ष्मी को तजते खेद नाहीं होय है। किसी पुण्यके प्रभावकरि राज्य-लक्ष्मी पाय देवोंके सुख भोग फिर वैराग्यको प्राप्त होयकर परमपदको प्राप्त होय है। मोक्षका अविनाशी सुख उपकरणादि सामग्रीके आधीन नाहीं। निरन्तर आत्माधीन है। वह महासुख अन्तरहित है, अविनश्वर है। ऐसे सुखको कौन न वांछै ? राजा प्रतिबलके गगनानन्द पुत्र भए, तिनके खेचरानन्द, उसके गिरिनन्द, या भांति वानरवंशियोंके वंशमें अनेक राजा भये। ते राज्य तजि वैराग्य धर स्वर्ग मोक्षको प्राप्त भए। इस वंशके समस्त राजाओंके नाम अर पराक्रम कौन कह सकै ? जिसका जैसा लक्षण होय सो तैसा ही कहावै। सेवा करै तो सेवक कहावै, धनुष धारै सो धनुषधारी कहावै, परकी पीडा टालै सो शरणगति प्रतिपाल होय क्षत्री कहावै, ब्रह्मचर्य पालै सो ब्राह्मण कहावै। जो राजा राज्य तजिकर मुनि होय सो मुनि कहावै। श्रम कहिये तप धारै सो श्रमण कहावै। यह बात प्रकट ही है—लाठी राखै सो लाठीवाला कहावै, सेल राखै सो सेलवाला कहावै। तैसे यह विद्याधर छत्र ध्वजाओं पर वानरों के चिन्ह राखते भये तातैं वानरवंशी कहाए। भगवान श्रीवासुपूज्यकेसमय राजा अमरप्रभ भए। तिनने वानरों के चिन्ह मुकुट छत्र ध्वजानिमें बनाए तबतैं इनके कुलमें यह रीति चली आई। या भांति संक्षेपतैं वानर वंशियोंकी उत्पत्ति कही।

अथानन्तर या कुल विषैं महोदधि नामा राजा भए, जिनके विद्युतप्रकाशा नामा राणी भई। वह राणी पतिव्रता स्त्रियोंके गुण की निधान है, जिसने अपने विनय अंगकरि पतिका मन प्रसन्न किया है। राजाके सुन्दर सैंकड़ों रानी हैं, तिनकी यह राणी शिरोभाग्य है। महा सौभाग्यवती रूपवती ज्ञानवती है। उस राजाकें महापराक्रमी एक सौ आठ पुत्र भये। तिनको राज्यका भार देय राजा महासुख भोगते भये। मुनिसुव्रतनाथके समयमें वानरवंशियनिमें यह राजा महोदधि भये। अर लंकामें विद्युतकेशके अर महोदधिके परम प्रीति भई। कैसे हैं ये दोऊ? सकल प्राणियोंके प्यारे, अर आपसमें एक चित्त, देह न्यारी भई तो कहा, सो विद्युतकेश मुनि भये। यह वृत्तांत सुन महोदधि भी वैरागी भए। यह कथा सुन राजा श्रेणिकने गौतम स्वामी सों पूछो—'हे स्वामी! राजा विद्युतकेश किस कारणसे वैरागी भये? तब गौतम स्वामीने कहा कि एक दिन विद्युतकेश प्रमदानामा उद्यानमें क्रीडा करनेको गये। कैसा है उद्यान? जहां क्रीडाके निवास अति सुन्दर हैं, निर्मल जलके भरे सरोवर हैं, तिनमें कमल फूल रहे हैं। अर सरोवरनिमें नावैं डार राखी हैं। वनमें ठौर ठौर हिंडोले हैं, सुन्दर बेल अर क्रीडा करने के सुवर्णके पर्वत, जिनके रत्नोंके सिवाण, वृक्ष मनोज्ञ फल फूलनिकरि मंडित, जिनके पल्लवसौं हालती लता अति शोभैं हैं, अर लताओंसे लिपटि रहे हैं। ऐसे बनमें राजा विद्युतकेश राणियोंके समूह विषैं क्रीडा करते हुते। कैसी हैं राणी? मनकी हारणहारी, पुष्पादिकके चूटनेमें आसक्त हैं। जिनके पल्लव समान कोमल सुगंध हस्त अर मुख की सुगंध करि भ्रमर जिनपर भ्रमै हैं। क्रीडाके समय राणी श्रीचन्द्राके कुच एक वानरने नखनि तैं विदारे, तदि राणी खेदखिन्न भई। रुधिर आय गया। राजाने राणीको दिलासा देय करि अज्ञानभावतैं वानरको वाणतैं बीध्या सो वानर घायल होय एक गगन-चारण महामुनिके पास जाय पड्या। वे दयालु बानरको कांपता देखि दयाकरि पंचनमोकर मन्त्र देते भये। सो बानर मरकर उदधिकुमार जातिका भवनवासी देव उपज्या। यहां बनमें वानरके मरण पीछैं राजाके लोक अन्य बानरोंको मार रहे थे सो उदधिकुमारने अवधिसे विचारकर वानरों को

पद्म पुराण ८६

मारते जान, मायामई वानरों की सेना बनाई । वे वानर ऐसे बने, जिनकी दाढ विकराल, वदन विकराल, भौंह विकराल, सिंदूर सारिखा लाल मुखसों डरानेवारे शब्दको कहते हुवे आये । कईएक हाथमें पर्वत धरें, कईएक मूल से उपारे वृक्षोंको धरैं, कईएक हाथनिसों धरती कूटते संते, कईएक आकाशमें उछलते संते, क्रोधके भारकर रौद्र है अंग जिनका, उन्होंने आय राजाको घेरया, अर कहते भये–अरे दुराचारी? सम्हार तेरी मृत्यु आई है । तू बानरोंकूं मारकरि अब किसकी शरण जायगा ?

तब विद्युतकेश डरया अर जान्या कि यह वानरोंका बल नाहीं, देवमाया है । तब देहकी आशा छोडि महामिष्ट बाणी करके विनती करता भया कि–"महाराज ! आज्ञा करो, आप कौन हो, महा-देदीप्यमान प्रचंड शरीर जिनके, यह बानरनिकी शक्ति नाहीं । आप देव हैं ।" तदि राजाको अति विनयवान देखि महोदधि कुमार बोले "हे राजा ! बानर पशु जाति जिनका स्वभाव ही अति चंचल है, उनको तैंने स्त्रीके अपराधसों हते, सो मैं साधुके प्रसादसे देव भया । मेरी विभूति तू देखि ।"राजा कांपने लग्या, हृदयविषैं भय उपज्या, रोमांच होय आए । तब महोदधि कुमारने कही–"तू मत डर ।" तब इसने कह्या, कि "जो आप आज्ञा करो सो करूं ।" तब देव इसको गुरुके निकट लेय गया । वह देव अर राजा ये दोनों मुनिकी प्रदक्षिणा देय नमस्कार कर जाय बैठे । देवने मुनिसों कही कि–"मैं बानर हुता सो आपके प्रसादतैं देव भया, अर राजा विद्युतकेशने मुनिसों पूछ्या कि मुझे क्या कर्त्तव्य है । मेरा कल्याण किस तरह होय ? तदि मुनि चार ज्ञानके धारक हुते सो तपोधन कहते भए—कि हमारे गुरु निकट ही हैं, उनके समीप चालो । अनादिकालका यह धर्म है कि गुरुओंके निकट जाय धर्म सुनिये । आचार्यनिके होते संते जो उनके निकट न जाय अर शिष्य ही धर्मोपदेश देय तो वह शिष्य नहीं, कुमार्गी है, आचारसे भ्रष्ट है । ऐसा तपोधनने कह्या तब देव अर विद्याधर चित्तमें चिंतवते भये कि ऐसे महापुरुष हैं, तो भी गुरुकी आज्ञा बिना उपदेश नाहीं करैं हैं । अहो ! तपका माहात्म्य अति अधिक है । मुनिकी आज्ञासे वह अर देव विद्याधर मुनिके गुरुपै गये । जहां जायकर तीन प्रदक्षिणा

देव नमस्कारकर गुरुकै निकट न अति नीरे न घने दूरे बैठे । महामुनिकी मूर्ति देखि देव अर विद्या-
धर आश्चर्यको प्राप्त भये । कैसी है महामुनिकी मूर्ति ? तपकी राशिकर उपजी जो दीप्ति ताकरि
देदीप्यमान है । देखकरि नेत्रकमल फूल गये । महा विनयवान होय देव अर विद्याधर धर्मका स्वरूप
पूछते भये ।

कैसे हैं मुनि ? जिनका मन प्राणियोंके हितमें सावधान है, अर रागादिक जो संसारके कारण हैं
तिनके प्रसंगसे दूर हैं । जैसे मेघ गम्भीर ध्वनिकरि गर्जै अर बरसै, तैसे महागम्भीर ध्वनिकर जगतके
कल्याणके निमित्त परम धर्मरूप अमृत बरसाते भए । जब मुनि ज्ञानका व्याख्यान करने लगे तदि
मेघकासा नाद(शब्द)जान लताओंके मंडपमें जो मयूर तिष्ठे थे वे नृत्य करते भए । मुनि कहते भए—
अहो देव विद्याधरो ! तुम चित्त लगाय सुनो, तीन भवका आनन्द करणहारे श्रीजिनराजने जो धर्म
का स्वरूप कहचा है सो मैं तुमको कहू हू । कईएक जो प्राणी नीचबुद्धि हैं, विचार रहित जडचित्त
हैं, ते अधर्महीको धर्म जानि सेवै हैं । जो मार्गको न जानै सो घने कालमें भी मनवांछित स्थानको न
पहुंचे । मंदमति मिथ्यादृष्टि विषयाभिलाषी जीव हिंसा कर उपज्या जो अधर्म ताको धर्म जान सेवैं
हैं ते नरक निगोदके दुख भोगवै हैं । जो अज्ञानी खोटे दृष्टांतनिके समूहकरि भरे महापापनिके पुंज मिथ्या
ग्रंथोंके अर्थ तिनकर धर्म जान प्राणिघात करै हैं, ते अनन्तसंसार भ्रमण करै हैं । जो अधर्मचर्चा करके
वृथा बकवाद करै हैं ते दंडोंसे आकाशको कूटै हैं, सो कैसे कूटा जाय ? जो कदाचित् मिथ्यादृष्टियोंके
कायक्लेशादि तप होय, अर शब्द ज्ञान भी होय, तो भी मुक्तिका कारण नाहीं । सम्यग्दर्शन बिना
जो जानपना है, सो ज्ञान नाहीं । अर जो आचरण है, सो कुचारित्र है । मिथ्यादृष्टियनिका जो तप
वृत है सो पाषाण बराबर है, अर ज्ञानी पुरुषोंके जो तप है सो सूर्यमणि समान है । धर्मका मूल ८७
जीवदया है, अर दयाका मूल कोमल परिणाम हैं । सो कोमल परिणाम दुष्टोंके कैसे होय ? अर परि-
ग्रहधारी पुरुषनिको आरंभ करि हिंसा अवश्य होय है । तातैं दयाके निमित्त परिग्रह आरम्भ तजना

चाहिए। तथा सत्यवचन धर्म है, परन्तु जिस सत्यसे परजीवोंको पीड़ा होय, सो सत्य नाहीं, झूठ ही है। अर चोरीका त्याग करना, परनारी तजनी, परिग्रहका परिमाण करना, संतोष व्रत धरना, इन्द्रियोंके विषय निवारने, कषाय क्षीण करने, देव गुरु धर्मका विनय करना, निरंतर ज्ञानका उपयोग राखना, यह सम्यग्दृष्टि श्रावकोंके व्रत तुझे कहे। अब घरके त्यागी मुनियोंके धर्म सुनो। सर्व आरम्भका परित्याग, दशलक्षण धर्मका धारण, सम्यग्दर्शनकर युक्त महाज्ञान, वैराग्यरूप यतिका मार्ग है। महामुनि पंच महाव्रतरूप हाथीके कांधे चढ़े हैं, अर तीन गुप्तिरूप दृढ़ बकतर पहरे हैं। अर पांच समितिरूप पयादोंसे संयुक्त हैं। नानाप्रकार तपरूप तीक्ष्ण शस्त्रोंसे मंडित हैं, अर चित्तके आनन्द करणहारे हैं। ऐसे दिगम्बर मुनिराज कालरूप वैरीको जीतैं हैं। वह कालरूप बैरी मोहरूप मस्त हाथीपर चढा है, अर कषायरूप सामंतोंसे मंडित है। यतीका धर्म परमनिर्वाणका कारण है, महामंगलरूप है। उत्तम पुरुषनिकरि सेवने योग्य है। अर श्रावक का धर्म तो साक्षात् स्वर्गका कारण है, अर परम्पराय मोक्ष का कारण है। स्वर्गमें देवोंके समूहके मध्य तिष्ठता मनवांछित इन्द्रियोंके सुखको भोगै है। अर मुनिके धर्मसे कर्म काट मोक्षके अतींद्रिय सुखको पावै है, अतीन्द्रिय सुख सर्व बाधा रहित अनुपम है, जिसका अन्त नाहीं, अविनाशी है। अर श्रावकके व्रतकरि स्वर्ग जाय तहांतै चय, मनुष्य होय मुनिराज के व्रत धर परमपदको पावै है। अर मिथ्यादृष्टि जीव कदाचित् तपकर स्वर्ग जाय तो चयकर एकेंद्रियादिक योनिविषै आयकर प्राप्त होय है, अनन्त संसार भ्रमण करै है। तातैं जैन ही परम धर्म है, अर जैन ही परम तप है, जैन ही उत्कृष्ट मत है। जिनराजके वचन ही सार हैं। जिनशासनके मार्गसे जो जीव मोक्ष प्राप्त होनेको उद्यमी हुआ, ताको जो भव धरने पड़ें तो देव विद्याधर राजानिके भव तो विना चाहे सहज ही होय हैं, जैसैं खेतीके करणहारेका उद्यम धान्य उपजानेका है, घास कबाड़ पराल इत्यादि सहज ही होय हैं, अर जैसैं कोऊ पुरुष नगरको चाल्या ताको मार्गमें वृक्षादिकका संगम खेदका निवारण है, तैसैं ही शिवपुरीको उद्यमी भए। जे महामुनि हैं तिनको इन्द्रादिक पद शुभोपयोगके कारणसे

होय हैं, मुनिका मन तिनमें नाहीं । शुद्धोपयोगके प्रभावसे सिद्ध होनेका उपाय है ।, अर श्रावक अर मुनिके धर्मसे जो विपरीत मार्ग है सो अधर्म जानना। जिससे यह जीव नानाप्रकार कुगतिमें दुःख भोगै हैं । तिर्यंच योनिमें मारण, ताडन, छेदन, भेदन, शीत, उष्ण, भूख, प्यास इत्यादि नानाप्रकारके दुःख भोगै हैं । अर सदा अंधकारसु भरे जे नरक तिनविषै अत्यन्त उष्ण शीत महा विकराल पवन जहां अग्निके कण बरसै हैं, नानाप्रकारके भयंकर शब्द जहां नारकियोंको घानीमें पेलै हैं, करोतेसे चीरै हैं । जहां भयकारी शाल्मली वृक्षोंके पत्र चक्र खडग सेलसमान हैं । तिन करि तिनके तन खंड खंड होय हैं । जहां तांबा शीशा गालकर मदिराके पीवनहारे पापियों को प्यावे हैं । अर मांस भक्षियोंको तिनहीके मांस काट काट उनके मुखमें देवैं हैं, अर लोहके तप्त गोले सिंडासीसे मुख फाड फाड जोरावरी से मुखमें देवैं है । अर परदारासंगम करनहारे पापियोंको ताती लोहकी पुतलियोंसे चिपटावै हैं । जहां मायामई सिंह, व्याघ्र, स्याल इत्यादि अनेक प्रकार बाधा करैं हैं । अर जहां मायामयी दुष्ट पक्षी तीक्ष्णचोंचसे चूटैं हैं । नारकी सागरोंकी आयुपर्यंत नानाप्रकारके दुख, त्रास, मार भोगै हैं, मारते मरै नाहीं, आयु पूर्ण कर ही मरै है । परस्पर अनेक बाधा करै हैं, अर जहां मायामयी मक्षिका अर मायामयी कृमि सूई समान तीक्ष्ण मुखतैं चूटैं हैं । यह सर्व मायामयी जानने। अर पशु पक्षी तथा विकलत्रय तहां नाहीं, नारकी जीव ही हैं । तथा पंच प्रकारके स्थावर सर्वत्र ही हैं । नरकमें जो दुःख जीव भोगै हैं, उसके कहनेको कौन समर्थ है ? तुम दोऊ कुगतिमें बहुत भ्रमे हो ऐसा मुनिने कह्या । तब यह दोऊ अपना पूर्वभव पूछते भए । संयमी मुनि कहै हैं कि तुम मन लगाकर सुनो—यह दुःखदाई संसार यामैं तुम मोहसे उन्मत्त होकर परस्पर द्वेष धरते आपसमें मरण मारण करते अनेक योनिमें प्राप्त भए । तिनमें एक तो काशी नामा देशमें पारधी भया, दूजा श्रावस्तीनामा नगरीमें राजाका सूर्यदत्त नामा मंत्री भया । सो गृह त्यागकर मुनि भया, महा तपकर युक्त अतिरूपवान पृथ्वीमें विहार करै । सो एक दिन काशीके वन में जीव जंतुरहित पवित्र स्थानकमें मुनि विराजे हुते । अर श्रावक श्राविका अनेक दर्शनको आए हुतै,

सो वह पापी पारधी मुनिको देख तीक्ष्ण वचनरूप शस्त्रतैं मुनिको बींधता भया। यह विचारकर कि यह निर्लज्ज मार्गभ्रष्ट स्नानरहित मलीन मुझको शिकारमें जानेको अमंगलरूप भया है। ये वचन पारधीने कहे तब मुनिको ध्यानका विघ्न करणहारा संक्लेशभाव उपज्या। फिर मनमें विचारी कि मैं मुनि भया, सो मोकूं क्लेशरूप भाव कर्त्तव्य नाहीं। ऐसा क्रोध उपजै है जो एक मुष्टि प्रहारकर इस पापी पारधीको चूर्ण कर डारूं। मुनिके अष्टम स्वर्ग जायवेको पुण्य उपज्या था सो कषायके योगतैं क्षीण पुण्य होय मरकर ज्योतिषीदेव भया, तहांतैं चयकर तू विद्युतकेश विद्याधर भया। अर वह पारधी बहुत संसार भ्रमणकर लंकाके प्रमदनामा उद्यानमें वानर भया, सो तुमने स्त्रीके अर्थि बाण कर मारया सो बहुत अयोग्य किया। पशुका अपराध सामन्तोंको लेना योग्य नाहीं। वह वानर नवकार मंत्रके प्रभावतैं उदधिकुमार देव भया।

ऐसा जानकर हे विद्याधरो ! तुम वैरका त्याग करो जिससे इस संसारमें तुम्हारा भ्रमण होय रह्या है, जो तुम सिद्धोंके सुख चाहो हो तो रागद्वेष मत करो। सिद्धोंके सुखोंका मनुष्य अर देवोंसे वरणन न होय सके, अनन्त अपार सुख हैं। जो तुम मोक्षाभिलाषी हो अर भले आचारकर युक्त हो तो श्रीमुनि-सुव्रतनाथकी शरण लेहु। परम भक्तिसे युक्त इंद्रादिक देव भी तिनको नमस्कार करैं हैं। इंद्र, अहमिंद्र, लोकपाल सर्व उनके दासोंके दास हैं। वे त्रिलोकीनाथ, तिनकी तुम शरण लेयकर परम कल्याणको प्राप्त होवोगे। वे भगवान् ईश्वर कहिए समर्थ हैं, जिनके सर्व अर्थपूर्ण हैं, कृतकृत्य हैं। ये जो मुनिके
वचन, तेई भयी सूर्यकी किरण, तिनकरि विद्युतकेश विद्याधरका मन कमलवत् फूल्या, सुकेशनामा पुत्रको राज्य देय मुनिके शिष्य भए। राजा महाधीर है, सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रका आराधन कर उत्तम देव भए। किहकुपुरके स्वामी राजा महोदधि विद्याधर वानरवंशीनके अधिपति चंद्रकांतमणियों के महल ऊपर विराजे हुते अमृतरूप सुन्दर चर्चाकर इन्द्रसमान सुख भोगते भए। तिनतैं एक विद्याधर श्वेतवस्त्र पहरे शीघ्र जाय नमस्कार कर कहता भया कि प्रभो ! राजा विद्युतकेश मुनि होय स्वर्ग

सिधारे। यह सुनकर राजा महोदधिने भोगभावतैं विरक्त होय जैनदीक्षाविषै बुद्धि धरी, अर ए वचन कहे कि मैं भी तपोवनको जाऊंगा। ये वचन सुनि राजलोक मंदिरमें विलाप करते भए, सो विलाप कर महल गूंजि उठ्या। कैसा है राजलोक? वीणा बांसुरी मृदंगकी ध्वनि समान है शब्द जिनके। अर युवराज भी आयकर राजासों विनती करता भया कि—राजा विद्युतकेशका अर अपना एक व्यवहार है। राजाने बालक पुत्र सुकेशको राज दिया है, सो तिहारे भरोसे दिया है। सो सुकेशके राज्यकी बृद्धता तुमको राखनी। जैसा उनका पुत्र तैसा तिहारा—तातैं कईएक दिन आप वैराग्य न धारैं। आप नव यौवन हो। इन्द्रकेसे भोगनिकरि यह निःकंटक राज्य भोगो। या भांति युवराजने वीनती करी। अर अश्रुपातनिकी वर्षा करी तौ भी राजाके मनमें न आई। अर मंत्री महानयके वेत्ताने भी अति दीन होय वीनती करी कि हे नाथ! हम अनाथ हैं। जैसैं बेल वृक्षनिसों लगि रही है, तैसैं तुम्हारे चरणसे लगि रहे हैं, तुम्हारे मनसैं हमारा मन तिष्ठै है, सो हमको छांडिकर जावो योग्य नाहीं। या भांति बहुत विनती करी तो हू राजा न मानी। अर राणीने बहुत विनती करी, चरणोंमें लौट गई। बहुत अश्रुपात डारे। कैसी है राणी? गुणनिके समूहकरि राजाकी प्यारी हुती, सो विरक्तभावकरि राजाने नीरस देखी। तब राणी कहै है कि—हे नाथ! हम तिहारे गुणनिकर बहुत दिननिकी बंधी, अर तुम हमको बहुत लड़ाई, (लाड-प्यार किया) महालक्ष्मी समान हमको मायाकरि राखी, अब स्नेहपाश तोडि कहां जावो हो? इत्यादि अनेक बात करी, सो राजा चित्तमें न धरी। अर राजाके बड़े २ सामंतोंने भी वीनती करी कि—हे देव! इस नवयौवनमें राज छांड़ि कहां जावो हो? सबनितैं मोह क्यों तज्यो? इत्यादि अनेक स्नेहके वचन कहे परन्तु राजाने किसीकी न सुनी। स्नेहपाश छेदि, सर्वपरिग्रहका त्यागकरि, प्रतिचंद्र पुत्रको राज्य देय आप अपने शरीर हुतैं भी उदास होय दिगम्बरीदीक्षा आदरी। कैसे हैं राजा? पूर्ण बुद्धिवान, महाधीर—वीर, पृथ्वी पर चन्द्रमा समान उज्ज्वल है कीर्ति जाकी, सो ध्यानरूप गजपर चढकरि तपरूपी तीक्ष्णशस्त्रसों कर्मरूपशत्रुको काट सिद्धपदको प्राप्त भए। प्रतिचन्द्र भी कईएक दिन

राजकर अपने पुत्र किहकंधको राज्य देय अर छोटे पुत्र अंधकरूढको युवराजपद देय आप दिगम्बर होय शुक्लध्यानके प्रभावकरि सिद्धस्थानको प्राप्त भए।

अथानन्तर राजा किहकंध, अर अंधकरूढ दोऊ भाई चांद सूर्यसमान औरोंके तेजको दाबिकरि पृथ्वीपर प्रकाश करते भए। तासमय विजयार्धपर्वतकी दक्षिणश्रेणीविषै रथनूपुरनामा नगर सुरपुर समान, तहां राजा अशनिवेग महापराक्रमी, दोऊ श्रेणीके स्वामी जिनकी कीर्ति शत्रुनिके मानको हरनहारी, तिनके पुत्र विजयसिंह महारूपवान, ते आदित्यपुरके राजा विद्यामंदिर विद्याधर, ताकी राणी वेगवती, ताकी पुत्री श्रीमाला, ताके विवाहनिमित्त जो स्वयंवर मंडप रचा हुता, अर अनेक विद्याधर आए हुते, तहां अशनिवेगके पुत्र विजयसिंह भी पधारे। कैसी है श्रीमाला? जाकी कांतिकरि आकाशविषै प्रकाश होय रह्या है। सकल विद्याधर सिंहासनपर बैठे हैं। बड़े २ राजाओंके कुंवर थोड़े २ साथ सों तिष्ठै हैं, सबनिकी दृष्टि—सोई भई नीलकमलनिकी पाँति, सो श्रीमालाके ऊपर पड़ी। श्रीमालाको किसीसे भी रागद्वेष नाहीं, मध्यस्थ परिणाम है। अर ते विद्याधरकुमार मदनकरि तप्त हैं चित्त जिनका, ते अनेक सविकार चेष्टा करते भए। कईएक तो माथेका मुकुट निकंप था तो भी उसको सुन्दर हाथनिकरि ठीक करते भए। कईएक खंजर पास धरचा था तो भी करके अग्रभागसों हिलावते भए, कटाक्षकरि करी है दृष्टि जिन्होंने, अर कईएक के किनारे मनुष्य चमर ढोरते हुते, अर बीजना करते हुते तौभी लीलासहित महासुन्दर रूमालसे अपने मुखको वयार करते भए। अर कईएक वाम चरणपर दाहिना पांव मेलते भए। कैसे हैं राजानिके पुत्र? सुन्दर रूपवान हैं, नवयौवन हैं, कामकलामें निपुण हैं। दृष्टि तो कन्याकी ओर अर पगके अंगुष्ठसों सिंहासनपर किछू लिखते भए। अर कईएक महा मणियोंके समूहकरि युक्त जो सूत्र, कटिमें गाढा बंध्या हुता तौभी उसे संवार गाढा बांधते भए। ९२
अर कईएक चंचल हैं नेत्र जिनके, निकटवर्तीनितैं केलिकथा करते भये। कईएक अपने सुन्दर कुटिल-केशनिको संभारते भए। कईएक जापर भ्रमर गुंजार करै हैं, ऐसे कमलको दाहिने हाथसों फिरावते

भए, मकरंदकी रज विस्तारते भए। इत्यादि अनेक चेष्टा राजानिके पुत्र स्वयंबरमंडपमें करते भए। कैसा है स्वयंबरमंडप ? जाविषै बीन बांसुरी मृदंग नगारे इत्यादि अनेक बाजे बाज रहे हैं। अर अनेक मंगलाचरण होय रहे हैं। अर बंदीजनोंके समूह सत्पुरुषनिके अनेक शुभ चरित्र वर्णन करैं हैं। उस स्वयंवरमंडपमें सुमंगला नामा धाय जाके एक हाथमें स्वर्णकी छडी, एक हाथमें बेंतकी छड़ी, कन्याको हाथ जोड महा विनय कर कहती भई। कन्या नानाप्रकारके मणि भूषणनिकरि साक्षात् कल्पवेल समान है। हे पुत्री ! यह मार्तंडकुंडल नामा कुंवर नभस्तिलकके राजा चंद्रकुंडल, राणी विमला तिनका पुत्र है, अपनी कांतिकरि सूर्यको भी जीतनहारा अति रमणीक है, अर गुणनिका मंडन है। या सहित रमवेकी इच्छा है तो याकूं वर, यह शस्त्रशास्त्र विद्यामें निपुण है। तब यह कन्या याकों देख यौवनसों कछुइक चिग्या जानि आगैं चाली। बहुरि धाय बोली हे कन्या ! यह रत्नपुरका राजा विद्यांग राणी लक्ष्मी, तिनका पुत्र विद्यासमुद्रघात नामा बहुत विद्याधरोंका अधिपति, याका नाम सुन बैरी ऐसा कांपै जैसैं पीपलका पत्र पवनसों कांपै। महामनोहर हारोंसे युक्त याका सुन्दर बक्षस्थल विषै लक्ष्मी निवास करै है, तेरी इच्छा होय तो याकों वर। तदि याकों भी सरलदृष्टिकरि देख आगैं चाली। बहुरि धाय बोली कैसी है धाय ? जो कन्याके अभिप्रायको जाननहारी है। हे सुते ! यह इन्द्र-सारिखा राजा बज्रशीलका कुंवर खेचरभानु बज्रपंजर नगरका अधिपति है, याकी दोऊ भुजानिमैं राज्यलक्ष्मी—चंचल है तो हू निश्चल तिष्ठै, याकूं देखकरि अन्य विद्याधर आगिया समान भासैं हैं। यह सूर्य समान भासै है। एक तो मानकरि याका माथा ऊंचा है ही, अर रत्ननिके मुकुटकरि अति ही शोभै है, तेरी इच्छा है तो याके कंठविषै माला डारि। तदि यह कन्या कुमुदनी समान खेचरभानुको देख सकुच गई आगे चाली। तदि धाय बोली हे कुमारी ! यह राजा चन्द्रानन—चंद्रपुरका धनी राजा ९३
चित्रांगद राणी पद्मश्रीका पुत्र। याका वक्षस्थल महा सुन्दर चंदनकरि चर्चित जैसैं कैलाशका तट चंद्रकिरणकरि शोभै तैसैं शोभै है। उछले हैं किरणोंके समूह जाविषै ऐसा मोतियोंका हार याके उर-

विषै शोभै है, जैसैं कैलाशपर्वत उछलते हुए नीझरनोंके समूह करि शोभै है। याके नामके अक्षरकरि वैरीनिकाहू मन परम आनन्दकों प्राप्त होय है, अर दुख आताप करि रहित होय है। धाय श्रीमाला सों कहै है—हे सौम्यदर्शने ! कहिए, सुखकारी है, दर्शन जाका ऐसी जो तू, तेरा चित्त या विषै प्रसन्न होय तो जैसैं रात्रि चंद्रमातैं संयुक्त होय प्रकाश करै है, तैसैं याके संगमकरि आल्हादको प्राप्त हो। तदि याविषै भी याका मन प्रीतिको प्राप्त न भया। जैसैं चन्द्रमा नेत्रनिकों आनन्दकारी है, तथापि कमलनिकी याविषै प्रसन्नता नाहीं। बहुरि धाय बोली—हे कन्ये ! मंदरकुंज नगरका स्वामी राजा मेरुकांत राणी श्रीरंभाका पुत्र पुरंदर, मानो पृथ्वीपर इन्द्र ही अवतरया है। मेघ समान है ध्वनि जाकी अर संग्रामविषै जाकी दृष्टि शत्रु संहारवे समर्थ नाहीं, तो ताके बाणनिकी चोट कौन संहारै ? देव भी यासों युद्ध करवेको समर्थ नाहीं, तो मनुष्यनिकी तो कहा बात ? अति उन्नत याका सिर सो तू या परि माला डारि, ऐसा कह्या तौ भी याके मनमें न आया, क्योंकि चित्तकी प्रवृत्ति विचित्र है। बहुरि धाय कहती भई—हे पुत्री ! नाकार्धपुरका रक्षक राजा मनोजव राणी वेगिनी, तिनका पुत्र महाबल, सभारूप सरोवरविषै कमल समान फूल रह्या है। अर याके गुण बहुत हैं, गिननेमें आवैं नाहीं, यह ऐसा बलवान् है, जो अपनी भौंह टेढी करवे करिही पृथ्वी मंडलकों वश करै है। अर विद्याबलकरि आकाशविषै नगर बसावै है, अर सर्व ग्रहनक्षत्रादिकको पृथ्वीतलपर दिखावै है। चाहै तो एक लोक नया और बसावैं, इच्छा करै तो सूर्यकों चन्द्रमा समान शीतल करै, पर्वत चूर डारै, पवनको थांभै, जलका स्थलकरि डारै, स्थलका जल कर डारै। इत्यादि याके विद्याबल वर्णन किये तथापि याका मन वाविषै अनुरागी न भया। और भी अनेक विद्याधर धायने दिखाए सो कन्याने दृष्टिमें न धरे तिनको उलंघि आगे चाली। जैसैं चन्द्रमाकी किरण पर्वतनिको उलंघै, ते पर्वत श्याम होय जांय तैसैं जिन विद्याधरनिकों उलंघि यह आगे गई तिनका मुख श्याम होय गया। सब विद्याधरनिकों उलंघकरि याकी दृष्टि किहकंधकुमारपर गई। ताके कंठमें वरमाला डारी। तदि विजयसिंह विद्याधर

की दृष्टि क्रोधकी भरी, किहकंध अर अंधूक दोऊ भाईनि पर गई। कैसा है विजयसिंह? विद्याबलकरि गर्वित है, सो किहकंध अर अंधूकको कहता भया कि यह विद्याधरों का समाज, तहां तुम वानर कौन अर्थ आए? विरूप है दर्शन तुम्हारा। क्षुद्र कहिये तुच्छ हो? कैसे हो तुम? विनयरहित हो, या स्थानविषै फलोंसे नम्रीभूत जे वृक्ष तिनकरि संयुक्त कोई रमणीक वन नाहीं। अर गिरनिकी सुन्दर गुफा नीझरणोंकी धरणहारी—जहां बानरोंके समूह क्रीडा करैं, सो नाहीं। लालमुखके बानरों! तुमको इहां कौनने बुलाया? जो नीच दूत तुम्हारै बुलवानेको गया होय ताका निपात करूं, अपने चाकरनिकों कही—इनको इहांतै निकाल देवो। ये वृथाही विद्याधर कहावैं हैं।

ये शब्द सुनकरि किहकंध अंधूक दोनों भाई बानरध्वज महाक्रोधको प्राप्त भए, जैसैं हाथिनि पर सिंह कोप करै। अर तिनकी समस्त सेनाके लोक अपने स्वामियोंका अपवाद सुन विशेष क्रोधको प्राप्त भए। कईएक सामंत अपने दाहिने हाथकरि बावीं भुजाका स्पर्श करि शब्द करते भए। अर कईएक क्रोधके आवेशकरि लाल भए हैं नेत्र जिनके, सो मानो प्रलयकालके उलकापात ही हैं, महाकोपको प्राप्त भए। कईएक पृथ्वीविषै दृढ बांधी है जड़ जिनकी ऐसे वृक्षनिको उखाड़ते भए। कैसे हैं वृक्ष? फल अर पल्लवनिको धारै हैं। कईएक थम्भ उखाड़ते भए, अर कईएक सामंतोंके अगले घाव भी क्रोधसों फट गए। तिनमेंसे रुधिरकी धारा निकसती भई, सो मानो उत्पातके मेघ ही बरसै हैं। कईएक गाजते भए, सो दशोंदिशा शब्दकर पूरित भई। अर कईएक योधा सिरके केश विकरालते भए, मानो रात्रि ही होय गई। इत्यादि अपूर्व चेष्टाओंसे वानरवंशी विद्याधरनिकी सेना समस्त विद्याधरनिकी सेना सुभटनिकों मारनेको उद्यमी भई। हाथियोंसे हाथी, घोड़ोंसे घोड़े, रथोंसे रथ युद्ध करते भए। दोनों सेनाओंमें महायुद्ध प्रवरत्या। आकाशमें देव कौतुक देखते भए। यह युद्धकी वार्ता सुनकर राक्षसवंशी विद्याधरोंके अधिपति राजा सुकेश, लंकाके धनी वानरवंशियोंकी सहायताको आए। राजा सुकेश किहकंध अर अंधूकके परम मित्र हैं, मानो इनके मनोरथ पूर्ण करनेको ही आये हैं। जैसैं भरत चक्रवर्तीके

समय राजा अकंपनकी पुत्री सुलोचनाके निमित्त अर्ककीर्ति जयकुमारका युद्ध भया हुता तैसा यह युद्ध भया। यह स्त्री ही युद्धका मूलकारण है। विजयसिंहके अर अंधकके राक्षसवंशी वानरवंशिनिके महायुद्ध भया, तासमय किहकंध कन्याको ले गया। अर छोटे भाई अंधकने खड्गकरि विजयसिंहका सिर काट्या। एक विजयसिंहके विना ताकी सर्व सेना बिखर गई, जैसैं एक आत्मा विना सर्व इंद्रियोंके समूह विघटि जांहि। तदि राजा अशनिवेग विजयसिंहका पिता अपने पुत्रका मरण सुनकरि शोक मूर्छाको प्राप्त भया। अपनी स्त्रियोंके नेत्रके जलकरि सींचा है वक्षस्थल जाका, सो घनी बेरमें मूर्छासे प्रबोधको प्राप्त भया। पुत्रके वैरकरि शत्रुनिपर भयानक आकार किया, तासमय ताका आकार लोक देख न सकें, मानो प्रलयकालके उत्पातका सूर्य ताके आकारकों धरैं है। सर्व विद्याधरनिको लार लेजाकर किहकंधको घेर्या। सो नगरको घेर्या जानि भाई वानरध्वज सुकेश सहित अशनिवेगसों युद्ध करवेको निकस्या। सो परस्पर महायुद्ध भया। गदाओंसे, शक्तियोंसे, बाणोंसे, पासोंसे, शेलोंसे, खड्गोंसे महायुद्ध भया! तहां पुत्रके बधसों उपजी जो क्रोधरूप अग्निकी ज्वाला, उससे प्रज्वलित जो अशनिवेग सो अंधकके सन्मुख भया। तब बड़े भाई किहकंधने विचारी कि मेरा भाई अंधक तो नवयौवन है, अर यह पापी अशनिवेग महा बलवान है, सो मैं भाईकी मदद करूं। तब किहकंध आया अर अशनिवेग का पुत्र विद्युद्वाहन किहकंधके सन्मुख आया। सो किहकंधके अर विद्युद्वाहनके महायुद्ध प्रवर्त्या ता समय अशनिवेगने अंधकको मार्‌या। सो अंधक पृथ्वीपर पड्या, जैसा प्रभातका चन्द्रमा कांतिरहित होय, तैसा अंधकका शरीर कांतिरहित होय गया। अर किहकंधने विद्युद्वाहनके वक्षस्थल पर शिला चलाई सो वह मूर्छित होय गिर्‌या। बहुरि सचेत होय, ताने वही शिला किहकंध पर चलाई सो किहकंध मूर्छा खाय घूमने लग्या। सो लंकाके धनीने सचेत किया। अर किहकंधको किहकुम्पुर ले आए। तब किहकंधने दृष्टि उघाड देख्या तो भाई नाहीं। तब निकटवर्तीनिको पूछने लग्या—मेरा भाई कहां है? तब लोक नीचे होय रहे, अर राजलोकमें अंधकके मरवेका विलाप हुवा, सो

विलाप सुन किहकंध भी विलाप करने लग्या । शोकरूप अग्निकरि तप्तायमान भया है चित्त जाका, बहुत देरतक भाईके गुणनिका चितवन करता संता शोकरूप समुद्रमें मग्न भया । हाय भाई ! मेरे होते संते तू मरणको प्राप्त भया, मेरी दक्षिण भुजा भंग भई । जो मैं एकक्षण तुझे न देखता तो महा व्याकुल होता सो अब तुम्हारे बिना प्राणनिको कैसे राखूंगा । अथवा मेरा चित्त वज्रका है, जो तेरा मरण सुनकर भी शरीरको नाहीं तजै है । हे बाल ! तेरा वह मुलकना अर छोटी अवस्थामें महा-वीरचेष्टा चितार चितार मुझको महादुःख उपजै है । इत्यादि महाविलापकरि भाईके स्नेहसों किहकंध खेदखिन्न भया । तब लंकाके धनी सुकेशने तथा और बड़े बड़े पुरुषोंने किहकंधको बहुत समझाया—जो धीर पुरुषनिको यह रंक चेष्टा योग्य नाहीं । यह क्षत्रीयनिका वीरकुल है, सो महा साहसरूप है । अर या शोकको पंडितोंने बड़ा पिशाच कह्या है । कर्मोंके उदयकरि भाईयनिका वियोग होय है, यह शोक निरर्थक है । यदि शोक किए फिर आगमन होय तो शोक करिये । यह शोक शरीरको शोखै है, अर पापोंका बंध करै है । महामोहका मूल है । तातैं या बैरी शोकको तजकरि प्रसन्न होय कार्यमें बुद्धि धारो । यह अशनिवेग विद्याधर अति प्रबल बैरी है । अपना पीछा छोडेगा नाहीं । नाशका उपाय चितवै है, तातैं अब जो कर्तव्य होय सो विचारो । बैरी बलवान होय तदि प्रच्छन्न (गुप्त) स्थानविषै कालक्षेप करिये तो शत्रुसे अपमानको न पाइए । फिर कईएक दिनमें बैरीका बल घटै तब बैरीको दबाइए । विभूति सदा एक ठौर नाहीं रहै है । तातैं अपनी पाताललंका जो बड़ोंसे आसरेकी ठौर है, सो कुछ काल तहां रहिये । जो अपने कुलमें बड़े हैं ते वा स्थानककी बहुत प्रशंसा करै हैं—जाको देखे स्वर्गलोकमें भी मन न लागै । तातैं उठो, वह जायगां बैरियोंसे अगम्य है । या भांति राजा किहकंधको राजा सुकेशीने बहुत समझाया तो भी शोक न छांडै । तदि राणी श्रीमालाको दिखाई सो ताके देखनेतैं शोकनिवृत्ति भया । तब राजा सुकेशी अर किहकिंध समस्त परिवारसहित पाताललंकाको चाले, अर अशनिवेगका पुत्र विद्युद्वाहन तिनके पीछें लग्या । अपने भाई विजयसिंहके बैरतैं महा क्रोधवत शत्रु-

निके समूल नाश करनेको उद्यमी भया। तदि नीतिशास्त्रके पाठियोंने जो शुद्धबुद्धिके पुरुष हैं, समझाया जो क्षत्री भागैं तो ताके पीछें न लागैं। अर राजा अशनिवेगने भी विद्युद्वाहनसों कही जो अंधूकने तुम्हारा भाई हत्या, सो जो मैं अंधूकको रणमें मारया! तातैं हे पुत्र! इस हठसों निवृत होवो। दुःखीपर दया ही करनी। जिस कायरने अपनी पीठ दिखाई सो जीवित ही मृतक है। ताका पीछा क्या करना? या भांति अशनिवेगने विद्युद्वाहनको समझाया। इतनेमें राक्षसवंशी अर वानरवंशी पाताललंका जाय पहुँचे। कैसा है नगर? रत्नोंके प्रकाशकरि शोभायमान है। तहां शोक अर हर्ष धरते दोए निर्भय रहैं। एक समय अशनिवेग शरदमें मेघपटल देखे, अर उनको विलय होते देखे, विषयोंसे विरक्त भए। चित्त विषै विचारी 'यह राज संपदा क्षणभंगुर है, मनुष्यजन्म अति दुर्लभ है, सो मैं मुनिव्रत धरि आत्मकल्याण करूं।' ऐसा विचारि सहस्रारि पुत्रको राजदेय आप विद्युद्वाहन सहित मुनि भए। अर लंकाविषै पहिले अशनिवेगने निर्घातनामा विद्याधर थानैं राख्या हुता सो अब सहस्रारको आज्ञाप्रमाण लंकाविषै थानैं रहै। एक समय निर्घात दिग्विजयको निकस्या सो सम्पूर्ण राक्षस द्वीपविषै राक्षसनिका संचार न देख्या। सब ही घुस रहे हैं, सो निर्घात निर्भय लंकामें रहै है। एक समय राजा किहकंध राणी श्रीमालासहित सुमेरु पर्वतसों दर्शन कर आवै था, मार्गमें दक्षिणसमुद्रके तटपर देवकुरुभोगभूमि समान पृथ्वीमें करनतटनामा बन देख्या, देखकरि प्रसन्न भए, अर श्रीमाला राणीसों कहते भए। राणीके सुन्दर वचन वीणाके स्वर समान हैं। हे देवी! तुम यह रमणीक वन देखो। जहां वृक्ष फूलोंकरि संयुक्त हैं। निर्मल नदी बहै है, अर मेघके आकार समान धरणीमाली नामा पर्वत शोभै है। पर्वतके शिखर ऊंचे हैं, अर कुंदपुष्प समान उज्ज्वल जलके नीझरने झरे हैं। सो मानो यह पर्वत हंसै ही है। अर वृक्षोंकी शाखासे पुष्प पड़ै हैं। सो मानो हमको पुष्पांजलि ही देवे हैं। अर पुष्पनिकी सुगंध करि पूर्ण पवनतैं हालते जो
वृक्ष तिनकरि मानो यह वन हमको देखि उठिकरि ताजिम ही करै है। अर वृक्ष फलनिकरि नम्रीभूत होय रहे हैं, सो मानो हमको नमस्कार ही करैं। जैसैं गमन करते पुरुषोंको स्त्री अपने गुणनितैं

मोहितकर आगैं जाने न दे है, खड़ा करै है, तैसैं यह बन अर पर्वतकी शोभा हमको मोहितकर राखै है, आगैं जाने न देहै। अर मैं भी इस पर्वतको उलंघ आगे नहीं जाय सकूं, तातैं यहां ही नगर बसाऊंगा। जहां भूमिगोचरियोंका गमन नहीं। पाताललंकाकी जगह ऊंडी है, और तहां मेरा मन खेदखिन्न भया है। सो अब यहां रहनेतैं मन प्रसन्न होगया। या भांति राणी श्रीमालासों कहिकर आप पहाड़सो उतरे। तहां पहाड़ ऊपर स्वर्गसमान नगर बसाया। नगरका किहकंधपुर नाम धर्या। तहां आप सर्व कुटुम्ब सहित निवास किया। कैसा है राजा किहकंध? सम्यग्दर्शन करि संयुक्त है, अर भगवानकी पूजाविषै सावधान है। सो राजा किहकंधकी राणी श्रीमालाके योगतैं सूर्यरज अर रक्षरज दोय पुत्र भए, अर सूर्यकमला पुत्री भई, जाकी शोभकरि सर्व विद्याधर मोहित हुए।

अथानन्तर मेघपुरका राजा मेरु ताकी राणी मघा, पुत्र मृगारिदमन तानें, किहकंधकी पुत्री सूर्यकमला देखी। सो ऐसा आसक्त भया कि रातदिवस चैन जाके नाहीं पड़ै। तब वाकै अर्थि वाके कुटुम्ब के लोगोंने सूर्यकमला जाची। सो राजा किहकंधने राणी श्रीमालासे मंत्रकर अपनी पुत्री सूर्यकमला मृगारिदमनको परणाई सो परणकर जावै था। मार्गमें कर्णपर्वत विषै कर्णकुण्डल नगर बसाया।

अर लंकापुर कहिये पाताललंका, उसमें सुकेश राजा, इन्द्राणी नामा राणी, ताके तीन पुत्र भये। माली, सुमाली अर माल्यवान। बड़े ज्ञानी, गुण ही हैं आभूषण जिनके। अपनी क्रीडाओंसे माता पिताका मन हरते भए। देवों समान है क्रीडा जिनकी। सो तीनों पुत्र बड़े भए। महा बलवान, सिद्ध भई है, सर्व विद्या जिनको। एक दिन माता पिताने इनको कह्या कि जो तुम क्रीडा करनेको किहकंधपुरकी तरफ जाओ तो दक्षिणके समुद्रकी ओर मत जाओ। तबि ये नमस्कारकर माता पिताको कारण पूछते भए। तब पिताने कही हे पुत्रों! यह बात कहिवेकी नाहीं। तब पुत्रोंने बहुत हठि करि पूछी तब पिताने कही कि लंकापुरी अपने कुलक्रमतैं चली आवै है। श्री अजितनाथ स्वामी दूसरे तीर्थंकरके समयसो लगायकर अपना इस खंडमैं राज है। आगैं अगनिवेगके अर अपने युद्ध भया। सो परस्पर

बहुत मरे, लंका अपनेतैं छूटी। अशनिवेगने निर्घात विद्याधरकूं थापि राख्या। सो महाबलवान है, अर क्रूर है, तातैं देश देशमें हलकारे राखे हैं। अर हमारा छिद्र हेरै है। यह पिताके दुखकी वार्ता सुनकर माली निश्वास नाखता भया, अर आंखनितैं आंसू निकसे। क्रोधसे भर गया है चित्त जिसका, अपनी भुजाओंका बल देखकरि पितासों कहता भया कि हे तात! एते दिनोंतक यह बात हमसों क्यों न कही, तुमने स्नेहकरि हमको ठगे। जे शक्तिवंत होयकरि बिना काम किए निरर्थक गाजै हैं, ते लोकविषैं लघुताको पावै हैं। सो अब हमको निर्घातपर चढनेकी आज्ञा देओ, हमारे यह प्रतिज्ञा है—लंकाको लेकरि ही और काम करैं। तदि माता पिताने महा धीर वीर जान इनको स्नेहदृष्टिसे आज्ञा दी। तब ये पाताललंकासों ऐसे निकसे मानो पाताललोकसैं भवनवासी देव निकसै हैं। बैरी ऊपर अतिउत्साहतैं चाले। कैसे हैं तीनों भाई! शस्त्रकलामें महाप्रवीण हैं। समस्त राक्षसोंकी सेना इनके लार चाली। त्रिकूटाचल पर्वत दूरसों देख्या। देखकरि जान लिया कि लंका याके नीचे बसै है। सो मानो लंका लेहीली। मार्ग विषैं निर्घातके कुटुम्बी जो दैत्यादि कहावैं, ऐसै विद्याधर मिले सो युद्ध करके बहुत मरे। कईएक पायन परे, कईएक स्थान छोड भाग गये, कईएक बैरीके कटकमें शरण आये। पृथ्वीमें इनकी बडी कीर्ति विस्तरी। निर्घात इनका आगमन सुन लंकासों बाहिर निकस्या। कैसा है निर्घात? जो युद्धमें महाशूर वीर है, छत्रकी छायाकरि आच्छादित किया है सूर्य जानै। तब दोऊ सेनामें महायुद्ध भया। मायामई हाथिनिकरि, घोडनिकरि, विमाननिकरि, रथनिकरि परस्पर युद्ध प्रवरत्या। हाथिनिके मद झरवेतैं आकाश जलरूप होय गया। अर हाथनिके कान, ते ही भए ताडके बीजने, उनकी पवनसे आकाश मानो पवन रूप हो गया। परस्पर शस्त्रोंके घातकरि प्रकटी जो अग्नि, ताकरि मानों आकाश अग्निरूप होहो गया। या भांति बहुत युद्ध भया। तब मालीने विचारी कि दीननिके मारवेकरि कहा होय? निर्घातहीको मारिये, १००
यह विचारि निर्घातपर आए। ऐसे शब्द कहते भये—कहां वह पापी निर्घात है? सो निर्घातको देखकरि प्रथम तो तीक्ष्ण बाणोंकरि रथतैं नीचे डारचा, फेर वह उठ्या, महायुद्ध किया। तब मालीने खड्ग-

करि निर्घात को मारचा। सो ताकूं मरचा जानकर ताके वंशके भागकरि विजयार्धविषै अपने अपने स्थानक गये, अर कईएक कायर होय मालीहीकी शरण आये। माली आदि तीनों भाइयनिने लंकामें प्रवेश किया। कैसी है लंका? महा मंगलरूप है। माता पिता आदि समस्त परिवारनिको लंकामें बुलाया। बहुरि हेमपुरका राजा मेघ विद्याधर, रानी भोगवती, तिनकी पुत्री चंद्रमती सो मालीने परणी। कैसी है चन्द्रमती? मनको आनन्दकरणहारी है। अर प्रीतिकूट नगरका राजा प्रीतिकांत, राणी प्रीतिमती, तिनकी पुत्री प्रीतिसंज्ञका सो सुमाली परणी। अर कनककांत नगरका राजा कनक, राणी कनकश्री, तिनकी पुत्री कनकावली सो माल्यवानने परणी। इनके कईएक पहिली राणी हुती, तिनमें यह प्रथम राणी भई। अर प्रत्येक के हजार २ राणी कछुइक अधिक होती भई। मालीने अपने पराक्रम से विजयार्धकी दोऊ श्रेणी वश करी। सर्व विद्याधर इनको आज्ञा आशीर्वादकी नांई माथै चढावते भए। कईएक दिनोंमें इनके पिता राजा सुकेश मालीको राज देय महा मुनि भए। अर राजा किहकंध अपने पुत्र सूर्यरजको राज देय वैरागी भए। ए दोऊ परम मित्र राजा सुकेश अर किहकंध समस्त इन्द्रियनिके सुखका त्यागकर अनेक भवके पापोंका हरणहारा जो जिनधर्म ताको पायकर सिद्ध स्थान के निवासी भये। हे श्रेणिक! या भांति अनेक राजा प्रथम राज्य अवस्थामें अनेक विलास कर फिर राज तजकर आत्मध्यानके योगसे समस्त पापनिको भस्म कर अविनाशी धामको प्राप्त भए। ऐसा जानकरि हे राजा! मोहको नाशकर शांतिदशाको प्राप्त होउ।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रन्थ, ताकी भाषा वचनिकाविषै बानरवंशोनिका निरूपण है जाविषै ऐसा छठा पर्व पूर्ण भया॥ ६॥

अथानन्तर रथनूपुर नगरमें राजा सहस्रार राज्य करै। ताके राणी मानसुन्दरी, रूप अर गुणों में अति सुन्दर, सो गर्भिणी भई। अत्यन्त कृश भया है शरीर जाका, शिथिल होय गए हैं सर्व आभूषण जाके। तब भरतारनै बहुत आदरसों पूछी—हे प्रिए! तेरे अंग काहेतैं क्षीण भए हैं, तेरे कहा अभिलाषा

है । जो अभिलाषा होय सो मैं अबार ही समस्त पूर्ण करूं, हे देवी ! तू मेरे प्राणोंसे अधिक प्यारी है या भांति राजाने कही । तब राणी बहुत विनयकर पतिसों बीनती करती भई कि हे देव ! जा दिनतैं बालक मेरे गर्भमें आया है, ता दिनतैं यह मेरी वांछा है कि इन्द्रकीसी सम्पदा भोगूं । सो मैंने लाज तज आपके अनुग्रहसे आपसों अपना मनोरथ कह्या है, नातर स्त्रीकी लज्जा प्रधान है, सो मनकी बात कहिवेमें न आवै । तदि राजा सहस्रारने जो महा विद्याबलकरि पूर्ण हुता, सो तिनने क्षणमात्रमें याके मनोरथ पूर्ण किए । तब यह राणी महा आनन्दरूप भई, सर्व अभिलाषा पूर्ण भई, अत्यन्त प्रताप अर कांतिको धरती भई । सूर्य ऊपर होय निसरै, सो वाहूका तेज न सहार सके । सर्वदिशानिके राजानिपर आज्ञा चलाया चाहै । नव महीने पूर्ण भए तदि पुत्रका जन्म भया । कैसा है पुत्र ? समस्त बांधवनिको परम सम्पदाका कारण है ! तब राजा सहस्रारने हर्षित होय पुत्रके जन्मका महान उत्सव किया । अनेक बाजानिके शब्द करि दशों दिशा शब्दरूप भईं । अर अनेक स्त्री नृत्य करती भईं । राजाने याचकजनको इच्छापूर्ण दान दिया । ऐसा विचार न किया जो यह देना न देना, सर्व ही दिया । अर हाथी गरजते हुते ऊंची सूंडकरि नृत्य करते भए । राजा सहस्रारने पुत्रका इन्द्र नाम धरया, जादिन इन्द्रका जन्म भया तादिन समस्त बैरीनिके घरमें अनेक उत्पात भए, अपशकुन भए । अर भाइयनिके तथा मित्रनिके घरमें महा कल्याणके करणहारे शुभ शकुन भए । अर इन्द्र कुंवरकी बालक्रीडा तरुण पुरुषोंकी शक्तिको जीतनेहारी, सुन्दर कर्मकी करणहारी बैरियोंका गर्व छेदती भई । अनुक्रमकरि कुंवर यौवनको प्राप्त भया । कैसा है कुंवर ? अपने तेजकरि जीत्या है सूर्यका तेज
जिसने, अर कांतिसे जीत्या है चन्द्रमा, अर स्थिरतासे जीत्या है पर्वत, अर विस्तीर्ण है वक्षस्थल जाका, दिग्गजनिके कुंभस्थल समान ऊंचे हैं कांधे जाके, अर अति दृढ़ सुन्दर हैं भुजा—दश दिशानिकी दाबनहारी । अर दोऊ जंघा जिसकी महा सुन्दर यौवनरूप महलके थांभने को थंभे समान होती भई । विजयार्ध पर्वतविषै सर्व विद्याधर जाने सेवक किये । जो यह आज्ञा करै सो सर्व करैं । यह महा

विद्याधर बलकर मंडित, यानै अपने यहां सब इन्द्रकीसी रचना करी । अपना महल इन्द्रके महल समान बनाया, अडतालीस हजार विवाह किये । पटरानीका नाम शची धरया, छबीस हजार नटवा नृत्य करै, सबा इन्द्रकैसा अखाडा रहै । महामनोहर अनेक इन्द्रकैसे हाथी, घोड़े, अर चन्द्रमा समान महा उज्ज्वल ऊंचा आकाशके आंगनमें गमन करनेवाला, किसीसे निवारया न जाय, महा बलवान, अष्टदंत करि शोभित गजराज, जिसका महा सुन्दर सूंड सो पाट हाथी उसका नाम ऐरावत धरया । चतुरनिकायके देव थापे, अर परम शक्तियुक्त चार लोकपाल थापे—सोम १, वरुण २, कुबेर ३, यम ४ । अर सभा का नाम सुधर्मा, बज्र, आयुध तीन सभा, अर उर्वशी मेनका रंभा इत्यादि हजारां नृत्यकारिणी तिनकी अप्सरा संज्ञा ठहराई । सेनापतिका नाम हिरण्यकेशी, अर आठ बसु थापे, अर अपने लोकनिको सामानिक त्रायस्त्रिंशतादि दश भेद देवसंज्ञा धरी । गानेवालोंका नाम नारद १, तुम्बुरु २, विश्वासु ३, यह संज्ञा धरी । मंत्रीका नाम वृहस्पति, इत्यादि सर्व रीति इन्द्र समान थापी । सो यह राजा इन्द्र समान सब विद्यारधरनिका स्वामी पुण्यके उदयकरि इन्द्रकैसी सम्पदाका धरनहारा होता भया । ता समय लंका में माली राज करै, सो महामानी जैसैं आगे सर्व विद्याधरनिपर अमल करै था तैसा ही अबहू करै, इन्द्रकी शंका न राखै, विजयार्धके समस्त पुरोंमें अपनी आज्ञा राखै । सर्व विद्याधर राजानिके राजमें महारत्न हाथी, घोड़े, मनोहर कन्या, मनोहर वस्त्राभरण, दोनों श्रेणियोंमें जो सार वस्तु होयसो, मंगाय लेय । ठौर २ हलकारे फिरबे करैं । अपने भाइयनिके गर्वतैं महा गर्ववान पृथ्वीपर एक आपहीको बलवान जानैं ।

अब इन्द्रके बलतें विद्याधर लोक मालीकी आज्ञा भंग करने लगे । सो यह समाचार मालीने सुना तब अपने सर्व भाई, अर पुत्र, अर कुटुम्ब समस्त राक्षसवंशी अर किहकंधके पुत्रादि समस्त वानरवंशी तिनको लार लेय विजयार्ध पर्वतके विद्याधरनि पर गमन किया । कईएक विद्याधर अति ऊंचे विमानों पर चढ़े हैं । कईएक चालते महल समान सुवर्णके रथोंपर चढ़े हैं, कईएक काली घटा समान हाथियों

पर चढ़े हैं, कईएक मनसमान शीघ्रगामी घोड़ोंपर चढ़े, कईएक सिंह शार्दूलोंपर चढ़े, कईएक चीतोंपर चढ़े, कईएक ऊंटोंपर, कईएक खच्चरोंपर, कईएक भैंसोंपर, कईएक हंसोंपर, कईएक स्यालोंपर इत्यादि अनेक मायामई वाहनोंपर चढ़े, आकाशका आंगन आछादते हुवे, महा दैदीप्यमान शरीर धरकर मालीकी लार चढ़े। प्रथम प्रयाणमें ही अपशकुन भए। तदि मालीतें छोटा भाई सुमाली कहता भया। कैसा है वह? बड़े भाईमें है अनुराग जाका। हे देव! यहां ही मुकाम करिये, आगैं गमन न करिये, अथवा लंकामें उलटा चलिये, आज अपशकुन बहुत भए हैं। सूखे वृक्षकी डालीपर एक पगको संकोचे कागतिष्ठ्या है। अत्यन्त आकुलित है चित्त जाका, बारबार पंख हलावै है, सूखा काठ चोंचमें लिए सूर्यकी ओर देखै है, अर क्रूरशब्द बोलै है। सो हमारा गमन मनैं करै है, अर दाहिनी ओर रौद्र है मुख जाका, ऐसी स्यालिनी रोमांच धरती हुई भयानक शब्द करै है। अर सूर्यके बिंबके मध्य प्रविष्ट हुई जलैरीमें रुधिर झरता देखिये है। अर मस्तकरहित धड नजर आवै है। अर महा भयानक वज्रपात होय है। कैसा है वज्रपात? कम्पाया है समस्त पर्वत जाने। अर आकाशमें बिखरि रहे हैं केश जिसके ऐसी मायामई स्त्री नजर आवै है। अर गर्दभ आकाशकी तरफ ऊंचा मुखकर खुरके अग्रभागकरि धरतीको खोदता हुवा कठोर शब्द करै है। इत्यादि अपशकुन होय हैं। तदि राजा माली सुमालीतें हंसकर कहते भए। कैसा है राजा माली? अपनी भुजानिके बलकरि शत्रुनिको गिनते नाहीं। अहो वीर! वैरिनको जीतना मनमें विचार, विजय हस्तीपर चढ़े महा पुरुष धीरताको धरते कैसैं पीछे बाहुडैं? जे शूरवीर—दांतनिकरि डसैं हैं अधर जिन्होंने, अर टेढी करी हैं भौंह जिन्होंने, अर विकराल है मुख जिनका, अर वैरीनिको डरानेवाली है आंख जिन्होंकी, तीक्ष्ण बाणनिकरि पूर्ण, अर बाजे हैं अनेक बाजे जिनके, अर मदझरते हाथिनिपर चढे हैं, अथवा तुरंगनपर चढ़े हैं, महावीररसके स्वरूप आश्चर्य की दृष्टि करि देवोंने देखे जो सामंत वे कैसे पाछैं बाहुडैं? अर मैंने या जन्ममें अनेक लीलाविलास किये, सुमेरुपर्वतकी गुफा तहां नन्दनवन आदि मनोहरवन तिनमें देवांगना समान अनेकराणीसहित

नानाप्रकारकी क्रीडा करी, अर आकाशमें लगरहे हैं शिखर जिनके, ऐसे रत्नमयी चैत्यालय जिनेंद्रदेवके कराए, विधिपूर्वक भाव सहित जिनेंद्रदेवकी पूजा करी, अर अर्थी जो जाचे सो दिया। ऐसें किमिच्छिक दान दिये। इस मनुष्यलोकमें देवोंकेसे भोग भोगे। अर अपने यशकरि पृथ्वीपर वंश उत्पन्न किया। तातें या जन्ममें तो हम सब बातोंमें इच्छा पूर्ण हैं। अब जो महा संग्राममें प्राणोंको तजें तो यह शूरवीरनिकी रीति ही है। परन्तु क्या हम लोकोंसे यह कहावें कि माली कायर होय, पाछे हट गया, अथवा तहां ही मुकाम किया। यह निंदाके लोकनिके शब्द धीरवीर कैसे सुनें? धीर वीरोंका चित्त क्षत्रियवृतमें सावधान है। भाईको या भांति कहि आप वैताडके ऊपर सेना सहित क्षणमात्रमें गये। सब विद्याधरों पर आज्ञा पत्र भेजे। सो कईएक विद्याधरनने न माने, तिनके पुर ग्राम उजाड़े, अर उद्याननिके वृक्ष उपार डारे, जैसे कमलके वनको मस्त हाथी उखाडै तैसैं राक्षसजातिके विद्याधर महाक्रोधको प्राप्त भए हैं। तदि प्रजाके लोग मालीके कटकतैं डरकर कांपते संते रथनूपुर नगरमें राजा सहस्रारके शरण गये। चरणनिको नमस्कारकर दीनवचन कहते भए कि—हे प्रभो! सुकेशका पुत्र माली राक्षसकुली समस्त विद्याधरनिपर आज्ञा चलावै, सर्व विजयार्धमें हमको पीडा करै है। आप हमारी रक्षा करो, तब सहस्रारने आज्ञा करी कि हे विद्याधरों! मेरा पुत्र इंद्र है, ताके शरण जाय सर्व वीनती करो। वह तुम्हारी रक्षा करनेकों समर्थ है। जैसैं इन्द्र स्वर्गलोककी रक्षा करै है तैसैं यह इन्द्र समस्त विद्याधरोंका रक्षक है।

तब समस्त विद्याधर इन्द्रपै गए, हाथ जोड़ि नमस्कार करि सर्व वृत्तांत कहे। तब इंद्र माली ऊपर क्रोधायमान होय गर्वकरि मुलकते संते सर्वलोकनिको कहते भए। कैसे हैं इन्द्र? पास धरया जो वज्रायुध ताकी ओर देख्या, लाल भए हैं नेत्र जिनके। मैं लोकपाल लोकनिकी रक्षा करूं, जो लोकका कंटक होय ताहि हेरकर मारूं, अर वह आप ही लडने को आया तो या समान और क्या? रणके नगारे बजाए। कैसे हैं वे वादित्र? जिनके श्रवणकरि माते हाथी गजके बंधनको उखाडैं हैं। समस्त

विद्याधर युद्धका साजकरि इन्द्रपै आए, बकतर पहरे । हाथमें अनेकप्रकारके आयुध लिए, परम हर्ष धरतेसंते कईएक रथनिपर, कईएक घोडनिपर चढ़े तथा हस्ती ऊंट सिंह व्याघ्र स्याली तथा मृग हंस छेला, बलद, मींडा इत्यादि मायामई अनेक वाहनोंपर बैठि आए । कईएक विमानमें बैठे, कईएक मयूरों पर चढे, कईएक खच्चरनिकरि चढकर आए । इंद्रने जो लोकपाल थापे हैं, ते अपने अपने वर्गसहित नानाप्रकारके हथियारनिकरयुक्त भोंह टेढी किये आए । भयानक है मुख जिनके । पाट हस्तीका नाम ऐरावत तापर इंद्र चढे बकतर पहिरे शिरपर छत्र फिरते हुए, रथनूपुरतैं बाहिर निकसे । सेनाके विद्याधर जो देव कहावैं, सो इन देवनिके अर लंकाके राक्षसनिके साथ महायुद्ध प्रवरत्या ।

हे श्रेणिक ! ये देव अर राक्षस समस्त विद्याधर मनुष्य हैं । नमि विनमिके वंशके हैं । ऐसा युद्ध प्रवरत्या जो कायरनितैं देख्या न जाय । हाथियनितैं हाथी, घोडनितैं घोड़े, पयादनितैं पयादे लडे । सेल मुग्दर,सामान्य चक्र, खड्ग, गोफण, मूसल, गदा, कनक पाश इत्यादि अनेक आयुधनिकरि युद्ध भया । सो देवोंकी सेनाने कछुइक राक्षसोंका बल घटाया, तब वानरवंशी राजा सूर्यरज रक्षरज राक्षसवंशियोंके परममित्र राक्षसोंकी सेनाको दब्या देख युद्धको उद्यमी भए । सो इनके युद्धतैं समस्त इंद्रकी सेनाके लोक देवजातिके विद्याधर पाछे हटे । इनका बल पाय राक्षसकुली विद्याधर लंकाके लोक देवनितैं महायुद्ध करते भए । शस्त्रोंके समूहसे आकाशमें अंधेरा कर डारया । राक्षस अर वानरवंशियोंसे देवों का बल हरया देख इन्द्र आप युद्ध करनेकों उद्यमी भए । सो समस्त राक्षसवंशी अर वानरवंशी मेघरूप होकर इन्द्ररूप पर्वतपर गाजते हुये शस्त्रकी वर्षा करते भये । सो इंद्र महायोधा कुछ भी विषाद न करता भया । किसी का वाण आपको न लगने दिया । सबनिके बाण काट डारे, अर अपने बाणनिकरि कपि अर राक्षसोंको दबाये । तब राजा माली लंकाके धनी अपनी सेनाको इन्द्रके बलकरि व्याकुल देख इंद्रतैं युद्ध करवेको आप उद्यमी भये । कैसे हैं राजा माली ? क्रोधकरि उपज्या जो तेज ताकरि समस्त आकाशमें किया है उद्योत जिन्होंने ! इन्द्रके अर मालीके परस्पर महायुद्ध प्रवरत्या ।

मालीके ललाट पर इंद्रने वाण लगाया सो मालीने उस वाणकी वेदना न गिनी, अर इन्द्रके ललाट पर शक्ति लगाई, सो इन्द्रके रुधिर झरने लगा। अर माली उछलकर इन्द्रपै आया, तब इन्द्रने महा-क्रोधसे सूर्यके बिंब समान चक्रसे मालीका शिर काट्या, माली भूमिपर पड्या, तब सुमाली मालीको मुआ जानि अर इन्द्रको महा बलवान जानि सब परिवार सहित भाग्या। मालीको भाईका अत्यन्त दुःख हुवा। जब यह राक्षसवंशी अर वानरवंशी भागे तब इन्द्र इनके पीछे लाग्या। तब सौमनामा लोक-पालने जो स्वामीकी भक्तिमैं तत्पर है—इन्द्रसे विनती करी कि हे प्रभो! जब मो सारिखा सेवक शत्रुनिके मारनेको समर्थ है तब आप इनपर क्यों गमन करें, सो मुझे आज्ञा देवो! शत्रुनिको निर्मूल करूं। तब इन्द्रने आज्ञा करी, यह आज्ञा प्रमाण इनके पीछें लाग्या। अर वाणनिके पुंज शत्रुओंपर चलाये, सो कपि अर राक्षसनिकी सेना वाणनिकरि बेधीगई। जैसैं मेघकी धाराकरि गायनिके समूह व्याकुल होय तैसैं तिनकी सर्व सेना व्याकुल भई।

अथानन्तर अपनी सेनाको व्याकुल देखि सुमालीका छोटाभाई माल्यवान् बाहुडकर सौमपर आये अर सौमकी छातीमें भिण्डिपाल नामा हथियार मारा, सो मूर्छित होया। सो जबलग वह सावधान होय तब लग राक्षसवंशी अर वानरवंशी पाताललंका जाय पहुंचे। मानो नया जन्म भया, सिंहके मुखसे निकले। सौमने सावधान होकर सर्व दिशा शत्रुओंसे शून्य देखी। तब लोकनिकरि गाइये जस जाके, बहुत प्रसन्न होय इन्द्रके निकट गया। अर इन्द्र विजय पाय ऐरावत हस्तीपर चढ्या लोकपाल-निकरि मंडित शिरपर छत्र फिरते चँवर ढुरते, आगैं अप्सरा नृत्य करती बड़े उत्साहसैं महाविभूति सहित रथनूपुरविषै आये। कैसा है रथनूपुर? रत्नमयी वस्त्रोंकी ध्वजाओंसे शोभै है, ठौर ठौर तोरण-निकरि शोभायमान है। जहां फूलनिके ढेर होय रहे हैं, अनेक प्रकार सुगंधसे देवलोक समान है।
सुन्दर नारियां झरोखोंमें बैठी इन्द्रकी शोभा देखैं हैं। इन्द्र राजमहलमैं आए, अति विनयथकी माता-पिताके पायन पड़े। तदि मातापिताने माथे हाथ धरचा, अर गात्र स्पर्शे, आशीष दई। इंद्र वैरीनिकूं

जीति अति आनन्दको प्राप्त भया। प्रजापालनविषै तत्पर इन्द्रके समान भोग भोगे। विजयार्ध पर्वत तो स्वर्ग समान अर यह राजा इन्द्र सर्व लोकविषै प्रसिद्ध भया।

गौतम स्वामी राजा श्रेणिकसे कहै हैं—कि हे श्रेणिक! अब लोकपालकी उत्पत्ति सुनो। ये लोकपाल स्वर्गलोकतैं चयकर विद्याधर भए हैं। राजा मकरध्वज राणी अदिति, तिनका पुत्र सोम नामा लोकपाल महा कांतिधारी, सो इन्द्रनै ज्योतिपुर नगरमें थापा अर पूर्व दिशाका लोकपाल किया। अर राजा मेघरथ, राणी वरुणा, उनका पुत्र वरुण, उसको इन्द्रने मेघपुर नगरमें थापा अर पश्चिम दिशाका लोकपाल किया, जाकै पास पाश नामा आयुध—जिसका नाम सुनकर शत्रु अति डरैं। अर राजा किहकंधसूर्य, राणी कनकावली, उसका पुत्र कुबेर महा विभूतिवान, उसको इन्द्रने कांचनपुरमें थापा, अर उत्तरदिशाका लोकपाल किया। अर राजा बालाग्नि विद्याधर, राणी श्रीप्रभा, उसका पुत्र यम नामा तेजस्वी उसको किहकंधपुरमें थापा, अर दक्षिणदिशाका लोकपाल किया। अर असुर नामा नगर ताके निवासी विद्याधर, वे असुर ठहराये। अर यक्षकीर्ति नामा नगरके विद्याधर यक्ष ठहराए। अर किन्नर नगरके किन्नर, गंधर्व नगरके गंधर्व, इत्यादिक विद्याधरोंकी देव संज्ञा धरी। इन्द्रकी प्रजा देव जैसी क्रीडा करै। यह राजा इन्द्र मनुष्य योनिमें लक्ष्मीका विस्तार पाय, लोगोंसे प्रशंसा पाय, आपको इन्द्र ही मानता भया, अर कोई स्वर्गलोक है, इन्द्र है, देव है—यह सर्व बात भूल गया। अर आप ही को इन्द्र जान, विजयार्धगिरिको स्वर्ग जाना, अपने थापे लोकपाल जाने, अर विद्याधरोंको देव जाने। या भांति गर्वको प्राप्त भया कि मोतैं अधिक पृथ्वीपर और कोऊ नाहीं, मैं ही सर्वकी रक्षा करूं, यह दोनों श्रेणिका अधिपति होय ऐसा गर्वा कि मैं ही इन्द्र हूं।

अथानन्तर कौतुकमंगल नगरका राजा व्योमबिंदु पृथ्वीपर प्रसिद्ध, उसके राणी मंदवती, उसके दो पुत्री भई, बड़ी कौशिकी छोटी केकसी। सो कौशिकी राजा विश्रवको परणाई। जे यज्ञपुर नगरके धनी, वैश्रवण पुत्र भया। अति शुभ लक्षणका धारणहारा, कमल सारिखे नेत्र जाके, उसको इन्द्रने बुलाकर

पद्म पुराण १०६

तिसका बहुत सन्मान किया, अर लंकाके थाने राखा। अर कहा मेरे आगे चार लोकपाल हैं,तैसे तू पांचवां महा बलवान है। तब वैश्रवणने विनती करी कि–"प्रभो जो आज्ञा करो, सो ही मैं करू" ऐसा कह इन्द्रको प्रणाम कर लंकाको चल्या। वो इन्द्रकी आज्ञा प्रमाण लंकाके थाने रहै। जाको राक्षसोंकी शंका नाहीं, जिसकी आज्ञा विद्याधरोंके समूह अपने सिर पर धरै हैं।

पाताललंकाविषै सुमालीके रत्नश्रवा नामा पुत्र भया। महा शूरवीर, दातार, जगत का प्यारा, उदारचित्त मित्रनिके उपकार निमित्त है जीवन जाका, अर सेवकोंके उपकार निमित्त है प्रभुत्व जाके, पंडितोंके उपकार निमित्त है प्रवीणपणा जाका, भाइयोंके उपकार निमित्त है लक्ष्मीका पालन जाके, दरिद्रियोंके उपकार निमित्त है ऐश्वर्य जाका, साधुओंकी सेवा निमित्त है शरीर जाका, जीवन के कल्याण निमित्त है वचन जाका, सुकृतके स्मरण निमित्त है मन जाका, धर्मके अर्थि है आयु जाकी, शूरवीरताका मूल है स्वभाव जाका, सो पिता समान सब जीवोंको दयालु, जाके परस्त्री माता समान, परद्रव्य तृण समान, पराया शरीर अपने शरीर समान, महा गुणवान, जो गुणवंतोंकी गिनती करैं तहां याको प्रथम गिणे, अर दोषवन्तोंकी गिणतीविषै नहीं आवै, उसका शरीर अद्भुत परमाणुओं कर रचा है, जैसी शोभा इसमें पाइये तैसी और ठोर दुर्लभ है, संभाषणमें मानों अमृत ही सींचै है, अर्थियोंको महादान देता भया। धर्म अर्थ काममें बुद्धिमान, धर्मका अत्यंत प्रिय, निरंतर धर्महीका यत्न करै, जन्मान्तरसे धर्मको लिये आया है, जिसके बड़ा आभूषण यश ही है, अर गुण ही कुटुम्ब है, सो धीर वीर बैरियोंका भय तजकर विद्या साधनके अर्थ पुष्पक नामा बनमें गया। कैसा है वह बन? भूत पिशाचादिकके शब्दसे महा भयानक है। यह तो वहां विद्या साधे है, अर राजा व्योमबिंदुने अपनी पुत्री केकसी इसकी सेवा करणेको इसके ढिग भेजी, सो सेवा करे, हाथ जोड़े रहे, आज्ञाकी है अभिलाषा जाके। कईएक दिनोंमें रत्नश्रवाका नियम समाप्त भया। सिद्धोंको नमस्कार कर मौन छोडा। केकसीको अकेली देखी। कैसी है केकसी? सरल हैं नेत्र जाके, नीलकमल समान सुन्दर, अर

लालकमल समान है मुख जाका, कुंदके पुष्प समान हैं दन्त, अर पुष्पोंकी माला समान है कोमल सुन्दर भुजा, अर मूंगा समान है कोमल मनोहर अधर, मौलश्रीके पुष्पोंकी सुगंध समान है निश्वास जाके, चंपेकी कली समान है रंग जाका, अथवा उस समान चंपक कहां अर स्वर्ण कहां ?मानो लक्ष्मी रत्नश्रवाके रूपमें वश हुई, कमलोंके निवासको तज, सेवा करनेको आई है। चरणारविंदकी ओर हैं नेत्र जाके, लज्जासे नम्रीभूत है शरीर जाका, अपने रूप वा लावण्यसे कूंपलोंकी शोभाको उलंघती हुई, स्वासनकी सुगंधतासे जाके मुखपर भ्रमर गुंजार करै हैं। अति सुकुमार है तनु जाका, अर यौवन आवतासा है, मानों इसकी अति सुकुमारताके भयसे यौवन भी स्पर्शता शंकै है। मानो समस्त स्त्रियों का रूप एकत्रकर बनाई है। अद्‌भुत है सुन्दरता जाकी, मानों साक्षात् विद्या ही शरीर धारकर रत्न-श्रवाके तपसे वशी होकर महा कांतिकी धरणहारी आई है। तब रत्नश्रवा जिनका स्वभाव ही दयावान है केकसीको पूछते भए कि तू कौनकी पुत्री है, अर कौन अर्थ अकेली यूथसे बिछुरी मृगीसमान महा वनमें रहे है, अर तेरा क्या नाम है ? तब यह अत्यंत माधुर्यतारूप गद्‌गद बाणीसे कहती भई–'हे देव! राजा व्योमबिंदु राणी नन्दवती, तिनकी मैं केकसी नामा पुत्री आपकी सेवा करणेको पिताने राखी है। ताही समय रत्नश्रवाको मानस्तम्भिनी विद्या सिद्ध भई। सो विद्याके प्रभावसे उसी वनमें पुष्पां-तकनामा नगर बसाया। अर केकसीको विधिपूर्वक परणा। अर उसी नगरमें रह कर मनबांछित भोग भोगते भए। प्रिया प्रीतममें अद्‌भुत प्रीति होती भई। एक क्षण भी आपसमें वियोग सहार न सकें। यह केकसी रत्नश्रवाके चित्तका बंधन होती भई। दोनों अत्यंत रूपवान नवयौवन महा धनवान इनके धर्मके प्रभावसे किसी भी वस्तुकी कमी नाहीं। यह राणी पतिव्रता पतिकी छाया समान अनुगामिनी होती भई।

एक समय यह राणी रत्नके महलमें सुन्दर सेजपर पड़ी हुती। कैसी है सेज ? क्षीरसमुद्रकी तरंग-समान उज्ज्वल हैं वस्त्र जहां, अर महा कोमल है, अनेक सुगंधकरि मंडित है, रत्नोंका उद्योत होय

रहा है। राणीके शरीरकी सुगंधसे भ्रमर गुंजार करै हैं। अपने मनका मोहनहारा जो अपना पति उसके गुणोंको चितवती हुई। अर पुत्रकी उत्पत्तिको बांछती हुई पड़ी हुती। सो रात्रिके पीछले पहर महा आश्चर्यके करणहारे शुभ स्वप्ने देखे। बहुरि प्रभातविषं अनेक बाजे बाजे, शंखोंका शब्द भया, मागध बंदीजन विरद बखानते भए। तब राणी सेजसे उठकर प्रभातक्रिया कर महामंगलरूप आभूषण पहरे सखियोंकर मंडित पति ढिग आई। राजा राणीको देख उठे, बहुत आदर किया। दोऊ एक सिंहासनपर विराजे, राणी हाथ जोड राजासे विनती करती भई—"हे नाथ! आज रात्रिके चतुर्थ-पहरमें तीन शुभ स्वप्न देखे हैं। एक महाबली सिंह गाजता, अनेक गजेंद्रोंके कुंभस्थल विदारता हुआ परम तेजस्वी आकाशसे पृथ्वीपर आय मेरे मुखमें होकर कुक्षिमें आया, अर सूर्य अपनी किरणोंसे तिमिरका निवारण करता मेरी गोदमें आय तिष्ठ्या, अर चन्द्रमा अखंड है मंडल जाका, सो कुमुदनको प्रफुल्लित करता अर तिमिरको हरता हुआ, मैंने अपने आगे देख्या। यह अद्भुत स्वप्न मैंने देखे सो इनके फल क्या हैं? तुम सर्व जानने योग्य हो। स्त्रियोंको पतिकी आज्ञा ही प्रमाण है। तब यह बात सुन राजा स्वप्नके फलका व्याख्यान करते भए। राजा अष्टांग निमित्तके जाननहारे जिनमार्ग में प्रवीण हैं। हे प्रिये! तेरे तीन पुत्र होंगे जिनकी कीर्ति तीन जगतमें विस्तरैगी। बड़े पराक्रमी, कुलके वृद्धि करणहारे, पूर्वोपार्जित पुण्यसे महासम्पदाके भोगनहारे, देवोंसमान अपनी कांतिसे जीत्या है चंद्रमा, अपनी दीप्तिसे जीता है सूर्य; अपनी गम्भीरताकरि जीत्या है समुद्र, अर अपनी स्थिरतासे जीत्या है पर्वत जिन्होंने, स्वर्गके अत्यन्त सुख भोग मनुष्यदेह धरैंगा। महाबलवान, जिनको देव भी न जीत सकैं, मनवांछित दानके देनहारे, कल्पवृक्ष समान अर चक्रवर्ती समान है ऋद्धि जिनके, अपने रूपकरि सुन्दर स्त्रियोंके मन हरणहारे, अनेक शुभ लक्षणोंकर मंडित उतंग है वक्षस्थल जिनका, जिनका नाम ही श्रवणमात्र से महा बलवान वैरी भय मानेंगे। तिनमें प्रथम पुत्र आठवां प्रतिवासुदेव होयगा। महासाहसी शत्रुओंके मुखरूप कमल मुद्रित करनेको चंद्रमासमान। तीनों भाई ऐसे योद्धा होंगे कि युद्धका नाम सुन

कर जिनके हर्षके रोमांच होयंगे। अर बड़ा भाई कछुइक भयंकर होयगा, जिस वस्तुकी हठ पकडेगा सो न छोडेगा, जिसको इन्द्र भी समझानेको समर्थ नाहीं। ऐसा पतिका वचन सुनकर राणी परम हर्षको प्राप्त होय विनयथकी भरतारको कहती भई:—हे नाथ! हम दोऊ जिनमार्गरूप अमृतके स्वादी कोमलचित्त, अपने पुत्र क्रूरकर्मा कैसे होय? अपने तो जिनवचनमें तत्पर कोमल परिणामी होना चाहिए। अमृतकी बेलपर विषपुष्प कैसे लागैं? तब राजा कहते भए कि—हे वरानने! सुन्दर है मुख जाका ऐसी तू हमारे वचन सुन। यह प्राणी अपने कर्मके अनुसार शरीर धरै है, तातैं कर्म ही मूल-कारण है, हम मूलकारण नाहीं, हम निमित्त कारण हैं। तेरा बड़ा पुत्र जिनधर्मी तो होयगा परन्तु कछुइक क्रूरपरिणामी होयगा, अर ताके दोऊ लघु वीर महाधीर जिनमार्गविषैं प्रवीण, गुणग्रामकरि पूर्ण भली चेष्टाके धरणहारे, शीलके सागर होवेंगे। संसार भ्रमणका है भय जिनको, धर्मविषै अति दृढ़, महा दयावान, सत्य वचनके अनुरागी होवेंगे। तिन दोऊनिके ऐसा ही सौम्यकर्मका उदय है। हे कोमलभाषिणी! हे दयावती! प्राणी जैसा कर्म करै है तैसा ही शरीर धरै है। ऐसा कहकर वे दोऊ राजा राणी जिनेंद्रकी महापूजाविषैं प्रवरते। कैसे हैं ते? रात दिवस नियम धर्मविषै सावधान हैं।

अथानन्तर प्रथम ही गर्भविषै रावण आए, तब माताकी चेष्टा कछुइक क्रूर होती भई। यह बांछा भई कि बैरियोंके सिरपर पांव धरूं। राजा इन्द्रके ऊपर आज्ञा चलाऊं, विनकारण भौंहें टेढ़ी करनी, कठोर वाणी बोलना यह चेष्टा होती भई। शरीरमें खेद नाहीं। दर्पण विद्यमान है तौ भी खड्गमें मुख देखना, सखीजनसूं खिझ उठना, काहूकी शंका न राखनी ऐसी उद्धत चेष्टा होती भई। नवमें महीने रावण का जन्म भया। जा समय पुत्र जन्म्या तासमय बैरियोंके आसन कम्पायमान भए। सूर्यसमान है ज्योति जाकी ऐसा बालक ताकूं देखकर परिवारके लोकनिके नेत्र थकित होय रहे हैं। देव दुंदुभी बाजे बजाने लगे, बैरीनिके घरविषै अनेक उत्पात होने लगे। माता पिताने पुत्रके जन्मका अति हर्ष किया। प्रजाके सर्व भय मिटे, पृथ्वीका पालक उत्पन्न भया, सेजपर सूते पड़े अपनी लीला कर देवनिसमान है दर्शन

जिनका। राजा रत्नश्रवाने बहुत दान दिया। आगैं इनके बड़े जो राजा मेघवाहन भए उनको राक्षसनिके इन्द्र भीमने हार दिया हुता, जाकी हजार नागकुमारदेव रक्षा करैं, सो हार पास धरा था। सो प्रथम दिवस ही के बालकने खैंच लिया। बालकको मुट्ठीमें हार देख माता आश्चर्यको प्राप्त भई। अर महा-स्नेहतैं बालकको छातीसे लगाय लिया। अर सिर चूम्बा, अर पिताने भी हारसहित बालकको देख मनमें विचारी कि यह कोई महापुरुष है। हजार नागकुमार जाकी सेवा करैं ऐसे हारतैं होता ही बालक क्रीडा करता भया। यह सामान्य पुरुष नाहीं, याकी शक्ति ऐसी होयगी जो सर्व मनुष्योंको उलंघै। आगे चारणमुनिने मुझे कह्या हुता कि तेरे पदवीधर पुत्र उत्पन्न होवेंगे। सो अपने प्रति-वासुदेव शलाका पुरुष प्रकट भए हैं। हारके योगसे दशवदन पिताको नजर आए, तब उसका दशानन नाम धर्या। बहुरि कुछ कालमें कुम्भकर्ण भए, सो सूर्यसमान है तेज जिनका। बहुरि कुछएक कालमें पूर्णमासीके चन्द्रमा समान है वदन जाका ऐसी चन्द्रनखा बहिन भई। बहुरि विभीषण भए। महा सौम्य, धर्मात्मा, पापकर्मतैं रहित, मानो साक्षात् धर्म ही देहधारी अवतरा है। यद्यपि जिनके गुणनिकी कीर्ति जगतविषैं गाइए है ऐसे दशाननकी बालक्रीडा दुष्टनि भयरूप होती भई। अर दोऊ भाइनकी क्रीडा सौम्यरूप होती भई। कुम्भकर्ण अर विभीषण दोनोंके मध्य चन्द्रनखा चांद सूर्यके मध्य सन्ध्या समान शोभती भई। रावण बाल अवस्थाको उलंघ कर कुमार अवस्थामें आया। एकदिन रावण अपनी माताकी गोदमें तिष्ठे था, अपने दांतनिकी कांतिसे दशों दिशामें उद्योत करता संता जिनके सिरपर चूडामणि रत्न धरा है ता समय वैश्रवण आकाशमार्गसे जाय था। सो रावणके ऊपर होय निकस्या। अपनी कांति करि प्रकाश करता संता विद्याधरोंके समूहकरि युक्त, महा बलवान विभूतिका धनी, मेघसमान अनेक हाथियोंकी घटा मदकी धारा बरसाते, जिनके बिजली समान सांकल चमकैं, महा शब्द करते आकाश मार्गसे निकसे। सो दशों दिशा शब्दायमान होय गई। आकाश सेना करि व्याप्त होयगया। सो रावणने ऊंची दृष्टिकर देख्या तो बड़ा आडम्बर देखकर माताकूं पूछी यह कौन है?

अर अपने मानसे जगतको तृण समान गिनता महा सेनासहित कहां जाय है ? तब माता कहती भई "तेरी मौसीका बेटा है, सर्व विद्या याकू सिद्ध है, महालक्ष्मीवान है, शत्रुओंको भय उपजावता संता पृथ्वीविषै विचरै है । महा तेजवान है, मानो दूसरा सूर्य ही है । राजा इन्द्रका लोकपाल है । इन्द्रनै तिहारे दादाका भाई माली युद्धमें हराया, अर तुम्हारे कुलमें चली आई जो लंकापुरी वहांसे तुम्हारे दादेको निकासकर ये राख्या । सो लंकामें थाणै रहै है । यह लंकाके लिए तेरा पिता निरंतर अनेक मनोरथ करै हैं, रात दिन चैन नाहीं पडै है, अर मैं भी इस चितामें सूख गई हूं । हे पुत्र ! स्थानभृष्ट होनेतै मरण भला ? ऐसा दिन कब होय जो तू अपने कुलकी भूमिको प्राप्त होय, अर तेरी लक्ष्मी हम देखें, तेरी विभूति देखकर तेरे पिताका अर मेरा मन आनन्दको प्राप्त होय । ऐसा दिन कब होयगा जब तेरे यह दोनों भाईयोंको विभूति सहित तेरी लार इस पृथ्वीपर प्रतापयुक्त हम देखेंगे । तिहारे कंटक न रहेगा ।" यह माताके दीनवचन सुन अर अश्रुपात डारती देखकर विभीषण बोले । कैसे हैं विभीषण ? प्रकट भया है क्रोधरूप विषका अंकुर जिनके, हे माता ! कहां यह रंक वैश्रवण विद्याधर, जो देव होय तो भी हमारी दृष्टि में न आवे । तुमने इसका इतना प्रभाव वरणन किया सो कहा ? तू वीरप्रसवनी अर्थात् योधाओंकी माता है, महाधीर है, अर जिनमार्गमें प्रवीण है, यह संसारकी क्षणभंगुर माया तोतैं छानी नाहीं । काहेको ऐसे दीन वचन कायर स्त्रियोंके समान तू कहै है ? क्या तोकू रावण की खबर नाहीं है । यह श्रीवत्सलक्षणकर मंडित अद्भुत पराक्रमका धरणहारा महाबली, अपार है चेष्टा जाकी, भस्म करि जैसे अग्नि दबी रहै तैसे मौन गह रह्या । यह समस्त शत्रुवर्गनिके भस्म करणेको समर्थ है, तेरे मनविषै अबतक नहीं आया है । यह रावण अपनी चालसे चित्तको भी जीते है । अर हाथ की चपेटसे पर्वतोंको चूर कर डारे है । याकी दोऊभुजा त्रिभुवनरूप मन्दिरके स्तम्भ हैं
अर प्रतापको राजमार्ग है, क्षत्रवतीरूप वृक्षके अंकुर हैं, सो तैंने क्या नहीं जाने ? या भांति विभीषण ने रावणके गुण वर्णन किये । तब रावण मातासे कहता भया, हे माता ! गर्वके वचन कहने योग्य

नाहीं, परन्तु तेरे सन्देहके निवारन अर्थि मैं सत्य वचन कहूहूं, सो तू सुन। जो यह सकल विद्याधर अनेक प्रकार विद्याकरि गर्वित दोऊ श्रेणियनिके एकत्र होयकर मेरेसे युद्ध करैं तौ भी मैं सबनिकूं एक भुजासे जीतूं।

तथापि हमारे विद्याधरनिके कुलविषै विद्याका साधन उचित है। सो करते लाज नाहीं। जैसे मुनिराज तपका आराधन करैं तैसैं विद्याधर विद्याका आराधन करैं, सो हमको करणा योग्य है। ऐसा कहकर दोऊ भाईनिसहित माता पिताको नमस्कारकर नवकार मन्त्रका उच्चारणकर रावण विद्या साधनेको चाले। माता पिताने मस्तक चूमा अर असीस दीनी। पाया है मंगलसंस्कार जिन्होंने, स्थिरभूत है चित्त जिनका, घरतैं निकसिकर हर्षरूप होय भीम नामा महावनमें प्रवेश किया। कैसा है वन? जहां सिंहादि क्रूर जीव नाद कर रहे हैं, विकराल हैं दाढ अर वदन जिनके, अर सूते जे अजगर तिनके निश्वाससे कम्पायमान हैं बड़े बड़े वृक्ष जहां, अर नीचे हैं व्यंतरोंके समूह जहां, जिनके पायनसे कम्पायमान है पृथ्वीतल जहां, अर महा गंभीर गुफाओंमें अंधकारका समूह फैल रहा है, मनुष्योंकी तो कहा बात? जहां देव भी गमन न कर सकै हैं। जाकी भयंकरता पृथ्वीमें प्रसिद्ध है। जहां पर्वत दुर्गम महा अंधकारको धरैं, गुफा अर कंटकरूप वृक्ष हैं, मनुष्योंका संचार नाहीं। तहां ये तीनों भाई उज्ज्वल धोती दुपट्टा धारे शांतिभावको ग्रहणकर, सर्व आशा निवृत्तकर विद्याके अर्थ तप करवेको उद्यमी भए। कैसे हैं ते भाई? निशंक है चित्त जिनका, पूर्ण चन्द्रमा समान है वदन जिनका, विद्याधरनिके शिरोमणि, जुदे जुदे वनमें विराजे हैं। डेढ दिनमें अष्टाक्षर मंत्रके लक्ष जाप किये, सो सर्वकामप्रदा विद्या तीनों भाईयनिकों सिद्ध भई। सो मनवांछित अन्न इनको विद्या पहुँचावे। क्षुधाकी वांछा इनके न होती भई। बहुरि ये स्थिरचित्त होय सहस्रकोटि षोडशाक्षरमन्त्र जपते भए। उससमय जम्बूद्वीपका अधिपति अनावृत्ति नामा यक्ष, स्त्रीनि सहित क्रीडा करता आय प्राप्त हुवा। सो ताकी देवांगना इन तीनों भाईनिकूं महा रूपवान, अर नवयौवन, तपविषै सावधान है मन जिनका, ऐसे देख

कौतुक कर इनके समीप आई। कमल समान हैं मुख जिनके, भ्रमर समान हैं श्याम सुन्दर केश जिनके। कईएक आपसमें बोली–"अहो ! यह राजकुमार अतिकोमलशरीर कांतिधारी वस्त्राभरणरहित कौन अर्थ तप करै हैं ? ऐसे इनके शरीरकी कांति भोगनि विना न सौहै। कहां इनकी नवयौवन वय अर कहां यह भयानक वनविषै तप करना ?" बहुरि इनके तपके डिगावनेके अर्थ कहती भई–"अहो अल्प-बुद्धि ! तुम्हारा सुन्दर रूपवान शरीर भोगका साधन है, योगका साधन नाहीं। तातैं काहेको तपका खेद करो हो, उठो घर चलो, अब भी कुछ गया नाहीं।" इत्यादि अनेक वचन कहे, परन्तु इनके मन में एकहू न आई। जैसें जलकी बून्द कमलके पत्र पर न ठहरै। तब वे आपसमें कहती भईं। हे सखी ! ये काष्टमई हैं, सर्व अंग इनके निश्चल दीखै हैं। ऐसा कहकर क्रोधायमान होय तत्काल समीप आई। इनके विस्तीर्ण हृदय पर कुडलकी दीनी तौ भी ये चलायमान न भए। स्थिरीभूत है चित्त जिनका, कायर पुरुष होय सोई प्रतिज्ञासे डिगै, देविनिके कहते अनावृत यक्षने हंसकर कहा–भो सत्पुरुषों ! काहेको दुर्धर तप करो, अर किस देवको आराधो हो––ऐसे कह्या, तौहू ये बोले नाहीं, चित्रामके होय रहे। तब अनावृतयक्षने क्रोध किया कि जम्बूद्वीपका देव तो मैं हूं, मुझको छांडकर कौनकूं ध्यावै हैं। ये मंदबुद्धि हैं, इनको उपद्रव करनेकेअर्थ अपने किंकरनिको आज्ञा दई। सो किंकर स्वभावही से क्रूर हुते अर स्वामीके कहेसे उन्होंने और भी अधिक अनेक उपद्रव किये। कईएक तो पर्वत उठाय उठाय लाए अर इनके समीप पटके, तिनके भयंकर शब्द भए। कईएक सर्प होय सर्व शरीरसे लिपट गए। कईएक नाहर होय मुख फाडकर आए, अर कईएक शब्द काननिमें ऐसे करते भए जिनको सुनकर लोक बहिरे होजांय, तथा मायामई डांस बहुत किये, सो इनके शरीरतैं आय लगे। अर मायामई हस्ती दिखाये, असराल पवन चलाई, मायामई दावानल लगाई। या भांति अनेक उपद्रव किए, तो भी यह ध्यानसे न डिगे। निश्चल है अंतःकरण जिनका। तब देवोंने मायामई भीलनिको सेना बनाई। अंध-कार समान काल विकराल आयुधोंको धर इनको ऐसी माया दिखाई कि पुष्पांतक नगर मारचा।

अर महायुद्धमें रत्नश्रवाको कुटुम्ब सहित बंधा हुवा दिखाया। अर यह दिखाया कि माता केकसी विलाप करै है, कि हे पुत्रों! इन चांडाल भीलनिने तिहारे पिताकू महाउपद्रव किया। अर ये चांडाल मोकूं मारै हैं, पावोंमें बेड़ी डारी है, माथेके केश खींचे हैं। हे पुत्रों! तुम्हारे आगे मोकू ये म्लेच्छ भील पल्लीमें लिए जांय हैं। तुम कहते हुते जो समस्त विद्याधर एकत्र होय मुझसे लडैं, तौ भी न जीता जाऊं, सो यह वार्ता तुम मिथ्या ही कहते। अब तुम्हारे आगें म्लेच्छ चांडाल मोकू केश पकड़ खींचे लिये जांय हैं। तुम तीनों ही भाई इन म्लेच्छनितैं युद्ध करवे समर्थ नाहीं। मंद पराक्रमी हो। हे दशग्रीव! तेरा स्तोत्र विभीषण वृथा ही करै था, तू तो एक-ग्रीवा भी नाहीं जो माताकी रक्षा न करै। अर यह कुंभकरण तू हमारी पुकार कालनितैं सुनै नाहीं। अर ये विभीषण कहावै है, सो वृथा है। एक भीलतैं लडने समर्थ भी नाहीं। अर यह म्लेच्छ तिहारी बहिन चन्द्रनखाको लिये जाय हैं। सो तुमको लज्जा नाहीं। अर विद्या जो साधिए, सो माता पिताकी सेवा अर्थ, सो विद्या किस काम आवेगी? इत्यादि मायामई देवनिनैं चेष्टा दिखाई तोहू ये ध्यानसे नाहीं डिगे। तदि देवोंने एक भयानक माया दिखाई अर्थात् रावणके निकट रत्नश्रवाका सिर कट्या दिखाया। रावणके निकट भाईनिके भी सिर कटे दिखाए अर भाइयोंके निकट रावणका भी सिर कट्या दिखाया सो रावण तो सुमेरुपर्वत समान अति निश्चल ही रहे। जो ऐसा ध्यान महामुनि करैं तो अष्टकर्मनिकू छेदैं, परन्तु कुंभकर्ण विभीषण के कछुइक व्याकुलता भई, परन्तु कुछ विशेष नाहीं, सो रावणको तो अनेक सहस्र विद्या सिद्धि भई। जेते मंत्र जपनेके नेम किये थे ते पूर्ण होनेसे पहिले ही विद्या सिद्ध भई। धर्मके निश्चयतैं कहा न होय? ऐसा दृढ निश्चय भी पूर्वोपार्जित उज्ज्वल कर्मतैं होय हैं, कर्म ही संसारका मूलकारण है, कर्मानुसार यह जीव सुखदुख भोगवै है। समयविषै उत्तम पात्रोंको विधिसे दान देना अर दयाभाव करि सदा ही सबको देना, अर अन्त समयमें समाधिमरण करना, अर सम्यग्ज्ञानकी प्राप्ति किसी उत्तम जीवहीके होय है। कईएकके तो विद्या दश वर्षमें सिद्ध होय है, कईएकके क्षणमात्रमें। यह सब

कर्मनिका प्रभाव जानो। रात दिन धरतीविषै भ्रमण करो, अथवा जलविषै प्रवेश करो तथा पर्वतके मस्तक परो। अनेक शरीरके कष्ट करो तथापि पुण्यके उदय बिना कार्यसिद्धि नाहीं। जे उत्तम कर्म नाहीं करैं हैं ते वृथा ही शरीर खोवै हैं। तातैं आचार्यनिकी सेवा कार्य सर्व आदरतैं करनी, पुरुषनिको सदा पुण्य ही करना योग्य है। पुण्य बिना कहातैं सिद्धि होय? हे श्रेणिक! पुण्यका प्रभाव देखि जो थोड़े ही दिनोंमें विद्या अर मंत्रविधि पूर्ण भये पहिले ही रावणको महाविद्या सिद्ध भई। जे जे विद्या सिद्धि भई जिनके संक्षेपतासे नाम सुनहु। नभःसंचारिणी, कामदायिनी,कामगामिनी, दुर्निवारा, जगतकंपा, प्रगुप्ति, भानुमालिनी, अणिमा, लघिमा, क्षोभ्या, मनस्तंभनकारिणी, संवाहिनी, सुरध्वंसी, कौमारी, वद्धकारिणी, सुविधाना, तमोरूपा, दहना, विपुलोदरी, शुभप्रदा, रजोरूपा, दिनरात्रिविधायिनी, वज्रोदरी, समाकृष्टि, अदर्शिनी, अजरा, अमरा, अनवस्तंभिनी, तोयस्तंभिनी, गिरिदारिणी, अवलोकिनी, ध्वंशी, धीरा, घोरा, भुजंगिनी, वीरिनी, एकभुवना,अवध्या, दारुणा, मदनासिनी, भास्करी, भयसंभूति, ऐशानी, विजया, जया, बंधिनी, मोचनी, बाराही, कुटिलावृत्ति, चित्तोद्भवकरी, शांति, कौवेरी, वशकारिणी, योगेश्वरी, बलोत्साही, चंडा, प्रीतिप्रवर्षिणी, इत्यादि अनेक महा विद्या रावण को थोड़े ही दिननिमें सिद्ध भई। तथा कुम्भकरणको पांच विद्या सिद्ध भईं। उनके नाम सर्वहारिणी, अतिसंवर्धिनी, जंभिनी, व्योमगामिनी, निद्रानी तथा विभीषणको चार विद्या सिद्ध भई—सिद्धार्था, शत्रुदमनी, व्याघाता, आकाशगामिनी यह तीनों ही भाई विद्याके ईश्वर होते भए, अर देवनिके उपद्रवतैं मानों नवे जन्ममें आए। तब यक्षोंका पति अनावृत जंबूद्वीपका स्वामी इनको विद्यायुक्त देखकर बहुत स्तुति करी अर दिव्य आभूषण पहराए। रावणने विद्याके प्रभावकरि स्वयंप्रभ नगर बसाया। वह नगर पर्वतके शिखर समान ऊंचे महलोंकी पंक्तिसे शोभायमान है, अर रत्नमई चैत्यालयोंसे अति प्रभावको धरैं हैं। जहां मोतीनिकी झालरीकरि ऊंचे झरोखे शोभैं हैं, पद्मराग मणियोंके स्तंभ हैं। नानाप्रकारके रत्ननिके रंगके समूहकरि जहां इन्द्रधनुष होय रहा है। रावण भाईनि सहित ता नगरमें

विराजे । कैसे हैं राजमहल ? आकाशमें लग रहे हैं शिखर जाके, विद्याबलकरि पंडित रावण सुखसूं तिष्ठे।

जम्बूद्वीपका अधिपति अनावृत देव रावणसों कहता भया–"हे महामते ! तेरे धैर्यकरि मैं बहुत प्रसन्न भया, अर मैं सर्व जम्बूद्वीपका अधिपति हूं, तू यथेष्ट वैरियोंको जीतता संता सर्वत्र विहार कर । हे पुत्र ! मैं बहुत प्रसन्न भया, अर स्मरणमात्रतैं तेरे निकट आऊंगा । तब तुझे कोई भी न जीत सकेगा । अर बहुत काल भाइयोंसहित सुखसों राज कर, तेरे विभूति बहुत होहु" या भांति आशीर्वाद देय बारम्बार याकी स्तुतिकर यक्ष परिवारसहित अपने स्थानको गया । समस्त राक्षसवंशी विद्याधरों ने सुनी जो रत्नश्रवाका पुत्र रावण महाविद्यासंयुक्त भया सो सबको आनन्द भया । सर्व ही राक्षस बड़े उत्साह सहित रावणके पास आए । कईएक राक्षस नृत्य करैं हैं, कईएक गान करैं हैं, कईएक शत्रुपक्षको भयकारी गाजैं हैं, कईएक ऐसे आनन्दकरि भर गए हैं कि आनन्द अंगमें न समावै है । कईएक हंसैं हैं, कईएक केलि कर रहे हैं, सुमाली रावणका दादा अर छोटा भाई माल्यवान तथा सूर्यरज रक्षरज राजा वानरवंशी सब ही सुजन आनन्दसहित रावणपै चाले । अनेक वाहनोंपर चढ़े, हर्षसों आवै हैं । रत्नश्रवा रावणके पिता पुत्रके स्नेहकरि भर गया है मन जाका, ध्वजाओंसे आकाश को शोभित करता संता परम विभूतिसहित महामन्दिरसमान रत्ननिके रथपर चढि आया । बंदीजन विरद बखानैं हैं । सर्व इकट्ठे होयकर पंचसंगम नामा पर्वतपर आए । रावण सन्मुख गया । दादा पिता अर सूर्यरज रक्षरज बड़े हैं, सो इनको प्रणामकर पांयन लाग्या, अर भाईनिको बगलगीरिकर मिला, अर सेवक लोगोंको स्नेहकी नजरसे देख्या अर अपने दादा पिता अर सूर्यरज रक्षरजसों बहुत विनयकर कुशलक्षेम पूछी । अर बहुरि उन्होंने रावणसे पूछी । रावणको देख गुरुजन ऐसे खुशी भये जो कहनेमें न आवै । बारम्बार रावणको सुखवार्ता पूछैं, अर स्वयंप्रभ नगरको देखिकरि आश्चर्यको प्राप्त भए । देवलोक समान यह नगर ताकूं देखकर राक्षसवंशी अर वानरवंशी सब ही अति प्रसन्न भए, अर पिता रत्नश्रवा अर माता केकसी, पुत्रके गातको स्पर्शते संते अर इसको बारंबार प्रणाम करता हुता देख

कर बहुत आनन्दको प्राप्त भए। दुपहरके समय रावणने बड़ोंको स्नान करावनेका उद्यम किया। तदि सुमाली आदि रत्नोंके सिंहासनपर स्नानके अर्थ विराजे। सिंहासनपर इनके चरण पल्लवसारिखे कोमल अर लाल कैसे शोभते भए जैसे उदयाचल पर्वतपर सूर्य शोभै। बहुरि स्वर्णरत्नोंके कलशादि से स्नान कराया। कलश कमलके पत्रनिकरि आच्छादित हैं मुख जिनके, अर मोतियोंकी मालाकरि शोभै हैं, अर महा कांतिको धरैं हैं, अर सुगंधजलकरि भरे हैं, जिनकी सुगंधिकरि दशों दिशा सुगंधमयी होय रही हैं, अर जिनपर भ्रमर गुंजार कर रहे हैं। स्नान करावते जब कलशोंका जल डारिए है तदि मेघ सारिखे गाजैं हैं। पहले सुगंध द्रव्यनिका उबटना लगाया पीछे स्नान कराया। स्नानके समय अनेक प्रकारके वादित्र बाजे। स्नान कराकर दिव्य वस्त्राभूषण पहराए, अर कुलवतिनी राणियों ने अनेक मंगलाचरण किए। रावणादि तीनों भाई देवकुमार सारिखे गुरुनिका अति विनयकर चरणों की वंदना करते भए। तदि बड़ोंने बहुत आशीर्वाद दिये—'हे पुत्रो! तुम बहुत काल जीवो और महासंपदा भोगो, तुम्हारीसी विद्या औरमें नाहीं"। सुमाली, माल्यवान, सूर्यरज, रक्षरज अर रत्नश्रवा इन्होंने स्नेहकरि रावण, कुंभकरण, विभीषणको उरसे लगाया। बहुरि समस्त भाई अर समस्त सेवकलोग भलीविधिसों भोजन करते भए। रावणने बड़ेनिकी बहुत सेवा करी अर सेवक लोगोंका बहुत सन्मान किया। सबनिको वस्त्राभूषण दिये। सुमाली आदि सर्व ही गुरुजन फूलगए हैं नेत्र जिनके, रावणसे अति प्रसन्न होय कहते भए। हे पुत्रो! तुम बहुत सुखसे रहो। तब नमस्कार कर कहते भये—हे प्रभो! हम आपके प्रसादकरि सदा कुशलरूप हैं। बहुरि मालीकी बात चाली, सो सुमाली शोकके भारकरि मूर्छा खाय गिरा, तदि रावणने शीतोपचारकरि सचेत किया, अर समस्त शत्रुओंके समूहके घातरूप सामंतता के वचन कहकर दादाको बहुत आनन्दरूप किया। सुमाली कमलनेत्र रावणको देखकरि अति आनन्दरूप भए। सुमाली रावणको कहते भए—अहो पुत्र! तेरा उदार पराक्रम जाहि देख देवता प्रसन्न होय। अहो कांति तेरी सूर्यको जीतनहारी, गंभीरता तेरी समुद्रसे अधिक है, पराक्रम तेरा सर्व सामंतनिकूं

उलंघै, अहो वत्स ! हमारे राक्षस कुलका तू तिलक प्रकट भया है। जैसैं जम्बूद्वीपका आभूषण सुमेरु है, अर आकाशके आभूषण चांद सूर्य हैं ! तैसे हे पुत्र रावण ! अब हमारे कुलका तू मंडन है। महा आश्चर्यको करणहारी चेष्टा तेरी सकल मित्रोंको आनन्द उपजावै है। जब तू प्रकट भया तब हमको क्या चिंता है। आगे अपने वंशमें राजा मेघवाहन आदि बड़े २ राजा भए, वे लंकापुरीका राज करके पुत्रोंको राज देय मुनि होय मोक्ष गए, अब हमारे पुण्यकरि तू भया। सर्व राक्षसोंके कष्टका हरणहारा, शत्रुवर्गका जीतनहारा तू महा साहसी, हम एक मुखतैं तेरी प्रशंसा कहांलौं करैं। तेरे गुण देव भी न कहि सकैं। ये राक्षसवंशी विद्याधर जीवनकी आशा छोड़ बैठे हुते, सो अब सबकी आशा बंधी। तू महाधीर प्रकट भया है। एक दिन हम कैलाश पर्वत गए हुते, तहां अवधिज्ञानीमुनिको हमने पूछी कि–'हे प्रभो ! लंकामें हमारा प्रवेश होयगा कि नाहीं ?' तब मुनिने कही कि–'तुम्हारे पुत्रका पुत्र होयगा। ताके प्रभावकरि तुम्हारा लंकामें प्रवेश होयगा। वह पुरुषोंमें उत्तम होयगा। तुम्हारा पुत्र रत्नश्रवा राजा व्योमबिंदुकी पुत्री केकसीको परणैगा। ताकी कुक्षिमें वह पुरुषोत्तम प्रकट होयगा। सो भरतक्षेत्रके तीन खंडका भोक्ता होगा। महा बलवान, विनयवान, जाकी कीर्ति दशोंदिशामें विस्तरैगी। वह बैरियोंसे अपना बास छुडावैगा, अर बैरियोंके बास दाबैगा। सो यामें आश्चर्य नाहीं। सो तू महा उत्सवरूप कुलका मंडन प्रकट्या है। तेरासा रूप जगतमें और काहूका नाहीं, तू अपने अनुपमरूपकरि सबके नेत्र अर मनको हरै है। इत्यादिक शुभ वचनोंसे सुमालीने रावणकी स्तुति करी। तब रावण हाथ जोड नमस्कारकर सुमाली सौं कहता भया कि हे प्रभो ! तुम्हारे प्रसादकरि ऐसा ही होहु। ऐसा कहिकर णमोकार मंत्र जप पंचपरमेष्ठीनिको नमस्कार किया, सिद्धोंका स्मरण किया जिससे सर्व सिद्ध होय।

आगै गौतम स्वामी राजा श्रेणिकसों कहै हैं–हे श्रेणिक ! उस बालकके प्रभावसे बंधुवर्ग, सर्व राक्षसवंशी अर बानरवंशी अपने अपने स्थानक आय बसे। बैरियोंका भय न किया। या भांति पूर्व

भवके पुण्यसे पुरुष लक्ष्मीको प्राप्त होय है। अपनी कीर्तिसे व्याप्त करी हैं दशों दिशा जिसने, इस पृथ्वीमें बड़ी उमरका बूढ़ा होना तेजस्विताका कारण नाहीं है जैसैं अग्निका कण छोटा ही बड़े वन को भस्म करै है, अर सिंहका बालक छोटा ही माते हाथियोंके कुंभस्थल विदारै है, अर चन्द्रमा उगता ही कुमुदोंको प्रफुल्लित करै है अर जगतका संताप दूर करै है, अर सूर्य ऊगता ही कालीघटा-समान अंधकारको दूर करै है।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रन्थ, ताकी भाषा वचनिकाविषै रावणका जन्म और विद्यासाधन कहनेवाला सातवां पर्व पूर्ण भया ॥ ६ ॥

अथानन्तर दक्षिण श्रेणीमें असुरसंगीत नामा नगर, तहां राजा मय विद्याधर, बड़े योधा विद्याधरोंमें दैत्य कहावै। जैसैं रावणके बड़े राक्षस कहावैं, इन्द्रके कुलके देव कहावैं। ये सब विद्याधर मनुष्य हैं। राजा मयकी रानी हैमवती, पुत्री मंदोदरी, जिसके सर्व अंगोपांग सुन्दर, विशाल नेत्र, रूप अर लावण्यता रूपी जलकी सरोवरी, ताकों नवयौवनपूर्ण देख पिताको परणावनेकी चिंता भई। तदि अपनी राणी हैमवतीसों पूछ्या—'हे प्रिये! अपनी पुत्री मंदोदरी तरुण अवस्थाको प्राप्त भई, सो हमको बड़ी चिंता है। पुत्रियोंके यौवनके आरम्भसे जो संतापरूप अग्नि उपजै तामें माता पिता कुटुम्बसहित ईंधनके भावको प्राप्त होय हैं। तातैं तुम कहो, यह कन्या किसको परणावैं? गुण कुलमें कांतिमें इसके समान होय ताकों देनी। तब राणी कहती भई—हे देव! हम पुत्रीके जनने अर पालनेमें हैं, परणावना तुम्हारै आश्रय है। जहां तुम्हारा चित्त प्रसन्न होय तहां देहु। जो उत्तम कुल की बालिका हैं ते भरतारके अनुसार चालै हैं। जब राणीने यह कह्या तदि राजानें मंत्रीनितैं पूछ्या। तब किसीने कोई बताया, किसीने इन्द्र बताया कि वह सब विद्याधरोंका पति है ताकी आज्ञा लोपतैं
सर्व विद्याधर डरैं हैं। तब राजा मयने कही मेरी तो रुचि यह है—जो यह कन्या रावणको देनी, क्योंकि उसको थोडे ही दिनमें सर्व विद्या सिद्ध भई हैं, तातैं यह कोई बड़ा पुरुष है, जगतको आश्चर्य का

कारण है। तब राजाके वचन मारीच आदि सब मंत्रियोंने प्रमाण किये। मंत्री राजाके साथ कार्यमें प्रवीण हैं। तब भले ग्रह लग्न देख, क्रूर ग्रह टार, मारीचको साथ लेय राजा मय कन्याके परणावने को कन्या रावणपै ले चाले। रावण भीम नामा वनमें चंद्रहास खडग साधनेको आए हुते, अर चन्द्रहासकी सिद्धिकर सुमेरुपर्वतके चैत्यालयोंकी वंदनाको गए हुते। सो राजा मय हलकारोंके कहनेसें भीम नामा वनमें आए। कैसा है वह वन ? मानों काली घटाका समूह ही है, जहां अति सघन अर ऊंचे वृक्ष हैं। वनके मध्य एक ऊंचा महल देख्या, मानो अपने शिखरनिकरि स्वर्गको स्पर्शे है। रावण ने जो स्वयंप्रभ नामा नया नगर बसाया है ताके समीप ही यह महल है। सो राजा मय विमानतैं उतरि करि महलके समीप डेरा किया, अर वादित्रादि सर्व आडम्बर छोडि कैयक निकटवर्ती लोकनि सहित मन्दोदरीको लेय महलपर चढ़े। सातवें खण गए तहां रावणकी बहिन चन्द्रनखा बैठी हुती। कैसी है चन्द्रनखा ? मानों साक्षात् वनदेवी ही है। या चन्द्रनखाने राजा मयको अर ताकी पुत्री मंदोदरीको देखकर बहुत आदर किया, सो बड़े कुलके बालकनिके यह लक्षण ही हैं। बहुरि विनयसंयुक्त इनके निकट बैठी। तब राजा मय चन्द्रनखाको पूछते भए—'हे पुत्री! तू कौन है ? कौन कारण या वनमैं अकेली बसै है ?' तब चन्द्रनखा बहुत विनयसों बोली—'मेरा बड़ा भाई रावण सो बेलाकरि चंद्रहास खड्गको सिद्धकरि अब मोहि खड्गकी रक्षा सौंपि सुमेरुपर्वतके चैत्यालनिकी वंदनाको गए हैं। मैं भगवान श्रीचंद्रप्रभुके चैत्यालयविषै तिष्ठू हूं। तुम बड़े हितू सम्बन्धी हो, जो तुम रावणसूं मिलवे आये हो तो क्षणइक यहां विराजो।" या भांति इनके बात होय हैं। अर रावण आकाशके मार्ग होय आए हो, सो तेजका समूह नजर आया। तब चन्द्रनखाने कही 'अपने तेजसे सूर्यके तेजको हरता थका यह रावण आया है।" तब राजा मय मेघनिके समूह समान श्याम सुन्दर अर बिजुरी समान चमकते हुये आभूषण पहिरे रावणकूं देखि बहुत आदरतैं उठ खड़े रहे, अर रावणसे मिले, अर सिंहासनपर विराजे। तब राजा मयके मंत्री मारीच तथा वज्रमध्य अर वज्रनेत्र अर नभस्तडित, उग्रनक्र, मरुध्वज,

मेधावी, सारण, शुक्र ये सब ही रावणको देखि बहुत प्रसन्न भए अर राजा मयसों कहते भए। हे देव! आपकी बुद्धि अति प्रवीण है, जो मनुष्यनिमें महा पदार्थ था सो तुम्हारे मनमें बस्या।' या भांति मयसे कहकर ये मयके मंत्री रावणसों कहते भए—'हे रावण! हे महाभाग्य! आपका अद्‌भुतरूप अर महा पराक्रम है, अर आप अति विनयवान अतिशयके धारी अनुपम वस्तु हो। यह राजा मय दैत्योंका अधिपति दक्षिण श्रेणीमें असुरसंगीत नामा नगरका राजा है, पृथ्वीविषै प्रसिद्ध है। हे कुमार! तुम्हारे निर्मल गुणनिविषै अनुरागी हुआ आया है।'

तब रावणने इनका बहुत श्रेष्ठाचार किया अर पाहुणगति करी, अर बहुत मिष्ट वचन कहे। सो यह बड़े पुरुषनिके घरकी रीति ही है कि जो अपने द्वार आवै तिनका आदर करै ही करै। रावण मयके मंत्रीनिसों कहा कि ये दैत्यनाथ बड़े हैं, मोहि अपना जान अनुग्रह किया। तब मयने कहा कि हे कुमार! तुमको यही योग्य है, जे तुम सारिखे साधु पुरुष हैं तिनके सज्जनता ही मुख्य है। बहुरि रावण श्रीजिनेश्वरदेवकी पूजा करनेको जिनमंदिरविषै गए। राजा मयको अर याके मंत्रीनिकूं ले गए। रावणने बहुत भावसे पूजा करी, भगवानके आगैं स्तोत्र पढ़े, बारंबार हाथ जोडि नमस्कार किये, रोमांच होय आए, अष्टांग दंडवतकर जिनमंदिरतैं बाहिर आए। कैसे हैं रावण? अधिक है उदय जिनका, अर महा सुन्दर है चेष्टा जिनकी, चूडामणि करि शोभै है शिर जिनका। चैत्यालयतैं बाहिर आय राजा मय सहित आप सिंहासनपर विराजे। राजासे वैताड परवतके विद्याधरोंकी बात पूछी, अर मंदोदरीकी ओर दृष्टि गई तो देखकर मन मोहित भया। कैसी है मंदोदरी? सौभागरूप रत्ननिकी भूमिका, सुन्दर हैं नख जाके, कमल समान हैं चरण जाके, स्निग्ध है तनु जाका, अर केला के थम्भ समान मनोहर है जंघा जाकी, लावण्यतारूप जलका प्रवाह ही है, महा लज्जाके योगतैं नीची है दृष्टि जाकी, सुवर्णके कुंभसमान हैं स्तन जाके, पुष्पोंसे अधिक है सुगंधता अर सुकुमारता जाकी, अर कोमल हैं दोऊ भुजलता जाकी, अर शंखके कंठ समान है ग्रीवा (गरदन) जाकी, पूर्णिमाके

चंद्रमा समान है मुख जाका, शुकहूतैं अधिक सुन्दर है नासिका जाकी, मानो दोऊ नेत्रनिकी कांति-
रूपी नदीका यह सेतुबंध ही है। मूंगा अर पल्लवसे अधिक लाल हैं अधर (होठ) जाके, अर महाज्योति
 को धरैं अति मनोहर हैं कपोल जाके, अर बीणाका नाद, भ्रमरका गुंजार, अर उन्मत्त कोयलके शब्दसे
 भी अति सुन्दर हैं शब्द जाके, अर कामकी दूती समान सुन्दर है दृष्टि जाकी, नीलकमल अर रक्त-
 कमल अर कुमुद भी जीते ऐसी श्यामता आरक्तता शुक्लताको धरैं, मानों दशोंदिशामें तीन रंगके कम-
लोंके समूह ही विस्तार राखे हैं। अर अष्टमीके चन्द्रमा समान मनोहर है ललाट जाका, अर लंबे बांके
काले सुगंध सघन सचिक्कण हैं केश जाके, कमल समान हैं हाथ अर पांव जाके, अर हंसनीकूं अर
हस्तिनीकूं जीतैं ऐसी है चाल जाकी, अर सिंहहूतैं अति क्षीण है कटि जाकी, मानों साक्षात् लक्ष्मी
ही कमलके निवासको तजकर रावणके निकट ईर्षाको धरती हुई आई है। क्योंकि मेरे होते संते रावण
के शरीरको विद्या क्यों स्पर्शै? ऐसे अद्भुत रूपको धरणहारी मंदोदरी रावणके मन अर नयननिकूं
हरती भई। सकल रूपवती स्त्रीनिके रूप लावण्य एकत्रकरि इसका शरीर शुभ कर्मनिके उदयकरि
बना है। अंग अंगमें अद्भुत आभूषण पहरे, महा मनोज्ञ मंदोदरीको अवलोकनकर रावणका हृदय
काम बाणकरि बींध्या गया। महा मधुरताकरि युक्त जो वह, ताविषैं रावणकी दृष्टि गयी संती नीठ
नीठ पाछी आई। परन्तु मत्त मधुकर की नांई घूमने लग गई। रावण चित्तमें चितवै है कि यह उत्तम
नारी कौन है? श्री ह्री धृति कीर्ति बुद्धि लक्ष्मी सरस्वती इनमेंसों यह कौन है? परणी है वा कुमारी?
समस्त श्रेष्ठ स्त्रियोंकी यह शिरोभाग्य है। यह मन इन्द्रियनिकों हरणहारी जो मैं परणूं तो मेरा
नवयोवन सफल है, नाहीं तो तृणवत् वृथा है। ऐसा चिंतवन रावणने किया तदि राजा मय, मंदोदरी
के पिता बड़े प्रवीण, याका अभिप्राय जानि मन्दोदरीको निकट बुलाय रावणसों कही—"याके तुम ही
पति हो।" यह वचन सुन रावण अति प्रसन्न भया, मानों अमृतकरि सींच्या है गात जाका, हर्षके
अंकुर समान रोमांच होय आए। सर्व वस्तुनिकी इनके सामग्री हुती ही, ताही दिन मन्दोदरीका

विवाह भया। रावण मन्दोदरीको परणकरि अति प्रसन्न होय स्वयंप्रभ नगरमें गए। राजा मय भी पुत्रीको परणाय निश्चित भए। पुत्रीके विछोहतैं शोक सहित अपने देशको गए। रावणने हजारों राणी परणीं, उन सबकी शिरोमणी मन्दोदरी होती भई। मन्दोदरी भरतारके गुणोंमें हरा गया है मन जाका, पतिकी अति आज्ञाकारिणी होती भई। रावण तासहित जैसैं इन्द्र इन्द्राणी सहित रमैं तैसैं सुमेरुके नंदन वनादि रमणीक स्थाननिमैं रमते भये। कैसी है मन्दोदरी ? सर्व चेष्टा मनोज्ञ हैं जाकी। अनेक विद्या जो रावणने सिद्ध करी हैं तिनकी अनेक चेष्टा रावण दिखावते भए। एक रावण अनेक रूप धर अनेक स्त्रियोंके महलोंमें कोतूहल करैं। कभी सूर्यकी नांईं तपैं, कभी चन्द्रमाकी नांईं चांदनी विस्तरैं, अमृत बरसैं, कभी अग्निकी नांईं ज्वाला विसतारैं, कभी मेघकी नांईं जलधारा सूवैं, कभी पवनकी नाईं पहाड़ोंको चलावैं, कभी इन्द्रकीसी लीला करैं, कभी वह समुद्रकीसी तरंग धरैं, कभी वह पर्वत समान अचल दशा ग्रहैं। कभी माते हाथी समान चेष्टा करैं, कभी पवनतैं अधिक वेगवाला अश्व बन जाय। क्षणमें नजीक, क्षणमें अदृश्य, क्षणमें सूक्ष्म, क्षणमें स्थूल, क्षणमें भयानक, क्षणमें मनोहर या भांति रमता भया।

एक दिवस रावण मेघवर पर्वतपर गया तहां एक वापिका देखी। निर्मल है जल जाका, अनेक जातिके कमलनिसे रमणीक है, अर क्रौंच, हंस, चकवा, सारस इत्यादि अनेक पक्षीनिके शब्द होय रहे हैं। अर मनोहर हैं तट जाके, सुन्दर सिवाणोंकरि शोभित है। जिसके समीप अर्जुन आदि जातिके बड़े बड़े वृक्षोंकी छाया होय रही है। जहां चंचल मीनकी कलोल करि जलके छींटे उछल रहे हैं। तहां रावण अति सुन्दर छैं हजार राजकन्या क्रीडा करती देखी। कईएक तो जलकेलिमें छींटे उछाले हैं, कईएक कमलनिके वनमें घुसी हुई कमलवदनी कमलनिकी शोभाको जीतै हैं। भ्रमर कमलोंकी शोभाको छोडकर इनके मुखपर गुंजार करै हैं। कईएक मृदंग बजावैं हैं, कईएक बीण बजावैं हैं। ये समस्त कन्या रावणको देखकरि जलक्रीडाको तज खडी होय रहीं। रावण भी उनके बीच जाय जलक्रीडा करने लगे। तब

वे भी जलक्रीडा करने लगगईं। वे सर्व रावणका रूप देख कामवाणकरि बींधी गई। सबकी दृष्टि यासौं ऐसी लगी जो अन्यत्र न जाय। याके अर उनके रागभाव भया। प्रथममिलापकी लज्जा अर मदनका प्रकट होना सो तिनका मन हिंडोलेमें झूलता भया। तिन कन्याओंमें जो मुख्य हैं उनका नाम सुनो। राजा सुरसुन्दर राणी सर्वश्रीकी पुत्री पद्मावती, नीलकमल सारिखे हैं नेत्र जाके। बहुरि राजा बुध राणी मनोवेगा, ताकी कन्या अशोकलता, मानो साक्षात् अशोककी लता ही है। अर राजा कनक राणी संध्याकी पुत्री विद्युत्प्रभा, जो अपनी प्रभाकर बिजुलीको प्रभाको लज्जावंत करै है, सुन्दर है दर्शन जाका, बड़े कुलनिकी बेटी, सब ही अनेक कलाकरि प्रवीण, उनमें ये मुख्य हैं। मानो तीन लोककी सुन्दरता ही मूर्त्ति धरकर विभूति सहित आई हैं। सो रावणने छैः हजार कन्या गंधर्व विवाह कर परणी। ते भी रावणसहित नानाप्रकारकी क्रीडा करती भई।

तबि इनकी लार जे खोजे वा सहेली हुतीं ते इनके माता पिताओंसैं सकल वृत्तांत जाकर कहती भई। तब उन राजाओंने रावणके मारिवेको क्रूर सामन्त भेजे। ते भ्रकुटी चढाए होठ डसते आए, नानाप्रकारके शस्त्रोंकी वर्षा करते भए। ते सकल अकेले रावणने क्षणमात्रमें जीत लिये। तबि भाग कर कांपते हुये राजा सुरसुन्दरपै गए। जायकर हथियार डार दिये अर वीनती करते भए—'हे नाथ! हमारी आजीविकाको दूर करो, अथवा घर लूट लेवो, अथवा हाथ पांव छेवो तथा प्राण हरो, हम रत्नश्रवाका पुत्र जो रावण तासूं लडवेको समर्थ नाहीं। ते समस्त छैं हजार राजकन्या उसने परणीं अर उनके मध्य क्रीडा करै है। इन्द्र सारिखा सुन्दर, चंद्रमा समान कांतिधारी, जाकी क्रूर दृष्टि देव भी न सहार सकें, ताके सामने हम रंककौन? हमने घने ही शूरवीर देखे, रथनूपुरका धनी राजा इन्द्र आदि याकी तुल्य कोऊ नाहीं। यह परम सुन्दर महा शूरवीर है। ऐसे वचन सुन राजा सुरसुन्दर १२७ महा क्रोधायमान होय राजा बुध अर कनक सहित बड़ी सेना लेय निकसे। और भी अनेक राजा इनके संग भए, सो आकाशसे शस्त्रनिकी कांतिसे उद्योत करते आए। इन सब राजाओंको देखकरि ये

समस्त कन्या भयकर व्याकुल भई, अर हाथ जोड रावणसों कहती भई कि हे नाथ ! हमारे कारण तुम अत्यन्त संशयको प्राप्त भए, हम पुण्यहीन हैं, अब आप उठकर कहीं शरण लेवो, क्योंकि ये प्राण दुर्लभ हैं तिनकी रक्षा करो। यह निकट ही श्रीभगवानका मंदिर है तहां छिप रहो, यह क्रूर बैरी तुमको न देख आप ही उठ जावेंगे। ऐसे दीन वचन स्त्रीनिके सुन अर शत्रुनिका कटक निकट आया देख रावणने लाल नेत्र किये अर इनसों कहते भए—'तुम मेरा पराक्रम नाहीं जानो हो, काक अनेक भेले भए तो कहा गरुडको जीतेंगे ? एक सिंहका बालक अनेक मदोन्मत्त हाथियोंके मदकूं दूर करै है। ऐसे रावणके वचन सुन स्त्री हर्षित भई, अर वीनती करी। 'हे प्रभो ! हमारे पिता अर भाई अर कुटुम्बनिकी रक्षा करहु'' तब रावण कहते भये—'हे प्यारी हो ! ऐसें ही होयगा, तुम भय मत करो, धीरता गहो।' यह बात परस्पर होय है। इतनेमें राजाओंके कटक आए, तदि रावण विद्याके रचे विमानमैं बैठ क्रोधकरि उनके सन्मुख भया। ते सकल राजा उनके योधाओंके समूह जैसें पर्वतपर मोटी धारा मेघकी बरसै तैसें बाणोंकी वर्षा करते भए। वह रावण विद्याओंके सागर, ताने शिलानिपरि सर्व शस्त्र निवारे, अर कईएकनिको शिलानकरि ही भयको प्राप्त किए। बहुरि मनमें विचारा कि इन रंकोंके मारवेकरि कहा ? इनमें जो मुख्य राजा हैं तिनहीको पकड लेवो। तब इन राजानिको तामस शस्त्रोंसे मूर्छितकर नागपाससे बांधलिया। तब इन छै हजार स्त्रियोंनें विनती कर छुडाये। तदि रावणने तिन राजानिकी बहुत सुश्रुषा करी। तुम हमारे परम हितू संबंधी हो। तब वे रावणका शूरत्वगुण देख, महा विनयवान रूपवान देख बहुत प्रसन्न भए। अपनी अपनी पुत्रीनिका विधिपूर्वक पाणिग्रहण कराया। तीन दिन तक महा उत्सव प्रवरत्या। ते राजा रावणकी आज्ञा लेय अपने अपने स्थानको गए। रावण मंदोदरीके गुणोंकर मोहित है चित्त जाका सो स्वयंप्रभ नगरमें आए। तब याको स्त्रीनसहित आया सुन कुम्भकरण, विभीषण भी सन्मुख गए। रावण बहुत उत्साहसे स्वयंप्रभनगरमें आए अर सुरराजवत् रमते भए।

अथानन्तर कुंभपुरका राजा मंदोदर ताके राणी स्वरूपा, ताको पुत्री तडिन्माला सो, कुंभकर्ण जाका प्रथम नाम भानुकर्ण था, ताने परणी। कैसे हैं कुंभकर्ण ? धर्मविषैं आसक्त है बुद्धि जिनकी, अर महा योधा हैं, अनेक कलागुणमें प्रवीण हैं। हे श्रेणिक ! अन्यमती लोक जो इनकी कीर्ति और भांति कहै हैं कि मांस अर लोहूका भक्षण करते हुते, छै महीनाकी निद्रा लेते सो नाहीं। इनका आहार बहुत पवित्र स्वादरूप सुगंधमय था। प्रथम मुनीनिको आहार देय अर आर्यिकको आहार देय दुखित भुखित जीवनिको आहार देय, कुटुम्ब सहित योग्य आहार करतै हुते मांसादिककी प्रवृत्ति नहीं थी। अर निद्रा इनको अर्धरात्रि पीछे अल्प थी। सदाकाल धर्मविषै लवलीन था चित्त जिनका, चर्मशरीरी। जो लोग बड़े पुरुषनिको झूठा कलंक लगावै हैं ते महा पापका बंध करै हैं। ऐसा करना योग्य नाहीं।

अथानन्तर दक्षिण श्रेणीमें ज्योतिप्रभनामा नगर, तहां राजा विशुद्धकमल राजा मयका बड़ा मित्र, ताके राणी नन्दनमाला, पुत्री राजीवसरसी, सो विभीषणने परणी। अति सुन्दर उस राणी सहित विभीषण अति कौतूहल करते भए। अनेक चेष्टा करते, जिनको रतिकेल करते तृप्ति नहीं। कैसे हैं विभीषण ? देवनि समान परम सुन्दर है आकार जिनका। अर कैसी है राणी ? लक्ष्मीसे भी अधिक सुन्दर है। लक्ष्मी तो पद्म कहिए कमल ताकी निवासिनी है अर यह राणी पद्मरागमणिके महल की निवासिनी है।

अथानन्तर रावणकी राणी मंदोदरी गर्भवती भई, सो याको माता पिताके घर लेगए। तहां इंद्रजीत का जन्म भया। इन्द्रजीतका नाम समस्त पृथ्वीविषै प्रसिद्ध हुआ। अपने नानाके घर वृद्धिको प्राप्त भया, सिंहके बालककी नाईं साहसरूप उन्मत्त क्रीडा करता भया। रावणने पुत्रसहित मंदोदरी अपने निकट बुलाई। सो आज्ञा प्रमाण आई। मंदोदरीके माता पिताको इनके बिछोहका अति दुःख भया।
रावण पुत्रका मुख देखकरि परम आनन्दको प्राप्त भया, सुपुत्र समान और प्रीतिका स्थान नाहीं। फिर मंदोदरीको गर्भ रह्या तदि माता पिताके घर फिर लेगए। तहां मेघनादका जन्म भया। फिर

भरतारके पास आई, भोगके सागरमें मग्न भई। मंदोदरीने अपने गुणोंसे पतिका चित्त वश किया। अब ये दोनों बालक इन्द्रजीत अर मेघनाद सज्जनोंको आनन्दके करणहारे, सुन्दर चारित्रके धारक, तरुण अवस्थाको प्राप्त भए। विस्तीर्ण हैं नेत्र जिनके, सो वृषभ समान पृथ्वीका भार चलावनहारे हैं।

अथानन्तर वैश्रवण जिन जिन पुरोंमें राज करै, उन हजारों पुरोंमें कुंभकरण धावे करते भये। जहां इन्द्रका, वैश्रवणका माल होय सो छीनकर अपने स्वयंप्रभ नगरीमें ले आवैं। या बातसों वैश्रवण, इन्द्रके जोरकरि अति गर्वित है, सो वैश्रवणका दूत द्वारपालसों मिल सभामें आया अर सुमालीसों कहता भया। हे महाराज! वैश्रवण नरेंद्रने जो कह्या है सो तुम चित्त देय सुनो। वैश्रवणने यह कहा है कि–तुम पंडित हो, कुलीन हो, लोकरीतिके ज्ञायक हो, बड़े हो, अकार्यतैं भयभीत हो, औरोंको भले मार्गके उपदेशक हो, ऐसे जो तुम सो तुम्हारे आगें ये बालक चपलता करैं तो क्या तुम अपने पोतानिको मनैं न करो? तिर्यंच अर मनुष्यमें यही भेद है कि मनुष्य तो योग्य अयोग्यको जाने है अर तिर्यंच न जानैं है। यही विवेककी रीति है। करने योग्य कार्य करिए, न करने योग्य कार्य न करिए। जो दृढ चित्त हैं वे पूर्व वृत्तांतको नाहीं भूले हैं। अर बिजुलीसमान क्षणभंगुर विभूतिके होते संते भी गर्वको नाहीं धरैं हैं। आगैं क्या राजा मालीके मरनेकरि तुम्हारे कुलकी कुशल भई है? अब यह क्या स्यानपन है जो कुलके मूलनाशका उपाय करते हो। ऐसा जगतमें कोऊ नाहीं जो अपने कुलके मूलनाशको आदरै। तुम कहा इन्द्रका प्रताप भूल गए जो ऐसे अनुचित काम करो हो। कैसे हैं इन्द्र? विध्वंस किये हैं समस्त वैरी जानैं, समुद्र समान अथाह हैं। सो तुम मींडकके समान सर्पके मुखमें क्रीडा करो हो? कैसा है सर्पका मुख? दाढरूपी कंटकनिकरि भरचा हैं, अर विषरूपी अग्निके कण जामैंतैं निकसै हैं। ये तुम्हारे पोते चोर हैं। अपने पोते पडोतोंको जो तुम शिक्षा देनेको समर्थ नाहीं हो तो मुझै सौंपो, मैं इनको तुरन्त सीधे करूं। अर ऐसा न करोगे तो समस्त पुत्र पौत्रादि कुटुम्बसहित

बेडियोंसे बंधे मलिन स्थानमें रुके देखोगे, तामैं अनेक भांतिकी पीडा इनको होगी। पाताल लंकतैं नीठि २ (मुश्किलसे) बाहिर निकसे हो। अब फिर तहां ही प्रवेश किया चाहो हो? या प्रकार दूतके कठोर वचनरूपी पवनकरि स्पर्श्या है मनरूपीजल जिसका, ऐसा रावणरूपी समुद्र अति क्षोभको प्राप्त भया। क्रोधकरि शरीरमें पसेव आयगया अर आंखोंकी आरक्ततासों समस्त आकाश लाल होय गया। अर क्रोधरूपी स्वरके उच्चारणतैं सर्व दिशा बधिर करते हुवे अर हाथियोंका मद निवारते हुवे गाज कर ऐसा बोल्या "कौन है वैश्रवण अर कौन है इन्द्र? जो हमारे गोत्रकी परिपाटी करि चली आई जो लंका, ताको दाब रहे हैं। जैसैं काग अपने मनमें सियाना होय रहै अर स्याल आपको अष्टापद मानैं, तैसैं वह रंक आपको इन्द्र मान रह्या है। सो वे निर्लज्ज हैं, अधम पुरुष हैं, अपने सेवकनिपैं इंद्र कहाया तो क्या इन्द्र होयगया? हे कुदूत! हमारे निकट तू ऐसे कठोर वचन कहता हुआ कुछ भय नाहीं करता?" ऐसा कहकर म्यानतैं खड्ग काढ्या सो आकाश खड्गके तेज करि ऐसा व्याप्त होगया जैसैं नीलकमलोंके वनकरि महा सरोवर व्याप्त होय।

तब विभीषणने बहुत विनयकरि रावणसों विनती करी अर दूतको मारने न दिया, अर यह कहा "हे महाराज! यह पराया चाकर है, इसका अपराध क्या? जो वह कहावै सो यह कहै। यामैं पुरुषार्थ नाहीं। अपनी देह आजीविकानिमित्त पालने को बेची है। यह सूआ समान है, ज्यों दूसरा बुलावै त्यों बोलै। यह दूत लोग हैं। इनके हिरदेमें इनका स्वामी पिशाचरूप प्रवेश कर रह्या है, उसके अनुसार वचन प्रवर्तै है। जैसें वाजित्री जा भांति वादित्रको वजावै ताही भांति बाजे, तैसैं इनका देह पराधीन है स्वतंत्र नाहीं। तातैं हे कृपानिधे! प्रसन्न होवो अर दुखी जीवों पर दया ही करो। हे निष्कपट महाधीर! रंकनिके मारवेतैं लोकमैं बड़ी अपकीर्ति होय है। यह खड्ग तुम्हारा शत्रु लोगोंके शिरपर पड़ैगा, दीननिके बधकरनेयोग्य नाहीं। जैसैं गरुड गेडुओंको न मारै तैसैं आप अनाथनिको न मारो।" या भांति विभीषणने उत्तम वचन रूपी जलकरि रावणकी क्रोधाग्नि बुझाई। कैसे है विभीषण?

महा सत्पुरुष हैं, न्यायके वेत्ता हैं। रावणके पायनि पड़ि दूतको बचाया अर सभाके लोकोंने दूतको बाहिर निकाला। धिक्कार है सेवकका जन्म जो पराधीन दुःख सहै है।

दूतने जायकरि सर्व समाचार वैश्रवणको कहे। रावण–मुखकी अत्यन्त कठोरवाणीरूप ईंधनसों वैश्रवणके क्रोध रूपी अग्नि उठी सो चित्तविषै न समावै, वह मानों सर्व सेवकोंके चित्तको बांट दीनी। भावार्थ–सर्व क्रोधरूप भए। रण संग्रामके बाजे बजाए, वैश्रवण सर्व सेना लेय युद्धके अर्थि बाहिर निकसे, या वैश्रवणके वंशके विद्याधर यक्ष कहावैं, सो समस्त यक्षोंको साथ लेय राक्षसनिपर चाले। अति झलझलाट करते खड्ग सेल चक्र बाणादि अनेक आयुधोंको धरै हैं। अंजनगिरि समान माते हाथीनिके मद झरे हैं, मानो नीझरने ही हैं। तथा बड़े रथ अनेक रत्नोंकरि जड़े संध्याके बादलके रंग समान मनोहर, महा तेजवंत, अपने वेगकरि पवनको जीतै हैं, तैसे ही तुरंग अर पयादनिके समूह समुद्र समान गाजते, युद्धके अर्थि चाले। देवोंके विमान समान सुन्दर विमानों पर चढ़े विद्याधर राजा वैश्रवण के लार चले। अर रावण इनके पहिले ही कुंभकरणादि भाईनि सहित बाहर निकसे। युद्धकी अभिलाषा रखती हुई दोनों सेनाओंका संग्राम गुंज नामा पर्वतके ऊपर भया। शस्त्रोंके संपातसे अग्नि दिखाई देने लगी। खड्गोंके घातसे, घोड़ोंके हींसनेसे, पयादोंके नादसे, हाथियोंके गरजनेसे, रथोंके परस्पर शब्दसे, वादित्रोंके बाजनेसे तथा बाणोंके उग्र शब्दसे इत्यादि अनेक भयानक शब्दोंसे रणभूमि गाज रही हैं। धरती आकाश शब्दायमान होय रहे हैं, वीर रसका राग होय है, योधाओंके मद चढ रह्या है, यमके वदन समान चक्र तीक्ष्ण है धारा जिनकी, अर यमराजकी जीभ समान खड्ग रुधिर धारा वर्षावनहारी, अर यमके रोम समान सेज, यमकी आंगुली समान शर (बाण), अर यमकी भुजा समान परिघ (कुल्हाड़ा), अर यमकी मुष्टि समान मुद्गर इत्यादि अनेक शस्त्रकरि परस्पर महायुद्ध प्रवरत्या। कायरोंको त्रास अर योधाओंको हर्ष उपज्या। सामंत सिरके बदले यशरूप धनको लेवै हैं। अनेक राक्षस अर कपि जातिके विद्याधर, अर यक्ष जातिके विद्याधर परस्पर युद्ध कर परलोकको

प्राप्त भए। कछुइक यक्षोंके आगे राक्षस पीछे हटे। तदि रावण अपनी सेनाको दबी देख आप रण-संग्रामको उद्यमी भए। कैसे है रावण? महामनोज्ञ सफेद छत्र सिरपर फिरै हैं जाके। कालमेघसमान चंद्रमंडलकी कांतिका जीतनहारा रावण धनुष बाण धारे, इन्द्रधनुषसमान अनेक रंगका बकतर पहिरे, शिरपर मुकुट धरे, नानाप्रकारके रत्नोंके आभूषण संयुक्त, अपनी दीप्ति करि आकाशमें उद्योत करता आया। रावणको देखकर यक्ष जातिके विद्याधर क्षणमात्र विलखे, तेज दूर हो गया, रणकी अभिलाषा छोड़ पराङ्मुख भए, त्रासकरि आकुलित भया है चित्त जिनका, भ्रमरकी नाईं भ्रमते भए। तब यक्षों के अधिपति बड़े बड़े योधा इकट्ठे होयकरि रावणके सम्मुख आए। रावण सबके छेदनेको प्रवरत्या, जैसें सिंह उछलकर माते हाथियोंके कुंभस्थल विदारै तैसें रावण कोपरूपी वचनके प्रेरे अग्नि स्वरूप होयकर शत्रुसेनारूपी वनको दाह उपजावते भए। सो पुरुष नाहीं, सो रथ नाहीं, सो अश्व नाहीं, सो विमान नाहीं, जो रावणके बाणोंसे न बींध्या गया। तब रावणको रणमें देख वैश्रवण भाईपनेका स्नेह जनावता भया, अर अपने मनमें पछताया। जैसें बाहुबलि भरतसों लड़ाई करि पछताए हुते तैसें वैश्रवण रावणसों विरोध कर पछताया। हाय! मैं मूर्ख ऐश्वर्यसे गर्वित होयकर भाईके विध्वंस करने में प्रवरत्या। यह विचार करि वैश्रवण रावणसों कहता भया—'हे दशानन! यह राजलक्ष्मी क्षणभंगुर है, याके निमित्त तू कहा पाप करै। मैं तेरी बड़ी मौसीका पुत्र हूं, तातैं भाइयोंसे अयोग्य व्यवहार करना योग्य नाहीं। अर यह जीव प्राणियोंकी हिंसा करके महा भयानक नरकको प्राप्त होय है। नरक महा दुखसों भरया है। कैसे हैं जगतके जीव? विषयोंकी अभिलाषामें फंसे हैं। आंखोंकी पलक मात्र क्षण मात्र जीवना क्या तू न जानै है? भोगोंके कारण पापकर्म काहेको करै है? तब रावणने कह्या—'हे वैश्रवण! यह धर्मश्रवणका समय नाहीं, जो माते हाथियोंपर चढै अर खड्ग हाथमें धरै सो शत्रुवोंको मारे तथा आप मरै। बहुत कहनेसे क्या? तू तलवारके मार्गविषै तिष्ठ अथवा मेरे पांव-परि पड। यदि तू धनपाल है तो हमारा भंडारी हो, अपना कर्म करते पुरुष लज्जा न करै। तब

वैश्रवण बोले—'हे रावण ! तेरी आयु अल्प है, तातैं ऐसे क्रूर वचन कहे है । शक्ति प्रमाण हमारे ऊपर शस्त्रका प्रहार कर । तब रावण कही—तुम बड़े हो, प्रथम बार तुम करो । तदि रावण ऊपर वैश्रवण बाण चलाये, जैसे पहाडके ऊपर सूर्य किरण डारे । सो वैश्रवणके बाण रावणने अपने बाणनिकरि काट डारे अर अपने बाणनिकरि शर मण्डप करि डारे । बहुरि वैश्रवण अर्धचन्द्र बाणकरि रावणका धनुष छेद्या अर रथतैं रहित किया । तदि रावणने मेघनादनामा रथपर चढकर वैश्रवणसूं युद्ध किया, उल्कापात समान वज्रदंडोंसे वैश्रवणका बकतर चूर डारचा । अर वैश्रवणके सुकोमल हृदयविषै भिण्डि-माल मारी, सो मूर्छा प्राप्त भया । तब ताकी सेनाविषै अत्यन्त शोक भया, अर राक्षसोंके कटकविषै बहुत हर्ष भया । अर वैश्रवणके लोक वैश्रवणकूं खेततैं उठायकरि यक्षपुर लेगए । अर रावण शत्रुवोंको जीतकर रणसे निवृत्ते । सुभटनिके शत्रुनिके जीतवेहीका प्रयोजन है, धनादिकका प्रयोजन नाहीं ।

अथानन्तर वैश्रवणका वैद्योंने यतन किया सो अच्छा हुवा । तब अपने चित्तमें विचारे है:—जैसे पुष्प रहित वृक्ष तथा सींग टूटा बैल, कमल विना सरोवर न सोहै, तैसैं मैं शूरवीरता बिना न सोहूं । जे सामत हैं अर क्षत्रीवृत्तिका विरद धारैं हैं तिनका जीतव्य सुभटताही करि शोभै है । अर तिनकूं संसारविषै पराक्रमहीतैं सुख है । सो मेरे अब नाहीं रहा । तातैं अब संसारका त्यागकर मुक्तिका यत्न करूं । यह संसार असार है, क्षणभंगुर है, याहीतैं सत्पुरुष विषय सुखको नाहीं चाहैं । अंतराय सहित है, अर अल्प है, दुखी है । ये प्राणी पूर्वभवविषै जो अपराध करैं हैं ताका फल इस भवविषै पराभव होय है । सुख दुःखका मूलकारण कर्म ही है, अर प्राणी निमित्तमात्र है । तातैं ज्ञानी तिनसे कोप न करैं । कैसा है ज्ञानी ? संसारके स्वरूपको भली भांति जानै है । यह केकसीका पुत्र रावण मेरे कल्याण का निमित्त हुवा है जानैं मोकूं गृहवासरूप महा फाँसीसे छुडाया । अर कुम्भकरण मेरा परम बांधव, जानै यह संग्रामका कारण मेरे ज्ञानका निमित्त बनाया । ऐसा विचार कर वैश्रवणने दिगम्बरी दीक्षा आदरी । परम तपकूं आराधकर परमधाम पधारे, संसार भ्रमणसे रहित भए ।

अथानन्तर रावण अपने कुलका अपमानरूप मैल धोकर सुख अवस्थाको प्राप्त भया। समस्त भाइयोंने उसको राक्षसोंका शिखर जाना। वैश्रवणकी असवारीका पुष्पकनामा विमान महा मनोग्य है, रत्नोंकी ज्योतिके अंकुर छुट रहे हैं, झरोखे ही हैं नेत्र जाका, निर्मल कांतिके धारणहारे, महा मुक्ताफलकी झालरोंसे मानो अपने स्वामीके वियोगसे अश्रुपात ही डारैं हैं, अर पद्मरागमणियोंकी प्रभासे आरक्तताको धारे है, मानो यह वैश्रवणका हृदय ही रावणके किये घावसे लाल हो रहा है। पर इन्द्रनील मणियोंकी प्रभा कैसे अतिश्याम सुन्दरताको धरै है मानो स्वामीके शोकसे सांवला होय रहा है, चैत्यालय वन वापी सरोवर अनेक मंदिरोंसे मंडित मानो नगरका आकार ही है। रावणके हाथके नाना प्रकारके घावसे मानों घायल हो रहा है। रावणके मंदिरसमान ऊंचा जो वह विमान उसको रावणके सेवक रावणके समीप लाए। वह विमान आकाशका मंडन है। इस विमानको बैरी के भंगका चिह्न जान रावणने आदरा, अर किसीका कुछ भी न लिया। रावणके किसी वस्तुकी कमी नाहीं। विद्यामई अनेक विमान हैं तथापि पुष्पक विमानमें विशेष अनुरागसे चढ़े। रत्नश्रवा तथा केकसी माता अर समस्त प्रधान सेनापति तथा भाई बेटों सहित आप पुष्पक विमानमें आरूढ भया। अर पुरजन नाना प्रकारके वाहनों पर आरूढ भए। पुष्पकके मध्य महा कमलवन है तहां आप मंदोदरी आदि समस्त राजलोकों सहित विराजे। कैसे हैं रावण ? अखंड है गति जिनकी, अपनी इच्छासे आश्चर्यकारी आभूषण पहरे हैं, अर श्रेष्ठ विद्याधरी चमर ढोरे हैं, मलयागिरिके चन्दनादि अनेक सुगन्ध अंगपर लगी है, चन्द्रमाकी कीर्ति समान उज्ज्वल छत्र फिरै हैं, मानों शत्रुओंके भंगसे जो यश विस्तारा है उस यशसे शोभायमान है। धनुष त्रिशूल खड्ग सेल पाश इत्यादि अनेक हथियार जिनके हाथमें ऐसे जो सेवक, तिनकरि संयुक्त हैं। महा भक्तियुक्त हैं, अर अद्भुत कर्मनिके करणहारे, हैं। तथा बड़े बड़े विद्याधर राजा सामन्त शत्रुनिके समूहके क्षय करणहारे, अपने गुणनिकरि स्वामीके मनके मोहनहारे, महा विभवकरि शोभित, तिनकरि दशमुख मंडित है। परम उदार, सूर्यकासा तेज धारता,

पूर्वोपार्जित पुण्यका फल भोगतासंता दक्षिण समुद्रकी तरफ जहां लंका है ता ओर इन्द्रकीसी विभूति-करि युक्त चाल्या। कुम्भकरण भाई हस्तीपर चढ़े, विभीषण रथपर चढ़े, अपने लोगों सहित महा विभूतिकरि मंडित रावणके पीछे चाले। राजा मय मंदोदरीके पिता दैत्य जातिके विद्याधरोंके अधिपति भाइयों सहित अनेक सामंतनिकरि युक्त तथा मारीच अंबर विद्युतवज्र वज्रोदर बुधवज्राक्षक्रूर क्रूरनक्र सारन सुनय शुक इत्यादि मंत्रियों सहित महा विभूतिकर मंडित अनेक विद्याधरोंके राजा रावणके संग चाले। कईएक सिंहोंके रथ चढ़े, कईएक अष्टापदोंके रथपर चढ़कर वन पर्वत समुद्रकी शोभा देखते पृथ्वीपर विहार किया अर समस्त दक्षिण दिशा वश करी।

अथानन्तर एक दिन रावणने अपने दादा सुमालीसे पूछ्या—'हे प्रभो! हे पूज्य! या पर्वतके मस्तक पर सरोवर नाहीं सो कमलनिका वन कैसे फूल रहा है? यह आश्चर्य है, अर कमलोंका वन चंचल होय यह निश्चल है।' या भांति सुमालीसूं पूछ्या। कैसा है रावण? विनयकर नम्रीभूत है शरीर जाका। तब सुमाली 'नमः सिद्धेभ्यः' ये मंत्र पढ़कर कहते भए—हे पुत्र! यह कमलनिके वन नाहीं, या पर्वतके शिखरविषै पद्मरागमणिमयी हरिषेण चक्रवर्तीके कराए चैत्यालय हैं। जिनपर निर्मल ध्वजा फरहरे हैं। अर नाना प्रकारके तोरणोंसे शोभै हैं। कैसे हैं हरिषेण? महा सज्जन पुरुषोत्तम थे जिनके गुण कहनेमें न आवैं। हे पुत्र! तू उतरकर पवित्र मन होकर नमस्कार कर। तब रावण बहुत विनय-करि जिनमंदिरनिकूं नमस्कार किया अर बहुत आश्चर्यको प्राप्त भया अर सुमालीसूं हरिषेण चक्र-वर्तीकी कथा पूछी। हे देव! आपने जिसके गुण वर्णन किए ताकी कथा कहो।' यह विनती करी।
कैसा है रावण? वैश्रवणका जीतनहारा, बड़ेनिविषै है अति विनय जाकी। तब सुमाली कहै है—हे रावण! तैं भली पूछी। पापका नाश करणहारा हरिषेणका चरित्र सो सुन। कंपिल्यानगरविषै राजा सिंहध्वज तिनके राणी वप्रा महा गुणवती सौभाग्यवती। राजाके अनेक राणी थी, परन्तु राणी वप्रा उनमें तिलक थी, ताकै हरिषेण चक्रवर्ती पुत्र भए। चौसठ शुभ लक्षणकरि युक्त, पापकर्मके

नाश करनहारे। सो इनकी माता वप्रा महा धर्मवती सदा अष्टाह्निकाके उत्सवमें रथयात्रा किया करै। सो याकी सौकन राणी महालक्ष्मी सौभाग्यके मदसे कहती भई कि पहिले हमारा ब्रह्मरथ नगरमें भ्रमण हुआ करेगा, पीछे तिहारा निकसेगा। यह बात सुन राणी वप्रा हृदयविषै खेदभिन्न भई, मानों वज्रपातकरि पीडी गई। उसने ऐसी प्रतिज्ञा करी कि हमारे वीतरागका रथ अठाइयोंमें पहिले निकसे तो हमको आहार करना अन्यथा नाहीं। ऐसा कहकर सर्व काज छोड दिया। शोककरि मुरझाय गया है मुखकमल जाका, अर अश्रुपातको बूंद आंखनिसों डालती हुई। माताको देखकर हरिषेण कही—'हे मात! अब तक तुमने स्वप्नमात्रमें भी रुदन न किया, अब यह अमंगलकार्य क्यों करो हो?' तदि माता सर्व वृत्तांत कह्या। सुनकर हरिषेण मनमें सोची कि क्या करूं? एक ओर पिता अर एक ओर माता। मैं संकटमें पड्या, माताकूं अश्रुपात सहित देखवे समर्थ नाहीं। अर एक ओर पिता जिनसूं कछु कहा न जाय। तदि उदास होय घरतैं निकसि वनकूं गए। तहां मिष्ट फलनिका भक्षण करते अर सरोवरनिका निर्मल जल पीवते निर्भय विहार किया। इनका सुन्दर रूप देखकर ता वनके निर्दयी पशु भी शांत हो गये। ऐसे भव्य जीव किसको प्यारे न हों? तहां वनविषैं जब माताका रुदन याद आवै तब इनकूं ऐसी बाधा उपजै जो वनकी रमणीकताका सुख भूल जावै। सो हरिषेण चक्रवर्ती वनविषै वनदेवता समान भ्रमण करते, जिनको मृगी नेत्रनिकरि देखे है। सो वनविषै विहार करते शतमन्यु नामा तापसके आश्रममें गये। कैसा है आश्रम? वनके जीवनिका है आश्रय जहाँ।

अथानन्तर कालकल्प नामा राजा अति प्रबल, जाका बड़ा तेज अर बड़ी फोजसू आनकर चंपा नगरी घेरी। सो तहां राजा जनमेजय। सो जनमेजय अर कालकल्पमें युद्ध भया। आगे जनमेजयने महलमें सुरंग बना राखी हुती सो ता मार्ग होयकर जनमेजयकी माता नागमती अपनी पुत्री मदनावली सहित निकसी, अर शतमन्यु तापसके आश्रममें आई। सो नागमतीकी पुत्री हरिषेण चक्रवर्तिका रूप देखकर कामके बाण करि बींधी गई। कैसे हैं कामके बाण? शरीरमें विकलताके करणहारे हैं।

तब वाकू और भांति देख नागमती कहती भई—हे पुत्री ! तू विनयवान होयकर सुन कि मुनिने पहिले ही कहा हुता कि यह कन्या चक्रवर्तीकी स्त्रीरत्न होयगी। सो यह चक्रवर्ती तेरे वर हैं। यह सुनकर अति आसक्त भई। तब तापसीने हरिषेणको निकास दिया, क्योंकि उसने विचारी कि कदाचित् इनके संसर्ग होय तो इस बातसे हमारी अपकीर्ति होयगी। सो चक्रवर्ती इनके आश्रमसे और ठौर गये, अर तापसीको दीन जान युद्ध न किया। परन्तु चित्तमें वह कन्या बसी रही। सो इनको भोजनविषै अर शयनविषै काहू प्रकार स्थिरता नाहीं। जैसे भ्रामरी विद्याकरि कोऊ भ्रमै तैसे ये पृथ्वीमें भ्रमते भए। ग्राम नगर वन उपवन लताओंके मंडपमें इनको कहीं भी चैन नाहीं। कमलकोंके वन दावानल समान दीखै। अर चन्द्रमाकी किरण वज्रकी सूई समान दीखै। अर केतकी बरछीकी अणी समान दीखै। पुष्पोंकी सुगंध मनको न हरै। चित्तमें ऐसा चितवते भए जो मैं यह स्त्रीरत्न वरूं तो मैं जायकर माताका भी शोक संताप दूर करूं। नदियोंके तटपर अर वनमें, ग्राममें, नगरमें, पर्वतपर भगवानके चैत्यालय कराऊं। यह चितवन करते संते अनेक देश भ्रमते सिन्धुनंदन नगरके समीप आए। कैसे हैं हरिषेण ? महा बलवान अति तेजस्वी हैं। वहां नगरके बाहिर अनेक स्त्री क्रीडाको आई हुतीं। एक अंजनगिरि समान हाथी मद झरता स्त्रियोंके समीप आया। महावतने हेला मारकर स्त्रियोंसे कही 'जो यह हाथी मेरे वश नाहीं, तुम शीघ्र ही भागो। तब वो स्त्रियाँ हरिषेणके शरणे आईं। हरिषेण परमदयालु हैं महायोधा हैं। वह स्त्रियोंको पीछे करके आप हाथीके सन्मुख भए, अर मनमें विचारी जो वहां तो वे तापस दीन थे तातैं उनसे मैंने युद्ध न किया, वे मृग समान थे, परन्तु यहां यह दुष्ट हस्ती मेरे देखते स्त्री बालादिकको हने, अर मैं सहाय न करूं। सो यह क्षत्रीवृत्ति नाहीं। यह हस्ती इन बालादिक दीन जनको पीडा देनेको समर्थ है। जैसे बैल सींगोंसे बंमई को खोदे परन्तु पर्वतके खोदने को समर्थ नाहीं। अर कोई बाणसे केलेके वृक्षको छेदे परन्तु शिलाको न छेद सकै, तैसे ही यह हाथी योधावोंको उड़ायवे समर्थ नाहीं। तदि आप महावतको कठोर बचनकरि कही कि हस्ती को यहांसे

दूर कर। तब महावतने कही तू भी बड़ा ढीठ है, हाथीको मनुष्य जाने है। हाथी आप ही मस्त होय रहा है। तेरी मौत आई है अथवा दुष्ट ग्रह लग्या है, तू यहांसे बेग भाग। तब आप हंसे अर स्त्रियों को तो पीछे कर दिया अर आप ऊपरको उछल हाथीके दांतनिपर पग देय कुम्भस्थलपर चढ़े, अर हाथीसे बहुत क्रीडा करी। कैसे हैं हरिषेण? कमल सारिखे हैं नेत्र जिनके, अर उदार है वक्षस्थल जिनका, अर दिग्गजों के कुम्भस्थल समान हैं कांधे जिनके, अर स्तम्भ समान हैं जांघ जिनकी। तब ये वृत्तांत सुन सब नगरके लोग देखनेको आए। राजा महल ऊपर चढ्या देखै था सो आश्चर्यको प्राप्त भया। अपने परिवारके लोग भेज इनको बुलाया। यह हाथीपर चढ नगरमें आए। नगरके नर–नारी समस्त इनको देख मोहित होय रहे। क्षणमात्रमें हाथीको निर्मद किया। यह अपने रूपसे समस्तका मन हरते नगरविषै आए। राजाकी सौ कन्या परणी। सर्व लोकनिमें हरिषेणकी कथा भई। राजासे अधिकार सम्मान पाय सर्व बातोंसे सुखी हैं तो भी तपसियोंके वन में जो स्त्री देखी थी उस बिना एक रात्रि वर्ष समान बीतै। मनमें चितवते भये जो मुझ बिना वह मृगनयनी उस विषम वनमें मृगी समान परम आकुलताको प्राप्त होयगी। तातैं मैं उसके निकट शीघ्र ही जाऊं। यह विचारते रात्रिविषै निद्रा न आती जो कदाचित् अल्प निद्रा आई तौ भी स्वप्नमें उसहीको देखा। कैसी है वह? कमल सारिखे हैं नेत्र जाके, मानों इनके मनहीमें बस रही है।

अथानन्तर विद्याधर राजा शक्रधनु ताकी पुत्री जयचंद्रा, उसकी सखी बेगवती, वह हरिषेणको रात्रिविषै उठायकर आकाशमें ले चाली। निद्राके क्षय होनेपर आपको आकाशमें जाता देख कोपकर उससे कहते भए–हे पापिनी! हमको कहाँ ले जाय है। यद्यपि यह विद्याबलकर पूर्ण है तौ भी इनको क्रोध-रूप मुष्टि बांधे, होंठ डसते देखकर डरी, अर इनसे कहती भई हे प्रभु! जैसे कोई मनुष्य जा वृक्षकी शाखापर बैठा होय ताहीको काटै तो क्या यह सयानपना है? तैसे मैं तिहारी हितकारिणी, अर तुम मोहि हतो, यह उचित नाहीं। मैं तुमको जाके पास ले जाऊं हूँ जो निरंतर तुम्हारे मिलापकी अभि-

लाषिनी है। तब यह मनमें विचारते भए कि यह मिष्टभाषिणी परपीडाकारिणी नाहीं है। इसकी आकृति मनोहर दीखै है अर आज मेरी दाहिनी आंख भी फडकै है। इसलिये यह हमारी प्रियाकी संगमकारिणी है। फिर इसको पूछा–'हे भद्रे! तू अपने आवनेका कारण कह।' तब वह कहै है कि–सूर्योदय नगरमें राजा शक्रधनु, राणी धारा, अर पुत्री जयचन्द्रा, वह गुण रूपके मद से महा उन्मत्त है। कोई पुरुष उसकी दृष्टिमें न आवै। पिता जहां परणाया चाहे सो यह धारै नाहीं। मैंने जिन जिन राजपुत्रोंके रूप चित्रपटपर लिखे दिखाए उनमें कोऊ भी उसके चित्तमें न रुचै। तदि मैंने तुम्हारे रूपका चित्रपट दिखाया। तब वह मोहित भई, अर मोकू ऐसैं कहती भई कि मेरा इस नरसे संयोग न होय तो मैं मृत्युकूं प्राप्त होऊंगी, अर अधम नरसे संबंध न करूंगी। तब मैंने उसको धीर्य बंधाया, अर मैं ऐसी प्रतिज्ञा करी–जहां तेरी रुचि है मैं उसे न लाऊं तो अग्निमें प्रवेश करूंगी। अति शोकवंत देख मैंने यह प्रतिज्ञा करी। ताके गुणकरि मेरा चित्त हरचा गया है, सो पुण्यके प्रभावसे आप मिले, मेरी प्रतिज्ञा पूर्ण भई। ऐसा कह सूर्योदय नगरमें लेगई। राजा शक्रधनुसे व्योरा कहा। सो राजाने अपनी पुत्रीका इनसे पाणिग्रहण कराया, अर वेगवतीका बहुत यश माना। इनका विवाह देख परिजन अर पुरजन हर्षित भए। कैसे हैं ये वरकन्या? अद्भुतरूपके निधान हैं। इनके विवाहकी वार्ता सुन कन्याके मामाके पुत्र गंगाधर महीधर क्रोधायमान भए। जो या कन्याने हमको तजकर भूमिगोचरी वरचा। यह विचारकर युद्धको उद्यमी भए। तब राजा शक्रधनु हरिषेणसूं कहता भया कि मैं युद्धमें जाऊं हूं, आप नगरमें तिष्ठो। वे दुराचारी विद्याधर युद्ध करनेको आए हैं। तब हरिषेण ससुरसे कहते भए कि जो पराए कार्यको उद्यमी होय सो अपने कार्यको कैसे उद्यम न करें? तातैं हे पूज्य! मोहि आज्ञा करो। मैं युद्ध करूंगा। तब ससुरने अनेक प्रकार निवारण किया, पर यह न रहे। नाना प्रकार हथियारनिकरि पूर्ण ऐसे रथपर चढ जिसमें पवनगामी अश्व जुरे, अर सूर्यवीर्य सारथी हांके, इनके पीछे बड़े २ विद्याधर चाले। कई हाथियोंपर चढ़े, कई अश्वों पर चढे, कई रथोंपर चढे। परस्पर

महा युद्ध भया। कछुइक शक्रधनुकी फौज हटी तब आप हरिषेण युद्ध करनेको उद्यमी भए, सो जिस ओर रथ चलाया उस ओर घोडा हस्ती मनुष्य रथ कोऊ टिकै नाहीं। सब बाणनिकरि बींधे गए। सब कांपते युद्धसे भागे। महा भयभीत होय कहते भए 'गंगाधर महीधरने बुरा किया जो ऐसे पुरुषोत्तमतैं युद्ध किया। यह साक्षात् सूर्य समान है, जैसे सूर्य अपनी किरण पसारै, तैसे यह बाणकी वर्षा करै है।' अपनी फौज हटी देख गंगाधर महीधर भाजे, तब इनके क्षणमात्रमें रत्न भी उत्पन्न भए। दशवां चक्रवर्ती महा प्रतापको धरैं पृथ्वीविषै प्रकट भया। यद्यपि चक्रवर्तीकी विभूति पाई परन्तु अपनी स्त्री रत्न जो मदनावली उसके परणवेकी इच्छासैं द्वादश योजन परिमाण कटक साथ ले राजाओंको निवारते तपस्वियोंके बनके समीप आए। तपस्वी बनफल लेकर आय मिले। पहिले इनका निरादर किया था, ताकरि शंकावान हुते, सो इनको अति विवेकी पुण्याधिकारी देख हर्षित भए। शतमन्युका पुत्र जो जनमेजय अर मदनावलीकी माता नागमती उन्होंने मदनावली चक्रवर्तीको बिधिपूर्वक परणाई। तब आप चक्रवर्तीकी विभूतिसहित कम्पिल्यानगर आए, बत्तीस हजार मुकुटबंध राजाओंने संग आकर माताके चरणारविंदको हाथ जोडकर नमस्कार किया। माता वप्रा ऐसे पुत्रको देखि ऐसी हर्षित भई जो गातमें न समावै। हर्षके अश्रुपात करि व्याप्त भए हैं लोचन जाके। तब चक्रवर्तीने जब अष्टाह्निका आई तो भगवान का रथ सूर्यसे भी महा मनोज्ञ काढा, अष्टाह्निकाकी यात्रा करी। मुनि श्रावकनिकूं परम आनंद भया, बहुत जीव जिनधर्म अंगीकार करते भए। सो यह कथा रावण को सुमाली ने कही। हे पुत्र! ता चक्रवर्तीने भगवानके मंदिर पृथ्वीविषै, सर्वत्र पुर ग्रामादिविषै, पर्वतनिपर तथा नदीनके तटपर अनेक चैत्यालय रत्नस्वर्णमयी कराये। वे महापुरुष बहुतकाल चक्रवर्तीकी संपदा भोगि मुनि होय महा तपकर लोकशिखर सिधारे। यह हरिषेणका, चरित्र रावण सुनकर हर्षित भया। सुमालीकी बारंबार स्तुति करी, अर जिन मंदिरनिका दर्शनकर रावण डेरा आये। डेरा सम्मेदशिखरके समीप भया।

अथानन्तर रावणको दिग्विजयमें उद्यमी देख मानों सूर्य भी भयकरि दृष्टिगोचरसूं रहित भया,

ताकी अरुणता प्रकटी, मानों रावणके अनुराग ही करि जगत हर्षित भया। बहुरि संध्या मिटकर रात्रिका अन्धकार फैल्या, मानो अंधकार प्रकाशके भयसे दशमुखके शरण आया। बहुरि रात्रि व्यतीत भई अर प्रभात भया। अर रावण प्रभातकी क्रियाकर सिंहासन विराजे। अकस्मात् एक ध्वनि सुनी, मानो वर्षाकालका मेघही गरज्या। जाकरि सकल सेना भयभीत हुई। अर कटकके हाथी जिन वृक्षोंसे बंधे थे तिनका भंग करते भये। कनसेरे ऊंचेकर तुरंग हींसते भये। तब रावण बोले-'यह क्या है? यह मरणेको हमारे ऊपर कौन आया? यह वैश्रवण आया अथवा इन्द्रका प्रेरा सोम आया अथवा हमको निश्चल तिष्ठे देख कोई और शत्रु आया।' तब रावणकी आज्ञा पाय प्रहस्त सेनापति उस ओर देखनेको गया सो पर्वतके आकार मदोन्मत्त अनेक लीला करता हाथी देख्या।

तब आय रावणसौं वीनती करी कि हे प्रभो! मेघकी घटा समान हाथी है। इसको इन्द्र भी पकडनेको समर्थ न भया। तब रावण हंसकर बोले-हे प्रहस्त! अपनी प्रशंसा करणी योग्य नाहीं, मैं इस हाथीको क्षणमात्रमें वश करूंगा। यह कहकर पुष्पक विमानमें चढि, जाय हाथी देख्या। भले २ लक्षणनिकरि इन्द्रनीलमणि समान अति सुन्दर है श्याम शरीर जाका, कमल समान आरक्त है तालुवा जाका, अर महामनोहर उज्ज्वल दीर्घगोल हैं नेत्र जाके, दांत सात हाथ ऊंचा, नौ हाथ लांबा, दश हाथ चौड़ा, कछुइक पीत है, सुन्दर है पीठ जाकी, अगला अंग उतंग है, अर लम्बी पूछ है, अर बड़ी सूंड है, अत्यन्त स्निग्ध सुन्दर नख हैं, गोल कठोर सुन्दर कुम्भस्थल हैं, प्रबल चरण हैं, माधुर्यताको लिये महावीर गंभीर है गर्जना जाकी, अर क्षरते हुवे मदकी सुगंधतासे गुंजार करे हैं भ्रमर जापर, दुंदुभी बाजनिकी ध्वनि समान गंभीर है नाद जाका, अर ताडवृक्षके पत्र समान जो कान तिनकूं हलावता, मन अर नेत्रनिकी हरनहारी सुन्दर लीलाको करता, रावण हस्तीकूं देख्या। देखकर बहुत प्रसन्न भया। हर्ष कर रोमांच होय आए। तब पुष्पक नामा विमानसे उतर, गाढी कमर बांधकर उसके आगैं जाय शंख पूरचा। ताके शब्दकरि दशोंदिशा शब्दायमान भईं। तब शंखका शब्द सुन

चित्तमें क्षोभको पाय हाथी गरज्या, अर दशमुखके सम्मुख आया ! बलकर गर्भित तब रावण अपने उत्तरासनका गेंद बनाय शीघ्र ही हाथीकी ओर फेंका। रावण गजकेलिमें प्रवीण है, सो हाथी तो गेंदके सूंघनेको लगा। अर रावण आकाशविषै उछलकर भृंगोंकी ध्वनिसे शोभित गजके कुम्भस्थल पर हस्ततल मारचा, हाथी सूंडसे पकडनेको उद्यम किया। तदि रावण अति शीघ्रता कर दोऊ दांतके बीच होय निकस गए। हाथीसूं अनेक क्रीडा करी। दशमुख हाथीकी पीठ पर चढ बैठे। हाथी विनयवान शिष्यकी न्याईं खडा होय रहा। तब आकाशसे रावण पर पुष्पोंकी वर्षा भई। अर देवोंने जयजयकार शब्द किए। अर रावणकी सेना बहुत हर्षित भई। रावणने हाथीका त्रैलोक्यमंडन नाम धरचा, याको पाय रावण बहुत हर्षित भया। रावणने हाथीके लाभका बहुत उत्सव किया। अर सम्मेदशिखर पर्वतपर जाय यात्रा करी। विद्याधरोंने नृत्य किया। वह रात्रि वहां ही रह्या। प्रभात हुवा, सूर्य उगा, मानों दिवसने मंगलका कलश रावणको दिखाया। कैसा है दिवस ? सेवाकी विधिमें प्रवीण है, तब रावण डेरामें आय सिंहासनपर विराज्या, हाथीकी कथा सभामें कहते भये।

ता समय एक विद्याधर आकाशतैं रावणके निकट आया। सो अत्यन्त कम्पायमान, जाके पसेव की बूंद झरे हैं, बहुत खेदखिन्न घायल हुआ, अश्रुपात डारता, जर्जरा है तनु जाका, हाथ जोड नमस्कार कर विनती करता भया। हे देव ! आज दशवां दिन है, राजा सूर्यरज रक्षरज बानरवंशी विद्याधर तिहारे बलकरि है बल जिनमें, सो आपका प्रताप जानि अपनै किहकंद नगर लेनेके अर्थ अलंकारोदय जो पाताललंका तातैं अति उछाहसे चाले। कैसे हैं दोऊ भाई? तिहारे बलकरि महा अभिमान युक्त जगतको तृण समान मानैं, ते किहकंधपुर जाय घेरचा। तहां इन्द्रका यमनामा दिग्पाल, ताके योधा युद्ध करने को निकसे, हाथमें हैं आयुध जिनके। बानरवंशिनिके अर यमके लोकोंमें महायुद्ध भया। परस्पर बहुत मारे गए। तब युद्धका कलकलाट सुन यम आप निकसा। कैसा है यम? महाक्रोधकरि पूर्ण, अति भयंकर, न सहा जाय है तेज जाका। सो यमके आवते ही बानरवंशियोंका बल भागा। अनेक आयुधनि- १४३

कर घायल भए। यह कथा कहता कहता वह विद्याधर मूर्छाको प्राप्त भया। तब रावणने शीतोपचारकरि सावधान किया। अर पूछा—'आगे क्या भया ? तब वह विश्राम पाय हाथ जोड़ फिर कहता भया—'हे नाथ ! सूर्यरजका छोटा भाई रक्षरज अपने दलको व्याकुल देख आप युद्ध करने लगे। सो यमके साथ बहुत देरतक युद्ध किया। यम अतिबली, उसने रक्षरजको पकड लिया। तब सूर्यरज युद्ध करने लगे, बहुत युद्ध भया। यमने आयुधका प्रहार किया, सो राजा घायल होय मूर्छित भए। तब अपने पक्षके सामंतोंने राजाको उठाय मेघला वनमें ले जाय शीतोपचार कर सावधान किया। बहुरि यम अपना यमपना सत्य करता संता एक बंदीगृह बनाया। उसका नरक नाम धरचा। तहां वैतरनी आदि सर्व विधि बनाई। जे जे वाने जीते, अर पकड़े वे सर्व नरकमें दिये। सो उस नरकमें कईएक तो मर गए, कईएक दुख भोगै हैं। वहां उस नरकमें सूर्यरज अर रक्षरज ये भी दोनों भाई हैं। यह वृत्तांत मैं देखकर बहुत व्याकुल होय आपके निकट आया हूं। आप उनके रक्षक हो, अर जीवनमूल हो। उनके आपका ही विश्वास है, अर मेरा नाम शाखावली है, मेरा पिता रणदक्ष, माता सुश्रोणी। मैं रक्ष-रजका प्यारा चाकर, सो आपको यह वृत्तांत कहनेको आया हूं। मैं तो आपको जतावा देय निश्चिन्त भया। अपने पक्षको दुख—अवस्थामें जान आपको जो कर्तव्य होय सो करो।

तब रावणने उसे दिलासा कर, याहि संतोष दे, याके घावका यत्न कराया, अर तत्काल सूर्यरज रक्षरजके छुडावनेको महाक्रोधकर यमपर चाले। अर मुसकरायकर कहते भए—कहा यम रंक हमसे युद्ध कर सकै ? जो मनुष्य उसने वैतरणी आदि क्लेशके सागरमें डार राखे हैं, मैं आज ही उनको छुडाऊंगा। अर उस पापीने जो नरक बना राख्या है, ताहि विध्वंस करूंगा। देखो दुर्जनकी दुष्टता ! जीवोंको ऐसे संताप देहै। यह विचारकर आपही चाले। प्रहस्त सेनापति आदि अनेक राजा बड़ी सेनासे आगे दौडे। नानाप्रकारके वाहनोंपर चढ़े शस्त्रोंके तेज से आकाशमें उद्योत करते अनेक वादित्रोंके नाद होते महा उत्साहसे चाले, विद्याधरोंके अधिपति किहकूंपुरके समीप गए। सो दूरसे नगरके घरोंकी

शोभा देखकर आश्चर्य को प्राप्त भए । किहकूपुरकी दक्षिण दिशाके समीप यम विद्याधरका बनाया हुवा अकीर्तम नरक देख्या । जहां एक ऊंचा खाडा खोद राखा है । अर नरककी नकल बनाय राखी है । अनेक नरनिके समूह नरकमें राखे हैं । तब रावणने उस नरकके रखवारे, जे यमके किंकर हुते, कूट कर काढ दिये, अर सर्व प्राणी सूर्यरज रक्षरज आदि दुख सागरसे निकासे । कैसे हैं रावण ? दीननके बंधु, दुष्टोंको दंड देनहारे हैं । वह सर्व नरक स्थान ही दूर किया । यह वृत्तांत परचक्रके आवनेका सुन यम बड़े आडंबरसे सर्व सेनासहित युद्ध करवेकूं आया । मानों समुद्र ही क्षोभको प्राप्त भया । पर्वत सारिखे अनेक गज मदधारा झरते, भयानक शब्द करते, अनेक आभूषणयुक्त, उनपर महा योधा चढे, अर तुरंग पवन सारिखे चंचल जिनकी पूंछ चमर समान हालती, अनेक आभूषण पहिरे, उनकी पीठ पर महाबाहु सुभट चढ़े, अर सूर्यके रथ समान अनेक ध्वजाओंकी पंक्तिसे शोभायमान, जिनमें बड़े बड़े सामंत बकतर पहिरे, शस्त्रोंके समूह धरैं बैठे, इत्यादि महा सेना सहित यम आया । तब विभीषणने यमकी सर्व सेना अपने बाणोंसे हटाई । कैसे हैं विभीषण ? रणविषै प्रवीण, रथविषै आरूढ हैं । विभीषणके बाणोंसे यम किंकर पुकारते हुये भागे । यम, किंकरोंके भागने अर नारकियों के छुडानेसे महा क्रूर होकर विभीषणपर रथ चढ्या धनुषको धारे आया । ऊंची है ध्वजा जाकी, काले सर्प समान कुटिल हैं केश जाके, भृकुटी चढाए लाल हैं नेत्र जाके, जगत रूप ईंधनके भस्म करणे को अग्नि समान आप तुल्य जो बड़े बड़े सामंत उन कर मंडित, युद्ध करणे को अपनें तेजसे आकाश विषै उद्योत करता संता आया । तब रावण यमको देख विभीषणको निवार आप रणसंग्राममें उद्यमी भए । यमके प्रतापसे सर्व राक्षस सेना भयभीत होय रावणके पीछे आय गई । कैसा है यम ? अनेक आडम्बर धरैं है, भयानक है मुख जाका । रावण भी रथपर आरूढ होकर यमके सन्मुख भए । अपने बाणनके समूह यमपर चलाए । इन दोनोंके बाणनिकरि आकाश आच्छादित भया । कैसे हैं बाण ? भयानक है शब्द जिनका । जैसे मेघोंके समूहसे आकाश व्याप्त होय तैसे बाणोंसे आच्छादित होगया ।

रावणने यमके सारथीको प्रहार किया, सो सारथी भूमिमें पड़ा, अर एक बाण यमके लगाया सो यम भी रथसे गिरता भया। तब यम रावणको महा बलवान देखि दक्षिण दिशाका दिग्पालपणा छोड भागया। सारे कुटुम्बको लेकर परिजन पुरजन सहित रथनूपुर गया। इन्द्रसूं नमस्कार कर विनती करता भया। "हे देव! आप कृपा करो, अथवा कोप करो, आजीविका राखहु अथवा हरो, तिहारी जो बांछा होय सो करो। यह यमपणा मुझसे न होय। मालीके भाई सुमालीका पोता दशानन महा योधा, जिसने पहिले तो वैश्रवण जीता वह तो मुनि होगया। अर मुझे भी उसने जीता सो मैं भागकर तुम्हारे निकट आया हूं। उसका शरीर वीररससैं बना है। वह महात्मा है, वह जेष्ठके मध्याह्नका सूर्य समान कभी भी न देखा जाय है।" यह वार्ता सुन कर रथनूपुरका राजा इन्द्र संग्रामको उद्यमी भया, तब मंत्रियोंके समूहने मने किया। कैसे हैं मंत्री? वस्तुका यथार्थ स्वरूप जाननहारे हैं। तब इन्द्र समझकर बैठ रहा। इन्द्र यमका जमाई है, उसने यमको दिलासा दिया कि तुम बड़े योधा हो, तुम्हारे योधापनेमें कमी नाहीं। परन्तु रावण प्रचंड पराक्रमी है यातें तुम चिंता न करो, यहां ही सुखसे तिष्ठो। ऐसा कहकर इनका बहुत सन्मान कर राजा इन्द्र राजलोकमें गए अर कामभोगके समुद्रमें मग्न भए। कैसा है इन्द्र? बडा है विभूतिका मद जाकै। रावणके चरित्रके जो जो वृत्तांत यमने कहे हुते, वैश्रवणका वैराग्य लेना, अर अपना भागना वह इन्द्र ऐश्वर्यके मदमें भूल गए, जैसे अभ्यास विना विद्या भूल जाय। अर यम भी इन्द्रका सत्कार पाय, अर असुर संगीत नगरका राज पाय मान-भंगका दुःख भूल गया। मनमें मानता भया कि--जो मेरी पुत्री महा रूपवन्ती सो तो इन्द्रके प्राणों से भी प्यारी है, अर मेरा अर इन्द्रका बड़ा सम्बन्ध है। तातै मेरे कहा कमी है?

अथानन्तर रावणने किहकंधपुर तो सूर्यरजको दिया अर किहकूंपुर रक्षरजको दिया। दोउनको सदाके हितू जान बहुत आदर किया। रावणके प्रसादसे बानरवंशी सुखसे तिष्ठे। रावण सब राजों का राजा महा लक्ष्मी अर कीर्तिको धरैं दिग्विजय करैं। बड़े २ राजा दिनप्रति आय आय मिलैं।

सो रावणका कटकरूप समुद्र अनेक राजावोंकी सेनारूपी नदीसे पूरित होता भया। अर दिन दिन विभव अधिक होता भया। जैसे शुक्लपक्षका चन्द्रमा दिन दिन कलाकर बढता जाय तैसे रावण दिन दिन बढता जाय। पुष्पक नामा विमानविषै आरूढ होय त्रिकूटाचलके शिखरपर आय तिष्ठा। कैसा है विमान? रत्ननकी मालासे मंडित है, अर ऊंचे शिखरोंकी पंक्तिकर विराजित है, शीघ्र जहाँ चाहै वहाँ जाय। ऐसे विमानका स्वामी रावण, महा धीर्यताकरि मण्डित, पुण्यके फलका है उदय जाकै। जब रावण त्रिकूटाचलके शिखर सिधारे सब बातोंमें प्रवीण तब राक्षसोंके समूह नाना प्रकारके वस्त्राभूषण कर मण्डित परमहर्षकूं प्राप्त भए। सर्व राक्षस रावणको ऐसे मगल वचन गम्भीर शब्द कहते भये "हे देव! तुम जयवंत होवो, आनन्दको प्राप्त होवो, चिरकाल जीवो, वृद्धिको प्राप्त होवो, उदयको प्राप्त होवो"। निरन्तर ऐसे मंगल वचन गम्भीर शब्द कर कहते भए। कई एक सिंह शारदूलोंपर चढ़े, कई एक हाथी घोड़ोंपर चढ़े, कईएक हंसो पर चढ़े, प्रमोदकर फूल रहे हैं नेत्र जिनके, देवों जैसा आकार धरैं, जिनका तेज आकाश विषै फैल रहा है, वन पर्वत अन्तरद्वीपके विद्याधर राक्षस आए समुद्रको देखकर विस्मय को प्राप्त भए। कैसा है समुद्र? नहीं दीखै है पार जिनका, अति गम्भीर है, महामत्स्यादि जलचरों कर भरा है, तमाल वन समान श्याम है, पर्वत समान ऊंची ऊंची उठे हैं लहर के समूह जाविषैं, पाताल समान ओंडा, अनेक नाग नागनिकरि भयानक, नानाप्रकारके रत्नोंके समूह करि शोभायमान, नानाप्रकारकी अद्भुत चेष्टाको धारैं। अर लंकापुरी अति सुन्दर हुती ही अर रावणके आनेसे अधिक समारी गई है। कैसी है लंका? अति देदीप्यमान रत्नों का कोट है जाकै, अर गम्भीर खाईकर मण्डित है, कुन्दके पुष्प समान अति उज्ज्वल स्फटिक मणिके महल हैं जिनमें। इन्द्र नीलमणियोंकी जाली शोभै हैं, अर कहूं इक पद्मराग मणियोंके अरुण महिल हैं, कहूं एक पुष्पराग मणिनके महल, कहूं एक मरकन्दमणिनके महल हैं इत्यादि अनेक मणियोंके मन्दिरोंसे लंका स्वर्गपुरी समान है। नगरी तो सदा ही रमणीक है परन्तु धनीके आयबेकरि अधिक बनी है। रावणने अतिहर्षसे

लंकामें प्रवेश किया। कैसा है रावण ? जाकों काहूकी शंका नाहीं, पहाड समान हाथी, तिनकी अधिक शोभा बनी है, अर मन्दिर समान रत्नमई रथ बहुत संवारे हैं, अश्वोंके समूह हींसते, चलायमान चमर समान हैं पूंछ जिनकी, अर विमान अनेक प्रभाको धरैं इत्यादि महा विभूति कर रावण आया। चंद्रमा के समान उज्ज्वल सिरपर छत्र फिरते, अनेक ध्वजा पताका फहराती, बंदीजनके समूह विरद बखानतें, महामंगल शब्द होते, बीण वांसुरी शंख इत्यादि अनेक वादित्र बाजते, दशोंदिशा अर आकाश शब्दायमान होरहा है। इस विधि लंकामें पधारे। तब लंकाके लोग अपने स्वामी का आगमन देख दर्शनके लालसी हाथमें अर्घ लिए, पत्र फल पुष्प रत्न लिए, अनेक सुन्दर वस्त्र आभूषण पहरे, राग रंग सहित रावणके समीप आए। वृद्धनकू आगे धर तिनके पीछे आय नमस्कार कर कहते भये 'हे नाथ! लंकाके लोग अजितनाथके समयसे आपके घरके शुभचिन्तक हैं। सो स्वामीको अति प्रबल देख अति प्रसन्न भए हैं, भांति भांतिकी आशीस दीनी। तब रावणने बहुत दिलासा देकर सीख दीनी। तब रावणके गुण गावते अपने अपने घरको गये।

अथानन्तर रावणके महलमें कौतुकयुक्त नगरकी नरनारी अनेक आभूषण पहिरैं, रावणके देखने की है इच्छा जिनको, सर्व घरके कार्य छोड २ पृथ्वीनाथके देखनेको आई। कैसे हैं रावण ? वैश्रवण के जीतनहारे तथा यम विद्याधरके जीतनहारे अपने महलविषै राजलोकसहित सुखसूं तिष्ठे। कैसा है महल ? चूडामणि समान मनोहर है। और भी विद्याधरोंके अधिपति यथायोग्य स्थानकेविषै आनन्दसे तिष्ठे, देवन समान हैं चरित्र जिनके।

अथानन्तर गौतम स्वामी राजा श्रेणिकसूं कहै हैं—हे श्रेणिक! जो उज्ज्वल कर्मके करणहारे हैं तिनका निर्मल यश पृथ्वीविषै होय है, नाना प्रकारके रत्नादिक सम्पदाका समागम होय है, अर प्रबल शत्रुओंका निर्मूल पृथ्वी विषै होय है, सकल त्रैलोक्यविषै गुण विस्तरै हैं। या जीवके प्रचण्ड बैरी पांच इंद्रियोंके विषय हैं, जो जीवको बुद्धि हरैं, अर पापोंको बन्ध करैं हैं। यह इन्द्रियोंके विषय

धर्मके प्रसादसे वशीभूत होय हैं अर राजाओंके बाहिरले बैरी प्रजाके बाधक ते भी आय पावोंविषै पड़े हैं। ऐसा मानकर जो धर्मके विरोधी विषयरूप बैरी हैं वे विवेकियोंको वश करने योग्य हैं। तिनका सेवन सर्वथा न करना। जैसे सूर्यको किरणोंसे उद्योत होते संते भली दृष्टिवाले पुरुष अन्धकारकरि व्याप्त औंडे खंधकविषै नहीं पड़े हैं, तैसे जे भगवानके मार्गविषै प्रवर्त्तै हैं तिनके पापबुद्धिकी प्रवृत्ति नहीं होय है।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण भाषा वचनिकाविषै दशग्रीवका निरूपण करनेवाला आठवां पर्व पूर्ण भया ॥ ८ ॥

अथानन्तर आगे अपने इष्टदेवकू विधिपूर्वक नमस्कार करि, उनके गुण स्तवनकरि किहकंधपुर विषै राजा सूर्यरज वानरवंशी, तिनकी राणी चन्द्रमालिनी अनेक गुणसम्पन्न, ताके बाली नामा पुत्र भए। सो वर्णन करिए हैं। सो हे भव्य! तू सुन। कैसे हैं बाली? सदा उपकारी शीलवान पंडित प्रवीण धीर–लक्ष्मीवान शूरवीर ज्ञानी अनेक–कला संयुक्त सम्यक्दृष्टि महाबली राजनीतिविषै प्रवीण धीर्यवान दयाकर भीगा है चित्त जिनका, विद्याके समूह गर्वित मंडित कांतिवान तेजवंत हैं।

ऐसे पुरुष संसारमें विरले ही हैं जो समस्त अढाई द्वीपोंके जिनमंदिरोंके दर्शनमें उद्यमी हैं। कैसे हैं वे जिनमंदिर? अति उत्कृष्ट प्रभावकर मंडित हैं। बाली तीनों काल अति श्रेष्ठ भक्तियुक्त संशय-रहित श्रद्धावंत जम्बूद्वीपके सर्व चैत्यालयनिके दर्शन कर आवै। महा पराक्रमी, शत्रुपक्षका जीतनहारा, नगरके लोगोंके नेत्ररूपी कुमुदके प्रफुल्लित करनेको चन्द्रमा समान, जिसको किसीकी शंका नाहीं। किहकंधपुरमें देवनकी न्याई रमै। कैसा है किहकंधपुर? महारमणीक नाना प्रकारके रत्नमयी मंदिरों से मंडित, गज तुरंग रथादिसे पूर्ण, नाना प्रकारका व्यापार है जहां, अर अनेक सुन्दर हाटनकी पंक्तिन-कर युक्त है, जहां जैसे स्वर्गविषै इन्द्र रमै तैसे रमै है। अनुक्रमतैं जाके छोटा भाई सुग्रीव भया।
सो महाधीर वीर मनोज्ञरूप कर युक्त, महा नीतिवान विनयवान है। ये दोनों ही वीर कुलके आभूषण होते भए जिनका, आभूषण बड़ोंका विनय है। सुग्रीवके पीछे श्रीप्रभा बहिन भई जो साक्षात् लक्ष्मी,

रूपकर अतुल्य है। अर किहकंधपुरविषै सूर्यरजका छोटा भाई रक्षरज, ताकी राणी हरिकांता, ताके पुत्र नल, अर नील होते भए। सुजनोंके आनन्दके उपजावनहारे महासामंत रिपुकी शंकारहित मानों किहकंधपुरके मंडन ही हैं। इन दोनों भाइयोंके दो दो पुत्र महागुणवंत भए। राजा सूर्यरज अपने पुत्रोंको यौवनवंत देख मर्यादाके पालक जान, आप विषयोंको विष मिश्रित अन्न समान जान, संसारसे विरक्त भए। कैसे हैं राजा सूर्यरज? महाज्ञानवान हैं। बालीको पृथ्वीके पालने निमित्त राज दिया, अर सुग्रीवको युवराजपद दिया, अपने स्वजन परजन समान जाने, अर यह चतुरगतिरूप जगत महादुःख-करि पीडित देख विहृतमोह नामा मुनिके शिष्य भए। जैसा भगवानने भाष्या तैसा चारित्र धारया। कैसे हैं मुनि सूर्यरज? शरीरविषै भी नहीं है ममत्व जिनके, आकाश सारिखा निर्मल है अंतःकरण जिनका, समस्त परिग्रहरहित, पवनकी नाईं पृथ्वीविषै विहार किया। विषयकषायरहित मुक्तिके अभिलाषी भए।

अथानन्तर बालीके ध्रुवा नामा स्त्री महा पतिव्रता, गुणोंके उदयसे सैकड़ों राणियोंमें मुख्य उस सहित ऐश्वर्यको धरै राजा बाली बानरवंशियोंके मुकुट, विद्याधरनि करि मानिये है आज्ञा जाकी, सुन्दर हैं चरित्र जाके, सो देवनके ऐसे सुख भोगते भए, किहकंधपुरमें राज करैं।

रावणकी बहिन चन्द्रनखा, जिसके सर्व गात मनोहर, राजा मेघप्रभका पुत्र खरदूषणने जिस दिन से इसको देखा उस दिनसे कामबाणकरि पीड़ित भया, याकों हरा चाहै। सो एक दिन रावण, राजा प्रवर, राणी आवली, उनकी पुत्री तनूदरी उसके अर्थ एक दिन रावण गए, सो खरदूषणने लंका रावण बिना खाली देख चिन्तारहित होय चन्द्रनखा हरी। कैसा है खरदूषण? अनेक विद्याका धारक, मायाचारमें प्रवीण है बुद्धि जाकी। दोऊ भाई कुम्भकरण अर बिभीषण बड़े शूरवीर हैं, परन्तु छिद्र पायकरि मायाचारकरि कन्याकूं हर ले गया। तब वे क्या करैं, ता पीछे सेना दौडने लगी। तब कुम्भ-
करण विभीषणने यह जानकर मनै करी कि खरदूषण पकड़या तो जावै नाहीं, अर मारणा

योग्य नाही। बहुरि रावण आए, तदि ए वार्ता सुनि अति क्रोध किया। यद्यपि मार्गके खेदसे शरीरविषै पसेव आया हुता, तथापि तत्काल खरदूषणपर जानेको उद्यमी भए। कैसा है रावण ? महामानी है। एक खड्गहीका सहाय लिया, अर सेना भी लार न लीनी, यह विचारा कि जो महावीर्यवान पराक्रमी हैं, तिनके एक खड्गहीका सहारा है। तब मंदोदरीने हाथ जोड विनती करी—'हे प्रभो ! आप प्रकट लौकिक स्थितिके ज्ञाता हो, अपने घरकी कन्या औरको देनी, अर औरोंकी आप लेनी। इन कन्याओंकी उत्पत्ति ऐसी ही है। अर खरदूषण चौदह हजार विद्याधरोंका स्वामी है, जो विद्याधर युद्धसे कदे ही पीछे न हटैं, बड़े बलवान हैं, अर इस खरदूषणको अनेक सहस्र विद्या सिद्ध हैं, महागर्ववंत हैं, आप समान शूरवीर है, यह वार्ता लोकनिसे क्या आपने नाहीं सुनी है। आपके अर उसके भयानक युद्ध प्रवरते तब भी हारजीतका संदेह ही है। अर वह कन्या हर ले गया है, सो वह हरणकरि दूषित भई है, औरनकूं जो न देने आवै सो खरदूषणके मारनेसे वह विधवा होय है। अर सूर्यरजको मुक्ति गए पीछे चंद्रोदर विद्याधर पाताललंकामें थाने हुता। ताहि काढकर यह खरदूषण तुम्हारी बहिनसहित पातालकंकाविषै तिष्ठै है, तिहारा सम्बन्धी है।' तब रावण बोले हे प्रिये ! मैं युद्धसे कभी नहीं डरूं। परन्तु तिहारे वचन नहीं उलंघने, अर बहिन विधवा नहीं करणी, सो हमने क्षमा करी। तब मंदोदरी प्रसन्न भई।

अथानन्तर कर्मनिके नियोगसे चंद्रोदर विद्याधर कालकूं प्राप्त भया। तब ताकी स्त्री अनुराधा गर्भिणी, विचारी भयानक वनमें हिरणीकी नाई भ्रमै, सो मणिकांत पर्वतपर सुन्दर पुत्र जना। शिला ऊपर पुत्रका जन्म भया, कैसी है शिला ? कोमल पल्लव अर पुष्पोंके समूहसे संयुक्त है। अनुक्रमसे बालक वृद्धिको भया। यह वनवासिनी माता उदास चित्त पुत्रकी आशासे पुत्रको पालै। जब यह पुत्र गर्भमें आया तब हीसे इनके माता पिताको वैरियोंसे विराधना उपजी, तातैं याका नाम विराधित, राजसम्पदावर्जित जहां २ राजनिपै जाय तहां तहां याका आदर न होय। सो जैसे सिरका केश स्थानक-

से छूटा आदर न पावै तैसे जो निज स्थानकसे रहित होय उसका सन्मान कहांतैं होय ? सो यह राजा का पुत्र खरदूषणको जीतिवे समर्थ नाहीं सो चित्तविषै खरदूषणका उपाय चितवता हुआ सावधान रहै। अर अनेक देशोंमें भ्रमण करै, षट् कुलाचलनिविषै अर सुमेरु आदि पर्वतनिविषै तथा रमणीक वनोंमें जो अतिशय स्थानक हैं, जहाँ देवनिका आगमन है, तहाँ यह विहार करै, अर संग्रामविषै योद्धा लड़ें तिनके चरित्र आकाशमें देवोंके साथ देखै, संग्राम गज अश्व रथादिकर पूर्ण है। अर ध्वजा छत्रादिककर शोभित है। या भांति विराधित कालक्षेप कर अर लंकाविषै रावण इंद्रकी नाईं सुखसूं तिष्ठै।

अथानन्तर सूर्यरजका पुत्र बाली, रावणकी आज्ञातैं विमुख भया। कैसा है बाली ? अद्भुत कर्मों की करणहारी जो महाविद्या तिनकरि मण्डित है, अर महाबली है। तब रावणने बालीपै दूत भेजा। सो दूत महा बुद्धिमान किहकंधपुर जायकर बालीसे कहता भया—'हे बानराधीश ! दशमुख तुमकूं आज्ञा करी है सो सुनो। कैसे हैं दशमुख ? महाबली महातेजस्वी महालक्ष्मीवान महानीतिवान महा-सेनाकरियुक्त, प्रचंडनकूं दंड देनहारे, महा उदयवान, जिस समान भरतक्षेत्रमें दूजा नाहीं। पृथ्वीके देव अर शत्रुवोंका मान मर्दन करनहारा है, यह आज्ञा करी है, जो तिहारे पिता सूर्यरजको मैंने राजा यम बैरीको काढकर किहकंधपुरमें थाप्या अर तुम सदाके हमारे मित्र हो, परन्तु आप अब उपकार भूलकर हमसों पराङ्मुख हो गए हो, यह योग्य नाहीं है। मैं तुम्हारे पितासे भी अधिक प्रीति तुमसे करूंगा। अब तुम शीघ्र ही हमारे निकट आवो, प्रणाम करो, अर अपनी बहिन श्रीप्रभा हमको परणावो, हमारे सम्बंधसे तुमको सर्व सुख होयगा। दूतने कही—ऐसी रावणकी आज्ञा प्रमाण करो। सो बालीके मनमें और बात तो आई, परन्तु एक प्रणाम की न आई, काहेतैं ? जो याकै देव गुरु शास्त्र विना औरको नमस्कार नाहीं करै, यह प्रतिज्ञा है। तब दूतने फिर कही हे कपिध्वज ! अधिक कहनेसे कहा ? मेरे वचन तुम निश्चय करो, अल्प लक्ष्मी पाकर गर्व मत करो, या तो दोनों हाथ जोड प्रणाम करो या आयुध पकडो।

या तो सेवक होयकर स्वामीपर चंवर ढोरो या भागकर दशों दिशाविषैं विचरो, या सिर नवावो या खैंचिके धनुष निवावो, या रावणकी आज्ञाको कर्णका आभूषण करहु, या धनुषकी प्रत्यचा खैंचकर कानोंतक लावो। रावण आज्ञा करी है कि या तो मेरे चरणारविंदकी रज माथे चढावहु या रणसंग्रामविषैं सिरपर टोप धरो, या तो बाण छोड़ो या धरती छोड़ो, या तो हाथमें वेत्र दंड लेकर सेवा करो या बरछी हाथमें पकड़ो, या तो अंजली जोडहु या सेना जोड़हु। या तो मेरे चरणोंके नखविषैं मुख देखहु या खड्गरूप दर्पणमें मुख देखहु। ये कठोर वचन रावणके दूतने बालीसें कहे। तदि बालीका व्याघ्रविलंबी नामा सुभट कहता भया। रे कुदूत! नीचपुरुष! तू ऐसे अविवेक वचन कहै है सो तू खोटे ग्रहकर ग्रह्या है। समस्त पृथ्वीविषैं प्रसिद्ध है पराक्रम अर गुण जाका, ऐसा बाली देव तेरे कुराक्षसने अबतक कर्णगोचर नहीं किया। ऐसा कहकर सुभटने महा क्रोधायमान होकर दूतके मारणेकूं खड्गपर हाथ धरचा, तदि बालीने मने किया, जो इस रंकके मारणेसे कहा? यह तो अपने नाथके कहे प्रमाण वचन बोलै है। अर रावण ऐसे वचन कहावै है। सो उसीकी आयु अल्प है, तदि दूत डर कर सिताव रावणपै गया। रावणको सकल वृत्तांत कह्या, सो रावण महाक्रोधकूं प्राप्त भया। दस्सह तेजवान रावणने बड़ी सेनाकरि मंडित बखतर पहन शीघ्र ही कूच किया। रावणका शरीर तेजोमय परमाणुवोंसे रचा गया है। रावण किहकंधपुर पहुंचे। तदि बाली संग्रामविषैं प्रवीण महा भयानक शब्द सुनकर युद्धके अर्थ बाहिर निकसनेका उद्यम किया। तब महाबुद्धिमान नीतिवान जे सागर वृद्धादिक मंत्री, तिनने वचनरूप जलकर शांत किया कि–हे देव! निष्कारण युद्ध करनेसे कहा? क्षमा करो, आगे अनेक योधा मान करके क्षय गए। कैसे हैं वे योधा? रण ही है प्रिय जिनकूं, अष्टचन्द्र विद्याधर अर्ककीर्तिके भुजके आधार, जिनके देव सहाई तौ भी मेघेश्वर जयकुमारके बाणों कर क्षय भए। रावणकी बड़ी सेना है जिसकी ओर कोई देख सकै नाहीं, खड्ग गला सेल बाण इत्यादि अनेक आयुधोंकर भरी है, अतुल्य है। तातैं आप संदेहकी तुला जो संग्राम उसके अर्थ न चढो। तब

बालीने कही अहो मंत्री हो ! अपनी प्रशंसा करनी योग्य नाहीं तथापि मैं तुमको यथार्थ कहूं हूँ कि इस रावणको सेनासहित एक क्षणमात्रमें बावें हाथकी हथेलीसे चूर डालनेको समर्थ हूँ, परन्तु यह भोग क्षणविनश्वर हैं, इनके अर्थ निर्दय कर्म कौन करैं ? जब क्रोधरूपी अग्निसे मन प्रज्ज्वलित होय तब निर्दय कर्म होय है । यह जगतके भोग केलेके थंभ समान असार हैं । तिनको पाकर मोहवंत जीव नरकमें पड़े है । नरक महा दुखोंसे भरचा है । सर्व जीवोंको जीतव्य वल्लभ है । सो जीवोंके समूह को हत कर इन्द्रियोंके भोग सुख पाइए है तिनकरि गुण कहाँ ? इन्द्रियसुख साक्षात् दुःख ही हैं । ये प्राणी संसाररूपी महाकूपमें अरहटकी घडीके यंत्र समान रीती भरी करते रहते हैं । कैसे हैं ये जीव ? विकल्प जालसे अत्यन्त दुःखी हैं। श्रीजिनेंद्र देवके चरणयुगल संसारके तारणेके कारण हैं, तिनकूं नमस्कारकरि औरकूं कैसे नमस्कार करूं ? मैंने पहिलेसे ऐसी प्रतिज्ञा करी है कि देव गुरु शास्त्रके सिवाय औरको प्रणाम न करूं ? तातैं मैं अपनी प्रतिज्ञा भंग भी न करूं अर युद्धविषै अनेक प्राणियोंका प्रलय भी न करूं । बल्कि मुक्तिकी देनहारी सर्व संगरहित दिगम्बरी दीक्षा धरूं । मेरे जो हाथ श्रीजिनराजकी पूजा में प्रवरतैं, दानविषैं प्रवरतें, अर पृथ्वीकी रक्षाविषै प्रवरतैं, वे मेरे हाथ कैसे किसीको प्रणाम करैं ? अर जो हस्तकमल जोडकर पराया किंकर होवे, उसका कहाँ ऐश्वर्य ? अर कहां जीतव्य ? वह तो दीन है । ऐसा कहकर सुग्रीवको बुलाय आज्ञा करते भये कि 'हे बालक ! सुनो, तुम रावणको नमस्कार करो वा न करो, अपनी बहिन उसे देवो अथवा मत देवो, मेरे कछु प्रयोजन नाहीं। मैं संसारके मार्ग से निवृत्त भया, तुमको रुचै सो करो। ऐसा कहकर सुग्रीवको राज्य देय आप गुणन कर गरिष्ठ श्रीगगनचन्द्र मुनितैं परमेश्वरी दीक्षा आदरी । परमार्थमें लगाया है चित्त जिनने, अर पाया है परम उदय जिनने, वे बाली योधा परम ऋषि होय एक चिद्रूप भावमें रत भए । सम्यग्दर्शन हैं निर्मल जिनके, सम्यक्ज्ञान कर युक्त है आत्मा जिनका, सम्यक्चारित्रविषै तत्पर, बारह अनुप्रेक्षाओंका निरंतर विचार करते भए । आत्मानुभवमें मग्न मोह जालरहित स्वगुणरूपी भूमिपर विहार करते भये । कैसे हैं

गुण भूमि ? निर्मल आचारी जे मुनि तिनकरि सेवनीक है। बाली मुनि पिताकी नाईं सर्व जीवोंपर दयालु बाह्याभ्यंतर तपसे कर्मकी निर्जरा करते भए। वे शांतबुद्धि तपोनिधि महाऋद्धिके निवास होते भए, सुन्दर है दर्शन जिनका, ऊंचे ऊंचे गुणस्थानरूपी जे सिवाण तिनके चढनेमें उद्यमी भए। भेदी है अंतरग मिथ्याभावरूपी ग्रंथि (गांठ) जिनने, बाह्याभ्यंतर परिग्रहरहित, जिन सूत्रके द्वारा कृत्य अकृत्य सब जानते भये। महा गुणवान, महासंवरकर मंडित कर्मोंके समूहको खिपावते भए। प्राणोंकी रक्षा-मात्र सूत्रप्रमाण आहार लेय हैं। अर प्राणनिकूं धर्मके निमित्त धारैं हैं, अर धर्मकूं मोक्षके अर्थ उपारजे हैं, भव्यलोकनिकूं आनन्दके करनहारे उत्तम हैं आचरण जिनके, ऐसे बाली मुनि और मुनियों को उपमा योग्य होते भये। अर सुग्रीव रावणको अपनी बहिन परणायकर रावणकी आज्ञा प्रमाण किहकंधपुरका राज्य करता भया।

पृथ्वीविषैं जो जो विद्याधरोंकी कन्या रूपवती थीं रावणने वे समस्त अपने पराक्रमसे परणी। नित्यालोक नगरमें राजा नित्यालोक राणी श्रीदेवी, तिनकी रत्नावली नामा पुत्री, उसको परणकर रावणलंकाको आवते हुते, सो कैलाश पर्वत ऊपर आय निकसे। सो पुष्पक विमान तहांके जिनमंदिरनि के प्रभाव करि अर बाली मुनिके प्रभाव करि आगैं न चल सका। कैसा है विमान ? मनके वेग समान चंचल है। जैसैं सुमेरुके तटकूं पायकरि वायुमंडल थंभै तैसें विमान थम्भा। तदि घंटादिकका शब्द होता रह गया। मानों विलषा होय मौनको प्राप्त भया। तदि रावण विमानको अटका देख मारीच मंत्रीसे पूछते भए कि यह विमान कौन कारणसे अटक्या। तदि मारीच सर्व वृत्तांत विषैं प्रवीण, कहता भया। हे देव ! सुनो यह कैलाश पर्वत है। यहां कोई मुनि कायोत्सर्गकरि तिष्ठै हैं, शिला के ऊपर रत्नके थंभ समान सूर्यके सन्मुख ग्रीष्ममें आतापनयोग धर तिष्ठै हैं। अपनी कांति से सूर्य की कांतिको जीतता हुआ विराजै हैं। यह महामुनि धीरवीर हैं, महाघोर वीर-तपको धरै हैं, शीघ्र ही मुक्तिको प्राप्त हुआ चाहे हैं। इसलिए उतरकर दर्शन करि आगे चालो तथा विमान पीछे फेर कैलाशको छोडकर और

मार्ग होय चलो। जो कदाचित् हठकर कैलाशके ऊपर होय चालोगे, तो विमान खंड खंड होजायगा। यह मारीचके वचन सुनकर राजा यमका जीतनहारा रावण अपने पराक्रमसे गर्वित होकर कैलाश पर्वतको देखता भया। कैसा है पर्वत? मानो व्याकरण ही है, क्योंकि नानाप्रकारके धातुनि करि भरचा है। अर सहस्र गुण युक्त नाना प्रकारके सुवर्णकी रचनासे रमणीक पद पंक्तियुक्त नानाप्रकार के स्वरों कर पूर्ण है। बहुरि कैसा है पर्वत? ऊंचे तीखे शिखरोंके समूहकरि शोभायमान है। आकाश से लग्या है, निसरते उछलते जे जलके नीझरने तिनकरि प्रकट हँसे ही है। कमल आदि अनेक पुष्प, तिनकी सुगंध, सोई भई सुरा, ताकरि मत्त जे भ्रमर, तिनकी गुंजारसे अति सुन्दर है। नानाप्रकारके वृक्षोंकर भरचा है, बड़े २ शालके जो वृक्ष तिनकर मंडित जहां छहों ऋतुओंके फल फूल शोभै हैं। अनेक जातिके जीव विचरै हैं। जहां ऐसी ऐसी औषध हैं जिनके वासतैं सर्पोंके समूह दूर रहैं हैं। महा मनोहर सुगंधसे मानों वह पर्वत सदा नवयौवनहीको धरै है। अर मानों वह पर्वत पूर्वपुरुष समान ही है। विस्तीर्ण जे शिला वे ही हैं हृदय जाके, अर शाल वृक्ष वे ही महा भुजा, अर गंभीर गुफा सो ही वदन, अर वह पर्वत शरद ऋतुके मेघ समान निर्मल तट तिनकरि सुन्दर, मानों दुग्ध समान अपनी कांति से दशों दिशाको स्नान ही करावै है। कईएक गुफानिविषै सूते जे सिंह तिनकर भयानक है, कहूं एक सूते जो अजगर तिनके स्वांसकरि हालै हैं वृक्ष जहां। कहूं एक भ्रमतैं क्रीड़ा करते जो हिरणोंके समूह तिनकर शोभै है, कहूंएक मातै हाथियोंके समूहसे मंडित है वन जहां, कहूंएक फूलनिके समूह करि मानो रोमांच होय रहा है। अर कहूंएक वनकी सघनता करि भयानक है, कहूंएक कमलोंके वनसे शोभित हैं सरोवर जहां, कहूंएक वानरनिके समूह वृक्षनिकी शाखानिपर केलि कर रहे हैं। अर कहूंएक गैंडान के धगकर छेदे गए हैं जो चंदनादि सुगंध वृक्ष—तिनकरि सुगंध होय रहा है। कहूंएक बिजलीके उद्योत करि मेल्या जो मेघमण्डल उस समान शोभाको धरै है, कहूंइक दिवाकर समान जो ज्योतिरूप शिखर तिनकरि उद्योतरूप किया है आकाश जानै। ऐसा कैलाशपर्वत देखि रावण विमानतैं उतरचा। तहां

ध्यानरूपी समुद्रविषै मग्न, अपने शरीरके तेजसे प्रकाश की हैं दशों दिशा जिनने, ऐसे बाली महामुनि देखे। दिग्गजनकी सूण्ड समान दोऊ भुजा लम्बाए, कायोत्सर्ग धरै खड़े, लिपटि रहे हैं शरीरसे सर्प जिनके, मानों चंदनके वृक्ष ही हैं। आतापनि शिलापर निश्चल खड़े प्राणियोंको ऐसा दीखैं मानों पाषाणका थंभ ही है। रावण बाली मुनिको देखकरि पूर्व वैर चितारि पापी क्रोधरूपी अग्निसे प्रज्वलित भया। भृकुटि चढाय होंठ डसता कठोर शब्द मुनि को कहता भया—'अहो यह कहा तप तेरा, जो अब भी अभिमान न छूटया। मेरा विमान चलता थांभ्या। कहां उत्तम क्षमारूप वीतरागका धर्म अर कहा पापरूप क्रोध ? तू वृथा खेद करै है। अमृत अर विषको एक किया चाहै है। तातैं तेरा गर्व दूर करूंगा, तुझ सहित कैलाशपर्वतको उखाड समुद्र में डार दूंगा।'' ऐसे कठोर वचन कहकर रावणने विकराल रूप किया। सर्व विद्या जे साधी हैं तिनकी अधिष्ठाता देवी चितवनमात्रसे आय ठाढी भई, सो विद्याबलकरि रावणने महारूप किया, धरतीको भेद पातालमें पैठा। महा पापविषै उद्यमी है, प्रचंड क्रोधकरि लाल हैं नेत्र जाके, अर हूंकार शब्दकरि वाचाल है मुख जाका, भुजावोंकर कैलाशपर्वतके उखाडनेका उद्यम किया। तदि सिंह हस्ती सर्प हिरण इत्यादि अनेक जीव अर अनेक जातिके पक्षी भयकरि कोलाहल शब्द करते भए। जलके नीझरने टूट गए, जल गिरने लगा, वृक्षोंके समूह फट गए, पर्वतकी शिला अर पाषाण पडते भए, तिनके विकराल शब्दकरि दशू दिशातैं कैलाश पर्वत चलायमान भया। जो देव क्रीडा करते हुते ते आश्चर्यको प्राप्त भए, दशों दिशाकी ओर देखते भए। अर जो अप्सरा लतावोंके मण्डपमें केलि करती हुतीं सो लतावोंको छोड आकाशमें गमन करतीं भईं। भगवान बालीने रावणका कर्त्तव्य जान आप धीरवीर क्रोध रहित कछु भी खेद न मान्या, जैसे निश्चल विराजे हुते तैसे ही रहे। चित्तमें ऐसा विचार किया:—जो पर्वतपर भगवानके चैत्यालय अति उत्तम महासुन्दरताकरि शोभित, सर्व रत्नमयी, भरत चक्रवर्तीके कराए हैं, जहां निरंतर भक्तिसंयुक्त सुर असुर विद्याधर पूजाको आवैं हैं, मति या पर्वतके कम्पायमान होनेकरि चैत्यालयोंका भंग होय,

अर यहां अनेक जीव विचरैं हैं तिनकूं बाधा न होय, ऐसा विचारकरि अपने चरणका अंगुष्ठ ढीला दाब्या। सो रावण महाभाराक्रांत होय दब्या। बहुरूप बनाया था सो भंग भया, महादुःख कर व्याकुल नेत्रोंसे रक्त झरने लगा, मुकुट टूट गया अर माथा भीग गया, पर्वत बैठ गया, रावणके गोडे छिल गए, जंघा भी छिल गई, तत्काल पसेवमें भीग गया, अर धरती पसेव करि गीली भई। रावणके गात्र सकुच गए, कछुवे समान हो गया, तब रोणे लगा, ताही कारणसे पृथ्वीमें रावण कहाया। अब तक दशानन कहावै था। इसके अत्यन्त दीन शब्द सुनकरि इसकी राणी अत्यन्त विलाप करती भई। अर मंत्री सेनापति लारके सर्व सुभट पहिले तो भ्रमकर वृथा युद्ध करनेको उद्यमी भए थे, पीछे मुनिका अतिशय जान सर्व आयुध डार दिये। मुनिके कायबल ऋद्धिके प्रभावतैं देव दुंदुभी बजाने लगे, अर कल्पवृक्षोंके फूलों की वर्षा भई, तापर भ्रमर गुंजार करते भए, आकाशमें देव देवी नृत्य करते भए, गीतकी ध्वनि होती भई। तब महामुनि परमदयालु अंगुष्ठ ढीला किया।

रावणने पर्वतके तलेसे निकसि बाली मुनिके समीप आय नमस्कार कर क्षमा कराई। अर जान्या है तपका बल जानैं, योगीश्वरकी बारम्बार स्तुति करते भये। हे नाथ! तुमने घरहीतें यह प्रतिज्ञा करी हुती जो मैं जिनेंद्र मुनींद्र जिनशासन सिवाय काहूकूं भी प्रणाम न करूं, सो यह सब सामर्थ्य का फल है। अहो धन्य हैं निश्चय तिहारा, धन्य यह तपका बल! हे भगवान्! तुम योग शक्तिसे त्रैलोक्य को अन्यथा करनेको समर्थ हो, परन्तु उत्तमक्षमा धर्मके योगसे सबपै दयालु हो, किसीपर क्रोध नाहीं। हे प्रभो! जैसा तपकरपूर्ण मुनिको विना ही यत्न परमसामर्थ होय है तैसी इन्द्रादिकके नाहीं। धन्य गुण तिहारे, धन्य रूप तिहारा, धन्य कांति तिहारी, धन्य आश्चर्यकारी बल तिहारा, अद्भुत दीप्ति तिहारी, अद्भुत शील, अद्भुत तप, त्रैलोक्यमें जे अद्भुत परमाणु हैं तिनकरि सुकृतका आधार तिहारा शरीर बना है, जन्महीतैं महाबली, सर्व सामर्थके धरणहारे, तुम नव यौवनमें जगत्की मायाको तजकरि परम शांतभावरूप जो अरहंतकी दीक्षा ताहि प्राप्त भए हो, सो यह अद्भुत कार्य

तुम सारिखे सत्पुरुषोंकर ही बने हैं। मुझ पापीने तुम सारिखे सत्पुरुषोंसे अविनय किया सो महा पाप का बंध किया! धिक्कार मेरे मन वचन कायको। मैं पापी मुनिद्रोहमें प्रवरत्या, जिनमंदिरनिका अविनय भया। आप सारिखे पुरुषरत्न अर मुझ सारिखे दुर्बुद्धि सो सुमेरु अर सरसोंकासा अंतर है। मोकूं मरतेकूं आज आप प्राण दिए। आप दयालु हम सारिखे दुष्ट दुर्जन तिन ऊपर भी क्षमा करो इस समान और कहा। मैं जिनशासनको श्रवण करूं हूं, जानूं हूं देखूं हूं, जो यह संसार असार है, अस्थिर है, दुःखभाव है। तथापि मैं पापी विषयनिसे वैराग्यको नाहीं प्राप्त भया। धन्य हैं वे पुण्यवान महापुरुष, अल्प संसारी, मोक्षके पात्र, जे तरुण अवस्थाहीमें विषयोंको तजि, मोक्षका मार्ग मुनिव्रत आचरैं हैं। या भांति मुनिकी स्तुतिकर तीन प्रदक्षिणा देय नमस्कारकरि अपनी निंदा करि बहुत लज्जावान होय मुनिके समीप जे जिनमंदिर हुते तहां वंदनाको प्रवेश किया। चंद्रहास खड्गको पृथ्वी-विषैं मेलि अपनी राणीनिकरि मंडित जिनवरका अर्चन करता भया। भुजामेंसे नस रूप तांत काढ कर बीण समान बजाता भया। भक्तिमें पूर्ण है भाव जाका, स्तुतिकर जिनेंद्रके गुणानुवाद गावता भया। हे देवाधिदेव! लोकालोक देखनहारे, नमस्कार हो तुमकूं। कैसे हो? लोकको उलंघे ऐसा है तेज तिहारा। हे कृतार्थ महात्मा! नमस्कार हो। कैसे हो? तीन लोककरि करी है पूजा जिनकी, नष्ट किया है मोहका वेग जिन्होंने, वचनसे अगोचर गुणोंके समूहके धरनहारे, महा ऐश्वर्यकरि मंडित, मोक्ष मार्गके उपदेशक, सुखकी उत्कृष्टतामें पूर्ण, समस्त कुमार्गसे दूर, जीवनको भुक्ति अर मुक्तिके कारण, महाकल्याणके मूल, सर्व कर्मोके साक्षी, ध्यानकर भस्म किए हैं पाप जिन्होंने, जन्म मरणके दूर करनहारे, समस्तके गुरु, आपके कोई गुरु नाहीं, आप किसीको नवैं नाहीं, अर सबकरि नमस्कार करने योग्य, आदि अन्तरहित, समस्त परमार्थके जाननहारे, आपको केवली बिना अन्य न जान सकैं,
सर्व रागादिक उपाधिसे शून्य, सर्वके उपदेशक, द्रव्यार्थिक नयसे सब नित्य हैं अर पर्यायार्थिक नयसे सब अनित्य हैं—ऐसा कथन करनहारे, किसी एक नयसे द्रव्य गुणका भेद, किसी एक नयसे द्रव्य गुण

का अभेद–ऐसा अनेकांत दिखावन हारे, जिनेश्वर, सर्वरूप, एकरूप चिद्रूप, अरूप, जीवनको मुक्ति के देनहारे, ऐसे जो तुम, तिनको हमारा बारम्बार नमस्कार होहु।

श्री ऋषभ, अजित, सम्भव, अभिनन्दन, सुमति, पद्मप्रभ, सुपार्श्व, चन्द्रप्रभ पुष्पदंत, शीतल, श्रेयांस, वासुपूज्यके ताईं बारम्बार नमस्कार हो। पाया है आत्मप्रकाश जिन्होंने विमल अनन्त धर्म शांतिके ताईं नमस्कार हो। निरंतर सुखोंके मूल सबको शांतिके करता कुन्थु जिनेन्द्रके ताईं नमस्कार हो। अरनाथके ताईं नमस्कार हो। मल्लिमहेश्वरके ताईं नमस्कार हो। मुनिसुव्रतनाथके ताईं जे महाव्रतोंके देनहारे, अर अब जो होवेंगे नमि नेम पार्श्व वर्द्धमान तिनके ताईं नमस्कार हो। अर जो पद्मनाभादिक अनागत होवेंगे तिनको नमस्कार हो। अर जे निर्वाणादिक अतीत जिन भए तिनको नमस्कार हो। सदा सर्वदा साधुओंको नमस्कार हो, अर सर्व सिद्धोंको निरंतर नमस्कार हो। कैसे हैं सिद्ध ? केवलज्ञानरूप, केवलदर्शनरूप, क्षायक सम्यक्त्वरूप इत्यादि अनंत गुणरूप हैं।" यह पवित्र अक्षर लंकाके स्वामीने गाए।

रावण द्वारा जिनेन्द्रदेवकी महा स्तुति करनेसे धरणेन्द्रका आसन कम्पायमान भया। तब अवधिज्ञानसे रावणका वृत्तांत जान हर्षसे फूले हैं नेत्र जिनके, सुन्दर है मुख जिनका, देदीप्यमान मणियों के ऊपर जो मणि उनकी कांतिसे दूर किया है अंधकारका समूह जिनने, पातालसे शीघ्र ही नागोंके राजा कैलाश पर आए। जिनेन्द्रको नमस्कारकरि विधिपूर्वक समस्त मनोज्ञ द्रव्योंसे भगवानकी पूजाकरि रावणसे कहते भए–'हे भव्य ! तैंने भगवानकी स्तुति बहुत करी, अर जिनभक्तिके बहुत सुन्दर गीत गाए। सो हमको बहुत हर्ष उपज्या, हर्ष करि हमारा शरीर आनन्दरूप भया। हे राक्षसेश्वर ! धन्य है तू जो जिनराजकी स्तुति करै। तेरे भावकरि अबार हमारा आगमन भया है। मैं तेरेसे संतुष्ट भया, तू वर मांग। जो मनवांछित वस्तु तू मांगे सो दूं। जो वस्तु मनुष्योंको दुर्लभ है सो तुम्हें दूं। तब रावण कहते भए हे नागराज ! जिनवंदनातुल्य और कहा शुभ वस्तु है, सो मैं आपसे मांगू। आप सर्व

बात समर्थ मनवांछित देने लायक हैं। तब नागपति बोले—हे रावण! जिनेन्द्रकी वंदनाके तुल्य और कल्याण नाहीं। यह जिनभक्ति अराधी हुई मुक्तिके सुख देवै है। तातैं या तुल्य और कोई पदार्थ न हुआ न होयगा।' तब रावणने कही—हे महामते! जो इससे अधिक और वस्तु नाहीं तो मैं कहा याचूं?' तब नागपति बोले—'तातैं जो कहा सो सर्व सत्य है। जिनभक्तिसे सब कुछ सिद्ध होय है, याको कुछ दुर्लभ नाहीं। तुम सारिखे, मुझ सारिखे, अर इन्द्र सारिखे अनेक पद सर्व जिनभक्तिसे ही होय हैं। अर यह संसारके सुख अल्प हैं, विनाशीक हैं, इनकी क्या बात? मोक्षके अविनाशी जो अतींद्रीसुख वे भी जिनभक्तिकरि प्राप्त होय हैं। हे रावण! तुम यद्यपि अत्यन्त त्यागी हो, महा विनयवान बलवान हो, महाऐश्वर्यवान हो, गुणकरि शोभित हो तथापि मेरा दर्शन तुमको वृथा मत होय। तेरेसे प्रार्थना करूं हूं कि तू कुछ मांग। यह मैं जानूं हूं तू जाचक नाहीं, परन्तु मैं अमोघ विजयानामा शक्ति विद्या तुझै दूं हूं सो हे लंकेश! तू ले। हमारा स्नेह खण्डन मत कर। हे रावण! किसीकी दशा एकसी कभी नहीं रहती, संपत्तिके अनन्तर विपत्ति अर विपत्तिके अनन्तर सम्पत्ति होती है। जो कदाचित् मनुष्य शरीर है अर तुझपर विपत्ति पड़े तो यह शक्ति तेरे शत्रुको नाशनैहारी अर तेरी रक्षाकी करनहारी होयगी। मनुष्योंकी क्या बात, इससे देव भी डरे हैं। यह शक्ति अग्नि ज्वालाकरि मंडित विस्तीर्ण शक्तिकी धारनेहारी है। तब रावण धरणेन्द्रकी आज्ञा लोपनको असमर्थ होता हुआ शक्ति को ग्रहण करता भया, क्योंकि किसीसे कुछ लेना अत्यन्त लघुता है। सो इस बातसे रावण प्रसन्न नहीं भया। रावण अति उदारचित्त है। तब धरणेन्द्रसे रावणने हाथ जोड़ नमस्कार किया। धरणेंद्र आप अपने स्थानको गए। कैसे हैं धरणेंद्र? प्रकटा है हर्ष जिनके। रावण एक मास कैलाश पर रहकर भगवानके चैत्यालयोंकी महाभक्तिसे पूजाकरि अर बालीमुनिकी स्तुतिकरि अपने स्थानक गए।

बालीमुनिने जो कछुएक मनके क्षोभसे पापकर्म उपार्ज्या हुता सो गुरुवोंके निकट जाय प्रायश्चित्त लिया, शल्य दूरकर परम सुखी भए। जैसैं विष्णुकुमार मुनिने मुनियोंकी रक्षानिमित्त बालीका परा-

भव किया हुता अर गुरुसे प्रायश्चित्त लेय परम सुखी भए थे तैसैं बाली मुनिने चैत्यालयोंकी अर अनेक जीवोंकी रक्षा निमित्त रावणका पराभव किया, कैलाश थाम्भा, फिर गुरुपै प्रायश्चित्त लेय शल्य मेट परम सुखी भए। चारित्रसे, गुप्तिसे, धर्मसे, अनुप्रेक्षासे, समितिसे, परीषहोंके सहनेसे महासंवरको पाय कर्मोंकी निर्जराकरि बाली मुनि केवलज्ञानको प्राप्त भए। अष्टकर्मसे रहित होय तीन लोकके शिखर अविनाशी स्थानमें अविनाशी अनुपम सुखको प्राप्त भए। अर रावणने मनमें विचारा कि जो इंद्रियों को जीतैं तिनको मैं जीतिवे समर्थ नाहीं, तातैं राजाओंको साधुओंकी सेवा ही करना योग्य है। ऐसा जान साधुओंकी सेवामें तत्पर होता भया। सम्यग्दर्शनसे मंडित जिनेश्वरमें दृढ है भक्ति जिसकी, काम भोगमें अतृप्त, यथेष्ट सुखसे तिष्ठता भया।

यह बालीका चरित्र पुण्याधिकारी जीव, भावविषै तत्पर है बुद्धि जाकी भलीभांति सुनै सो कबहू अपमानकूं प्राप्त न होइ। अर सूर्य समान प्रतापकूं प्राप्त होय।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण भाषा वचनिकाविषै बाली मुनिका निरूपण करनेवाला नवमां पर्व पूर्ण भया ॥ ९ ॥

अथानन्तर गौतम स्वामी राजा श्रेणिकतैं कहै हैं—हे श्रेणिक! यह बालीका वृत्तांत तोकूं कह्या, अब सुग्रीव अर सुतारा राणीका वृत्तांत सुन। ज्योतिपुर नामा नगर, तहां राजा अग्निशिख, राणी ह्री, उनकी पुत्री सुतारा, जो सम्पूर्ण स्त्रीगुणोंसे पूर्ण, सर्व पृथ्वीमें रूप गुणकी शोभासे प्रसिद्ध, मानों कमलोंका निवास तज साक्षात् लक्ष्मी ही आई है। अर राजा चक्रांक, उसकी राणी अनुमति, तिनका पुत्र साहसगति, महादुष्ट। एक दिन अपनी इच्छासे भ्रमण करै था, सो ताने सुतारा देखी, देखकर काम शल्यसे अत्यन्त दुखीहोकर निरन्तर सुताराको मनमें धरता भया। दशा जाकी उन्मत्त है ऐसा, दूत भेज १६२
सुताराको याचता भया, अर सुग्रीव भी बारम्बार याचता भया। कैसी है वह सुतारा? महामनोहर है। तब राजा अग्निशिख सुताराका पिता दुविधामें पड़ गया कि कन्या किसको देनी। तब महाज्ञानी

मुनिको पूछी । मुनीन्द्रने कहा कि साहसगतिकी अल्प आयु है, अर सुग्रीवकी दीर्घ आयु है । तब अमृत समान मुनिके वचन सुनकर राजा अग्निशिख, सुग्रीवको दीर्घ आयुवाला जानकर अपनी पुत्रीका पाणिग्रहण कराया । सुग्रीवका पुण्य विशेष है जो सुताराकी प्राप्ति भई । तदनन्तर सुग्रीव अर सुतारा के अंग अर अंगद दोय पुत्र भए, अर वह पापी साहसगति निर्लज्ज सुताराकी आशा छोड़ै नाहीं । धिक्कार है कामचेष्टाको । वह कामाग्निकर दग्ध चित्तविषै ऐसा चितवै कि वह सुखदायिनी कैसे पाऊं? कब उसका मुख चंद्रमासे अधिक मैं निरखूं ? कब उस सहित नंदनवनविषै क्रीडा करूं ? ऐसा मिथ्या चितवन करता संता रूपपरवर्तिनी शेमुषी नामा विद्याके आराधनेको हिमवंत नामा पर्वतपर जायकरि अत्यन्त विषम गुफाविषै तिष्ठकर विद्याके आराधवेको आरम्भ करने लगा । जैसे दुखी जीव प्यारे मित्रको चितारै तैसे विद्याको चितारता भया ।

अथानन्तर रावण दिग्विजय करनेको निकस्या । वन पर्वतादिकरि शोभित पृथ्वी देखता अर समस्त विद्याधरोंके अधिपति अंतरद्वीपोंके वासियोंको अपने वश करता भया । अर तिनको आज्ञाकारी कर तिनहीके देशोंमें थापता भया । कैसा है रावण? अखण्ड है आज्ञा जाकी, अर विद्याधरोंमें सिंहसमान बड़े बड़े राजा महापराक्रमी रावणने वश किये । तिनको पुत्र समान जान बहुत प्रीति कर भया । महन्त पुरुषोंका यही धर्म है कि नमूतामात्रसे ही प्रसन्न होवें । राक्षसोंके वंशमें अथवा कपिवंशमें जे प्रचंड राजा हुते वे सर्व वश किए । बड़ी सेनाकरि संयुक्त आकाशके मार्ग गमन करता जो दशमुख, पवन समान है वेग जाका, उसका तेज विद्याधर सहिबेको असमर्थ भए । संध्याकार, सुवेल, हेमा, पूर्ण, सुयोधन, हंसद्वीप, बारिहल्लादि इत्यादि द्वीपोंके राजा विद्याधर नमस्कार कर भेंट ले आय मिले । सो रावणने मधुर वचन कह बहुत संतोषे, अर बहुत संपदाके स्वामी किए । जे विद्याधर बड़े २ गढ़ोंके निवासी हुते वे रावणके चरणारविंदको नमीभूत होय आय मिले, जो सार वस्तु थी सो भेंट करी । हे श्रेणिक ! समस्त बलोंविषै पूर्वोपार्जित पुण्यका बल प्रबल है, ताके उदयकरि कौन वश न होय ? सब

ही वश होय हैं।

अथानन्तर रथनूपुरका राजा जो इंद्र उसके जीतिवेको रावण गमनको प्रवरत्या। सो जहां पाताल लंकाविषै खरदूषण बहणेऊ है, वहां जाय डेरा किया। पाताललंकाके समीप डेरा भया। रात्रिका समय था, खरदूषण शयन करै था सो चंद्रनखा रावणकी बहिनने जगाया। पाताललंकासे निकसकरि रावणके निकट आया, रत्नोंके अर्घ देय महा भक्तिसे परम उत्साहकरि रावणकी पूजा करी। रावण ने भी बहणेऊपना के स्नेहकरि खरदूषणका बहुत सत्कार किया। जगतविषै बहिन बहणेऊ समान और कोई स्नेहका पात्र नाहीं। खरदूषणने चौदह हजार विद्याधर मनवांछित नाना रूपके धारनहारे रावण को दिखाए। रावण खरदूषणकी सेना देख बहुत प्रसन्न भए। आप समान सेनापति किया। कैसा है खरदूषण ? महा शूरवीर है। उसने अपने गुणोंसे सर्व सामंतोंका चित्त वश किया है। हिडंब, हैहिडिंब, विकट, त्रिजट, हयमाकोट, सुजट, टंक, किहकंधाधिपति, सुग्रीव, तथा त्रिपुर, मलय, हेमपाल कोल, वसुन्दर इत्यादिक अनेक राजा नानाप्रकारके वाहननिपर चढ़े, नानाप्रकार शस्त्र विद्याविषै प्रवीण, अनेक शस्त्रनके अभ्यासी तिनकरि युक्त, पाताललंकातैं खरदूषण रावणके कटकविषै आया ? जैसे पाताललोकसे असुरकुमारोंके समूह करि युक्त चमरेंद्र आवे। या भांति अनेक विद्याधर राजाओंके समूहकरि रावणका कटक पूर्ण होता भया। जैसे बिजली अर इन्द्रधनुषकर युक्त मेघमालानिके समूह तिनकर श्रावणमास पूर्ण होय। ऐसे एकहजार ऊपर अधिक अक्षोहिणी दल रावणके होय चुका। दिन दिन बढ़ता जाय है। अर हजार हजार देवनिकरि सेवायोग्य रत्न, नानाप्रकार गुणनिके समूहके धारण-हारे उनकर युक्त, अर चंद्रकिरण समान उज्ज्वल चमर जापर ढुरै हैं, उज्ज्वल छत्र सिरपर फिरै हैं, जाका रूप सुन्दर है, महाबाहु महाबली पुष्पक नामा विमानपर चढ़ा, सुमेरु समान स्थिर, सूर्यसमान ज्योति, अपने विमानादि बाहन सम्पदाकरि सूर्यमण्डलको आच्छादित करता हुवा इन्द्रका विध्वंस मनमें विचारकर रावणने प्रयाण किया। कैसा है रावण ? प्रबल है पराक्रम जाका, मानों आकाशको समुद्र

समान करता भया, देदीप्यमान जे शस्त्र, सोई भई कल्लोल, अर हाथी घोड़े प्यादे ये ही भए जलचर जीव, अर छत्र भंवर भए, अर चमर तुरंग भए, नानाप्रकारके रत्नोंकी ज्योति फैल रही है, अर चमरों के दण्ड मीन भए–'हे श्रेणिक! रावणकी विस्तीर्ण सेनाका वर्णन कहाँलग करिये, जिसको देखकर देव डरें तो मनुष्यनिकी बात कहा? इन्द्रजीत मेघनाद कुम्भकर्ण विभीषण खरदूषण निकुम्भ कुंभ इत्यादि बहुत सुजन रणमें प्रवीण, सिद्ध है विद्या जिनको, महाप्रकाशवन्त, शस्त्र शास्त्र विद्यामें प्रवीण हैं, जिनकी कीर्ति बड़ी है, महासेनाकरि युक्त, देवताओंकी शोभा को जीतते हुए रावणके संग चाले। विंध्याचल पर्वतके समीप सूर्य अस्त भया। मानों रावणके तेजकरि विलखा होय तेज रहित भया। वहां सेनाका निवास भया, मानो विंध्याचलने सेना सिरपर धारी है। विद्याके बलसे नाना प्रकारके आश्रय लिये। फिर अपनी किरणनिकरि अन्धकार के समूहकूं दूर करता संता चन्द्रमा उदय भया, मानों रावणके भयकरि रात्रि रत्नका दीपक लाई है। अर मानों निशा स्त्री भई, चांदनीकरि निर्मल जो आकाश सोई वस्त्र, उसको धरैं तारानिके जे समूह तेई सिरविषैं फूल गूंथे हैं, चन्द्रमा ही है वदन जाका, नाना प्रकारकी कथाकर तथा निद्राकर सेनाके लोकनिने रात्रि पूर्ण करी। फिर प्रभात के वादित्र बाजे, मंगल पाठ कर रावण जागे। प्रभात क्रिया करी, सूर्यका उदय भया, मानो सूर्य भुवन-विषैं भ्रमणकर किसी ठौर शरण न पाया तब रावणहीके शरण आया। पुनः रावण नर्मदाके तट आए। कैसी है नर्मदा? शुद्ध स्फटिक मणि समान है जल जाका, अर उसके तीर अनेक वनके हाथी रहैं हैं सो जलमें केलि करैं हैं, उसकर शोभायमान है। अर नानाप्रकारके पक्षियोंके समूह मधुर गान करे हैं सो मानों परस्पर संभाषण ही करैं हैं। फेन कहिए झागके पटल इन कर मंडित है तरंगरूप जे भौंह उनके विलास करि पूर्ण है। भंवर ही है नाभि जाके, अर चंचल जे मीन तेई हैं नेत्र जाके, अर सुन्दर जे पुलिन तेई हैं कटि जाके, नानाप्रकारके पुष्पनिकरि संयुक्त निर्मल जल ही है वस्त्र जाका, मानों साक्षात् सुन्दर स्त्री ही है। ताहि देखकर रावण बहुत प्रसन्न भए। प्रबल जे जलचर उनके

समूहकरि मण्डित है, गंभीर है, कहूंएक वेगरूप बहै है, कहूं एक मंदरूप बहै हैं, कहूं एक कुण्डलाकार बहै हैं, नानाचेष्टानिकरि पूर्ण ऐसी नर्मदाको देखकर कौतुकरूप भया है मन जाका सो रावण नदीके तीर उतरा। नदी भयानक भी है अर सुन्दर भी है।

अथान्तर माहिष्मती नगरीका राजा सहस्ररश्मि पृथ्वीविषैं महा बलवान मानों सहस्ररश्मि कहिये सूर्य ही हैं। उसके हजारों स्त्री, सो नर्मदाविषैं रावणके कटकके ऊपर सहस्ररश्मिने जलयंत्रकरि नदी का जल थांभ्या अर नदीके पुलिनविषैं नानाप्रकारकी क्रीडा करी। कोई स्त्री मान कर रही थी ताको बहुत शुश्रूषाकरि प्रसन्न करा, दर्शन स्पर्शन मान फिर मानमोचन प्रणाम परस्पर जलकेलि हास्य, नानाप्रकार पुष्पोंके भूषणनिके शृंगार इत्यादि अनेक स्वरूप क्रीडा करी। मनोहर है रूप जाका, जैसे देवियोंसहित इन्द्र क्रीडा करै तैसे राजा सहस्ररश्मिने क्रीड़ा करी। जे पुलिनके बालू रेतविषैं रत्नके मोतियोंके आभूषण टूटकर पड़े सो न उठाये, जैसे मुरझाई पुष्पोंकी मालाको कोई न उठावै। कइएक राणी चंदनके लेपकरि संयुक्त जलविषैं केलि करती भई सो जल धवल होगया। कईएक केसरिके कीचकरि जलको गाले हुए सुवर्णके समान पीत करती भई, कईएक ताम्बूलके रंगकरि लाल जे अधर तिनके प्रक्षालनिकरि नीरको अरुण करती भई, कईएक आंखोंके अंजन धोवनेकरि श्याम करती भई, सो क्रीडा करती जे स्त्री उनके आभूषणनिके सुन्दर शब्द, अर तीर विषै जे पक्षी, उनके सुन्दर शब्द राजाके मनको मोहित करते भये। अर नदीके निवासकी ओर रावणका कटक था सो रावण स्नानकरि पवित्र वस्त्र पहरि, नानाप्रकारके आभूषणनिकरि युक्त नदीके रमणीक पुलिनमें बालूका चौतरा बंधाय उसके ऊपर वैडूर्यमणियों के हैं दंड जिसके, ऐसा मोतियों की झालरी संयुक्त चंदोवा ताण, श्रीभगवान अरहंतदेवकी नाना प्रकार पूजा करै था, बहुत भक्तिसे पवित्रस्तोत्रों करि स्तुति करै था, सो उपरासका जलका प्रवाह आया, सो पूजामें विघ्न भया। नाना प्रकार की कलुषिता सहित प्रवाह वेग दे आया, तब रावण प्रतिमाजी को लेय खड़े भये, अर क्रोधकरि कहते भए–जो यह

क्या है सो सेवकने खबर दीनी कि हे नाथ ! यह कोई महाक्रीडावंत पुरुष सुन्दर स्त्रीनिके बीच परम उदयको धर नाना प्रकारकी लीला करै है, अर सामन्त लोक शस्त्रनिकूं धरे दूर २ खड़े हैं, नानाप्रकार जलके यंत्र बांधे उनसे यह चेष्टा भई है, अन्य राजाओंके सेना चाहिए तातैं उसके सेना तो शोभामात्र है अर उसके पुरुषार्थ ऐसा है जो और ठौर दुर्लभ है, बड़े २ सामंतोंसे उसका तेज न सहा जाय, अर स्वर्गविषैं इन्द्र है परन्तु यह तो प्रत्यक्ष ही इन्द्र देखा । यह वार्ता सुनकर रावण क्रोधको प्राप्त भए, भौंह चढ गई, आंख लाल हो गई, ढोल बाजने लगे, वीररसका राग होने लगा, नानाप्रकारके शब्द होय हैं घोड़े हींसैं हैं, गज गाजे हैं, रावणने अनेक राजाओंको आज्ञा करी कि यह सहस्ररश्मि दुष्टात्मा है इसे पकड़ लावो । ऐसी आज्ञाकरि आप नदीके तटपर पूजा करने लगे । रत्न सुवर्णके जे पुष्प उनको आदि देय अनेक सुन्दर जे द्रव्य उनसे पूजा करी । अर अनेक विद्याधरोंके राजा रावणकी आज्ञा आशिषकी नाईं माथे चढाय युद्धकूं चाले । राजा सहस्ररश्मिने परदलको आवता देखि स्त्रियोंको कहा कि तुम डरो मत, धीर्य बधाय आप जलसे निकसे । कलकलाट शब्द सुन, परदल आया जान, माहिष्मती नगरीके योधा सजकर हाथी, घोड़े, रथोंपर चढ़े । नानाप्रकारके आयुध धरे स्वामी धर्मके अत्यन्त अनुरागसे राजाके ढिग आए । जैसे सम्मेदशिखर पर्वतका एक ही काल छहों ऋतु आश्रय करैं तैसे समस्त योधा तत्काल राजापै आए । विद्याधरोंकी फौज आवती देखकर सहस्ररश्मिके सामंत जीतव्यकी आशा छोडकर धनव्यूह रचकर धनीकी आज्ञा विना ही लडनेको उद्यमी भए । जब रावणके योद्धा युद्ध करने लगे तब आकाशमें देवनिकी वाणी भई कि अहो (यह बड़ी अनीति है ये भूमिगोचरी अल्प बली विद्याबलकरि रहित माया युद्धकूं कहाँ जानैं ? इनसे विद्याधर मायायुद्ध करैं यह कहा योग्य है) अर विद्याधर घने यह थोड़े । ऐसे आकाशविषैं देवनिके शब्द सुनकर जे विद्याधर सत्पुरुष थे, लज्जवान होय भूमिमें उतरे, दोनों सेनाओंमें परस्पर युद्ध भया । रथोंके, हाथियोंके, घोडोंके, असवार तथा पियादे तलवार बाण गदा सेल इत्यादि आयुधोंकरि परस्पर युद्ध करने लगे, सो बहुत

युद्ध भया। परस्पर अनेक मारे गये, न्याय युद्ध भया, शस्त्रोंके प्रहारकरि अग्नि उठी, सहस्रशिमकी सेना रावणकी सेना करि कछुइक हटी तदि सहस्रशिम रथपर चढ़कर युद्धको उद्यमी भए। माथै मुकुट धरे बखतर पहरे धनुष को धारैं, अर अति तेजको धरैं विद्याधरोंके बलको देखकरि तुच्छमात्र भी भय न किया, तब स्वामीको तेजवंत देखि सेनाके लोग जे हटे हुते थे ते आगैं आय करि युद्ध करने लगे। दैदीप्यमान हैं शस्त्र जिनके, अर जे भूल गए हैं घावोंकी वेदना, ये रणधीर भूमिगोचरी राक्षसों की सेना में ऐसैं पड़े जैसैं माते हाथी समुद्रमें प्रवेश करें। अर सहस्रशिम अति क्रोधको करते हुए बाणोंके समूहकरि जैसै पवन मेघको हटावैं तैसैं शत्रुओंको हटावते भए। तदि द्वारपाल रावणसे कही-हे देव! देखो इसने तुम्हारी सेना हटाई है, यह धनुषका धारी रथपर चढ़ा जगतको तृणवत् देखे है, इसके बाणनिकरि तुम्हारी सेना एक योजन पीछे हटी है। तब रावण सहस्रशिमको देखि आप त्रैलोक्यमंडन हाथीपर सवार भया। रावणको देखकरि शत्रु भी डरे। रावण बाणोंकी वर्षा करता भया। सहस्रशिमको रथसे रहित किया। तब सहस्रशिम हाथीपर चढ़करि रावणके सन्मुख आया अर बाण छोड़े सो रावणके बक्तरको भेदि अंगविषै चुभै। तब रावणने बाण देहसे काढि डारे। सहस्रशिमने हंसकर रावणसों कहा–अहो रावण! तू बड़ा धनुषधारी कहावै है, ऐसी विद्या कहांतैं सीखी, तुझै कौन गुरु मिल्या, पहिले धनुषविद्या सीख, फिर हमसे युद्ध करि। ऐसे कठोर शब्द श्रवणतैं रावण क्रोधको प्राप्त भया। सहस्रशिमके केशनिमैं सेलकी दीनी, तब सहस्रशिमके रुधिरकी धारा चली, जाकरि नेत्र घूमने लगे। पहले अचेत होय गया पीछे सचेत होय आयुध पकडने लग्या तदि रावण उछलकरि सहस्रशिमपर आय पड़े। अर जीवता पकड़ लिया, बांधकर अपने स्थान ले आए। ताहि देखि सब विद्याधर आश्चर्यको प्राप्त भए कि सहस्रशिम जैसे योधाकों रावणने पकड्या। कैसे हैं रावण? धनपति यक्षके जीतनहारे, यमके मान मर्दन करनहारे, कैलाशके कम्पावनहारे। सहस्रशिम का यह वृत्तांत देखि सहस्रशिम जो सूर्य सो भी मानो भय करि अस्ताचलको प्राप्त भया, अन्धकार

फैल गया। भावार्थ—रात्रिका समय भया। भला बुरा दृष्टिमें न आवै। तब चन्द्रमाका बिंब उदय भया। सो अन्धकार के हरणेको प्रवीण, मानों रावणका निर्मल यश ही प्रकटया है। युद्धविषै जे योधा घायल भये थे तिनका वैद्योंकरि यत्न कराया, अर जो मूवे थे तिनको अपने बंधुवर्ग रणखेतसों ले आये तिनकी क्रिया करी। रात्रि व्यतीत भई, प्रभातके वादित्र बाजने लगे, फिर सूर्य रावणकी वार्ता जानने के अर्थि राग कहिए ललाईको धारता हुआ कम्पायमान उदय भया। सहस्ररश्मिका पिता राजा शतबाहु जो मुनिराज भए थे, जिनको जंघाचारण ऋद्धि थी, वे महातपस्वी चन्द्रमाके समान कांत, सूर्य समान दीप्तिमान, मेरुसमान स्थिर, समुद्र सारिखे गंभीर, सहस्ररश्मिको पकड्या सुनकर जीवनकी दयाके करणहारे परम दयालु शांतचित्त जिनधर्मी जान रावणपै आये। रावण मुनिको आवते देख उठ सामने जाय पायन पड़े, भूमिमें लग गया है मस्तक तिनका, मुनिको काष्ठके सिंहासनपर विराजमान करि रावण हाथ जोड़ नम्रीभूत होय भूमिविषै बैठे। अति विनयवान होय मुनिसों कहते भए—हे भगवन्! कृपानिधान! तुम कृतकृत्य, तुम्हारा दर्शन इन्द्रादिक देवोंको दुर्लभ है, तुम्हारा आगमन मेरे पवित्र होनेके अर्थि है। तब मुनि इसको शलाका पुरुष जानि प्रशंसाकरि कहते भए। हे दशमुख! तू बड़ा कुलवान बलवान विभूतिवान देवगुरुधर्मविषै भक्तिभावयुक्त है। हे दीर्घायु शूरवीर क्षत्रियों की यही रीति है जो आपसे लड़ै उसका पराभव कर उसे वश करैं। सो तुम महाबाहु परम क्षत्री हो, तुमतैं लडबेको कौन समर्थ है? अब दयाकर सहस्ररश्मिको छोडो। तब रावण मंत्रियों सहित मुनिको नमस्कार करि कहते भये। हे नाथ! मैं विद्याधर राजानिको वश करनेको उद्यमी भया हूं। लक्ष्मी कर उन्मत्त रथनूपुरका राजा इन्द्र तानैं मेरे दादेका बडा भाई राजा माली युद्धमें मार्या है, तासूं हमारा द्वेष है। सो मैं इन्द्र ऊपर जाय था। मार्गमें रेवा कहिये नर्मदा उसपर डेरा भया सो पुलिन पर बालूके चौतरे पर पूजा करै था सोई इसने उपरासकी, अर जलयंत्रोंकी केलि करी, सो जलका वेग निवासको आया। सो मेरी पूजामें विघ्न भया, तातैं यह कार्य किया है। विना अपराध मैं द्वेष न

करूं, अर मैं इनके ऊपर गया तब भी इनने क्षमा न कराई कि प्रमादकरि विना जाने मैंने यह कार्य किया है, तुम क्षमा करो। उलटा मानके उदयकरि मेरेसे युद्ध करने लग्या। अर कुवचन कहे। कारण ऐसा भया, जो मैं भूमिगोचरी मनुष्योंको जीतने समर्थ न भया तो विद्याधरोंको कैसे जीतूंगा। कैसे हैं विद्याधर? नानाप्रकारकी विद्याकरि महापराक्रमवंत हैं। तातैं जो भूमिगोचरी मानी हैं, तिनको प्रथम वश करूं, पीछैं विद्याधरोंको वश करूं। अनुक्रमसे जैसे सिवान चढे मंदिरमैं जाइए हैं तातैं इनको वश किया, अब छोडना न्याय ही है। फिर आपकी आज्ञा समान और क्या? कैसे हो आप? महापुण्यके उदयतैं होय है दर्शन जाका। ऐसे वचन रावणके सुन इन्द्रजीतने कही है:—नाथ! आपने बहुत योग्य वचन कहे। ऐसे वचन आप बिना कौन कहै। तदि रावणने मारीच मंत्रीको आज्ञा करी कि सहस्ररश्मिको छुडाय महाराजके निकट ल्यावो। तदि मारीचने अधिकारीको आज्ञा करी। सो आज्ञा प्रमाण जो नागी तलवारनिके हवाले था सो ले आये। सहस्ररश्मि अपने पिता जो मुनि तिनको नमस्कार करि आय बैठ्या। रावणने सहस्ररश्मिका बहुत सत्कार करि बहुत प्रसन्न होय कह्या हे महाबल! जैसैं हम तीनो भाई तैसैं चौथा तू। तेरे सहायकरि रथनूपुरका राजा इन्द्र भूमतें कहावै है, ताहि जीतूंगा। अर मेरी राणी मंदोदरी ताकी लहुरी बहिन स्वयंप्रभा सो तुझै परणाऊंगा। तब सहस्ररश्मि बोले धिक्कार है इस राज्यको। यह इन्द्रधनुषसमान क्षणभंगुर है। अर विषयनिको धिक्कार है। ये देखने मात्र मनोज्ञ हैं, महा दुखरूप हैं। अर स्वर्गको धिक्कार, जो अव्रत असंयमरूप है। अर मरणके भाजन इस देहको भी धिक्कार, अर मोकों धिक्कार, जो एते काल विषयासक्त होय इतने काल कामादिक बैरीनि करि ठगाया। अब मैं ऐसा करूं जाकरि बहुत संसार वनविषै भ्रमण न करूं। अत्यन्त दुःखरूप जो चारगति तिनमैं भ्रमण करता बहुत थक्या। अब भवसागरमैं जासों पतन न होय सो
करूंगा। तब रावण कहते भए—यह मुनिका व्रत वृद्धनिकूं शोभै है। हे भव्य! तू तो नवयौवन है। तब सहस्ररश्मिने कहा—'कालके यह विवेचन नाहीं जो वृद्धहीको ग्रसै, तरुणको न ग्रसै। काल सर्व-

भक्षी है, बाल वृद्ध युवा सबहीको ग्रसै है। जैसे शरदका मेघ क्षणमात्रमें विलायजाय तैसें यह देह तत्काल विनसै है। हे रावण ! जो इन भोगनिहीके विषय सार होय तौ महापुरुष काहेको तजैं ? उत्तम है बुद्धि जिनकी ऐसे मेरे यह पिता इन्होंने भोग छोड़ योग आदरचा। सो योग ही सार है। यह कह

कर अपने पुत्र को राजदेय रावणसों क्षमा कराय पिता निकट जिनदीक्षा आदरी। अर राजा अरण्य, अयोध्याका धनी सहस्ररश्मिका परममित्र है सो उनसे पूर्वबचन था—जो हम पहिले दीक्षा धरेंगे तो तुम्हें खबर करेंगे। अर उनने कही हुती—हम दीक्षा धरेंगे तो तुम्हें खबर करेंगे, सो उनपै वैराग्यके समाचार भेजे। भले मनुष्योंने राजा सहस्ररश्मिका वैराग्य होनेका वृत्तांत राजा अरण्यसे कह्या, सो सुनकर पहिले तो सहस्ररश्मिका गुण स्मरणकरि आंसू भरि विलाप किया, फिर विषादको तजिकर अपने समीपवर्ती लोकनिकूं महा बुद्धिमान कहते भए जो रावण वैरीका वेषकरि उनका परम मित्र भया, जो ऐश्वर्यके पींजरे विषै राजा रुक रहे थे, विषयोंकर मोहित था चित्त जिनका, सो पींजरे तैं छुडाया। यह मनुष्यरूपी पक्षी, मायाजालरूप पींजरैमें पड्या है, सो परम हितू ही छुडावै है। माहिष्मती नगरीका धनी राजा सहस्ररश्मि धन्य है जो रावण रूप जहाजको पायकरि संसार रूप समुद्रको तिरैगा। कृतार्थ भया—अत्यन्त दुखका देनहारा जो राजकाज महापाप, ताहि तजकर जिनराजका व्रत लेनेको उद्यमी भया। या भांति मित्रकी प्रशंसाकरि आप भी लघु पुत्रको राजदेय बड़े पुत्र सहित राजा अरण्य मुनि भए। हे श्रेणिक ! कोई एक उत्कृष्ट पुण्यका उदय आवै तब शत्रुका अथवा मित्रका कारण पाय जीवको कल्याणकी बुद्धि उपजै, अर पापकर्मके उदयकरि दुर्बुद्धि उपजै। जो कोई प्राणीको धर्मके मार्ग में लगावे सोई परम मित्र है अर जो भोग सामग्रीमें प्रेरै सो परम वैरी है, अस्पृश्य है। हे श्रेणिक ! जो भव्य जीव यह राजा सहस्ररश्मिकी कथा भाव धर सुने सो मुनिव्रतरूप संपदाको प्राप्त होयकरि परम निर्मल होय। जैसें सूर्यके प्रकाशकरि तिमिर जाय तैसें जिनवाणीके प्रकाशकरि मोहतिमिर जाय।

इति श्रीरविषेणाचार्य विरचित महापद्मपुराण भाषावचनिकाविषै सहस्ररश्मि अर अरण्यके वैराग्य निरूपण करन वाला दसवां पर्व पूर्ण भया।१०।

अथानन्तर रावणने जे जे पृथ्वीविषै मानी राजा सुने ते ते सब नवाए, अपने वश किये, अर जो अपने आप आयकरि मिले तिनपर बहुत कृपाकरी। अनेक राजानिकरि मंडित सुभूम चक्रवर्तीकी नाईं पृथ्वी विषै विहार किया। नाना देशनिके उपजे, नानाभेषके धारणहारे, नानाप्रकार आभूषणनिके पहरन हारे, नानाप्रकारकी भाषाके बोलनहारे, नानाप्रकारके वाहनोंपर चढे, नानाप्रकारके मनुष्यनिकरि मंडित अनेक राजा तिन सहित दिग्विजय करता भया। ठौर २ रत्नमयी सुवर्णमयी अनेक जिन मंदिर कराए, अर जीर्ण चैत्यालयनिका जीर्णोद्धार कराया, देवाधिदेव जिनेंद्रदेवकी भावसहित पूजाकरी, ठौर २ पूजा कराई। जो जैनधर्मके द्वेषी दुष्टमनुष्य हिंसक थे तिनको शिक्षा दीनी, अर दरिद्रीनिकों दयाकरि धनकरि पूर्ण किया, अर सम्यग्दृष्टि श्रावकनिका बहुत आदर किया। साधर्मीनिपर है वात्सल्य भाव जाका, अर जहाँ मुनि सुने तहाँ जाय भक्तिकरि प्रणाम करै, जे सम्यक्त्व रहित द्रव्यलिंगी मुनि अर श्रावक हुते तिनकी भी सुश्रुषा करी, जैनीमात्रका अनुरागी उत्तर दिशाको दुस्सह प्रताप प्रकट करता संता विहार करता भया। जैसे उत्तरायणके सूर्यका अधिक प्रताप होय तैसैं पुण्यकर्मके प्रभाव करि रावणका दिन दिन अधिक तेज होता भया।

अथानंतर रावणने सुनी कि राजपुरका राजा बहुत बलवान है, अतिअभिमानको धरता थका किसीको प्रणाम नाहीं करै है, अर जन्महीतैं ही दुष्टचित्त है, मिथ्यामार्गकरमोहित है, अर जीवहिंसारूप यज्ञमार्गविषै प्रवर्त्या है। तदि यज्ञका कथन सुन राजा श्रेणिकने गौतमस्वामीसे कह्या हे प्रभो! रावणका कथन तो पीछे कहिये, पहिले यज्ञ की उत्पत्ति कहो। यह कौन वृत्तांत है जामें प्राणी जीवघातरूप घोर कर्ममें प्रवरतै है। तदि गणधरने कही—'हे श्रेणिक! अयोध्याविषै इक्ष्वाकुवंशी राजा ययाति ताकी राणी सुरकांता अर पुत्र वसु था, सो जाब पढनेयोग्य भया तब क्षीरकदंब ब्राह्मणपै पढनेको सौंप्या। क्षीरकदंब की स्त्री स्वस्तिमती थी। अर एक नारद ब्राह्मण देशांतरी धर्मात्मा, सो क्षीर कदंबपै पढै, अर क्षीरकदबका पुत्र पर्वत महापापी सोहू पढे। क्षीरकदंब अति धर्मात्मा, सर्वशास्त्रनिमें प्रवीण, शिष्यनिकूं

सिद्धांत तथा क्रियारूप ग्रंथ तथा मंत्रशास्त्र काव्य व्याकरणादि अनेक ग्रंथ पढावैं। एक दिन नारद, वसु अर पर्वत–इन तीनों सहित क्षीरकदंब वनविषै गए। तहां चारणमुनि शिष्यनि सहित बिराजे हुते। सो एक मुनिने कह्या ये चार जीव हैं–एक गुरु, तीन शिष्य। तिनमैंतैं एक गुरु एक शिष्य ये दोयतो सुबुद्धि हैं, अर दो शिष्य कुबुद्धि हैं। ऐसे शब्द सुनिकरि क्षीरकदंब संसारतैं अत्यन्त भयभीत भए, शिष्यनिको तो सीख दीनी सो अपने २ घर गए, मानों गायके बछड़े बंधनसे छूटे, अर क्षीरकदंबने मुनिपै दीक्षा धरी। जब शिष्य घर आए तदि क्षीरकदंबकी स्त्री स्वस्तिमती पर्वतको पूछती भई-तेरा पिता कहां है? तू अकेला ही घर क्यों आया? तदि पर्वतने कही हमको तो पिताजीने सीख दीनी। अर कह्या––हम पीछेसे आवैं हैं। यह वचन सुन स्वस्तिमती महाशोकवती होय पृथ्वीपर पड़ी। अर रात्रिविषै चकवीकी नाईं दुख-करि पीडित विलाप करती भई–हाय हाय! मैं मंदभागिनी प्राणनाथ बिना हती गई। किसी पापीने उनको मारचा अथवा किसी कारणकरि देशांतरको उठ गए, अथवा सर्वशास्त्रविषै प्रवीण हुते सो सर्वपरिग्रहको त्यागकरि वैराग्य पाय मुनि होयगए। या भांति विलाप करते रात्रि पूर्ण भई। जब प्रभात भया तब पर्वत पिताकों ढूंढने गया। उद्यानमें नदीके तटपर मुनियोंके संघसहित श्रीगुरु विराजे हुते, तिनके समीप विनयसहित पिता बैठ्या देख्या। तदि पाछा जायकर मातासों कही कि–हे माता! हमारा पिता तो मुनियोंने मोह्या है। सो नग्न होयगया है। तब स्वस्तिमती निश्चय जानकरि पति के वियोगतें अति दुखी भई। हाथनिकरि उरस्थलको कूटती भई, अर पुकारकर रोवती भई। सो नारद महाधर्मात्मा यह वृत्तांत सुनकरि स्वस्तिमतीपै शोकका भरचा आया। ताके देखकरि अत्यन्त रोवने लगी, अर सिर कूटती भई। शोकविषै अपनेको देखकरि शोक अतीव बढै है। तदि नारदने कही–हे माता काहेको वृथा शोक करो हो। वे धर्मात्मा जीव पुण्याधिकारी, सुन्दर है चेष्टा जिनकी, जीतव्यको अस्थिर जानि तप करनेको उद्यमी भए हैं सो निर्मल है बुद्धि जिनकी, अब शोक किएतैं पीछे घर न आवैं। या भांति नारदने संबोधी तदि किंचित् शोक मंद भया, घरविषै तिष्ठी। महा दुःखित भरतारकी स्तुति

भी करै अर निन्दा भी करै। यह क्षीरकदंबके वैराग्यका वृत्तान्त सुन राजा ययाति तत्वके वेत्ता हू वसु पुत्रको राज देय महामुनि भए। वसुका राज्य पृथ्वीविषै प्रसिद्ध भया। आकाशतुल्य स्फटिक मणि ताके सिंहासनके पाये बनाए। ता सिंहासन पर तिष्ठै, सो लोक जानै कि राजा सत्यके प्रतापकरि आकाश-विषै निराधार तिष्ठै है।

अथानन्तर हे श्रेणिक! एक दिन नारदके अर पर्वतके शास्त्र-चर्चा भई। तदि नारदने कही कि भगवान वीतरागदेवने धर्म दोयप्रकार प्ररूप्या है:—एक मुनिका, दूसरा गृहस्थीका। मुनिका महाव्रत-रूप है, गृहस्थीका अणुव्रतरूप है। जीवहिंसा, असत्य, चोरी, कुशील, परिग्रह इनका सर्वथा त्याग सो तो पंच महाव्रत, तिनकी पच्चीस भावना, यह मुनिका धर्म है। अर इन हिंसादिक पापोंका किंचित् त्याग सो श्रावकके व्रत हैं। श्रावकके व्रतनिमें पूजा दान शास्त्रविषै मुख्य कह्या है। पूजाका नाम यज्ञ है (अजैर्यष्टव्यं)। याँ शब्दका अर्थ मुनिने याभांति कह्या है जो बोनेसे न ऊगें, जिनमें अंकुरशक्ति नाहीं, ऐसे शालिधान यव, तिनका विवाहादिक क्रियानिविषै होम करिए। यह भी आरंभी श्रावककी रीति है। ऐसे नारदके बचन सुन पापी पर्वत बोला:—अज कहिये छेला (बकरा), तिनका आलंबन कहिये हिंसन, ताका नाम यज्ञ है। तदि नारद कोपकरि दुष्ट पर्वतसों कहते भये:—हे पर्वत! ऐसे मत कहै, महा भयंकरवेदना है जाविषै, ऐसे नरकमें तू पड़ेगा। दया ही धर्म है, हिंसा पाप है। तब पर्वत कहने लाग्या मेरा तेरा न्याय राजा वसुपै होयगा। जो झूठा होयगा ताकी जिह्वा छेदी जायगी। या भांति कहकर पर्वत मातापै गया। नारदकै अर याकै जो विवाद भया सो सर्व वृत्तांत मातासों कह्या। तदि माताने कह्या कि तू झूठा है। तेरा पितासों हमने व्याख्यान करते अनेकबार सुन्या है जो अज—बोई हुई न उगै, ऐसी पुरानी शालि तथा पुराना यव तिनका नाम है, छेलेका नाहीं। जीवनिका भी कभी होम किया जाय है? तू देशांतर जाय मांसभक्षणका लोलुपी भया है। तातैं मानके उदयकरि झूठ कह्या, सो तुझै दुःखका कारण होयगा। हे पुत्र! निश्चय सेती तेरी जिह्वा छेदी जायगी। मैं पुण्यहीन अभा-

गिनी पति अर पुत्ररहित भई कथा करूंगी ? याभांति पुत्रसों कहकरि वह पापिनी विचारती भई कि राजा वसुकै गुरुदक्षिणा हमारी धरोहर है। ऐसा जानि अति व्याकुल भई वसुके समीप गई। राजा ने स्वस्तिमतीको देखि बहुत विनय किया, सुखासन बैठाई। हाथ जोड़ि पूछता भया हे माता ! तुम आज दुखित दीखो हो, जो तुम आज्ञा करो सोही करूं ? तदि स्वस्तिमती कहती भई:—हे पुत्र ! मैं महा-दुःखिनी हूं। जो स्त्री अपने पतिकरि रहित होय ताकों काहेका सुख ? संसार में पुत्र दोय भांतिके हैं। एक पेटका जाया एक शास्त्रका पढाया। सो इनमें पढाया पुत्र विशेष है। एक समल है दूसरा निर्मल है। मेरे धनीके तुम शिष्य हो, तुम पुत्रते हू अधिक हो। तुम्हारी लक्ष्मी देखकरि मैं धीर्य धरूं हूं। तुम कही थी—माता दक्षिणा लेवो। मैं कही समय पाय लूंगी। यह वचन याद करो। जे राजा पृथ्वीके पालनमें उद्यमी हैं ते सत्य ही कहैं हैं। अर जे ऋषि जीवदयाके पालनमें तिष्ठै हैं ते भी सत्य ही कहैं हैं। तू सत्यकर प्रसिद्ध है। मोकों दक्षिणा देवो। या भांति स्वस्तिमतीने कह्या। तदि राजा विनयकरि नम्रीभूत होय कहते भये—हे माता ! तिहारी आज्ञातें जो नाहीं करने योग्य काम है सो भी मैं करूं। जो तिहारे चित्तमें होय सो कहो। तब पापिनी ब्राह्मणीने नारद अर पर्वतके विवादका सर्व वृत्तांत कह्या, अर कह्याः—मेरा पुत्र सर्वथा झूठा है, परंतु याके झूठको तुम सत्य करो। कारण ताका मानभंग न होय। तदि राजाने यह अयोग्य जानते हुए भी ताकी बात दुर्गतिकाकारण, प्रमाण करी। तदि वह राजाको आशीर्वाद देय घर आई। बहुत हर्षित भई। दूजे दिन प्रभात ही नारद अर पर्वत राजाके समीप आए। अनेक लोक कौतूहल देखनेको आए। सामंत मंत्री, देशके लोग बहुत आय भेले भए। तदि सभाके मध्य नारद पर्वत दोऊनिमें बहुत विवाद भया। नारद तो कहै अज शब्दका अर्थ अंकुर-शक्तिरहित शालि है। अर पर्वत कहै पशु है। तदि राजा वसुको पूछ्या। तुम सत्यवादीनिमें प्रसिद्ध हो जो क्षीरकदंब अध्यापक कहते हुते सो कहो। तदि राजा, कुगतिको जानहारा, कहता भया जो पर्वत कहै है सोई क्षीरकदंब कहते हुते। याभांति कहते ही सिंहासनके स्फटिकके पाए टूट गये, सिंहासन भूमिमें

गिर पड्या। तदि नारदने कह्या, हे वसु ! असत्यके प्रभावतैं तेरा सिंहासन डिगा। अबहू तुमकू सांच कहना योग्य है। तदि मोहके मदकरि उन्मत्त भया यह ही कहता भया–जो पर्वत कहै सो सत्य है। तदि महापापके भारकरि हिंसामार्गके प्रवर्तनतैं तत्काल ही सिंहासनसमेत धरतीमें गडि गया। राजा मरकरि सातवें नरक गया। कैसा है नरक ? अत्यंत भयानक है वेदना जहां। तदि राजा वसुको मूवा देखि सभाके लोग वसु अर पर्वतको धिक्कार धिक्कार कर कहते भए। अर महा कलकलाट शब्द भया। दयाधर्म उपदेशकरि नारदकी बहुत प्रशंसा भई, अर सर्व कहते भये (यतो धर्मस्ततो जयः) पापी पर्वत हिंसाके उपदेशकरि धिक्कारदंडको प्राप्त भया। पापी पर्वत देशांतरोमें भ्रमण करता संता हिंसामई शास्त्रकी प्रवृत्ति करता भया, आप पढै औरनिको पढावै। जैसैं पतंग दीपकमें पडै तैसैं कई एक बहिरमुख जीव कुमार्गमें पड़े। अभक्ष्यका भक्षण, अर न करनेयोग्य काम करना, ऐसा लोकनिको उपदेश दिया, अर कहता भया कि यज्ञहीके अर्थ ये पशु बनाये हैं, यज्ञ स्वर्गका कारण है। तातैं जो यज्ञमें हिंसा होय सो हिंसा नाहीं। अर सौत्रामणिनाम यज्ञके विधानकरि सुरापानका हू दूषण नाहीं। अर गोयज्ञ नाम यज्ञ विषै अगम्यागम्यहू (परस्त्रीसेवन भी) करै है। ऐसा पर्वतने लोकनिको हिंसादिमार्गका उपदेश दिया। आसुरी मायाकरि जीव स्वर्ग जाते दिखाये। कैएक क्रूर जीव कुकर्ममें प्रवर्तकरि कुगतिके अधिकारी भये। हे श्रेणिक ! यह हिंसायज्ञकी उत्पत्तिका कारण कह्या। अब रावणका वृत्तांत सुनो।

रावण राजपुर गए, तहां राजा मरुत हिंसाकर्ममें प्रवीण यज्ञशालाविषै तिष्ठै था। संवर्तनामा ब्राह्मण यज्ञ करावै था, तहां पुत्रदारादिसहित अनेक विप्र धनके अर्थी आए हुते और अनेक पशु होम निमित्त लाए। ता समय अष्टम नारद पदवीधर बड़े पुरुष आकाशमार्गतैं आय निकसे। बहुत लोकनिका समूह देख आश्चर्य पाय चित्तमें चितवते भए कि यह नगर कौनका है और यह दूरपर सेना कौनकी पड़ी है। अर नगरके समीप एते लोग किस कारण एकत्र भए हैं। ऐसा मनमें विचार आकाशतैं भूमिपर उतरे।

अथानन्तर यह बात सुन राजा श्रेणिक गोतमस्वामीको पूछते भए हे भगवन् ! यह नारद कौन है ? यामें कैसे कैसे गुण अर याकी उत्पत्ति किह भांति है ? तदि गणधरदेव कहते भए। हे श्रेणिक! एक ब्रह्मरुचि नामक ब्राह्मण था, ताके कुरमी नामा स्त्री, सो ब्राह्मण तापसके व्रत धरि वनमें जाय कंदमूल फल भक्षण करै। ब्राह्मणी भी संग रहै। ताको गर्भ रह्या। तहां एकदिन मार्गके वशतैं कुछ संयमी महामुनि आए। क्षणएक विराजे। ब्राह्मणी अर ब्राह्मण समीप आय बैठे। ब्राह्मणी गर्भिणी, पांडुर है शरीर जाका, गर्भके भारकरि दुखित सांस लेती मानों सर्पणी ही है, ताकों देखिकरि मुनिको दया उपजी। तिनमैंसैं बड़े मुनि बोले:—देखो यह प्राणी कर्मके वशकरि जगतविषै भ्रमै है। धर्मकी बुद्धिकरि कुटुम्बको तजिकरि संसारसागरतैं तरणेके अर्थि तो वनविषै आया। सो हे तापस! तैंने क्या दुष्टकर्म किया ? स्त्री गर्भवती करी। तेरेमें अर गृहस्थीमें कहा भेद है ? जैसे वमन किया जो आहार ताकूं मनुष्य न भखै तैसैं विवेकी पुरुष तजे हुए कामादिकनिकों फिर नाहीं आदरै। जो कोई भेष धरै अर स्त्रीका सेवन करै सो भयानक वनमें स्यालिनी होय अनेक कुजन्म पावै। नरकनिगोदमें पडै है। जो कोई कुशील सेवता सर्व आरम्भनिमें प्रवर्त्या मदोन्मत्त आपको तापसी मानै है सो महा अज्ञानी है। यह कामसेवन ताकरि दग्ध दुष्टचित्त जो दुरात्मा, आरम्भविषै प्रवर्तै ताकै तप काहेका ? कुदृष्टि कर गर्वित भेषधारी विषयाभिलाषी जो कहै मैं तपसी हूं, सो मिथ्यावादी है। काहेका व्रती ! सुखसों बैठना, सुखसूं सोवना, सुखसूं आहार विहार करना, ओढना बिछावना आदि सब काज करै, अर आपको साधु मानै सो मूर्ख आपको ठगै है। बलता जो घर तहांतैं निकसे फिर ताहीमैं कैसैं प्रवेश करे ? अर जैसैं छिद्र पाय पिंजरेसे निकस्या पक्षी भी फिर आपको पिंजरेविषै नाहीं डारै, तैसैं विरक्त होय फिर कौन इन्द्रीनिके वश परै ? जो इन्द्रीनिके वश होय सो लोकविषै निंदा योग्य है। आत्मकल्याण को न पावै है। सर्व परिग्रह के त्यागी मुनिनिको एकाग्रचित्त कर एक आत्मा ही ध्यावने योग्य है। सो तुम सारिखे आरंभी तिन करि आत्मा कैसे ध्याया जाय ? प्राणीनिके परिग्रहके प्रसंगकरि राग

द्वेष उपजै है, रागकरि काम उपजै है, द्वेषकरि जीवहिंसा होय है, कामक्रोध करि पीडित जो जीव ताके मनको मोह पीडै है। मूर्खके कृत्य अकृत्यविषै विवेकरूप बुद्धि न होय। जो अविवेकतैं अशुभ कर्म उपारजै है सो घोरसंसारसागरमें भ्रमै है। यह संसर्गके दोष जानकरि जे पंडित हैं ते शीघ्र ही वैरागी होय हैं। आपकरि आपकों जानि विषयवासनातैं निवृत्त होय परमधामको पावै है। या भांति परमार्थरूप उपदेशनिके वचननिकरि महामुनिने संबोध्या। तदि ब्राह्मण ब्रह्मरुचि निरमोही होय मुनि भया। कुरमी नामा स्त्रीका त्यागकरि गुरुके संग ही विहार किया। गुरुमें है धर्मराग जाके अर वह ब्राह्मणी कुरमी शुद्ध है बुद्धि जाकी सो पापकर्मतें निवृत होय श्रावकके व्रत आदरे। जान्या है रागादिकके वशतैं संसारका परिभ्रमण जानैं, सो कुमार्गका संग छोड्या। जिनराजकी भक्तिविषै तत्पर होय भरताररहित अकेली महासती सिंहनीकी नाईं महावनविषै भ्रमै। दसवें महीने पुत्रका जन्म भया। तदि वाकों देखकरि वह महासती ज्ञानक्रियाकी धरणहारी चित्तविषै चिंतवती भई जो यह पुत्र परिवारका संबंध महा अनर्थका मूल मुनिराजने कहा हुता सो सत्य है। तातैं मैं या पुत्रका प्रसंगका परित्यागकरि आत्मकल्याण करूं। अर यह पुत्र महा भाग्यवान है याके रक्षक देव हैं, याने जे कर्म उपारजे हैं तिनका फल अवश्य भोगैगा। वनमें तथा समुद्रविषै अथवा वैरियोंके वशविषै पड्या जो प्राणी ताकी पूर्वोपार्जित कर्म ही रक्षा करै है, और कोऊ नाहीं। अर जाकी आयु क्षीण होय है सो माता की गोद विषै बैठा ह मृत्युके वश होय है। ये सब संसारी जीव कर्मोंके आधीन हैं। भगवान सिद्ध परमात्मा कर्मकलंकरहित हैं, ऐसा जान्या है तत्वज्ञान जानैं, सो महानिर्मल बुद्धिकरि बालककों वनविषै तजकरि यह ब्राह्मणी विकल्परूप जो जडता ताकरि रहित अलोकनगरविषै आई। जहाँ इन्द्रमालिनी नामा आर्या अनेक आर्यानिकी गुरुनी हुती तिनके समीप आर्या भई, सुन्दर है चेष्टा जाकी।

अथान्तर आकाशके मार्ग जृंभ नामा देव जाता हुता, सो पुण्याधिकारी रुदनाविरहित जो बालक ताहि देख्या। दयावान होय उठाय लिया, बहुत आदरतैं पाल्या, अनेक आगम अध्यात्मशास्त्र पढाए, तातैं

सिद्धांतका रहस्य जानने लग्या, महा पंडित भया, आकाशगामिनी विद्या हू सिद्ध भई, यौवनको प्राप्त भया, श्रावकके वृत धारे, शीलवृत विषै अत्यन्त दृढ़ अपने माता पिता जे आर्यिका मुनि भये हुते, तिनकी वंदना करै। कैसा है नारद? सम्यग्दर्शनविषै तत्पर, ग्यारमी प्रतिमाके क्षुल्लक श्रावकके वृत लेय विहार किया, परन्तु कर्मके उदयतें तीव्र वैराग्य नाहीं। न गृहस्थी न संयमी। धर्मप्रिय है, अर कलह भी प्रिय है। वाचालपनेमें प्रीति है, गायन विद्यामें प्रवीण अर राग सुननै विषै विशेष अनुरागवाला है मन जाका, महाप्रभावकरि युक्त, राजानिकरि पूजित, जाकी आज्ञा कोई लोप न सकै। पुरुष स्त्रीनिविषै सदा जिसका अति सन्मान है। अढ़ाई द्वीपविषै मुनि जिन चैत्यालयनिका दर्शन करै। सदा धरती आकाश विषै भ्रमता ही रहै। कौतूहलमें लगी है दृष्टि जाकी, देवनिकरि वृद्धि पाई, अर देवनके समान है महिमा जाकी, पृथ्वीविषै देवऋषि कहावै, सदा सर्वत्र प्रसिद्ध, विद्याके भावकरि किया है अद्भुत उद्योत जाने।

सो नारद विहार करते संते कदाचित् मरुतके यज्ञकी भूमिपर जाय निकसे। सो बहुत लोकनिकी भीड़ देखी अर पशु बंधे देखे। तब दयाभावकरि संयुक्त होय यज्ञभूमिमें उतरे। तहां जायकरि मरुतसें कहने लगे—'हे राजा! जीवनकी हिंसा दुर्गतिका ही द्वार है, तैंने यह महापापका कार्य क्यों रच्या है?" तब मरुत कहता भया—'यह संवर्त ब्राह्मण सर्व शास्त्रनिके अर्थविषै प्रवीण यज्ञका अधिकारी है। यह सर्व जाने है, याहीतैं धर्मचर्चा करो। यज्ञकर उत्तम फल पाइये है।' तदि नारद यज्ञ करावनहारे से कहते भए—'अहो मानव! तैं यह क्या कर्म आरंभ्या है? यह कर्म—सर्वज्ञ जो वीतराग हैं तिनने दुःखका कारण कह्या है। तदि संवर्त ब्राह्मण कोपकरि कहता भया—अहो अत्यन्त मूढ़ता तेरी। तू सर्वथा अमिलती बात कहै है। तैंने कोई सर्वज्ञ रागवर्जित वीतराग कह्या, सो जो सर्वज्ञ वीतराग होय सो वक्ता नाहीं, अर जो वक्ता है, सो सर्वज्ञवीतरागी नाहीं। अर अशुद्ध मलिन जे जीव तिनका कह्या वचन प्रमाण नाहीं, अर जो अनुपम सर्वज्ञ है सो कोई देखनेमें आवै नाहीं। तातैं वेद अकृत्रिम है, वेदोक्तमार्ग प्रमाण है। वेदविषै शूद्र विना तीन वर्णनिको यज्ञ करावना कह्या है। यह यज्ञ अपूर्व

धर्म है, स्वर्गके अनुपम सुख देवै है। वेदीके मध्य पशूनिका वध पापका कारण नाहीं, शास्त्रनिमें कह्या जो मार्ग सो कल्याण हीका कारण है। अर यह पशूनिकी सृष्टि विधातानें यज्ञहीके अर्थि रची है तातैं यज्ञमें पशुके वधका दोष नाहीं! ऐसैं संवर्त ब्राह्मणके विपरीत वचन सुन नारद कहते भए—हे विप्र! तैंनें यह सर्व अयोग्य रूप ही कह्या है—कैसा है तू? हिंसामार्गकर दूषित है आत्मा जाका। अब तू ग्रंथार्थ का यथार्थ भेद सुन। तू कहै है सर्वज्ञ नाहीं, सो यदि सर्वथा सर्वज्ञ न होय तो शब्दसर्वज्ञ, अर्थसर्वज्ञ, बुद्धिसर्वज्ञ यह तीन भेद काहेकूं कहे। जो सर्वज्ञ पदार्थ है तदि ही कहनेमें आवै है। जैसैं सिंह है तो चित्रामर्में लिखिए है। तातैं सर्वका देखनहारा सबका जाननेहारा सर्वज्ञ है। सर्वज्ञ न होय तो अमूर्तीक अतींद्रिय पदार्थको कौन जानै? तातैं सर्वज्ञका वचन प्रमाण है। अर तैंने कह्या जो यज्ञमें पशुका वध दोषकारी नाहीं, सो पशुको वध करते समय दुःख होय है कि नाहीं? जो दुःख होय है तो पापहू होय है। जैसैं पारधी हिंसा करै है सो जीवनकों दुःख होय है, अर उसको पापहू होय है। अर तैंनें कही विधाता सर्वलोक का कर्त्ता है, अर यह पशु यज्ञके अर्थि बनाए हैं। सो यह कथन प्रमाण नाहीं, भगवान कृतार्थ है। तिनको सृष्टि बनाने तैं क्या प्रयोजन? अर कहोगे ऐसी क्रीड़ा है सो क्रीड़ा तो कृतार्थका काज नाहीं। क्रीड़ा करै ताकूं बालक समान जानिए। अर जो सृष्टि रचै तो आप सारिखी रचै। वह सुखपिंड अर यह सृष्टि दुःखरूप है। जो कृतार्थ होय सो कर्ता नाहीं, अर कर्ता है सो कृतार्थ नाहीं। जाकै कछु इच्छा है सो ही करै। जाके इच्छा है ते ईश्वर नाहीं, अर ईश्वर बिना करवे समर्थ नाहीं। तातैं यह निश्चय भया—जाकै इच्छा है सो करने समर्थ नाहीं। अर जो करवेमें समर्थ है ताके इच्छा नाहीं। तातैं जाकों तुम विधाता कर्ता मानो हो, सो कर्मकर पराधीन तुम सारखा ही है। अर ईश्वर है, सो अमूर्तीक है, जाकै शरीर नाहीं। सो शरीर विना सृष्टि कैसैं रचै? अर यज्ञके निमित्त पशु बनाए सो वाहनादिकर्मविषै क्यों प्रवर्त्तै? तातैं यह निश्चय भया कि इस भवसागरविषै अनादिकालतैं इन जीवोंने, रागादिभावकरि कर्म उपार्जै हैं तिनकरि नानायोनिविषै भ्रमण करै हैं। यह जगत अनादिनिधन है काहूका किया नाहीं, संसारीजीव कर्माधीन हैं।

अर जो तुम यह कहोगे कि–कर्म पहिले हैं या शरीर पहिले हैं ? सो जैसें बीज अर वृक्ष तैसें कर्म अर शरीर जानने । बीज तैं वृक्ष है अर वृक्षतैं बीज है । जिनके कर्मरूप बीज दग्ध भया तिनके शरीररूप वृक्ष नाहीं । अर शरीरवृक्ष बिना सुख दुखादि फल नाहीं । तातैं यह आत्मा मोक्ष अवस्थामें कर्मरहित मनइन्द्रियनितैं अगोचर अद्भुत परम आनन्दको भोगै है । निराकारस्वरूप अविनाशी है, सो अविनाशी पद दयाधर्मतैं ही पाईए हैं । तू कोई पुण्यके उदय कर मनुष्य भया, ब्राह्मणका कुल पाया, तातें पारधियोंके कर्मतैं निवृत्त हो । अर जो जीवहिंसातैं यह मानव स्वर्ग पावै है तो हिंसाके अनुमोदनतैं राजा वसु नरकमें क्यों पड़े ? जो कोई चूनका पशु बनायकरि घात करै है सो भी नरकका अधिकारी होय है, तो साक्षात् पशुघातकी कहा बात ? अबहू यज्ञके करणहारे ऐसा शब्द कहै–हैं–'हो वसु ! उठ स्वर्ग विषै जावो ।' यह कहकर अग्निविषै आहुति डारै हैं । तातैं सिद्ध भया कि वसु नरकमें गया, अर स्वर्ग न गया । तातैं 'हे संवर्त ! यह यज्ञ कल्याणका कारण नाहीं । अर जो तू यज्ञ ही करै तो जैसें हम कहैं सो कर । यह चिदानन्द आत्मा सो तो जजमान नाम कहिए यज्ञका करणहारा, अर शरीर है सो विनय कुण्ड कहिए होमकुंड अर संतोष है सो पुरोडास कहिए यज्ञकी सामग्री, अर जो सर्व परिग्रह है सो हवि कहिए होमनेयोग्य वस्तु, अर माधुर्य कहिए केश तेई दर्भ कहिए–डाभ, तिनका उपारना, लोंच करना, अर जो सर्व जीवनिकी दया सोई दक्षिणा, अर जाका फल सिद्धपद ऐसा जो शुक्लध्यान सोई प्राणायाम, अर जो सत्यमहाव्रत सोई यूप कहिए यज्ञविषै काष्ठका स्थम्भ–जातैं पशुको बांधै हैं, अर यह चंचल मन सोई पशु । अर तपरूप अग्नि अर पांच इन्द्रिय तेई समाधि कहिए ईंधन । यह यज्ञ धर्मयज्ञ कहिए है । अर तुम कहोहो कि यज्ञकरि देवोंको तृप्ति कीजिये है सो देवनकैं तो मनसा आहार है, तिनका शरीर सुगंधमय है ! अन्नादिकहीका आहार नाहीं तो मांसादिकको कहा बात ? कैसा है मांस ? महा दुर्गंध जो
देख्या न जाय, पिताका वीर्य माताका लहू ताकरि उपज्या, कृमीनिकी है उत्पत्ति जिसविषै, महा अभक्ष सो मांस देव कैसे भखैं ? अर तीन अग्नि या शरीरविषै हैं, एक ज्ञानाग्नि, दूसरी दर्शनाग्नि, तीसरी

उदराग्नि । सो इन्हीं को आचार्य दक्षिणाग्नि, गार्हपत्य, आहवनीय कहे हैं । अर स्वर्गलोकके निवासी देव हाडमांसका भक्षण करैं तो देव काहेके ? जैसैं स्वान स्याल काक तैसैं वे भी भए । ये वचन नारदने कहे ।

कैसे हैं नारद ? देवऋषि हैं, अनेकांतरूप जिनमार्गके प्रकाशिवेको सूर्य समान महा तेजस्वी, दैदीप्यमान है शरीर जिसका, शास्त्रार्थज्ञानके निधान तिनको मंदबुद्धि संवर्त कहा जीतै ! सो पराभवको प्राप्त भया । तदि निर्दई क्रोधके भारकर कम्पायमान आशीविषं सर्पसमान लाल हैं नेत्र जाके महा कलकलाट करि अनेक विप्र भेले होय लड़नेको काछकछ हस्तपादादिकर नारदके मारनेको उद्यमी भए । जैसें दिनमें काक धूधू पर आवैं सो नारद भी कैयकनिकों मुक्कीनतैं, कैयकनिकों मुगदरसे, कई एकनिको कोहनीसे मारते हुए भ्रमण करते हुए, अपने शरीररूप शस्त्रकरि अनेकनिकों हत्या, बहुत युद्ध भया । निदान यह बहुत अर नारद अकेले, सों सर्वागात्रमें अत्यन्त आकुलताकों प्राप्त भय । पक्षी की नाईं, बंधकोंने घेरचा । आकाशविषैं उडवेको असमर्थ भए, प्राण संदेहको प्राप्त भए, ताही समय रावणका दूत राजा मरुतपै आयाहुता सो नारदको घेरचा देखि पाछा जाय रावणतैं कही—हे महाराज जाके निकट मोहि भेज्या हुता सो महा दुर्जन है, ताके देखते थके द्विजोंने अकेले नारदको घेरचा है । अर मारे हैं जैसें कीडी दल सर्पको घेरैं । सो मैं यह बात देख न सक्या । सो आपको कहिने को आया हूं । तदि रावण यह वृत्तान्त सुन क्रोधको प्राप्त भया, पवनसे भी शीघ्रगामी जे वाहन तिनपर चढि चलनेको उद्यमी भया, अर नंगी तलवारनिके धारक जे सामन्त ते अगाऊ दौडाए । ते एक पलकमें यज्ञशाला जाय पहुंचे । तत्काल ही नारदको शत्रुओंके घेरतैं छुडाया अर निरदई मनुष्य जो पशुनिको घेरि रहे हुते सो सकल पशु तत्काल छुडाए । यज्ञके यूप कहिए स्तंभ ते तोड डारे, अर यज्ञके करावनहारे विप्र बहुत कूटे, यज्ञशाला बखेर डारी । राजाकों भी पकड़ लिया, रावणने द्विजनि पर बहुत कोप किया ।
जो मेरे राज्यविषैं जीवघाति करैं यह क्या बात ? सो ऐसैं कूटे जो अचेत होय धरतीपर गिर पड़े । तब सुभटलोक इनको कहते भये—अहो जैसा दुख तुमको बुरा लागै है, अर सुख भला लागै है, तैंसा पशुनि-

के भी जानो। अर जैसा जीतव्य तुमको वल्लभ है, तैसा सकल जीवनिकों जानो। तुमको कूटते कष्ट होय है तो पशुवोंको विनाशनेते क्यों न होय? तुम पापका फल सहो, आगैं नरकनिमें दुख भोगोगे। सो घोड़ों आदिके सवार तथा खेचर भूचर सब ही पुरुष हिंसकनिको मारने लगे। तब वे विलाप करने लगे, हमको छोड़ो फिर ऐसा काम न करेंगे—ऐसें दीन वचन कह, विलाप करते भए। अर रावणका तिन पर अत्यंत क्रोध सो छोड़े नाहीं, तदि नारद महा दयावान रावणसों कहनें लगे हे राजन्! तेरा कल्याण होवै, तैंने इन दुष्टोंसे मुझे छुड़ाया। अब इनकी भी दयाकर, जिनशासनमें काहूको पीड़ा देनी लिखी नाहीं। सब जीवनिको जीतव्य प्रिय है। तैंने सिद्धांतमें क्या यह बात न सुनी है कि जो हुंडावसर्पिणी कालविषै पाखंडिनिकी प्रवृत्ति होय है। जबके चौथेकालके आदिमें भगवान ऋषभ प्रकटे तीन जगत्‌में उच्च जिनको जन्मते ही देव सुमेरु पर्वत पर ले गये। क्षीरसागरके जलकरि स्नान कराया। वे महाकांतिके धारी ऋषभ, जिनका दिव्य चरित्र पापोंका नाश करनहारा तीनलोकमें प्रसिद्ध है, सो तैंने क्या न सुन्या? वे भगवान जीवोंके दयालु जिनके गुण इन्द्र भी कहनेको समर्थ नाहीं। तैं वीतराग निर्वाणके अधिकारी इस पृथ्वीरूप स्त्रीको तजकरि जगतके कल्याण निमित्त मुनिपदको आदरतै भये। कैसे हैं प्रभु! निर्मल है आत्मा जिनका, कैसी है पृथ्वीरूप स्त्री? जो विंध्याचल पर्वत अर हिमालय पर्वत तेई हैं उतंग कुच जाके, अर आर्यक्षेत्र है मुख जाका, सुन्दर नगर तेई चूड़े तिनकरि युक्त है। अर समुद्र है कटिमेखला जाकी, अर जे नीलवन, तेई हैं सिरके केश जाके, नानाप्रकारके जे रत्न तेई आभूषण हैं। ऋषभदेवने मुनि होयकरि हजार वर्ष तक महातप किया, अचल है योग जिनका लम्बायमान हैं बाहु जिनकी। स्वामीके अनुरागकरि कच्छादि चार हजार राजावोंने मुनिके धर्म जाने विनाही दीक्षा धरी। सो परीषह सह न सके, तदि फलादिकका भक्षण, वक्कलादिको धारणकरि तापसी भए। ऋषभदेवने हजार वर्ष तपकर वटवृक्षके तले केवलज्ञान उपजाया। तदि इन्द्रादिक देवोंने केवलज्ञानकल्याण किया, समोसरणकी रचना भई। भगवानकी दिव्यध्वनिकर अनेक जीव कृतार्थ

भए। जे कच्छादिक राजा चारित्र भ्रष्ट भये हुते ते धर्ममें दृढ़ होय गए, मारीचके दीर्घ संसारके योगतैं मिथ्याभाव न छूटचा। अर जिस स्थानपर भगवानको केवलज्ञान उपज्या ता स्थानकमें देवोंकरि चैत्यालयनिकी स्थापना भई। ऋषभदेवकी प्रतिमा पधराई, अर भरत चक्रवर्तीने विप्रवर्ण थाप्या हुता ते जलविषैं तेलकी बूंदवत विस्तारको प्राप्त भया। उन्होंने यह जगत मिथ्याचार करि मोहित किया, लोक अति कुकर्मविषैं प्रवर्ते, सुकृतका प्रकाश नष्ट होयगया। जीव साधूनिके अनादरमें तत्पर भए। आगैं सुभूम चक्रवर्तीने नाशको प्राप्त किए थे तौ भी इनका अभाव न भया, हे दशानन! तो करि कैसे अभावको प्राप्त होहिंगे? तातैं तू प्राणीनिकी हिंसातैं निवृत्त होहु। काहूकी कभी भी हिंसा कर्त्तव्य नाहीं। अर जब भगवानके उपदेशकरि जगत मिथ्यामार्गकरि रहित न होय, कोई एक जीव सुलटै तो हम सारिखे तुम सारिखों कर सकल जगतका मिथ्यात्व कैसैं जाय? कैसे हैं भगवान? सर्वके देखनहारे, सर्वके जाननेहारे। या भांति देवर्षि जे नारद तिनके वचन सुनकर केकसी माताकी कुक्षमें उपज्या जो रावण सो पुराण कथा सुनकर अति प्रसिद्ध भया, अर बारम्बार जिनेश्वरदेवको नमस्कार किया। नारद अर रावण महापुरुषनिकी मनोज्ञ जे कथा तिनके कथनकरि क्षणएक सुखसों तिष्ठे, महापुरुषोंकी कथामें नानाप्रकारका रस भरचा है जिनमें ऐसी है।

अथानन्तर राजा मरुत हाथ जोडि धरतीसों मस्तक लगाय रावणको नमस्कारकर विनती करता भया—हे देव, हे लंकेश! मैं आपका सेवक हूं, आप प्रसन्न होहु, मैं अज्ञानीनिके उपदेशकरि हिंसामार्गरूप खोटी चेष्टा करी। सो आप क्षमा करो। जीवोंके अज्ञानकरि खोटी चेष्टा होय है। अब मुझे धर्मके मार्गमें लेवो, अर मेरी पुत्री कनकप्रभा आप परणो। जे संसारमें उत्तम पदार्थ हैं तिनके आपही पात्र हो। तदि रावण प्रसन्न भए। कैसे हैं रावण? जो नम्रीभूत होय ताविषैं दयावान हैं। तब रावणने पुत्री
परणी, अर ताहि अपनो कियो। सो रावणके अति वल्लभा भई। मरुतने रावणके सामंतलोक बहुत पूजे, नानाप्रकारके वस्त्राभूषण हाथी घोड़े रथ दिए। कनकप्रभा सहित रावण रमता भया। ताके एक

वर्ष बाद कृतचित्रनामा पुत्री भई, सो देखनहारे लोकनिको रूपकरि आश्चर्यकी उपजावनहारी मानों मूर्तिवंत शोभा ही है। रावणके सामंत महाशूरवीर तेजस्वी जीतकरि उपज्या है उत्साह जिनने, संपूर्ण पृथ्वीतलमैं भ्रमते भए। तीन खंडमें जो राजा प्रसिद्ध हुता अर बलवान हुता, सो रावणके योधानिके आगैं दीनताकों प्राप्त भया। सबही राजा वश भए। कैसे हैं राजा ? राज्य के भंगका है भय जिनको, विद्याधरलोक भरतक्षेत्रका मध्यभाग देखि आश्चर्यको प्राप्त भए। मनोज्ञ नदी, मनोज्ञ पहाड़, मनोज्ञ वन तिनको देख लोक कहते भए:-अहो स्वर्ग भी यातैं अधिक रमणीक नाहीं। चित्तविषैं ऐसे उपजै है जो यहां ही वास करिए। समुद्रसमान विस्तीर्ण सेना जाकी, ऐसा रावण, जा समान और नाहीं। अहो अद्‌भुत वीर्य, अद्‌भुत उदारता या रावणकी, यह सब विद्याधरनिमैं श्रेष्ठ नजर आवै है। या भांति समस्त लोक प्रशंसा करै हैं। जा जा देशविषै रावण गया तहां तहां लोक प्रशंसा करै। फिर जहां जहां रावण गया, तहां तहां लोक सनमुख आय मिलते भए। जे जे पृथ्वीविषै राजानिकी सुन्दर पुत्री हुती ते रावणने परणी। जा नगरके समीप रावण जाय निकसै ताहीं नगरके नर नारी देखकरि आश्चर्य प्राप्त होवें। स्त्री सकल काम छोडि देखवेको दौडी, कईएक झरोखोंमें बैठि ऊपरसे असीस देय फूल डारैं। कैसा है रावण ? मेघसमान श्यामसुन्दर, पाकी किंदूरीसमान लाल हैं अधर जाके। अर मुकुट विषै नानाप्रकारकी जे मणि तिनकरि शोभै है सीस जाका, मुक्ताफलनिकी ज्योति सोई भया जल, ताकरि पखारचा है चंद्रमासमान बदन जाका, इन्द्रनीलमणि समान श्याम सघन जे केश, अर सहस्र पत्र कमलसमान नेत्र, तत्काल खैंच्या नम्रीभूत हुआ जो धनुष, ताके समान वक्र श्याम चिकने, भौंह युगल, ताकरि शोभित शंखसमान ग्रीवा (गरदन) जाकी, अर वृषभसमान कांधे जाके, पुष्ट विस्तीर्ण वक्षस्थल जाके, दिग्गजकी सूंडसमान भुजा जाके, केहरी समान कटि जाकी, कदलीके समान सुन्दर जंघा जाकी, कमल समान चरण, समचतुरस्रसंस्थानको धरैं महामनोहर शरीर जाका, न अधिक लंबा न अधिक ओछा, न कृश न स्थूल, श्रीवत्सलक्षणको आदि देय बत्तीस लक्षणनिकरि

युक्त, अर अनेकप्रकार रत्ननिकी किरणोंकरि देदीप्यमान है मुकुट जाका, अर नानाप्रकारकी मणिनि-
करि मंडित नानाप्रकारके मनोहर हैं कुण्डल जाके, बाजूबंदकी दीप्तिकरि देदीप्यमान हैं भुजा जाकी,

अर मोतिनके हारकरि शोभै है उर जाका, अर्धचक्रवर्तीकी विभूतिका भोगनहारा, ताहि देख प्रजा
के लोक बहुत प्रसन्न भए। परस्पर बात करैं हैं कि यह दशमुख महाबलवान, जीत्या है मौसीका बेटा
वैश्रवण जानैं, अर जीत्या है राजा यम जिसने, कैलाशके उठानेकों उद्यमी भया, अर प्राप्त किया है
राजा सहस्ररश्मिका वैराग्य जाने, मरुतके यज्ञका विध्वंस करणहारा, महा शूरवीर, साहसका धारी,
हमारे सुकृतके उदयकरि या दिशाको आया। यह केकसी माताका पुत्र, याके रूपका अर गुणनिका
कौन वर्णन कर सकै ? याका दर्शन लोकनिकों परम उत्सवका कारण है। वह स्त्री पुण्यवती धन्य है
जाके गर्भतैं यह उत्पन्न भया, अर वह पिता धन्य है जातैं यानै जन्म पाया, अर वे बंधु लोक धन्य हैं
जिनके कुलविषै यह प्रकट्या। अर जे स्त्री इनकी राणी भई तिनकै भाग्यकी कौन कहै ? या भांति
स्त्री झरोखानिमैं बैठी बात करैं हैं, अर रावणकी असवारी चली जाय है। जब रावण आय निकसै
तदि एक मुहूर्त गांवकी नारी चित्रामकीसी होय रहै, ताके रूप सौभाग्यकरि हरया गया है चित्त जिनका।
स्त्रीनिको अर पुरुषनिको रावणकी कथाके टारि और कथा न रही। देशनिविषै तथा नगर ग्राम तथा
गांवनिके बाड़े तिनविषै जे प्रधानपुरुष हैं ते नानाप्रकारकी भेंट लेयकरि आय मिले, अर हाथ जोडि
नमस्कारकरि विनती करते भए—हे देव ! महाविभवके पात्र तुम, तिहारे घरविषै सकल वस्तु विद्यमान
हैं, हे राजानिके राजा ! नन्दनादि वनमैं जे मनोज्ञ वस्तु पाइए हैं ते भी सकल वस्तु चिंतवनमात्रतैं
ही तुमको सुलभ हैं। ऐसी अपूर्व वस्तु क्या है जो तुम्हारी भेंट करें ? तथापि यह न्याय है कि रीते
हाथनि राजानिसों न मिलिए। तातैं कछू हम अपनी माफिक भेंट करै हैं। जैसैं भगवान जिनेंद्रदेवकी
देव सुवर्णके कमलोंकर पूजा करै हैं, तिनको क्या मनुष्य आप योग्य सामग्रीकर नाहीं पूजै हैं ? या भांति
नानाप्रकारके देश देशनिके सामंत बड़ी ऋद्धिके धारी रावणको पूजते भए। रावण तिनका मिष्टवच

ननि करि बहुत सन्मान करता भया। रावण पृथ्वीको बहुत सुखी देख प्रसन्न भया, जैसैं कोई अपनी स्त्रीको नानाप्रकारके रत्नआभूषणनिकर मंडित देख सुखी होय। जहां रावण मार्गके वशतैं जाय निकसैं ता देशविषैं विना बाहे धान स्वयमेव उत्पन्न भए। पृथ्वी अति शोभायमान भई, प्रजाके लोक परम आनंदको धरत संते अनुरागरूपी जलकरि याकी कीर्तिरूपी बेलिको सींचते भए। कैसी है कीर्त्ति? निर्मल है स्वरूप जाका। किसान लोग ऐसे कहते भए कि बड़े भाग्य हमारे, जो हमारे देशमें रत्नश्रवा का पुत्र रावण आया। हम रंक लोग कृषिकर्ममें आसक्त, रूखे अंग, खोटे वस्त्र, हाथ पग करकश, क्लेशतैं हमारे सुख स्वाद रहित एता काल गया, अब इसके प्रभावतैं हम संपदादिकरि पूर्ण भए। पुण्य का उदय आया, सर्व दुखनिका दूर करणहारा रावण आया। जिन जिन देशनिमैं यह कल्याणका भरया विचरै ते देश सर्व संपदा कर पूर्ण होय। दशमुख दरिद्रीनिका दरिद्र–देख न सकै। जिनको दुःख मेटवेको शक्ति नाहीं तिन भाईनिकरि कहा सिद्ध होय है? यह तो सर्व प्राणियोंका बड़ा भाई होता भया। यह रावण अपनें गुणनिकरि लोगनिकौं आनन्द उपजावता भया। जाके राजमें शीत अर उष्ण भी प्रजाको बाधा न करसकैं तो चोर चुगल बटमार तथा सिंह गजादिकनिकी बाधा कहां से होय? जाके राज्यविषैं पवन पानी अग्निकी भी प्रजाको बाधा न होय, सर्वबात सुखदाई ही होती भई।

अथानन्तर रावणकी दिग्विजयविषैं वर्षाऋतु आई, मानों रावणसो साम्ही आय मिली, मानों इन्द्रने श्यामघटा रूपी गजकी भेंट भेजी। कैसे हैं काले मेघ? महा नीलाचल समान बिजुरीरूप स्वर्ण की सांकल धरैं, अर बुगुलनिकी पंक्ति भई ध्वजा, तिनकरि शोभित है शरीर जिनके, इन्द्रधनुष रूप आभूषण पहरे जब वर्षाऋतु आई तदि दशोंदिशानमें अंधकार होगया। रात्रि दिवसका भेद जान्या न पड़े। सो यह युक्त ही है, श्याम होय सो श्यामता ही प्रकट करै, मेघ भी श्याम अर अंधकार भी श्याम। पृथ्वीविषैं मेघ की मोटी धारा अखंड बरसती भई। जो माननी नायिकानिके मनविषै मानका भार हुता, सो मेघके गर्जनकरि क्षणमात्रविषै विलाय गया। अर मेघकी ध्वनिकरि भयको पाई जे

मानिनी भामिनी ते स्वयमेव ही भरतारसों स्नेह करती भई। जे शीतल कोमल मेघकी धारा, ते
पंथीनिको बाणके भावको प्राप्त करती भई। मर्मकी विदारणहारी धारानिके समूहकरि भेदा गया
है हृदय जिनका, ऐसे पंथी, ते महा व्याकुल भए हैं। मानों तीक्ष्णचक्रकरि बिदारे गए हैं। नवीन जो
वर्षाका जल ताकरि जड़ताको प्राप्त भए पंथी, क्षणमात्रमें चित्रामकेसे होय गए। अर जानिए कि
क्षीरसागरके भरे जो मेघ सो गायनिके उदर विषै बैठे हैं। तातैं निरन्तर ही दुग्धकी धारा वर्षै है।
वर्षा के समय किसान कृषिकर्मको प्रवर्त्तै हैं। रावणके प्रभावकरि महाधनके धनी होते भए। रावण
सब ही प्राणियोंको महा उत्साहका कारण होता भया।

गौतम स्वामी राजा श्रेणिक सो कहै हैं कि हे श्रेणिक! जे पूर्ण पुण्याधिकारी हैं तिनके सौभाग्य
का वर्णन कहाँ तक करिए। इन्दीवर नगरत सारिखा श्याम रावण स्त्रियों के चित्तको अभिलाषी
करता संता मानो साक्षात् वर्षाकालका स्वरूप ही है, गम्भीर है ध्वनि जाकी, जैसा मेघ गाजै तैसा
रावण गाजै। सो रावणकी आज्ञातैं सर्व नरेन्द्र आय मिले, हाथ जोड़ नमस्कार करते भए। जो राजा-
निकी कन्या महा मनोहर ते रावणको स्वयमेव वरती भई। ते रावणको वरकर अत्यन्त क्रीड़ा
करती भई। जैसैं वर्षा पहाड़को पायकरि अति वरषै। कैसी है वर्षा? पयोधर जे मेघ तिनके समूह-
करि संयुक्त है। अर कैसी है स्त्री पयोधर जे कुच तिनकरि मंडित है। कैसा है रावण? पृथ्वीके
पालनेको समर्थ है। वैश्रवण यक्षका मानमर्दन करनहारा दिग्विजयको चढ्या। समस्त पृथ्वीको जीतै
सो ताहि देखकरि मानो सूर्य लज्जा अर भयकरि व्याकुल होय दबि गया। भावार्थ—वर्षाकालविषै
सूर्य मेघपटलनिकरि आच्छादित होय है। अर रावणके मुखसमान चंद्रमा भी नाहीं, सो मानों लज्जा-
करि भी दब गया, क्योंकि वर्षाकालमें चन्द्रमा भी मेघमालाकरि आच्छादित होय है, अर तारे भी
नजर नहीं आवे हैं। सो मानो अपना पति जो चन्द्रमा ताहि रावणके मुखकरि जीत्या जानि भाज
गए। अर रावणकी हथेली, पगतली अत्यन्त लाल अर रावणकी स्त्रियोंकी अत्यन्तलाल जानकर

लज्जावान होय, कमलोंके समूह भी छिप गए, मानों यह वर्षाऋतु स्त्री समान है। विजुरी तेई कटि-मेखला, जो इन्द्रधनुष वह वस्त्राभूषण, पयोधर जे मेघ वे ही पयोधर कहिए कुच, अर रावण महामनोहर केतकीकी वास तथा पद्मनी स्त्रियोंके शरीरकी सुगन्ध इत्यादि सर्वसुगन्ध अपने शरीरकी सुगन्धताकरि जीतता भया। जाके सुगन्ध श्वासरूप पवनके खेंचे भ्रमरनिके समूह गुंजार करते भए। गंगाका तट जो अति मनोहर है तहां डेराकरि वर्षाऋतुपूर्ण करी। कैसा है गंगाका तट? जाके तीर सुन्दर हरित-तृण शोभै हैं, नानाप्रकारके पुष्पोंकी सुगन्धता फैल रही है। बड़े बड़े वृक्ष शोभै हैं। कैसा है रावण? जगतका बन्धु कहिए हितु है। अति सुखसों चातुर्मास्यपूर्ण किया। हे श्रेणिक! जे पुण्याधिकारी मनुष्य हैं तिनका नाम श्रवणकर सर्वलोक नमस्कार करै हैं, अर सुन्दर स्त्रियोंके समूह स्वयमेव आय वरै हैं, अर ऐश्वर्यके निवास परम विभव प्रकट होय हैं। उनके तेजकरि सूर्य भी शीतल होय है। ऐसा जानकरि आज्ञा मान संशय छोड़ पुण्यके प्रबन्धका यत्न करो।

इति श्रीरविषेणाचार्य विरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रन्थ, ताकी भाषावचनिकाविषै मरुतके यज्ञका विध्वंस अर रावणके दिग्विजयका वर्णन करनेवाला ग्यारहवां पर्व पूर्ण भया॥ ११॥

अथानन्तर रावण मंत्रियोंसे विचार करता भया एकांतविषै। अहो मंत्रियों! यह अपनी कन्या कृतचित्रा कौनको परनावैं। इन्द्रसो संग्रामविषै जीतनेका निश्चय नाहीं। तातैं पुत्रीका पाणिग्रहण मंगलकार्य प्रथम करना योग्य है। तदि रावणको पुत्रीके विवाहकी चिंताविषै तत्पर देखि राजा हरि-वाहनने अपना पुत्र निकट बुलाया। सो हरिवाहनके पुत्रको अति सुन्दराकार विनयवान देखिकर पुत्रीके परणायवेका मनोरथ किया। रावण अपने मनमें चितवता भया कि सर्व नीतिशास्त्रविषै प्रवीण अहो मथुरा नगरीका नाथ राजा हरिवाहन निरंतर हमारे गुणनिकी कीर्तिविषै आसक्त है मन जाका, याका प्राणोंहूते प्यारा मधु नामा पुत्र प्रशंसा योग्य है। महाविनयवान प्रीतिपात्र महारूपवान्

अति गुणवान मेरे निकट आया। तदि मंत्री रावणसों कहते भए—'हे देव ! यह मधुकुमार महापराक्रमी याके गुण वर्णनमें न आवैं तथापि कछुइक कहे हैं। याके शरीरविषै अत्यन्त सुगन्धता है, जो सर्वलोकनिके मनको हरै ऐसा है रूप जाका। याका मधु नाम यथार्थ है। मधुनाम मिष्टान्नका है, सो यह मिष्टवादी है। अर मधुनाम मकरंदका है सो यह मकरंदतैं भी अतिसुगन्ध है। अर याके ऐते ही गुण आप मत जानों, असुरनका इन्द्र जो चमरेंद्र तानें याकों महागुणरूप त्रिशूलरत्न दिया है। सो त्रिशूलरत्न वैरिनपर डारचा वृथा न जाय, अत्यन्त दैदीप्यमान है, सो आप याकी करतूत करि, याके गुण जानोहीगे। वचनोंकरि कहांलग कहैं तातैं—'हे देव ! यासों संबंध करनेकी बुद्धि करो। यह आपसे सम्बन्धकरि कृतार्थ होयगा। ऐसा जब मंत्रियोंने कह्या तदि रावणने याको अपना जमाई निश्चय किया। अर जमाई योग्य जो सामग्री, सो याको दीनी। बड़ी विभूतिसों रावणने अपनी पुत्री परणाई। सर्वलोक हर्षित भए। यह रावणकी पुत्री साक्षात् पुण्य लक्ष्मी, महा सुन्दर शरीर, पतिके मन अर नेत्रनिकी हरनहारी, जगत्में ऐसा सुगन्ध नाहीं—ऐसे सुगन्धशरीरको धारनहारी, ताको पायकर मधु अति प्रसन्न भया।

अथानन्तर राजा श्रेणिक जिनको कौतूहल उपज्या है सो गौतमस्वामीसों पूछते भए—हे नाथ ! असुरेन्द्रने मधुको कौन कारण त्रिशूल रत्न दिया, दुर्लभ है संगम जाका। तदि गौतमस्वामी जिनधर्मीनितैं है वात्सल्य जिनके, त्रिशूल रत्नकी प्राप्तिका कारण कहते भए। हे श्रेणिक ! धातकीखंड नामा द्वीप, तहां ऐरावत क्षेत्र, शतद्वारा नगर, तहां दोय मित्र होते भए। महा प्रेमका है बंधन जिनके, एकका नाम सुमित्र, दूसरेका नाम प्रभव। सो ये दोनों एक चटशालामें पढ़कर पंडित भए। कईएक दिनोंमें सुमित्र राजा भया। सर्व सामंतनिकरि सेवित पूर्वोपार्जित पुण्यकर्मके प्रभावतैं परम उदयको प्राप्त भया। अर दूजा मित्र प्रभव सो दरिद्रकुलमें उपज्या, महादरिद्री। सो सुमित्रने महास्नेहतैं अपनी बराबर कर लिया। एक दिन राजा सुमित्रको दुष्ट घोड़ा हरकर वनमें लेगया। तहां दुरिदंष्ट्रनाम भीलनिका राजा सो याकों अपने घर ले गया। ताको वनमाला पुत्री परणाई। सो वह वनमाला

साक्षात् वनलक्ष्मी, ताको पाय राजा सुमित्र अति प्रसन्न भया। एक मास तहां रह्या। बहुरि भीलों की सेना लेकर स्त्री सहित शतद्वार नगरमैं आवै था, अर प्रभव ढूंढनेको निकस्या। सो मार्गमें स्त्री सहित मित्रको देखा। कैसी है वह स्त्री मानों कामकी पताका ही है। सो देखकरि यह पापी प्रभव मित्रकी भार्याविषै मोहित भया, अशुभकर्मके उदयसे नष्ट भई है कृत्य-अकृत्यकी बुद्धि जाकी, प्रबल कामके बाणनिकरि बींध्या संता, अति आकुलताको प्राप्त भया। आहार निद्रादिक सर्व विस्मरण भया। संसारमें जेती व्याधी हैं तिनमें मदन व्याधी है जाकरि परम दुःख पाइए हैं। जैसे सर्व देवनमें सूर्य प्रधान है, तैसे समस्त रोगनिके मध्य मदन प्रधान है। तब सुमित्र प्रभवको खेद-खिन्न देखि पूछते भए—हे मित्र ! तू खेदखिन्न क्यों है ? तबि यह मित्रको कहने लगा——जो तुम वनमाला परणी ताको देखकरि चित्त व्याकुल भया है। यह बात सुन करि राजा सुमित्र मित्रमें है अति स्नेह जाका, अपने प्राण समान मित्रको अपनी स्त्रीके निमित्त दुखी जानि स्त्रीको मित्रके घर पठावता भया। अर आप आपा छिपाय मित्रके झरोखेमें जाय बैठा। अर देखे कि यह क्या करै, जो मेरी स्त्री याकी आज्ञा प्रमाण न करै, तो मैं स्त्रीका निग्रह करूं। अर जो याकी आज्ञा प्रमाण करै, तो सहस्र ग्राम दूं। वनमाला रात्रिके समय प्रभवके समीप जाय बैठी। तदि प्रभव पूछता भया—हे भद्रे ! तू कौन है। तब इसने विवाह पर्यंत सब वृत्तान्त कह्या। सुनकरि प्रभव प्रभारहित होय गया। चित्तविषै अति उदास भया। विचारै है—हाय ! हाय ! मैं यह क्या अशुभ भावना करी, मित्रकी स्त्री माता समान कौन बांछै है। मेरी बुद्धि भ्रष्ट भई, या पापतैं मैं कब छूटूं ? बनै तो अपना सिर काट डारूं, कलंकयुक्त जीवन करि कहा ? ऐसा विचार मस्तक काटनेके अर्थ म्यानतैं खड्ग काढ्या, खड्गकी कांति करि दशों दिशाविषै प्रकाश होय गया। तब तलवारको कंठके समीप ल्याया, अर सुमित्र झरोखेमें बैठता हुता, सो कूदकर आय हाथ पकड़ लिया, मरतेको बचाय लिया। छातीसों लगाय करि कहने लगा—हे मित्र ! आत्मघातका दोष तू न जाने है। जे अपने शरीरका अविधिसे निपाता करै हैं, ते शूद्र मरकरि नरकविषै जाय

पड़े हैं। अनेक भव अल्प आयुके धारक होय हैं। यह आत्मघात निगोदका कारण है। या भांति कह करि मित्रके हाथसों खड्ग छीन लिया, अर मनोहर वचनकरि बहुत संतोष्या। अर कहने लगा कि हे मित्र! अब आपसमें परस्पर परम मित्रता है, सो यह मित्रता परभवमें रहै कि न रहै। यह संसार असार है। यह जीव अपने कर्मके उदयकरि भिन्न भिन्न गतिको प्राप्त होय है। या संसारमें कौन किसका शत्रु है, सदा एक दशा न रहै है। यह कहिकर दूसरे दिन राजा सुमित्र महामुनि भए। पर्याय पूर्ण-करि दूजे स्वर्गमें ईशान इन्द्र भये। तहांतैं चयकरि मथुरापुरीमें राजा हरिवाहन, जाके राणी माधवी तिनकै मधु नामा पुत्र भए। हरिवंशरूप आकाशविषै चन्द्रमा समान भए। अर प्रभव सम्यक्त्व विना अनेक योनियोंमें भ्रमणकरि विश्ववसुकी ज्योतिषमती जो स्त्री, ताकै शिखी नाम पुत्र भया। सो द्रव्यलिंगी मुनि होय, महातपकरि निदानके योगतैं असुरोंके अधिपति चमरेंद्र भए। तदि अवधिज्ञान करि अपने पूर्व भव विचार सुमित्र नामा मित्रके गुण अति निर्मल अपने मनविषै धारै, सुमित्र राजा का अतिमनोज्ञ चरित्र चितारकरि असुरेंद्रका हृदय प्रीतिकरि मोहित भया। मनविषै विचारचा कि राजा सुमित्र महागुणवान मेरा परम मित्र हुता, सर्व कार्योंमें सहाई था। ता सहित मैं चटशालाविषै विद्या पढ़ा, मैं दरिद्री हुता ताने आप समान विभूतिवान किया। अर मैं पापी दुष्टचित्तने ताकी स्त्री-विषै खोटे भाव किए तो हू तानै द्वेष न किया। स्त्री मेरे घर पठाई। मैं मित्रकी स्त्रीको माता समान जान अति उदास होय, अपना सिर खड्गतैं काटने लाग्या, तदि ताहीने थांभ लिया। अर मैंने जिनशासन की श्रद्धा बिन मरकर अनेक दुख भोगे। अर जे मोक्षमार्गके प्रवरतनहारे साधु पुरुष तिनकी निंदा करी, सो कुयोनिविषै दुःख भोगे, अर वह मित्र मुनिव्रत अंगीकारकरि दूजे स्वर्ग इन्द्र भाया। तहांतैं चयकरि मथुरापुरीविषै राजा हरिवाहनका पुत्र मधुवाहन भया है। अर मैं विश्ववसुका पुत्र शिखीनाम द्रव्य-लिंगी मुनि होय असुरेन्द्र भाया। यह विचार उपकारका खैंच्या, परम प्रेमकरि भीजा है मन जाका, अपने भवनसे निकसकरि मध्यलोकविषै आय मधुवाहन मित्रसों मिल्या। महारत्नोंकरि मित्रका

पूजन किया । सहस्रांत नामा त्रिशूल रत्न दिया, मधुवाहन चमरेन्द्रको देखि बहुत प्रसन्न भया । फिर
चमरेन्द्र अपने स्थानको गया । हे श्रेणिक ! शस्त्र विद्याका अधिपति, सिंहोंका है वाहन जाके, ऐसा मधु-
कुंवर हरिवंशका तिलक, रावण है श्वसर जाका, सुखसों तिष्ठै है । यह मधुका चरित्र जो पुरुष पढ़ै सुनै
सो कांतिको प्राप्त होय, अर ताके सर्व अर्थ सिद्ध होय ।

अथानन्तर मरुतके यज्ञका नाश करणहारे जो रावण सो लोकविषै अपना प्रभाव विस्तारता हुवा, शत्रुनिको वश करता संता अठारह वर्ष विहार करि, जैसैं स्वर्गमें इन्द्र हर्ष उपजावै तैसैं उपजावता भया । पृथ्वीका पति कैलाश पर्वतके समीप आय प्राप्त भया । तहां निर्मल है जल जाका, ऐसी मंदाकिनी कहिए गंगा समुद्रकी पटराणी, कमलनिके मकरंदकरि पीत है जल जाका, ऐसी गंगाके तीर कटकके डेरे कराए और आप कैलाशके कुक्षविषै डेरा करि क्रीडा करता भया । गंगाका स्फटिक समान जल निर्मल तामैं खेचर, भूचर, जलचर क्रीडा करते भए । जे घोड़े रजविषै लौटकरि मलिन शरीर भए हुते, ते गंगामें निहलाय जलपान कराय फिर ठिकाने लाय बांधे । हाथी सपराए ! रावण बालीका वृत्तांत चितार चैत्यालयनिको नमस्कारकरि धर्मरूप चेष्टा करता तिष्ठ्या ।

अथानन्तर इन्द्रने दुर्लंघिपुर नामा नगरविषै नलकूवर नामा लोकपाल थाप्या हुता । सो रावणको हलकारोंके मुखतैं नजीक आया जानि इन्द्रके निकट शीघ्रगामी सेवक भेजे और सर्व वृत्तांत लिख्या । जो रावण जगतको जीतता समुद्ररूप सेनाको लिए हमारी जगह जीतनेके अर्थि निकट आया पड्या है, या ओरके सर्वलोक कंपायमान भए हैं । सो यह समाचार लेकर नलकूवरके इतबारी मनुष्य इन्द्र निकट आये । इन्द्र भगवानके चैत्यालयनिकी वंदनाको जाते हुते, सो मार्गविषै इन्द्रको पत्र दिया । इन्द्रने बांचकर सर्व रहस्य जानकरि पाछा जवाब लिख्या । जो मैं पांडुवनके चैत्यालयनिकी वंदनाकरि आऊं हूँ । इतने तुम बहुत यत्नसों रहना, अमोघशस्त्र कहिए खाली न पड़ै—ऐसा जो शस्त्र ताके धारक हो, अर मैं भी शीघ्रही आऊं हूँ । ऐसी लिखकर वंदनाविषै आसक्त है मन जाका, वैरीकी सेनाको न गिनता

संता पांडुकवन गया। अर नलकूबर लोकपालने अपने निज वर्गसों मंत्रकरि नगरकी रक्षामें तत्पर विद्यामय सौ योजन ऊंचा, वज्रशाल नामा कोट बनाया, प्रदक्षिणाकरि तिगुणा। रावणने नलकूबर का नगर जाननेके अर्थि प्रहस्त नामा सेनापति भेज्या। सो जायकरि पाछा आय रावणसों कहता भया-हे देव! मायामई कोटकरि मंडित वह नगर है सो लिया न जाय। देखो प्रत्यक्ष दीखै है। सर्व दिशाओं में भयानक विकराल दाढ़को धरे सर्प समान शिखर जाके, अर बलता जो सघन बांसन का वन ता समान देखी न जाय ऐसी ज्वालाके समूहकरि संयुक्त उठै हैं स्फुलिंगोंकी राशि जामें, अर याके यंत्र वेतालका रूप धरैं विकराल हैं दाढ़ जिनकी, एक योजनके मध्य जो मनुष्य आवै ताको निगलै हैं, तिन यंत्रनिविषै प्राप्त भए जे प्राणियोंके समूह तिनका यह शरीर न रहै, जन्मांतरमें और शरीर धरै। ऐसा जानकर आप दीर्घदर्शी हो, सो या नगरके लेनेका उपाय विचारो। तदि रावण मंत्रियों से उपाय पूछने लाग्या। सो मंत्री मायामई कोटके दूर करवेंका उपाय चिंतवते भए। कैसे हैं मंत्री? नीति शास्त्रविषै अति प्रवीण हैं।

अथानन्तर नलकूबरकी स्त्री उपरंभा इन्द्रकी अप्सरा जो रंभा ता समान है गुण, अर रूप जाका पृथ्वीविषै प्रसिद्ध, सो रावणको निकट आया सुन अति अभिलाषा करती भई। आगैं रावणके रूप गुण श्रवणकर अनुरागवती थी ही रात्रिविषै अपनी सखी विचित्रमालाको एकांतमें ऐसें कहती भई–हे सुन्दरी! मेरे तू प्राण समान सखी है, तो समान और नाहीं। अपना अर जाका, एक मन होय ताको सखी कहिए, मेरेमें अर तेरेमें भेद नाहीं। तातैं हे चतुरे! निश्चयतैं मेरे कार्यका साधन तू करै तो तुझे अपनी चित्तकी बात कहूं। जे सखी है ते निश्चयसेती जीतव्यका अवलंबन होय है। जब ऐसे रानी उपरंभाने कह्या तदि सखी विचित्रमाला कहती भई–हे देवी! एती बात कहा कहो हो? हम तो तिहारे आज्ञाकारी जो मनवांछित कार्य कहो सोही करैं। मैं अपने मुखसों अपनी स्तुति कहा करूं, अपनी स्तुति करना लोकविषै निंद्य है, बहुत क्या कहूं। मोहि तुम मूर्तिवती साक्षात् कार्यको

सिद्धि जानो। मेरा विश्वासकरि तिहारे मनविषै जो होय सो कहो। हे स्वामिनी! हमारे होते तोहि खेद कहा? तब उपरंभा निश्वास लेकर कपोलविषै कर धर मुखमेतैं न निकसते जो वचन ते बारम्बार प्रेरणाकरि बाहिर निकासती भई। हे सखी! बालपनेहीसों लेकर मेरा मन रावणविषै अनुरागी है। मैं लोकविषै प्रसिद्ध महासुन्दर ताके गुण अनेक बार सुने हैं। सो मैं अंतरायके उदयकरि अबतक रावणके संगमको प्राप्त न भई। चित्तविषै परम प्रीति धरूं हूँ। अर अप्राप्तिका मेरे निरंतर पछतावा रहै हैं। हे रूपिणी! मैं जानूं हूँ यह कार्य प्रशंसा योग्य नाहीं। नारी दूजे नरके संयोगकरि नरकविषै पड़े है। तथापि मैं मरणको सहिवे समर्थ नाहीं, तातैं हे मिष्टभाषिणी! मेरा उपाय शीघ्र कर। अब वह मेरे मन का हरणहारा निकट आया है! काहू भांति प्रसन्न होय मेरा तासों संयोग कर दे। मैं तेरे पायन पडूं हूं। ऐसा कहकरि वह भामिनी पाय पडने लागी, तदि सखीने सिर थांभ लिया, अर यह कही कि हे स्वामिनी! तिहारा कार्य क्षणमात्रविषै सिद्धि करूं। यह कहि कर दूती घरसैं निकसी। जानै हैं इन सकल बातनकी रीति। अति सूक्ष्म श्याम वस्त्र पहनकर आकाशके मार्ग रावणके डेरेविषै आई। राज लोकमें गई। द्वारपालतैं अपने आगमनका वृत्तांत कहकर रावणके निकट जाय प्रणाम किया। आज्ञा पाय बैठकर विनती करती भई—हे देव! दोष के प्रसंगतैं रहित तिहारे सकल गुणनिकरि यह सकल लोक व्याप्त हो रह्या है, तुमको यही योग्य है। अति उदार है विभव तिहारा, या पृथ्वीविषै सबही को तृप्त करो हो। तुम सबके आनन्द निमित्त प्रकट भए हो। तिहारा आकार देखकर यह मनविषै जानिए है कि तुम काहूकी प्रार्थना भंग न करो, तुम बड़े दातार, सबके अर्थ पूर्ण करो हो, तुम सारिखे महंत पुरुषनिको जो विभूति है सो परोपकारहीके अर्थि है। सो आप सबनिको सीख देयकरि एक क्षण एकांत विराजकर चित्त लगाय मेरी बात सुनो तो मैं कहूं। तदि रावणने ऐसा ही किया। तदि याने उपरंभाका सकल वृत्तांत कानविषै कह्या।

तदि रावण दोनों हाथ काननपर धरि, सिर धुनि, नेत्र संकोच, केकसी माताके पुत्र पुरुषनिविषै

उत्तम, सदा आचार परायण कहते भए–हे भद्रे ! कहा कही ? यह काम पापके बंधका कारण कैसे
करनेमें आवै ? मैं परनारियोंको अंगदान करनेविषै दरिद्री हूँ । ऐसे कर्मोंको धिक्कार होउ । तैंने अभि-
मान तजकर यह बात कही, परन्तु जिनशासनकी यह आज्ञा है कि विधवा अथवा धनीकी राणी अथवा
कुवारी अथवा वेश्या सर्व ही परनारी सदाकाल सर्वथा तजनी । परनारी रूपवती है तो कहा ? यह कार्य
लोक अर परलोकका विरोधी विवेकी न करै । जो दोनों लोक भ्रष्ट करै सो काहेका मनुष्य–? हे भद्रे
परपुरुषकरि जाका अंग मर्दित भया ऐसी जो परदारा, सो उच्छिष्ट भोजन समान है, ताहि कौन नर
अंगीकार करै ? यह बात सुन विभीषण महामंत्री सकल नयके जाननहारे, राजविद्याविषै श्रेष्ठ है
बुद्धि जिनकी, रावणको एकांतविषै कहते भए– हे देव ! राजानिके अनेक चरित्र हैं । काहू समय काहू
प्रयोजनके अर्थ किंचित्मात्र अलीक भी प्रतिपादन करैं । तातैं आप यासूं अत्यन्त रूखी बात मत
कहो । वह उपरंभा वशभई संती कछु गढ़के लेनेका उपाय कहेगी । ऐसे वचन विभीषणके सुनकर
रावण राजविद्यामें निपुण मायाचारी विचित्रमाला सखीसों कहते भए हे–भद्रे ! वह मेरेमें मन राखे
है, अर मेरे बिना अत्यन्त दुखी है, तातै वाके प्राणनिकी रक्षा मोकूं करनी योग्य है । सो प्राणोंसे न
छूटै या प्रकार पहले उसको लेआवो । जीवोंके प्राणोंकी रक्षा यही धर्म है । ऐसा कहकर सखीको सीख
दीनी, सो जायकर उपरंभाको तत्काल ले आई । रावणने याका बहुत सन्मान किया । तदि वह मदन
सेवनकी प्रार्थना करती भई । रावण ने कही–हे देवी ! दुर्लंघ नगर विषै मेरी रमणेकी इच्छा है । यहां
उद्यानविषै कहां सुख ? ऐसा करो जो नगरविषै तुम सहित रमूं । तदि वह कामातुर ताकी कुटिलता
को न जानकरि, स्त्रियोंका मूढ़ स्वभाव होय है, ताने नगरके मायामई कोटभंजनका उपाय आसालका
नाम विद्या दीनी, अर बहुत आदरतैं नानाप्रकारके दिव्य शस्त्र दिये, देवनिकरि करिए है रक्षा जिनकी ।
तदि विद्याके लाभतैं तत्काल मायामई कोट जाता रह्या । जो सदाका कोट था सोई रह गया । तदि
रावण बड़ी सेनाकर नगरके निकट गया । अर नगरके कोलाहल शब्द सुनकर राजा नलकूवर क्षोभको

प्राप्त भया। मायामई कोटको न देखकरि विषादमन भया, अर जानी कि रावणने नगर लिया, तथापि महा पुरुषार्थ धरता संता युद्ध करवेको बाहरि निकस्या। अनेक सामंतनि सहित परस्पर शस्त्रनके समूहकरि महासंग्राम प्रवरत्या। जहां सूर्यकी किरण भी नजर न आवे, क्रूर है शब्द जहां। विभीषण ने शीघ्र ही लातकी दे नलकूवरका रथ तोड़ डारया, अर नलकूवरको पकड़ लिया। जैसें रावणने सहस्रकिरणको पकड़ा हुता तैसें विभीषणने नलकूवरको पकड़या। रावणकी आयुधशालाविषै सुदर्शन चक्ररत्न उपज्या। उपरंभाको रावणने एकांतविषैं कही;– जो तुम विद्यादानसों मेरी गुरु हो, अर तुमको यह योग्य नाहीं जो अपने पतिको छोड़ दूजा पुरुष सेवो। अर मुझे भी अन्यायमार्ग सेवना योग्य नाहीं ? या भांति याको दिलासा करी अर नलकूवरको याके अर्थि छोडया। कैसा है नलकूवर ? शस्त्रनिकरि विदारया गया है बख्तर जाका, नहीं लगा है शरीरके घाव जाके। रावणने उपरंभासे कही या भरतारसहित मनवांछित भोगकर। कामसेवनाविषै पुरुषोंमें कहा भेद है। अर अयोग्यकार्य करनेतैं मेरी अकीर्ति होय, अर मैं ऐसे करूं तो लोग भी या मार्ग विषै प्रवर्त्तें। पृथ्वीविषैं अन्याय की प्रवृत्ति होय। अर तू राजा आकाशध्वजकी बेटी, तेरी माता मृदुकांता, सो तू विमलकुलविषैं उपजी शीलको राखने योग्य है। या भांति रावणने कही तदि उपरंभा लज्जायमान भई, अपने भरतारविषैं संतोष किया, अर नलकूवर भी स्त्रीका व्यभिचार न जान स्त्रीसहित रमता भया, अर रावण सों बहुत सन्मान पाया। रावणकी यही रीति है कि जो आज्ञा न मानैं ताका पराभव करै, अर जो आज्ञा मानैं ताका सन्मान करै। अर युद्ध विषैं मारयाजाय सो मारया जावो, अर पकडया आवै ताकों छोड दे। रावणने संग्रामविषैं शत्रुनिको जीतनेतैं बड़ा यश पाया, बड़ी है लक्ष्मी जाके महासेनाकरि संयुक्त वैताड़ पर्वतके समीप जाय पडया।

तब राजा इन्द्र रावणको समीप आया सुनकर अपने उमराव जे विद्याधर देव कहावैं तिन समस्त ही सो कहता भयाः–हो विश्वसी आदि देव हो ! युद्धकी तैयारी करो। कहा विश्राम कर रहे हो ?

राक्षसनिका अधिपति आया। यह कर करि इन्द्र अपने पिता जो सहस्रार तिनके समीप सलाह करवेको गया। नमस्कारकरि बहुत विनयसंयुक्त पृथ्वीपर बैठ बापसों पूछी–हे देव ! बैरी प्रबल अनेक शत्रुनिको जीतनहारा निकट आया है सो क्या कर्तव्य है ? हे तात ! मैंने काम बहुत विरुद्ध किया जो यह बैरी होता ही प्रलयको न प्राप्त किया, कांटा उगता ही होठनतैं टूटे, अर कठोर परै पीछे चुभै, रोग होता ही मिटै तो सुख उपजै अर रोगकी जड़ बंधै तो कटना कठिन है, तैसैं क्षत्री शत्रुकी वृद्धि होने न दे, मैं याके निपातका अनेक बेर उद्यम किया परन्तु आपने वृथा मने किया, तब मैं क्षमा करी। हे प्रभो ! मैं राजनीतिके मार्गकरि विनती करूं हूं। याके मारवेमैं असमर्थ नाहीं हूं। ऐसे गर्व अर क्रोधके भरे पुत्रके वचन सुनकर सहस्रारने कही–हे पुत्र ! तू शीघ्रता मत करि, अपने श्रेष्ठ मंत्री हैं तिनसों मंत्र विचारि। जे विना विचारे कार्य करे हैं, तिनके कार्य विफल होय हैं। अर्थकी सिद्धिका निमित्त केवल पुरुषार्थ नाहीं है। जैसैं कृषिकर्मका है प्रयोजन जाकै, ऐसा जो किसान ताकूं मेघकी वृष्टि विना कहा कार्य होय ? अर जैसैं चटशालाविषैं शिष्य पढैं हैं, सबं ही विद्याको चाहैं हैं परन्तु कर्मके वशतैं काहूकों विद्यासिद्धि होय है, काहूको सिद्धि न होय। तातैं केवल पुरुषार्थसों ही सिद्धि न होय। अब रावणसों मिलापकरि। जब वह अपना भया, तब तू पृथ्वीका निःकंटक राज्य करैगा। अर अपनी पुत्री रूपवती नामा महारूपवती रावणको परणाय दे। यामैं दोष नाहीं। यह राजानिकी रीति ही है। पवित्र है बुद्धि जिनकी ऐसे पिताने इन्द्रको न्यायरूप वार्त्ता कही, परंतु इन्द्रके मनमें न आई। क्षण-मात्रमें रोसकरि लाल नेत्र होय गए, क्रोधकरि पसेव आय गये। महाक्रोधरूप वाणी कहता भया–हे तात ! मारने योग्य वह शत्रु ताहि कन्या कैसे दीजिये। ज्यों ज्यों उमर अधिक होय, त्यों त्यों बुद्धि क्षय होय है। तातैं तुम यह बात योग्य न कही। कहो, मैं कौनसों घाट हूं, मेरे कौन वस्तुकी कमी है। जातैं तुम ऐसे कायर वचन कहे। जा सुमेरुके पायनि चांद सूर्य लागि रहे सो उतंग सुमेरु कैसे और निकूं नवै। जो वह रावण पुरुषार्थ करि अधिक है, तो मैं भी तातैं अत्यंत अधिक हूं। अर देव उसके

अनुकूल है यह बात निश्चय तुम कैसैं जानी ? अर जो कहोगे, तानैं बहुत वैरी जीते हैं तो अनेक मृगनिको हतनहारा जो सिंह ताहि कहा अष्टपाद न हनै ? हे पिता ! शस्त्रनके संपातकरि उपज्या है अग्निका समूह जहाँ ऐसे संग्रामविषै प्राण त्यागना भला है । परन्तु काहूसों नमीभूत होना बड़े पुरुषनिको योग्य नाहीं । पृथ्वीपर मेरी हास्य होय कि यह इन्द्र रावणसों नम्रीभूत हुवा । पुत्री देकर मिल्या, सो तुमने यह तो विचारा ही नाहीं ! अर विद्याधरपनेकरि हम अर वह बराबर है, परंतु बुद्धि पराक्रममें वह मेरी बराबर नाहीं । जैसैं सिंह अर स्याल दोऊ वनके निवासी हैं परन्तु पराक्रममें सिंह तुल्य स्याल नाहीं । ऐसे पितासों गर्वके वचन कहे । पिताकी बात मानी नाहीं । पितातैं विदा होयकरि आयुधशालामें गए । क्षत्रीनिको हथिहार बांटे अर वक्तर बांटे अर सिंधूराग होने लगे, अनेक प्रकारके वादित्र बजने लगे । अर सेनामैं यह शब्द भया कि हाथियोंको सजावो, घोड़ोंके पलान कसो, रथोंके घोड़े जोड़ो, खड्ग बांधो, वक्तर पहरो, धनुष बाण लो, सिरपर टोप धरो, शीघ्र ही खंजर लावो इत्यादि शब्द देव जातिके विद्याधरोंके होते भए ।

अथानन्तर योधा कोपको प्राप्त भए, ढोल बाजने लगे, हाथी गाजने लगे, घोड़े हींसने लगे और धनुषके टंकार होने लगे, योधाओंके गुंजार शब्द होने लगे और बंदीजन बिरद बखानने लगे । जगत शब्दमई होय गया, सर्व दिशा तरवार तथा तोमर जातिके शस्त्र तथा पांसिन करि, ध्वजानिकरि, शस्त्रनिकरि और धनुषनिकरि आच्छादित भई । और सूर्य भी आच्छादित होय गया । राजा इन्द्रकी सेनाके जे विद्याधर देव कहावै ते समस्त रथनूपुरतें निकसे । सर्व सामग्री धरे युद्धके अनुरागी दरवाजे आय भेले भए । परस्पर कहै हैं रथ आगैं करि, माता हाथी आया है । हे महावत ! हाथी इस स्थानतैं परैं करि । हो घोड़ेके सवार ! कहां खड़ा हो रह्या है, घोड़ेको आगैं ले, या भांतिके वचनालाप होते संते शीघ्रही देव बाहिर निकसे, गाजते आए । सेनाविषै शामिल भए, और राक्षसोंके सन्मुख आए । रावणके अर इन्द्रके युद्ध होने लगा । देवोंने राक्षसोंकी सेना कछु हटाई । शस्त्रनिके जे समूह तिनके

प्रहारकरि आकाश आच्छादित होय गया। तदि रावणके योधा बज्रवेग, हस्त, प्रहस्त, मारीच, उद्भव, वज्र, वक्र, शुक्र, घोन, सारन, गगनोज्वल, महाजठर, मध्याभ्रक्रूर इत्यादि अनेक विद्याधर बड़े योधा राक्षसवंशी नानाप्रकारके बाहनोंपर चढ़े अनेक आयुधोंके धारक देवोंसे लड़ने लगे। तिनके प्रभावकरि क्षणमात्रमें देवनिकी सेना हटी। तब इन्द्रके बड़े योधा कोपकरि भरे, युद्धकों सनमुख भए, तिनके नाम मेघमाली, तडसंग, ज्वलिताक्ष, अरि संचर, पाचकसिदन इत्यादि बड़े बड़े देवोंने शस्त्रोंके समूह चलावते संते राक्षसनिकी दबाया, सो कछुएक शिथिल होय गए। तब और बड़े २ राक्षस इनको धीर्य बंधावते भये। महासामंत राक्षसवंशी विद्याधर प्राण तजते भये। परन्तु शस्त्र न डारते भए। राजा महेन्द्रसेन बानरवंशी राक्षसनिके बड़े मित्र तिनका पुत्र प्रसन्नकीर्ति ताने बाणोंके प्रहारकरि देवनिकी सेना हटाई, राक्षसनिके बलकूं बड़ा धीर्य बंधाया, तब प्रसन्नकीर्त्तिके बाणनिके प्रभावकरि देव हटे। तदि अनेक देव प्रसन्नकीर्तिपर आये, सो प्रसन्नकीर्तिने अपने बाणनिकरि विदारे। जैसे खोटे तपस्वियोंका मन मन्मथ (काम) विदारै। तब और बडे २ देव आए, कपि राक्षस अर देवोंके खड्ग कनक गदा शक्ति धनुष मुद्गर इनकरि अति युद्ध भया। तब माल्यवानका बेटा श्रीमाली रावणका काका, महा प्रसिद्धपुरुष अपनी सेनाकी मददके अर्थि देवनिपरि आया। सूर्य समान है कांति जाकी, सो ताके बाणनिकी वर्षातैं देवोंकी सेना हट गई। जैसैं महाग्राह समुद्रको झकोलै तैसैं देवनकी सेना श्रीमालीने झकोली। तब इन्द्रके योधा अपने बलकी रक्षानिमित्त महाक्रोधके भरे अनेक आयुधोंके धारक शिखि केशर दंडाग्र कनक प्रवर इत्यादि इन्द्रके भानजे बाण वर्षाकरि आकाशकों आच्छादते संते श्रीमाली पर आए। सो श्रीमाली २०० अर्धचन्द्र बाणतैं उनके शिररूप कमलोंकरि पृथ्वी आच्छादित करी। तब इन्द्रने विचारचा कि यह श्रीमाली मनुष्योंविषैं महायोधा, राक्षसवंशियोंका अधिपति माल्यवानका पुत्र है। यानै मेरे बड़े २ देव मारे हैं। अर ये मेरे भानजे मारे या राक्षसके सन्मुख मेरै देवोंमें कौन आवै? यह अतिवीर्यवान महा तेजस्वी देख्या न जाय। तातैं मैं युद्धकरि याहि मारूं। नातर यह मेरैं अनेक देवनिको हतैगा। ऐसाविचारि

अपने जो देवजाति के विद्याधर श्रीमालीतैं कम्पायमान भये हुते तिनको धीर्य बंधाय, आप युद्ध करवेको उद्यमी भया। तब इन्द्रका पुत्र जयंत बापके पायनपरि विनती करता भया—हे देवेंद्र ! मेरे होते संते आप युद्ध करो, तदि हमारे जन्म निरर्थक है। हमको आपने बाल अवस्थाविषै अति लडाए, अब तिहारे ढिग शत्रुनिको युद्धकरि हटाऊं। यह पुत्रका धर्म है। आप निराकुल विराजिये जो अंकुर नखतैं छेद्या जाय तापर फरसी उठावना कहा ? ऐसा कहकरि पिताकी आज्ञा लेय मानो अपने शरीरकरि आकाशकों असंगा—ऐसा क्रोधायमान होय युद्धके अर्थि श्रीमालीपर आया। श्रीमाली याकों युद्धयोग्य जान खुशी भया—याके सन्मुख गए। ये दोनों ही कुमार परस्पर युद्ध करने लगे। धनुष खैंच बाण चलावते भये। इन दोनों कुमारनिका बडा युद्ध भया। दोनों ही सेनाके लोक इनका युद्ध देखते भए। सो इनका युद्ध देखि आश्चर्यको प्राप्त भये। श्रीमालीने कनक नामा हथियारकरि जयन्तका रथ तोडचा। अर ताको घायल किया, सो मूर्छा खाय पडचा। फिर सचेत होय लडने लग्या। श्रीमालीके भिंडमालकी दीनी, रथ तोडचा, अर मूर्छित किया, तदि देवनिकी सेनाविषै अति हर्ष भया—अर राक्षसनिको सोच भया। फिर श्रीमाली सचेत भया—तदि जयंतके सन्मुख भया, दोनोंमें महायुद्ध भया। दोनों सुभट राजकुमार युद्ध करते शोभते भए। मानों सिंहके बालक ही हैं। बडी देरमें इन्द्रके पुत्र जयंतने माल्यवान का पुत्र जो श्रीमाली ताकै गदाकी छाती विषै दीनी सो पृथ्वी पर पडचा, बदन कर रुधिर पडने लग्या। तत्काल सूर्य अस्त होजाय तैसें प्राणांत होय गया। श्रीमालीकों मार करि इन्द्रका पुत्र जयंत शंखनाद करता भया। तदि राक्षसनिकी सेना भयभीत भई अर पाछी हटी। माल्यवानके पुत्र श्रीमालीको प्राणरहित देख, अर जयंत को उद्यम देखि रावणके पुत्र इन्द्रजीतने अपनी सेनाको धीर्य बंधाया अर कोपकरि जयंतके सन्मुख आया। सो इन्द्रजीतने जयंतका बखतर तोड डाल्या, अर अपने बाणनि करि जयंतको जर्जरा किया। तदि इन्द्र जयंतको घायल देखि छेद्या गया है बखतर जाका, रुधिरकरि लाल होयगया है शरीर जाका, ऐसा देखकरि आप युद्धको उद्यमी भया। आकाशको अपने आयुधनिकरि आच्छादित

करता संता अपने पुत्रकी मददके अर्थि रावणके पुत्रपर आया, तब रावणको सुमति नामा सारथीने कहा—हे देव ! ऐरावत हाथीपर चढ्या लोकपालनिकरि मंडित, हाथविषै धरै मुकुटके रत्ननिकी प्रभाकरि उद्योत करता संता, उज्ज्वल छत्रकरि सूर्यको आच्छादित करता संता, क्षोभको प्राप्त भया ऐसा जो समुद्र ता समान सेनाकरि संयुक्त जो यह इन्द्र महाबलवान है। इन्द्रजीतकुमार यासूं युद्ध करने समर्थ नाहीं। तातैं आप उद्यमी होयकरि अहंकारयुक्त जो यह शत्रु ताहि निराकरण करो। तब रावण इंदको सन्मुख आया देखि आगैं मालीका मरण यादकरि अर हाल श्रीमालीका बधकरि महाक्रोधरूप भया। अर शत्रुनिकरि अपनें पुत्रको बेढ्या देख आप दौड्या। पवन समान है वेग जाका, ऐसे रथविषै चढ्या दोनों सेनाके योधानिविषै परस्पर विषम युद्ध होता भया, सुभटनिके रोमांच होय आए। परस्पर शस्त्रनिके निपात करि अंधकार होय गया, रुधिरकी नदी बहने लगी, योधा परस्पर पिछानै न परै, केवल ऊंचे शब्दकरि पिछाने परै, अपने अपने स्वामीके प्रेरे योधा अति युद्ध करते भए। गदा शक्ति बरछी मूसल खड्ग बाण, परिघजातिके शस्त्र, कनकजातिके शस्त्र, शक्र कहिये सामान्यचक्र, बरछी तथा त्रिशूल पाश मुखंडी जातिके शस्त्र, कुहाडा मुद्गर वज्र पाषाण हलदंड कोणजातिके शस्त्र अर नाना प्रकारके शस्त्र तिनकरि परस्पर अति युद्ध भया। परस्पर उनके शस्त्र उनने काटे, उनके उन्होंने काटे। अति विकराल युद्ध होते परस्पर शस्त्रनिके घातकरि अग्नि प्रज्वलित भई। रणविषै नानाप्रकारके शब्द होय रहे हैं, कहीं मारलो मारलो ये शब्द होय हैं। कहीं एक रण २ कहीं किण २, त्रम २, दम दम, छमछम, पटपट, टसछस, टढटढ तथा तटतट, चटचट, घघघघ इत्यादि शस्त्रनिकरि उपजे अनेक प्रकारके शब्दनिकर रणमंडल शब्दरूप होयगया। हाथीनिकरि हाथी मारे गए, घोड़निकर घोड़े मारे गये, रथोंपर रथ तोड़े गये, पियादनिकर पियादें हते। हाथियोंकी सूंडकर उछले जे जलके छींटे तिनकरि शस्त्र संपातकर उपजी थी जो अगिन सो शांत भई। परस्पर गज युद्धकर हाथीनके दांत टूट पड्या, गजमोती बिखर गये। योधानिमें परस्पर यह आलाप भए—हो शूरवीर ! अस्त्र चलाय, कहा

कायर होय रह्या है ? हे भटसिंह ! हमारे खड्गका प्रहार संभार, हमारेतैं युद्धकरि । यह मूवा तू अब कहां जाय है । अर कोईसूं कहै है:—तू यह युद्धकला कहां सीख्या, तरवारका भी सम्हारना न जानै है । अर कोई कहै है तू इस रणतैं जा, अपनी रक्षाकर, तू कहा युद्ध करना जानैं ? तेरा शस्त्र मेरे लाग्या सो मेरी खाज भी न मिटी, तैं वृथा ही धनकी आजीविका अब तक खाई, अबतक तैं युद्ध कहीं देख्या नाहीं । कोई ऐसैं कहै हैं—तू कहा कांपै है, तू थिरता भज, मुष्टि दृढ़ राख, तेरे हाथतैं खड्ग गिरैगा । इत्यादि योधानिमैं परस्पर आलाप होते भये । कैसे हैं योद्धा ? महा उत्साहरूप हैं, जिनको मरनेका भय नाहीं । अपने अपने स्वामीनिके आगैं सुभट भले दिखाये । किसीको एक भुजा शत्रुकी गदाके प्रहारकरि टूट गई है, तो भी एक ही हाथतैं युद्ध करता रह्या । काहूका सिर टूट पड्या, तो धड़ ही लडै है । योधानिके बाणनिकरि वक्षस्थल विदारे गये, परन्तु मन न चिगे । सामंतनिके सिर पड़े, परन्तु मान न छोड्या । शूरवीरनिके युद्धमें मरण प्रिय है, टरकर जीवना प्रिय नाहीं । ते चतुर महा धीरवीर महापराक्रमी महासुभट यशकी रक्षा करते संते शस्त्रनिके धारक प्राण त्याग करते भये, परन्तु कायर होयकरि अपयश न लिया । कोई एक सुभट मरता थका भी बैरीके मारवे की अभिलाषा-करि क्रोधका भर्या, वैरीके ऊपर जाय पड्या, ताको मार आप मर्या । काहूके हाथनितैं शस्त्र शत्रुके शस्त्र घातकरि निपात भए ? तदि वह सामंत मुष्टिरूप जो मुद्गर ताके घातकरि शत्रुको प्राणरहित करता भया । कोई एक महासुभट शत्रुनिको भुजानितैं मित्रवत् आलिंगनकरि मसल डारता भया । कोई एक सामंत परचक्रके योधानिकी पंक्तिको हणता संता अपने पक्षके योधानिका मार्ग शुद्ध करता भया । २०३
कोई एक योधा रणभूमिविषै परते संते भी वैरीनिको पीठ न दिखावते भए, सूधे पड़े । रावण अर इन्द्रके युद्धमें हाथी घोड़े रथ योधा हजारों पड़े । पहिले जो रज उठी हुती सो मदोन्मत्त हाथियोंके मदभरनेकरि तथा सामंतनिके रुधिरका प्रवाहकरि दबगई । सामंतोंके आभूषणनिकरि रत्नों की ज्योति-करि आकाशविषै इन्द्रधनुष होयगया । कोईएक योधा बायें हाथकरि अपनी आंतां थांभकरि महा

भयंकर खड्ग काढि वैरी ऊपर गया। कोईएक योधा अपनी आंतही करि गाढ़ी कमर बांधे होंट डसता शत्रु ऊपर गया। कोईएक आयुधरहित होय गया तो भी रुधिरका रंग्या रोषविषैं तत्पर वैरीके माथे पर हस्तका प्रहार करता भया। कोईएक रणधीर महा शूरवीर युद्धका अभिलाषी पाशकरि वैरीको बांधकरि छोड़ देता भया, रणकर उपज्या है हर्ष जाकै ऐसा। कईएक न्यायसंग्रामविषैं तत्पर वैरीको आयुध रहित देखकरि आप भी आयुध डारि खड़े होय रहे, कईएक अन्त समय संन्यास धार नमोकार मंत्रका उच्चारणकरि स्वर्ग प्राप्त भये। कईएक योधा आशीविष सर्पसमान भयंकर पडता २ भी प्रतिपक्षीको मारकरि मरचा। कईएक अर्धसिर छेद्या गया ताहि बायें हाथविषैं दाबि महापराक्रमी दौडकर शत्रुका सिर फाडचा। कईएक सुभट पृथ्वीकी आगल समान जो अपनी भुजा तिनहीकरि युद्ध करते भए। कईएक परम क्षत्रिय धर्मज्ञ शत्रुको मूर्छित भया देखि आप पवन झोल सचेत करते भए। या भांति कायरनिको भयका उपजावनहारा अर योधानिको आनंदका उपजावनहारा महा संग्राम प्रवर्त्या। अनेक गज, अनेक तुरंग, अनेक योधा शस्त्रनिकरि हते गए। अनेक रथ चूर्ण होयगए, अनेक हाथियोंकी सूंड कट गई, घोडानिके पांव टूट गए, पूंछ कट गई, पियादे काम आय गए। रुधिरके प्रवाहकरि सर्व दिशा आरक्त होयगई। एता रण भया सो रावण किंचित्मात्र भी न गिन्या। रणविषैं है कौतूहल जाके ऐसे सुभटभावका धारक रावण सुमति नामा सारथीकों कहता भया—हे सारथी! इस इन्द्रके सन्मुख रथ चलाय, अर सामान्य मनुष्योंके मारवेकरि कहा? यें तृण समान सामान्य मनुष्य तिनपर मेरा शस्त्र न चालै। मेरा मन महायोधावोंके ग्रहणविषैं तत्पर है, यह क्षुद्र मनुष्य अभिमानतैं इन्द्र कहावै है। याहि आज मारूं अथवा पकडूं। यह विडम्बनाका करणहारा पाखंड करि रह्या है, सो तत्काल दूर करूं। देखो याकी ढीठता, आपको इन्द्र कहावै है अर कल्पनाकर लोकपाल थापे हैं, अर इन मनुष्योंने विद्याधरोंकी देव संज्ञा धरी है। देखो अल्पसी विभूति पाय मूढमती भया है, लोकहास्यका भय नाहीं। जैसैं नट सांग धरचा है, दुर्बुद्धि आपको भल गया। पिताके वीर्य माताके

रुधिर करि मांस हाडमई शरीर माताके उदरतैं उपज्या तोहू वृथा आपको देवेंद्र मानै है । विद्याके बलकरि याने यह कल्पना करी है । जैसैं काग आपको गरुड़ कहावै तैसैं यह इन्द्र कहावै है । या भांति जब रावणने कह्या तब सुमति सारथीने रावणका रथ इन्द्रके सन्मुख किया । रावणको देख इन्द्रके सब सुभट भागे । रावणसों युद्ध करवेको कोई समर्थ नाहीं । रावण सर्वको दयालु दृष्टिकर कीट समान देखै, रावणके सन्मुख ए इन्द्र ही टिका अर सर्व कृत्रिमदेव याका छत्र देख भाज गए । जैसैं चंद्रमाके उदयतैं अंधकार जाता रहै । कैसा है रावण ? वैरियोंकर झेल्या न जाय । जैसैं जलका प्रवाह ढाहेनिकरि थांभ्या न जाय अर जैसैं क्रोधसहित चित्तका वेग मिथ्यादृष्टि तापसीनिकर थांभ्या न जाय तैसैं सामंतोंकरि रावण थांभ्या न जाय । इन्द्र भी कैलाश पर्वतसमान हाथीपर चढ्या, धनुषनिको धरे तरकशतैं तीर काढता रावणके सन्मुख आया । कानतक धनुषको खींच रावणपर बाण चलाया । जैसें पहाड़पर मेघ मोटी धारा बर्षावै तैसे रावणपर इन्द्रने बाणनिकी वर्षा करी । रावणने इन्द्रके बाण आवते आवते काट डारे अर अपने बाणनिकरि शरमंडप किया । सूर्याकी किरण बाणनिकी दृष्टिकरि न आवै, ऐसा युद्ध देख नारद आकाशविषैं नृत्य करता भया । कलह देख उपजैं है हर्ष जाको । जब इंद्रने जान्या कि यह रावण सामान्य शस्त्रकर असाध्य है, तदि इंद्रने अग्निबाण रावणपर चलाया । ताकरि रावणकी सेनाविषैं आकुलता उपजी । जैसैं बांसनिका वन प्रजलै, अर ताकी तडतडात ध्वनि होय, अग्निकी ज्वाला उठै, तैसैं अग्निबाण प्रज्वलता संता आया । तब रावणने अपनी सेनाको व्याकुल देख तत्कालही जलबाण चलाया । सो मेघमाला उठी, पर्वत समान जलकी मोटी धारा बरसने लगी, क्षणमात्रमें अग्निबाण बुझ गया । तब इंद्रने रावणपर तामस बाण चलाया । ताकरि दशों दिशानिमें अंधकार होयगया । रावणके कटकविषैं काहूको कुछ भी न सूझै । तब रावणने प्रभास्त्र कहिए प्रकाश बाण चलाया, ताकरि क्षणमात्रमें सकल अंधकार विलय होयगया, जैसैं जिनशासनके प्रभावकरि मिथ्यात्वका मार्ग विलय जाय । फिर रावणने कोपकरि इंद्रपै नागबाण चलाया, सो मानों महाकाले

नाग ही चलाए। भयंकर है जिह्वा जिनकी, ते सर्प इन्द्रकै अर सकल सेनाकै लिपट गए। सर्पनिकरि बेढ्या इन्द्र अति व्याकुल भया, जैसैं भवसागरविषैं जीव कर्मजालकर बेढ्या व्याकुल होय है। तब इंद्र ने गरुडबाण चितारचा सो सुवर्णसमान पीत पंखनिके समूहकरि आकाश पीत होय गया, अर पांखीनिकी पवनकरि रावणका कटक हालने लग्या, मानों हिंडोलेमें झूलै है। गरुडके प्रभावकर नाग ऐसे विलाय गए जैसैं शुक्लध्यानके प्रभावकरि कर्मनिके बंध विलय होय जांय। जब इन्द्र नागबंधनितैं छूटकर जेठके सूर्यसमान अति दारुण तपता भया तदि रावणने त्रैलोक्यमंडन हाथीको इन्द्रके ऐरावत हाथीपर प्रेरचा। कैसा है त्रैलोक्यमंडन? सदा मद झरै है और बैरियोंको जीतनहारा है। इन्द्रने भी ऐरावतको त्रैलोक्यमंडन पर धकाया। दोनों गज महा गर्वके भरे लड़ने लगे। झरै है मद जिनके, क्रूर हैं नेत्र जिनके, हालै हैं कर्ण जिनके, देदीप्यमान है विजुरी समान स्वर्णकी सांकल जिनके, दोऊ हाथी शरदके मेघसमान अति गाजते, परस्पर अति भयंकर जो दांत तिनके घातनिकरि पृथ्वीको शब्दायमान करते, चपल है शरीर जिनका, परस्पर सूंडोंसे अद्भुत संग्राम करते भए।

तब रावणने उछलकरि इन्द्रके हाथीके मस्तकपर पग धरि अति शीघ्रताकरि गजके सारथी को पाद प्रहारतैं नीचैं डारचा अर इन्द्रको वस्त्रतैं बांध्या, अर बहुत दिलासा देयकरि पकड़ि अपने गज पर लेय आया। अर रावणके पुत्र इन्द्रजीतने इन्द्रका पुत्र जयंत पकड्या, अपने सुभटोंको सौंप्या, आप इन्द्रके सुभटोंपर दौड्या। तदि रावणने मनै किया—हे पुत्र! अब रणतैं निवृत्त होवो, क्योंकि समस्त विजयार्धके जे निवासी विद्याधर तिनका चूडामणि पकड़ लिया है। अब समस्त अपने अपने स्थानक जावो, सुखसों जीवो। शालितैं चावल लिया, तब परालका कहा काम? जब रावणने ऐसा कह्या तब इन्द्रजीत पिताकी आज्ञातैं पाछा बाहुड्या, अर सर्व देवनिकी सेना शरदके मेघसमान भाग गई। जैसैं पवनकरि शरदके मेघ विलाय जांय। रावणकी सेनामें जीतके वादित्र बाजे, ढोल नगारे शंख झांझ इत्यादि अनेक वादित्रनिका शब्द भया। इन्द्रको पकड्या देख रावणकी सेना अति हर्षित भई। रावण

लंकामें चलवेको उद्यमी भया, सूर्यके समान रथ ध्वजानिकरि शोभित, अर चंचल तुरंग नृत्य करते भए। अर मद झरते हुए नाद करते हाथी तिनपरि भ्रमर गुंजार करैं हैं, इत्यादि महासेनाकरि मंडित राक्षसनिका अधिपति रावण लंकाके समीप आया। तब समस्त बंधुजन अर नगरके रक्षक तथा पुरजन सब ही दर्शनके अभिलाषी भेंट लेय लेय सन्मुख आए, अर रावणकी पूजा करते भए। जे बड़े हैं तिनकी रावणने पूजा करी। रावणको सकल नमस्कार करते भए अर बड़ोंको रावण नमस्कार करता भया। कईएकनिको कृपादृष्टिकरि, कईएकनिकों मंदहास्य करि, कईएकनिकों वचननिकरि रावण प्रसन्न करता भया। बुद्धिके बलतैं जान्या है सबका अभिप्राय जानैं। लंका तो सदा ही मनोहर है, परन्तु रावण बड़ी विजयकरि आया तातैं अधिक समारी है। ऊंचे रत्ननिके तोरण निरमापे, मंदमंद पवनकरि अनेक वर्णकी ध्वजा फरहरै हैं। कुंकुमादि सुगंध मनोज्ञ जलनकरि सींच्या है समस्त पृथ्वीतल जहां और सब ऋतुके फूलनिकरि पूरित है राजमार्ग जहां, अर पंच वर्ण रत्ननिके चूर्ण करि रचे हैं मंगलीक मांडने जहां, अर दरवाजोंपर थांभे हैं पूर्ण कलश, कमलोंके पत्र पर पल्लवनितैं ढके। सम्पूर्ण नगरी वस्त्राभरणकरि शोभित है। जैसैं देवोंसे मंडित इन्द्र अमरावतीमें आवै, तैसैं विद्याधरनिकरि वेढ्या रावण लंकामें आया। पुष्पक विमानमें बैठ्या, देदीप्यमान है मुकट जाका, महारत्नोंके बाजूबंद पहरि, निर्मल प्रभाकरयुक्त, मोतियोंका हार वक्षस्थल पर धार, अनेक पुष्पोंके समूह करि विराजित, मानों वसंतहीका रूप है। सो ताको हर्षतैं पूर्ण नगरके नर नारी देखते देखते तृप्त न भए। ऐसी मनोहर मूरत है। आसीस देय हैं। नानाप्रकारके वादित्रोंके शब्द होय रहे हैं। जय जयकार शब्द होय हैं। आनन्दतैं नृत्यकारिणी नृत्य करै हैं। इत्यादि हर्षसंयुक्त रावणने लंकामें प्रवेश किया। महा उत्साहकी भरी लंका ताहि देखि रावण प्रसन्न भए। बंधुजन सेवकजन सब ही आनंदको प्राप्त भए। रावण राजमहलमें आये। देखो भव्यजीव हो ! रथनूपुरके धनी राजा इन्द्रने पूर्वपुण्यके उदयतैं समस्त वैरियोंके समूह जीतकर सर्व सामग्रीपूर्ण तिनको तृणवत् जानि सबको जीतकर दोन्यों श्रेणिका राज बहुत वर्ष किया। अर इन्द्रके

तुल्य विभूतिकों प्राप्त भया। अर जब पुण्य क्षीण भया, तदि सकल विभूति विलय होयगई, रावण ताको पकड़ करि लंकामें ले आया। तातैं मनुष्यके चपल सुखको धिक्कार होहु। यद्यपि स्वर्गलोकके देवनिका विनाशीक सुख है तथापि आयुपर्यंत और रूप न होय अर जब दूसरी पर्याय पावै तब औररूप होय। अर मनुष्य तो एक ही पर्यायमें अनेक दशा भोगै। तातैं मनुष्य होय जे मायाका गर्व करै हैं ते मूर्ख हैं। अर यह रावण पूर्वपुण्यतैं प्रबल वैरीनिको जीतिकरि अति वृद्धिको प्राप्त भया। यह जानकरि भव्य जीव सकल पापकर्मका त्याग कर शुभकर्मही को अंगीकार करो।

इतिश्री रविषेणाचार्यविरचित महा पद्मपुराण संस्कृतग्रन्थ, ताकी भाषावचनिकाविषै इन्द्रका पराभवनाम बारहवां पर्व पूर्ण भया॥ १२॥

अथानन्तर इन्द्रके सामंत धनीके दुःखतैं व्याकुल भए। तदि इन्द्रका पिता सहस्रार जो उदासीन श्रावक है, तासो बीनती करि इन्द्रके छुड़ावनेके अर्थि सहस्रारको लेयकरि लंकामें रावणके समीप गये। द्वारपालनिसों बीनती करि इन्द्रके सकल वृत्तांत कहकरि रावणके ढिग गये। रावणने सहस्रारकों उदासीनश्रावक जानकरि बहुत विनय किया। इनको सिंहासन दिया, आप सिंहासनतैं उतरि बैठे, सहस्रार रावणकों विवेकी जानि कहता भया। हे दशानन! तुम जगजीत हो सो इन्द्रको भी जीत्या। तिहारि भुजानिकी सामर्थ्य सबनने देखी। जे बडे राजा हैं ते गर्ववतनिके गर्व दूरकरि फिर कृपा करैं, तातैं अब इन्द्रको छोड़ो! यह सहस्रारने कही अर जे चारों लोकपाल हुते तिनके मुंहतैं भी यही शब्द निकस्या। मानो सहस्रारका प्रतिशब्द ही कहते भए। तब रावण सहस्रारकों तो हाथ जोड़ि यही कही जो आप कहो सोई होगा, अर लोकपालनितैं हंसकरि क्रीडारूप कही जो तुम चारों लोकपाल नगरविषै बुहारी देवो, कमलनिका मकरंद अर तृण कंटकरहित पुरी करो, सुगन्ध करि पृथ्वीको सींचो अर पांच वर्णके सुगंध मनोहर जो पुष्प तिनतैं नगरीकों शोभित करो। यह बात जब रावणने

कही तब लोकपाल तो लज्जावान होय नीचे होय गये। अर सहस्रार अमृतरूप वचन बोले, हे धीर तुम जाकों जो आज्ञा करो सोही वह करै, तुम्हारी आज्ञा सर्वोपरि है। यदि तुम सारिखे गुरुजन पृथ्वीके शिक्षादायक न होय तो पृथ्वीके लोक अन्यायमार्गविषै प्रवरतैं। यह वचन सुनकर रावण अति प्रसन्न भए, अर कही, हे पूज्य ! तुम हमारे ताततुल्य हो, अर इन्द्र मेरा चौथा भाई, याको पायकर मैं सकल पृथ्वी कंटकरहित करूंगा। याकों इन्द्रपद वैसा ही है। अर यह लोकपाल ज्योंके त्यों ही हैं। अर दोन्यों श्रेणीके राज्यतैं और अधिक चाहो सो लेहु। मोमैं अर यामैं कछु भेद नाहीं। अर आप बड़े हो, गुरुजन हो, जैसें इन्द्रको शिक्षा देवो तैसें मोहि देवो, तिहारी शिक्षा अलंकाररूप है। अर आप रथनूपुरविषै विराजो अथवा यहां विराजो, दोऊ आपहीकी भूमि हैं। ऐसें प्रिय वचनकरि सहस्रार का मन बहुत संतोष्या। तब सहस्रार कहने लाग्या, हे भव्य ! तुम सारिखे सज्जन पुरुषनिकी उत्पत्ति सर्व लोकनिको आनन्दकारणी है। हे चिरंजीव ! तिहारे शूरवीरपनेका आभूषण यह उत्तम विनय समस्त पृथ्वीविषै प्रशंसाकों प्राप्त भया है। तिहारे देखनेकरि हमारे नेत्र सुफल भए। धन्य तिहारे माता पिता, जिनतैं तिहारी उत्पत्ति भई। कुंदके पुष्पसमान उज्ज्वल तिहारी कीर्ति, तुम समर्थ अर क्षमावान, दातार अर निर्गर्व, ज्ञानी अर गुणप्रिय, तुम जिनशासनके अधिकारी हो। तुमने हमको जो कही यह तिहारा घर है, अर जैसें इन्द्र पुत्र तैसें मैं, सो तुम इन बातोंके लायक हो, तिहारे मुखतैं ऐसे ही वचन झरैं। तुम महाबाहु, दिग्गजकी सूंड समान भुजा तिहारी, तुम सारिखे पुरुष या संसारविषै विरले हैं। परन्तु जन्मभूमि माता समान है, सो छांडी न जाय। जन्मभूमिका वियोग चित्तको आकुल करै हैं, तुम सर्व पृथ्वीके पति हो, परन्तु तुमको भी लंका प्रिय है। मित्र बांधव अर समस्त प्रजा हमारे देखनेके अभिलाषी आवनेका मार्ग देखै हैं। तातैं हम रथनूपुर ही जायेंगे। अर चित्त सदा तुम्हारे समीप ही है। हे देवनके प्यारे ! तुम बहुतकाल पृथ्वीकी निर्विघ्न रक्षा करो। तब रावणने ताही समय इन्द्रको बुलाया और सहस्रारके लार किया। अर आप रावण कितनीक दूर तक सहस्रार

को पहुंचाने गए । और बहुत विनयकरि सीख दीनी । सहस्रार इंद्रको लेयकरि लोकपालनि सहित विजयार्धगिरिपर आए, सर्वराज ज्योंका त्यों ही है । लोकपाल आयकरि अपने अपने स्थानकबैठे परंतु मान भंगसे असाताको प्राप्त भए । ज्यों २ विजयार्धके लोक इंद्रके लोकपालनिको और देवनिको देखैं त्यों २ यह लज्जा कर नीचे होय जांय । अर इंद्र कै भी न तो रथनूपुर से प्रीति, न राणियोंमें प्रीति, न उपवनादिमेंप्रीति न लोकपालोंमें प्रीति, न कमलोंके मकरंदसों पीत होय रह्या है जल जिनका, ऐसे मनोहर सरोवर तिनमैं प्रीति, और न किसी क्रीड़ाविषै प्रीति, यहांतक कि अपने शरीरसों भी प्रीति नाहीं । लज्जाकर पूर्ण है चित्त जाका । सो ताको उदास जानि अनेक विधिकर प्रसन्न किया चाहैं और कथाके प्रसंगतैं वह बात भुलाया चाहैं परंतु यह भूले नाहीं । सर्व लीला विलास तजे, अपने राजमहलके मध्य गंधमादन पर्वतके शिखर समान ऊंचा जो जिनमंदिर ताके एक थंभसों माथेलिये रहैं । कांतिरहित होय गया है शरीर जाका । पंडितनिकरि मंडित यह विचार करै है कि धिक्कार है या विद्याधर पदके ऐश्वर्यको जो एक क्षणमात्रविषै विलाय गया । जैसैं शरद ऋतुके मेघनिके समूह अत्यन्त ऊंचे होवें परंतु क्षण-मात्रविषै विलय जाय । तैसैं ते शस्त्र, ते हाथी, ते योधा, ते तुरंग पूर्वं अनेक बार अद्भुत कार्यके करणहारे समस्त तृणसमान होयगए । अथवा कर्मोंकी यह विचित्रता है, कौन पुरुष अन्यथा करनेको समर्थ है ? तातैं जगतमें कर्म प्रबल हैं । मैं पूर्व नानाविधि भोग सामग्रियोंके निपजावनवारे कर्म उपार्जे हुते सो अपना फल देयकरि खिरि गए, जातैं यह दशा बरतै है । रणसंग्रामविषै शूरवीर सामंतनिका मरण होय तो भला, जाकरि पृथ्वीविषै अपयश न होय । मैं जन्मतैं लेकर शत्रुओंके सिरपर चरण देकर जिया । सो मैं इंद्र शत्रुका अनुचर होयकर कैसे राज्यलक्ष्मी भोगूं ? तातैं अब संसारके इंद्रियजनित सुखोंकी अभिलाषा तजकर मोक्षपदकी प्राप्तिके कारण जे मुनिव्रत तिनको अंगीकार करूं । रावण शत्रुका भेष धरि मेरा महामित्र आया । तानै मोहि प्रतिबोध दिया । मैं असार सुखके आस्वादविषै आसक्त हुता । ऐसा विचार इंद्रने किया । ताही समय निर्वाणसंगम नामा चारण मुनि विहार करते

हुए आकाश मार्गतैं जाते हुते सो चैत्यालयनिके प्रभावकरि उनका आगैं गमन न होय सक्या। तब वे चैत्यालय जानि नीचे उतरे, भगवानके प्रतिबिंबका दर्शन किया। मुनि चारज्ञानके धारक थे। सो उनको राजा इन्द्र ने उठकरि नमस्कार किया। मुनिके समीप जाय बैठ्या, बहुत देर तक अपनी निंदा करी। सर्वसंसारका वृत्तांत जाननहारे मुनिने परम अमृतरूप वचनकरि इन्द्रको समाधान किया कि–हे इन्द्र! जैसैं अरहटकी घड़ी भरी रीति होय है अर रीती भरी होय है, तैसैं यह संसारकी माया क्षणभंगुर है। याके और प्रकार होनेका आश्चर्य नाहीं। मुनिके मुखसों धर्मोपदेश सुन इन्द्रने अपने पूर्वभव पूछे। तब मुनि कहै हैं। कैसे हैं मुनि ? अनेक गुणनिके समूहतैं शोभयमान हैं। हे राजन्! अनादिकालका यह जीव चतुरगतिविषैं भ्रमण करै है, जो अनन्तभव धरै सो केवलज्ञानगम्य है। कई एक भव कहिए हैं सो सुन।

शिखापद नामा नगरविषैं एक मानुषी महा दलिद्रनी जाका नाम कुलवंती। सो चीपड़ी, अमनोज्ञ नेत्र, नाक चिपटी, अनेक व्याधिकी भरी, पापकर्मके उदयकरि लोगनिकी जूठ खायकर जीवै। खोटे वस्त्र, अभागिनी, फाट्या अंग महा रुक्ष खोटे केश, जहां जाय तहां लोक अनादरै हैं, जाको कहीं सुख नाहीं। अंतकालविषैं शुभमति होय एक मुहूर्तका अनशन लिया। प्राण त्यागकरि किंपुरुष देवकै शीलधरा नामा किन्नरी भई। तहांसों चय करि रत्ननगरविषैं गोमुखनामा कलुंबी, ताकै धरनी नामा स्त्री, ताके सहस्रभाग नामा पुत्र भया। सो परम सम्यक्त्वको पायकरि श्रावकके व्रत आदरे, शुक्रनामा नवमा स्वर्ग तहां जाय उत्तम देव भया। तहांसे चयकर महा विदेहक्षेत्रके रत्नसंचय नगरविषैं मणि
नामा मंत्री, ताकै गुणावली नामा स्त्री, ताके सामंतवर्धन नामा पुत्र भया। सो पिताके साथ वैराग्य अंगीकार किया। अति तीव्र तप किए। तत्त्वार्थविषैं लग्या है चित्त जाका, निर्मल सम्यक्त्वका धारी, कषायरहित, बाईस परीषह सहकरि शरीर त्याग नवग्रीवक गया। अहमिंद्रके बहुत काल सुख भोगकरि राजा सहस्रार विद्याधरके रानी हृदयसुन्दरी तिनकै तू इन्द्र नामा पुत्र भया। या रथनूपुर नगर-

सो तू विद्याधरोंका अधिपति विषै जन्म लिया । पूर्वके अभ्यासकरि इन्द्रके सुखमें मन आसक्त भया । सो शत्रुनिकरि जीत्या इन्द्र कहाया । अब तू वृथा मनविषै खेद करै है, जो मैं विद्याविषै अधिक हुता सो करै है । ये प्राणी जैसे कर्म गया है । सो हे इन्द्र ! कोई निर्बुद्धि कोदों बोयकरि वृथा शालिकी प्रार्थना करै है । कारण बिना करै है तैसैं फल भोगै हैं । तैंने भोगका साधन शुभकर्म पूर्व किया हुता, सो क्षीण भया । कर्म किए, कार्यकी उत्पत्ति ना होय है । या बातका आश्चर्य कहा ? तूने याही जन्मविषै अशुभ करी सो तिनकरि यह अपमानरूप फल पाया । अर रावण तो निमित्तमात्र है । तैंने जो अज्ञान चेष्टा आवै है । कहा नाहीं जानै है ? तू ऐश्वर्य मदकरि भ्रष्ट भया बहुत दिन भए, तातैं तोहि याद नाहीं पुत्री एकाग्रचित्तकरि सुन ! अरिंजयपुर में वह्निवेग नामा विद्याधर राजा, ताको रानी वेगवती, विभव- अहिल्या, ताका स्वयंबरमंडप रच्या हुता । तहां दोनों श्रेणिक विद्याधर अति अभिलाषी होय धनी करि शोभायमान गये । अर तू भी बड़ी सम्पदासहित गया । अर एक चंद्रावर्त नामा नगरका कैसी राजा आनदमाल सो भी तहां आया । अहिल्याने सबको तजकरि ताके कंठविषै वरमाला डाली । इन्द्राणीसहित है अहिल्या ? सुन्दर है सर्व अंग जाका । सो आनंदमाल अहिल्याको परणकरि जैसें इन्द्र ता दिनतैं स्वर्गलोकमें सुख भोगै, तैसें मनवांछित भोग भोगता भया । सो जा दिनतैं अहिल्या परणी वाको तेरे यासों ईर्षा बढ़ी । तैंने वाको अपना बड़ा बैरी जान्या । कईएक दिन वह घर विषै रह्या । फिर जाकरि ऐसी बुद्धि उपजी कि यह देह विनशीक है, यासों मुझे कछु प्रयोजन नाहीं, अब मैं तप करूं विचार- संसारका दुःख दूर होय । ये इन्द्रियनिके भोग महाठग, तिनविषै सुखकी आशा कहां ? ऐसा मनमें हंसावली करि वह ज्ञानी अंतर-आत्मा सर्व परिग्रहको तजकरि परम तप आचरता भया । एक दिन क्रोधरूप नदी के तीर कायोत्सर्ग धर तिष्ठै था सो तैंने देख्या । ताके देखनेमात्र रूप ईंधनकरि बढ़ी है हुता, अग्नि जाके, सो तैं मूर्खने गर्वकर हांसी करी । अहो आनन्दमाल ! तू काम भोगविषै अति आसक्त चितवन- अहिल्या का रमण अब कहां ? विरक्त होय पहाड़ सारिखा निश्चल तिष्ठ्या है । तत्वार्थके

विषै लग्या है अत्यन्त स्थिर मन जाका। या भांति परम मुनिकी तैंने अवज्ञा करी। सो वह तो आत्मसुखविषै मग्न, तेरी बात कुछ हृदयविषै न धरी। उनके निकट उनका भाई कल्याण नामा मुनि तिष्ठै था तानै तोहि कही—यह महामुनि निरपराध, तैंने इनकी हांसी करी। सो तेरा भी पराभव होगा। तब तेरी स्त्री सर्वश्री सम्यग्दृष्टि साधूनिकी पूजा करनहारी, तानै नमस्कारकरि कल्याणस्वामीको उपशांत किया। जो वह शांत न करतो तो तू तत्काल साधूनिकी कोपाग्नितैं भस्म हो जाता। तीनलोकमें तप समान कोई बलवान नाहीं। जैसी साधुओंकी शक्ति है, तैसी इन्द्रादिक देवोंकी शक्ति भी नाहीं। जो पुरुष साधु लोगोंका निरादर करै हैं ते इस भवमें अत्यन्त दुख पाय नरक निगोदविषै पड़े हैं। मनकर भी साधुओं का अपमान न करिए। जे मुनिजनका अपमान करै हैं सो इसभव अर परभवविषैं दुखी होय हैं। क्रूरचित्त, मुनियोंको मारै अथवा पीड़ा करै हैं, सो अनन्तकाल दुःख भोगवै है। मुनिकी अवज्ञा समान और पाप नाहीं, मनवचनकायकरि यह प्राणी जैसे कर्म करै हैं तैसे ही फल पावै हैं। या भांति पुण्य पाप कर्मोंके फल भले बुरे जीव भोगै हैं। ऐसा जानकरि धर्मविषैं बुद्धिकरि, अपने आत्माकों संसारके दुःखनितैं निवृत्ति करो। महा मुनिके मुखसों राजा इन्द्र पूर्वभव सुन आश्चर्यको प्राप्त भया। नमस्कारकरि मुनिसों कहता भया—हे भगवान्! तिहारे प्रसादतैं मैंने उत्तम ज्ञान पाया, अब सकल पाप क्षणमात्रविषै विलय गए, साधुनिके संगतैं जगतविषै कुछ दुर्लभ नाहीं। तिनके प्रसादकर अनन्त जन्मविषै न पाया जो आत्मज्ञान सो पाइए है। यह कहकरि मुनिको बारम्बार वंदना करी। मुनि आकाशमार्ग विहार कर गए। इन्द्र गृहस्थाश्रमतैं परम वैराग्यको प्राप्त भया। जलके बुदबुदा समान शरीरको असार जानि धर्मविषै निश्चल बुद्धिकर अपनी अज्ञान चेष्टाको निंदता संता वह महापुरुष अपनी राजविभूति पुत्रको देयकरि अपने बहुत पुत्रनिसहित अर लोकपालनिसहित तथा अनेक राजानि सहित सर्वकर्मनिकी नाशकरनहारी जिनेश्वरी दीक्षा आदरी, सर्व परिग्रहका त्याग किया। निर्मल है चित्त जाका, प्रथम अवस्थाविषै जैसा शरीर भोगमैं लगाया हुता तैसा ही तपके समूहमें लगाया।

ऐसा तप औरनितैं न बन पड़े। पुरुषोंकी बड़ी शक्ति है जैसी भोगों में प्रवर्तैं तैसैं विशुद्धभावविषै प्रवर्तैं हैं। राजा इन्द्र बहुत काल तपकरि शुक्लध्यानके प्रतापतैं कर्मनिका क्षयकरि निर्वाण पधारे। गौतम स्वामी राजा श्रेणिकसो कहैं हैं—देखो! बड़े पुरुषोंके चरित्र आश्चर्यकारी हैं, प्रबल पराक्रमके धारक बहुत काल भोगकरि वैराग्य लेय अविनाशीसुखको भोगवै हैं। यामैं कुछ आश्चर्य नाहीं। समस्त परिग्रहका त्यागकर क्षणमात्रविषै ध्यानके बलतैं मोटे पापनिका क्षय करै हैं। जैसे बहुत कालतैं ईंधनकी राशि संचय करी सो क्षणमात्रमें अग्निके संयोगकरि भस्म होय है। ऐसा जानकर हे प्राणी! आत्मकल्याणका यत्न करो। अंतःकरण विशुद्ध करो, मृत्युके दिनका कुछ निश्चय नाहीं। ज्ञानरूप सूर्यके प्रतापकरि अज्ञान तिमिरको हरो।

इतिश्री रविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृतग्रन्थ, ताकी भाषावचनिकाविषै इन्द्रका निर्वाणगमन नाम तेरहवां पर्व पूर्ण भया ॥ १३ ॥

अथानन्तर रावण विभव और देवेंद्रसमान भोगनिकरि मूढ है मन जाका, सो मनवांछित अनेक लीला विलास करता भया। यह राजा इन्द्रका पकडनहारा एकदिन सुमेरुपर्वतके चैत्यालयनिकी वंदनाकरि पीछे आवताहुता। सप्त क्षेत्र, षट् कुलाचल तिनकी शोभा देखता नानाप्रकारके वृक्ष नदी सरोवर स्फटिकमणिहूं ते निर्मल महा मनोहर अवलोकन करता थका, सूर्यके भवन समान विमानमें विराजमान, महा विभूतिकरि संयुक्त, लंकाविषै आवनेका है मन जाका, सो तत्काल महा मनोहर उतंगनाद सुनता भया। तब महा हर्षवान होय, मारीच मंत्रीकों पूछता भया—हे मारीच! यह सुन्दर महानाद काहेका है और दशोंदिशा काहेतैं लाल होय रही हैं। तब मारीचने कहा—हे देव! यह केवलीकी गंधकुटी है और अनेक देव दर्शनको आवैं हैं। तिनके मनोहर शब्द होय रहे हैं। अर देवनि के मुकुटआदि की किरणनिकरि यह दशोंदिशा रंगरूप होयरही हैं। इस स्वर्णपर्वतविषै अंनतवीर्य मुनि तिनको

केवलज्ञान उपज्या है। ये वचन सुनकरि रावण बहुत आनन्दको प्राप्त भया। सम्यक्दर्शनकरि संयुक्त है, अर इन्द्रका वश करणहारा है, महाकांतिका धारी आकाशतैं केवलीकी बंदनाके अर्थि पृथ्वीपर उतर्‌या, बंदनाकर स्तुति करी। इन्द्रादिक अनेक देव केवलीके समीप बैठे हुते, रावण भी हाथ जोड़ नमस्कारकरि अनेक विद्याधरनि सहित उचित स्थानमें तिष्ठ्या।

चतुरनिकायके देव तथा तिर्यंच अर अनेक मनुष्य केवलीके समीप तिष्ठे हुते। तासमय किसी शिष्यने पूछ्या। हे देव, हे प्रभो! अनेक प्राणी धर्म अर अधर्मके स्वरूप जाननेकी तथा तिनके फल जाननेकी अभिलाषा राखैं हैं, अर मुक्तिके कारण जानना चाहैं हैं, सो तुम ही कहने योग्य हो। तब भगवान केवलज्ञानी अनन्तवीर्य मर्यादारूप अक्षर जिनमें विस्तीर्णअर्थ, अति निपुण शुद्ध संदेहरहित सबके हित-कारी प्रियवचन कहते भए। अहो भव्य जीव हो! यह जीव चेतनालक्षण अनादिकालका निरन्तर अष्टकर्मनिकरि बंध्या, आच्छादित है आत्मशक्ति जाकी, सो चतुरगतिमें भ्रमण करै है, चौरासीलाख योनियोंमें नानाप्रकार इन्द्रियोंकरि उपजी जो वेदना ताहि भोगता संता सदाकाल दुखी होय रागी द्वेषी मोही हुआ, कर्मनिके तीव्र मंद मध्य विपाकतैं कुम्हारके चक्रवत् पाया है चतुरगतिका भ्रमण जानै, ज्ञानावरणी कर्मकरि आच्छादित है ज्ञान जाका, सो अतिदुर्लभ मनुष्यदेही पाई। तो भी आत्म-हितको नाहीं जानै है। रसनाका लोलुपी, स्पर्श इन्द्रीका विषयी, पांच हूँ इन्द्रियोंके वश भया। अति निंद्य पापकर्मकरि नरकविषै पड़े है। जैसैं पाषाण पानीमैं डूबै है। कैसा है नरक? अनेक प्रकारकरि उपजे जे महादुख तिनका सागर है। महा दुखकारी है। जे पापी क्रूरकर्मा धनके लोभी, माता, पिता,
भाई, पुत्र, स्त्री, मित्र इत्यादि सुजन तिनको हनै हैं, जगतमैं निंद्य है चित्त जिनका, ते नरकमें पड़े हैं। तथा जे गर्भपात करैं हैं तथा बालक हत्या करैं हैं, वृद्धको हनै हैं, अबला (स्त्रियों) की हत्या करैं हैं, मनुष्योंको पकडै हैं, रोकै हैं, बांधै है, मारै हैं, पक्षी तथा मृगनिको हनै हैं, जे कुबुद्धि स्थलचर जलचर जीवों की हिंसा करैं हैं, धर्मरहित है परिणाम जिनका ते महावेदनारूप जो नरक ता विषै पड़े हैं। अर

जे पापी शहदके अर्थि मधुमाखियोंका छाता तोड़े हैं तथा मांस आहारी मद्यपायी शहदके भक्षण करन-हारे, वनके भस्म करनहारे, तथा ग्रामनिके बालनहारे, बंदीके करणहारे, गायनके घेरनहारे, पशुघाती महा हिंसक, भील, अहेड़ी, बागरा, पारधी इत्यादि पापी महानरकमैं पड़े हैं। अर जे मिथ्यावादी परदोषके भाखणहारे, अभक्ष्यके भक्षण करनहारे, परधनके हरणहारे, परदाराके रमनहारे, वेश्यानिके मित्र हैं ते घोर नरकमें पड़े हैं, जहां काहू की शरण नाहीं। जे पापी मांसका भक्षण करैं हैं ते नरक में प्राप्त होय हैं, तहां तिनहीका शरीर काट काट तिनके मुखविषैं दीजिए है, अर ताते लोहेके गोले तिनके मुखमें दीजिए है। अर मद्यपान करनेवालोंके मुखमें सीसा गाल गाल डारिये है। अर परदारा-लंपटियोंका ताती लोहेकी पुतलियोंसे आलिंगन करावैं हैं। जे महापरिग्रहके धारी महा आरंभी, क्रूर है चित्त जिनका, प्रचंड कर्मके करनहारे हैं ते सागरांपर्यंत नरकमें बसैं हैं। साधुओंके द्वेषी, पापी मिथ्या-दृष्टि, कुटिल कुबुद्धी रौद्रध्यानी मरकर नरकमें प्राप्त होय हैं। जहां विक्रियामई कुहाड़े तथा खड्ग, चक्र, करोत, अर नानाप्रकारके विक्रियामई शस्त्र तिनकरि खंड खंड कीजिए है, फिर शरीर मिल जाय है, आयु पर्यंत दुख भोगवै हैं। तीक्ष्ण हैं चौंच जिनकी, ऐसे मायामई पक्षी ते तन विदारैं हैं, तथा मायामई सिंह व्याघ्र स्वान सर्प अष्टापद स्याली बीछू तथा और प्राणियोंसे नानाप्रकारके दुख पावैं हैं। नरकके दुखनिको कहां लग वरणन करिए। अर जे मायाचारी प्रपंची विषयाभिलाषी हैं ते प्राणी तिर्यंचगतिको प्राप्त होय हैं, तहां परस्पर बंध अर नानाप्रकारके शस्त्रनकी घाततैं महादुख पावै हैं। तथा वाहन तथा अति भारका लादना शीत उष्ण क्षुधा तृषादिकरि अनेक दुख भोगवै हैं। यह जीव भवसंकटविषै भ्रमता स्थलविषै जलविषै गिरिविषै तरुविषै और गहनवनविषै अनेक ठौर सूता। एकेंद्री बेइंद्री, तेइंद्री, चौइंद्री, पंचेंद्री अनेक पर्यायनिमें अनेक जन्म मरण किए। जीव अनादिनिधन है, याका आदि अंत नाहीं। तिलमात्र भी लोकाकाशविषै प्रदेश नाहीं जहां संसारभ्रमणविषै इस जीवने जन्म-मरण न किए हों। अर जे प्राणी निगर्व हैं, कपटरहित, स्वभाव ही कर संतोषी हैं, ते मनुष्यदेहको पावैं

है। सो यह नर देह परम निर्वाण सुखका कारण ताहि पायकरि भी जे मोहमदकरि उन्मत्त कल्याण-
मार्गको तजकरि क्षणमात्रमें सुखकेअर्थि पाप करै हैं, ते मूर्ख हैं। मनुष्य भी पूर्वकर्मके उदयकरि कोई
 आर्यखंडविषै उपजै हैं, कोई म्लेच्छखंडविषै उपजै हैं तथा कोई धनाढ्य, कोई अत्यन्त दरिद्री होय हैं,
 कोई कर्मके प्रेरे अनेक मनोरथ पूर्ण करै हैं, कोई कष्टसों पराए घरोंमें प्राणपोषण करै हैं, कोई कुरूप
 कोई रूपवान, कोई दीर्घआयु, कोई अल्पआयु, कोई लोकनिको वल्लभ, कोई अभावने, कोई सभाग, कोई
अभागे, कोई औरोंको आज्ञा देवें, कोई औरनके आज्ञाकारी, कोई यशस्वी, कोई अपयशी, कोई शूर, कोई
कायर, कई जलविषै प्रवेश करैं, कई रणमें प्रवेश करैं, कई देशांतरमें गमन करैं, कई कृषिकर्म करैं,
कई व्यापार करैं, कई सेवा करैं। या भांति मनुष्यगतिविषै भी सुखदुखकी विचित्रता है। निश्चय
विचारिए तो सर्वगतिमें दुख ही है, दुखहीको कल्पनाकर सुख मानै हैं। अर मुनिव्रत तथा श्रावकके
व्रतनिकरि तथा अव्रत सम्यक्त्वकरि तथा अकामनिर्जरातैं तथा अज्ञानतपतैं देवगति पावै हैं। तिनमें
कई बड़ी ऋद्धिके धारी, कई अल्पऋद्धिके धारी, आयु कांति प्रभाव बुद्धि सुख लेश्याकरि ऊपरले देव
चढ़ते, अर शरीर अभिमान अर परिग्रहसे घटते, देवगतिमें भी हर्ष विषादकर कर्मका संग्रह करै हैं।
चतुरगतिमें यह जीव सदा अरहटकी घड़ीके यंत्र समान भ्रमण करै है। अशुभ संकल्पनितैं दुख को
पावै हैं, अर दानके प्रभावतैं भोगभूमिविषै भोगनिको पावै हैं। जे सर्व परिग्रह रहित मुनिव्रतके धारक हैं
सो उत्तमपात्र कहिये, अर जे अणुव्रतके धारक श्रावक हैं तथा आर्यिका सो मध्यमपात्र कहिए हैं।
अर व्रतरहित सम्यग्दृष्टि है सो जघन्यपात्र कहिए है। इन पात्रनिको विनयभक्तिकरि आहार देना
पात्रका दान कहिये। अर बाल वृद्ध अंध पंगु रोगी दुर्बल दुखित भुखित इनको करुणाकर अन्न जल
औषधि वस्त्रादिक दीजिए सो करुणादान कहिये। पात्रकै दानकरि उत्कृष्ट भोगभूमि, अर मध्यपात्र
के दानकरि मध्य भोगभूमि, अर जघन्यपात्रके दानकरि जघन्य भोगभूमि होय है। जो नरक निगोदादि
दुखनितैं रक्षा करै सो पात्र कहिये। सो सम्यग्दृष्टि मुनिराज हैं, ते जीवनको रक्षा करै हैं। जे सम्यक्-

दर्शन, ज्ञान, चारित्रकर निर्मल हैं ते परमपात्र कहिए। जिनके मान अपमान, सुख दुख, तृण कांचन
दोनों बराबर हैं, तिनको उत्तमपात्र कहिए। जिनके रागद्वेष नाहीं। जे सर्वपरिग्रहरहित महा तपस्वी,
आत्मध्यानविषैं तत्पर ते मुनि उत्तम पात्र कहिए, तिनको भावकरि अपनी शक्तिप्रमाण अन्न जल
औषध देनी तथा वनमें तिनके रहनेके निमित्त वस्तिका करावनी तथा आर्यानिको अन्न जल वस्त्र
औषधी देनी। श्रावक श्राविका सम्यग्दृष्टियोंको अन्न जल वस्त्र औषधि इत्यादि सर्व सामग्री देनी।
बहुत विनयकरि सो पात्रदानकी विधि है, दीन अंधादि दुःखित जीवोंको अन्न वस्त्रादि देना। बंदीतैं
छुड़ावना। यह करुणादानकी रीति है।

यद्यपि यह पात्रदान तुल्य नाहीं। तथापि योग्य है, दुःखका कारण है ! अर पर उपकार सो ही
पुण्य है। अर जैसे भले क्षेत्रमें बोया बीज बहुत गुणा होय फलै है तैसे शुद्धचित्तकरि पात्रनिकों दिया
दान अधिक फलकों फलै है, अर जे पापी मिथ्यादृष्टि रागद्वेषादियुक्त व्रतक्रिया रहित महामानी ते पात्र
नाहीं, अर दीन हू नाहीं। तिनको देना निष्फल है। नरकादिका कारण है। जैसे ऊसर (कल्लर) खेतविषै
बोया बीज वृथा जाय है और जैसें एक कूपका जल ईखविषै प्राप्त भया मधुरताकों लहै है, अर नींब-
विषै गया कटुकताको भजे है तथा एक सरोवरका जल गायने पिया सो दूधरूप होय परणवै है, अर सर्पने
पिया विषहोय परणवै है, तैसें सम्यक्दृष्टि पात्रनिको भक्तिकर दिया जो दान सो शुभफलकों फलै है।
अर पापी पाखंडी मिथ्यादृष्टि अभिमानी परिग्रही तिनकों भक्तिकरि दिया दान अशुभफलकों फलै है। जे २१८
मांसआहारी मद्यपायी कुशीली आपको पूज्य मानैं, तिनका सत्यकार न करना, जिनधर्मियोंकी सेवा
करनी, दुःखियोंको देख दया करनी, अर विपरीतियोंसे मध्यस्थ रहना, दया सब जीवोंपर राखनी,
किसीको क्लेश न उपजावना। अर जे जिनधर्मतैं पराङ्मुख हैं, परवादी हैं ते भी धर्मको करना ऐसा कहैं
हैं, परन्तु धर्मका स्वरूप जानैं नाहीं। तातैं जे विवेकी हैं ते परखकरि अंगीकार करै हैं। कैसे हैं विवेकी ?
शुभोपयोगरूप है चित्त जिनका, ते विचार करै हैं—जे गृहस्थ स्त्रीसंयुक्त आरम्भी, परिग्रही, हिंसक

पद्म
पुराण
२१९

कामक्रोधादिकर संयुक्त, गर्भवंत, धनाढ्य अर आपको पूज्य मानै तिनको भक्तिकरि बहुत धन देना
ताविषैं कहा फल है ? अर तिनकरि आप कहा पावै ? अहो यह बड़ा अज्ञान है, कुमारगतैं ठगे जीव
ताहि पात्रदान कहै हैं और दुःखी जीवोंको करुणादान न करै हैं। दुष्ट धनाढ्यनिको सर्व अवस्थामें
धन देय हैं। सो वृथा धनका नाश करै हैं, धनवंतनिकों देनेतैं कहा प्रयोजन, ? दुखियोंको देना कार्य-
कारी है। धिक्कार हैं तिन दुष्टनिको जे लोभके उदयकरि खोटे ग्रंथ बनाय मूढ़ जीवनिको ठगैं हैं,
जे मृषावादके प्रभावतैं मांसहूंका भक्षण ठहरावैं हैं। पापी पाखंडी मांसका भी त्याग न करै तो और
कहा करेंगे ? जे क्रूर मांसका भक्षण करै हैं तथा जो मांसका दान करै हैं ते घोरवेदनायुक्त जो नरक
ताविषै पड़े हैं और जे हिंसाके उपकरण शस्त्रादिक तथा जे बन्धनके उपाय पांसी इत्यादि तिनका
दान करै हैं तथा पंचेंद्रिय पशुओंका दान करै हैं, और जो इन दोनोंको निरूपण करै हैं ते सर्वथा निंद्य
हैं। जो कोई पशुका दान करै और वह पशु बांधनेकरि मारबेकरि ताडबेकरि दुखी होय तो देनहारे
को दोष लागै और भूमिदान भी हिंसाका कारण है। जहां हिंसा तहां धर्म नाहीं। चैत्यालयके निमित्त
भूमिका देना युक्त है, और प्रकार नाहीं। जो जीव घातकरि पुण्य चाहैं हैं, ते जीव पाषाणतैं दुग्ध चाहैं
हैं। तातैं एकेंद्री आदि पंचेंद्री पर्यंत सब जीवनिको अभयदान देना और विवेकियोंको ज्ञानदान देना,
पुस्तकादि देना और औषध अन्न जल वस्त्रादि सबकों देना, पशुओंको सूखे तृण देना। और जैसैं समुद्र-
विषै सीप मेघका जल पिया सो मोती होय परणवैं है, तैसैं संसारविषैं द्रव्यके योगतैं सुपात्रनिकों यव
आदि अन्न भी दिये तो महा फलकों फलै हैं, अर जो धनवान होय सुपात्रोंको श्रेष्ठ वस्तुका दान नाहीं
करै हैं सो निंद्य हैं। दान बड़ा धर्म है, सो विधिपूर्वक करना। पुण्य पापविषैं भाव ही प्रधान हैं। जो
विना भाव दान करै है सो गिरिके सिर पर बरसे जल समान है, सो कार्यकारी नाहीं। क्षेत्रविषैं बरसे
है सो कार्यकारी है। जो कोई सर्वज्ञ वीतरागदेवकों ध्यावै है और सदा विधिपूर्वक दान करै है ताके
फलको कौन कह सकै ? तातैं भगवानके प्रतिबिंब तथा जिनमन्दिर, जिनपूजा, जिनप्रतिष्ठा, सिद्धक्षेत्रोंकी

यह धन खर्चनेके सप्त महाक्षेत्र यात्रा, चतुरविध संघकी भक्ति, शास्त्रोंका सर्व देशोंविषै प्रचार करना। हैं। तिनविषैं जो धन लगावौ सौ सफल है। तथा करुणादान परोपकारविषै लागै सो सफल है।

अर जे आयुधका ग्रहण करैं हैं ते द्वेषसंयुक्त जानने। जिनके रागद्वेष है तिनके मोह भी है। अर जे कामिनीके संगतैं आभूषणोंको धारण करैं हैं ते रागी जानने। अर मोह बिना रागद्वेष होय नाहीं। सकल दोषों का मोह कारण है। जिनके रागादि कलंक हैं ते संसारी जीव हैं। जिनके ये नाहीं ते भगवान हैं। जो देशकालकामादिके सेवनहारे हैं ते मनुष्यतुल्य हैं तिनमें देवत्व नाहीं। तिनकी सेवा शिवपुरका कारण नाहीं। अर काहूके पूर्वपुण्यके उदयकरि शुभ मनोहर फल होय है, सो कुदेवसेवाका फल नाहीं। कुदेवनकी सेवातैं सांसारिक सुख भी न होय तो शिवसुख कहातैं होय? तातैं कुदेवनिको सेवना बालूको पेल तेलका काढना है। अर अग्निके सेवनतैं तृषाका बुझावना है। जैसैं कोई पंगुको पंगु देशांतर न ले जाय सकै, तैसैं कुदेवोंके आराधनतैं परमपदकी प्राप्ति कदाचित् न होय। भगवान विना और देवों के सेवनका क्लेश करैं सो वृथा है। कुदेवनमें देवत्व नाहीं। अर जो कुदेवोंके भक्त हैं ते पात्र नाहीं। लोभकरि प्रेरे प्राणी हिंसाकर्मविषैं प्रवरतैं हैं, हिंसाका भय नाहीं। अनेक उपायकर लोकनिसैं धन लेय है। संसारी लोक भी लोभी, सो लोभियोंपै ठगावैं हैं। तातैं सर्वदोषरहित जिनआज्ञा प्रमाण जो महा-दान करै, सो महाफल पावै। वाणिज्य समान धर्म है, कभी किसी वाणिज्यविषैं अधिक नफा होय, कभी अल्प होय, कभी टोटा होय, कदे मूल ही जाता रहै। अल्पतैं बहुत होय जाय, बहुततैं अल्प होय जाय। अर जैसैं विषका कण सरोवरीमें प्राप्त भया सरोवरीको विषरूप न करै तैसैं चैत्यालयादि निमित्त अल्प हिंसा सो धर्मका विघ्न न करै, तातैं गृहस्थी भगवानके मंदिर करावैं। कैसे हैं गृहस्थी? जिनेंद्रकी भक्तिविषैं तत्पर हैं, अर व्रत क्रियामैं प्रवीण हैं। अपनी विभूतिप्रमाण जिनमंदिर कराय जल चंदन धूप दीपादिकर पूजा करनी। जो जिनमंदिरादिमें धन खरचैं, ते स्वर्गलोकमें तथा मनुष्य लोकविषैं अत्यन्त ऊंचे भोग भोग परमपद पावैं हैं। अर जो चतुरविधसंघको भक्तिपूर्वक दान करैं हैं,

ते गुणनिके भाजन हैं, इन्द्रादिपदके भोगोंको पावै हैं। तातैं जे अपनी शक्ति प्रमाण सम्यग्दृष्टि पात्र-
निकों भक्तिकरि दान करैं हैं तथा दुखियोंको दयाभावकरि दान करैं हैं सो धन सफल है। अर कुमा-
रगतैं लाग्या जो धन सो चोरनिकरि लूट्या जानो। अर आत्मध्यानके योगतैं केवलज्ञानकी प्राप्ति होय
है। जिनको केवलज्ञान उपज्या तिनको निर्वाणपद है। सिद्ध सर्व लोकके शिखर तिष्ठै हैं। सर्व बाधा-
रहित, अष्टकर्मरहित, अनंतज्ञान, अनंतदर्शन, अनंतसुख, अनंतवीर्यकरि संयुक्त, शरीरतैं रहित, अमूर्तिक
पुरुषाकार जन्ममरणतैं रहित अविचल विराजै हैं। जिनका संसारविषै आगमन नाहीं। मन इन्द्रीनतैं
अगोचर है। यह सिद्धपद धर्मात्मा जीव पावे हैं। अर पापी जीव लोभरूप पवनसे वृद्धिको प्राप्त भई
जो दुखरूप अग्नि, तामैं बलते, सुकृतरूप जल विना सदा क्लेशकों पावे है, पापरूप अंधकारके मध्य
तिष्ठे मिथ्यादर्शनके वशीभूत हैं। कोई एक भव्यजीव धर्मरूप सूर्यकी किरणनिकरि पाप तिमिरकों
हर, केवलज्ञानको पावै हैं। अर ये जीव अशुभरूप लोहेके पिंजरेमें पड़े आशारूप पाशकरि बेढ़े धर्मरूप
बांधव करि छूटैं हैं। व्याकरणहूतैं धर्मशब्दका यही अर्थ होय है—जो धर्म आचरतासंता दुर्गतिविषै
पड़ते प्राणियोंको थांभै सो धर्म कहिए। ता धर्मका जो लाभ सो लाभ कहिए। जिनशासनविषैं जो
धर्मका स्वरूप कह्या है सो संक्षेपसे तुमको कहै हैं। धर्मके भेद अर धर्मके फलके भेद एकाग्र मनकर
सुनो। हिंसातैं, असत्यतैं, चोरीतैं, कुशीलतैं धन अर परिग्रहके संग्रहतैं विरक्त होना, इन पापोंका
त्याग करना सो महाव्रत कहिए। विवेकियोंको उसका धारण करना, अर भूमि निरख कर चलना, २२१
हितमित संदेहरहित वचन बोलना, निर्दोष आहार लेना, यत्नतैं पुस्तकादि उठावना मेलना, निर्जंतुभूमि-
विषैं शरीरका मल डारना, ये पांचसमिति कहिए, तिनका पालना यत्नकरि। अर मनवचनकायकी जो
वृत्ति ताका अभाव, ताका नाम तीन गुप्ति कहिए। सो परम आदरतैं साधुनिको अंगीकार करनी।
क्रोध मान माया लोभ ये कषाय जीवके महाशत्रु हैं। सो क्षमातैं क्रोधको जीतना, अर मार्दव कहिए
निगर्व परिणाम तिनकरि मानको जीतना। अर आर्जव कहिए—सरल परिणाम—निकपट भाव ताकरि

मायाचारको जीतना। अर संतोषतैं लोभको जीतना। शास्त्रोक्त धर्मके करनहारे जे मुनि तिनको
कषायोंका निग्रह करना योग्य है। ये पांच महाव्रत, पंचसमिति, तीन गुप्ति, कषायनिग्रह मुनिराजका
धर्म है। अर मुनिका मुख्यधर्म त्याग है। जो सर्वत्यागी होय सो ही मुनि है। अर स्पर्शन रसना घ्राण
चक्षु श्रोत्र ये प्रसिद्ध पांच इन्द्री तिनका वश करना ही सो धर्म है। अर अनशन कहिए उपवास, अवमौ-
दर्य कहिए अल्प आहार, व्रतपरिसंख्या कहिए विषम प्रतिज्ञाका धारणा, अटपटी बात विचारनी, या
विधि आहार मिलेगा तो लेवेंगे नातर नाहीं। अर रसपरित्याग कहिए रसनिका त्याग, विविक्त-
शय्यासन कहिए एकांत वनविषै रहना, स्त्री तथा बालक तथा नपुंसक तथा ग्राम्यपशु इनकी संगति
साधुवोंको न करनी। तथा और भी संसारी जीवोंकी संगति न करनी। मुनिको मुनिहीकी संगति
करनी। अर कायक्लेश कहिए ग्रीष्ममें गिरिशिखर, शीतविषै नदीके तीर, वर्षामें वृक्षके तलै, तीनोंकाल
के तप करने तथा विषमभूमिविषै रहना। मासोपवासादि अनेक तप करना, ये षट् बाह्य तप कहे।
अर आभ्यंतर षट् तप सुनो–प्रायश्चित्त कहिए जो कोई मनतैं तथा वचनतैं तथा कायतैं दोष लाग्यासो
सरल परिणामकरि श्रीगुरुके निकट प्रकाशकरि तपादि दंड लेना। बहुरि विनय कहिये देवगुरु शास्त्र
साधर्मियोंका विनय करना तथा दर्शन ज्ञान चारित्रका आचरण सोही इनका विनय, अर इनके जे धारक
तिनका आदर करना, आपतैं जो गुणाधिक होय ताहि देखकरि उठ खड़ा होना, सन्मुख जाना। आप
नीचे बैठना उनको ऊंचे बिठाना। मिष्ट वचन बोलना, दुख पीड़ा मेटनी, अर वैयाव्रत कहिए जे तप-
करि तप्तायमान हैं, रोगकरि युक्त है गात्र जिनका, वृद्ध हैं अथवा नववयके जे बालक हैं तिनका
नानाप्रकार यत्न करना, औषध पथ्य देना, उपसर्ग मेटना, अर स्वाध्याय कहिए जिनशासनका वाचना
पूछना। आम्नाय कहिये परिपाटी, अनुप्रेक्षा कहिए बारम्बार चितारना, धर्मोपदेश कहिए धर्मका
उपदेश देना। अर व्युत्सर्ग कहिये शरीरका ममत्व तजना तथा एकदिवस आदि वर्ष पर्यंत कायोत्सर्ग
धरना। अर ध्यान कहिये आर्तरौद्र ध्यानका त्यागकर धर्मध्यान शुक्लध्यानका ध्यावना, ये छह प्रकार

के आभ्यंतर तप कहे। ये बाह्याभ्यंतर द्वादश तप सब ही धर्म हैं। या धर्मके प्रभावसे भव्यजीव कर्मनिका नाश करै हैं, अर तपके प्रभावकरि अद्भुत शक्ति होय है। सर्व मनुष्य अर देवोंको जीतनेकूं समर्थ होय हैं। विक्रियाशक्तिकरि जो चाहै सो करै। विक्रियाके अष्ट भेद हैं। अणिमा, महिमा, लघिमा, गरिमा, प्राप्ति, प्राकाम्य, ईशत्व, वशित्व। सो महामुनि तपोनिधि परम शांत हैं, सकल इच्छातैं रहित हैं, अर ऐसी सामर्थ्य है—चाहैं तो सूर्यका आताप निवारैं, चाहैं तो जल वृष्टि करि क्षणमात्रविषैं जगतको पूर्ण करैं, चाहैं तो भस्म करैं, क्रूरदृष्टिकर देखैं तो प्राण हरैं, कृपादृष्टिकर देखैं तो रंकसे राजा करैं, चाहैं तो रत्न स्वर्णकी वर्षा करैं, चाहैं तो पाषाणकी वर्षा करैं, इत्यादि सामर्थ्य है, परन्तु करैं नाहीं। करैं तो चारित्रका नाश होय। तिन मुनियोंके चरणरजकर सर्व रोग जाय। मनुष्योंको अद्भुत विभवके कारण तिनके चरण कमल हैं। जीव धर्मकर अनंतशक्तिको प्राप्त होय हैं, धर्मकरि कर्मनिको हरै हैं। अर कदाचित् कोउ जन्म लेय तो सौधर्म स्वर्ग आदि सर्वार्थसिद्धिपर्यंत जाय स्वर्गविषैं इन्द्रपद पावै। तथा इन्द्र समान विभूतिके धारक देव होय। जिनके अनेक खणके मंदिर स्वर्णके स्फटिक मणिके, वैडूर्यमणिके थंभ, अर रत्नमई भीति, देदीप्यमान अर सुन्दर झरोखनिकरि शोभायमान, पद्मरागमणि आदि नानाप्रकारकी मणिके शिखर हैं जिनके, अर मोतियोंकी झालरोंसे शोभित अर जिनमहलों में अनेक चित्राम सिंहोंके, गजोंके, हंसोंके, स्वानोंके, हिरणोंके, मयूर कोकिलादिकोंके दोनों भींतिविषैं रत्नमई चित्राम शोभायमान हैं। चन्द्रशालादिकरि युक्त, ध्वजोंकी पंक्तिकर शोभित, अत्यन्त मनके हरणहारे, मंदिर सजे हैं। आसनादिकरि संयुक्त जहां नानाप्रकारके वादित्र बाजे हैं, आज्ञाकारी सेवक देव अर महामनोहर देवांगना, अद्भुत देवलोकके सुख, महा सुन्दर सरोवर, कमलादिक रसयुक्त कल्पवृक्षोंके वन, विमान आदि विभूतियें, यह सभी जीव धर्मके प्रभावकरि पावै हैं। अर कैसे हैं स्वर्गनिवासी देव? अपनी कांतिकरि अर दीप्तिकरि चांद सूर्यको जीते हैं। स्वर्गलोकविषैं रात्रि अर दिवस नाहीं। निद्रा नाहीं। अर देवोंका शरीर माता पितासे उत्पन्न नहीं होता। जब अगला देव खिर जाय

तब नया देव उत्पादिक शय्याविषै उपजै है। जैसैं कोई सूता मनुष्य सेजतैं जाग उठै तैसैं क्षणमात्रमें
देव उत्पादिक शय्याविषै नवयौवनको प्राप्त भया प्रकट होय हैं। कैसा है तिनका शरीर? सात उप-
धातु रहित, निर्मल, रज पसेव अर रोगनितैं रहित, सुगंध पवित्र कोमल, परम शोभायुक्त, नेत्रोंको प्यारा,
ऐसा उत्पादिक शुभ वैक्रियक देवोंका शरीर होय, सो ये प्राणी धर्मकरि पावै है। जिनके आभूषण
महा देदीप्यमान तिनकी कांतिके समूह करि दशोंदिशामें उद्योत होयरहा है। अर तिनके देवनके
देवांगना महासुन्दर हैं, कमलोंके पत्र समान सुन्दर हैं चरण जिनके, अर कलेके थंभ समान हैं जंघा
जिनकी, कांचीदाम(तागड़ी)करि शोभित हैं सुन्दर कटि अर नितंब जिनके। जैसैं गजनिके घंटीका शब्द
होय तैसैं कांचीदामकी क्षुद्र घंटिकनिका शब्द होय है। उगते चन्द्रमासैं अधिक कांति धरैं हैं। मनोहर
हैं स्तनमंडल जिनका, रत्नोंके समूहकरि ज्योतिको जीतै अर चांदनीको जीतै, ऐसी है प्रभा जिनकी,
मालतीकी जो माला ताहूतैं अति कोमल है भुजलता जिनकी, महा अमौलिक वाचाल मणिमई चूड़े
तिनकरि शोभित हैं हाथ जिनके, अर अशोकवृक्षकी कोंपल समान कोमल अरुण है हथेली जिनकी,
अति सुन्दर करकी आंगुली, शंख समान ग्रीवा, कोकिलहूतैं अति मनोहर हैं कंठ जिनके, अति लाल,
अति सुन्दर रसके भरे अधर, तिनकरि आच्छादित कुंदके पुष्प समान दंत, अर निर्मल दर्पणसमान
सुन्दर हैं कपोल जिनके, लावण्यताकरि लिप्त भई हैं सर्वदिशा, अर अति सुन्दर तीक्ष्ण कामके बाण
समान नेत्र, सो नेत्रोंकी कटाक्ष कर्णपर्यंत प्राप्त भई हैं सोई मानों कर्णाभरण भए। अर पद्मरागमणि २२४
आदि अनेक मणिनिके आभूषण, अर मोतियोंके हार तिनकरि मंडित, अर भ्रमर समान श्याम, अति
सूक्ष्म, अति निर्मल, अति चीकने, अति सघन, वक्रता धरैं लंबे केश, अति कोमल शरीर, अति मधुर स्वर,
अत्यन्त चतुर सर्व उपचारकी जाननहारी, महा सौभाग्यवंती, रूपवंती, गुणवंती, मनोहर क्रीडाकी
करणहारी, नंदनादि वनोतैं उपजी जो सुगंध ताहूतैं अति सुगंध है श्वास जिनके, पराए मनका अभि-
प्राय चेष्टामें जान जांय ऐसी प्रवीण, पंचेंद्रियोंके सुखकी उपजावनहारी, मनवांछित रूपकी धारण-

हा नै ऐसी स्वर्गमें जो अप्सरा सो धर्मके फलतैं पाइए है। अर जो इच्छा करै सो चितवतमात्र सर्व सिद्धि होय। इच्छा करै, सो ही उपकरण प्राप्त होय, जो चाहैं सो सदा संग ही है। देवांगनानिकर देव मनवांछित सुख भोगैं हैं। जो देवलोकमें सुख हैं तथा मनुष्यलोकविषै चक्रवर्त्यादिकनिके सुख हैं, सो सर्व धर्मका फल जिनेश्वर देवने कह्या है। अर तीनलोकमें जो सुख ऐसा नाम धरावैं हैं, सो सर्व धर्मकरि ही उत्पन्न होय हैं। जे तीर्थंकर तथा चक्रवर्ती, बलभद्र, कामदेवादि, दाता भोक्ता मर्यादाके कर्त्ता, निरंतर हजारों राजनिकरि तथा देवनिकरि सेइए हैं, सो सर्व धर्मका फल है। अर जो इन्द्र स्वर्गलोकका राज्य, हजारों जे देव मनोहर आभूषणके धरणहारे तिनका प्रभुत्व धरै हैं सो सर्व धर्मका फल है। यह तो सकल शुभोपयोगरूप व्यवहार धर्मके फल कहे। अर जे महामुनि निश्चल रत्नत्रयके धरणहारे मोहरिपुका नाशकरि सिद्धिपद पावै हैं सो शुद्धोपयोगरूप आत्मीक धर्मका फल है। सो मुनिका धर्म मनुष्यजन्म बिना नहीं पाइए है। तातैं मनुष्य देह सर्वजन्मविषै श्रेष्ठ है। जैसैं मृग कहिए पशुके जीव तिनमें सिंह अर पक्षियोंविषै गरुड़ अर मनुष्योंविषै राजा, देवोंविषै इन्द्र, तृणनिविषै शालि, वृक्षनिविषै चंदन, अर पाषाणविषै रत्न श्रेष्ठ है, तैसैं सकल योनिविषै मनुष्यजन्म श्रेष्ठ है। तीन लोकविषै धर्म सार है, अर धर्मविषै मुनिका धर्म सार है। सो मुनिका धर्म मनुष्य देहतैं ही होय है। तातैं मनुष्य जन्म समान और नाहीं। अनंत काल यह जीव परिभ्रमण करै है। तामैं मनुष्यजन्म कबहू ही पावै है। यह मनुष्य देह महादुर्लभ है। ऐसे दुर्लभ मनुष्यदेहको पाय जो मूढ प्राणी, समस्त क्लेशनिकरि रहित करणहारा जो मुनिका धर्म अथवा श्रावकका धर्म नाहीं करै है सो बारम्बार दुर्गतिविषैं भ्रमण करै है। जैसैं समुद्रविषै गिरया महागुणनिका धरणहारा रत्न बहुरि हाथ आवना दुर्लभ है, तैसैं भवसमुद्रविषै नष्ट भया नरदेह बहुरि पावना दुर्लभ है। या मनुष्यदेहविषै शास्त्रोक्त धर्मका साधनकरि कोई मुनिव्रत धर सिद्ध होय हैं, अर कोई स्वर्गनिवासी देव तथा अहमिंद्रपद्र पावैं, परम्परा मोक्ष पद पावैं हैं। या भांति धर्म अधर्मके फल केवलीके मुखतैं सुनकरि सब ही सुखको प्राप्त

कमल सारिखे हैं नेत्र जाके, ऐसा कुंभकरण, सो हाथ जोड़ नमस्कारकरि पूछता भए । ता समय हे नाथ ! मोरे अब भी तृप्ति न भई, तातें विस्तारकरि धर्मका व्याख्यान विधिपूर्वक मोहि कहो । तब भगवान अनन्तवीर्य कहते भए—'हे भव्य ! धर्मका विशेष वर्णन सुनो—जाकरि यह प्राणी संसारके बंधननितैं छूटै सो धर्म दोय प्रकार है—एक महाव्रतरूप, दूजा अणुव्रतरूप । सो महाव्रतरूप यतिका धर्म है, अणुव्रतरूप श्रावकका धर्म है । यति घरके त्यागी हैं, श्रावक गृहवासी हैं । तुम प्रथम ही सर्व पापनिका नाश करणहारा सर्व परिग्रहके त्यागी जे महामुनि तिनका धर्म सुनो ।

या अवसर्पणी कालविषैं अबतक ऋषभदेवतैं लगाय मुनिसुव्रतपर्यंत बीस तीर्थंकर हो चुके हैं, अब चार और होयेंगे । या भांति अनन्त भए, अर अनन्त होवेंगे, सो सबनिका एक मत है । यह श्रीमुनिसुव्रतनाथका समय है । सो अनेक महापुरुष जन्ममरणके दुःखकरि महा भयभीत भए या शरीरको एरंडकी लकड़ी समान असार जानि सर्वपरिग्रहका त्याग करि मुनिव्रत को प्राप्त भए । ते साधु अहिंसा, असत्य, अचौर्य, ब्रह्मचर्य, परिग्रहत्यागरूप पंचमहाव्रत तिनविषैं रत, तत्वज्ञानविषैं तत्पर, पंचसमिति के पालनहारे, तीन गुप्तिके धरनहारे, निर्मलचित्त, महापुरुष, परमदयालु, निजदेहविषैं भी निर्ममत्व रागभावरहित, जहां सूर्य अस्त होय तहां ही बैठ रहैं, कोई आश्रय नाहीं, तिनके कहा परिग्रह होय ? पापका उपजावनहारा जो परिग्रह सो तिनके बालके अग्रभाग मात्र हू नाहीं । ते महाधीर महामुनि, सिंहसमान साहसी, समस्त प्रबंध रहित, पवन सारिखे असंगी, तिनके रंचमात्र भी संग नाहीं । पृथ्वी समान क्षमा, जल सारिखे विमल, अग्नि सारिखे कर्मको भस्म करनहारे, आकाश सारिखे अलिप्त, अर सर्व सम्बन्ध रहित, प्रशंसा योग्य है चेष्टा जिनकी, चन्द्र सारिखे सौम्य, सूर्य सारिखे तिमिरके हरता, समुद्र सारिखे गम्भीर, पर्वत सारिखे अचल, काछिवा समान इन्द्रियोंके संकोचनहारे, कषायनिकी तीव्रतारहित, अठाईस मूलगुण, चौरासीलाख उत्तरगुणोंके धरणहारे, अठारह हजार शीलके

भेद तिनके धारक, तपोनिधि मोक्षमार्गी, जिनधर्ममें लवलीन, जैनशास्त्रोंके पारगामी, अर सांख्य-पातंजल, बौद्ध, मीमांसक, नैयायिक,वैशेषिक,वेदांती इत्यादि पर शास्त्रोंके भी वेत्ता,महाबुद्धिमान सम्यग्दृष्टि, यावज्जीव पापनिके त्यागी, यम नियमके धरनहारे, परमसंयमी, परम शांत, परम त्यागी, निगर्व, अनेक ऋद्धिसंयुक्त, महामंगलमूर्ति जगतके मंडन, महागुणवान। केई एक तो ताही भवमें कर्मकाट सिद्ध होय, कईएक उत्तमदेव होय दोय तीन भवमें ध्यानाग्निकरि समस्त कर्मकाष्ठ बाल, अविनाशी सुखको प्राप्त होय हैं। यह यतीका धर्म कह्या। अब स्नेहरूपी पींजरेमें पड़े जे गृहस्थी तिनका द्वादश-व्रतरूप जो धर्म सो सुनो। पांच अणुव्रत, तीनगुणव्रत, चार शिक्षाव्रत, अर अपनी शक्तिप्रमाण हजारों नियम, त्रसघातका त्याग, अर मृषावादका परिहार, परधनका त्याग, परदारा परित्याग, अर परिग्रह का परिमाण, तृष्णाका त्याग ये पांच अणुव्रत, अर हिंसादिका प्रमाण, देशोंका प्रमाण, जहां जिन धर्मका उद्योत नाहीं तिन देशनिका त्याग, अनर्थदंडका त्याग ये तीन गुणव्रत हैं। अर सामायिक, प्रोषधोपवास, अतिथि संविभाग, भोगोपभोगपरिमाण, ये चार शिक्षाव्रत, ये बारहव्रत हैं। अब इन व्रतोंके भेद सुनो। जैसैं अपना शरीर आपको प्यारा है तैसा सबनिको प्यारा है। ऐसा जान सर्वजीवनिकी दया करनी। उत्कृष्ट धर्म जीव दया ही भगवानने कह्या है। जे निर्दई जीव हनै हैं तिनके रंचमात्र भी धर्म नाहीं। अर जामैं परजीवनिको पीड़ा होय सो वचन न कहना। परबाधाकारी वचन सोई मिथ्या, अर पर उपकाररूप वचन सोई सत्य। अर जे पापी चोरी करैं, पराया धन हरैं हैं ते इस भवमें बधबंधनादि दुख पावै हैं, कुमरणतैं मरै हैं, अर परभव नरकमैं पड़े हैं, नानाप्रकारके दुख पावै हैं। चोरी दुःखका मूल है। तातैं बुद्धिमान सर्वथा पराया धन न हरैं हैं। सो जाकरि दोनों लोक बिगड़े ताहि कैसैं करैं? अर सर्पिणी समान परनारीको जानिकरि दूरहीतैं तजो। यह पापिनी परनारी कामलोभके वशीभूत पुरुषको नाश करनहारी है। सर्पिणी तो एकभव ही प्राण हरै है अर परनारी अनन्त भव प्राण हरै है। कुशीलके पापतैं निगोदमें जाय हैं सो अनन्त जन्म मरण करै हैं। अर याही भवविषै मारना ताडना

आदि अनेक दुःख पावै हैं । यह परदारासंगम नरकनिगोदके दुस्सह दुखनिका देनहारा है । जैसैं कोई परपुरुष अपनी स्त्रीका पराभव करै तो आपको बहुत बुरा लागै, अति दुःख उपजै, तैसैं ही सकलकी व्यवस्था जाननी ? अर परिग्रहका परिमाण करना, बहुत तृष्णा न करनी । जो यह जीव इच्छाको न रोकै तो महा दुखी होय । यह तृष्णा ही दुःखका मूल है, तृष्णा समान और व्याधि नाहीं । या ऊपर एक कथा है सो सुनो–एक भद्र दूजा कांचन, ये दोय पुरुष हुते । तिनमैं भद्र फलादिकका बेचनहारा सो एक दीनारमात्र परिग्रहका परिमाण करता भया । एक दिवस मार्गमें दीनारोंका बटवा पड्या देख्या तामैंसो एक दीनार कोतूहलकरि लीनी । अर दूजा कांचन है नाम जिसका, तानैं सर्व बटवा ही उठाय लिया । सो दीनारनिकास्वामी राजा, तानैं बटवा उठावता देखि कांचनको पिटाया, अर गामतैं काढ्या । अर भद्रने एक दीनार लीनी हुती सो राजाको बिना मांगे स्वयमेव सौंप दीनी । राजाने भद्रका बहुत सन्मान किया ऐसा जानकरि बहुत तृष्णा न करनी । संतोष धरना ये पांच अणुव्रत कहे ।

बहुरि चार दिशा, चार विदिशा, एक अधः, एक ऊर्ध्व, इन दश दिशानिका परिमाण करना कि इस दिशाको एती दूर जाऊंगा, आगैं न जाऊंगा । बहुरि अपध्यान कहिए खोटा चिंतवन, पापोपदेश कहिए अशुभकार्यका उपदेश, हिंसादान कहिए विष फांसी लोहा सीसा खड्गादि शस्त्र तथा चाबुक इत्यादि जीवनके मारवेके उपकरण मांग्या देना तथा जे जाल रस्सा इत्यादि बंधनके उपाय तिनका व्यापार, अर श्वान मार्जार चीतादिकका पालना, अर कुश्रुति श्रवण कहिए कुशास्त्रका श्रवण, प्रमादचर्या कहिए प्रमादकरि वृथा छै कायके जीवोंकी विराधना करनी, ये पांचप्रकारके अनर्थदंड तजने । अर भोग कहिए आहारादिक, उपभोग कहिए स्त्रीवस्त्राभूषणादिक; तिनका परिमाण करना । अर्थात् ये विचार जे अभक्ष्य भक्षणादि, परदारा सेवनादि अयोग्य विषय हैं तिनका तो सर्वथा त्याग, अर जे योग्याहार तथा स्वदारसेवनादि तिनका नियमरूप परिमाण । यह भोगोपभोग परिसंख्याव्रत कहिए । ये तीन गुणव्रत कहे । अर सामायिक कहिए समताभाव, पंचपरमेष्ठी अर जिनधर्म, जिनवचन, जिन

प्रतिमा, जिनमंदिर तिनका स्तवन, अर सर्व जीवोंसों क्षमाभाव, सो प्रभात मध्याह्न सायंकाल छै छै घड़ी तथा चार २ घड़ी तथा दोय दोय घड़ी अवश्य करना। अर प्रोषधोपवास कहिए दोय आठें, दोय चोदस, एक मासमें चार उपवास, षोडश पहरके पोसे संयुक्त अवश्य करने। सोलह पहरतक संसारके कार्यका त्याग करना, आत्मचिंतवन तथा जिनभजन करना। अर अतिथिसंविभाग कहिए अतिथि जे परिग्रहरहित मुनि, जिनके तिथि वारका विचार नाहीं सो आहारके निमित्त आवैं, महागुणोंके धारक तिनको विधिपूर्वक अपने वृत्तानुसार बहुत आदरतैं योग्य आहार देना, अर आयुके अंत विषै अनशन व्रतधर समाधिमरण करना सो संलेखनाव्रत[1] कहिए। ये चार शिक्षाव्रत कहे। या प्रकार पांच अणुव्रत, तीन गुणव्रत, चार शिक्षाव्रत ये बारहव्रत जानने। जे जिनधर्मी हैं तिनके मद्य मांस मधु, मांखण, उदंबरादि अयोग्य फल, रात्रिभोजन, बीध्या अन्न, अनछाना जल, परदारा तथा दासी वेश्यासंगम इत्यादि अयोग्य क्रियाका सर्वथा त्याग होय है। यह श्रावकके धर्म पालकर समाधिमरण कर उत्तम देव होय, फिर उत्तम मनुष्य होय सिद्धपद पावै है। अर जे शास्त्रोक्त आचरण करनेको असमर्थ हैं, न श्रावकके व्रत पालैं, न यतिके परन्तु जिनभाषितकी दृढ़ श्रद्धा है ते भी निकट संसारी हैं, सम्यक्तके प्रसादसे व्रतको धारण करि शिवपुरको प्राप्त होय हैं। सर्व लाभमें श्रेष्ठ जो सम्यग्दर्शनका लाभ ताकरि ये जीव दुर्गतिके त्रासतैं छूटै हैं। जो प्राणी भावतैं श्रीजिनेन्द्रदेवको नमस्कार करै हैं सो पुण्याधिकारी पापोंके क्लेशतैं निवृत्त होय हैं। अर जो प्राणी भावकरि सर्वज्ञदेवको हैं सुमरै ता भव्यजीवके अशुभकर्म कोटि भवके उपारजे तत्काल क्षय होय हैं। अर जो महाभाग्य त्रैलोक्यविषैं सार जो अरहंतदेव तिनको हृदयविषै धारे हैं सो भवकूपविषै नाहीं परै हैं। ताके निरन्तर सर्व भाव प्रशस्त हैं। अर ताकों अशुभ स्वप्न न आवै, अर शुभ स्वप्न ही आवें, अर शुभ शकुन ही होय हैं। अर जो उत्तम जन "अर्हते नमः" यह वचन भावतैं कहै हैं ताके शीघ्र ही मलिन कर्मका नाश होय है, याविषै संदेह नाहीं।

१। इस जगह देशावकाशिकव्रतका उल्लेख नहीं किया, उसकी जगह सल्लेखनाव्रत लिखकर चार शिक्षाव्रत पूरे किये गये हैं।

पद्म पुराण २३० मुक्तियोग्य प्राणीका चित्तरूप कुमुद, परम निर्मल वीतराग जिनचंद्रकी कथारूप जो किरण तिनके प्रसंगतैं प्रफुल्लित होय है। अर जो विवेकी अरंहतसिद्धसाधुवोंं ताईं नमस्कार करैं हैं सो सर्व जिन धर्मीनिका प्यारा है। ताहि अल्प संसारी जानना। अर जो उदारचित्त श्री भगवानके चैत्यालय करावैं, जिनबिंब पधरावैं हैं, जिनपूजा करैं हैं, जिनस्तुति करैं हैं तिनकैं या जगतविषैं कछु दुर्लभ नाहीं। नर-नाथ कहिए राजा होहु अथवा कुटुंबी होहु, किसान होहु, धनाढ्य होहु तथा दलिद्री होहु, जो मनुष्य धर्मकरि युक्त है सो सर्व त्रैलोक्यविषैं पूज्य है। जे नर महाविनयवान हैं, अर कृत्य अकृत्यके विचार-विषैं प्रवीण हैं, जो यह कार्य करना यह न करना ऐसा विवेक धरैं हैं, ते विवेकी धर्मके संयोगतैं गृह-स्थिविषैं मुख्य हैं। जे जन मधु मांस मद्य आदि अभक्ष्यका संसर्ग नाहीं करैं हैं तिनहीका जीवन सफल है। अर शंका कहिए जिन वचनोंमें संदेह, कांक्षा कहिये या भवविषैं अर परभवविषैं भोगनिकी बांछा, विचिकित्सा कहिए रोगी वा दुखीकों देख घृणा करणी, आदर नाहीं करना, अर आत्मज्ञानतैं दूर जे परदृष्टि कहिए जिनधर्मतैं पराङ्‌मुख मिथ्यामार्गी तिनकी प्रशंसा करनी, अर अन्यशासन कहिए हिंसा-मार्ग ताके सेवनहारे जे निर्दयी मिथ्यादृष्टि तिनके निकट जाय स्तुति करनी, ये पांच सम्यक्दर्शनके अतीचार हैं। तिनके त्यागी जे जंतु कहिए प्राणी ते गृहीस्थनिविषैं मुख्य हैं। अर जो प्रियदर्शन कहिए प्यारा है दर्शन जाका, सुन्दर वस्त्राभरण पहिरे, सुगंध शरीर, मार्ग चालते, धरतीको देखता, निर्विकार जिनमन्दिरमें जाय है, शुभकार्योंविषैं उद्यमी ताके पुण्यका पार नाहीं। अर जो पराए द्रव्यको तृणसमान देखै हैं, अर परजीवको आप समान देखैं हैं, अर परनारीको माता समान देखे हैं सो धन्य हैं। अर जाके ये भाव हैं—ऐसा दिन कब होयगा जो मैं जिनेंद्रीदीक्षा लेयकरि महामुनि होय पृथ्वीविषैं निर्द्वंद्व विहार करूंगा, ये कर्मशत्रु अनादिके लगे हैं तिनका क्षयकरि कब सिद्धपद प्राप्त करूं, या भांति निरंतर ध्यान कर निर्मल भया है चित्त जाका ताके कर्म कैसैं रहैं हैं? भयकरि भाग जांय। कईएक विवेकी सात आठ भवमें मुक्ति जाय हैं, कईएक दोय तीन भवविषैं संसारसमुद्रके पार होय हैं, कईएक चरमशरीरी उग्र २३०

तपकरि शुद्धोपयोगके प्रसादतैं तद्भव मोक्ष होय है। जैसैं कोई मार्गका जाननहारा पुरुष शीघ्र चलै तो शीघ्र ही स्थानकों जाय पहुंचे, अर कोई धीरे २ चलै तो घने दिनमें जाय पहुंचे, परन्तु मार्ग चालैं सो पहुँचे ही, अर जो मार्ग ही न जानै अर सौ-सौ योजन चालै तो भी भ्रमता ही रहै, इष्ट स्थानको न पहुँचे। तैसैं मिथ्यादृष्टि उग्र तप करैं तो भी जन्ममरणवर्जित जो अविनाशीपद ताहि न प्राप्त होय। संसार वनहीविषैं भ्रमैं, नहीं पाया है मुक्तिका मार्ग तिनने। कैसा है संसारवन? मोहरूप अंधकारकरि आच्छादित है, अर कषायरूप सर्पनिकरि भरचा है। जिस जीवके शील नाहीं, व्रत नाहीं, सम्यक्त नाहीं, त्याग नाहीं, वैराग्य नाहीं, सो ससारसमुद्रको कैसैं तिरै? जैसैं विंध्याचल पर्वततैं चल्या जो नदीका प्रवाह ताकरि पर्वत समान ऊंचे हाथी बह जांय तहां एक शसा क्यों न बहै? तैसैं जन्मजरा-मरणरूप भ्रमणको धरै संसाररूप जो प्रवाह ताविषैं जे कुतीर्थी कहिए मिथ्यामार्गी अज्ञान तापस हैं तेई डूबे हैं, फिर तिनके भक्तोंका कहा कहना? जैसैं शिला जलविषैं तिरवे समर्थ नाहीं तैसैं परिग्रहके धारी कुदृष्टि शरणागतनिकों तारवे समर्थ नाहीं। अर जे तत्त्वज्ञानी तपकरि पापनिकेभस्म करणहारे हलके होय गए हैं कर्म जिनके, ते उपदेशथकी प्राणियोंको तारने समर्थ हैं। यह संसारसागर महाभया-नक है। यामैं यह मनुष्यक्षेत्र रत्नद्वीप समान है सो महा कष्टतैं पाइए है। तातैं बुद्धिवंतनिको या रत्न-द्वीपविषैं नेमरूप रत्न ग्रहण करने अवश्य योग्य हैं। यह प्राणी या देहको तजकरि परभवविषैं जायगा। अर जैसैं कोई मूर्ख तागाके अर्थि महामणिके हारका तागा निकालनेको महामणियोंका चूर्ण करै तैसैं यह जड़बुद्धि विषयके अर्थ धर्मरत्नको चूर्ण करै है अर ज्ञानी जीवोंको सदा द्वादश अनुप्रेक्षाका चिंतवन करना। ये शरीरादि सर्व अनित्य हैं, आत्मा नित्य है, या संसारविषैं कोई शरण नाहीं, आपको आप ही शरण है तथा पंच परमेष्ठीका शरण हैं। अर संसार महा दुखरूप है, चतुर्गतिविषैं काहू ठौर सुख नाहीं, एक सुखका धाम सिद्धपद है। यह जीव सदा अकेला है, याका कोई संगी नाहीं, अर सर्व द्रव्य जुदे जुदे हैं, कोई काहूसों मिलै नाहीं। अर शरीर महा अशुचि है, मलमूत्रका भरचा भाजन है।

आत्मा निर्मल है। अर मिथ्यात्व अव्रत कषाय योग प्रमादनिकरि कर्मका आस्रव होय है। अर व्रत, समिति, गुप्ति, दशलक्षण धर्म, अनुप्रेक्षानिकाचिंतवन, परीषहजय चारित्रकरिसंवर होय है। आस्रवका रोकना सो संवर अर तपकर पूर्वोपार्जित कर्मकी निर्जरा होय है। अर यह लोक षट्द्रव्यात्मक अनादि अकृत्रिम शाश्वत है। लोकके शिखर सिद्धलोक है। लोकालोकका ज्ञायक आत्मा है, अर जो आत्म-स्वभाव जो ही धर्म है, जीवदया धर्म है। अर जगतविषै शुद्धोपयोग दुर्लभ है, सोई निवारणका कारण है। या प्रकार द्वादश अनुप्रेक्षा विवेकी सदा चिंतवै। या भांति मुनि अर श्रावकके धर्म कहे। अपनी शक्ति प्रमाण जो धर्म सेवै उत्कृष्ट, मध्यम तथा जघन्य सो सुरलोकादिविषै तैसा ही फल पावै। या भांति केवली कही तब भानुकर्ण कहिए कुंभकर्णने केवलीसों पूछी—हे नाथ! भेदसहित नियमका स्वरूप जानना चाहूं हूं।—तब भगवानने कही— हे कुंभकर्ण! नियममें अर तपमें भेद नाहीं, नियमकरि युक्त जो प्राणी सो तपस्वी कहिए। तातैं बुद्धिमान नियमविषै सर्वथा यत्न करै। जेता अधिक नियम करै सो ही भला। अर जो बहुत न बनै तो अल्प ही नियम करना, परन्तु नियम विना न रहना। जैसैं बनै सुकृतका उपार्जन करना। तैसैं मेघकी बूंद परै हैं तिन बूंदनिकर महानदीका प्रवाह होय जाय है, सो समुद्रविषै जाय मिलै है, तैसैं जो पुरुष दिनविषै एक मुहूर्तमात्र भी आहारका त्याग करै सो एक मासमें एक उपवासके फलको प्राप्त होय। ताकरि स्वर्गविषै बहुत काल सुख भोग, मनवांछित भोग प्राप्त होय। जो कोई जिनमार्गकी श्रद्धा करता संता यथाशक्ति तप नियम करै ता महात्माके दीर्घ-काल स्वर्गविषै सुख होय, बहुरि स्वर्गतैं चयकर मनुष्यभवविषै उत्तम भोग पावै है।

एक अज्ञान तापसीकी पुत्री वनविषै रहै सो महादुखवंती बदरीफल (बेर) आदि कर आजीविका पूर्ण करै। तानैं सत्संगतैं एक मुहूर्तमात्र भोजनका नियम लिया। ताके प्रभावतैं एक दिन राजाने देखी, आदरतैं परणी, बहुत सम्पदा पाई अर धर्मविषै बहुत सावधान भई, अनेक नियम आदरे। सो जो प्राणी कपटरहित होय जिनवचनको धारण करै सो निरंतर सुखी होय, परलोकमें उत्तमगति पावै।

अर जो दो मुहूर्त प्रति दिवस भोजनका त्याग करै ताके एकमास विषै होय उपवासका फल होय । तास मुहूर्तका एक अहोरात्र गिनो । अर तीनमुहूर्त प्रति दिन अन्नजलका त्याग करै तो एक मास विषै तीन उपवासका फल होय । या भांति जेता अधिक नियम तेता ही अधिक फल । नियमके प्रसादकरि ये प्राणी स्वर्गविषै अद्भुत सुख भोगै हैं, अर स्वर्गतैं चयकर अद्भुत चेष्टाके धरणहारे मनुष्य होय हैं । महा-कुलवंती, महारूपवंती, महागुणवंती, महालावण्यकरलिप्त, मोतियोंके हार पहरैं, अर मनके हरनहारे जे हाव भाव विलास विभ्रम तिनको धरैं जे शीलवंती स्त्री, तिनके पति होय हैं । अर स्त्री स्वर्गतैं चयकर बड़े कुलविषै उपज बड़े राजानिकी रानी होय हैं, लक्ष्मी समान हैं, स्वरूप जिनका । अर जो प्राणी रात्रि-भोजनका त्याग करै हैं अर जलमात्र नाहीं ग्रहै हैं ताके अति पुण्य उपजै है । पुण्यकरि अधिक प्रताप होय है । अर जो सम्यग्दृष्टि व्रत धारै ताकै फलका कहा कहना ? विशेष फल पावै, स्वर्गविषै रत्नमई विमान तहां अप्सरावोंके समूहके मध्यमें बहुतकाल धर्मके प्रभावकरि तिष्ठै है । बहुरि दुर्लभ मनुष्य देही पावै । तातैं सदा धर्मरूप रहना अर सदा जिनराजकी उपासना करनी । जे धर्मपरायण हैं तिनको जिनेंद्रका आराधन ही परमश्रेष्ठ है । कैसे हैं जिनेन्द्रदेव ? जिनके समोसरणकी भूमि रत्नकंचनकर निरमापित, देव मनुष्य तिर्यंचनिकर वंदनीक है । जिनेंद्रदेव आठ प्रातिहार्य, चौंतीस अतिशय, महा अद्भुत हजारों सूर्यसमान तेज, महा सुन्दर रूप, नेत्रोंको सुखदाता हैं । जो भव्यजीव भगवानको भावकर प्रणाम करै सो विचक्षण थोड़े ही कालविषै संसार समुद्रको तिरै ।

श्रीवीतरागदेवके सिवाय कोई दूसरा जीवनिको कल्याणकी प्राप्तिका उपाय और नाहीं । तातैं
जिनेन्द्रचन्द्रहीका सेवन योग्य है । अर हजारों मिथ्यामार्ग तिनविषै प्रमादीजीव भूल रहे हैं । तिन कुतीर्थीनिके सम्यक्त्व नाहीं । अर मद्य मांसादिकके सेवनतैं दया नाहीं । अर जैनविषै परमदया है, रंच-मात्र भी दोषकी प्ररूपणा नाहीं । अर अज्ञानी जीवोंके यह बड़ी जड़ता है जो दिवसमें आहारका त्याग करैं अर रात्रिमें भोजनकर पाप उपार्जैं । चार पहर दिन अनशन व्रत किया ताका फल रात्रिभोजनतैं

जाता रहै, महापापका बंध होय । रात्रिका भोजन महा अधर्म, जिन पापियोंने धर्म कह कलप्या, कठोर
है चित्त जिनका तिनको प्रतिबोधना बहुत कठिन है । जब सूर्य अस्त होय, जीवजन्तु दृष्टि न आवैं तब
जो पापी विषयनिका लालची भोजन करैं हैं सो दुर्गतिके दुखकों प्राप्त होय हैं । योग्य अयोग्यको नहीं
जानैं है । जो अविवेकी पापबुद्धि अंधकारके पटल कर आच्छादित भए हैं नेत्र जाके, रात्रिको भोजन करैं
है सो मक्षिका कीट केशादिकका भक्षण करै है । जो रात्रिभोजन करैं हैं सो डाकिन राक्षस स्वान मार्जार
मूसा आदिक मलिन प्राणियोंका उच्छिष्ट आहार करैं हैं । अथवा बहुत प्रपंचकर कहा ? सर्वथा यह
व्याख्यान है कि जो रात्रिको भोजन करै है सो सर्व अशुचिका भोजन करै है। सूर्यके अस्त भये पीछे कछु
दृष्टि न आवै । तातैं दोय मुहूर्त दिवस बाकी रहै तबतैं लेकर दोय मुहूर्त दिन चढ़े तक विवेकियोंको चौविधि
आहार न करना। अशन पान खाद स्वाद ये चार प्रकारके आहार तजने । जे रात्रि भोजन करैं हैं ते मनुष्य
नहीं पशु हैं। जो जिनशासनतैं विमुख व्रत नियमसेरहित रात्रिदिवस भखवै ही करे हैं सो परलोकविषै कैसें
सुखी होय ? जो दयारहित जीव जिनेंद्रदेवकी, जिनधर्मकी अर धर्मात्माओंकी निंदा करे हैं सो परभवमेंमहा
नरकमें जाय हैं । अर नरकतैं निकसकर तिर्यंच तथा मनुष्य होय सो दुर्गंधमुख होय हैं। मांस मद्य मधु,निशि
भोजन, चोरी अर परनारी जो सेवै हैं सो दोनों जन्म खोवैं हैं । जो रात्रिभोजन करे हैं सो अल्पआयु, हीन,
व्याधिपीडित सुख रहित, महादुखी होय हैं । रात्रिभोजनके पापतैं बहुतकाल जन्म मरणके दुख पावै हैं,
गर्भवासविषै बसे हैं । रात्रिभोजी अनाचारी शूकर, कूकर, गरदभ,मार्जार, काग, वन, नरकनिगोद स्थावर
त्रस अनेक योनियोंमें बहुत काल भ्रमण करे है, हजारों अवसर्पणीकाल अर हजारों उत्सर्पणी काल योनिन-
विषै दुःख भोगे हैं । जो कुबुद्धि निशिभोजन करैं हैं सो निशाचर कहिए राक्षस समान हैं। अर जे भव्य-
जीव जिनधर्मकों पायकर नियमविषै तिष्ठे, हैं सो समस्त पापोंको भस्मकर मोक्षपदकों पावै हैं । जो व्रत
लेयकरि भंग करे सो दुःखी ही हैं । जे अणुव्रतोंमें परायण रत्नत्रयके धारक श्रावक हैं ते दिवसविषै
ही भोजन करैं, दोषरहित योग्य आहार करैं । जे दयावान रात्रिभोजन न करैं ते स्वर्गविषै सुख भोग-

कर तहांतैं चयकर चक्रवर्त्यादिकके सुख भोगैं हैं। शुभ है चेष्टा जिनकी, उत्तमव्रतनियम चेष्टाके धरनहारे सौधर्मादि स्वर्गविषै ऐसे भोग पावैं जो मनुष्योंको दुर्लभ है, अर देवोंतैं मनुष्य होय सिद्धपद पावैं हैं। कैसे मनुष्य होय ? चक्रवर्ति, कामदेव, बलदेव, महामंडलीक, मंडलीक, महाराजा, राजाधिराज महा विभूतिके धनी, महागुणवान, उदारचित्त, दीर्घायु, सुन्दररूप, जिनधर्मके मर्मी, जगतके हितु, अनेक नगर ग्रामादिकोंके अधिपति, नानाप्रकारके वाहनोंकर मंडित, सर्वलोकके वल्लभ, अनेक सामंतोंके स्वामी दुस्सह तेजके धारनहारे ऐसे राजा होय हैं। अथवा राजावोंके मंत्री पुरोहित सेनापति राजश्रेष्ठी तथा श्रेष्ठी, बड़े उमराव महा सामंत, मनुष्योंमें यह पद रात्रिभोजनके त्यागी पावैं हैं। देवनिके इन्द्र, भवनवासियोंके इन्द्र चक्रके धनी, मनुष्योंके इन्द्र महालक्षणोंकर सम्पूर्ण दिनभोजनतैं होय हैं। सूर्य सारिखे प्रतापी, चन्द्रमा सारिखे सौम्यदर्शन, अस्तको प्राप्त न होय प्रताप जिनका, देवनि समान है भोग जिनके ऐसे, तेई होंइ जे सूर्य अस्त भए पीछे भोजन न करैं। अर स्त्री रात्रिभोजनके पापतैं माता, पिता,भाई, कुटुम्बरहित, अनाथ कहिए पतिरहित, अभागिनी, शोक दलिद्रकर पूर्ण, रूक्ष फटे अधर हस्तपादादि, सूखा शरीर, चिपटी नासिका, जो देखे सो ग्लानि करै, दुष्टलक्षण बुरी, मांजरी, आंधी, लूली, गूंगी, बहरी, बावरी, कानी, चीपड़ी, दुरगंधयुक्त, स्थूलअधर, खोटे कर्ण, भूरे ऊंचे बुरे सिरके केश, तूंबड़ीके बीज समान दांत, कुवरण, कुलक्षण, कांतिरहित, कठोरअंग, अनेकरोगोंकी भरी, मलिन फटे वस्त्र, उच्छिष्ट की भक्षणहारी, पराई मजूरी करणहारी नारी होय है। रात्रिभोजनकी करणहारी नारी जो पति
पावै तो कुरूप कुशील कोढी, बुरे कान, बुरी नाक, बुरी आंख, चिंतावान, धन कुटुम्बरहित ऐसा पावै। रात्रि भोजनतैं विधवा, बालविधवा, महादुखवती, जल काष्ठादिक भारके वहनहारी, दुखकर भरै है उदर जाका, सर्व लोग करैं हैं अपमान जाका, वचनरूप वसूलोंकर छोला है चित्त जाका, अनेक फोड़ा फुन्सी की धरणहारी; ऐसी नारी होय है।

अर जे नारी शीलवंती, शांत है चित्त जिनका, दयावंती रात्रि भोजनका त्याग करै हैं, ते स्वर्गविषैं

मनवांछित भोग पावै हैं। तिनकी आज्ञा अनेक देव देवी सिरपर धारै हैं, हाथजोड़ सिरनिवाय सेवा करैं हैं। स्वर्गमें मनवांछित भोग कर और महा लक्ष्मीवान ऊंचकुलमें जन्म पावैं। शुभलक्षण, सम्पूर्ण सर्व गुणमंडित, सर्वकलाप्रवीण, देखनहारोंके मन और नेत्रोंको हरणहारी, अमृतसमान वचन बोले, आनन्द को उपजावनहारी, जिनके परिणवेकी अभिलाषा चक्रवर्ती बलदेव वासुदेव तथा विद्याधरोंके अधिपति राखें, बिजुरी समान हैं कांति जिनकी, कमल समान है वदन जिनका, सुन्दर कुण्डल आदि आभूषण-निकी धरणहारी, सुन्दरवस्त्रोंकी पहरनहारी, नरेन्द्रकी राणी दिन भोजनतैं होय हैं। जिनके मनवांछित अन्न धन होय हैं और अनेक सेवक नानाप्रकारकी सेवा करैं। जे दयावंती रात्रिविषै भोजन न करैं श्रीकांता, सुभद्रा, लक्ष्मी तुल्य होवैं। तातैं नर अथवा नारी नियमविषै है चित्त जिनका ते निशि-भोजनका त्याग करैं। यह रात्रिभोजन अनेक कष्टका देनहारा है, रात्रिभोजनके त्यागविषै अति अल्प कष्ट है, परन्तु याके फलकरि अति उत्कृष्ट होय है। तातैं विवेकी यह व्रत आदरैं। अपने कल्याणको कौन न वांछे? धर्म तो सुखकी उत्पत्तिका मूल है और अधर्म दुखका मूल है। ऐसा जानकर धर्मको भजो, अधर्मको तजो। यह वार्ता लोकविषै समस्त बालगोपाल जानै हैं—जो धर्मतैं सुख होय है अर अधर्मकरि दुःख होय है। धर्मका माहात्म्य देखो जाकरि देवलोकके चये उत्तम मनुष्य होय हैं, जलस्थल के उपजे जे रत्न तिनके स्वामी, अर जगतकी मायातैं उदास, परन्तु कईएक दिनतक महाविभूतिके धनी होय गृहवास भोगै हैं, जिनके स्वर्ण रत्न वस्त्र धान्यनिके अनेक भण्डार हैं, जिनके विभवको बड़े २ सामंत, नानाप्रकारके आयुधोंके धारक रक्षा करैं, तिनके बहुत हाथी, घोड़े, रथ पयादे, बहुत गाय भैंस, अनेक देश ग्राम नगर, मनके हरनहारे पांच इन्द्रियोंके विषय, अर हंसनीकीसी चाल चलें, अति सुन्दर शुभ लक्षण, मधुर शब्द, नेत्रोंको प्रिय, मनोहर चेष्टाकी धरणहारी, नानाप्रकार आभूषण की धरणहारी स्त्री होय हैं। सकल सुखका मूल जो धर्म है ताहि कईएक मूर्ख जानै ही नाहीं, तातैं तिनके धर्मका यत्न नाहीं। अर कईएक मनुष्य सुनकर जानै हैं—जो धर्म भला है परन्तु पापकर्मके वशतैं

अकार्यविषै प्रवरतैं हैं, सुखका उपाय जो धर्म ताहि नाहीं सेवैं हैं। अर कईएक अशुभकर्मके उपशांत होते उत्तम चेष्टाके धरणहारे श्रीगुरुके निकट जाय धर्मका स्वरूप उद्यमी होय पूछै हैं। ते श्रीगुरुके वचन प्रभावतैं वस्तुका रहस्य जानकर श्रेष्ठ आचरणकों आचरैं हैं। ये नियम धर्मात्मा बुद्धिमान पापक्रियातैं रहित होयकर करै हैं ते महा पुण्यवंत स्वर्गविषै अद्भुत सुख भोगै हैं। परम्पराय मोक्ष पावैं हैं। जे मुनिराजोंको निरंतर आहार देय हैं, अर जिनके ऐसा नियम है कि मुनिके आहारका समय टार भोजन करैं, पहिले न करैं; ते धन्य हैं। तिनके दर्शनको अभिलाषा देव राखै हैं। दानके प्रभावकरि मनुष्य इन्द्रका पद पावै अथवा मनवांछित सुखका भोक्ता इन्द्रके बराबरके देव होय हैं। जैसैं वटका बीज अल्प है सो बड़ा वृक्ष होय परणवै है, तैसैं दानतप अल्प भी महाफलके दाता हैं। सहस्रभट सुभटने यह व्रत लिया हुता कि मुनिके आहारकी बेला उलंघकर भोजन करूंगा। सो एक दिन ऋद्धिके धारी मुनि आहार को आए, सो निरंतराय आहार भया। तब रत्नवृष्टि आदि पंचाश्चर्य सुभटके घर भए। वह सहस्रभट धर्मके प्रसादतैं कुबेरकांत सेठ भया। सबके नेत्रोंको प्रिय, धर्म विषै जाकी बुद्धि सदा आसक्त है, पृथ्वीविषै विख्यात है नाम जाका, उदार, पराक्रमी, महा धनवान, जाके अनेक सेवक, जैसैं पूर्णमासीका चन्द्रमा तैसा कांतिधारी, परमभोगोंका भोक्ता, सर्वशास्त्र प्रवीण, पूर्वधर्मके प्रभावकरि ऐसा भया। बहुरि संसारतैं विरक्त होय जिनदीक्षा आदरी। संसारको पार भया। तातैं जे साधुके आहारके समयतैं पहिले आहार न करनेका नियम धारैं ते हरिषेण चक्रवर्ती की नाईं महा उत्सवकों प्राप्त होय हैं। हरिषेण चक्रवर्ती याही व्रतके प्रभाव करि महा पुण्यको उपार्जन कर अत्यन्त लक्ष्मीका नाथ भया। ऐसे ही जे सम्यग्दृष्टि समाधानके धारी भव्य जीव मुनिके निकट जायकर एकवार भोजनका नियम करै हैं, ते एकभुक्तिके प्रभावकर स्वर्ग विमानविषै उपजैं हैं। जहां सदा प्रकाश है अर रात्रि दिवस नाहीं, निद्रा नाहीं, तहां सागरांपर्यंत अप्सरावोंके मध्य रमैं हैं। मोतिनके हार, रत्नोंके कड़े, कटिसूत्र, मुकुट, बाजूबंद इत्यादि आभूषण पहरैं, जिनपर छत्र फिरैं,

चमर ढुरें, ऐसे देवलोकके सुखभोग चक्रवर्त्यादि पद पावै हैं। उत्तम व्रतोंविषै आसक्त जे अणुव्रतके धारक श्रावक, शरीरको विनाशीक जानकर शांत भया है हृदय जिनका, अष्टमी चतुर्दशीका उपवास मनशुद्ध होय प्रोषध संयुक्त धारे हैं, ते सौधर्मादि सोल्हवें स्वर्गविषै उपजै हैं, बहुरि मनुष्य होय भव वनको तजै हैं, मुनिव्रतके प्रभावकरि अहमिंद्रपद तथा मुक्तिपद पावै हैं। जे व्रत गुणशील तपकर मंडित हैं ते साधु जिनशासनके प्रसादकरि सर्वकर्मरहित होय सिद्धनिका पद पावै हैं। जे तीनों काल विषै जिनेंद्रदेवको स्तुति कर मन वचन काय कर नमस्कार करैं हैं, अर सुमेरु पर्वत सारिखे अचल मिथ्यास्वरूप पवनकर नाहीं चलै हैं, गुणरूप गहने पहरें, शीलरूप सुगंध लगावै हैं, सो कईएक भव उत्तम देव उत्तम मनुष्यके सुख भोगकर परम स्थानको प्राप्त होय हैं। ये इन्द्रियनिके विषय जीवने जगतविषै अनंतकाल भोगे, तिन विषयोंसे मोहित भया विरक्त भावको नाहीं भजै है, यह बड़ा आश्चर्य है ? जो इन विषयोंको विषमिश्रित अन्नसमान जानकर पुरुषोत्तम कहिए चक्रवर्ती आदि उत्तम पुरुष भी सेवै हैं। संसारमें भ्रमते हुवे इस जीवके जो सम्यक्त्व उपजै और एक भी नियम व्रत साधै तो यह मुक्तिका बीज है। और जिन प्राणधारियोंके एक भी नियम नाहीं ते पशु हैं, अथवा फूटे कलश हैं, गुणरहित हैं। अर जो भव्य जीव संसारसमुद्रको तिरा चाहै हैं, ते प्रमादरहित होय गुण अर व्रतनिकरि पूर्ण सदा नियमरूप रहै हैं। जो मनुष्य कुबुद्धि खोटे कर्म नाहीं तजै हैं अर व्रत नियम को नाहीं भजै हैं, ते जन्मके अंधेकी नाईं अनंतकाल भववनविषै भटकै हैं। या भांति जो श्री अनन्तवीर्य केवली, तेई भए तीनलोकके चन्द्रमा, तिनके वचनरूप किरणके प्रभावतैं देव, विद्याधर, भूमिगोचरी, मनुष्य तथा तिर्यंच सर्व ही आनन्दको प्राप्त भए। कईएक उत्तम मानव मुनि भए तथा श्रावक भए। सम्यक्त्वको प्राप्त भए और कोई एक उत्तम तिर्यंच भी सम्यक्दृष्टि श्रावक अणुव्रत धारी भए, अर चतुरनिकायके देवोंमें कई एक सम्यक्दृष्टि भए, क्योंकि देवनिके व्रत नाहीं। २३८

अथानन्तर एक धर्मरथ नामा मुनि रावणको कहते भए—हे भद्र कहिये भव्यजीव ! तू भी अपनी

शक्ति प्रमाण कछु नियम धारण कर। यह धर्मरत्नका द्वीप है, अर भगवान केवली महा महेश्वर हैं। या रत्नद्वीपतैं कछु नियमरूप रत्न ग्रहण कर। काहेको चिंताके भारके वशि होय रह्या है ?महापुरुषनिके त्याग खेदका कारण नाहीं। जैसैं कोई रत्नद्वीपमें प्रवेश करै अर वाका मन भ्रमै—जो मैं कैसा रत्न लूं ? तैसैं याका मन आकुलित भया जो मैं कैसा व्रत लूं। यह रावण भोगासक्त, सो याके चित्तमें यह चिंता उपजी जो मेरे खान पान तो सहज ही रुचिर हैं। सुगंध मनोहर मौक्तिक शुभ स्वाद, मांसादि मलिन वस्तुके प्रसंगतैं रहित आहार है, अर हिंसा व्रत आदि श्रावकका एकहू व्रत करिवे समर्थ नाहीं। मैं अणुव्रत हू धारवे समर्थ नाहीं तो महाव्रत कैसैं धारूं ? माते हाथी समान चित्त मेरा सर्व वस्तु विषैं भ्रमता फिरै है। मैं आत्मभावरूप अंकुशतैं याकों वशकरवे समर्थ नाहीं। जे निर्ग्रंथका व्रत धरैं हैं, ते अग्निकी ज्वाला पीवै हैं, अर पवनको वस्त्रमैं बांधै हैं, अर पहाड़को उठावैं हैं। मैं महाशूरवीर भी तप व्रत धरने समर्थ नाहीं। अहो धन्य हैं वे नरोत्तम ! जो मुनिव्रत धारैं हैं। मैं एक यह नियम धरूं जो परस्त्री अत्यन्त रूपवती भी होय तो ताहि बलात्कार करि न इच्छूं, अथवा सर्वलोकमें ऐसी कौन रूपवती नारी है जो मोहि देखकर मनमथकी पीड़ी बिकल न होय ? अथवा ऐसी कौन परस्त्री है जो विवेकी जीवनिके मनको वश करै ? कैसी है परस्त्री, परपुरुषके संयोगकरि दूषित है अंग जाका, स्वभावहीकरि दुर्गंध, बिष्टाकी राशि, ताविषैं कहा राग उपजै ? ऐसा मनमें विचार भावसहित अनंत वीर्य केवलीकों प्रणाम करि देव मनुष्य असुरोंकी साक्षितामें प्रकट ऐसा वचन कहता भया:—हे भगवान ! इच्छारहित जो परनारी ताहि मैं न सेवूं। यह मेरे नियम है। अर कुंभकरण अर्हंत सिद्ध साधु केवलीभाषित धर्मका कारण अंगीकार करि, सुमेरु पर्वत सारिखा है अचल चित्त जाका, सो यह नियम करता भया—जो मैं प्रातः ही उठकर प्रति दिन जिनेन्द्रकी अभिषेक पूजा स्तुति कर, मुनिको विधिपूर्वक आहार देयकरि आहार करूंगा, अन्यथा नाहीं। मुनिके आहारकी बेला पहिले सर्वथा भोजन न करूंगा। अर सर्व पुरुष, साधुनिकों नमस्कार कर और भी घने नियम लिए। अर देव कहिये कल्पवासी, असुर

कहिये भवनत्रिक, अर विद्याधर मनुष्य हर्षतैं प्रफुल्लित हैं नेत्र जिनके, सर्व केवलीकों नमस्कार कर अपने अपने स्थान गए। रावण भी इन्द्रकीसी लीला धरैं प्रबल पराक्रमी लंकाकी ओर पयान करता भया, अर आकाशके मार्ग शीघ्र ही लंकाविषै प्रवेश किया। कैसा है रावण? समस्त नरनारियोंके समूहने किया है गुण वरणन जाका। अर कैसी है लंका? वस्त्रादिकरि बहुत समारी है। राजमहल में प्रवेश कर सुखसे तिष्ठते भए। राजमन्दिर सर्व सुखका भरचा है। पुण्याधिकारी जीवनिके जब शुभकर्मका उदय होय है, तब नानाप्रकारकी सामग्री विस्तार होय है। गुरुके मुखतैं धर्मका उपदेश पाय परमपदके अधिकारी होय हैं। ऐसा जानकरि जिनश्रुतमें उद्यमी है मन जिनका ते बारम्बार निजपरका विचारकर धर्मका सेवन करैं। विनयकर जिन शास्त्र सुननेवालोंके जो ज्ञान है सो रवि समान प्रकाशकों धरै हैं, मोहतिमिरका नाश करै हैं।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रन्थ, ताकी भाषा वचनिकाविषैं अनन्तवीर्यकेवलीके धर्मोपदेशका वर्णन करने वाला चौदहवां पर्व पूर्ण भया॥ १४॥

अथानन्तर ताही केवलीके निकट हनुमानने श्रावक के व्रत लिए अर विभीषणने भी व्रत लिए, भाव शुद्ध होय व्रत नियम आदरे। जैसा सुमेरु पर्वतका स्थिरपना होय ताहूतैं अधिक हनुमानका शील अर सम्यक्त परम निश्चल प्रशंसा योग्य है। जब गौतम स्वामीने हनुमानका अत्यन्त सौभाग्य आदि वर्णन किया तब मगध देशके राजा श्रेणिक हर्षित होय गौतमस्वामीसों पूछते भए। हे भगवन् गणाधीश! हनुमान कैसे लक्षणोंका धरणहारा, कौनका पुत्र, कहां उपज्या? मैं निश्चय कर ताका चरित्र सुन्या चाहूं हूं। तदि सत्पुरुषनिकी कथाकरि उपज्या है प्रमोद जाकों ऐसे, इन्द्रभूत कहिए गौतमस्वामी आह्लादकारी वचन कहते भए–'हे नृप! विजयार्ध पर्वतकी दक्षिण श्रेणी पृथ्वीसों दश योजन ऊंची, तहां आदित्यपुर नामा मनोहर नगर, तहां राजा प्रह्लाद, रानी केतुमती, तिनके पुत्र वायुकुमार, ताका विस्तीर्ण वक्षस्थल लक्ष्मीका निवास। सो वायुकुमारकों सम्पूर्ण यौवन धरे देखकरि पिताके मनविषै

इनके विवाहकी चिंता उपजी। कैसा है पिता? परम्पराय संतानके बढ़ावनेकी है वांछा जाके। अब जहाँ यह वायुकुमार परणेगा सो कहिए है। भरतक्षेत्रमें समुद्रतैं पूर्व दक्षिण दिशाके मध्य दंतीनामा पर्वत, जाके ऊंचे शिखर आकाश लगि रहे हैं। नानाप्रकार वृक्ष औषधि तिनकरि संयुक्त, अर जलके नीझरने झरै हैं, जहाँ इंद्र तुल्य राजा महेंद्र विद्याधर, तानैं महेन्द्रपुर नगर बसाया। राजाके हृदयवेगा रानी, ताके अरिंदमादि सौ पुत्र, महागुणवान, अर अंजनी सुन्दरी पुत्री, सो मानों त्रैलोक्यकी सुन्दरी जे स्त्री तिनके रूप एकत्रकरि बनाई है। नील कमल सारिखे हैं नेत्र जाके, कामके बाण समान तीक्ष्ण दूरदर्शी कर्णा तक कटाक्ष, अर प्रशंसायोग्य करपल्लव, रक्तकमल समान चरण, हस्तीके कुंभस्थल समान कुच, अर केहरी समान कटि, सुन्दर नितम्ब, कदलीस्तंभ समान कोमल जंघा, शुभलक्षण, प्रफुल्लित मालती समान मृदु बाहुयुगल, गंधर्वादि सर्व कलाकी जाननहारी, मानों साक्षात् सरस्वती ही है। अर रूपकरि लक्ष्मीसमान सर्वगुणमंडित। एक दिवस नवयौवनमें कंदुक क्रीड़ा करती भ्रमण करती सखियों सहित रमती पिताने देखी, सो जैसैं सुलोचनाकों देखकर राजा अकम्पनकों चिंता उपजी हुती, तैसैं अंजनीको देख राजा महेन्द्रकों चिंता उपजी। तब याके वर ढूंढनेविषै उद्यमी भए। संसारविषै माता पिताको कन्या दुःखका कारण है। जे बड़े कुलके पुरुष हैं तिनको कन्याकी ऐसी चिंता रहै है। यह मेरी कन्या प्रशंसायोग्य पतिको प्राप्त होय, अर बहुत काल याका सौभाग्य रहै, अर कन्या निर्दोष सुखी रहै। राजा महेन्द्रने अपने मंत्रीनिसों कही—जो तुम सर्व वस्तुविषै प्रवीण हो, कन्यायोग्य श्रेष्ठ वर मोहि बतावो। तदि अमरसागर मंत्रीने कही—यह कन्या राक्षसोंका अधीश जो रावण ताहि देवो। सर्व विद्याधरनिका अधिपति ताका सम्बन्ध पाय तुम्हारा प्रभाव समुद्रांत पृथ्वीविषै होयगा, अथवा इन्द्रजीत अथवा मेघनादको देवो। अर यह भी तुम्हारे मनविषै न आवै तो कन्याका स्वयंवर रचो। ऐसा कहकरि अमरसागर मंत्री चुप रह्या। तब सुमतिनामा मंत्री महापंडित बोल्या—रावणके तो स्त्री अनेक हैं, अर महा अहंकारी, ताकों परणावै तो भी आपसमें अधिक प्रीति न होय। अर कन्या

की वय छोटी अर रावणकी वय अधिक सो बनै नाहीं। इन्द्रजीत तथा मेघनादको परणैं तो उन दोनोंमें परस्पर विरोध होय। आगैं राजा श्रीषेणके पुत्रों विषैं विरोध भया, तातैं यह न करना। तब ताराधन्य मंत्री कहता भया—दक्षिण श्रेणीविषैं कनपुर नामा नगर है तहां राजा हिरण्यप्रभ, ताके रानी सुमना, पुत्र सौदामिनीप्रभ, सो महा यशवंत कीर्तिधारी, नवयौवन, नववय, अति सुन्दर रूप, सर्व विद्या कलाका पारगामी, लोकनिके नेत्रनिकों आनन्दकारी, अनुपम गुण, अपनी चेष्टातैं हर्षित किया है सकल मंडल जानैं, अर ऐसा पराक्रमी है जो सर्व विद्याधर एकत्र होय तासों लडैं तो भी ताहि न जीतैं। मानों शक्तिके समूहकरि निरमाप्या है। सो यह कन्या वाहि देहु। जैसी कन्या तैसा वर, योग्य संबंध है। यह वार्ता सुनकर संदेहपराग नामा मंत्री माथा धुनि, आंख मीचकर कहता भया। वह सौदामिनीप्रभ महा भव्य है ताके निरन्तर यह विचार है कि यह संसार अनित्य है। सो संसारका स्वरूप जान बरस अठारहमें वैराग्य धारैगा, विषयाभिलाषी नाहीं, भोग रूपगजबंधन तुडाय गृहस्थीका त्याग करेगा, बाह्याभ्यंतर परिग्रह परिहारकरि केवलज्ञानकों पाय मोक्ष जायगा, सो याहि परणावै तो कन्या पति बिना शोभा न पावै, जैसैं चन्द्रमा विना रात्रि नीकी न दीखै। कैसा है चन्द्रमा ? जगतमें प्रकाश करणहारा है, तातैं तुम इन्द्रके नगर समान आदित्यपुर नगर है, रत्ननिकर सूर्य समान देदीप्यमान है। तहाँ राजा प्रह्लाद महाभोगी पुरुष, चन्द्रमासमान कांतिका धारी, ताके राणी केतुमती कामकी ध्वजा, तिनके वायुकुमार कहिए पवनंजय नामा पुत्र, पराक्रमका समूह, रूपवान, शीलवान, गुणनिधान, सर्व कलाका पारगामी, शुभ शरीर, महावीर, खोटी चेष्टासों रहित, ताके समस्त गुण सर्व लोकनिके चित्तविषैं व्याप रहे हैं, हम सौ वर्षमें हू न कह सकें, तातैं आप ही वाहि देख लेहु। पवनंजयके ऐसे गुण सुन सर्वही हर्षको प्राप्त भए। कैसा है पवनंजय ? देवनिके समान है द्युति जाकी। जैसैं निशाकरकी किरणोंकर कुमुदनी प्रफुल्लित होय तैसैं कन्या भी यह वार्ता सुनकरि प्रफुल्लित भई।

अथानन्तर बसंत ऋतु आई, स्त्रियोंके मुख कमलकी लावण्यताकी हरणहारी शीतऋतु गई।

कमलिनी प्रफुल्लित भई, नवीन कमलोंके समूहकी सुगंधताकरि दशों दिशा सुगंध भई, कमलोंपर भ्रमर गुंजार करते भये। कैसे हैं भ्रमर? मकरंद कहिये पुष्पनिकी सुगंधरज ताके अभिलाषी हैं। वृक्षनिके पल्लव पत्र पुष्पादि नवीन प्रकट भए। मानों बसंतके लक्ष्मीके विलाससों हर्षके अंकुर ही उपजे हैं, अर आम्र मौल आए, तिनपर भ्रमर भ्रमैं हैं, लोकनिके मनको कामबाण बींधते भए, कोकिलनके शब्द मानिनी नायिकानिके मानका मोचन करते भए। बसंतसमय परस्पर नर नारियनिके स्नेह बढ़ता भया। हिरण जो है सो दूबके अंकुर उखाड़ हिरणीके मुखमें देता भया। सो ताको अमृत समान लागै, अधिक प्रीत होती भई। अर बेल वृक्षनितैं लिपटी, कैसी हैं बेल? भ्रमर ही है नेत्र जिनके। दक्षिण दिशाकी पवन चाली सो सब ही को सुहावनी लागी। पवनके प्रसंगकरि केसरके समूह पड़े सो मानों बसंतरूपी सिंहके केशोंके समूह ही हैं। महा सघन कौरव जातिके जे वृक्ष तिनपर भ्रमरों के समूह शब्द करै हैं, मानों वियोगिनी नायिकानिके मनको खेद उपजायवेको बसंतनै प्रेरे हैं। अर अशोक जातिके वृक्षनिकी नवीन कोपल लहलहाट करै हैं सो मानों सौभाग्यवती स्त्रियोंके रागकी राशि ही भासै हैं। अर वनोंमें केसूला (टेसू) अत्यन्त फूल रहे हैं, सो मानों वियोगिनी नायिकानिके मनको दाह उपजावनेको अग्नि समान हैं। दशों दिशाविषै पुष्पनिके समूहकी सुगन्ध रज ताहि मकरंद कहिये, सो परागकरि ऐसी फैल रही है मानों बसंत जो है पटवास कहिए सुगंध चूर्ण अबीर, ताकरि महोत्सव करै है। ताकरि एक दिन भी स्त्री पुरुष परस्पर वियोगको नहीं सहा सकै हैं। ता ऋतुविषै विदेश गमन कैसें रुचै? ऐसी रागरूप बसंत ऋतु प्रकट भई। तासमय फागुण सुदि अष्टमीसों लेकर पूर्णमासी तक अष्टाह्निकाके दिन महामंगलरूप हैं। सो इन्द्रादिक देव शची आदि पूजाके अर्थि नन्दीश्वर द्वीप गए, अर विद्याधर पूजाकी सामग्री लेयकर कैलाश गये। श्रीऋषभदेवके निर्वाणकल्याणक करि वह पर्वत पूजनीक है। सो समस्त परिवार सहित अंजनीके पिता राजा महेन्द्र हू गए। तहां भगवान की पूजाकरि स्तुतिकरि अर भावसहित नमस्कारकर सुवर्णकी शिलापर सुखसों विराजे। अर राजा

प्रह्लाद पवनंजयके पिता तेहू भरत चक्रवर्तीके कराये जे जिनमन्दिर तिनकी बंदनाकेअर्थि कैलाश पर्वत पर गए। सो बंदनाकरि पर्वतपर विहार करते राजा महेन्द्रकी दृष्टिविषै आए। सो महेन्द्रको देखकर प्रीतिरूप है चित्त जिनका, प्रफुल्लित भए हैं नेत्र जिनके, ऐसे जो प्रह्लाद ते निकट आए। तब महेन्द्र उठकरि सन्मुख आयकर मिले। एक मनोज्ञ शिलापर दोनों हितसों तिष्ठे, परस्पर शरीरादि कुशल पूछते भए। तब राजा महेन्द्रने कही हे मित्र! मेरे कुशल काहेकी? कन्या वरयोग्य भई सो ताके परणावनेकी चिंताकरि चित्त व्याकुल रहै है। जैसी कन्या है तैसा वर चाहिए, अर बड़ा घर चाहिए, कौनको दें, यह मन भ्रमै है। रावणको परणाइए तो ताके स्त्री बहुत हैं अर आयु अधिक है। अर जो ताके पुत्रोंविषै देइ तो तिनमें परस्पर विरोध होय। अर हेमपुरका राजा कनकद्युति ताका पुत्र सौदा-मिनीप्रभ कहिए विद्युत्प्रभ सो थोड़े ही दिन विषै मुक्तिको प्राप्त होयगा, यह वार्ता सर्व पृथ्वीपर प्रसिद्ध है, ज्ञानीमुनिने कही है। हमने भी अपने मंत्रियोंके मुखतैं सुनी है। अब हमारे यह निश्चय भया है कि आपका पुत्र पवनंजय कन्याकै वरिवे योग्य है, यही मनोरथ करि हम आए हैं। सो आपके दर्शनकर अति आनन्द भया जाकरि कछु विकल्प मिटचा। तब प्रह्लाद बोले मेरे भी चिंता पुत्रके परणावनेकी है तातैं मैं भी आपका दर्शनकरि अर वचन सुन वचनतैं अगोचर सुखको प्राप्त भया, जो आप आज्ञा करो सो ही प्रमाण। मेरे पुत्रका बड़ा भाग्य जो आपने कृपा करी। वर कन्याका विवाह मानसरोवरकेतट पर करना ठहरचा। दोनों सेनामें आनन्दके शब्द भए। ज्योतिषयोंने तीन दिनका लग्न थाप्या।

अथानन्तर पवनंजयकुमार अंजनीके रूपकी अद्भुतता सुनकरि तत्काल देखनेको उद्यमी भया। तीन दिन रह न सक्या, संगमकी अभिलाषाकरि यह कुमार कामके वश हुआ, कामके दश वेगोंकर पूरित भया। प्रथम विषयकी चिंताकरि व्याकुल भया, अर दूजे वेग देखनेकी अभिलाषा उपजी, तीजे वेग दीर्घ उच्छ्वास नाखने लग्या, चौथे वेग कामज्वर उपज्या मानो चन्दनके अग्नि लागी, पांचवें वेग अंग खेदरूप भया, सुगन्ध पुष्पादितैं अरुचि उपजी, छठे वेग भोजन विषसमान बुरा लाग्या, सातवें वेग

ताकी कथाकी आसक्तताकर विलाप उपज्या, आठवें वेग उन्मत्त भया विभ्रमरूप सर्पकर डस्या गीत नृत्यादि अनेक चेष्टा करने लग्या, नवमें वेग महामूर्छा उपजी, दशवें वेग दुःखके भारसों पीड़ित भया। यद्यपि यह पवनंजय विवेकी था, तथापि कामके प्रभावकरि विह्वल भया। सो कामको धिक्कार हो, कैसा है काम? मोक्षमार्गका विरोधी है, कामके वेगकरि पवनंजय धीरजरहित भया, कपोलनिके कर लगाय शोकवान होय बैठ्या। पसेवसे टपके हैं कपोलनितैं जाके, उष्ण निश्वासकर मुरझाए हैं होठ जाके, अर शरीर कम्पायमान भया, बारम्बार जंभाई लेने लग्या, अर अत्यन्त अभिलाषारूप शल्यतैं चिंतावान भया, स्त्रीके ध्यानतैं इन्द्रिय व्याकुल भई। मनोज्ञ स्थान भी थाकों अरुचिकारी भासै, चित्तकी शून्यता धारता संता तजी हैं समस्त श्रृंगारादि क्रिया जानै। क्षणमात्रविषै तो आभूषण पहिरै, क्षणमात्रविषै खोलडारै, लज्जारहित भया। क्षीण होयगया है समस्त अंग जाका, ऐसी चिंता धारता भया कि वह समय कब होय जो मैं वा सुन्दरीकों अपने पास बैठी देखूं अर वाके कमलतुल्य गात्रको स्पर्श करूं, वा कामिनीसे रसकी वार्ता करूं। वाकी बात ही सुन करि मेरी यह दशा भई है, न जानिए और कहा होय। वह कल्याणरूपिणी जाके हृदयमें बसै है ता हृदयमें दुःखरूप अग्निका दाह क्यों होइ? स्त्री तो निश्चयसेती स्वभावतैं ही कोमलचित्त होय है, मोहि दुख देवे अर्थि चित्त कठोर क्यों भया? यह काम पृथ्वीविषै अनंग कहावै है। जाके अंग नाहीं सो अंगविना ही मोहि अंगरहित करै है, मार डारै हैं! जो याके अंग होय तो न जाने कहा करै? मेरो देहविषै घाव नाहीं परन्तु वेदना बहुत है। मैं एक जगह बैठ्या हूं अर मन अनेक जगहमें भ्रमै है। ये तीन दिन वाहि देखै विना मोहि कुशलसो न जाय, तातैं ताके देखनका उपाय करूं जाकरि शांति होय। अथवा सर्व कार्योंमें मित्र समान जगतविषै और आनंदका कारण कोई नाहीं, मित्रतैं सर्व कार्य सिद्ध होय है। ऐसा विचार अपना जो प्रहस्त नामा मित्र, सर्व विश्वासका भाजन तासों पवनंजय गदगद बाणी करि कहता भया। कैसा है मित्र? किनारे ही बैठ्या है, छायाकी मूर्ति ही है, अपना ही शरीर मानों विक्रियाकरि दूजा शरीर होय रह्या

है, ताहि या भांति कही–हे मित्र ! तू मेरा सर्व अभिप्राय जानै है, तोहि कहा कहूं ? परन्तु यह मेरी दुःख अवस्था मोहि बाचाल करै है । हे सखे ! तुम बिना यह बात कौनसों कही जाय ? तू समस्त जगत की रीति जानै है । जैसैं किसान अपना दुःख राजासों कहै, अर शिष्य गुरुसों कहै, अर स्त्री पतिसों कहै, अर रोगी वैद्यसों कहै, बालक मातासों कहै तो दुख छूटै, तैसैं बुद्धिमान अपने मित्रसों कहै, तातैं मैं तोहि कहूं हूं । वह राजा महेन्द्रकी पुत्री, ताके श्रवण ही कर कामबाणकरि मेरी विकलदशा भई है, जो ताके देखे विना मैं तीन दिन निबाहिवे समर्थ नाहीं । तातैं कोई ऐसा यत्न कर जो मैं वाहि देखूं, ताहि देखे विना मेरे स्थिरता न आवै, अर मेरी स्थिरतासों तोहि प्रसन्नता होय । प्राणियोंको सर्व कार्यसे जीतव्य वल्लभ है, क्योंकि जीतव्यके होते संते आत्मलाभ होय है । या भांति पवनंजयने कही तदि प्रहस्त मित्र हँसे, मानों मित्रके मनका अभिप्राय पायकरि कार्य सिद्धिका उपाय करते भए । हे मित्र ! बहुत कहनेकरि कहा ? अपने माहीं भेद नाहीं, जो करना होय ताकरि ढील न करना । या भांति तिन दोनोंके बचनलाप होय है, एते ही सूर्य मानों इनके उपकार निमित्त अस्त भया । तब सूर्यके वियोगसों दिशा काली पड़ गई, अंधकार फैल गया, क्षणमात्रमें नीलावस्त्र पहिरे निशा प्रकट भई । तब रात्रिके समय उत्साह सहित मित्रको पवनंजय कहते भए । हे मित्र ! उठो, आवो तहां चलें, जहां वह मनकी हरणहारी प्राणवल्लभा तिष्ठै है । तदि ये दोनों मित्र विमानमें बैठि आकाशके मार्ग चाले, मानों आकाशरूप समुद्रके मच्छ ही हैं । क्षणमात्रविषै जाय अंजनीके सतखणे महलपर चढ़ि झरोखोंमें मोतिनकी झालरोंके आश्रय छिप बैठे । अंजनी सुन्दरी को पवनंजय कुमारने देख्या कि पूर्णमासीके चन्द्रमाके समान है मुख जाका, मुखकी ज्योतिसों दीपक मंद ज्योति होय रहे हैं, अर श्याम–श्वेत–अरुण त्रिविध रंगको लिए नेत्र महा सुन्दर हैं, मानों कामके बाण ही हैं, अर कुच ऊंचे महा मनोहर श्रृंगाररसके भरे कलश ही हैं, नवीन कोंपलसमान लाल सुन्दर सुलक्षण हैं हस्त अर पांव जाके, अर नखकी कांतिकरि मानों लावण्यताको प्रकट करतो शोभै है, अर शरीर महासुन्दर है, अति नाजुक

२४६

श्रोणकटि कुचोंके भारनितैं मति कदाचित् भग्न हो जाय—ऐसी शंकाकरि मानों त्रिवलीरूप डोरीतैं प्रतिबद्ध है। अर जाकी जंघा लावण्यताकों धरैं हैं, सो केलेहूतैं अति कोमल, मानों कामके मंदिरके स्तम्भ ही हैं, सो मानों वह कन्या चांदनी रात ही है। मुक्ताफलरूप नक्षत्रनिकरि इन्दीवर—कमल समान है रूप जाका। सो पवनंजय कुमार एकाग्र लगे हैं नेत्र जाके, अंजनीको भले प्रकार देख सुखकी भूमिको प्राप्त भया। ताही समय बसंततिलका नामा सखी महाबुद्धिवती अंजना सुन्दरीतैं कहती भई—हे सुरूपे! तू धन्य है जो तेरे पिताने तुझे वायुकुमारको दीनी। ते वायुकुमार महा प्रतापी हैं, तिनके गुण चन्द्रमाकी किरण समान उज्ज्वल हैं, तिनकार समस्त जगत व्याप्त होय रह्या है। तिनके गुण सुन अन्य पुरुषोंके गुण मंद भासैं हैं। जैसैं समुद्रमें लहर तिष्ठै तैसैं तू वा योधाके अंगविषै तिष्ठैगी। कैसी है तू? महा मिष्टभाषिणी, चन्द्रकांति रत्ननिकी प्रभाको जीतै ऐसी कांति तेरी, तू रत्नकी धरा रत्नाचल पर्वतके तटविषै पड़ी, तुम्हारा सम्बन्ध प्रशंसाके योग्य भया, याकरि सर्वही कुटुंबके जन प्रसन्न भए। या भांति जब पतिके गुण सखीने गाए तदि वह लाजकी भरी चरणनिके नखको ओर नीचे देखती भई। आनन्दरूप जलकरि हृदय भर गया। अर पवनंजयकुमारहू हर्षतैं फूल गए हैं नेत्रकमल जाके, हर्षित भया है वदन जाका।

ता समय एक मिश्रकेशी नामा दूजी सखी होठ दाबिकर चोटी हिलायकर बोली अहो परम अज्ञान तेरा, यह कहा पवनंजयका सम्बन्ध सराह्या? जो विद्युतप्रभ कुंवरसों सम्बन्ध होता तो अतिश्रेष्ठ था। जो पुण्यके योगतैं कन्या का विद्युतप्रभ पति होता तो याका जन्म सफल होता। हे बसंतमाला! विद्युतप्रभ और पवनंजयमें इतना भेद है जितना समुद्र अर गोष्पदमें भेद है। विद्युतप्रभकी कथा बड़े बड़े पुरुषोंके मुखतैं सुनी है। जैसैं मेघके बूंदकी संख्या नाहीं तैसैं ताके गुणनिका पार नाहीं। वह नवयौवन है। महा सौम्य, विनयवान, देदीप्यमान, प्रतापवान, रूपवान, गुणवान, विद्यावान, बुद्धिमान, बलवान सर्व जगत चाहै है दर्शन जाका। सब यही कहैं हैं कि यह कन्या वाहि देनी थी। सो कन्याके बाप

ने सुनी– वह थोड़े ही वर्षमें मुनि होयगा तातैं सम्बन्ध न किया सो भला न किया, विद्युत्प्रभका संयोग एक क्षणमात्र ही भला, अर क्षुद्र पुरुषका संयोग बहुतकाल भी किस अर्थ ? यह वार्ता सुनकर पवनंजय क्रोधरूप अग्निकर प्रज्वलित भए, क्षणमात्रमैं और ही छाया होयगई, रसतैं विरस आयगया, लाल आंखैं होय गईं, होठ डसकर तलवार म्यानसों काढ़ी अर प्रहस्त मित्रसों कहते भए—याही हमारी निंदा सुहावै है, अर यह दासी ऐसे निंद्यवचन कहे अर यह सुनै सो इन दोनोंका शिर काट डारूं। विद्युत्प्रभ इनके हृदयका प्यारा है, सो कैसैं सहाय करेगा ? यह वचन पवनजयके सुन प्रहस्तमित्र रोष कर कहता भया—हे सखे हे मित्र ! ऐसे अयोग्य वचन कहनेकरि कहा ? तिहारी तलवार बड़े सामंतनिके सीसपर पड़े, स्त्री अबला अबध्य है तापर कैसे पड़े ? यह दुष्ट दासी इनके अभिप्राय विना ऐसे कहै है। तुम आज्ञा करो तो या दासीको एकदंडकी चोटसों मार डालूं, परन्तु स्त्रीहत्या, बालहत्या, पशुहत्या, दुर्बल मनुष्यकी हत्या इत्यादि शास्त्रमें वर्जनीय कही है। ये वचन मित्रके सुनकर पवनंजय क्रोधको भूल गए अर मित्रको दासी पर क्रूर देखिकर कहते भए। हे मित्र ! तुम अनेक संग्रामके जीतनहारे, यशके अधिकारी, माते हाथियोंके कुंभस्थल विदारनहारे तुमको दीनपर दया ही करनी योग्य है। अर सामान्य पुरुष भी स्त्रीहत्या न करें तो तुम कैसैं करो ? जे बड़े कुलमें उपजे पुरुष हैं अर गुणोंकरि प्रसिद्ध हैं, शूरवीर हैं तिनका यश अयोग्य क्रियातैं मलिन होय है। तातैं उठो जा मार्ग आए ताही मार्ग चालो। जैसैं छाने आए हुते तैसैं ही चाले। पवनंजयके मनमें भ्रांति पड़ी कि या कन्याको विद्युतप्रभ ही प्रिय है, तातैं वाकी प्रशंसा सुने है, हमारी निंदा सुने है। जो याहि न भावै तो दासी काहेकों कहै। यह रोष धर अपने कहे स्थानक पहुंचे। पवनंजयकुमार अंजनीसों अति फीके पड़ गए। चित्तमें ऐसे चितवते भए कि दूजे पुरुष का है अनुराग जाको ऐसी जो अंजना सो विकराल नदीकी नाईं दूर होतैं तजनी। कैसी है वह अंजनारूप नदी ? संदेहरूप जे विषम भ्रमर तिनकों धरै है, अर खोटे भावरूप जे ग्राह तिनसों भरी है। अर वह नारी वनी समान है, अज्ञानरूप अंधकारसों भरी इन्द्रियरूप जे सर्प तिनको धरै है, पंडितनि-

को कदाचित् न सेवना । खोटे राजाकी सेवा और शत्रुके आश्रय जाना और शिथिलमित्र और अनासक्त स्त्री तिनतैं सुख कहां ? देखो जे विवेकी हैं ते इष्टबन्धु तथा सुपुत्र अर पतिव्रत नारी इनका भी त्यागकर महाव्रत धारे हैं और शूद्र पुरुष कुसंग भी नहीं तजे हैं । मद्यपायी वैद्य और शिक्षारहित हाथी, अर निःकारण वैरी, क्रूरजन, अर हिंसारूपधर्म, अर मूर्खनितैं चर्चा, अर मर्यादाका उलंघना, निर्दयी देश, बालक राजा, स्त्री परपुरुष अनुरागिनी, इनको विवेकी तजैं । या भांति चितवन करता पवनंजयकुमार ताके जैसैं दुलहिनि सों प्रीति गई तैसैं रात्रि हू गई, अर पूर्व दिशाविषैं संध्या प्रकट भई; मानों पवनंजयने अंजनीका राग छोड़या सो भ्रमता फिरै है । (भावार्थ) रागका स्वरूप लाल है अर इनतैं जो राग मिट्या सो तानैं संध्याके मिसकरि पूर्व दिशामें प्रवेश किया है । अर सूर्य ऐसा आरक्त उग्या । जैसैं स्त्रीके कोपतैं पवनंजयकुमार कोप्या । कैसा है सूर्य ? तरुणनिको परे है । बहुरि जगत्की चेष्टाका कारण है । तब पवनंजयकुमार प्रहस्त मित्रको कहते भए, अत्यन्त अरुचिको धरे अंजनीसों विमुख है मन जाका, हे मित्र ! यहां अपने डेरे हैं सो यहांतैं वाका स्थानक समीप है । सो यहां सर्वथा न रहना । ताको स्पर्शकर पवन आवै सो मोहि न सुहावै । तातैं उठो, अपने नगर चालैं, ढील करनी उचित नाहीं । तब मित्र कुमारकी आज्ञा प्रमाण सेनाके लोगोंको पयानेकी आज्ञा करता भया । समुद्रसमान सेना रथ घोड़े, हाथी पयादे इनका बहुत शब्द भया । कन्याका निवास नजीक ही है सो सेनाके पयान के शब्द कन्याके कानमें पड़े तब कुमारका कूच जानकर कन्या अति दुखित भई । वे शब्द कानको ऐसे बुरे लागे जैसैं वज्रकीशिला कानमें प्रवेश करै अर ऊपरसों मुद्गरनिकी घात पड़े । मनमें विचारती भई–हाय हाय ! मोहि पूर्वोपार्जित कर्मने महानिधान दिया था सो छिनाय लिया, कहा करूं ? अब कहा होय । मेरे मनोरथ हुता जो इस नरेन्द्रके साथ क्रीड़ा करूंगी सो और ही भांति दृष्टि आवै है, तो अपराध कछु न जान पड़े है, परन्तु यह मेरी वैरिन मिश्रकेशी तानें निंद्य वचन कहे हुते सो कदाचित् कुमारको यह खबर पहुंची होय अर मोविषैं कुभाया करी होय । यह विवेकरहित पापिनी कटुभाषिणी

धिक्कार, याहि जानै मेरा प्राणवल्लभ मोतैं कृपारहित किया। अब जो मेरे भाग्य होय अर मेरा पिता मुझपर कृपाकरि प्राणनाथको पाछा बहोड़े अर उनकी सुदृष्टि होय तो मेरा जीतव्य है। अर जो नाथ मेरा परित्याग करैं तो मैं आहारकों त्यागकरि शरीरकों तजूंगी। ऐसा चितवन करती वह सती मूर्छा खाय धरतीपर पड़ी। जैसे बेलिकी जड़ उपाड़ी जाय अर वह आश्रयतैं रहित होय कुमलाय जाय, तैसैं कुमलाय गई। तब सर्व सखीजन—यह कहा भया ऐसे कहकर अति संभ्रमकों प्राप्त भईं। शीतल क्रिया सों याहि सचेत किया। तब यासूं मूर्छाका कारण पूछ्या सो यह लज्जाकरि कहि न सकै, निश्चल लोचन होय रही।

अथानन्तर पवनंजयकी सेनाके लोक मनविषैं आकुल भए अर विचार करते भए जो निःकारण कूच काहेका? यह कुमार विवाह करने आया हुता सो दुल्हिनको परण करि क्यों न चलै, याके कोप काहेतैं भया? याँको कौनने कह्या? सर्व वस्तुकी सामग्री हैं, काहू वस्तुकी कमी नाहीं। याका सुसर बड़ा राजा, कन्या अति सुन्दरी, यह पराङ्मुख क्यों भया? तब कईएक हँसि करि कहते भए याका नाम पवनंजय है सो अपनी चंचलतातैं पवनहूं को जीतै है। अर कईएक कहते भए अभी स्त्रीका सुख नाहीं जानै है तातैं ऐसी कन्याकों छोडकरि जायवेको उद्यमी भया है। जो याकै रतिकालका राग होय तो जैसैं वनहस्ती प्रेमके बंधनकरि बंधै है तैसे यह बंध जाय। या भांति सेनाके सामंत कहैं हैं, अर पवनंजय शीघ्रगामी वाहन पर चढ़ चलनेको उद्यमी भए। तब कन्याका पिता राजा महेन्द्रकुमार कूच सुनकर अति आकुल भया, समस्त भाईनि सहित राजा प्रह्लादपै आया। प्रह्लाद अर महेंद्र दोनों आय, कुमारको कहते भए—हे कल्याणरूप! हमको शोकका करणहारा यह कूच काहेको करिए है। अहो कौनने आपको कह्या है, शोभायमान तुम कौनको अप्रिय हो, जो तुमको न रुचे सो सबहीको न रुचै। तिहारे पिताका अर हमारा वचन जो सदोष होय तो भी तुमको मानना योग्य है। सो तो हम समस्त दोषरहित कहैं हैं तुमको अवश्य धारना योग्य है। हे शूरवीर! कूचतैं पाछे फिरो, हमारे

वांछित मनवांछित सिद्ध करो । हम तुम्हारे गुरुजन हैं, सो तुम सारिखे सत्पुरुषों को गुरुजनोंकी आज्ञा आनन्दका कारण है । ऐसा जब राजा महेंद्रने अर प्रह्लादने कह्या तब ये कुमार धीर वीर विनयकरि नम्रीभूत भया है मस्तक जाका, तब तातनै अर ससुरने बहुत आदरसों हाथ पकड़े तब यह कुमार गुरुजनोंको जो गुरुता सो उलंघनको असमर्थ भया । तिनकी आज्ञातैं पाछा बाहुड्या अर मनमें विचारी कि याहि परणकरि तजदूंगा ताकि दुःखसो जन्म पूरा करै, अर परका भी याहि संयोग न होय सकै ।

अथानन्तर कन्या प्राणवल्लभको पाछा आया सुनकर हर्षित भई । रोमांच होय आए । लग्नके समय इनका विवाहमंगल भया । जब दुलहिनका करग्रहण कराया सो अशोकके पल्लव समान आरक्त अति कोमल कन्याके कर सो या विरक्तचित्तके अग्निकी ज्वाला समान लागे । विना इच्छा कुमारकी दृष्टि कन्याके तनपर काहू भांति गई सो क्षणमात्र भी न सह सक्या, जैसे कोई विद्युतपातकों न सह सकै । कन्याके प्रीति, वरके अप्रीति, यह याके भावकों न जाने, ऐसा जान मानों अग्नि हंसती भई और शब्द करती भई, बड़े विधानसों इनको विवाहकरि सर्वबंधुजन आनंदको प्राप्त भए । मानसरोवरके तट विवाह भया । नानाप्रकार वृक्षलता फल पुष्प विराजित जो सुन्दर वन तहां परम उत्सवकरि एक मास रहे । परस्पर दोनों समधियोंने अति हितके वचन आलाप कहे । परस्पर स्तुति महिमा करी, सन्मान किए, पुत्रीके पिताने बहुत दान दिया । अपने अपने स्थानको गए ।

हे श्रेणिक ! जे वस्तुका स्वरूप नाहीं जाने हैं अर विना समझे पराये दोष ग्रहैं, ते मूर्ख हैं । अर पराए दोष कर आप ऊपर दोष आय पड़े है सो सब पापकर्मका फल है । पाप आतापकारी है ।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महा पद्मपुराण संस्कृत ग्रन्थ, ताकी भाषा वचनिकाविषै अंजनापवनंजयका विवाह वर्णन करने वाला पन्द्रहवां पर्व पूर्ण भया ॥ १५ ॥

अथानन्तर पवनंजयकुमारने अंजनी सुन्दरीको परण कर ऐसी तजी जो कबहू बात न बूझै। सो वह सुन्दरी पतिके असंभाषणतैं अर कृपादृष्टि कर न देखवेतैं परम दुःख करती भई। रात्रिमें भी निद्रा न लेय। निरंतर अश्रुपात ही झरा करैं, शरीर मलिन होय गया, पतिसों अति स्नेह, धनीका नाम अति सुहावै, पवन जावै सो भी अति प्रिय लागै, पतिका रूप तो विवाह वेदीमें अवलोकन कीना हुता ताका मनमें ध्यान करवो करे अर निश्चल लोचन सर्व चेष्टारहित बैठी रहै। अंतरंग ध्यानमें पतिका रूप निरूपणकरि बाह्य भी दर्शन किया चाहै सो न होय। तदि शोककरि बैठी रहै, चित्रपटविषै पतिका चित्राम लिखनेका उद्यम करै, तदि हाथ कांप करि कलम गिर पड़े। दुरबल होय गया है समस्त अंग जाका, ढीले होय कर गिर पड़े हैं सर्व आभूषण जाके, दीर्घ उष्ण जे उच्छ्वास तिनकरि मुरझाय गए हैं कपोल जाके, अंगसैं वस्त्रके भी भारकरि खेदको धरती संती अपने अशुभ कर्मोंको निंदती, माता पितानिकों बारम्बार याद करती संती, शून्य भया है हृदयजाका, दुःखकर क्षीण शरीर, मूर्छा आयजाय, चेष्टा रहित होय जाय, अश्रुपातकरि रुक गया है कंठ जाका, दुःखकर निकसै हैं बचन जाके, विह्वल भई संती, देव कहिए पूर्वोपार्जित कर्म ताहि उलाहना देय चन्द्रमाकी किरण हू करि जाका अतिदाह उपजै, अर मंदिरविषैं गमन करती मूर्छा खाय गिर पड़े, अर विकल्पकी मारी ऐसे विचार करि अपने मनहीमें पतिसों बतलावै। हे नाथ! तिहारे मनोज्ञ अंग मेरे हृदयमें निरन्तर तिष्ठै हैं मोहि आताप क्यों करै हैं, अर मैं आपका कछु अपराध नाहीं किया, निःकारण मेरेपर कोप क्यों करो? अब प्रसन्न होवो, मैं तिहारी भक्त हूं, मेरे चित्तके विषादको हरो। जैसैं अंतरंग दर्शन देवो हो, तैसैं बहिरंग देवो। यह मैं हाथ जोड़ बीनती करूं हूं। जैसैं सूर्य विना दिनकी शोभा नाहीं और चन्द्रमा विना रात्रिकी शोभा नाहीं और दया क्षमा शील संतोषादि गुण विना विद्या शोभै नाहीं, तैसैं तिहारी कृपा विना मेरी शोभा नाहीं। या भांति चित्तविषै बसै जो पति ताहि उलाहना देय अर बड़े मोतियों समान नेत्रनितैं आंसुवनिकी बूंद झरै, महा कोमल सेज अर अनेक सामग्री सखीजन करै परन्तु याहि कछु न सुहावै, चक्रारूढ़ समान मनमें

उपज्या है वियोगसे मन जाकौं, स्नानादि संस्कार रहित कभी भी केश समारे गूंथे नाहीं, केश भी रूखे पड़ गए, सर्व क्रियामें जड़, मानों पृथ्वीहीका रूप होय रही है। अर निरन्तर आंसुवनिके प्रवाहतैं मानो जलरूप ही होय रही है। हृदयके दाहके योगतैं मानो अग्निरूप ही होय रही है। अर निश्चल चित्तके योगतैं मानों वायुरूप ही होय रही है। अर शून्यताके योगतैं मानो गगनरूप ही होय रही है। मोहके योगतैं आच्छादित होय रह्या है ज्ञान जाका, भूमिपर डार दिए हैं सर्व अंग जानैं, बैठ न सकै अर तिष्ठै तो उठ न सकै, अर उठै तो देहीको थांभ न सकै, सो सखीजनका हाथ पकडि विहार करै सो पग डिग जाय। अर चतुर जे सखीजन तिनसौं बोलनेकी इच्छा करै परन्तु बोल न सकै। अर हंसनी कबूतरी आदि गृहपक्षी तिनसौं क्रीड़ा किया चाहै पर कर न सकै। यह विचारी सबोंसे न्यारी बैठी रहै। पतिमें लग रहा है मन अर नेत्र जाका, निःकारण पतितैं अपमान पाया सो एक दिन बरस बराबर जाय। यह याकी अवस्था देखि सकल परिवार व्याकुल भया, सब ही चिंतवते भए कि—एता दुख याहि बिना कारण क्यों भया है? यह कोई पूर्वोपार्जित पापकर्मका उदय है। पिछले जन्ममें यानैं काहूके सुखविषैं अंतराय किया है, सो याकै भी सुखका अंतराय भया। वायुकुमार तो निमित्तमात्र है। यह बारी भोरी निर्दोष याहि परणकरि क्यों तजी? ऐसी दुलहिन सहित देवनिसमान भोग क्यों न करै? यानै पिताके घर कभी रंचमात्र हू दुख न देख्या सो यह कर्मानुभव कर दुखके भारकों प्राप्त भई। याकी सखीजन विचारैं हैं कि कहा उपाय करैं, हम भाग्यरहित हमारे यत्नसाध्य यह कार्य नाहीं। कोई अशुभकर्मकी चाल है। अब ऐसा दिन कब होयगा, वह शुभ मुहूर्त शुभ बेला कब होयगी जो वह प्रीतम या प्रियाको समीप लेय बैठेगा अर कृपादृष्टिकर देखैगा, मिष्टवचन बोलैगा। यह सबके अभिलाषा लाग रही है।

अथानन्तर राजा वरुण ताके रावणसों विरोध पड़्या, वरुण महा गर्ववान रावणकी सेवा न करै, सो रावणने दूत भेज्या। दूत जाय वरुणसों कहता भया। दूत धनीकी शक्तिकर महाकांतिको धरै

है। अहो विद्याधराधिपते वरुण ! सर्वका स्वामी जो रावण ताने यह आज्ञा करी है जो आप मोहि प्रणाम करो, अथवा युद्धकी तैयारी करो। तब वरुणने हंसकर कही, हो दूत ! कौन है रावण, कहां रहै है जो मोहि दबावै है, सो मैं इन्द्र नाहीं हूं, वह वृथा गर्वित लोकनिंद्य हुता, मैं वैश्रवण नाहीं, मैं यम नाहीं, मैं सहस्ररश्मि नाहीं, मैं मरुत नाहीं। रावणके देवाधिष्ठित रत्नोंकरि महा गर्व उपज्या है। वाकी सामर्थ्य है तो आवो, मैं वाहि गर्वरहित करूंगा। अर तेरी मृत्यु नजीक है जो हमसों ऐसी बात कहे है। तब दूत जायकर रावणसों सर्व वृत्तांत कहता भया। रावणने कोपकर समुद्र तुल्य सेनासहित जाय वरुणका नगर घेरया अर यह प्रतिज्ञा करी जो मैं याहि देवाधिष्ठित रत्न विना ही वश करूंगा। मारूं अथवा बांधूं। तब वरुणके पुत्र राजीव पुंडरीकाविक क्रोधायमान होय रावणके कटकपर आए। रावणकी सेनाके अर इनके बड़ा युद्ध भया। परस्पर शस्त्रनिके समूह छेद डारे। हाथी हाथियोंसे, घोड़े घोड़ोंसे, रथ रथोंसे, भट भटोंसे महायुद्ध करते भए। बड़े २ सामंत होठ डसि डसि करि लाल नेत्र हैं जिनके वे महा भयानक शब्द करते भए। बड़ी बेरतक संग्राम भया। सो वरुणकी सेना रावणकी सेनासों कछुइक पीछे हटी। तब अपनी सेनाको हटी देख वरुण राक्षसनिकी सेनापर आप चलायकरि आया, कालाग्निसमान भयानक तब रावण वरुणको दुर्निवारण भूमिविषै सन्मुख आवता देखकर आप युद्ध करनेको उद्यमी भया। वरुणकै रावणकै आपसविषै युद्ध होणे लगा, अर वरुणके पुत्र खरदूषणसों युद्ध करते भए। कैसे हैं वरुणके पुत्र ? महाभटोंके प्रलय करनहारे, अर अनेक माते हाथियोंके कुम्भ-स्थल विदारनहारे। सो रावण क्रोधकरि दीप्त है मन जाका, महाक्रूर जो भृकुटि तिनकरि भयानक है मुख जाका, कुटिल हैं केश जाके, जबलगि धनुषके बाण तान वरुणपर चलावै तब लग वरुणके पुत्रों ने रावणके बहनेऊ खरदूषणको पकड़ लिया, तब रावणने मनमें विचारी जो हम वरुणसों युद्ध करें अर खरदूषणका मरण होय तो उचित नाहीं, तातैं संग्राम मनै किया। जे बुद्धिमान हैं ते मंत्रविषै चूकैं नाहीं। तब मंत्रियोंने मंत्रकर सब देशोंके राजा बुलाए, शीघ्रगामी पुरुष भेजे, सबनको लिखा बड़ी-सेना

सहित शीघ्र ही आवो। अर राजा प्रह्लादपर भी पत्र लेय मनुष्य आया सो राजा प्रह्लादने स्वामीकी भक्तिकरि रावणके सेवकनिका बहुत सन्मान किया, अर उठकर बहुत आदरसों पत्र माथैं चढ़ाया अर बांच्या। सो पत्रविषै या भांति लिखा था कि पातालपुरके समीप कल्याण रूप स्थानकमैं तिष्ठता महा-क्षेमरूप विद्याधरोंके अधिपतियोंका पति सुमालीका पुत्र जो रत्नश्रवका ताका पुत्र राक्षसवंशरूप आकाशविषै चन्द्रमा ऐसा जो रावण सो आदित्य नगरके राजा प्रह्लादको आज्ञा करै है। कैसा है प्रह्लाद? कल्याणरूप है, न्यायका वेत्ता है, देशकालविधानका ज्ञायक है। हमारा बहुत वल्लभ है। प्रथम तो तिहारे शरीरकी कुशल पूछै है, बहुरि यह समाचार है कि—हमको सर्व खेचर भूचर प्रणाम करै हैं, हाथोंकी अंगुली तिनके नखकी ज्योतिकर ज्योतिरूप किए हैं निज शिरके केश जिनने, अर एक अति दुर्बुद्धि वरुण पाताल नगरमें निवास करै है, सो आज्ञातैं पराङ्मुख होय लड़नेको उद्यमी भया है। हृदयको व्यथाकारी विद्याधरोंके समूहकरि युक्त है। समुद्रके मध्य द्वीपको पायकर यह दुरात्मा गर्वको प्राप्त भया है, सो हम ताके ऊपर चढ़कर आए हैं। बड़ा युद्ध भया। वरुणके पुत्रोंने खरदूषणको जीवता पकड्या है। सो मंत्रियोंने मंत्रकरि खरदूषणके मरणकी शंकातैं युद्ध रोक दिया है, तातैं खर-दूषणको छुड़ावना अर वरुणको जीतना सो तुम अवश्य शीघ्र आइयो, ढील मत करियो, तुम सारिखे पुरुष कर्तव्यमें न चूकैं। अब सब विचार तिहारे आयवेपर है। यद्यपि सूर्य तेजका पुंज है तथापि अरुण सारिखा सारथी चाहिए। तब राजा प्रह्लाद पत्रके समाचार जानि मंत्रियोंसौं मंत्र कर रावणके समीप चलनेको उद्यमी भया। तब प्रह्लादको चलता सुनकर पवनंजयकुमारनें हाथ जोड़ि गोडनितैं धरती स्पर्श नमस्कारकर विनती करी। हे नाथ! मुझ पुत्रके होते संते तुमको गमन युक्त नाहीं, पिता जो पुत्रको पालै है सो पुत्रका यही धर्म है कि पिताकी सेवा करै। जो सेवा न करै तो जानिए पुत्र भया ही नाहीं। तातैं आप कूच न करैं, आज्ञा करैं। तब पिता कहते भए—हे पुत्र! तुम कुमार हो, अबतक तुमने कोई युद्ध देख्या नाहीं। तातैं तुम यहां रहो, मैं जाऊंगा। तब पवनंजयकुमार कनकाचलके तट

समान जो वक्षस्थल ताहि ऊंचाकर तेजके धरणहारे वचन कहता भया–हे तात ! मेरी शक्तिका लक्षण तुमने देख्या नाहीं, जगतके दाहवेमें अग्निके स्फुलिंगेका क्या वीर्य परखना। तुम्हारी आज्ञारूप आशिष कर पवित्र भया है मस्तक मेरा, ऐसा जो मैं इन्द्रको भी जीतनेको समर्थ हूं, यामैं संदेह नाहीं। ऐसा कहकर पिताको नमस्कारकर महाहर्ष संयुक्त उठकरि स्नान भोजनादि शरीरकी क्रिया करी, अर आदरसहित जे कुलमैं वृद्ध हैं, तिन्होंने अशीष दीनी। भावसहित अरहंत सिद्धको नमस्कारकरि परम कांतिको धरतासंता महा मंगलरूप पितासो विदा होवेको आया सो पिताने अर माताने मंगलके भयतैं आंसू न काढ़े, आशीर्वाद दिया। हे पुत्र ! तेरी विजय होय, छातीसों लगाय मस्तक चूम्या। पवनंजय-कुमार श्रीभगवानका ध्यान धर माता पिताको प्रणामकरि जे परिवारके लोग पायनं पड़े तिनको बहुत धीर्य बन्धाय सबसों अति स्नेह कर विदा भए। पहले अपना दाहना पांव आगैं धर चाले। फुरकै है दाहिनी भुजा जिनकी, अर पूर्ण कलश जिनके मुखपर लाल पल्लव तिनपर प्रथम ही दृष्टि पड़ी अर थंभ सो लगी हुई द्वारें खड़ी जो अंजना सुन्दरी आंसुवनि करि भीज रहे हैं नेत्र जाके, तांबूलादिरहित धूसरे होय रहे हैं अधर जाके, मानों थम्भविषैं उकेरी पुतली ही है। कुमारकी दृष्टि सुन्दरीपर पड़ी सो क्षण-मात्रविषैं दृष्टि संकोच कोपकरि बोले–हे दुरीक्षणे कहिए दुःखकारी है दर्शन जाका, या स्थानकतैं जावो, तेरी दृष्टि उल्कापात समान है, सो मैं सहार न सकूं। अहो बड़े कुलकी पुत्री कुलवंती, तिनमैं यह ढीठपणा कि मने किए भी निर्लज्ज ऊभी रहैं। ये पतिके अतिक्रूर वचन सुने तो भी याहि अति प्रिय लागैं–जैसैं घने दिनके तिसाए पपैयेको मेघकी बूंद प्यारी लागैं सो पतिके वचन मनकरि अमृत समान पीवती भई, हाथ जोडि चरणारविंदकी ओर दृष्टि धरि गद्गद बाणीकर डिगते डिगते वचन नीठि कहती भई–हे नाथ ! जब तुम यहां बिराजते हुते, तबहू मैं वियोगिनी ही हुती परन्तु आप निकट हैं सो आशाकरि प्राण कष्टतैं टिक रहै हैं। अब आप दूर पधारै हैं, मैं कैसैं जीऊंगी ? मैं तिहारे वचन रूप अमृतके आस्वादनेको अति आतुर तुम परदेशको गमन करते समय स्नेहतैं दयालु चित्त होयकर

बस्तीके पशु पक्षियोंको भी दिलासा करी, मनुष्योंकी तो कहा बात ? सबसों अमृत समानवचन कहे। मेरा चित्त तिहारे चरणारविंदविषै है, मैं तिहारी अप्राप्तिकर अति दुखी औरनिकी श्रीमुखतें एती दिलासा करी, मेरी औरनिके मुखतें ही दिलासा कराई होती। जब मोहि आपने तजी तब जगतमें शरण नाहीं, मरण ही है। तब कुमारने मुख संकोचकर कोपसों कही—मर। तब यह सती खेद खिन्न होय धरतीपर गिर पडी। पवनकुमार यासों कुमयाहीविषै चाले। बड़ी ऋद्धि सहित हाथी पर असवार होय सामंतोंसहित पयान किया। पहले ही दिनविषै मानसरोवर जाय डेरे भए, पुष्ट हैं बाहन जिनके सो विद्याधरनिकी सेना देवोंकी सेना समान आकाशतें उतरती संती अति शोभायमान भासती भई। कैसी है सेना ? नानाप्रकारके जे बाहन अर शस्त्र तेई हैं आभूषण जाके। अपने २ बाहनोंके यथायोग्य यत्न कराये, स्नान कराये, खानपानका यत्न कराया।

अथानन्तर विद्याके प्रभावतें मनोहर एक बहुखणा महल बनाया, चौड़ा अर ऊंचा, सो आप मित्र सहित महल ऊपर विराजे। संग्रामका उपज्या है अति हर्ष जिनके, झरोखनिकी जाली के छिद्रकरि सरोवरके तटके वृक्षनिकों देखते हुते, शीतल मंद सुगंध पवनकरि वृक्ष मंद मंद हालते हुते अर सरोवरविषै लहर उठती हुती। सरोवरके जीव कछुवा, मीन, मगर अर अनेकप्रकारके जलचर गर्वके धरणहारे तिनकी भुजानिकरि किलोल होय रही है। उज्ज्वल स्फटिक मणि समान निर्मल जल है जामें, नानाप्रकारके कमल फूल रहे हैं। हंस, कारंड, क्रौंच, सारस इत्यादि पक्षी सुन्दर शब्द कर रहे हैं, जिनके सुननेतें मन अर कर्ण हर्ष पावैं। अर भ्रमर गुंजार कर रहे हैं। तहां एक चकवी, चकवे विना अकेली वियोगरूप
अग्नितें तप्तायमान, अति आकुल, नानाप्रकार चेष्टाकी करणहारी, अस्ताचलकी ओर सूर्य गया सो वा तरफ लग रहे हैं नेत्र जाके, अर कमलिनीके पत्रनिके छिद्रोंविषै बारम्बार देखै है, पांखनिकों हिलावती उठै है अर पड़े हैं ? अर मृणाल कहिए कमलकी नालका तार ताका स्वाद विष समान देखै है, अपना प्रतिबिम्ब जलविषै देखकरि जाने है कि वह मेरा पीतम है, सो ताहि बुलावै है, सो प्रतिबिम्ब कहा

पद्म पुराण २५८ आवै ? तदि अप्राप्तितैं परम शोकको प्राप्त भई है । कटक आय उतरया है, सो नाना देशनिके मनुष्योंके
शब्द अर हाथी, घोड़ा आदि नानाप्रकारके पशुवनिके शब्द सुनकर अपने वल्लभ चकवाकी आशाकर,
भ्रमैं है चित्त जाका, अश्रुपात सहित हैं लोचन जाके, तटके वृक्षपर चढ़ि चढ़िकरि दशोंदिशाकी ओर
देखै है, पीतमको न देखकरि अति शीघ्र ही भूमिपर आय पड़े हैं, पांख हलाय कमलिनीकी जो रज
शरीरके लागी है सो दूर करै है। सो पवनकुमारने घनी बेर तक दृष्टि धारि चकवीकी दशा देखी।
दयाकर भीज गया है चित्त जाका, चित्तमें ऐसा विचारै है कि पीतमके वियोग करि यह शोक रूप
अग्निविषै बलै है। यह मनोज्ञ मानसरोवर, अर चन्द्रमाकी चांदनी चंदन समान शीतल, सो या वियो-
गिनी चकवीकों दावानल समान है, पति विना याकों कोमल पल्लव भी खड्ग समान भासै हैं। चंद्रमा
की किरण भी वज्र समान भासै है, स्वर्ग हू नरकरूप होय आचरै है। ऐसा चिंतवनकर याका मन
प्रिया विषै गया। अर या मानसरोवरपर ही विवाह भया हुता सो वे विवाहके स्थानक दृष्टिमें पड़े सो
याकों अति शोकके कारण भए, मर्मके भेदनहारे दुःसह करौत समान लागे। चित्तविषै विचारता
भया–हाय! हाय! मैं क्रूरचित्त पापी, वह निर्दोष वृथा तजी, एक रात्रिका वियोग चकवी न सहार
सकै तो बाईस वर्षका वियोग वह महासुन्दरी कैसैं सहारै ? कटुक वचन वाकी सखीने कहे हुते, वाने
तो न कहे हुते, मैं पराए दोषकरि काहेको ताका परित्याग किया। धिक्कार है मो सारिखे मूर्खको, जो
विना विचारे काम करै। ऐसे निष्कपट प्राणीको विनाकारण दुख अवस्था करी। मैं पापचित्त हूँ, वज्र
समान है हृदय मेरा, जो मैंने एते वर्ष ऐसी प्राणवल्लभाकों वियोग दिया, अब क्या करूं ? पितासों २५८
विदा होयकर घरतैं निकस्या हूं, कैसैं पाछा जाऊं ? बड़ा संकट पड्या, जो मैं वासों मिले विना
संग्राममें जाऊं तो वह जीवै नाहीं, अर वाके अभाव भए मेरा भी अभाव होयगा। जगतविषै जीतव्य
समान कोई पदार्थ नाहीं, तातैं सर्व संदेहका निवारणहारा मेरा परम मित्र प्रहस्त विद्यमान है याहि
सर्व भेद पूछूं। वह सर्व प्रीतिकी रीतिमें प्रवीण है। जे विचारकर कार्य करै हैं, ते प्राणी सुख पावैं

हैं। ऐसा पवनकुमारकों विचार उपज्या, सो प्रहस्त मित्र ताके सुखविषै सुखी दुखविषै दुखी, याकों चिंतावान देख पूछता भया कि–हे मित्र ! तुम रावणकी मदद करनेको वरुण सारिखे योधासों लडनेको जावो हो, सो अति प्रसन्नता चाहिए तब कार्यकी सिद्धि होय। आज तिहारा वदनरूप कमल क्यों मुरझाया दीखै है, लज्जाको तजकरि मोहि कहो, तुमको चिंतावान देखकर मेरे व्याकुलभाव भया है। तब पवनंजयने कही–हे मित्र ! यह वार्ता काहूसों कहनी नाहीं, परन्तु तू मेरे सर्व रहस्यके भाजन हो तोसूं अंतर नाहीं। यह बात कहते परम लज्जा उपजै है। तब प्रहस्त कहते भए जो तिहारे चित्त विषै होय सो कहो, जो तुम आज्ञा करो सो बात और कोई न जानेगा। जैसें तातें लोहेपर पड़ी जलकी बूंद विलाय जाय, प्रकट न दीखै तैसैं मोहि कही बात प्रकट न होय। तब पवनकुमार बोले–हे मित्र ! सुनो–मैं कदापि अंजनी सुन्दरीसों प्रीति न करी। सो अब मेरा मन अति व्याकुल है, मेरी क्रूरता देखो, ऐते वर्ष परणे भए सो अबतक वियोग रह्या, निष्कारण अप्रीति भई, सदा वह शोककी भरी रही। अश्रुपात झरते रहे, अर चलते समय द्वारै खड़ी विरह रूप दाहसों मुरझाय गया है मुखरूप कमल जाका, सर्व लावण्य सम्पदारहित मैंने देखी। अब ताके दीर्घ नेत्र नीलकमल समान मेरे हृदयको बाणवत् भेदै हैं। तातैं ऐसा उपाय कर जाकरि मेरा वासों मिलाप होय। हे सज्जन ! जो मिलाप न होयगा तो हम दोनों हीका मरण होयगा। तब प्रहस्त क्षणएक विचारकरि बोले तुम माता पितासों आज्ञा मांग शत्रुके जीतवेको निकसे हो, तातैं पीछे चलना उचित नाहीं। अर अबतक कदापि अंजना सुन्दरी याद करी नांही, अर यहां बुलावैं तो लज्जा उपजै है, तातैं गोप्य चलना अर गोप्य ही आवना, वहां रहना नांही। उनका अवलोकनकर सुख संभाषणकरि आनन्दरूप शीघ्र ही आवना। तब आपका चित्त निश्चल होयगा, परम उत्साहरूप चलना, शत्रुके जीतनेका निश्चय यही उपाय है। तब मुद्गर नामा सेनापतिकों कटक रक्षा सौंपकरि मेरुकी बंदनाका मिसकरि प्रहस्त मित्रसहित गुप्त ही सुगंधादि सामग्री लेयकरि आकाशके मार्गसों चाले। सूर्य भी अस्त होयगया अर सांझका प्रकाश भी होयगया,

निशा प्रकट भई । अंजनीसुन्दरीके महलपर जाय पहुँचे, पवनकुमार तो बाहिर खड़े रहे, प्रहस्त खबर देनेकों भीतर गए । दीपकमन्द मंद प्रकाश था, अंजनी कहती भई—कौन है ? बसंतमाला निकट ही
पद्म सोती हुती, सो जगाई । वह सब बातोंविषै निपुण उठकर अंजनीका भय निवारण करती भई । प्रहस्त
२६० ने नमस्कार करि जब पवनंजयके आगमका वृत्तांत कह्या तब सुन्दरीने प्राणनाथका समागम स्वप्न समान जान्या । प्रहस्तकों गद्गद बाणीकरि कहती भई—हे प्रहस्त ! मैं पुण्यहीन, पतिकी कृपा-करिवर्जित, मेरे ऐसा ही पाप कर्मका उदय आया, तू हमसों कहा हंसै है ? पतिसों जिसका निरादर होय वाकी कौन अवज्ञा न करै ? मैं अभागिनी दुःख अवस्थाको प्राप्त भई, कहांतैं सुख अवस्था होय ? तब प्रहस्तने हाथ जोडि नमस्कारकरि विनती करी—हे कल्याणरूपिणी ! हे पतिव्रते ! हमारा अपराध क्षमा करो, अब सब अशुभ कर्म गए, तुम्हारे प्रेमरूप गुणका प्रेर्‍या तेरा प्राणनाथ आया । तुमसे अति प्रसन्न भया, तिनकी प्रसन्नताकरि कहाकहा आनन्द न होय, जैसैं चन्द्रमाके योगकरि रात्रिकी अति मनोज्ञता होय । तब अंजनासुन्दरी क्षणएक नीची होय रही अर बसंतमाला प्रहस्तसों कही—हे भद्र ! मेघ बरसै जब ही भला, तातैं प्राणनाथ इनके महल पधारे, सो इनका बड़ा भाग्य, अर हमारा पुण्यरूप वृक्ष फल्या । यह बात होय रही हुती ताही समय आनन्दके अश्रुपातकरि व्याप्त होयगए हैं नेत्र जिनके सो कुमार पधारे ही । मानों करुणारूप सखी ही पीतमकों ढिग ले आई । तब भयभीत हिरणीके नेत्र समान सुन्दर हैं नेत्र जाके, ऐसी प्रिया पतिको देख सन्मुख जाय, हाथ जोडि, सीस निवाय पांयनि पड़ी । तब प्राणवल्लभने अपने करतैं सीस उठाय खडी करी । अमृत समान वचन कहे कि—हे देवी ! क्लेशका २६०
सकल खेद निवृत्त होवै । सुन्दरी हाथ जोडि पतिकें निकट खडी हुती । पतिने अपने करतैं कर पकड़-करि सेजपर बिठाई, तब नमस्कारकर प्रहस्त तो बाहिर गए अर बसंतमाला हू अपने स्थान जाय बैठी । पवनंजयकुमारने अपने अज्ञानतैं लज्जावान होय सुन्दरीसों बारम्बार कुशल पूछी अर कही है प्रिए ! मैंने अशुभ कर्मके उदयतैं जो तिहारा वृथा निरादर किया सो क्षमा करो । तब सुन्दरी नीचा मुखकरि

मंदमंद वचन कहती भई—हे नाथ ! आपने पराभव कछु न किया, कर्मका ऐसा ही उदय हुता, अब आपने कृपा करी, अति स्नेह जताया तो मेरे सर्व मनोरथ सिद्ध भए। आपके ध्यान कर संयुक्त हृदय मेरा, सो आप सदा हृदयहीविषै विराजते, आपका अनादर हू आदर समान भास्या।

या भांति अंजना सुन्दरीने कह्या तब पवनंजयकुमार हाथ जोड कहते भए कि हे प्राणप्रिये ! मैं वृथा अपराध किया। पराये दोषतैं तुमको दोष दिया। सो तुम सब अपराध हमारा विस्मरण करो। मैं अपना अपराध क्षमावने निमित्त तिहारे पायन करूं हूं, तुम हमसों अति प्रसन्न होवो। ऐसा कहकर पवनंजयकुमारने अधिक स्नेह जनाया, तब अंजनासुन्दरी पतिका एता स्नेह देखकरि बहुत प्रसन्न भई। अर पतिको प्रियवचन कहती भई, हे नाथ ! मैं अति प्रसन्न भई, हम तिहारे चरणारविंदकी रज हैं, हमारा इतना विनय तुमको उचित नाहीं, ऐसा कहकर सुखसों सेजपर विराजमान किये, प्राणनाथकी कृपाकरि प्रियाका मन अति प्रसन्न भया। अर शरीर अतिकांतिकों धरता भया, दोनों परस्पर अतिस्नेह के भरे एक चित्त भए। सुखरूप जागृति रहे, निद्रा न लीनी। पिछले पहिर अल्प निद्रा आई, प्रभातका समय होय आया। तब यह पतिव्रता सेजसों उतर पतिके पाय पलोटने लगी, रात्रि व्यतीत भई, सोसुख में जानी नाहीं, प्रातःसमय चन्द्रमाकी किरण फीकी पड़गई, कुमार आनन्दके भारमें भर गए। अर स्वामीकी आज्ञा भूलगए, तब मित्र प्रहस्तने कुमारके हितविषै है चित्त जाका, ऊंचा शब्दकर बसंतमाला को जगाकर भीतर पठाई अर मंदमंद आपहू सुगन्धित महलमें मित्रके समीप गए, अर कहते भए—हे सुन्दर ! ऊठो, अब कहा सोवो हो ? चन्द्रमा भी तिहारे मुखकी कांतिकरि रहित होयगया है। यह वचन सुनकर पवनंजय प्रबोधको प्राप्त भए। शिथिल है शरीर जिनका, जंभाई लेते, निद्राके आवेशकरि लाल हैं नेत्र जिनके, कानोंको बांए हाथकी तर्जनी अंगुलीसों खुजावते, खुले हैं नेत्र जिनके, दाहिनी भुजा संकोचकरि अरिहंतका नाम लेकर सेजसों उठे। प्राणप्यारी आपके जगनेतैं पहिले ही सेजसों उतरकरि भूमि विषै विराजै है, लज्जाकर नम्रीभूत हैं नेत्र जाके, उठते ही पीतमकी दृष्टि प्रियापर पडी, बहुरि प्रहस्त

पद्म
पुराण
२६२

को देखकरि, आवो मित्र शब्द कहकर सेजसों उठे। प्रहस्तने मित्रसों रात्रिकी कुशल पूछी, निकट बैठे, मित्र नीतिशास्त्रके वेत्ता कुमारसों कहते भए—हे मित्र! अब उठो प्रियाजीका सन्मान बहुरि आय कर करियो, कोई न जानै, या भांति कटकमें जाय पहुँचैं। अन्यथा लज्जा है। रथनूपुरका धनी किन्नर गीतनगरका धनी रावणके निकट गया चाहै है सो तिहारी ओर देखै है—जो वे आगैं आवैं तो हम मिलकर चलें। अर रावण निरंतर मंत्रियोंतैं पूछै जो पवनंजयकुमारके डेरे कहां हैं अर कब आवेंगे? तातैं अब आप शीघ्र ही रावणके निकट पधारो। प्रियाजीसों विदा मांगो, तुमको पिताकी अर रावण को आज्ञा अवश्य करनी है। कुशल क्षेमसों कार्यकर सिताब ही आवैंगे, तब प्राणप्रियासों अधिक प्रीत करियो। तब पवनंजयने कही हे मित्र! ऐसे ही करना। ऐसा कहकर मित्रको तो बाहिर पठाया अर आप प्राणवल्लभासों अतिस्नेहकर उरसों लगाय कहते भए—हे प्रिये! अब हम जाय हैं, तुम उद्वेग मत करियो, थोड़े ही दिनोंमें स्वामीका कामकर हम आवेंगे, तुम आनन्दसों रहियो। तब अंजना, सुन्दरी हाथ जोडकर कहती भई—हे महाराजकुमार! मेरा ऋतुसमय है सो गर्भ मोहि अवश्य रहेगा और अबतक आपकी कृपा नहीं हुती, यह सर्व जानै हैं सो माता पितासों मेरे कल्याणके निमित्त गर्भ का वृत्तांत कह जावो। तुम दीर्घदर्शी सब प्राणियोंमें प्रसिद्ध हो। ऐसे जब प्रियाने कह्या तब प्राण-वल्लभाकों कहते भए—हे प्यारी! मैं माता पितासों विदा होय निकस्या। सो अब उनके निकट जाना बनै नाहीं, लज्जा उपजै है। लोक मेरी चेष्टा जान हंसैंगे, तातैं जबतक तिहारा गर्भ प्रकाश न पावै ताके पहिले ही मैं आवूं हूं, तुम चित्त प्रसन्न राखो, अर कोई कहै तो ये मेरे नामकी मुद्रिका राखो, २६२
हाथोंके कड़े राखो, तुमको सब शांति होयगी। ऐसा कहकर मुद्रिका दई अर बसंतमालाको आज्ञा दई—इनकी सेवा बहुत नीके करियो। आप सेजसों उठे, प्रिया विषै लग रह्या है प्रेम जिनका। कैसी है सेज संयोगके योगतैं बिखर रहे हैं हारके मुक्ताफल जहां। अर पुष्पनकी सुगन्ध मकरंदतैं भ्रमै हैं भ्रमर जहां, क्षीरसागरकी तरंग समान अति उज्ज्वल बिछे हैं पट जहाँ। आप उठकर मित्रके सहित विमानपर बैठि

आकाशके मार्ग चाले। अंजना सुन्दरीने अमंगलके कारण आंसू न काढ़े। हे श्रेणिक! कदाचित् या लोकविषैं उत्तमवस्तुके संयोगतैं किंचित् सुख होय है सो क्षणभंगुर है। अर देहधारियोंके पापके उदयतैं दुख होय है, सुख दुख दोनों विनश्वर हैं, तातैं हर्ष विषाद न करना। हो प्राणी हो! जीवोंको निरंतर सुखका देनहारा दुःखरूप अंधकारका दूर करणहारा जिनवरभाषित धर्म सोई भया सूर्य ताके प्रताप करि मोहतिमिर हरहु।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महा पद्मपुराण संस्कृत ग्रन्थ, ताकी भाषा वचनिकाविषैं पवनंजय अंजनाका संयोग वर्णन करने वाला सोलहवा पर्व पूर्ण भया ॥ १६ ॥

अथानन्तर कईएक दिनोंविषैं महेन्द्रकी पुत्री जो अंजना ताके गर्भके चिह्न प्रकट भए। कछुइक मुख पांडुवर्ण होयगया। मानों हनुमान गर्भमें आया सो तिनका यश ही प्रकट भया है। मंद चाल चलने लगी जैसा मदोन्मत्त दिग्गज विचरै है। स्तनयुगल अति उन्नतिको प्राप्त भए, श्यामलीभूत है अग्रभाग जिनके। आलस्यतैं वचन मंदमंद निसरैं, भौंहोंका कंप होता भया, इन लक्षणनिकरि ताहि सासू गर्भिणी जानकर पूछती भई। तैंने यह कर्म कौन तैं किया? तब यह हाथ जोड प्रणामकर पतिके आवनेका समस्त वृत्तांत कहती भई। तदि केतुमती सासू क्रोधायमान भई। महा निठुरवाणीरूप पाषाणकर पीडती भई–हे पापिनी! मेरा पुत्र तेरेतैं अति विरक्त, तेरा आकार भी न देख्या चाहै, तेरे शब्दको श्रवण-विषैं धारैं नाहीं, माता पितासों विदा होयकर रणसंग्रामको बाहिर निकस्या। वह धीर कैसै तेरे मंदिर में आवै? हे निर्लज्ज! धिक्कार है तुझ पापिनीको। चन्द्रमाकी किरण समान उज्ज्वल वंशको दूषण लगावनहारी यह दोनों लोकमें निंद्य अशुभक्रिया तैंनें आचरी, अर तेरी यह सखी बसंतमाला याने तोहि ऐसी बुद्धि दीनी। कुलटाके पास वेश्या रहै तब काहेकी कुशल? मुद्रिका अर कड़े दिखाए तौ भी ताने न मानी, अत्यन्त कोप किया। एक क्रूर नामा किंकर बुलाया, वह नमस्कारकर आय ठाढा भया।

तब क्रोधकर केतुमतीने लाल नेत्र कर कहा–हे क्रूर ! सखी सहित याहि गाड़ीमें बैठाय महेंद्र नगरके निकट छोड़ आव । तब क्रूर केतुमतीकी आज्ञातैं सखीसहित अंजनाको गाड़ीमें बैठायकर महेंद्रके नगर की ओर ले चाल्या । कैसी है अंजना सुन्दरी ? अति कांपै है शरीर जाका, महा पवनकर उपड़ी जो बेल तासमान निराश्रय, अति आकुल, कांतिरहित, दुःखरूप अग्निकर जल गया है हृदय जाका, भयं-कर आंसूतैं कछु उत्तर न दिया । सखीकी ओर धरे हैं नेत्र जानें, मनकर अपने अशुभकर्मको बारंबार निंदती, अश्रुधारा नाखती, निश्चल नहीं है चित्तजाका, सो क्रूर इनको लेय चाल्या । सो क्रूरकर्मविषैं अति प्रवीण है । दिवसके अंतमें महेन्द्रनगरके समीप पहुँचायकर नमस्कार कर मधुर वचन कहता भया–हे देवी ! मैं अपनी स्वामिनीकी आज्ञातैं तुमको दुखका कारण कार्य किया, सो क्षमा करहु । ऐसा कहकर सखीसहित सुन्दरीकूं गाडीतैं उतार, विदा होय, गाडी लेय स्वामिनीपै गया । जाय विनती करी–आपकी आज्ञाप्रमाण तिनकूं तहां पहुँचाय आया हूं ।

अथानन्तर महाउत्तम महापतिव्रता जो अंजना सुन्दरी ताहि पतिके योगतैं दुखके भारतैं पीड़ित देख सूर्य भी मानों चिंताकर मंद होगई है प्रभा जाकी, अस्त होयगया । अर रुदनकर अत्यन्त लाल होय गए हैं नेत्र जाके, ऐसी अंजना मानो याके नेत्रकी अरुणताकर पश्चिमदिशा रक्त होयगई । अंधकार फैल गया, रात्रि भई । अंजनाके दुःखतैं निकसी जो आंसूनकी धारा, तेई भए मेघ, तिनकर मानो दशों दिशा श्याम होयगई । अर पंछी कोलाहल शब्द करते भए सो मानों अंजनीके दुखतैं दुखी भए पुकारैं हैं । वह अंजना अपवादरूप महादुःखका जो सागर तामैं डूबी क्षुधादिक दुख भूलगई । अत्यन्त भयभीत अश्रुपात नाखै, रुदनकरै, सो बसंतमाला सखी धीर्य बंधावै । रात्रिको पल्लवका सांथरा बिछाय दिया सो याकों निद्रा रंच भी न आई । निरंतर उष्ण अश्रुपात पड़े सो मानों वाहके भयतैं निद्रा भाज गई । बसंतमाला पांव दाबै, खेद दूर किया दिलासा करी । दुखके योगकर एक रात्रि वर्ष बराबर बीती। प्रभातमें सांथरेको तजकर नाना संकल्प विकल्पनिके सैंकडानि शंका करि अति विह्वल पिताके घर

की ओर चाली। सखी छाया समान संग चाली। पिताके मन्दिरके द्वार जाय पहुँची। भीतर प्रवेश करती द्वारपालने रोकी। दुःखके योगतैं और ही रूप होयगया सो जानी न पड़ी। तब सखीने सब वृत्तांत कह्या। तदि राजाके निकट प्रसन्नकीर्ति बैठा जानकर शिलाकवाट नामा द्वारपालने एक और मनुष्य को द्वारे मेलि आप राजाके निकट जाय नमस्कार करि विनती करी। पुत्रीके आगमनका वृत्तांत कह्या। तब राजाके निकट प्रसन्नकीर्ति नामा पुत्र बैठ्या हुता। सो राजाने पुत्रको आज्ञा करी–तुम सन्मुख जाय उसका शीघ्र ही प्रवेश करावो, अर नगरकी शोभा करावो, तुमतो पहिले जावो, और हमारी असवारी तैयार करावो, हम भी पीछेतैं आवै हैं। तदि द्वारपालने हाथ जोड़ नमस्कारकर यथार्थ विनती करी। तब राजा महेंद्र लज्जाका कारण सुनकर महा कोपवान भए। अर पुत्रको आज्ञा करी कि पापिनीकूं नगरमैं तैं काढ़ देवो, जाकी वार्ता सुनकर मेरे कान मानो वज्रकर हते गए हैं। तब एक महोत्साह नामा बड़ा सामंत राजाका अतिवल्लभ, सो कहता भया–हे नाथ! ऐसी आज्ञा करनी उचित नाहीं, बसंतमालासों सब ठीक पाड़ लेहु, सासू केतुमती अति क्रूर है, अर जिनधर्मतैं पराङ्मुख है, लौकिकसूत्र जो नास्तिकमत ताविषै प्रवीण है। तानै विना विचारया झूठा दोष लगाया। यह धर्मात्मा श्रावकके व्रतकी धरणहारी, कल्याण आचारविषै तत्पर। पापिनी सासूने निकासी है अर तुम भी निकासो तो कौनके शरणै जाय? जैसैं व्याघ्रकी दृष्टितैं मृगी त्रासको प्राप्त भई संती महागहन बनका शरण लेय, तैसैं यह भोली निष्कपट सासूतैं शंकित भई, तुम्हारे शरण आई है। मानो जेठके सूर्यकी किरणके संतापतैं दुखित भई, महावृक्षरूप जो तुम सो तिहारे आश्रय आई है। यह गरीबिनी, विह्वल है आत्मा जाका, अपवादरूप जो आपात ताकर पीड़ित, तिहारे आश्रय भी साता न पावै तो कहां पावै? मानो स्वर्गतैं लक्ष्मी ही आई है। द्वारपालने रोकी सो अत्यन्त लज्जाको प्राप्त भई। विलखि-करि माथा ढांकि द्वारै खड़ी है। आपके स्नेहकर सदा लाडली है, सो तुम दया करो। यह निर्दोष है, मन्दिरमांहि प्रवेश करावो। अर केतुमतीकी क्रूरता पृथ्वीविषै प्रसिद्ध है। ऐसे न्यायरूप वचन महोत्साह

सामंतने कहे, सो राजा कान न धरै । जैसैं कमलोंके पत्रनिविषै जलकी बूंद न ठहरै तैसैं राजाके चित्तमें यह बात न ठहरी । राजा सामंतसों कहते भए—यह सखी बसंतमाला सदा याके पास रहै, अर याही के स्नेहके योगतैं कदाचित् सत्य न कहै तो हमको निश्चय कैसैं आवै ? यातैं याके शीलविषै संदेह है, सो याकों नगरतैं निकास देहु । अब यह बात प्रसिद्ध होयगी तो हमारे निर्मल कुलविषै कलंक आवैगा । जे बड़े कुलकी बालिका निर्मल हैं अर महा विनयवंती उत्तम चेष्टाकी धरणहारी हैं ते पीहर सासुरै सर्वत्र स्तुति करने योग्य हैं । जे पुण्याधिकारी बड़े पुरुष जन्महीतैं निर्मल शील पालै हैं, ब्रह्मचर्यको धारण करै हैं, अर सर्व दोषका मूल जो स्त्री तिनको अंगीकार नाहीं करै हैं ते धन्य हैं । ब्रह्मचर्य समान और कोई व्रत नाहीं, अर स्त्रीके अंगीकारमें यह सफल होय है । जो कुपूत बेटा बेटी होय अर उनके अवगुण पृथ्वीविषै प्रसिद्ध होय तो पिताका धरतीमें गड जाना होय है । सबही कुलको लज्जा उपजै है । मेरा मन आज अति दुःखित होय रह्या है, मैं यह बात पूर्व अनेकबार सुनी हुती जो यह भरतारके अप्रिय है, अर वह याहि आंखतैं नाहीं देखै है, सो ताकरि गर्भकी उत्पत्ति कैसे भई, तातैं यह निश्चयसेती सदोष है । जो कोई याहि मेरे राज्यमें राखेगा सो मेरा शत्रु है । ऐसे वचन कहकर राजाने कोपकर जैसैं कोई जानै नाहीं, या भांति याको द्वारतैं निकाल दीनी । सखीसहित दुख की भरी अंजनी राजाके निजवर्गके जहां जहां आश्रयके अर्थि गई, सो आनै न दीनी, कपाट दिए, जहां बाप ही क्रोधायमान होय निराकरण करै, तहां कुटुम्बकी कैसी आशा, वे तो सब राजाके आधीन हैं । ऐसा निश्चयकर सबतैं उदास होय सखीसों कहती भई । आंसूवोंके समूहकर भीज गया है अंग जाका; हे प्रिये ! यहां सर्व पाषाणचित्त हैं, यहां कैसा वास ? तातैं वनमैं चालैं, अपमानतैं तो मरना भला । ऐसा कहकर सखीसहित वनको चाली, मानो मृगराजतैं भयभीत ही है । शीत, उष्ण अर वातके खेद करि महा दुखकरि पीडित वनमैं बैठि महा रुदन करती भई । हाय हाय ! मैं मंदभागिनी दुखदाई जो पूर्वोपार्जित कर्म ताकरि महाकष्टकों प्राप्त भई । कौनके शरण जाऊं, कौन मेरी रक्षा करै, मैं दुर्भाग्य-

सागरके मध्य कौन कर्मतैं पड़ी ? नाथ मेरा अशुभ कर्मका प्रेरचा कहांतैं आया ? काहेको गर्भ रह्या, मेरा दोनों ही ठौर निरादर भया। माताने भी मेरी रक्षा न करी, सो वह कहा करै ? अपने धनी की आज्ञाकारिणी पतिव्रतानिका यही धर्म है। अर नाथ मेरा यह वचन कह गया हुता कि तेरे गर्भ की वृद्धितैं पहिले ही मैं आऊंगा सो हाय नाथ ! दयावान होय वह वचन क्यों भूले ? अर सासूने विना परखे मेरा त्याग क्यों किया ? जिनके शीलमें संदेह होय तिनके परखनेके अनेक उपाय हैं। अर पिता को मैं बालअवस्था विषै अति लाडिली हुती, निरंतर गोदमें खिलावते हुते सो विना परखे मेरा निरादर किया, तिनको ऐसी बुद्धि क्यों उपजी ? अर मातानैं मुझे गर्भमें धारी, प्रतिपालन किया, अब एक बात भी मुखतैं न निकाली कि इसके गुण दोषका निश्चय कर लेवें। अर भाई जो एक माताके उदरसों उत्पन्न भया हुता, सोहू मो दुःखिनीको न राख सक्या, सब ही कठोरचित्त होय गए। जहां माता पिता भ्राताहीकी यह दशा, तहां काका बाबाके दूर भाई तथा प्रधान सामंत कहा करैं ? अथवा उन सबका कहा दोष ? मेरा जो कर्मरूप वृक्ष फल्या सो अवश्य भोगना। या भांति अंजना विलाप करै, सो सखी भी याके लार विलाप करै। मनतैं धीर्य जाता रह्या, अत्यन्त दीनमन होय यह ऊंचे स्वरतैं रुदन करै। सो मृगी भी याकी दशा देख आंसू डालबे लागी। बहुत देर तक रोनेतैं लाल होय गए हैं नेत्र जाके। तब सखी बसंतमाला महाविचक्षण याहि छातीसूं लगाय कहती भई—हे स्वामिनी ! बहुत रोनेतैं क्या लाभ ? जो कर्म तैंने उपार्ज्या है सो अवश्य भोगना है। सब ही जीवनिके कर्म आगैं पीछै लाग रहे हैं, सो कर्मके उदयविषै शोक कहा ? हे देवी ! जे स्वर्गलोकके देव सैंकड़ों अप्सरावोंके नेत्रनिकर निरंतर अवलोकिए हैं, तेहू सुकृतके अंत होते परम दुःख पावैं हैं। मनमैं चिंतिए कछू और, होय जाय कछु और, जगतके लोक उद्यममें प्रवरतैं हैं तिनको पूर्वोपार्जित कर्मका उदय ही कारण है। जो हितकारी वस्तु आय प्राप्त भई सो अशुभकर्मके उदयतैं विघटिजाय, अर जो वस्तु मनतैं अगोचर है सो आय मिलै। कर्मनिकी गति विचित्र है। तातैं बाई ! तू गर्भके खेदकरि पीडित है, वृथा क्लेश मत कर, तू

अपना मन दृढ कर। जो तैंने पूर्वजन्म में कर्म उपारजे हैं तिनके फल टारे न टरैं, अर तू तो महाबुद्धिमती है तोहि कहा सिखावूं ? जो तू न जानती होय तो मैं कहूं। ऐसा कहकर याके नेत्रनिके अपने वस्त्रतैं आंसू पोंछे, बहुरि कहती भई—हे देवी ! यह स्थानक आश्रय रहित है, तातैं उठो, आगैं चालैं या पहाड के निकट कोई गुफा होय जहां दुष्ट जीवन का प्रवेश न होय। तेरे प्रसूति का समय आया है सो कैएक दिन यत्नसूं रहना। तब यह गर्भके भारतैं जो आकाशके मार्ग चलनेमैं हू असमर्थ है तो भूमिपर सखीके संग गमन करती महा कष्टकरि पांव धरती भई। कैसी है वनी ? अनेक अजगरनितैं भरी, दुष्ट जीवनके नादकरि अत्यंत भयानक, अति सघन नानाप्रकारके वृक्षनिकरि सूर्यकी किरणका भी संचार नाहीं, जहां सूईके अग्रभाग समान डाभकी अणी अतितीक्ष्ण, जहां कंकर बहुत अर माते हाथीनिके समूह अर भीलोंके समूह बहुत हैं। अर वनीका नाम मातंगमालिनी है, जहां मनकी भी गम्यता नाहीं तो मनुष्यनिकी कहा गम्यता ? सखी आकाशमार्गतैं जायवेको समर्थ अर यह गर्भके भारकरि समर्थ नाहीं, तातैं सखी याके प्रेमके बंधनसों बंधी शरीरकी छाया समान लार लार चालै है। अंजनी वनीको अतिभयानक देखकर कांपै है, दिशा भूल गई। तब बसंतमाला याकों अति व्याकुल जानकर हाथ पकड़कर कहती भई— हे स्वामिनी ! तू डरै मत, मेरै पाछैं पाछैं चली आव।

तब यह सखीके कांधेपर हाथ रखकर चली जाय, ज्यों २ डाभकी अणी चुभै त्यों २ खेदखिन्न होय विलाप करती, देहकों कष्टतैं धारती, जलके नीझरने जे अति तीव्र वेग संयुक्त बहैं तिनकों अति कष्टतैं पार उतरती, अपने जे सब स्वजन अति निर्दई तिनका अति चितारकरती, अपने अशुभ कर्मकों बारंबार निंदती, बेलोंको पकड़, भयभीत हिरणीकेसे हैं नेत्र जाके, अंगविषै पसेवको धारती, कांटोंसे वस्त्र लाग २ जांय सो छुडावती, लहूतैं लाल होयगए हैं चरण जाके, शोकरूप अग्निके दाहकरि श्यामताकों धरती, पत्र भी हालै तो त्रासकों प्राप्त होती, चलायमान है शरीर जाका, बारंबार विश्राम लेती, ताहि सखी निरंतर प्रियवाक्य कर धीर्य बंधावै, सो धीरे २ अंजनी पहाडकी तलहटीतक आई, तहां आंसू भर

बैठ गई। सखीसों कहती भई—अब मुझमें एक पग धरनेकी हू शक्ति नाहीं, यहां ही रहूंगी, मरण होय तो होय। तब सखी अत्यन्त प्रेमकी भरी महा प्रवीण मनोहर वचननिकरि याको शांति उपजाय

नमस्कार कर कहती भई—हे देवी! देख, यह गुफा नजदीक ही है, कृपाकर इहांतैं उठकर तहां सुखसों तिष्ठो। यहां क्रूर जीव विचरै हैं, तोकों गर्भकी रक्षा करनी है, तातैं हठ मति कर। ऐसा कह्या तब वह आतापकी भरी सखीके वचननिकरि अर सघनथनके भारकरि चलवेको उठी। तब सखी हस्तावलंबन देयकर याकों विषम भूमितैं निकासकर गुफाके द्वारपर लेयगई। बिना विचारे गुफामें बैठनेका भय होय। सो ये दोनों बाहिर खड़ी विषम पाषाणके उलंघवेकर उपज्या है खेद जिनकों, तातैं बैठ गई। तहां दृष्टि धर देख्या। कैसी है दृष्टि? श्याम श्वेत आरक्त कमल समान प्रभावकों धरैं। सो एक पवित्र शिलापर विराजे चारणमुनि देखे। जो पल्यंकासन धरैं, अनेक ऋद्धि संयुक्त, निश्चल हैं श्वासोच्छ्वास जिनके, नासिकाके अग्र भागपर धरी है दृष्टि जिनने, शरीर स्तंभ समान निश्चल है, गोदपर धरचा है जो बामा हाथ ताके ऊपर दाहना हाथ, समुद्र समान गंभीर, अनेक उपमासहित विराजमान, आत्मस्वरूपका जो यथार्थ स्वभाव जैसा जिनशासनविषैं गाया है तैसा ध्यान करते, समस्त परिग्रहरहित, पवन जैसैं असंगी, आकाश जैसैं निर्मल, मानों पहाड़के शिखर ही हैं। सो इन दोनोंने देखे। कैसे हैं वे साधु? महापराक्रमके धारी महाशांति ज्योतिरूप है शरीर जिनका। ये दोनो मुनिके समीप गईं। सर्व दुःख विस्मरण भया। तीन प्रदक्षिणा देय हाथ जोडि नमस्कार किया, मुनि परम बांधव पाए, फूल गए हैं नेत्र जिनके। जा समय जो प्राप्ति होनी होय सो होय। तदि ये दोनों
हाथ जोड विनीत करती भईं। मुनिके चरणारविंदकी ओर धरै हैं अश्रुपातरहित स्थिर नेत्र जिनने। हे भगवान्! हे कल्याणरूप! हे उत्तम चेष्टाके धरणहारे! तिहारे शरीरमें कुशल है? कैसा है तिहारा देह? सर्व तपव्रत आदि साधननिका मूल कारण है। हे गुणके सागर! ऊपरां ऊपर तपकी है वृद्धि जिनकी, हे महाक्षमावान, शांतिभावके धारी, मनइन्द्रियोंके जीतनहारे! तिहारा जो विहार है सो जीवनके

कल्याणनिमित्त है। तुम सारिखे पुरुष सकल पुरुषनिकों कुशलके कारण हैं, सो तिहारा कुशल कहा पूछना। परन्तु यह पूछनेका आचार है, तातैं पूछी है। ऐसा कहि विनयतैं नम्रीभूत भया है जिनका, सो चुप होय रही अर मुनिके दर्शनतैं सर्व भय रहित भई।

अथानन्तर मुनि अमृततुल्य परमशांतिके वचन कहते भये—हे कल्याणरूपिणी! हे पुत्री! हमारे कर्मानुसार सब कुशल है। ये सर्व ही जीव अपने अपने कर्मोंका फल भोगवैं हैं। देखो कर्मनिकी विचित्रता यह राजा महेंद्रकी पुत्री अपराधरहित कुटुम्बके लोगनिने काढी है। सो मुनि बड़े ज्ञानी, बिना कहे सब वृत्तांत के जाननहारे, तिनको नमस्कारकर बसंतमाला पूछती भई—हे नाथ! कौन कारणतैं भरतार यासों बहुत दिन उदास रहे? बहुरि कौन कारण अनुरागी भए? अर यह महासुखयोग्य वनविषै कौन कारणतैं दुखको प्राप्त भई? कौन मंदभागी याके गर्भमें आया जाकरि याको जीवनेका संशय भया? तदि स्वामी अमितिगति तीन ज्ञानके धारक सर्व वृत्तांत यथार्थ कहते भए। यही महापुरुषोंकी वृत्ति है जो पराया उपकार करैं। बसंतमालासों कहैं हैं—हे पुत्री! याके गर्भविषै उत्तम बालक आया है, सो प्रथम तो ताके भव सुनि, बहुरि जा कारणतैं यह अंजनी ऐसे दुखको प्राप्त भई जो पूर्व भवमें पापका आचरण किया सो सुन।

जम्बूद्वीपमें भरत नामा क्षेत्र, तहां प्रियनन्दी नामा गृहस्थ, ताके जाया नामा स्त्री, अर दमयंत नामा पुत्र हुता, सो महा सौभाग्य संयुक्त कल्याणरूप जे दया क्षमा शील संतोषादि गुण तेई हैं आभूषण जाके। एक समय वसंतऋतुमें नन्दनवन तुल्य जो वन तहां नगरके लोग क्रीडाको गए। दमयंतने भी अपने मित्रों सहित बहुत क्रीड़ा करी, अबीरादि सुगन्धनिकरि सुगंधित है शरीर जाका, अर कुंडलादि आभूषणनिकरि शोभायमान सो तानैं ताही समयविषै महामुनि देखे। कैसे हैं मुनि? अम्बर कहिए आकाश सो ही है अम्बर कहिए वस्त्र जिनके, तप ही है धन जिनका, अर ध्यान स्वाध्याय आदि जे क्रिया तिनविषै उद्यमी। सो यह दमयंत महा देदीप्यमान क्रीडा करते जे अपने मित्र तिनको छोड़

मुनियोंकी मंडलीमें गया। बंदना कर धर्मका व्याख्यान सुन सम्यक्दर्शन संयुक्तभया, श्रावक व्रत धारे। नाना प्रकारके नियम अंगीकार किये। एकदिन जे सप्त गुण दाताके अर नवधा भक्ति तिनकरि संयुक्त होय साधुनिकों आहार दान दिया। कईएक दिनविषै समाधिमरणकर स्वर्गलोकको प्राप्त भया, नियमके अर दानके प्रभावतैं अद्भुत भोग भोगता भया। सैकड़ों देवांगनानिके नेत्रनिकी कांति ही भई नीलकमल, तिनकी मालाकरि अर्चित चिरकाल स्वर्गके सुख भोगे। बहुरि स्वर्गतैं चयकरि जंबूद्वीप में मृगांकनामा नगरमें हरिचन्द्र नामा राजा, ताकी प्रियंगुलक्ष्मी राणी, ताकै सिंहचन्द्र नामा पुत्र भया। अनेक कला गुणनिविषै प्रवीण, अनेक विवेकियोंके हृदयमें बसै। तहां भी देवोंके से भोग किए, साधुओंकी सेवा करी। बहुरि समाधिमरण कर देवलोक गया। तहां मनवांछित अति उत्कृष्ट सुख पाए। कैसा है वह ? देव देवियोंके जे वदन, तेई भए कमल, तिनके जो वन तिनके प्रफुल्लित करनेको सूर्य समान है। बहुरि तहांतैं चयकरि या भरतक्षेत्रविषै विजयार्ध गिरिपर अहनपुर नगरमें राजा सुकंठ रानी कनकोदरी ताकै सिंहवाहन नामा पुत्र भया। अपने गुणनिकरि खैंचा है समस्त प्राणियोंका मन जानैं। तहां देवोंकेसे भोग भोगे। अप्सरा समान स्त्री तिनके मनके चोर। भावार्थ—अतिरूपवान अति गुणवान सो बहुत दिन राज्य किया। श्रीविमलनाथजी के समोसरणमैं उपज्या है आत्मज्ञान अर संसारतैं वैराग्य जिनको, सो लक्ष्मीवाहन नामा पुत्रको राज्य देय, संसारको असार जानि, लक्ष्मी-तिलक मुनिके शिष्य भए। श्रीवीतराग देवका भाख्या महाव्रतरूप यतिका धर्म अंगीकार किया। अनित्यादि द्वादश अनुप्रेक्षाका चिंतवनकरि ज्ञानचेतनारूप भए। जो तप काहू पुरुषतैं न बनै सो तप किया। रत्नत्रयरूप अपने निजभावनिविषै निश्चल भए। तत्वज्ञानरूप आत्माके अनुभव विषै मग्न भए। तपके प्रभावतैं अनेक ऋद्धि उपजी। सर्व बात समर्थ, जिनके शरीरको स्पर्शकरि पवन आवै सो प्राणियोंके अनेक रोग दुःख हरै, परन्तु आप कर्म निर्जराके कारण बाईस परीषह सहते भए। बहुरि आयुपूर्णकर धर्मध्यानके प्रसादतैं ज्योतिषचक्रको उलंघकर सातवां लांतव नामा जो स्वर्ग तहां

बड़ी ऋद्धिके धारी देव भए। चाहें जैसा रूप करें, चाहें जहां जाय, जो वचनकरि कहनेमें न आवै। ऐसे अद्भुत सुख भोगे परन्तु स्वर्गके सुखविषै मग्न न भए। परमधामकी है इच्छा जिनको, तहांतैं

चयकरि या अंजनाकी कुक्षिविषै आए हैं, सो महा परमसुखके भाजन हैं। बहुरि देह न धारेंगे, अविनाशी सुखको प्राप्त होवेंगे, चरम शरीरी हैं। यह तो पुत्रके गर्भमें आवनेका वृत्तांत कह्या। अब हे कल्याणचेष्टिनी! यानै जिसकारणतैं पतिका विरह अर कुटुम्बतैं निरादर पाया सो वृत्तांत सुनो।

इस अंजनीसुन्दरीने पूर्वभवमें देवाधिदेव श्रीजिनेंद्रदेवकी प्रतिमा पटराणी पदके अभिमानकरि सौकन (सौत) के ऊपर क्रोधकर मंदिरतैं बाहिर निकासी। ताही समय एक श्रीआर्यिका याके घर आहारको आई हुती, तपकर पृथ्वीपर प्रसिद्ध हुती, सो याके द्वारा श्रीजीकी मूर्तिका अविनय देख पारणा न किया। पीछे चाली, अर याको अज्ञानरूप जान महा दयावती होय उपदेश देती भई। जे साधुजन हैं ते सबका भला ही चाहे हैं। जीवनिके समझावनेके निमित्त बिना पूछे ही साधुजन श्रीगुरुकी आज्ञातैं धर्मोपदेश देनेको प्रवरतै हैं। ऐसा जानकर वह संयमश्री शील-संयमरूप आभूषणकी धरनहारी पटराणीको महामाधुर्य अनुपम वचन कहती भई–हे भोरी! सुन, तू राजाकी पटराणी है, अर महारूपवती है, राजाका बहुत सन्मान है, भोगनिका स्थानक है शरीर तेरा, सो पूर्वोपार्जित पुण्यका फल है। या चतुर्गतिविषै जीव भ्रमैं हैं, महादुःख भोगैं हैं। कबहूक अनंतकालविषै पुण्यके योगतैं मनुष्य देह पावै हैं। हे शोभने! मनुष्यदेह काहू पुण्यके योगतैं पाई है, तातैं यह निंद्य आचार तू मत कर, योग्य क्रिया करनेके योग्य है। यह मनुष्यदेह पाय जो सुकृत न करै है सो हाथमें आया रत्न खोवै है। मन तथा वचन तथा कायसे जो शुभ क्रियाका साधन है, सोई श्रेष्ठ है, अर अशुभ क्रियाका साधन है सो दुःखका मूल है। जे अपने कल्याणके अर्थि सुकृतविषै प्रवरतै हैं, तेई उत्तम हैं। यह लोक महानिंद्य अनाचारका भरचा है। जे संत संसारसागरतैं आप तिरै हैं औरनिको तारै हैं, भव्यजीवोंको धर्मका उपदेश देय हैं तिन समान और उत्तम नाहीं, ते कृतार्थ हैं। तिन मुनिके नाथ, सर्व जगतके नाथ धर्मचक्री

श्रीअरहंत देव तिनके प्रतिबिंबका जे अविनय करै हैं ते अज्ञानी अनेक भवविषै कुगतिके महादुख पावै हैं। सो वे दुःख कौन वर्णन कर सके ? यद्यपि श्रीवीतरागदेव रागद्वेषरहित हैं, जे सेवा करैं तिनतैं प्रसन्न नाहीं, अर जे निंदा करैं तिनतैं द्वेष नाहीं, महामध्यम भावको धारै हैं। परन्तु जे जीव सेवा करैं ते स्वर्ग-मोक्ष पावै हैं। जे निंदा करैं ते नरक निगोद पावैं। काहेतैं ? जीवोंके शुभ अशुभ परणामनितैं सुखदुःख की उत्पत्ति होय है। जैसैं अग्निके सेवनतैं शीतका निवारण होय है अर खानपानतैं क्षुधा तृषाकी पीड़ा मिटै हैं, तैसैं जिनराजके अर्चनतैं स्वयमेव ही सुख होय है अर अविनयतैं परमदुख होय है। अर हे शोभने ! जे संसारविषै दुख दीखै हैं ते सर्व पापके फल हैं। अर जे सुख हैं ते धर्मके फल हैं। सो तू पूर्वपुण्यके प्रभावतैं महाराजकी पटराणी भई, अर महासंपत्तिवती भई, अर अद्भुत कार्यका करण-हारा तेरा पुत्र है। अब तू ऐसा कर जो सुख पावै। अपना कल्याणकर मेरे वचनतैं। हे भव्ये ! सूर्यके अर नेत्रके होतेसंते तू कूपमें मत पड़े। जो ऐसे कर्म करेगी तो घोर नरकमें पड़ेगी। देवगुरुशास्त्रका अविनय करना अनंत दुःखका कारण है। अर ऐसे दोष देखे जो मैं तोहि न संबोधू तो मोहि प्रमाद का दोष लागै है। तातैं तेरे कल्याण निमित्त धर्मोपदेश दिया है। जब श्रीआर्यिकाजीने ऐसा कह्या तदि यह नरकतैं डरी। सम्यग्दर्शन धारण किया, श्राविकाके व्रत आदरे, श्रीजीकी प्रतिमा मंदिरविषै पधराई, बहुत विधानतैं अष्टप्रकारकी पूजा कराई। या भांति राणी कनकोदरीकों आर्यिका धर्मका उपदेश देय अपने स्थानककों गई। अर वह कनकोदरी श्रीसर्वज्ञदेवका धर्म आराधकर समाधिमरण कर स्वर्गलोकमें गई। तहां महासुख भोगे, अर स्वर्गतैं चयकर राजा महेन्द्रकी राणी जो मनोवेगा ताके अंजनासुन्दरी नामा तू पुत्री भई। सो पुण्यके प्रभावतैं राजकुलविषै उपजी, उत्तम वर पाया, अर जो जिनेन्द्रदेवकी प्रतिमाकों एकक्षण मंदिरके बाहिर राखी ताके पापकरि धनीका वियोग अर कुटुम्बतैं पराभव पाया। विवाहके तीनदिन पहिले पवनंजय प्रछन्नरूप आए रात्रिमें तिहारे झरोखे-विषै प्रहस्तमित्रके सहित बैठे हुते। सो तासमय मिश्रकेशी सखीने विद्युत्प्रभकी स्तुति करी, अर पवनंजय

की निंदा करी। ताकारण पवनंजय द्वेषकों प्राप्त भए। बहुरि युद्धके अर्थ घरतैं चालै, मानसरोवर पर डेरा किया, तहां चकवीका विरह देखकर करुणा उपजी। सो करुणा ही मानो सखीका रूप होय कुमारकों सुन्दरीके समीप लाई। तब ताकरि गर्भ रह्या। बहुरि कुमार प्रछन्न ही पिताकी आज्ञाके साधिवेके अर्थि रावणके निकट गए। ऐसा कहकर फिर मुनि अंजना सों कहते भए, महा करुणाभाव कर अमृतरूप वचन गिरते भए—हे बालिके! तू कर्मके उदयकरि ऐसे दुःखकों प्राप्त भई तातैं बहुरि ऐसा निंद्यकर्म मत करना। संसारसमुद्रके तारणहारे जे जिनेन्द्रदेव तिनकी भक्ति कर। या पृथ्वीविषै जो सुख हैं ते सर्व जिन भक्तिके प्रतापतै होय हैं। ऐसे अपने भव सुनकर अंजना विस्मयको प्राप्त भई। अर अपने किए जे कर्म तिनको निंद्यती अति पश्चाताप करती भई। तब मुनिने कही—हे पुत्री! अब तू अपनी शक्तिप्रमाण नियम लेहु, अर जिनधर्मका सेवन कर, यति व्रतियोंकी उपासना कर। तैंनें ऐसे कर्म किए थे जो अधोगतिको जाती, परन्तु संयमश्री आर्याने कृपाकर धर्मका उपदेश दिया, सो हस्तावलंबन देय कुगतिके पतनतैं बचाई। अर यह बालक तेरे गर्भविषै आया है सो महा कल्याणका भाजन है। या पुत्र के प्रभावतैं तू परमसुख पावेगी। तेरा पुत्र अखंडवीर्य है, देवनिहूकरि जीत्या न जाय। अर अब थोड़े ही दिनमें तेरा तेरे भरतारतैं मिलाप होयगा। तातैं हे भव्ये! तू अपने चित्तमें खेद मत करै, प्रमादरहित जो शुभ क्रिया तामें उद्यमी होहु। ये मुनिके वचन सुन अंजनी अर बसंतमाला बहुत प्रसन्न भईं, अर बारंबार मुनिको नमस्कार किया, फूल गए हैं नेत्रकमल जिनके। मुनिराजने इनको धर्मोप-देश देय आकाशमार्गतैं विहार किया। सो निर्मल हैं चित्त जिनका ऐसे संयमिनको यही उचित है कि जो निर्जन स्थानक होय तहाँ निवास करैं, सो भी अल्प ही रहैं। या प्रकार निजभव सुन अंजना पाप कर्मतैं अति डरी, अर धर्मविषै सावधान भई। वह गुफा मुनिके विराजवेतैं पवित्र भई हुती सो तहाँ अंजनी बसंतमालासहित पुत्रका प्रसूति समय देखकर रही।

गौतम स्वामी राजा श्रेणिकतैं कहै हैं—हे श्रेणिक! अब वह महेन्द्रकी पुत्री गुफामें रहै। बसंतमाला

विद्याबलकरि पूर्ण, विद्याके प्रभावकरि खानपान आदि याके मनवांछित सर्व सामग्री करै। अथानंतर अंजना पतिव्रता पिया रहित वनविषैं अकेली, सो मानो सूर्य याका दुख देख न सक्या सो अस्त होने लग्या। मानो याके दुखतैं सूर्यहूकी किरण मंद होयगई, सूर्य अस्त होय गया, अर पहाड़के शिखर अर
५८ वृक्षनिके अग्रभागमें जो किरणोंका उद्योत रह्या था सो भी संकोच लिया।

२७५ अथानन्तर संध्याकर क्षणएक आकाशमंडल लाल होय गया, सो मानो अब क्रोधका भर्‌या सिंह आवैगा, ताके लाल नेत्रनिकी ललाई फैली है। बहुरि होनहार जो उपसर्ग ताकी प्रेरी शीघ्र ही अंधकारका स्वरूप रात्रि प्रकट भई, मानों राक्षसिनी ही रसातलतैं नीसरी है। पक्षी संध्या समय चिगचगाटकर गहन वन में शब्दरहित वृक्षनिके अग्रभागपर तिष्ठे, मानो रात्रिको श्यामरूप डरावनी देख भयंकर चुप होय रहे। शिवा कहिए स्यालिनी तिनके भयानक शब्द प्रवरतैं सो मानों होनहार उपसर्गके ढोल ही बाजै हैं।

अथानन्तर गुफाके मुख सिंह आया, कैसा है सिंह ? विदारे हैं हाथियोंके जे कुंभस्थल, तिनके रुधिर कर लाल होय रहे हैं केश जाके, अर काल समान क्रूर भृकुटीको धरैं, अर महा विषम शब्द करता, जिसके शब्दकरि बन गूंजि रह्या है, अर प्रलयकालकी अग्निकी ज्वाला समान जीभको मुखरूप गुफातैं काढ़ता, कैसी है जीभ ? महाकुटिल है, अनेक प्राणियोंकी नाश करनहारी, बहुरि जीवनिकैं खैंचनेको जाकी अंकुश समान श्याम जीभ, तीक्ष्ण दाढ, महा कुटिल है रौद्र सबनिको भयंकर है, अर जाके नेत्र अतित्रासके कारण ऊगता जो प्रलयकालका सूर्य ता समान तेजको धरैं, दिशाओंके समूहको रंग रूप २७५
कर वह सिंह पूंछकी अणीको मस्तक ऊपर धरे, नखकी अणीतैं विदारी है धरती जानै, पहाड़के तट समान उरस्थल, अर प्रबल है जांघ जाकी, मानों वह सिंह मृत्युका स्वरूप दैत्य समान, अनेक प्राणियोंका क्षय करणहारा, अंतकको भी अंतक समान, अग्नितैं भी अधिक प्रज्वलित, ऐसे डरावने सिंहको देखकर वनके सब जीव डरे। ताके नादकर सब गुफा गाज उठी, सो मानों भयकरि पहाड़ रोवने

लाग्या । अर याका निठुर शब्द वनके सब जीवोंके कानिनिको ऐसा बुरा लाग्या मानों भयानक मुद्गरका घात ही है । जाके चिरमी समान लाल नेत्र । सो ताके भयकरि हिरण चित्राम कैसे होय रहे, अर मदोन्मत्त गजनिका मद जाता रह्या । सब ही पशुगण अपने अपने ताईं बचावनेके लिए भयंकर कम्पायमान वृक्षोंके आसरे होय रहे । नाहरकी ध्वनि सुन अंजनाने ऐसी प्रतिज्ञा करी जो उपसर्गतैं मेरा शरीर जाय तो मेरे अनशनव्रत है, उपसर्ग टरे भोजन लेना । अर सखी बसंतमाला खड्ग है हाथमें जाके, कबहू तो आकाशविषै जाय, कबहू भूमिपर आवै, अतिव्याकुल भई पक्षीनिकी नाईं भ्रमै । ये दोनों महा भयवान, कम्पायमान है हृदय जिनका । तब गुफाका निवासी जो मणिचूल नामा गन्धर्वदेव, ताकी रत्नचूल नामा स्त्री महादयावंती कहती भई—हे देव ! देखो ये दोनों स्त्री सिंहतैं महाभयभीत हैं, अर अति विह्वल हैं, तुम इनकी रक्षा करो । तब गंधर्वदेवको दया उपजी, तत्काल विक्रियाकरि अष्टापदका स्वरूप रच्या । सो सिंहका अर अष्टापदका महा भयंकर शब्द होता भया । सो अंजनी हृदयमें भगवानका ध्यान धरती भई, अर बसंतमाला सारसकी नाईं विलाप करै, हाय अंजना ! पहिले तो तू धनीके अप्रिय दुर्भागिनी भई, बहुरि काहूइक प्रकार धनीका आगमन भया तो तातैं तोको गर्भ रह्या, सो सासने बिना समझे घरतैं निकासी, बहुरि माता पितानेहू न राखी, सो महा भयानक वनविषै आई । तहां पुण्यके योगतैं मुनिका दर्शन भया, मुनिने धीर्य बंधाय पूर्वभव कहे, धर्मोपदेश देय आकाशके मार्ग गए, अर तू प्रसूतिकेअर्थि गुफाविषै रही सो अब या सिंहके मुखमें प्रवेश करेगी । हाय ! हाय ! राजपुत्री निर्जनवनविषै मरणको प्राप्त होय है, अब या वनके देवता दयाकर रक्षा करो । मुनिने कही हुती कि तेरा सकल दुःख गया, सो कहा मुनिहूके वचन अन्यथा होय हैं ? या भांति विलाप करती बसंतमाला हिंडोल झूलनेकी नाईं एक स्थल न रहै, क्षणविषै सुन्दरीके समीप आवै क्षणविषै बाहिर जावै ।

अथानन्तर वह गुफाका गंधर्वदेव जो अष्टापदका स्वरूप धरि आया हुता, ताने सिंहके पंजोंको

बीनी। तब सिंह भाग्या, अर अष्टापद सिंहको भजाय कर निजस्थानको गया। यह स्वप्नसमान
सिंह और अष्टापदके युद्धका चरित्र देख बसंतमाला गुफामें अंजनी सुन्दरीके समीप आई, पल्लवों से
भी अति कोमल जो हाथ तिनकरि विश्वासती भई। मानों नवा जन्म पाया। हितका संभाषण करती
भई। सो एक वर्ष बराबर जाय है रात्रि जिनको ऐसी यह दोनों कभी तो कुटुम्बके निर्दईपनेकी कथा
करैं, कभी धर्मकथा करैं। अष्टापदने सिंहको ऐसे भगाया जैसैं हाथीको सिंह भगावै अर सर्पको गरुड
भगावै। बहुरि वह गंधर्वदेव बहुत आनंदरूप होय गावने लग्या सो ऐसा गावता भया, जो देवोंके भी
मनको मोहै तो मनुष्योंकी कहा बात? अर्धरात्रिके समय शब्दरहित होयगए तब यह गावता भया, अर
बारंबार वीणको अति रागतैं बजावता भया, और भी तारबाजे बजावत भया, अर मंजीरादिक बजावता
भया, मृदंगादिक बजावता भया, बांसुरी आदिक फूंकके बाजे बजावता भया। अर सप्तस्वरोंमें गाया
तिनके नाम निषाद १, ऋषभ २, गांधार ३, षड्ज ४, मध्यम ५, धैवत ६, पंचम ७। इन सप्तस्वरों
के तीन ग्राम शीघ्र मध्य विलंबित, अर इक्कीस मूर्छना हैं, सो गंधर्वोंमें जे बड़े देव हैं तिनके समान
गान किया। या गानविद्यामें गंधर्वदेव प्रसिद्ध हैं। उंचास स्थानक रागके हैं सो सब ही गंधर्वदेव जानैं
हैं। भगवान श्रीजिनेन्द्रदेवके गुण सुन्दर अक्षरोंमें गाए। मैं श्रीअरिहंत देवको भक्ति कर बंदूं हूं।
कैसे हैं भगवान? देव अर दैत्योंकर पूजनीक हैं। देव कहिये स्वर्गवासी, दैत्य कहिए ज्योतिषी विंतर
अर भवनवासी, ये चतुरनिकायके देव हैं, सो भगवान सब देवोंके देव हैं, जिनको सुरनाय विद्याधर अष्ट
द्रव्यतैं पूजैं हैं। बहुरि कैसे हैं? तीन भुवनमें अति प्रवीन हैं, अर पवित्र हैं अतिशय जिनके, ऐसे जे श्री
मुनिसुव्रतनाथ तिनके चरणयुगलमें भक्ति पूर्वक नमस्कार करूं हूं, जिनके चरणारविंदके नखनिकी
कांति इन्द्रके मुकुटकी रत्नोंकी ज्योतिको प्रकाश करै है। ऐसैं गान गंधर्वदेवने गाए। सो बसंतमाला
अतिप्रसन्न भई। ऐसे राग कभी सुने नाहीं थे, सो विस्मयकर व्याप्त भया है मन जाका, वा गीतकी
अतिप्रशंसा करती भई। धन्य यह गीत काहूने अतिमनोहर गाए, मेरा हृदय अमृतकर आच्छादित

किया। अंजनी को बसंतमाला कहती भई—यह कोई दयावान देव है जानै अष्टापदका रूपधरि सिंहको भगाया, अर हमारी रक्षा करी, अर यह मनोहर राग याहीनै अपने आनन्दके अर्थि गाए हैं। हे देवी! हे शोभने, हे शीलवंती! तेरी दया सब ही करैं। जे भव्य जीव हैं तिनके महाभयंकर वनमें देव मित्र होय हैं। या उपसर्गके विनाशतैं निश्चय तेरा पतिसों मिलाप होयगा, अर तेरे पुत्र अद्भुत पराक्रमी होयगा। मुनिके वचन अन्यथा न होय, सो मुनिके ध्यानकर जो पवित्र गुफा ताविषै श्रीमुनिसुब्रतनाथ की प्रतिमा पधराय दोनों सुगंध द्रव्यनितैं पूजा करती भईं। दोनोंके चित्तविषै यह विचार कि प्रसूति सुखतैं होय। बसंतमाला नानाभांति अंजनीके चित्तको प्रसन्न करै हैं, अर कहती भई कि हे देवी! मानों यह वन अर गिरि तिहारे पधारनेतैं परम हर्षको प्राप्त भया है, सो नीझरनेके प्रवाहकर यह पर्वत मानों हंसै ही है। अर यह वनके वृक्ष फलोंके भारतैं नम्रीभूत लहलहाट करै हैं। कोमल हैं पल्लव जिनके, बिखर रहे हैं फूल जिनके, सो मानों हर्षको प्राप्त भए हैं। अर जे मयूर सूवा मैना कोकिला-दिक मिष्ट शब्द कर रहे हैं सो मानों वन पहाड़तैं वचनालाप करै हैं। पर्वत नानाप्रकारकी जे धातु तिनकी है खान जहाँ, अर सघनवृक्षोंके जे समूह सो इस पर्वतरूप राजाके सुन्दर वस्त्र हैं, अर यहाँ नानाप्रकारके रत्न हैं सोई या गिरिके आभूषण भए। अर या पर्वतमें भली-भली गुफा हैं अर यहाँ अनेक जातिके सुगंध पुष्प हैं, अर या पर्वत ऊपर बड़े बड़े सरोवर हैं तिनमें सुगंध कमल फूल रहे हैं। तेरा मुख महासुन्दर अनुपम सो चन्द्रमाकी और कमलकी उपमाको जीतै है। हे कल्याणरूपिणी! चिंताके वश मति होहु, धीर्य धर, या वनमें सर्व कल्याण होयगा, देव सेवा करेंगे। पुण्याधिकारिनी तेरा शरीर निष्पाप है; हर्षतैं पक्षी शब्द करै हैं सो मानों तेरी प्रशंसा ही करे हैं। यह वृक्ष शीतल मंद सुगंधके प्रेरे पत्रोंके लहलहाटतैं मानों तेरे विराजवे करि महाहर्षको प्राप्त भए नृत्य ही करै हैं। अब प्रभातका समय भया है, पहले तो आरक्त संध्या भई सो मानों सूर्यने तेरी सेवा निमित्त सखी पठाई। अर अब सूर्य भी तेरा दर्शन करनेके अर्थि मानों उदय होनेको उद्यमी भया है। यह प्रसन्न करनेकी

बात बसंतमालानैं जब कही तब अंजनी सुन्दरी कहती भई—हे सखी ! तोहि होते संते मेरे निकट सर्व कुटुम्ब है, अर यह वन ही तेरे प्रसादतैं नगर है। जो या प्राणीको आपदामैं सहाय करै है सो ही परम बांधव है। अर जो बांधव दुःखदाता है सो ही परम शत्रु है। या भांति परस्पर मिष्ट संभाषण करती ये दोनों गुफामैं रहैं, श्रीमुनिसुव्रतनाथकी प्रतिमाका सेवन पूजन करैं। विद्याके प्रभावतैं बसंत-माला खान पान आदि बड़ी विधिसेती सब सामग्री करै। वह गंधर्वदेव सब प्रकार इनकी दुष्ट जीवनितैं रक्षा करै, अर निरंतर भक्तितैं भगवानके अनेक गुण नानाप्रकारके राग रचनाकरि गावै।

अथानन्तर अंजनीके प्रसूतिका समय आया तब बसंतमाला से कहती भई—हे सखी ! आज मेरे कछु व्याकुलता है। तब बसंतमाला बोली—हे शोभने ! तेरे प्रसूतिका समय है, तू आनन्दको प्राप्त होहु। तब याके लिए कोमल पल्लवोंकी सेज रची। तापर याके पुत्रका जन्म भया। जैसैं पूर्व दिशा सूर्यको प्रकट करै तैसैं यह हनुमानको प्रकट करती भई। पुत्रके जन्मतैं गुफाका अंधकार जाता रह्या, प्रकाशरूप होय गई। मानो सुवर्णमई ही भई। तदि अंजनी पुत्रको उरसौं लगाय दीनताके वचन कहती भई कि—हे पुत्र ! तू गहन वनविषै उत्पन्न भया, तेरे जन्मका उत्सव कैसे करूं ? जो तेरा दादेके तथा नानाके घर जन्म होता तो जन्मका बड़ा उत्सव होता। तेरा मुखरूपचन्द्रमाके देखवेतैं कौनको आनंद न होय, मैं कहा करूं ? मंदभागिनी सर्व वस्तु रहित हूं। दैव कहिए पूर्वोपार्जित कर्मने मोहि दुःख-दायिनी दशाको प्राप्त करी, जो मैं कछु करनेको समर्थ नाहीं हूं, परन्तु प्राणीनिको सर्व वस्तुतैं दीर्घायु होना दुर्लभ है। सो हे पुत्र ! तू चिरंजीव हो, तू है तो मेरे सर्व है। यह प्राणोंको हरणहारा महा गहन वन है, यामैं जो मैं जीवूं हूं सो तो तेरे ही पुण्यके प्रभावतैं। ऐसे दीनताके वचन अंजनी के मुखतैं सुनकरि बसंतमाला कहती भई कि—हे देवी ! तू कल्याणपूर्ण है ऐसा पुत्र पाया। यह सुन्दर लक्षण शुभरूप दीखै है, बड़ी ऋद्धिका धारी होयगा। तेरे पुत्रके उत्सवतैं मानों यह बेलरूप वनिता नृत्य करै हैं, चलायमान हैं, कोमल पल्लव जिनके, अर जो भ्रमर गुंजार करै हैं सो मानों संगीत करै

है। यह बालक पूर्ण तेज है, सो याके प्रभावकरि तेरे सकल कल्याण होयंगे। तू वृथा चिंतावती मत हो। या भांति इन दोऊनिके वचनालाप होते भए।

अथानन्तर बसंतमालाने आकाशमें सूर्यके तेज समान प्रकाशरूप एक ऊंचा विमान देख्या, सो देख कर स्वामिनीसों कह्या। तब वह शंका कर विलाप करती भई, यह कोई निःकारण वैरी पुत्रको ले जायगा अथवा मेरा कोई भाई है। तिनके विलाप सुन विद्याधरने विमान थांभ्या, दया संयुक्त आकाशतें उतरया, गुफाके द्वार पर विमानको थांभि महा नीतिवान, महा विनयवान शंकाको धरता हुवा स्त्री सहित भीतर प्रवेश किया। तब बसंतमालाने देखकरि आदर किया। यह शुद्ध मन विनयतें बैठ्या, और क्षणएक बैठ करि महामिष्ट अर गंभीरवाणी कहकर बसंतमालाको पूछता भया। ऐसें गम्भीर वचन कहता भया मानो मयूरनिकों हर्षित करता मेघ ही गरज्या है। सुमर्यादा कहिए मर्यादाकी धरणहारी यह बाई कौनकी बेटी, कौनके परणी, कौन कारणतें महावनमें रहे है। यह बड़े घरकी पुत्री है, कौन कारणतें सब कुटुम्बतें रहित भई है? अथवा या लोकविषै रागद्वेष रहित जे उत्तम जीव हैं तिनके पूर्व कर्मोंके प्रेरे निःकारण बैरी होय हैं। तदि बसंतमाला दुःखके भारकरि रुकगया है कंठ जाका, आंसू डारती, नीची है दृष्टि जाकी, कष्टकर वचन कहती भई:—महानुभाव! तिहारे वचनहीतैं तिहारे मनकी शुद्धता जानी जाय है। जैसे रोग और मृत्युका मूल जो विषवृक्ष ताकी छायाहू सुन्दर न होय, अर जैसे दाहके नाशका मूल जो चन्दनका वृक्ष ताकी छाया भी सुन्दर लागै है, सो तुम सारिखे जे गुणवान पुरुष हैं सो शुद्धभाव प्रकट करनेके स्थानक हैं। आप बड़े ही दयालु हो। यदि तिहारे याके दुःख सुनवेकी इच्छा है तो सुनहु, मैं कहू हूं। तुम सारिखे बड़े पुरुषनिकों कह्या संता दुःख निवृत्त होय है। तुम दुःखहारी पुरुष हो, तिहारा यही स्वभाव ही है जो आपदाविषै सहाय करो। सो मैं कहूं सुनहु। यह अंजनी सुन्दरी राजा महेन्द्रकी पुत्री है। वह राजा पृथ्वीपर प्रसिद्ध महा यशवान नीतिवान निर्मल स्वभाव है। और राजा प्रह्लादका पुत्र पवनंजय गुणोंका सागर ताकी प्राणहूंतैं

प्यारी यह स्त्री है। सो पवनंजय एक समय बापकी आज्ञातैं आप तो रावणके निकट वरुणसों युद्धके अर्थि विदा होय चाले हुते सो मानसरोवरतैं रात्रिको याके महलमें गोप्य आए। तातैं याको गर्भ रह्या, सो याकी सासूका क्रूर स्वभाव दयारहित महामूर्ख था ही, वाके चित्त में गर्भका भर्म उपज्या। तब वानैं याको पिताके घर पठाई। यह सब दोषरहित महासती शीलवंती निर्विकार है, सो पितानें भी अकीर्तिके भयतैं न राखी। जे सज्जन पुरुष हैं ते झूठे भी दोषतैं डरे हैं। यह बड़े कुलकी बालिका सर्व आलंबन रहित या वनविषै मृगीसमान रहै हैं। मैं याकी सेवा करूं हूं। इनके कुलक्रमतैं हम आज्ञाकारी सेवक हैं, इतवारी हैं, अर कृपापात्र हैं। सो यह आज या वनविषै प्रसूति भई है। यह वन नाना उपसर्गका निवास है। न जानिए कैसे याकों सुख होयगा? हे राजन्! यह याका वृत्तांत संक्षेपतैं तुम सों कह्या, अर सम्पूर्ण दुःख कहांतक कहूं? या भांति स्नेहकरि पूरित जो बसंतमालाके हृदयका राग सो अंजनीके तापरूप अग्नितैं पिघल्या संता अंगमें न समाया, सो मानों बसंतमालाके वचन द्वारकरि बाहिर निकस्या। तब वह राजा प्रतिसूर्य हनूरुहनामद्वीपका स्वामी बसंतमालासूं कहता भया—हे भव्ये! मैं राजा चित्रभानु अर राणी सुन्दरमालिनीका पुत्र हूं, यह अंजनी मेरी भानजी है। मैंनें बहुत दिन में देखी सो पिछानी नाहीं। ऐसा कहकर अंजनीकों बालावस्थातैं लेकर सकल वृत्तांत कहकर गद्गद वाणीकर वचनालापकर आंसू डालता भया। तब पूर्ण वृत्तांत कहिनेतैं अंजनीनें याकों मामा जान गले लागि बहुत रुदन किया। सो मानों सकल दुःख रुदनसहित निकस गया। यह जगतकी रीति है हितुके देख अश्रुपात पड़े हैं। वह राजा भी रुदन करने लाग्या अर ताकी रानी भी रोवने लागी। बसंतमालाने भी अति रुदन किया। इन सबके रुदनतैं गुफा गुंजार करती भई, सो मानों पर्वतनें भी रुदन किया। जलके जे नीझरने, तेई भए अश्रुपात, तिनतैं सब वन शब्दमई होयगया। वनके जीव जे मृगादि सो भी रुदन करते भए। तदि राजा प्रतिसूर्यनें जलतैं अंजनीका मुख प्रक्षालन कराया अर आप भी जलतैं मुख पखाल्या। वन हू शब्द रहित होयगया। मानों इनकी वार्ता सुनना चाहै है। अंजनी प्रति-

सूर्यकी स्त्रीतैं सम्भाषण करती भई। सो बड़ोंकी यह रीति है जो दुःखविषै हू कर्तव्यतैं न चूकैं। बहुरि अंजनी मामासों कहती भईः—हे पूज्य! पुत्रका समस्त शुभाशुभ वृत्तांत ज्योतिषीनितैं पूछो। तब सांवत्सर नामा ज्योतिषी लार था ताकों पूछ्या। तब ज्योतिषी बोल्या बालकके जन्मकी वेला बतावो। तब बसंतमालाने कही आज अर्धरात्रि गए जन्म भया है। तब लग्न थाप कर बालकके शुभ लक्षण जान ज्योतिषी कहता भया कि यह बालक मुक्तिका भाजन है। बहुरि जन्म न धरैगा। जो तिहारे मनमें संदेह है तो मैं संक्षेपतासों कहूं हूं सो सुन[1]। चैत्रवदी अष्टमीकी तिथि है, अर श्रवण नक्षत्र है, अर सूर्य मेषका उच्चस्थानविषै बैठ्या है, अर चन्द्रमा वृषका है अर मकरका मंगल है, अर बुध मीनका है अर बृहस्पति कर्कका है सो उच्च है। शुक्र तथा शनैश्चर दोनों मीनके हैं। सूर्य पूर्ण दृष्टिकर शनिको देखै है, अर मंगल दश विश्वा सूर्यकों देखै है अर बृहस्पति पन्द्रह विश्वा सूर्यकों देखै है। अर सूर्य बृहस्पतिकों दश विश्वा देखै है, अर चन्द्रमाको पूर्ण दृष्टि करि बृहस्पति देखै है, अर बृहस्पतिकों चन्द्रमा देखै है, अर बृहस्पति शनिश्चरको पन्द्रहविश्वा देखै है, अर शनिश्चर बृहस्पतिकों दशविश्वा देखै है। अर बृहस्पति शुक्रकों पन्द्रह विश्वा देखै है, अर शुक्र बृहस्पतिकों पन्द्रह विश्वा देखै है। याके सब ही ग्रह बलवान बैठे हैं। सूर्य और मंगल दोनों याका अद्भुत राज्य निरूपण करै हैं। अर बृहस्पति अर शनि मुक्तिका देनहारा जो योगीन्द्रपद निर्णय करै हैं। जो एक बृहस्पति ही उच्चस्थान बैठ्या होय तो सर्व कल्याणके प्राप्तिका कारण है। अर ब्रह्मनामा योग है, अर मुहूर्त शुभ है, सो अविनाशी सुखका समागम याके होयगा। या भांति सब ही ग्रह अति बलवान बैठे हैं, सो सब दोषरहित यह होयगा। ऐसा ज्योतिषीने जब कह्या तब प्रतिसूर्यने ताकों बहुत दान दिया अर भानजीकों अतिहर्ष उपजाया अर कही कि—हे वत्से! अब हम सब हनूरुहद्वीपको चालें। तहां बालकका जन्मोत्सव भली भांति

[1] नोट—मूलग्रन्थमें नक्षत्रादि दूसरे प्रकार वर्णन किए हैं परन्तु हम नहीं समझ सकते कि यह ग्रह ठीक हैं या मूल ग्रन्थके ठीक हैं। इसकारण हमने भाषाग्रन्थके मुजिब ही रक्खा है, मूल ग्रन्थके माफिक ग्रहादिककों भी ग्रन्थके अन्तमें हम लिखेंगे। बुद्धिमान विचार लेवें।

होयगा। तदि अंजना भगवानकी वंदना कर पुत्रको गोदीमें लेय, गुफाका अधिपति जो वह गंधर्वदेव तासों बारम्बार क्षमा कराय प्रतिसूर्यके परिवार सहित गुफातैं निकसी, अर विमानके पास आय ऊभी रही, मानों साक्षात् वनलक्ष्मी ही है। कैसा है विमान? मोतीनिके जे हार सोई मानों नीझरने हैं, अर पवनकी प्रेरी क्षुद्रघण्टिका बाज रही हैं, अर लहलहाट करती जे रत्नोंकी झालरी तिनतैं शोभायमान, अर केलिके वनोंतैं शोभायमान है, सूर्यके किरणके स्पर्श कर ज्योतिरूप होय रह्या है, अर नानाप्रकारके रत्ननिकी प्रभाकर ज्योतिका मंडल पड़ रह्या है। सो मानों इन्द्रधनुष ही चढि रह्या है। अर नानाप्रकारके वर्णोंकी सैंकड़ों ध्वजा फरहरै हैं। अर वह विमान कल्पवृक्ष समान मनोहर नानाप्रकारके रत्ननिकरि निर्मापित नानारूपकों धरै मानों स्वर्गलोकतैं आया है। सो वा विमानमें पुत्रसहित अंजना, बसंतमाला तथा राजा प्रतिसूर्यका परिवार सकल बैठकर आकाशके मार्ग चाले। सो बालक कौतुककर मुलकता संता माताकी गोदमेंतैं उछलकर पर्वत ऊपर जा पड्या। माता हाहाकार करती भई, अर राजा प्रतिसूर्यके सर्वलोक हाहाकर करते भए। अर राजा प्रतिसूर्य बालकके ढूंढनेको आकाशतैं उतरिकरि पृथ्वी पर आया, अंजना अतिदीन भई विलाप करै है। ऐसा विलाप करै है जाकों सुनकर तिर्यञ्चनिका मन भी करुणा कर कोमल होय गया। हाय पुत्र! कहा भया? देव कहिए पूर्वोपार्जित कर्मने कहा किया? मोहि रत्न सम्पूर्ण निधान दिखायकरि बहुरि हरलिया। वियोग के दुःखतैं व्याकुल जो मैं सो मेरे जीवनका अवलंबन जो बालक भया हुता सो भी पूर्वोपार्जित कर्मने छिनाय लिया। सो माता तो यह विलाप करै है, अर पुत्र पत्थर पर पड्या, सो पत्थरके हजारों खंड होय गए, अर महा शब्द भया। प्रतिसूर्य देखै तो बालक एक शिला ऊपर सुखसे विराजै है, अपने अंगूठे आप ही चूसै हैं, क्रीड़ा करै है, अर मुलकै है, अति शोभायमान सूधे पड़े हैं, लहलहाट करै हैं कर चरणकमल जिनके, सुन्दर है शरीर जिनका, वे कामदेव पदके धारक, उनको कौनकी उपमा दीजै? मंद मंद जो पवन ताकरि लहलहाट करता जो रक्तकमलोंका वन ता समान हैं, प्रभा जिनकी, अपने तेजकरि पहाड़के खंड-खंड

किए। ऐसे बालकको दूरतैं देखकर राजा प्रतिसूर्य अति आश्चर्यको प्राप्त भया। कैसा है बालक ? निष्पाप है शरीर जाका, धर्मका स्वरूप, तेजका पुंज। ऐसे पुत्रको देख माता बहुत विस्मयको प्राप्त भई, उठाय सिर चूमा अर छातीसों लगायलिया। तब प्रतिसूर्य अंजनीतैं कहता भया—हे बालिके ! यह बालक तेरा समचतुरस्रसंस्थान, वज्रवृषभनाराचसंहननका धरणहारा, महा वज्रका स्वरूप है। जाके पड़नेकरि पहाड़ चूर्ण होय गया। जब या बालकको ही देवनितैं अधिक अद्भुत शक्ति है तो यौवन अवस्थाकी शक्तिका कहा कहना ? यह निश्चय सेती चरमशरीरी है। तद्भवमोक्षगामी है, फिर देह न धारैगा। याकी यही पर्याय सिद्धपदका कारण है। ऐसा जानकर तीन प्रदक्षिणा देय हाथ जोड़ सिर नवाय, अपनी स्त्रीनिके समूह सहित बालकको नमस्कार करता भया। यह बालक, ताकी जे स्त्री, तिनके जे नेत्र, तेई भए श्याम श्वेत अरुणकमल, तिनकी जे माला, तिनकरि पूजनीक अति रमणीक मंद मंद मुळकनका करणहारा, सब ही नरनारीनिका मन हरै। राजा प्रतिसूर्य पुत्रसहित अंजनी भानजीको विमानमैं बैठाय अपने स्थानक लेय आया। कैसा है नगर ? ध्वजा तोरणनिकरि शोभायमान है। राजाको आया सुन सर्व नगरके लोक नाना प्रकारके मंगल द्रव्यनिसहित सन्मुख आए। राजा प्रतिसूर्यने राजमहलमें प्रवेश किया। वादित्रोंके नादतैं व्याप्त भई हैं दशों दिशा जहां, बालकके जन्मका बड़ा उत्सव विद्याधरने किया। जैसा स्वर्गलोकविषै इन्द्रकी उत्पत्तिका उत्सव देव करै हैं। पर्वतविषै जन्म पाया, अर विमानतैं पड़करि पर्वतको चूर्ण किया। तातैं बालकका नाम माता अर बालक के मामा प्रतिसूर्यने श्रीशैल ठहराया। अर हनूरुहद्वीपविषै जन्मोत्सव भया तातैं हनूमान यह नाम पृथ्वीविषै प्रसिद्ध भया। वह श्रीशैल (हनूमान) हनूरुहद्वीपविषै रमै। कैसा है कुमार ? देवनि समान है प्रभा जाकी, महाकांतिवान, सबको महा उत्सवरूप है शरीरकी क्रिया जाकी, सर्वलोकके मन अर नेत्रनिको हरनहारा प्रतिसूर्यके पुरविषै विराजै है।

अथानन्तर गणधर देव राजा श्रेणिकतैं कहै है—हे नृप ! प्राणीनिके पूर्वोपार्जित पुण्यके प्रभावतैं

गिरिनिका चूरण करनहारा महाकठोर जो वज्र सो भी पुष्प समान कोमल होय परणवै है। अर महा आतापकी करणहारी जो अग्नि सो भी चन्द्रमाकी किरण समान तथा विस्तीर्ण कमलनीके वन समान शीतल होय है। अर महा तीक्ष्ण खड्गकी धारा सो महा मनोहर कोमल लता समान होय है। ऐसा जानकर जे विवेकी जीव हैं ते पापतैं विरक्त होय हैं। कैसा है पाप? महा दुःख देनेविषै प्रवीण है। तुम जिनराजके चरित्र विषै अनुरागी होवो। कैसा है जिनराजका चरित्र? सारभूत जो मोक्षका सुख ताके देने विषै चतुर है। यह समस्त जगत निरंतर जन्मजरामरणरूप सूर्यके आतापतैं तप्तायमान है। तामैं हजारों जे व्याधि हैं सोई किरणोंका समूह।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महा पद्मपुराण संस्कृत ग्रन्थ, ताकी भाषा वचनिकाविषै हनुमानकी जन्म कथाका वर्णन करने वाला सत्रहवां पर्व पूर्ण भया ॥ १७ ॥

अथानन्तर गौतमस्वामी राजा श्रेणिकसों कहै हैं–हे मगधदेशके मंडन! यह हनुमानजीके जन्म का वृत्तांत तो तोहि कह्या, अब हनुमानके पिता पवनंजयका वृत्तांत सुन। पवनंजय पवनकी नाईं शीघ्र ही रावणपै गया, अर रावणतैं आज्ञा पाय वरुणतैं युद्ध करता भया। सो बहुत देरतक नाना प्रकारके शस्त्रनिकरि वरुणके अर पवनंजयके युद्ध भया, सो युद्धविषै वरुणको बांध लिया। तानैं जो खरदूषणको बांध्या हुता तो छुडाया, अर वरुणको रावणके समीप लाया। वरुणने रावणकी सेवा अंगीकार करी। रावण पवनंजयतैं अति प्रसन्न भए। तब पवनंजय रावणसों विदा होय अंजनीके स्नेहतैं शीघ्र ही घरको चाले। राजा प्रह्लादने सुनी कि पुत्र विजय कर आया, तब ध्वजा तोरण मालादिकोंसे नगर शोभित किया। तब सब पुरिजन पुरजन लोग सन्मुख आय नगरके सर्व नर नारी इनके कर्त्तव्यकी प्रशंसा करैं है। राजमहलके द्वारे अर्घादिककरि बहुत सन्मानकर भीतर प्रवेश कराया। सारभूत मंगलीक वचननिकरि कुंवरकी सबहीने प्रशंसा करी। कुंवर माता पिताको प्रणामकरि सबका मुजरा

लेय क्षणएक सभाविषै सबनकी शुश्रूषाकर आप अंजनीके महल पधारे। प्रहस्तमित्र लार सो वह महल जैसा जीवरहित शरीर सुन्दर न लागै; तैसै अंजनी बिना मनोहर न लागै। तब मन अप्रसन्न होय गया। प्रहस्तसों कहते भए–हे मित्र! यहां वह प्राणप्रिया कमलनयनी नहीं दीखै है सो कहां है? यह मन्दिर ताके बिना मुझे उद्यान समान भासै है, अथवा आकाश समान शून्य भासै है। तातैं तुम वार्ता पूछो, वह कहां है? तब प्रहस्त माहिले लोगनितैं निश्चयकर सकल वृत्तांत कहता भया। तब याके हृदयको क्षोभ उपज्या। माता पितासों बिना पूछे ही मित्रसहित महेन्द्रके नगरमें गए। चित्तमें उदास जब राजा महेंद्रके नगरके समीप जाय पहुँचे तब मनमें ऐसा जान्या जो आज प्रियाका मिलाप होयगा। तदि मित्रसों कहते भए कि–हे मित्र! देखो यह नगर मनोहर दीखै है, जहां वह सुन्दर कटाक्ष की धरनहारी सुन्दरी विराजै है। जैसैं कैलाश पर्वतके शिखर शोभायमान दीखै है तैसें यह महलके शिखर रमणीक दीखै हैं। अर बनके वृक्ष ऐसे सुन्दर हैं मानों वर्षाकालकी सघनघटा ही है। ऐसी वार्ता मित्रसों करते संते नगरके पास जाय पहुँचे। मित्र भी बहुत प्रसन्न करता आया। राजा महेंद्र ने सुनी कि पवनंजयकुमार विजयकर पितासों मिल यहां आए हैं, तब नगरको बड़ी शोभा कराई। अर आप अर्घादिक उपचार लेय सन्मुख आया, बहुत आदरतैं कुंवरको नगरमें लाए। नगरके लोगों ने बहुत आदरतें गुण वर्णन किये। कुंवर राजमंदिरमें आए। एक मुहूर्त ससुरके निकट विराजे, सबहीका सन्मान किया, अर यथायोग्य वार्ता करी। बहुरि राजातैं आज्ञा लेयकर सासूका मुजरा करया, बहुरि प्रियाके महल पधारे। कैसे हैं कुमार? कांताके देखनेकी है अभिलाषा जाके। तहां भी स्त्रीको न देख्या तब अति विरहातुर होय काहूकों पूछ्या–हे बालिके! हमारी प्रिया कहां है? तब वह बोली हे देव! यहां तिहारी प्रिया नाहीं। तब वाके वचनरूप वज्रकर हृदय चूर्ण होयगया अर कान मानों ताते खारे पानीसे सींचे गए। जैसा जीवरहित मृतक शरीर होय तैसा होय गया। शोकरूप दाहकरि मुरझाय गया है मुखकमल जाका, यह ससुरालके नगरतैं निकसिकरि पृथ्वीविषै स्त्रीके वार्ताके निमित्त

भ्रमता भया, मानों वायुकुमारको वायु लागी। तब प्रहस्तमित्र याकों अति आतुर देखकरि याके दुःखतैं अति दुखी भया, अर यासों कहता भया—हे मित्र! कहा खेद–खिन्न होय है? अपना चित्त निराकुल कर। यह पृथ्वी केतीक है जहां होयगी वहां ठीककर लेवेंगे। तब कुमारने मित्रसों कही—तुम आदित्यपुर मेरे पितापै जावो अर सकल वृत्तांत कहो। जो मुझे प्रियाकी प्राप्ति न होयगी तो मेरा जीवना नहीं होयगा। मैं सकल पृथ्वीपर भ्रमण करूं हूं, अर तुम भी ठीक करो। तब मित्र यह वृत्तांत कहने को आदित्यपुर नगरविषै आया, पिताकों सब वृत्तांत कह्या। अर पवनकुमार अम्बरगोचर हाथीपर चढ़करि पृथ्वीविषै विचरता भया। अर मनविषै यह चिन्ता करी कि वह सुन्दरी कमलसमान कोमल शरीर शोकके आतापकी संतापको प्राप्त भई कहां गई? मेरा ही हृदयविषै ध्यान जाके वह गरीबिनी विरहरूप अग्नितैं प्रज्वलित विषम बनमें कौन दिशाकों गई? वह सत्यवादिनी निःकपट धर्मकी धरनहारी, गर्भ का है भार जाकै,मत कदापिबसंतमालासों रहित होय गई होय। वह पतिव्रता श्रावकके व्रत पालनहारी राज कुमारी शोककर अंध होय गए हैं दोनों नेत्र जाके, अर विकट वन विहार करती, क्षुधासों पीड़ित, अजगरकर युक्त जो अंधकूप तामैं ही पड़ी हो अथवा वह गर्भवती दुष्ट पशुओंके भयंकर शब्द सुन प्राणरहित ही होय गई होय। वह प्राणनितैं भी अधिक प्यारी या भयंकर अरण्यविषै जलविना प्यास कर सूखगए हैं कंठतालु जाके, सो प्राणोंसे रहित होय गई होय? वह भोरी कदाचित् गंगाविषै उतरी होय तहां नानाप्रकारके ग्राह सो पानीमें बह गई हो, अथवा वह अतिकोमल तनु डाभकी अणीकर विदारे गए होंय चरण जाके सो एक पैंड़ भी पग धरनेकी शक्ति नाहीं सो न जानिए कहा दशा भई?
अथवा दुःखतैं गर्भपात भया होय अर कदाचित् वह जिनधर्मकी सेवनहारी महाविरक्तभाव होय आर्या भई होय। ऐसा चितवन करते पवनंजयकुमारनै पृथ्वीविषै भ्रमण किया। सो वह प्राणवल्लभा न देखी। तदि विरहकर पीड़ित सर्वजगतकों शून्य देखता भया, मरणका निश्चय किया। न पर्वतविषै न मनोहर वृक्षनिविषै, न नदीके तटपर काहू ठौर ही प्राणप्रिया विना उसका मन न रमता भया। ऐसा

विवेकवर्जित भया जो सुन्दरीकी वार्ता वृक्षनिको पूछै भ्रमता २ भूतरुवर नामा वनमें आया। तहां हाथीसैं उतरचा अर जैसैं मुनि आत्माका ध्यान करैं तैसैं प्रियाका ध्यान करे। बहुरि हथियार अर बखतर पृथ्वीपर डार दिए अर गजेन्द्रतैं कहते भए—हे गजराज ! अब तुम वनस्वच्छन्द विहारी होवो। हाथी विनयकरि निकट खड़्या है। आप कहै हैं—हे गजेन्द्र ! नदीके तीरमें शल्यकी वन है ताके जो पल्लव सो चरते विचरो। अर यहां हथिनीनिके समूह हैं सो तुम नायक होय विचरो। कुंवरने ऐसा कह्या परंतु वह कृतज्ञ, धनीके स्नेहविषै प्रवीण कुंवरका संग नहीं छोड़ता भया, जैसैं भला भाई भाईका संग न छोड़े। कुंवर अति शोकवंत ऐसे विकल्प करै कि अति मनोहर जो वह स्त्री ताहि यदि न पाऊं तो या वन विषै प्राण त्याग करूं। प्रिया विषै लग्या है मन जाका, ऐसा जो पवनंजय ताहि वनविषै रात्रि भई। सो रात्रिके चार पहर चार वर्ष समान बीते। नानाप्रकारके विकल्पकरि व्याकुल भया।

यहांकी तो यह कथा, अर मित्र पितापै गया सो पिताकों सर्व वृत्तांत कह्या। पिता सुनकर परम शोकको प्राप्त भया। सबकों शोक उपज्या। अर केतुमती माता पुत्रके शोककरि अति पीड़ित होय रोवती संती प्रहस्तसूं कहती भई कि जो तू मेरे पुत्रको अकेला छोड़ आया सो भला न किया। तदि प्रहस्तने कही मोहि अति आग्रहकर तिहारे निकट भेज्या सो आया, अब तहां जाऊगा। सो माताने कही—वह कहाँ है ? तब प्रहस्तने कही जहाँ अंजनी है तहां होयगा। तदि याने कही अंजनी कहां है, ताने कही— मैं न जानूं। हे माता ! जो विना विचारैं शीघ्र ही काम करै तिनको पश्चापात होय। तिहारे पुत्रने ऐसा निश्चय किया कि जो मैं प्रियाको न देखूं तो प्राणत्याग करूं। यह सुनकर माता
अति विलाप करती भई। अंतःपुरकी सकल स्त्री रुदन करती भईं, माता विलाप करै है—हाय मो पापिनीने कहा किया जो महासतीको कलंक लगाया, जाकरि मेरा पुत्र जीवनके संशयको प्राप्त भया। मैं क्रूरभावकी धरणहारी महावक्र मंदभागिनीने विना विचारे यह काम किया। यह नगर, यह कुल, अर विजयार्ध पर्वत, अर रावणका कटक पवनंजय विना शोभै नाहीं। मेरे पुत्र समान और कौन ?

जानैं वरुण जो रावणहूंतैं असाध्य ताहि रणविषैं क्षणमात्रमैं बांध लिया। हाय वत्स! विनयके आधार, गुरु पूजनमें तत्पर, जगतसुन्दर, विख्यातगुण तू कहां गया? तेरे दुखरूप अग्निकरि तप्तायमान जो मैं, सो हे पुत्र! मातासों वचनालाप कर, मेरा शोक निवार। ऐसे विलाप करती अपना उरस्थल अर सिर कूटती जो केतुमती सो ताने सब कुटुम्ब शोकरूप किया। प्रह्लाद हूं आंसू डारते भए। सर्व परिवारकों साथ लेय प्रहस्तको अगवानी कर अपने नगरतैं पुत्रकों ढूंढ़नेको चाले। दोनों श्रेणियोंके सर्व विद्याधर प्रीतिसों बुलाये सो परिवार सहित आए। सब ही आकाशके मार्ग कुंवरको ढूंढै हैं, पृथ्वीमें देखै हैं, अर गंभीर वन और लतावोंमें देखै हैं। अर प्रतिसूर्यके पास भी प्रह्लादका दूत गया सो सुन कर महा शोकवान भया। अर अंजनासों कह्या। सो अंजना प्रथम दुःखतैं भी अधिक दुःखकों प्राप्त भई। अश्रुधारा करि वदन पखालती रुदन करती भई, कि हाय नाथ! मेरे प्राणोंके आधार! मुझमें बांध्या है मन जिन्होंने सो मोहि जन्मदुखारीकों छोड़करि कहां गए? कहा मुझसों कोप न छोड़ो हो, जो सर्व विद्याधरनितैं अदृश्य होय रहे हो। एकबार एक भी अमृत समान वचन मोसों बोलो। एते दिन ये प्राण तिहारे दर्शनकी वांछाकरि राखे हैं, अब जो तुम न दीखो तो ये प्राण मेरे किस कामके हैं? मेरे यह मनोरथ हुता कि पतिका समागम होयगा सो देवने मनोरथ भग्न किया। मुझ मंदभागिनी के अर्थि आप कष्ट अवस्थाकों प्राप्त भए। तिहारे कष्टकी दशा सुनकर मेरे प्राण पापी क्यों न विनश जाँय। ऐसे विलाप करती अंजनाकों देखकरि वसंतमाला कहती भई—हे देवी! ऐसे अमंगल वचन मत कहो, तिहारे धनीसों अवश्य मिलाप होयगा। अर प्रतिसूर्य बहुत दिलासा करता भया कि तेरे पतिको शीघ्र ही लावै हैं। ऐसा कहकर राजा प्रतिसूर्यने मनतैं भी उतावला जो विमान ताविषै चढ़ कर आकाशतैं उतरकर पृथ्वीविषै ढूंढ्या। प्रतिसूर्यके लार दोनों श्रेणियोंके विद्याधर, अर लंकाके लोग यत्नकरि ढूंढै हैं। देखते देखते भूतरवर नामा अटवीविषै आए। तहां अंबरगोचर नामा हाथी देख्या। वर्षाकालके सघन मेघसमान है आकार जाका, तबि हाथीकों देखकरि सर्व विद्याधर प्रसन्न भए कि जहां यह

हाथी है तहां पवनंजय है। पूर्वे हमने यह हाथी अनेकबार देख्या है। यह हाथी अंजनगिरि समान है रंग जाका, अर कुंदके फूल समान श्वेत हैं दांत जाके, अर जैसी चाहिये तैसी सुन्दर है सूंड जाकी। जब हाथी के समीप विद्याधर आए तब वाहि निरंकुश देख डरे अर हाथी विद्याधरोंके कटकका शब्द सुन महाक्षोभ को प्राप्त भया। हाथी महाभयंकर दुर्निवार शीघ्र है वेग जाका, मदकर भीज रहे हैं कपोल जाके, अर हाले हैं अर गाजै हैं कान जाके। जिस दिशाकों हाथी दौड़े ताही दिशातैं विद्याधर हट जावें। यह हाथी लोगोंका समूह देख स्वामीकी रक्षाविषै तत्पर, सूंडसों गंधी है तलवार जाके, महाभयंकर, पवनंजयका समीप न तजै। सो विद्याधर आसपास याके समीप न आवें। तब विद्याधरोंने हथिनियोंके समूहसों याहि वश किया, क्योंकि जेते वशीकरणके उपाय हैं तिनमें स्त्री समान और कोई उपाय नाहीं। तब ये आगे आय पवनकुमारकों देखते भए। मानों काठका है, मौनसों बैठ्या है। वे यथायोग्य याका उपचार करते भए पर यह चिंतामें लीन काहूसों न बोलै। जैसैं ध्यानारूढ़ मुनि काहूसों न बोलैं। तब पवनंजयके माता पिता आंसू डारते याके मस्तकको चूमते भए, अर छातीसों लगावते भए, अर कहते भए कि—हे पुत्र! तू ऐसा विनयवान हमको छोड़करि कहां आया? महाकोमल सेजपर सोवनहारा तेरा शरीर या भीमवनविषै कैसैं रात्रि व्यतीत करी? ऐसैं वचन कहे तो भी न बोलैं। तबि याहि नम्रीभूत और मौनव्रत धरैं, मरणका है निश्चय जाकैं ऐसा जानकरि समस्त विद्याधर शोकको प्राप्त भए, पिता सहित सब विलाप करते भए।

तदि प्रतिसूर्य अंजनीका मामा सब विद्याधरनिकों कहता भया कि मैं वायुकुमारसों वचनालाप करूंगा। तब वह पवनंजयको छातीसों लगायकर कहता भया—हे कुमार! मैं समस्त वृत्तांत कहूं हूं सो सुनो। एक महा रमणीक संध्याभ्रनामा पर्वत, तहां अनंगवीचि नामा मुनिको केवलज्ञान उपज्या था, सो इन्द्रादिकदेव दर्शनको आए हुते, अर मैं भी गया हुता। सो वंदनाकर आवता हुता सो मार्गमें एक पर्वतकी गुफा, ता ऊपर मेरा विमान आया, सो मैंने स्त्रीके रुदनकी ध्वनि सुनी। मानों बीन बाजैं

है। तब मैं वहां गया, गुफाविषै अंजनी देखी। मैंने वनके निवासका कारण पूछ्या। तदि बसंतमाला ने सर्व वृत्तांत कह्या। अंजनी शोक कर विह्वल रुदन करै सो मैं धीर्य बंधाया, अर गुफामें ताके पुत्र का जन्म भया, सो गुफा पुत्रके शरीरकी कांतिकर प्रकाश रूप होयगई, मानो सुवर्णकी रची है। यह वार्ता सुनकर पवनंजय परम हर्षकों प्राप्त भए। अर प्रतिसूर्यकों पूछते भए–बालक सुखसों तिष्ठै है? तब प्रतिसूर्यने कह्या–"बालककों मैं विमानमैं थापकर हनुरुहद्वीपको जाता था सो मार्गमें बालक एक पर्वतपर पड्या।" सो पर्वतके पड़नेका नाम सुनकर पवनंजयने हाय हाय ऐसा शब्द कह्या। तदि प्रतिसूर्यने कह्याः–"सोच मत कर, जो वृत्तांत भया सो सुनहु, जाकरि सर्व दुखसों निवृत्ति होय। बालक कों पड्या देख मैं विलाप करता भया! विमानतैं नीचे उतर्या, तब क्या देखा–पर्वतके खंड–खंड होय गए, अर एक शिलापर बालक पड्या है, अर ताकी ज्योतिकरि दशोंदिशा प्रकाशरूप होय रही हैं। तब मैंने तीन प्रदक्षिणा देय नमस्कार कर बालककों उठाय लिया, अर माता को सौंप्या। सो माता अति विस्मयकों प्राप्त भई। पुत्रका श्रीशैल नाम धर्या। बसंतमाला अर पुत्र सहित अंजनीको हनुरुहद्वीप लेय गया। वहां पुत्रका जन्मोत्सव भया। सो बालकका दूजा नाम हनुमान भी है। यह तुमको मैंने सकल वृत्तांत कह्या। हमारे नगरमें वह पतिव्रता पुत्रसहित आनंदसो तिष्ठै है।" यह विरतांत सुनकर पवनंजय तत्काल अंजनीके अवलोकन के अभिलाषी हनुरुहद्वीपकों चाले। अर सर्व विद्याधर भी इनके संग चाले। हनुरुहद्वीपमें गए। सो दोय महीना सबकों प्रतिसूर्यने बहुत आदर सों राख्या। बहुरि सब प्रसन्न होय अपने अपने स्थानककों गए। बहुत दिनोंमें पाया है स्त्रीका संयोग जानैं सो ऐसा पवनंजय यहां ही रहै। कैसा है पवनंजय? सुन्दर है चेष्टा जाकी, और पुत्रकी चेष्टा सों अति आनन्दरूप हनुरुहद्वीपमें देवनकी नाईं रमते भए। हनुमान नवयौवनको प्राप्त भए। मेरुके शिखर समान सुन्दर है सीस जाका, सर्व जीवनिके मनके हरणहारे होते भए। सिद्ध भई हैं अनेक विद्या जाको, अर महाप्रभाव रूप विनयवान्, बुद्धिमान्, महाबली, सर्व शास्त्रनिके अर्थविषै प्रवीण, परोपकार करनेको चतुर, पूर्वभव

स्वर्गमें सुख भोगि आए, अब यहां हनुरुहद्वीपविषै देवोंकी नाईं रमै हैं।

हे श्रेणिक! गुरुपूजामें तत्पर श्रीहनुमानके जन्मका वर्णन, अर पवनंजयका अंजनीसों मिलाप, यह अद्‌भुत कथा नानारसकी भरी है। जे प्राणी भावधर यह कथा पढ़ै पढ़ावैं, सुनैं सुनावैं तिनकी अशुभ कर्मसें प्रवृत्ति न होय, शुभक्रियाके उद्यमी होय। अर जो यह कथा भावधर पढ़ै पढ़ावैं उनकी परभवमें शुभगति, दीर्घ आयु होय, शरीर निरोग सुन्दर होय, महापराक्रमी होय, अर उनकी बुद्धि करनेयोग्य कार्यके पारकौं प्राप्त होय, अर चन्द्रमा समान निर्मलकीर्ति होय, अर जासों स्वर्गमुक्तिके सुख पाइए ऐसे धर्मकी बढ़वारी होय, जो लोकविषै दुर्लभ वस्तु हैं सो सब सुलभ होय, सूर्य समान प्रतापके धारक होय।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महा पद्मपुराण संस्कृत ग्रंथ, ताकी भाषा वचनिकाविषै पवनंजय अंजनाका मिलाप वर्णन करने वाला अठारहवां पर्व पूर्ण भया ॥ १८ ॥

अथानन्तर राजा वरुण बहुरि आज्ञालोप भया तदि कोपकरि तापर रावण फेर चढ़े। सर्व भूमिगोचरी विद्याधरनिकों अपने समीप बुलवाया, सबके निकट आज्ञापत्र लेय दूत गए। कैसा है रावण? राज्यकार्यविषै निपुण है, किहकंधापुरके धनी, अर लंकाके धनी, रथनूपुर अर चक्रबालपुरके धनी तथा वैताढ्यकी दोनों श्रेणीके विद्याधर तथा भूमिगोचर, सब ही आज्ञा प्रमाण रावणके समीप आए। हनुरुहपद्वीपविषै भी प्रतिसूर्य तथा पवनंजयके नाम आज्ञापत्र लेय दूत आए सो ये दोनों आज्ञापत्रको माथे चढ़ाय दूतका बहुत सन्मानकर, आज्ञाप्रमाण गमनके उद्यमी भए। तदि हनुमानको राज्याभिषेक देने लागे। वादित्रादिकके समूह बाजने लागे। अर कलश हैं जिनके हाथमें ऐसे मनुष्य आगैं आय ठाढ़े भए। तदि हनुमानने प्रतिसूर्य अर पवनंजयकों पूछ्या यह कहा है? तदि उन्होंने कही—हे वत्स! हनुरुहद्वीपका प्रतिपालन कर, हम दोनोंकों रावण बुलावै हैं सो जांय हैं, रावणकी मददके अर्थि। रावण वरुण पर जाय है। वरुणने बहुरि माथा उठाया है, महासामंत है, ताके बड़ी सेना है, पुत्र बलवान हैं, अर गढ़का बल

है। तदि हनुमान विनय कर कहते भए कि मेरे होते तुमको आना उचित नाहीं, तुम मेरे गुरुजन हो। तब उन्होंने कही—हे वत्स ! तू बालक है अबतक रण देख्या नाहीं। तदि हनुमान बोले:—अनादिकालतैं जीव चतुर्गतिविषैं भ्रमण करै है, पंचमगति जो मुक्ति सो जबतक अज्ञान का उदय है तबतक जीवने पाई नाहीं, परन्तु भव्यजीव पावैं ही हैं। तैसैं हमने अब तक युद्ध किया नाहीं, परन्तु अब युद्धकर वरुणको जीतैंहींगे। अर विजय कर तिहारे पास आवैं। सो जब पिता आदि कुटुम्बके जन उनने राखने का घना ही यत्न किया, परन्तु ये न रहते जाने, तदि उन्होंने आज्ञा दई। यह स्नान भोजन कर पहिले पहिल मंगलीक द्रव्यों कर भगवान् की पूजा कर, अरहंत सिद्धकों नमस्कार कर माता पिता अर मामाकी आज्ञा लेय, बड़ोंका विनयकरि, यथायोग्य संभाषण कर, सूर्यतुल्य उद्योत रूप जो विमान तामैं चढ़करि शस्त्रके समूहकरि संयुक्त जे सामंत उन सहित, दशों दिशामें व्याप्त रह्या है यश जाका, लंकाकी ओर चाल्या। सो त्रिकूटाचलके सन्मुख विमान में बैठ्या जाता ऐसा शोभता जैसा मंदराचलके सन्मुख जाता ईशान इन्द्र शोभै है। तदि जलवीचोनामा पर्वतपर सूर्य अस्त भया। कैसा है पर्वत ? समुद्रकी लहरोंके समूहकर शीतल हैं तट जाके। तहां रात्रिसुखसों पूर्ण करी। अर करी है महा योधानितैं वीररसकी कथा जानैं, महा उत्साहकर नाना प्रकारके देश द्वीप पर्वतोंको उलंघता, समुद्रके तरंगनिकरि शीतल जे स्थानक तिनकों अवलोकन करता, समुद्रविषै बड़े-बड़े जलचर जीवनिकों देखता, रावणके कटकमें पोंहच्या। हनुमानकी सेना देखकरि बड़े बड़े राक्षस विद्याधर विस्मयकों प्राप्त भए। परस्पर वार्ता करैं हैं यह बली श्रीशैल हनुमान भव्यजीवोंविषैं उत्तम, जाने बाल अवस्थामें गिरिको चूर्ण किया। ऐसे अपने यश श्रवण करता हनुमान रावणके निकट गया। रावण हनुमानकों देखकर सिंहासनसों उठे अर विनय किया। कैसा है सिंहासन ? पारिजातादिक कहिए कल्पवृक्षोंके फूलोंसे पूरित है, जाकी सुगन्धकरि भ्रमर गुंजार करैं हैं, जाके रत्ननिकी ज्योतिकर आकाशविषै उद्योत होय रह्या है, जाके चारों ही तरफ बड़े सामंत हैं। ऐसे सिंहासनतैं उठकर रावणने हनुमानकों उरसों लगाया। कैसा है हनुमान ? रावणके विनयकरि नम्रीभूत होय गया है शरीर जाका।

पद्म पुराण २९४

रावण हनुमानकों निकट लेय बैठ्या, प्रीतिकर प्रसन्न है मुख जाका, परस्पर कुशल पूछी। अर परस्पर रूपसंपदा देख हर्षित भए। दोनों ही महाभाग्य ऐसे मिले मानों दोय इन्द्र मिले। रावण अति स्नेहकरि पूर्ण है मन जाका, सो कहता भयाः—पवनकुमारने हमतैं बहुत स्नेह बढ़ाया जो ऐसा गुणोंका सागर पुत्र हमपर पठाया। ऐसे महाबलीकों पायकरि मेरे मनोरथ सिद्ध होवेंगे। ऐसा रूपवान, ऐसा तेजस्वी और नाहीं, जैसा यह योधा सुन्या तैसा ही है, यामैं संदेह नाहीं। यह अनेक शुभ लक्षणों का भरचा है, याके शरीरका आकार ही गुणोंको प्रकट करै है। रावणने जब हनुमानके गुण वर्णन किए तदि हनुमान नीचा होय रह्या, लज्जावंत पुरुषकी नाईं नम्रीभूत है शरीर जाका, सो संतोंकी यह रीति है। अब रावणका वरुणसे संग्राम होयगा सो मानों सूर्य भयकर अस्त होनेको उद्यमी भया, मंद होय गईं हैं किरण जाकी। सूर्यके अस्त भए पीछें संध्या प्रकट भई, बहुरि गई, तो मानों प्राणनाथकी विनयवंती पतिव्रता स्त्री ही है, अर चन्द्रमारूप तिलककों धरे रात्रिरूप स्त्री शोभती भई। बहुरि प्रभात भया सूर्यकी किरणनिकरि पृथ्वीविषै प्रकाश भया। तब रावण समस्त सेनाकों लेय युद्धकों उद्यमी भया। हनुमान विद्याधर समुद्रकों भेद वरुणके नगरविषै गया, वरुणपर जाता हनुमान ऐसी कांतिको धरता भया जैसा सुभूम चक्रवर्ती परशुरामके ऊपर जाता शोभै। रावणकों कटकसहित आया जानकर वरुणकी प्रजा भयभीत भई। पाताल पुण्डरीक नगरका वह धनी सो नगरमैं योधावों के महाशब्द होते भए। योधा नगरसों निकसे, मानों वह योधा असुरकुमार देवोंके समान हैं। अर वरुण चमरेंद्र तुल्य है, महाशूरवीरपनेविषै गर्वित। अर वरुणके सौ पुत्र महा उद्धत युद्ध करनेको आए। नानाप्रकारके शस्त्रोंके समूहकरि रोका है सूर्यका दर्शन जिन्होंने। सो वरुणके पुत्रोंने आवते ही रावणका कटक ऐसा व्याकुल किया जैसैं असुरकुमार देव क्षुद्र देवोंको कम्पायमान करैं। चक्र, धनुष, वज्र, सेल, बरछी इत्यादि शस्त्रोंके समूह राक्षसनिके हाथसे गिर पड़े, अर वरुणके सौ पुत्रनिके आगे राक्षसनिका कटक ऐसा भ्रमता भया जैसा वृक्षनिका समूह असनपातके भयसे भ्रमै। तब अपने २९४

कटककू' व्याकुल देख रावण वरुणके पुत्रनिपर गया। जैसैं गजेंद्र वृक्षनिकू' उपाड़े तैसैं बड़े बड़े योधानिकू' उपाड़े। एक तरफ रावण अकेला एक तरफ वरुणके सौ पुत्र, सो तिनके बाणनिकर रावणका शरीर भेदा गया तथापि रावण महायोधाने कछु न गिन्या। जैसैं मेघके पटल गाजैं तैसैं वर्षते सूर्य-मंडलको आच्छादित करें तैसैं वरुणके पुत्रनिने रावणको बेढ्या, अर कुम्भकरण इन्द्रजीतसू' वरुण लड़ने लाग्या। जब हनुमानने रावणको वरुणके पुत्रनिकर वेध्या टेसूके फूलोंके रंगसमान आरक्त शरीर देख्या तदि रथमें असवार होय वरुणके पुत्रनिपर दौड्या। कैसा है हनुमान ? रावणसू' प्रीति-युक्त है चित्त जाका, अर शत्रुरूप अंधकारके हरिवेकू' सूर्य समान है। पवनके वेगसे भी शीघ्र वरुणके पुत्रों पर गया सो हनुमानसे वरुणके पुत्र सौ कम्पायमान भए, जैसैं मेघके समूह पवनसे कम्पायमान होय। बहुरि हनुमान वरुणके कटकपर ऐसा पड्या जैसा माता हाथी कदलीके वनमें प्रवेश करै। कई-यनिकू' विद्यामई लांगूल पाशकर बांध लिया, अर कइयोंको मुद्गरके घात कर घायल किया। वरुणका समस्त कटक हनुमानतैं हार्‍या, जैसैं जिनमार्गीके अनेकांतनयकरि मिथ्यादृष्टि हारैं। हनुमानको अपने कटकविषै रण क्रीड़ा करते देख राजा वरुणने कोपकर रक्तनेत्र किए, अर हनुमान पर आया। तब रावण वरुणकू' हनुमान पर आवता देख आप जाय रोक्या, जैसैं नदीके प्रवाहको पर्वत रोकै। वरुणके अर रावणके महायुद्ध भया। तब ताही समयमें वरुणके सौ पुत्र हनुमानने बांध लिए अर कईएकनिकू' मुद्गरनिके घातकरि घायल किए। सो वरुण सौऊ पुत्रनिकू' बांधे सुनकर शोककर विह्वल भया। अर विद्याका स्मरण न रह्या तदि रावणने याको पकड़ लिया। सो मानों वरुण सूर्य, अर याके पुत्र किरण तिनके रोकनेकरि मानू रावण राहूका रूप धारता भया। वरुणको कुम्भकरण के हवाले किया अर आप डेरा भवनोन्माद नाम वनमें किया। कैसा है वह वन ? समुद्र की शीतल पवनसे महाशीतल है। सो ताके निवासकर सेनाको रणजनित खेद रहित किया। अर वरुणको पकड़ा सुन उसकी सेना भाजी, पुण्डरीकपुरविषै जाय प्रवेश किया। देखो पुण्यका प्रभाव जो एक नायकके

हारनेतैं सबही हारे, अर एक नायकके जीतनेतैं सब ही जीते। कुम्भकरण ने कोपकर वरुणके नगर लूटनेका विचार किया तदि रावणने मने किया, यह राजानिका धर्म नाहीं। कैसे हैं रावण ? बरुणपर कोमल है चित्त जाका, सो कुम्भकरण से कहते भए–हे बालक ! तैंने यह दुराचारकी बात कही ? जो अपराध था सो तो वरुणका था, प्रजाका कहा अपराध ? दुर्बलको दुखदेना दुरगतिका कारण है, अर महाअन्याय है। ऐसा कहकर कुंभकरणको प्रशांत किया अर वरुणको बुलाया। कैसा है वरुण ? नीचा है मुख जाका। तदि रावण वरुणको कहते भए–हे प्रवीण ! तुम शोक मत करो, जो युद्ध-विषै पकड़ा गया। योधावोंकी योय ही रीति है, मारे जांय अथवा पकड़े जांय। अर रणतैं भागना यह कायरनिका काम है। तातैं हमपैं क्षमा करो, अर अपने स्थानक जाय कर मित्र बान्धव सहित सकल उपद्रवरहित अपना राज्य सुखतैं करहु। ऐसे मिष्ट वचन रावणके सुनकर वरुण हाथ जोड़ रावणसूं कहता भया–हे वीराधिवीर ! हे महाधीर ! तुम या लोकविषै महापुण्याधिकारी हो, तुमसे जो वैर भाव करैं सो मूर्ख है। अहो स्वामिन् ! यह तिहारा परम धीर्य हजारों स्तोत्रनिसैं स्तुति करने योग्य है, तुमने देवाधिष्ठित रत्न विना मुझे सामान्य शस्त्रोंसे जीता। कैसे हो तुम ? अद्भुत है प्रताप जिनका। अर इस पवनके पुत्र हनुमानके अद्भुत प्रभावकी कहा महिमा कहूं ? तिहारे पुण्यके प्रभा-वतैं ऐसे सत्पुरुष तिहारी सेवा करैं हैं। हे प्रभो ! यह पृथ्वी काहूके गोत्रमें अनुक्रमणकर नाहीं चली आई है। यह केवल पराक्रमिणिके वश है। शूरवीर ही याके भोक्ता हैं। सो आप सर्व योधावोंके शिरो-मणि हो, सो भूमिका प्रतिपालन करहु। हे उदारकीर्ति ! हमारे अपराध क्षमा अरहु। हे नाथ ! आप जैसी उत्तम क्षमा कहूं न देखी। तातैं आप सारिखे उदार चित्त पुरुषसे सम्बन्ध कर मैं कृतार्थ होऊंगा। तातैं मेरी सत्यवती नामा पुत्री आप परणो, याके परिणवे योग्य आप ही हो। या भांति वीनती कर अति उत्साहतैं पुत्री परणाई। कैसी है वह सत्यवती ? सर्वरूपवतियोंका तिलक है, कमल समान है मुख जाका। वरुणने रावणका बहुत सत्कार किया अर कईएक प्रयाण रावणके लार गया।

रावणने अतिस्नेहकरि सोख दीनी। तदि रावण अपनी राजधानीमें आया। पुत्रीके वियोगतैं व्याकुल है चित्त जाका। कैलाशकंप जो रावण ताने हनुमानका अति सन्मानकर अपनी बहिन जो चन्द्रनखा ताकी पुत्री अनंगकुसुमा महारूपवती सो हनुमानको परणाई। सो हनुमान ताकू परण कर अतिप्रसन्न भए। कैसी है अनंगकुसुमा? सर्वलोकविषै जो प्रसिद्ध गुण तिनकी राजधानी है। बहुरि कैसी है? कामके आयुध हैं नेत्र जाके। अर अति सम्पदा दीनी, अर कर्णकुण्डलपुरका राज्य दिया, अभिषेक कराया। ता नगरमें हनुमान सुखसू विराजे, जैसैं स्वर्गलोकमें इन्द्र विराजे। तथा किहकू पुर नगरका राजा नल, ताकी पुत्री हरमालिनी नामा रूप सम्पदाकर लक्ष्मीको जीतनहारी सो महाविभूतितैं हनुमानकों परणाई। तथा किन्नरगीत नगरविषै जे किन्नरजातिके विद्याधर तिनकी सौ पुत्री परणी। या भांति एकसहस्र रानी परणीं। पृथ्वीविषै हनुमानका श्रीशैल नाम प्रसिद्ध भया। काहेतैं? पर्वतकी गुफामें जन्म भया था। सो हनुमान पहाड़पर आय निकसे सो देख अति प्रसन्न भए। रमणीक है तलहटी जाकी। वह पर्वत भी पृथ्वीविषै प्रसिद्ध भया।

अथानन्तर किहकंधपुर नगरविषै राजा सुग्रीव ताके रानी सुतारा, चन्द्रसमान कांतिकू धरै है मुख जाका, अर रति समान है रूप जाका, तिनके पुत्री पद्मरागा, नवीन कमल समान है रंग जाका, अर अनेक गुणनिकरि मंडित है, पृथ्वीपर प्रसिद्ध, लक्ष्मी समान सुन्दर हैं नेत्र जाके, ज्योतिके मण्डल से मंडित है मुखकमल जाका, अर महा गजराजके कुम्भस्थल समान ऊंचे कठोर स्तन हैं जाके, अर सिंह समान है कटि जाकी महा विस्तीर्ण, अर लावण्यतारूप सरोवरमें मग्न है मूर्ति जाकी, जाहि
देख चित्त प्रसन्न होय, शोभायमान है चेष्टा जाकी। ऐसी पुत्रीको नवयौवन देख मातापिताकों याके परणावेकी चिंता भई। या योग्य वर चाहिए, सो माता पिताको रातदिन निद्रा न आवै। अर दिनमें भोजनकी रुचि गई, चिंता रूप है चित्त जिनका। तब रावणके पुत्र इन्द्रजीत आदि अनेक राजकुमार कुलवान शीलवान तिनके चित्रपट लिखे, रूप लिखाय सखियोंके हाथ पुत्रीको दिखाए।

सुन्दर है कांति जिनकी सो कन्याकी दृष्टिमें कोई न आया, अपनी दृष्टि संकोच लीनी। बहुरि हनुमानका चित्रपट देख्या ताहि देखकर शोषण, संतापन, उच्चाटन, मोहन, वशीकरण कामके यह पंचबाणोंसे बंधी गई। तब ताहि हनुमानविषै अनुरागिनी जान सखीजन ताके गुण वर्णन करती भई।

हे कन्ये! यह पवनजयका पुत्र हनुमान ताके अपारगुण कहांलों कहैं। अर रूप सौभाग्य तो याके चित्रपटमें तैंने देखे, तातैं याको वर, माता पिताकी चिंता निवार। कन्या तो चित्रपटको देख मोहित भई हुती और सखी जनोंने गुण वर्णन किया ही है तब लज्जाकर नीची होयगई अर हाथमें क्रीड़ा करनेका कमल था ताकी चित्रपट में दी। तब सबने जाना कि यह हनुमानसे प्रीतवंती भई। तब याके पिता सुग्रीवने याका चित्रपट लिखाय भले मनुष्यके हाथ वायुपुत्रपैं भेजा। सो सुग्रीवका सेवक श्रीनगरमें गया अर कन्याका चित्रपट हनुमानको दिखाया। सो अंजनाका पुत्र सुताराकी पुत्रीके रूपका चित्रपट देख मोहित भया। यह बात सत्य है कि कामके पांच ही बाण हैं परन्तु कन्याके प्रेरे पवनपुत्रके मानों सौ बाण होय लागे। चित्तमें चितवता भया, मैं सहस्र विवाह किए अर बड़ी २ ठौर परणा, खरदूषणकी पुत्री रावणकी भाणजी परणी तथापि जबलग यह पद्मरागा न परणूं तौलग परणा ही नाहीं। ऐसा विचार, महाऋद्धिसंयुक्त एकक्षणमें सुग्रीवके पुरमें गया। सुग्रीव सुना जो हनुमान पधारे, तब सुग्रीव अति हर्षित होय सन्मुख आए। बड़े उत्साहसे नगरमें ले गए सो राजमहलकी स्त्री झरोखनिकी जालीसे इनका अद्भुत रूप देख सकल चेष्टा तज आश्चर्यरूप होयगईं। अर सुग्रीवकी पुत्री पद्मरागा इनके रूपको देखकर थकित होय गई। कैसी है कन्या? अति सुकुमार है शरीर जाका। बड़ी विभूतिकरि पवनपुत्रसे पद्मरागाका विवाह भया। जैसा वर तैसी बींदनी। सो दोनों अति हर्षको प्राप्त भए। स्त्री सहित हनुमान अपने नगरमें आए। राजा सुग्रीव और राणी सुतारा पुत्रीके वियोगतैं कईएक दिन शोकसहित रहे। अर हनुमान महालक्ष्मीवान समस्त पृथ्वीपर प्रसिद्ध है कीर्ति जाकी, सो ऐसे पुत्रकूं देख पवनंजय महासुखरूप समुद्रविषै मग्न भए। रावण तीन

खंडका नाथ, अर सुग्रीव समस्त है पराक्रम जाका, हनुमान सारिखे महाभट विद्याधरोंके अधिपति तिनका नायक लंका नगरीविषैं सुखसों रमै। समस्त लोककूं सुखदाई जैसैं स्वर्गलोकविषैं इन्द्र रमै तैसैं रमै। विस्तीर्ण है कांति जाकी, महासुन्दर, अठारह हजार राणी, तिनके मुखकमल, तिनका भ्रमर भया। आयु व्यतीत होती न जानी। जाके एक स्त्री कुरूप और आज्ञारहित होय सो पुरुष उन्मत्त होय रहे है, जाके अष्टादश सहस्र पद्मनी पतिव्रता आज्ञाकारिणी लक्ष्मीसमान होय ताके प्रभावका कहा कहना? तीन खंडका अधिपति, अनुपम है कांति जाकी, समस्त विद्याधर अर भूमिगोचरी सिरपर धारे हैं आज्ञा जाकी, सो सर्व राजावोंने अर्धचक्री पदका अभिषेक कराया और अपना स्वामी जान्या। विद्याधरनिके अधिपति तिनकरि पूजनीक हैं चरणकमल जाके, लक्ष्मी कीर्ति कांति परिवार जासमान औरके नाहीं, मनोज्ञ है देह जाका, वह दशमुख राजा चन्द्रमा समान बड़े–बड़े पुरुषरूप जे ग्रह तिनसे मंडित, आह्लाद का उपजावनहारा कौनके चित्तको न हरै? जाके सुदर्शनचक्र, सर्व कार्यकी सिद्धि करणहारा, देवाधिष्ठित मध्याह्नके सूर्यकी किरणोंके समान है किरणोंका समूह जाविषैं, उद्धत प्रचंड नृपवर्ग आज्ञा न माने तिनका विध्वंसक, अति देदीप्यमान, नानाप्रकारके रत्ननिकरि मंडित शोभता भया। और दंडरत्न दुष्ट जीवनिको कालसमान भयंकर, देदीप्यमान है उग्र तेज जाका, मानों उल्कापातका समूह ही है सो प्रचंड जाकी आयुधशाला विषैं प्रकाश करता भया। सो रावण आठमा प्रतिवासुदेव, सुन्दर है कीर्ति जाकी, पूर्वोपार्जित कर्मके वशतैं कुलकी परिपाटीकर चली आई जो लंकापुरी ताविषैं संसारके अद्भुत सुख भोगता भया। कैसा है रावण! राक्षस कहावै ऐसे जो विद्याधर तिनके कुलका तिलक है।
अर कैसी है लंका? कोईप्रकारका प्रजाको नहीं है दुख जहां, मुनिसुव्रतनाथके मुक्ति गए पीछे और नमिनाथके उपजनेसे पहिले रावण भया, सो बहुत पुरुष जे परमार्थरहित मूढलोक तिन्होंने उनका कथन औरसे और किया, मांसभक्षी ठहराया, सो वे मांसाहारी नहीं थे, अन्नके आहारी थे। एक सीता के हरणका अपराधी बना, उसकर मारे गए और परलोकविषैं कष्ट पाया। कैसा है श्रीमुनिसुव्रत-

नाथका समय ? सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रकी उत्पत्तिका कारण है। सो वह समय बीते बहुत वर्ष भए। तातैं तत्वज्ञानरहित विषयी जीवोंने बड़े पुरुषनिका वर्णन औरसे और किया। पापाचारी शीलव्रत-

रहित जे मनुष्य सो तिनकी कल्पना जालरूप फांसीकर अविवेकी मंदभाग्य जे मनुष्य तेई भए मृग सो बांधे। गौतमस्वामी कहे हैं ऐसा जानकर हे श्रेणिक ! इन्द्र धरणेंद्र चक्रवर्त्यादि कर बंदनीक जो जिन राजका शास्त्र, सोई रत्न भया, ताहि अंगीकार कर। कैसा है जिनका शास्त्र ? सूर्यतैं अधिक है तेज जाका। और कैसा है तू ? जिनशास्त्रके श्रवणकर जान्या है वस्तुका स्वरूप जाने और धोया है मिथ्यात्व-रूप कर्दमका कलंक जाने।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महा पद्मपुराण संस्कृत ग्रन्थ, ताकी भाषा वचनिकाविषैं रावणका चक्रराज्याभिषेक वर्णन करने वाला उन्नीसवां पर्व पूर्ण भया ॥ १९ ॥

अथानन्तर राजा श्रेणिक महा विनयवान्, निर्मल है बुद्धि जाकी सो विद्याधरनिका सकल वृत्तांत सुन कर गौतम गणधरके चरणारविंदको नमस्कार कर आश्चर्यको प्राप्त होता संता कहता भया— हे नाथ ! तिहारे प्रसादतैं आठवां प्रतिनारायण जो रावण ताकी उत्पत्ति और सकल वृत्तांत मैंने जान्या तथा राक्षसवंशी और बानरवंशी जे विद्याधर तिनके कुलका भेद भली भांति जान्या। अब मैं तीर्थंकरोंके पूर्व भव सहित सकल चरित्र सुना चाहूं हूं ? सो कैसा है तिनका चरित्र ? बुद्धिकी निर्मलताका कारण है, अर आठवें बलभद्र जे श्रीरामचन्द्र, सकल पृथ्वीविषै प्रसिद्ध सो कौन वंश विषै उपजे तिनका चरित्र कहो। अर तीर्थंकरनिके नाम अर उनके माता पिताके नाम सब सुनवेकी मेरी इच्छा है सो तुम कहने योग्य हो। या भांति श्रेणिकने प्रार्थना करी, तब गौतम गणधर भगवत चरित्रके प्रश्न कर बहुत हर्षित भए ! कैसे हैं गणधर ? महा बुद्धिमान, परमार्थविषै प्रवीण। ते कहे हैं कि— हे श्रेणिक ! तू सुन, चौबीस तीर्थंकरनिके नाम अर इनके पितादिकनिके नाम सर्व पूर्व भव सहित

कथन करूं हूं पापके विध्वंसका कारण इन्द्रादिक कर नमस्कार करने योग्य ऋषभ १, अजित २, संभव ३, अभिनन्दन ४, सुमति ५, पद्मप्रभ ६, सुपार्श्व ७, चन्द्रप्रभ ८, पुष्पदंत (दूजा नाम सुविधिनाथ) ९, शीतल १०, श्रेयांस ११, वासुपूज्य १२, विमल १३, अनन्त १४, धर्म १५, शांति १६, कुंथु १७, अर १८, मल्लि १९, मुनिसुव्रत २०, नमि २१, नेमि २२, पार्श्व २३, महावीर २४, जिनका अब शासन प्रवरतै है। ये चौबीस तीर्थंकरनिके नाम कहे हैं। अब इनकी पूर्व भवकी नगरीनिके नाम कहे हैं। पुण्डरीकनी १, सुसीमा २, क्षमा, ३, रत्नसंचयपुर ४, ऋषभदेव आदि तीन तीन एक एक नगरविषै अनुक्रमतैं वासुपूज्य पर्यंतकी ये चार नगरी पूर्व भवके निवासकी जाननी। अर महानगर १३, अरिष्टपुर १४, सुभद्रिका १५, पुण्डरीकनी १६, सुसीमा १७, क्षेम १८, वीतशोका १९, चम्पा २०, कौशांबी २१, नागपुर २२, साकेता २३, छत्राकार २४, ये चौबीस तीर्थंकरनिकी या भवके पहले जो देवलोक, ता भव पहिले जो मनुष्यभव ताका स्वर्गपुरी समान राजधानी कही। अब तिनके परभवके नाम सुनो—वज्रनाभि १, विमलवाहन २, विपुलख्याति ३, विपुलवाहन ४, महाबल ५, अतिबल ६, अपराजित ७, नंदिषेण ८, पद्म ९, महापद्म १०, पद्मोत्तर ११, पंकजगुल्म १२, कमल समान है मुख जाका ऐसा नलिनगुल्म १३, पद्मासन १४, पद्मरथ १५, दृढ़रथ १६, मेघरथ १७, सिंहरथ १८, वैश्रवण १९, श्रीधर्मा २०, सुरश्रेष्ठ २१, सिद्धार्थ २२, आनन्द २३, सुनन्द २४ ये तीर्थंकरनिके या भव पहिले तीजे भवके नाम कहे। अब इनके पूर्वभवके पितानिके नाम सुन—वज्रसेन १, महातेज २, रिपुदमन ३, स्वयंप्रभ ४, विमलवाहन ५, सीमंधर ६, पिहिताश्रव ७, अरिदम ८, युगंधर ९, सर्वजनानन्द १०, अभयानन्द ११, वज्रदंत १२, वज्रनाभि १३, सर्वगुप्ति १४, गुप्तिमान् १५, चितारक्ष १६ विमलवाहन १७, धनरव १८, धीर १९, संवर २०, त्रिलोकीरवि २१, सुनन्द २२, वीतशोक २३, प्रोष्ठिल २४, ये पूर्व भवके पितावोंके नाम कहे। अब चौबीस तीर्थंकर जिस जिस देवलोकसे आए तिन देवलोकोंके नाम सुनो। सर्वार्थसिद्धि १, वैजयन्त २, ग्रैवेयक ३, वैजयन्त ४, ऊर्ध्वग्रैवेयक ५,

वैजयन्त ६, मध्यग्रैवेयक ७, वैजयन्त ८, अपराजित ९, आरणस्वर्ग १०, पुष्पोत्तर विमान ११, कापिष्ठ-स्वर्ग १२, शुक्रस्वर्ग १३, सहस्रारस्वर्ग १४, पुष्पोत्तर १५, पुष्पोत्तर १६, पुष्पोत्तर १७, सर्वार्थसिद्धि १८, विजय १९, अपराजित २०, प्राणत २१, वैजयन्त २२, आनत २३, पुष्पोत्तर २४, ये चौबीस तीर्थंकरोंके आवनेके स्वर्ग कहे।

अब आगे चौबीस तीर्थंकरनिकी जन्मपुरी, जन्म-नक्षत्र, माता–पिता अर वैराग्यके वृक्ष अर मोक्षके स्थान मैं कहहूं सो तुम सुनो। अयोध्यानगरी, पिता नाभिराजा, माता मरुदेवी राणी, उत्तराषाढ़ नक्षत्र, बटवृक्ष, कैलाश पर्वत प्रथम जिन हे मगध देशके भूपति! तोहि अतींद्रिय सुखकी प्राप्ति करहु १। अयोध्यानगरी, जितशत्रु पिता, विजया माता, रोहिणी नक्षत्र, सप्तच्छदवृक्ष, सम्मेदशिखर अजितनाथ, हे श्रेणिक! तुझे मंगलके कारण होउ २। श्रावस्ती नगरी, जितारि पिता, सैना माता, पूर्वाषाढ़ नक्षत्र, शालवृक्ष, सम्मेदशिखर, संभवनाथ तेरे भव बंधन हरहु ३। अयोध्यापुरी नगरी, संवर पिता, सिद्धार्था माता, पुनर्वसु नक्षत्र, सालवृक्ष, सम्मेदशिखर, अभिनन्दन तोहि कल्याणके कारण होउ ४। अयोध्यापुरी नगरी, मेघप्रभ पिता, सुमंगला माता, मघा नक्षत्र, प्रियगुवृक्ष, सम्मेदशिखर, सुमतिनाथ जगत्में महामंगलरूप तेरे सर्वविघ्न हरहु ५। कौशांबीनगरी, धारणपिता, सुसीमामाता, चित्रा नक्षत्र, प्रियंगु वृक्ष, सम्मेदशिखर, पद्मप्रभ तेरे कामक्रोधादि अमंगल हरहु ६। काशीपुरी नगर, सुप्रतिष्ठ पिता, पृथ्वी माता, विशाखा नक्षत्र, शिरीषवृक्ष, सम्मेदशिखर, सुपार्श्वनाथ हे राजन् तेरे जन्मजरामृत्यु हरहु ७। चंद्रपुरी नगरी, महासेन पिता, लक्ष्मणा माता, अनुराधा नक्षत्र, नागवृक्ष, सम्मेदशिखर, चन्द्रप्रभ तोहि शांतिभावके दाता होहु ८। काकंदी नगरी, सुग्रीवपिता, रामामाता, मूल-नक्षत्र, शालवृक्ष, सम्मेदशिखर, पुष्पदंत तेरे चित्तको पवित्र करहु ९। भद्रिकापुरी नगरी, दृढ़रथ पिता, सुनन्दा माता, पूर्वाषाढ़ नक्षत्र, प्लक्षवृक्ष, सम्मेदशिखर, शीतलनाथ तेरे त्रिविधताप हरहु १०। सिंहपुरी नगरी, विष्णुराज पिता, विष्णुश्री देवी माता, श्रवणनक्षत्र, तिन्दुक वृक्ष, सम्मेदशिखर, श्रेयांस-

नाथ तेरे विषय, कषाय हरहु, कल्याण करहु ११ । चंपापुरी नगरी, वासुपूज्य पिता, विजया माता, शतभिषा नक्षत्र, पाठलवृक्ष, निर्वाणक्षेत्र चम्पापुरीका बन, श्रीवासुपूज्य तोहि निर्वाणकी प्राप्ति करहु १२ । कपिलानगरी, कृतवर्मापिता, सुरम्यामाता, उत्तराषाढ़ नक्षत्र, जंबूवृक्ष, सम्मेदशिखर, विमलनाथ तोहि रागादिमल रहित करहु १३ । अयोध्यानगरी, सिंहसेन पिता, सर्वयशामाता, रेवती नक्षत्र, पीपलवृक्ष, सम्मेदशिखर, अनंतनाथ तुझे अंतररहित करहु १४ । रत्नपुरी नगरी, भानु पिता, सुव्रता माता, पुष्य नक्षत्र, दधिपर्ण वृक्ष, सम्मेदशिखर, धर्मनाथ तोहि धर्मरूप करहु १५ । हस्तनागपुरनगर, विश्वसेनपिता, ऐरा माता, भरणीनक्षत्र, नदीवृक्ष, सम्मेदशिखर, शांतिनाथ तुझे सदा शांति करहु १६ । हस्तनागपुर नगर, सूर्य पिता, श्रीदेवी माता, कृतिका नक्षत्र, तिलक वृक्ष, सम्मेदशिखर, कुंथुनाथ हे राजेन्द्र ! तेरे पाप हरणके कारण होहु १७ । हस्तिनागपुर नगर, सुदर्शन पिता, मित्रा माता, रोहिणी नक्षत्र, आम्रवृक्ष, सम्मेदशिखर, अरनाथ हे श्रेणिक ! तेरे कर्मरज हरहु १८ । मिथिलापुरी नगरी, कुंभपिता, रक्षतामाता, अश्विनी नक्षत्र, अशोकवृक्ष, सम्मेदशिखर, मल्लिनाथ हे राजा ! तुझे मन शोक रहित करहु १९ । कुशाग्रनगर, सुमित्रपिता, पद्मावतीमाता, श्रवणनक्षत्र, चम्पकवृक्ष, सम्मेदशिखर, मुनिसुव्रतनाथ सदा तेरे मनविषै बसहु २० । मिथिलापुरी नगरी, विजयपिता, वप्रा माता, अश्विनी नक्षत्र, मौलश्रीवृक्ष, सम्मेदशिखर, नेमिनाथ तुझे धर्मका समागम करहु २१ । सौरीपुर नगर, समुद्रविजय पिता, शिवादेवी माता, चित्रानक्षत्र, मेषशृंग वृक्ष, गिरिनार पर्वत, नेमिनाथ तुझे शिवसुखदाता होवहु २२ । काशीपुरी नगरी, अश्वसेन पिता, वामा माता, विशाखा नक्षत्र, धवलवृक्ष, सम्मेदशिखर, पार्श्व-नाथ तेरे मनको धीर्य देहु २३ । कुण्डलपुरनगर, सिद्धार्थ पिता, प्रियकारिणी माता, उत्तराफाल्गुनी नक्षत्र, शालवृक्ष, पावापुर, महावीर तुझे परम मंगल करहु, आपसमान करहु २४ । ऋषभदेवका निर्वाणकल्याण कैलाश १, वासुपूज्यका चंपापुर, २, नेमिनाथका गिरनार ३, महावीरका पावापुर ४ औरनिका सम्मेदशिखर है । शांति कुंथु अर तीन तीर्थंकर चक्रवर्ती भी भए और कामदेव भी भए,

राज्य छोड़ वैराग्य लिया। और वासुपूज्य, मल्लिनाथ, नेमिनाथ, पार्श्वनाथ महावीर ये पांच तीर्थंकर कुमार अवस्थामें वैरागी भए, राज भी न किया और विवाह भी न किया। अन्य तीर्थंकर महामंडलीक राजा भए, राजछोड़ वैराग्य लिया। और चन्द्रप्रभ पुष्पदंत ये दोय श्वेत वर्ण भए, और श्रीसुपार्श्वनाथ प्रियंगुमञ्जरीक रंग समान हरितवर्ण भए और पार्श्वनाथका वर्ण कच्चा शालि समान हरितवर्ण भया, पद्मप्रभका वर्ण कमल समान आरक्त भया, और वासुपूज्यका वर्ण टेसूके फूलसमान आरक्त भया, और मुनिसुव्रतनाथका वर्ण अंजनी गिरिसमान श्याम, और नेमिनाथका वर्ण मोरके कंठ समान श्याम, और सोलह तीर्थंकरोंके वर्ण ताता सोनेके समान वर्ण भया। ये सब ही तीर्थंकर इन्द्र धरणेन्द्र चक्रवर्त्यादिकोंसे पूजने योग्य और स्तुति करने योग्य भए और सबहीका सुमेरुके शिखर पांडुकशिला पर जन्माभिषेक भया। सबहीके पंचकल्याणक प्रकट भये, सम्पूर्ण कल्याणकी प्राप्ति का कारण है सेवा जिनकी, वे जिनेन्द्र तेरी अविद्या हरैं। या भांति गणधर देवने वर्णन किया। तब राजाश्रेणिक नमस्कारकर विनती करते भए—हे प्रभो! छहों कालकी वर्तमान आयुका प्रमाण कहो और पापकी निवृत्तिका कारण परम तत्त्व जो आत्मस्वरूप उसका वर्णन बारम्बार करो और जिस जिनेन्द्रके अंतरालमें श्रीरामचन्द्र प्रकट भए सो आपके प्रसादतैं मैं सर्व वर्णन सुना चाहूं हूं। ऐसा जब श्रेणिकने प्रश्न किया तब गणधरदेव कृपा कर कहते भए— कैसे हैं गणधरदेव ? क्षीरसागरके जल समान निर्मल है चित्त जिनका, हे श्रेणिक! कालनामा द्रव्य है सो अनन्त समय है, जाको आदि अंत नाहीं, ताकी संख्या कल्पनारूप दृष्टांतसे पल्यसागरादि रूप महामुनि कहै हैं। एक महायोजन प्रमाण लम्बा चौड़ा ऊंचा गोल गर्त (गढ्ढा) उत्कृष्ट भोगभूमिका तत्कालका जन्म्याहुवा भेडका बच्चा, ताके रोमके अग्रभागतैं भरिए, सो गर्त घनागाढ़ा भरिए और सौ वर्ष गए एक रोम काढ़े सो व्योहारपल्य कहिए। सो यह कल्पना दृष्टांत मात्र है, काहूने ऐसा किया नाहीं। यातैं असंख्यात गुणी उद्धारपल्य है। इससे संख्यातगुणी अद्धापल्य है। ऐसी दसकोटाकोटि पल्य जाय तदि एक सागर कहिए और दश

कोटाकोटि सागर जाय तब एक अवसर्पिणीकाल कहिए और दसकोटाकोटि सागरकी एक उत्सर्पिणी और बीसकोटाकोटि सागरका कल्पकाल कहिए। जैसैं एक मासमें शुक्लपक्ष और कृष्णपक्ष ये दोय वर्तें तैसैं एक कल्पकालविषै एक अवसर्पणी और एक उत्सर्पिणी ये दोय वर्तैं। इनके प्रत्येक २ छह छह काल हैं तिनमें प्रथम सुखमासुखमाकाल चार कोटाकोटि सागरका है, दूजा सुखमाकाल तीन कोटाकोटि सागरका है, तीजा सुखमा दुखमा काल दो कोटाकोटि सागरका है, और चौथा दुखमासुखमाकाल बयालीसहजार वर्ष घाट एक कोटाकोटि सागरका है, पंचमा दुःखमाकाल इक्कीस हजार वर्षका है, छठा दुःखमादुःखमाकाल, सो भी इक्कीस हजार वर्षका है। यह अवसर्पणीकालकी रीति कही। प्रथमकालसे लेय छठे काल पर्यंत आयुआदि सब घटती गई और इससे उलटी जो उत्सर्पणी उसमें फिर छठेसे लेकर पहिले पर्यंत आयु काय बल पराक्रम बढ़ते गए। यह कालचक्रकी रचना जाननी।

अथानन्तर जब तीजे कालमें पल्यका आठवाँ भाग बाकी रहा तब चौदह कुलकर भए। तिनका कथन पूर्व कर आए हैं। चौदहवें नाभिराजा तिनके आदि तीर्थंकर ऋषभदेव पुत्र भए। तिनको मोक्ष गए पीछे पचासलाख कोटिसागर गए श्री अजितनाथ द्वितीय तीर्थंकर भए। उनके पीछे तीसलाख कोटि सागर गये श्रीसंभवनाथ भये। ता पीछे दशलाख कोटि सागर गये श्री अभिनन्दन भये। ता पीछें नव लाख कोटिसागर गये श्रीसुमतिनाथ भये। ता पीछें नव्वे हजार कोटिसागर गये श्री पद्मप्रभ भये। ता पीछे नव हजार कोटिसागर गये श्रीसुपार्श्वनाथ भये। ता पीछे नौसौ कोटिसागर गये श्रीचन्द्रप्रभ भये। ता पीछे नव्वे कोटिसागर गये श्री पुष्पदन्त भये। ता पीछे नव कोटिसागर गये श्रीशीतलनाथ भए। ता पीछे सौसागर घाट कोटिसागर गये श्रेयांसनाथ भये। ता पीछे चव्वन सागर गये श्रीवासुपूज्य भये। ता पीछे तीससागर गये श्रीविमलनाथ भये। ता पीछे नवसागर गये श्रीअनन्तनाथ भये। ता पीछे चारसागर गये श्रीधर्मनाथ भये। ता पीछे पौन पल्यघाट तीनसागर गये श्रीशांतिनाथ भये। ता पीछे आधापल्य गये श्रीकुन्थुनाथ भये। ता पीछे हजारकोटि वर्षघाट पाव पल्य गये श्रीअरनाथ

भये । उनके पीछे पैंसठलाख चोरासी हजार वर्षघाट हजार कोटिवर्ष गये श्रीमल्लिनाथ भये । ता पीछे चौवनलाखवर्ष गये श्रीमुनिसुव्रतनाथ भए । उनके पीछे छहलाख वर्ष गये श्रीनमिनाथ भए । उनके पीछे पांचलाख वर्षगए श्रीनेमिनाथ भये । उनके पीछे पौने चौरासी हजार वर्ष गए श्रीपार्श्वनाथ भए । उनके पीछे अढ़ाई सौ वर्ष गए श्रीवर्द्धमान भए । जब वर्द्धमानस्वामी मोक्षको प्राप्त होवेंगे तब चौथेकालके तीन वर्ष साढ़े आठ महीना बाकी रहेंगे । और इतने ही तीजेकालके बाकी रहे थे तब श्रीऋषभदेव मुक्ति पधारे । हे श्रेणिक ! धर्मचक्रके अधिपति श्रीवर्द्धमान इन्द्रके मुकुटके रत्ननिकी जो ज्योति, सोई भया जल, ताकरि धोए हैं चरणयुगल जिनके, सो तिनको मोक्षपधारे पीछे पांचवांकाल लगेगा । जामें देवनिका आगमन नाहीं और अतिशयके धारक मुनि नाहीं, केवलज्ञानकी उत्पत्ति नाहीं, चक्रवर्ती बलभद्र और नारायणकी उत्पत्ति नाहीं, तुम सारिखे न्यायवान राजा नाहीं, अनीतिकारी राजा होवेंगे और प्रजाके लोक दुष्ट, महा ढीठ, परधन हरवेको उद्यमी होवेंगे, शील रहित, व्रत रहित, महाक्लेश व्याधिके भरे, मिथ्यादृष्टि घोरकर्मी होवेंगे और अतिवृष्टि अनावृष्टि, टिड्डी, सूवा, मूषक, अपनी सेना और पराई सेनायें जो सप्तईतियें, तिनका भय सदाही होयगा । मोहरूप मदिराके माते, रागद्वेषके भरे, भौंहको टेढा करनहारे, क्रूरदृष्टि, पापी, महामानी, कुटिलजीव होवेंगे । कुवचनके बोलनहारे, क्रूरजीव, धनके लोभी पृथ्वीपर ऐसे विचरेंगे जैसे रात्रिविषै घूघू विचरैं । और जैसैं पटवीजना चमत्कारकरैं तैसैं थोड़े ही दिन चमत्कार करेंगे । वे मूर्खदुर्जन जिनधर्मसैं पराङ्मुख कुधर्मविषै आप प्रवतैंगे, औरोंको प्रवर्तावेंगे । परोपकार रहित पराए कार्योंमें निरुद्यमी आप डूबेंगे औरोंको डुबोवेंगे । वे दुर्गतिगामी आपको महंत मानेंगे । ते क्रूरकर्म चंडाल मदोन्मत्त अनर्थंकर माना है हर्ष जिन्होंने, मोहरूप अंधकारकरि अंधे, कलिकालके प्रभावतैं हिंसारूप जे कुशास्त्र वेई भए कुठार, तिनकरि अज्ञानी जीवरूप वृक्षनिकों काटेंगे । पंचम कालके आदिमें मनुष्योंका सात हाथका ऊंचा शरीर होयगा और एकसौ बीस वर्षकी उत्कृष्ट आयु होयगी । फिर पंचमकालके अन्त दोय हाथका शरीर और बीस वर्षकी आयु उत्कृष्ट रहैगी ।

बहुरि छठेके अन्त एक हाथका शरीर, उत्कृष्ट सोला वर्षकी आयु रहेगी। वे छठे कालके मनुष्य महा विरूप, मांसाहारी, महादुःखी, पापक्रियारत, महारोगी, तिर्यंच समान महा अज्ञानी होवेंगे। न कोई सम्बन्ध, न कोई व्यवहार, न कोई ठाकुर, न कोई चाकर, न राजा न प्रजा, न धन न घर, न सुख, महादुखी होवेंगे। अन्याय कामके सेवन हारे धर्मके, आचारसे शून्य, महापापके स्वरूप होहिंगे। जैसें कृष्णपक्षमें चन्द्रमाकी कला घटै और शुक्लपक्षमें बढ़ै तैसें अवसर्पिणीकालमें घटै, उत्सर्पिणीविषै बढ़े। और जैसे दक्षिणायणमें दिन घटै और उत्तरायणमें बढ़े तैसें अवसर्पिणी उत्सर्पिणीविषै हानि वृद्धि जाननी। ये तीर्थंकरनिका अंतराल तोहि कह्या।

हे श्रेणिक! अब तू तीर्थंकरनिके शरीरकी ऊंचाईका कथन सुन! प्रथम तीर्थंकरका शरीर पांच सौधनुष ५००, दूजेका साढ़े चारसौ ४५०, तीजेका चारसौ धनुष ४००, चौथेका साढ़ेतीनसै धनुष ३५०, पांचवेंका तीनसै धनुष ३००, छठेका ढाईसौ धनुष २५०, सातवेंका दो सौ धनुष २००, आठवेंका डेढ़सो धनुष १५०, नौवेंका सौ धनुष १००, दसवेंका नव्वे धनुष ९०, ग्यारहवेंका अस्सी धनुष ८०, बारहवेंका सत्तर धनुष ७०, तेरहवेंका साठ धनुष ६०, चौदहवेंका पच्चास धनुष ५०, पन्द्रहवेंका पैंतालीस धनुष ४५, सोलहवेंका चालीस धनुष ४०, सत्रहवेंका पैंतीस धनुष ३५, अठारवेंका तीस धनुष ३०, उन्नीसवेंका पच्चीस धनुष २५, बीसवेंका बीस धनुष २०, इक्कीसवेंका पन्द्रह धनुष १५, बाईसवेंका दस धनुष १०, तेईसवेंका नौहाथ ९, चौवीसवेंका सात हाथ ७।

अब आगें इन चौवीस तीर्थंकरनिकी आयुका प्रमाण कहिए हैं। प्रथमका चौरासी लाख पूर्व (चौरासी लाख वर्षका एक पूर्वांग और चौरासी लाख पूर्वांगका एक पूर्व होय है), और दूजेका बहत्तर लाखपूर्व, तीजेका साथलाखपूर्व, चौथेका पचासलाख पूर्व, पांचवेंका चालीसलाखपूर्व, छठेका तीसलाख पूर्व, सातवेंका बीसलाखपूर्व, आठवेंका दसलाखपूर्व, नवमेंका दोय लाखपूर्व, दसवेंका लाखपूर्व, ग्यारवेंका चौरासीलाख वर्ष, बारवेंका बहत्तरलाख वर्ष, तेरवेंका साठलाख वर्ष, चौदवेंका तीसलाख वर्ष, पन्द्रवें

का दस लाख वर्ष, सोलवेंका लाख वर्ष, सत्रवेंका पचानवै हजार वर्ष, अठारवेंका चौरासी हजार वर्ष, उन्नीसवेंका पचावनहजार वर्ष, बीसवेंका तीसहजार वर्ष, इक्कीसवेंका दसहजार वर्ष, बाईसवेंका हजार वर्ष, तेईसवेंका सौ वर्ष, चौबीसवेंका बहत्तर वर्षका आयु प्रमाण जानना।

अथानन्तर ऋषभदेवके पहिले जे चौदह कुलकर भए तिनके आयुकायका वर्णन करिए हैं—प्रथम कुलकरकी काय अठारहसौ धनुष, दूसरेकी तेरासौ धनुष, तीसरेकी आठसौ धनुष, चौथेकी सातसौ पिच्चत्तर धनुष, पांचवेंकी साढ़े सातसौ धनुष, छठेकी सवा सातसौ धनुष, सातवेंकी सातसौ धनुष, आठवेंकी पौने सातसौ धनुष, नवमेंकी साढ़े छैसौ धनुष, दसवेंकी सवाछैसौ धनुष, ग्यारवेंकी छैसौ धनुष, बारवेंकी पौने छैसौ धनुष, तेरवेंकी साढ़े पांचसौ धनुष, चौदहवेंकी सवा पांच सो धनुष।

अब इन कुलकरनिकी आयुका वर्णन करै हैं—पहिलेकी आयु पल्यका दसमा भाग, दूजेकी पल्यका सौवां भाग, तीजेकी पल्यका हजारवां भाग, चौथेकी पल्यका दसहजारवां भाग, पांचमेंकी पल्यका लाखवां भाग, छठेकी पल्यका दसलाखवां भाग, सातवेंकी पल्यका कोडवां भाग, आठवेंकी पल्यका दस कोडवां भाग, नौवमेंकी पल्यका सौकोडवां भाग, दसवेंकी पल्यका हजार कोडवां भाग, ग्यारवेंकी पल्य का दस हजार कोडवां भाग, बारवेंकी पल्यका लाख कोडवां भाग, तेरवेकी पल्यका दसलाख कोडवां भाग, चौदहवेकी कोटि पूर्वकी आयु भई।

अथानन्तर हे श्रेणिक! अब तू बारह जे चक्रवर्ती तिनकी वार्ता सुन। प्रथम चक्रवर्ती भरत, श्री ऋषभदेवके यशस्वती राणी, ताकूं सुनन्दा भी कहै है ताके पुत्र, या भरतक्षेत्रका अधिपति। ते पूर्व-भवविषै पुण्डरीकनी नगरीविषै पीठ नाम राजकुमार थे। वे कुशसेन स्वामीके शिष्य होय मुनिव्रत धर सर्वार्थसिद्धि गए। तहांसैं चायकर षट्खंडका राज्य कर फिर मुनि होय, अंतर्मुहूर्तमें केवलज्ञान उपजाय, निर्वाणको प्राप्त भए। फिर पृथ्वीपुर नामा नगरविषै राजा विजयतेज, यशोधर नामा मुनिके निकट जिनदीक्षा धर विजयनाम विमान गए। वहांसे चयकर अयोध्याविषै राजा विजय, राणी सुमंगला,

तिनके पुत्र सगर नाम द्वितीय चक्रवर्ती भए। तें महा भोग भोगकर इन्द्रसमान, देव—विद्याधरनिकरि धारिए हैं आज्ञा जिनकी, ते पुत्रनिके शोककरि राज्यका त्यागकर अजितनाथके समोसरणमें मुनि होय, केवलज्ञान उपजाय,सिद्ध भए। और पुंडरीकनी नगरीविषै एक राजा शशिप्रभ वह विमलस्वामीका शिष्य होय ग्रैवेयक गये। वहांसे चयकर श्रावस्ती नगरीमें राजा सुमित्र, राणी भद्रवती, तिनके पुत्र मघवा नाम तृतीय चक्रवर्ती भए। लक्ष्मीरूप बेलके लिपटनेको वृक्ष तें श्रीधर्मनाथके पीछे शांतिनाथके उपजने से पहिले भए। समाधान रूप जिनमुद्राधार सौधर्मस्वर्ग गए। फिर चौथे चक्रवर्ती जो श्रीसनत्कुमार भए, तिनकी गौतमस्वामीने बहुत बड़ाई करी। तब राजा श्रेणिक पूछते भए—हे प्रभो! वे किस पुण्य से ऐसे रूपवान् भए। तब उनका चरित्र संक्षेपताकरि गणधर कहते भए। कैसा है सनत्कुमारका चरित्र? जो सौवर्षमें भी कोऊ कहिवेको समर्थ नाहीं। यह जीव जबलग जैनधर्मको नाहीं प्राप्त होय है तब-लग तिर्यंच नारकी कुमानुष कुदेव कुगतिमें दुःख भोगवै है। जीवोंने अनंतभव किए सो कहांलों कहिए। परन्तु एक एक भव कहिए हैं। एक गोवर्धन नाम ग्राम, वहाँ भले भले मनुष्य बसैं। तहां एक जिन-दत्त नामा श्रावक बड़ा गृहस्थ, जैसैं सर्व जलस्थानकोंसे सागर शिरोमणि है और सर्व गिरनिमें सुमेरु, और सर्व ग्रहोंविषै सूर्य, तृणोंमें इक्षु, बेलोंमें नागरबेल, वृक्षोंमें हरिचंदन प्रशंसायोग्य है तैसैं कुलोंमें श्रावकका कुल सर्वोत्कृष्ट आचारकर पूजनीक है, सुगतिका कारण है। सो जिनदत्त नामा श्रावक गुणरूप आभूषणनिकरि मंडित श्रावकके व्रत पाल उत्तम गति गया। और ताकी स्त्री विनयवती महा पतिव्रता श्रावकके व्रत पालनेहारी सो अपने घरकी जगहमें भगवानका चैत्यालय बनाया, सकल द्रव्य तहां लगाया और आर्या होय महातपकर स्वर्गमें प्राप्त भई। अर ताही ग्रामविषै एक और हेमबाहु नामा गृहस्थ, आस्तिक, दुराचारसे रहित, सो विनयवतीका कराया जो जिनमंदिर ताकी भक्तिकरि जयदेव भया। सो चातुर्विधसंघकी सेवामें सावधान, सम्यग्दृष्टि, जिनवंदनामें तत्पर, सो चयकर मनुष्य भया। बहुरि देव बहुरि मनुष्य। या भांति भवधर महापुरी नगरीविषै सुप्रभ नामा राजा। ताके तिलक

सुन्दरीरानी गुणरूप आभूषणकी मंजूषा, ताके धर्मरुचि नामा पुत्र भया। सो राज्य तज सुप्रभनामा पिता जो मुनि ताका शिष्य होय, मुनिव्रत अंगीकार करता भया। पंच महाव्रत, पंच समिति, तीन गुप्तिका प्रतिपालक, आत्मध्यानी, गुरुसेवामें अत्यन्त तत्पर, अपनी देहविषै अत्यन्त निस्पृह, जीवदया का धारक, मन इन्द्रियोंका जीतनहारा, शीलका सुमेरु, शंका आदि जे दोष तिनसे अतिदूर, साधुओं का वैयावृत करनहारा, सो समाधिमरणकर चौथे देवलोकविषै गया। तहां सुख भोगता भया। तहां से चयकर नागपुरमें राजा विजय, राणी सहदेवी, तिनके सनत्कुमार नामा पुत्र चौथा चक्रवर्ती भया। छहखण्ड पृथ्वीमें जाकी आज्ञा प्रवरती, सो महारूपवान। एकदिवस सौधर्मइन्द्रने इनके रूपकी अति प्रशंसा करी सो रूप देखनेको देव आए। सो प्रच्छन्न आयकर चक्रवर्तीका रूप देख्या। ता समय चक्र-वर्तीने कुस्तीका अभ्यास किया था, सो शरीर रजकर धूसरा होय रहा था, अर सुगन्ध उबटना लगाया था, अर स्नानकी एक धोती ही पहिने नानाप्रकारके जे सुगन्ध जल तिनसे पूर्ण नानाप्रकारके रत्ननिके कलश, तिनके मध्य स्नानके आसनपर विराजे हुते। सो देव रूपको देख आश्चर्यको प्राप्त भए। पर-स्पर कहते भए—जैसा इन्द्रने वर्णन किया तैसा ही है यह मनुष्यका रूप, देवोंके चित्तको मोहित करण-हारा है। बहुरि चक्रवर्ती स्नानकर वस्त्राभरण पहर सिंहासन पर आय विराजे। रत्नाचलके शिखर समान है ज्योति जाकी। अर वह देव प्रकट होयकर द्वारे आय ठाढे रहे। अर द्वारपालसे हाथ जोड़ चक्रवर्तीकों कहलाया जो स्वर्गलोकके देव तिहारा रूप देखने आए हैं। तब चक्रवर्ती अद्भुत श्रृंगार किए विराजे हुते ही, तब देवोंके आयबेकर विशेष शोभा करी, तिनको बुलाया। ते आय चक्रवर्तीका रूप देख माथा धुनते भए। अर कहते भए—एकक्षण पहिले हमने स्नानके समय जैसा देखा था तैसा अब नाहीं। मनुष्योंके शरीरकी शोभा क्षणभंगुर है धिक्कार है। इस असार जगतकी मायाको। प्रथम दर्शन में जो रूप यौवनकी अद्भुतता हुती सो क्षणमात्रमें ऐसे विलाय गई जैसें बिजुली चमत्कारकर क्षणमात्रमें विलाय जाय है। ये देवनिके वचन सनत्कुमार सुन, रूप अर लक्ष्मीको क्षणभंगुर जान, वीतराग भावधर,

महामुनि होय, महातप करते भए। महाऋद्धि उपजी। पुनि कर्मनिर्जरा निमित्त महारोगकी परीषह सहते भए, महाध्यानारूढ़ होय समाधिमरण कर सनत्कुमार स्वर्ग सिधारे। वे शांतिनाथके पहले अर मघवा तीजा चक्रवर्ती ताके पीछे भए। अर पुण्डरीकनी नगरीविषै राजा मेघरथ, वह अपने पिता घनरथ तीर्थंकरके शिष्य मुनि होय सर्वार्थसिद्धि को पधारे। तहांतै चयकर हस्तनागपुरमें राजा विश्वसेन, राणी ऐरा, तिनके शांतिनाथ नामा सोलहवें तीर्थंकर, अर पंचम चक्रवर्ती भए। जगतकूं शांतिके करणहारे, जिनका जन्म कल्याणक सुमेरु पर्वतपर इन्द्रने किया, बहुरि षट्खण्डके भोक्ता भए। तृण समान राज्यको जान तजा, मुनिव्रत धर मोक्ष गए। बहुरि कुंथुनाथ छठे चक्रवर्ती सत्रहवें तीर्थंकर, अरनाथ सातवें चक्रवर्ती अठारवेंतीर्थंकर ते मुनि होय निर्वाण पधारे सो तिनका वर्णन तीर्थंकरोंके कथनमें पहिले कहा ही है। अर धान्यपुर नगर में राजा कनकप्रभ, सो विचित्रगुप्त स्वामीके शिष्य मुनि होय, स्वर्ग गए। तहांतै चयकर अयोध्या नगरी विषै राजा कीर्तिवीर्य, राणी तारा, तिनके सुभूमि नामा अष्टम चक्रवर्ती भए। जाकरि यह भूमि शोभायमान भई। तिनके पिताका मारणहारा जो परशुराम तानैं क्षत्री मारे हुते, अर तिनके सिर थम्भनविषै चिनाए हुते, सो सुभूमि अतिथिका भेषकर परशुरामके भोजनको आए। परशुरामने निमित्तज्ञानीके बचनतैं क्षत्रीनिके दांत पात्रमें मेलि सुभूमिको दिखाये, तदि दांत क्षीरका रूप होय परणये, अर भोजनका पात्र चक्र होय गया। ता करि परशुरामको मारया। परशुरामने क्षत्री मारे, पृथ्वी निक्षत्री करी हुती सो सुभूमि परशुरामको मार द्विजवर्गतैं द्वेष किया। पृथ्वी अब्राह्मण करी। जैसे परशुरामके राज्यमें क्षत्रीकुल छिपाय रहे हुते तैसैं याके राज्यमें विप्र अपने कुल छिपाए रहे। सो स्वामी अरनाथके मुक्ति गए पीछे अर मल्लिनाथके होयबे पहिले सुभूमि भए। अति भोगासक्त निर्दयपरिणामी अव्रती मरकर सातवेंनरक गए। अर वीतशोका नगरी, ताविषै राजा चित्तसुप्रभ स्वामीके शिष्य मुनि होय ब्रह्मस्वर्ग गए। तहांतै चयकर हस्तनागपुर विषै राजा पद्मरथ राणी मयूरी, तिनके महापद्म नामा नौमे चक्रवर्ती भए। षट्खंड पृथ्वीके भोक्ता, तिनकूं आठ पुत्री महारूपवंती, सो रूपके अतिशयकरि गर्वित, तिनके विवाहकी इच्छा

नाहीं । सो विद्याधर तिनैं हर ले गये । सो चक्रवर्तीने छुड़ाय मंगाई । ये आठों ही कन्या आर्यिकाके व्रत धर समाधिमरणकर देवलोकमें प्राप्त भई । अर विद्याधर इनको लेगए हुते तेभी विरक्त होय मुनिव्रत धर आत्मकल्याण करते भए । यह वृत्तांत देख महापद्म चक्रवर्ती पद्मनामा पुत्रको राज देय विष्णु नामा पुत्र सहित वैरागी भए । महातपकर केवल उपजाय मोक्षको प्राप्त भए । अरनाथ स्वामीके मुक्ति गए पीछे अर मल्लिनाथके उपजनेसे पहिले सुभूमिके पीछे भए । अर विजय नामा नगरविषैं राजा महेन्द्रदत्त, ते अभिनन्दन स्वामीके शिष्य होय महेंद्र स्वर्गको गए । तहांसे चयकर कांपिलनगरमें राजा हरिकेतु ताकी राणी विप्रा, तिनके हरिषेण नामा दसवें चक्रवर्ती भए । तिननें सर्व भरतक्षेत्रको पृथ्वी चैत्यालयनिकरि मंडित करी, अर मुनिसुव्रतनाथ स्वामीके तीर्थमें मुनि होय सिद्धपदकू प्राप्त भए । अर राजपुर नामा नगरमें राजा जो असीकांत थे वह सुधर्ममित्र स्वामीके शिष्य मुनि होय ब्रह्मस्वर्ग गये । तहांतैं चयकर राजा विजय, राणी यशोवती तिनके जयसेन नामा ग्यारवें चक्रवर्ती भए । ते राज्य तज दिगम्बरी दीक्षा धर रत्नत्रयका आराधनकर सिद्धपदको प्राप्त भए । यह श्रीमुनिसुव्रतनाथ स्वामीके मुक्ति गए पीछे नमिनाथ स्वामीके अंतरालमें भये । अर काशीपुरीमें राजा सम्भूत, ते स्वतंत्र लिंग स्वामीके शिष्य मुनि होय पद्मयुगल नामा विमानविषैं देव भए । तहांतैं चयकर कांपिल नगर में राजा ब्रह्मरथ राणी चूला, तिनके ब्रह्मदत्त नामा बारवें चक्रवर्ती भए । ते छै खण्ड पृथ्वीका राज्य कर, मुनिव्रत विना रौद्रध्यानकर सातवें नरक गये । यह श्रीनेमिनाथ स्वामीको मुक्ति गये पीछे पार्श्वनाथ स्वामीके अंतरालमें भए । ये बारह चक्रवर्ती बड़े पुरुष हैं, छै खंड पृथ्वीके नाथ जिनकी आज्ञा देव विद्याधर सब ही मानैं हैं । हे श्रेणिक ! तोहि पुण्य पापका फल प्रत्यक्ष कह्या सो यह कथन सुन कर योग्य कार्य करना, अयोग्य काम न करना । जैसे बटसारी विना कोई मार्गमें चलै तो सुखसू स्थानक नाहीं पहुँचे, तैसैं सुकृत विना परलोकमें सुख न पावै । कैलाशके शिखर समान जे ऊंचे महल तिनमें जो निवास करैं हैं सो सर्व पुण्यरूप वृक्षका फल है । अर जहां शीत उष्ण पवन पानीकी बाधा

ऐसी कुटियोंमें बसै हैं, दलिद्ररूप कीचमें फंसे है, सो सर्व अधर्मरूपवृक्ष का फल है। विंध्याचल पर्वतके शिखर समान ऊंचे जे गजराज उनपर चढ़कर सेनासहित चलै हैं, चंवर ढुरै हैं, सो सर्व पुण्यरूप वृक्षका फल है। जे महा तुरंगनिपर चमर ढुरते अर अनेक असवार पियादे जिनकें चौगिर्द चलैं हैं सो सब पुण्यरूप राजाका चरित्र है। अर देवनिके विमान समान मनोज्ञ जो रथ तिनपर चढ़कर जो मनुष्य गमन करैं हैं सो पुण्यरूप पर्वतके मीठे नीझरने हैं। अर जो फटे मैले कपड़े अर पियादे फिरैं हैं सो सब पाप-रूप वृक्षका फल है। अर जो अमृत सारिखा अन्न स्वर्णके पात्रमें भोजन करैं हैं सो सब धर्म रसायन का फल मुनियोंने कहा है। अर जो देवोंका अधिपति इन्द्र, अर मनुष्योंका अधिपति चक्रवर्ती तिनका पद भव्यजीव पावै हैं सो सब जीवदयारूप बेलका फल है। कैसे हैं भव्यजीव ? कर्मरूप कुंजरको शार्दूल समान हैं। अर राम कहिए बलभद्र, केशव कहिए नारायण तिनके पद जो भव्यजीव पावै हैं सो सब धर्मका फल है।

हे श्रेणिक ! आगे वासुदेवोंका वर्णन करिए है सो सुनो—या अवसर्पणीकालके भरतक्षेत्रके नव वासुदेव हैं। प्रथम ही इनके पूर्वभवकी नगरियोंके नाम सुनो—हस्तिनागपुर १, अयोध्या २, श्रावस्ती ३, कौशांबी ४, पोदनापुर ५, शैलनगर ६, सिंहपुर ७, कौशांबी ८, हस्तनागपुर ९। ये नव ही नगर कैसे हैं ? सर्व ही द्रव्यके भरे हैं अर ईतिभीतिरहित हैं। अब वासुदेवोंके पूर्व भवके नाम सुनो—विश्व-नन्दी १, पर्वत २, धनमित्र ३, सागरदत्त ४, विकट ५, प्रियमित्र ६, मानचेष्टित ७, पुनर्वसु ८, गंग-देव जिसे निर्णामिक भी कहे हैं। ९। ये नव ही वासुदेवोंके जीव पूर्वभवविषै विरूप दौर्भाग्य राज्य-भ्रष्ट होय हैं। बहुरि मुनि होय महा तप करै हैं। बहुरि निदानके योगतैं स्वर्गविषै देव होय हैं। तहांतैं चयकर बलभद्रके लघुभ्राता वासुदेव होय हैं। तातैं तपतैं निदान करना ज्ञानियोंको वर्जित है। निदान नाम भोगाभिलाषका है, सो महा भयानक दुःख देनेको प्रवीण हैं। आगे वासुदेवोंके पूर्वभवके गुरुवों के नाम सुनो, जिनपै इन्होंने मुनिव्रत आदरे—संभूत १, सुभद्र २, वसुदर्शन ३, श्रेयांस ४, भूतिसंग ५,

वसुभूति ६, घोषसेन ७, परांभोधि ८, द्रुमसेन ९। अब जिस जिस स्वर्गतैं आय वासुदेव भए तिनके नाम सुनो–महाशुक्र १, प्राणत २, लांतव ३, सहस्रार ४, ब्रह्म ५, महेंद्र ६, सौधर्म ७, सनत्कुमार ८, महाशुक्र ९। आगे वासुदेवोंकी जन्मपुरियोंके नाम सुनो–पोदनापुर १, द्वापुर २, हस्तनागपुर ३, बहुरि हस्तनागपुर ४, चक्रपुर ५, कुशाग्रपुर ६, मिथिलापुर ७, अयोध्या ८, मथुरा ९। ये वासुदेवोंके उत्पत्तिके नगर हैं। कैसे हैं नगर ? समस्त धन धान्य कर पूर्ण महाउत्सवके भरे हैं। आगैं वासुदेवोंके पिताके नाम सुनो–प्रजापति १, ब्रह्मभूति २, रौद्रनन्द ३, सौम ४, प्रख्यात ५, शिवाकर ६, सममूर्धाग्निनाद ७, दशरथ ८, वासुदेव ९। बहुरि इन नव वासुदेवोंकी माताओंके नाम सुनो–मृगावती १, माधवी २, पृथिवी ३, सीता ४, अंबिका ५, लक्ष्मी ६, केशिनी ७, सुमित्रा ८, देवकी ९। ये नव ही वासुदेवोंकी नव माता। कैसी हैं ? अतिरूपगुणनिकरि मंडित महा सौभाग्यवती जिनमती हैं। आगैं नव वासुदेवोंके नाम सुनो–त्रिपृष्ट १, द्विपृष्ट २, स्वयंभू ३, पुरुषोत्तम ४, पुरुषसिंह ५, पुण्डरीक ६, दत्त ७, लक्ष्मण ८, कृष्ण ९। आगे नव ही वासुदेवोंकी पटराणियोंके नाम सुनो–सुप्रभा १, रूपिणी २, प्रभवा ३, मनोहरा ४, सुनेत्रा ५, विमलसुन्दरी ६, आनन्दवती ७, प्रभावती ८, रुक्मिणी ९। ये वासुदेवोंकी मुख्य पटराणी। कैसी हैं ? महागुण कलानिपुण धर्मवती व्रतवती हैं।

अथानन्तर अब नव बलभद्रोंका वर्णन सुनो। सो पहिले नव ही बलभद्रोंकी पूर्वजन्मकी पुरियोंके नाम कहे हैं–पुण्डरीकनी १, पृथिवी २, आनंदपुरी ३, नंदपुरी ४, वीतशोका ५, विजयपुर ६, सुसीमा ७, क्षेमा ८, हस्तनागपुर ९। और बलभद्रोंके नाम सुनो–बल १, मारुतवेग २, नंदिमित्र ३, महाबल ४, पुरुषर्षभ ५, सुदर्शन ६, वसुन्धर ७, श्रीचन्द्र ८, सखिसंज्ञ ९। अब इनके पूर्वभवके गुरुवोंके नाम सुनो जिनपै इन्होंने जिनदीक्षा आदरी :–अमृतार १, महासुव्रत २, सुव्रत ३, वृषभ ४, प्रजापाल ५, दमवर ६, सुधर्म ७, अर्णव ८, विद्रुम ९। बहुरि नव बलदेव जिन जिन देवलोकनितैं आए तिनके नाम सुनहु–तीन बलभद्र तो अनुत्तरविमानतैं आए, अर तीन सहस्रार स्वर्गतैं आए, दो ब्रह्मस्वर्गतैं

आए, अर एक महाशुक्रतें आया। अब इन नव बलभद्रोंकी मातानिके नाम सुनो, क्योंकि पिता तो बलभद्रोंके और नारायणोंके एक ही होय हैं। भद्राभोजा १, सुभद्रा २, सुवेषा ३, सुदर्शना ४, सुप्रभा ५, विजया ६, वैजयंती ७, अपराजिता जाहि कौशल्या भी कहे हैं ८, रोहिणी ९। नव बलभद्र, नव नारायण, तिनमें पांच बलभद्र, पांच नारायण तो श्रेयांसनाथ स्वामीके समय आदि ले धर्मनाथ स्वामीके समय पर्यंत भए और छठे और सातवें अरनाथ स्वामीको मुक्ति गए पीछे मल्लिनाथ स्वामीके पहिले भए और अष्टम बलभद्र वासुदेव मुनिसुव्रतनाथ स्वामीके मुक्ति गए पीछे नेमिनाथ स्वामीके समयके पहिले भए। अर नवमें श्रीनेमिनाथके काकाके बेटे भाई महाजिनभक्त अद्‌भुत क्रियाके धारणहारे भए। अब इनके नाम सुनहु–अचल १, विजय २, भद्र ३, सुप्रभ ४, सुदर्शन ५, नंदिमित्र (आनंद) ६, नन्दिषेण (नन्दन) ७, रामचन्द्र ८, पद्‌म ९। आगें जिन महामुनियोंपै बलभद्रोंने दीक्षा धरी तिनके नाम कहिए हैं–सुवर्णकुम्भ १, सत्यकीर्ति २, सुधर्म ३, मृगांक ४, श्रुतिकीर्ति ५, सुमित्र ६, भवनश्रुत ७, सुव्रत ८, सिद्धार्थ ९। यह बलभद्रोंके गुरुवोंके नाम कहे। महातपको धारकरि कर्मनिर्जराके करणहारे, तीन लोकमें प्रकट है कीर्ति जिनकी, नव बलभद्रोंमें आठ तो कर्मरूप वनको भस्म कर मोक्ष प्राप्त भए। कैसा है संसार वन? आकुलताको प्राप्त भए हैं नानाप्रकारकी व्याधिकर पीडित प्राणी जहां, बहुरि वह वन कालरूप जो व्याघ्र ताकरि अति भयानक है। अर कैसा है यह वन? अनंत जन्मरूप जो कंटकवृक्ष तिनका है समूह जहाँ। विजय बलभद्र आदि श्री रामचन्द्र पर्यंत आठ तो सिद्ध भए और पद्‌मनामा जो नवमां बलभद्र वह ब्रह्मस्वर्गमें महाऋद्धिका धारी देव भया। ३१५

अब नारायणोंके शत्रु जे प्रतिनारायण तिनके नाम सुनो–अश्वग्रीव १, तारक २, मेरक ३, मधुकैटभ ४, निशुंभ ५, बलि ६, प्रह्लाद ७, रावण ८, जरासिंध ९। अब इन प्रतिनारायणोंकी राजधानियोंका नाम सुनो–अलका १, विजयपुर २, नंदनपुर ३, पृथ्वीपुर ४, हरिपुर ५, सूर्यपुर ६, सिंहपुर ७, लंका ८, राजगृही ९। ये नौ ही नगर कैसे हैं? महा रत्न जडित, अति देदीप्यमान, स्वर्गलोक

समान हैं ।

हे श्रेणिक ! प्रथम ही श्रीजिनेन्द्रदेवका चरित्र तुझे कह्या, बहुरि भरत आदि चक्रवर्तियोंका कथन कह्या और नारायण बलभद्र तिनका कथन कह्या, इनके पूर्व जन्म सकल वृत्तांत कहे, अर नव ही प्रतिनारायण तिनके नाम कहे । ये त्रेसठ शलाकाके पुरुष हैं । तिनमें कईएक पुरुष तो जिनभाषित तपकरि ताहि भवमें मोक्षकों प्राप्त होय हैं, कईएक स्वर्ग प्राप्त होय पीछे मोक्ष पावै हैं, अर कईएक जो वैराग्य नाहीं धरैं हैं चक्री तथा हरि प्रतिहरि ते कईएक भव धर फिर तपकर मोक्षकों प्राप्त होय हैं । ये संसारके प्राणी नानाप्रकारके पाप तिनकरि मलीन, मोहरूप सागरके भ्रमणमें मग्न, महा दुःखरूप चार गति तिनमें भ्रमणकर तप्तायमान सदा व्याकुल होय हैं । ऐसा जानकर जे निकटसंसारी भव्यजीव हैं ते संसारका भ्रमण नाहीं चाहे हैं, मोह तिमिरका अंतकर सूर्यसमान केवलज्ञानका प्रकाश करैं हैं ।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महा पद्मपुराण संस्कृत ग्रन्थ, ताकी भाषा वचनिकाविषें चौदह कुलकर चौबीस तीर्थङ्कर, बारह चक्रवर्ती, नव नारायण, नव प्रतिनारायण, नव बलभद्र, ग्यारह रुद्र, इनके माता पिता पूर्वभव नगरीनिके नाम, पूर्व गुरु कथन नाम वर्णन करने वाला बीसवां पर्व पूर्ण भया ॥ २० ॥

अथानन्तर गौतमस्वामी कहे हैं—हे मगधाधिपति ! आगैं बलभद्र जो श्रीरामचन्द्र, तिनका सम्बन्ध कहिए हैं, सो सुनहु, अर राजनिके वंश अर महा पुरुषनिकी उत्पत्ति, तिनका कथन कहिए हैं सो उरमें धारहु । भगवान दशम तीर्थंकर जे शीतलनाथस्वामी तिनको मोक्ष गये पीछे कौशांबी नगरमें एक राजा सुमुख भया, अर ताही नगरमें एक श्रेष्ठी वीरक, ताकी स्त्री वनमाला, सो अज्ञानके उदयतैं राजा सुमुखने घरमें राखी । फिर विवेकको प्राप्त होय मुनियोंको दान दिया । सो मरकर विद्याधर और वह वनमाला विद्याधरी भई, सो ता विद्याधरने परणी । एक दिवस ये दोनों क्रीड़ा करवेकूं हरिक्षेत्र गए अर वह श्रेष्ठी वीरक वनमालाका पति विरहरूप अग्निकर दग्धायमान सो तपकर देव-

लोकको प्राप्त भया। एक दिवस अवधिकर वह देव अपने बैरी सुमुखके जीवको हरिक्षेत्रविषै क्रीडा करता जान क्रोधकर तहांतै भार्या सहित उठाय लाया, सो या क्षेत्रमें हरि ऐसा नामकरि प्रसिद्ध भया। जाही कारणसे याका कुल हरिवंश कहलाया। ता हरिके महागिरि नामा पुत्र भया, ताके हिमगिरि ताके वसुगिरि, ताके इन्द्रगिरि, ताके रत्नमाल, ताके संभूत, ताके भूतदेव इत्यादि सैकड़ों राजा हरिवंश-विषै भए। ताही हरिवंशविषै कुशाग्र नामा नगर विषै एक राजा सुमित्र जगत्‌विषै प्रसिद्ध भया। कैसा है राजा सुमित्र? भोगोंकर इन्द्रसमान, कांतिकरि जीत्या है चन्द्रमा जाने, अर दीप्तिकर जीत्या है सूर्य, अर प्रतापकर नवाए हैं शत्रु जाने। ताके राणी पद्मावती, कमल सारिखे हैं नेत्र जाके, शुभ लक्षणनिकरि संपूर्ण, अर पूर्ण भये हैं सकल मनोरथ जाके, सो रात्रिविषै मनोहर महलमें सुखरूप सेजपर सूती हुती सो पिछले पहर सोलह स्वप्न देखे—गजराज १, वृषभ २, सिंह ३, लक्ष्मी स्नान करती ४, दोय पुष्पमाला ५, चन्द्रमा ६, सूर्य ७, मच्छ जालमें केलि करते ८, जलका भरा कलश, कमल समूहसे मुंह ढका ९, सरोवर कमल पूर्ण १०, समुद्र ११, सिंहासन रत्न जटित १२, स्वर्गलोक के विमान आकाशतैं आवते देखे १३, अर नागकुमारके विमान पातालतैं निकसते देखे १४, रत्ननिकी राशि १५, निर्धूम अग्नि १६। तब राणी पद्मावती सुबुद्धिवंती जागकरि आश्चर्यरूप भया है चित्त जाका, प्रभात क्रियाकर विनयरूप भरतारकें निकट आई, पतिके सिंहासनपै आय विराजी। फूल रह्या है मुखकमल जाका, महान्यायकी वेत्ता, पतिव्रता हाथ जोड़ नमस्कार कर पति सो स्वप्नोंका फल पूछती भई। तब राजा सुमित्र स्वप्नोंका फल यथार्थ कहते भए। तदि ही रत्नोंकी वर्षा आकाशतैं बरसती भई। साढ़े तीन कोटि रत्न एक संध्यामें बरसे, सो त्रिकाल संध्या वर्षा होती भई। पन्द्रह महीनों लग राजाके घरमें रत्नधारा वर्षी। अर जे षट्कुमारिका ते समस्त परिवार सहित माताकी सेवा करती भई। अर जन्म होते ही भगवानकूं क्षीरसागरके जलकरि इन्द्र लोकपालनिसहित सुमेरु पर्वतपर स्नान करावते भए। अर इन्द्रने भक्तिसथकी पूजा अर स्तुतिकर नमस्कार करी, फिर सुमेरुसैं ल्याय माताकी गोदविषै

पधराए । जब से भगवान माताके गर्भमें आये तबहीतैं लोग अणुव्रतरूप महाव्रतकरि विशेष प्रवर्ते, अर माता व्रतरूप होती भई । तातैं पृथ्वीविषै मुनिसुव्रत कहाए । अंजनगिरि समान है वर्ण जिनका, परन्तु शरीरके तेजसे सूर्यको जीतते भए, अर कांतिकरि चन्द्रमाकूं जीतते भए। सब भोग सामग्री इन्द्रलोकतैं कुबेर लावै । अर जैसा आपको मनुष्यभवमें सुख है तैसा अहमिंद्रनिको नाहीं । अर हाहा हूहू तुंबर नारद विश्वावसु इत्यादि गधर्वनिकी जाति हैं सो सदा निकट गान करा ही करैं । अर किन्नरी जातिकी देवांगना तथा स्वर्गकी अप्सरा नृत्य किया ही करैं, अर वीणा बांसुरी मृदंग आदि वादित्र नाना विधके देव बजाया ही करैं, अर इन्द्र सदा सेवा करैं । अर आप महासुन्दर यौवन अवस्था विषैं विवाह भी करते भए । सो जिनके राणी अद्भुत आवती भई, अनेक गुणकला चातुर्यताकर पूर्ण—हावभाव विलास विभ्रमकी धरणहारी । सो कईएक वर्ष आप राज किया, मनवांछित भोग भोगे । एक दिवस शरदके मेघ विलय होते देख आप प्रतिबोधकों प्राप्त भए । तब लौकांतिक देवनिने आय स्तुति करी । तब सुतव्रनामा पुत्रकूं राज्य देय वैरागी भए । कैसे हैं भगवान ? नहीं है काहू वस्तुकी वांछा जिनके । आप वीतराग भावधर दिव्य स्त्रीरूप जो कमलनिका वन तहांतैं निकसे । कैसा है वह सुन्दर स्त्रीरूप कमल-निका वन ? सुगन्धकरि व्याप्त किया है दशों दिशा का समूह जाने, बहुरि महादिव्य जे सुगन्धादिक तेई हैं मकरंद जामें और सुगन्धताकर भ्रमैं हैं भ्रमरोंके समूह जाविषै, अर हरितमणिकी जे प्रभा, तिनके जो पुंज सोई हैं पत्रनिका समूह जाविषै । अर दांतों की जो पंक्ति, तिनकी जो उज्ज्वल प्रभा, सोई है कमल तंतु जाविषैं । अर नानाप्रकार आभूषणनिके जे नाद तेई भये पक्षी उनके शब्दकरि पूरित है । अर स्तनरूप जे चकवे तिनकर शोभित है, अर उज्ज्वल कीर्तिरूप जे राजहंस तिनकरि मंडित है । सो ऐसे अद्भुत विलास तजकर वैराग्यके अर्थ देवोपुनीत पालकीविषै चढ़कर विपुलनाम उद्यान विषैं गए । कैसे हैं भगवान मुनिसुव्रत ? सर्व राजानिके मुकुटमणि हैं । सो वनमैं पालकीतैं उतरकर अनेक राजानि सहित जिनेश्वरी दीक्षा धरते भए । बेले पारणाकरना यह प्रतिज्ञा आदरी । राजगृहनगरमें वृषभदत्त

महाभक्तिकर श्रेष्ठ अन्न कर पारणा करावता भया। आप भगवान महाशक्तिकरि पूर्ण, कुछ क्षुधा नाहीं, परन्तु आचारांग सूत्रकी आज्ञा प्रमाण अंतरायरहित भोजन करते भए। वृषभदत्त भगवानकूं आहार देय कृतार्थ भया। भगवान कईएक महीना तपकर चम्पाके वृक्षके तले शुक्लध्यानके प्रतापतैं घातिया कर्मनिका नाशकर, केवलज्ञानकूं प्राप्त भए। तब इन्द्रसहित देव आयकर प्रणाम कर स्तुति कर धर्मश्रवण करते भए। आपने यति श्रावकका धर्म विधिपूर्वक वर्णन किया। धर्म श्रवणकर कई मनुष्य मुनि भए, कई मनुष्य श्रावक भए, कई तिर्यंच श्रावकके व्रत धारते भए। अर देवनिको व्रत नाहीं, सो कई देव सम्यक्त्वको प्राप्त होते भए। श्रीमुनिसुव्रतनाथ धर्मतीर्थका प्रवर्तनकर सुर असुर मनुष्यनिकरि स्तुति करने योग्य अनेक साधुवोंसहित पृथ्वीपर विहार करते भए। सम्मेदशिखरपर्वतसे लोकशिखरकूं प्राप्त भए। यह श्रीमुनिसुव्रतनाथका चरित्र जे प्राणी भावधर सुनें तिनके समस्त पाप नाशकूं प्राप्त होय, अर ज्ञानसहित तपसे परम स्थानकूं पावें, जहांतैं फेर आगमन न होय।

अथानन्तर मुनिसुव्रतनाथके पुत्र राजा सुव्रत बहुत काल राज्य कर, दक्ष पुत्रको राज्य देय, जिनदीक्षा धर मोक्षको प्राप्त भए। अर दक्षके एलावर्धन पुत्र भया, ताके श्रीवृक्ष, ताके संजयंत, ताके कुणिम, ताके महारथ, ताके पुलोमई इत्यादि अनेक राजा हरिवंशकुलमें भए। तिनमें कईएक मुक्तिको गए, कईएक स्वर्गलोक गये। या भांति अनेक राजा भये। बहुरि याही कुलविषै एक राजा वासवकेतु भया, मिथिला नगरीका पति, ताके विपुला नामा पटराणी, सुन्दर हैं नेत्र जाके। सो वह रानी परम लक्ष्मीका स्वरूप ताके जनक नाम पुत्र होते भए। समस्त नयोंमें प्रवीण वे राज्य पाय प्रजाको ऐसे
पालते भए जैसैं पिता पुत्रको पालै। गौतमस्वामी कहैं हैं—हे श्रेणिक! यह जनकको उत्पत्ति कही, जनक हरिवंशी है।

अब ऋषभदेवके कुलमें राजा दशरथ भए तिनका वर्णन सुन—इक्ष्वाकुवंशमें श्रीऋषभदेव निर्वाण पधारे। बहुरि तिनके पुत्र भरत भी निर्वाण पधारे। सो ऋषभदेवके समयसे लेकर मुनिसुव्रतनाथके

समय पर्यंत बहुत काल बीत्या, तामैं असंख्य राजा भए। कईएक तो महादुर्द्धर तपकर निर्वाणको प्राप्त भये। कईएक अहमिंद्र भये। कईएक इन्द्रादिक बड़ी ऋद्धिके धारी देव भये। कईएक पापके उदयकर नरकमें गये। हे श्रेणिक ! या संसारमें अज्ञानी जीव चक्रकी नाईं भ्रमण करै हैं। कबहूं स्वर्गादिक भोग पावै हैं, तिनविषै मग्न होय क्रीड़ा करै हैं। कईएक पापी जीव नरक निगोदमें क्लेश भोगै हैं। ये प्राणी पुण्य पापके उदयतैं अनादिकाल भ्रमण करै हैं। कबहूं कष्ट, कबहूं उत्सव। यदि विचार कर देखिये तो दुःख मेरु समान, सुखराई समान है। कईएक द्रव्यरहित क्लेश भोगवै हैं, कईएक बाल अवस्थामें मरण करै हैं, कईएक शोक करै हैं, कईएक रुदन करै हैं, कईएक विवाद करै हैं, कईएक पढ़े हैं, कईएक पराई रक्षा करै हैं, कईएक पापी बाधा करै हैं, कईएक गरजै है, कईएक गान करै हैं, कईएक पराई सेवा करै हैं, कईएक भार बहै हैं, कईएक शयन करै हैं, कईएक पराई निन्दा करैं हैं, कई एक केलि करै हैं, कईएक युद्धकरि शत्रुवोंको जीतैं हैं, कईएक शत्रुको छोड़ देय हैं, कईएक कायर युद्ध को देख भागै हैं, कईएक शूरवीर पृथ्वीका राज्य करै हैं, विलास करै हैं, बहुरि राज्य तज वैराग्य धारै हैं। कईएक पापी हिंसा करै हैं, परद्रव्यकी वांछा करै हैं, परद्रव्यकूं हरै हैं, दौड़े हैं, कूट कपट करै हैं, ते नरकमें पड़े हैं। अर जे कईएक लज्जा धारै हैं, शील पालै हैं, करुणाभाव धारै हैं, परद्रव्य तजै हैं, वीतरागताको भजै हैं, संतोष धारै हैं, प्राणियोंको साता उपजावै हैं, ते स्वर्ग पाय परंपराय मोक्ष पावैं हैं। जे दान करै हैं, तप करै हैं, अशुभ क्रियाका त्याग करै हैं, जिनेंद्रकी अर्चा करै हैं, जिनशास्त्रकी चर्चा करै हैं, सब जीवनिसूं मित्रता करै हैं, विवेकियोंका विनय करै हैं ते उत्तम पद पावै हैं। कईएक
क्रोध करै हैं, काम सेवै हैं, राग द्वेष मोहके वशीभूत हैं, परजीवोंको ठगै हैं, ते भवसागरमें डूबे हैं, नाना विध नाचै हैं, जगतमें राचै हैं, खेद खिन्न हैं, दीर्घ शोक करै हैं, झगड़ा करै हैं, संताप करै हैं, असि मसि कृषि वाणिज्यादि व्यापार करै हैं, ज्योतिष वैद्यक यंत्र मंत्रादिक करै हैं, शृंगारादि शास्त्र रचें हैं वे वृथा पच पच कर मरै हैं। इत्यादि शुभाशुभकर्मकरि आत्मधर्मको भूल रहे हैं। संसारी जीव चतुर्गति-

विषै भ्रमण करै हैं। या अवसर्पिणीकालविषै आयु काय घटती जाय है। श्रीमल्लिनाथके मुक्ति गये पीछे मुनिसुव्रतनाथके अंतरालविषै या क्षेत्रमें अयोध्या नगरीविषै एक विजय नामा राजा भया। महा शूरवीर, प्रतापकरि संयुक्त, प्रजाके पालनविषै प्रवीण, जीते हैं समस्त शत्रु जानें। ताके हेमचूलनी नामा पटराणी, ताके महागुणवान् सुरेन्द्रमन्यु नामा पुत्र भया। ताके कीर्तिसमा नामा राणी, ताके दोय पुत्र भये—एक वज्रबाहु, दूजा पुरंदर! चन्द्रसूर्यसमान है कांति जाकी, महागुणवान, अर्थसंयुक्त है नाम जिनके, वे दोऊ भाई पृथ्वीविषै सुखसू रमते भये।

अथानन्तर हस्तिनापुरमें एक राजा इन्द्रवाहन, ताके राणी चूडामणी, ताके पुत्री मनोदया अति सुन्दरी सो वज्रबाहुकुमारने परणी। सो कन्याका भाई उदयसुन्दर बहिनके लेनेकू आया सो वज्रबाहुकुमार का स्त्रीसू अतिप्रेम था, स्त्री अति सुन्दरी सो कुमार स्त्रीके लार सासरे चाले। मार्गविषै बसंतका समय था और बसंतगिरि पर्वतके समीप जाय निकसे। ज्यों ज्यों वह पहाड़ निकट आवै त्यों त्यों उसकी परमशोभा देख कुमार अतिहर्षकू प्राप्त भए। पुष्पनिकी जो मकरंदता उससे मिली सुगन्ध पवन सो कुमारके शरीरसे स्पर्शी, ताकरि ऐसा सुख भया जैसा बहुत दिनोंके बिछुरे मित्रसों मिले सुख होय। कोकिलावोंके मिष्ट शब्दनिकरि अतिहर्षित भया जैसैं जीतका शब्द सुन हर्ष होय। पवनसे हालै हैं वृक्षोंके अग्रभाग सो मानों पर्वत वज्रबाहुका सनमान ही करै है, और भ्रमर गुंजार करै है सो मानों वीणका नाद ही होय है। वज्रबाहुका मन प्रसन्न भया। वज्रबाहु पहाड़की शोभा देखै है कि यह आम्रवृक्ष, यह कर्णकार जातिका वृक्ष, यह रौद्र जातिका वृक्ष, फलनिकरि मंडित यह प्रयालवृक्ष, यह ३२१
पलाशका वृक्ष, अग्नि समान दैदीप्यमान है पुष्प जाकै। वृक्षनिकी शोभा देखते देखते राजकुमारकी दृष्टि मुनिराज पर पड़ी। देखकर विचारता भया—यह थंभ है अथवा पर्वतका शिखर है अथवा मुनि-राज हैं। कायोत्सर्ग धर खड़े जो मुनि तिनविषै वज्रबाहुका ऐसा विचार भया। कैसे हैं मुनि? जिनको ठूंठ जानकर जिनके शरीरसे मृग खाज खुजावै हैं। जब नृप निकट गया तब निश्चय भया कि जो ये

महा योगीश्वर विदेह अवस्थाकों धरे कायोत्सर्ग ध्यान धरें स्थिररूप खड़े हैं, सूर्यकी किरणनिकरि स्पर्श्या है मुखकमल जिनका और महासर्पके फण समान देदीप्यमान भुजावोंको लम्बाय ऊभे हैं। सुमेरु का जो तट उस समान सुन्दर है वक्षस्थल जिनका, और दिग्गजोंके बांधनेके थंभ तिन समान अचल है जंघा जिनकी, तपसे क्षीण शरीर है परन्तु कांतिसे पुष्ट दीखें हैं, नासिकाके अग्रभागविषै लगाये हैं निश्चल सौम्य नेत्र जिन्होंने, आत्माकूं एकाग्र ध्यावें हैं। ऐसे मुनिकूं देखकर राजकुमार चितवता भया—अहो धन्य हैं ये महामुनि शांतिभावके धारक जो समस्त परिग्रहकूं तजकर मोक्षाभिलाषी होय तप करें हैं। इनकूं निर्वाण निकट है। निज कल्याणमें लगी है बुद्धि जिनकी, परजीवनकूं पीड़ा देनेसे निवृत्त भया है आत्मा जिनका, अर मुनिपदकी क्रिया करि मंडित हैं। जिनके शत्रु मित्र समान हैं, तृण अर कंचन समान, पाषाण अर रत्न समान, मान और मत्सरसे रहित है मन जिनका। वश करी हैं पांचों इन्द्रियें जिन्होंने, निश्चल पर्वत समान वीतराग भाव हैं, जिनको देखे जीवनिका कल्याण होय। मनुष्यदेहका फल इन हीने पाया। यह विषयकषायोंसे न ठगाए। कैसे हैं विषय कषाय ? महा क्रूर हैं, अर मलिनताके कारण हैं। मैं पापी कर्म—पाशकरि निरंतर बंधा, जैसे चन्दनका वृक्ष सर्पोंसे वेष्टित होय है तैसैं मैं पापी असावधानचित्त अचेत समान होय रहा। धिक्कार है मुझे। मैं भोगादिरूप जो महा पर्वत उसके शिखर पर निद्रा करूं हूं, सो नीचे ही पडूंगा। जो इस योगींद्रकी सी अवस्था धरूं तो मेरा जन्म कृतार्थ होय। ऐसा चिंतवन करते बज्रबाहुकी दृष्टि मुनिनाथमें अत्यन्त निश्चल भई, मानो थंभसे बांधी गई। तब उसका उदयसुन्दर साला इसको निश्चल देख मुलकता हुवा याहि हास्यके वचन कहता भया—मुनिकी ओर अत्यन्त निश्चल होय निरखो हो सो क्या दिगम्बरीदीक्षा धरोगे ? तब बज्रबाहु बोले—जो हमारा भाव था सो तुमने प्रकट किया, अब तुम इसही भावकी वार्ता कहो। तब वह इसको रागी जान हास्यरूप बोला कि तुम दीक्षा धरोगे तो मैं भी धरूंगा, परन्तु इस दीक्षासे तुम अत्यन्त उदास होवोगे। तब बज्रबाहु बोले यह तो ऐसे ही भई—यहकर विवाहके आभूषण उतार डारे और हाथीसे उतरे। तब

मृगनयनी स्त्री रोवने लगी। स्थूल मोती समान अश्रुपात डारती भई। तब उदयसुन्दर आंसू डारता भया, हे देव ! यह हास्यमें कहा विपरीत करो हो ? तब वज्रबाहु अति मधुरवचनसूं ताको शांतता उपजावते हुए कहते भए—हे कल्याणरूप ! तुम समान उपकारी कौन ? मैं कूपमें पड़ूं था सो तुमने राखा। तुम समान मेरा तीनलोकमें मित्र नाहीं। हे उदयसुन्दर ! जो जन्म्या है सो अवश्य मरेगा और जो मूआ है सो अवश्य जन्मेगा। ये जन्म और मरण अरहटकी घड़ी समान हैं, तिनमें संसारी जीव निरंतर भ्रमैं हैं। यह जीतव्य बिजलीके चमत्कार समान है तथा जलकी तरंग समान, तथा दुष्ट-सर्पकी जिह्वा समान चंचल है। यह जगतके जीव दुःखसागरविषै डूब रहे हैं। यह संसारके भोग स्वप्नके भोग समान असार हैं। जलके बुदबुदा समान काया है, सांझके रंग समान यह जगतका स्नेह है, और यह यौवन फूलसमान कुमलाय जाय है। यह तुम्हारा हंसना भी हमको अमृतसमान कल्याण-रूप भया। क्या हास्यसे जो औषधिको पीये तो रोगको न हरै ? अवश्य हरैही। अर तुम हमको मोक्षमार्गके उद्यमके सहाई भए, तुम समान हमारे और हितु नाहीं। मैं संसारके आचारविषै आसक्त होय रहा था सो वीतरागभावको प्राप्त भया। अब मैं जिनदीक्षा धरूं हूं। तुम्हारी जो इच्छा होय सो तुम करो। ऐसा कहकर सर्व परिवारसूं क्षमा कराय वह गुणसागर नामा मुनि तपही है धन जिनके, तिनके निकट जाय चरणारविंदको नमस्कार कर विनयवान होय कहता भया—हे स्वामी ! तुम्हारे प्रसादसे मेरा मन पवित्र भया, अब मैं संसाररूप कीचसे निकस्या चाहूं हूं। तब इसके वचन सुन गुरु आज्ञा दई—तुमको भवसागरसे पार करणहारी यह भगवती दीक्षा है। कैसे हैं गुरु ? सप्तम गुणस्थान से छठे गुणस्थान आये हैं। यह गुरुकी आज्ञा उरमें धार वस्त्राभूषणका त्याग कर पल्लव समान जो अपने कर तिनमें केशोंका लौंचकर पल्यंकासन धरता भया। इस देहको विनश्वर जान देहसे स्नेह तजकर राजपुत्रीको और राग अवस्थाको तज मोक्षकी देनहारी जो जिन दीक्षा सो अंगीकार करता भया। और उदयसुन्दरको आदि दे छब्बीस राजकुमार जिनदीक्षा धरते भये। कैसे हैं वे कुमार? कामदेव

३२३

समान है रूप जिनका, तजे हैं राग द्वेष मद मत्सर जिन्होंने, उपज्या है वैराग्यका अनुराग जिनके, परम उत्साहके भरे नग्न मुद्रा धरते भये। और यह वृत्तांत देख वज्रबाहुकी स्त्री मनोदेवी पतिके और भाईके स्नेहसों मोहित हुई, मोह तज आर्यिकाके व्रत धारती भई, सर्व वस्त्राभूषण तज कर एक सुफेद साड़ी धारती भई। महा तप व्रत आदरे। यह वज्रबाहुकी कथा इसका दादा जो राजा विजय उसने सुनी। सभाके मध्य बैठ्या था सो शोकसे पीड़ित होय ऐसे कहता भया—यह आश्चर्य देखो कि मेरा पोता नवयौवन में विषय विष समान जान विरक्त होय मुनि भया और मो सारिखा मूर्ख विषयोंका लोलुपी वृद्ध अवस्थामेंभी भोगोंको न तजता भया। कुमारने कैसे तजे? अथवा वह महाभाग्य जो भोगोंको तृणवत् तजकर मोक्षके निमित्त शांतभावोंमें तिष्ठ्या, मैं मंदभाग्य जराकर पीड़ित हूं सो इन पापी विषयोंने मोहि चिरकाल ठग्या। कैसे हैं यह विषय? देखनेमें तो अति सुन्दर हैं परन्तु फल इनके अति कटुक हैं। मेरे इन्द्रनीलमणि समान श्याम जो केशोंके समूह थे सो कफकी राशि समान श्वेत होयगए। जे यौवन अवस्थामें मेरे नेत्र श्यामता श्वेतता अरुणता लिये अतिमनोहर थे सो अब ऊंड़े पड गये, और मेरा जो शरीर अति देदीप्यमान शोभायमान महाबलवान स्वरूपवान था सो वृद्धअवस्थाविषै वर्षासे हता जो चित्राम ता समान होय गया। जे धर्म अर्थ काम तरुण अवस्थाविषै भलीभांति सधे हैं सो जराकर मंडित जे प्राणी तिनसे सघन विषम हैं। धिक्कार है मो पापी दुराचारी प्रमादीकों जो मैं चेतन थका अचेतन दशा आदरी। यह झूठा घर, झूठी माया, झूठी काया, झूठे बांधव, झूठा परिवार तिनके स्नेहकरि भवसागरके भ्रमण में भ्रमा। ऐसा कहकर सर्व परिवारसों क्षमा कराय, छोटा पोता जो पुरन्दर उसे राज्य देय, अपने पुत्र सुरेन्द्रमन्यु सहित राजा विजयने वृद्ध अवस्थामें निर्वाणघोष स्वामीके समीप जिनदीक्षा आदरी। कैसा है राजा? महा उदार है मन जाका।

अथानन्तर पुरन्दर राज्य करै है। उसके पृथ्वीमती राणी, कीर्तिधर नामा पुत्र भया, सो गुणोंका सागर पृथ्वीविषै विख्यात। वह विनयवान अनुक्रमकर यौवनको प्राप्त भया। सर्व कुटुम्बको आनन्द

बढ़ावताहुवा अपनी सुन्दर चेष्टासूं सबको प्रिय भया। तब राजा पुरन्दरने अपने पुत्रको राजा कौशल की पुत्री परणाई और इसको राज्य देय, राजा पुरंदरने गुण ही हैं आभरण जाकै, क्षेमंकर मुनिके समीप मुनिव्रत धरे, कर्मनिर्जराका कारण महातप आरंभा।

अथानन्तर राजा कीर्तिधर कुलक्रमसे चला आया जो राज्य उसे पाय जीते हैं सब शत्रु जिसने, देवसमान उत्तम भोग भोगता हुवा रमता भया। एक दिवस राजा कीर्तिधर प्रजाका बन्धु, जे प्रजाके बाधक शत्रु तिनको भयंकर, सिंहासनविषै जैसैं इन्द्र विराजे तैसैं विराजे थे। सो सूर्यग्रहण देख चित्तमें चितवते भए कि देखो यह सूर्य जो ज्योतिका मंडल है सो राहुके विमानके योगसे श्याम होयगया। यह सूर्य, प्रतापका स्वामी, अंधकारको मेट प्रकाश करै है और जिसके प्रतापसे चन्द्रमाका बिंब कांतिरहित भासै है, और कमलनिके वनको प्रफुल्लित करै है सो राहुके विमानसे मंदकांति भासै है। उदय होता ही सूर्य ज्योति रहित होयगया, इसलिए संसारकी दशा अनित्य है। यह जगतके जीव विषयाभिलाषी, रंकसमान मोहपाशसे बंधे अवश्य कालके मुखमें पड़ेंगे। ऐसा विचारकर यह महाभाग्य संसारकी अवस्था को क्षणभंगुर जान मंत्री पुरोहित सेनापति सामंतनिको कहता भया कि यह समुद्र पर्यंत पृथ्वीके राज्यकी तुम भलीभांति रक्षा करियो, मैं मुनिके व्रत धरूं हूं। तब सबही विनती करते भए–हे प्रभो ! तुम विना यह पृथ्वी हमसे दबै नाहीं, तुम शत्रुवोंके जीतनहारे हो, लोकोंके रक्षक हो, तुम्हारी वय भी नवयौवन है। इसलिए यह इन्द्रतुल्य राज्य कईएक दिन करो, इस राज्यके पति अद्वितीय तुमही हो, यह पृथ्वी तुमहीसे शोभायमान है। तब राजा बोले–यह संसार अटवी अति दीर्घ है। इसे देख मोहि अतिभय उपजै है। कैसी है ? यह भवरूप वन, अनेक जे दुख, वेही हैं फल जिनके, ऐसे कर्मरूप वृक्षनिसे भरी है। अर जन्म जरा मरण रोग शोक रति अरति इष्टवियोग अनिष्टसंयोगरूप अग्निसे प्रज्वलित है। तब मंत्रीजनोंने राजाके परिणाम विरक्त जान बुझे अंगारोंके समूह लाय धरे और तिनके मध्य एक वैडूर्यमणि ज्योतिका पुंज अति अमोलक लाय धरचा। सो मणिके प्रतापसे कोयला प्रकाशरूप होयगए !

फिर वह मणि उठाय लई, तब वह कोइला नीके न लागे। तब मंत्रियोंने राजासे विनती करी हे देव! जैसें यह काष्ठके कोयला रत्नबिना न शोभैं हैं तैसें तुम बिना हम सब ही न शोभैं। हे नाथ! तुम बिना प्रजाके लोक अनाथ मारे जायंगे और लूटे जायंगे और प्रजाके नष्ट होते धर्मका अभाव होवेगा। इसलिए जैसा तुम्हारा पिता तुमको राज्य देय मुनि भया था तैसें तुम भी अपने पुत्रको राज देय जिनदीक्षा धरियो। यां भांति प्रधान पुरुषोंने विनती करी। तब राजाने यह नियम किया कि जो मैं पुत्रका जन्म सुनूं उस ही दिन मुनिव्रत धरूं। यह प्रतिज्ञाकर इन्द्र समान भोग भोगता भया, प्रजाको साता उपजाय राज्य किया। जिसके राज्यमें किसी भांतिका भी प्रजाको भय न उपजा। कैसा है राजा? समाधान रूप है चित्त जाका। एक समय राणी सहदेवी राजा सहित शयन करती थी सो उसको गर्भ रहचा। कैसा पुत्र गर्भमें आया? सम्पूर्ण गुणनिका पात्र और पृथ्वीके प्रतिपालनको समर्थ। सो जब पुत्रका जन्म भया तब राणीने पतिके वैरागी होनेके भयसे पुत्रका जन्म प्रकट न किया। कई एक दिवस वार्ता गोप राखी। जैसें सूर्यके उदयको कोई छिपाय न सकै तैसें राजपुत्रका जन्म कैसें छिपै? किसी मनुष्य दरिद्रीने द्रव्यके अर्थके लोभतैं राजासे प्रकट किया। तब राजाने मुकुट आदि सर्व आभूषण अंगसे उतार उसको दिये और घोषशाखा नामा नगर, महा रमणीक, अतिधनकी उत्पत्तिका स्थानक, सौ गांव सहित दिया और पुत्र पन्द्रह दिनका माताकी गोदमें तिष्ठता था सो तिलककर उसको राजपद दिया जिससे अयोध्या अति रमणीक होती भई। और अयोध्याका नाम कौशल भी है इसलिए उसका सुकौशल नाम प्रसिद्ध भया। कैसा है सुकौशल? सुन्दर है चेष्टा जाकी, सुकौशलको राज्य देय राजा
कीर्तिधर घररूपबंदीगृहतैं निकसकरि तपोवनको गए, मुनिव्रत आदरे। तपसे उपज्या जो तेज उससे जैसें मेघपटलसे रहित सूर्य शोभै तैसें शोभते भए।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महा पद्मपुराण संस्कृत ग्रन्थ, ताकी भाषा वचनिकाविषै वज्रबाहु कीर्तिधर महात्म्य वर्णन करने वाला इक्कीसवां पर्व पूर्ण भया॥ २१॥

अथानन्तर कईएक वर्षमें कीर्तिधर मुनि पृथ्वीसमान है क्षमा जिनके, दूर भया है मान मत्सर जिनका, और उदार है चित्त जिनका, तपकरि शोखा है सर्व अंग जिन्होंने, अर लोचन ही हैं सर्व आभूषण जिनके, प्रलम्बित हैं महाबाहु और जूड़े प्रमाण धरती देख अधोदृष्टि गमन करै हैं। जैसैं मत्त गजेन्द्र मन्द मन्द गमन करै तैसैं जीवदयाके अर्थ धीरे धीरा गमन करै हैं। सर्व विकार रहित महा सावधानी ज्ञानी, महा विनयवान, लोभ रहित, पंचआचारके पालनहारे, जीवदयासे विमल हैं चित्त जिनका, स्नेह-रूप कर्दमसे रहित, स्नानादि शरीरसंस्कारसे रहित, मुनिपदकी शोभासे मंडित। सो आहारके निमित्त बहुत दिनोंके उपवासे नगरमें प्रवेश करते भए। तिनको देखकर पापिनी सहदेवी उनको स्त्री मनमें विचार करती भई कि कभी इनको देख मेरा पुत्र भी वैराग्यको प्राप्त न होय। तब महा क्रोधकर लाल होय गया है मुख जाका, दुष्ट चित्त द्वारपालनिसों कहती भई, यह यति नग्न महा मलिन घरका खोऊ है। इसे नगरसे बाहिर निकास देवो, फिर नगरमें न आवने पावै। मेरा पुत्र सुकुमार है, भोला है कोमल चित्त है सो उसे देखने न पावै। इसके सिवाय और भी यति हमारे द्वारे आवनें न पावैं। रे द्वारपाल हो! इस बातमें चूक पड़ी तो मैं तुम्हारा निग्रह करूंगी। जबसे यह दया रहित बालक पुत्रको तजकर मुनि भया तबसूं इसभेषका मेरे आदर नाहीं। यह राज्यलक्ष्मी निंदै है अर लोगोंको वैराग्य प्राप्त करावैं है, भोग छुडाय योग सिखावै है। जब राणीने ऐसे वचन कहे तब वे क्रूर द्वारपाल, बैंतकी छड़ी है जिनके हाथमें, मुनिको मुखसे दुरवचन कहकर नगरसे निकास दिए। अर आहारको और भी साधु नगरमें आए थे वे भी निकास दिए। मत कदाचित् मेरा पुत्र धर्म श्रवण करै या भांति कीर्तिधरका अविनय देख राजा सुकौशलकी धाय महाशोक कर रुदन करती भई। तब राजा सुकौशल धायको रोवती देख कहते भए—हे माता! तेरा अपमान करै ऐसा कौन? माता तो मेरी गर्भ धारण मात्र है और तेरे दुग्धकरि मेरा शरीर वृद्धिको प्राप्त भया, सो मेरे तू मातासें भी अधिक है। जो मृत्युके मुखमें प्रवेश किया चाहे सो तोहि दुखावै, जो मेरी माताने भी तेरा अनादर किया होय तो मैं उसका अविनय करूं,

औरोंकी क्या बात ? तब बसंतलता धाय कहती भई—हे राजन् ! तेरे पिता तुझे बालअवस्थामें राज्य देय संसाररूप कष्टके पींजरेसे भयभीत होय तपोवनको गए । सो वह आज इस नगरमें आहारको आए थे सो तिहारी माताने द्वारपालनिसों आज्ञाकर नगरतैं कढाए । हे पुत्र ! वे हमारे सबके स्वामी सो उनका अविनय मैं देख न सकी । इसलिए रुदन करूं हूं, और तिहारी कृपाकर मेरा अपमान कौन करै ? और साधुवोंको देखकर मेरा पुत्र ज्ञानको प्राप्त होय ऐसा जान मुनिनका प्रवेश नगरसे निकारचा । सो तिहारे गोत्रविषै यह धर्म परम्परायसे चला आया है कि जो पुत्रको राज्य देय पिता वैरागी होय हैं, और तिहारे घरसे आहार बिना कभी भी साधु पाछे न गए । यह वृत्तांत सुन राजा सुकौशल मुनिके दर्शनको महल से उतर, चमरछत्र वाहन इत्यादि राजचिह्न तजकर कमलसे भी अतिकोमल जो चरण सो उबाणे ही मुनिके दर्शनको दौड़े और लोकनिकों पूछते जावैं—तुमने मुनि देखे, तुमने मुनि देखे । या भांति परम अभिलाषासंयुक्त अपने पिता जो कीर्तिधर मुनि तिनके समीप गए । अर इनके पीछे छत्रचमर-वारे सब दौड़े ही गए । महामुनि उद्यानविषै शिलापर विराजे हुते सो राजा सुकौशल अश्रुपात कर पूर्ण हैं नेत्र जाके, शुभ है भावना जाकी, हाथ जोड़ि नमस्कार करि बहुत विनयसों मुनिके आगैं खड़े, द्वारपालनिने द्वारतैं निकासे थे सो ताकर अतिलज्जावंत होय, महामुनिसों विनती करते भए—हे नाथ ! जैसैं कोई पुरुष अग्नि प्रज्वलित घरविषै सूता होवे ताहि कोई मेघके नादसमान ऊंचा शब्द कर जगावै, तैसैं संसाररूप महाजन्म मृत्युरूप अग्निकर प्रज्वलित, ताविषै मैं मोहनिद्राकरियुक्त शयन करूं था सो मोहि आप जगाया । अब कृपा कर यह तिहारी दिगम्बरीदीक्षा मोहि देहु । यह
कष्टका सागर संसार तासों मोहि उबारहु । जब ऐसे वचन मुनिसों राजा सुकौशलने कहे, तब ही समस्त सामंतलोक आए और राणी विचित्रमाला गर्भवती हुती सो हू अति कष्टकरि विषादसहित समस्त राजलोकसहित आई । इनको दीक्षाके लिए उद्यमी सुन सब ही अंतःपुरके अर प्रजाके शोक उपज्या । तब राजा सुकौशल कहते भए या राणी विचित्रमालाके गर्भविषै पुत्र है, ताहि मैं राज्य

दिया। ऐसा कहकरि निस्पृह भए। आशारूप फांसीको छेदि, स्नेहरूप जो पींजरा ताहि तोड, स्त्रीरूप बंधनसों छूट, जीर्ण तृणवत् राज्यको जानि तज्या और वस्त्राभूषण सब ही तजि बाह्याभ्यंतर परिग्रहका त्याग करके केशनिका लोंच किया अर पद्मासन धार तिष्ठे। कीर्तिधर मुनींद्र इनके पिता, तिनके निकट जिनदीक्षा धरी। पंच महाव्रत, पांच समिति, तीन गुप्ति अंगीकार करि सुकौशल मुनिने गुरुके संग विहार किया। कमलसमान आरक्त जो चरण तिनकरि पृथ्वीको शोभायमान करते संते विहार करते भए। अर इनकी माता सहदेवी आर्तध्यानकरि मरकैं तिर्यंच योनिमैं नाहरी भई। अर ए पिता पुत्र दोनों मुनि महाविरक्त जिनको एक स्थानक रहना, पिछले पहर दिनसूं निर्जन प्रासुक स्थान देखि बैठि रहैं। अर चातुर्मासिकमें साधुवोंको विहार न करना। सो चातुर्मासिक जान एक स्थान बैठि रहैं। दशों दिशाकों श्याम करता संता चातुर्मासिक पृथ्वीविषै प्रवर्त्या। आकाश मेघमाला के समूहकरि ऐसा शोभै मानों काजलतैं लिप्या है। अर कहूं एक बगुलानिकी पंक्ति उडती ऐसी सोहै मानों कुमुद फूल रहे हैं। अर ठौर ठौर कमल फूल रहे हैं, जिनपर भ्रमर गुंजार करैं हैं। सो मानो वर्षाकालरूप राजाके यश ही गावैं हैं। अंजनगिरि समान महानील जो अंधकार ताकरि जगत् व्याप्त होय गया। मेघके गाजनेतैं मानों चांद सूर्य डरकर छिप गए। अखण्डजलकी धारातैं पृथ्वी सजल होय गई और तृण ऊग उठे, सो मानों चांद पृथ्वी हर्षके अंकूर धरैं हैं। अर जलके प्रवाहकरि पृथ्वीविषै नीचा ऊंचा स्थल नजर नाहीं आवै, अर पृथ्वीविषै जलके समूह गाजैं हैं, अर आकाशविषै मेघ गाजैं हैं सो मानों ज्येष्ठका समय जो वैरी ताहि जीतकर गाजरहे हैं। अर धरती निर्झरननि करि शोभित भई। भांति २ की वनस्पति पृथ्वीविषै ऊगी सो ता करि पृथ्वी ऐसी शोभैं है मानों हरितमणिके समान बिछौना कर राखे हैं। पृथ्वीविषै सर्वत्र जल ही जल होय रहा है, मानों मेघ ही जलके भारतैं टूट पड़े हैं। अर ठौर ठौर इन्द्रगोप अर्थात् वीरबहूटी दीखै हैं सो मानों वैराग्यरूप बज्रतैं चूर्ण भए रागके खण्ड ही पृथ्वीविषै फैल रहे हैं। अर बिजलीका तेज सर्व दिशाविषै विचरै है सो मानों मेघ नेत्रकरि जलपूरित तथा अपूरित स्थानकको देखै है। अर नानाप्रकारके रंगको धरै जो इन्द्रधनुष ताकरि मण्डित आकाश,

सो ऐसा शोभता भया मानों अति ऊंचे तोरणों कर युक्त है। अर दोऊ पालि ढाहती, महा भयानक भ्रमणको धरै, अतिवेगकरयुक्त कलुषतासंयुक्त नदी बहै है। सो मानों मर्यादारहित स्वछंद स्त्रीके स्वरूपकों आचरै है। अर मेघके शब्दकर त्रासकों प्राप्त भई जे मृगनयनी विरहिणी ते स्तम्भनसू स्पर्श करै हैं, अर महा विह्वल हैं, पतिके आवनेकी आशाविषै लगाए हैं नेत्र जिनने। ऐसे वर्षाकाल-विषै जीवदयाके पालनहारे महाशांत, अनेक निर्ग्रंथ मुनि प्रासुक स्थानकविषै चौमासी उपवास लेय तिष्ठे। अर जे गृहस्थी श्रावक साधु–सेवाविषै तत्पर ते भी चार महीना गमनका त्याग कर नाना प्रकारके नियम धर तिष्ठे। ऐसे मेघकर व्याप्त वर्षाकालविषै वे पिता पुत्र यथार्थ आचारके आचरनहारे प्रेतवन कहिए श्मसान ताविषै चार महीना उपवास धर वृक्षके तलै विराजे। कभी पद्मासन, कभी कायोत्सर्ग, कभी वीरासन आदि अनेक आसन धरै चातुर्मास पूर्ण किया। कैसा है वह प्रेतवन? वृक्षनिके अंधकार करि महागहन है, अर सिंह व्याघ्र रीछ स्याल सर्प इत्यादि अनेक दुष्ट जीवनिकरि भरचा है। भयंकर जीवनिकों भी भयकारी महा विषम है, गीध सियाल चील इत्यादि जीवनिकरपूर्ण होय रहा है। अर्धदग्ध मृतकनिका स्थानक, महा भयानक विषमभूमि, मनुष्यनिके सिरके कपालके समूहकर जहां पृथ्वी श्वेत होय रही है और दुष्ट शब्द करते पिशाचनिके समूह विचरै हैं, अर जहां तृणजाल कंटक बहुत हैं। सो ये पिता पुत्र दोनों मुनि धीरवीर पवित्र मन चारमहीना तहां पूर्ण करते भए।

अथानन्तर वर्षाऋतु गई, शरद ऋतु आई। सो मानों रात्रि पूर्ण भई, प्रभात भया। कैसा है प्रभात? जगतके प्रकाश करनेमें प्रवीण है। शरदके समय आकाशविषै बादल श्वेत प्रकट भए, अर सूर्य मेघपटल रहित कांतिसों प्रकाशमान भया। जैसैं उत्सर्पिणीकालका जो दुःखमाकाल ताके अन्तमें दुखमासुखमा के आदि श्रीजिनेन्द्रदेव प्रकट होय। अर चन्द्रमा रात्रिविषै तारानिके समूह के मध्य शोभता भया। जैसैं सरोवरके मध्य तरुण राजहंस शोभै। अर रात्रिमें चान्द्रमाकी चांदनीकर पृथ्वी उज्ज्वल भई सो मानों क्षीरसागर ही पृथ्वीविषै विस्तर रहचा है। अर नदी निर्मल भई, कुरचि सारस चाकवा आदि

३३०

पक्षी सुन्दर शब्द करने लगे, अर सरोवर में कमल फूले जिन पर भ्रमर गुंजार करै हैं, अर उड़े है, सो मानो भव्यजीवनिने मिथ्यात्वपरिणाम तजे हैं सो उड़ते फिरै हैं। (भावार्थ) मिथ्यात्वका स्वरूप श्याम अर भ्रमरका भी स्वरूप श्याम। अनेक प्रकार सुगन्धका है प्रचार जहां ऐसे जे ऊंचे महल, तिनके निवासविषै रात्रिके समय लोक निज प्रियानिसहित क्रीड़ा करै हैं। शरदऋतुविषै मनुष्यनिके समूह महाउत्सवकर प्रवर्तै हैं, सन्मान किया है मित्र बांधवनिका जहां। अर जो स्त्री पीहर गई तिनका सासरे आगमन होय है। कार्तिक सुदी पूर्णमासीके व्यतीत भए पीछे तपोधर जे मुनि ते जैन तीर्थोंमें विहार करते भए। तदि ये पिता अर पुत्र कीर्तिधर सुकौशल मुनि समाप्त भया है नियम जिनका, शास्त्रोक्त ईर्यासमितिसहित पारणाके निमित्त नगरको ओर विहार करते भए। अर वह सहदेवी सुकौशलकी माता मरकरि नाहरी भई हुती सो पापिनी महाक्रोधकी भरी, लोहूकर लाल हैं केशोंके समूह जाके, विकराल है वदन जाका, तीक्ष्ण हैं दांत जाके, कषायरूप पीत हैं नेत्र जाके, सिर पर धरी है पूछ जाने, नखोंकरि विदारे हैं अनेक जीव जाने, अर किए हैं भयंकर शब्द जाने, मानों मरी ही शरीर धरि आई है। लहलहाट करे है लाल जीभका अग्रभाग जाका, मध्याह्नके सूर्य समान आतापकारी, सो पापिनी सुकौशल स्वामीको देखकरि महावेगतैं उछलकर आई। ताहि आवती देख वे दोनों मुनि सुन्दर हैं चरित्र जिनके, सर्व आलंब रहित कायोत्सर्ग धर तिष्ठे। सो पापिनी सिंहनी सुकौशल स्वामीका शरीर नखों करि विदारती भई। गौतमस्वामी राजा श्रेणिकतैं कहै हैं—हे राजन्! देख संसारका चरित्र, जहां माता पुत्रके शरीरके भक्षणका उद्यम करै है। या उपरांत और कष्ट कहा? जन्मांतरके स्नेही बांधव कर्मके उदयतैं बैरी होय परिणमैं। तदि सुमेरुतैं भी अधिक स्थिर सुकौशल मुनि शुक्लध्यानके धरणहारे तिनको केवलज्ञान उपज्या, अन्तःकृतकेवली भए। तब इन्द्रादिक देवोंने आय इनके देहकी कल्पवृक्षादिक पुष्पनिसों अर्चा करी, चतुरनिकायके सर्व ही देव आए। अर नाहरी को कीर्तिधर मुनि धर्मोपदेश वचनोंसे संबोधते भए—हे पापिनी! तू सुकोशलकी माता सहदेवी हुती।

अर पुत्रसे तेरा अधिक स्नेह हुता ताका शरीर तैंने नखनितैं विदारचा। तब वह जातिस्मरण होय श्रावकके व्रतधर संन्यास धारणकर शरीर तजि स्वर्गलोकमें गई। बहुरि कीर्तिधर मुनिको भी केवल ज्ञान उपज्या तब इनके केवलज्ञानकी सुर असुर पूजाकर अपने अपने स्थानकों गए। यह सुकौशल मुनिका माहात्म्य जो कोई पुरुष पढ़े सुनै सो सर्व उपसर्गतैं रहित होय सुखसों चिरकाल जीवै।

अथानन्तर सुकौशलकी राणी विचित्रमाला ताके सम्पूर्ण समयपर सुन्दर लक्षणकरि मंडित पुत्र होता भया। जब पुत्र गर्भमें आया तबहीतैं माता सुवर्णकी कांतिकों धरती भई। तातैं पुत्रका नाम हिरण्यगर्भ पृथ्वीपर प्रसिद्ध भया। सो हिरण्यगर्भ ऐसा राजा भया मानों अपने गुणनिकर बहुरि ऋषभदेवका समय प्रकट किया। सो राजा हरिकी पुत्री अमृतवती महामनोहर ताहि तानैं परणी। राजा अपने मित्र बांधवनिकरि संयुक्त पूर्ण द्रव्यके स्वामी मानों स्वर्णके पर्वत ही हैं। सर्व शास्त्रके पारगामी देवनि समान उत्कृष्ट भोग भोगते भए। एक समय राजा उदार है चित्त जिनका, दर्पणमें मुख देखते हुते। सो भ्रमर समान श्याम केशनिके मध्य एक सुफेद केश देख्या। तब चित्तमें विचारते भए कि यह कालका दूत आया। बलात्कार यह जराशक्ति कांतिकी नाश करणहारी ताकरि मेरे अंगोपांग शिथिल होवेंगे। यह चंदनके वृक्षसमान मेरी काया अब जरारूप अग्निकरि जल्या अंगार तुल्य होयगी। यह जरा छिद्र हेरै ही है। सो समय पाय पिशाचनीकी नाईं मेरे शरीरमें प्रवेशकर बाधा करेगी। अर कालरूप सिंह चिरकालतैं मेरे भक्षणका अभिलाषी हुता, सो अब मेरे देहकों बला-त्कारतैं भखेगा। धन्य हैं वह पुरुष जो कर्मभूमिकों पायकर तरुण अवस्थामें व्रतरूप जहाजविषै चढि कर भवसागरकों तिरै। ऐसा चिंतवनकर राणी अमृतवतीका पुत्र जो नघोष ताहि राजविषै थाप-करि विमलमुनिके निकट दिगम्बरी दीक्षा धरी। यह नघोष जबतैं माताके गर्भमें आया तबहीतै कोई पापका वचन न कहै, तातैं नघोष कहाए। पृथ्वीपर प्रसिद्ध हैं गुण जिनके, तिन गुणोंके पुंज, तिनके सिंहका नाम राणी। ताहि अयोध्याविषै राख उत्तर दिशाके सामंतोंको जीतवे को चढ़े। तब राजाको

दूर गया जान दक्षिण दिशाके राजा बड़ी सेनाके स्वामी अयोध्या लेनेको आए। तब राणी सिंहका महाप्रतापिनी बड़ी फौज करि चढी। सो सर्व बैरीनिको रणमें जीतकर अयोध्या दृढ़ थाना राखि आप अनेक सामंतनिको लेय दक्षिणदिशा जीतनेको गई। कैसी है राणी ? शस्त्रविद्याका किया है अभ्यास जानै, प्रतापकरि दक्षिणदिशाके सामंतोंको जीतकर जयशब्दकर पूरित पाछी अयोध्या आई। अर राजा नघोष उत्तर दिशाको जीतकर आए सो स्त्रीका पराक्रम सुन कोपको प्राप्त भए, मनमें विचारी जे कुलवंती स्त्री अखंडित शीलकी पालनहारी है तिनमें एती धीठता न चाहिए। ऐसा निश्चयकर राणी सिंहिकासों उदासचित्त भए। यह पतिवृता महाशीलवती पवित्र है चेष्टा जाकी, पटराणी के पदतें दूर करी सो महादरिद्रताको प्राप्त भई।

अथानन्तर राजाके महादाहज्वरका विकार उपज्या सो सर्व वैद्य यत्न करै पर तिनकी औषधि न लागै। तब राणी सिंहिका राजाको रोगग्रस्त जानकर व्याकुलचित्त भई, अर अपनी शुद्धताके अर्थि यह पतिवृता पुरोहित मंत्री सामंत सबनिकों बुलायकर पुरोहितके हाथ अपने हाथका जल दिया, अर कही कि यदि मैं मन वचन कायकरि पतिवृता हूँ तो या जलकरि सींच्या राजा दाहज्वरकर रहित होवे। तब जल करि सींचते ही राजाका ज्वर मिट गया अर हिमविषै मग्न जैसा शीतल होय गया। मुखतैं ऐसे मनोहर शब्द कहता भया जैसैं वीणाके शब्द होवे। अर आकाशविषै यह शब्द होते भए कि यह राणी सिंहिका पतिवृता महाशीलवंती धन्य है धन्य है। अर आकाशतैं पुष्प वर्षा भई। तब राजा ने राणीको महाशीलवंती जान बहुरि पटराणीका पद दिया, अर बहुत दिन निष्कंटक राज किया। ३३३
बहुरि अपने बड़ोंके चरित्र चित्तविषै धरि संसारकी मायातैं निस्पृह होय सिंहिका राणीका पुत्र जो सौदास, ताहि राज देय आप धीर वीर मुनिवृत धर, जो कार्य परम्परा इनके बड़े करते आए हैं सो किया। सौदास राज करै, सो पापी मांस आहारी भया। इनके वंशमें किसीने यह आहार न किया। यह दुराचारी अष्टाह्निकाके दिवसविषै भी अभक्ष्य आहार न तजता भया। एक दिन रसोईदारसों कहता भया कि—

मेरे मांसभक्षणका अभिलाष उपज्या है तब तानै कही—हे महाराज ! अष्टाह्निकाके दिन हैं, सर्व लोक भगवानकी पूजा अर व्रत नियम विषै तत्पर हैं, पृथ्वीपर धर्मका उद्योत होय रह्या है, इन दिनोंमें यह वस्तु अभक्ष्य है। तदि राजाने कही—या वस्तु विना मेरा मन रहै नाहीं, तातैं जा उपायकरि यह वस्तु मिलै सो कर। तदि रसोईदार यह राजाकी दशा देख नगरके बाहिर गया। एक मूवा हुवा बालक देख्या। ताहि दिन वह मूआ था। सो ताहि वस्त्रमें लपेट वह पापी लेय आया, स्वादु वस्तुनिकरि ताहि मिलाय पकाय राजाकों भोजन दिया, सो राजा महादुराचारी अभक्ष्यका भक्षण कर प्रसन्न भया। अर रसोईदारतैं एकांतमें पूछता भया कि—हे भद्र ! यह मांस तू कहांतैं लाया, अब तक ऐसा मांस मैंने भक्षण नहीं किया हुता। तदि रसोईदार अभयदान मांग यथावत् कहता भया। तब राजा कहता भया, ऐसे ही मांस सदा लाया कर। तदि रसोईदार बालकनिकों लाडू बांटता भया, तीन लाडुओंके लालचवशि बालक निरन्तर आवै। सो बालक लाडू लेयकर जावें तब जो पीछे रह जाय ताहि यह रसोईदार मार राजाको भक्षण करावै। निरंतर नगरविषै बालक छीजने लगे, तदि यह वृत्तांत लोकनिने जान रसोईदारसहित राजाकों देशतैं निकाल दिया, अर याकी राणी कनकप्रभा, ताका पुत्र सिंहरथ ताहि राज्य दिया। तदि यह पापी सर्वत्र निरादर हुआ, महादुखी पृथ्वीपर भ्रमण किया करै। जे मृतक बालक मसानविषै लोक डार आवैं तिनकों भखै, जैसैं सिंह मनुष्योंका भक्षण करै। तातैं याका नाम सिंहसौदास पृथ्वीविषै प्रसिद्ध भया। बहुरि यह दक्षिणदिशाकों गया। तहां मुनिनिके दर्शन कर धर्म श्रवणकर श्रावकके व्रत धरता भया। बहुरि एक महापुर नामा नगर, तहाँका राजा मूवा। ३३४
ताके पुत्र नहीं था, तब सबने यह विचार किया कि पाटबांध हस्ती जाय कांधे चढ़ाय लावै सोई राजा होवै। तदि याहि कांधे चढ़ाय हस्ती लेयगया तब याकों राज्य दिया। यह न्यायसंयुक्त राज्य करै, अर पुत्रके निकट दूत भेज्या कि तू मेरी आज्ञा मान, तदि वानै लिख्या जा तू महा निंद्य है, मैं तोहि नमस्कार न करूं। तब यह पुत्रपर चढ़करि गया। याहि आवता सुन लोग भागने लगे कि यह मनुष्य-

निकों खायगा। पुत्र अर थाके महा युद्ध भया। सो पुत्रकों युद्धमें जीत दोनों ठौरका राज्य पुत्रकों देयकर आप महा वैराग्यकों प्राप्त होय तपके अर्थि वन में गया।

अथानन्तर याके पुत्र सिंहरथके ब्रह्मरथ पुत्र भया, ताके चतुर्मुख, ताके हेमरथ, ताके सत्यरथ, ताके पृथुरथ, ताके पयोरथ, ताके दृढ़रथ, ताके सूर्यरथ, ताके मानधाता, ताके वीरसेन, ताके पृथ्वीमन्यु, ताके कमलबंधु, दीप्तितैं मानों सूर्य ही है। समस्त मर्यादामें प्रवीण ताके रविमन्यु, ताके बसंततिनक, ताके कुवेरदत्त, ताके कुंथुभक्त सो महा कीर्तिका धारी, ताके शतरथ, ताके द्विरदरथ, ताके सिंहदमन, ताके हिरण्यकशिपु, ताके पुञ्जस्थल, ताके ककूस्थल, ताके रघु, महापराक्रमी। यह इक्ष्वाकुवंश श्रीऋषभदेवतैं प्रवरत्या सो वंशकी महिमा हे श्रेणिक! तोहि कही। ऋषभदेवके वंशमें श्रीराम पर्यंत अनेक बड़े बड़े राजा भये ते मुनिव्रत धार मोक्षगए। कईएक अहमिंद्र भये, कईएक स्वर्गमें प्राप्त भए। या वंशविषै पापी विरले भए।

बहुरि अयोध्या नगरविषै राजा रघुके अरण्य पुत्र भया, जाके प्रतापकरि उद्यानमें वस्तु होती भई, ताके पृथ्वीमती राणी महा गुणवंती महाकांतिकी धरणहारी, महारूपवंती, महापतिव्रता, ताके दोय पुत्र होते भए। महा शुभलक्षण एक अनंतरथ दूसरा दशरथ। सो राजा सहस्ररश्मि माहिष्मती नगरीका पति ताकी अर राजा अरण्यकी परम मित्रता होती भई। मानों ये दोनों सौधर्म अर ईशानइन्द्र ही हैं। जब रावण ने युद्धमें सहस्ररश्मिको जीत्या, अर तानै मुनिव्रत धरे सो सहस्ररश्मिके अर अरण्यके यह वचन हुता कि जो तुम वैराग्य धारो तब मोहि जतावना। अर मैं वैराग्य धारूंगा तो तुम्हें जताऊंगा। सो वाने जब वैराग्य धारया तदि अरण्यको जतावा दिया। तदि राजा अरण्यने सहस्ररश्मिको मुनि हुवा जानकरि दशरथ पुत्रको राज्य देय आप अनंतरथ पुत्रसहित अभयसेन मुनिके समीप जिनदीक्षा धारी। महातपकरि कर्मोंका नाशकर मोक्षकों प्राप्त भए। अर अनंतरथ मुनि सर्व परिग्रहरहित पृथ्वीपर विहार करते भए। बाईस परीषहके सहनहारे किसीप्रकार उद्वेगको न प्राप्त भए। तदि इनका अनंतवीर्य नाम पृथ्वी

पर प्रसिद्ध भया। अर राजा दशरथ राज्य करै, सो महासुन्दर शरीर नवयौवनविषै अति शोभायमान होता भया। अनेकप्रकार पुष्पनिकरि शोभित मानों पर्वतका उतंग शिखर ही है।

अथानन्तर दर्भस्थल नगरका राजा कौशल प्रशंसायोग्य गुणोंका धारणहारा, ताके राणी अमृतप्रभाकी पुत्री कौशल्या, ताहि अपराजिता भी कहै हैं। काहेतैं कि यह स्त्रीके गुणनिकरि शोभायमान, कामकी स्त्री रति समान महासुन्दर, किसीतैं न जीती जाय, महारूपवंती, सो राजा दशरथने परणी। बहुरि एक कमलसंकुल नामा बडा नगर तहांका राजा सुबंधुतिलक ताके राणी मित्रा, ताके पुत्री सुमित्रा सर्वगुणनिकरि मंडित, महा रूपवती जाहि नेत्र रूप कमलनिकरि देख मन हर्षित होय। पृथ्वी पर प्रसिद्ध सो भी दशरथने परणी। बहुरि एक और महाराजा नामा राजा ताकी पुत्री सुप्रभा, रूप लावण्यकी खानि, जाहि लखे लक्ष्मी लज्जावान होय सोहू राजा दशरथने परणी। अर राजा दशरथ सम्यग्दर्शनको प्राप्त होते भये, अर राज्यका परम उदय पाय सो सम्यग्दर्शनकों रत्नों समान जानते भए। अर राज्यको तृण समान मानते भए कि जो राज्य न तजै तौ यह जीव नरकमें प्राप्त होय, राज्य तजै तो स्वर्ग मुक्ति पावै। अर सम्यग्दर्शनके योगतैं निसंदेह ऊर्ध्वगति ही है। सो ऐसा जानि राजाके सम्यग्दर्शनकी दृढ़ता होती भई अर जे भगवानके चैत्यालय प्रशंसायोग्य आगैं भरत चक्रवर्त्यादिकने कराए हुते तिनमें कईएक ठौर, कईएक भंगभावकों प्राप्त भए हुते सो राजा दशरथने तिनकों मरम्मत कराय ऐसे किए मानों नवीन ही हैं। अर इन्द्रनिकरि नमस्कार करनेयोग्य महा रमणीक जे तीर्थंकरनिके कल्याणक स्थानक तिनकी रत्ननिके समूह करि यह राजा पूजा करता भया। गौतमस्वामी राजा श्रेणिक सों कहैं हैं-हे भव्यजीव ! दशरथ सारिखे जीव परभवमें महाधर्मको उपार्जनकर अति मनोज्ञ देवलोककी लक्ष्मी पायकर या लोकमें नरेंद्र भये हैं, महाराज ऋद्धिके भोक्ता सूर्य समान दशों दिशाविषै है प्रकाश जिनका।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महा पद्मपुराण संस्कृत ग्रन्थ, ताकी भाषा वचनिकाविषैं राजा सुकौशलका माहात्म्य अर तिनके वंशविषै राजा दशरथकी उत्पत्तिका कथन वर्णन करने वाला बाईसवां पर्व पूर्ण भया ॥ २२ ॥

अथानन्तर एक दिन राजा दशरथ महा तेज प्रतापकरि संयुक्त सभामें विराजते हुते । कैसे हैं राजा? जिनेन्द्रकी कथाविषै आसक्त है मन जिनका, और सुरेन्द्र समान है विभव जिनका । ता समय अपने शरीरके तेजकरि आकाशविषै उद्योत करते नारद आए । तब दूरहीसों नारदको देखकर राजा उठकर सनमुख गए । बड़े आदरसों नारदकू ल्याय सिंहासनपर विराजमान किए । राजाने नारदकी कुशल पूछी । नारदने कही जिनेन्द्रदेवके प्रसाद करि कुशल है । बहुरि नारदने राजाकी कुशल पूछी, राजाने कही देव धर्म गुरुके प्रसादकरि कुशल है । बहुरि राजाने पूछी—हे प्रभो ! आप कौन स्थानकतें आए, इन दिनोंमें कहां कहां विहार किया, कहा देख्या ? कहा सुन्या ? तुमतें अढ़ाई द्वीपमें कोई स्थान अगोचर नाहीं । तदि नारद कहते भए । कैसे हैं नारद ? जिनेन्द्रचन्द्रके चरित्र देखकर उपज्या है परमहर्ष जिनको, हे राजन् ! मैं महा विदेहक्षेत्रनिविषै गया हुता । कैसा है वह क्षेत्र ? उत्तम जीवनिकरि भरया है, जहां ठौर ठौर श्रीजिनराजके मंदिर अर ठौर २ महामुनिराज विराजे हैं, जहां धर्मका बड़ा उपकार अतिशयकरि उद्योत है । श्रीतीर्थंकरदेव चक्रवर्ती बलदेव वासुदेव प्रतिवासुदेवादि उपजै हैं । तहां श्रीसीमंधर स्वामीका मैंने पुंडरीकनी नगरीमें तपकल्याणक देख्या । कैसी है पुण्डरीकनी नगरी ? नानाप्रकारके रत्ननिकरि जे महल तिनकें तेजतैं प्रकाशरूप है । अर सीमंधरस्वामीके तपकल्याणकविषै नानाप्रकारके देवनिका आगमन भया । तिनके भांतिभांतिके विमान ध्वजा अर छत्रादि करि महाशोभित । अर नाना प्रकारके जे वाहन तिनकरि नगरी पूर्ण देखी । अर जैसा श्रीमुनिसुव्रतनाथका सुमेरु विषै जन्माभिषेक का उत्सव हम सुने हैं तैसा श्रीसीमंधरस्वामीके जन्माभिषेकका उत्सव मैंने सुन्या । अर तपकल्याणक तो मैंने प्रत्यक्ष ही देखा । अर नानाप्रकारके रत्ननिकरि जडित जिनमन्दिर देखे, जहां महा मनोहर भगवानके बड़े बड़े बिंब विराजै हैं, अर विधिपूर्वक निरंतर पूजा होय है । अर महा विदेहतैं मैं सुमेरु पर्वत आया । सुमेरुकी प्रदक्षिणा कर सुमेरुके वन, तहां भगवानके जे अकृत्रिम चैत्यालय तिनका वर्णन किया । हे राजन् ! नन्दनवनके चैत्यालय नानाप्रकारके रत्ननिसू जड़े अतिरमणीक मैं देखे । जहां

स्वर्णसे पीत अति देदीप्यमान हैं सुन्दर हैं मोतियोंके हार अर तोरण जहाँ। जिनमंदिर देखते सूर्यका मंदिर कहा ? अर चैत्यालयनिकी वैडूर्य मणिमई भीति देखी, तिनमें गज सिंहादिरूप अनेक चित्राम मढ़े हैं, अर जहाँ देवदेवी संगीत शास्त्ररूप नृत्य कर रहे हैं। अर देवारण्यवनविषैं चैत्यालय, तहाँ मैंने जिनप्रतिमाका दर्शन किया। अर कुलाचलनिके शिखरविषै जिनेन्द्रके चैत्यालय मैं देखे, वंदे। या भांति नारद कही तब राजा दशरथ 'देवेभ्यो नमः' ऐसा शब्द कहकर हाथ जोड़ सिर नवाय नमस्कार करता भया।

बहुरि नारदने राजाकूं सैन करी—तदि राजाने दरबारको कहकर सबको सीख दीनी, आप एकांत विराजे तब नारद कही—हे सुकौशल देशके अधिपति! चित्त लगाय सुन, तेरे कल्याणकी कहूं हूं। मैं भगवानका भक्त जहां जिनमन्दिर होय तहां वंदना करूं हूं। सो लंकामें गया हुता, तहाँ महामनोहर श्रीशांतिनाथका चैत्यालय वंद्या। सो एक वार्ता विभीषणादिकके मुखसे सुनी कि रावणने बुद्धिसार निमित्तज्ञानीको पूछा कि मृत्यु कौन निमित्तसे है। तदि निमित्तज्ञानी कही—दशरथका पुत्र अर जनक राजाकी पुत्री इनके निमित्ततैं तेरी मृत्यु है, सुनकर रावण सचिंत भया। तब विभीषण कही—आप चिंता न करहु, दोऊनिके पुत्र पुत्री न होय ता पहिले दोऊनको मैं मारूंगा। सो तिहारे ठीक करनेको विभीषणने हलकारे पठाए हुते, सो वे तिहारा स्थान निरूपादि सब ठीक कर गए हैं। अर मेरा विश्वास जान मुझे विभीषणने पूछी कि क्या तुम दशरथ और जनकका स्वरूप नीके जानो हो। तब मैं कही मोहि उनको देखे बहुत दिन भए हैं, अब उनको देख तुमको कहूंगा। सो उनका अभिप्राय खोटा देखकर तुमपै आया। सो जबतक वह विभीषण तिहारे मारनेका उपाय करै ता पहिले तुम आपा छिपाय कहीं बैठ रहो। जे सम्यक्‌दृष्टि जिनधर्मी देव गुरु धर्मके भक्त हैं। तिन सबनिसों मेरी प्रीति है, तुम सारिखोंसे विशेष है। तुम योग्य होय सो करहु, तिहारा कल्याण होहु। अब मैं राजा जनकसे यह वृत्तांत कहने जाऊं हूं। तब राजाने उठ नारदका सत्कार किया। नारद आकाश

के मार्ग होय मिथिलापुरीकी ओर गए, जनकको समस्त वृत्तांत कह्या। नारदको भव्यजीव जिनधर्मी प्राणनिहूतैं प्यारे हैं। नारद तो वृत्तांत कह देशांतरको गए, अर दोनों ही राजावोंको मरणकी शंका उपजी। राजा दशरथने अपने मंत्री समुद्रहृदयको बुलाय एकांतमें नारदका सकल वृत्तांत कह्या। तब राजाके मुखतें मंत्री ये महाभयके समाचार सुन कर स्वामीकी भक्तिविषैं परायण, अर मंत्रशक्तिविषैं महा श्रेष्ठ, राजाकूं कहता भया—हे नाथ! जीतव्यके अर्थं सकल करिए हैं। जो त्रिलोकीका राज्य आवै अर जीव जाय तो कौन अर्थ? तातैं जौं लग मैं तिहारे वैरीनिका उपाय करूं तब लग तुम अपना रूप छिपाय कर पृथ्वीपर विहार करहु। ऐसा मंत्रीने कह्या। तदि राजा देश, भण्डार, नगर थाकों सोंपकर नगरतैं बाहिर निकसे। राजाके गए पीछे मंत्रीने राजा दशरथके रूपका पुतला बनाया, एक चेतना नाहीं और सब राजाहीके चिह्न बनाए। लाखादि रसके योगकर उसविषैं रुधिर निरमाप्या। अर शरीरकी कोमलता जैसी प्राणधारीके होय तैसी ही बनाई। सो महिलके सातवें खणमें सिंहासन-विषैं राजा बिराजमान किया सो समस्त लोकनिकों नीचेसे मुजरा होय, ऊपर कोई जाने न पावै। राजाके शरीर में रोग है पृथ्वीपर ऐसा प्रसिद्ध। एक मंत्री अर दूजा पूतला बनानेवाला यह भेद जानै। इनहूं कूं देखकर ऐसा भ्रम उपजै जो राजा ही है। अर यही वृत्तांत राजा जनकके भया। जो कोई पंडित हैं तिनके बुद्धि एकसी होय है। मंत्रीनिकी बुद्धि सबके ऊपर होय विचरै है। यह दोनों राजा लोकस्थितिके वेत्ता पृथ्वीविषैं भागे फिरैं। आपदाकालविषैं जो रीति बताई है ता भांति करैं। जैसैं वर्षा-कालमें चांद सूर्य मेघके जोरसे छिपे रहैं तैसैं जनक और दशरथ दोऊ छिप रहे। ३३९

यह कथा गौतमस्वामी राजा श्रेणिकसूं कहै हैं—हे मगधदेशके अधिपति! वे दोऊ बड़े राजा, महा सुन्दर है राजमंदिर जिनके, अर महामनोहर देवांगना सारिखी स्त्री जिनके, महामनोहर भोगनिके भोक्ता, सो पायनपियादे दलिद्री लोकनिकी नाईं, कोई नहीं संग जिनके, अकेले भ्रमते भए। धिक्कार है संसारके स्वरूपको—ऐसा निश्चयकर जो प्राणी स्थावर जंगम सब जीवनिकूं अभयदान दे सो आप

भी भयसे कम्पायमान न हो। इस अभयदान समान कोऊ दान नाहीं। जाने अभयदान दिया तानैं सब ही दिया। अभयदानका दाता सत्पुरुषनिमें मुख्य है।

अथानन्तर विभीषणने दशरथ जनकके मारवेकूं सुभट बिदा किए। हलकारे जिनके संगमें ते सुभट, शस्त्र हैं हाथनिमें जिनके, महाक्रूर, छिपे छिपे रात दिन नगरीमें फिरें। राजाके महल अति ऊंचे सो प्रवेश न कर सकें। इनकूं दिन बहुत लगे। तब विभीषण स्वयमेव आय महिलमें गीत नाद सुन महलमें प्रवेश किया। राजा दशरथ अंतःपुरके मध्य शयन करता देख्या। विभीषण तो दूर ठाढ़े रहे अर एक विद्युविलसित नामा विद्याधर ताकों पठाया कि याका मस्तक ले आवो। सो आय मस्तक काट विभीषणकों दिखाया, अर समस्त राजलोक रोय उठे। विभीषण इनका और जनकका सिर समुद्रविषै डार आप रावणके निकट गया। रावणकों हर्षित किया। इन दोनों राजानिकी राणी विलाप करें। फिर यह जानकर कि कृत्रिम पूतला था तब यह संतोषकर बैठ रहीं। अर विभीषण लंका जाय अशुभकर्मके शांतिके निमित्त दान पूजादि शुभक्रिया करता भया। अर विभीषणके चित्त में ऐसा पश्चाताप उपज्या जो देखो मेरे कौन कर्म उदय आया जो भाईके मोहसे वृथा भय मान बापरे रंक भूमिगोचरी मृत्युकों प्राप्त किए। जो कदाचित् आशीविष (आशीविष सर्प कहिए जिसे देख विष चढ़े) जातिका सर्प होय तो भी क्या गरुड़को प्रहार कर सकै? कहां वह अल्प ऐश्वर्यके स्वामी भूमिगोचरी अर कहां इन्द्र समान शूर वीरताका धरणहारा रावण? अर कहां मूसा, कहां केशरी सिंह, जाकै अवलोकनतें माते गजराजनिका मद उतर जाय। कैसा है केशरी सिंह? पवन समान है वेग जाका। अथवा जा प्राणीकों जा स्थानकमें जा कारणकरि जेता दुःख अर सुख होना है सो ताको ताकर ता स्थानक विषै क्रर्मनिके वशकरि अवश्य होय है। अर यह निमित्तज्ञानी जो कोऊ यथार्थ जानै तो अपना कल्याण ही क्यों न करे, ताकरि मोक्षके अविनाशी सुख पाइए। निमित्तज्ञानी पराई मृत्युको निश्चय जाने तो अपनी मृत्युके निश्चयसे मृत्युके पहिले आत्मकल्याण क्यों न करै? निमित्तज्ञानीके कहनेसें मैं मूर्ख

भया। खोटे मनुष्यनिकी शिक्षासे जे मन्दबुद्धि हैं ते अकार्यविषै प्रवरतें हैं। यह लंकापुरी पाताल है तल जाका ऐसा जो समुद्र ताके मध्य तिष्ठै। जो देवनहूं को अगम्य, तहां बिचारे भूमिगोचरियोंके कहांसे गम्य होय ? मैं यह अत्यन्त अयोग्य किया, बहुरि ऐसा काम कबहू न करूं। ऐसी धारणा धार उत्तम दीप्तिसे युक्त जैसें सूर्य प्रकाश रूप विचरैं तैसें मनुष्यलोकमें रमते भए।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रन्थ, ताकी भाषा वचनिकाविषैं राजा दशरथ अर जनकको विभीषणकृत भय वर्णन करनेवाला तेईसवां पर्व पूर्ण भया ॥ २३ ॥

अथानन्तर गौतम स्वामी कहै हैं—हे श्रेणिक ! अरण्यके पुत्र दशरथने पृथ्वीपर भ्रमण करते केकई को परणा, सो कथा महा आश्चर्यका कारण तू सुन। उत्तर दिशाविषै एक कौतुकमंगल नामा नगर, ताके पर्वत समान ऊंचा कोट, तहां राजा शुभमति राज करै। सो वह शुभमति नाममात्र नाहीं, यथार्थ शुभमति ही है। ताकी राणी पृथुश्री गुण रूप आभरणनिकरि मंडित, ताके केकई पुत्री, द्रोणमेघ पुत्र भए, जिनके गुण दशोंदिशामें व्याप्त रहे। केकई अतिसुन्दर, सर्व अंग मनोहर, अद्भुत लक्षणनिकी धरणहारी, सर्व कलाओंकी पारगामिनी अति शोभती भई। सम्यग्दर्शनकरि संयुक्त श्राविकाके व्रत पालनहारी, जिनशासनकी वेत्ता, महाश्रद्धावंती तथा सांख्य पातंजल वैशेषिक वेदांत न्याय मीमांसा चार्वाकादिक परशास्त्रनिके रहस्यकी ज्ञाता तथा लौकिकशास्त्र शृंगारादिक तिनका रहस्य जाने, नृत्यकला में अति निपुण, सर्व भेदोंसे मंडित जो संगीत सो भलीभांति जानै। उर कंठ सिर इन तीन स्थानकसे स्वर निकसे हैं अर स्वरोंके सात भेद हैं—षड्ज १, ऋषभ २, गांधार ३, मध्यम ४, पंचम ५, धैवत ६ निषाद ७. सो केकईको सर्वगम्य अर तीन प्रकारका लय शीघ्र १, मध्यम २, विलम्बित ३, अर चार प्रकारका ताल स्थायी १ संचारी २ आरोहक ३ अवरोहक ४, अर तीन प्रकारकी भाषा संस्कृत १ प्राकृत २ शौरसेनी ३, स्थाईचालके भूषण चार प्रसंगादि १, प्रसन्नान्त २, मध्यप्रसाद ३, प्रसन्नाद्यवसान ४

अर संचारीके छहभूषण निवृत्त १, प्रस्थिल २, बिंदु ३, प्रखोलित ४, तमोमंद ५, प्रसन्न, ६, आरोहणका एक प्रसन्नादि भूषण अर अवरोहणके दो भूषण प्रसन्नान्त १, कुहर २, ये तेरह अलंकार अर चार प्रकार वादित्र ते ताररूप सो तांत १ और चामके मढ़े ते आनद्ध २ अर बांसुरी आदि फूकके बाजे वे सुषिर ३ अर कांसीके बाजे वे घन ४ ये चार प्रकारके वादित्र जैसें केकई बजावै तैसें और न बजावै। गीत नृत्य वादित्र ये तीन भेद हैं सो नृत्यमें तीनों आए। अर रसके भेद नव—श्रृंगार १ हास्य २ करुणा ३ वीर ४, अद्भुत ५, भयानक ६, रौद्र ७, वीभत्स ८, शांत ९। तिनके भेद जैसें केकई जानै तैसें और कोऊ न जानै। अक्षर मात्रा अर गणितशास्त्रमें निपुण, गद्यपद्य सर्वमें प्रवीण, व्याकरण, छंद, अलंकार, नाममाला, लक्षणशास्त्र, तर्क, इतिहास अर चित्रकलामें अतिप्रवीण, तथा रत्नपरीक्षा अश्वपरीक्षा, नरपरीक्षा, शस्त्रपरीक्षा, गजपरीक्षा, वृक्षपरीक्षा, वस्त्रपरीक्षा, सुगंधपरीक्षा, सुगन्धादिक द्रव्यनिका निपजावना इत्यादि सर्व बातनि में प्रवीण, ज्योतिष विद्यामें निपुण, बाल वृद्ध तरुण मनुष्य तथा घोड़े, हाथी इत्यादि सबके इलाज जानै, मंत्र औषधादि सर्वमें तत्पर, वैद्यविद्यानिधान, सर्व कलामें सावधान, महाशीलवंती, महामनोहर, युद्धकलामें अतिप्रवीण, श्रृंगारादि कलामें अति निपुण, विनय ही है आभूषण जाके, कला, अर गुण अर रूपमें ऐसी कन्या और नाहीं। गौतम स्वामी कहै हैं—हे श्रेणिक! बहुत कहवेकर कहा? केकई के गुणनिका वर्णन कहांतक करिए। तब ताके पिताने विचारा कि ऐसी कन्या के योग्य वर कौन? स्वयंवरमंडप करिये, तहां यह आप ही वरै। ताने हरिवाहन आदि अनेक राजा स्वयंवरमंडपमें बुलाए सो विभवकर संयुक्त आये। तहां भ्रमते संते जनकसहित दशरथहू आए। सो यद्यपि इनके निकट राज्यका विभव नाहीं तथापि रूप अर गुणनिकर सर्व राजावोंतैं अधिक हैं। सर्व राजा सिंहासन पर बैठे, अर केकईको द्वारपाली सबनके नाम ग्राम गुण कहै हैं। सो वह विवेकिनी साधुरूपिणी मनुष्योंके लक्षण जाननेवाली प्रथम तो दशरथकी ओर नेत्ररूप नीलकमलकी माला डारी। बहुरि वह सुन्दर बुद्धिकी धरनहारी जैसे राजहंसनी बगुलोंके मध्य बैठे जो राजहंस उसकी ओर जाय

तैसे अनेक राजावोंके मध्य बैठा जो दशरथ ताकी ओर गई। सो भावमाला तो पहिले ही डारी हुती, अर द्रव्यरूप जो रत्नमाला सो भी लोकाचारके अर्थ दशरथके गलेमें डारी। तदि कईएक नृप जे न्यायवंत बैठे हुते ते प्रसन्न भए। अर कहते भए कि जैसी कन्या थी वैसा ही योग्य वर पाया। अर कईएक बिलखे होय अपने देश उठ गए। अर कईएक जे अति धीठ थे ते क्रोधायमान होय युद्धकूं उद्यमी भये। अर कहते भए जे बड़े बड़े वंशके उपजे, अर महाऋद्धिके मंडित ऐसे नृप उनको तजकर यह कन्या, नहीं जानिये कुलशील जिसका ऐसा यह विदेशी, उसे कैसे वरै? खोटा है अभिप्राय जाका ऐसी कन्या है, इसलिए एक विदेशीको यहांसे काढकर कन्याके केश पकड़ बलात्कार हरलो। ऐसा कहकर वे दुष्ट कईएक युद्धकों उद्यमी भये। तदि राजा शुभमति अति व्याकुल होय दशरथकूं कहता भया—हे भव्य! मैं इन दुष्टनिकूं निवारूं हूं। तुम इस कन्याको रथमें चढ़ाय अन्यत्र जावो। जैसा समय देखिये तैसा करिए, सर्व राजनीतिमें यह बात मुख्य है। या भांति जब ससुरने कह्या तदि राजा दशरथ अत्यन्त धीर है बुद्धि जिनकी, हँसकर कहते भये—हे महाराज! आप निश्चिंत रहो। देखो इनसबनिकों दशों दिशाकों भगाऊं। ऐसा कहकर आप रथविषै चढ़े और केकईकों चढ़ाय लीनो। कैसा है रथ? जाके महामनोहर अश्व जुड़े हैं। कैसे हैं दशरथ? मानो रथपर चढ़े शरदऋतुके सूर्य ही हैं। अर केकई घोड़ोंकी बाग संभारती भई। केकई कैसी है? महापुरुषार्थके स्वरूपकूं धरै युद्ध की मूर्ति ही है। पतिसूं विनती करती भई—हे नाथ! आपकी आज्ञा होय और जाकी मृत्यु उदय आई होय उसहीकी तरफ रथ चलाऊं। तदि राजा कहते भये—हे प्रिय! गरीबनिके मारवेकर क्या? जो इस सर्व सेनाका अधिपति हेमप्रभ है, जाके सिर पर चन्द्रमा सारिखा सफेद छत्र फिरै है ताकी तरफ रथ चला। हे रण-पण्डिते! आज मैं इस अधिपतिहीकों मारूंगा। जब दशरथने ऐसा कह्या तदि वह पतिकी आज्ञा प्रमाण वाहीउर रथ चलावती भई। कैसा है रथ? ऊंचा है सफेदछत्र जाके, अर तरंगरूप है महाध्वजा जाके। रथविषै ये दोनों दम्पती देवरूप विराजे हैं। इनका रथ अग्नि समान है, जे या रथकी

और आए वे हजारों पतंगकी न्याई भस्म भए। दशरथके चलाए जे वाण तिनसे अनेक राजा बींधे गए। सो क्षणमात्रमें भागे। तब हेमप्रभ जो सबनिका अधिपति था उसके प्रेरे, अर लज्जावान होय दशरथसूं लडवेकों हाथी घोडा रथ पयादोंसे मण्डित आए, किया है शूरपनेका महा शब्द जिनने, तोमर जातिके हथियार बाण चक्र कनक इत्यादि अनेक जातिके शस्त्र, अकेले दशरथ पर डारते भए। सो बड़ा आश्चर्य है। दशरथ राजा एक रथका स्वामी था सो युद्ध समय मानो असंख्यात रथ होयगए। अपने बाणनि-करि समस्त वैरियनिके बाण काट डाले। अर आप जे बाण चलाए वे काहूको दृष्टिमें न आए और शत्रुवोंके लागे। सो राजा दशरथ ने हेमप्रभकों क्षणमात्रमें जीत लिया, ताकी ध्वजा छेदी, छत्र उडाया और रथके अश्व घायल किए, रथ तोड़ डाला, रथतें नीचे डार दिया। तदि वह राजा हेमप्रभ और रथ पर चढ़कर भयंकर कंपायमान होय अपना यश काला कर शीघ्रही भाग्या। दशरथने आपको बचाया, स्त्रीकू बचाई, अपने अश्व बचाये, बैरियोंके शस्त्र छेदे अर बैरियोंको भगाया। एक दशरथ अनंत रथ जैसे काम करता भया। एक दशरथ सिंह समान उसको देख सर्व योधा सर्वदिशाकों हिरण समान हो भागे। अहो धन्य शक्ति या पुरुषकी अर धन्य शक्ति याकी, ऐसा शब्द सुसुरकी सेनामें और शत्रुवोंकी सेनामें सर्वत्र भया। अर बंदीजन बिरद बखानते भए। राजा दशरथने महाप्रतापकूं धरैं कौतुकमंगल नगरविषै केकईसूं पाणिग्रहण किया। महामंगलाचार भया। राजा केकईकों परणकर अयोध्या आए और जनक भी मिथिलापुर गए। फिर इनका जन्मोत्सव और राज्याभिषेक विभूतिसे
भया अर समस्त भय रहित इन्द्र समान रमते भए।

अथानन्तर सर्व राणियोंके मध्य राजा दशरथ केकईसूं कहते भए—हे चंद्रवदनी। तेरे मनमें जो वस्तुकी अभिलाषा होय सो मांग। जो तू मांगे सोई देऊं। हे प्राणप्यारी! तेरेसे अति प्रसन्न भया हूं, जो तू अतिविज्ञानसे उस युद्धमें रथको न प्रेरती तो एकसाथ एते बैरी आये थे तिनको मैं कैसे जीतता? जब रात्रिको अन्धकार जगतमें व्याप रह्या है जो अरुण सारिखा सारथी न होय तो उसे सूर्य कैसे जीतैं? या

भाँति कैकईके गुण वर्णन राजाने किये तोऊ वह पतिव्रता लज्जाके भार कर अधोमुख होयगई। राजाने बहुरि कही वर मांग। तब कैकईने बीनती करी, हे नाथ! मेरा वर आपके धरोहर रहे, जा समय मेरी इच्छा होयगी ता समय लूंगी। तब राजा प्रसन्न होय कहते भये—हे कमलवदनी मृगनयनी! श्वेतता श्यामता आरक्तता ये तीन वर्णको धरे अद्भुत हैं नेत्र जाके, अद्भुत बुद्धि तेरी है, महा नरपतिकी पुत्री, अति नयकी वेत्ता, सर्वकलाकी पारगामिनी, सर्व भोगोपभोगकी निधि, तेरा वर मैं धरोहर राख्या, तू जब जो मांगेगी सोही मैं दूंगा। अर रघुवंशी राजलोक कैकईको देख हर्षको प्राप्त भये अर चित्तमें चिंतवते भये यह अद्भुत बुद्धिनिधान है सो कोई अपूर्व वस्तु मांगेगी अल्पवस्तु कहा मांगे।

अथानन्तर गौतमस्वामी श्रेणिकसे कहे हैं—हे श्रेणिक! लोकका चरित्र मैं तुझे संक्षेपताकर कह्या। जो पापी दुराचारी हैं वे नरक निगोदके परम दुःख पावें हैं। अर जे धर्मात्मा साधुजन हैं वे स्वर्गमोक्षमें महा सुख पावें हैं। भगवानकी आज्ञाके अनुसार बड़े महापुरुषनिके चरित्र तुझे कहे। अब श्रीरामचन्द्रजीकी उत्पत्ति सुन। कैसे हैं श्रीरामचन्द्रजी? महा उदार, प्रजाके दुःखहरणहारे, महान्यायवन्त, महाधर्मवन्त, महाविवेकी, महाशूरवीर, महाज्ञानी, इक्ष्वाकुवंशका उद्योत करणहारे बड़े सत्पुरुष हैं।

इति श्री रविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रन्थ, ताकी भाषा वचनिकाविषै कैकईको वरप्रदान वर्णन करनेवाला चौबीसवां पर्व पूर्ण भया ॥२४॥

अथानन्तर जाहि अपराजिता कहे हैं ऐसी जो कौशल्या सो रत्नजड़ित महलविषै महासुन्दर सेज १५४
पर सूती थी सो रात्रिके पिछले पहिर अतिआश्चर्यकारी अद्भुत स्वप्न देखती भई। उज्ज्वल हस्ती इन्द्रके ऐरावत हस्तीसमान १ अर महाकेसरी सिंह २, अर सूर्य ३ तथा सर्वकला पूर्ण चन्द्रमा ४ ये पुराण पुरुषोंके गर्भमें आवनेके अद्भुत स्वप्न देख आश्चर्यको प्राप्त भई। फिर प्रभातके वादित्र और मंगल शब्द सुनकर सेजसे उठी। प्रभात कियासे हर्षकूं प्राप्त भया है मन जाका, महा विनयवंती, सखीजन

मंडित भरतारके समीप जाय सिंहासन पर बैठी। कैसी है राणी ? सिंहासनको शोभित करणहारी, हाथ जोड़ नम्रीभूत होय महामनोहर स्वप्ने जे देखे तिनका वृत्तांत स्वामीसूं कहती भई। तदि समस्त विज्ञानके पारगामी राजा स्वप्ननिका फल कहते भए–हे कांते! परम आश्चर्यकारी तेरे मोक्षगामी पुत्र, अन्तर बाह्य शत्रुवोंका जीतनहारा, महापराक्रमी होयगा। रागद्वेष मोहादिक अंतरंगके शत्रु कहिये, अर प्रजाके बाधक दुष्ट भूपति बहिरंगशत्रु कहिये। या भांति राजा कही तदि राणी अति हर्षित होय अपने स्थानक गई, मंद मुलकन रूप जो केश उनसे संयुक्त है मुखकमल जाका। अर राणी केकई पति सहित श्रीजिनेन्द्रके जे चैत्यालय तिनमें भाव संयुक्त महापूजा करावती भई। सो भगवानकी पूजाके प्रभावसे राजाका सर्व उद्वेग मिटा, चित्तमें महा शांति होती भई।

अथानन्तर राणी कौशल्याके श्रीरामका जन्म भया। राजा दशरथने महा उत्सव किया। छत्र चमर सिंहासन टार बहुत द्रव्य याचकनिकों दिए। उगते सूर्यसमान है वर्ण रामका, कमल समान हैं नेत्र और लक्ष्मीसे आलिंगित है वक्षस्थल जाका, तातैं माता पिता सर्व कुटुम्बने इनका नाम पद्म धरा। फिर राणी सुमित्रा अति सुन्दर है रूप जाका, सो महा शुभस्वप्न अवलोकन कर आश्चर्यको प्राप्त होती भई। वे स्वप्न कैसे ? सो सुनो–एक बड़ा केहरी सिंह देख्या, लक्ष्मी और कीर्ति बहुत आदरसे सुन्दर जलके भरे कलश, कमलसे ढके, उनसे स्नान करावै हैं। और आप सुमित्रा बड़े पहाड़के मस्तकपर बैठी है। अर समुद्र पर्यंत पृथ्वीकों देखै है। अर देदीप्यमान हैं किरणनिके समूह जाके, ऐसा सूर्य देख्या, अर नाना प्रकारके रत्ननिकरि मंडित चक्र देख्या। ये स्वप्न देख प्रभातके मंगलीक शब्द भए तब सेजसे उठकर प्रातः क्रियाकर, बहुत विनयसंयुक्त पतिके समीप जाय, मिष्टबानीकरि स्वप्ननिका वृत्तांत कहती भई। तदि राजा कही–हे वरानने कहिए सुन्दर है वदन जाका! तेरे पृथ्वीपर प्रसिद्ध पुत्र होयगा, शत्रुवोंके समूहका नाश करनहारा, महातेजस्वी, आश्चर्यकारी है चेष्टा जाकी। ऐसा पतिने कहा तदि वह पतिव्रता हर्षकरि भरया है चित्त जाका, अपने स्थानक गई। सर्व लोकनिकों अपने सेवक जानती भई। फिर

पद्म
पुराण
३४७

याके परमज्योतिका धारी पुत्र होता भया। मानो रत्नोंकी खानविषै रत्न ही उपज्या। सो जैसा श्रीराम के जन्मका उत्सव किया हुता तैसा ही उत्सव भया। जा दिन सुमित्राके पुत्रका जन्म भया, ताही दिन रावणके नगरविषै हजारों उत्पात होते भए। अर हितुवोंके नगरविषै शुभ शकुन भए। इन्दीवर कमल समान श्यामसुन्दर, अर कांतिरूप जलका प्रवाह, भले लक्षणनिका धरणहारा, तातैं माता पिताने लक्ष्मण नाम धरचा। राम लक्ष्मण ये दोऊ बालक महामनोहर रूप, मूंगा समान हैं लाल होठ जिनके, अर लाल कमल समान हैं कर अर चरण जिनके, माखनहूतैं अतिकोमल है शरीरका स्पर्श जिनका, अर महासुगन्ध शरीर। ये दोऊ भाई बाललीला करते कौनके चित्तकूं न हरैं? चन्दनकरि लिप्त हैं शरीर जिनका, केसरका तिलक किये कैसैं सोहैं मानों विजयार्धगिरि अर अंजनगिरि ही, स्वर्णके रससे लिप्त हैं शरीर जिनका, अनेक जन्मका बढ़ा जो स्नेह तातैं परम स्नेहरूप चन्द्र सूर्य समान ही हैं। महल माहीं जावैं तब तो सर्व स्त्रीजनकों अतिप्रिय लागैं। अर बाहिर आवैं, तब सर्व जननिकों प्यारे लागैं। जब ये बचन बोलैं तब मानों जगतकों अमृतकर सींचैं हैं। अर नेत्रनिकर अवलोकन करैं हैं, तब सबनिकों हर्ष करि पूर्ण करैं हैं। सबनिके दारिद्र हरणहारे, सबके हितु, सबके अंतःकरण पोषणहारे, मानों ये दोऊ हर्षकी अर शूरवीरताकी मूर्ति ही हैं, अयोध्यापुरीविषै सुखसूं रमते भए। कैसे हैं दोनों कुमार? अनेक सुभट करैं हैं सेवा जिनकी, जैसैं पहले बलभद्र विजय अर वासुदेव त्रिपृष्ठ होते भये, तिन समान हैं चेष्टा जिनकी। बहुरि केकई कौ दिव्यरूपका धरणहारा महाभाग्य पृथ्वीविषै प्रसिद्ध भरत नामा पुत्र भया। बहुरि सुप्रभाके सर्व लोकमें सुन्दर, शत्रुवोंका जीतनहारा शत्रुघन ऐसा नाम का पुत्र भया। ३४७
अर रामचन्द्रका नाम पद्म तथा बलदेव, अर लक्ष्मणका नाम हरि अर वासुदेव अर अर्द्धचक्री भी कहै हैं। एक दशरथकी जो चार राणी सो मानों चार दिशा ही हैं, तिनके चार ही पुत्र समुद्र समान गम्भीर, पर्वत समान अचल, जगतके प्यारे। इन चारों ही कुमारनिको पिता विद्या पढ़ावनेंके अर्थि योग्य पाठकको सौंपते भए।

अथानन्तर कापिल्य नामा नगर अतिसुन्दर, तहां एक शिवी नामा ब्राह्मण, ताकी इषु नामा स्त्री, ताके अरि नामा पुत्र सो महा अविवेकी अविनयी, माता पिताने लडाया सो महा कुचेष्टाका धरणहारा, हजारों उलहनोंका पात्र होता भया। यद्यपि द्रव्यका उपार्जन, धर्मका सग्रह, विद्याका ग्रहण, वा नगरमें ये सब ही बातें सुलभ हैं परन्तु याको विद्या सिद्ध न भई। तदि माता पिता विचारी विदेशमें याहि सिद्धि होय। यह विचार खेदखिन्न होय घरतैं निकास दिया, सो महा दुखी होय केवल वस्त्र याके पास सो यह राजगृह नगरमें गया। तहां एक वैवस्वत नामा धनुर्विद्याका पाठी महापंडित, ताके हजारों शिष्य विद्याका अभ्यास करैं। ताकैं निकट ये अरि यथार्थ धनुषविद्याका अभ्यास करता भया। सो हजारों शिष्यनिविषै यह महाप्रवीण होता भया। ता नगरका राजा कुशाग्र सो ताके पुत्र भी वैवस्वतके निकट बाणविद्या पढ़ै सो राजाने सुनी कि एक विदेशी ब्राह्मणका पुत्र आया है जो राजपुत्रनितैंहूं अधिक बाणविद्याका अभ्यासी भया। सो राजा मनमें रोष किया। जब यह बात वैव-स्वतने सुनी तब अरिको समझाया, कि तू राजाके निकट मूर्ख हो जा, विद्या मत प्रकाशै। सो राजाने धनुषविद्याके गुरुकों बुलाया। जो मैं तेरे सर्व शिष्यनिकी विद्या देखूंगा। तब सब शिष्यनिकों लेयकर गया। सर्व ही शिष्यनि यथायोग्य अपनी अपनी बाणविद्या दिखाई, निशाने बींधे, ब्राह्मणका जो पुत्र अरि, ताने ऐसे बाण चलाए सो विद्यारहित जाना गया। तब राजा जानी, याकी प्रशंसा काहूने झूठी कही। तब वैवस्वतकों सर्व शिष्यनि सहित सीख दीनी। तब अपने घर आय वैवस्वतने अपनी पुत्री अरि को परणाय विदा किया, सो रात्रि ही पयाणकर अयोध्या आया, राजा दशरथसों मिल्या, अपनी बाणविद्या दिखाई। तब राजा प्रसन्न होय अपने चारों पुत्र बाणविद्या सीखनेकों याके निकट राखे। ते बाणविद्याविषै अतिप्रवीण भए। जैसैं निर्मल सरोवरमें चन्द्रमा की कांति विस्तारकों प्राप्त होय तैसैं इनविषै बाणविद्या विस्तारकों प्राप्त भई। और भी अनेक विद्या गुरुसंयोगतैं तिनकों सिद्ध भई। जैसैं काहू ठौर रत्न मिले होवें, अर ढकनेसे ढके होवें, सो ढकना उघाड़े प्रकट होय, तैसैं सर्व

विद्या प्रकट भईं। तब राजा अपने पुत्रनिकूं सर्व शास्त्रविषैं अति प्रवीणता देख, अर पुत्रोंका विनय उदार चेष्टा अवलोकन कर अति प्रसन्न भया। इनके सर्व विद्याके गुरुवोंकी बहुत सन्मानता करी। राजा दशरथ गुणोंके समूहसे युक्त, महाज्ञानीने जो उनकी वांछा हुती तातैं अधिक संपदा दीनी, दान विषैं विख्यात है कीर्ति जाकी। केतेक जीव शास्त्रज्ञानको पायकर परम उत्कृष्टताकों प्राप्त होय हैं, अर कईएक जैसेके तैसे ही रहै हैं, अर कईएक विषमकर्मके योगतैं मदकरि आंधे होय हैं। जैसैं सूर्यकी किरण स्फटिकगिरिके तटविषैं अति प्रकाशकों धरैं है, और स्थानकविषैं यथास्थित प्रकाशको धरैं है अर उल्लुवोंके समूहमें अतितिमिररूप होय परणवैं।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रंथ, ताकी भाषावचनिकाविषैं चार भाईनिके जन्मका वर्णन करनेवाला पच्चीसवाँ पर्व पूर्ण भया ॥२५॥

अथानन्तर गौतम स्वामी राजा श्रेणिकतैं कहै हैं—हे श्रेणिक! अब जनकका कथन सुनहु। राजा जनककी स्त्री विदेहा, ताहि गर्भ रह्या। सो एक देवके यह अभिलाषा हुई कि जो याके बालक होय सो मैं ले जाऊं। तब श्रेणिकने पूछी हे नाथ! वा देवके ऐसी अभिलाषा काहेतैं उपजी? सो मैं सुना चाहूं हूं। तदि गौतम स्वामी कहते भए—हे राजन्! चक्रपुर नामा एक नगर है। तहां चक्रध्वज नामा राजा, ताके राणी मनस्विनी, तिनके पुत्री चित्तोत्सवा, सो कुंवारी चटशालामें पढ़े। अर राजाका पुरोहित धूमकेश, ताके स्वाहा नामा स्त्री, ताका पुत्र पिंगल सो भी चटशालामें पढ़े। सो चित्तोत्सवाका अर पिंगलका चित्त मिल गया। सो इनकूं विद्याकी सिद्धि न भई। जिनका मन कामबाणकरि बेधा जाय तिनकूं विद्या अर धर्मकी प्राप्ति न होय है। प्रथम स्त्री पुरुषका संसर्ग होय, बहुरि प्रीति उपजै, प्रीतितैं परस्पर अनुराग बढ़े, बहुरि विश्वास उपजै, ताकरि विकार उपजै। जैसैं हिंसादिक पंच पापनिकरि अशुभकर्म बंधैं तैसैं स्त्रीसंगतैं काम उपजै है।

अथानन्तर वह पापी पिंगल चित्तोत्सवाकूं हर ले गया, जैसे कीर्तिको अपयश हर ले जाय। जब दूर देशनिविषै हर लेगया तबि सब कुटुम्बके लोकनि जानी, अपने प्रमादके दोषकरि ताने वह हरी है। जैसैं अज्ञान सुगतिकों हरै तैसैं वह पिंगल कन्याकूं चोरीकरि हर ले गया। परन्तु धनरहित शोभै नाहीं। जैसैं लोभी धर्मवर्जित तृष्णा करि न सोहै। सो यह विदग्ध नगरमें गया। तहां अन्य राजानिकी गम्यता नाहीं। सो निर्धन नगरके बाहिर कुटी बनायकर रह्या। ता कुटीके किवाड़ नाहीं। अर यह ज्ञान विज्ञान रहित तृण काष्ठादिकका संग्रहकर विक्रयकर उदर भरै, दारिद्रके सागरमें मग्न सो स्त्रीका अर आपका उदर महा कठिनतासूं भरै। तहां राजा प्रकाशसिंह, अर राजी प्रवरावली का पुत्र जो राजा कुण्डलमण्डित, सो याकी स्त्रीकूं देख, शोषण–संतापक–उच्चाटन–वशीकरण–मोहन ये कामके पंच बाण इनकरि बेध्या गया। ताने रात्रिकों दूती पठाई सो चित्तोत्सवाको राजमंदिरमें ले गई। जैसैं राजा सुमुखके मंदिर विषै दूती वनमालाको लेगई हुती। सो कुण्डलमण्डित वासहित सुखसूं रमैं।

अथानन्तर वह पिंगल काष्ठका भार लेकर घर आया। सो सुन्दरीकूं न देखकर अतिकष्टके समुद्रमें डूबा, विरहकरि महा दुखित भया, काहू ठौर सुख न पावै। चक्रविषै आरूढ समान याका चित्त व्याकुल भया। हरी गई है भार्या जाकी ऐसा जो यह दीन ब्राह्मण सो राजापै गया और कहता भया–हे राजन्! मेरी स्त्री तिहारे राजमें चोरी गई। जे दरिद्री आतिवंत भयभीत स्त्री वा पुरुष उनका राजा ही शरण है। तब राजा धूर्त, सो राजाने मंत्रीको बुलाय झूठमूठ कहा–याकी स्त्री चोरी गई है ताहि पैदा करो, ढील मत करो। तब एक सेवकने नेत्रोंकी सैन मार कर झूठ कहा। हे देव! मैं या ब्राह्मणकी स्त्री पोदनापुरके मार्गमें पथिकनिके साथ जाती देखी, सो आर्यिकानिके मध्य तप करवेको उद्यमी है, तातैं हे ब्राह्मण! तू ताहि लाया चाहे तो शीघ्र ही जा, ढील काहेकों करै। ताका अबार दीक्षा धरनेका समय कहां? तरुण है शरीर जाका, अर महा श्रेष्ठ स्त्रीके गुणनिसे पूर्ण है। ऐसा जब झूठ कहा तब ब्राह्मण गाढी कमर बांध शीघ्र वांकी ओर दौड्या, जैसे तेज घोड़ा शीघ्र दौड़े। सो पोदनापुरमें चैत्यालय तथा

उपवनादि वनमें सर्वत्र ढूंढ़ी, काहू ठौर न देखी। तब पाछा विदग्धनगरमें आया। सो राजाकी आज्ञातैं क्रूर मनुष्योंने गलहटा देय लष्टमुष्टि प्रहार कर दूर किया। ब्राह्मण स्थानभ्रष्ट भया, क्लेश भोगा, अपमान लहा, मार खाई। एते दुःख भोग कर दूर देशांतर उठ गया। सो प्रिया बिना याको किसी ठौर सुख नाहीं। जैसैं अग्निमें पड़ा सर्प सूंसै तैसैं यह रात दिन सूंसता भया। विस्तीर्ण कमलनिका वन याहि दावानल समान दीखै, अर सरोवर अवगाह करता विरहरूप अग्निसे बलै। या भांति यह महा दुखी पृथ्वीविषैं भ्रमण करे। एक दिन नगरसे दूर वनमें मुनि देखे। मुनिका नाम आर्यगुप्ति बड़े आचार्य, तिनके निकट जाय हाथ जोड़ नमस्कार कर धर्म श्रवण करता भया। धर्म श्रवण कर याकों वैराग्य उपजा। महा शांतचित्त होय जिनेन्द्रके मार्गको प्रशंसा करता भया। मनमें विचारै है—अहो यह जिनराजका मार्ग परम उत्कृष्ट है। मैं अंधकारमें पड़ा हुता, सो यह जिनधर्मका उपदेश मेरे घटमें सूर्य समान प्रकाश करता भया। मैं अब पापोंका नाश करनहारा जो जिनशासन ताका शरण लेऊं। मेरा मन और तन विरहरूप अग्निमें जरै है सो मैं शीतल करूं। तब गुरुकी आज्ञातैं वैराग्यकों पाय, परिग्रहका त्यागकर दिगम्बरी दीक्षा धरता भया। पृथ्वीपर विहार करता, सर्व संगका परित्यागी, नदी पर्वत समान वन उपवनोंमें निवास करता, तपकर शरीरका शोषण करता भया। जाके मनको बर्षाकालमें अति वर्षा भई तो भी खेद न उपज्या, और शीतकालमें शीत वायुकरि जाका शरीर न कांपा, और ग्रीषम ऋतुमें सूर्यकी किरण कर व्याकुल न भया। याका मन विरहरूप अग्निकर जला हुता सो जिनवचनरूप जलकी तरंगकरि शीतल भया। तपकर शरीर अर्धदग्ध वृक्षके समान होय गया।

अब विदग्धपुरका राजा जो कुण्डलमंडित ताकी कथा सुनहु। राजा दशरथका पिता अरण्य अयोध्यामें राज्य करै। सो यह कुण्डलमंडित पापी गढ़के बलकर अरण्यके देशकों विराधै। जैसे कुशील पुरुष मर्यादा लोप करै तैसैं यह ताकी प्रजाको बाधा करै। राजा अरण्य बड़ा राजा ताके बहुत देश। सो याने कईएक देश उजाड़े, जैसे दुर्जन गुणोंको उजाड़ै, अर राजाके बहुत सामंत विराधे जैसैं कषाई

जीवनिके परिणाम विराधै, अर योगी कषायोंका निग्रह करैं, तैसैं याने राजासे विरोध कर अपने नाशका उपाय किया। सो यद्यपि यह राजा अरण्यके आगे रंक है तथापि गढ़के बलसे पकड़ा न जाय। जैसें मूसा पहाड़के नीचे दरे मिल तामें बैठ जाय तब नाहर क्या करै? सो राजा अरण्यको या चिंता से रात दिन चैन न पड़े, आहारादिक शरीरकी क्रिया अनादरसे करै। तब राजाका बालचन्द्र नामा सेनापति सो राजाको चिंतावान् देख पूछता भया--हे नाथ! आपको व्याकुलताका कारण कहा? जब राजाने कुण्डलमंडितका वृत्तांत कहा तब बालचन्द्रने राजासे कही आप निश्चित होवो, उस पापी कुंडलमंडितको बांधकर आपके निकट ले आऊं। तब राजाने प्रसन्न होय बालचन्द्रको बिदा किया। चतुरंग सेना लें बालचन्द्र सेनापति चढ्या सो कुण्डलमंडित मूर्ख चित्तोत्सवासे आसक्तचित्त सर्व राज्य चेष्टारहित महाप्रमादमें लीन था। नहीं जाना है लोकका वृत्तांत जाने, वह कुंडलमंडित, नष्ट भया है उद्यम जाका। जो बालचन्द्रने जायकर क्रीडामालमें जैसैं मृगको बांधे तैसे बांध लिया अर उसके सर्व राज्यमें राजा अरण्यका अधिकार किया, अर कुंडलमंडितको राजा अरण्यके समीप लाया। बालचन्द्र सेनापतिने राजा अरण्यका सर्व देश बाधा रहित किया। राजा सेनापतिसे बहुत हर्षित भया अर बहुत बधारा, अर पारितोषिक दिये, अर कुंडलमंडित अन्यायमार्गतैं राज्यसे भ्रष्ट भया, हाथी घोड़े रथ पयादे सब गए, शरीरमात्र रह गया, पयादे फिरें, सो महादुखी पृथ्वीपर भ्रमण करता खेदखिन्न भया। मनमें बहुत पछतावै जो मैं अन्यायमार्गीने बड़ोंसे विरोधकर बुरा किया। एक दिन यह मुनियोंके आश्रम जाय आचार्यको नमस्कारकर भावसहित धर्मका भेद पूछता भया। गौतम स्वामी राजा श्रेणिकतैं कहै हैं—हे राजन्! दुखी दरिद्री कुटुम्बरहित व्याधिकरि पीडित तिनमैं काहू एक भव्यजीवके धर्म बुद्धि उपजै है। ताने आचार्यसूं पूछा—हे भगवन्! जाकी मुनि होनेकी शक्ति न होय सो गृहस्थाश्रममें कैसे धर्मका साधन करै? आहार भय मैथुन परिग्रह यह चार संज्ञा, तिनमें तत्पर यह जीव कैसे पापनिकरि छूटै? सो मैं सुना चाहूं हूं, आप कृपाकर कहो। तब गुरु कहते भये—धर्म जीवदयामई है। ये सर्व प्राणी

अपनी निंदाकर अर गुरुनिके पास आलोचनाकर पापतैं छूटैं हैं। तू अपना कल्याण चाहै है, अर शुद्ध-कर्मकी अभिलाषा करै है तो हिंसाका कारण महाघोरकर्म लहू अर वीर्यसे उपजा ऐसा जो मांस ताका भक्षण सर्वथा तज। सर्व ही संसारी जीव मरणतैं डरै हैं। तिनके मांसकर जे अपने शरीरकों पोखैं हैं ते पापी निःसंदेह नरकमें पड़ेंगे। जे मांसका भक्षण करै हैं अर नित्य स्नान करै हैं तिनका स्नान वृथा है। अर मूंड मुडाय भेष लिया सो भेष भी वृथा है। अर अनेक प्रकारके दान उपवासादिक यह मांसाहारीको नरकसे नाहीं बचा सकै हैं। या जगतमें ये सर्व ही जातिके जीव पूर्वजन्ममें या जीवके बांधव भए हैं। तातैं जो पापी मांसका भक्षण करै हैं ताने तो सर्व बांधव भखे। जो दुष्ट निर्दई मच्छ मृग पक्षियोंको हनै हैं अर मिथ्यामार्गमें प्रवरतैं हैं सो मधु मांसके भक्षणतैं महाकुगतिविषैं जावै है। यह मांस वृक्षनितैं नाहीं उपजै है, भूमितैं नाहीं उपजै है, अर कमलकी न्याईं जलसे नाहीं निपजै है, अथवा अनेक वस्तुनिके योगतैं जैसैं औषधि बनै है तैसैं मांसकी उत्पत्ति नाहीं होय है। दुष्ट जीव, निर्दयी वा गरीब बड़ा वल्लभ है जीतव्य जिनकों, ऐसे पक्षी मृग मत्स्यादिक तिनको हन कर मांस उपजावै हैं। सो उत्तम जीव दयावान नाहीं भखै हैं। अर जिनके दुग्धकरि शरीर वृद्धिको प्राप्त होय ऐसी गाय भैंस छेरी तिनके मृतक शरीरको भखैं हैं अथवा मार मारकर भखे हैं, तथा तिनके पुत्र पौत्रादिककों भखैं हैं ते अधर्मी महानीच नरक निगोदके अधिकारी हैं। जो दुराचारी मांस भखैं हैं ते माता पिता पुत्र मित्र सहोदर सर्व ही भखै। या पृथ्वीके तले भवनवासी अर व्यंतर देवनिके निवास हैं, अर मध्यलोकमें भी हैं। ते दुष्ट कर्मके करनहारे नीच देव हैं। जो जीव कषाय सहित तापस होय हैं ते नीच देवनिमें निपजै हैं। पातालमें प्रथम ही रत्नप्रभा पृथ्वी, ताके छै भाग, अर पंच भागमें तो भवनवासी अर व्यंतर देवनिके निवास हैं, अर बहलभागमें पहिला नरक, ताके नीचे छह नरक और हैं। ये सातों नरक छह राजूमें हैं। अर सातवें नरकके नीचे एक राजूमें निगोदादि स्थावर ही हैं, त्रस जीव नाहीं हैं अर निगोदसे तीन लोक भरे हैं।

अथानन्तर नरकका व्याख्यान सुनहु—कैसे हैं नारकी जीव ? महाक्रूर, महाकुशब्द बोलनहारे, अति कठोर है स्पर्श जाका, महा दुर्गंध अन्धकाररूप नरकमें पड़े हैं, उपमारहित जो दुःख तिनका भोगनहारा है शरीर जिनका। महा भयंकर नरक ताहि कुम्भीपाक कहिए जहां वैतरणी नदी है, अर तीक्ष्ण कंटक-युक्त शाल्मलीवृक्ष, जहाँ असिपत्रवन तीक्ष्ण खड्गकी धारा समान हैं पत्र जिनके, अर जहाँ देदीप्यमान अग्निसे तप्तायमान तीखे लोहेके कीले निरंतर हैं। उन नरकनिमें मधुमांसके भक्षणहारे, अर जीवनिके मारणहारे निरंतर दुख भोगै हैं। जहां एक आध अंगुल मात्र भी क्षेत्र सुखका कारण नाहीं, अर एक पलको भी नारकियोंका विश्राम नाहीं जो चाहैं कि कहूं भाजकर छिप रहें, तो जहाँ जांय तहाँ ही नारकी मारैं। अर असुरकुमार पापी देव बताय देय। महाप्रज्वलित अंगार तुल्य जो नरककी भूमि ताविषै पड़े ऐसे विलाप करैं जैसैं अग्निमें मत्स्य व्याकुल हुआ विलाप करै। अर भयसे व्याप्त काहू प्रकार निकस कर अन्य ठौर गया चाहैं तो तिनको शीतलता निमित्त और नारकी वैतरणी नदीके जलसे छांटै देय, तो वैतरणी महादुर्गंध क्षीरजलकी भरी ताकरि अधिक दाहको प्राप्त होय। बहुरि विश्रामके अर्थ असिपत्रवनमें जाय सो असिपत्र सिरपर पड़े मानों चक्र खड्ग गदादिक हैं, तिनकरि विदारे जावें, छिद गए हैं नासिका कर्ण कंधा जंघा आदि शरीरके अंग जिनके। नरकमें महा विकराल महा दुखदाई पवन है, अर रुधिरके कण बरसै हैं। जहां घानीमें पेलिए हैं, अर क्रूर शब्द होय हैं अर शाल्मली वृक्षनिसे घसीटिए हैं, अर महा तीक्ष्ण शूलोंसे भेदिए हैं, महा विलापके शब्द करै हैं, तब उन्हें तांबा गलाकर मुद्गरोंके घातसे कूटिए हैं। अर जब तिसाए होय हैं तब जलकी प्रार्थना करै हैं तब उन्हें तांबा गलाकर प्यावै हैं ? तातैं देह महा दग्धमान होय है, ताकर महादुखी होय हैं, अर कहैं हैं कि हमें तृष्णा नाहीं। तो पुनि बलात्कार इनको पृथ्वीपर पछाड़कर, ऊपर पग देय, संडासियोंसे मुख फाड, ताता तांबा प्यावैं हैं। तातैं कंठ भी दग्ध होय हैं अर हृदय भी दग्ध होय है। नारकियोंको नारकीनिका अनेक प्रकारका परस्पर दुःख, तथा भवनवासी देव जे असुरकुमार तिनकरि करवाया दुःख, सो कौन बरणन कर सकै?

नरकमें मद्यमांसके भक्षणसे उपजा जो दुःख ताहि जानकर मद्य मांसका भक्षण सर्वथा तजना। ऐसे मुनिके वचन सुन, नरकके दुखसे डरा है मन जाका, ऐसा जो कुण्डलमंडित सो बोला–हे नाथ! पापी जीव तो नरकही के पात्र हैं, अर जो विवेकी सम्यग्दृष्टि श्रावकके वृत पालै हैं तिनकी कहा गति है? तब मुनि कहते भए–जो दृढ़वृत सम्यक्दृष्टि श्रावकके व्रत पालै हैं ते स्वर्ग मोक्षके पात्र होय हैं। औरहु जे जीव मद्य मांस शहतका त्याग करै हैं ते भी कुगतिसे बचै हैं। जो अभक्ष्यका त्याग करै हैं सो शुभगति पावै है। जो उपवासादिक रहित हैं, अर दानादिक भी नहीं बनै हैं, परन्तु मद्यमांसके त्यागी हैं तो भले हैं। अर जो कोई शीलवृत मंडित हैं, अर जिनशासनका सेवक है, अर श्रावकके वृत पालै है ताका कहा पूछना? सो तो सौधर्मादि स्वर्गमें उपजै ही है। अहिंसावृत धर्मका मूल कहा है। अहिंसा मांसादिकके त्यागीके अत्यंत निर्मल होय है। जो म्लेच्छ अर चांडाल हैं, अर दयावान होवे हैं ते मधु मांसादिकका त्याग करै हैं, सो भी पापनिसे छूटै हैं। पापनिकरि छूटा हुआ पुण्यको ग्रहै है, अर पुण्यके बंधनसे देव अथवा मनुष्य होय है। अर जो सम्यक्दृष्टि जीव हैं सो अणुवृतको धारण कर देवोंका इन्द्र होय, परम भोगोंको भोगै हैं। बहुरि मनुष्य होय मुनिवृत धर मोक्षपद पावै हैं। ऐसे आचार्यके वचन सुनकर यद्यपि कुण्डलमंडित अणुवृतके धारनेमें शक्तिरहित है तो भी सीस नवाय गुरुनिकूं सविनय नमस्कारकर मद्यमांसका त्याग करता भया, अर समीचीन जो सम्यग्दर्शन ताका शरण ग्रहा। भगवानकी प्रतिमाको नमस्कार अर गुरुवोंको नमस्कारकर देशांतरको गया। मनमें ऐसी चिंता भई कि मेरा मामा महापराक्रमी है सो निश्चय सेती मुझे खेदखिन्न जान मेरी सहायता करेगा। मैं बहुरि राजा होय शत्रुनिकों जीतूंगा। ऐसी आशा धर दक्षिण दिशा जायवेकों उद्यमी भया। सो अति खेदखिन्न दुखसे भरा, धीरा २ जाता हुता सो मार्गमें अत्यन्त व्याधि वेदनाकर सम्यक्त्वरहित होय मिथ्यात्व गुणठाने मरणकों प्राप्त भया। कैसा है मरण? नाहीं है जगतमें उपाय जाका। सो जिस समय कुंडलमंडितके प्राण छूटे सो राजा जनककी स्त्री विदेहाके गर्भमें आया। ताही समय वेदवतीका जीव

जो चित्तोत्सवा भई हुती, सो भी तपके प्रभावकरि सीता भई, सो हू विदेहाके गर्भमें आई। ये दोनों एक गर्भमें आए। अर वह पिंगल ब्राह्मण जो मुनिव्रत धर भवनवासी देव भया हुता, सो अवधिकर अपने तपका फल जान, बहुरि विचारता भया कि वह चित्तोत्सवा कहां, अर वह पापी कुंडलमंडित कहां, जाकरि मैं पूर्वभवमें दुख अवस्थाकों प्राप्त भया। अब वे दोनों राजा जनककी स्त्रीके गर्भमें आए हैं। सो वह तो स्त्रीकी जाति पराधीन हुती, उस पापी कुंडलमंडितने अन्यायमार्ग किया, सो यहा मेरा परमशत्रु है। जो गर्भमें विराधना करू तो रानी मरणको प्राप्त होय, सो यासैं मेरा बैर नाहीं। तातैं जब यह गर्भतैं बाहिर आवै तब मैं याहि दुख दू। ऐसा चितवता हुता पूर्वकर्मके बैरिकर क्रोधायमान जो देव, सो कुंडलमंडितके जीवपर हाथ मसले। ऐसा जानकर सर्व जीवनकू क्षमा करनी, काहूकू दुःख न देना। जो कोई काहूकू दुःख देय है सो आपको ही दुःखसागरमें डुबोवै है।

अथानन्तर समय पाय रानी बिदेहाके पुत्र अर पुत्रीका युगल जन्म भया। तब वह देव पुत्रको हरता भया। सो प्रथम तो क्रोधके योगकरि ताने ऐसी विचारी कि मैं याहि शिलापर पटक मारू। बहुरि विचारी कि धिक्कार है मोकू। मैं ऐसा अनन्त संसारका कारण पाप चितया। बालहत्या समान और कोई पाप नाहीं। पूर्वभवमें मैं मुनिव्रत धरे हुते सो तृणमात्रका भी विराधन न किया, सर्व आरंभ तजा, नाना प्रकार तप किए। श्रीगुरुके प्रसादसे निर्मल धर्म पाय ऐसी विभूति को प्राप्त भया। अब मैं ऐसा पाप कैसे करू? अल्पमात्र भी पापकर महादुःखकी प्राप्ति होय है। पापकरि, यह जीव संसारवनविषै बहुत काल दुखरूप अग्निमैं जलै है। अर जो दयावान, निर्दोष है भावना जाकी, महा सावधानरूप है सो धन्य है, सुगति नामा रत्न वाके हाथमें है। वह देव ऐसा विचारकर दयावान होयकर बालकको आभूषण पहिराय काननविषै महा देदीप्यमान कुंडल घाले। परणलध्वी नामा विद्याकर आकाशतैं पृथ्वीविषै सुखकी ठौर पधराय आप अपने धाम गया। सो रात्रिके समय चंद्रगति नामा विद्याधरने या बालकको आभरणकी ज्योतिकर प्रकाशमान आकाशसे पड़ता देखा। तब विचारी कि यह नक्षत्रपात भया या

विद्युत्पात भया। यह विचारकर निकट आय देखें तो बालक है। तब हर्षकर बालककों उठाय लिया, अर अपनी रानी पुष्पवती जो सेजमें सूती हुती ताकी जांघोंके मध्य धर दिया। अर राजा कहता भया—हे राणी! उठो उठो तिहारे बालक भया है, बालक महाशोभायमान है। तब रानी सुन्दर है मुख जाका, ऐसे बालकको देख प्रसन्न भई, जाकी ज्योतिके समूहकर निद्रा जाती रही। महा विस्मय को प्राप्त होय राजा को पूछती भई—हे नाथ! यह अद्‌भुत बालक कौन पुण्यवती स्त्रीने जाया। तब राजाने कही—हे प्यारी तैंने जना, तो समान और पुण्यवती कौन है? धन्य है भाग्य तेरा, जाके ऐसा पुत्र भया। तब वह रानी कहती भई—हे देव! मैं तो बांझ हूं, मेरे पुत्र कहां? एक तो मुझे पूर्वोपार्जित कर्मने ठगी—बहुरि तुम कहा हास्य करो हो? तब राजाने कही—हे देवी! तुम शंका मत करहु, स्त्रियोंके प्रच्छन्न (गुप्त) भी गर्भ होय है। तब रानीने कही ऐसे ही होहु। परन्तु याके मनोहर कुंडल कहांतें आए? ऐसे भू-मंडलमें नाहीं। तब राजाने कही—हे रानी! ऐसे विचारकर कहा? यह बालक आकाशसे पड़ा, अर मैं झेला, तुझे दिया। यह बड़े कुलका पुत्र है याके लक्षणनिकर जानिए है। यह मोटापुरुष है, अन्य स्त्री तो गर्भके भारकर खेदखिन्न भई है, परन्तु हे प्रिये! तैंने याहि सुखसे पाया। अर अपनी कुक्षिमें उपजा भी बालक जो माता पिताका भक्त न होय, अर विवेकी न होय, शुभ काम न करै, तो ताकर कहा? कई एक पुत्र शत्रु समान परणवै हैं। तातैं उदरके पुत्रका कहा विचार? तेरे यह पुत्र सुपुत्र होयगा। शोभनीक वस्तुमें सन्देह कहा? अब तुम या पुत्रको लेवो, अर प्रसूतिघर में प्रवेशकर अर लोकनिको यही जनावना जो राणीके गुप्त गर्भ हुता सो पुत्र भया। तब राणी पतिकी
आज्ञा प्रमाण प्रसन्न होय प्रसूतिगृहविषैं गई। प्रभातविषैं राजाने पुत्रके जन्मका उत्सव किया। रथनू-पुरमें पुत्रके जन्मका ऐसा उत्सव भया जो सर्व कुटुम्ब अर नगरके लोग आश्चर्यको प्राप्त भए। रत्न-निके कुंडलकी किरणोंकर मंडित जो यह पुत्र सो माता पिताने याका नाम प्रभामण्डल धरा। अर पोषनेके निमित्त धायको सौंपा। सब अंतःपुरकी राणी आदि सकल स्त्री तिनके हाथरूप कमलनिका

भ्रमर होता भया। भावार्थ—यह बालक सर्व लोकनिकों वल्लभ बालक सुखसों तिष्ठै है। यह तो कथा यहाँ ही रही।

अथानन्तर मिथिलापुरीविषैं राजा जनककी रानी विदेहा पुत्रको हरा जान विलाप करती भई। अति ऊंचे स्वरसूं रुदन किया, सर्व कुटुम्बके लोक शोकसागरमें पड़े। रानी ऐसे पुकारे मानों शस्त्रकर मारी है। हाय! हाय पुत्र! तुझे कौन लेगया, मोहि महादुखका करनहारा वह निर्दई कठोर चित्त के हाथ तेरे लेने पर कैसे पड़े? जैसे पश्चिम दिशाकी तरफ सूर्य आय अस्त होय जाय तैसे तू मेरे मंदभागिनीके आयकर अस्त होय गया। मैं हूँ परभवविषैं काहूका बालक विछोहा हुता सो मैं फल पाया। तातैं कभी भी अशुभ कर्म न करना! जो अशुभकर्म है सो दुखका बीज है। जैसे बीज बिना वृक्ष नाहीं, तैसे अशुभकर्म विना दुख नाहीं। जा पापीने मेरा पुत्र हरया सो मोकूं ही क्यों न मार गया? अर्धमुईकर दुःखके सागरमें काहेकों डुबो गया? या भांति रानी अति विलाप किया। तदि राजा जनक आये। आय धीर्य बंधावते भये—हे प्रिये! तू शोकको मत प्राप्त होउ, तेरा पुत्र जीवै है, काहूने हरया है सो तू निश्चय सेती देखेगी। वृथा काहेको रुदन करै है। पूर्व कर्मके प्रभावकर गई वस्तु कोई तो देखिए कोई न देखिए। तू थिरताको प्राप्त होउ। राजा दशरथ मेरा परम मित्र है सो वाकों यह वार्ता लिखूं हूं। वह अर मैं तेरे पुत्रकूं तलाशकर लावेंगे, भले २ प्रवीण मनुष्य तेरे पुत्रके ढूंढ़िवेकों पठावेंगे। या भांति कहकर राजा जनकने अपनी स्त्रीको संतोष उपजाय दशरथके पास लेख भेजा। सो दशरथ लेख बांच महाशोकवंत भए। राजा दशरथ अर जनक दोऊनने पृथ्वीमें बालकको तलाश किया, परन्तु कहूं देख्या नाहीं। तदि महाकष्टकर शोकको दाब बैठ रहे। ऐसा कोई पुरुष वा स्त्री नाहीं जो इस बालकके गए आंसुओं कर भरे नेत्र न भया होय, सब ही शोकके वश होय रुदन करते भए।

अथानन्तर प्रभामण्डलके गएका शोक भुलावनेकूं महामनोहर जानकी बाललीलाकर सर्व बंधुलोककूं आनन्द उपजावती भई। महा हर्षकूं प्राप्त भई जो स्त्रीजन तिनकी गोदमें तिष्ठती, अपने शरीर

की कांतिकर दशोंदिशाकूं प्रकाशरूप करती वृद्धिकूं प्राप्त भई। कैसी है जानकी ? कमल सारिखे हैं नेत्र जाके अर महासुकंठ, प्रसन्न वदन, मानों पद्मद्रहके कमलके निवाससे साक्षात् श्रीदेवी ही आई है। याके शरीररूप क्षेत्रविषैं गुणरूप धान्य निपजते भए। ज्यों २ शरीर बड़ा त्यों त्यों गुण बढ़े। समस्त लोकनिकूं सुखदाता, अत्यन्त मनोज्ञ सुन्दर लक्षणनिकर संयुक्त है अंग जाका। सीता कहिए भूमिता समान क्षमाकी धरणहारी तातैं जगतविषैं सीता कहाई। बदनकर जीत्या है चन्द्रमा जाने, पल्लव समान है कोमल आरक्त हस्ततल जाके, महाश्याम, महासुन्दर, इन्द्रनीलमणि समान हैं केशनिके समूह जाका, अर जीती है मदकी भरी हंसनीकी चाल जानैं, अर सुन्दर भौंह जाकी, अर मोलश्रीके पुष्प समान मुखकी सुगन्ध, गुंजार करैं हैं भ्रमर जापर, अति कोमल हैं पुष्पमाला समान भुजा जाकी, अर केहरी समान है कटि जाकी, अर महा श्रेष्ठ रसका भरा जो केलिका थंभ ता समान हैं जंघा जाकी, स्थलकमल समान महामनोहर हैं चरण जाके, अर अति सुन्दर हैं कुचयुग्म जाका, अति शोभायमान है रूप जाका। महाश्रेष्ठ मंदिरके आंगन विषैं महारमणीक सातसैं कन्याओंके समूहमें शास्त्रोक्त क्रीडा करै। जो कदाचित् इन्द्रकी पटराणी शची वा चक्रवर्तीकी पटराणी सुभद्रा याके अंगकी शोभाकूं किंचित्मात्र भी धरै तो वे अति मनोज्ञरूप भासैं। ऐसी यह सीता सबनितैं सुन्दर है। याकूं रूप गुणयुक्त देख राजा जनक विचारचा–जैसैं रति कामदेव हीको योग्य है तैसैं यह कन्या सर्व विज्ञानयुक्त दशरथके बड़े पुत्र जो राम तिनहीकूं योग्य है। सूर्यकी किरणके योगतैं कमलनिकी शोभा प्रकट होय है।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रंथ, ताकी भाषावचनिकाविषैं सीता अर भामण्डलका जन्म कथन वर्णन करनेवाला छब्बीसवां पर्व पूर्ण भया ॥२६॥

अथानन्तर राजा श्रेणिक यह कथा सुनकर गौतमस्वामीको पूछता भया–हे प्रभो ! जनकने राम

का कहा महात्म्य देख्या जो अपनी पुत्री देनी विचारी। तब गणधर चित्तको आनंदकारी वचन कहते भए—हे राजन्! महा पुण्याधिकारी जो श्रीरामचन्द्र तिनका सुयश सुनि, जा कारणतैं जनक महा बुद्धिमानने रामकूं अपनी कन्या देनी विचारी। वैताढ्यपर्वतके दक्षिणभागविषैं अर कैलाश पर्वतके उत्तरभागविषैं अनेक अंतर देश बसैं हैं तिननें एक अर्द्धबरबर देश, असंयमी जीवनिका है मान्य जहां, महा मूढजन निर्दई म्लेच्छ लोकनिकरि भरया। ता विषैं एक मयूरमाल नामा नगर, कालके नगर समान महा भयानक, तहां अंतरगत नामा म्लेच्छ राज्य करै। सो महापापी दुष्टनिका नायक महा निर्दई, बड़ी सेनातैं नानाप्रकारके आयुधनिकर मंडित, सकल म्लेच्छ संग लेय आप देश उजाड़नेकूं आए, सो अनेक देश उजाड़े। कैसे हैं म्लेच्छ? करुणाभाव रहित प्रचण्ड हैं चित्त जिनके, अर अत्यन्त है दौड़ जिनकी। सो जनक राजाका देश उजाड़नेकूं उद्यमी भए। जैसैं टिड्डीदल आवैं तैसैं म्लेच्छोंके दल आए, सबको उपद्रव करण लगे। तब राजा जनकनें अयोध्याको शीघ्र ही मनुष्य पठाए। म्लेच्छके आवनेके सब समाचार राजा दशरथकूं लिखे। सो जनकके जन शीघ्र ही जाय सकल वृत्तांत दशरथसूं कहते भए—हे देव! जनक वीनती करी है, परचक्र भीलनिका आया, सो सब पृथ्वी उजाड़े है। अनेक आर्यदेश विध्वंस किए। ते पापी प्रजाकूं एक वर्ण किया चाहे हैं, सो प्रजा नष्ट भई। तब हमारे जीवेकर कहा? अब हमको कहा कर्त्तव्य है? उनसे लड़ाई करना अथवा कोई गढ़ पकड़ तिष्ठें, लोकनिकूं गढ़में राखें। कालिन्दी भागा नदीको तरफ विषमस्थल है वहां जावैं, अथवा विपुलाचलकी तरफ जावैं, अथवा सर्व सेना सहित कुंजगिरिकी ओर जावें। परसेना महा भयानक आवैं है। साधु श्रावक सर्वलोक अति विह्वल हैं। ते पापी गौ आदि सब जीवनिके भक्षक हैं। सो जो आप आज्ञा देहु सो करैं। यह राज्य भी तिहारा और पृथ्वी भी तिहारी। यहांकी प्रतिपालना सब तुमकूं कर्त्तव्य है। प्रजाकी रक्षा किए धर्मकी रक्षा होय है। श्रावक लोक भावसहित भगवानकी पूजा करैं हैं, नानाप्रकारके व्रत धरैं हैं, दान करैं हैं, शील पालैं हैं, सामायिक करैं हैं, पोशा परिक्रमणा करैं हैं,

भगवानके बड़े बड़े चैत्यालय तिनविषै महा उत्सव होय हैं, विधि पूर्वक अनेक प्रकार महा पूजा होय है, अभिषेक होय हैं, विवेकी लोक प्रभावना करै हैं। अर साधु दशलक्षणधर्म कर युक्त, आत्मध्यानमें आरूढ़ मोक्षका साधन तप करै हैं। सो प्रजाके नष्ट भए साधु अर श्रावकका धर्म लुपै है। अर प्रजाके होते धर्म अर्थ काम मोक्ष सब सधै हैं। जो राजा परचक्रतें पृथ्वीकी प्रतिपालना करै सो प्रशंसाके योग्य है। राजाके प्रजाकी रक्षातैं यालोक परलोकविषै कल्याणकी सिद्धि होय है। प्रजा बिना राजा नहीं, अर राजा बिना प्रजा नहीं। जीवदयामय धर्मका जो पालन करै सो यह लोक परलोकमें सुखी होय है। धर्म अर्थ काम मोक्ष की प्रवृत्ति लोकनिके राजाकी रक्षासे होय है, अन्यथा कैसे होय? राजाके भुजबलकी छाया पायकर प्रजा सुखसे रहै है। जाके देशमें धर्मात्मा धर्म सेवन करै है, दान तप शील पूजादिक करै हैं, सो प्रजाकी रक्षाके योगतैं छठा अंश राजाकों प्राप्त होय है। यह सब वृत्तांत राजा दशरथ सुनकर आप चलने को उद्यमी भए, अर श्रीरामको बुलाय राज्य देना विचारचा। वादित्र-निके शब्द होते भए, सब मंत्री आए, अर सब सेवक आए। हाथी घोड़े रथ पयादे सब आय ठाढ़े भए। जलके भरे स्वर्णमयी कलश सेवक लोग स्नानके निमित्त भरलाए। अर शस्त्र बांधकरि बड़े बड़े सामंत लोक आए। अर नृत्यकारिणी नृत्य करती भई। अर राजलोककी स्त्री जन नानाप्रकारके वस्त्र आभूषण पटलनिमैं ले आई। यह राज्याभिषेकका आडम्बर देखकर राम दशरथसूं पूछते भये कि हे प्रभो! यह कहा है? तब दशरथ कही—हे भद्र! तुम या पृथ्वीकी प्रतिपालना करो, मैं प्रजाके हित निमित्त शत्रुवनिके समूहतैं लड़ने जाऊं हूं। वे शत्रु देवनिकरहू दुर्जय हैं। तदि कमलसारिखे हैं नत्र जिनके ऐसे श्रीराम कहते भए—हे तात! ऐसे रंकन पर एता परिश्रम कहा? ते आपके जायबे लायक नाहीं। वे पशुसमान दुरात्मा जिनसूं संभाषण करना उचित नाहीं, तिनके सन्मुख युद्धकी अभिलाषाकर आप कहां पधारे? उन्दरु (चूहा) के उपद्रव कर हस्ती कहा क्रोध करै? अर रुईके भस्म करबेके अर्थ अग्नि कहा परिश्रम करै? तिनपर जायबेकी हमकू आज्ञा देहु यही उचित है। ये रामके वचन सुन

दशरथ अति हर्षित भए। तदि रामकूं उरसूं लगाय कहते भए। हे पद्म! कमल समान हैं नेत्र जाके ऐसे तुम बालक, सुकुमार अंग, कैसें उन दुष्टनिसूं जीतोगे? यह बात मेरे मनमें न आवै। तब राम कहते भए-हे तात! कहा तत्कालका उपज्या अग्निकी कणाका मात्र हू विस्तीर्ण बनको भस्म न करै? करै ही करै। छोटी बड़ी अवस्थासूं कहा प्रयोजन? अर जैसें अकेला ऊगता ही बालसूर्य घोर अंधकारकूं हरै ही है तैसें हम बालक तिन दुष्टनिकूं जीतैं ही जीतैं। ये वचन रामके सुन राजा दशरथ अति प्रसन्न भए, रोमांच होय आए अर बालपुत्रकूं भेजनेका कछुएक विषाद भी न उपज्या, नेत्र सजल होय गए। राजा मनमें विचारै है जो महापराक्रमी त्यागादि व्रतके धारणहारे क्षत्री तिनकी यही रीति है-जो प्रजाकी रक्षाके निमित्त अपने प्राण भी तजनेका उद्यम करैं। अथवा आयुके क्षय विना मरण नाहीं, यद्यपि गहन रणमें जाय तौ हू न मरै। ऐसा चितवन करता जो राजा दशरथ ताके चरणकमलयुगसह नमस्कारकरि राम लक्ष्मण बाहिर नीसरे। सब शास्त्र अर शस्त्र विद्याविषै प्रवीण, सर्व लक्षणनिकरि पूर्ण, सबकूं प्रिय है दर्शन जिनका, चतुरंग सेनाकरि मंडित, विभूतिकरि पूर्ण, अपने तेजकर देदीप्यमान, दोऊ भाई रामलक्ष्मण रथविषै आरूढ़ होय जनककी मदद चाले। सो इनके जायवे पहिले जनक अर कनक दोऊ भाई, परसेनाका दो योजन अंतर जान युद्ध करवेकूं चढ़े हुते, सो जनक कनकके महारथी योधा शत्रुनिके शब्द न सहते संते म्लेच्छनिके समूहमें जैसें मेघकी घटामें सूर्यादिक ग्रह प्रवेश करैं तैसें यह थे, सो म्लेच्छोंके अर सामंतनिके महायुद्ध भया। जाके देखें अर सुने रोमांच होय आवै। कैसा संग्राम भया? बड़े शस्त्रनिकरि किया है प्रहार जहां, दोऊ सेनाके लोक व्याकुल भए, कनककूं म्लेच्छनिका दबाव भया तदि जनक भाईकी मददके निमित्त अतिक्रोधायमान होय दुर्निवार हाथियोंकी घटा प्रेरता भया। सो वे बरबर देश के म्लेच्छ महा भयानक जनककूं दबावते भये। ताही समय राम लक्ष्मण आय पहुँचे। अति अपार महागहन म्लेच्छनिकी सेना रामचन्द्र देखी। सो श्रीरामचन्द्रका उज्ज्वल छत्र देख कर शत्रुनिकी सेना कम्पायमान भई, जैसें पूर्णमासीके चंद्रमा

३६२

का उदय देखकर अंधकारका समूह चलायमान होय। म्लेच्छनिके बाणनिकरि जनकका बखतर टूट गया हुता, अर जनक खेदखिन्न भया हुता, सो रामने धीर्य बंधाया। जैसैं संसारी जीव कर्मनिके उदय कर दुःखी होय सो धर्मके प्रभावतैं दुःखनितैं छूटे, सुखी होय. तैसैं जनक रामके प्रभावकर सुखी भया। चंचल तुरंगनि कर युक्त जो रथ, ताविषैं आरूढ़, जो राघव, महाउद्योतरूप है शरीर जिनका, बखतर पहिरे, हार अर कुंडल कर मंडित, धनुष चढ़ाए और बाण हाथमें, सिंहके चिह्नकी है ध्वजा जिनके, अर जिनपर चमर ढुरे हैं, अर महामनोहर उज्ज्वल छत्र सिरपर फिरैं हैं, पृथ्वीके रक्षक, धीर वीर है मन जिनका, ऐसे श्रीराम लोकके वल्लभ, प्रजाके पालक, शत्रुनिकी विस्तीर्ण सेनाविषैं प्रवेश करते भए। सुभटनिके समूह कर संयुक्त जैसे सूर्य किरणनिके समूह कर सोहै है तैसैं शोभते भए। जैसैं माता हाथी कदलीवनमें बैठ्या केलनिके समूहका विध्वंस करै तैसैं शत्रुनिकी सेनाका भंग किया। जनक अर कनक दोऊ भाई बचाए। अर लक्ष्मण जैसें मेघ बरसैं तैसैं बाणनिकी वर्षा करता भया। तीक्ष्ण सामान्य चक्र अर शक्ति कनक त्रिशूल कुठार करात इत्यादि शस्त्रनिके समूह लक्ष्मणके भुजानिकर चले। तिनकर अनेक म्लेच्छ मुवे। जैसैं फरसानिकर वृक्ष कटैं तैसे भील पारधी महाम्लेच्छ लक्ष्मणके बाणनि कर विदारे गये हैं उरस्थल जिनके, कटगई हैं भुजा अर ग्रीवा जिनकी, हजारों पृथ्वीविषैं पड़े। तदि वे पृथ्वीके कटक तिनकी सेना लक्ष्मण आगैं भागी। लक्ष्मण सिंहसमान दुर्निवार, ताहि देखकर जो म्लेच्छमें शार्दूल समान हुते तेहू अति क्षोभकूं प्राप्त भए। महावादित्रके शब्द करते, अर मुखतैं भयानक शब्द करते, अर धनुषबाण खड्ग चक्रादि अनेक शस्त्रनिकूं धरैं, अर रक्त वस्त्र पहिरे, खंजर जिनके हैं हाथमें, नाना वर्णका अंग जिनका, कईएक काजल समान श्याम, कईएक कर्दम, कई एक ताम्रवर्ण, वृक्षनिके बक्कल पहिरे, अर नानाप्रकारके गेरुवादि रंग तिनकरि लिप्त हैं अंग जिनके, अर नानाप्रकारके वृक्षनिकी मंजरी तिनके हैं छोगा सिरपर जिनके, अर कौडी सारिखे हैं दांत जिनके, अर विस्तीर्ण है उदर जिनके, ऐसे भासैं मानों कुटजजातिके वृक्ष ही फूलै हैं। अर कईएक निजहाथनि

विषै आयुधनिकूं धरे कठोर हैं जंघा जिनकी, भारी भुजानिके धरणहारे, मानूं असुरकुमार देवनिसारिखे उन्मत्त, महानिर्दई, पशुमांसके भक्षक, महामूढ, जीवहिंसाविषैं उद्यमी, जन्महीतैं लेकर पापनिके करणहारे, तत्काल खोटे आरम्भके करणहारे, अर सूकर भैंस व्याघ्र ल्याली इत्यादि जीवनिके चिह्न हैं जिनकी ध्वजानिमें, नानाप्रकारके जो वाहन तिनपर चढ़े, पत्रनिके हैं छत्र जिनके, नानाप्रकार युद्धके करणहारे, अति दौड़के करणहारे, महा प्रचण्ड तुरंग समान चंचल, ते भील मेघमाला समान लक्ष्मणरूप पर्वतपर मेघमालासमान अपने स्वामीरूप पवनके प्रेरे बाणवृष्टि करते भए। तदि लक्ष्मण तिनके निपात करवेकूं उद्यमी तिनपर दौड़े, महाशीघ्र है वेग जिनका, जैसें महा गजेन्द्र वृक्षनिके समूहपर दौड़े। सो लक्ष्मणके तेज प्रतापकरि वे पापी भागे, सो परस्पर पगनि कर मसले गए। तदि तिनका अधिपति आतरंगतम अपनी सेनाकूं धीर्य बंधाय सकल सेनासहित आप लक्ष्मणके सन्मुख आया। महाभयंकर युद्ध किया, लक्ष्मणकूं रथरहित किया। तदि श्रीरामचन्द्र अपना रथ चलाया, पवन समान है वेग जाका, लक्ष्मणके समीप आए। लक्ष्मणकूं दूजे रथ पर चढाया अर जैसैं अग्नि बनकूं भस्म करै तैसैं तिनकी अपार सेना बाणनिरूप अग्निकर भस्म करी। कईएक तो बाणनिकर मारे, अर कईएक कनक नामा शस्त्रनिकरि विध्वंसे, कईएक तोमरनामा आयुधनिकरि हते, कईएक सामान्य चक्रनामा शस्त्रनिकरि निपात किए। वह म्लेच्छनिकी सेना महाभयंकर दश दिशाकूं जाती रही। छत्र चमर ध्वजा धनुष आदि शस्त्र डार भाजे। महा पुण्याधिकारी जो राम तिनने एकनिमिषमें म्लेच्छनिका निराकरण किया। जैसैं महामुनि क्षणमात्रमें सर्व कषायनिका निराकरण करै तैसैं म्लेच्छनिका निपात किया। वह पापी आतरंगतम अपार सेनारूप समुद्रकरि आया हुता, सो भयकरि युक्त दस घोड़ाके असवारनिसूं भाग्या। तदि श्रीराम आज्ञा करी ये नपुंसक युद्धतें पराङ्मुख होय भागे, अब इनके मारवेकरि कहा? तब लक्ष्मण भाईसहित पाछे बाहुड़े। वे म्लेच्छ भयकरि व्याकुल होय सह्याचल विंध्याचलके वननिमें छिप गए। श्रीरामचन्द्रके भयतैं पशु हिंसादिक दुष्ट कर्मकूं तजि वनके फलनिका आहार करैं। जैसैं

गरुडतैं सर्प डरें तैसैं श्रीरामसूं डरते भए। लक्ष्मण सहित श्रीराम शांत है स्वरूप जिनका, राजा जनककूं बहुत प्रसन्न कर विदा किया। अर आप अपने पिताके समीप अयोध्याकूं चाले। सर्व पृथ्वीके लोक आश्चर्यकूं प्राप्त भए। यह देख लवकूं परम आनन्द उपज्या, परमहर्षकरि रोमांच होय आए। रामके प्रभाव सर्व पृथ्वी शोभायमान भई–जैसैं चतुर्थकालके आदि ऋषभदेवके समय सम्पदासे शोभायमान भई हुती। धर्म अर्थ कामकरि युक्त जे पुरुष तिनसे जगत ऐसा भासता भया जैसैं बर्फके अवरोधकर वर्जित जे नक्षत्र तिनसूं आकाश शोभै। गौतमस्वामी कहे हैं–हे राजा श्रेणिक! ऐसा रामका माहात्म्य देखकर जनक अपनी पुत्री सीता रामकूं देनी विचारी। बहुत कहवेकरि कहा? जीवनिके संयोग तथा वियोगका कारण भाव एक कर्मका उदय ही है। सो वह श्रीराम श्रेष्ठ पुरुष, महासौभाग्यवंत, अतिप्रतापी, औरनमें न पाइए ऐसे गुणनिकरि पृथ्वीविषैं प्रसिद्ध होता भया, जैसैं किरणनिके समूहकर सूर्य महिमाकूं प्राप्त होय।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रंथ, ताकी भाषावचनिकाविषैं म्लेच्छनिकी हार, रामकी जीतका कथन वर्णन करनेवाला सत्ताईसवां पर्व पूर्ण भया।।२७।।

अथानन्तर ऐसे पराक्रमकर पूर्ण जो राम तिनकी कथा विना नारद एक क्षण भी न रहे, सदा राम कथा करबो ही करै। कैसा है नारद? रामके यश सुनकर उपज्या है परम आश्चर्य जाकों। बहुरि नारदने सुनी जो जनकने राम को जानकी देनी विचारी, कैसी है जानकी? सर्व पृथ्वीविषैं प्रकट है महिमा जाकी। नारद मनमें चितवता भया, एक बार सीताकूं देखूं जो कैसी है, कैसे लक्षणनिकर शोभायमान है जो जनकने रामको देनी करी है। सो नारद शील संयुक्त है हृदय जाका, सीताके देखवेकूं सीताके घर आया। सो सीता दर्पणमें मुख देखती हुती। सो नारदकी जटा दर्पणमें भासी सो कन्या भयकर व्याकुल भई। मनमें चितवती भई हाय माता यह कौन है? भयंकर कम्पायमान ३६५

होय महलके भीतर गई। नारद भी लारही महलमें जाने लगे। तब द्वारपालने रोका सो नारदके अर द्वारपालके कलह हुवा। कलहके शब्द सुन खड्गके अर धनुषके धारक सामंत दौड़े ही गए कहते भए, पकड़ लो, पकड़लो, यह कौन है। ऐसे तिन शस्त्रधारियोंके शब्द सुनकर नारद डरा, आकाशविषै गमन कर कैलाश पर्वत गया, तहां तिष्ठकर चितवता भया।

जो मैं महाकष्टकूं प्राप्त भया सो मुश्किलसे बचा, नवां जन्म पाया। जैसे पक्षी दावानलसे बाहिर निकसै तैसें मैं वहांसे निकस्या। सो धीरे धीरे नारदकी कांपनी मिटी। अर ललाटके पसेव पूंछ, केश बिखर गए हुते ते समारकर बांधे, कांपे हैं हाथ जाके, ज्यों ज्यों वह बात याद आवै त्यों त्यों निश्वास नाखै। महाक्रोधायमान होय मस्तक हलाए ऐसें विचारता भया कि देखो कन्याकी दुष्टता। मैं अदुष्टचित्त सरलस्वभाव रामके अनुरागतैं ताके देखनेकूं गया हुता सो मृत्यु समान अवस्थाकूं प्राप्त भया। यम समान दुष्ट मनुष्य मोहि पकड़वेकू आए सो भली भई जो बचा, पकड़ा न गया। अब वह पापिनी मो आगे कहां बचे? जहां जहां जाय तहां ही उसे कष्टमें नाखूं। मैं विना बजाए वादित्र नाचूं, सो जब वादित्र बाजै तब कैसे टरूं? ऐसा विचारकर शीघ्र ही वैताडचकी दक्षिणश्रेणीविषै जो रथनूपुर नगर वहां गया। महा सुन्दर जो सीताका रूप सो चित्रपटविषै लिख लेगया। कैसा है सीताका रूप? महा सुन्दर है ऐसा लिखा मानों प्रत्यक्ष ही है। सो उपवनविषै भामंडल, चन्द्रगतिका पुत्र अनेक कुमारनि सहित क्रीडा करनेकूं आया हुता सो चित्रपट उसके समीप डार आप छिप रह्या। सो भामण्डलने यह तो न जान्या कि यह मेरी बहिनका चित्रपट है, चित्रपट देख मोहित चित्त भया। लज्जा अर शास्त्रज्ञान अर विचार सब भूल गया। लम्बे २ निश्वास नाखै, होठ सूक गये, गात शिथिल हो गया, रात्रि अर दिवस निद्रा न आवै। अनेक मनोहर उपचार कराये तो भी इसे सुख नाहीं। सुगन्ध पुष्प अर सुन्दर आहार याहि विष समान लागे। शीतल जल छांटिये तौ भी संताप न जाय। कबहूं मौन पकड़ रहे, कबहूं हंसै, कबहूं विकथा बकै, कबहूं उठ खड़ा रहै, वृथा उठ चलै बहुरि

पाछा आवै। ऐसी चेष्टा करै मानो याहि भूत लगा है। तब बड़े बड़े बुद्धिमान याहि कामातुर जान परस्पर बात करते भए। जो यह कन्याका रूप किसीने चित्रपटविषै लिखकर याके ढिग आय डारया, सो यह विक्षिप्त होयगया। कदाचित् यह चेष्टा नारदने ही करी होय। तब नारदने अपने उपायकर कुमारकू व्याकुल जान लोगनकी बात सुन कुमारके बन्धूनिकू दर्शन दिया। तब तिनने बहुत आदर कर पूछा–हे देव! कहो यह कौनकी कन्याका रूप है? तुमने कहां देखी? यह कोऊ स्वर्गविषै देवांगना का रूप है अथवा नागकुमारीका रूप है, या पृथ्वीविषै आई होवेगी सो तुमने देखी। तब नारद माथा हलायकर बोला कि मिथिला नामा नगरी है। वहां महासुन्दर राजा इन्द्रकेतुका पुत्र जनक राज्य करै है। ताके विदेहा राणी है। सो राजाको अतिप्रिय है। तिनकी पुत्री सीताका यह रूप है। ऐसा कहकर फिर नारद भामण्डलसे कहते भए–हे कुमार! तू विषाद मतकर, तू विद्याधर राजाका पुत्र है। तोहि यह कन्या दुर्लभ नाहीं, सुलभही है। अर तू रूपमात्रसे ही क्या अनुरागी भया, यामैं बहुत गुण हैं। याके हावभाव विलासादिक कौन वर्णन कर सकै? अर यही देखे तेरा चित्त वशीभूत हुआ सो क्या आश्चर्य है। जिसे देख बड़े पुरुषनिका भी चित्त मोहित होजाय। मैं तो आकारमात्र पटमें लिख्या है। ताकी लावण्यता वाहीविषै है, लिखवेमें कहां आवै? नवयौवन रूप जलकर भरा जो कांतिरूप समुद्र, ताकी लहरनिविषै वह स्तनरूप कुम्भनिकर तिरै है। अर ऐसी स्त्री तोय टार और कौनको योग्य। तेरा अर वाका संगम योग्य है। या भांति कहकर भामंडलकू अति स्नेह उपजाया, अर आप नारद आकाशविषै विहार किया। भामंडल कामके बाणकर वेध्या अपने चित्तमें विचारता भया कि यदि वह स्त्रीरत्न शीघ्र ही मुझे न मिले तो मेरा जीवना नाहीं। देखो यह आश्चर्य है, वह सुन्दरी पररूकांतिकी धरणहारी मेरी हृदयमें तिष्ठती हुई अग्निकी ज्वालासमान हृदयकू आताप करै है। सूर्य है सो तो बाह्य शरीर को आताप करै है अर काम है सो अन्तर वाह्यदाह उपजावै है। सूर्यके आताप निवारवेकू तो अनेक उपाय हैं परन्तु कामके दाह निवारवेकू उपाय नाहीं। अब मुझे दो अवस्था आय बनी हैं। कैतो वाका

संयोग होय अथवा कामके बाणनिकर मेरा मरण होयगा। निरंतर ऐसा विचारकर भामंडल विह्वल होयगया। सो भोजन तथा शयन सब भूल गया। ना महलविषैं ना उपवन विषैं याहि काहू ठौर साता नाहीं। यह सब वृत्तांत कुमारके व्याकुलताका कारण नारदकृत कुमारको माला जानकर कुमार के पितासू कहती भई—हे नाथ! अनर्थका मूल जो नारद तानें एक अत्यन्त रूपवती स्त्रीका चित्रपट लायकर कुमारकूं दिखाया। सो कुमार चित्रपटकूं देखकर अति विभ्रम चित्त होयगया, सो धीर्य नाहीं धरै है। लज्जारहित होयगया है। बारम्बार चित्रपटकूं निरखै है अर सीता ऐसे शब्द उच्चारण करै है। अर नानाप्रकार की अज्ञान चेष्टा करै है मानूं याहि वाय लगी है। तातैं तुम शीघ्र ही साता उपजावनेका उपाय विचारो। वह भोजनादिकतैं पराङ्मुख होय गया है। सो वाके प्राण न छूटैं ता पहिले ही यत्न करहु। तब यह वार्ता चन्द्रगति सुनकर अति व्याकुल भया। अपनी स्त्रीसहित आय-कर पुत्रकूं ऐसे कहता भया—हे पुत्र! तू स्थिरचित्त हो, अर भोजनादि सर्व क्रिया जैसैं पूर्वैं करै था तैसैं कर। जो कन्या तेरे मनमें बसी है सो तुझे शीघ्र ही परणाऊंगा। या भांति कहकर पुत्रको शांतता उपजाय राजा चन्द्रगति एकांतविषैं हर्ष विषाद अर आश्चर्यकूं धरता संता अपनी स्त्रीसूं कहता भया हे प्रिये! विद्याधरनिकी कन्या अतिरूपवन्ती अनुपम, उनकूं तजकर भूमिगोचरिनका सम्बन्ध हमकूं कहाँ उचित? अर भूमिगोचरिनके घर हम कैसैं जावेंगे? अर जो कदाचित् हम जाय प्रार्थना करैं अर वह न दे तो हमारे मुखकी प्रभा कहां रहेगी? तातैं कोई उपायकर कन्याके पिताकूं यहां शीघ्र ही ल्यावैं। अन्य उपाय नाहीं। तब भामंडलकी माता कहती भई—हे नाथ! युक्त अथवा अयुक्त तुम ही जानो। तथापि ये तिहारे वचन मुझे प्रिय लागैं। तब एक चपलवेग नामा विद्याधर अपना सेवक, आदर सहित बुलायकर राजा सकल वृत्तांत वाके कानमें कहा, अर नीके समझाया। सो चपलवेग राजाकी आज्ञा पाय बहुत हर्षित होय शीघ्र ही मिथला नगरीको चाल्या। जैसैं प्रसन्न भया तरुणहंस सुगंधकी भरी जो कमलिनी ताकी ओर जाय। यह शीघ्र ही मिथला नगरी जाय पहुँच्या। आकाशतैं उतरकर

अश्वका भेष धर गौ महिषादि पशूनिकू त्रास उपजावता भया। राजाके मंडलमें उपद्रव किया। तब लोकनिकी पुकार आई सो राजा सुनकर नगरके बाहिर निकस्या। प्रमोद, उद्वेग अर कौतुकका भरचा राजा अश्वकू देखता भया। कैसा है अश्व? नवयौवन है, अर उछलता सता अति तेजकू धरै, मन समान है वेग जाका, सुन्दर हैं लक्षण जाके, अर प्रदक्षिणारूप महा आवर्तकू धरै है, मनोहर है मुख जाका, अर

महा बलवान खुरोंके अग्रभागकर मानों मृदंग ही बजावै है, जापर कोई चढ़ न सकै अर नासिकाका शब्द करता संता अतिशोभायमान है। ऐसे अश्वकू देखकर राजा हर्षित होय बारम्बार लोगनिसू कहता भया—यह काहुका अश्व बंधन तुडाय आया है। तब पंडितनिके समूह राजासू प्रियवचन कहते भए—हे राजन्! या तुरंगके समान कोई तुरंग नाहीं, औरोंकी तो क्या बात ऐसा अश्व राजाके भी दुर्लभ। आपके भी देखनेमें ऐसा अश्व न आया होयगा। सूर्यके रथके तुरंगनिकी अधिक उपमा सुनिए है सो या समान तो ते भी न होयेंगे। कोई दैवके योगतैं आपके निकट ऐसा अश्व आया है सो आप वाहि अंगीकार करहु। आप महापुण्याधिकारी हो। तब राजाने अश्वको अंगीकार किया। अश्वशालामें ल्याय सुन्दर डोरीतैं बांधा अर भांतिभांतिकी योग सामग्रीकर याके यत्न किए। एक मास याकू यहां हुआ। एक दिन सेवकने आय राजाकू नमस्कार कर विनती कीनी—हे नाथ! एक वनका मतंग गज आया है सो उपद्रव करै है। तब राजा बड़े गजपर असवार होय वा हाथी की ओर गए। वह सेवक जिसने हाथीका वृत्तांत आय कहा था, ताके कहे मार्गकर राजाने महावनमें प्रवेश किया। सो सरोवरके तट हाथी खड़ा देखा अर चाकरनिसू कहा जो एक तेज तुरंग ल्यावो। तब मायामई अश्वकू तत्काल लेगए। सुन्दर है
शरीर जाका, राजा उसपर चढ़े। सो वह आकाशमें राजाकू ले उड़ा। तब सब परिजन पुरजन हाहाकार कर शोकवंत भए। आश्चर्यकर व्याप्त हुवा है मन जिनका तत्काल पाछे नगरमें गये।

अथानन्तर वह अश्वके रूपका धारक विद्याधर, मन समान है वेग जाका, अनेक नदी पहाड़ वन उपवन नगर ग्राम देश उलंघन कर राजाकू रथनूपुर लेगया। जब नगर निकट रहृया तब एक वृक्ष

के नीचे आय निकस्या। सो राजा जनक वृक्षकी डाली पकड़ लूंब रहा। वह तुरंग नगरविषैं आया। राजा वृक्षतैं उतर विश्रामकर आश्चर्य सहित आगैं गया। तहां एक स्वर्णमई ऊंचा कोट देख्या, अर दरवाजा रत्नमई तोरणनि कर शोभायमान, अर महासुन्दर उपवन देख्या। ताविषैं नाना जातिके वृक्ष अर बेल फल फूलनिकर सम्पूर्ण देखे, जिनपर नानाप्रकारके पक्षी शब्द करै हैं। अर जैसे सांझके बादले होवें तैसे नानारंगके अनेक महिल देखे, मानों ये महल जिनमंदिरकी सेवा ही करै हैं। तब राजा खड्गको दाहिने हाथमें मेल सिंह समान अति निशंक, क्षत्रीव्रतमें प्रवीण दरवाजेमें गया। दरवाजेके भीतर नानाजातिके फूलनिकी बाड़ी अर रत्न स्वर्णके सिवाण जाके ऐसी वापिका, स्फटिकमणि समान उज्ज्वल है जल जाका, अर महा सुगन्ध मनोग्य विस्तीर्ण कुंद जातिके फूलनिके मंडप देखे। चलायमान हैं पल्लवोंके समूह जिनके अर संगीत करै हैं भ्रमरोंके समूह जिनपर, अर माधवी लतानिके समूह फूले देखे। महा सुन्दर अर आगे प्रसन्न नेत्रनिकर भगवानका मंदिर देख्या। कैसा है मंदिर? मोतिनिकी झालरिनिकर शोभित, रत्ननिके झरोखनिकर संयुक्त, स्वर्णमई हजारां महास्तम्भ तिनकर मनोहर, अर जहां नानाप्रकारके चित्राम, सुमेरुके शिखर समान ऊंचे शिखर, अर वज्रमणि जे हीरा तिनकर बेढ्या है पीठ (फरश) जाका, ऐसे जिनमन्दिरकूं देखकर जनक विचारता भया कि यह इन्द्रका मंदिर है अथवा अहमिंद्रका मन्दिर है। ऊर्ध्वलोकतैं आया है अथवा नागेन्द्रका भवन पातालतैं आया है, अथवा काहू कारणतैं सूर्यकी किरणनिका समूह पृथ्वीविषैं एकत्र भया है। अहो उस मित्र विद्याधरने मेरा बड़ा उपकार किया जो मोहि यहां ले आया, ऐसा स्थानक अबतक देख्या नाहीं। भला मन्दिर देख्या। ऐसा चिंतवनकर महामनोहर जो जिनमंदिर ताविषैं बैठि फूलगया है मुखकमल जाका श्रीजिनराजका दर्शन किया। कैसे हैं श्रीजिनराज? स्वर्ण समान हैं वर्ण जिनका, अर पूर्णमासीके चन्द्रमा समान है सुन्दर मुख जिनका, अर पद्मासन विराजमान, अष्ट प्रातिहार्य संयुक्त, कनकमई कमलनिकर पूजित, अर नानाप्रकारके रत्ननिकर जडित जे छत्र ते हैं सिरपर जिनके, अर ऊंचे सिंहा-

सनपर तिष्ठै हैं। तब जनक हाथ जोड़ सीस निवाय प्रणाम करता भया। हर्षकर रोमांच होय आए। भक्तिके अनुरागकर मूर्छाकूं प्राप्त भया, क्षणएक सचेत होय भगवानकी स्तुति करने लाग्या। अति विश्रमकूं पाय परम आश्चर्यकूं धरता संता जनक चैत्यालयविषै तिष्ठै है। वह चपलवेग विद्याधर जो अश्वका रूपकर इनको ले आया हुता सो अश्वका रूप दूर कर राजा चन्द्रगतिके पास गया, अर नमस्कार कर कहता भया। मैं जनककूं ले आया, मनोग्य वनमें भगवानके चैत्यालयविषै तिष्ठै हैं, तब राजा सुनकर बहुत हर्षकूं प्राप्त भया। थोड़ेसे समीपी लोक लार लेय राजा चन्द्रगति, उज्ज्वल है मन जाका, पूजाकी सामग्री लेय मनोरथ समान रथ पर आरूढ होय चैत्यालयविषै आया। सो राजा जनक चन्द्रगतिकी सेनाकूं देख अर अनेक वादित्रनिका नाम सुनकर कछुइक शंकायमान भया। कईएक विद्याधर मायामई सिंहोंपर चढ़े हैं, कईएक मायामई हाथिनि पर चढ़े हैं, कईएक घोडावों पर चढ़े, कईएक हंसों पर चढ़े, तिनके बीच राजा चन्द्रगति है। सो देखकर जनक विचारता भया जो विजयार्ध पर्वत पर विद्याधर बसै हैं ऐसी मैं सुनता सो ये विद्याधर हैं। विद्याधरनिकी सेनाके मध्य यह विद्याधरों का अधिपति कोई परमदीप्ति कर शोभै है। ऐसा चितवन जनक करै है। ताही समय वह चन्द्रगति राजा दैत्यजातिके विद्याधरनिका स्वामी चैत्यालयविषै आय प्राप्त भया। महाहर्षवंत नम्रीभूत है शरीर जाका। तब जनक ताकूं देखकर कछुइक भयवान होय भगवानके सिंहासनके नीचे बैठ रह्या। अर वह राजा चन्द्रगति भक्ति कर भगवानके चैत्यालयविषै जाय प्रणाम कर, विधिपूर्वक महा उत्तम पूजा करी। अर परम स्तुति करता भया। बहुरि सुन्दर हैं स्वर जाके, ऐसी बीणा हाथमें लेयकर
महाभावना सहित भगवानके गुण गावता भया। सो कैसैं गावै है सो सुनो। अहो भव्यजीव हो! जिनेंद्र को आराधहु। कैसे हैं जिनेन्द्रदेव? तीनलोकके जीवनिकूं वरदाता, अर अविनाशी है सुख जिनके, अर देवनिमें श्रेष्ठ जे इन्द्रादिक तिनकर नमस्कार करने योग्य हैं। कैसे हैं इन्द्रादिक? महा उत्कृष्ट जो पूजाका विधान ताविषै लगाया है चित्त जिन्होंने। अहो उत्तम जन हो! श्रीऋषभदेवको मन वच

कायकर निरंतर भजो। कैसे हैं ऋषभदेव ? महाउत्कृष्ट हैं, अर शिवदायक हैं। जिनके भजेते जन्म २ के पाप किये समस्त विलय होय हैं। अहो प्राणी हो ! जिनवरको नमस्कार करहु। कैसे हैं जिनवर? महा अतिशय धारक हैं, कर्मनिके नाशक हैं, अर परमगति जो निर्वाण ताकू प्राप्त भए हैं। अर सर्व सुरासुर नर विद्याधर, उन कर पूजित हैं चरण कमल जिनके। क्रोधरूप महावैरीका भंग करनहारे हैं। मैं भक्तिरूप भया जिनेन्द्रकू नमस्कार करू हूं। उत्तम लक्षणकर संयुक्त है देह जिनका, अर विनय कर नमस्कार करै हैं सर्व मुनियोंके समूह जिनको ते भगवान नमस्कार मात्र हो से भक्तोंके भय हरे हैं। अहो भव्य जीव हो ! जिनवरको बारम्बार प्रणाम करहु। वे जिनवर अनुपम गुणको धरै हैं, अर अनुपम है काया जिनकी, अर हते हैं संसारमई सकल कुकर्म जिनने, अर रागादिक रूप जे मल तिनकर रहित महानिर्मल हैं, अर ज्ञानावरणादिक रूप जो पट तिनके दूर करनहारे, पारकरबेकू अति प्रवीण हैं, अर अत्यन्त पवित्र हैं। या भांति राजा चन्द्रगति बीण बजाय भगवानकी स्तुति करी। तब भगवानके सिंहासनके नीचेतैं राजा जनक भय तज कर जिनराजकी स्तुति कर निकस्या, महाशोभायमान। तब चन्द्रगति जनककू देख हर्षित भया है मन जाका सो पूछता भया–तुम कौन हो ? या निर्जन स्थानकविषैं भगवानके चैत्यालयविषै कहांतैं आए हो ? तुम नागोंके पति नगेन्द्र हो अथवा विद्याधरोंके अधिपति हो। हे मित्र ! तुम्हारा नाम क्या है सो कहो। तब जनक कहता भया–हे विद्याधरोंके पति ! मैं मिथिला नगरी से आया हूं, अर मेरा नाम जनक है। मायामई तुरंग मोहि ले आया है। जब ये समाचार जनकने कहे तब दोऊ अति प्रीतिकर मिले। परस्पर कुशल पूछी। एक आसन पर बैठ, फिर क्षण एक तिष्ठकर दोउ आपसमें विश्वासको प्राप्त भए। तब चन्द्रगति और कथाकर जनककू कहते भए–हे महाराज ! मैं बड़ा पुण्यवान जो मोहि मिथिला नगरीके पतिका दर्शन भया। तिहारी पुत्री महा शुभलक्षणनिकर मण्डित है, मैं बहुत लोगनिके मुखसे सुनी है। सो मेरे पुत्र भामंडलको देवो, तुमसे सम्बन्ध पाय मैं अपना परम उदय मानूंगा। तब जनक कहते भए–हे

विद्याधराधिपति ! तुम जो कही सो सब योग्य है, परन्तु मैं मेरी पुत्री राजा दशरथके बड़े पुत्र जो श्रीरामचन्द्र तिनकू देनी करी है । तब चन्द्रगति बोले काहेते उनको देनी करी हूं ? तब जनकने कही जो तुमको सुनिवेको कौतुक है तो सुनहु । मेरी मिथिलापुरी रत्नादिक धनकर अर गौ आदि पशुधन कर पूर्ण, सो अर्धवर्बर देशके म्लेच्छ महा भयंकर उन्होंने आय मेरे देशको पीड़ा करी, धनके समूह लूटने लगे, अर देशमें श्रावक अर यतिका धर्म मिटने लगा । सो मेरे अर म्लेच्छोंके महा युद्ध भया । ता समय राम आय मेरी अर मेरे भाई की सहायता करी । वे म्लेच्छ जो देवोंसे भी दुर्जय, सो जीते । अर रामका छोटा भाई लक्ष्मण, इन्द्र समान पराक्रमका धरणहारा है, अर बड़े भाईका सदा आज्ञाकारी, महा विनयकर संयुक्त है । वे दोनों भाई आयकर जो म्लेच्छनिकी सेनाको न जीतते तो समस्त पृथ्वी म्लेच्छमई होजाती । वे म्लेच्छ महा अविवेकी शुभक्रियारहित, लोककू पीडाकारी, महा भयंकर विष समान दारुण उत्पातका स्वरूप ही हैं । सो रामके प्रसाद कर सब भाज गए । पृथ्वीका अमंगल मिटगया । वे दोनों राजा दशरथके पुत्र महादयालु लोकनिके हितकारी, तिनकूं पायकर राजा दशरथ सुखसे सुरपति समान राज्य करै है । ता दशरथके राजविषै महासम्पदावान लोक बसै हैं । अर दशरथ महा शूरवीर है । जाके राज्यमें पवनहू काहूका कछु नाहीं हर सकै तो और कौन हरे ? राम लक्ष्मणने मेरा ऐसा उपकार किया तब मोहि ऐसी चिंता उपजी जो मैं इनका कहा प्रतिउपकार करूं । रात्रि दिवस मोहि निद्रा न आवती भई । जाने मेरे प्राण राखे, प्रजा राखी, ता राम समान मेरे कौन ? मोंते कबहु कछु उनकी सेवा न बनी, अर उनने बड़ा उपकार किया । ३७३

तब मैं विचारता भया—जो अपना उपकार करै अर उसकी सेवा कछु न बनै तो कहा जीतव्य ? कृतघ्नका जीतव्य तृण समान है । तब मैंने मेरी पुत्री सीता नवयौवन पूर्ण रामयोग्य जान रामको देनी विचारी । तब मेरा सोच कछु इक मिटया । मैं चिंतारूप समुद्रमें डूबा हुता सो पुत्री नावरूप भई ? तातैं मैं सोचसमुद्रतैं निकस्या । राम महा तेजस्वी हैं । यह वचन जनकके सुन चन्द्रगतिके

निकटवर्ती और विद्याधर मलिन मुख होय कहते भए–अहो ! तुम्हारी बुद्धि शोभायमान नाहीं । तुम भूमिगोचरी अपंडित हो । कहां वे रंक म्लेच्छ अर कहां उनके जीतवेकी बडाई ? यामें कहा रामका पराक्रम, जाकी एती प्रशंसा तुमने म्लेच्छनिके जीतवे कर करी । रामका जो ऐसा स्तोत्र किया सो इसमें उलटी निंदा है । अहो ! तुम्हारी बात सुन हांसी आवै है, जैसें बालकको विषफल ही अमृत भासै है, अर दरिद्रीकू बदरी (बेर) फल ही नीके लागें, अर काक सूके वृक्षविषै प्रीति करै, यह स्वभाव ही दुर्निवार है। अब तुम भूमिगोचरियोंका खोटा सम्बन्ध तजकर यह यह विद्याधरोंका इन्द्र राजा चन्द्रगति तासूं संबंध करहु । कहां देवों समान सम्पदाके धरणहारे विद्याधर, अर कहां वे रंक भूमिगोचरी ? सर्वथा अति दुखी । तब जनक बोले–क्षीरसागर अत्यन्त विस्तीर्ण है परन्तु तृषा हरता नाहीं । अर वापिका थोड़े ही मिष्ट जलसे भरी है सो जीवनिकी तृषा हरै है । अर अंधकार अत्यन्त विस्तीर्ण है ताकर कहा ? अर दीपक अल्प भी है परन्तु पृथ्वीमें प्रकाश करै है, पदार्थनिको प्रकट करै है । अर अनेक माते हाथी जो पराक्रम न कर सकें तो अकेला केसरी सिंहका बालक करै है । ऐसे जब राजा जनक ने कहा तब वे सर्व विद्याधर कोपवंत होय अति शब्दकर भूमिगोचरियोंकी निंदा करते भए । हो जनक ! वे भूमिगोचरी विद्याके प्रभावतैं रहित, सदा खेदखिन्न, शूरवीरतारहित, आपदावान, तुम कहा उनकी स्तुति करो हो ? पशुनिमें अर उनमें भेद कहा ? तुममें विवेक नाहीं तातैं उनकी कीर्ति करो हो । तब जनक कहते भए–हाय ! हाय ! बड़ा कष्ट है जो मैंने पापके उदयकरि बड़े पुरुषनिकी निंदा सुनी । तीन भवनमें विख्यात जे भगवान ऋषभदेव, इन्द्रादिक देवनिमें पूजनीक, तिनका इक्ष्वाकुवंश लोकमें पवित्र, सो कहा तुम्हारे श्रवणमें न आया ? तीनलोकके पूज्य श्रीतीर्थंकरदेव अर चक्रवर्ती बलभद्र नारायण सो भूमिगोचरियोंमें उपजे तिनकू तुम कौन भांति निंदो हो ? अहो विद्याधरो ! पंचकल्याणककी प्राप्ति भूमिगोचरियोंके ही होय है, विद्याधरोंमें कदाचित् किसीके तुमने देखी ? इक्ष्वाकुवंशमें उपजे बड़े बड़े राजा, जो षट् खंड पृथ्वीके जीतनहारे, तिनके चक्रादि महारत्न अर बड़ी ऋद्धिके

स्वामी, चक्रके धारी, इन्द्रादिककर गाई है जो उदार कीर्ति जिनकी, ऐसे गुणोंके सागर, कृतकृत्य पुरुष ऋषभदेवके वंशके बड़े २ पृथ्वीपति या भूमिमें अनेक भए। ताही वंशमें राजा अरण्य बड़े राजा भए। तिनके राणी सुमंगला, ताके दशरथ पुत्र भए। जे क्षत्री धर्ममें तत्पर लोकनिकी रक्षा निमित्त अपना प्राण त्याग करते न शंकैं, जिनकी आज्ञा समस्त लोक सिर पर धरैं। जिनकी चार पटराणी मानों चार दिशा ही हैं। सर्व शोभाकूं धरैं, गुणनिकर उज्ज्वल पांच सौ और राणी। मुखकर जीता है चन्द्रमा जिनने, जे नाना प्रकारके शुभ चरित्रनिकर पतिका मन हरै हैं। अर राजा दशरथके राम बड़े पुत्र, जिनकूं पद्म कहिए। लक्ष्मीकर मंडित है शरीर जिनका, दीप्तिकर जीता है सूर्य, अर कीर्तिकर जीता है चन्द्रमा, स्थिरताकर जीता है सुमेरु, शोभाकर जीता है इन्द्र, शूरवीरताकर जीते हैं सर्व सुभट जिनने, सुन्दर हैं चरित्र जिनके। जिनका छोटा भाई लक्ष्मण, जाके शरीरमें लक्ष्मीका निवास, जाके धनुषको देख शत्रु भयकर भाज जावे। अर तुम विद्याधरोंको उनसे भी अधिक बतावो हो सो काक भी तो आकाशमें गमन करै है तिनमें कहा गुण है? अर भूमिगोचरनिमें भगवान तीर्थंकर उपजै हैं तिनको इन्द्रादिक देव भूमिमें मस्तक लगाय नमस्कार करै हैं, विद्याधरोंकी कहा बात? ऐसे वचन जब जनकने कहे तब वे विद्याधर एकांतमें तिष्ठकर आपस में मंत्र कर जनककूं कहते भए—हे भूमिगोचरिनिके नाथ! तुम राम लक्ष्मणका एता प्रभाव ही कहो हो, अर वृथा गरज गरज बातें करो हो सो हमारे उनके बल पराक्रमकी प्रतीति नाहीं। तातैं हम कहै हैं सो सुनहु: एक वज्रावर्त दूजा सागरावर्त, ये दो धनुष, तिनकी देव सेवा करै हैं। सो ये धनुष वे दोनों भाई चढ़ावें तो हम उनकी शक्ति जानें। बहुत कहनेकर कहा जो वज्रावर्त धनुष राम चढ़ावें तो तुम्हारी कन्या परणैं, नातर हम बलात्कार कन्याकूं यहां ले आवेंगे, तुम देखते ही रहोगे। तब जनकने कही यह बात प्रमाण है। तब उनने दोऊ धनुष दिखाए सो जनक उन धनुषनिकूं अति विषम देखकर कछुएक आकुलताकूं प्राप्त भया। बहुरि वे विद्याधर भाव थकी भगवानकी पूजा स्तुति कर गदा अर हलादि रत्नोंकर संयुक्त

धनुषनिकू ले और जनककू ले मिथिलापुरी आए। अर चन्द्रगति उपवनसे रथनूपुर गया। जब राजा जनक मिथिलापुरी आये तब नगरीकी महाशोभा भई, मंगलाचरण भए, अर सब जन सम्मुख आए। अर वे विद्याधर नगरके बाहिर एक आयुधशाला बनाय तहां धनुष धरे अर महागर्वको धरते संते तिष्ठे। जनक खेदसहित, किंचित् भोजन खाय, चिंताकर व्याकुल, उत्साहरहित सेजपर पड़े। तहाँ महा नम्रीभूत उत्तम स्त्री बहुत आदर सहित चन्द्रमाकी किरणसमान उज्ज्वल चमर ढारती भई। राजा अति दीर्घ निश्वास महा उष्ण अग्नि समान नाखैं। तब राणी विदेहाने कहा—हे नाथ! तुमने कौन स्वर्गलोककी देवांगना देखी जिसके अनुरागकर ऐसी अवस्थाकू प्राप्त भए हो? सो हमारे जानने में वह कामिनी गुणरहित निर्दई है जो तुम्हारे आतापविषै करुणा नाहीं करै है। हे नाथ! वह स्थानक हमैं बतावो जहांतैं वाहि ले आवैं। तुम्हारे दुखकर मोहि दुख अर सकल लोकनिकू दुख होय है। तुम ऐसे महासौभाग्यवंत ताहि कहा न रुचै। वह कोई पाषाणचित्त है। उठो, राजावोंको जे उचित कार्य होय सो करो। यह तिहारा शरीर है तो सब मनवांछित कार्य होंगे। या भांति राणी विदेहा जो प्राणहूतैं प्रिया हुती सो कहती भई। तब राजा बोले—हे प्रिये! हे शोभने! हे बल्लभे! मुझे खेद और ही है, तू वृथा ऐसी बात कहि काहेको अधिक खेद उपजावै है। तोहि या वृत्तांतकी गम्य नाहीं। तातैं ऐसे कहै है। वह मायामई तुरंग मोहि विजयार्धगिरिमें ले गया। तहां रथनूपुरके राजा चन्द्रगतिसे मेरा मिलाप भया। सो वानैं कही तुम्हारी पुत्री मेरे पुत्रको देवो। तब मैंने कही मेरी पुत्री दशरथके पुत्र श्रीरामचन्द्रको देनी करी है। तब वाने कही जो रामचंद्र वज्रावर्त धनुषकू चढ़ावें तो तिहारी पुत्री परणें नातर मेरा पुत्र परणेगा। सो मैं तो पराए वश जाय पड्या। तब उनके भय थकी अर अशुभकर्मके उदय थकी यह बात प्रमाण करी। सो वज्रावर्त अर सागरावर्त दोऊ धनुष ले विद्याधर यहां आये हैं। ते नगरके बाहिर तिष्ठै हैं। सो मैं ऐसी जानूं हूं ये धनुष इन्द्रहूतैं चढ़ाए न जांय। जिनकी ज्वाला दशोंदिशामें फैल रही है, अर मायामई नाग फुंकारैं हैं, सो नेत्रनिसों तो देखा न जावें। धनुष बिना चढाये ही स्वतःस्वभाव महाभयानक शब्द करैं

हैं। इनको चढायवेकी कहा बात ? जो कदाचित् श्रीरामचन्द्र धनुषकू न चढावें तो यह विद्याधर मेरी पुत्रीकू जोरावरी लेजावेंगे, जैसें स्यालके समीपतें मांसकी डली खग कहिए पक्षी ले जाय। सो धनुषके चढायवेका बीस दिन बाकी हैं। एही करार है। जो न बना तो वह कन्याकू ले जायंगे। फिर याका देखना दुर्लभ हैं। हे श्रेणिक! जब राजा जनक या भांति कही तब राणी विदेहाके नेत्र अश्रुपातसू भर आये, अर पुत्रके हरनेका दुःख भूल गई हुती सो याद आया। एक तो प्राचीन दुख, बहुरि नवीन दुख, अर आगामी दुख, सो महाशोककर पीड़ित भई, महा शब्दकर पुकारने लगी। ऐसा रुदन किया जो सकल परिवारके मनुष्य विह्वल हो गए। राजासू राणी कहै है—हे देव! मैं ऐसा कौनसा पाप किया जो पहिले तो पुत्र हरचा गया, अर अब पुत्री भी हरी जाय है। मेरे तो स्नेहका अवलंबन एक यह शुभ चेष्टित पुत्री ही है। मेरे तिहारे सर्व कुटुम्ब लोगनिके यह पुत्री ही आनन्दका कारण है। सो पापिनिके एक दुख नाहीं मिटै है अर दूजा दुख आय प्राप्त होय है। या भांति शोकके सागरमें पड़ी राणी रुदन करती, ताहि राजा धीर्य बंधाय कहते भए—हे राणी! रुदनकर कहा? जो पूर्व या जीवने कर्म ऊपार्जे हैं तिनके उदय अनुसार फलै हैं। संसाररूप नाटकका आचार्य जो कर्म सो समस्त प्राणीनिकू नचावै है। तेरा पुत्र गया सो अपने अशुभके उदयतें गया। अब शुभ कर्मका उदय है सो सकल मंगल ही होहि। ऐसे नानाप्रकारके सार वचननिकर राजा जनकने राणी विदेहाकू धीर्य बंधाया। तब राणी शांतिकू प्राप्त भई।

बहुरि राजा जनक नगर बाहिर जाय धनुषशालाके समीप स्वयंवर मंडप रच्या, अर सकल राजपुत्रनिके बुलायवेकू पत्र पठाये। सो पत्र बांच बांच सर्व राजपुत्र आये। अर अयोध्या नगरीको हू दूत भेजे सो माता पिता संयुक्त रामादिक चारों भाई आये। राजा जनक बहुत आदरकर पूजे। सीता परम-सुन्दरी सातसौ कन्याओंके मध्य महलके ऊपर तिष्ठै है। बड़े २ सामंत याकी रक्षा करैं। अर एक महा पंडित खोजा जानैं बहुत देखी, बहुत सुनी है, स्वर्णरूप बेतकी छडी जाके हाथमें, सो ऊंचे शब्द

कर कहै है, प्रत्येक राजकुमारको दिखावै है । हे राजपुत्री ! यह श्रीरामचन्द्र कमललोचन राजा दशरथ के पुत्र हैं, तू नीके देख । अर यह इनका छोटाभाई लक्ष्मीवान लक्ष्मण है, महा ज्योतिकूं धरै । अर यह इनका भाई महाबाहु भरत है । अर यह यातैं छोटा शत्रुघ्न है । यह चारों ही भाई गुणनिके सागर हैं । इन पुत्रनिकर राजा दशरथ पृथ्वीकी भलीभांति रक्षा करै है, जाके राज्यमें भयका अंकुर नाहीं । अर यह हरिबाहन महा बुद्धिमान् काली घटासमान है प्रभा जाकी । अर यह चित्ररथ महा गुणवान, तेजस्वी, महा सुन्दर है । अर यह दुर्मुख नामा कुमार अतिमनोहर महातेजस्वी है । अर यह श्रीसंजय, यह जय, यह भानु, यह सुप्रभ, यह मंदिर, यह बुध, यह विशाल, यह श्रीधर, यह वीर यह बंधु, यह भद्रबल, यह मयूरकुमार इत्यादि अनेक राजकुमार महापराक्रमी महासौभाग्यवान निर्मल वंशके उपजे, चन्द्रमा समान निर्मल है कांति जिनकी, महागुणवान, भूषणके धरणहारे, परम उत्साह रूप, महाविनयवंत, महाज्ञानी, महाचतुर आय इकट्ठे भए हैं । अर यह संकाशपुरका नाथ, याके हस्ती पर्वतसमान, अर तुरंग महाश्रेष्ठ, अर रथ महामनोज्ञ, अर योधा अद्भुत पराक्रमके धारी । अर यह सुरपुरका राजा, यह रंध्रपुरका राजा, यह नन्दपुरका राजा यह कुंदनपुरका अधिपति, यह मगध देशका राजेन्द्र, यह कंपिल्य नगरका नरपति, इनमें कईएक इक्ष्वाकुवंशी अर कईएक नागवंशी, अर कईएक सोमवंशी, अर कईएक उग्रवंशी, अर कईएक हरिवंशी, अर कईएक कुरुवंशी । इत्यादि महागुणवंत जो राजा सुनिए हैं ते सर्व तेरे अर्थ आए हैं । इनके मध्य जो पुरुष बज्रावर्त धनुषकूं चढावै ताहि तू वर । जो पुरुषनिमें श्रेष्ठ होयगा ताहीसूं यह कार्य होयगा । या भांति खोजा कहो । अर राजा जनक सबनिकूं एकत्रकर सर्व ही राजकुमार अनुक्रमतैं धनुषकी ओर पठाए सो गए । सुन्दर है रूप जिनका सो सर्व ही धनुषकूं देख कम्पायमान भए । धनुषतैं सर्व ओर अग्निकी ज्वाला बिजुली समान निकसै । अर मायामई भयानक सर्प फुंकार करैं । तब कईएक तो कानोंपर हाथ धर भागे । अर कईएक धनुषकूं देख कर दूर ही कीलेसे ठाढ़े रहे, कांपैं हैं समस्त अंग जिनके, अर मुंद गए हैं नेत्र जिनके । अर कईएक

ज्वरकरि व्याकुल भए, अर कईएक धरतीविषैं गिर पड़े, अर कईएक ऐसे भए जो बोल न सकैं। अर कईएक मूर्छाकूं प्राप्त भये, अर कईएक धनुषके नागनिके स्वासकरि जैसैं वृक्षका सूका पत्र पवनसे उड़ा उड़ा फिरै तैसैं उडते फिरैं, अर कईएक कहते भए जो अब जीवते घर जावैं तो महादान करैं, सकल जीवनिकूं अभयदान देवैं। अर कईएक ऐसे कहते भये, यह रूपवती कन्या है तो कहा? याके निमित्त प्राण तो न देने। अर कईएक कहते भये यह कोई मायामई विद्याधर आया है सो राजावोंके पुत्रनिकूं बाधा उपजाई है। अर कई एक महाभाग ऐसे कहते भये अब हमारे स्त्रीतैं प्रयोजन नाहीं, यह काम महा दुखदाई है। जैसैं अनेक साधु अथवा उत्कृष्ट श्रावक शीलवृत धारै हैं तैसैं हमहू शीलवृत धारेंगे, धर्म ध्यानकर काल व्यतीत करेंगे। या भांति सर्व पराङ्मुख भए। अर श्रीरामचन्द्र धनुष चढ़ावनेकूं उद्यमी उठकर महामाते हाथीकी नाईं मनोहर गतिसे चलते, जगतकूं मोहते, धनुषके निकट गए। सो धनुष रामके प्रभावतैं ज्वाला रहित होय गया। जैसा सुन्दर देवोपुनीत रत्न है तैसा सौम्य होयगया। जैसैं गुरुके निकट शिष्य सौम्य होयजाय। तब श्रीरामचन्द्र धनुषकूं हाथमें लेयकरि चढायकर खैंचते भए सो महाप्रचंड शब्द भया, पृथ्वी कम्पायमान भई। कैसा है धनुष? विस्तीर्ण है प्रभा जाकी, जैसा मेघ गाजैं तैसा धनुषका शब्द भया। मयूरनिके समूह मेघका आगमन जान नाचने लगे। जाके तेजके आगैं सूर्य ऐसा भासने लग्या जैसा अग्निका कणा भासै। अर स्वर्णमई रजकर आकाशके प्रदेश व्याप्त होय गए। यह धनुष देवाधिष्ठित है सो आकाशविषैं धन्यधन्य शब्द कहते भए, अर पुष्पनिकी वर्षा होती भई। देव नृत्य करते भए। तब राम महादयावंत धनुषके शब्दकरि लोकनिकूं कम्पायमान देख धनुषकूं उतारते भए। लोक ऐसे डरे मानों समुद्रके भ्रमरमें आय गये हैं, तब सीता अपने नेत्रनि करि श्रीरामकूं निरखती भई। कैसे हैं नेत्र? पवनकरि चंचल, जैसैं कमलोंका दल होय तातैं अधिक है कांति जिनकी, अर जैसा कामका बाण तीक्ष्ण होय तैसैं तीक्ष्ण हैं। सीता रोमांचकर संयुक्त मनकी वृत्तिरूप माला जो प्रथम देखते ही इनकी ओर प्रेरी हुती बहुरि लोकाचार निमित्त हाथमें रत्नमाला

लेकर श्रीरामके गलेमें डारी । लज्जासे नम्रीभूत है मुख जाका तैसैं जिनधर्मके निकट जीवदया तिष्ठै, तैसैं रामके निकट सीता आय तिष्ठी । श्रीराम अतिसुन्दर हुते सो याके समीपतैं अत्यन्त सुन्दर भासते भए । इन दोऊनिके रूपका दृष्टांत देवेमें न आवै । अर लक्ष्मण दूजा धनुष सागरावर्त, क्षोभकूं प्राप्त भया जो समुद्र समान है शब्द जाका, उसे चढाय खैंचते भए । सो पृथ्वी कम्पायमान भई । आकाश में देव जयजयकार शब्द करते भये, अर पुष्पवर्षा होती भई । लक्ष्मण धनुषकूं चढाय खैंचकर जब बाणपर दृष्टि धरी तब सर्व डरे । लोकनिकूं भयरूप देख आप धनुषकी पिणच उतार महाविनय संयुक्त रामके निकट आए । जैसे ज्ञानके निकट वैराग्य आवै । लक्ष्मणका ऐसा पराक्रम देख चंद्रगति का पठाया जो चंद्रवर्द्धन विद्याधर आया हुता, सो अतिप्रसन्न होय अष्टादश कन्या विद्याधरनिकी पुत्री लक्ष्मण कूं दीनी । श्रीराम लक्ष्मण दोऊ धनुष लेय महाविनयवन्त पिताके पास आए–अर सीताहू आ२ । अर जेते विद्याधर आये हुते सो राम लक्ष्मणका प्रताप देख चन्द्रवर्द्धनकी लार रथनूपुर गये । जाय राजा चन्द्रगतिकूं सर्व वृत्तांत कह्या । सो सुनकर चिंतावान होय तिष्ठ्या । अर स्वयम्बर मंडप में रामके भाई भरत हू आए हुते सो मनमें ऐसा विचारते भये कि मेरा अर राम लक्ष्मणका कुल एक, अर पिता एक परन्तु इनकासा अद्भुत पराक्रम मेरा नाहीं । यह पुण्याधिकारी है, इनकेसे पुण्य मैंने न उपार्जे । यह सीता साक्षात् लक्ष्मी, कमलके भीतर दल समान है वर्ण जाका, राम सारिखा पुण्याधिकारी हीके स्त्री होय । तब केकई इनकी माता सर्व कलाविषैं प्रवीण भरतके चित्तका अभिप्राय जान पतिके कानविषैं कहती भई–हे नाथ ! भरतका मन कछुइक बिलखा दीखै है, ऐसा करो जो यह विरक्त न होय । इस जनकके भाई कनकके राणी सुप्रभा, उसकी पुत्री लोकसुन्दरी है, सो स्वयंबर मंडपकी विधि बहुरि करावो अर वह कन्या भरतके कण्ठमें वरमाला डारे तो यह प्रसन्न होय । तब दशरथ याकी बात प्रमाणकर कनकके कान पहुँचाई । तब कनक दशरथकी आज्ञा प्रमाणकर जो राजा गए हुते सो पाछे बुलाये । यथायोग्य स्थानविषै तिष्ठे । सब जो भूपति तेई भये नक्षत्रनिके समूह तिन

विषै तिष्ठता जो भरतरूप चन्द्रमा ताहि कनककी पुत्री लोकसुन्दरीरूप शुक्लपक्षकी रात्रि सो महा अनुरागकरि वरती भई। मनकी अनुरागतारूप माला तो पहिले अवलोकन करते ही डारी हुती, बहुरि लोकाचारमाल सुमन कहिये पुष्प तिनकी वरमाला भी कण्ठमें डारी। कैसी है कनककी पुत्री? कनक समान है प्रभा जाकी, जैसे सुभद्रा भरत चक्रवर्तीकूं वरचा हुता तैसे यह दशरथके पुत्र भरतको वरती भई। गौतम स्वामी राजा श्रेणिकतैं कहै हैं—हे श्रेणिक! कर्मनिकी विचित्रता देख, भरत जैसे विरक्त चित्त राजकन्या पर मोहित भए। अर सब राजा बिलखे होय अपने अपने स्थानक गए। जानै जैसा कर्म उपार्जा होय तैसा ही फल पावै है। किसीके द्रव्यको दूसरा चाहनेवाला न पावै।

अथानन्तर मिथिलापुरीमें सीता अर लोकसुन्दरीके विवाहका परम उत्साह भया। कैसी है मिथिलापुरी ध्वजा अर तोरणनिके समूहकरि मंडित है, अर महा सुगन्ध करि भरी है, शंख आदि वादित्रनिके समूहसे पूरित है। श्रीरामका अर भरतका विवाह महाउत्सव सहित भया। द्रव्यकरि भिक्षुक लोक पूर्ण भए। जे राजा विवाहका उत्सव देखवेकूं रहे हुते ते दशरथ अर जनक कनक दोनों भाईसे अति सन्मान पाय अपने अपने स्थानक गये। राजा दशरथके पुत्र चारों, रामकी स्त्री सीता, भरतकी स्त्री लोकसुन्दरी महा उत्सवनिसूं अयोध्याके निकट आये। कैसे हैं दशरथके पुत्र? सकल पृथ्वीविषै प्रसिद्ध है कीर्ति जिनकी, अर परमरूप परमगुण, सोई भया समुद्र, ताविषै मग्न हैं। अर परम रत्ननिके आभूषण तिनकर शोभित हैं शरीर जिनके, माता पिताकूं उपजाया है महाहर्ष जिनने, नानाप्रकारके वाहन तिनकर पूर्ण जो सेना, सोई भया सागर, जहां अनेक प्रकारके वादित्र बाजे हैं, जैसें जलनिधि गाजै, ऐसी सेना सहित राजमार्ग होय महिल पधारे। मार्गमें जनक अर कनककी पुत्रीकूं सब ही देखैं हैं। सो देख देख अति हर्षित होय हैं, अर कहै हैं इनकी तुल्य और कोऊ नाहीं। यह उत्तम शरीरकूं धरैं हैं इनके देखवेकूं नगरके नर नारी मार्गमें आय इकट्ठे भये, तिनकरि मार्ग अति संकीर्ण भया। नगरके दरवाजे सों ले राजमहिल परियंत मनुष्यनिका पार नाहीं। किया है समस्त जननिने आदर जिनका

ऐसे दशरथके पुत्र इनके श्रेष्ठ गुणनिकी ज्यों ज्यों लोक स्तुति करैं त्यों त्यों ये नीचे हो रहे। महा सुखके भोगनहारे ये चारों ही भाई सुबुद्धि अपने अपने महिलनिमें आनन्दसों विराजैं। यह सब शुभ कर्मका फल विवेकी जन जानकर ऐसे सुकृत करहु जाकरि सूर्यतैं अधिक प्रताप होय। जेते शोभायमान उत्कृष्ट फल हैं ते सर्व धर्मके प्रभावतैं हैं। अर जो महानिंद्य कटुक फल हैं ते सब पापकर्मके उदयतैं। तातैं सुखके अर्थि पापक्रियाकूं तजहु, अर शुभक्रिया करहु।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रंथ, ताकी भाषावचनिकाविषै राम लक्ष्मणका धनुष चढ़ावने आदि प्रताप वर्णन अर रामका सीतासों तथा भरत का लोकसुन्दरीसों विवाह वर्णन करनेवाला अठाईसवां पर्व पूर्ण भया ॥ २८ ॥

अथानन्तर आषाढ़ शुक्ल अष्टमीतैं अष्टाह्निका का महा उत्सव भया। राजा दशरथ जिनेन्द्रकी महा उत्कृष्ट पूजा करनेकूं उद्यमी भया। राजा धर्मविषै अति सावधान है। राजाकी सब राणी, पुत्र, बांधव तथा सकल कुटुम्ब जिनराजके प्रतिबिम्बनिकी महा पूजा करवेकूं उद्यमी भए। केई बहुत आदर से पंच वर्णके जे रत्न तिनके चूर्णका माडला मांड़े हैं। अर कई नानाप्रकारके रत्ननिकी माला बनावे हैं, भक्तिविषै पाया है अधिकार जिनने। अर कोऊ एला (इलायची) कपूरादि सुगन्ध द्रव्यनिकरि जलकूं सुगन्ध करैं हैं, अर कोऊ सुगन्ध जलसे पृथ्वीको छाटैं हैं, अर कोऊ नानाप्रकारके परम सुगन्ध पीसे हैं, अर कोऊ जिनमंदिरोंके द्वारनिकी शोभा अति देदीप्यमान वस्त्रनिकरि करावैं हैं, अर कोऊ नाना प्रकारके धातुओंके रंगोंकर चैत्यालयनिकी भीतियोंको मंडवावे हैं। या भांति अयोध्यापुरीके सब ही लोक वीतराग देवकी परम भक्तिको धरते संते अत्यन्त हर्षकरि पूर्ण जिनपूजाके उत्साहसे उत्तम पुण्यकूं उपार्जते भए। राजा दशरथ भगवानका अति विभूतिकरि अभिषेक करावता भया। नाना-प्रकारके वादित्र बाजते भये। राजा अष्ट दिनोंके उपवास किए, अर जिनेन्द्रकी अष्ट प्रकारके द्रव्य-नितैं महा पूजा करी, अर नानाप्रकारके सहज पुष्प अर कृत्रिम कहिए स्वर्ण रत्नादिकके रचे पुष्प

तिनकरि अर्चा करी। जैसैं नन्दीश्वर द्वीपविषै देवनिकरि संयुक्त इन्द्र जिनेन्द्र की पूजा करै तैसैं राजा दशरथने अयोध्यामें करी। अर राजा चारों ही पटराणियोंको गंधोदक पठाया सो तीनके निकट तो तरुण स्त्री ले गई, सो शीघ्र ही पहुँचा। वे उठकर समस्त पापोंका दूर करनहारा जो गंधोदक ताहि मस्तक अर नेत्रनितैं लगावती भई। अर राणी सुप्रभाके निकट वृद्ध खोजा ले गया हुता सो शीघ्र नहीं पहुँचा। तातैं राणी सुप्रभा परमकोप अर शोककूं प्राप्त भई। मनमें चितवती भई जो राजा उन तीन राणिनिको गंधोदक भेज्या अर मोहि न भेज्या सो राजाका कहा दोष है? मैं पूर्व जन्ममें पुण्य न उपजाया, वे पुण्यवती महा सौभाग्यवती प्रशंसा योग्य हैं जिनको भगवानका गंधोदक महा पवित्र राजाने पठाया। अपमानकर दग्ध जो मैं सो मेरे हृदयका ताप और भांति न मिटै, अब मुझे मरण ही शरण है। ऐसा विचार एक विशाखनामा भण्डारीकूं बुलाय कहती भई—हे भाई! यह बात तू काहूसे मत कहियो, मोहि विषतैं प्रयोजन है। सो तू शीघ्र ले आ। तब प्रथम तो वाने शंकावान होय लायवेमें ढील करी, बहुरि विचारी कि औषधि निमित्त मंगाया होगा सो लेबेकूं गया। अर राणी शिथिलगात्र मलिन चित्त वस्त्र ओढ़ सेजपर पड़ी। राजा दशरथने अंतःपुरमें आयकर तीन राणी देखी, सुप्रभा न देखी। सुप्रभासूं राजाका बहुत स्नेह सो इसके महिलमें राजा आय खड़े रहे। ता समय जो विष लेनेकूं पठाया हुता सो ले आया अर कहता भया—हे देवि! यह विष लेहु। यह शब्द राजा ने सुना तब उसके हाथसे उठाय लिया अर आप राणीकी सेजपर बैठ गए। तब राणी सेजसे उतर बैठी। तब राजा आग्रहकर सेजऊपर बैठाई। अर कहते भए—हे वल्लभे! ऐसा क्रोध काहेतैं किया, जाकर प्राण तजा चाहे है। सर्ववस्तुनितैं जीतव्य प्रिय है, अर सर्व दुःखोंसे मरणका बड़ा दुःख है। ऐसा तोहि कहा दुःख है जो विष मंगाया। तू मेरे हृदयका सर्वस्व है, जाने तुझे क्लेश उपजाया हो ताको मैं तत्काल तीव्र दंड दूं। हे सुन्दरमुखी! तू जिनेन्द्रका सिद्धांत जानै है। शुभ अशुभ गतिके कारण जानै है। जो विष तथा शस्त्र आदिसे अपघात कर मरै हैं ते दुर्गतिमें पड़े हैं। ऐसो बुद्धि तोहि

क्रोधसे उपजी सो क्रोधको धिक्कार। यह क्रोध महा अंधकार है। अब तू प्रसन्न हो। जे पतिव्रता हैं तिनने जौलग प्रीतमके अनुरागके वचन न सुने तौलग ही क्रोधका आवेश है। तब सुप्रभा कहती भई हे नाथ! तुमपर कोप कहा? परन्तु मुझे ऐसा दुःख भया जो मरण विना शांत न होय। तब राजा कही–हे राणी! तोहि ऐसा कहा दुःख भया? तब राणी कही भगवानका गंधोदक और राणिनिकूं पठाया अर मोहि न पठाया, सो मोमें कौन कार्यकर हीनता जानी? अबलों तुम मेरा कभी भी अनादर न किया अब काहेतैं अनादर किया? यह बात राजासों राणी कहै है ता समय वृद्ध खोजा गंधोदक ले आया, अर कहता भया–हे देवी! यह भगवानका गंधोदक नरनाथ तुमको पठाया सो लेहु। अर ता समय तीनों राणी आई अर कहती भई–हे मुग्धे! पतिकी तोपर अति कृपा है, तू कोपको काहे प्राप्त भई? देख हमकूं तो गंधोदक दासी ले आई अर तेरे वृद्ध खोजा ले आया। पतिके तोसूं प्रेमकी न्यूनता नाहीं, जो पतिमें अपराध भी होय अर वह आय स्नेहकी बात करे तो उत्तम स्त्री प्रसन्न ही होय हैं। हे शोभने! पतिसूं क्रोध करना सुखके विघ्नका कारण है। सो कोप उचित नाहीं। सो तिनने जब या भांति संतोष उपजाया तब सुप्रभाने प्रसन्न होय गंधोदक शीशपर चढ़ाया अर नेत्रनिकूं लगाया। राजा खोजासे कोपकर कहते भए। हे निकृष्ट! तैं एती ढील कहां लगाई? तब वह भयकर कंपायमान होय हाथ जोड सीस निवाय कहता भया–हे भक्तवत्सल! हे देव! हे विज्ञानभूषण! अत्यन्त वृद्ध अवस्था कर हीनशक्ति जो मैं, सो मेरा कहा अपराध? मोपर आप कोप करो, सो मैं क्रोधका पात्र नाहीं। प्रथम अवस्थाविषै मेरे भुज हाथीके सूंड समान हुते, उरस्थल प्रबल, अर जांघ गजबंधन तुल्य हुती, अर शरीर दृढ़ हुता। अब कर्मनिके उदयकरि शरीर शिथिल होय गया। पूर्वे ऊंची नीची धरती राजहंसकी न्याईं उलंघ जाता, मनवांछित स्थान जाय पहुंचता, अब अस्थानकतैं उठा भी नहीं जाय है। तिहारे पिताके प्रसादकर मैं यह शरीर नानाप्रकार लडाया था सो अब कुमित्रकी न्याईं दुख का कारण होय गया। पूर्वे मुझे वैरीनिके विदारनेकी शक्ति हुती सो अब तो लाठीके अवलंबनकर

महाकष्टसूं फिरूं हूं। बलवान पुरुषनिकर खैंचा जो धनुष वा समान वक्र मेरी पीठ हो गई है, अर
मस्तकके केश अस्थिसमान श्वेत होय गए हैं, अर मेरे दांतहू गिर गए मानों शरीरका आताप देख न
सकैं। हे राजन्! मेरा समस्त उत्साह विलय गया। ऐसे शरीरकर कोई दिन जीवूं हूं सो बड़ा
आश्चर्य है। जराकरि अत्यन्त जर्जरा मेरा शरीर, सांझ सकारे विनश जायगा। मोहि मेरी कायाकी
सुधि नाहीं तो और सुध कहाँसे होय? पूर्वे मेरे नेत्रादिक इन्द्रिय विचक्षणताकूं धरे हुते, अब नाम
मात्र रहगए हैं। पाय धरूं किसी ठौर अर परैं काहू ठौर। समस्त पृथ्वीतल दृष्टिकर श्याम भासै है।
ऐसी अवस्था होय गई तो भी बहुत दिननितैं राजद्वारकी सेवा है सो नाहीं तज सकूं हूं। पक्के फलसमान
जो मेरा तन ताहि काल शीघ्र ही भक्षण करेगा। मोहि मृत्युका ऐसा भय नाहीं जैसा चाकरी चूकने
का भय है। अर मेरे आपकी आज्ञा हीका अवलंबन है और अवलम्बन नाहीं। शरीरकी अशक्तिता
कर विलंब होय ताकूं मैं कहा करूं। हे नाथ! मेरा शरीर जराके आधीन जान कोप मत करो,
कृपा ही करो। ऐसे वचन खोजाके राजा दशरथ सुनकर वामा हाथ कपोलके लगाय चिंतावान होय
विचारता भया, अहो यह जलके बुदबुदा समान असार शरीर, क्षणभंगुर है, अर यह यौवन बहुत
विभ्रमकूं हू धरै संध्याके प्रकाश समान अनित्य है, अर अज्ञानका कारण है, बिजलीके चमत्कार समान
शरीर अर सम्पदा तिनके अर्थ अत्यन्त दुःखके साधन कर्म यह प्राणी करै है। उन्मत्त स्त्रीके कटाक्षसमान,
चंचल सर्पके फण समान, विषके भरे, महातापके समूहके कारण ये भोग ही जीवनकूं ठगैं हैं, तातैं महा
ठग हैं। ये विषय विनाशीक, इनसे प्राप्त हुआ जो दुख सो मूढनिकूं सुखरूप भासै है। ये मूढ जीव विषयनि-
की अभिलाषा करैं हैं अर इनकूं मनवांछित विषय दुष्प्राप्य हैं, विषयोंके सुख देखनेमात्र मनोज्ञ हैं।
अर इनके फल अति कटुक हैं। ये विषय इन्द्रायणके फल समान हैं, संसारी जीव इनकूं चाहै है सो बड़ा
आश्चर्य है। जो उत्तमजन विषयनिकूं विषतुल्य जानकर तजैं हैं अर तप करै हैं। ते धन्य हैं अनेक विवेकी
जीव पुण्याधिकारी महा उत्साहके धरणहारे जिनशासनके प्रसादकरि प्रबोधकूं प्राप्त भए हैं। मैं कब इन

विषयनिका त्यागकर स्नेहरूप कीचसे निकस निर्वृत्तिका कारण जिनेन्द्रका तप आचरूंगा । मैं पृथ्वी की बहुत सुखसे प्रतिपालना करी, अर भोग भी मनवांछित भोगे, अर पुत्र भी मेरे महापराक्रमी उपजे । अब भी मैं वैराग्य विषै विलम्ब करूं तो यह बड़ी विपरीत है । हमारे वंशकी यह रीति है कि पुत्रकूं राज्यलक्ष्मी देकर वैराग्यको धारण कर महाधीर तप करनेकूं वनमें प्रवेश करें । ऐसा चिंतवनकर राजा भोगनितें उदासचित्त कई एक दिन घरमें रहे । हे श्रेणिक ! जो वस्तु जा समय जा क्षेत्रमें जाकी जाको जेती प्राप्त होनी होय सो ता समय ता क्षेत्रमें तासे ताकूं तेती निश्चय सेती होय ही होय ।

गौतम स्वामी कहै हैं—हे मगध देशके भूपति ! कईएक दिनोंमें सर्व प्राणीनिके हित सर्वभूपति नामा मुनि बड़े आचार्य, मनःपर्य्ययज्ञानके धारक, पृथ्वीविषै विहार करते संघसहित सरयू नदीके तीर आए । कैसे हैं मुनि ? पिता समान छह कायके जीवनिके पालक, दयाविषै लगाई है मन वचन कायकी क्रिया, जिन आचार्यकी आज्ञा पाय कईएक मुनि तो गहन वनमें विराजे, कईएक पर्वतनिकी गुफानिमें, कई एक वनके चैत्यालयनिमें, कईएक वृक्षनिके कोटरनिमें, इत्यादि ध्यान योग्य स्थाननिमें साधु तिष्ठे । अर आप आचार्य महेन्द्रोदय नामा वनमें एक शिलापर जहाँ विकलत्रय जीवनिका संचार नाहीं, अर स्त्री नपुंसक बालक ग्राम्यजन पशुनिका संसर्ग नाहीं, ऐसा जो निर्दोष स्थानक तहां नागवृक्ष के नीचे निवास किया । महागम्भीर महाक्षमावान, जिनका दर्शन दुर्लभ, कर्म खिपावनके उद्यमी, महा उदार है मन तिनका, महामुनि तिनके स्वामी, वर्षाकाल पूर्ण करवेकूं समाधि योग धर तिष्ठे । कैसा है वर्षाकाल ? विदेश गमन किया तिनकूं भयानक है । वर्षती जो मेघमाला अर चमकती जो विजुरी अर गरजती कारीघटा तिनकी भयंकर जो ध्वनि, ताकरि मानों सूर्यको खिझावता संता पृथ्वीपर प्रकट भया है । सूर्य ग्रीष्म ऋतुविषै लोकनिकूं आतापकारी हुता सो अब स्थूल मेघकी धारा अंधकारतें भय थकी आज मेघमालामें छिप्या चाहै है । अर पृथ्वी तल हरे नाजके अंकुरनिरूप कंचुकिन

कर मंडित है। अर महानदियनिके प्रवाह वृद्धिकूं प्राप्त भए हैं ढाहा पहाडतैं बहै हैं। इस ऋतुमें जे गमन करे हैं ते अति कम्पायमान होय हैं अर तिनके चित्तमें अनेक प्रकार की भ्रांति उपजै है। ऐसी वर्षा ऋतुमें जैनी जन खड्गकी धार समान कठिन व्रत निरंतर धारैं हैं। चारण मुनि अर भूमिगोचरी मुनि चातुर्मासिकमें नानाप्रकारके नियम धरते भए। हे श्रेणिक! ते मुनि तेरी रक्षा करहु रागादिक परणतितैं तोहि निवृत्त करहु।

अथानन्तर प्रभात समय राजा दशरथ वादित्रनिके नादकरि जागृत भया, जैसे सूर्य उदयकूं प्राप्त होय। अर प्रातः समय कूकड़े बोलने लगे, सारिस चकवा, सरोवर तथा नदियनिके तटविषै शब्द करते भए। स्त्री पुरुष सेजनितैं उठे। भगवानके चैत्यालय तिनविषै भेरी मृदंग बीणा वादित्रनिके नाद होते भए। लोक निद्राकूं तज जिन पूजनादिक विषै प्रवरते। दीपक मंद ज्योति भए। चन्द्रमाकी प्रभा मंद भई। कमल फूले, कुमुद मुद्रित भए। अर जैसे जिन सिद्धांतके ज्ञातनिके वचननिकरि मिथ्यावादी विलय जांय तैसैं सूर्यकी किरणनिकरि ग्रह तारा नक्षत्र छिप गए। या भांति प्रभात समय अत्यन्त निर्मल प्रकट भया। तब राजा देहकृत्य क्रियाकर भगवानकी पूजाकर बारंबार नमस्कार करता भया। अर भद्र जातिकी हथिनीपर चढ़, देवनि सारिखे जे राजा तिनके समूहनिकर संयुक्त, ठौर २ मुनिनकूं अर जिनमन्दिरनिकूं नमस्कार करता महेन्द्रोदय वनमें पृथ्वीपति गया। जाकी विभूति पृथ्वीकूं आनंद उपजावनहारी, वर्षापर्यंत व्याख्यान करिए तो भी न कह सकिये। जो गुणरूप रत्ननिका सागर जा समय याको नगरीके समीप आवै ताही समय याकूं खबर होय। जो मुनि आए हैं तब ही यह दर्शनकूं जाय। सो सर्व भूत हित मुनिकूं आए सुन, तिनके निकट केतैं समीपी लोकनि सहित आया। हथिनीसूं उतर अति हर्षका भरचा नमस्कारकर महाभक्ति संयुक्त सिद्धांत सम्बन्धी कथा सुनता भया। चारों अनुयोगनिकी चर्चा धारी, अर अतीत अनागत वर्तमान कालके जे महापुरुष तिनके चरित्र सुने। लोकालोकका निरूपण, अर छह द्रव्यनिका स्वरूप, छह कायके जीवनिका वर्णन, छह

लेश्याका व्याख्यान, अर छहोंकालका कथन, अर कुलकरनिकी उत्पत्ति, अर अनेक प्रकार क्षत्रियादिकनिके वंश अर सप्त तत्त्व, नव पदार्थ, पंचास्तिकायका वर्णन आचार्यके मुखतैं श्रवणकर सब मुनियनिकू बारम्बार नमस्कारकर राजा धर्मके अनुरागकरि पूर्ण नगरमें आए। जिनधर्मके गुणनिकी कथा निकटवर्ती राजानितों अर मंत्रियनिसू कर अर सबनिकू विदाकर महलमें प्रवेश करता भया। विस्तीर्ण है विभव जाके। अर राणी लक्ष्मीतुल्य परमकांतिकर संपूर्ण चन्द्रमा समान सम्पूर्ण सुन्दर वदनकी धरणहारी, नेत्र अर मनकी हरणहारी, हाव भाव विलास विभ्रमकर मंडित, महा निपुण, परम विनयकी करणहारी, प्यारी तेई भई कमलनिकी पंक्ति, तिनकू राजा सूर्य समान प्रफुल्लित करता भया।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महा पद्मपुराण संस्कृतग्रन्थ, ताकीभाषा वचनिकाविषैं अष्टाह्निका आगम अर राजा दशरथ का धर्मश्रवण व.श. नाम वर्णन करने वाला उनतीसवां पर्व पूर्ण भया ॥ २९ ॥

अथानन्तर मेघके आडम्बरकर युक्त जो वर्षाकाल सो गया अर आकाश संभारे खड्गकी प्रभा समान निर्मल भया। पद्म महोत्पल पुण्डरीक इन्दीवरादि अनेक जातिके कमल प्रफुल्लित भए। कैसे हैं कमलादिक पुष्प? विषयी जीवनिकू उन्मादके कारण हैं। अर नदी सरोवरादिविषैं जल निर्मल भया जैसा मुनिका चित्त निर्मल होय तैसा। अर इन्द्रधनुष जाते रहे। पृथ्वी कर्दम रहित होय गई। शरदऋतु मानू कुमुदनिके प्रफूल्लित होनेसे हंसती हुई प्रकट भई। विजुरियोंके चमत्कारकी संभावना ही गई। सूर्य तुलाराशिपर आया। शरदके श्वेत बादरे कहूं कहूं दृष्टि आवें सो क्षणमात्रमें विलाय जांय। निशारूप नवोढ़ा स्त्री संध्याके प्रकाशरूप महा सुन्दर लाल अधरनिकू धरे, चांदनीरूप निर्मल वस्त्रनिकू पहिर, चन्द्रमारूप है चूडामणि जाके, सो अत्यन्त शोभती भई। अर वापिका निर्मल जल की भरी मनुष्यनिके मनकू प्रमोद उपजाती भई। चकवा चकवीके युगल करै हैं केलि जहां, अर मदोन्मत्त जे सारिस ते करै हैं नाद जहां, कमलनिके वनमें भ्रमते जो राजहंस अत्यन्त शोभाकू धरै

है, सो सीताकी है चिन्ता जाके ऐसा जो भामण्डल ताहि यह ऋतु सुहावनी न लगी, अग्नि समान भासै है अंगत जाकूं । एक दिन यह भामण्डल लज्जाकूं तजकर पिताके आगे बसंतध्वज नामा जो परम मित्र ताहि कहता भया। कैसा है भामंडल ? अरतिसे पीड़ित है अंग जाका, मित्रसूं कहै है—हे मित्र ! तू दीर्घशोची है, अर परकार्यविषै उद्यमी है । एते दिन होयगए तोहि मेरी चिंता नाहीं । व्याकुलता रूप भ्रमणकूं धरै जो आकाशरूप समुद्र ताविषै डूबा हूं, मोहि आलम्बन कहा न देवो ? ऐसे आर्ति-ध्यानकर युक्त भामंडलके वचन सुन राजसभाके सर्वलोक प्रभावरहित विषाद संयुक्त होयगए । तब तिन हूं महा शोककर तप्तायमान देख भामंडल लज्जासे अधोमुख होय गया । तब एक बृहत्केतु नामा विद्याधर कहता भया—अब कहा छिपाय राखो, कुमारसूं सर्व वृत्तांत यथार्थ कहो जाकरि भ्रांत न रहै। तब वे सर्व वृत्तांत भामंडलसूं कहते भए। हे कुमार ! हम कन्याके पिताकूं यहां ले आए हुते, कन्याकी बात याचना करी सो वाने कही मैं कन्या रामकूं देनी करी है । हमारै अर वाके वार्ता बहुत भई वह न मानै । तब बज्रावर्त धनुषका करार भया जो धनुष राम चढ़ावें तो कन्याकूं परणें, नातर हम यहां ले आवेंगे अर भामंडल विवाहेगा। सो धनुष लेकर यहांसे विद्याधर मिथिलापुरी गए। सो राम महा पुण्याधिकारी धनुष चढ़ाया ही । तब स्वयंबर मंडपमें जनककी पुत्री अति गुणवती, महा विवेकवंती, पतिके हृदयकी हरणहारी, ब्रत नियमकी धरनहारी, नवयौवन मंडित, दोषनिकरि अखं-डित, सर्व कलापूर्ण, शरदऋतुकी पूर्णमासीके चन्द्रमा समान मुखकी कांतिकूं धरै, लक्ष्मी सारिखे शुभलक्षण, लावण्यताकरि युक्त, सीता महासती श्रीरामके कंठमें वरमाला डार वल्लभा होती भई । हे कुमार ! वे धनुष वर्तमान कालके नाहीं, गदा अर हल आदि देवोपुनीत रत्ननिकर युक्त, अनेक देव जिनकी सेवा करैं हैं, कोई जिनकूं देख न सकै, सो बज्रावर्त सागरावर्त दोऊ धनुष राम लक्ष्मण दोऊ भाई चढ़ावते भए। वह त्रिलोकसुन्दरी रामने परणी । अयोध्या ले गए। सो अब वह बलात्कार देवनिकरि भी न हरी जाय, हमारी कहा बात ? अर कदाचित कहोगे रामको परणाये पहले ही क्यों

न हरी । जनकका मित्र रावणका जमाई मधु है सो हम कैसे हर सकें । तातें हे कुमार ! अब संतोष
आदरौ । निर्मलता भजहु । होनहार होय सो इन्द्रादिक भी और भांति न कर सकें । तब धनुष चढ़ा-
वनेका वृत्तांत अर रामसे सीताका विवाह होगया सुन भामंडल अति लज्जावान होय विषादकरि पूर्ण
भया । मनमें विचारै है जो मेरा यह विद्याधरका जन्म निरर्थक है जो मैं हीन पुरुषकी न्याई ताहि
न परण सक्या । ईर्षा अर क्रोधकर मंडित होय सभाके लोकनिकूं कहता भया, कहा तुम्हारा विद्या-
धरपना, तुम भूमिगोचरिनितेहूं डरो हो । मैं आप जायकर भूमिगोचरिनिकूं जीत ताकूं ले आऊंगा ।
अर जे धनुषके अधिष्ठाता उनकूं धनुष दे आये तिनका निग्रह करूंगा । ऐसा कहकर शस्त्र सजि
विमानविषै चढ़ आकाशके मार्ग गया । अनेक ग्राम नदी नगर वन उपवन सरोवर पर्वतादिक पूर्ण पृथ्वी
मंडल देख्या । तब याकी दृष्टि जो अपने पूर्व भवका स्थानक विदग्धपुर पहाड़निके बीच हुता यहां पड़ी ।
चित्तमें चितई कि यह नगर मैंने देख्या है । जातिस्मरण होय मूर्छा आय गई । तब मंत्री व्याकुल होय
पिताके निकट ले आए । चन्दनादि शीतल द्रव्यनिकरि छांटचा तब प्रबोधककूं प्राप्त भया । राजलोक
की स्त्री याहि कहती भई—हे कुमार ! तुमको यह उचित नाहीं जो माता पिताके निकट ऐसी लज्जारहित
चेष्टा करहु । तुम तो विचक्षण हो, विद्याधरनिकी कन्या देवांगनाहूतैं अतिसुन्दर हैं, ते परणो । लोक
हास कहा करावो हो ? तब भामंडल लज्जा अर शोक करि मुख नीचा किया । अर कहता भया-धिक्कार
है मोकूं, मैं महामोहकरि विरुद्धकार्य चित्या । जो चांडालादि अत्यन्त नीचकुल हैं तिनहूके यह कर्म न ३९०
होय । मैं अशुभ कर्मनिके उदयकरि अत्यन्त मलिन परणाम किए । मैं अर सीता एकही माताके उदरसे
उपजे हैं । अब मेरे अशुभकर्म गया तब जथार्थ जानी । सो याके ऐसे वचन सुनकर अर शोककर पीडित
देख याका पिता राजा चन्द्रगति गोदमें लेय मुख चूम पूछता भया—हे पुत्र ! यह तू कौन भांति कही ? तब
कुमार कहता भया—हे तात ! मेरा चरित्र सुनहु । पूर्वभवविषै मैं इस ही भरतक्षेत्रविषै विदग्धपुर नगर,
तहां कुण्डलमंडित राजा हुता । परमंडलका लूटनहारा, सदा विग्रहका करणहारा, पृथ्वीविषै प्रसिद्ध निज

प्रजाका पालक, महाविभवकर संयुक्त । सो मैं पापी मायाचारकर एक विप्रकी स्त्री हरी । सो वह विप्र तो अतिदुखी होय कहीं चला गया अर मैं राजा अरण्यके देशमें बाधा करी । सो अरण्यका सेनापति बालचन्द्र मोहि पकड़ लेगया अर मेरी सर्वसम्पदा हर लीनी । मैं शरीरमात्र रह गया । कईएक दिनमें बंदीगृहतें छूटचा सो महादुःखित पृथ्वीविषै भ्रमण करता मुनियोंके दर्शनकूं गया । महाव्रत अणुव्रत का व्याख्यान सुन्या । तीन लोकपूज्य जो सर्वज्ञ वीतरागदेव तिनका पवित्र जो मार्ग ताकी श्रद्धा करी । जगतके बांधव जो श्रीगुरु तिनकी आज्ञाकर मैंने मद्यमांसका त्यागरूप व्रत आदरचा । मेरी शक्ति हीन हुती तातैं ये विशेष व्रत न आदर सक्या । जिनशासनका अद्भुत माहात्म्य जो मैं महापापी हुता सो एते ही व्रतसे मैं दुर्गतिमें न गया । जिनधर्मके शरणकरि जनककी राणी विदेहाके गर्भमें उपज्या अर सीता भी उपजी । सो कन्या सहित मेरा जन्म भया । अर वह पूर्वभवका विरोधी विप्र जाकी मैं स्त्री हरी हुती सो देव भया । अर मोहि जन्मतें ही जैसैं गृद्ध पक्षी मांसकी डलीकूं ले जाय तैसैं नक्षत्रनितैं ऊपर आकाशविषै ले गया । सो पहिलें तो तानै विचार किया कि याकूं मारूं । बहुरि करुणाकरि कुण्डल पहराय लघुपरण विद्याकर मोहि यत्नसो डारचा सो रात्रिविषै पड़ता तुमने झेल्या । अर दयावान होय अपनी राणीकूं सौंप्या, सो मैं तिहारे प्रसादतैं वृद्धिकूं प्राप्त भया, अनेक विद्याका धारक भया । तुमने बहुत लडाया, अर माता मेरी बहुत प्रतिपालना करी । भामंडल ऐसे कहके चुप हो रह्या ।

राजा चन्द्रगति यह वृत्तांत सुनकर परम प्रबोधकूं प्राप्त भया अर इन्द्रियनिकी वासना तज महा वैराग्य अंगीकार करवेकूं उद्यमी भया । लोकधर्म कहिए स्त्रीसेवन सोई भया वृक्ष, ताहि सुखफलसूं रहित जान्या । अर संसारका बंधन जानकर अपना राज्य भामंडलकूं देय आप सर्व भूतहित स्वामीके समीप शीघ्र आया । वे सर्व भूतहित स्वामी पृथ्वीविषै सूर्यसमान प्रसिद्ध, गुणरूप किरणनिके समूह कर भव्य जीवनिकूं आनन्दके करनहारे, सो राजा चन्द्रगति विद्याधर महेन्द्रोदय उद्यानविषै आय मुनिकी अर्चना करी । बहुरि नमस्कार स्तुति कर सीस नवाय हाथ जोड़ या भांति कहता भया—हे भगवन् ! तिहारे

प्रसादकर मैं जिनदीक्षा लेय तप किया चाहूं हूं, मैं गृहवासतैं उदास भया। तब मुनि कहते भए—भव-सागरसूं पार करणहारी यह भगवती दीक्षा है सो लेउ। राजा तो वैराग्यकूं प्राप्त भया अर भामंडलके राज्यका उत्सव होता भया, ऊंचे स्वर नगारे बाजे, नारी गीत गावती भई, बांसुरी आदि वादित्रनिके समूह बाजते भए। ताल मंजीरा आदि बांसुरीके वादित्र बाजे, 'शोभायमान जनक राजा का पुत्र जयवंत होवे' ऐसा बंदीजननिका शब्द होता भया। सो महेन्द्रोदय उद्यानविषैं ऐसा मनोहर शब्द रात्रिविषैं भया जातैं अयोध्याके समस्त जन निद्रारहित होयगए। बहुरि प्रातः समय मुनिराजके मुखतैं महाश्रेष्ठ शब्द सुनकर जैनीजन अति हर्षकूं प्राप्त भए। अर सीता जनक राजाका पुत्र जयवंत होए, ऐसी ध्वनि सुनकर मानों अमृतसे सींची गई, रोमांचकर संयुक्त भया है सर्व अंग जाका, अर फरकै है बांई आंख जाकी, मनमें चितवती भई।

जो यह बारम्बार ऊंचा शब्द सुनिए कि जनक राजाका पुत्र जयवंत होऊ सो मेरा हू पिता जनक है। कनकका बड़ाभाई, अर मेरा भाई जन्मताही हरया गया था सो वही न होय। ऐसा विचारकर भाईके स्नेहरूप गया है मन जाका, सो ऊंचे स्वरकर रुदन करती भई। तब राम अभिराम कहिए सुन्दर है अंग जाका, महामधुर वचनकर कहते भये—हे प्रिये! तू काहेकूं रुदन करै है, जो यह तेरा भाई है तो अब खबर आवै है। अर जो और है तो हे पंडिते! तू कहा सोच करै है? जे विचक्षण हैं ते मुएका, हरेका, गएका, नष्ट हुएका, शोच न करै। हे वल्लभे! जे कायर हैं अर मूर्ख हैं उनके विषाद होय है। अर जो पंडित हैं, पराक्रमी हैं तिनके विषाद नाहीं होय है। या भांति रामके अर सीताके वचनालाप होवे है। ताही समय बधाईवारे मंगल शब्द करते आए। तब राजा दशरथने महाहर्षतैं बहुत आदरतैं नानाप्रकार के दान करै अर पुत्र कलत्रादि सर्व कुटुम्बसहित वनमें गया। सो नगरके बाहिर चारों तरफ विद्याधरनिकी सेना सैकड़ों सामंतनिसे पूर्ण देख आश्चर्यकूं प्राप्त भया। विद्याधरनिने इन्द्रके नगर तुल्य सेनाका स्थानक क्षणमात्रमें बनाय राखा है। जाके ऊंचा कोट, बड़ा दरवाजा, जे पताका तोरण

तिनतैं शोभायमान, रत्ननिकरि मंडित ऐसा निवास देख राजा दशरथ जहां वनमें साधु विराजे हुते तहां गया, नमस्कारकर स्तुतिकर राजा चन्द्रगतिका वैराग्य देख्या। विद्याधरनिसहित श्रीगुरुकी पूजा करी। राजा दशरथ सर्व बांधवसहित एक तरफ बैठ्या, अर भामंडल सर्व विद्याधरनिसहित एक तरफ बैठ्या। विद्याधर अर भूमिगोचरी मुनिके पास यति अर श्रावकका धर्म श्रवण करते भए। भामंडल पिताके वैराग्य होयवेकर कछुइक शोकवान बैठा। तब मुनि कहते भए जो यतिका धर्म है शूरवीरोंका है, जिनके गृहवास नाहीं, महा शांतदशा है, आनन्दका कारण है, महा दुर्लभ है, त्रैलोक्यमें सार है, कायर जीवनिकू भयानक भासै है। भव्यजीव मुनिपदकू पाय कर अविनाशीधामकूं पावै हैं। अथवा इन्द्र अहमिंद्र पद लहै है। लोकके शिखर जो सिद्ध स्थानक है, सो मुनिपद विना नाहीं पाइये है। कैसे हैं मुनि? सम्यग्दर्शनकरि मंडित हैं, जिनमार्गसे निर्वाणके सुखकू प्राप्त होय अर चतुर्गतिके दुखतैं छूटै सो ही मार्ग श्रेष्ठ है। सो सर्व भूतहित मुनिने मेघकी गर्जना समान है ध्वनि जिनकी, सर्व जीवनिके चित्तकू आनन्दकारी ऐसे वचन कहे। कैसा है मुनि? समस्त तत्त्वोंके ज्ञाता, सो मुनिके वचनरूप जल संदेहरूप तापकू हरता प्राणी जीवनिने कर्णरूप अंजुलीनिकरि पीये। कईएक मुनि भए, कईएक श्रावक भए, महा धर्मानुराग कर युक्त है चित्त जिनका। धर्मका व्याख्यान हो चुक्या तब दशरथ पूछता भया—हे नाथ! चन्द्रगति विद्याधरकू कौनकारण वैराग्य उपज्या। अर सीता अपने भाई भामंडलका चरित्र सुनवेको इच्छा करती भई। कैसी है सीता? महाविनयवंती है। तब मुनि कहते भए—हे दशरथ! तुम सुनहु। इन जीवनिकी अपने अपने उपार्जे कर्मनिकर विचित्रगति है। यह भामंडल पूर्व संसारमें अनन्त भ्रमणकर अति दुखित भया, कर्मरूपी पवनका प्रेर्या या भवमें आकाशसू पड़ता राजा चन्द्रगतिकू प्राप्त भया, सो चन्द्रगति अपनी स्त्री पुण्यवतीकू सौंप्या। सो नवयौवनमें सीताका चित्रपट देख मोहित भया। तब जनकक्‌ एक विद्याधर कृत्रिम अश्व होय लेगया, यह करार ठहरचा जो धनुष चढ़ावै सो कन्या परणै। बहुरि जनकक्‌ मिथिलापुरी लेय आए, अर धनुष श्रीरामने चढ़ाया अर सीता परणी। तब भामंडल विद्या-

धरनिके मुखसे यह वार्ता सुन क्रोधकर विमानमें बैठ आवै था सो मार्गमें पूर्वभवका नगर देख्या, तब
जातिस्मरण हुआ जो मैं कुण्डलमंडित नामा या विदग्धपुरका राजा अधर्मी हुता। पिंगल ब्राह्मणकी
स्त्री हरी। बहुरि मोहि अरण्यके सेनापतिने पकड्या, देशतैं काढ़ दिया, सर्वस्व लूट लिया। सो महा
पुरुषनिके आश्रय आय मधुमांसका त्याग किया, शुभपरिणामनितैं मरणकर जनककी राणी विदेहाके
गर्भतैं उपज्या। अर वह पिंगल ब्राह्मण जाकी स्त्री याने हरी सो वनसे काष्ठ लाय स्त्रीरहित शून्य-
कुटी देख अति विलाप करता भया कि हे कमलनयनी! तेरी राणी प्रभावती सारिखी माता, अर
चक्रध्वज सारिखे पिता तिनकूं, अर बड़ी विभूति अर बड़ा परिवार ताहि तज मोसूं प्रीतिकर विदेश
आई, रूखे आहार अर फाटे वस्त्र तैंनें मेरे अर्थसे आदरे। सुन्दर हैं सर्व अंग जाके, अब तू मोहि तज
कहां गई? या भांति वियोगरूप अग्नि कर दाधायमान वह पिंगल विप्र पृथ्वीविषै महा दुखसहित
भ्रमणकर मुनिराजके उपदेशतैं मुनि होय तप अंगीकार करता भया। तपके प्रभावतैं देव भया सो
मनमें चितवता भया कि वह मेरी कांता सम्यक्त्वरहित हुती सो तिर्यंचगतिकूं गई। अथवा मायाचार
रहित सरल परिणाम हुती सो मनुष्यणी भई, अथवा समाधिमरणकर जिनराजकूं उरमें धर देव-
गतिकूं प्राप्त भई। अर वह दुष्ट कुण्डलमंडित जाने आगैं मेरी स्त्री हरी हुती सो कहां? तब अवधि-
करि जनककी स्त्रीके गर्भमें आया जान जन्म होते ही बालककूं हरया, सो चंद्रगति झेल्या अर
राणी पुष्पवतीको सौंप्या। सो भामंडल जातिस्मरण होय सर्व वृत्तांत चन्द्रगतिकूं कहा। जो सीता
मेरी बहिन है अर राणी विदेहा मेरी माता है, अर पुष्पवती मेरी प्रतिपालक माता है। यह वार्ता
सुन विद्याधरनिकी सर्व सभा आश्चर्यकूं प्राप्त भई। अर चन्द्रगति भामंडलकूं राज्य देय संसार,
शरीर अर भोगनितैं उदास होय वैराग्य अंगीकार करना विचारया, अर भामंडलकूं कहता भया—
हे पुत्र! तेरे जन्मदाता माता पिता तेरे शोककरि महादुखी तिष्ठै हैं सो अपना दर्शन देय तिनके नेत्र-
निकूं आनन्द उपजाय। सो स्वामी सर्वभूतहित मुनिराज राजा दशरथसूं कहै हैं यह राजा चन्द्रगति

संसारका स्वरूप असार जान तुम्हारे निकट आय जिनदीक्षा धरता भया। जो जन्म्या है सो निश्चय से मरेहीगा, अर जो मूवा है सो अवश्य नया जन्म धरेगा। यह संसारकी अवस्था जान चन्द्रगति भवभ्रमणतैं डरया। ये मुनिके वचन सुनकर भामंडल पूछता भया—हे प्रभो! चन्द्रगतिका अर पुष्पवतीका मोपर अधिक स्नेह काहेतैं भया? तब मुनि बोले—ये पूर्वभवके तेरे माता पिता हैं सो सुन। एक दारुनामा ग्राम, वहां ब्राह्मण विमुचि, ताके स्त्री अनुकोशा, अर अतिभूत पुत्र, ताकी स्त्री सरसा। अर एक कयान नामा परदेशी ब्राह्मण सो अपनी माता ऊर्या सहित दारुग्राममें आया सो पापी अतिभूतकी स्त्री सरसाकू अर इनके घरके सारभूत धनकू ले भागा। सो अतिभूत महादुखी होय ताके ढू ढवेकू पृथ्वीपर भटक्या। अर याका पिता कईएक दिन पहिले दक्षिणाके अर्थ देशांतर गया हुता सो घर पुरुषनि बिना सूना होयगया। जो घरमें थोड़ा बहुत धन रहा था सो भी जाता रहा। अर अतिभूत की माता अनुकोशा सो दरिद्रकरि महादुखी। यह सब वृत्तांत विमुचिने सुना कि घरका धन हू गया अर पुत्रकी बहू हू गई, अर पुत्र ढू ढवेकू निकसा है सो न जानिये कौन तरफ गया। तब विमुचि घर आया अर अनुकोशाकू अति विह्वल देख धीर्य बंधाया, अर कयानकी माता ऊर्या सो हू महादुखी, पुत्र अन्याय कार्य किया ताकरि अति लज्जायमान सो कहके दिलासा करी जो तेरा अपराध नाहीं, अर आप विमुचि पुत्रके ढू ढवेकू गया। सो एक सर्वारिनाम नगर, ताके वनमें एक अवधिज्ञानी मुनि, सो लोकन के मुखतैं उनकी प्रशंसा सुनी—जो अवधिज्ञानरूप किरणोंकर जगतमें प्रकाश करै हैं। तब यह मुनिपै गया। धन अर पुत्रवधूके जानेसे महादुखी हुता ही सो मुनिराजकी तपोऋद्धि देखकर अर संसारकी
झूठी माया जान तीव्र वैराग्य पाय विमुचि ब्राह्मण मुनि भया। अर विमुचिकी स्त्री अनुकोशा अर कयानकी माता ऊर्या ये दोनों ब्राह्मणी कमलकांता आर्यिकाके निकट आर्यिकाके व्रत धारती भई। सो विमुचि मुनि अर ये दोनों आर्यिका तीनों जीव महानिस्पृह धर्मध्यानके प्रसादतैं स्वर्गलोक गए। कैसा है वह लोक? सदा प्रकाशरूप है। विमुचिका पुत्र अतिभूत हिंसामार्गका प्रशंसक, अर संयमी

अर यह कयान भी दुर्गति गया। अर वह
जीवोंका निन्दक। सो आर्त रौद्रध्यानके योगतैं दुर्गति गया। अर यह कयान भी दुर्गति गया। अर वह
सरसा अतिभूतकी स्त्री जो कयानकी लार निकसी हुती सो बलाहक पर्वतकी तलहटीमें मृगी भई,
सो व्याघ्रके भयतैं मृगोंके यूथसे अकेली होय दावानलमें जलमुई। सो जन्मांतरमें चित्तोत्सवा भई, अर
वह कयान भव भ्रमण कर ऊँट भया। धूमकेशका पुत्र पिंगल भया, अर वह अतिभूत सरसाका पति
भव भ्रमण करता राक्षस सरोवरके तीर हंस भया। सो सिचानूने इसका सर्व अंग घायल किया सो
पद्म चैत्यालयके समीप पड़ा तहां गुरु शिष्यको भगवानका स्तोत्र पढ़ावता भया सो याने सुना। हंसकी
पुराण पर्याय छोड़ दसहजार वर्षकी आयुका धारी नगोत्तम नामा पर्वतविषै किन्नर देव भया। तहांते चयकर
३९६ विदग्धपुरका राजा कुण्डलमंडित भया सो पिंगलके पाससे चित्तोत्सवा हरी, सो ताका सकल वृत्तांत
पूर्वे कहा ही है। अर वह विमुचि ब्राह्मण जो स्वर्लोकगू गया हुता सो राजा चन्द्रगति भया, अनु-
कोशा ब्राह्मणी पुष्पवती अर वह कयान कई भव लेय पिंगल होय मुनिव्रत धार देव भया सो वाने
भामंडलकू होतेही हरचा, अर वह ऊर्या ब्राह्मणी देवलोकतैं चयकर राणी विदेहा भई। यह सकल
वृत्तांत राजा दशरथ सुनकर भामंडलतैं मिल्या अर नेत्र अश्रुपाततैं भरलिये। अर सम्पूर्ण सभा यह
कथा सुनकर सजलनेत्र होय गई अर रोमांच होय आए। अर सीता अपने भाई भामंडलसूं देख
स्नेह कर मिली अर रुदन करती भई, हे भाई! मैं तोहि प्रथम ही देख्या, अर श्रीराम लक्ष्मण उठ
कर भामंडलतैं मिले। मुनिकूं नमस्कार कर खेचर भूचर सब ही वनसे नगरकूं गए। भामंडलकूं मंत्र ३९६
कर राजा दशरथने जनक राजाके पास विद्याधर पठाया अर जनककूं आवनेके अर्थ विमान भेजे।
राजा दशरथने भामंडलका बहुत सन्मान किया, अर भामंडलकूं अतिरमणीक महिल रहिबेकूं दीए,
जहां सुन्दर वापी सरोवर उपवन हैं। सो वहां भामंडल सुखसूं तिष्ठ्या। अर राजा दशरथने भामंडल
के आवनेका बहुत उत्सव किया, याचकनिकूं वांछासे भी अधिक दान दिया, सो दरिद्रतातैं रहित भए।
अर राजा जनकके निकट पवनहूते अति शीघ्र विद्याधर गए, जायकर पुत्रके आगमनकी बधाई दी,

अर दशरथका अर भामंडलका पत्र दिया। सो बांचकर जनक अति आनन्दकू प्राप्त भया, रोमांच होय आए। विद्याधरसू राजा पूछै है—हे भाई! यह स्वप्न है या प्रत्यक्ष है? तू आ हमसों मिल। ऐसा कहकर राजा मिले अर लोचन सजल होय आए। जैसा हर्ष पुत्रके मिलने का होय तैसा पत्र लाने वालेते मिलनेका हर्ष भया। सम्पूर्ण वस्त्र आभूषण ताहि दिए। सब कुटुम्बके लोग भेले होय उत्सव किया। अर बारम्बार पुत्रका वृत्तांत ताहि पूछै है अर सुन सुन तृप्त न होय। विद्याधर सकल वृत्तांत विस्तारसू कह्या। ताही समय राजा जनक सर्व कुटुम्बसहित विमानमें बैठ अयोध्या चाले। सो एक निमिषमें जाय पहुँचे। कैसी है अयोध्या? जहां वादित्रनिके नाद होय रहे हैं। जनक शीघ्र ही विमानतैं उतर पुत्रतैं मिल्या, सुखकर नेत्र मिल गए, क्षणएक मूर्छा आय गई। बहुरि सचेत होय अश्रुपातके भरे नेत्रनिसू पुत्रकू देखा अर हाथसे स्पर्शा। अर माता विदेहा हू पुत्रकू देख मूर्छित होय गई, बहुरि सचेत होय मिली, अर रुदन करती भई। जाके रुदनकू सुनकर तिर्यंचनिकू भी दया उपजै। हाय पुत्र! तू जन्मतैं ही उत्कृष्ट वैरी तें हरागया हुता। तेरे देखवेकू चितारूप अग्नि कर मेरा शरीर दग्ध भया हुता, सो तेरे दर्शनरूप जलकरि सींचा शीतल भया। अर धन्य है वह राणी पुष्पवती विद्याधरी जानैं तेरी बाललीला देखी, अर क्रीड़ा कर धूसरा तेरा अंग उरसे लगाया, अर मुख चूमा, अर नवयौवन अवस्थाविषैं चन्दन कर लिप्त सुगन्धनिकर युक्त तेरा शरीर देख्या। ऐसे शब्द माता विदेहाने कहे, अर नेत्रनितैं अश्रुपात भरै, स्तननितैं दुग्ध भरा, अर विदेहाकू परम आनन्द उपज्या। जैसे जिन शासनकी सेवक देवी आनन्दसहित तिष्ठै तैसें पुत्रकू देख सुखसागरमें तिष्ठी। एकमास पर्यंत यह सब अयोध्यामें रहे। फिर भामंडल श्रीरामसूं कहते भए—हे देव! या जानकीके तिहारो ही शरण है, धन्य है भाग्य जाके जो तुम सारिखे पति पाए। ऐसे कह बहिनकू छातीसे लगाया। अर माता विदेहा सीताकू उरसे लगाय कर कहती भई—हे पुत्री! सासू ससुरकी अधिक सेवा करियो, अर ऐसा करियो जो सर्व कुटुम्बमें तेरी प्रशंसा होय। सो भामंडलने सबकू बुलाया, जनकका छोटा भाई जो कनक

उसे मिथिलापुरीका राज्य सौंपकर जनक अर विदेहाकूं अपने स्थानक लेगया। यह कथा गौतम स्वामी राजा श्रेणिकतैं कहै हैं कि–हे मगधदेशके अधिपति ! तू धर्मका माहात्म्य देख जो धर्मके प्रसादतैं श्रीरामदेवके सीता सारिखी स्त्री भई, गुणरूपकर पूर्ण जाका भामंडलसा भाई विद्याधरनिका इन्द्र, अर देवाधिष्ठित वे धनुष सो रामने चढ़ाए, अर जिनके लक्ष्मणसा भाई सेवक। यह श्रीरामका चरित्र भामंडलके मिलापका वर्णन जो निर्मलचित्त होय सुनै ताहि मनवांछित फलकी सिद्धि होय अर निरोग शरीर होय, सूर्य समान प्रभाकूं पावै।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रंथ, ताकी भाषावचनिकाविषै भामण्डलका मिलाप कथन वर्णन करनेवाला तीसवां पर्व पूर्ण भया ॥ ३० ॥

अथानन्तर राजा श्रेणिक गौतमस्वामीसूं पूछते भए–हे प्रभो ! वे राजा दशरथ, जगतके हितकारी, राजा अरण्यके पुत्र बहुरि कहा करते भए ? अर श्रीराम लक्ष्मणका सकल वृत्तांत मैं सुना चाहूं हूं सो कृपा करके कहो। तुम्हारा यश तीन लोकमें विस्तार रहा है। तब मुनियोंके स्वामी महातप तेजके धारनहारे गौतम गणधर कहते भए जैसा यथार्थ कथन श्री सर्वज्ञदेव वीतरागने भाख्या है तैसा–हे भव्योत्तम ! तू सुन।

जब राजा दशरथ बहुरि मुनियोंके दर्शनोंकूं गए तो सर्वभूतहित स्वामीकूं नमस्कारकर पूछते भए–हे स्वामी ! मैं संसारमें अनन्त जन्म धरे सो कई भवकी वार्ता तिहारे प्रसादसे सुनकर संसारकूं तजा चाहूं हूं। तब साधु दशरथकूं भव सुननेका अभिलाषी जानकर कहते भए–हे राजन् ! सब संसारके जीव अनादिकालसे कर्मोंके सम्बन्धसे अनंत जन्म मरण करते दुःख ही भोगते आए हैं। इस जगतमें जीवनिके कर्मोंकी स्थिति उत्कृष्ट मध्यम जघन्य तीन प्रकारकी है। अर मोक्ष सर्वमें उत्तम है जाहि पंचमगति कहै हैं। सो अनंत जीवनिमें कोई एकके होय है, सबनिको नाहीं। यह पंचमगति

कल्याणरूपिणी है तहाँ ते बहुरि आवागमन नाहीं। वह अनन्त सुखका स्थानक शुद्ध सिद्ध पद, इंद्रिय-विषयरूप रोगनिकरि पीडित मोहकर अन्ध प्राणी ना पावै। जे तत्त्वार्थश्रद्धानकर रहित वैराग्यतैं बहिर्मुख हैं, अर हिंसादिकमें है प्रवृत्ति जिनकी तिनकूं निरंतर चतुर्गतिका भ्रमण ही है। अभव्यों को तो सर्वथा मुक्ति नाहीं, निरंतर भव भ्रमण ही है। अर भव्यनिकै कोई एकको निवृत्ति है। जहां तक जीव पुद्गल धर्म अधर्म काल है सो लोकाकाश है, अर जहां अकेला आकाश ही है सो अलोकाकाश है। लोकके शिखर सिद्ध विराजे हैं। या लोकाकाशमें चेतना लक्षण जीव अनन्त हैं जिनका विनाश नाहीं। संसारी जीव निरंतर पृथ्वीकाय, जलकाय, अग्निकाय, वायुकाय, वनस्पतिकाय, त्रस-काय ये छै काय तिनमें देह धार भ्रमण करै है। यह त्रैलोक्य अनादि अनंत है, यामें स्थावर जंगम जीव अपने अपने कर्मनिके समूहकरि बंधे नाना योनिविषैं भ्रमण करै हैं। अर जिनराजके धर्मकर अनंत सिद्ध भए अर अनंत सिद्ध होयंगे, अर होय हैं। जिनमारग टारकर और मार्ग मोक्ष नाहीं। अर अनंतकाल व्यतीत भया, अनंत काल व्यतीत होयगा, कालका अंत नाहीं। जो जीव संदेहरूप कलंक कर कलंकी हैं। अर पापकर पूर्ण हैं, अर धर्मनिकूं नाहीं जानै तिनकै जैनका श्रद्धान कहांतैं होय? अर जिनके श्रद्धान नाहीं, सम्यक्तरहित हैं तिनके धर्म कहांतैं होय? अर धर्मरूप वृक्ष बिना मोक्षफल कैसैं पावै? अज्ञान अनंत दुःखका कारण है। जे मिथ्यादृष्टि अधर्मविषैं अनुरागी हैं, अर अति उग्र-पाप कर्मरूप कंचुकी (चोला) कर मंडित हैं, रागादि विषके भरे हैं, तिनका कल्याण कैसैं होय, दुख ही भोगवै है। एक हस्तिनापुरविषैं उपास्तनामा पुरुष, ताकी दीपनी नामा स्त्री, सो मिथ्याभिमान कर पूर्ण, जाके कछु नियम व्रत नाहीं, श्रद्धानरहित महाक्रोधवंती, अदेखसकी, कषायरूप विषकी धारणहारी, महादुर्भाव, निरन्तर साधुनिकी निंदा करणहारी, कुशब्द बोलनहारी, महा कृपण, कुटिल, आप काहूकूं अन्न न देय, अर जो कोई दान करै ताकूं मनै करै, धनकी धिरानी अर धर्म न जानै, इत्यादिक महादोषकी भरी मिथ्यामार्गकी सेवक सो पापकर्मके प्रभावकर भवसागरविषैं अनंतकाल

भ्रमण करती भई । अर उपास्ति दानके अनुरागकर जंद्रधुर नगरविषैं भद्रनामा मनुष्य, ताके धारिणी स्त्री, ताके धारण नामा पुत्र भया । भाग्यवान, बहुत कुटुम्बी, ताके नयनसुन्दरी नामा स्त्री, सो धारण शुद्ध भावतैं मुनिनिको आहारदान देय, अंतकाल शरीर तजकर धातुकीखंड द्वीपविषै उत्तरकुरु भोग-भूमिमें तीन पल्य सुख भोग, देवपर्याय पाय, तहांतैं चयकर पृथुलावती नगरीविषै राजा नंदिघोष, राणी वसुधा ताके नंदिवर्धन नामा पुत्र भया । एक दिन राजा नंदिघोष यशोधर नामा मुनिके निकट धर्म श्रवणकर नंदिवर्धनकूं राज्य देय आप मुनि भया । महातपकर स्वर्गलोक गया । अर नंदिवर्धन श्रावक के व्रत धारे, पंच णमोकारके स्मरणविषैं तत्पर, कोटिपूर्व पर्यंत महाराजपदके सुख भोगकर अंतकाल समाधि मरणकर पंचमें देवलोक गया । तहांतैं चयकर पश्चिम विदेहविषै विजयार्ध पर्वत तहां शशि-पुर नामा नगर, तहां राजा रत्नमाली, ताके राणी विद्युल्लता, ताके सूर्यजय नामा पुत्र भया । एक दिन रत्नमाली महा बलवान सिंहपुरका राजा वज्रलोचन तासूं युद्ध करवेकूं गया । अनेक दिव्य रथ हाथी, घोड़े, पियादे, महापराक्रमी सामंत लार, नानाप्रकार शस्त्रनिके धारक, राजा होठ डसता धनुष चढ़ाय, वस्त्र पहिरे रथविषैं आरूढ़, भयानक आकृतिकूं धरैं, आग्नेय विद्याधर, शत्रुके स्थानककूं दग्ध करवेकी इच्छा जाके, ता समय एक देव तत्काल आयकर कहता भया–हे रत्नमाली ! तैं यह कहा आरंभ्या ? अब तू क्रोध तज, मैं तेरा पूर्व भवका वृत्तांत कहूं हूं । सो सुन भरतक्षेत्रविषैं गांधारी नगरी तहां राजा भूति, ताकैं पुरोहित उपमन्यु सो राजा अर पुरोहित दोनों पापी मांसभक्षी । एकदिन राजा केवलगर्भस्वामीके मुखतैं व्याख्यान सुन यह व्रत लिया, जो मैं पापका आचरण न करूं । सो व्रत उप-मन्यु पुरोहितने छुडाय दिया । एक समय राजापर परशत्रुओंकी धाड आई । सो राजा अर पुरोहित दोनों मारे गए । पुरोहितका जीव हाथी भया सो हाथी युद्धमें घायल होय अंतकाल नमोकार मंत्रका श्रवणकर तहां गांधारी नगरीविषैं राजा भूतिकी राणी योजनगंधा, ताकै अरिसूदन नामा पुत्र भया । सीतानै केवलगर्भ मुनिका दर्शनकर पूर्व जन्म स्मरण किया, तब महा वैराग्य उपजा ।

सो मुनिपद आदरा, समाधिमरण कर ग्यारहवें स्वर्गविषै देव भया। सो मैं उपमन्यु पुरोहितका जीव अर तू राजा भूति मरकर मंदारण्यविषै मृग भया। दावानलमें जर मूवा, मरकर कालिजनामा नीच पुरुष भया सो महापापकर दूजे नरक गया। सो मैं स्नेहके योगकर नरकविषै तुझे संबोधा। आयु पूर्णकर नरकसे निकस रत्नमाली विद्याधर भया, सो तू वे अब नरकके दुख भूल गया। यह वार्ता सुन रत्नमाली सूर्यजय पुत्रसहित परम वैराग्यकूं प्राप्त भया। दुर्गतिके दुखसे डरचा, तिलकसुन्दर स्वामी का शरण लेय पिता पुत्र दोनों मुनि भए। सूर्यजय तपकर दशमें देवलोक देव भया। तहांतैं चयकर राजा अरण्यका पुत्र दशरथ भया। सो सर्व भूतहित मुनि कहै है—अल्पमात्र भी सुकृतकर उपास्तिका जीव कईएक भव विषै बडके बीजकी न्याईं वृद्धिकूं प्राप्त भया। तू राजा दशरथ उपास्तिका जीव है अर नंदिवर्धनके भवविषै तेरा पिता राजा नंदिघोष मुनि होय ग्रैवेयक गया, सो तहांतैं चयकर मैं सर्व-भूतहित भया। अर जो राजा भूतिका जीव रत्नमाली भया हुता। तू राजा दशरथ उपास्तिका अर उपमन्यु पुरोहितका जीव जाने रत्नमालीको संबोधा हुता सो जनकका भाई कनक भया। या संसारविषै न कोई अपना है, न कोई पर है, शुभाशुभ कर्मोंकर यह जीव जन्म मरण करै है। यह पूर्व भवका वर्णन सुन राजा दशरथ निःसंदेह होय संयमको सम्मुख भया। गुरुके चरणनिकों नमस्कारकर नगरमें प्रवेश किया। निर्मल है अंतःकरण जिनका, मनमें विचारता भया कि यह महा मंडलेश्वर पदका राज्य महा सुबुद्धि जे राम तिनको देकर मैं मुनिव्रत अंगीकार करूं। राम धर्मात्मा हैं, अर महा धीर हैं, धैर्यको धरे हैं। यह समुद्रांत पृथ्वीका राज्य पालवे समर्थ हैं। अर भाई भी इनके आज्ञाकारी हैं, ऐसा राजा दशरथने चिंतवन किया। कैसे हैं राजा ? मोहतैं पराङ्मुख अर मुक्तिके उद्यमी। ता समय शरद ऋतु पूर्ण भई, अर हिमऋतुका आगमन भया। कैसी है शरदऋतु ? कमल ही हैं नेत्र जाके, अर चन्द्रमाकी चांदनी सोही हैं उज्ज्वल वस्त्र जाके, सो मानों हिमऋतुके भयकर भागगई।

अथानन्तर हिमऋतु प्रकट भई, शीत पड़ने लगा, वृक्ष दहे, अर ठंडी पवनकर लोक व्याकुल भए।

जा ऋतुविषै धनरहित प्राणी जीर्ण कुटिमें दुखसे काल व्यतीत करै हैं। कैसे हैं दरिद्री ? फट गए हैं अधर अर चरण जिनके, अर बाजै हैं दांत जिनके, अर रूखे हैं केश जिनके, अर निरंतर अग्निका है सेवन जाके, अर कभी भी उदरभर भोजन न मिले, कठोर है चर्म जिनका। अर घरमें कुभार्याके वचन रूप शस्त्रनिकर विदारा गया है चित्त जिनका। अर काष्ठादिकके भार लायवेको कांधे कुठारादिक को धरे वन वन भटके हैं, अर शाक बोरफलि आदि ऐसे आहारकर पेट भरै हैं। अर जे पुण्यके उदय-करि राजादिक धनाढ्य पुरुष भए हैं ते बड़े महलोंमें तिष्ठै हैं, अर शीतके निवारणहारे, अगरके धूप की सुगन्धिताकरयुक्त सुन्दर वस्त्र पहरे हैं। अर सुवर्ण अर रूपादिकके पात्रोंमें षट्रससंयुक्त सुगंधित स्निग्ध भोजन करै हैं। केसर अर सुगंधादिकर लिप्त हैं अंग जाके, अर जिनके निकट धूपदानमें धूप खेईये है। अर परिपूर्ण धनकर चिंतारहित हैं, झरोखोंमें बैठे लोकनिको देखैं हैं। अर जिनके समीप गीत नृत्यादिक विनोद होयवो करै हैं। रत्नोंके आभूषण अर सुगन्ध मालादिककर मंडित सुन्दर कथा में उद्यमी हैं। अर जिनके विनयवान अनेक कलाकी जाननहारी महारूपवान पतिव्रता स्त्री हैं। पुण्य के उदयकरि ये संसारी जीव देवगति मनुष्यगतिके सुख भोगैं हैं, अर पापके उदयकरि नरक तिर्यंच तथा मनुष होय दुख दरिद्र भोगवे हैं। सब लोक अपने अपने उपार्जित कर्मके फल भोगवे हैं। ऐसे मुनि के वचन दशरथ पहिले सुने हुते सो संसारतैं विरक्त भया। द्वारपालकूं कहता भया, कैसा है द्वारपाल? भूमिविषैं थाप्या है मस्तक अर जोड़े हैं हाथ जाने। नृपति ताकों आज्ञा करी।

हे भद्रे! सामंत मंत्री पुरोहित सेनापति आदि सबको ल्यावो। तब वह द्वारपाल द्वारेपर आय दूजे मनुष्यको द्वारपर मेलि तिनकी आज्ञा प्रमाण बुलावनकों गया। तब वे आयकर राजाकूं प्रणामकरि यथायोग्य स्थानकविषै तिष्ठे, विनती करते भए—हे नाथ! आज्ञा करहु, क्या कार्य है? तब राजा कही—मैं संसारका त्यागकर निश्चय सेती संयम धारूंगा। तब मंत्री कहते भए—हे प्रभो! तुमको कौन कारण वैराग्य उपज्या? तब नृपति कही जो प्रत्यक्ष यह समस्त जगत सूके तृणकी न्याई मृत्यु-

रूप अग्निकर जरै है, अर जो अभव्यनिकू अलभ्य अर भव्यनिकू लेने योग्य ऐसा सम्यक्तसहित संयम सो भव तापका हरणहारा, अर शिवसुखका देनहारा है, सुर असुर नर विद्याधरनिकरि पूज्य प्रशंसा योग्य है। मैं आज मुनिके मुखसे जिनशासनका व्याख्यान सुन्या। कैसा है जिनशासन? सकलपापोंका वर्जन हारा है। तीनलोकविषै प्रकट महा सूक्ष्म है चर्चा जाविषै, अति निर्मल उपमारहित है। सर्व वस्तुनिमें सम्यक्तपरम वस्तु है ता सम्यक्तका मूल जिनशासन है, श्रीगुरुओंके चरणारविंदके प्रसाद कर मैं निवृत्तिमार्गमें प्रवृत्या, मेरी भवभ्रांतिरूप नदीकी कथा आज मैं मुनिके मुखसे सुनी अर मोहि जातिस्मरण भया। सो मेरे अंग देखो त्रास कर कांपे हैं। कैसी है मेरी भवभ्रांति नदी? नानाप्रकारके जे जन्म वे ही हैं भ्रमर जामैं, अर मोहरूप कीच करि मलिन, कुतर्करूप ग्राहनिकरि पूर्ण, महादुःखरूप लहर उठै हैं निरन्तर जामैं, मिथ्यारूप जलकर भरी, मृत्यु रूप मगरमच्छनिका है भय जाविषै, रुदनके महाशब्दकू धरै, अधर्म प्रवाह कर बहती, अज्ञानरूप पर्वततैं निकसी, संसाररूप समुद्रमें है प्रवेश जाका। सो अब मैं इस भवनद्वीपकू उलंघकर शिवपुरी जायवेका उद्यमी भया हूं। तुम मोहके प्रेरे कछु वृथा मत कहो, संसार समुद्र तर निर्वाण द्वीप जाते अंतराय मत करहु। जैसैं सूर्यके उदय होते अंधकार न रहै तैसैं सम्यग्ज्ञानके होते संशय तिमिर कहां रहै? तातैं मेरे पुत्रकू राज्य देहु, अब ही पुत्रका अभिषेक करावहु, मैं तपोवनमें प्रवेश करू हूं। ए वचन सुन मंत्री सामंत राजाकू वैराग्यका निश्चय जान परमशोककू प्राप्त भए। नीचे होय गए हैं मस्तक जिनके, अर अश्रुपात कर भर गए हैं नेत्र जिनके, अंगुरी कर भूमिकू कुचरते क्षणमात्रमें प्रभावरहित होय गए, मौनसे तिष्ठे। अर
सकलही रणवास प्राणनाथका निर्ग्रंथ व्रतका निश्चय सुनि शोककू प्राप्त भया। अनेक विनोद करते हुते सो तजकर आंसुओंसे लोचन भर लिए, अर महारुदन किया। भरत पिताका वैराग्य सुन आप भी प्रतिबोधकू प्राप्त भाए। चित्तमें चितवते भए अहो यह स्नेहका बंध छेदना कठिन है। हमारा पिता ज्ञानकू प्राप्त भया। जिनदीक्षा लेवेकू इच्छै है, अब इनके राज्यकी चिंता कहां, मोहि तो न

किसीको कुछ पूछना न कछु करना, तपोवनमें प्रवेश करूंगा, संयम धारूंगा। कैसा है संयम ? संसार के दुःखनिका क्षय करणहारा है, अर मेरे या देह करहू कहा ? कैसा है यह देह व्याधिका घर है, अर विनश्वर है, सो यदि देहीसे मेरा संबंध नाहीं तो बांधवनिसों कहा संबंध ? यह सब अपने कर्म फल के भोक्ता हैं। यह प्राणी मोहकर अंधा है, दुःखरूप वनविषै अकेला ही भटकै है। कैसा है दुःखरूप वन ? अनेक भवभयरूप वृक्षनितैं भरचा है।

अथानन्तर केकई सकल कलाकी जाननहारी भरतकी यह चेष्टा जान अति शोककूं धरती भई। मनमें चिंतवै है—भरतार अर पुत्र दोनों ही वैराग्य धारचा चाहै हैं, कौन उपाय करि इनका निवारण करूं। या भांति चिंता कर व्याकुल भया है मन जाका, तब राजाने जो वर दिया हुता सो याद आया। अर शीघ्र ही पतिपै जाय आधे सिंहासनपर बैठी, अर विनती करती भई—हे नाथ ! सर्व ही स्त्रीनिके निकट तुम मोहि कृपाकर कही हुती जो तू मांग सो मैं देऊं, सो अब देवो। तुम सत्यवादी हो, अर दान करि निर्मलकीर्ति तिहारी जगतविषै विस्तार रही है। तब दशरथ कहते भए—हे प्रिये ! जो तेरी वांछा होय सो ही लेहु। तब राणी केकई आंसू डारती संती कहती भई—हे नाथ ! हमपै ऐसी कहा चूक भई जो तुम कठोर चित्त किया ? हमकूं तजा चाहो हो, हमारा जीव तो तिहारे आधीन है। अर यह जिनदीक्षा अत्यन्त दुर्धर सो लेयनेको तुम्हारी बुद्धि काहेकू प्रवृत्ति है ? यह इन्द्र धनुष समान जे भोग तिनकर लडाया जो तिहारा शरीर सो कैसे मुनिपद धारोगे ? कैसा है मुनिपद ? अत्यन्त विषम है। या भांति जब राणी केकईने कह्या तब आप कहते भए—हे कांते ! समर्थनिकूं कहा विषम ? मैं तो निसंदेह मुनिव्रत धारूंगा, तेरी अभिलाषा होय सो मांग लेहु। राणी चिंतावान होय नीचा मुखकर कहती भई हे नाथ ! मेरे पुत्रकू राज्य देहु। तब दशरथ बोले यामें कहा संदेह ? तैं धरोहरि मेली हुती सो अब लेहु। तैं जो कहा जो हम प्रमाण किया। अब शोक तज, तैं मोहि ऋणसहित किया। तब राम लक्ष्मणकूं बुलाय दशरथ कहते भए। कैसे हैं दोऊ भाई ? महा विनयवान हैं, पिताके आज्ञाकारी हैं।

राजा कहे है–हे वत्स ! यह केकई अनेक कलाकी पारगामिनी, याने पूर्व महा घोर संग्रामविषै मेरा सारथीपना किया, यह अति चतुर है । मेरी जीत भई तातैं मैं तुष्टायमान होय याहि वर दीया जो तेरी वांछा हो सो मांग । तब याने वचन मेरे धरोहरि मेला । अब यह कहै है मेरे पुत्रकू राज्य देवो । सो जो याके पुत्रकू राज्य न देऊं तो याका पुत्र भरत संसारका त्याग करै, अर यह पुत्रके शोककरि प्राण तजै । अर मेरी वचन चूकवेकी अकीर्ति जगतमें विस्तरै । अर यह काम मर्यादातैं विपरीत है जो बड़े पुत्रकू छोड़कर छोटे पुत्रकू राज्य देना ! अर भरतकू सकल पृथ्वीका राज्य दीए तुम लक्ष्मण सहित कहां जावो ? तुम दोऊ भाई परमक्षत्रीय तेजके धरनहारे हो, तातैं हे वत्स ! मैं कहा करू ? दोऊ ही कठिन बात आय बनी हैं । मैं अत्यन्त दुःखरूप चिंताके सागरमें पड्या हूं । तब श्रीरामचन्द्र महा विनयकू धरते संते कहते भए, पिताके चरणारविंदकी ओर हैं नेत्र जिनके अर महा सज्जनभावकू धरैं है, हे तात ! तुम अपना वचन पालहु, हमारी चिंता तजहु । जो तिहारे वचन चूकनेकी अपकीर्ति होय अर हमारे इन्द्रकी सम्पदा आवे तो कौन अर्थ ? जो सुपुत्र है सो ऐसा ही कार्य करै जाकर माता पिताकू रंचमात्र भी शोक न उपजै । पुत्रका यही पुत्रपना पंडित कहै हैं–जो पिताकू पवित्र करै, अर कष्टतैं रक्षा करै । पवित्र करणा यह कहावे जो उनकू जिनधर्मके सन्मुख करै । दशरथके अर राम लक्ष्मणके यह बात होय है ताही समय भरत महिलतैं उतरया, मनमें विचारी मैं कर्मनिकू हनू, मुनिव्रत धरू, सो लोकनिके मुखतैं हाहाकार शब्द भया । तब पिताने विह्वल चित्त होय भरतकू वन जायवेतैं राख्या, गोदमें ले बैठे, छातीसूं लगाय लिया, मुख चूमा अर कहते भए–हे पुत्र ! तू प्रजाका पालनकर, मैं तप के अर्थि वनमें जाऊं हूं । भरत बोलै–मैं राज्य न करू, जिनदीक्षा धरूगा । तब राजा कहते भए–हे वत्स ! कईएक दिन राज्य करहु । तिहारी नवीन वय है, वृद्ध अवस्थामें तप करियो । भरत कही–हे तात ! जो मृत्यु है सो बाल वृद्ध तरुणकू नाहीं देखै है, सर्वभक्षी है । तुम मोहि वृथा काहेकू मोह उपजावो हो ? तब राजा कही–हे पुत्र ! गृहस्थाश्रमविषै भी धर्मका संग्रह होय है । कुमानुषनितैं नाहीं

बनै है। तब भरत कही–हे नाथ! इन्द्रियनिके वशतैं काम क्रोधादिक भरे गृहस्थनिकूं मुक्ति कहां?
तब भूपतिने कही–हे भरत! मुनिनहूमें सब ही तद्भव मुक्ति नाहीं होय है, कई एक होय हैं। तातैं
तू कई दिन गृहस्थधर्म आराधि। तब भरत कही–हे देव! आप जो कहो सो सत्य है, परन्तु गृहस्थ-
निका तो यह नियम ही है जो मुक्ति न होय। अर मुनिनिमैं कोई होय, कोई न होय। गृहस्थधर्मतैं
परम्पराय मुक्ति होय है, साक्षात् नाहीं। तातैं हीनशक्ति वारेनिका काम है। मोहि यह बात न रुचै,
मैं महाव्रत धरणेका ही अभिलाषी हूं। गरुड़ कहा पतंगनिकी रीति आचरै? कुमानुष कामरूप
अग्निकी ज्वालाकरि परम दाहकूं प्राप्त भए संते स्पर्शनइन्द्रिय अर जिह्वा इन्द्रियकरि अधर्मकार्यकूं
करै हैं, तिनकूं निवृत्ति कहां? पापी जीव धर्मतैं विमुख, विषयभोगनिकूं सेयकरि निश्चयसेती महा
दुःखदाता जो दुर्गति ताहि प्राप्त होय हैं। ये भोग दुर्गतिके उपजावनहारे, अर राखे न रहैं, क्षणभंगुर
हैं, तातैं त्याज्य ही हैं। ज्यों ज्यों कामरूप अग्निमें भोगरूप ईंधन डारिए त्यों त्यों अत्यन्त तापकी करण
हारी कामाग्नि प्रज्वलित होय है। तातैं हे तात! तुम मोहि आज्ञा देवो जो बनमें जाय विधिपूर्वक तप
करूं। जिनभाषित तप परम निर्जराका कारण है। या संसारतैं मैं अतिभयकूं प्राप्त भया हूं। अर
हे प्रभो! जो घर ही विषैं कल्याण होय तो तुम काहेको घर तजि मुनि हुआ चाहो हो? तुम मेरे
तात हो। सो तातका यही धर्म है–संसार समुद्रतैं तारै, तपकी अनुमोदना करै, यह बात विचक्षण
पुरुष कहै हैं। शरीर स्त्री धन माता पिता भाई सकलकूं तजि यह जीव अकेला ही परलोककूं जाय
है। चिरकाल देवलोकके सुख भोगे हैं, तौ हू यह तृप्त न भया। सो कैसे मनुष्यनिके भोगनिकरि तृप्त
होय? पिता भरतके ये वचन सुनकर बहुत प्रसन्न भया, हर्षथकी रोमांच होय आए। अर कहता भया–
हे पुत्र! तू धन्य है, भव्यनिविषैं मुख्य है, जिनशासनका रहस्य जानि प्रतिबोधकूं प्राप्त भया है। तू
जो कहै है सो प्रमाण है, तथापि हे धीर! तैं अबतक कबहूं मेरी आज्ञा भंग न करी, तू विनयवान
पुरुषोमें प्रधान है, मेरी वार्ता सुनि। तेरी माता केकईने युद्धविषैं मेरा सारथीपना किया। वह युद्ध अति

विषम हुता, जामें जीवनेकी आशा नाहीं । सो याके सारथीपनेकरि युद्धविषै विजय पाई । तब मैं तुष्टायमान होय याकूं कहा—जो तेरी बांछा है सो मांग । तब याने कही यह वचन भंडार रहैं, जादिन मोहि इच्छा होयगी तादिन मांग लूंगी । सो आज याने यह मांगी कि मेरे पुत्रकूं राज्य देहु सो मैं प्रमाण किया । अब हे गुणनिधे ! तू इन्द्रके राज्य समान यह राज्य निकंटक करि । मेरी प्रतिज्ञा भंगकी अकीर्ति जगतविषै न होय, अर यह तेरी माता तेरे शोककरि तप्तायमान होय मरणकों न पावै । कैसी है यह ? निरन्तर सुखकर लडाया है शरीर जानै । अपत्य कहिए पुत्र, ताका यही पुत्रपना है कि माता पिताकूं शोकसमुद्रमें न डारे ! यह बात बुद्धिमान कहै हैं । या भांति राजा कही ।

अथानन्तर श्रीराम भरतका हाथ पकड़ महामधुर वचनकरि प्रेमकी भरी दृष्टिकरि देखते संते कहते भए, हे भ्रात ! तातने जैसे वचन तोहि कहे ऐसे और कौन कहने समर्थ ? जो समुद्रसे रत्नोंकी उत्पत्ति होय सो सरोवरसे कहां ? अबार तेरी वय तपके योग्य नाहीं, कईएक दिन राज्य कर जासैं पिताकी कीर्ति वचनके पालिवेकी चन्द्रमा समान निर्मल होय । अर तो सारिखे पुत्रके होते संते माता शोककर तप्तायमान मरणकूं प्राप्त होय यह योग्य नाहीं । अर मैं पर्वत अथवा वनविषै ऐसी जगह निवास करूंगा जो कोई न जानै । तू निश्चिन्त राज्य करि । मैं सकल राजऋद्धि तज देशतैं दूर रहूंगा । अर पृथ्वीको पीड़ा काहू प्रकार न होयगी । तातैं अब तू दीर्घ सांस मत डारै, कईएक दिन पिताकी आज्ञा मान राज्य करि न्याय सहित पृथ्वीकी रक्षाकरि । हे निर्मल स्वभाव ! यह इक्ष्वाकुवंशनिका कुल, ताहि तू अत्यन्त शोभायमान करि, जैसैं चन्द्रमा ग्रह नक्षत्रादिकको शोभायमान करै है । भाईका यही भाईपना पंडितनिने कहा है कि भाइनिकी रक्षा करै, संताप हरै । श्रीरामचन्द्र ऐसे वचन कहिकर पिताके चरणनिकों भावसहित प्रणाम कर चल पड़े । तब पिताकूं मूर्छा आय गई, काष्ठके स्तम्भ समान शरीर होय गया । राम तर्कश बांध धनुष हाथमें लेय माताकूं नमस्कार कर कहते भए—हे माता ! हम अन्य देशकूं जांय हैं, तुम चिंता न करनी । तब माताको भी मूर्छा आय

गई, बहुरि सचेत होय आंसू डारती संती कहती भई, हाय पुत्र ! तुम मोहि शोकके समुद्रमें डार कहां जावो हो ? तुम उत्तम चेष्टाके धरणहारे हो, माताका पुत्र ही अवलंबन है, जैसें शाखाके मूल आधार है। माता रुदनकरि विलाप करती भई। तब श्रीराम माताकी भक्तिविषै तत्पर ताहि प्रणामकर कहते भए—हे माता ! तुम विषाद मत करहु। मैं दक्षिणदिशाविषै कोई स्थानक कर तुमकूं निसंदेह बुलाऊंगा। हमारे पिताने माता केकईकूं वर दिया हुता सो भरतकूं राज्य दिया। अब मैं यहां रहूं नाहीं, विंध्याचलके वनविषै अथवा मलयाचलके वनविषै तथा समुद्रके समीप स्थानक करि तुमकूं निसंदेह बुलाऊंगा। मैं सूर्य समान यहां रहूं तो भरत चन्द्रमाकी आज्ञा ऐश्वर्यरूप कांति न विस्तरै। तब माता नम्रीभूत जो पुत्र ताहि उरसूं लगाय रुदन करती संती कहती भई—हे पुत्र ! मोकूं तिहारे लार ही चलना उचित है, तुमकूं देखे बिना मैं प्राणनिकूं राखिवे समर्थ नाहीं। जे कुलवंती स्त्री हैं तिनके पिता अथवा पति तथा पुत्र ये ही आश्रय हैं। सो पिता तो कालवश भया, अर पति जिनदीक्षा लेयबेकूं उद्यमी भया है। अब तो पुत्रहीका अवलंबन है। सो तुमहू छांड चाले तो मेरी कहा गति भई ? तब राम बोले हे—माता ! मार्गमें पाषाण, अर कंटक बहुत हैं, तुम कैसें पायन चलोगी ? तातैं कोऊ सुखका स्थानककरि असवारी भेज तुमकूं बुलाऊंगा। मोहि तिहारे चरणनिकी सौगन्ध है, तिहारे लेनेकूं मैं आऊंगा, तुम चिंता मत करहु। ऐसे कह माताकूं शांतता उपजाय सीख दीनी। बहुरि पितापैं गए। पिता मूर्छित होय गये हुते सो सचेत भए। पिताकूं प्रणामकर और मातानिपैं गए। सुमित्रा, केकई, सुप्रभा, कौशिल्या सबनिकूं प्रणाम कर सीख करी। कैसे हैं राम ? न्यायविषै प्रवीण, निराकुल है चित्त जिनका, तथा भाई बंधु मंत्री अनेक राजा उमराव परिवारके लोक सबनिकूं शुभ वचन कह विदा भए। सबनिको बहुत दिलासाकर छातीसूं लगाए, आंसू पूंछे। उनने घनी ही विनती करी जो यहां ही रहो, सो न मानी। सामंत तथा हाथी, घोड़े, रथ सबको ओर कृपादृष्टिकर देख्या। बहुरि बड़े बड़े सामंत हाथी, घोड़े भेंट लाए सो रामने न राखे। सीता अपने पतिकूं विदेश गमनकूं उद्यमी

देख ससुर अर सासूकूं प्रणामकर नाथके संग चाली। जैसें शची इन्द्रके साथ चालैं अर लक्ष्मण स्नेह कर पूर्ण रामकूं विदेशगमनकूं उद्यमी देख चित्तमें क्रोधकर चितवता भया। जो हमारे पिताने स्त्री के कहेतैं यह कहा अन्याय कार्य विचारचा, जो रामको टार औरको राज्य दिया। धिक्कार है स्त्री-निकूं जो अनुचित काम करती शंका न करैं, स्वार्थविषै आसक्त है चित्त जिनका। अर यह बड़ा भाई महानुभाव पुरुषोत्तम है सो ऐसे परिणाम मुनिनके होय हैं। अर मैं ऐसा समर्थ हूं जो समस्त दुरा-चारिनिका पराभवकर भरतकूं राज्यलक्ष्मीतैं रहित करूं, अर राज्यलक्ष्मी श्रीरामके चरणनिमें लाऊं। परन्तु यह बात उचित नाहीं, क्रोध महा दुखदाई है, जीवनिकूं अंध करै है। पिता तो जिनदीक्षाकूं उद्यमी भया अर मैं क्रोध उपजाऊं, सो योग्य नाहीं। अर मोहि ऐसे विचारकर कहा? योग्य अर अयोग्य पिता जानैं अथवा बड़ा भाई जानैं। जामैं पिताकी कीर्ति उज्ज्वल होय सो कर्तव्य है। मोहि काहूसूं कछु न कहना, मैं मौन पकड़ बड़े भाईके संग जाऊंगा। कैसा है यह भाई? साधु समान हैं भाव जाके। ऐसा विचारकर कोप तज धनुषबाण लेय समस्त गुरुजननिकूं प्रणामकर महाविनय संपन्न रामके लार चाल्या। दोऊ भाई जैसें देवालयतैं देव निसरैं तैसें राजमंदिरतैं नीसरे। अर माता पिता सकल परि-वार अर भरत शत्रुघ्नसहित इनके वियोगतैं अश्रुपातकरि मानों वर्षाऋतु करते संते राखवेकूं चाले। सो राम लक्ष्मण अति पिताभक्त, अर संबोधवेकूं महापंडित, विदेश जायवेहीका है निश्चय जिनके, सो माता पिताकी बहुत स्तुतिकर बारम्बार नमस्कारकर बहुत धीर्य बंधाय पीठ पीछे फेरे, सो नगर में हाहाकार भया। लोक वार्ता करैं हैं। हे मात! यह कहा भया, यह कौनने मता उपजाया? या नगरीहीका अभाग्य है अथवा सकल पृथ्वीका अभाग्य है। हे मात! हम तो अब यहां न रहेंगे, इनके लार चालेंगे। ये महा समर्थ हैं। अर देखो यह सीता नाथके संग चाली है। अर रामकी सेवा करण-हारा लक्ष्मण भाई है। धन्य है यह जानकी विनयरूप वस्त्र पहिरे भरतारके संग जाय है। नगरकी नारी कहै हैं हम सबनिकूं शिक्षा देनहारी यह सीता महापतिव्रता है। या समान और नारी नाहीं,

जो महापतिव्रता होय सो याकी उपमा पावैं। पतिव्रतानिकैं भरतार ही देव हैं। अर देखो यह लक्ष्मण
माताकूं रोवती छोड़ बड़े भाईके संग जाय है। धन्य याकी भक्ति, धन्य याकी प्रीति, धन्य याकी
शक्ति, धन्य याकी क्षमा, धन्य याकी विनयकी अधिकता। या समान और नाहीं। अर दशरथ भरतकूं
यह कहा आज्ञा करी जो तू राज्य लेहु ? अर राम लक्ष्मणकूं यह कहा बुद्धि उपजी जो अयोध्याकूं
छांड चाले। जा कालमें जो होनी होय सो होय है, जाके जैसा कर्म उदय होय तैसो ही होय, जो भग-
वानके ज्ञानमें भासा है सो होय। देवगति दुर्निवार है। यह बात बहुत अनुचित होय है। यहांके देवता
कहां गए। ऐसे लोगनिके मुखध्वनि होती भई। सब लोक इनके लार चालवेकूं उद्यमी भए। घरनितैं
निकसे नगरीका उत्साह जाता रह्या, शोककर पूर्ण जो लोक तिनके अश्रुपातनिकरि पृथ्वी सजल
होय गई। जैसैं समुद्रकी लहर उठै है तैसैं लोक उठे। रामके संग चाले, मनैं किए हू लोक न रहे।
रामकूं भक्तिकर लोक पूजैं, संभाषण करैं सो राम पैंड पैंडमें विघ्न मानैं। इनका भाव चलवेका,
लोक राख्या चाहै है, कईएक लार चलैं। रामका विदेश गमन मानों सूर्य देख न सक्या सो अस्त
होने लग्या। अस्त समय सूर्यके प्रकाशने सर्व दिशा तजी, जैसैं भरत चक्रवर्ती मुक्तिके निमित्त
राज्यसम्पदा तजी हुती। सूर्यके अस्त होते परम रागको धरती संती संध्या सूर्यके पीछे ही चाली,
तैसैं सीता रामके पीछे चाली। अर समस्त विज्ञानका विध्वंस करणहारा अंधकार जगतमें व्याप्त
भया, मानों रामके गमनकरि तिमिर विस्तरया। लोग लार लागे सो रहैं नाहीं। तब राम लोकनिके ४१०
टारिवेकूं श्रीअरनाथ तीर्थंकरके चैत्यालयविषै निवास करना विचारया। संसारके तारणहारे भग-
वान तिनका भवन सदा शोभायमान, महासुगंध अष्ट मंगल द्रव्यनिकर मंडित, जाके तीन दरवाजे,
ऊंचा तोरण। सो राम लक्ष्मण सीता प्रदक्षिणा देय चैत्यालय मांहि पैठे, समस्त विधिके वेत्ता। दोय
दरवाजे तक तो लोक चले गए, तीसरे दरवाजे पर द्वारपालने लोकनिकूं रोक्या जैसैं मोहिनीकर्म मिथ्या-
दृष्टिनिकूं शिवपुर जायवेतैं रोकै। राम लक्ष्मण धनुष बाण अर बखतर बाहिर मेल भीतर दर्शनकूं

गए, कमल समान हैं नेत्र जिनके। श्रीअरनाथका प्रतिबिंब रत्ननिके सिंहासनपर विराजमान, महाशोभायमान, महासौम्य, कायोत्सर्ग, श्रीवत्सलक्षणकर देदीप्यमान है उरस्थल जिनका, प्रकट हैं समस्त लक्षण जिनके, सम्पूर्ण चन्द्रमा समान वदन, फूले कमलसे नेत्र, कथनविषै अर चिंतवनविषै न आवै ऐसा है रूप जिनका, तिनका दर्शनकर भावसहित नमस्कारकर ये दोऊ भाई परम हर्षकूं प्राप्त भए। कैसे हैं दोऊ? बुद्धि पराक्रमरूप लज्जाके भरे जिनेन्द्रकी भक्तिविषै तत्पर। रात्रिकूं चैत्यालयके समीप रहे, तहां इनकूं बसे जान माता कौशल्यादिक पुत्रनिविषै है वात्सल्य जिनका आयकर आंसू डारती बारम्बार उरसूं लगावती भई। पुत्रनिके दर्शनविषै अतृप्त विकल्परूप हिंडोलविषै झूलै है चित्त जिनका। गौतम स्वामी राजा श्रेणिकतैं कहै हैं—

हे श्रेणिक! सर्व शुद्धतामें मनकी शुद्धता महा प्रशंसा योग्य है। स्त्री पुत्रकूं भी उरसे लगावै अर पतिकूं भी उरसे लगावै, परन्तु परिणामनिका अभिप्राय जुदा जुदा है। दशरथकी चारों ही राणी गुणरूप लावण्यताकर पूर्ण, महामिष्टवादिनी, पुत्रनिसूं मिल पतिपै गई, जायकर कहती भई। कैसा है पति? सुमेरुसमान निश्चल है भाव जाका। राणी कहै हैं—हे देव! कुलरूप जहाज शोकरूप समुद्रविषै डूबै है सो थांभो। राम लक्ष्मणकूं पीछा ल्यावौ, तब राजा कहते भए यह जगत विकाररूप मेरे आधीन नाहीं। मेरी इच्छा तो यह ही है कि सर्व जीवनिकूं सुख होय, काहूकूं दुख न होय, जन्म जरा मरणरूप पारधीनकरि कोई जीव पीड्या न जाय। परन्तु ये जीव नानाप्रकारके कर्मनिकी स्थितिकूं धरै हैं, तातैं कौन विवेकी वृथा शोक करै। बांधवादिक इष्टपदार्थनिके दर्शनविषै प्राणिनिकूं तृप्ति नाहीं, तथा धन अर जीतव्य इनकरि तृप्ति नाहीं। इन्द्रियनिके सुख पूर्ण न होय सकै अर आयु पूर्ण होय तब जीव देहकूं तज और जन्म धरै, जैसैं पक्षी वृक्षकूं तज चला जाय है। तुम पुत्रनिकी माता हो, पुत्रनिकूं ले आवो, पुत्रनिके राज्यका उदय देख विश्रामकूं भजो। मैंने तो राज्यका अधिकार तज्या। पापक्रियातैं निवृत्त भया, भवभ्रमणतैं भयकूं प्राप्त भया। अब मैं मुनिव्रत धारूंगा या भांति राजा राणीनिसों कही।

निर्मोहताके निश्चयकूं प्राप्त भया, सकल विषयाभिलाषरूप रोगनिसैं रहित, सूर्य समान है तेज जाका सो पृथ्वीमैं तप संयमका उद्योत करता भया।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रंथ, ताकी भाषावचनिकाविषैं दशरथका वैराग्य वर्णन करनेवाला इकतीसवाँ पर्व पूर्ण भया ॥ ३० ॥

अथानन्तर राम लक्ष्मण क्षणएक निद्रा कर अर्धरात्रिके समय जब मनुष्य सोय रहे, लोकनिका शब्द मिट गया, अर अंधकार फैलगया ता समय भगवानकूं नमस्कारकर बखतर पहिर, धनुष बाण लेय, सीताकूं बीचमें लेकर चाले। घर घर दीपकनिका उद्योत होय रहा है, कामीजन अनेक चेष्टा करैं हैं। ये दोऊ भाई महाप्रवीण नगरके द्वारकी खिडकीकी ओरसे निकसे, दक्षिण दिशाका पंथ लिया। रात्रिके अंतमें दौड़कर सामंत लोक आय मिले, राघवके संग चलनेकी है अभिलाषा जिनके। दूरतें राम लक्ष्मणकूं देख महा विनयके भरे असवारी छोड प्यादे आए, चरणारविंदको नमस्कारकरि निकट आय बचनालाप करते भए। बहुत सेना आई। अर जानकीकी बहुत प्रशंसा करते भए जो याके प्रसादतैं हम राम लक्ष्मणको आय मिले, यह न होती तो ये धीरे धीरे न चलते तो हम कैसैं पहुंचते। ये दोऊ भाई पवन समान शीघ्रगामी हैं अर यह सीता महासती हमारी माता है। या समान प्रशंसा योग्य पृथ्वीविषैं और नाहीं। ये दोऊ भाई नरोत्तम सीताकी चाल प्रमाण मंद मंद दो कोस चाले। खेतनिविषैं नानाप्रकारके अन्न हरे होय रहे हैं, अर सरोवरनिमें कमल फूल रहे हैं, अर वृक्ष महारमणीक दीखै हैं। अनेक ग्राम नगरादिमें ठौर ठौर लोक पूजैं हैं, भोजनादि सामग्रीकरि, अर बड़े बड़े राजा बड़ी फौजसे आय मिले, जैसैं वर्षाकालमें गंगा जमुनाके प्रवाहविषैं अनेक नदियनिके प्रवाह आय मिलैं। कईएक सामंत मार्गके खेदकरि इनका निश्चय जान आज्ञा पाय पीछे गए, अर कईएक लज्जाकर, कईएक भयकर, कईएक भक्ति कर लार प्यादे चले जाय हैं। सो राम लक्ष्मण क्रीडा करते

परियात्रा नामा अटवीविषै पहुँचे । कैसी है अटवी ? नाहर अर हाथीनिके समूहकरि भरी, महा भयानक, वृक्षनिकर रात्रिसमान अंधकारकी भरी, जाके मध्य नदी है, ताके तट आए जहां भीलनिका निवास है, नानाप्रकारके मिष्टफल हैं । आप तहां तिष्ठकर, कईएक राजनिकों विदा किया । अर कई एक पीछे न फिरे, रामने बहुत कहा तो भी संग ही चाले, सो सकल नदीको महा भयानक देखते भए। कैसी है नदी ? पर्वतनिसों निकसती महानील है जल जाका, प्रचण्ड हैं लहर जामें, महा शब्दायमान अनेक जे ग्राह मगर तिनकर भरी, दोऊ ढांहां विदारती, कल्लोलनिके भयकर उड़े हैं तीरके पक्षी जहां, ऐसी नदी को देखकर सकल सामंत त्रासकर कम्पायमान होय राम लक्ष्मणकूं कहते भए–हे नाथ ! कृपाकर हमें भी पार उतारहु, हम सेवक भक्तिवंत हमसे प्रसन्न होवो । हे माता जानकी ! लक्ष्मणसे कहो जो हमकूं पार उतारैं । या भांति आसूं डारते, अनेक नरपति नाना चेष्टाके करणहारे नदीविषै पड़ने लगे । तब राम बोले अहो ! अब तुम पाछे फिरो । यह वन महा भयानक है । हमारा तुमारा यहां लग ही संग हुता । पिताने भरतकूं सबका स्वामी किया है सो तुम भक्तिकर तिनकूं सेवहु । तब वे कहते भए–हे नाथ ! हमारे स्वामी तुमही हो, महादयावान हो, हमपर प्रसन्न होवो, हमको मत छोड़हु । तुम बिना यह प्रजा निराश्रय भई, आकुलतारूप कहो कौनकी शरण जाय ? तुमसमान और कौन है ? व्याघ्र, सिंह अर गजेन्द्र, सर्पादिकका भरा भयानक जो यह वन तामें तुम्हारे संग रहेंगे । तुम बिना हमारे स्वर्गहु सुखकारी नाहीं । तुम कही पाछे जावो सो चित्त फिरै नाहीं, कैसे जाहिं ? यह चित्त सबइन्द्रियनिका अधिपति याहीतें कहिए है जो अद्भुत वस्तुमें अनुराग करै । हमारे भोगनिकर घरकर तथा स्त्री कुटुम्बादिकर कहा ? तुम नररत्न हो, तुमको छांड कहां जाहिं ? हे प्रभो ! तुमने बालक्रीडाविषै भी हमसों कबहूं वंचना न करी, अब अत्यन्त निठुरताकूं धारी हो । हमारा अपराध कहा ? तिहारे चरणरजकर परमवृद्धिकूं प्राप्त भए, तुम तो भृत्यवत्सल हो । अहो माता जानकी ! अहो लक्ष्मण धीर ! हम सीस निवाय हाथ जोड़ विनती करै हैं, नाथकूं हमपर प्रसन्न करहु । ये वचन

सबने कहे। तब सीता अर लक्ष्मण रामके चरणनिकी ओर निरख रहे। राम बोले अब तुम पाछे जाहु। यही उत्तर है। सुखसों रहियो। ऐसा कहकर दोनों धीर नदीके विषै प्रवेश करते भए। श्रीराम सीताका कर गह सुखसे नदीमें लेगए जैसें कमलीनिकों दिग्गज लेजाय। वह असराल नदी राम लक्ष्मण के प्रभावकर नाभि प्रमाण बहने लगी। दोऊ भाई जलविहारविषैं प्रवीण क्रीडा करते चले गए। सीता रामके हाथ गहे ऐसी शोभै मानों साक्षात् लक्ष्मी ही कमलदलमें तिष्ठी है।

राम लक्ष्मण क्षणमात्रविषै नदीपार भए, वृक्षनिके आश्रय आय गए। तब लोकनिकी दृष्टितैं अगोचर भए, तब कईएक तो विलाप करते आंसू डारते घरनिकूं गए, अर कईएक राम लक्ष्मणकी ओर धरी है दृष्टि जिनने सो काष्ठसे होय रहे। अर कईएक मूर्छा खाय धरतीपर पड़े। अर कईएक ज्ञानको प्राप्त होय जिनदीक्षाको उद्यमी भए, परस्पर कहते भए जो धिक्कार है या असार संसारको, अर धिक्कार इन क्षणभंगुर भोगनिको, ये काले नागके फण समान भयानक हैं। ऐसे शूरवीरनिकी यह अवस्था, तो हमारी कहा बात ? या शरीरको धिक्कार, जो पानीके बुदबुदा समान निस्सार, जरा मरण इष्टवियोग अनिष्टसंयोग इत्यादि कष्टका भाजन। धन्य हैं वे महापुरुष, भाग्यवंत, उत्तम चेष्टाके धारक, जे मरकट (बंदर) की भौंह समान लक्ष्मीको चंचल जान तजिकर दीक्षा धरते भए। या भांति अनेक राजा विरक्त दीक्षाको सन्मुख भए। तिनने एक पहाड़की तलहटीमें सुन्दर वन देख्या। अनेक वृक्ष-निकर मंडित, महासघन, नानाप्रकारके पुष्पनिकर शोभित, जहाँ सुगन्धके लोलुपी भ्रमर गुंजार करै हैं। तहां महापवित्र स्थानकमें तिष्ठते ध्यानाध्ययनविषैं लीन महातपके धारक साधु देखे। तिनको नमस्कारकर वे राजा जिननाथका जो चैत्यालय तहां गए। ता समय पहाड़निकी तलहटी तथा पहाड़-निके शिखरविषैं, अथवा रमणीक वननिविषैं, अथवा नदीनिके तटविषै, नगर ग्रामादिकविषै जिन-मंदिर हुते तहां नमस्कारकरि एक समुद्र समान गम्भीर मुनिनके गुरु सत्यकेतु आचार्य तिनके निकट गए। नमस्कारकर महाशांतरसके भरे आचार्यसे वीनती करते भए—हे नाथ ! हमको संसार समुद्रतैं

पार उतारहु। तब मुनि कही तुमको भवपार उतारनहारी भगवती दीक्षा है सो अंगीकार करहु। यह मुनिकी आज्ञा पाय ये परम हर्षकूं प्राप्त भए। राजा विदग्धविजय मेरुक्रूर संग्रामलोलुप श्रीनागदमन धीर शत्रुदमन अर विनोद कंटक सत्यकठोर प्रियवर्धन इत्यादि निर्ग्रंथ होते भए। तिनका गज तुरंग रथादि सकल साज सेवक लोकनिनैं जायकरि उनके पुत्रादिकनिकूं सौंप्या। तब वे बहुत चिंतावान भए। बहुरि समझकर नानाप्रकारके नियम धारते भए। कईएक सम्यग्दर्शनकूं अंगीकारकर संतोषकूं प्राप्त भये, कईएक निर्मल जिनेश्वरदेवका धर्म श्रवणकरि पापतैं पराङ्मुख भए। बहुत सामंत राम लक्ष्मणकी वार्ता सुन साधु भए। कईएक श्रावकके अणुव्रत धारते भए। बहुत राणी आर्यिका भईं, कईएक सुभट रामका सर्व वृत्तांत भरत दशरथपर जाकर कहते भए सो सुनकर दशरथ अर भरत कछु एक खेदकूं प्राप्त भए।

अथानन्तर राजा दशरथ भरतको राज्याभिषेक कर, कछुयक जो रामके वियोग कर व्याकुल भया हुता हृदय, सो समतामें लाय, विलाप करता जो अंतःपुर ताहि प्रतिबोधि, नगरतैं वनकूं गए। सर्वकूं भूतहित स्वामीको प्रणामकरि बहुत नृपनिसहित जिनदीक्षा आदरी। एकाकी विहारी जिनकल्पी भए। परम शुक्लध्यानकी है अभिलाषा जिनके तथापि पुत्रके शोककर कबहुंक कछुएक कलुषता उपज आवै सो एक दिन ये विचक्षण विचारते भए कि संसारके दुखका मूल यह जगतका स्नेह है। इसे धिक्कार हो, या करि कर्म बंधे हैं। मैं अनंत जन्म धरे, तिनविषै गर्भ जन्म बहुत धरे, सो मेरे गर्भ जन्म के अनेक माता पिता भाई पुत्र कहां गये? अनेक बार मैं देवलोकके भोग भोगे, अर अनेक बार नरकके दुख भोगे, तिर्यंचगतिविषै मेरा शरीर अनेक बार इन जीवनिने भख्या, इनका मैं भख्या, नानारूप जे योनियें तिनविषै मैं बहुत दुख भोगे, अर बहुत वार रुदन किया, अर रुदनके शब्द सुने, अर बहुत बार वीणाबांसुरी आदि वादित्रोंके नाद सुने, गीत सुने, नृत्य देखे, देवलोकविषै मनोहर अप्सरानिके भोग भोगे, अनेक बार मेरा शरीर नरकविषै कुल्हाडनि कर काटा गया, अर अनेक वार मनुष्यगतिविषै

महा सुगन्ध महावीर्यका करणहारा षट्रस संयुक्त अन्न आहार किया, अर अनेकबार नरकविषै गला सीसा अर तांबा नारकियोंने मार मार मुझे प्याया, अर अनेकवार सुर नर गतिविषै मनके हरणहारे सुन्दररूप देखे अर सुन्दररूप धारे, अर अनेकवार नरकविषै महाकुरूप धारे, अर नानाप्रकारके त्रास देखे, कईएक वार राजपद देवपदविषै नानाप्रकारके सुगन्ध सूंघे तिनपर भ्रमर गुंजार करैं, अर कई एक वार नरककी महादुर्गंध सूंघी, अर अनेक वार मनुष्य तथा देवगतिविषै महालीलाकी धरणहारी वस्त्राभरण मंडित, मनकी चोरणहारी जे नारी तिनसों आलिंगन किया, अर बहुत वार नरकनि विषै कूटशाल्मलि वृक्ष तिनक तीक्ष्ण कंटक अर प्रज्वलिती लोहकी पुतलीनिसे स्पर्श किया। या संसार-विषै कर्मनिके संयोगतैं मैं कहा कहा न देखा, कहा कहा न सूंघा, कहा कहा न सुना, कहा कहा न भखा? अर पृथ्वीकाय, जलकाय, अग्निकाय, वायुकाय, वनस्पतिकाय, त्रसकायविषै ऐसा देह नाहीं जो मैं न धारा, तीनलोकविषै ऐसा जीव नाहीं जासूं मेरे अनेक नाते न भए। ये पुत्र मेरे कईवार पिता भए, माता भए, शत्रु भये, मित्र भये, ऐसा स्थानक नाहीं जहां मैं न उपजा न मुआ। ये देह भोगादिक अनित्य, या जगतविषै कोई शरण नाहीं, यह चतुर्गतिरूप संसार दुखका निवास है, मैं सदा अकेला हूं। ये षट्द्रव्य परस्पर सबही भिन्न हैं यह काय अशुचि, मैं पवित्र। ये मिथ्यात्वादि अव्रता-दिकर्म आस्रवके कारण हैं। सम्यक्त व्रत संयमादि संवरके कारण हैं। तपकर निर्जरा होय है। यह लोक नानारूप, मेरे स्वरूपतैं भिन्न। या जगतविषै आत्मज्ञान दुर्लभ है। अर वस्तुका जो स्वभाव सोई धर्म तथा जीवदया धर्म सो मैं महाभाग्यतैं पाया। धन्य ये मुनि जिनके उपदेशतैं मोक्षमार्ग पाया। सो अब पुत्रनिकी कहा चिंता? ऐसा विचारकर दशरथ मुनि निर्मोहदशाकूं प्राप्त भए। जिन देशोंमें पहिले हाथी चढ़े चमर ढुरते छत्र फिरते हुते अर महारण संग्रामविषै उद्धत वैरिनिकूं जीते तिन देशनिविषै निर्ग्रंथ दशा धरे, बाईस परीषह जीतते, शांतिभाव संयुक्त विहार करते भए।

अर कौशल्या तथा सुमित्रा पतिके वैरागी भए अर पुत्रनिके विदेश गए महाशोकवंती भई, निर-

तर अश्रुपात डारें। तिनके दुःखकूं देख, भरत राज्य विभूतिको विषसमान मानता भया। अर केकई तिनकूं दुखी देख उपजी है करुणा जाके पुत्रको कहती भई—हे पुत्र! तू राज्य पाया, बड़े बड़े राजा सेवा करें हैं परन्तु राम लक्ष्मण विना यह राज्य शोभै नाहीं। सो वे दोऊ भाई महाविनयवान उन विना कहा राज्य? अर कहा सुख, अर कहा देशकी शोभा, अर कहा तेरी धर्मज्ञता? वे दोऊ कुमार अर वह सीता राजपुत्री सदा सुखके भोगनहारे, पाषाणादिककर पूरित जे मार्ग ताविषै वाहन विना कैसें जावेंगे? अर तिन गुणसमुद्रनिकी ये दोनों माता निरंतर रुदन करै हैं सो मरणकूं प्राप्त होयंगी। तातैं तुम शीघ्रगामी तुरंगपर चढ़ सिताबी जावो, उनको ले आवो, तिनसहित महासुखसों चिरकाल राज करियो। अर मैं भी तेरे पीछे ही उनके पास आऊं हूं। यह माताकी आज्ञा सुन बहुत प्रसन्न होय ताकी प्रशंसा कर अति आतुर भरत हजार अश्वसहित रामके निकट चला। अर जे रामके समीप वापिस आए हुते तिनकूं संग ले चला। आप तेज तुरंगपर चढ़ा उतावली चाल वनविषै आया। वह नदी असराल बहती हुती तो तामें वृक्षनिके लठे गेर बेड़े बांध क्षणमात्रमें सेना सहित पार उतरे। मार्गविषै नरनारिनसों पूछते जांय जो तुम राम लक्ष्मण कहीं देखे? वे कहै हैं यहांते निकट ही हैं सो भरत एकाग्रचित्त चले गए। सघन वनमें एक सरोवरके तटपर दोऊ भाई सीता सहित बैठे देखे, समीप हैं धनुष बाण जिनके। सीताके साथ ते दोऊ भाई घने दिवसविषै आए अर भरत छह दिनमें आया। रामकूं दूरते देख भरत तुरंगतैं उतर पायपियादा जाय रामके पांयन पर मूर्छित होय गया। तब राम सचेत किया। भरत हाथ जोड़ सिर निवाय रामसूं वीनती करता भया :—

जो हे नाथ! राज्य देयवेकर मेरी कहा विडम्बना करी? तुम सर्व न्यायमार्गके जाननहारे महा प्रवीण मेरे या राज्य करि कहा प्रयोजन? तुम विना जीवेकर कहा प्रयोजन? तुम महा उत्तम चेष्टा के धरणहारे मेरे प्राणनिके आधार हो। उठो अपने नगर चलें। हे प्रभो! मोपर कृपा करहु, राज्य तुम करहु, राज्य योग तुम ही हो, मोहि सुखकी अवस्था देहु। मैं तिहारे सिरपर छत्र फेरता खड़ा

रहूंगा। अर शत्रुघन चमर ढारेगा, अर लक्ष्मण मंत्रीपद धारेगा, मेरी माता पश्चातापरूप अग्निकर जरै है। अर तिहारी माता अर लक्ष्मणकी माता महाशोक करै हैं। यह बात भरत करै हैं ताही समय शीघ्र रथपर चढ़ी अनेक सामंतनिसहित महाशोककी भरी केकई आई, अर राम लक्ष्मणकूं उरसूं लगाय बहुत रुदन करती भई। रामने धीर्य बंधाया, तब केकई कहती भई–हे पुत्र! उठो, अयोध्या चालो, राज्य करहु, तुम बिन मेरे सकल पुर वन समान हैं अर तुम महा बुद्धिमान हो, भरतकूं सिखायलेहु। बहुरि हम स्त्रीजन नष्टबुद्धि हैं मेरा अपराध क्षमा करहु। तब राम कहते भये–हे मात! तुम तो बातनिविषै प्रवीण हो। तुम कहा न जानो हो, क्षत्रियनिका यही विरुद है जो वचन न चूकें, जो कार्य विचारचा ताहि और भांति न करैं। हमारे तातनैं जो वचन कहचा सो हमकूं, अर तुमकूं निवाहना, या बातविषै भरतकी अकीर्ति न होयगी। बहुरि भरतसूं कहा कि–हे भाई! तू चिंता मत करै, तू अनाचारतैं शंकै है सो पिताकी आज्ञा अर हमारी आज्ञा पालवेतैं अनाचार नाहीं। ऐसा कहकर वनविषै सब राजानिके समीप भरतका श्रीरामने राज्याभिषेक किया। अर केकईकूं प्रणामकर बहुत स्तुतिकर बारम्बार संभाषणकर, भरतकूं उरसूं लगाय, बहुत दिलासा करी, नीतिठैं विदा किया। केकई अर भरत राम लक्ष्मण सीताके समीपतैं पाछे नगरकूं चाले। भरत रामकी आज्ञा प्रमाण प्रजाका पिता समान हुआ राज्य करै। जाके राज्यविषै सर्व प्रजाकूं सुख, कोई अनाचार नाहीं, ऐसा निःकंटक राज्य है तौहु भरतका क्षणमात्र राग नाहीं। तीनों काल श्रीअरनाथकी वंदना करै है। अर मुनिनके मुखतैं धर्मश्रवण करै। द्युति भट्टारक नामा जे मुनि, अनेक मुनि करै हैं सेवा जिनकी, तिनके निकट भरतने यह नियम लिया कि रामके दर्शनमात्रतैं ही मुनिव्रत धारूंगा।

तब मुनि कहते भये कि–हे भव्य! कमल सारिखे हैं नेत्र जिनके, ऐसे राम जो लग न आवैं तौ लग तुम गृहस्थके व्रत धारहु। जे महात्मा निर्ग्रंथ हैं तिनका आचरण अति विषम है। सो पहिले श्रावकके व्रत पालनें, तासूं यतिका धर्म सुखसूं सधै। जब वृद्ध अवस्था आवैगी तब तप करैंगे, यह वार्ता कहते हुते।

अनेक जड़बुद्धि मरणकूं प्राप्त भए। महा अमोलक रत्नसमान यतिका धर्म जाकी महिमा कहनेविषै न आवै ताहि जे धारै हैं तिनकी उपमा कौनको देहि। यतिके धर्मतैं उतरता श्रावकका धर्म है, सो जे प्रमादरहित करै हैं ते धन्य हैं। यह अणुव्रत हू प्रबोधका दाता है। जैसैं रत्नद्वीपविषै कोऊ मनुष्य गया अर वह जो रत्न लेय सोईदेशांतरविषै दुर्लभ है, तैसैं जिनधर्म नियमरूप रत्ननिका द्वीप है, ताविषै जो नियम लेय सोई महाफलका दाता है। जो अहिंसारूप रत्नकूं अंगीकारकर जिनवरकूं भक्तिकर अरचै सो सुरनरके सुख भोग मोक्षकूं प्राप्त होय। अर जो सत्यव्रतका धारक मिथ्यात्वका परिहारकर भावरूप पुष्पनिकी माला कर जिनेश्वरकूं पूजै है ताकी कीर्ति पृथ्वीविषै विस्तरै है, अर आज्ञा कोई लोप न सकै। अर जो परधनका त्यागी जिनेन्द्रकूं उरविषै धारै, बारम्बार जिनेन्द्रकूं नमस्कार करै सो नव निधि चौदह रत्नका स्वामी होय अक्षयनिधि पावै। अर जो जिनराजका मार्ग अंगीकार कर परनारीका त्याग करै सो सबके नेत्रनिकूं आनन्दकारी मोक्षलक्ष्मीका वर होय। अर जो परिग्रहका प्रमाण कर संतोष धर जिनपतिका ध्यान करै सो लोकपूजित अनन्त महिमाकूं पावै, अर आहारदानके पुण्यकर महा सुखी होय ताकी सब सेवा करै। अर अभयदानकर निर्भयपद पावै, सर्व उपद्रवतैं रहित होय। अर ज्ञानदानकर केवलज्ञानी होय सर्वज्ञपद पावै। अर औषधिदानके प्रभावकर रोगरहित निर्भयपद पावै। अर जो रात्रिकूं आहारका त्याग करै सो एक वर्षविषै छह महीना उपवासका फल पावै। यद्यपि गृहस्थपदके आरम्भविषै प्रवृत्ते है तो हू शुभगतिके सुख पावै। जो त्रिकाल जिनदेवकी वंदना करै ताके भाव निर्मल होय, सर्व पाप का नाश करै। अर जो निर्मल भावरूप पहुपनिकरि जिननाथकूं पूजै सो लोकविषै पूजनीक होय।
अर जो भोगी पुरुष कमलादि जलके पुष्प तथा केतकी मालती आदि पृथ्वीके सुगन्ध पुष्पनिकर भगवानकूं अरचै सो पुष्पकविमानकूं पाय यथेष्ट क्रीडा करै। अर जो जिनराजपर अगर चंदनादि धूप खेवै सो सुगन्ध शरीर का धारक होय। अर जो गृहस्थी जिनमंदिरविषै विवेकसहित दीपोद्योत करै सो देवलोकविषै प्रभाव संयुक्त शरीर पावै। अर जो जिनभवनविषै छत्र चमर झालरी पताका दर्पण

आश्चर्यकारी विभूति पावै। अर जो जल
आदि मंगलद्रव्य चढ़ावै अर जिनमंदिरकूं शोभित करै सो
चंदनादितैं जिनपूजा करै–जो मनुष्य सुगन्धि से दिशाओं को व्याप्त करने वाली गन्ध से जिनेन्द्र
भगवान का लेपन करता है[1] वह देवनिका स्वामी होय महा निर्मल सुगन्ध शरीर जे देवांगना
तिनका वल्लभ होय। अर जो नीरकर जिनेन्द्रका अभिषेक करै सो देवनिकर मनुष्यनितैं सेवनीक चक्र-
वर्ती होय, जाका राज्याभिषेक देव विद्याधर करैं। अर जो दुग्धकरि अरहंतका अभिषेक करै सो क्षीर-
सागरके जलसमान उज्ज्वल विमानविषै परम कांति धारक देव होय, बहुरि मनुष्य होय मोक्ष पावै।
अर जो दधिकर सर्वज्ञ वीतरागका अभिषेक करै सो दधि समान उज्ज्वल यशकूं पायकर भवोदधिकूं
तरै। अर जो घृतकर जिननाथका अभिषेक करै सो स्वर्ग विमानमें महाबलवान देव होय परम्पराय
अनन्तवीर्यकूं धरै। अर जो ईखरसकर जिननाथका अभिषेक करै सो अमृतका आहारी सुरेश्वर होय
नरेश्वर पद पाय मुनीश्वर होय अविनश्वर पद पावै। अभिषेकके प्रभावकर अनेक भव्यजीव देव
अर इन्द्रनिकरि अभिषेक पावते भए, तिनकी कथा पुराणनिमें प्रसिद्ध है। जो भक्तिकर जिनमंदिर-
विषै मयूर पिच्छादिककर बुहारी देय सो पापरूप रजतैं रहित होय परम विभूति आरोग्यता पावै।
अर जो गीत नृत्य वादित्रादिकर जिनमंदिरविषै उत्सव करै ते स्वर्गविषै परम उत्साहकूं पावै। अर
जो जिनेश्वरके चैत्यालय करावै सो ताके पुण्यकी महिमा कौन कह सकै? सुरमंदिरके सुखभोग पर-
पराय अविनाशीधाम पावै। अर जो जिनेन्द्रकी प्रतिमा करावै सो सुरनरके सुख भोगि परमपद पावै।
व्रत विधान तप दान इत्यादि शुभ चेष्टानिकरि प्राणी जे पुण्य उपारजे हैं सो समस्त कार्य जिनबिंब
करावनेके तुल्य नाहीं। जो जिनबिंब करावै सो परंपराय पुरुषाकार सिद्धपद पावै। अर जो भव्य जिन-
मंदिरके शिखर चढ़ावै सो इन्द्र धरणेंद्र चक्रवर्त्यादिक सुख भोग लोकके शिखर पहुँचै। अर जो जीर्ण
जिनमंदिरनिकी मरम्मत करावै सो कर्मरूप अजीर्णकूं हर निर्भय निरोगपद पावै। अर जो

१ समालभ्य जिनान् गन्धैः, सौरभ्यव्याप्तदिङ्मुखैः। सुरभिः प्रमदानन्दो, जायते दयितः पुमान्॥ १६४॥
पद्मपुराण पर्व ३२ वाँ (ज्ञानपीठ काशी से प्रकाशित)।

नवीन चैत्यालय कराय जिनबिंब पधराय प्रतिष्ठा करैं सो तीन लोकविषै प्रतिष्ठा पावै। अर जो सिद्धक्षेत्रादि तीर्थनिकी यात्रा करैं सो मनुष्यजन्म सफल करैं। अर जो जिनप्रतिमाके दर्शनका चितवन करैं ताहि एक उपवासका फल होय। अर दर्शनको उद्यमका अभिलाषी होय सो बेलाका फल पावै। अर जो चैत्यालय जायवेका आरम्भ करैं ताहि तेलाका फल होय, अर गमन किए चौलाका फल होय। कछुएक आगे गए पंच उपवासका फल होय, आधी दूर गए पक्षोपवासका फल होय, अर, चैत्यालयके दर्शनतै मासोपवासका फल होय, अर भाव भक्तिकर महास्तुति किए अनन्त फल प्राप्ति होय। जिनेन्द्रकी भक्ति समान और उत्तम नाहीं। अर जो जिनसूत्र लिखवाय ताका व्याख्यान करैं, करावैं, पढ़ै पढ़ावैं, सुनैं सुनावैं, शास्त्रनिकी तथा पंडितनिकी भक्ति करैं, वे सर्वांगके पाठी होय केवल पद पावैं। जो चतुर्विध संघकी सेवा करैं सो चतुर्गतिके दुख हर पंचमगति पावैं। मुनि कहै हैं–हे भरत! जिनेंद्रकी भक्तिकर कर्म क्षय होय। अर कर्म क्षय भए–अक्षयपद पावैं। ये वचन मुनिके सुन राजा भरत प्रणामकर श्रावकका व्रत अंगीकार किया। भरत बहुश्रुत, अतिधर्मज्ञ, महाविनयवान, श्रद्धावान, चतुर्विध संघकूं भक्तिकर अर दुखित जीवनिकूं दयाभावकर दान देता भया। सम्यग्दर्शन रतनकूं उरविषै धारता, अर महासुन्दर श्रावकके व्रतविषै तत्पर न्यायसहित राज्य करता भया।

भरत गुणनिका समुद्र ताका प्रताप अर अनुराग समस्त पृथ्वीविषै विस्तरता भया। ताके देवांगना समान ड्योढ सौ राणी तिनविषै आसक्त न भया, जलमें कमलकी न्याईं अलिप्त रहा, जाके चित्तमें निरन्तर यह चिंता वरतै कि कब यतिके व्रत धरूं, तप करूं, निर्ग्रंथ हुवा पृथ्वीविषै विचरूं। धन्य हैं वे पुरुष जे धीर सर्व परिग्रहका त्याग कर तपके बल कर समस्त कर्मनिकूं भस्मकर सारभूत जो निर्वाणका सुख सो पावे हैं। मैं पापी संसारविषै मग्न प्रत्यक्ष देखूं हूं जो यह समस्त संसारका चरित्र क्षणभंगुर है, जो प्रभात देखिये सो मध्याह्नविषै नाहीं। मैं मूढ़ होय रहा हूं। जे रंक विषयाभिलाषी संसारमें राचै है ते खोटी मृत्यु मरे हैं, सर्प, व्याघ्र, गज, जल, अग्नि शस्त्र विद्युत्पात शूलारोपण

असाध्य रोग इत्यादि कुरीतितैं शरीर तजेंगे । यह प्राणी अनेक सहस्रों सुख का भोगनहारा संसारविषै भ्रमण करै है बड़ा आश्चर्य है ! अल्प आयुमें प्रमादी होय रह्या है । जैसैं कोई मदोन्मत्त क्षीरसमुद्रके तट सूता तरंगोंके समूहसे न डरै तैसैं मैं मोहकर उन्मत्त भव भ्रमणसे नाहीं डरूं हूं, निर्भय होय रहा हूं । हाय हाय ! मैं हिंसा आरम्भादि अनेक जे पाप तिनकरि लिप्त मैं राज्य कर कौनसे घोर नरक में जाऊंगा । कैसा है नरक ? बाण खड्ग चक्रके आकार तीक्ष्ण पत्र है जिनके, ऐसे शाल्मलीवृक्ष जहाँ है । अथवा अनेक प्रकार तिर्यञ्चगति ताविषै जावूंगा । देखो ! जिनशास्त्र सारिखा महाज्ञान रूप शास्त्र ताहूकों पाय करि मेरा मन पाप युक्त होय रह्या है । निस्पृह होकर यतिका धर्म नाहीं धारै है सो न जानिए कौन गति जाना है ? ऐसो कर्मनिकी नाशनहारी जो धर्मरूप चिंता ताकूं निरन्तर प्राप्त हुआ जो राजा भरत सो जैनपुराणादि ग्रन्थनिके श्रवणविषै आसक्त है, सदैव साधुनकी कथाविषै अनुरागी, रात्रि दिन धर्ममें उद्यमी होता भया ।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रंथ, ताकी भाषावचनिकाविषै दशरथका वैराग्य, रामका विदेशगमन, भरतका राज्य वर्णन करनेवाला बत्तीसवां पर्व पूर्ण भया ॥ ३२ ॥

अथानन्तर श्री रामचन्द्र लक्ष्मण सीता जहाँ एक तापसीका आश्रम है तहाँ गए । अनेक तापस जटिल नानाप्रकारके वृक्षनिके वक्कल पहिरे, अनेकप्रकारका स्वादुफल तिनकर पूर्ण हैं मठ जिनके, वन विषै वृक्षसमान बहुत मठ देखे । विस्तीर्ण पत्तोंकर छाए हैं मठ जिनके, अथवा घासके फूलनिकर आच्छादित हैं निवास जिनके, बिना बोये सहज ही उगे जे धान्य ते उनके आंगनमें सूके हैं, अर मृग भयरहित आंगनमें बैठे जुगालें हैं, अर तिनके निवास विषै सूवा मैना पढ़े हैं, अर तिनके मठनिके समीप अनेक गुलक्यारी लगाय राखी हैं, सो तापसनिको कन्या मिष्ट जलकर पूर्ण जे कलश ते थांवलनिमें डारै हैं । श्रीरामचन्द्रकूं आए जान तापस नानाप्रकारके मिष्टफल सुगन्ध पुष्प मिष्टजल इत्यादिक सामग्रीनि ४२२

कर बहुत आदरतें पाहुन गति करते भए। मिष्ट वचनका संभाषणकर रहनेको कुटी, मृदुपल्लवनकी शय्या इत्यादि उपचार करते भए। ते तापस सहज ही सबनिका आदरैं करैं हैं, इनको महा रूपवान अद्‌भुत पुरुष जान बहुत आदर किया। रात्रिकूं वसकर ये प्रभात उठकर चाले। तब तापस इनको लार चाले, इनके रूपकूं देख अनुरागी होते हुए पाषाण हू पिघलैं तौ मनुष्यनिकी कहा बात? ते तापस सूके पत्रनिके आहारी इनके रूपकूं देख अनुरागी होते भए। जे वृद्ध तापस हैं ते इनकूं कहते भये—तुम यहां ही रहो तौ यह सुखका स्थानक है अर कदाचित न रहो तौ या अटवीविषै सावधान रहियो। यद्यपि यह वनी जल फल पुष्पादिकर भरी है तथापि विश्वास न करना। नदी वनी नारी ये विश्वास योग्य नाहीं। सो तुम तो सर्व बातनिमें सावधान ही हो। फिर राम लक्ष्मण सीता यहांतैं आगैं चाले। अनेक तापसिनी इनके देखवेकी अभिलाषाकरि बहुत विह्वल भई संती दूरलग पत्र पुष्प फल ईंधनादिकके मिसकर साथ चली आईं। कईएक तापसिनी मधुर वचनकर इनकूं कहती भई जो तुम हमारे आश्रमविषैं क्यों न रहो, हम तिहारी सब सेवा करैं। यहांतैं तीन कोसपर ऐसी वनी है जहां महासघन वृक्ष हैं, मनुष्यनिका नाम नाहीं। अनेक सिंह व्याघ्र दुष्ट जीवनिकर भरी, जहां ईंधन अर फल फूलके अर्थ तापसहू न आवैं। डाभकी तीक्ष्ण अणीनिकर जहां संचार नाहीं। वन महा भयानक है। अर चित्रकूट पर्वत अति ऊंचा दुर्लंघ्य विस्तीर्ण पड्या है, तुम कहा नहीं सुन्या है जो निशंक चले जावो हो? तब राम कहते भए अहो तापसिनी हो! हम अवश्य आगे जावैंगे, तुम अपने स्थानक जाहु। कठिनतातैं तिनकूं पाछे फेरी। ते परस्पर इनके गुण रूपका वर्णन करती अपने स्थानक आईं। ये महा गहन वनविषै प्रवेश करते भए। कैसा है वह वन? पर्वतके पाषाणनिके समूहकरि महा कर्कश, अर बड़े बड़े जे वृक्ष तिनपर आरूढ़ बेलनिके समूह जहां, अर क्षुधाकर अति क्रोधायमान जे शार्दूल तिनके नखनिकर विदारे गए हैं वृक्ष जहां, अर सिंहनिकर हते गए जे गजराज तिनके रुधिरकर रक्त भए जे मोती सो ठौर २ विखर रहे हैं। अर माते जे गजराज तिनकर

भग्न भये हैं तरुवर जहां, अर सिंहनीकी ध्वनि सुनकर भाग रहे हैं कुरंग जहां, अर सूते जे अजगर
तिनके श्वासनिकी पवनकरि गूंज रही हैं गुफा जहाँ, सूकरनिके समूहकर कर्दमरूप होय रहे हैं तुच्छ
सरोवर जहाँ, अर महा अरण्य भैंसे तिनके सींगनकर भग्न भए हैं वल्मीयनिके स्थल जहां, अर फणकूं
ऊंचे किये फिरै हैं भयानक सर्प जहां अर कांटनिकर बींधा है पूंछका अग्रभाग जिनका—ऐसी जे सुरे-
गाय सो खेदखिन्न भई हैं, अर फैल रहे हैं कटेरी आदि अनेक प्रकारके कंटक जहां, अर विष पुष्प-
निकी रजकी वासनाकर घूमे हैं अनेक प्राणी जहाँ, अर गैंडानिके नखनिकर विदारे गए हैं वृक्षनिके
पींड जहां, अर भ्रमते रोझनके समूह तिनकर भग्न भए हैं पल्लवनिके समूह जहां, अर नानाप्रकारके
जे पक्षिनिके समूह तिनके जो क्रूर शब्द उनकर वन गूंज रह्या है, अर बंदरनिके समूह तिनके कूदने
कर कम्पायमान है वृक्षनिकी शाखा जहां, अर तीव्र वेगकूं धरैं पर्वतसौं उतरती जे नदी तिनकर
पृथ्वीविषै पड गया है दाहना जहां, अर वृक्षनिके पल्लवनिकर नाहीं दीखै हैं सूर्यकी किरण जहाँ, अर
नानाप्रकारके फल फूल तिनकर भरा, अनेक प्रकारकी फैल रही है सुगन्ध जहां, नानाप्रकारकी जे
औषधि तिनकरि पूर्ण, अर वनके जे धान्य तिनकरि पूरित, कहूं एक नील, कहूं एक रक्त, कहूं एक
हरित नानाप्रकार वर्णकूं धरैं जो वन तामैं दोऊ वीर प्रवेश करते भये। चित्रकूट पर्वतके महामनो-
हर जे नीझरने तिनविषै क्रीड़ा करते, वनकी अनेक सुन्दर वस्तु देखते, परस्पर दोऊ भाई बात करते,
वनके मिष्टफल आस्वादन करते, किन्नर देवनिके हू मनकूं हरै ऐसा मनोहर गान करते, पुष्पनिके ४२४
परस्पर आभूषण बनावते, सुगन्धद्रव्य अंगविषै लगावते, फूल रहे हैं सुन्दर नेत्र जिनके, महा स्वच्छन्द
अत्यन्त शोभाके धारणहारे, सुरनर नागनिके मनके हरणहारे, नेत्रनिकूं प्यारे, उपवनकी नाईं भीम-
वनमें रमते भए। अनेक प्रकारके सुन्दर जे लतामण्डप तिनविषैं विश्राम करते, नानाप्रकारकी कथा
करते, विनोद करते, रहस्यकी बातें करतैं, जैसैं नन्दनवनविषै देव भ्रमण करैं तैसैं अतिरमणीक लीला-
सूं वनविहार करते भये।

पद्म पुराण ४२५

अथानन्तर साढ़े च्यार मासमें मालव देशविषै आए। सो देश अत्यन्त सुन्दर, नानाप्रकारके धान्यों कर शोभित, जहाँ ग्राम पट्टन घने, सो केतीक दूर आयकर देखे तो बस्ती नाहीं, तब एक बटकी छाया बैठ दोऊ भाई परस्पर बतलावते भये जो काहेतैं यह देश उजाड़ दीखै है? नानाप्रकारके खेत फल रहे हैं अर मनुष्य नाहीं, नानाप्रकारके वृक्ष फलफूलनिकर शोभित हैं, अर पौंड़े सांठेके बाड़ बहुत हैं, अर सरोवरनिमें कमल फूल रहे हैं। नानाप्रकारके पक्षी केलि कर रहे हैं। यह देश अति विस्तीर्ण मनुष्यनिके संचार विना शोभै नाहीं, जैसैं जिनदीक्षाकूं धरैं मुनि वीतराग भावरूप परम संयम बिना शोभैं नाहीं। ऐसी सुन्दर वार्ता राम लक्ष्मणसूं करैं हैं। तहां अत्यन्त कोमल स्थानक देख रत्नकम्बल बिछाय श्रीराम बैठे, निकट धरचा है धनुष जिनके, अर सीता प्रेमरूप जलकी सरोवरी श्रीरामकेविषैं आसक्त है मन जाका, सो समीप बैठी। श्रीरामने लक्ष्मणकूं आज्ञा करी तू बट ऊपर चढ़कर देख कछु बस्ती दीखै है। सो आज्ञा प्रमाण देखता भया अर कहता भया कि हे देव! विजयार्ध पर्वत समान ऊंचे जिनमंदिर दीखैं हैं, जिनके शरदके बादल समान शिखर शोभैं हैं, ध्वजा फरहरैं हैं, अर ग्राम हू बहुत दीखैं हैं, कूप वापी सरोवरनि करि मंडित हैं, अर विद्याधरनिके नगर समान दीखै हैं, खेत फल रहे हैं परन्तु मनुष्य कोई नाहीं दीखै है। न जानिये लोक परिवार सहित भाज गये हैं अथवा क्रूरकर्मके करणहारे म्लेच्छ बांधकर लेगये हैं। एक दरिद्री मनुष्य आवता दीखै है। मृगसमान शीघ्र आवै है। रूक्ष हैं केश जाके, अर मलकर मंडित है शरीर जाका, लम्बी दाढ़ी कर आच्छादित है उरस्थल, अर फाटे वस्त्र पहिरे, फाटे हैं चरण जाके, ढरैं है पसेव जाके, मानों पूर्व जन्मके पापकूं प्रत्यक्ष दिखावै है। तब राम आज्ञा करी जो शीघ्र जाय याकूं ले आव, तदि लक्ष्मण बटतें उतर दरिद्रीके पास गये। तब दरिद्री लक्ष्मणकूं देख आश्चर्यकूं प्राप्त भया। जो यह इन्द्र है, वरुण है अथवा नागेन्द्र है, तथा नर है, किन्नर है, चन्द्रमा है, सूर्य है, अग्नि-कुमार है कि कुबेर है। यह कोऊ महातेजका धारक है, ऐसा विचारता संता डरकर मूर्छा खाय भूमिविषैं गिर पड्या। तब लक्ष्मण कहते भए-हे भद्र! भय न

करहु, उठ उठ, ऐसा कहि उठाया, अर बहुत दिलासाकरि श्रीरामके निकट ले आया। सो दरिद्री पुरुष क्षुधा आदि अनेक दुखनिकर पीडित हुतो सो रामकूं देख सब दुख भूल गया। राम महासुन्दर सौम्य है मुख जिनका, कांतिके समूहतैं विराजमान, नेत्रनिकूं उत्साहके करणहारे, महाविनयवान, जिनके सीता समीप बैठी है। सो मनुष्य हाथ जोड़ सिर पृथ्वीसूं लगाय नमस्कार करता भया। तब आप दयाकर कहते भए–तू छायाविषै आय बैठ भय न करि। तब वह आज्ञा पाय दूर बैठ्या। रघुपति अमृतरूप वचनकर पूछते भए–तेरा नाम कहा, अर कहातैं आया, अर कौन है? तब वह हाथ जोडि विनती करता भया। हे नाथ! मैं कुटुम्बी (कुनबी) हूं। मेरा नाम सीरगुप्ति है दूरतैं आऊं हूं। तब आप बोले यह देश उजाड काहेतैं है? तब वह कहता भया हे देव! उज्जयनी नाम नगरी, ताके पति राजा सिंहोदर प्रसिद्ध, प्रतापकर नवाए हैं बड़े २ सामंत जानैं, देवनि समान है विभव जाका। अर एक दशांगपुरका पति वज्रकर्ण सो सिंहोदरका सेवक अत्यन्त प्यारा सुभट, जानैं स्वामीके बड़े २ कार्य किये। सो निर्ग्रंथ मुनिकूं नमस्कारकर धर्मश्रवणकर तानैं यह प्रतिज्ञा करी जो मैं देव गुरु शास्त्र टार औरनिकूं नमस्कार न करूं। साधुके प्रसादकर ताकूं सम्यग्दर्शनकी प्राप्ति भई सो पृथ्वीविषै प्रसिद्ध है। आप कहा अब लों वाकी वार्ता न सुनी? तब लक्ष्मण रामके अभिप्रायतैं पूछते भये जो वज्रकर्णपर कौन भांति संतनकी कृपा भई। तब पंथी कहता भया–हे देवराज! एकदिन वज्रकर्ण दसारण्य वनविषै मृगयाकूं गया हुता, जन्महीतैं पापी क्रूरकर्मका करणहारा, इन्द्रियनिका लोलुपी, महामूढ़, शुभक्रियातैं पराङ्मुख, महासूक्ष्म जिनधर्मकी चर्चा सो न जानैं, कामी क्रोधी लोभी अन्ध, भोग सेवनकर उपजा जो गर्व सोई भया पिशाच, ताकर पीडित, सो वनविषै भ्रमण करै–सो तानें ग्रीष्म समयविषै एक शिलापर तिष्ठता संता सत्पुरुषनिकर पूज्य ऐसा महामुनि देख्या। चार महीना सूर्यकी किरणका आताप सहनहारा महातपस्वी पक्षीसमान निराश्रय सिंहसमान निर्भय सो तप्तायमान जो शिला ताकर तप्त शरीर ऐसे दुर्जय तीव्रतापका सहनहारा सज्जन। सो ऐसे तपोनिधि साधुकूं देख वज्रकर्ण तुरंगपर चढ्या

बरछी हाथमें लिए, कालसमान महाक्रूर पूछता भया। कैसे हैं साधु ? गुणरूप रत्ननिके सागर, परमार्थके वेत्ता, पापनिके घातक, सब जीवनिके दयालु, तपोविभूतिकर मंडित तिनसूं वज्रकर्ण कहता भया।

हे स्वामी ! तुम या निर्जन वनविषै कहा करो हो ? ऋषि बोले—आत्मकल्याण करें हैं जो पूर्व अनन्त भवविषै न आचरया। तब वज्रकर्ण हंसकर कहता भया या अवस्थाकरि तुमकूं कहा सुख है ? तुम तपकर रूपलावण्यरहित शरीर किया। तिहारे अर्थ काम नाहीं, वस्त्राभरण नाहीं, कोई सहाई नाहीं। स्नान सुगन्ध लेपनादि रहित हो, पराए घरनिके आहार कर जीविका पूरी करो हो, तुम सारिखे मनुष्य कहा आत्महित करै ? तब याकूं काम भोग कर अत्यन्त आर्तिवंत देख महादयावान संयमी बोले—कहा तूने महा घोर नरककी भूमि न सुनी है जो तू उद्यमी होय पापनिविषै प्रीति करै है ? नरककी महाभयानक सात भूमि हैं ते महादुर्गंधमई देखी न जांय, स्पर्शी न जांय, सुनी न जांय, महातीक्ष्ण लोहके कांटेनिकर भरी। जहां नारकीनिकूं घानीमें पेलै हैं; अनेक वेदना त्रास होय है, छुरियों कर तिल तिल काटिए हैं, अर ताते लोह समान ऊपरले नरकनिका पृथ्वीतल अर महाशीतल नीचले नरकनिका पृथ्वीतल ताकर महा पीड़ा उपजै है। जहां महाअंधकार महाभयानक रौरवादि गर्त, असिपत्रवन, महा दुर्गंध वैतरणी नदी जे पापी गले हाथीनिकी न्याई निरंकुश हैं ते नरकविषै हजारां भांतिके दुःख देखै हैं। हम तोहि पूछै हैं तो सारिखे पापारंभी विषयातुर कहा आत्महित करै हैं ? ये इन्द्रायणके फलसमान इन्द्रियनिके सुख तू निरंतर सेय कर सुख मानै है सो इनमें हित नाहीं, ये दुर्गतिके कारण हैं। आत्माका हित यह करै है जो जीवनिकी दया पालै, मुनिके व्रत आदरै, निर्मल है चित्त जिनका। जे महाव्रत तथा अणुव्रत नाहीं आचरै हैं ते मिथ्यात्व अव्रतके योगतैं समस्त दुःखके भाजन होय हैं। तैंने पूर्वजन्मविषै कोई सुकृत किया हुता ताकर मनुष्य देह पाया। अब पाप करैगा तो दुर्गति जायगा। ये विचारे निर्बल निरपराध मृगादि पशु अनाथ, भूमि ही है शय्या जिनके, चंचल

नेत्र सदा भयरूप, वनके तृण अर जल कर जीवनहारे, पूर्व पापकर अनेक दुखनिकर दुखी, रात्रि हू निद्रा न करें, भयकर महा कायर, सो भले मनुष्य ऐसे दीननिकूं कहा हनें ? तातैं जो तू अपना हित चाहै है तो मन वचन काय कर हिंसा तज, जीवदया अंगीकार करि। ऐसे मुनिके श्रेष्ठ वचन सुनि वज्रकर्ण प्रतिबोधकूं प्राप्त भया। जैसैं फला वृक्ष नय जाय तैसैं साधुके चरणारविंदकूं नय गया, अश्वतैं उतर साधुके निकट गया। हाथ जोड प्रणाम कर अत्यन्त विनयकी दृष्टि कर चित्तमें साधुकी प्रशंसा करता भया। धन्य हैं ये मुनि परिग्रहके त्यागी, जिनकूं मुक्तिकी प्राप्ति होय है। अर या वन के पक्षी अर मृगादि पशु प्रशंसा योग्य हैं जे इस समाधिरूप साधुका दर्शन करैं हैं। अर अति धन्य हूं मैं जो मोहि आज साधुका दर्शन भया। ये तीन जगतकर वंदनीक हैं, अब मैं पापकर्मतैं निवृत्त भया। ये प्रभू ज्ञानस्वरूप नखनिकर बंधुस्नेहमई संसार रूप जो पींजरा, ताहि छेदकर सिंहकी न्याई निकसे। ते साधु देखो मनरूप वैरीकूं वशकरि, नग्नमुद्रा धार शील पालैं हैं। अतृप्त आत्मा पूर्ण वैराग्य कूं प्राप्त नाहीं भया, तातैं श्रावकके अणुव्रत आचरूं। ऐसा विचार कर साधुके समीप श्रावकके व्रत आदरे, अर अपना मन शांतिरसरूप जलसे धोया, अर यह नियम लिया जो देवाधिदेव परमेश्वर परमात्मा जिनेन्द्रदेव, अर तिनके दास महाभाग्य निर्ग्रंथ मुनि, अर जिनवाणी, इन बिना औरनिकूं नमस्कार न करूं। प्रीतिवर्धन नामा जे मुनि तिनके निकट वज्रकर्ण अणुव्रत आदरे, अर उपवास धारे। मुनि याकूं विस्तार कर धर्मका व्याख्यान कह्या, जाकी श्रद्धाकर भव्यजीव संसारपाशतैं छूटै। एक श्रावकका धर्म एक यतिका धर्म। इसमें श्रावकका धर्म गृहावलंबन संयुक्त, अर यति का धर्म निरालम्ब निरपेक्ष। दोऊ धर्मनिका मूल सम्यक्त्वकी निर्मलता। तप अर ज्ञानकर युक्त अत्यन्त श्रेष्ठ, जो प्रथमानुयोग, करणानुयोग, चरणानुयोग, द्रव्यानुयोगरूपविषै जिनशासन प्रसिद्ध है। यतिका धर्म अति कठिन जान अणुव्रतविषै बुद्धि ठहराई, अर महाव्रतकी महिमा हृदयमें धारी। जैसैं दरिद्रीके हाथमें निधि आवै अर वह हर्षकूं प्राप्त होय तैसैं धर्मध्यानकूं धरतासंता आनन्दकूं प्राप्त भया। यह अत्यन्त

क्रूरकर्मका करणहारा एक साथ ही शांत दशाकूं प्राप्त भया, या बातकर मुनि भी प्रसन्न भए। राजा तादिन तो उपवास किया, दूजे दिन पारणा कर दिगम्बरके चरणारविंदकूं प्रणामकर अपने स्थानक गया। गुरुके चरणारविंदकूं हृदयमें धारता संता संदेहरहित होता भया अणुव्रत आराधे। चित्तमें यह चिंता उपजी जो उज्जैनीका राजा जो सिंहोदर ताका मैं सेवक सो ताका विनय किए विना मैं राज्य कैसें करूं? तब विचारकर एक मुद्रिका बनाई। जामें श्रीमुनिसुव्रतनाथकी प्रतिमा पधराई, दक्षिण अंगुष्ठमें पहरी। जब सिंहोदरके निकट जाय तब मुद्रिका विषै प्रतिमा ताहि बारम्बार नमस्कार करै। सो याका कोऊ बैरी हुता तानै यह छिद्र हेर सिंहोदरसैं कही जो यह तुमकूं नमस्कार नाहीं करै है, जिनप्रतिमाकूं करै है। तब सिंहोदर पापी क्रोधकूं प्राप्त भया अर कपटकर वज्रकर्णकूं दशांग नगरसैं बुलावता भया, सम्पदाकर उन्मत्त याके मारवेकूं उद्यमी भया। सो वज्रकर्ण सरलचित्त, सो तुरंग पर चढ़ उज्जयिनी जायवेकूं उद्यमी भया। ता समय एकपुरुष जवान पुष्ट अर उदार है शरीर जाका, दंड जाके हाथ में, सो आयकर कहता भया। हे राजा! जो तू शरीरतैं और राज्य भोगतैं रहित भया चाहै है तो उज्जयनी जाहु। सिंहोदर अति क्रोधकूं प्राप्त भया है, तू नमस्कार न करै तातैं तोहि मारया चाहै है। तू भले जानै सो कर। यह वार्ता सुनकर वज्रकर्ण विचारी कि कोऊ शत्रु मोविषै अर नृपविषै भेद किया चाहै है तानै मंत्रकर यह पठाया होय। बहुरि विचारी जो याका रहस्य तो लेना। तब एकांतविषै ताहि पूछता भया—तू कौन है अर तेरा नाम कहा, अर कहांतैं आया है, अर यह गोप्य मंत्र तूनै कैसें जान्या? तब वह कहता भया कुन्दनगरविषै महा धनवंत एक समुद्र संगम सेठ है जाके यमुना स्त्री, ताके वर्षाकालमें विजुरीके चमत्कार समय मेरा जन्म भया, तातैं मेरा विद्युदंग नाम धरया। सो मैं अनुक्रमतैं नवयौवनकूं प्राप्त भया। व्यापारके अर्थ उज्जयनी गया तहां कामलता वेश्याकूं देख अनुरागकर व्याकुल भया। एक रात्रि तासूं संगम किया सो वानै प्रीतिके बंधनकर बांध लिया जैसें पारधी मृगकूं पांसितैं बांधे। मेरे बापने बहुत वर्षनिमें जो धन उपार्ज्या

हुता सो मैं ऐसा कुपूत वेश्याके संग कर षटमासमें सब खोया। जैसें कमलविषै भ्रमर आसक्त होय
तैसें ताविषै आसक्त भया। एक दिन वह नगरनायिका अपनी सखीके समीप अपने कुण्डलनिकी निंदा
करती हुती सो मैं सुनी। तब वासैं पूछी, तब तानैं कही– धन्य है रानी श्रीधरा महासौभाग्यवती
ताके काननिमें जैसें कुण्डल हैं तैसें काहूके नाहीं। तब मैं मनमें चितई जो मैं राणीके कुण्डल हरकर
याकी आशा पूर्ण न करूं तो मेरे जीने कर कहा? तब कुण्डल हरनेकूं मैं अंधेरी रात्रिविषै राजमंदिर
गया सो राजा सिंहोदर कोप हो रहा था, अर राणी श्रीधरा निकट बैठी हुती। सो राणी पूछी–हे
देव! आज निद्रा काहेतैं न आवै है? तब राजा कही हे राणी! मैं वज्रकर्णकूं छोटेतैं मोटा किया,
अर मोहि सिर न नवावै, सो वाहि जबतक न मारूं तब तक आकुलताके योगतैं निद्रा कहां आवै?
ऐसे मनुष्यनितैं निद्रा दूर ही भागै–अपमानते दग्ध, अर कुटुम्बी निर्धन, शत्रुने आय दबाया अर जीतने
समर्थ नाहीं, अर जाके चित्तमें शल्य तथा कायर अर संसारतें विरक्त, इनतें निद्रा दूर ही रहै है। यह
वार्ता राजा रानीकूं कही। सो मैं सुनकर ऐसा होयगया मानों काहूने मेरे हृदयमें वज्रकी दीनी। सो
कुण्डल लेयवेकी बुद्धि तज यह रहस्य लेय तेरे निकट आया, अब तुम वहां जावो मत। कैसे हो तुम?
जिनधर्ममें उद्यमी हो। अर निरंतर साधुनिके सेवक हो। अंजनीगिरि पर्वतसे हाथी, जिनसे मद
झरे, तिन पर चढ़े योधा, बखतर पहिरे, अर महा तेजस्वी तुरंगनिके असवार, कवच पहिरे महाक्रूर
समंत तेरे मारवेके अर्थ राजाकी आज्ञातें मार्ग रोके खड़े हैं। तातैं तू कृपाकर अबार वहां मत जाय। ४३
मैं तेरे पांयन पड़ूं हूं। मेरा वचन मान, अर तेरे मनमें प्रतीत नाहीं आवै तो देख यह फौज आई, धूरके
पटल उठे हैं, महा शब्द होते आवै हैं। यह विद्युदंगके वचन सुन वज्रकर्ण परचक्रकूं आवता देख याकूं
परम मित्र जान लार लेय अपने गढ़विषै तिष्ठ्या। सिंहोदरके सुभट दरवाजेमें आवने न दिये। तब
सिंहोदर सर्व सेना लार ले चढ़ आया। सो गढ गाढा जान अपने कटकके लोग इनके मारवेके डरतैं
तत्काल गढ़ लेवेकी बुद्धि न करी। गढ़के समीप डेरे कर वज्रकर्णके समीप दूत भेज्या सो अत्यन्त कठोर

वचन कहता भया। तू जिनशासनके गर्वकरि मेरे ऐश्वर्यका कंटक भया। जे घरखोवा यति तिनने तोहि बहकाया, तू न्यायरहित भया, देश मेरा दिया खाय, माथा अरहंतकूं नवावै। तू महा मायाचारी है। तातैं शीघ्र ही मेरे समीप आयकर मोहि प्रणाम कर नातर मारा जायगा। यह वार्ता दूतने वज्रकर्णसूं कही तब वज्रकर्ण जो जवाब दिया सो दूत जाय सिंहोदरसूं कहै है, हे नाथ! वज्रकर्णकी यह वीनती है जो देश नगर भण्डार हाथी, घोड़े सब तिहारे हैं सो लेहु, मोहि स्त्रीसहित धर्मद्वार देय काढ देहु, मेरा तुमतैं उजर नाहीं। परन्तु मैं यह प्रतिज्ञा करी है जो जिनेन्द्र, मुनि अर जिनवाणी इन विना और कूं नमस्कार न करूं सो मेरा प्राण जाय तोहू प्रतिज्ञा भंग न करूं। तुम मेरे द्रव्यके स्वामी हो, आत्माके स्वामी नाहीं। यह वार्ता सुन सिंहोदर अति क्रोधकूं प्राप्त भया, नगरकूं चारों तरफसे घेरचा अर देश उजाड़ दिया। सो दरिद्री मनुष्य श्रीरामसूं कहै है—हे देव! देश उजाड़नेका कारण मैं तुमसूं कह्या। अब मैं जाऊं हूं, यहांतैं नजदीक मेरा ग्राम है, सो ग्राम सिंहोदरके सेवकनिनैं बाल्या, लोगनिके विमान तुल्य घर हुते सो भस्म भए। मेरी तृण काष्ठकर रची कुटी सो हू भस्म भई होयगी, मेरे घरमें एक छाज, एक माटीका घट, एक हांडी यह परिग्रह हुता सो लाऊं हूं। मेरे खोटी स्त्री तानैं क्रूर वचन कह मोहि पठाया है। अर वह बारम्बार ऐसे कहै है जो सूने गांवमें घरनिके उपकरण बहुत मिलेंगे सो जायकर ले आवहु। सो मैं जाऊं हूं मेरे बड़े भाग्य जो आपका दर्शन भया, स्त्रीने मेरा उपकार किया जो मोहि पठाया। वह वचन सुन श्रीराम महा दयावान पंथीकूं दुखी देख अमोलक रत्ननिका हार दिया सो पंथी प्रसन्न होय चरणारविंदकूं नमस्कार कर हार लेय अपने घर गया, द्रव्यकर राजनिके तुल्य भया।

अथानन्तर श्रीराम लक्ष्मणसूं कहते भए—हे भाई! यह ज्येष्ठका सूर्य अत्यन्त दुस्सह जब अधिक न चढ़े पहिले ही चलें या नगरके समीप निवास करैं। सीता तृषाकर पीड़ित है सो याहि जल पिलावैं। अर आहारकी विधि भी शीघ्र ही करैं। ऐसा कहि आगें गमन किया। सो दशांगनगरके समीप जहां

श्री चन्द्रप्रभुका चैत्यालय महा उत्तम है तहाँ आए अर श्रीभगवानकूं प्रणामकर सुखसूं तिष्ठे। अर
आहारकी सामग्री निमित्त लक्ष्मण गए, सिंहोदरके कटकमें प्रवेश करते भए। कटकके रक्षक मनुष्य-
नितैं मनैं किए तब लक्ष्मण विचारी ये दरिद्री अर नीच कुल इनतैं मैं कहा विवाद करूं। यह विचार
नगरकी ओर आए सो नगरके दरवाजे अनेक योधा बैठे हुते अर दरवाजेके ऊपर वज्रकर्ण तिष्ठा
हुता, महासावधान। सो लक्ष्मणकूं देख लोक कहते भए, तुम कौन हो, अर कहांतैं कौन अर्थ आए
हो ? तब लक्ष्मण कही दूरतैं आए हैं अर आहार निमित्त नगरमें आए हैं। तब वज्रकर्ण इनकूं अति
सुन्दर देख आश्चर्यकूं प्राप्त भया अर कहता भया हे नरोत्तम ! मांहि प्रवेश करो। तब यह हर्षित
होय गढ़में गया, वज्रकर्ण बहुत आदरसूं मिल्या अर कहता भया जो भोजन तैयार है सो आप कृपा
कर यहां ही भोजन करहु। तब लक्ष्मण कही मेरे गुरुजन बड़े भाई और भावज श्रीचन्द्रप्रभुके चैत्या-
लयविषै बैठे हैं तिनकूं पहिले भोजन कराय मैं भोजन करूंगा। तब वज्रकर्णने कही बहुत भली बात,
वहां ले जाइये, उन योग्य सब सामग्री है ले जावो। अपने सेवकनि हाथ नाने भांति भांतिकी सामग्री
पठाई सो लक्ष्मण लिवाय लाए। श्रीराम, लक्ष्मण अर सीता भोजनकर बहुत प्रसन्न भए। श्रीराम कहते
भए—हे लक्ष्मण ! देखो वज्रकर्णकी बड़ाई जो ऐसा भोजन कोऊ अपने जमाईकों हूं न जिमावै सो
विना परचै अपने ताईं जिमाए। पीनेकी वस्तु महामनोहर, अर व्यंजन महामिष्ट, यह अमृत तुल्य
भोजन जाकरि मार्गका खेद मिट्या अर जेठके आतापकी तप्त मिटी। चांदनी समान उज्ज्वल दुग्ध
महा सुगन्ध, जापरि भ्रमर गुंजार करैं हैं, अर सुन्दर घृत, सुन्दर दधि, मानो कामधेनुके स्तननिकरि
उपजाया दुग्ध, ताकरि निरमापे हैं। ऐसे व्यंजन, ऐसे रस और ठौर दुर्लभ हैं। ता पंथीने पहिले अपने
ताईं कहा हुता जो यह अणुव्रतका धारी श्रावक है, अर जिनेन्द्र मुनीन्द्र जिनसूत्र टार औरनिकूं
नमस्कार नाहीं करै है। सो ऐसा धर्मात्मा, व्रत शीलका धारक आपने आगे शत्रुकरि पीड़ित रहै तो
अपने पुरुषार्थ कर कहा ? अपना यही धर्म है जो दुखीका दुख निवारैं, साधर्मीका तो अवश्य निवारैं।

यह अपराध रहित, साधुसेवाविषै सावधान, महाजिनधर्मी, जाके लोक जिनधर्मी, ऐसे जीवकूं पीड़ा काहे उपजै ? यह सिंहोदर ऐसा बलवान है जो याके उपद्रवतैं वज्रकर्णकूं भरत भी न बचाय सकै। तातैं हे लक्ष्मण ! तुम याकूं शीघ्र ही सहाय करो, सिंहोदर पै जाओ अर वज्रकर्णका उपद्रव मिटै सो करहु। हम तुमकूं कहा सिखावैं जो यूं कहियो, तुम महाबुद्धिवान हो, जैसैं महा मणि प्रभा सहित प्रकट होय है तैसें तुम महा बुद्धि पराक्रमकूं धर प्रकट भए हो। या भांति श्रीरामने भाईके गुण गाए, तब भाई लक्ष्मण लज्जाकर नीचे मुख होय गए। नमस्कारकर कहते भये—हे प्रभो ! जो आप आज्ञा करोगे सोई होयगा। महाविनयवान लक्ष्मण रामकी आज्ञा प्रमाण धनुषबाण लेय धरतीकूं कम्पायमान करते संते शीघ्र ही सिंहोदर पै गए। सिंहोदरके कटकके रखवारे पूछते भए तुम कौन हो ? लक्ष्मण कही मैं राजा भरतका दूत हूं। तब कटकमें पैठने दिया, अनेक डेरे उलंघ राजद्वार गया। द्वारपाल राजासूं मिलाया सो महा बलवान सिंहोदरकूं तृणसमान गिनता संता कहता भया, हे सिंहोदर ! अयोध्याका अधिपति भरत तानैं यह आज्ञा करी है जो वृथा विरोधकर कहा ? वज्रकर्णसूं मित्रभाव करहु। तब सिंहोदर कहता भया—हे दूत ! राजा भरतसूं या भांति कहियो जो अपना सेवक होय अर विनयमार्गसे रहित होय ताहि स्वामी समझाय सेवामें लावै, यामें विरोध कहा ? यह वज्रकर्ण दुरात्मा, मानी, मायाचारी, कृतघ्न, मित्रनिका निंदक, चाकरीचूक, आलसी, मूढ, विनयचार रहित, खोटी अभिलाषाका धारक, महाक्षुद्र, सज्जनता रहित है सो याके दोष तब मिटैं जब यह मरणकों प्राप्त होय अथवा राज्य रहित करूं। तातैं तुम कछु मत कहो। मेरा सेवक है जो चाहूंगा सो करूंगा। तब लक्ष्मण बोले— बहुत उत्तरनिकरि कहा ? यह परमहितु है, या सेवकका अपराध क्षमा करहु। ऐसा जब कह्या तब सिंहोदर क्रोध कर अपने बहुत सामंतनिकूं देख गर्वकूं धरता संता उच्च स्वरसूं कहता भया।

यह वज्रकर्ण तो महामानी है ही अर तू याके कार्यकूं आया सो तू भी महामानी है। तेरा तन अर मन मानों पाषाणतैं निरमाप्या है। रंचमात्र हू नम्रता तोमैं नाहीं। तू भरतका मूढ सेवक है।

जानिए है जो भरतके देशमें तो सारिखे मनुष्य होवेंगे । जैसें सीझती भरी हांडी माहींसूं एक चावल काढकर नर्म कठोरकी परीक्षा करिए है तैसें एक तेरे देखवेकरि सबनिकी बानिगी जानी जाय है । तब लक्ष्मण क्रोधकर कहते भए, मैं तेरी बाकी संधि करावेकूं आया हूं, तोहि नमस्कार करवेकूं न आया, बहुत कहनेसूं कहा ? थोड़े हीमें समझहु । वज्रकर्णसूं संधि कर लेहु, नातर मारा जायगा । ये वचन सुन सबही सभाके लोक क्रोधकूं प्राप्त भए । नानाप्रकारके दुर्वचन कहते भए, अर नानाप्रकार क्रोध की चेष्टाकूं प्राप्त भए । कईएक छुरी लेय, कईएक कटारी भाला तलवार लेयकरि याके मारवेकूं उद्यमी भए । हुंकार शब्द करते अनेक सामंत लक्ष्मणकूं बेढते भए । जैसें पर्वतकूं मच्छर रोकैं तैसें रोकते भए । सो यह धीर वीर युद्धक्रियाविषैं पंडित, शीघ्र क्रियाके वेत्ता, चरणके घातकर तिनकूं दूर उडाय दिए । कईएक गोडनितैं मारे, कईएक कुहनिनतैं पछाड़े, कईएक मुष्टिप्रहार करि चूर्णकर डारे, कईएकनिके केश पकड़ पृथ्वीपर पाड़ि मारे, कईएकनिकूं परस्पर सिर भिडाय मारे । या भांति अकेले महाबली लक्ष्मणने अनेक योधा विध्वंस किये । तब और बहुत सामंत हाथी घोडनिपर चढ़ बखतर पहिर लक्ष्मणकी चौगिरद फिरैं, नानाप्रकारके शस्त्रनिके धारक । तब लक्ष्मण जैसें सिंह स्यालनिकों भगावै तैसें तिनकूं भगावता भया । तब सिंहोदर कारीघटा समान हाथी पर चढकर अनेक सुभटनिसहित लक्ष्मणतैं लडवेकूं उद्यमी भया । अनेक योधा मेघ समान लक्ष्मण रूप चन्द्रमाकूं बेढते भए । सो सर्व योधा ऐसें भगाए जैसें पवन आकके डोडनिके जे फफूंदे तिनकूं उडावै । ता समय महा योधानिकी कामिनी परस्पर वार्ता करैं हैं, देखो यह एक महासुभट अनेक योधानिकरि बेढ्या है, परंतु यह सबकूं जीतै है,कोऊ याहि जीतिवे समर्थ नाहीं । धन्य याहि,धन्य याके माता पिता इत्यादि अनेक वार्ता सुभटनिकी स्त्री करैं हैं । अर लक्ष्मण सिंहोदरकूं कटकसहित चढ्या देखकर गजका थम्भ उपाड्या अर कटकके सम्मुख गया । जैसें अग्नि वनकूं भस्म करै तैसें कटकके बहुत सुभट विध्वंस किए । अर जो दशांगनगरके योधा नगरके दरवाजे ऊपर वज्रकर्णके समीप बैठे हुते, सो फूल गए हैं नेत्र जिनके,

स्वामीसूं कहते भए—हे नाथ ! देखो यह एक पुरुष सिंहोदरके कटकतैं लड़े है, ध्वजा रथ चक्र भग्न कर डारे, परम ज्योतिका धारी है, खड्गसमान है कांति जाकी, समस्त कटककूं व्याकुलतारूप भ्रमण में डारचा है, सब तरफ सेना भागी जाय है जैसै सिंहतैं मृगनिके समूह भागैं। अर भागते थके सुभट परस्पर बतलावे हैं कि बक्तर उतार धरो, हाथी घोड़े छोड़ो, गदा खाड़ेमें डार देहु, ऊंचे शब्द न करहु। ऊंचे शब्दको सुनकर शस्त्रके धारक देख यह भयानक पुरुष आय मारेगा। अरे भाई ! यहांतैं हाथी लेजावो, कहां थांभ राखा है, गैल देऊ। अरे दुष्ट सारथी ! कहां रथकूं थांभ राख्या है। अर घोड़े आगे करहु। यह आया यह आया। या भांतिके वचनालाप करते महाकष्टकूं प्राप्त भए, सुभट संग्राम तजि आगैं भागे जाय हैं। नपुंसक समान होयगए। यह युद्धमें क्रीडाका करणहारा कोई देव है, तथा विद्याधर है, अथवा काल है, अर कै वायु है ? यह महाप्रचण्ड सब सेनाकूं जीतकर सिंहोदर कूं हाथीसे उतार गलेमें वस्त्र डार बांध लिए जाय है, जैसैं बलदको बांध धनी अपने घर ले जाय। यह वचन वज्रकर्णके योधा वज्रकर्णसूं कहते भए। तब वह कहता भया—हे सुभट हो ! बहुत चिंता कर कहा ? धर्मके प्रसादतैं सब शांति होयगी। अर दशांगनगरकी स्त्री महलनिके ऊपर बैठी परस्पर वार्ता करैं हैं, हे सखी ! देखो या सुभटकी अद्‌भुत चेष्टा, जो एक पुरुष अकेला नरेन्द्रकूं बांध लिए जाय है। अहो धन्य याका रूप, धन्य याकी कांति, धन्य याकी शक्ति। यह कोई अतिशयका धारी पुरुषोत्तम है। धन्य हैं व स्त्री, जिनका यह जगदीश्वर पति हुआ है, तथा होयगा। अर सिंहोदरकी पटराणी बाल तथा वृद्धनि सहित रोवती संती लक्ष्मणके पांयनि पड़ी अर कहती भई—हे देव ! याहि छोड देहु, हमैं भरतारकी भीख देहु। अब जो तिहारी आज्ञा होयगी सो यह करेगा। तब आप कहते भए यह आगैं बड़ा वृक्ष है तासूं याहि लटकाऊंगा। तब वाकी राणी हाथ जोड बहुत विनती करती भई—हे प्रभो ! आप रोस भए हो तो हमें मारो, याहि छांडो, कृपा करो, प्रीतमका दुख हमें मत दिखावो। जे तुम सारिखे पुरुषोत्तम हैं ते स्त्री अर बालक वृद्धनिपर करुणा ही करैं हैं। तब आप दयाकर कहते भए—तुम

चिंता न करहु, आगे भगवानका चैत्यालय है तहां याहि छोडेंगे । ऐसा कह आप चैत्यालयमें गए । जाय कर श्रीरामतैं कहते भए—हे देव ! यह सिंहोदर आया है, आप कहो सो करें । तब सिंहोदर हाथ जोड़ कांपता संता श्रीरामके पांयन परया अर कहता भया—हे देव ! तुम महाकांतिके धारी, परम तेजस्वी हो, सुमेरु सारिखे अचल पुरुषोत्तम हो, मैं आपका आज्ञाकारी, यह राज्य तिहारा, तुम चाहो ताहि देहु । मैं तिहारे चरणारविंदकी निरन्तर सेवा करूंगा । अर रानी नमस्कार कर पतिकी भीख मांगती भई अर सीताके पांयन परी अर कहती भई—हे देवी ! हे शोभने ! तुम स्त्रीनिकी शिरोमणि हो, हमारी करुणा करो । तब श्रीराम सिंहोदरकूं कहते भए मानों मेघ गाज्या ।

अहो सिंहोदर ! तोहि जो बज्रकर्ण कहे सो कर । या बातकरि तेरा जीतव्य है और बातकर नाहीं । या भांति सिंहोदरकूं रामकी आज्ञा भई ताही समय जे बज्रकर्णके हितकारी हुते तिनकूं भेज बज्रकर्ण कूं बुलाया, सो परिवार सहित चैत्यालय आया, तीन प्रदक्षिण देय भगवानकूं नमस्कार करि चन्द्रप्रभु स्वामीकी अत्यन्त स्तुतिकर रोमांच होय आए । बहुरि वह विनयवान दोनों भाइनके पास आया, स्तुति कर शरीरकी आरोग्यता पूछता भया, अर सीताकी कुशल पूछी । तब श्रीराम अत्यन्त मधुर ध्वनिकर बज्रकर्णकूं कहते भए—हे भव्य ! तेरी कुशलकरि हमारे कुशल है । या भांति बज्रकर्णकी अर श्रीरामकी वार्ता होय है, तबही सुन्दर भेष धरे विद्युदंग आया, श्रीराम लक्ष्मणकी स्तुति कर बज्रकर्णके समीप आया । सर्व सभाविषै विद्युदंगकी प्रशंसा भई जो यह बज्रकर्णका परम मित्र है । बहुरि श्रीरामचन्द्र प्रसन्न होय बज्रकर्णसूं कहते भए तेरी श्रद्धा महा प्रशंसा योग्य है । कुबुद्धीनिके उत्पातकरि तेरी बुद्धि रंचमात्र भी न डिगी जैसें पवनके समूहकरि सुमेरुकी चूलिका न डिगै । मोहकूं देखकर तेरा मस्तक न नया सो धन्य है तेरी सम्यक्तकी दृढता । जो शुद्ध तत्त्वके अनुभवी पुरुष हैं तिनकी यही रीति है जो जगत कर पूज्य जे जिनेन्द्र तिनकूं प्रणाम करैं । बहुरि मस्तक कौनकों नवावें ? मकरंद रसका आस्वाद करण हारा जो भ्रमर सो गर्दभ (गधा) की पूंछपै कैसें गुंजार करै ? तू बुद्धिमान है, धन्य है, निकटभव्य है,

चन्द्रमा हूते उज्ज्वल बलकीर्ति तेरी पृथ्वीमें विस्तरी है। या भांति वज्रकर्णके सांचे गुण श्रीरामचन्द्रने वर्णन कीये। तब वह लज्जावान् होय नीचा मुख कर रह्या. श्रीरघुनाथकूं कहता भया—हे नाथ! मोपर यह आपदा तो बहुत पड़ी हुती परन्तु तुम सरीखे सज्जन जगतके हितु मेरे सहाई भए। मेरे भाग्य करि तुम पुरुषोत्तम पधारे। या भांति वज्रकरण ने कही तब लक्ष्मण बोले तेरी बांछा जो होय सो करें। वज्रकरण ने कही तुम सारिखे उपकारी पुरुष पायकर मोहि या जगतविषै कछु दुर्लभ नाहीं। मेरी यही विनती है मैं जिनधर्मी हूं, मेरे तृणमात्रको भी पीडाकी अभिलाषा नाहीं, अर यह सिंहोदर तो मेरा स्वामी है तातैं याहि छोडो। ये वचन जब वज्रकरण कहे तब सबके मुखतैं धन्य धन्य यह ध्वनि होती भई। जो देखो यह ऐसा उत्तम पुरुष है द्वेष प्राप्ति भए भी पराया भला ही चाहै है। जे सज्जन पुरुष हैं ते दुर्जनहूका उपकार करैं। अर जे आपका उपकार करैं ताका तौ करैं ही करैं। लक्ष्मणने वज्रकर्णकूं कही जो तुम कहोगे सो ही होयगा। सिंहोदरको छोड़ा, अर वज्रकर्णका अर सिंहोदरका परस्पर हाथ पकडाया, परम मित्र किए, वज्रकर्णकूं सिंहोदरका आधा राज्य दिवाया। अर जो माल लूटा हुता सो हू दिवाया, अर देश धन सेनाका आधा आधा विभाग कर दिया। वज्रकर्णके प्रसाद करि विद्युदंग सेनापति भया अर वज्रकर्ण राम लक्ष्मणकी बहुत स्तुति करि अपनी आठ पुत्रीनिकी लक्ष्मणसों सगाई करी। कैसी हैं ते कन्या? महाविनयवंती, सुन्दर भेष, सुन्दर आभूषणकौं धरैं। अर राजा सिंहोदरकूं आदि देय राजानिकी परम कन्या तीनसौ लक्ष्मणकूं दई। सिंहोदर अर वज्रकर्ण लक्ष्मणसूं कहते भए—ये कन्या आप अंगीकार करहु, तब लक्ष्मण बोले—विवाह तो तब करूंगा जब अपने भुजा कर राज्य-स्थान जमाऊंगा। अर श्रीराम तिनसूं कहते भए—हमारे अबतक देश नाहीं है। तातैं राज भरतकूं दिया है। तातैं चन्दनगिरीके समीप तथा दक्षिणसमुद्रके समीप स्थानक करैंगे तब हमारी दोऊ मातानिकूं लेनेकूं मैं आऊंगा अथवा लक्ष्मण आवेगा। ता समय तिहारी पुत्रीनिकूं परणकर लेआवेगा। अब तक हमारे स्थानक नाहीं, कैसैं पाणिग्रहण करैं? जब या भांति कही, तब

वे सब राजकन्या ऐसी होय गईं जैसा जाड़े का मारया कमलनिका बन होय। तब मनमें विचारती भई–वह दिन कब होयगा जब हमकूं प्रीतमके संगम रूप रसायनकी प्राप्ति होयगी ? अर जो कदाचित प्राणनाथका विरह भया तो हम प्राण त्याग करेंगी। इन सबका मन विरहरूप अग्निकर जलता भया। यह बिचारती भईं एक ओर महा औंडागर्त अर एक ओर महाभयंकर सिंह, कहा करें ? कहां जावैं ? विरहरूप व्याघ्रकूं पतिके संगमकी आशातैं बशीभूत कर प्राणनिकूं राखेंगी, यह चितवन करती संती अपने पिताकी लार अपने स्थानक गईं। सिंहोदर बज्रकर्ण आदि सब ही नरपति, रघुपतिकी आज्ञा लेय घर गए। ते राजकन्या उत्तम चेष्टाकी धरणहारी माता पितादि कुटुम्बकरि अत्यन्त है सन्मान जिनका, अर पतिमें है चित्त जिनका, सो नाना विनोद करती पिताके घरमें तिष्ठती भईं। अर विद्युदगने अपने माता पिताकूं कुटुम्बसहित बहुत विभूतिसे बुलाया, तिनके मिलापका परम उत्सव किया अर वज्रकर्णके अर सिंहोदरके परस्पर अतिप्रीति बढ़ी। अर श्रीरामचन्द्र लक्ष्मण अर्ध रात्रिकूं चैत्यालयतैं चाले। धीरे २ अपनी इच्छा प्रमाण गमन करै हैं। अर प्रभात समय जे लोक चैत्यालयमें आए तो श्रीरामकूं न देख शून्यहृदय होय अति पश्चाताप करते भए।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रंथ, ताकी भाषावचनिकाविषै राम लक्ष्मण कृत वज्रकर्णका उपकार कथन वर्णन करनवालो तेतीसवां पर्व पूर्ण भया ॥ ३३ ॥

अथानन्तर राम लक्ष्मण जानकीकूं धीरे धीरे चलावते, अर रमणीक वनमें विश्राम लेते, अर महामिष्ट स्वादुफलका रसपान करते, क्रीड़ा करते, रसभरी बातैं करते, सुन्दर चेष्टाके धरणहारे, चले २ नलकूवर नामा नगर आए। कैसा है नगर ? नानाप्रकारके रत्ननिके जे मंदिर तिनके उत्तुंग शिखरनिकरि मनोहर, अर सुन्दर उपवनोंकरि मंडित, जिनमंदिरनिकरि शोभित, स्वर्गसमान निरंतर उत्सवका भरया लक्ष्मीका निवास है। सो श्रीराम, लक्ष्मण और सीता नलकूवर नामा नगरके परम

४३८

सुन्दर वनमें आय तिष्ठे। कैसा है वह वन? फल पुष्पनिकर शोभित, जहां भ्रमर गुंजार करें हैं अर कोयल बोले हैं। सो निकट सरोवरी तहां लक्ष्मण जलके निमित्त गए, सो ताही सरोवरीपर क्रीड़ाके निमित्त कल्याणमाला नामा राजपुत्री राजकुमारका भेष किए आई हुती। कैसा है राजकुमार? महा रूपवान, नेत्रनिकूं हरणहारा, सबकूं प्रिय, महा विनयवान, कांतिरूप निर्झरनिका पर्वत, श्रेष्ठ हाथीपर चढ्या, सुन्दर प्यादे लार, जो नगरका राज्य करै। सो सरोवरीके तीर लक्ष्मणकूं देख मोहित भया। कैसा है लक्ष्मण? नीलकमल समान श्याम सुन्दर लक्षणनिका धारक। राजकुमार एक मनुष्यकूं आज्ञा करी जो इनकूं ले आव। सो वह मनुष्य जायकर हाथ जोड़ नमस्कारकर कहता भया—हे धीर! यह राजपुत्र आपसूं मिल्या चाहै है सो पधारिए। तब लक्ष्मण राजकुमारके समीप गए। सो हाथीतैं उतरकर कमल तुल्य जे अपने कर तिनकर लक्ष्मणका हाथ पकड़ वस्त्रनिके डेरामें लेगया, एक आसनपर दोऊ बैठे। राजकुमार पूछता भया आप कौन हो, कहां तैं आए हो? तब लक्ष्मण कही मेरे बड़े भाई मो बिना एक क्षण न रहैं सो उनके निमित्त अन्न पान सामग्रीकर उनकी आज्ञा लेय तुमपर आऊंगा, तब सब बात कहूंगा। यह बात सुन राजकुमार कही—जो रसोई यहां ही तैयार भई है सो यहां ही तुम अर वे भोजन करोगे। तदि लक्ष्मणसे आज्ञा पाय सुन्दर भात दाल, नाना विधि व्यंजन, नवीन घृत कपूरादि सुगन्ध द्रव्यनिसहित दधि दुग्ध, अर नानाप्रकार पीनेकी वस्तु, मिश्री के स्वाद जामें ऐसे लाड़ू, अर पूरी सांकली इत्यादि नानाप्रकार भोजनकी सामग्री, अर वस्त्र आभूषण माला इत्यादि अनेक सुगन्ध नाना प्रकार तैयार किये। अर अपने निकटवर्ती जो द्वारपाल ताहि भेज्या। सो जायकर सीतासहित रामकूं प्रणाम कर कहता भया—हे देव! या वस्त्र भवनके विषैं तिहारा भाई तिष्ठै है, अर या नगरके नाथने बहुत आदरतैं विनती करी है,—वहां छाया शीतल है अर स्थान मनोहर, सो आप कृपाकर पधारो तो मार्गका खेद निवृत्त होय। तब राम सीतासहित पधारे जैसैं चांदनीसहित चांद उद्योत करै। कैसे हैं राम? माते हाथी समान है चाल जिनकी। लक्ष्मण

सहित नगरका राजा दूर होतैं देख उठकर सामने आया। सीतासहित राम सिंहासनपर विराजे, राजाने आरती उतार कर अर्घ दिए, अति सन्मान किया, आप प्रसन्न होय स्नानकर भोजन किया, सुगन्ध लगाई। बहुरि राजा सबनिकूं सीखदेय विदा किये। ए चार ही रहे—एक राजा तीन ए। राजा सबनिकूं कह्या—जो मेरे पिताके पासतैं इनके हाथ समाचार आए हैं सो एकांतकी वार्ता है, कोई आवने न पावे। जो आवेगा ताही मैं मारूंगा। बड़े २ सामंत द्वारे रखे। एकांतविषै इनके आगैं लज्जा तज कन्या जो राजाका भेष धारे हुती सो तज अपना स्त्रीपदका रूप प्रकट दिखाया। कैसी है कन्या? लज्जाकर नम्रीभूत है मुख जाका, अर रूपकर मानो स्वर्गकी देवांगना है, अथवा नागकुमारी है। ताकी कांतिकरि समस्त मन्दिर प्रकाशरूप होयगया, मानो चन्द्रमाका उदय भया। चंद्रमा किरणोंकरि मंडित है, याका मुख लज्जा अर मुलकनकर मंडित है। मानों यह राजकन्या साक्षात् लक्ष्मी ही है, कमलनिके वनतैं आय तिष्ठी है। अपनी लावण्यता रूप सागरविषै मानों मंदिरकूं गर्क किया है। जाकी द्युति आगैं रत्न अर कंचन द्युतिरहित भासै हैं। जाके स्तन युगलसे कांतिरूप जलकी तरंगनि समान त्रिवली शोभै है। अर जैसैं मेघपटलकूं भेद निशाकर निकसै तैसैं वस्त्रकूं भेद अंगकी ज्योति फैल रही है। अर अत्यन्त चिकने सुगन्ध कारे वांके पतले लम्बे केश, तिनकरि विराजित है प्रभारूप वदन जाका, मानो कारी घटामें बिजुरीके समान चमकै है। अर महासूक्ष्म स्निग्ध जो रोमनिकी पंक्ति ताकर विराजित मानों नीलमणिकरि मंडित सुवर्णकीमूर्ति ही है। तत्काल नररूप तज, नारीका रूपकर, मनोहर नेत्रनिकी धरनहारी सीताके पायन लाग समीप जाय बैठी, जैसैं लक्ष्मी रतिके निकट जाय बैठै। सो याका रूप देख लक्ष्मण कामकर बींधा गया, और ही अवस्था होय गई, नेत्र चलायमान भए। तब श्रीरामचन्द्र कन्यातैं पूछते भए, कौनकी पुत्री है अर पुरुषका भेष कौन कारण किया? तब वह महामिष्टवादिनी अपना अंग वस्त्रतैं ढांक कहती भई—हे देव! मेरा वृत्तांत सुनहु। या नगरका राजा बालखिल्य, महा सुबुद्धि, सदा आचारवान, श्रावकके व्रतधारक, महा दयालु, जिनधर्मियोंपर वात्सल्य अंगका धारणहारा। ४४०

राजा के पृथ्वी रानी, ताहि गर्भ रह्या, सो मैं गर्भविषै आई। अर म्लेच्छनिका जो अधिपति तासूं संग्राम भया। मेरा पिता पकड्या गया। सो मेरा पिता सिंहोदरका सेवक सो सिंहोदरनें यह आज्ञा करी जो बालयखिल्यके पुत्र होय सो राज्य का कर्त्ता होय, सो मैं पापिनी पुत्री भई। तब हमारे मंत्री सुबुद्धि तानै मनसूबाकर राज्यके अर्थ मोहि पुत्र ठहराया। सिंहोदरकूं वीनती लिखी, कल्याणमाला मेरा नाम धरया अर बड़ा उत्सव किया। सो मेरी माता अर मंत्री ये तो जानैं हैं जो यह कन्या है और सब कुमार ही जानें हैं। सो एते दिन मैं व्यतीत किए। अब पुण्यके प्रभावतैं आपका दर्शन भया। मेरा पिता बहुत दुःखसूं तिष्ठै है म्लेच्छनिकी बंदीमें है। सिंहोदर ताहि छुडायवे समर्थ नाहीं। अर जो द्रव्य देशविषै उपजै है सो सब म्लेच्छनिके जाय है। मेरी माता वियोगरूप अग्निकर तप्तायमान जैसैं दूजके चन्द्रमाकी मूर्ति क्षीण होय तैसी होय गई है। ऐसा कहकर दुखके भारकर पीडित है समस्त अंग जाका सो मूर्छा खाय गई अर रुदन करती भई। तदि श्रीरामचन्द्रने अत्यन्त मधुर वचन कह कर धीर्य बंधाया, सीता गोदमें लेय बैठी, मुख धोया। अर लक्ष्मण कहते भए—हे सुन्दरी ! सोच तज, अर पुरुषका भेषकरि राज्य करि, कईएक दिननिमें म्लेच्छनिकूं पकड कर अपने पिताकूं छूटया ही जान। ऐसा कहकर परम हर्ष उपजाया सो इनके वचन सुनकर कन्या पिताकूं छूटया ही जानती भई। श्रीराम लक्ष्मण देवनकी नाईं तीन दिन यहां बहुत आदरतैं रहे। बहुरि रात्रिमें सीतासहित उपवनतैं निकसकर गोप चले गए। प्रभात समय कन्या जागी तिनकूं न देख व्याकुल भई, अर कहती भई—वे महापुरुष मेरा मन हर ले गए, मो पापिनीकूं नींद आगई सो गोप चले गए। या भांति विलाप कर मनको थांभ हाथी पर चढ़ पुरुषके भेष नगरविषै गई। अर राम लक्ष्मण कल्याणमालाके विनयकर हरया गया है चित्त जिनका, अनुक्रमतैं मेकला नामा नदी पहुँचे। नदी उतर क्रीडा करते अनेक देशनिकूं उल्लंघि विन्ध्याटवीकूं प्राप्त भए। पंथमें जाते संते गुवालनिने मनैं किए कि यह अटवी भयानक है तिहारे जाने योग्य नाहीं। तब आप तिनकी बात न मानी, चले गए। कैसी है वनी ? कहीं एक

४४१

लताकर मंडित जे शालवृक्षादिक तिनकरि शोभित हैं। अर नानाप्रकारके सुगन्ध वृक्षनिकर भरी महा सुगन्धरूप है, अर कहीं एक दावानलकर जले वृक्ष, तिनकर शोभारहित है, जैसैं कुपुत्र कलंकित गोत्र न शोभै।

अथानन्तर सीता कहती भई—कंटकवृक्षके ऊपर बाईं ओर काग बैठ्या है सो यह तो कलहकी सूचना करै है। अर दूसरा एक काग क्षीरवृक्षपर बैठा है सो जीत दिखावै है। तातैं एक मुहूर्त थिरता करहु। या मुहूर्तविषै चालें आगे कलहके अंत जीत है, मेरे चित्तमें ऐसा भासै है। तब क्षणएक दोऊ भाई थम्भे बहुरि चाले। आगे म्लेच्छनिकी सेना दृष्टि पड़ी। ते दोऊ भाई निर्भय धनुषबाण धारे म्लेच्छनिकी सेनापर पड़े, सो सेना नाना दिशानिकूं भाग गई। तदि अपनी सेनाका भंग देखि और म्लेच्छनिकी सेना शस्त्र धरैं, बहुत म्लेच्छ बक्तर पहिरैं आए। सो ते भी लीलामात्रमें जीते। तब वे सब म्लेच्छ धनुष बाण डार पुकार करते पतिपै जाय सब वृत्तांत कहते भए। तब वे सब म्लेच्छ परम क्रोधकर धनुष बाण लीए महा निर्दई बड़ी सेनासूं आए। शस्त्रनिके समूहकरि संयुक्त वे काकोदन-जातिके म्लेच्छ, पृथ्वीविषै प्रसिद्ध, सर्व मांसके भक्षी, राजानहूकरि दुर्जय, ते कारी घटासमान उमडि आए। तदि लक्ष्मणने क्रोधकर धनुष चढ़ाया, तब वन कम्पायमान भया, वनके जीव कांपने लग लए। तब लक्ष्मणने धनुषके शर बांधा तब सब म्लेच्छ डरे, वनमें दशों दिश आंधेकी न्याई भटकते भए। तब महा भयंकर पूर्ण म्लेच्छनिका अधिपति रथसे उतर हाथ जोड़ प्रणामकर पांयन परया अर अपना सर्व वृत्तांत दोऊ भाइनसूं कहता भया। हे प्रभो! कौशांबी नाम नगरी है। तहां एक विश्वानल नामा ब्राह्मण अग्निहोत्री, ताके प्रतिसंध्यानाम स्त्री, तिनके रौद्रभूतनामा पुत्र! सो द्यूत कलामें प्रवीण, बाल अवस्थाहीतैं क्रूरकर्मका करणहारा। सो एक दिन चोरीतैं पकड्या गया अर सूली देवेकूं उद्यमी भए। तदि एक दयावंत पुरुषने छुडाया सो मैं कांपता देश तज यहां आया। कर्मानुयोगकर काकोदन जातिके म्लेच्छनिका अधिपति भया। महाभ्रष्ट, पशुसमान व्रत क्रिया रहित तिष्ठूं हूं। अब तक महा

सेनाके अधिपति बड़े बड़े राजा मेरे सम्मुख युद्ध करवेकू' समर्थ न भए, मेरी दृष्टिगोचर न आए, सो मैं आपके दर्शनमात्रहोतैं वशीभूत भया । धन्य भाग्य मेरे जो मैंने तुम पुरुषोत्तम देखे। अब मोहि जो आज्ञा देहु सो करू' । आपका किंकर, आपके चरणारविंदको चाकरी सिरपर धरू' हूं । अर वह विध्याचल पर्वत अर या स्थानक निधिकर पूर्ण है । बहुत धनकर पूर्ण युक्त है । आप यहां राज्य करहु । मैं तिहारा दास । ऐसा कहकर म्लेच्छ मूर्छा खायकर पायन परचा, जैसैं वृक्ष निर्मूल होय गिर पड़े । ताहि विह्वल देख श्री रामचन्द्र दयारूप बलकर वेढ़े कल्पवृक्ष समान कहते भए, उठ उठ, डरै मत । बालखिल्यकूं छोड़, तत्काल यहां मंगाओ, अर ताका आज्ञाकारी मंत्री होय कर रह । म्लेच्छनिकी क्रिया तज, पापकर्मतैं निवृत्त हो, देशकी रक्षा कर । या भांति किये तेरी कुशल है । तब याने कही—हे प्रभो ! ऐसा ही करूंगा। यह वीनती कर आप गया अर महारथका पुत्र जो बालखिल्य ताहि छोड्या । बहुत विनयसंयुक्त ताके तैलादि मर्दन कर, स्नान भोजन कराय, आभूषण पहिराय, रथविषै चढ़ाय, श्रीरामचन्द्रके समीप ले जानेकू' उद्यमी किया । तदि बालखिल्य परम आश्चर्यकू' प्राप्त होय विचारता भया—कहां यह म्लेच्छ महाशत्रु कुकर्मी, अत्यन्त निर्दयी ? अर मेरा एता विनय करै है सो जानिये है जो आज मोहि काहूकी भेंट देगा । अब मेरा जीवन नाहीं, यह विचार सो बालखिल्य सचित चाल्या । आगैं राम लक्ष्मणको देख परम हर्षित भया । रथतैं उतर आय नमस्कार किया अर कहता भया, हे नाथ ! मेरे पुण्यके योगतैं आप पधारे मोहि बंधनतैं छुड़ाया । आप महासुन्दर इन्द्र तुल्य मनुष्य हो, पुरुषोत्तम पुरुष हो । तब राम ने आज्ञा करी तू अपने स्थानक जाहु, कुटुम्बतैं मिलहु । तब बालखिल्य रामकू' प्रणामकरि रौद्रभूत सहित अपने नगर गया । श्रीराम बालखिल्यकू' छुडाय रौद्रभूतकू' दासकरि वहांते चाले । बालखिल्य कू' आया सुनकर कल्याणमाला महा विभूति सहित सन्मुख आई । अर नगरमें महा उत्सव भया । राजा राजकुमारको उरसे लगाय अपनी असवारीमें चढ़ाय नगरविषै प्रवेश किया । राणी पृथ्वीके हर्षसे रोमांच होय आए । जैसा आगे शरीर सुन्दर हुता तैसा पतिके आए भया । सिंहोदरकू' आदि

देय बालखिल्यके हितकारी सब ही प्रसन्न भए । अर कल्याणमाला पुत्रीने एते दिवस पुरुषका भेष कर
राज थाम्या हुता सो या बातका सबकू आश्चर्य भया । यह कथा राजा श्रेणिकसूं गौतमस्वामी
कहे हैं—हे नराधिप ! वह रौद्रभूत परद्रव्यका हरणहारा, अनेक देशनिका कंटक सो श्रीरामके प्रतापतैं
बालखिल्यका आज्ञाकारी सेवक भया । जब रौद्रभूत वशीभूत भया अर म्लेच्छनिकी विषम भूमिमें
बालखिल्यकी आज्ञा प्रवर्ती, तब सिंहोदर भी शंका मानता भया । अर स्नेह सहित सन्मान करता
भया । बालखिल्य रघुपतिके प्रसादतैं परम विभूति पाय जैसा शरद ऋतुमें सूर्य प्रकाश करै तैसा पृथ्वी-
विषै प्रकाश करता भया । अपनी राणी सहित देवनिकी न्याईं रमता भया ।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महा पद्मपुराण संस्कृतग्रन्थ, ताकी भाषा वचनिकाविषै म्लेच्छनिके राजा रौद्रभूतिका वर्णन करनेवाला
चौतीसवां पर्व पूर्ण भया ॥ ३४ ॥

अथानन्तर राम लक्ष्मण देवनि सारिखे मनोहर, नन्दनवन सारिखा वन, ताविषै सुखसे विहार
करते एक मनोग्य देशविषै आय निकसे । जाके मध्य तापी नदी बहै । नानाप्रकारके पक्षिनिके शब्द
करि सुन्दर तहां एक निर्जन वनमें सीता तृषाकर अत्यन्त खेदखिन्न भई । तब पतिकूं कहती भई—हे
नाथ ! तृषासे मेरा कंठ सूखै है । जैसे अनन्त भवके भ्रमणकर खेदखिन्न हुआ भव्यजीव सम्यक्दर्शनकूं
बांछै तैसे मैं तृषासे व्याकुल शीतल जलकूं बांछूं हूं । ऐसा कहिकर एक वृक्षके नीचे बैठ गई । तब
रामने कही—हे देवी ! हे शुभे ! तू विषादकूं मत प्राप्त होउ, नजीक ही यह आगे ग्राम है, तहां सुन्दर
मंदिर है, उठ, आगे चल । या ग्राममें तोहि शीतल जलकी प्राप्ति होयगी । ऐसा जब कह्या तब उठ
कर सीता चली, मंद मंद गमन करती गजगामिनी । ता सहित दोऊ भाई अरुणनामा ग्राममें आए ।
महा धनवान किसान रहैं, जहां एक ब्राह्मण अग्निहोत्री कपिलनामा प्रसिद्ध, ताके घरमें आय उतरे ।
ताकी अग्निहोत्रीकी शालामें क्षण एक बैठ खेद निवारया । कपिलकी ब्राह्मणी जल लाई सो सीता

पिया। तहां विराजे। अर वनतैं ब्राह्मण बील तथा छीला वा खेजड़ा इत्यादि काष्ठका भार बांधे
आया। दावानल समान प्रज्वलित जाका मन, महाक्रोधी, कालकूट विषसमान वचन बोलता भया।
उल्लू समान है मुख जाका अर करमें कमण्डलु, चोटीमें गांठ दिए लांबी डाढी, यज्ञोपवीत पहिरे,
उञ्छवृत्ति कहिए अन्नको काटकर ले गये पीछे खेतनतैं अन्न कण बीन लावे। या भांति है आजीविका
जाकी। सो इनकूं बैठा देख वक्र मुखकर ब्राह्मणीकूं दुर्वचन कहता भया—हे पापिनी! इनकूं घरमें
काहे प्रवेश दिया, मैं आज तोहि गायनिके मठनमें बांधूगा। देख! इन निर्लज्ज ढीठ पुरुष धूरकर धूसरोंने
मेरा अग्निहोत्रका स्थान मलिन किया। यह वचन सुन सीता रामतैं कहती भई, हे प्रभो! या क्रोधीके
घरमें न रहना, वनमें चलिए, जहां नानाप्रकारके पुष्प फल तिनकर मंडित वृक्ष शोभैं हैं। निर्मल जलके
भरे सरोवर हैं, तिनमें कमल फूल रहे हैं, अर मृग अपनी इच्छासे क्रीडा करते हैं। यहां ऐसे दुष्ट पुरुषनि
के कठोर वचन सुनिए हैं। यद्यपि यह देश धनसे पूर्ण है अर स्वर्ग सारिखा सुन्दर है, परन्तु लोग
महाकठोर हैं, अर ग्रामीजन विशेष कठोर ही होय हैं। सो विप्रके रूखे वचन सुन ग्रामके सकल लोक
आए, इन दोऊ भाइनिका देवनिसमान रूप देख मोहित भए। ब्राह्मणकूं एकांतमें ले जाय लोक सम-
झावते भये। ये एक रात्रि यहां रहे हैं तेरा कहा उजाड है? ये गुणवान, विनयवान, रूपवान, पुरुषोत्तम
हैं। तब द्विज सबसे लड्या, अर सबसे कह्या—तुम मेरे घर काहे आये, परे जाहु। अर मूर्ख इनपर
क्रोधकर आया जैसे श्वान गजपर आवै। इनकूं कहता भया—रे अपवित्र हो—मेरे घरतैं निकसो।
इत्यादि कुवचन सुन लक्ष्मण कोप भए। ता दुर्जनके पांव ऊंचेकर नाडि नीचेकर भ्रमाया, भूमिपर
पछाड़ने लगा। तब श्रीराम परमदयालु ताहि मने किया, हे भाई! यह कहा? ऐसे दीनके मारवेकरि
कहा? याहि छोड़ देहु, याके मारनेतैं बड़ा अपयश है। जिनशासनमें शूरवीरकूं ऐसे न मारने—यति,
ब्राह्मण, गाय, पशु, स्त्री, बालक, वृद्ध ये दोष संयुक्त होय तो भी हनने योग्य नाहीं। या भांति
भाईकूं समझाया, विप्र छुडाया अर आप लक्ष्मणकूं आगेकरि सीतासहित कुटीतैं निकसे। आप जानकी

से कहै है—हे प्रिये ! धिक्कार है नीचकी संगतिकूं, जिसकर क्रूरवचन सुनियेंसो मनमें विकारका कारण है, अतः महापुरुषनिकरि त्याज्य है। महाविषम वनमें वृक्षनिके नीचे वास भला, न नीचनिके साथ। अर आहारादिक विना प्राण जावें तो भले, परन्तु दुर्जनके घर क्षण एक रहना योग्य नाहीं। नदिनिके तटविषैं पर्वतनिकी कंदरानिविषैं रहेंगे। बहुरि ऐसे दुष्टके घर न आवेंगे। या भांति दुष्टके संगकूं निंदते ग्राम से निकसे। राम बनकूं गये, वहां वर्षा समय आय प्राप्त भया। समस्त आकाशको श्याम करता हुवा अर अपनी गर्जना कर शब्दरूप करी है पर्वतकी गुफा जानैं, ग्रह नक्षत्र तारानि समूहको ढांककर शब्दसहित बिजुरीके उद्योतकर मानों अम्बर हंसे है। मेघ पटल ग्रीष्मके तापकूं निवारकर पंथिनिको बिजुरीरूप अंगुरिनिकरि डरावता संता गाजै है। श्याम मेघ आकाशमें अंधकार करता संता जलकी धाराकर मानों सीताकूं स्नान करावै है। जैसें गज लक्ष्मीकूं स्नान करावै। ते दोऊ वीर वनमें एक बड़ा वटका वृक्ष, ताके डाहला घरके समान, तहां विराजे। सो एक इभकर्ण नामा यक्ष उस वटमें रहता हुता सो इनको महा तेजस्वी जानकर अपने स्वामीकूं नमस्कारकर कहता भया—हे नाथ ! कोई स्वर्गतैं आए हैं, मेरे स्थानकविषैं तिष्ठै हैं। जिनने अपने तेजकर मोहि स्थानतैं दूर किया है, वहां मैं जाय न सकूं हूं। तब यक्षके वचन सुनकर यक्षाधिपति अपने देवनिसहित वटका वृक्ष जहां राम लक्ष्मण हुते तहां आया, महाविभवसंयुक्त वनक्रीडाविषैं आसक्त, नूतन है नाम जाका। दूरही तैं दोऊ भाइनिकूं महा रूपवान देख अवधिकरि जानता भया—जो ये बलभद्र नारायण हैं। तब वह इनके प्रभावकर अत्यन्त वात्सल्यरूप भया। क्षणमात्रमें महामनोग्य नगरी निरमापी तहां सुखसूं सोते हुए प्रभात सुन्दर गीतोंके शब्दनिकर जागे। रत्नजडित सेजपर आपकूं देख्या अर मंदिर महामनोहर, बहुत खण का, अति उज्ज्वल, अर सम्पूर्ण सामग्राकर पूर्ण। अर सेवक सुन्दर बहुत आदरके करनहारे। नगरमें रमणीक शब्द, कोट दरवाजेनिकर शोभायमान, ते पुरुषोत्तम महानुभाव, तिनका चित्त ऐसे नगरकूं तत्काल देख आश्चर्यकूं न प्राप्त भया। वह क्षुद्र पुरुषनिकी चेष्टा है जो अपूर्व वस्तु देख आश्चर्यको

प्राप्त होय। समस्त वस्तु कर मंडित यह नगर, तहां वे सुन्दर चेष्टाके धारक निवास करते भए, मानों ये देव ही हैं। यक्षाधिपतिने रामके अर्थ नगरी रची। तातैं पृथ्वीपर रामपुरी कहाई। ता नगरी विषैं सुभट मंत्री द्वारपाल नगरके लोग अयोध्या समान होते भए। राजा श्रेणिक गौतमस्वामीको पूछै है—हे प्रभो! ये तो देवकृत नगरविषैं विराजे अर ब्राह्मणकी कहा बात? सो कहो। तब गणधर बोले—वह ब्राह्मण अन्ध बिन दांतला हाथमें लेय वनमें गया, लकड़ी ढूंढते अकस्मात् ऊंचे नेत्र किये। निकट ही सुन्दर नगर देखकर आश्चर्यकूं प्राप्त भया। नानाप्रकारके रंगकी ध्वजा, उन कर शोभित शरदके मेघ समान सुन्दर महिल देखे। अर एक राजमहिल महाउज्ज्वल, मानो कैलाशका बालक है सो ऐसा देखकर मनमें विचारता भया—जो यह अटवी मृगनितैं भरी जहां मैं लकड़ी लेने निरंतर आवता हुता, सो यहां रत्नाचल समान सुन्दर मंदिरनितैं संयुक्त नगरी कहांसूं बसी? सरोवर जलके भरे कमलनिकरि शोभित दीखे हैं जो मैं अब तक कभी न देखे। उद्यान महामनोहर, जहां चतुर जन क्रीड़ा करते दीखे हैं, अर देवालय महाध्वजानिकर संयुक्त शोभै हैं, अर हाथी, घोड़े, गाय, भैंस तिनके समूह दृष्टि आवै हैं। घंटादिकके शब्द होय रहे हैं। यह नगरी स्वर्गतैं आई है अथवा पातालतैं निसरी है, कोऊ महाभाग्यके निमित्त। यह स्वप्न है अक प्रत्यक्ष है, अक देवमाया है, अक गन्धर्वनिका नगर है, अक मैं पित्तकर व्याकुल भया हूं, याके निकटवर्ती जो मैं सो मेरे मृत्युका चिह्न दीखे है। ऐसा विचार कर विप्र विषादकूं प्राप्त भया। सो एक स्त्री नानाप्रकारके आभरण पहरे देखी। ताके निकट जाय पूछता भया। हे भद्रे! यह कौनकी पुरी है? तब वह कहती भई यह रामकी पुरी है तूने कहा न सुनी? जहां राम राजा जाके लक्ष्मण भाई, सीता स्त्री। अर नगरके मध्य यह बड़ा मंदिर है शरद के मेघ समान उज्ज्वल, जहां वह पुरुषोत्तम विराजे है, कैसा है पुरुषोत्तम? लोकनिविषें दुर्लभ है दर्शन जाका। सो ताने मनवांछित द्रव्यके दानकरि सब दरिद्री लोक राजानि समान किये। तब ब्राह्मण बोला—हे सुन्दरी! कौन उपाय कर याहि देखूं सो तू कह। ऐसे काष्ठका भार डारकर हाथ जोड़ ताकैं

पांथन परघा। तब वह सुमाया नामा यक्षिनी कृपाकर कहती भई, हे विप्र ! या नगरीके तीन द्वार हैं, जहां देव हू प्रवेश न कर सकैं, बड़े-बड़े योधा रक्षक बैठे हैं, रात्रिमैं जागै हैं, जिनके मुख सिंह गज, व्याघ्र तुल्य हैं, तिनकरि भयकू मनुष्य प्राप्त होय हैं। यह पूर्व द्वार है जाके निकट बड़े बड़े भगवानके मंदिर हैं, मणिके तोरणकरि मनोग्य। तिनमें इन्द्र कर वंदनीक अरहंतके बिंब विराजे हैं। अर जहां भव्यजीव सामायिक आदि स्तवन करै हैं। अर जो नमोकारमंत्र भाव सहित पढ़े हैं सो माहिं प्रवेश कर सकै हैं। जो पुरुष अणुव्रतका धारी गुणशीलकरि शोभित है ताको राम परम प्रीतिकर वांछै हैं। यह वचन यक्षिनीके अमृत समान सुनकर ब्राह्मण परम हर्षकू प्राप्त भया। धन आगमन का उपाय पाय, यक्षनीकी बहुत स्तुति करी। रोमांच कर मंडित भया है सर्व अंग जाका। सो चारित्र-शूर नामा मुनिके निकट जाय हाथ जोड़ नमस्कार कर श्रावककी क्रियाका भेद पूछता भया। तदि मुनिने श्रावकका धर्म याहि सुनाया चारों अनुयोगका रहस्य बताया। सो ब्राह्मण धर्मका रहस्य जान मुनिकी स्तुति करता भया—हे नाथ ! तिहारे उपदेशकरि मेरे ज्ञानदृष्टि भई, जैसैं तृषावानकू शीतल जल, अर ग्रीष्मके तापकर तप्तायमान पंथीकू छाया, अर क्षुधावानकू मिष्टान्न, अर रोगीकू औषधि मिलै, तैसैं कुमार्गमें प्रतिपन्न जो मैं सो मोहि तिहारा उपदेश रसायन मिल्या, जैसैं समुद्रविषै डूबतेकू जहाज मिलै। मैं यह जैनका मार्ग सर्व दुःखनिका दूर करणहारा तिहारे प्रसादकरि पाया, जो अविवेकीनिकू दुर्लभ है। तीनलोकमें मेरे तुम समान कोऊ हित नाहीं जिनकर ऐसा जिनधर्म पाया। ऐसा कहकर मुनिके चरणारविंदकू नमस्कार कर ब्राह्मण अपने घर गया। अति हर्षित, फूल रहे हैं नेत्र जाके, स्त्रीसू कहता भया, हे प्रिये ! मैंने आज गुरुके निकट अद्भुत जिनधर्म सुन्या है, जो तेरे बापने अथवा मेरे बापने अथवा पिताके पिताने भी न सुन्या। अर हे ब्राह्मणी ! मैंने एक अद्भुत वन देख्या तामें एक महामनोग्य नगरी देखी, जाहि देख अचरज उपजै, परन्तु मेरे गुरुके उपदेशकरि अचरज नाहिं उपजै है। तब ब्राह्मणी कही, हे विप्र ! तैं कहां देख्या अर कहा २ सुन्या सो कहहु। तब

ब्राह्मण कही–हे प्रिये ! मैं हर्ष थकी कहने समर्थ नाहीं, तब बहुत आदर कर ब्राह्मणी बारम्बार पूछ्या । तब ब्राह्मण कही–हे प्रिये ! मैं काष्ठके अर्थ वनविषैं गया हुता । सो वनविषैं एक महा रमणीक रामपुरी देखी । ता नगरीके समीप उद्यानविषैं एक नारी सुन्दर देखी। सो वह कोई देवता होयगी महा मिष्टवादिनी । मैंने पूछ्या या नगरी कौनकी है, तब वाने कही यह रामपुरी है, जहां राम श्रावकनिकूं मनवांछित धन देवैं हैं । तब मैं मुनिपै जाय जैनवचन सुने सो मेरा आत्मा बहुत तृप्त भया, मिथ्यादृष्टि कर मेरा आत्मा आताप युक्त हुता सो आताप गया । जिनधर्मकूं पायकर मुनिराज मुक्ति के अभिलाषी सर्व परिग्रह तज महा तप करे। सो वह अरहंतका धर्म त्रैलोक्यविषैं एक महानिधि मैं पाया। ये बहिर्मुख जीव वृथा क्लेश करें हैं । मुनि थकी जैसा जिनधर्मका स्वरूप सुन्या हुता तैसा ब्राह्मणीकूं कहा । कैसा है जिनधर्मका स्वरूप ? उज्ज्वल है । अर कैसा है ब्राह्मण ? निर्मल है चित्त जाका । तब ब्राह्मणी सुनकर कहती भई मैं भी तिहारे प्रसादकरि जिनधर्मकी रुचि पाई । अर जैसे कोई विष फल का अर्थी महानिधि पावै, तैसें ही तुम काष्ठादिकके अर्थी धर्म इच्छातैं रहित श्रीअरहंतका धर्म रसायन पाया, अबतक तुमने धर्म न जान्या । अपने आंगनविषैं आए सत्पुरुष तिनका निरादर किया, उपवासादिकरि खेदखिन्न दिगम्बर तिनकूं कबहु आहार न दिया, इन्द्रादिक कर वंदनीक जे अरहंत देव तिनकूं तज कर ज्योतिषी व्यंतरादिककूं प्रणाम किया, जीवदयारूप जिनधर्म अमृत तज अज्ञानके योगतैं पापरूप विषका सेवन किया । मनुष्य देहरूप रत्नदीप पाय, साधुनिकरि परखा धर्मरूप रत्न तज, विषयरूप कांच का खंड अंगीकार किया । जे सर्वभक्षी दिवस रात्रि आहारी, अव्रती, कुशीली तिनकी सेवा करी । भोजन के समय अतिथि आवै अर जो निर्बुद्धि अपने विभवप्रमाण अन्नपानादि न दे ताके धर्म नाहीं । अतिथि पदका अर्थ–तिथि कहिये उत्सवके दिन तिनविषैं उत्सव तज जाके तिथि कहिये विचार नाहीं, अर सर्वथा निस्पृह धनरहित साधु सो अतिथि कहिये, जिनके भाजन नाहीं, कर ही पात्र हैं वे निर्ग्रंथ आप तिरैं औरनिकूं तारैं, अपने शरीरमें हू निस्पृह काहू वस्तुविषैं जिनका लोभ नाहीं । ते निरपरिग्रही मुक्तिके कारण

४४९

जे दशलक्षण तिनकर शोभित हैं। या भांति ब्राह्मणने ब्राह्मणीकूं धर्मका स्वरूप कह्या। अर सुशर्मा नामा ब्राह्मणी मिथ्यात्वरहित होती भई। जैसें चन्द्रमाके रोहिणी शोभै, अर बुधके भरणी सोहै तैसें कपिलके सुशर्मा शोभती भई। ब्राह्मण ब्राह्मणीकूं वाही गुरुके निकट ले गया, जाके निकट आप व्रत लिये हुते। सो स्त्रीको हू श्रावकके व्रत दिवाये। कपिलकूं जिनधर्मविषैं अनुरागी जान और हू अनेक ब्राह्मण समभाव धारते भए। मुनिसुव्रतनाथका मत पायकर अनेक सुबुद्धि श्रावक श्राविका भए। अर जे कर्मनिके भारकर संयुक्त, मानकर ऊंचा है मस्तक जिनका, वे प्रमादी जीव थोड़े ही आयुविषै पापकर घोर नरकविषैं जाय हैं। कईएक उत्तम ब्राह्मण सर्वसंगका परित्यागकर मुनि भए। वैराग्यकर पूर्ण, मनविषै ऐसा विचार किया—यह जिनेन्द्रका मार्ग अबतक अन्य जन्ममें न पाया, महा निर्मल अब पाया, ध्यानरूप अग्निविषैं कर्मरूप सामग्री भाव घृतसहित होम करेंगे। सो जिनके परम वैराग्य उदय भया ते मुनि ही भए। अर कपिल ब्राह्मण महा क्रियावान श्रावक भया। एक दिवस ब्राह्मणीकूं धर्मकी अभिलाषिनी जान कहता भया—हे प्रिये! श्रीरामके देखवेकूं रामपुरी क्यों न चालैं? कैसे हैं राम? महापराक्रमी, निर्मल है चेष्टा जिनकी, अर कमल सरीखे हैं नेत्र जिनके, सर्व जीवनिके दयालु, भव्य जीवनिपर है वात्सल्य जिनका। जे प्राणी आशामें तत्पर, नित्य, उपायविषैं है मन जिनका, दलिद्रीरूप समुद्रमें मग्न, उदर पूर्णविषै असमर्थ, तिनकूं दरिद्ररूप समुद्रतें पार उतार परमसम्पदाकूं प्राप्त करै है। या भांति कीर्ति जिनकी पृथ्वीविषैं फैल रही है, महाआनन्दकी करण-हारी, तातैं हे प्रिय! उठ, भेट लेकर चालैं। अर मैं सुकुमार बालककूं कांधे लूंगा। ऐसे ब्राह्मणीकूं कह, तैसे ही कर, दोऊ हर्षके भरे उज्ज्वल भेषकर शोभित रामपुरीकूं चाले। सो उनकूं मार्गविषैं भयानक नागकुमार दृष्टि आए, बहुरि विंतर विकराल वदन हाडहडास करते दृष्टि आए। इत्यादि भयानक रूप देख ये दोऊ निकम्प हृदय होयकर या भांति भगवानकी स्तुति करते भए, श्रीजिनेश्वर तांई निरन्तर मन वचन कायकर नमस्कार होहु। कैसे हैं जिनेश्वर? त्रैलोक्यकर वंदनीक हैं, संसार

कीचसे पार उतारै हैं, परम कल्याणके देनहारे हैं। यह स्तुति पढते ये दोऊ चले जावैं हैं। इनकूं जिन भक्त जान यक्ष शांत होय गए। ये दोऊ जिनालयमें गए, नमस्कार होहु—जिनमंदिरकूं ऐसा कह दोऊ हाथ जोड़ अर चैत्यालयकी प्रदक्षिणा दई, अर माहीं जाय स्तोत्र पढ़ते भए—हे नाथ! महाकुगतिका दाता मिथ्यामार्ग ताहि तजकर बहुत दिनमें तिहारा शरण गहा। चौबीस तीर्थंकर अतीत कालके अर चौबीस वर्तमान कालके अर चौबीस अनागत कालके तिनकूं मैं वंदूं हूं। अर पंचभरत, पंच-ऐरावत, पंचविदेह ये पन्द्रह कर्मभूमि तिनविषैं जे तीर्थंकर भए, अर वर्ते हैं, अर अब होवेंगे, तिन सबनिकूं हमारा नमस्कार होहु। जो संसार समुद्रसूं तिरैं अर औरनकूं तारैं ऐसे श्रीमुनिसुव्रतनाथके तांई नमस्कार होहु। तीन लोकमैं जिनका यश प्रकाश करै है। या भांति स्तुतिकर अष्टांग दण्डवतकरि ब्राह्मण स्त्रीसहित श्रीरामके अवलोकनकूं गए। मार्गमें बड़े बड़े मन्दिर महाउद्योतरूप ब्राह्मणीकूं दिखाए अर कहता भया—ये कुन्दके पुष्प समान उज्ज्वल सर्व कामना पूर्ण नगरीके मध्य रामके मंदिर हैं, जिनकरि यह नगरी स्वर्गसमान शोभै है। या भांति वार्ता करता ब्राह्मण राजमंदिरविषै गया। सो दूर हीतैं लक्ष्मणकूं देख व्याकुलताकूं प्राप्त भया। चित्तमें चितारे है—वह श्याम सुन्दर नीलकमल समान प्रभा जाकी, मैं अज्ञानी दुष्ट वचननि करि दुखाया सो मोहि त्रास दीनी। पापिनी जिह्वा, महादुष्टिनी काननकूं कटुक वचन भाखे, अब कहा करूं? कहां जाऊं? पृथ्वीके छिद्रमें बैठूं, अब मोहि शरण कौन का? जो मैं यह जानता अक ये यहां ही नगरी बसाए रहे हैं तो मैं देश त्यागकर उत्तर दिशाकूं चला जाता। या भांति विकल्परूप होय ब्राह्मणीकूं तज ब्राह्मण भागा। सो लक्ष्मणने देख्या। तब हंसकर रामकूं कहा—वह ब्राह्मण आया है, अर मृगकी नाईं व्याकुल होय मोहि देख भागै है। तब राम बोले याकूं विश्वास उपजाय शीघ्र लावो। तब सेवकजन दौड़े, दिलासा देय लाए, डिगता अर कांपता आया। निकट आय भय तज, दोऊ भाइनके आगे भेट मेल 'स्वस्ति' ऐसा शब्द कहता भया, अर अति स्तवन पढता भया। तब राम बोले—हे द्विज! तैं हमकूं अपमानकर अपने घरतैं काढे हुते। अब

काहे पूजै है। तब विप्र बोला–हे देव ! तुम प्रच्छन्न महेश्वर हो, मैं, अज्ञानतैं न जाने, तातैं अनादर किया। जैसैं भस्मतैं दबी अग्नि जानी न जाय। हे जगन्नाथ ! या लोककी यही रीति है, धनवानकूं पूजिये है। सूर्य शीतऋतुमें ताप रहित होय है सो तासे कोई नाहीं संकै है। अब मैं जाना तुम पुरुषोत्तम हो। हे पद्मलोचन ! ये लोक द्रव्यकूं पूजै हैं, पुरुषको नाहीं पूजै हैं। जो अर्थकर युक्त होय ताहि लौकिकजन मानै हैं। अर परम सज्जन है अर धनरहित है तो ताहि निष्प्रयोजन जन जान न मानै हैं। तब राम बोले–हे विप्र ! जाके अर्थ ताके मित्र, जाके अर्थ ताके भाई, जाके अर्थ सोई पंडित, अर्थ विना न मित्र न सहोदर, जो अर्थकर संयुक्त है, ताके परजन हू निज होय जाय हैं। अर धन वही जो धर्मकरयुक्त। अर धर्म वही जो दयाकरयुक्त। अर दया वही जहां मांस भोजनका त्याग। जब सब जीवनिका मांस तजा, तब अभक्ष्यका त्याग कहिए, ताके और त्याग सहज ही होय। मांसके त्याग विना और त्याग शोभै नाहीं। ये वचन रामके सुन विप्र प्रसन्न भया अर कहता भया–हे देव ! जो तुम सारिखे पुरुषनिकूं महापुरुष पूजिए हैं तिनका भी मूढ लोक अनादर करै हैं। आगे सनत्कुमार चक्रवर्ती भए। बड़ी ऋद्धिके धारी महारूपवान जिनका रूप देव देखने आए। सो मुनि होयकर आहारकूं ग्रामादिकविषैं गए। महा आचार प्रवीण सो निरंतराय भिक्षाकूं न प्राप्त होते भए। एक दिवस विजयपुर नाम नगरविषैं एक निर्धन मनुष्यके आहार लिया, याके पंच आश्चर्य भए। हे प्रभो ! मैं मंदभाग्य तुम सारिखे पुरुषनिका आदर न किया सो अब मेरा मन पश्चातापरूप अग्नि कर तपै है।
तुम महारूपवान, तुमकूं देख महाक्रोधीका क्रोध जाता रहै, अर आश्चर्यकूं प्राप्त होय। ऐसा कहकर सोचकर गृहस्थ कपिल रुदन करता भया। तब श्रीरामने शुभवचनकरि संतोष्या अर सुशर्मा ब्राह्मणीकूं जानकी संतोषती भई। बहुरि राघवकी आज्ञा पाय स्वर्णके कलशनिकरि सेवकनिने द्विजकूं स्त्रीसहित स्नान कराया अर आदरसों भोजन कराया। नानाप्रकारके वस्त्र अर रत्ननिके आभूषण दिए, बहुत धन दिया। सो लेयकर अपने घर आया। मनुष्यनिकूं विस्मयका करणहारा धन याके

भया। यद्यपि याके घरविषै सब उपकार सामग्री अपूर्व है तथापि या प्रवीणका परिणाम विरक्त, घर विषै आसक्त नाहीं। मनविषै विचारता भया—आगे काष्ठके भारका वहनहारा दरिद्री हुता, सो श्री रामदेवने तृप्त किया। याही ग्रामविषै मैं सोषित शरीर अभूषित हुता सो रामने कुबेर समान किया। चिंता दुखरहित किया। मेरा घर जीर्ण तृणका, जाके अनेक छिद्रकादि, अशुचि पक्षिनिकी बींटकर लिप्त, अब रामके प्रसादकरि अनेक स्वर्णके सहित भए। बहुत गोधन, बहुत धन, काहू वस्तुकी कमी नाहीं। हाय २ मैं दुर्बुद्धि कहा किया? वे दोऊ भाई, चन्द्रमा समान वदन जिनके, कमलनेत्र मेरे घर आए हुते, ग्रीष्मके आतापकरि तप्तायमान सीता सहित, सो मैंने घरते निकासे। या बातकी मेरे हृदयविषै महाशल्य है। जो लग घरविषै बसूं हूं तौ लग खेद मिटै नाहीं। तातैं गृहारम्भका परित्यागकर जिनदीक्षा आदरूं। जब यह विचारी, तब याकूं वैराग्यरूप जान समस्त कुटुम्बके लोक अर सुशर्मा ब्राह्मणी रुदन करते भए। तब कपिल सबकूं शोकसागरविषै मग्न देख निर्ममत्वबुद्धिकरि कहता भया। कैसा है कपिल? शिवसुखविषै है अभिलाषा जाकी, हो प्राणी हो! परिवारके स्नेहकरि अर नानाप्रकारके मनोरथनिकरि यह मूढ जीव भवातापकर जरै है, तुम कहा नाहीं जानौ हो? ऐसा कह महा विरक्त होय, दुखकर मूर्छित जो स्त्री ताहि तज, अर सब कुटुम्बकूं तज, अठारह हजार गाय, अर रत्ननिकर पूर्ण घर, अर घरके बालक स्त्रीकूं सौंप आप सर्वारम्भ तज दिगम्बर भया। स्वामी अनंतमतिका शिष्य भया—कैसे हैं अनंतमति? जगतविषै प्रसिद्ध तपोनिधि, गुण शीलके सागर। यह कपिल मुनि गुरुकी आज्ञा प्रमाण महातप करता भया। सुन्दर चरित्रका भार धर परमार्थविषै लीन है मन जाका, वैराग्य विभूतिकर अर साधुपदकी शोभाकर मंडित है शरीर जाका। सो जो विवेकी यह कपिलकी कथा पढ़ै सुनै ताहि अनेक उपवासनिका फल होय, सूर्य समान ताकी प्रभा होय।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रंथ, ताकी भाषावचनिकाविषै देवनिकर नगरका बसावना, कपिल ब्राह्मणका वैराग्य वर्णन करनेवाला पैंतीसवां पर्व पूर्ण भया ॥ ३५ ॥

अथानन्तर वर्षाऋतु पूर्ण भई। कैसी है वर्षाऋतु ? श्याम घटाकरि महा अंधकाररूप, जहां मेघ जल असराल बरसैं, अर बिजुरिनिके चमत्कारकर भयानक। वर्षाऋतु व्यतीत भई, शरदऋतु प्रकट भई, दशों दिशा उज्ज्वल भई, तब वह यक्षाधिपति श्रीरामसू कहता भया—कैसे हैं श्रीराम ? चलवेका है मन जिनका। यक्ष कहै है—हे देव! हमारी सेवामें जो चूक होय सो क्षमा करो। तुम सारिखे पुरुषनिकी सेवा करवेकू कौन समर्थ है ? तब राम कहते भए—हे यक्षाधिपते! तुम सब बातोंके योग्य हो, अर तुम पराधीन होय हमारी सेवा करी सो क्षमा करियो। तब इनके उत्तम भाव विलोक अति हर्षित भया, नमस्कारकर स्वयंप्रभ नामा हार श्रीरामको भेट किया, महा अद्भुत। अर लक्ष्मणकू मणिकुन्डल चांद सूर्य सारिखे भेट किए। अर सीताकू सकल्याण नामा चूडामणि महा देदीप्यमान दिया, अर महामनोहर मनवांछित नादको करनहारी देवोपुनीत वीणा दई। ते अपनी इच्छातैं चाले। तब यक्षराज पुरी संकोच लई, अर इनके जायवेका बहुत शोक किया। अर श्रीरामचन्द्र यक्षको सेवाकर अति प्रसन्न होय आगें चले। देवोंकी न्याईं रमते, नानाप्रकारकी कथाविषैं आसक्त, नानाप्रकारके फलनिके रसके भोक्ता पृथ्वीपर अपनी इच्छासू चलते भ्रमते, मृगराज तथा गजराजनिकर भरचा जो महाभयानक वन ताहि उलंघकर, विजयपुर नामा नगर आये। ता समय सूर्य अस्त भया। अंधकार फैल्या, आकाशविषैं नक्षत्रनिके समूह प्रकट भए, नगरतैं उत्तर दिशाकी तरफ न अति निकट न अतिदूर कायरलोगनिकू भयानक जो उद्यान वहां विराजे।

अथानन्तर नगरका राजा पृथ्वीधर, जाके इन्द्राणी नामा राणी, स्त्रीके गुणनिकरि मंडित, ताके वनमाला नामा पुत्री महासुन्दर, सो बाल अवस्थाहीतैं लक्ष्मणके गुण सुन अति आसक्त भई। बहुरि सुनी दशरथने दीक्षा धरी, अर केकईके वचनतैं भरतकू राज्य दिया, राम लक्ष्मण परदेश निकसे हैं। ऐसा विचार याके पिताने कन्याको इन्द्र नगरका राजा ताका पुत्र जो बालमित्र महासुन्दर ताहि देनी विचारी। सो यह वृत्तांत वनमाला सुना। हृदयविषैं विराजै है लक्ष्मण जाके। तब मनविषैं विचारी

कंठफांसी लेय मरण भला परन्तु अन्य पुरुषका सम्बन्ध शुभ नाहीं। यह विचार सूर्यसूं संभाषण करती भई। हे भानो! अस्त होय जावो, शीघ्र ही रात्रिकूं पठावहु, अब दिनका एकक्षण मोहि वर्ष समान बीतै है। सो मानो याके चिंतवनकर सूर्य अस्त भया। कन्याका उपवास है, संध्या समय माता पिता की आज्ञा लेय श्रेष्ठरथविषै चढ़ वनयात्राका बहानाकर रात्रिविषै तहां आई जहां राम लक्ष्मण तिष्ठे हुते। सो यानैं आनकर ताही वनविषै जागरण किया। जब सकललोक सोयगए तब यह मंद मंद पैर धरती बनकी मृगी समान डेरातैं निकस वनविषै चाली। सो यह महासती पद्मनी ताकै शरीरकी सुगंधताकरि वन सुगंधित होयगया। तब लक्ष्मण विचारता भया यह कोई राजकुमारी महाश्रेष्ठ मानो ज्योतिकी मूर्ति ही है, सो महा शोकके भार कर पीडित है मन जाका, यह अपघात कर मरण वांछै है, सो मैं याकी चेष्टा छिपकर देखूं। ऐसा विचारकर छिपकर वटके वृक्ष तले बैठ्या, मानों कौतुकयुक्त देव कल्पवृक्षके नीचे बैठे। ताही वटके तले हंसनीकीसी है चाल जाकी, अर चन्द्रमा समान है वदन जाका, कोमल है अंग जाका, ऐसी वनमाला आई। जलसूं आला वस्त्रकर फांसी बनाई, अर मनोहर वाणीकर कहती भई—अहो या वृक्षके निवासी देवता! कृपाकर मेरी बात सुनहु। कदाचित् वनविषै विचरता लक्ष्मण आवै तो तुम ताहि ऐसे कहियो—जो तिहारे विरहकरि महादुःखित वनमाला तुमविषै चित्त लगाय, वटके वृक्षविषै वस्त्रकी फांसी लगाय, मरणकूं प्राप्त भई, हम या देखी। अर तुमकूं यह संदेशा कह्या है जो या भवविषै तिहारा संयोग मोहि न मिल्या, अब परभवविषै तुमही पति हूजियो। यह वचन कह वृक्ष की शाखासूं फांसी लगाय आप फांसी लेने लगी। ताही समय लक्ष्मण कहता भया—हे मुग्धे! मेरी भुजाकर आलिंगन योग्य तेरा कंठ ताविषै फांसी काहेकूं डारै है? हे सुन्दरवदनी! परमसुन्दरी! मैं लक्ष्मण हूं। जैसा तेरे श्रवणविषै आया है तैसा देख। अर प्रतीत न आवै तो निश्चयकर लेहु। ऐसा कह याके करसे फांसी दूर लीनी, जैसैं कमलथकी झागोंके समूहकूं दूर करैं। तब वह लज्जाकरयुक्त प्रेमकी दृष्टिकर लक्ष्मणकूं देख मोहित भई। कैसा है लक्ष्मण? जगतके नेत्रनिका हरणहारा है रूप

पद्म
पुराण
४५६

जाका। परम आश्चर्यकू प्राप्त भई चित्तविषैं चितवै है यह कोई मोपर देवनि उपकार किया, मेरी अवस्था देख दयाकू प्राप्त भए। जैसा मैं सुन्या हुता तैसा देवयोगतैं यह नाथ पाया, जाने मेरे प्राण बचाए। ऐसा चिंतवन करती वनमाला लक्ष्मणके मिलापतैं अत्यन्त अनुरागकू प्राप्त भई।

अथानन्तर महासुगन्ध कोमल सांथरेपर श्रीरामचन्द्र पौढ़े हुते। सो जागकर लक्ष्मणकू न देख जानकीकू पूछते भए–हे देवी! यहां लक्ष्मण नाहीं दीखै है। रात्रिके समय मेरे सोवनेकू पुष्प पल्लव-निका कोमल सांथरा बिछाय आप यहां ही तिष्ठता हुता सो अब नाहीं दीखै है। तब जानकी कही–हे नाथ! ऊंचा स्वरकर बुलाय लेहु। तब आप शब्द किया–हे भाई! हे लक्ष्मण! हे बालक! कहां गया? शीघ्र आवहु। तब भाई बोला–हे देव! आया। वनमालासहित बड़े भाईके निकट आया। आधी रात्रि का समय चन्द्रमाका उदय भया, कुमुद फूले, शीतल मंद सुगन्ध पवन बाजने लागी। ता समय वनमाला कोपल समान कोमल कर जोड़ वस्त्रकर बेढ्या है सर्व अंग जानैं, लज्जाकर नम्रीभूत है मुख जाका, जाना है समस्त कर्तव्य जानैं, महाविनयकू धरती श्रीराम अर सीताके चरणारविंदकू बन्दती भई। सीता लक्ष्मणकू कहती भई–हे कुमार! तैंने चन्द्रमाकी तुल्यता करी। तब लक्ष्मण लज्जाकर नीचा होय गया। श्रीराम जानकीतैं कहते भए, तुम कैसे जानी? तब कही–हे देव! जा समय चन्द्रमाका उद्योत भया ताही समय कन्यासहित लक्ष्मण आया। तब श्रीराम सीताके वचन सुन प्रसन्न भए।

अथानन्तर वनमाला महाशुभ शील इनकू देख, आश्चर्यकी भरी, प्रसन्न है मुख चन्द्रमा जाका, फूल रहे हैं नेत्रकमल जाके, सीताके समीप बैठी, अर ये दोऊ भाई देवनि समान महासुन्दर निद्रारहित सुखतैं कथा वार्ता करते तिष्ठै हैं। अर वनमालाकी सखी जागकर देखै तो सेज सूनी, कन्या नाहीं। तब भयकर खेदित भई अर महाव्याकुल होय रुदन करती भई। ताके शब्दकर योधा जागे, आयुध लगाय तुरंग चढ़ दशों दिशाको दौड़े अर पयादे दौड़े। बरछी अर धनुष है हाथमें जिनके, दशोंदिशा ढूंढी। राजाका भय अर प्रीतिकर संयुक्त है मन जाका, ऐसे दौड़े मानों पवनके बालक हैं। तब कईएक या तरफ दौड़े

आए। वनमालाकूं वनविषै रामलक्ष्मणके समीप बैठी देख बहुत हर्षित होय जायकर राजा पृथ्वीधरकूं बधाई दई अर कहते भए—हे देव! जिनके पावनेका बहुत यत्न करिये तो भी न मिलें वे सहज ही आए हैं। हे प्रभो! तेरे नगरमें महानिधि आई, विना बादल आकाशतैं वृष्टि भई, क्षेत्रविषै विना वाहे धान ऊगा। तिहारा जमाई लक्ष्मण नगरके निकट तिष्ठै है, जानै वनमाला प्राण त्याग करती बचाई, अर राम तिहारे परमहितु सीतासहित विराजे हैं, जैसे शचीसहित इन्द्र विराजै। ये वचन राजा सेवकनिके सुनकर महाहर्षित होय क्षणएक मूर्छित होय गया। बहुरि परम आनन्दकूं प्राप्त होय सेवकनिकूं बहुत धन दिया अर मनविषै विचारता भया—मेरी पुत्रीका मनोरथ सिद्ध भया। जीवनिके धनकी प्राप्ति, अर इष्टका समागम और हू सुखके कारण पुण्यके योगकरि होय हैं। जो वस्तु सैंकड़ों योजन दूर अर श्रवणमें न आवै सो हू पुण्याधिकारीके क्षणमात्रविषै प्राप्त होय है। अर जे प्राणी दुखके भोक्ता पुण्यहीन हैं तिनके हाथसे इष्टवस्तु विलाय जाय है। पर्वतके मस्तकपर तथा वनविषै सागरविषै पथविषै पुण्याधिकारिनके इष्ट वस्तुका समागम होय है। ऐसा मनविषै चितवनकर स्त्रीसूं सब वृत्तांत कह्या। स्त्री बारम्बार पूछै है, यह जानै मानों स्वप्न ही है। बहुरि रामके अधर समान आरक्त सूर्यका उदय भया। तब राजा प्रेमका भरचा सर्व परिवारसहित हाथीपर चढ़कर परम कांतियुक्त रामसूं मिलने चाल्या, अर वनमालाकी माता आठ पुत्रसहित पालकीपर चढ़कर चाली। सो राजा दूरहीतैं श्रीरामका स्थानक देखकर फूल गए हैं नेत्रकमल जाके, हाथीतैं उतर समीप आया। श्रीराम अर लक्ष्मणसूं मिल्या। अर वाकी रानी सीताके पांयन लागी अर कुशल पूछती भई, वीणा, बांसुरी, मृदंगादिक शब्द होते भए, वंदीजन बिरद बखानते भए, बड़ा उत्सव भया। राजाने लोकनिकूं बहुत दान दिया। नृत्य होता भया, दशोंदिशा नादकर शब्दायमान होती भई। श्रीराम लक्ष्मणकूं स्नान भोजन कराया। बहुरि घोड़े, हाथी, रथ तिनपर चढ़े अनेकसामंत अर हिरण समान कूदते प्यादे तिन सहित रामलक्ष्मणने हाथीपर चढ़े संते पुरविषै प्रवेश किया। राजाने नगर उछाया। महाचतुर मागध

विरद बखानैं हैं, मंगल शब्द करे हैं। राम लक्ष्मणने अमोलिक वस्त्र पहरे, हारकर विराजे है वक्षस्थल जिनका, मलयागिरिके चंदनतैं लिप्त है अंग जिनका, नानाप्रकारके रत्ननिकी किरणनिकरि इन्द्रधनुष होय रह्या है। दोऊ भाई चांदसूर्य सारिखे, नाही वरणं जावैं हैं गुण जिनके, सौधर्म ईशान सारिखे जानकीसहित लोकनिकूं आश्चर्य उपजाते राजमन्दिर पधारे। श्रेष्ठ माला धरे, सुगन्धकर गुंजार करे हैं भ्रमर जापर, महा विनयवान चंद्रवदन इनकूं देख लोक मोहित भए। कुबेर कासा किया जो वह सुन्दर नगर वहां अपनी इच्छाकरि परमभोग भोगते भए। या भांति सुकृतमैं है चित्त जिनका, महा गहन वनविषै प्राप्त भए हू परम विलासकूं अनुभवैं हैं। सूर्य समान है कांति जिनकी, वे पापरूप तिमिरकूं हरे हैं, निज पदार्थके लोभतैं आनन्दरूप हैं।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महा पद्मपुराण संस्कृतग्रन्थ, ताकी भाषा वचनिकाविषै वनमालाका लाभ वर्णन करनेवाला छत्तीसवां पर्व पूर्ण भया ॥ ३६ ॥

अथानन्तर एक दिन श्रीराम सुखसे विराजे हुते अर पृथ्वीधर भी समीप बैठा हुता, ता समय एक पुरुष दूरका चाल्या महा खेदखिन्न आयकर नम्रीभूत होय पत्र देता भया। सो राजा पृथ्वीधरने पत्र लेयकर लेखककूं सौंप्या। लेखकने खोलकर राजाके निकट बांच्या। तामैं या भांति लिख्या हुता कि इन्द्र समान है उत्कृष्ट प्रभाव जाका, महालक्ष्मीवान, नमैं हैं अनेक राजा जाकूं, श्रीनन्द्यावर्त नगरका स्वामी, महा प्रबल पराक्रमका धारी, सुमेरुपर्वतसा अचल, प्रसिद्ध शस्त्र शास्त्रविद्याविषै प्रवीण, सब राजानिका राजा महाराजाधिराज, प्रतापकर वश किए हैं शत्रु अर मोहित करी है सकल पृथ्वी जानैं, उगते सूर्य समान महा बलवान, समस्त कर्तव्यविषै कुशल, महानीतिवान, गुणनिकर विराजमान, श्रीमान, पृथ्वीका नाथ महाराजेन्द्र अतिवीर्य, सो विजयनगरविषै पृथ्वीधरकूं क्षेमपूर्वक आज्ञा करै है— कि जे कई पृथ्वीपर सामंत हैं, वे भण्डारसहित, अर सर्व सेनासहित मेरे निकट प्रवरतैं हैं। आर्य खंड ४५८

के अर म्लेच्छ खंडके चतुरंग सेनासहित नानाप्रकारके शस्त्रनिके धरणहारे मेरी आज्ञाकूं सिरपर धारे हैं। अञ्जनगिरि सारिखे आठसौ हाथी, अर पवनके पुत्रसम तीनहजार तुरंग, अनेक पयादे, तिनसहित महापराक्रमका धारी, महातेजस्वी, मेरे गुणनिसे खींचा है मन जाका, ऐसा राजा विजयशार्दूल आया है। अर अंग देशके राजा मृगध्वज, रणोर्मि कलभकेशरी यह प्रत्येक पांच पांच हजार तुरंग अर छह सौ छहसौ हाथी अर रथ पयादे तिनसहित आए हैं, महा उत्साहके धारी, महा न्यायविषै प्रवीण है बुद्धि जिनकी। अर [illegible] राजा [illegible], परम प्रतापकूं धरता, न्यायशास्त्रविषै प्रवीण, अनेक प्रचंड बलकूं उत्साहरूप करता हजार हाथी अर सातहजार तुरंगनितैं अर रथ पयादनिकरि युक्त हमारे आया है। अर मगधदेशका राजा सुकेश बड़ी सेनासूं आया है। अनेक राजानिसहित जैसैं सैकड़ानि नदीनिकै प्रवाहकूं लिए रेवाका प्रवाह समुद्रविषै आवै, तैसैं ताके संग कालीघटा समान आठ हजार हाथी, अनेक रथ अर तुरंगनिके समूह हैं, अर वज्रका आयुध धारै है। अर म्लेच्छनिके अधिपति समुद्र, मुनिभद्र, साधुभद्र, नन्दन इत्यादि राजा मेरे समीप आए हैं। वज्रधर समान, अर नाहीं निवारया जाय पराक्रम जाका, ऐसा राजा सिंहवीर्य आया है। अर राजा वंग अर सिंहरथ ये दोऊ हमारे मामा महा बलवान बड़ी सेनासूं आए हैं। अर वत्सदेशका स्वामी मारदत्त अनेक पयादे, अनेक रथ, अनेक हाथी, अनेक घोड़ानिकर युक्त आया है। अर राजा प्रोष्ठल सौवीर सुमेरु सारिखे अचल प्रबल सेनातैं आए हैं। ये राजा महापराक्रमी पृथ्वीपर प्रसिद्ध देवनि सारिखे दश अक्षौहिणी बल सहित आए हैं। तिन राजानि सहित मैं बड़े कटकतैं अयोध्याके राजा भरत पर चढ़ा हूं, सो तेरे आयवेकी बाट देखूं हूं। ४५९
तातैं आज्ञापत्र पहुंचते प्रमाण पयानकर शीघ्र आइयो, किसी कार्यकर विलम्ब न करियो। जैसैं किसान वर्षाकूं चाहै तैसैं मैं तेरे आगमनकूं चाहूं हूं। या भांति पत्रके समाचार लेखकने बांचे तब पृथ्वीधर ने कछू कहनेका उद्यम किया। तासूं पहले लक्ष्मण बोले अरे दूत! भरतके अर अतिवीर्यके विरोध कौन कारणतैं भया? तब वह वायुगत नाम दूत कहता भया—मैं सब बातोंका मरमी हूं, सब चरित्र

जानूं हूं। तब लक्ष्मण बोले हमारे सुनवेकी इच्छा है। ताने कही आपको सुननेकी इच्छा है तो सुनो। एक श्रुतिके नामा दूत हमारे राजा अतिवीर्यने भरतपर भेज्या सो जायकर कहता भया। इन्द्र तुल्य राजा अतिवीर्यका मैं दूत हूं, प्रणाम करै हैं समस्त नरेन्द्र जाकूं, न्यायके थापनेविषै महा बुद्धि-मान, सो पुरुषनिविषै सिंह समान, जाके भयतें अरिरूप मृग निद्रा नाहीं करै हैं। ताके यह पृथ्वी वनिता समान है। कैसी है पृथ्वी? चार तरफके समुद्र, सोई है कटिमेखला जाके, जैसें परणी स्त्री आज्ञाविषै होय तैसे समस्त पृथ्वी आज्ञाके वश है। सो पृथ्वीपति महा प्रबल मेरे मुख होय तुमकूं आज्ञा करै है कि—हे भरत! शीघ्र आयकर मेरी सेवा करहु, अथवा अयोध्या तज समुद्रके पार जावो। ये वचन सुन शत्रुघन महा क्रोधरूप दावानल समान प्रज्वलित होय कहता भया। अरे दूत! तोहि ऐसे वचन कहने उचित नाहीं। वह भरतकी सेवा करै अरु भरत ताकी सेवा करै। अर भरत अयोध्याका भार मंत्रिनिकूं सौंप पृथ्वीके वश करनेके निमित्त समुद्रके पार जाय, अरु और भांति जाय। अर तेरा स्वामी ऐसे गर्वके वचन कहै है सो गर्दभ माते हाथीकी न्याई गाजे है, अथवा ताकी मृत्यु निकट है तातैं ऐसे वचन कहै हैं, अथवा वायुके वश है। राजा दशरथकूं वैराग्यके योगतैं तपोवनको गए जान वह दुष्ट ऐसी बात कहै है। सो यद्यपि तातकी क्रोधरूप अग्नि मुक्तिकी अभिलाषाकर शांत भई, तथापि पिताकी अग्निसे हम स्फु-लिंग समान निकसे हैं, सो अतिवीर्यरूपकाष्ठकूं भस्म करने समर्थ हैं। हाथीनिके रुधिररूप कीच कर लाल भए हैं केश जाके ऐसा जो सिंह सो शांत भया तो ताका बालक हाथिनिके निपात करने समर्थ है। ये वचन कह शत्रुघन बलता जो बांसोंका वन ता समान तड़तडात कर महाक्रोधायमान भया। अर सेवक-निकूं आज्ञा करी जो या दूतका अपमान कर काढ देवहु। तब आज्ञा प्रमाण सेवकनिने अपराधीकूं स्वान की न्याईं तिरस्कारकर काढ दिया। सो पुकारता नगरीके बाहिर गया। धूलकरि धूसरा है अंग जाका दुरवचनकरि दग्ध, अपने धनी पै जाय पुकारचा, अर राजा भरत समुद्र समान गम्भीर परमार्थका जानन-हारा अपूर्व दुर्वचन सुन कछूएक कोपकूं प्राप्त भया। भरत शत्रुघन दोऊ भाई नगरतैं सेनासहित शत्रु

पर निकसे । अर मिथिला नगरीका धनी राजा जनक अपने भाई कनक सहित बड़ी सेनासूं आय
भेला भया । अर सिंहोदरकूं आदि दे अनेक राजा भरतसूं आय मिले । भरत बड़ी सेना सहित नन्द्या-
वर्त पुरके धनी अतिवीर्यपर चढ्या । पिता समान प्रजाकी रक्षा करता संता, कैसा है भरत ? न्याय-
विषै प्रवीण है । अर राजा अतिवीर्य भी दूतके वचन सुन परम क्रोधकूं प्राप्त भया । क्षोभकूं प्राप्त
भया जो समुद्र ता समान भयानक सर्व सामंतनिकरि मंडित भरतके ऊपर जाइवेकूं उद्यमी भया है ।

यह समाचार सुन श्रीरामचन्द्र अपना ललाट दूजके चन्द्रमा समान वक्रकर पृथ्वीधरसूं कहते
भए । जो अतिवीर्यकूं भरतसे ऐसा करना उचित ही है क्योंकि जाने पिता समान बड़े भाईका अना-
दर किया । तदि राजा पृथ्वीधरने रामसूं कही, वह क्रूर है हम प्रबल जान सेवा करै हैं । तब मंत्रकर
अतिवीर्यकूं जुवाब लिख्या कि मैं कागदके पीछे ही आऊं हूं अर दूतकूं विदा किया । बहुरि श्रीरामसूं
कहता भया अतिवीर्य महाप्रचण्ड है तातैं मैं जाऊं हूं । तब श्रीरामने कही तुम तो यहां ही रहो अर
मैं तिहारे पुत्रकूं अर तिहारे जवांई लक्ष्मणकूं ले अतिवीर्यके समीप जावूंगा । ऐसा कहकर रथपर
चढ़ बड़ी सेना सहित पृथ्वीधरके पुत्रकूं लार लेय सीता अर लक्ष्मण सहित नन्द्यावर्त नगरीकूं चाले ।
सो शीघ्र गमनकर नगरके निकट जाय पहुँचे । वहां पृथ्वीधरके पुत्रसहित स्नान भोजनकर राम लक्ष्मण
सीता ये तीनों मंत्र करते भए । जानकी श्रीरामसूं कहती भई—हे नाथ ! यद्यपि मेरे कहिवेका अधि-
कार नाहीं, जैसे सूर्यके प्रकाश होते नक्षत्रनका उद्योत नाहीं, तथापि हे देव ! हितकी वांछाकर मैं
कछूएक कहूं हूं । जैसैं बांसनितैं मोती लेना तैसैं हम सारिखनितैं हितकी बात लेनी, काहू एक बांस
के बीड़विषै मोती निपजै है—हे नाथ ! यह अतिवीर्य महासेनाका स्वामी, क्रूरकर्मी भरतकर कैसे जीत्या
जाय । तातैं याके जीतवेका उपाय करहु । तुमसे अर लक्ष्मणतै कोई कार्य असाध्य नाहीं, तब लक्ष्मण बोले—
हे देवी ! यह कहा कहो हो ? आज अथवा प्रभात या अतिवीर्यकूं मेरे कर हता ही जानहु । श्रीरामके
चरणारविंदकी जो रजकर पवित्र है सिर मेरा, मेरे आगे देव भी टिक नाहीं सकै, मनुष्य क्षुद्र अति-

वीर्यकी तो कहा बात ? जबतक सूर्य अस्त न होय तातैं पहिले ही या क्षुद्रवीर्यकूं मूवा ही देखियो। यह लक्ष्मणके वचन सुन पृथ्वीधरका पुत्र गर्जना कर ऐसे कहता भया। तब श्रीराम भौंह फेर ताहि मनैंकर लक्ष्मणसें कहते भए। महा धीरवीर है मन जाका—हे भाई! जानकी कही सो युक्त है। यह अतिवीर्य बलकर उद्धत है, रणविषैं भरतके वश करनेका पात्र नाहीं, भरत याकै दसवैं भाग भी नाहीं। यह दावानल समान, याका वह मतंग गज कहा करै ? यह हाथिनिकर पूर्ण, रथ पयादनिकर पूर्ण, यासूं जीतवे समर्थ भरत नाहीं। जैसैं केशरीसिंह महाप्रबल है परन्तु विंध्याचल पर्वतके ढाहिवे समर्थ नाहीं, तैसैं भरत याकूं जीतै नाहीं, सेनाका प्रलय होवेगा। जहां निःकारण संग्राम होय वहां दोनों पक्षनिके मनुष्यनिका क्षय होय। अर यदि इस दुरात्मा अतिवीर्यने भरतकूं वश किया, तब रघुवंशिन के कष्टका कहा कहना ? अर इनविषैं संधि भी सूझै नाहीं। शत्रुघ्न अति मानी बालक सो उद्धत वैरीसूं द्वेष किया, यह न्यायविषैं उचित नाहीं। अंधेरी रात्रिविषैं रौद्रभूत सहित शत्रुघ्नने दूरके दौरा जाय अतिवीर्यके कटकविषैं धाड़ा दिया। अनेक योधा मारे, बहुत हाथी घोड़े काम आए। अर पवन सारिखे तेजस्वी हजारों तुरंग अर सातसै अंजनगिरि समान हाथी लेगया। सो तूने कहा लोगनिके मुखतैं न सुनी ? यह समाचार अतिवीर्य सुन महाक्रोधकूं प्राप्त भया। अर अब महा सावधान है, रणका अभिलाषी है। अर भरत महामानी है सो यासूं युद्ध छोड़ संधि न करै। तातैं तू अतिवीर्यकूं वशकर, तेरी शक्ति सूर्यकूं तिरस्कार करवे समर्थ है। अर यहांतैं भरतहू निकट है सो हमकूं आपा न प्रकाशना। जे मित्रकूं न जनावैं अर उपकार करैं ते पुरुष अद्भुत प्रशंसा करने योग्य हैं, जैसैं रात्रिका मेघ। या भांति मंत्रकरि रामकूं अतिवीर्यके पकड़बेकी बुद्धि उपजी। ४६२

रात्रिको प्रमाद रहित होय समीचीन लोगनितैं कथाकर पूर्ण करी, सुखसों निशा व्यतीत भई। प्रात समय दोऊ वीर उठकर प्रात-क्रियाकर एक जिनमंदिर देख्या सो ताविषै प्रवेशकर जिनेन्द्रका दर्शन किया। तहां आर्यिकानिका समूह विराजता हुता तिनकी वंदना करी। अर आर्यिकानिकी जो गुरानी

वरधर्मा महा शास्त्रकी वेत्ता सीताकूं याके समीप राखी, आप भगवानकी पूजाकर लक्ष्मण सहित नृत्य-कारिणी स्त्रीका भेष कर लीलासहित राजमन्दिरकी तरफ चाले। इन्द्रकी अप्सरा तुल्य नृत्यकारिणीकूं देख नगरके लोग आश्चर्यकूं प्राप्त भए, लार लागे। ये महा आभूषण पहिरे सर्व लोकके मन अर नेत्र हरते राजद्वार गए। चोवीसौं तीर्थंकरनिके गुण गाए, पुराणोंके रहस्य बताए। प्रफुल्लित हैं नेत्र जिनके, इनकी ध्वनि राजा सुन इनके गुणनिका खेंचा समीप आया, जैसें रस्सीका खेंचा जलकेविषैं काष्ठका भार आवै। नृत्यकारिणीने नृपके समीप नृत्य किया। रेचक कहिए भ्रमण, अंग मोडना, मुलकना, अवलोकना, भौंहनिका फेरना, मंद मंद हँसना, जंघा बहुरि करपल्लव तिनका हलावना, पृथ्वीकूं स्पर्शि शीघ्र ही पगनिका उठावना, रागका दृढ़ करना, केशरूप फांसका प्रवर्तना, इत्यादि चेष्टारूप कामबाणनिकर सकललोकनिकूं बींधे। स्वरनिके ग्राम यथास्थान जोडवेकरि अर वीणाके बजायवेकर सबनिकूं मोहित किए। जहां नृत्यकी खड़ी रहै वहां सकल भावके नेत्र चले जांय, रूपकर सबनिके नेत्र, स्वरकर सबनिके श्रवण, गुणकर सबनिके मन बांध लिए। गौतम स्वामी कहै हैं—हे श्रेणिक! जहां श्रीराम लक्ष्मण नृत्य करैं, अर गावैं बजावैं तहां देवनिके मन हरे जांय तो मनुष्यनिकी कहा बात? श्रीऋषभादि चतुर्विंशति तीर्थंकरनिके यश गाय सकल सभा वश करी, राजाकूं संगीतकरि मोहित देख शृंगाररससे वीररसमें आए। आंख फेर भौंहें फेर महा प्रबल तेजरूप होय अतिवीर्यकूं कहते भए—हे अतिवीर्य! तैं यह कहा दुष्टता आरम्भी? तोहि यह मंत्र कौनने दिया, तैं अपने नाशके निमित्त भरतसों विरोध उपजाया। जिया चाहै तो महाविनयकर तिनकूं प्रसन्नकर, दास होय तिनके निकट जावहु। तेरी राणी बड़े वंश की उपजी, कामक्रीडाकी भूमि विधवा न होय, तोहि मृत्युकूं प्राप्त भए सब आभूषण डार शोभा-रहित होयगी। जैसें चन्द्रमा बिना रात्रि शोभारहित होय। तेरा चित्त अशुभविषैं आया है सो चित्तकूं फेर भरतकूं नमस्कार कर। हे नीच! या भांति न करेगा तो अबार ही मारा जायगा। राजा अरण्य के पोता अर दशरथके पुत्र तिनके जीवते तू कैसैं अयोध्याका राज्य चाहै है। जैसैं सूर्यके प्रकाश होते ४६३

चन्द्रमाका प्रकाश कैसे होय ?जैसे पतंग दीपविषै पड़ मूवा चाहै है तैसे तू मरण चाहै है। राजा भरत गरुड़ समान महाबली तिनके तू सर्पसमान निर्बल बराबरी करै है। यह वचन भरतकी प्रशंसाके अर अपनी निंदाके नृत्यकारणीके मुखतैं सुन सकल सभा सहित अतिवीर्य क्रोधकूं प्राप्त भया, लाल नेत्र किए। जैसैं समुद्रकी लहर उठै है तैसैं सामंत उठे अर राजाने खड्ग हाथमें लिया। ता समय नृत्यकारणीने उछल हाथसों खड्ग खोंस लिया अर सिरके केश पकड़ बांध लिया। अर नृत्यकारणी अतिवीर्यके पक्षी राजा तिनसों कहती भई—जीवनेकी बांछा राखो तो अतिवीर्यका पक्ष छोड़ भरतपै जाहु, भरत की सेवा करहु। तब लोकनिके मुखतैं ऐसी ध्वनि निकसी—महा शोभायमान गुणवान भरत भूप जयवंत होऊ। सूर्य समान है तेज जाका, न्यायरूप किरणनिके मंडलकर शोभित, दशरथके वंशरूप आकाश विषै चन्द्रमा समान, लोककूं आनन्दकारी, जाका उदय थकी लक्ष्मीरूपी कुमुदनी विकासकूं प्राप्त होय। शत्रुनिके आतापतैं रहित परम आश्चर्यकूं धरती संती, अहो यह बडा आश्चर्य जाकी नृत्यकारणीकी यह चेष्टा जो ऐसे नृपतिकूं पकड़ लेय, तो भरतकी शक्तिका कहा कहना ? इन्द्रहुकूं जीतै। हम या अतिवीर्यसों आय मिले, सो भरत महाराज कोप भए होयंगे, न जानिये कहा करैंगे। अथवा वे दयावंत पुरुष हैं जाय मिलैं, पायन परैं, कृपा ही करेंगे। ऐसा विचारि अतिवीर्यके मित्र राजा कहते भए। अर श्रीराम अतिवीर्यकूं पकड़ हाथीपर चढ़ि जिनमंदिर गए। हाथीसूं उतर जिनमंदिरविषै जाय भगवानकी पूजा करी, अर बरधर्मा आर्यिकाकी वंदना करी, बहुत स्तुति करी।

रामने अतिवीर्य लक्ष्मणकूं सौंप्या, लक्ष्मणने केश गह दृढ़ बांध्या। तब सीता कही याहि ढीला करहु, पीडा मत देवहु, शांतता भजहु। कर्मके उदयकरि मनुष्य मतिहीन होय जाय है। आपदा मनुष्यनिमेंही होय, बड़े पुरुषनिकूं सर्वथा परकी रक्षा ही करना, सत्पुरुषनिकूं सामान्य पुरुषका हू अनादर न करना, यह तो सहस्रराजानिका शिरोमणि है। तातैं याहि छोड देवहु। तुम यह वश किया, अब कृपा ही करना योग्य है। राजानिका यही धर्म है जो प्रबल शत्रुनिकूं पकड़ छोड़ दें। यह अनादि कालकी मर्यादा है। जब

या भांति सीता कही तब लक्ष्मण हाथ जोड प्रणामकर कहता भया—हे देवी ! तिहारी आज्ञासे छोडवेको कहा बात ? ऐसा करू जो देव याको सेवा करें। लक्ष्मणका क्रोध शांत भया। तब अतिवीर्य प्रतिबोधकू पाय श्रीरामसू कहता भया—हे देव ! तुम बहुत भला किया। ऐसी निर्मल बुद्धि मेरी अबतक कबहू न भई हुती सो तिहारे प्रतापतैं भई। तब श्रीराम ताहि हार मुकुटादिरहित देख विश्रामके वचन कहते भए। कैसे हैं रघुवीर ? सौम्य है आकार जिनका, हे मित्र ! दीनता तज, जैसा प्राचीन अवस्था में धैर्य हुता तैसा ही धर, बड़े पुरुषनिके ही सम्पदा अर आपदा दोऊ होय हैं। अब तोहि कुछ आपदा नाहीं। नन्द्यावर्तपुरका राज्य भरतका आज्ञाकारी होयकर रहवो कर। तब अतिवीर्य कही मेरे अब राज्यकी बांछा नाहीं, मैं राज्यका फल पाया, अब मैं और ही अवस्था धारूंगा। समुद्र पर्यन्त पृथ्वीका वश करणहारा महामानका धारी जो मैं सो कैसा पराया सेवक हो राज्य करू ? याविषैं पुरुषार्थ कहा ? अर यह राज्य कहा पदार्थ ? जिन पुरुषनि षट् खंडका राज्य किया तें तृप्त न भए तो मैं पांचग्रामोंका स्वामी कहा अल्प विभूतिकर तृप्त होऊंगा ? जन्मांतरविषैं किया जो कर्म ताका प्रभाव देखहु, जो मोहि कांतिरहित किया जैसैं राहु चन्द्रमाकू कांतिरहित करै। यह मनुष्यदेह सारभूत, देवनहूतैं अधिक मैं वृथा खोई, नवा जन्म धरनकू कायर, सो तुमने प्रतिबोध्या, अब मैं ऐसी चेष्टा करू जाकर मुक्ति प्राप्त होय। या भांति कहकर श्रीराम लक्ष्मणकू क्षमा कराय, वह राजा अतिवीर्य, केसरीसिंह जैसा है पराक्रम जाका, श्रुतधरनामा मुनीश्वरके समीप हाथ जोड नमस्कारकर कहता भया—हे नाथ ! मैं दिगम्बरी दीक्षा वांछू हू। तब आचार्य कही यही बात योग्य है। या दीक्षाकर अनन्त सिद्ध भए, अर होवेंगे। तब अतिवीर्य वस्त्र तज केशनिकू लुंचकर महाव्रतका धारी भया। आत्माके अर्थविषैं मग्न, रागादि परिग्रहका त्यागी, विधिपूर्वक तप करता पृथ्वी पर विहार करता भया। जहां मनुष्यनिका संचार नाहीं वहां रहै। सिंहादि क्रूरजीवनिकर युक्त जो महागहन वन अथवा गिरिशिखर गुफादि तिनविषैं निर्भय निवास करै। ऐसे अतिवीर्य स्वामीकू नमस्कार होहु, तजी है समस्त परिग्रहकी

आशा जाने, अर अंगीकार किया है चारित्रका भार जाने, महाशीलके धारक, नानाप्रकार तपकर शरीरका शोषणहारा, प्रशंसा योग्य महामुनि, सम्यक्दर्शन ज्ञान चारित्र रूप सुन्दर हैं आभूषण अर दशोंदिशा ही वस्त्र जिनके, साधुनिके जे मूलगुण उत्तरगुण वे ही सम्पदा, कर्म हरिवेकूं उद्यमी, संजमी, मुक्तिके वर योगीन्द्र तिनकूं नमस्कार होहु। यह अतिवीर्य मुनिका चारित्र जो सुबुद्धि पढ़े सुने सो गुणनिकी वृद्धिकूं प्राप्त होय, भानु समान तेजस्वी होय और संसारके कष्टतैं निवृत्त होय।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रंथ, ताकी भाषावचनिकाविषै अतिवीर्यका वैराग्य वर्णन करनेवाला सैंतीसवां पर्व पूर्ण भया ॥ ३७ ॥

अथानन्तर श्रीरामचन्द्र महा न्यायके वेत्ताने अतिवीर्यका पुत्र जो विजयरथ ताहि अभिषेक कराय पिताके पदविषै थाप्या। ताने अपना समस्त वित्त दिखाया सो ताका ताकूं दिया अर तानै अपनी बहिन रत्नमाला लक्ष्मणकूं देनी करी सो तिनने प्रमाण करी। ताके रूपकूं देख लक्ष्मण हर्षित भए मानों साक्षात् लक्ष्मी ही है। बहुरि श्रीराम लक्ष्मण जिनेन्द्रकी पूजाकरि पृथ्वीधरके विजयपुर नगर विषै वापिस गए। अर भरतने सुनी जो अतिवीर्यकूं नृत्यकारिणीनें पकड्या सो विरक्त होय दीक्षा धरी तब शत्रुघ्न हास्य करने लाग्या। तब ताहि मनेकर भरत कहते भये—अहो भाई! राजा अतिवीर्य महा धन्य है जे महादुखरूप विषयनिकूं तज शांतिभावकूं प्राप्त भए। वे महा स्तुति योग्य हैं तिनकी हांसी कहा? तपका प्रभाव देखहु जो रिपु हू प्रणाम योग्य गुरु होय हैं। यह तप देवनिकूं दुर्लभ है। या भांति भरत अतिवीर्यकी स्तुति करै है। ताही समय अतिवीर्यका पुत्र विजयरथ आया, अनेक सामंतनिसहित सो भरतकूं नमस्कारकर तिष्ठ्या। क्षणिक और कथाकर जो रत्नमाला लक्ष्मणकूं दई ताकी बडी बहिन विजयसुन्दर नानाप्रकार आभूषण की धरणहारी भरतकूं परणाई अर बहुत द्रव्य दिया। सो भरत ताकी बहिन परणकरि प्रसन्न भए। विजयरथसूं बहुत स्नेह किया। यही

कीर्ति जाकी, बहुरि अयोध्या आया, परम प्रतापकूं धरैं। अर राजा भरत अतिवीर्यकी पुत्री विजयसुन्दरीसहित सुख भोगता सुखसूं तिष्ठै, जैसैं सुलोचना सहित मेघेश्वर तिष्ठ्या। यह तो कथा यहां ही रही, आगैं श्रीराम लक्ष्मणका वर्णन करैं हैं।

अथानन्तर राम लक्ष्मण सर्वलोककूं आनन्दके कारण कईएक दिन पृथ्वीधरके पुरविषैं रहे। फिर जानकीसहित मंत्र कर आगैं चलवेकूं उद्यमी भए। तब सुन्दर लक्षणकी धरणहारी वनमाला लक्ष्मणसूं कहती भई, नेत्र सजल होय आए, हे नाथ! मैं मंदभागिनी, मोहि आप तज जावो हो तो पहिले मरणतैं क्यों बचाई, तब लक्ष्मण बोले—हे प्रिये! तू विषाद मत करै, थोड़े दिनमें तेरे लेवेकूं आवैं हैं। हे सुन्दरवदनी! जो तेरे लेयवेको शीघ्र ही न आवैं तो हमको वह गति हूजौ जो सम्यग्दर्शनरहित मिथ्यादृष्टिकी होय है। हे वल्लभे! जो शीघ्र ही तेरे निकट न आवैं तो हमको वह पाप होय जो महा मानकर दग्ध साधुनिके निंदकनिके होय है। हे गजगामिनी! हम पिताके वचन पालिवे निमित्त दक्षिणके समुद्रके तीर निसंदेह जाय हैं। मलयाचलके निकट कोई परम स्थानकर तोहि लैबे आवेंगे। हे शुभमते! तू धीर्य राख। या भांति कहकर अनेक सौगन्धकर अति दिलासा देय आप सुमित्रा के नन्दन लक्ष्मण श्रीरामके संग चलवेकूं उद्यमी भए। लोकनिकूं सूते जान रात्रिकूं सीतासहित गोप्य निकसे। प्रभातविषैं इनकूं न देखकर नगरके लोक परमशोककूं प्राप्त भए। राजाकूं अतिशोक उपज्या, वनमाला लक्ष्मण विना घर सूना जानती भई, अपना चित्त जिनशासनविषैं लगाय धर्मानुरागरूप तिष्ठी। राम लक्ष्मण पृथ्वीविषैं विहार करते नरनारिनिकूं मोहतैं, पराक्रमी, पृथ्वीकूं आश्चर्यके कारण, धीरे धीरे लीलातैं विचरैं हैं। जगतके मन अर नेत्रनिकूं अनुराग उपजावते रमैं हैं। इनकूं देख लोग विचारैं हैं जो यह पुरुषोत्तम कौन पवित्र गोत्रविषैं उपजे हैं। धन्य है वह मात जाकी कुक्षिविषैं ये उपजे, अर धन्य है वे नारी जिनकूं ये परणे ऐसा रूप देवनिकूं दुर्लभ, ये सुन्दर कहांतैं आए अर कहां जाय हैं, इनके कहा वांछा है? परस्पर स्त्रीजन ऐसी वार्ता करैं हैं। हे सखी! देखो दोऊ कमल

नेत्र, चन्द्रमा सारिखे अद्भुत वदन जिनके अर एक नारी नागकुमारी समान अद्भुत देखी । न जानिये वे सुर हुते वा नर हुते । हे मुग्धे ! महापुण्य बिना उनका दर्शन नाहीं । अब तो वे दूर गए, पाछे फिरो, वे नेत्र अर मनके चोर जगतका मन हरते फिरं हैं । इत्यादि नर नारिनिके आलाप सुनते सब कू मोहित करते वे स्वेच्छाविहारी, शुद्ध हैं चित्त जिनके, नाना देशनिविषै विहार करते क्षेमांजलि नामा नगरविषै आए । ताके निकट कारीघटा समान सघन वनविषै सुखसू तिष्ठै, जैसैं सौमनसवनमें देव तिष्ठै । तहां लक्ष्मण महा सुन्दर अन्न अर अनेक व्यंजन तैयार किए, दाखनिका रस, सो श्रीराम सीतासू लक्ष्मण सहित भोजन किया ।

अथानन्तर लक्ष्मण श्रीरामकी आज्ञा लेय क्षेमांजलि नाम पुरके देखवेकू चाले । महासुन्दर माला पहिरे, अर पीताम्बर धारे, सुन्दर है रूप जिनका, नानाप्रकारकी बेल वृक्ष तिनकरि युक्त वन, अर निर्मल जलकी भरी नदी, अर नानाप्रकारके क्रीडागिरि अनेक धातुके भरे, अर ऊंचे २ जिनमन्दिर, अर मनोहर जलके निर्वाण अर नानाप्रकारके लोक तिनकू देख नगरविषै प्रवेश किया । कैसा है नगर ? नानाप्रकारके व्यापारकर पूर्ण । सो नगरके लोक इनका अद्भुत रूप देख परस्पर वार्ता करते भए, तिनके शब्द इनने सुने—जो या नगरके जितपद्मानामा पुत्री है ताहि वह परणे जो राजाके हाथ की शक्तिकी चोट खाय जीवता बचे । सो कन्याकी कहा बात, स्वर्गका राज्य देय तौ भी यह बात कोई न करै । शक्तिकी चोटतैं प्राण ही जाय तब कन्या कौन अर्थ ? जगतविषै जीतव्य सर्व वस्तुतैं प्रिय है, तातैं कन्याके अर्थ प्राण कौन देय ? यह वचन सुनकर महाकौतुकी लक्ष्मण काहूकू पूछते भए— हे भद्र ! यह जितपद्मा कौन है ? तब वह कहता भया—यह कालकन्या पंडित माननीय सर्व लोक प्रसिद्ध तुम कहा न सुनी ? या नगरका राजा शत्रुदमन, जाके राणी अनकप्रभा, ताके जितपद्मा पुत्री रूपवंती गुणवंती, जाके वदनकी कांतिकरि कमल जीत्या है, अर गात्रकी शोभाकर कमलिनी जीती, सो तातैं जितपद्मा कहावै है । नवयौवन मंडित, सर्व कलापूर्ण, अद्भुत आभूषणकी धरणहारी ताहि

बड़ेनिकी रीति है । अर भरत महा हर्षथकी पूर्ण है मन जाका तेज तुरंगपर चढ्या अतिवीर्य मुनिके
दर्शनकू चाल्या । सो जा गिरिपर मुनि विराजे हुते तहां पहिले मनुष्य देख गए हुते, सो लार हैं।
तिनकू पूछते जाय हैं—कहां महामुनि हैं, कहां महामुनि हैं ? वे कहै हैं आगे विराजे हैं। सो जा गिरिपर
मुनि हुते वहां जाय पहुँचे, कैसा है गिरि ? विषम पाषाणनिके समूहकरि महा अगम्य, अर नानाप्रकार
के वृक्षनिकरि पूर्ण, पुष्पनिकी सुगन्धकर महासुगन्धित, अर सिंहादिक क्रूर जीवनिकरि भरचा । सो
राजा भरत अश्वतैं उतर महा विनयवान मुनिके निकट गए । कैसे हैं मुनि ? रागद्वेषरहित हैं, शांत
भई हैं इन्द्रियाँ जिनकी, शिलापर विराजमान, निर्भय, अकेले जिनकलपी, अतिवीर्य मुनीन्द्र महातपस्वी
ध्यानी, मुनिपद की शोभाकर संयुक्त, तिनकू देख भरत आश्चर्यकू प्राप्त भया । फूल गए हैं नेत्र
कमल जाके, रोमांच होय आए । हाथ जोड नमस्कारकर साधुके चरणारविंदकी पूजाकर महा नम्री-
भूत होय मुनिभक्तिविषै है प्रेम जाका, सो स्तुति करता भया—हे नाथ ! परमतत्त्वके वेत्ता तुम ही या
जगतविषै शूरवीर हो, जिनने यह जैनेन्द्री दीक्षा महा दुर्द्धर धारी । जे महंत पुरुष विशुद्ध कुलविषै
उत्पन्न भए हैं तिनकी यही चेष्टा है । या मनुष्य लोककू पाय जो फल बड़े पुरुष वांछै हैं सो आपने
पाया । अर हम या जगतकी मायाकरि अत्यन्त दुखी हैं । हे प्रभो ! हमारा अपराध क्षमा करहु, तुम
कृतार्थ हो पूज्यपदकू प्राप्त भए, तुमको बारम्बार नमस्कार होहु । ऐसा कहकर तीन प्रदक्षिणा देय
हाथ जोड़ नमस्कारकर मुनिसम्बन्धी कथा करता करता गिरतैं उतर तुरंगपर चढ़ हजारों सुभटनिकर
संयुक्त अयोध्या आया । समस्त राजानिके निकट सभाविषै कहा कि वे नृत्यकारिणी, समस्त लोक-
निके मनकू मोहित करनी, अपने जीवितविषै हू निर्लोभ प्रबल नृपनकू जीतनहारी कहां गई ? देखो
आश्चर्यकी बात । अतिवीर्यके निकट मेरी स्तुति करें, अर ताहि पकड़े । स्त्री वर्गविषै ऐसी शक्ति
कहां होय ? जानिए है जिनशासनकी देविनिने यह चेष्टा करी । ऐसा चितवन करता संता प्रसन्नचित्त
भया । अर शत्रुघन नानाप्रकारके धान्यकर मंडित जो धरा ताके देखवेकू गया । जगतविषै व्याप्त है

पुरुषका नाम रुचै नाहीं। देवनिका दर्शन हू अप्रिय, मनुष्यनिकी तो कहा बात? जाके निकट कोई पुल्लिग शब्दका उच्चारण हू न कर सकै, यह कैलाशके शिखर समान जो उज्ज्वल मंदिर ताविषै कन्या तिष्ठै है। सैकडनि सहेली जाकी सेवा करै हैं। जो कोई कन्याके पिताके हाथकी शक्तिकी चोटतें बचे ताहि यह कन्या वरै। लक्ष्मण यह वार्ता सुन आश्चर्यकूं प्राप्त भया, अर कोप हू उपज्या। मनमें विचारी महागर्वित दुष्ट चेष्टासंयुक्त यह कन्या ताहि देखूं। यह चिंतवन कर राज-मार्ग होय विमान समान सुन्दर घर देखता, अर मदोन्मत्त हाथी कारी घटा समान, अर तुरंग चंचल अवलोकता अर नृत्यशाला निरखता राजमंदिरविषै गया। कैसा है राजमंदिर? अनेक प्रकारके झरोखानिकर ध्वजानिकरमंडित, शरदके बादर समान उज्ज्वल मंदिर जहाँ कन्या तिष्ठै है, महामनोहर रचनाकर संयुक्त, ऊंचे कोटकर वेष्टित सो लक्ष्मण जाय द्वारपर ठाढा भया। इन्द्रके धनुष समान अनेक वर्णका है तोरण जहां, सुभटनिके समूह अनेक दर्शनिके नानाप्रकार भेट लेयकर आए हैं। कोई निकसे है कोई जाय है। सामंतनिकी भीड़ होय रही है। लक्ष्मणकूं द्वारमें प्रवेश करता देख द्वारपाल सौम्य वाणीसूं कहता भया—तुम कौन हो, अर कौनकी आज्ञातैं आए हो, कौन प्रयोजन राजमंदिरमें प्रवेश करो हो? तब कुमारने कही राजाकूं देखा चाहै हैं, तू जाय राजासों पूछ। तब वह द्वारपाल अपनी ठौर दूजेको राख आप राजातैं जाय विनती करता भया—हे महाराज! आपके दर्शनकूं एक महारूपवान पुरुष आया है, द्वारै तिष्ठै है, नील कमल समान है वर्ण जाका, अर कमललोचन, महा शोभायमान, सौम्य शुभ मूर्ति है। तब राजाने प्रधानकी ओर निरख आज्ञा करी—आवै। तदि द्वारपाल लक्ष्मणकूं राजाके समीप लेय गया, सो समस्त सभा याकूं अति सुन्दर देख हर्षकी वृद्धिकूं प्राप्त भई, जैसे चन्द्रमाकूं देख समुद्रकी शोभा वृद्धिकूं प्राप्त होय। राजा याकूं प्रणामरहित देदीप्यमान विकट स्वरूप देख कछुइक विकारकूं प्राप्त हो पूछता भया। तुम कौन हो, कौन अर्थ कहांतैं यहां आए हो? तदि लक्ष्मण वर्षाकालके मेघ समान शब्द करते भए—मैं राजा भरतका सेवक हूं, पृथ्वीके देखबेकी

अभिलाषाकरि विचरू हूं । तेरी पुत्रीका वृत्तांत सुन यहाँ आया हूं । यह तेरी पुत्री महादुष्ट मरकनी गाय है, नहीं भग्न भए हैं मानरूवी सींग जाके । यह सर्व लोकनिकूं दुःखदायिनी वर्तें है । तब राजा शत्रुदमनने कही मेरी शक्तिकूं जो सहार सकै, सो जितपद्माकूं वरै । तब लक्ष्मण कहता भया तेरी एक शक्तिकरि मेरे कहा होय । तू अपनी समस्त शक्तिकरि मेरे पंच शक्ति लगाय । या भांति राजा के अर लक्ष्मणके विवाद भया । ता समय झरोखाते जितपद्मा लक्ष्मणकूं देख मोहित भई, अर हाथ जोड़ इशारा कर मनै करती भई, जो शक्तिकी चोट मत खावो । तब आप सैन करते भए तू डरै मत । या भांति समस्याविषै ही धीर्य बंधाया । अर राजासूं कही–काहे कायर होय रह्या है, शक्ति चलाय, अपनी शक्ति हमकूं दिखा । तब राजा कही तू मूवा चाहै है, तो झेल । महाकोपकर प्रज्वलित अग्नि समान एक शक्ति चलाई, सो लक्ष्मणने दाहिने करतैं ग्रही, जैसैं गरुड़ सर्पकूं ग्रहै, अर दूसरी शक्ति दूसरे हाथतैं गही, अर तीजी, चौथी दोनों कांखविषै गही । सो चारों शक्तिनिकूं गहै लक्ष्मण ऐसे शोभै है मानो चौदंता हस्ती है । तब राजा पांचवीं शक्ति चलाई सो दांतनितैं गही, जैसे मृगराज मृगोको गहै । तब देवनिके समूह हर्षित होय पुष्पवृष्टि करते भए अर दुन्दुभी बाजे बजाते भए । लक्ष्मण राजासूं कहते भए और है तो और भी चला । तब सकल लोक भयकर कम्पायमान भए । राजा लक्ष्मणका अखण्डबल देख आश्चर्यकूं प्राप्त भया । लज्जाकर नीचा होय गया अर जितपद्मा लक्ष्मण के रूप अर चरित्र कर खैंची थकी आय ठाढी भई । वह कन्या सुन्दरवदनी मृगनयनी लक्ष्मणके समीप ऐसी शोभती भई, जैसैं इन्द्रके समीप शची होय । जितपद्माकूं देख लक्ष्मणका हृदय प्रसन्न भया । ४७१
महा संग्रामविषै जाका चित्त कंपित न होय, सो याकै स्नेहकरि वशीभूत भया । लक्ष्मण तत्काल विनयकर नम्रीभूत होय राजाकूं कहता भया–हे माम ! हम तुम्हारे बालक हैं । हमारा अपराध क्षमा करहु, जे तुम सारिखे गम्भीर नर हैं ते बालकनिकी अज्ञान चेष्टा कर अर कुवचन कर विकारकूं नाहीं प्राप्त होय हैं । तब शत्रुदमन अति हर्षित होय हाथीकी सूण्ड समान अपनी भुजानिकर कुमार

सूं मिल्या, अर कहता भया—हे धीर ! मै महायुद्धविषै माते हाथिनिकूं क्षणमात्रविषै जीतनहारा, सो तूने जीत्या। अर वनके हस्ती पर्वत समान तिनकूं मद रहित करनहारा जो मैं, सो तुम मोहि गर्वरहित किया। धन्य तिहारा पराक्रम, धन्य तिहारा रूप, धन्य तिहारी निर्ममता, महा विनयवान अद्भुत चरित्रके धरणहारे ! तुमसे तुमही हो। या भांति राजाने लक्ष्मणके गुण सभाविषै वर्णन किये। तब लक्ष्मण लज्जाकर नीचा होयगया। अर राजाकी आज्ञाकर मेघकी ध्वनि समान वादित्रनिके शब्द सेवक करते भए, अर याचकनिकूं अतिदान देय उनकी इच्छा पूर्ण करते भए। नगर के विषै आनन्द वार्ता, राजानें लक्ष्मणसूं कहा— हे पुरुषोत्तम ! मेरी पुत्रीका तुम पाणिग्रहण किया चाहो हो तो करो। लक्ष्मणने कही मेरे बड़े भाई अर भावज नगरके निकट तिष्ठै हैं तिनकूं पूछो। तिनकी आज्ञा होय सो तुमको हमको करनी उचित है। वे सर्व नीके जाने हैं। तब राजा पुत्रीकूं अर लक्ष्मणकूं रथमें चढ़ाय सर्व कुटुम्ब सहित रघुवीर पै चाल्या। सो क्षोभकूं प्राप्त हुआ जो समुद्र ताकी गर्जना समान याकी सेनाका शब्द सुनकर अर धूलके पटल उठते देखकर सीता भयभीत होय कहती भई—हे नाथ ! लक्ष्मण ने कुछ उद्धत चेष्टा करी, या दिशाविषै उपद्रव दृष्टि आवै है। तातैं सावधान होय जो कुछ करना होय सो करहु। तब आप जानकीकूं उरसूं लगाय कहते भए—हे देवी ! भय मत करहु। ऐसा कहकर उठे, धनुष ऊपर दृष्टि धरी। तब ही मनुष्यनिके समूहके आगे स्त्रीजन सुन्दर गान करती देखीं, बहुरि निकट ही आईं, सुन्दर हैं अंग जिनके, स्त्रीनिकूं गावती अर नृत्य करती देख श्रीरामकूं विश्वास उपज्या। सीता सहित सुखसूं विराजे। स्त्रीजन सर्व आभूषण मंडित अति मनोहर मंगलद्रव्य हाथमें लिये हर्षके भरे हैं नेत्र जिनके, रथसूं उतर कर आईं, अर राजा शत्रुदमन भी बहुत कुटुम्ब सहित श्रीराम के चरणारविंदकूं नमस्कार कर बहुत विनयसूं बैठ्या। लक्ष्मण अर जितपद्मा एक साथ रथविषै बैठे आए हुते, सो उतर कर लक्ष्मण श्रीरामचन्द्रकूं अर जानकीकूं सीस निवाय प्रणामकर महा विनयवान दूर बैठ्या। सो श्रीराम राजा शत्रुदमनसे कुशल प्रश्न वार्ता करि सुखसूं विराजे। राम

के आगमनकरि राजाने हर्षित होय नृत्य किया, महा भक्तिकरि नगरमें चलवेकी विनती करी । श्रीराम अर सीता अर लक्ष्मण एक रथविषै विराजे । परम उत्साहसू राजाके महल पधारे । मानों वह राज-
पद्म मन्दिर सरोवर ही है । स्त्री रूप कमलनितैं भरया, लावण्यरूप जल है जाविषै, शब्द करते जे आभूषण
पुराण तेही हैं सुन्दर पक्षी जहां । यह दोऊ वीर नवयौवन, महाशोभाकरि पूर्ण, कईएक दिन सुखसू विराजे,
४७३ राजा शत्रुदमन करै है सेवा जिनकी ।

अथानन्तर सर्वलोकके चित्तकू आनन्दके करणहारे राम लक्ष्मण महाधीर वीर सीतासहित अर्धरात्रि कू उठ चले । लक्ष्मणने प्रिय वचनकर जैसे वनमालाकू धीर्य बंधाया हुता, तैसै जितपद्माको धीर्य बंधाया, बहुत दिलासाकर आप श्रीरामके लार भए । नगरके सर्व लोक अर नृपको इनके चलेजानेकी अति चिंता भई, धीर्य न रह्या । यह कथा गौतम स्वामी राजा श्रेणिकसू कहे हैं-हे मगधाधिपति ! ते दोऊ भाई जन्मांतरके उपार्जे जे पुण्य तिनकरि सब जीवनिके वल्लभ, जहां जहां गमन करैं तहां तहां राजा प्रजा सब लोक सेवा करैं, अर यह चाहैं कि न जावें तो भला । सब इन्द्रियनिके सुख अर महा मिष्ट अन्नपानादि विना ही यत्न इन कू सर्वत्र सुलभ, जे पृथ्वीविषै दुर्लभ वस्तु हैं ते सब इनकू प्राप्त होय । महा भाग्य भव्य जीव सदा भोगनितैं उदास हैं । ज्ञानके अर विषयनिके बैर है । ज्ञानी ऐसा चितवन करै हैं—इन भोगनिकर प्रयो-जन नाहीं, ये दुष्ट नाशकू प्राप्त होंय । या भांति यद्यपि भोगनिकी सदा निन्दा ही करै हैं, भोगनितैं विरक्त ही हैं, दीप्तिकरि जीत्या है सूर्य जिनने, तथापि पूर्वोपार्जित पुण्यके प्रभावतैं पहाड़के शिखर-विषै निवास करै हैं तहां हू नानाप्रकार सामग्रीका संयोग होय है, जबलग मुनिपदका उदय नाहीं तब लग देवों समान सुख भोगवै हैं । ४७३

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महा पद्मपुराण संस्कृतग्रन्थ, ताकीभाषा वचनिकाविषै जितपद्माका व्याख्यान वर्णन करनेवाला अड़तीसवां पर्व पूर्ण भया ॥ ३८ ॥

अथानन्तर ये दोय वीर महाधीर सीता सहित वनविषै आए। कैसा है वन? नानाप्रकारके वृक्षनिकर शोभित, अनेक भांतिके पुष्पनिकी सुगन्धिताकर महासुगन्ध, लतानिके मंडपनिकरि युक्त, तहां राम लक्ष्मण रमते रमते आए। कैसे हैं दोनों? समस्त देवोपुनीत सामग्रीकर शरीरका है आधार जिनके। कहूं इक मूंगोंके रंग समान महा सुन्दर वृक्षनिका कूपललेय श्रीराम जानकीके कर्णाभरण करै हैं, कहूइक छोटा वृक्षविषै लग रही जो बेल ताकर हिंडोला बनाय दोऊ भाई झोटा देय देय जानकीकूं झुलावैं हैं, अर आनन्दकी कथा कर सीताकूं विनोद उपजावैं हैं। कभी सीता रामसों कहै है-हे देव! यह बेलि, यह वृक्ष महामनोज्ञ दीखैं है। अर सीताके शरीरका सुगन्धताकर भ्रमर आय लगे हैं, सो दोऊ उडावै हैं। या भांति नानाप्रकारके वननिविषै धीरे धीरे विहार करते दोऊ धीर, मनोग्य हैं चारित्र जिनके, जैसै स्वर्गके वनविषै देव रमैं तैसैं रमते भए। अनेक देशनिकूं देखते अनुक्रमकर वंशस्थल नगर आए। ते दोऊ पुण्याधिकारी तिनकूं सीताके कारण थोडी दूर ही आवनेविषै बहुत दिन लागे, सो दीर्घकालहु दुःख क्लेशका देनहारा न भया, सदा सुखरूप ही रहे। नगरके निकट एक वंशधर नामा पर्वत देख्या, मानूं पृथ्वीकूं भेदकर निकस्या। जहां बांसनिके अति समूह तिनकरि मार्ग विषम है, ऊंचे शिखरनिकी छायाकरि मानों सदा संध्याकूं धारै है, अर निर्झरनोंकर मानों हंसै है। सो नगरतैं राजा प्रजाकूं निकसती देख श्रीरामचन्द्र पूछते भए। अहो! कहा भयकर नगर तजो हो? कोई कहता भया आज तीसरा दिन है। रात्रिके समय या पहाड़के शिखरविषै ऐसी ध्वनि होय है जो अब तक कबहु नाहीं सुनी, पृथ्वी कम्पायमान होय है, अर दशों दिशा शब्दायमान होय है। वृक्षनिकी जड़ उपड़ जाय है। सरोवरनिका जल चलायमान होय है। ता भयानक शब्दकर सर्वलोकनिके कान पीडित होय मानों लोहेके मुदगरनि कर मारे। कोई एक दुष्ट देव जगत्का कंटक हमारे मारवेके अर्थ उद्यमी होय है, या गिरिपर पीड़ा करै है। ताके भयकर संध्या समय लोक भागैं हैं, प्रभातविषै बहुरि आवैं हैं, पांच कोस परे जाय रहै हैं, जहां वाकी ध्वनि न सुनिये। यह वार्ता सुनि सीता राम लक्ष्मणसों

कहती भई—जहाँ यह सर्व लोक जाय हैं वहाँ अपनहु चालें । जे नीतिशास्त्रके वेत्ता हैं वे देश कालकूं जानकर पुरुषार्थ करै हैं, ते कदाचित् आपदाकूं नाहीं प्राप्त होय हैं । तब दोऊ धीर हंसकर कहते भये तू भयकर बहुत कायर है, सो यह लोक जहां जाय हैं तहां तू भी जाहु, प्रभात सब आवें तब तू आइयो । हम तो आज या गिरिपर रहेंगे । यह अत्यन्त भयानक कौनकी ध्वनि होय है सो देखेंगे, यह निश्चय है । यह लोक रंक हैं, भयकर पशु बालकनिकूं लेय भागै हैं, हमकूं काहूका भय नाहीं । तब सीता कहती भई—तिहारे हठको कौन हरिवे समर्थ, तिहारा आग्रह दुर्निवार है । ऐसा कहकर वह पतिके पीछे चाली । खिन्न भए हैं चरण जाके, पहाड़के शिखरपर ऐसी शोभै मानों निर्मल चन्द्रकांति ही है । श्रीरामके पीछे अर लक्ष्मणके आगे सीता कैसी सोहै मानों चन्द्रकांति अर इन्द्रनीलमणिके मध्य पुष्पराग मणि ही है, ता पर्वतका आभूषण होती भई । राम लक्ष्मणकूं यह डर है जो यह कहीं गिरिसे गिर न पड़े । तातैं याका हाथ पकड़ लिए जाय हैं । वे निर्भय पुरुषोत्तम, विषम हैं पाषाण जाके ऐसे पर्वतकूं उलंघ कर सीतासहित शिखरपर जाय पहुँचे । तहां देशभूषण अर कुलभूषण नामा दोय मुनि महाध्यानारूढ़ दोऊ भुज लुंबाए कायोत्सर्ग आसन धरैं खड़े, परम तेजकर युक्त समुद्रसारिखे गम्भीर गिरि सारिखे स्थिर, शरीर अर आत्माकूं भिन्न भिन्न जाननहारे, मोह रहित, नग्न स्वरूप यथाजातरूप धरनहारे, कांतिके सागर, नवयौवन, परम सुन्दर, महासंयमी, श्रेष्ठ हैं आकार जिनके, जिनभाषित धर्मके आराधनहारे, तिनकूं श्रीराम लक्ष्मण देखकर हाथ जोड़ नमस्कार करते भए । अर बहुत आश्चर्यकूं प्राप्त भए । चित्तविषैं चितवते भए जो संसारके सर्व कार्य असार हैं, दुःखके कारण हैं । मित्र द्रव्य स्त्री सर्व कुटुम्ब अर इन्द्रियजनित सुख यह सब दुःख ही हैं, एक धर्म ही सुखका कारण है ।

महा भक्तिके भरे दोऊ भाई परम हर्षकूं धरते विनयकरि नम्रीभूत हैं शरीर जिनके, मुनिनिके समीप बैठे । ताही समय असुरके आगमनतैं महा भयानक शब्द भया । मायामई सर्प अर बिच्छू तिनकर दोनों मुनिनिका शरीर वेष्टित होय गया । सर्प अति भयानक, महा शब्दके करणहारे, काजल समान कारे,

चलायमान है जिह्वा जिनकी । अर अनेक वर्णके अति स्थूल बिच्छू तिनकरि मुनिनके अंग बेढ़े देख, राम लक्ष्मण असुरपर कोपकूं प्राप्त भए । सीता भयकी भरी भरतारके अंगसूं लिपट गई । तब आप कहते भए—तू भय मत करै । याकूं धीर्य बंधाय, दोऊ सुभट निकट जाय सांप बिच्छू मुनिनके अंगतैं दूर किए, चरणारविंदकी पूजा करी । भक्ति से भरी सीताने निर्झर के जल से देर तक उन मुनियों के पैर धोकर मनोहर गंध से लिप्त किये[१] । तथा जो वनको सुगंधित कर रहे थे एवं लक्ष्मणने तोड़ कर दिये थे, ऐसे निकटवर्ती लताओं के फूलों से उनकी पूजा की । अर योगीश्वरनिकी भक्ति बंदना करते भए । श्रीराम वीण लेय बजावते भए अर मधुर स्वरसूं गावते भए—अर लक्ष्मण गान करते भए । गानविषैं ये शब्द गाए—महा योगीश्वर धीर वीर मन वचन कायकर बंदनीक हैं, मनोग्य है चेष्टा जिनकी, देवनिहूविषैं पूज्य, महाभाग्यवंत जिनने अरहंतका धर्म पाया, जो उपमारहित अखंड महाउत्तम तीन भवनविषैं प्रसिद्ध जे महामुनि, जिनधर्मके धुरंधर, ध्यानरूप वज्रदंडकरि महामोहरूप शिलाकूं चूर्ण कर डारे, अर जे धर्मरहित प्राणिनिकूं अविवेकी जान दयाकर विवेकके मार्ग ल्यावैं । परम दयालु,आप तिरैं औरनिकूं तारैं । या भांति स्तुति करि दोऊ भाई ऐसे गावैं, जो वनके तिर्यंचनिहूके मन मोहित भए अर भक्तिकी प्रेरी सीता ऐसा नृत्य करती भई, जैसा सुमेरुके विषैं शची नृत्य करै । जाना है समस्त संगीत शास्त्र जानैं, सुन्दर लक्षणकूं धरे, अमोलक हार मालादि पहिरे, परम लीलाकरि युक्त दिखाई है प्रकटपणे अद्भुत नृत्यकी कला जानैं, सुन्दर हैं बाहुलता जाकी, हावभावादिविषैं प्रवीण, मंद मंद चरणनिकूं धरती, महा लयकूं लिए गीत अनुसार भावकूं बतावती, अद्भुत नृत्य करती महा

१ अथोद्वर्त्यचिर पादौ तयोर्निर्झर–वारिणा । गन्धेन सीतया लिप्तौ चारणा पुरु–भावया ॥४४॥
आसन्नानां च वल्लीनां कुसुमैर्वन–सौरभैः लक्ष्मीधरार्पितैः शुक्लैः पूरितान्तरमर्चितौ ॥५४॥
पद्मपुराण भाग दूसरा पर्व ३९ वाँ (भारतीय ज्ञानपीठ काशी से प्रकाशित)

शोभायमान भासती भई। अर असुरकृत उपद्रवकूं मानूं सूर्य देख न सक्या सो अस्त भया। अर संध्या हू प्रकट होय जाती रही, आकाशविषैं नक्षत्रनिका प्रकाश भया। दशोंदिशाविषै अंधकार फैल गया। ता समय असुरकी मायाकरि महारौद्र भूतनिकेगण हडहड हंसते भए, महा भयंकर हैं मुख जिनके, अर राक्षस खोटे शब्द करते भए, अर मायामई स्यालिनी मुखतैं भयानक अग्निकी ज्वाला काढती शब्द बोलती भईं, अर सैकडों कलेवर भयकारी नृत्य करते भए, मस्तक भुजा जंघादि की तथा अगनिकी वृष्टि होती भई। अर दुर्गंधसहित स्थूल बूंद लोहूकी बरसती भई। अर डाकिनी नग्न स्वरूप लावैं हाडों के आभरण पहिरे, क्रूर है शरीर जिनके, हालैं है स्तन जिनके, खड्ग हैं हाथमें जिनके, वे दृष्टिविषैं आवती भईं, अर सिंह व्याघ्रादिककेसे मुख, तप्तलोह समान लोचन, हस्तविषैं त्रिशूल धारे, होंठ डसते, कुटिल हैं भौंह जिनकी, कठोर हैं शब्द जिनके, ऐसे अनेक पिशाच नृत्य करते भए। पर्वतकी शिला कम्पायमान भई, अर भूकम्प भया। इत्यादि चेष्टा असुरने करी, सो मुनि शुक्लध्यानविषैं मग्न किछु न जानते भए। ये चेष्टा देख जानकी भयकूं प्राप्त भई, पतिके अंगसे लग गई, तब श्रीराम कहते भए—हे देवी! भय मत करहु, सर्व विघ्नके हरणहारे जे मुनिके चरण तिनका शरण गहहु। ऐसा कह कर सीताकूं मुनिके पायन मेल आप लक्ष्मणसहित धनुष हाथविषैं लिए महाबली मेघसमान गरजे, धनुषके चढायवेका ऐसा शब्द भया जैसा वज्रपातका शब्द होय। तब वह अग्निप्रभ नामा असुर इन दोऊ वीरनिकूं बलभद्र नारायण जान भाग गया, बाकी सर्व चेष्टा विलाय गई। श्रीराम लक्ष्मणने मुनिका उपसर्ग दूर किया, तत्काल देशभूषण मुनिनिको केवलज्ञान उपज्या। चतुरनिकायके देव दर्शनकूं आए। विधिपूर्वक नमस्कारकर यथायोग्य बैठे। केवलज्ञानके प्रतापतैं केवलीके निकट रात दिनका भेद न रहै। भूमिगोचरी अर विद्याधर केवलीकी पूजाकर यथायोग्य बैठे, सुर नर विद्याधर सब ही धर्मोपदेश श्रवण करते भए। राम लक्ष्मण हर्षितचित्त सीतासहित केवलीकी पूजाकर हाथ जोड़ नमस्कारकर पूछते भए।

पद्म पुराण ४७८ हे भगवन् ! असुरने आपकूं कौन कारण उपसर्ग किया। अर तुम दोऊविषैं परस्पर अति स्नेह काहेतैं भया ? तब केवलीकी दिव्यध्वनि होती भई–पद्मिनीनामा नगरीविषैं राजा विजयपर्वत गुण-धान्यके उपजिवेका उत्तमक्षेत्र, जाके धारणीनामा स्त्री, अर अमृतसुर नामा दूत, सर्व शास्त्रविषैं प्रवीण राजकाजविषैं निपुण लोकरीतिको जानैं, अर जाकूं गुण ही प्रिय, जाके उपभोग नामा स्त्री ताकी कुक्षि विषैं उपजे उदित मुदित नामा दोय पुत्र व्यवहारमें प्रवीण। सो अमृतसुरनामा दूतकूं राजाने कार्यनिमित्त बाहिर भेज्या। सो वह स्वामीभक्त वसुभूति मित्र सहित चला, वसुभूति पापी याकी स्त्रीसूं आसक्त दुष्टचित्त सो रात्रिविषैं अमृतसुरकों खड्गसे मार नगरीमें वापिस आया। लोग-नितैं कही–मोहि वापिस भेज दिया है। अर ताकी स्त्री उपभोगासे यथार्थ वृत्तांत कहा। तब वह कहती भई–दोऊ पुत्रनिको भी मारि जो हम दोऊ निश्चित तिष्ठैं। सो यह वार्ता उदितकी बहूने सुनी अर सर्व वृत्तांत उदितसैं कहा। यह बहू सासके चरित्रकूं पहिले भी जानती हुती। याकों वसुभूतिकी बहूने समाचार कहे हुते जो परदाराके सेवनतैं पतिसे विरक्त हुती। सो उदितने सब बातोंसे सावधान होय मुदितको भी सावधान किया। अर वसुभूतिका खड्ग देख पिताके मरणका निश्चयकर उदितने वसुभूतिको मारा, सो पापी मरकर म्लेच्छकी योनिकूं प्राप्त भया। ब्राह्मण हुता सो कुशीलके अर हिंसाके दोष-तैं चांडालका जन्म पाया। एक समय मतिवर्धननामा आचार्य, मुनिनिविषै महातेजस्वी पद्मनी नगरी आए सो बसंततिलकनामा उद्यानमें संघसहित विराजे, अर आर्यिकानिकी गुरानी अनुधरा धर्मध्यानविषैं तत्पर सोहू आर्यिकादिनिके संघसहित आई, सो नगरके समीप उपवनविषैं तिष्ठी। अर जा वनमें मुनि विराजे हुते ता वनके अधिकारी आय राजासूं हाथ जोड विनती करते भए–हे देव ! आगेको या पीछेको कहो संघ कौन तरफ जावे ? तब राजा कही जो कहा बात है ? ते कहते भए–उद्यानविषै मुनि आए हैं। जो मनै करैं तो डरें, जो नहीं मनै करें तो तुम कोप करो। यह हमको बड़ा संकट है। स्वर्गके उद्यान समान यह वन है, अब तक काहूको याविषै आने न दिया। परन्तु मुनिनिका कहा करें ? ते दिग- ४७८

श्वर देवनिकर न निवारे जावें, हम सारखे कैसे निवारें ? तब राजा कही तुम मत मने करो, जहां साधु विराजे सो स्थानक पवित्र होय है । सो राजा बड़ी विभूतिसूं मुनिनिके दर्शनको गया । ते महाभाग्य उद्यानमें विराजे हुते । वनकी रजकरि धूसरे हैं अंग जिनके, मुक्ति योग्य जो क्रिया ताकरि युक्त, प्रशांत हैं हृदय जिनके, कईएक कायोत्सर्ग धरे दोनों भुजा लुंबाय खड़े हैं, कईएक पद्मासन धरे विराजे हैं, बेला तेला चौला, पंच उपवास, दस उपवास, पक्षमासादि अनेक उपवासनिकरि शोषा है अंग जिनने, पठन पाठनविषै सावधान, भ्रमर समान मधुर हैं शब्द जिनके, शुद्ध स्वरूपविषै लगाया है चित्त जिनने, सो राजा ऐसे मुनिनिकूं दूरसे देख गर्वरहित होय गजतैं उतर सावधान होय सर्व मुनिनिको नमस्कार कर आचार्यके निकट जाय तीन प्रदक्षिणा देय प्रणामकर पूछता भया । हे नाथ ! जैसी तिहारे शरीर में दीप्ति है तैसे भोग नाहीं । तब आचार्य कहते भए—यह कहा बुद्धि तेरी तू शूरवीरकूं स्थिर जानै है, यह बुद्धि संसारकी बढ़ावनहारी है । जैसे हाथीके कान चपल तैसा जीतव्य चपल है । यह देह कदली के थम्भसमान असार है अर ऐश्वर्य स्वप्न तुल्य है अर कुटम्ब पुत्र कलत्र बांधव सब असार हैं । ऐसा जानकर या संसारकी मायाविषै कहा प्रीति ? यह संसार दुःखदायक है । यह प्राणी अनेक बार गर्भवासके संकट भोगवे है । गर्भवास नरक तुल्य महा भयानक, दुर्गंध कृमिजाल कर पूर्ण, रक्त श्लेषमादिकका सरोवर, महा अशुचि कर्दमका भरा है । यह प्राणी मोहरूप अंधकार करि अंधा भया गर्भवास सूं नाहीं डरै है । धिक्कार है या अत्यन्त अपवित्र देहकूं, सर्व अशुभका स्थानक, क्षणभंगुर, जाका कोई रक्षक नाहीं । जीव देहकूं पोषै वह याहि दुःख देय सो महा कृतघ्न, नसाजालकर बेढा, चर्मकरि ढका अनेक रोगनिका पुंज, जाके आगमनकरि ग्लानिरूप । ऐसे देहमें जे प्राणी स्नेह करै हैं, ते ज्ञानरहित अविवेकी हैं । तिनके कल्याण कहांते होय है ? अर या शरीरविषै इन्द्रिय चोर बसै हैं ते बलात्कार धर्मरूप धनकूं हरै हैं । यह जीवरूप राजा कुबुद्धिरूप स्त्रीसूं रमै है, अर मृत्यु याकूं अचानक ग्रसा चाहै है । मनरूप माता हाथी विषयरूप वनविषै क्रीडा करै हैं । ज्ञानरूप अंकुशतैं याहि वशकर वैराग्यरूप थंभ

सू विवेकी बांधे हैं। यह इन्द्रियरूप तुरंग मोहरूप पताकाकू धरे, परस्त्रीरूप हरित तृणनिविषै महा लोभकू धरते शरीररूप रथकू कुमार्गमें पाड़े हैं। चित्तके प्रेरे चंचलता धरे हैं तातैं चित्तको वश करना योग्य है। तुम संसार शरीर भोगनितैं विरक्त होय भक्तिकर जिनराजकू नमस्कार करहु, निरंतर सुमरहु। जाकरि निश्चयतैं संसार समुद्रकू तिरहु। तप संयमरूप बाणनिकरि मोहरूप शत्रुको हनि, लोकके शिखर अविनाशीपुरका अखंड राज्य करहु, निर्भय निजपुरविषै निवास करहु। यह मुनिके मुखतैं वचन सुनकर राजा विजयपर्वत सुबुद्धि राज्य तज मुनि भया। अर वे दूतके पुत्र दोऊ भाई उदित मुदित जिनवाणी सुन, मुनि होय, महीविषै विहार करते भए। सम्मेदशिखरकी यात्राकू जाते हुते, सो काहू प्रकार मार्ग भूल वनविषै जाय पड़े। वह वसुभूति विप्रका जीव महारौद्र भील भया, तानै देखे, अति क्रोधायमान होय कुठार समान कुवचन बोले, इनकू खड़े राखे अर मारवेकू उद्यमी भया। तब बडा भाई उदित मुदितसे कहता भया।

हे भ्रात! भय मत करहु। क्षमा ढालको अंगीकार करहु। यह मारवेको उद्यमी भया है सो हमने बहुत दिन तपसू क्षमाका अभ्यास किया है सो अब दृढता राखनी। यह वचन सुन मुदित बोला, हम जिनमार्गके सरधानी हमकू कहां भय? देह तो विनश्वर ही है अर यह वसुभूतिका जीव है जो पिताके वैरतैं मारा हुता। परस्पर दोऊ मुनि ए वार्ता कर शरीरका ममत्व तज कायोत्सर्ग धार तिष्ठे। वह मारवेको आया सो म्लेच्छ कहिए भील ताके पतिने मने किया, दोऊ मुनि बचाए। यह कथा सुनि रामने केवलीसू प्रश्न किया—हे देव! वाने बचाए सो वासू प्रीतिका कारण कहा? तब केवलीकी दिव्य-ध्वनिविषै आज्ञा भई। एक यक्षस्थान नाम ग्राम तहां सुरप, अर कर्षक दोऊ भाई हुते। एक पक्षीकू पारधी जीवता पकड ग्राममें लाया सो इन दोऊ भाईने द्रव्य देय छुडाया। सो पक्षी मरकर म्लेच्छपति भया, अर वे सुरप कर्षक दोऊ वीर उदित मुदित भए। ता परोपकारकरि वाने इनको बचाए। जो कोई जेती नेकी करै है सो वह भी तासैं नेकी करै है, अर जो काहूसू बुरी करै है वाहूसू वह हू बुरी

करैं हैं । यह संसारी जीवनिकी रीति है । तातैं सबनिका उपकार ही करहु । काहू प्राणीसूं वैर न करना । एक जीवदया ही मोक्षका मार्ग है, दया बिना ग्रंथनिके पढ़बेकरि कहा ? एक सुकृत ही सुख का कारण सो करना । वे उदित मुदित मुनि उपसर्गतैं छूट सम्मेदशिखरकी यात्राकूं गए । अर अन्य हू अनेक तीर्थनिकी यात्रा करी । रत्नत्रयका आराधनकरि समाधितैं प्राण तज स्वर्गलोक गए । अर वह वसुभूतिका जीव जो म्लेच्छ भया हुता सो अनेक कुयोनिविषै भ्रमणकर मनुष्य देह पाय तापस-व्रत धर, अज्ञान तपकर मर ज्योतिषी देवनिकेविषै अग्निकेतु नामा क्रूर देव भया । अर भरतक्षेत्रके विषम अरिष्टपुर नगर, जहां राजा प्रियव्रत महा भोगी ताके दो राणी महा गुणवंती, एक कनकप्रभा दूजी पद्मावती । सो वे उदित मुदितके जीव स्वर्गसूं चयकर पद्मावती राणीके रत्नरथ विचित्ररथ नामा पुत्र भए, अर कनकप्रभाके वह ज्योतिषी देव चयकर अनुधर नामा पुत्र भया । राजा प्रियव्रत पुत्रकूं राज्य देय भगवानके चैत्यालयविषै छह दिनका अनशन धार देह त्याग स्वर्गलोक गया ।

अथानन्तर एक राजाकी पुत्री श्रीप्रभा लक्ष्मीसमान, सो रत्नरथने परणी । ताकी अभिलाषा अनुधरके हुती । सो रत्नरथतैं अनुधरका पूर्व जन्मका तो वैर हुता ही, बहुरि नया वैर उपजा । सो अनुधर रत्नरथकी पृथ्वी उजाड़ने लगा । तब रत्नरथ अर विचित्ररथ दोऊ भाइनि अनुधरकूं युद्धमें जीत देशतैं निकाल दिया । सो देशतैं निकासनेतैं अर पूर्व वैरतैं महा क्रोधकूं प्राप्त होय जटा अर वक्कलका धारी तापसी भया, विषवृक्ष समान कषाय विषका भरया । अर रत्नरथ विचित्ररथ महातेजस्वी चिरकाल राज्य कर मुनि होय तपकर स्वर्गविषै देव भए, महासुख भोग तहांतैं चयकर सिद्धार्थ नगरकेविषै राजा क्षेमंकर राणी विमला, तिनके महासुन्दर देशभूषण कुलभूषण नामा पुत्र होते भए । सो विद्या पढ़नेके अर्थ घरमें उचित क्रीड़ा करते तिष्ठे । ता समय एक सागरघोष नामा पंडित अनेक देशनिमें भ्रमण करता आया । सो राजा पंडितकूं बहुत आदरसूं राखा । अर ये दोऊ पुत्र पढ़नेकूं सौंपे । सो महा विनयकर संयुक्त सर्वकला सीखीं । केवल एक विद्या-गुरुको जानें या विद्याको जानें और कुटुम्बमें काहूको न जानें ।

तिनके एक विद्याभ्यासहीका कार्य : विद्यागुरुतैं अनेक विद्या पढ़ी। सर्व कलाके पारगामी होय पितापै आए। सो पिता इनकूं महाविद्वान् सर्व कला निपुण देखकर प्रसन्न भया। पंडितको मनवांछित दान दिया। यह कथा केवली रामसूं कहै है, वे देशभूषण कुलभूषण हम हैं। सो कुमार अवस्थामें हमने सुनी जो पिताने तिहारे विवाहके अर्थ राजकन्या मंगाई हैं। यह वार्ता सुनकर परमविभूति धरे, तिनकी शोभा देखवेको नगर बाहिर आयवेको उद्यमी भए। सो हमारी बहिन कमलोत्सवा कन्या झरोखेमें बैठी नगरी की शोभा देखती हुती। सो हम तो विद्याके अभ्यासी, कबहूं काहूको न देखा, न जाना। हम न जाने यह हमारी बहिन है। अपनी मांग जान विकाररूप चित्त किया। दोऊ भाइनिके चित्त चले, दोऊ परस्पर मनविषै विचारते भए—याहि मैं परणूं, दूजा भाई परणा चाहै तो ताहि मारूं। सो दोऊके चितविषै विकारभाव अर निर्दईभाव भया। ताही समय बन्दीजनके मुख ऐसा शब्द निकसा कि राजा क्षेमंकर विमला राणी सहित जयवन्त होवे। जाके दोनों पुत्र देवन समान, अर यह झरोखेविषै बैठी कमलोत्सवा इनकी बहिन सरस्वती समान। दोऊ वीर महागुणवान, अर बहिन महागुणवंती। ऐसी संतान पुण्याधिकारिनिके ही होय है। जब यह वार्ता हमने सुनी तब मनविषै विचारी-अहो! देखो मोह कर्मकी दुष्टता, जो हमारे बहिनकी अभिलाषा उपजी। यह संसार असार महादुःखका भरा, हाय! जहां ऐसा भाव उपजै, पापके योग करि प्राणी नरक जांय, वहां महादुःख भोगे। यह विचारकर हमारे ज्ञान उपजा सो वैराग्यको उद्यमी भए। तब माता पिता स्नेहसूं व्याकुल भए। हमने सबसूं ममत्व तज दिगम्बरी दीक्षा आदरी। आकाशगामिनी रिद्धि सिद्धभई। नानाप्रकारके जिन तीर्थादिविषै विहार किया। तप ही है धन जिनके। अर माता पिता राजा क्षेमंकर अगले भी भवका पिता सो हमारे शोकरूप अग्निकर तप्तायमान हुवा। सर्व आहार तज मरणको प्राप्त भया सो गरुडेंद्र भया। भवनवासी देवनिविषै गरुड़कुमार जातिके देव, तिनका अधिपति, महा सुन्दर, महा पराक्रमी, महालोचन नाम, सो आयकर यह देवनिकी सभाविषै बैठा है। अर वह अनुधर तापसी विहार करता कौमुदी नगरी गया।

अपने शिष्यनिके समूह करि बेढा। तहां राजा सुमुख ताके राणी रतिवती परम सुन्दरी, सैकडा राणिनिविषैं प्रधान, अर ताके एक नृत्यकारणी मानों मदकी पताका ही है, अति सुन्दर रूप अद्भुत चेष्टा की धरणहारी। ताने साधुदत्त मुनिके समीप सम्यक्‌दर्शन ग्रह्या, तबते कुदेव कुधर्मकूं तृणवत् जाने। ताके निकट एक दिन राजा कही यह अनुधर तापसी महातपका निवास है। तब मदनाने कही हे नाथ! अज्ञानीका कहा तप? लोकविषैं पाखण्ड रूप है। यह सुनकर राजाने क्रोध किया। तू तपस्वी की निंदा करै है। तब वाने कही आप कोप मत करहु, थोड़े ही दिनविषैं याकी चेष्टा दृष्टि पड़ेगी। ऐसा कहकर घर जाय, अपनी नागदत्ता नामा पुत्रीको सिखाय तापसीको आश्रम पठाई। सो वह देवांगना समान परम चेष्टाकी धरणहारी महा विभ्रमरूप तापसीको अपना शरीर दिखावती भई। सो याके अंग उपंग महा सुन्दर निरखकर अज्ञानी तापसीका मन मोहित भया, अर लोचन चलायमान भए। जो अंगपर नेत्र गए वहां ही बंध गया। कामबाणनिकरि तापसी पीडित भया। व्याकुल होय देवांगना समान जो यह कन्या ताके समीप आय पूछता भया, तू कौन है अर यहाँ कहाँ आई है? संध्याकालविषैं सब ही लघु वृद्ध अपने स्थानकविषै तिष्ठै हैं। तू महासुकुमार अकेली वनमें क्यों विचरै है? तब वह कन्या मधुर शब्दकर याका मन हरती संती दीनताको लिये बोली, चचल नीलकमल समान हैं लोचन जाके, हे नाथ! दयावान! शरणागत-प्रतिपाल! आज मेरी माताने मोहि घरते निकास दई, सो अब मैं तिहारे भेषकर तिहारे स्थानक रहना चाहूं हूं। तुम मोसों कृपा करहु, रात दिन तिहारी सेवाकर मेरा यह लोक परलोक सुधरेगा। धर्म अर्थ काम इनविषै कौनसा पदार्थ है जो तुम विषैं न पाइए। परम निधान हो, मैं पुण्यके योगतैं तुम पाये। या भांति कन्याने कही तब याका मन अनुरागी जान विकल तापसी कामकर प्रज्वलित बोला-हे भद्रे! मैं कहा कृपा करूं, तू कृपाकर प्रसन्न होहु, मैं जन्मपर्यंत तेरी सेवा करूंगा। ऐसा कहकर हाथ चलावनेका उद्यम किया, तब कन्या अपने हाथसूं मने कर आदरसहित कहती भई-हे नाथ! मैं कुमारी कन्या, ऐसा करना उचित नाहीं। मेरी

मताके घर जायकर पूछो, घर भी निकट ही है। जैसी मोपर तिहारी करुणा भई है, तैसे मेरी माको प्रसन्न करहु, वह तुमको देवेगी, तब जो इच्छा होय सो करियो। यह कन्याके वचन सुन मूढ तापसी व्याकुल होय तत्काल कन्याकी लार रात्रिको ताकी माताके पास आया। कामकर व्याकुल हैं सर्व इन्द्रिय जाकी। जैसे माता हाथी जलके सरोवरविषै पैठे तैसे नृत्यकारिणी के घरविषै प्रवेश किया। गौतमस्वामी राजा श्रेणिकसे कहै हैं–

हे राजन्! कामकर ग्रसाहुवा प्राणी न स्पर्शे, न स्वादे, न सूंघे, न देखे, न सुने, न जाने, न डरे अर न लज्जा करे। महा मोहसे निरंतर कष्टकू प्राप्त होय है। जैसे अंधा प्राणी सर्पनिके भरे कूपमें पड़े। तैसे कामांध जीव स्त्रीके विषयरूप विषमकूपमें पड़े। सो वह तापसी नृत्यकारिणीके चरणमें लोट अति अधीन होय कन्याकू याचता भया। ताने तापसीको बांध राखा, राजाको समस्या हुती। सो राजाने आय कर रात्रिको तापसी बन्धा देखा। प्रभात तिरस्कारकरि निकास दिया। सो अपमान कर लज्जायमान महादुःखको धरता संता पृथ्वीविषै भ्रमणकर मूवा। अनेक कुयोनिविषै जन्म मरण किए। बहुरि कर्मानुयोगकर दरिद्रीके घर उपजा। जब यह गर्भमें आया तब ही याकी माताने याके पिताको क्रूर वचन कहकर कलह किया। सो उदास होय विदेश गया, अर याका जन्म भया। बालक अवस्था हुती तब भीलनि देशके मनुष्य बन्द किये, सो याकी माताभी बन्दीमें गई। सब कुटुम्ब रहित यह परम दुखी भया। कईएक दिन पीछे तापसी होय अज्ञान तप कर ज्योतिषी देवनिविषै अग्निप्रभ नामा देव भया। अर एक समय अनन्तवीर्य केवलीकूं धर्मविषैं निपुण जो शिष्य, तिनने पूछ्या, कैसे हैं केवली? चतुरनिकायके देव अर विद्याधर तथा भूमिगोचरी तिनकरि सेवित, हे नाथ! मुनिसुव्रतनाथ के मुक्ति गये पीछे तुम केवली भए, तुम समान संसारका तारक कौन होयगा। तब तिनने कही देशभूषण कुलभूषण होवेंगे। केवलज्ञान अर केवलदर्शनके धरणहारे, जगत्विषै सार, जिनका उपदेश पायकर लोक संसार समुद्रकूं तिरेंगे। ये वचन अग्निप्रभने सुने सो सुनकर अपने स्थानक गया। इन दिननिमें कुअवधि कर हमकू या

पर्वतविषै तिष्ठे जान 'अनन्तवीर्य केवलीका वचन मिथ्या करू' ऐसा गर्वधर पूर्व वैरकर उपद्रव करनेकूं आया। सो तुमकूं बलभद्र नारायण जान भयकर भाज गया। हे राम! तुम चरम शरीरी, तद्भव मोक्षगामी बलभद्र हो। अर लक्ष्मण नारायण हैं। ता सहित तुमने सेवा करी अर हमारे घातिया कर्मके क्षयसे केवलज्ञान उपज्या। या प्रकार प्राणीनिके वैरका कारण सर्व वैरानुबन्ध है, ऐसा जानकर जीवनिके पूर्वभव श्रवणकर, हे प्राणी हो! रागद्वेष तज, निश्चल होवो। ऐसे महापवित्र केवलीके वचन सुन सुर नर असुर बारम्बार नमस्कार करते भये, अर भवदुःखतैं डरे। अर गरुडेन्द्र परम हर्षित होय केवलीके चरणारविंदकूं नमस्कार कर महा स्नेहकी दृष्टि विस्तारता, लहलहाट करै हैं मणि कुण्डल जाके, रघुवंशमें उद्योत करणहारे जे राम तिनसों कहता भया-हे भव्योत्तम! तुम मुनिनिकी भक्ति करी सो मैं अति प्रसन्न भया। ये मेरे पूर्व भवके पुत्र हैं जो तुम मांगों सो मैं देहुं। तब श्रीरघुनाथ क्षणएक विचार कर बोले तुम देवनिके स्वामी हो, कभी हमपै आपदा परै तो चितारियो। साधुनिकूं सेवाके प्रसादसे यह फल भया जो तुम सारिखोंसे मिलाप भया। तब गरुडेन्द्रने कही तुम्हारा वचन मैं प्रमाण किया। जब तुमकूं कार्य पड़ेगा तब मैं तिहारे निकट ही हूं। ऐसा कहा तब अनेक देव मेघकी ध्वनि समान वादित्रनिके नाद करते भये। साधुनिके पूर्वभव सुन कईएक उत्तम मनुष्य मुनि भये, कईएक श्रावकके व्रत धारते भए। वे देशभूषण कुलभूषण केवली, जगत् पूज्य, सर्व संसारके दुःखसे रहित, नगर ग्राम पर्वतादि सर्व स्थानविषै विहार करैं, धर्मका उपदेश देते भये। यह दोऊ केवलिनिके पूर्वभवका चरित्र जे निर्मल स्वभावके धारक भव्यजीव श्रवण करैं वे सूर्य समान तेजस्वी पापरूप तिमिरकूं शीघ्र ही हरें।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महा पद्मपुराण संस्कृतग्रन्थ, ताकीभाषा वचनिकाविषै देशभूषण कुलभूषण केवलीका व्याख्यान वर्णन करनेवाला उनतालीसवां पर्व पूर्ण भया॥ ३९॥

अथानन्तर केवलीके मुखतैं रामचन्द्रको चरम शरीरी कहिये तद्भव मोक्षगामी सुनकर सकल राजा जय जय शब्द कहकर प्रणाम करते भये। अर वंशस्थलपुरका राजा सुरप्रभ महा निर्मलचित्त राम लक्ष्मण सीताकी भक्ति करता भया। महिलनिके शिखरकी कांतिकरि उज्ज्वल भया है आकाश जहां, ऐसा जो नगर वहां चलनेकी राजा प्रार्थना करी, परन्तु रामने न मानी। वंशगिरिके शिखर हिमाचलके शिखर समान सुन्दर, जहां नलिनी वनविषैं महारमणीक विस्तीर्ण शिला, तहां आय हंस समान विराजे। कैसा है वन? नानाप्रकारके वृक्ष अर लतानि करि पूर्ण, अर नानाप्रकारके पक्षी करै है नाद जहां, सुगन्ध पवन चालै है, भांति भांतिके फल पुष्प तिनकरि शोभित, अर सरोवरनिमें कमल फूल रहे हैं, स्थानक अति सुन्दर, सर्व ऋतुकी शोभा जहां बन रही है, शुद्ध आरसीके तल समान मनोग्य भूमि, पांच वर्णके रत्ननिकरि शोभित, जहां कुंद मौलसिरी मालती स्थलकमल, जहां अशोक वृक्ष नागवृक्ष इत्यादि अनेक प्रकारके सुगन्ध वृक्ष फूल रहे हैं, तिनके मनोहर पल्लव लहलहाट करै हैं। तहां राजाकी आज्ञाकर महा भक्तिवन्त जे पुरुष तिनने श्रीरामकूं विराजनेके निमित्त वस्त्रनिके महा मनोहर मण्डप बनाय, सेवक जन महा चतुर सदा सावधान अति आनन्दके करणहारे, मंगलरूप वाणीके बोलनहारे, स्वामीकी भक्तिविषै तत्पर, तिनने बहुत तरहके चौड़े ऊंचे वस्त्रनिके मण्डप बनाये। नानाप्रकारके चित्राम हैं जिनमें, अर जिन पर ध्वजा फरहरै हैं, मोतिनकी माला जिनके लटके हैं, क्षुद्र घंटिकानिके समूह कर युक्त, अर जहां मणिनिकी झालर लूम्ब रही है, महा देदीप्यमान सूर्यकीसी किरण धरैं, अर पृथ्वी पर पूर्ण कलश थापे हैं, अर छत्र चमर सिंहासनादि राज चिह्न तथा सर्व सामग्री धरै हैं, अनेक मंगलद्रव्य हैं। ऐसे सुन्दर स्थलविषै सुखसों तिष्ठै हैं। जहां जहां रघुनाथ पांव धरैं तहां तहां पृथ्वी पर राजा अनेक सेवा करैं। शय्या आसन, मणि सुवर्णके नानाप्रकारके उपकरण, अर इलायची, लवंग, ताम्बूल, मेवा, मिष्टान्न तथा श्रेष्ठ वस्त्र, अद्भुत आभूषण, अर महा सुगन्ध, नानाप्रकारके भोजन दधि, दुग्ध, घृत, भांति भांति अन्न इत्यादि अनुपम वस्तु लावैं। या भांति

सब ठौर सब जन श्रीरामकू पूजे। वंशगिरि पर श्रीराम लक्ष्मण सीताके रहिवेको मण्डप रचे। तिनमें किसी ठौर गीत, कहीं नृत्य, कहीं वादित्र बाजै हैं। कहूं सुकृतकी कथा होय है अर नृत्यकारिणी ऐसा नृत्य करैं मानों देवांगनाही हैं। कहीं दान बटै है। ऐसे मंदिर बनाए जिनका कौन वर्णन करसकै, जहां सर्व सामग्री पूर्ण, जो याचक आवै सो विमुख न जांय। दोनों भाई सब आभरणनिकरि युक्त, सुन्दर वस्त्र धरैं मनवांछित दानके करणहारे, महा यशकर मण्डित, अर सीता परम सौभाग्यकी धरणहारी, पापके प्रसंगसू रहित, शास्त्रोक्त रीतिकर रहे। ताकी महिमा कहांतक कहिए। अर वंशगिरिविषै श्रीरामचन्द्रने जिनेश्वर देवके हजारों अद्भुत चैत्यालय बनवाये। महादृढ हैं स्तंभ जिनके, योग्य है लम्बाई चौड़ाई ऊंचाई जिनकी, अर सुन्दर झरोखानिकरि शोभित, तोरण सहित हैं द्वार जिनके, कोट अर खाई कर मंडित, सुन्दर ध्वजानिकरि शोभित, बंदनाके करणहारे भव्यजीव तिनके मनोहर शब्द संयुक्त, मृदंग, वीणा, बांसुरी, जालरी, झांझ, मजीरा, शंख, भेरी इत्यादि वादित्रनिके शब्दकर शोभायमान, निरंतर आरम्भए हैं महा उत्सव जहां। ऐसे रामके रचे रमणीक जिनमंदिर, तिनकी पंक्ति शोभती भई। तहां पंच वर्णके प्रतिबिंब जिनेन्द्र सर्व लक्षणनि कर संयुक्त, सर्व लोकनिकरि पूज्य विराजते भए। एक दिन श्रीराम कमललोचन लक्षमणसू कहते भए—हे भाई! यहां अपने तांई दिन बहुत बीते, अर सुखसू या गिरि पर रहे, श्रीजिनेश्वरके चैत्यालय बनायवेकर पृथ्वी में निर्मल कीर्ति भई, अर या वंशस्थलपुरके राजाने अपनी बहुत सेवा करी, अपने मन बहुत प्रसन्न किए। अब यहां ही रहैं तो कार्यकी सिद्धि नाहीं, अर इन भोगनिकर मेरा मन प्रसन्न नाहीं। ये भोग रोगके समान हैं—ऐसा ही जानता हूं, तथापि ये भोगनिके समूह मोहि क्षणमात्र नाहीं छोड़े है। सो जबतक संयमका उदय नाहीं तबतक ये बिना यत्न आय प्राप्त होय हैं। या भवविषै जो कर्म यह प्राणी करै है ताका फल परभवमें भोगवै है। अर पूर्व उपार्जे के कर्म तिनका फल वर्तमान कालविषै भोगै है। या स्थलमें निवास करते अपने सुख सम्पदा है, परन्तु जे दिन जाय हैं वे फेर न आवैं; नदीका

वेग, अर आयुके दिन, अर यौवन गए वे फेर न आवें। ता कर्णरवा नाम नदीके समीप दंडक बन सुनिये है। वहां भूमिगोचरनिकी गम्यता नाहीं, अर वहां भरतकी आज्ञाकाहू प्रवेश नाहीं। वहां समुद्र के तट एक स्थान बनाय निवास करेंगे। यह रामकी आज्ञा सुन लक्ष्मणने विनती करी–हे नाथ! आप जो आज्ञा करोगे सोई होयगा। ऐसा विचार दोऊ बीर महाधीर इन्द्रसारिखे भोग भोगि वंश गिरितैं सीता सहित चाले। राजा सुरप्रभ वंशस्थलपुरका पति लार चाल्या सो दूर तक गया। आप विदा किया सो मुश्किलसे पीछे बाहुड़, महा शोकवंत अपने नगरमें आया। श्रीरामका विरह कौन कौनको शोकवंत न करै? गौतमस्वामी राजा श्रेणिकसू कहै हैं–हे राजन्! वह वंशगिरि बड़ा पर्वत, जहां अनेक धातु सो रामचन्द्रने जिनमंदिरकी पंक्ति कर महा शोभायमान किया। कैसे है जिनमन्दिर? दिशानिके समूहकू अपनी कांति करि प्रकाशरूप करै हैं। ता गिरिपर श्रीरामने परम सुन्दर जिन-मन्दिर बनाए, सो वंशगिरि रामगिरि कहाया, या भांति पृथ्वीपर प्रसिद्ध भया। रवि समान है प्रभा जाकी।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रंथ, ताकी भाषावचनिकाविषै रामगिरिका वर्णन करनेवाला चालीसवां पर्व पूर्ण भया ॥ ४० ॥

अथानन्तर राजा अरण्यके पोता दशरथके पुत्र राम लक्ष्मण सीतासहित दक्षिण दिशाके समुद्रकू चाले। कैसे हैं दोऊ भाई? महा सुखके भोक्ता, नगर ग्राम तिनकरि भरे जे अनेक देश तिनको उलंघ कर महा वनविषै प्रवेश करते भए। जहां अनेक मृगनिके समूह हैं, अर मार्ग सूझै नाहीं, अर उत्तम पुरुषनिकी बस्ती नाहीं। जहां विषम स्थानक सो भील भी विचर न सकैं, नानाप्रकार के वृक्ष अर बेल तिनकर भरचा, महा विषम, अति अंधकाररूप, जहां पर्वतनिकी गुफा, गम्भीर निझरने झरैं हैं, ता वन विषै जानकी प्रसंगतैं धीरे धीरे एक एक कोस रोज चाले। दोऊ भाई निर्भय अनेक क्रीडाके करणहारे

नरमदा नदी पहुँचे । जाके तट महारमणीक प्रचुर तृणनिके समूह अर समानता धरे, महाछायाकारी अनेक वृक्ष फल पुष्पादिकरि शोभित । अर जाके समीप पर्वत, ऐसे स्थानकूं देख दोऊ भाई वार्ता करते भए । यह वन अति सुन्दर अर नदी सुन्दर ऐसा कहकर रमणीक वृक्षकी छायाविषै सीतासहित तिष्ठे । क्षणएक तिष्ठकर तहांके रमणीक स्थानक निरखकर जलक्रीडा करते भए । बहुरि महामिष्ट आरोग्य पक्व फल फूलनि के आहार बनाये, सुखकी है कथा जिनके, तहां रसोईके उपकरण अर बासण माटीके अर बांसनिके नानाप्रकार तत्काल बनाय, महास्वादिष्ट सुन्दर सुगन्ध आहार, वनके धान सीताने तैयार किए । भोजनके समय दोऊ वीर मुनिके आयवेके अभिलाषी द्वारापेक्षणको खड़े । ता समय दो चारण मुनि आए—सुगुप्ति अर गुप्ति है नाम जिनके, ज्योतिपटलकर संयुक्त है शरीर जिनका, अर सुन्दर है दर्शन जिनका, मति श्रुति अवधि तीन ज्ञान विराजमान, महाव्रतके धारक, परम तपस्वी, सकल वस्तु की अभिलाषारहित, निर्मल हैं चित्त जिनके, मासोपवासी, महाधीर वीर, शुभचेष्टाके धरणहारे, नेत्रनिकूं आनन्दके करता, शास्त्रोक्त आचारकर संयुक्त है शरीर जिनका, सो आहारकूं आए । सो दूरतैं सीताने देखे । तब महाहर्षके भरे हैं नेत्र जाके, अर रोमांचकर संयुक्त है शरीर जाका, पतिसों कहती भई, हे नाथ ! हे नर श्रेष्ठ ! देखहु ! देखहु ! तपकर दुर्बल शरीर दिगम्बर कल्याणरूप चारण युगल आए । तब राम कही—हे प्रिये ! हे पंडिते ! सुन्दर मूर्ति ! वे साधु कहां हैं ? हे रूप आभरण की धरणहारी ? धन्य हैं भाग्य तेरे, तूने निर्ग्रंथ युगल देखे, जिनके दर्शनतैं जन्म जन्मके पाप जाये, भक्तिवंत प्राणीके परम कल्याण होय । जब या भांति रामने कही तब सीता कहती भई—ये आए, ये आए । तब ही दोनों मुनि रामके दृष्टि पड़े । जीवदयाके पालक, ईर्यासमिति सहित, समाधानरूप हैं मन जिनके । तब श्रीरामने सीता सहित सन्मुख जाय नमस्कारकर महाभक्तियुक्त श्रद्धा सहित मुनिनिकूं आहार दिया । आरणी भैंसोंका अर वनकी गायोंका दुग्ध, अर छुहारे गिरी दाख नानाप्रकार के वनके धान्य, सुन्दर घी, मिष्टान्न, इत्यादि मनोहर वस्तु विधिपूर्वक तिनकरि मुनिनकूं पारणा करा-

धते भए। तें मुनि भोजनके स्वादके लोलुपतासूं रहित, निरन्तराय आहार करते भए। जब रामने अपनी स्त्री सहित भक्तिकर आहार दिया, तब पंचाश्चर्य भए, रत्ननिकी वर्षा, पुष्पवृष्टि, शीतल मंद सुगन्ध पवन, अर दुंदुभी बाजे, जयजयकार शब्द। सो जा समय रामके मुनिनिका आहार भया ता समय वनविषै एक गृध्र पक्षी अपनी इच्छाकर वृक्षपर तिष्ठै था। सो अतिशयकर संयुक्त मुनिनकूं देख अपने पूर्वभव जानता भया कि कोई एकभव पहिले मैं मनुष्य हुता, प्रमादी अविवेककर जन्म निष्फल खोया, तप संयम न किया, धिक्कार मो मूढबुद्धिकूं। अब मैं पापके उदयकरि खोटी योनिविषै आय पड्या, कहा उपाय करूं? मोहि मनुष्य भवविषै पापी जीवनि भरमाया। वे कहिवेके मित्र अर महाशत्रु, सो उनके संगमें धर्मरत्न तज्या, अर गुरुनिके वचन उलंघ महापाप आचर्‌या। मैं मोहकर अंध, अज्ञान तिमिरकर धर्म न पहिचान्या। अब अपने कर्म चितार उरविषै जलूं हूं। बहुत चितवन कर कहा? दुखके निवारनेके अर्थ इन साधुनिका शरण गहूं, ये सर्वसुखके दाता, इनसूं मेरे परम अर्थकी प्राप्ति निश्चय सेती होयगी। या भांति पूर्वभवके चितारनेतैं प्रथम तो परम शोककूं प्राप्त भया हुता। बहुरि साधुनिके दर्शनतैं तत्काल परम हर्षित होय, अपनी दोऊ पांख हलाय, आंसुनिकर भरे हैं नेत्र जाके, महा विनयकर मंडित पक्षी वृक्षके अग्रभागतैं भूमिविषै पड्या। सो महामोटा पक्षी ताके पडनेके शब्दकरि हाथी अर सिंहादि वनके जीव भयकर भाग गए, अर सीता भी आकुलचित्त भई। देखो यह ढीठ पक्षी मुनिनिके चरणनिके कहांसूं आय पड्या? कठोर शब्दकर घना ही निवा-रया, परन्तु वह पक्षी मुनिनिके चरणविषै धोवनविषै आय पड्या। चरणोदकके प्रभाव कर क्षण-मात्रविषै ताका शरीर रत्नोंकी राशि समान नानाप्रकारके तेजकर मण्डित होय गया, पांख तो स्वर्ण की प्रभाको धरते भए, दोऊ पांव वैडूर्यमणिसमान होय गए, अर देह नानाप्रकारके तेजकर रत्ननिकी छविको धरता भया, अर चूंच मूंगासमान आरक्त भई। तब यह पक्षी आपकूं अर रूपकूं देख परम हर्षकूं प्राप्त भया, मधुरनादकर नृत्य करवेकूं उद्यमी भया। देवनिके दुन्दुभी समान है नाद जाका,

नेत्रनितैं आनन्दके अश्रुपात डारता शोभता भया। जैसा मोर मेहके आगमनविषै नृत्य करै तैसा मुनिके आगैं नृत्य करता भया। महा मुनि विधिपूर्वक पारणाकर वैडूर्य मणिसमान शिलापर विराजे। पद्मराग मणिसमान हैं नेत्र जाके, ऐसा पक्षी पांख संकोच मुनिनिके पांओंको प्रणामकर आगै तिष्ठा। तब श्रीराम फूले कमल समान हैं नेत्र जिनके, पक्षीकूं प्रकाशरूप देख आप परम आश्चर्यकूं प्राप्त भए। साधुनिके चरणारविंदको नमस्कारकर पूछते भए। कैसे हैं साधु? अठाईस मूलगुण, चौरासी लाख उत्तरगुण, वेही हैं आभूषण जिनके। बारम्बार पक्षीकी ओर निरख राम मुनिसूं पूछतें भए—हे भगवन्! यह पक्षी प्रथम अवस्थाविषै महाविरूप अंग हुता सो क्षणमात्रविषैं सुवर्ण अर रत्ननिके समूहकी छवि धरता भया। यह अशुचि सर्व मांसका आहारी दुष्ट गृध्रपक्षी आपके चरणनिके निकट तिष्ठकर महाशांत भया सो कौन कारण? तब सुगुप्ति नामा मुनि कहते भए—हे राजन्! पूर्वै या स्थलविषै दंडकनामा देश हुता, जहां अनेक ग्राम नगर पट्टण संवाहन मटंब घोष खेट करवट द्रोणमुख हुते। वाडिकरयुक्त सो ग्राम, कोट खाई दरवाजेनिकर मंडित सो नगर, अर जहां रत्ननिकी खान सो पट्टण, पर्वतके ऊपर सो संवाहन, अर जाहि पांचसौ ग्राम लागे सो मटंब, अर गायनिके निवास गुवालनिके आवास सो घोष, अर जाके आगे नदी सो खेट, अर जाके पीछे पर्वत सो करवट, अर समुद्रके समीप सो द्रोणमुख, इत्यादि अनेक रचनाकार शोभित। तहां कर्णकुण्डल नामा नगर महामनोहर, ताविषै या पक्षीका जीव दंडकनामा राजा हुता, महाप्रतापी उदय धरे, प्रचंड पराक्रम संयुक्त, भग्न किये हैं शत्रुरूप कंटक जानैं, महामानी, बडी सेनाका स्वामी। सो या मूढने अधर्मकी श्रद्धाकर पापरूप मिथ्या शास्त्र सेया, जैसैं कोई घृतका अर्थी जलकूं मथे। याकी स्त्री दंडिनिकी सेवक हुती तिनसों अति अनुरागिणी। सो वाके संगकर यह भी ताके मार्गकूं धरता भया। स्त्रिनिकी वश हुवा पुरुष कहा २ न करै? एक दिवस यह नगरके बाहिर निकस्या सो वनविषै कायोत्सर्ग धरे ध्यानारूढ मुनि देखे। तब या निर्दईने मुनिके कंठविषैं मूवा सर्प डारया। कैसा हुता यह? पाषाण समान कठोर हुता चित्त जाका। सो

४९१

मुनि ध्यान धरे मौनसूं तिष्ठे, अर यह प्रतिज्ञा करी, जो लग मेरे कंठतैं दूर न करे तौलग मैं हलन चलन नाहीं करूं, योगरूप ही रहूं। सो काहूने सर्प दूर न किया, मुनि खड़े ही रहे। बहुरि कईएक दिननिविषै राजा ताही मार्ग गया। ताही समय काहू भले मनुष्यने सांप काढ्या, अर मुनिके पास बैठ्या हुता सो राजा वा मनुष्यसूं पूछा जो मुनिके कंठतैं सांप कौन काढ्या, अर कब काढ्या ? तब वाने कही–हे नरेन्द्र ! किसी नरकगामीने ध्यानारूढ़ मुनिके कंठविषै मूवा सर्प डारचा हुता सो सर्पके संयोगसे साधुका शरीर अतिखेद खिन्न भया। इनके तो कोई उपाय नहीं, आज सर्व मैंने काढ्या है। तब राजा मुनिको शांतस्वरूप कषायरहित जान प्रणामकर अपने स्थानक गया। उन दिनसे मुनियों की भक्तिविषै अनुरागी भया और किसीकूं उपद्रव न करें। तब यह वृत्तांत राणीने दंडियोंके मुखसे सुना कि राजा जिनधर्मका अनुरागी भया। तब या पापिनीने क्रोधकर मुनियोंके मारनेका उपाय किया। जे दुष्टजीव हैं वे अपने जीनेका भी यत्न तज पराया अहित करें। सो पापिनीने अपने गुरुको कहा–तुम निर्ग्रंथ मुनिका रूपकर मेरे महलमें आवो और विकार चेष्टा करहु। तब याने याही भांति करी। सो राजा यह वृत्तांत जानकर मुनियोंसे कोप भया और मंत्री आदि दुष्ट मिथ्यादृष्टि सदा मुनियोंकी निन्दा ही करते। अन्य भी और जे क्रूरकर्मी मुनियोंके अहितु थे तिन्होंने राजाकूं भरमाया। सो पापी राजा मुनियोंको घानीविषै पेलिवे की आज्ञा करता भया। आश्चर्यसहित सर्व मुनि घानीमें पेले। एक साधु बहिर्भूमि गया पीछे आवता था सो किसी दयावानने कही–अनेक मुनि पापी राजाने यंत्रमें पेले हैं, तुम भाग जावो। तुम्हारा शरीर धर्मका साधन है सो अपने शरीरकी रक्षा करहु। तब यह समाचार सुन, संघके मरणके शोककर चुभी है दुःखरूप शिला जाके, क्षणएक वज्रके स्तम्भसमान निश्चल होय रहा, बहुरि न सहा जाय ऐसा क्लेश रूप भया, सो मुनिरूप जो पर्वत उसकी समभावरूप गुफासे क्रोधरूप केसरी सिंह निकस्या। जैसैं आरक्त अशोकवृक्ष होय तैसैं मुनिके आरक्त नेत्र भए। तेजकर आकाश संध्याके रंगसमान होय गया। कोप कर तप्तायमान जो मुनि ताके सर्व शरीरविषै पसेवकी

बूंद प्रकट भई। फिर कालाग्नि समान प्रज्वलित अग्निपूतला निकस्या, सो धरती आकाश अग्निरूप होय गए, लोक हाहाकार करते मरणकूं प्राप्त भए। जैसें बांसोंका बन बलै तैसें देश भस्महोय गया, न राजा, न अंतःपुर, न पुर, न ग्राम, न पर्वत, न नदी, न बन, न कोई प्राणी, कुछ भी देशमें न बच्या। महा ज्ञान वैराग्यके योगकर बहुत दिनोंमें मुनिने समभावरूप जो धन उपार्ज्या हुता सो तत्काल क्रोधरूप रिपुने हरा। दंडक देशका दंडक राजा पापके प्रभावकर प्रलय भया और देश प्रलय भया, सो अब यह दंडक बन कहावे है। कईएक दिन तो यहां तृणभी न उपज्या। फिर घने काल-विषै मुनियोंका बिहार भया, तिनके प्रभावकरि वृक्षादिक भए। यह वन देवोंको भी भयंकर है, विद्या-धरोंकी क्या बात? सिंह व्याघ्र अष्टापदादि अनेक जीवोंसे भरचा और नानाप्रकारके पक्षियोंकर शब्दरूप है, और अनेक प्रकारके धान्यसे पूर्ण है। वह राजा दंडक महा प्रबल शक्तिका धारक हुता सो अपराधकर नरक तिर्यचगतिविषै बहुत काल भ्रमणकर यह गृध्र पक्षी भया। अब इसके पापकर्मकी निवृतिभई, हमकूं देख पूर्वभव स्मरण भया। ऐसा जान जिनआज्ञा मान संसार शरीर भोगतें विरक्त होय, धर्मविषै सावधान होना। परजीवोंका जो दृष्टांत है सो अपनी शांतभावकी उत्पत्तिका कारण है। या पक्षीकूं अपनी विपरीत चेष्टा पूर्वभवकी याद आई है सो कम्पायमान है। पक्षीपर दयालु होय। मुनि कहते भए—हे भव्य! अब तू भय मत करै, जा समय जैसी होनी होय, सो होय रुदन काहेको करै है, होनहारके मेटवे समर्थ कोऊ नाहीं। अब तू विश्रामकूं पाय सुखी होय, पश्चाताप तज। देख कहां यह वन और कहां सीतासहित श्रीरामका आवना और कहां हमारा वनचर्याका अवग्रह जो वनमें श्रावकके आहार मिलेगा तो लेवेंगे, और कहां तेरा हमको देख प्रतिबोध होना? कर्मोंकी गति विचित्र है, कर्मोंकी विचित्रतासे जगतकी विचित्रता है। हमने जो अनुभया और सुना देखा है सो कहे हैं—पक्षी के प्रतिबोधवेके अर्थ रामका अभिप्राय जान सुगुप्ति मुनि अपना और गुप्ति मुनि दूजा दोनोंका वैराग्य का कारण कहते भए। एक वाराणसी नगरी वहां अचल नामा राजा विख्यात उसके राणी गिरदेवी

गुणरूप रत्नोंकर शोभित। उसके एक दिन त्रिगुप्तिनामा मुनि शुभ चेष्टाके धरणहारे आहारके अर्थ आए। सो राणीने परमश्रद्धाकर तिनकूं विधिपूर्वक आहार दिया। जब निरंतराय आहार हो चुका तब राणीने मुनिकूं पूछी—हे नाथ! यह मेरा गृहवास सफल होयगा या नहीं। भावार्थ—मेरे पुत्र होगा या नहीं। तब मुनि वचनगुप्तिभेद(तोडकर)इसके संदेह निवारणके अर्थ आज्ञा करी। तेरे दोय पुत्र विवेकी होयंगे। सो हम दोय पुत्र त्रिगुप्ति मुनिकी आज्ञा भए पीछे भए, इसलिए सुगुप्ति और गुप्ति हमारे नाम माता पिताने राखे सो हम दोनों राजकुमार लक्ष्मीकर मंडित सर्वकलाके पारगामी लोकोंके प्यारे नाना प्रकारकी क्रीडा कर रमते घरमें तिष्ठे।

अथानन्तर एक और वृत्तांत भया। गन्धवती नामा नगरी, वहांके राजाका पुरोहित सोम, उसके दोय पुत्र एक सुकेतु दूजा अग्निकेतु, तिनविषै अतिप्रीतिसों सुकेतुका विवाह भया। विवाहकर यह चिन्ता भई कि कभी इस स्त्रीके योगकर हम दोनों भाइयोंमें जुदायगी न होय। फिर शुभकर्मके योगसे सुकेतु प्रतिबोध होय अनन्तवीर्य स्वामीके समीप मुनि भया और लहुरा भाई अग्निकेतु भाईके वियोगकर अत्यन्त दुखी होय वाराणसीविषै उग्रतापस भया। तब बड़ाभाई सुकेतु जो मुनि भया हुता, सो छोटे भाईकूं तापस भया जान संबोधिबेके अर्थ आयवेका उद्यमी भया, गुरुपै आज्ञा मांगी। तब गुरुने कहा तू भाईको संबोधा चाहै है तो यह वृत्तांत सुन। तब इसने कहा—हे नाथ! वृत्तांत क्या? तब गुरुने कही—वह तुमसों मत पक्षका वाद करेगा। और तुम्हारे वादके समय एक कन्या गंगाके तीर तीन स्त्रियों सहित आवेगी। गौर है वर्ण जाका, नानाप्रकारके वस्त्र पहिरें। दिनके पिछले पहिर आवेगी। तो इन चिह्नों ४९४
कर जान तू भाईसे कहियो—इस कन्याका कहा शुभ अशुभ होनहार है सो कहो, तब वह विलखा होय तोहू कहेगा, मैं तो न जानूं तुम जानो हो तो कहो। तब तू कहियो इस पुरविषै एक प्रवर नामा श्रेष्ठी धनवंत उसकी यह रुचिरा नामा पुत्री है। सो आजतैं तीसरे दिन मरणकर कंबर ग्रामविषै विलास नामा कन्याके पिताका मामा उसके छेली होयगी, ताहि ल्याली मारेगा, सो मरकर गाढर होयगी, फिर

भैंस, भैंससे उसी विलासके विधुरा नामा पुत्री होयगी। यह वार्ता गुरु कही, तब सुकेतु सुनकर गुरु कूं प्रणामकर तापसीनिके आश्रम आया। जा भांति गुरु कही हुती ताही भांति तापससों कही और ताही भांति भई। वह विधुरा नामा विलासकी पुत्रीकूं प्रवर नामा श्रेष्ठी परणे लाग्या, तब अग्नि-केतु कही यह तेरी रुचिरा नामा पुत्री सो मरकर अजा गाडर भैंस होय तेरे मामाके पुत्री भई, अब तू याहि परनै सो उचित नाहीं और विलासकूं भी सर्व वृत्तांत कहा, कन्याके पूर्वभव कहे, सो सुनकर कन्याकूं जातिस्मरण भया, कुटुम्बसे मोह तज सब सभाकूं कहती भई—यह प्रवर मेरा पूर्वभवका पिता है सो ऐसा कह आर्यिका भई और अग्निकेतु तापस मुनि भया। यह वृत्तांत सुनकर हम दोनों भाइयों ने महा वैराग्यरूप होय अनन्तवीर्यस्वामीके निकट जैनेन्द्रव्रत अंगीकार किये। मोहके उदयकर प्राणियों के भव वनके भटकावनहारे अनेक अनाचार होय हैं। सद्गुरुके प्रभावकर अनाचारका परिहार होय है। संसार असार है, मातापिता बांधव मित्र स्त्री संतानादिक तथा सुख दुख ही विनश्वर हैं। ऐसा सुन कर पक्षी भवदुखसे भयभीत भया धर्मग्रहणकी वांछा कर बारम्बार शब्द करता भया। तब गुरु कही हे भद्र! तू भय मत कर श्रावकके व्रत लेवो, जाकरि फिर दुखकी परम्परा न पावै, अब तू शांतभाव धर काहू प्राणीकूं पीडा मत करै। अहिंसा व्रत धर, मृषा वाणी तज, सत्यव्रत आदरो परवस्तुका ग्रहण तज, परदारा तज तथा सर्वथा ब्रह्मचर्य भज। तृष्णा तज सन्तोष भज। रात्रि भोजनका परिहार कर अभक्ष आहारका परित्याग कर। उत्तमचेष्टाका धारक होहु और त्रिकाल संध्याविषै जिनेन्द्रका ध्यान धरहु। हे सुबुद्धि! उपवासादि तपकर नानाप्रकारके नियम अंगीकार कर। प्रमाद रहित होय इन्द्रिय जीत साधुवोंकी भक्तिकर, देव अरहंत गुरु निर्ग्रंथ, दयामयी धर्म निश्चयकर। या भांति मुनिने आज्ञा करी तब पक्षी बारम्बार नमस्कारकर मुनिके निकट श्रावकके व्रत धरता भया। सीताने जानी यह उत्तम श्रावक भया तब हर्षित होय अपने हाथसे बहुत लडाया। ताहि विश्वास उपजाय दोऊ मुनि कहते भये—यह पक्षी तपस्वी शांत चित्त भया कहां जायगा? गहन वनविषै अनेक

क्रूर जीव हैं या सम्यग्दृष्टि पक्षीकी तुम्हे सदा काल रक्षा करनी। यह गुरुके वचन सुन, सीता पक्षीके पालिवेरूप है चित्त जाका, अनुग्रहकर राख्या। राजा जनककी पुत्री करकमलकर विश्वासती संती कैसी शोभती भई? जैसैं गरुड़की माता गरुड़कूं पालती शोभै। अर श्रीराम लक्ष्मण पक्षीको जिन-धर्मी जान अतिधर्मानुराग करते भये। अर मुनिनिकी स्तुतिकर नमस्कार करते भये। दोनों चारण मुनि आकाशके मार्ग गए, सो जाते कैसे शोभते भये? मानो धर्मरूप समुद्रकी कल्लोल ही हैं। अर एक वनका हाथी मदोन्मत्त वनमें उपद्रव करता भया। ताकूं लक्ष्मण वशकर तापर चढ़ रामपै आए। सो गजराज गिरिराज सारिखा ताहि देख राम प्रसन्न भए। अर वह ज्ञानी पक्षी मुनिकी आज्ञा प्रमाण यथाविधि अणुव्रत पालता भया। महा भाग्यके योगतैं राम लक्ष्मण सीताका ताने समीप पाया। इनके लार पृथ्वीविषै बिहार करैं। यह कथा गौतम स्वामी राजा श्रेणिकसूं कहै हैं। हे राजन्! धर्मका माहात्म्य देखो, याही जन्मविषै वह विरूप पक्षी अद्भुत रूप होय गया, प्रथम अवस्थाविषै अनेक मांस का आहारी, दुर्गन्ध निंद्यपक्षी, सुगन्धके भरे कंचन कलश समान, महासुगन्ध सुन्दर शरीर होय गया। कहूं इक अग्निकी शिखासमान प्रकाशमान, अर कहूंइक वैडूर्यमणि समान, कहूंइक स्वर्ण समान, कहूंइक हरित्मणिकी प्रभाकूं धरे शोभता भया। राम लक्ष्मणके समीप वह सुन्दर पक्षी श्रावकके व्रत धार महास्वाद संयुक्त भोजन करता भया। महाभाग्य पक्षीके जो श्रीरामकी संगति पाई। रामके अनुग्रहतैं अनेक चर्चाधार दृढ़व्रती महाश्रद्धानी भया। श्रीराम ताहि अति लडावैं, चन्दनकर चर्चित है अंग जाका, स्वर्णकी किंकिणी कर मण्डित रत्नकी किरणनिकर शोभित है शरीर जाका, ताके शरीरविषै रत्न हेमकर उपजी किरणनिकी जटा, तातैं याका नामा श्रीरामने जटायु धरचा। राम लक्ष्मण सीताकूं यह अति प्रिय, जीती है हंसकी चाल जाने, महा सुन्दर मनोहर चेष्टाकूं धरै, राम का मन मोहता भया। ता वनके और जे पक्षी वे देखकर आश्चर्यकूं प्राप्त भए। यह व्रती तीनों संध्याविषै सीताके साथ भक्तिकर नम्रीभूत हुआ अरहन्त सिद्ध साधुनिकी बन्दना करै। महा दयावान्

जानकी जटायु पक्षी पर अतिकृपाकर सावधान भई, सदा याकी रक्षाकरैं । कैसी है जानकी ? जिन धर्मतैं है अनुराग जाका । वह पक्षी महा शुद्ध अमृत समान फल, अर महा पवित्र, सोधा अन्न, निर्मल छाना जल इत्यादि शुभ वस्तुका आहार करता भया । जनककी पुत्री सीता ताल बजावे अर राम लक्ष्मण दोऊ भाई तालके अनुसार तान लावें तब यह जटायु पक्षी रविसमान है कांति जाकी परम हर्षित भया ताल अर तानके अनुसार नृत्य करै ।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रंथ, ताकी भाषावचनिकाविषे जटायुका व्याख्यान वर्णन करनेवाला इकतालीसवां पर्व पूर्ण भया ॥ ४१ ॥

अथानन्तर पात्र दानके प्रभावकर राम लक्ष्मण सीता या लोकमें अनेकभांति सम्पदाकर युक्त भए । एक सुवर्णमई रत्नजडित, अनेक रचनाकर सुन्दर ताके मनोहर स्तम्भ, रमणीक वाड, बीच विराजवे- का सुन्दर स्थानक, अर जाके मोतिनकी माला लूम्बे, सुन्दर झालरी, सुगन्ध चंदन कपूरादि कर मंडित, जामें सेज आसन वादित्र सर्व सुगन्ध कर पूरित ऐसा एक एक विमान समान अद्भुत रथ बनाया, जाके चार हाथी जुतैं, ताविषैं बैठे राम लक्ष्मण सीता जटायु सहित रमणीक वनविषैं विचरैं, जिनको काहूका भय नाहीं, काहूको घात नाहीं । काहू ठौर एक दिन, काहू ठौर पन्द्रह दिन, काहू ठौर एक मास, मनवांछित क्रीडा करैं । यहां निवास करैं अक यहां निवास करैं, ऐसी है अभिलाषा जिनके । नवीन शिष्यकी इच्छाकी न्याईं इनकी इच्छा अनेक ठौर विचरती भई । महा निर्मल जे नीझरने तिनकूं निरखते, ऊंची नीची जायगां टार समभूमि निरखते, ऊंचे वृक्षनिकूं उलंघकर धीरे धीरे आगे गए । अपनी स्वेच्छाकर भ्रमण करते ये धीर वीर सिंह समान निर्भय दंडकवनके मध्य जाय प्राप्त भए । कैसा है स्थानक ? कायरनकूं भयंकर, जहां पर्वत विचित्र शिखरके धारक, जहां रमणीक नीझरने झरैं । जहांते नदी निकसैं जिनका मोतिनके हारसमान उज्ज्वल जल । जहां अनेक वृक्ष वड़,

पीपल, बहेड़ा, पीलू, सरसी, बड़े बड़े सरल वृक्ष, धवल वृक्ष, कदंब, तिलक जातिके वृक्ष, लोंद वृक्ष, अशोक, जम्बूवृक्ष, पाटल, आम्, आंवला, अमिली, चम्पा, कण्डीरशालि वृक्ष, ताड वृक्ष, प्रियंगू, सप्तच्छद

तमाल, नागवृक्ष, नन्दीवृक्ष, अर्जुन जातिके वृक्ष, पलाशवृक्ष, मलयगिरि चन्दन, केसरि, भोजवृक्ष, हिंगोट वृक्ष, काला अगर अर सुफेद अगर, कुन्द वृक्ष, पद्माक वृक्ष, कुरंज वृक्ष, पारिजात वृक्ष, मिजन्या, केतकी, केवड़ा, महुवा, कदली, खैर मदनवृक्ष, नीम्बू, खजूर, छुहारे, चारोली, नारंगी, बिजोरा, दाडिम, नारियल, हरड़े, कैथ, किरमाला, विदारीकंद, अगथिया, करंज, कटालीकूट, अजमोद, कौंच, कंकोल, मिर्च, लवंग, इलायची, जायफल, जावित्री, चव्य, चित्रक, सुपारी। तांबूलोंकी बेलि, रक्तचन्दन, बेत, श्याम-लता, मीठासींगी, हरिद्रा, अरलू, सल्लकी, कुडा वृक्ष, पद्माक्ष, पिस्ता, मौलश्री, बीलवृक्ष, द्राक्षा, बिदाम, शाल्मलि इत्यादि अनेक जातिके वृक्ष, तिनकर शोभित हैं, अर स्वयमेव उपजे नानाप्रकारके धान्य, अर महारसके भरे फल अर पौंड़े (सांठे) इत्यादि अनेक वस्तुनिकर वह वन पूर्ण नानाप्रकार के वृक्ष, नानाप्रकारकी बेल, नानाप्रकारके फल फूल तिनकर वन अति सुन्दर, मानो दूजा नन्दनवन ही है। सो शीतल मन्द सुगन्ध पवन कर कोमल कपोल हालें। सो ऐसा सोहै मानों वह वन रामके आइवे कर हर्ष कर नृत्य करै है। अर सुगन्ध पवन कर उठी जो पुष्पकी रज सो इनके अंग सूं आय लागै, सो मानों अटवी आलिंगन ही करै है। अर भ्रमर गुंजार करै हैं सो मानों श्रीरामके पधारने कर प्रसन्न भया वन गान ही करै है। अर महा मनोज्ञ गिरिनके नीझरनिके छांटेनिके उछरिवे के शब्द कर मानों हंसै ही हैं, अर भैरुण्ड जातिके पक्षी तथा हंस, सारिस, कोयल, मयूर, सिचांड,
कुरुचि, सूवा, मैना, कपोत, भारद्वाज इत्यादि अनेक पक्षिनके ऊंचे शब्द होय रहे हैं। सो मानों श्रीराम लक्ष्मण सीताके आइवेका आदर ही करै हैं। अर मानों वे पक्षी कोमल वाणीकर ऐसा वचन कहै हैं कि महाराज भले ही यहां आवो। अर सरोवरनि विषैं सफेद श्याम अरुण कमल फूल रहे हैं, सो मानों श्रीरामके देखवेकूं कौतूहलतैं कमलरूप नेत्रनिकर देखवेकूं प्रवर्त्तै हैं। अर फलनिके भारकर

नम्रीभूत जो वृक्ष सो मानों रामकूं नमैं हैं । अर सुगन्ध पवन चालै है सो मानो वह रामके आयवेसूं आनन्दके स्वांस लेय है । सो श्रीराम सुमेरुके सौमनसवन समान वनकूं देखकर जानकीसूं कहते भए–कैसी है जानकी ? फूले कमल समान हैं नेत्र जाके । पति कहै है–हे प्रिये ! देखो यह वृक्ष बेलनिसूं लिपटे पुष्पनिके गुच्छनिकर मण्डित मानों गृहस्थ समान ही भासैं हैं । अर प्रियंगुकी बेल मौलसरीके वृक्षसूं लगी कैसी शोभै है जैसी जीवदया जिनधर्मसूं एकताकूं धरै सोहै । अर यह माधवीलता पवन कर चलायमान जो पल्लव तिनकर समीपके वृक्षनिकों स्पर्शे है । अर हे पतिव्रते ! यह वनका हाथी मदकर आलसरूप हैं नेत्र जाके, सो हथिनीके अनुरागका प्रेर्या कमलनिके वनमें प्रवेश करै है, जैसे अविद्या कहिए मिथ्यापरणति ताका प्रेरा अज्ञानी जीव, विषयवासनाविषै प्रवेश करै । कैसा है कमलनिका वन ? विकसि रहे जे कमलदल तिनपर भ्रमर गुंजार करैं हैं । अर दृढ़व्रते ! यह इन्द्रनीलमणि समान श्यामवर्ण सर्प बिलतें निकसकर मयूरकूं देख भागकर पीछे बिलमें धसै हैं, जैसैं विवेकतैं काम भाग भववनमें छिपै । अर देखो सिंह केशरी महा सिंह साहसरूप चरित्र इस पर्वतकी गुफामें तिष्ठा हुता सो अपने रथका नाद सुन निद्रा तज गुफाके द्वार आय निर्भय तिष्ठै है । अर वह बघेरा क्रूर है मुख जाका, गर्वका भर्या, मांजरे नेत्रनिका धारक, मस्तक पर धरी है पूंछ जाने, नखनिकर वृक्षकी जड़कूं कुचरे । अर मृगनिके समूह दूबके अंकुर तिनके चरिवेकूं चतुर, अपने बालकनिकूं बीचकर मृगीनि सहित गमन करैं हैं । सो नेत्रनिकर दूरहीसों अवलोकन करते अपने तांई दयावंत जान निर्भय भए विचरैं हैं । यह मृग मरणसूं कायर सो पापी जीवनिके भयतैं सावधान हैं, तुमकूं देख अति प्रीतिकूं प्राप्त भए विस्तीर्ण नेत्र कर बारम्बार देखै हैं । तुम्हारेसे नेत्र इनके नाहीं । तातैं आश्चर्यकूं प्राप्त भए हैं । अर यह वन का शूकर अपनी दांतली कर भूमिकूं विदारता, गर्वका भर्या चलाजाय है, लग रह्या है कर्दम जाके । अर हे गजगामिनी ! या वनविषै अनेक जातिके गजनिकी घटा विचरै है सो तुम्हारीसी चाल तिनकी नाहीं । तातैं तिहारी चाल देख अनुरागी भए हैं । अर ये चीते विचित्र अंग अनेक वर्णकर

शोभै हैं, जैसे इन्द्रधनुष अनेकवर्णकर सोहै है। हे कलानिधे ! यह वन अनेक अष्टापदादि क्रूर जीवनिकर भरचा है, अर अति सघन वृक्षनिकर भरचा है, अर नानाप्रकारके तृणनिकर पूर्ण है। कहीं इक महासुन्दर है जहां भयरहित मृगनिके समूह विचरै हैं। कहूं इक महा भयंकर अतिगहन है, जैसे महाराजनिका राज्य अति सुन्दर है तथापि दुष्टनिकूं भयंकर है। अर कहीं इक महामदोन्मत्त गजराज वृक्षनिकूं उखाड़े हैं, जैसैं मानो पुरुष धर्मरूप वृक्षकूं उखाड़े है। कहूंइक नवीन वृक्षनिके महासुगन्ध समूहपर भ्रमर गुंजार करै हैं जैसैं दातानिके निकट याचक आवैं। काहू ठौर वन लाल होय रहा है, काहू ठौर श्वेत, काहू ठौर पीत, काहू ठौर हरित, काहू ठौर श्याम, काहू ठौर चंचल, काहू ठौर निश्चल, काहू ठौर शब्द सहित, काहू ठौर शब्दरहित, काहू ठौर गहन, काहू ठौर विरले वृक्ष, काहू ठौर सुभग, काहू ठौर दुर्भग, काहू ठौर विरस, काहू ठौर सम, काहू ठौर सरस, काहू ठौर विषम वृक्ष, काहू ठौर तरुण, काहू ठौर वृक्षवृद्धि या भांति नाना विधि भासै हैं।

यह दंडकवन विचित्र गति लिये है, जैसे कामनिका प्रपंच विचित्र गति लिये है। हे जनकसुते ! जे जिनधर्मकूं प्राप्त भए हैं ते ही या कर्मप्रपंचतैं निवृत्त होय निर्वाणकूं प्राप्त होय हैं। जीवदयासमान कोऊ धर्म नाहीं। जो आप समान परजीवनिकूं जान सर्व जीवनिका दया करैं, तेई भवसागरसूं तिरैं। यह दण्डक नामा पर्वत, जाके शिखर आकाशसों लग रहे हैं ताका नाम यह दण्डक वन कहिए है। या गिरिके ऊंचेशिखर हैं अर अनेक धातुकर भरचा है, जहां अनेक रंगनिकर आकाश नानारंग होय रहचा है। पर्वतमें नानाप्रकारकी औषधी है। कईएक ऐसी जड़ी हैं जे दीपक समान प्रकाशरूप अंधकारकूं हरैं, तिनकूं पवनका भय नाहीं, पवनमें प्रज्वलित। और या गिरितैं नीझरने झरैं हैं जिनका सुन्दर शब्द होय है जिनके छांटोंकी बूंद मोतिनकी प्रभा करै है। या गिरिके स्थानक कईएक उज्ज्वल, कईएक नील, कईएक आरक्त दीखै हैं, अर अत्यन्त सुन्दर हैं। सूर्यकी किरण गिरिके वृक्षनिके अग्रभागविषै आय पड़े हैं अर पत्र पवनकरि चंचल हैं सो अत्यन्त सोहै हैं। हे सुबुद्धिरूपिणी ! या वनविषै कहूंइक

वृक्ष फूलनिके भारकर नम्रीभूत होय रहे हैं, अर कहुंइक नानारंगके जे पुष्प तेई भए पट तिनकर शोभित हैं, अर कहुंइक मधुरशब्द बोलनहारे पक्षी तिनकरि शोभित हैं। हे प्रिये! या पर्वततैं यह क्रौंचरवा नदी जगत् प्रसिद्ध निकसी है जैसै जिनराजके मुखतैं जिनवाणी निकसै। या नदीका जल ऐसा मिष्ट है जैसी तेरी चेष्टा मिष्ट है। हे सुकेशी! या नदी ?पवनकरि उठैं हैं लहर, अर किनारेके वृक्षनिके पुष्प जलमें पड़े हैं, सो अति शोभित हैं। कैसी है नदी ? हंसनिके समूह अर झागनिके पटलनि करि अति उज्ज्वल है, अर ऊंचे शब्दकर युक्त है जल जाका, कहूं एक महाविकट पाषाणनिके समूह तिनकर विषम है, अर हजारां ग्राह मगर तिनकरि अति भयंकर है, अर कहुंइक अति वेगकर चला आवै है जलका जो प्रवाह ताकर दुर्निवार है, जैसैं महा मुनिनके तपकी चेष्टा दुर्निवार है। कहुं इक शीतल बहै है, कहूं इक वेगरूप बहै है, कहुंइक काली शिला, कहुंइक श्वेतशिला, तिनकी कांतिकर जल नील श्वेत दुरंग होय रहा है, मानो हलधर हरिका स्वरूप ही है। कहुंइक रक्तशिलानिके किरणकी समूहकर नदी आरक्त होय रही है जैसे सूर्यके उदयकरि पूर्व दिशा आरक्त होय, अर कहुंइक हरित पाषाणके समूहकर जलविषै हरितता भासै है, सो सिवालकी शंका करै पक्षी पीछे होय जा रहे हैं। हे कांते! यहां कमलनिके समूहविषै मकरंदके लोभी भ्रमर निरंतर भ्रमण करै हैं, अर मकरंदकी सुगन्धताकर जल सुगन्धमय होय रहा है, अर मकरंदके रंगनिकर जल सुरंग होय रहा है, परन्तु तिहारे शरीरकी सुगन्धता समान मकरंदकी सुगन्धि नाहीं, अर तिहारे रंग समान मकरंदका रंग नाहीं, मानो तुम कमलवदनी कहावो हो। सो तिहारे मुखकी सुगन्धताही से कमल सुगन्धित हैं। अर ये भ्रमर कमलनिकूं तज
तिहारे मुखकमलपर गुञ्जार कर रहे हैं। अर नदीका जल काहू ठौर पाताल समान गम्भीर है मानो तिहारे मनकीसी गम्भीरताकूं धरै है। अर कहूं इक नीलकमलनिकर तिहारे नेत्रनिकी छायाकूं धरै है अर यहां अनेक प्रकारके पक्षिनिके समूह नानाप्रकार क्रीडा करै हैं, जैसैं राजपुत्र अनेक प्रकारकी क्रीडा करै। हे प्राणप्रिये! या नदीके पुलनिकी बालू रेत अति सुन्दर शोभित है, जहां स्त्री सहित

सुर कहिए विद्याधर अथवा खग कहिए पक्षी आनन्दकरि विचरै हैं। हे अखंडव्रते! यह नदी अनेक विलासनिकूं धरैं समुद्रकी ओर चली जाय है, जैसैं उत्तम शीलकी धरणहारी राजानिकी कन्या भरतारके परणवेकूं जाय। कैसे हैं भरतार? महामनोहर प्रसिद्ध गुणके समूहकूं धर शुभ चेष्टा कर युक्त जगतविषैं विख्यात हैं। हे दयारूपिनी! इस नदीके किनारेके वृक्ष फल फूलनिकर युक्त नाना प्रकार पक्षिनिकर मंडित जलकी भरी कारीघटा समान सघन शोभाकूं धरैं हैं। या भांति श्रीरामचन्द्रजी अति स्नेहके भरे वचन जनकसुतासूं कहते भए, परम विचित्र अर्थकूं धरैं, तब वह पतिव्रता अति हर्षके समूह करि भरी पतिसूं प्रसन्न भई परम आदरसूं कहती भई।

हे करुणानिधे! यह नदी निर्मल जल जाका, रमणीक है तरंग जाविषैं, हंसादिक पक्षिनिके समूह कर सुन्दर है परन्तु जैसा तिहारा चित्त निर्मल है तैसा नदीका जल निर्मल नाहीं। अर जैसैं तुम सघन अर सुगन्ध हो तैसा वन नाहीं, अर जैसैं तुम उच्च अर स्थिर हो तैसैं गिर नाहीं, अर जिनका मन तुममें अनुरागी भया है तिनका मन और ठौर जाय नाहीं। या भांति राजसुताके अनेक शुभ वचन श्रीराम भाई सहित सुनकर अतिप्रसन्न होय याकी प्रशंसा करते भए। कैसे हैं राम? रघुवंश रूप आकाशविषैं चन्द्रमा समान उद्योतकारी हैं, नदीके तटपर मनोहर स्थल देख हाथिनिके रथसे उतर लक्ष्मण प्रथम ही नानास्वादकूं धरैं सुन्दर मिष्टफल लाया, अर सुगन्ध पुष्प लाया, बहुरि राम सहित जल क्रीडाका अनुरागी भया। कैसा है लक्ष्मण? गुणनिकी खान है मन जाका। जैसी जलक्रीडा इन्द्र नागेन्द्र चक्रवर्ती करैं तैसी राम लक्ष्मणने करी। मानों वह नदी श्रीरामरूप कामदेवकूं देख रति-
समान मनोहर रूप धारती भई। कैसी है नदी? लहलहाट करती जे लहर तिनकी माला कहिए पंक्ति, ताकरि मर्दित किये हैं श्वेत श्याम कमलनिके पत्र जाने, अर उठे हैं झाग जामें, भ्रमररूप हैं चूडा जाके, पक्षिनिके जे शब्द तिनकर मानों मिष्ट शब्द करै है, वचनालाप करैं हैं। राम जलक्रीडाकर कमलनिके वनविषैं छिप रहे बहुरि शीघ्र ही आए। जनकसुतासूं जलकेलि करते भए। इनकी चेष्टा देख

वनके तिर्यंच हू और तरफसे मन रोक एकाग्र चित्त होय इनकी ओर निरखते भए। कैसे हैं दोऊ वीर? कठोरतासे रहित है मन जिनका, अर मनोहर है चेष्टा जिनकी, सीता गान करती भई। सो गानके अनुसार रामचन्द्र ताल देते भए। मृदंगनिकरि अति सुन्दर राम जलक्रीडाविषै आसक्त अर लक्ष्मण चौगिरदा फिरैं। कैसा है लक्ष्मण? भाईके गुणनिविषै आसक्त है बुद्धि जाकी। राम अपनी इच्छा प्रमाण जलक्रीडाकर समीपके मृगनिकूं आनन्द उपजाय, जलक्रीडातैं निवृत्त भए। महा प्रसन्न जे वन के मिष्ट फल तिनकर क्षुधा निवारणकर लतामंडपविषैं तिष्ठे। जहां सूर्यका आताप नाहीं। ये देवनि सारिखे सुन्दर नानाप्रकारकी सुन्दर कथा करते भए। सीतासहित अति आनन्दसूं तिष्ठे। कैसी है सीता? जटायु के मस्तकपर हाथ है जाका। तहां राम लक्ष्मणसूं कहै है–हे भ्रात! यह नानाप्रकारके वृक्ष स्वादुफल कर संयुक्त, अर नदी निर्मल जलकी भरी, अर जहां लतानिके मंडप, अर यह दंडकनामागिरि अनेक रत्ननिकर पूर्ण, यहां अनेक स्थानक क्रीडा करनेके हैं। तातैं या गिरिके निकट एक सुन्दर नगर बसावैं। अर यह वन अत्यन्त मनोहर औरनितैं अगोचर, यहां निवास हर्षका कारण है। यहां स्थानककर हे भाई! तू दोऊ मातानिके लायवेकूं जाहु, वे अत्यन्त शोकवंती है सो शीघ्र ही लावहु, अथवा तू यहां रहै अर सीता तटा जटायु भी यहां रहैं, मैं मातानिके ल्यायवेकूं जाऊंगा। तब लक्ष्मण हाथ जोड नमस्कारकर कहता भया जो आपकी आज्ञा होयगी सो होयगा। तब राम कहते भए–अब तो वर्षा ऋतु आई, अर ग्रीष्म ऋतु गई, यह वर्षाऋतु अति भयंकर है, जाविषै समुद्र समान गाजते मेघघटा- ५०३
निके समूह विचरै हैं, चालते अंजनगिरि समान दशोंदिशाविषै श्यामता होय रही है। बिजुरी चमकै है, बगुलानिकी पंक्ति विचरै है अर निरन्तर बादलनिके जल बरसै है जैसैं भगवानके जन्मकल्याणक विषै देव रत्नधारा बरसावैं। अर देख! हे भ्रात! यह श्यामघटा तेरे रंगसमान सुन्दर जलकी बूंद बरसावै है, जैसैं तू दानकी धारा बरसावै। ये बादल आकाशविषै विचरते बिजुरीके चमत्कारकरि युक्त बड़े बड़े गिरिनिकूं अपनी धाराकर आछादते, ध्वनि करते संते कैसे सोहै हैं, जैसे तुम पीत वस्त्र पहिरे

अनेक राजानिकूं आज्ञा करते पृथ्वीकूं कृपादृष्टिरूप अमृतकी वृष्टिकर सींचते सोहो। हे वीर! ये कई एक बादल पवनके वेगसे आकाशविषैं भ्रमैं हैं, जैसे यौवन अवस्थाविषै असंयमियोंका मन विषय वासना-विषैं भ्रमैं। अर यह मेघ नाजके खेत छोड़ वृथा पर्वतकेविषैं बरषैं हैं, जैसैं कोई द्रव्यवान पात्रदान अर करुणादान तज वेश्यादिक कुमार्गविषैं धन खोवैं। हे लक्ष्मण! या वर्षाऋतुविषै अतिवेगसूं नदी बहै है, अर धरती कीचसूं भर रही है अर प्रचंड पवन बाजै है, भूमिविषैं हरितकाय फैल रही है, अर त्रसजीव विशेषतासे हैं, या समयविषै विवेकिनिका विहार नाहीं। ऐसे वचन श्रीरामचन्द्रके सुनकर सुमित्राका नन्दन लक्ष्मण बोला—हे नाथ! जो आप आज्ञा करोगे सो ही मैं करूंगा। ऐसी सुन्दर कथा करते दोऊ वीर महाधीर सुन्दर स्थानकविषै सुखसूं वर्षाकाल पूर्ण करते भए। कैसा है वर्षाकाल? जा समय सूर्य नाहीं दीखै हैं।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महा पद्मपुराण संस्कृतग्रन्थ, ताकीभाषा वचनिकाविषै दंडकवनविषै निवास
वर्णन करनेवाला बियालीसवां पर्व पूर्ण भया॥ ४२॥

अथानन्तर वर्षाऋतु व्यतीत भई। शरदऋतुका आगमन भया। मानों यह शरदऋतु चन्द्रमाकी किरणरूप बाणनिकरि वर्षारूप बैरीकूं जीत पृथ्वीविषै अपना प्रताप विस्तारती भई। दिशारूप जे स्त्री सो, फूल रहे हैं फूल जिनके ऐसे वृक्षनिकी सुगंधताकर सुगन्धित भई है। अर वर्षा समयविषैं कारीघटानिकर जो आकाश श्याम हुता सो अब चन्द्रकांतिकर उज्ज्वल शोभता भया, मानों क्षीर सागरके जलकरि धोया है। अर विजलीरूप स्वर्ण सांकलकर युक्त, वर्षाकालरूपी गज, पृथ्वीरूप लक्ष्मीकूं स्नान कराय कहां जाता रहा? अर शरदके योगतैं कमल फूले तिनपर भ्रमर गुंजार करते भए, हंस क्रीडा करते भए, नदीनके जल निर्मल होय गए, दोऊ किनारे महासुन्दर भासते भए, मानों शरदकालरूप नायिककूं पाय सरितारूप कामिनी कांतिकूं प्राप्त भई है। अर वन वर्षा अर पवनकर

५०४

छूटे कैसे शोभते भए मानों निद्राकरि रहित जाग्रत दशाकूं प्राप्त भए हैं। सरोवरनिविषैं सरोजनि-
पर भ्रमर गुंजार करै हैं, अर वनविषैं वृक्षनिविषैं पक्षी नाद करैं हैं सो मानो परस्पर वार्ता हो
करैं हैं। अर रजनीरूप नायिका नानाप्रकारके पुष्पनिकी सुगन्धता कर सुगन्धित निर्मल आकाशरूप
वस्त्र पहिरे चन्द्रमारूप तिलक धरे मानो शरदकालरूप नायकपै जाय है। अर कामीजननिकूं काम
उपजावती केतकीके पुष्पनिकी रज कर सुगन्ध पवन चलै है। या भांति शरदऋतु प्रवरती। सो लक्ष्मण
बड़े भाईकी आज्ञा मांग सिंह समान महा पराक्रमी वन देखवेकूं अकेला निकस्या। सो आगें गए एक
सुगन्ध पवन आई। तब लक्ष्मण विचारते भए यह सुगन्ध काहेकी है? ऐसी अद्भुत सुगन्ध वृक्षनिकी
न होय, अथवा मेरे शरीरकी हू ऐसी सुगन्ध नाहीं। यह सीताजीके अंगकी सुगन्ध होय तथा रामजी
के अंगकी सुगन्ध होय, तथा कोऊ देव आया होय। ऐसा संदेह लक्ष्मणकूं उपजा। सो यह कथा राजा
श्रेणिक सुन गौतम स्वामीसूं पूछता भया—हे प्रभो! जो सुगन्धकर वासुदेवकूं आश्चर्य उपजा सो वह
सुगन्ध काहेकी? तब गौतम गणधर कहते भए। कैसे हैं गौतम? संदेहरूप तिमिर दूर करवेकूं सूर्य हैं,
सर्वलोककी चेष्टाकूं जाने हैं, पापरूप रजके उडावनेको पवन हैं। गौतमस्वामी कहै हैं-हे श्रेणिक!
द्वितीय तीर्थंकर श्रीअजितनाथ तिनके समोसरणमें मेघवाहन विद्याधर रावणका बड़ा, शरणे आया।
ताहि राक्षसनिके इन्द्र महाभीमने त्रिकूटाचल पर्वतके समीप राक्षसद्वीप, तहां लंका नामा नगरी, सो
कृपाकर दई। अर यह रहस्यकी बात कही, हे विद्याधर! सुनहु! भरत क्षेत्रके दक्षिण दिशाकी तरफ
लवणसमुद्रके उत्तरकी ओर पृथ्वीके उदर विषैं एक अलंकारोदय नामा नगर है, सो अद्भुत स्थानक
है। अर नानाप्रकार रत्ननिकी किरणनिकरि मंडित है। देवनिकूं भी आश्चर्य उपजावै तो मनुष्यनिकी
कहा बात? भूमिगोचरीनिकूं तो अगम्य है, अर विद्याधरकूं भी अतिविषम है, चितवनविषैं न आवै,
सर्व गुणनिकरि पूर्ण है। जहां मणिनिके मंदिर हैं, परचक्रतैं अगोचर है। सो कदाचित् तुमकूं अथवा
तेरे सन्तानके राजानिकूं लंकाविषैं परचक्रका भय उपजै तो अलंकारोदयपुरविषैं निर्भय भए तिष्ठियो।

याहि पाताललंका कहै हैं। ऐसा कहकर महाभीम बुद्धिमान राक्षसनिके इन्द्रने अनुग्रहकर रावणके बड़ेनिकू लंका अर पाताललंका दई, अर राक्षसद्वीप दिया। सो यहां इनके वंशमें अनेक राजा भए। बड़े २ विवेकी व्रतधारी भए। सो रावणके बड़े विद्याधर कुलविषै उपजे हैं, देव नाहीं। विद्याधर अर देवनिविषै भेद है, जैसा तिलक अर पर्वत, कर्दम अर चन्दन, पाषाण अर रत्नविषै बड़ा भेद। देवनिकी शक्ति बड़ी, कांति बड़ी। अर विद्याधर तो मनुष्य हैं, क्षत्री, वैश्य, शूद्र यह तीन कुल हैं। गर्भवासके खेद भुगतैं हैं। विद्याधर साधनकर आकाशविषै विचरै हैं। सो अढ़ाई द्वीप पर्यंत गमन करै हैं। अर देव गर्भवाससे उपजै नाहीं, महासुन्दर स्वरूप, पवित्र, धातु उपधातुकर रहित, आंखनिकी पलक लगे नाहीं, सदा जाग्रत, जरारोग रहित, नवयोवन, तेजस्वी, उदार, सौभाग्यवंत, महासुखी, स्वभावहीतैं विद्यावंत, अवधिनेत्र, चाहैं जैसा रूप करैं, स्वेच्छाचारी। देव विद्याधरनिका कहा सम्बन्ध? हे श्रेणिक! ये लंकाके विद्याधर राक्षस द्वीपविषै बसैं, तातैं राक्षस कहाए। ये मनुष्य क्षत्रीवंश विद्याधर हैं, देव हू नाहीं, राक्षस हू नाहीं। इनके वंशविषै लंकाविषै अजितनाथके समयतैं लेकर मुनिसुव्रतनाथके समय पर्यंत अनेक सहस्र राजा प्रशंसा करने योग्य भए। कई सिद्ध भए, कई सर्वार्थसिद्ध गए, कई स्वर्गविषै देव भए, कईएक पापी नरक गए। अब ता वंशविषै तीन खण्डका अधिपति जो रावण सो राज्य करै है। ताकी बहिन चन्द्रनखा रूपकरि अनूपम, सो महा पराक्रमवंत खरदूषणने परणी, वह चौदह हजार राजानिका शिरोमणी, रावणकी सेनाविषै मुख्य, सो दिग्पाल समान अलंकारपुर जो पाताललंका वहां थाने रहे है। ताके सम्बूक अर सुन्दर ये दो पुत्र, रावणके भानजे पृथ्वीविषै अतिमान्य भए। सो
गौतमस्वामी कहै हैं—हे श्रेणिक! माता पिताने सम्बूककू बहुत मने किया। तथापि कालका प्रेरया सूर्यहास खड्ग साधिवे के अर्थ महाभयानक वनविषै प्रवेश करता भया। शास्त्रोक्त आचारकू आचारता संता सूर्यहास खड्गके साधिवेकू उद्यमी भया। एक ही अन्नका आहारी, ब्रह्मचारी, जितेन्द्रिय, विद्या साधिवेकू बांसके बीड़ेमें यह कहकर बैठा कि जब मेरा पूर्ण साधन होयगा, तब ही मैं बाहिर

आऊंगा, ता पहिली कोई बीड़में आवेगा अर मेरी दृष्टि पड़ेगा तो ताहि मैं मारूंगा। ऐसा कह कर एकांत बैठा। सो कहां बैठा? दंडकवनमें क्रौंचवा नदीके उत्तर तीर बांसके बीड़में बैठा। बारहवर्ष साधन किया, खड्ग प्रकट भया। सो सातदिनविषै यह न लेय तो खड्ग परके हाथ जाय, अर वह मारा जाय। सो चन्द्रनखा निरन्तर पुत्रके निकट भोजन लेय आवती सो खड्ग देख प्रसन्न भई, अर पतिसूं जाय कही कि सम्बूकको सूर्यहास खड्ग सिद्ध भया। अब मेरा पुत्र मेरुकी तीन प्रदक्षिणा कर आवेगा। सो यह तो ऐसे मनोरथ करै, अर ता वनविषै भ्रमता लक्ष्मण आया। हजारां देवनिकरि रक्षायोग्य खड्ग, स्वभाव सुगन्ध, अद्भुत रत्न। सो गौतम कहे हैं—हे श्रेणिक! वह देवोपुनीत खड्ग महासुगन्ध दिव्य गंधादिकर लिप्त, कल्पवृक्षनिके पुष्पनिकी माला तिनकरि युक्त, सो सूर्यहास खड्ग की सुगन्ध लक्ष्मणकूं आई। लक्ष्मण आश्चर्यकूं प्राप्त भया और कार्य तज सीधा शीघ्र ही बांसकी ओर आया, सिंह समान निर्भय देखता भया। वृक्षनिकरि आच्छादित महाविषम स्थल, जहां बेलनिके समूह अनेक जाल, ऊंचे पाषाण, तहां मध्यविषै समभूमि, सुन्दर क्षेत्र, श्रीविचित्ररथ मुनिका निर्वाणक्षेत्र सुवर्णके कमलनिकरि पूरित, ताके मध्य एक बांसनिका बीडा, ताके ऊपर खड्ग आय रहा है। सो ताकी किरणके समूहकरि बांसनिका बीड़ा प्रकाशरूप होय रहा है। सो लक्ष्मणने आश्चर्यकूं पाय निशंक होय खड्ग लिया। अर ताकी तीक्ष्णता जाननेके अर्थ बांसके बीड़ापर वाह्या, सो सम्बूक सहित बांसका बीड़ा कट गया। अर खड्गके रक्षक सहस्रों देव लक्ष्मणके हाथविषै खड्ग आया जान कहते भए तुम हमारे स्वामी हो। ऐसा कह नमस्कार कर पूजते भए।

अथानन्तर लक्ष्मणकूं बहुत बेर लगी जान, रामचन्द्र सीतासूं कहते भए—लक्ष्मण कहा गया, हे भद्र जटायू! तू उडकर देख लक्ष्मण आवै है। तब सीता बोली हे नाथ! वह लक्ष्मण आया, केसर कर चरचा है अंग जाका, नानाप्रकारकी माला अर सुन्दर वस्त्र पहिरे, अर एक खड्ग अद्भुत लिए आवै है। क्षो खड्गसूं ऐसा सोहै जैसा केसरी सिंहसूं पर्वत शोभै। तब राम आश्चर्यकूं प्राप्त भया

है मन जिनका, अति हर्षित होय लक्ष्मणकूं उठकर उरसे लगाय लिया, सकल वृत्तांत पूछ्या। तब लक्ष्मण सर्व बात कही, आप भाई सहित सुखसे विराजे। नानाप्रकारकी कथा करैं, अर सम्बूकको माता चन्द्रनखा प्रतिदिन एकही अन्न भोजन लावती हुती। सो आगे आय कर देखे तो बांसका बीडा कटा पड़ा है। तब विचारती भई जो मेरे पुत्रने भला न किया, जहां इतने दिन रहा अर विद्या सिद्ध भई ताही बीड़ेको काटा सो योग्य नाहीं। अब अटवी छोड़ कहां गया? इत उत देखे तो अस्त होता जो सूर्य ताके मंडल समान कुण्डल सहित सिर पड़ा है। देखकर ताहि मूर्छा आय गई। सो मूर्छा याका परम उपकार किया, नातर पुत्रके मरण करि यह कहां जीवै। बहुरि केतीक बेरमें याहि चेत भया तब हाहाकार कर उठी। पुत्रका कटा मस्तक देख रोयकर अतिविलाप किया। नेत्र आंसूनिसूं भर गए, अकेली बनमें कुरचीकी न्यांई पुकारती भई—हा पुत्र! बारह वर्ष अर चार दिन यहां व्यतीत भए, तैसैं तीन दिन और हू क्यों न निकसि गए? तोहि मरण कहांते आया? हाय पापी काल मैं तेरा कहा बिगाड्या जो नेत्रनिका निधि पुत्र मेरा तत्काल विनास्या। मैं पापिनी परभवमें काहूके बालक हता सो मेरा बालक हता गया। हे पुत्र! आतिका मेटनहारा एक वचन तो मुखसूं कह। हे वत्स! आ, अपना मनोहर रूप मोहि दिखा। ऐसा माया रूप अमंगल क्रीडा करना तोहि उचित नाहीं। अब तक तैं माताकी आज्ञा कबहु न लोपी। अब निःकारण यह विनयलोप कार्य करना तोहि योग्य नाहीं। इत्यादिक विकल्पकर विचारती भई—निःसंदेह मेरा पुत्र परलोककूं प्राप्त भया। विचारा कुछ और ही हुता अर भया कुछ और ही, यह बात विचारमें न हुती सो भई। हे पुत्र! जो तू जीवता अर सूर्यहास खड्ग सिद्ध होता तो जैसे चन्द्रहासके धारक रावणके सन्मुख कोऊ नाहीं आय सकै है तैसैं तेरे सन्मुख कोऊ न आय सकता। मानों चन्द्रहास मेरे भाईके हाथमें स्थानक किया सो अपना विरोधी सूर्यहास ताहि तेरे हाथमें न देख सक्या। अर भयानक वनमें अकेला निर्दोष नियमका धारी ताहि मारवेकूं जाके हाथ चले, सो ऐसा पापी खोटा वैरी कौन है? जा दुष्टने तोहि हत्या। अब वह कहां जीवता

जायगा। या भांति विलाप करती पुत्रका मस्तक गोदमें लेय चूमती भई। मूंगासमान आरक्त हैं नेत्र
जाके। बहुरि शोक तज, क्रोधरूप होय, शत्रुके मारवेकूं दौडी। सो चली चली तहां आई, जहां दोऊ भाई
विराजे हुते। दोऊ महा रूपवान, मन मोहिबेके कारण। तिनकूं देख याका प्रबल क्रोध तत्काल जाता
रहा। तत्काल राग उपजा, मनविषै चिन्तवती भई, इन दोऊनिमें जो मोहि इच्छै ताहि मैं सेवूं। यह
विचार तत्काल कामातुर भई। जैसैं कमलनिके वनविषैं हंसनी मोहित होय, अर महा ह्रदविषै भैंस
अनुरागिनी होय, अर हरे धानके खेतविषै हरिणी अभिलाषिणी होय तैसैं इनविषैं यह आसक्त भई।
सो एक पुन्नागवृक्षके नीचे बैठी रुदन करैं, अतिदीन शब्द उचारैं, वनकी रज कर धूसरा होय रहा है
अंग जाका। ताहि देखकर रामकी रमणी सीता अति दयालुचित्त उठकर ताके समीप आय कहती
भई। तू शोक मत कर। हाथ पकड़ ताहि शुभ वचन कह धीर्य बंधाय रामके निकट लाई। तब वह राम
ताहि कहते भए। तू कौन है? यह दुष्ट जीवनिका भरा वन ताविषै अकेली क्यों विचरै है? तब वह
कमल सरीखे हैं नेत्र जाके, अर भ्रमरकी गुंजार समान हैं वचन जाके, सो कहती भई—हे पुरुषोत्तम!
मेरी माता तो मरणकूं प्राप्त भई सो मोकूं गम्य नाहीं, मैं बालक हुती। बहुरि ताके शोककरि पिता भी
परलोक गया। सो मैं पूर्वले पापतैं कुटुम्बरहित दंडक वनविषैं आई, मेरे मरणकी अभिलाषा सो या
भयानक वनमें काहू दुष्ट जीवने न भखी, बहुत दिननतैं या वनविषै भटक रही हूं। आज मेरे कोऊ पाप
कर्मका नाश भया सो आपका दर्शन भया। अब मेरे प्राण न छूटें ता पहिले मोहि कृपाकर इच्छहु। जो कन्या
कुलवंती शीलवंती होय ताहि कौन न इच्छैं? सब ही इच्छैं। यह याके लज्जारहित वचन सुनकर दोऊ
भाई नरोत्तम परस्पर अवलोकनकर मौनसूं तिष्ठे। कैसे हैं दोऊ भाई? सर्वशास्त्रनिके अर्थका जो ज्ञान
सोई भया जल, ताकरि धोया है मन जिनका, कृत्य अकृत्यके विवेकविषै प्रवीण। तब वह इनका
चित्त निष्काम जान निश्वास नाख कहती भई—मैं जाऊं? तब राम लक्ष्मण बोले जो तेरी इच्छा
होय सो कर। तब वह चली गई। ताके गए पीछे राम लक्ष्मण सीता आश्चर्यकूं प्राप्त भए। अर

यह क्रोधायमान होय शीघ्र पतिके समीप गई। अर लक्ष्मण मनमें विचारता भया जो यह कौनकी पुत्री, कौन देशविषैं उपजी, समूहसे बिछुरी मृगी समान यहां कहांसूं आई। हे श्रेणिक! यह कार्य कर्तव्य, यह न कर्तव्य, याका परिपाक शुभ वा अशुभ, ऐसा विचार अविवेकी न जानें, अज्ञानरूप तिमिर करि आच्छादित है बुद्धि जिनकी। अर प्रवीण बुद्धि महाविवेकी, अविवेकतैं रहित हैं, सो या लोकविषैं ज्ञानरूप सूर्यके प्रकाशकर योग्य अयोग्यकूं जान अयोग्यके त्यागी होय योग्यक्रियाविषैं प्रवृत्त हैं।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रंथ, ताकी भाषावचनिकाविषैं शम्बूकका वध वर्णन करने वाला तेतालीसवां पर्व पूर्ण भया ॥ ४३ ॥

अथानन्तर जैसैं हृदयका तट फूटजाय अर जलका प्रवाह विस्तारकूं प्राप्त होय तैसैं खरदूषणकी स्त्रीका राम लक्ष्मणसे राग उपजा हुता सो उनकी अबांछातैं विध्वंस भया। तब शोकका प्रवाह प्रकट भया, अतिव्याकुल होय नानाप्रकार विलाप करती भई, अरतिरूप अग्निकर तप्तायमान है अंग जाका। जैसे बछड़े बिना गाय विलाप करैं, तैसे शोक करती भई। झरे हैं नेत्रनिके आंसू जाके सो विलाप करती पति देखी। नष्ट भया है धीर्य जाका अर धूरकर धूसरा है अंग जाका, बिखर रहे हैं केशनिके समूह जाके, अर शिथिल होय रही है कटिमेखला जाकी। अर नखनिकर बिदारे गए हैं वक्षस्थल, कुक्ष, अर जंघा जाकी, सो रुधिरकरि आरक्त हैं। अर आवरण रहित लावण्यता रहित, अर फट गई है चोली जाकी। जैसै माते हाथीने कमलनीकूं दलमली होय तैसी याहि देख, पति धीर्य बन्धाय पूछता भया—हे कांते! कौन दुष्टने तोहि ऐसी अवस्थाकूं प्राप्त करी। सो कहो, वह कौन है जाहि आज आठवां चन्द्रमा है। अथवा मरण ताके निकट आया है। वह मूढ़ पहाड़के शिखरपर चढ़ सोवै है, सूर्यसे क्रीड़ाकर अंधकूपमें पड़े है। दैव तासूं रूसा है, मेरी क्रोधरूप अग्नि विषैं पतंगकी नाईं पड़ेगा। धिक्कार ता पापी अविवेकीको, वह पशु समान अपवित्र, अनीति, यह लोक परलोक भ्रष्ट, जानैं तोहि दुखाई। तू

स्त्रीनि सारिखी तू नाहीं । बड़े वंशकी पुत्री बड़े घर
बडवानलकी शिखा समान है, रुदन मत कर, और
परणी आई है । अबही ता दुराचारीकू हस्त तलते हण परलोककू प्राप्त कराऊंगा, जैसे सिंह उन्मत्त
हाथीकू हणै । या भांति जब पतिने कही तब चन्द्रनखा महा कष्ट थकी रुदन तज, गदगद वाणीसू
कहती भई । अलकनिकर आछादित हैं कपोल जाके, हे नाथ ! मैं पुत्रके देखवेकू वनविषै नित्य जाती
हुती, सो आज पुत्रका मस्तक कटा भूमिमें परया देख्या । अर रुधिरकी धाराकर बांसोंका बीड़ा
आरक्त देख्या, काहू पापीने मेरे पुत्रकू मार खड्गरत्न लिया । कैसा है खड्ग ? देवनिकर सेवने योग्य ।
सो मैं अनेक दुःखनिका भाजन भाग्य रहित पुत्रका मस्तक गोदमें लेय विलाप करती भई सो जा
पापीने शम्बूककू मारया हुता ताने मोहि अनीति विचारी, भुजाकर पकडी, मैं कही मोहि छांड सो
पापी नीचकुली छांड़े नाहीं, नखनिकरि दांतननिकरि विदारी । निर्जन वनविषै मैं अकेली वह बलवान
पुरुष, मैं अबला तथापि पूर्व पुण्यसे शील बचाय महाकष्टतै मैं यहां आई । सर्व विद्याधरनिका स्वामी,
तीन खण्ड अधिपति, तीनलोकविषै प्रसिद्ध रावण काहूसे न जीत्या जाय सो मेरा भाई, अर तुम खर-
दूषण नामा महाराज, दैत्यजातिके जे विद्याधर तिनके अधिपति, मेरे भरतार तथापि मैं दैवयोगतैं या
अवस्थाकू प्राप्त भई । ऐसे चन्द्रनखाके वचन सुन महा क्रोधकर तत्काल जहां पुत्रका शरीर मृतक
पडया हुता, तहां गया सो मूवा देखकर अति खेदखिन्न भया । पूर्व अवस्थाविषै पुत्र पूर्णमासीके चंद्रमा
समान हुता, सो महा भयानक भासता भया । खरदूषणने अपने घर आय अपने कुटुम्ब से मन्त्र किया ।
तब कईएक मंत्री कर्कशचित्त हुते वे कहते भए-हे देव ! जाने खड्ग रत्न लिया अर पुत्र हता ताहि
जो ढीला छोडोगे तो न जानिए कहा करै ? सो ताका शीघ्र यत्न करहु । अर कईएक विवेकी कहते भए
हे नाथ ! यह लघु कार्य नाहीं, सर्व सामन्त एकत्र करहु, अर रावणपै हू पत्र पठावहु । जिनके हाथ सूर्य
हास खड्ग आया तै सामान्य पुरुष नाहीं । तातैं सर्व सामंत एकत्रकर जो विचार करना होय सो करहु
शीघ्रता न करहु । तदि रावणके निकट तो तत्काल दूत पठाया, दूत शीघ्रगामी अर तरुण । सो तत्काल

रावण पै गया। रावणका उत्तर पीछा आवै ताके पहिले खरदूषण अपने पुत्रके मरणकर महा द्वेषका भरचा सामन्तनिसूं कहता भया—वे रंक विद्याबल रहित भूमिगोचरी हमारी विद्याधरनिकी सेनारूप समुद्रके तिरवेकूं समर्थ नाहीं। धिक्कार हमारे सूरापनकूं जो औरका सहारा चाहै हैं। हमारी भुजा हैं वही सहाई हैं, अर दूजा कौन? ऐसा कहकर महा अभिमानकूं धरै शीघ्रही मंदिरसूं निकस्या, आकाश मार्ग गमन किया, तेजरूप हैं मुख जाका। सो ताहि सर्वथा युद्धकूं सन्मुख जान चौदह हजार राजा संग चाले, सो दण्डक वनमें आए तिनकी सेनाके वादित्रनिके शब्द समुद्रके शब्द समान सीता सुनकर भयकूं प्राप्त भई। हे नाथ! कहा है? ऐसे शब्द कह पतिके अंगसूं लगी, जैसैं कल्पबेल कल्पवृक्षसूं लगै। तब राम कहते भए—हे प्रिये! भय मतकर। याहि धीर्य बंधाय विचारते भए—यह दुर्धर शब्द सिंहका है, अक मेघका है, अक समुद्रका है, अक दुष्ट पक्षिनका है, अक आकाश पूरगया है? तब सीतासूं कहते भए—हे प्रिये! ये दुष्टपक्षी हैं जो मनुष्य अर पशुनिकूं लेजाए हैं, धनुषके टकारतैं इन्हें भगाऊ हूं। इतनेही में शत्रु की सेना निकट आई। नानाप्रकारके आयुधनिकर युक्त सुभट दृष्टिपरे, जैसे पवनके प्रेरे मेघघटानिके समूह विचरैं तैसैं विद्याधर विचरते भए। तब श्रीराम विचारी ये नन्दीश्वर द्वीपकूं भगवानकी पूजाके अर्थ देव जाय हैं, अथवा बांसनिके बीड़ेमें काहू मनुष्यकूं हतकर लक्ष्मण खड्ग रत्न लाया, अर वह कन्या बन आई हुती सो कुशील स्त्री हुती, तानैं ये अपने कुटुम्बके सामत प्रेरे हैं। तातैं अब परसेना समीप आए निश्चित रहना उचित नाहीं। धनुषकी ओर दृष्टि धरी अर बक्तर पहिरनेकी तैयारी करी। तब लक्ष्मण हाथ जोड सिर नवाय विनती करता भया। हे देव! मोहि तिष्ठते आपकूं एता परिश्रम करना उचित नाहीं। आप राजपुत्रीकी रक्षा करहु, मैं शत्रुनिके सन्मुख जाऊं हूं। सो जो कदाचित् भीड पड़ेगी तो मैं सिंहनाद करूंगा, तब आप मेरी सहाय करियो। ऐसा कहिकर बक्तर पहर, शस्त्र धार, लक्ष्मण शत्रुनिके सन्मुख युद्धकूं चाल्या। सो वे विद्याधर लक्ष्मणकूं उत्तम आकारका धरनहारा वीराधिवीर श्रेष्ठ पुरुष देख जैसैं मेघ पर्वतकूं बेढ़े तैसैं बेढते भए। शक्ति, मुदगर, सामान्य

पद्म
पुराण
५१३

चक्र, बरछी, बाण इत्यादि शस्त्रनिकी वर्षा करते भए। सो अकेला लक्ष्मण सर्व विद्याधरनिके चलाए बाण अपने शस्त्रनिकरि निवारता भया, अर आप विद्याधरनिकी ओर आकाशमें वज्रदंड बाण चलावता भया। यह कथा गौतम स्वामी राजा श्रेणिकसूं कहै हैं। हे राजन्! अकेला लक्ष्मण विद्याधरनिकी सेनाकूं बाणनिकरि ऐसा रोकता भया जैसे संयमी साधु आत्मज्ञानकर विषयवासनाकूं रोकें। लक्ष्मणके शस्त्रनिकरि विद्याधरनिके सिर रत्ननिके आभरणकर मंडित, कुण्डलनिकरि शोभित आकाशसे धरतीपर परे, मानों अम्बररूप सरोवरके कमल ही हैं। योधानिसहित पर्वत समान हाथी पड़े, अर अश्वनिसहित सामंत पड़े। भयानक शब्द करते होंठ डसते ऊर्धगामी बाणनिकर वासुदेव बाहनसहित योधानिकूं पीटता भया। ताही समय पुष्पकविमानविषै बैठ्या रावण आया। सम्बूकके मारणहारे पुरुषनिपर उपज्या है महाक्रोध जाकूं सो मार्गमें रामके समीप सीता महा सतीकूं तिष्ठती देखता भया। सो देखकर महा मोहकूं प्राप्त भया। कैसी है सीता? जाहि लखि रतिका रूपभी या समान न भासै, मानो साक्षात् लक्ष्मीही है। चन्द्रमा समान सुन्दर वदन, निभन्यांके फूलसमान अधर, केसरीकी कटिके समान कटि, लहलहात करते चंचल कमलपत्र समान लोचन, अर महा गजराजके कुम्भस्थलके शिखर समान कुच, नवयौवन, सर्व गुणनिकर पूर्ण कांतिके समूहकरि संयुक्त है शरीरजाका, मानो कामके धनुषकी पिणच ही है, अर नेत्र जाके कामके बाण ही हैं, मानो नामकर्मरूप चतेरेने अपनी चपलता निवाहनेके निमित्त स्थिरताकर सूखसूं जैसी चाहिए तैसी बनाई है। जाहि लखे रावणकी बुद्धि हरगई। महारूपके अतिशयकूं धरे जो सीता ताके अवलोकनसे सम्बूकके मारवेवारेपर जो क्रोध हुता सो जाता रह्या। अर सीता पर रागभाव उपज्या। चित्तकी विचित्रगति है। मनमें चितवता भया या विना मेरा जीतव्य कहां? अर जो विभूति मेरे घरमें है ताकरि कहा? यह अद्भुतरूप, अनुपम महासुन्दर नवयौवन मोहि खरदूषणकी सेना में आया कोई न जाने। ता पहिले याहि हरकर घर लेजाऊं। मेरी कीर्ति चन्द्रमा समान निर्मल सकल लोकमें विस्तर रही है सो छिपकर लेजानेमें मलिन न होय। हे श्रेणिक! ५१३

अर्थी दोषकूं न गिनै, तातैं गोप्य लेजाइवेका यत्न किया। या लोकमें लोभ समान और अनर्थ नाहीं, अर लोभमें परस्त्रीके लोभसमान महा अनर्थ नाहीं। रावणने अवलोकनी विद्यासूं वृत्तान्त पूछ्या सो वाके कहेसे याके नाम कुल सब जानें–लक्ष्मण अनेकनिसूं लडनहारा एक युद्धमें गया, अर यह राम हैं। यह इनकी स्त्री सीता है, अर जब लक्ष्मण गया तब रामसूं ऐसा कह गया—जो मोपै भीड़ पड़ेगी तब सिंहनाद करूंगा, तब तुम मेरी सहाय करियो। सो वह सिंहनाद मैं करूं तब यह राम धनुषबाण लेय भाईपै जावैंगे अर मैं सीताकूं लेजाऊंगा, जैसैं पक्षी मांसकी डलीकूं लेजाय। अर खरदूषण का पुत्र तो इनने माराही हुता अर ताकी स्त्री का अपमान किया। सो वह शक्ति आदि शस्त्रनिकर दोऊ भाइनिकूं मारेहीगा, जैसैं महाप्रबल नदीका प्रवाह दोऊ ढाहे पाड़े। नदीके प्रवाहकी शक्ति छिपी नाहीं है तैसैं खरदूषणकी शक्ति काहूतैं छिपी नाहीं, सब कोऊ जानै हैं। ऐसा विचारकर मूढमति कामकर पीड़ित रावण मरणके अर्थ सीताके हरणका उपाय करता भया। जैसैं दुरबुद्धि बालक विषके लेने का उपाय करै।

अथानन्तर लक्ष्मण अर कटकसहित खरदूषण दोऊमें महायुद्ध होय रहा है, शस्त्रनिका प्रहार होय रहा है। अर इधर कपटकर रावणने सिंहनाद किया, तामैं बारम्बार रामराम यह शब्द किया। तब राम जानी कि यह सिंहनाद लक्ष्मण किया। सुनकर व्याकुल चित्त भए। जानी भाईपै भीड पडी। तब रामने जानकीकूं कह्या–हे प्रिये! भय मत करहु, क्षण एक तिष्ठ, ऐसा कह निर्मल पुष्पविषै ताही छिपाई अर जटायूकूं कहा–हे मित्र! यह स्त्री अबला जाति है, याकी रक्षा करियो। तुम हमारे मित्र हो, सहधर्मी हो। ऐसा कहकर आप धनुषबाण लेय चाले, सो अपशकुन भए, सो न गिने, महासतीकूं अकेली वनविषै छोड़ शीघ्र ही भाइपै गए। महारणमें भाईके आगैं जाय ठाढ़े रहे, ता समय रावण सीताकूं उठायबेकूं आया, जैसा माता हाथी कमलिनीकूं लेबै आवै। कामरूप दाहकर प्रज्वलित है मन जाका, भूल गई है समस्त धर्मकी बुद्धि जाकी, सीताकूं उठाय पुष्पक बिमान पर धरने लाग्या।

तब जटायुपक्षी स्वामीकी स्त्रीकूं हरता देख क्रोधरूप अग्निकर प्रज्वलित भया । उठकर अतिवेगतैं
रावणपर पड्या, तीक्ष्ण नखनिकी अणी अर चूंचसे रावणका उरस्थल रुधिरसंयुक्त किया, अर
अपनी कठोर पांखनिकर रावणके वस्त्र फाड़ डाले । रावणका सर्व शरीर खेदखिन्न भया, तब रावण
ने जानी यह सीताकूं छुडावेगा, झंझट करेगा, तेतैं याका धनी आन पहुँचेगा । सो याहि मनोहर वस्तु
का अवरोधक जान महाक्रोधकर हाथकी चपेटसे मारचा सो अति कठोर हाथकी घातसे पक्षी विह्वल
होय पुकारता संता पृथ्वीमें पडा मूर्छाकूं प्राप्त भया । तब रावण जनकसुताकूं पुष्पक विमानमें धर
अपने स्थान ले चाल्या । श्रेणिक ! यद्यपि रावण जानै है यह कार्य योग्य नाहीं । तथापि कामके
वशीभूत हुवा सर्व विचार भूल गया । सीता महासती आपकूं परपुरुषकर हरी जान, रामके अनुराग
से भीज रहा है चित्त जाका, महा शोकवंती होय, आरति रूप विलाप करती भई । तब रावण याहि
निज भरतारविषै अनुरक्त जान, रुदन करती देख कछुइक उदास होय विचारता भया—जो यह निरंतर
रोवै है, अर विरहकर व्याकुल है । अपने भरतारके गुण गावै है, अन्य पुरुषके संयोगकी अभिलाषा
नाहीं । सो स्त्री अवध्य है, तातै मैं मार न सकूं, अर कोऊ मेरी आज्ञा उलंघै तो ताहि मारूं । अर
मैं साधुनिके निकट व्रत लिया हुता जो परस्त्री मोहि न इच्छै ताहि मैं न सेऊं । सो मोहि व्रत दृढ़
राखना, याहि कोऊ उपायकर प्रसन्न करूं । उपाय किए प्रसन्न होयगी । जैसैं क्रोधवंत राजा शीघ्र ही
प्रसन्न न किया जाय तैसैं हठवंती स्त्री भी वश न करी जाय । जो कुछ वस्तु है सो यत्नतैं सिद्ध होय
है । मनवांछितविद्या, परलोककी क्रिया, अर मनभावती स्त्री ये यत्नसे सिद्ध होय । यह विचारकर
रावण सीताके प्रसन्न होयवेका समय हेरै । कैसा है रावण ? मरण आया है निकट जाके ।

अथानन्तर श्रीरामने बाणरूप जलकी धाराकर पूर्ण जो रणमंडल तामें प्रवेश किया । सो लक्ष्मण
देखकर कहता भया । हाय ! हाय ! एते दूर आप क्यों आए—हे देव ! जानकीकूं अकेली वनविषै मेल
आए । यह वन अनेक विग्रहका भरचा है । तब राम कह्या मैं तेरा सिंहनाद सुन शीघ्र ही आया ।
तब लक्ष्मण कहा आप भली न करी, अब शीघ्र जहां जानकी है वहां जाहु । तब राम जानी वीर तो

महाधीर है, याहि शत्रु का भय नाहीं । तब याकूं कही—तू परम उत्साह रूप है, बलवान वैरीकूं जीत, ऐसा कहकर आप, सीताकी उपजी है शंका जिनको सो चंचल चित्त होय जानकीकी दिशि चाले । क्षण मात्रमें आय देखे तो जानकी नाहीं ! तदि प्रथम तो विचारी कदाचित् सुरतिभंग भया हूं । बहुरि निर्धारण देखें तो सीता नाहीं । तब आप हाय सीता ! ऐसा कह मूर्छा खाय धरती पर पड़े । सो धरती रामके विलापसे ऐसी सोहती भई जैसे भरतारके मिलापसे भार्या सोहै । बहुरि सचेत होय वृक्षनिकी ओर दृष्टि धर प्रेमके भरे अत्यन्त आकुल होय कहते भए—हे देवी ! तू कहां गई ? क्यों न बोलहु ? बहुत हास्यकरि कहा ? वृक्षनिके आश्रय बैठी होय तो शीघ्र ही आवहु ! कोपकर कहा ? मैं तो शीघ्र ही तिहारे निकट आया । हे प्राणवल्लभे ! यह तिहारा कोप हमें सुखका कारण नाहीं । या भांति विलाप करते फिरै हैं । सो एक नीची भूमिमें जटायुकूं कंठगत प्राण देख्या । तब आप पक्षीकूं देख अत्यन्त खेदखिन्न होय याके समीप बैठ नमोकार मंत्र दिया । अर दर्शन ज्ञान चारित्र तप ये चार आराधना सुनाई, अरहंत सिद्ध साधु केवली प्रणीत धर्मका शरण लिवाया । पक्षी श्रावकके व्रतका धरणहारा श्रीरामके अनुग्रह-करि समाधिमरण कर स्वर्गविषै देव भया, परम्पराय मोक्ष जायगा । पक्षीके मरणके पीछे आप यद्यपि ज्ञानरूप हैं, तथापि चारित्रमोहके वश होय महाशोकवन्त अकेले बनविषै प्रियाके वियोगके दाहकर मूर्छा खाय पड़े । बहुरि सचेत होय महाव्याकुल महासती सीताकूं ढूंढते फिरैं । निराश भए दीन वचन कहैं, जैसे भूतके आवेशकर युक्त पुरुष वृथा अलाप करै । छिद्र पाय महाभीम बनमें काहू पापीने जानकी हरी सो बहुत विपरीत करी, मोहि मारचा, अब जो कोई मोहि प्रिया मिलावै, अर मेरा शोक हरै, ता समान मेरा परम बांधव नाहीं । हो बनके वृक्ष हो ! तुम जनकसुता देखी ? चम्पाके पुष्प समान रंग, कमलदल लोचन, सुकुमार चरण, निर्मल स्वभाव, उत्तम चाल, चित्तको उत्सव करणहारी, कमलके मकरंद समान सुगन्ध मुखका स्वांस, स्त्रीनिके मध्य श्रेष्ठ, तुमने पूर्व देखी होय तो कहो । या भांति बनके वृक्षनिसूं पूछैं हैं, सो वे एकेन्द्री वृक्ष कहा उत्तर देवें । तब राम सीताके गुणनिकरि हरचा

है मन जाका, बहुरि मूर्छा खाय धरतीपर पड़े। बहुरि सचेत होय महा क्रोधायमान वज्रावर्त धनुष हाथमें लिया, पिणच चढाई, टंकोर किया सो दशों दिशा शब्दायमान भई। सिंहनिकूं भयका उपजावनहारा नरसिंहने धनुषका नाद किया। सो सिंह भाग गए, गजनिके मद उतर गए। तब धनुष उतार अत्यन्त विषादकूं प्राप्त होय बैठकर अपनी भूलका सोच करते भए। हाय हाय मैं मिथ्या सिंहनादके श्रवणकर विश्वास मान, वृथा जाय प्रिया खोई। जैसे मूढ जीव कुश्रुतका श्रवण सुन विश्वास मान, अविवेकी होय शुभगतिकूं खोवै। सो मूढके खोयवेका आश्चर्य नाहीं, परन्तु मैं धर्मबुद्धि, वीतरागके मार्गका श्रद्धानी, असमझ होय असुरकी मायामें मोहित हुवा, यह आश्चर्यकी बात है। जैसैं या भव वनविषै अत्यन्त दुर्लभ मनुष्यकी देह महापुण्य कर्मकर पाई, ताहि वृथा खोवे, सो बहुरि कब पावे? अर त्रैलोक्यविषै दुर्लभ महारत्न ताहि समुद्रमें डारें, बहुरि कहां पावै? तैसै वनितारूप अमृत मेरे हाथसूं गया? बहुरि कौन उपायकरि पाइये। या निर्जन वनविषै कौनकूं दोष दूं। मैं ताहि तजकर भाईपै गया सो कदाचित् कोपकर आर्या भई होय। अरण्य वनविषै मनुष्य नाहीं, कौनकूं जाय पूछें, जो हमकूं स्त्रीकी वार्ता कहे। ऐसा कोई या लोकविषै दयावान श्रेष्ठ पुरुष है? जो मोहि सीता दिखावै। वह महासती शीलवन्ती, सर्व पापरहित, मेरे हृदयकूं वल्लभ, मेरा मनरूप मंदिर ताके विरहरूप अग्निकर जरै है सो ताकी वार्तारूप जलके दानकर कौन बुझावै? ऐसा कहकर परम उदास, धरतीकी ओर है दृष्टि जाकी, बारम्बार कछुइक विचार कर निश्चल होय तिष्ठे। एक चकवीका शब्द निकट ही सुन्या सो सुनकर ताकी ओर निरखा। बहुरि विचारी या गिरिका तट अत्यन्त सुगन्ध होय रहा है सो याही ओर गई होय अथवा यह कमलनिका वन है यहां कौतूहलके अर्थ गई होय? आगे याने यह वन देखा हुता सो स्थानक मनोहर है, नानाप्रकार पुष्पनिकर पूर्ण है, कदाचित् तहां क्षणमात्र गई होय? सो यह विचार आप वहां गए। वहां हू सीताकूं न देख्या, चकवी देखी। तब विचारी वह पतिव्रता मेरे बिना अकेली कहां जाय। बहुरि व्याकुलताकूं प्राप्त होय, जायकर पर्वतसूं पूछते भए—हे

गिरिराज ! तू अनेक धातुनिकरि भरया है, मैं राजा दशरथका पुत्र रामचन्द्र तोहि पूछूं हूं, कमल सारिखे नेत्र हैं जाके, सो सीता मेरे मनकी प्यारी, हंसगामिनी, सुन्दर स्तनके भारकरि नम्रीभूत है अंग जाका, किंदूरा समान अधर, सुन्दर नितम्ब, सो तुम कहूं देखी ? वह कहां है ? तब पहाड़ कहा जवाब देय, इनके शब्दसे गूंजा । तब आप जानी कछु याने स्पष्ट न कही, जानिए है याने न देखी, वह महासती काल प्राप्त भई । यह नदी प्रचंड तरंगनिकी धरनहारी अत्यन्त वेगकूं धरे बहै है, अविवेकवंती, ताने मेरी कांता हरी, जैसैं पापकी इच्छा विद्याकूं हरै । अथवा कोई क्रूर सिंह क्षुधातुर भख गया होय, वह धर्मात्मा साधुवर्गनिकी सेवक सिंहादिकके देखते ही नखादिके स्पर्श बिना ही प्राण देय। मेरा भाई भयानक रणविषै संग्राममें है सो जीवनेका संशय ही है । यह संसार असार है । अर सर्व जीवराशि संशय रूप ही है । अहो ! यह बड़ा आश्चर्य है! जो मैं संसारका स्वरूप जानूं हूं अर दुखतैं शून्य होय रहा हूं । एक दुख पूरा नहीं परै है अर दूजा और आवै है। तातैं जानिए है यह संसार दुखका सागर ही है–जैसैं खोड़े पगकूं खंडित करना, अर दाहे मारेको भस्म करना, अर डिगेकूं गर्तमें डारना। रामचन्द्रजीने वनविषै भ्रमणकर मृग सिंहादिक अनेक जन्तु देखे परन्तु सीता न देखी। तब अपने आश्रम आय अत्यन्त दीन वदन, धनुष उतार पृथ्वीमें तिष्ठे। बारम्बार अनेक विकल्प करते क्षणएक निश्चल होय मुखसे पुकारते भए । हे श्रेणिक ! ऐसे महापुरुषनिकूं भी पूर्वोपार्जित अशुभके उदयसूं दुख होय है । ऐसा जानकर अहो भव्यजीव हो ! सदा जिनवरके धर्ममें बुद्धि लगावो, संसारतैं ममता तजो । जे पुरुष संसारके विकारसूं पराङ्मुख होय अर जिनवचनकूं नाहीं आराधे, वे संसारके विषै शरण-
रहित पापरूप वृक्षके कटुक फल भोगवै हैं, कर्मरूप शत्रुके आतापसे खेदखिन्न हैं ।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रंथ, ताकी भाषावचनिकाविषैं सीताहरण वर्णन करनेवाला चवालीसवां पर्व पूर्ण भया ॥ ४४ ॥

अथानन्तर लक्ष्मणके समीप युद्धविषैं खरदूषणका शत्रु विराधितनामा विद्याधर अपने मंत्री अर शूरवीरनिसहित शस्त्रनिकर पूर्ण आया, सो लक्ष्मणकूं अकेला युद्ध करता देख महा नरोत्तम जान, अपने स्वार्थकी सिद्धि इनसे जान प्रसन्न भया। महा तेजकर देदीप्यमान शोभता भया। वाहनतैं उतर, गोड़े धरती लगाय, हाथ जोड, सीस निवाय, अति नम्रीभूत होय परम विनयसूं कहता भया। हे नाथ! मैं आपका भक्त हूं, कछुइक मेरी विनती सुनो। तुम सारिखेनिका संसर्ग हम सारिखेनिके दुखका क्षय करनहारा है। वाने आधी कही आप सारी समझ गए। ताके मस्तकपर हाथ धर कहते भए तू डरे मत, हमारे पीछे खडा रह। तब वह नमस्कारकर अति आश्चर्यकूं प्राप्त होय कहता भया—हे प्रभो! यह खरदूषण शत्रु महाशक्तिकूं धरै है, याहि आप निवारहु, अर सेनाके योधानिकरि मैं लडूंगा। ऐसा कह खरदूषणके योद्धानिसूं विराधित लड़ने लागया। दौडकर तिनके कटकपर परया, अपनी सेनासहित झलझलाट करै है आयुधनिके समूह ताके। विराधित तिनकूं प्रकट कहता भया—मैं राजा चन्द्रोदय का पुत्र विराधित, घने दिननिविषैं पिताका वैर लेबे आया हूं, युद्धका अभिलाषी अब तुम कहां जावो हो? जो युद्धमें प्रवीण हो तो खड़े रहो। मैं ऐसा भयंकर फल दूंगा जैसा यम देय। ऐसा कहा तब तिन योद्धानिके अर इनके महा संग्राम भया। अनेक सुभट दोऊ सेनानिके मारे गए। पियादे प्यादे-निसूं, घोडनिके असवार घोडनिके असवारनिसूं, हाथिनिके असवार हाथिनिके असवारनिसूं, रथी रथी-निसूं परस्पर हर्षित होय युद्ध करते भए। वह वाहि बुलावे, वह वाहि बुलावे या भांति परस्पर युद्ध कर दशों दिशानिकूं बाणनिकरि आच्छादित करते भए।

अथानन्तर लक्ष्मण अर खरदूषणका महायुद्ध भया, जैसैं इन्द्र असुरेन्द्रके युद्ध होय। ता समय खरदूषण क्रोधकर मंडित लक्ष्मणसूं लाल नेत्रकर कहता भया—मेरा पुत्र निर्वैर सो तूने हत्या, अर हे चपल! तूने मेरी कांताके कुच मर्दन किए, सो पापी अब मेरी दृष्टिसूं कहां जायगा। आज तीक्ष्ण बाणनिकरि तेरे प्राण हरूंगा, तैं जैसे कर्म किए हैं तैसा फल भोगवेगा। हे क्षुद्र, निर्लज्ज, परस्त्रीसंग

लोलुपी ! मेरे सन्मुख आयकर परलोक जाहु। तब ताके कठोर वचननिकर प्रज्वलित भया है मन जाका सो लक्ष्मण, वचनकर सकल आकाशकूं पूरता संता कहता भया—अरे क्षुद्र ! वृथा काहे गाजै है ? जहां तेरा पुत्र गया वहां तोहि पठाऊंगा। ऐसा कहकर आकाशके विषै तिष्ठता जो खरदूषण ताहि लक्ष्मणने रथरहित किया, अर ताका धनुष तोडचा, अर ध्वजा उडाय दई, अर प्रभारहित किया। तब वह क्रोधकर भरचा पृथ्वीके विषै पडचा, जैसैं क्षीणपुण्य भया देव स्वर्गतैं पड़े। बहुरि महा सुभट खड्ग लेय लक्ष्मण पर आया। तब लक्ष्मण सूर्यहास खड्ग लेय ताके सन्मुख भया। इन दोऊनिमें नानाप्रकार महायुद्ध भया। देव पुष्पवृष्टि करते भए, अर धन्य धन्य शब्द कहते भए। बहुरि महा युद्ध के विषै सूर्यहास खड्गकर लक्ष्मणने खरदूषणका सिर काटचा सो निर्जीव होय खरदूषण पृथ्वीविषै परचा, मानों स्वर्गसूं देव परचा. सूर्यमान है तेज जाका, मानों रत्न पर्वतका शिखर दिग्गजने ढाहा।

अथानन्तर खरदूषण का सेनापति दूषण विराधितकूं रथ रहित करवेकूं आरम्भता भया। तदि लक्ष्मण बाणकरि मर्मस्थलविषै घायल किया सो घूमता भूमिमें परचा। अर लक्ष्मणने खरदूषणका समुदाय, अर कटक, अर पाताल लंकापुरी विराधितकूं दीनी। अर लक्ष्मण अतिस्नेहका भरचा जहां राम तिष्ठे है तहां आया। आकर देखै तो आप भूमिमें पड़े हैं, अर स्थानकमें सीता नाहीं। तब लक्ष्मण ने कही—हे नाथ ! कहां सोवो हो ? जानकी कहां गई ? तब राम उठकर लक्ष्मणकूं घावरहित देख कछु इक हर्षकूं प्राप्त भए। लक्ष्मणकूं उरसे लगाया अर कहते भए—हे भाई ! मैं न जानूं जानकी कहां गई ? कोई हर लेगया अथवा सिंह भखगया। बहुत हेरी सो न पाई। अतिसुकुमार शरीर उद्वेग कर बिलय गई। तब लक्ष्मण विषादरूप होय क्रोधकर कहता भया। हे देव ! सोचके प्रबन्धकर कहा ? यह निश्चय करो, कोई दुष्ट दैत्य हर लेगया है। जहां तिष्ठे है सो लावेंगे, आप संदेह न करो। नानाप्रकारके प्रिय वचननिकरि रामकूं धीर्य बंधाया, अर निर्मल जलकरि सुबुद्धिने रामका मुख धुवाया। ताही समय विशेष शब्द सुन राम पूछी यह शब्द काहेका है ? तब लक्ष्मणने कहा—हे नाथ ! यह चन्द्रोदय विद्याधर

का पुत्र विराधित, याने रणमें मेरा बहुत उपकार किया, सो आपके निकट आया है। याकी सेनाका शब्द है। भांति दोऊ वीर वार्त्ता करै हैं अर वह बड़ी सेना सहित हाथ जोड़ नमस्कारकर जय जय शब्द

कह अपने मंत्रीनि सहित विनती करता भया। आप हमारे स्वामी हो, हम सेवक हैं। जो कार्य होय ताकी आज्ञा देहु। तदि लक्ष्मण कहता भया, हे मित्र! काहू दुराचारीने ये मेरे प्रभु, तिनकी स्त्री हरी है। ता बिना रामचन्द्र जो शोकके वशी होय कदाचित् प्राणकूं तजे तो मैं भी अग्निमें प्रवेश करूंगा। इनके प्राणनिके आधार मेरे प्राण हैं, यह तू निश्चय जान। तातैं यह कार्य कर्तव्य है, भले जाने सो कर। तब यह बात सुन वह अति दुःखित होय नीचा मुख कर रहा। अर मनमें विचारता भया--एते दिन मोहि स्थानक भ्रष्ट हुए भए, नानाप्रकार बन विहार किया। अर इनने मेरा शत्रु हना, स्थानक दिया, तिनकी यह दशा है। मैं जो २ विकल्प करूं हूं सो योंही वृथा जाय हैं। यह समस्त जगत कर्माधीन है तथापि मैं कछु उद्यम कर इनका कार्य सिद्ध करूं। ऐसा विचार अपनैं मंत्रीनसूं कहा- पुरुषोत्तमकी स्त्रीरत्न पृथ्वीविषै जहां होय तहां जल स्थल आकाश पुर बन गिरि ग्रामादिकमें यत्नकर हेरहु। यह कार्य भए मनवांछित फल पावोगे। ऐसी राजा बिराधितकी आज्ञा सुन यशके अर्थी सब दिशाकूं विद्याधर दौड़े।

अथानन्तर एक अर्कजटीका पुत्र रत्नजटी, सो आकाशमार्गमें जाता हुता। तानैं सीताके रुदन की 'हाय राम हाय लक्ष्मण' यह ध्वनि समुद्रके ऊपर आकाशमें सुनी। तब रत्नजटी वहां आय देखे तो रावणके विमानमें सीता बैठी विलाप करै है। तब सीताको विलाप करती देख रत्नजटी क्रोधका भरया रावणसों कहता भया-हे पापी दुष्ट विद्याधर! ऐसा अपराध कर कहां जायगा? यह भामंडल ५२१
की बहन है, रामदेवकी राणी है। मैं भामण्डलका सेवक हूं, हे दुर्बुद्धे! जिया चाहै तो याहि छोड़। तब रावण अति क्रोधकर युद्धकूं उद्यमी भया। बहुरि विचारी कदाचित् युद्धके होते अति विह्वल जो सीता सो मरजावें तो भला नाहीं। तातैं यद्यपि यह विद्याधर रंक है तथापि उपाय करि मारना। ऐसा विचार रावण महाबलीने रत्नजटीकी विद्या हर लीनी, अर आकाशतैं पृथ्वीविषै परया। मंत्र

के प्रभावकरि धीरा धीरा स्फुलिंग की न्याईं समुद्रके मध्य कम्पद्वीपमें आय परचा। आयु कर्मके योग तैं जीवता बचा। जैसैं बणिकका जहाज फटजाय अर जीवता बचै। सो रत्नजटी विद्या खोय जीवता बच्या। सो विद्या तो जाती रही जाकरि विमान विषैं बैठ घर पहुंचे। सो अत्यन्त स्वास लेता कम्पूपर्वतपर चढ़ दिशाका अवलोकन करता भया। समुद्रकी शीतल पवनकरि खेद मिटचा सो वन-फल खाय कम्पूपर्वत पर रहे। अर जे विराधितके सेवक विद्याधर सब दिशा नाना भेषकर दौड़े हुते ते सीताकूं न देख पाछे आए। सो उनका मलिनमुख देख रामने जानी सीता इनकी दृष्टि न आई, तब राम दीर्घ स्वास नाख कहते भए—

हे भले विद्याधर हो ! तुमने हमारे कार्यके अर्थ अपनी शक्ति प्रमाण अति यत्न किया, परन्तु हमारे अशुभका उदय, तातैं अब तुम सुखसूं अपने स्थानक जाहु। हाथतैं बडवानलमें गया रत्न बहुरि कहां दीखै ? कर्मका फल है सो अवश्य भोगना, हमारा तिहारा निवारचा न निवरै। हम कुटुम्बतैं छूटे, बनमें पैठे, तो हू कर्मशत्रुकूं दया न उपजी। तातैं हम जानी हमारे असाताका उदय है। सीता हू गई या समान और दुख कहा होयगा ? या भांति कहकर राम रोवने लागे, महाधीर नरनिके अधिपति। तब विराधित धीर्य बंधायवे विषै पंडित, नमस्कारकर हाथजोड़ कहता भया—हे देव ! आप एता विषाद काहे करो, थोड़े ही दिनमें आप जनकसुताकूं देखोगे। कैसी है जनकसुता ? निःपाप है देह जाकी। हे प्रभो ! यह शोक महाशत्रु है, शरीर का नाशकरै और वस्तुकी कहा बात ? तातैं आप धीर अंगीकार करहु। यह धीर्य ही महापुरुषनिका सर्वस्व है। आप सरिखे पुरुष विवेकके निवास हैं। धीर्यवन्त प्राणी अनेक कल्याण देखैं। अर आतुर अत्यन्त कष्ट करैं तो हू इष्ट वस्तुकूं न देखैं। अर यह समय विषादका नाहीं, आप मन लगाय सुनहु। विद्याधरनिका महाराजा खरदूषण मारचा सो अब याका पारिपाक महाविषम है। सुग्रीव किहकंधापुरका धनी, अर इन्द्रजीत, कुम्भकर्ण, त्रिशिर, अक्षोभ, भीम, क्रूरकर्मा, महोदर, इनकूं आदिदे अनेक विद्याधर महा योधा बलवन्त याके परम मित्र

हैं। सो याके मरणके दुःखतैं क्रोधकूं प्राप्त भए होंगे। ये समस्त नाना प्रकार युद्धमें प्रवीण हैं, हजारां ठौर रणविषै कीर्ति पाय चुके हैं। अर वैताड पर्वतके अनेक विद्याधर खरदूषणके मित्र हैं। अर पवनञ्जयका पुत्र हनुमान, जाहि लखे सुभट दूरहीतैं डरैं, ताके सन्मुख देव हू न आवे, सो खरदूषणका जमाई है, तातैं वह हू याके मरणका रोष करैगा। तातैं यहां वनविषै न रहना। अलंकारोदय नगर जो पातालंका ताविषै विराजिये। अर भामंडलकूं सीताके समाचार पठाइये वह नगर महादुर्गम है। तहां निश्चल होय कार्यका उपाय सर्वथा करेंगे। या भांति विराधित विनती करी, तब दोऊ भाई चार घोडनिका रथ तापर चढ़कर पातालंकाकूं चाले। सो दोऊ पुरुष सीता विना न शोभते भए, जैसें सम्यक्दृष्टि विना ज्ञानचारित्र न सोहै। चतुरंग सेनारूप सागरकरि मंडित दंडकवनतैं चाले। विराधित अगाऊ गया, तहां चन्द्रनखाका पुत्र सुन्दर सो लडवेकूं नगरके बाहिर निकस्या। तानैं युद्ध किया, सो ताकूं जीत नगरमें प्रवेश किया। देवनिके नगर समान वह नगर रत्नमई। तहां खरदूषणके मंदिरविषै विराजे। सो महामनोहर सुरमंदिर समान वह मंदिर। तहां सीता विना रंचमात्र हू विश्रामकूं न पावते भए। सीतामें है मन रामका, सो रामकूं प्रियाके समीपकर वनहू मनोग्य भासता हुवा अब कांताके वियोगकर दग्ध जो राम तिनकूं नगर मंदिर विन्ध्याचलके वन समान भासैं।

अथानन्तर खरदूषणके मन्दिरमें जिनमन्दिर देखकर रघुनाथ प्रवेश किया। वहां अरहंतकी प्रतिमा देखकर रत्नमई पुष्पनिकर अर्चा करी। क्षण एक सीताका संताप भूल गए। जहां जहां भगवानके चैत्यालय हुते तहां तहां दर्शन किया। प्रशांत भई है दुःखकी लहर जिनके, रामचन्द्र खरदूषणके महल विषै तिष्ठे हैं। अर सुन्दर, अपनी माता चन्द्रनखा सहित पिता अर भाईके शोक कर महाशोक सहित लंका गया। यह परिग्रह विनाशीक है अर महा दुःखका कारण है, विघ्न कर युक्त है। तातैं हे भव्य जीव हो! तिनविषै इच्छा निवारहु। यद्यपि जीवनिके पूर्व कर्मके सम्बन्धसूं परिग्रहकी अभिलाषा होय है तथापि साधुवर्गके उपदेशकरि यह तृष्णा निवृत्त होय है, जैसें सूर्यके उदयतैं रात्रि निवृत्त होय है।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रंथ, ताकी भाषावचनिकाविषै रामको सीताका वियोग, पाताल लंकाविषै निवास वर्णन करनेवाला पैंतालीसवां पर्व पूर्ण भया ॥ ४५ ॥

अथानन्तर रावण सीताकूं लेय ऊंचे विमानके शिखर पर तिष्ठा धीरे धीरे चालता भया, जैसे आकाश विषैं सूर्य चाले । शोक कर तप्तायमान जो सीता, ताका मुखकमल कुमलाय गया देख, रतिके रागकर मूढ भया है मन जाका। ऐसा जो रावण सो सीताके चौगिर्द फिरै, अर दीन वचन कहै—हे देवी! कामके बाण कर मैं हता जाऊं हूं, सो तोहि मनुष्यकी हत्या होगी। हे सुन्दरी! यह तेरा मुखारूप कमल सर्वथा कोप संयुक्त है तो हू मनोग्यते अधिक मनोग्य भासै है। प्रसन्न हो एक वेर मेरी ओर दृष्टि धर। देख, नेत्रनिकी कांतिरूप जलकर मोहि स्नान कराय, अर जो कृपादृष्टि कर नाहीं निहारै, तो अपने चरण कमलकरि मेरा मस्तक तोड। हाय हाय! तेरी क्रीडाके वनविषै मैं अशोक वृक्ष ही क्यों न भया जो तेरे चरणकमलकी पगतलीकी घात, अत्यन्त प्रशंसा योग्य, सो मोहि सुलभ होती। भावार्थ—अशोक वृक्ष स्त्रीके पगतलीके घातसे फूलै। हे कृशोदरी! विमानके शिखर पर तिष्ठी सर्व दिशा देख, मैं सूर्यके ऊपर आकाशविषै आया हूं। मेरु कुलाचल अर समुद्र सहित पृथ्वी देख, मानों काहू सिलावटने रची है। ऐसे वचन रावणने कहे तब वह महा सती, शीलका सुमेरु, पटके अन्तर अरुचिके अक्षर कहती भई। हे अधम! दूर रह, मेरे अंगका स्पर्श मत कर, अर ऐसे निंद्य वचन कभी मत कह। रे पापी! अल्प आयु! कुगतिगामी! अपयशी! तेरे यह दुराचार तोहिकूं भयकारी है। पर-
दाराकी अभिलाषा करता तू महादुःख पावेगा। जैसे कोई भस्म कर दबी अग्निपर पांव धरै तो जरै तैसें तू इन कर्मनिकर बहुत पछतावेगा। तू मोहरूप कीचकरि मलिन चित्त है। तोहि धर्मका उपदेश देना वृथा है, जैसे अन्धके निकट नृत्य करे। हे क्षुद्र! जे पर स्त्रीकी अभिलाषा करै हैं वे इच्छा मात्र ही पापको बांधकर नरकविषै महाकष्टकूं भोगै हैं। इत्यादि रूक्ष वचन सीता रावणसूं कहे। तथापि

कामकर हता है चित्त जाका सो अविवेकसू पाछा न भया। अर खरदूषणकी जे मदद गए हुते परम हितु शुक हस्त प्रहस्तादिक वे खरदूषणके मुवे पीछे उदास होय लंका आए। सो रावण काहूकी ओर देखे नाहीं, जानकीकू नानाप्रकारके वचनकर प्रसन्न करै, सो कहां प्रसन्न होय ? जैसे अग्निकी ज्वालाकू कोई पाय न सकै अर नागके माथेकी मणिको न लेय सकै, तैसै सीताकू कोऊ मोह न उपजाय सकै। बहुरि रावण हाथ जोड सीस निवाय नमस्कार कर नानाप्रकारके दीनताके वचन कहे, सो सीता याके वचन कछू न सुने। अर मंत्री आदि सन्मुख आए सर्व दिशानितै सामंत आए। राक्षसनिके पति जो रावण सो अनेक लोकनिकर मंडित होता भया, लोक जय जयकार शब्द करते भए। मनोहर गीत नृत्य वादित्र होते भए। रावण इन्द्रकी न्याई लंकाविषै प्रवेश किया। सीता चित्तमें चितवती भई, ऐसा राजा अमर्यादाकी रीति करै, तब पृथ्वी कौनके शरण रहै ? जबलग रामचन्द्रकी कुशल क्षेमकी वार्ता मैं न सुनू तब लग खान पानका मेरे त्याग है। रावण देवारण्य नामा उपवन, स्वर्गसमान परम सुन्दर, जहां कल्पवृक्ष वहां सीताको मेलकर अपने मन्दिर गया। ताही समय खरदूषणके मरणके समाचार आए सो महाशोककर रावणकी अठारा हजार राणी ऊंचे स्वरकर विलाप करती भई। अर चन्द्रनखा रावणकी गोदविषै लोटकर अति रुदन करती भई। हाय मैं अभागिनी हती गई, मेरा धनी मारा गया। मेहके झरने समान रुदन किया, अश्रुपातका प्रवाह बहा, पति अर पुत्र दोऊके मरण शोकरूप अग्निकर दग्धायमान है हृदय जाका। सो याहि विलाप करती देख याका भाई रावण कहता भया—हे वत्स! रोयवेकर कहा ? या जगत्के प्रसिद्ध चरित्रको कहा जानेहै ? विना काल कोऊ वज्रसे भी हता न मरे, अर जब मृत्युकाल आवे तब सहजही मरजाय। कहां वे भूमिगोचरी राम, अर कहां तेरा भरतार, विद्याधर दैत्यनिका अधिपति खरदूषण ? ताहि वे मारें यह कालहीका कारण है। जाने तेरा पति मारा ताको मैं मारूंगा। या भांति बहिनकू धीर्य बंधाय कहता भया—अब तू भगवानका अर्चनकर, श्राविकाके व्रत धार। चन्द्रनखाकू ऐसा कहकर रावण महलविषै गया। सर्पकी न्याई निश्वास नाखता

सेजपर पडा। वहां पटराणी मन्दोदरी आयकर भरतारकूं व्याकुल देख कहती भई–हे नाथ! खरदूषणके मरणकर अति व्याकुल भए हो सो तिहारे सुभट कुलविषै यह बात उचित नाहीं। जे शूरवीर हैं तिनके मोटी आपदा विषय हूं विषाद नाहीं। तुम वीराधिवीर क्षत्री हो। तिहारे कुलमें तिहारे पुरुष अर तिहारे मित्र रण संग्रामविषै अनेक क्षय भये, सो कौन कौनका शोक करोगे? तुम कबहूं काहूका शोक न किया, अब खरदूषणका एता सोच क्यों करो हो? पूर्वे इन्द्रके संग्रामविषै तिहारा काका श्रीमाली मरणकूं प्राप्त भया, अर अनेक बांधव रणमें हते गए, तुम काहूका कभी शोक न किया। आज ऐसा सोच दृष्टि क्यों पड़ा है जैसा पूर्वे कबहूं हमारी दृष्टि न पड़ा? तब रावण निश्वास नाख बोला हे सुन्दरी! सुन, मेरे अन्तःकरणका रहस्य तोहि कहूं हूं। तू मेरे प्राणनिकी स्वामिनी है अर सदा मेरी वांछा पूर्ण करै है। जो तू मेरा जीतव्य चाहै है तो कोप मतकर, मैं कहूं सो कर। सर्व वस्तु का मूल प्राण है। तब मन्दोदरी कही–जो आप कहो सो मैं करूं। रावण याकी सलाह लेय विलखा होय कहता भया–हे प्रिये! एक सीता नामा स्त्री, स्त्रीनिकी सृष्टिविषै ऐसी और नाहीं, सो वह मोहि न इच्छै तो मेरा जीवन नाहीं। मेरी लावण्यता, रूप, माधुर्यता, सुन्दरता ता सुन्दरीकूं पायकर सफल होय तब मन्दोदरी याकी दशा कष्टरूप जान हंसकर दांतनिकी कांतिरूपी चांदनीकूं प्रकाशतीसंती कहती भई–हे नाथ! यह बड़ा आश्चर्य है? तुम सारिखे प्रार्थना करैं अर वह तुमको न इच्छै सो मंदभागिनी है। या संसारमें ऐसी कौन परम सुन्दरी है जाका मन तिहारे देखे खंडित न होय अर मन मोहित न होय? अथवा वह सीता कोई परम उदयरूप अद्भुत त्रैलोक्य सुन्दरी है जाको तुम इच्छो हो अर वह तुमको नाहीं इच्छै है! ये तिहारे कर हस्तीकी सूंडसमान, रत्नजडित बाजूनिकरि युक्त तिन करि उरसे लगाय बलात्कार क्यों न सेवहु? तब रावण कही कि–या सर्वांगसुन्दरीकूं मैं बलात्कार नाहीं गहूं। ताका कारण सुन–अनन्तवीर्य केवलीके निकट मैं एक व्रत लिया है। वे भगवान देव इन्द्रादिक कर वंदनीक ऐसा व्याख्यान करते भए–या संसारविषै भ्रमण करते जे जीव दुखी तिनकी पापनि

की निवृत्ति निर्वाणका कारण है। एक भी नियम महा फलकू देय है। अर जिनके एक भी व्रत नाहीं वे नर जर्जर कलशसमान निर्गुण हैं। जिनके मोक्षका कारण कोई नियम नाहीं तिन मनुष्यनिमें अर पशुनिमें कछू अंतर नाहीं। तातैं अपनी शक्तिप्रमाण पापनिको तजहु, सुकृतरूप धनको अंगीकार करहु जातैं जन्मके आंधेकी न्याईं संसाररूप अंधकूपमें न परो। या भांति भगवानके मुखरूप कमलतैं निकसे वचनरूप अमृत पीकर कईएक मनुष्य तो मुनि भए कईएक अल्पशक्ति अणुव्रतकू धारणकर श्रावक भए। कर्मके सम्बन्धतैं सबकी एक तुल्य शक्ति नाहीं। वहां भगवान केवलीके समीप एक साधु मोसे कृपा कर कहता भया—हे दशानन! कछू नियम तुमहू लेहू, तू दया धर्मरूप रत्नद्वीप विषैं आया है। सो गुणरूप रत्ननिके संग्रह बिना खाली मति जाहु। ऐसा कही तब मैं प्रणामकर देव असुर विद्याधर मुनि सर्वकी साक्षी व्रत लिया कि जो परनारी मोहि न इच्छै ताहि मैं बलात्कार न सेऊं। हे प्राण प्रिये! मैं विचारी जो मोसे रूपवान नरको देख ऐसी कौन नारी है जो मान करै? तातैं मैं बलात्कार न सेऊं। राजानिकी यही रीति है जो बचन कहे सो निवाहैं, अन्यथा महादोष लागै। तातैं मैं प्राण तजूं, ता पहिले सीताको प्रसन्न कर। घरके भस्म भए पीछे कुवां खोदना वृथा है। तब मन्दोदरी रावणकू विह्वल जान कहती भई—हे नाथ! तिहारी आज्ञाप्रमाण ही होयगा। ऐसा कह वह देवारण्यनामा उद्यान विषैं गई। अर ताकी आज्ञा पाय रावणकी अठारह हजार राणी गईं। मंदोदरी जायकर सीताकू या भांति कहती भई—हे सुन्दरी! हर्षके स्थानकविषै कहा विषाद कर रही है? जा स्त्रीके रावण पति सो जगतविषैं धन्य। सब विद्याधरनिका अधिपति, सुरपतिका जीतनहारा, तीनलोकविषैं सुन्दर, ताहि क्यों न इच्छै? निर्जन बनके निवासी, निर्धन, शक्तिहीन, भूमिगोचरी तिनके अर्थ कहा दुःख करै है? सर्व लोक विषैं श्रेष्ठ ताहि अंगीकार करि क्यों न सुख करै? अपने सुखका साधनकर या विषैं दोष कहा? जो कछु करिए है सो अपने सुखके निमित्त करिए है। अर मेरा कहा जो न करेगी तो कुछ तेरा होनहार है सो होगा। रावण महा बलवान है, कदाचित् प्रार्थना भंगतैं कोपकरै तो तेरा या बातमें अकारज ही है।

अर राम लक्ष्मण तेरे सहाई हैं सो रावणके कोप किए उनका भी जीवना नाहीं। तातैं शीघ्र ही विद्याधरनिका जो ईश्वर ताहि अंगीकार कर। जाके प्रसादतैं परम ऐश्वर्यको पायकर देवनकेसे सुख भोगवै। जब ऐसा कहा तब जानकी अश्रुपातकर पूर्ण हैं नेत्र जाके, गद्‌गद वाणीकर कहती भई—

हे नारी! यह वचन तूने सबही विरुद्ध कहे! तू पतिव्रता कहावे है। पतिव्रतानिके मुखतैं ऐसे वचन कैसैं निकसैं? यह शरीर मेरा छिद जावे, भिदजावे, हत जावे परन्तु अन्य पुरुषकू मैं न इच्छू। रूपकर सनत्कुमार समान होवे अथवा इन्द्र समान होवे तो मेरे कौन अर्थ? मैं सर्वथा अन्य पुरुषकू न इच्छू। तुम सब अठारह हजार राणी भेली होयकर आई हो सो तिहारा कहा मैं न करू। तिहारी इच्छा होय सो करो। ताही समय रावण आया, मदनके आतापकरि पीडित। जैसैं तृषातुर माता हाथी गंगाके तीर आवे तैसैं सीताके समीप आय मधुर वाणीकर आदरसू कहता भया—हे देवी! तू भय मत करै। मैं तेरा भक्त हू! हे सुन्दरी। चित्त लगाय एक विनती सुन। मैं तीन लोकमें कौन वस्तुकर हीन जो तू मोहि न इच्छै। ऐसा कहकर स्पर्शकी इच्छा चाहता भया। तब सीता क्रोधकर कहती भई—पापी! परे जा, मेरा अंग मत स्पर्शे। तदि रावण कहता भया—कोप अर अभिमान तज, प्रसन्न हो, शची इन्द्राणी समान दिव्य भोगनिकी स्वामिनी होहू। तब सीता बोली—कुशीले पुरुषका विभव मलसमान है। अर शीलवंत हैं तिनके दरिद्र ही आभूषण हैं। जे उत्तम वंशविषै उपजे हैं तिनके शीलकी हानिकरि दोऊ लोक बिगरै हैं। तातैं मेरे तो मरण ही शरण है। तू परस्त्रीकी अभिलाषा राखै है सो तेरा जीतव्य वृथा है। जो शील पालता जीवै है ताहीका जीतव्य सफल है। या भांति जब सीता तिरस्कार किया तब रावण क्रोध कर मायाकी प्रवृत्ति करता भया। राणी अठारह हजार सब जाती रहीं, अर रावणकी मायाके भयतैं सूर्य अस्त होयगया। मद झरती मायामई हाथिनिकी घटा आई। यद्यपि सीता भयभीत भई तथापि रावणके शरण न गई। बहुरि अग्निके स्फुलिंगे बरसते भए, अर लबलबाट करै हैं जीभ जिनकी ऐसे सर्प आए, तथापि सीता रावणके शरण न गई। बहुरि महा क्रूर वानर फारे हैं मुख जिन्होंने उछल उछल

आए, अतिभयानक शब्द करते भए तथापि सीता रावणके शरण न गई। अर अग्निके ज्वाला समान चपल है जिह्वा जिनकी, ऐसे मायामई अजगर तिनने भय उपजाया तथापि सीता रावणके शरण न गई। बहुरि अंधकार समान श्याम ऊंचे व्यंतर हुंकार शब्द करते आए, भय उपजावते भए तथापि सीता रावणके शरण न गई। या भांति नानाप्रकारकी चेष्टाकर रावणने उपसर्ग किए तथापि सीता न डरी। रात्रि पूर्ण भई जिनमंदिरनि विषै वादित्रनिके शब्द होते भए, द्वारनिके कपाट उघरे, मानौं लोकनिके लोचन ही उघरे। प्रातसंध्याकर पूर्वदिशा आरक्त भई, मानों कुंकुमके रंगकरि रंगी ही है। निशाका अंधकार सर्व दूरकर चन्द्रमाको प्रभारहित कर सूर्यका उदय भया। कमल फूले, पक्षी विचरने लगे, प्रभात भया। तब प्रातक्रिया कर विभीषणादि रावणके भाई खरदूषणके शोककर रावणपै आए। सो नीचा मुख किए आंसू डारते भूमिविषै तिष्ठे। ता समय पटके अंतर शोककी भरी जो सीता ताके रुदनके शब्द विभीषणने सुने। अर सुनकर कहता भया यह कौन स्त्री रुदन करै है? अपने स्वामीतैं बिछुरी है याका शोकसंयुक्त शब्द दुखको प्रकट दिखावै है। ये विभीषणके शब्द सुन सीता अधिक रोवने लगी, सज्जनको देख शोक बढ़ै ही है। विभीषण पूछता भया—हे बहिन! तू कौन है? तब सीता कहती भई—मैं राजा जनककी पुत्री, भामंडलकी बहिन, रामकी राणी, दशरथ मेरा सुसरा, लक्ष्मण मेरा देवर, सो खरदूषणतैं लडने गया। ताके पीछे मेरा स्वामी भाईकी मदद गया। मैं वनविषै अकेली रही सो छिद्र देख या दुष्टचित्तने हरी। सो मेरा भरतार मो विना प्राण तजेगा। तातैं हे भाई! मोहि मेरे भरतारपै शीघ्र ही पठाय देहु। ये वचन सीताके सुन विभीषण रावणसे विनय कर कहता भया—हे देव! यह परनारी अग्निकी ज्वाला है, आशीविष सर्पके फण समान भयंकर है, आप काहेकूं लाए? अब शीघ्रही पठाय देहु। हे स्वामी! मैं बालबुद्धि हूं, परन्तु मेरी विनती सुनो। मोहि आपने आज्ञा करी हुती जो तू उचित वार्ता हमसो कहिवो कर। तातैं आपकी आज्ञातैं मैं कहूं हूं। तिहारी कीर्तिरूप बेलिके समूह कर सर्व दिशा व्याप्त होय रही है। ऐसा न होय जो अपयशरूप अग्निकर यह कीर्तिलता

५२६

भस्म होय। यह परदाराका अभिलाष अयुक्त, अति भयंकर, महानिंद्य, दोऊ लोकका नाश करणहारा जाकर जगत्‌विषैं लज्जा उपजे, उत्तम जननिकरि धिक्कार शब्द पाइए हैं। जे उत्तम जन हैं तिनके हृदयकूं अप्रिय। ऐसा अनीतिकार्य कदाचित् न कर्तव्य। आप सकल वार्ता जानो हो, सब मर्यादा आपही तैं रहे, आप विद्याधरनिके महेश्वर, यह बलता अंगारा काहेकूं हृदयमें लगावो? जो पापबुद्धि परदारा सेवै हैं सो नरकविषै प्रवेश करै हैं। जैसैं लोहेका ताता गोला जलमें प्रवेश करै तैसैं पापी नरकमें पड़े हैं। ये वचन विभीषणके सुनकर रावण बोला-हे भाई! पृथ्वीपर जो सुन्दरवस्तु है ताका मैं स्वामी हूं, सर्व मेरीही वस्तु हैं, परवस्तु कहांसे आई?ऐसा कहकर और बात करने लगा। बहुरि महानीतिकाधारी मारीच मंत्री क्षणएक पीछे कहता भया—देखो! यह मोहकर्मकी चेष्टा, रावणसारिखे विवेकी, सर्वरीतिको जान ऐसे कर्म करे! सर्वथा जे सुबुद्धि पुरुष हैं तिनकूं प्रभातही उठकर अपना कुशल अकुशल चितवनी, विवेक से न चूकना। या भांति निरपेक्ष भया महाबुद्धिमान् मारीच कहता भया। तब रावणने कछू पाछा जवाब न दिया, उठकर खडा हो गया। त्रैलोक्य मंडन हाथीपर चढि सब सामंतनिसहित उपवनतें नगरकूं चाल्या। बरछी, खड्ग, तोमर, चमर, छत्र, ध्वजा आदि अनेक वस्तु हैं हाथनिमैं जिनके, ऐसे पुरुष आगे चले जाय हैं। अनेक प्रकार शब्द होय हैं। चंचल हैं ग्रीवा जिनकी, ऐसे हजारां तुरंगनिपर चढ़े सुभट चले जाय हैं। अर कारीघटासमान मद झरते गाजते गजराज चले जाय हैं। अर नानाप्रकारकी चेष्टा करते उछलते पयादे चले जाय हैं। हजारां वादित्र बाजे। या भांति रावणने लंकामें प्रवेश किया। रावणके चक्रवर्ती सम्पदा, तथापि सीता तृणसे हू जघन्य जाने। सीताका मन निष्कलंक, यह लुभायवेकूं समर्थ न भया। जैसे जलविषैं कमल अलिप्त रहै, तैसैं सीता अलिप्त रहै। सर्व ऋतुके पुष्पनिकरि शोभित, नानाप्रकारके वृक्ष अर लतानिकरि पूर्ण, ऐसा प्रमद नामा वन, तहां सीताकूं राखी। वह वन नन्दन समान सुन्दर, जाहि लखे नेत्र प्रसन्न होंय, फुल्लगिरिके ऊपर यह वन सो देखे पीछे और ठौर दृष्टि न लगे। जाहि लखे देवनिका मन उन्मादकूं प्राप्त होय मनुष्यनिकी कहा बात?

वह फुल्लगिरि सप्तवनकरिवेष्टित सोहै, जैसे भद्रशालादि बनकर सुमेरु सोहै है।

हे श्रेणिक ! सात ही वन अद्भुत हैं उनके नाम सुन—प्रकीर्णक, जनानन्द, सुखसेव्य, समुच्चय, चारणप्रिय, निबोध, प्रमद। तिनमें प्रकीर्णक पृथ्वीविषै, ताके ऊपर जनानन्द, तहां चतुर जन क्रीड़ा करैं। अर तीजा सुखसेव्य अति मनोग्य, सुन्दर वृक्ष, अर वेल, कारीघटा समान सघन सरोवर, सरिता वापिका, अतिमनोहर। अर समुच्चयविषै सूर्यका आताप नाहीं, वृक्ष ऊंचे, कहूं ठौर स्त्री क्रीड़ा करैं, कहुं ठौर पुरुष। अर चारणप्रिय वनविषै चारण मुनि ध्यान करैं। अर निबोध ज्ञानका निवास। सबनिके ऊपर अति सुन्दर प्रमद नामा वन, ताके ऊपर जहां तांबूलका बेल, केतकीनिके बीड़े, जहां स्नानक्रीड़ा करबेको उचित रमणीक वापिका कमलनिकर शोभित हैं, अर अनेक खणके महल, अर जहां नारंगी, बिजोरा, नारियल, छुहारे, ताडवृक्ष इत्यादि अनेक जातिके वृक्ष सर्व ही पुष्पनिके गुच्छनि कर शोभै हैं, जिनपर भ्रमर गुंजार करैं हैं, अर जहां वेलिनके पल्लव मन्द पवन कर हालैं हैं, जा वनविषै सघन वृक्ष समस्त ऋतुनिके फल फूलनिकर कारीघटा समान सघन हैं, मोरनके युगलकर शोभित हैं। ता बनकी विभूति मनोहर वापी, सहस्रदल कमल हैं मुख जिनके, सो नीलकमल नेत्रनिकर निरखे है, अर सरोवरविषै मन्द मन्द पवनकर कल्लोल उठै हैं। सो मानों सरोवरी नृत्य ही करैं हैं। अर कोयल बोलैं हैं सो मानों वचनालाप ही करै हैं। अर राजहंसनीके समूहकर मानो सरोवरी हंसेही है। बहुत कहिवे कर कहा ? वह प्रमदनामा उद्यान सर्व उत्सवका मूल, भोगिनिका निवास, नन्दन बनहूतैं अधिक। ता वनमें एक अशोकमालिनी नामा वापी कमलादि कर शोभित, जाके मणि स्वर्णके सिवाण, विचित्र आकारकूं धरै हैं द्वार जाके, जहां मनोहर महल, जाके सुन्दर झरोखे, तिनकर शोभित जहां नीझरने झरैं हैं। वहां अशोक वृक्षके तले सीता राखी। कैसी है सीता ? श्रीरामजीके वियोगकर महा शोककूं धरै है, जैसे इन्द्रते बिछुरी इन्द्राणी। रावणकी आज्ञातैं अनेक स्त्री विद्याधरी खड़ी ही रहैं। नाना प्रकारके वस्त्र सुगन्ध आभूषण जिनके हाथमें, भांति भांतिकी चेष्टाकर सीताकूं प्रसन्न

किया चाहैं। दिव्यगीत, दिव्यनृत्य, दिव्यवादित्र, अमृत सारिखे दिव्यवचन तिनकर सीताकूं हर्षित किया चाहैं, परन्तु यह कहां हर्षित होय ? जैसे मोक्ष संपदाकूं अभव्य जीव सिद्ध न कर सकैं तैसे रावण की दूती सीताकूं प्रसन्न न कर सकीं। ऊपरां ऊपरि रावण दूती भेजे, कामरूप दावानलकी प्रज्वलित ज्वाला, ताकर व्याकुल, महाउन्मत्त, भांति भांतिके अनुरागके वचन सीताकूं कह पठावे। यह कुछ जवाब नहीं देय। दूती जाय रावणसों कहैं—हे देव ! वह तो आहार पानी तज बैठी है, तुमको कैसे इच्छै ? वह काहूसों बात न करै। निश्चल अंगकर तिष्ठै है। हमारी ओर दृष्टिही नाहीं धरै। अमृत हूते अति स्वादु दुग्धादि कर मिश्रित बहुत भांति नानाप्रकारके व्यंजन ताके मुख आगे धरे हैं, सो स्पर्शै नाहीं। यह दूतीनिकी बात सुन रावण खेदखिन्न होय, मदनाग्निकी ज्वाला कर व्याप्त अंग जाका, महा आरतरूप चिन्ताके सागरमें डूबा। कबहूं निश्वास नाखे, कबहूं सोच करे। सूख गया है मुख जाका, कबहूं कछूइक गावै। कामरूप अग्निकर दग्ध भया हृदय जाका, कछुइक विचार२निश्चल होय है। अपना अंग भूमिमें डार देय फिर उठे, सूनासा होय रहे, विना समझे उठिचले, बहुरि पीछा आवे। जैसे हस्ती सूंड पटके तैसे भूमिमें हाथ पटके। सीताको बराबर चितारता आंखनितैं आंसू डारे, कबहु शब्द कर बुलावे, कबहु हुंकार शब्द करे, कबहु चुप होय रहे, कबहु वृथा बकवाद करै, कबहु सीता २ बार २ बके, कबहु नीचा मुख कर नखनिकरि धरती कुचरै, कबहुं हाथ अपने हिये लगावे, कबहुं बाहू ऊंचा करै, कबहु सेजपर पड़े, कबहु उठ बैठे, कबहु कमल हिये लगावे, कबहुं दूर डार देय, कबहुं श्रृंगारका काव्य पढ़े, कबहु आकाशकी ओर देखे, कबहु हाथसे हाथ मसले, कबहुं पगसे पृथ्वी हणे। निश्वास रूप अग्निकर अधर श्याम होय गए। कबहु कह २ शब्द करै, कबहु अपने केश बखेरै, कबहु बांधे, कबहु जंभाई लेय, कबहु मुखपर अंचल डारे, कबहु वस्त्र सर्व पहिर लेय, सीताके चित्राम बनावे, कबहु अश्रुपात कर आर्द्रा कर, दीनभया हाहाकार शब्द करे, मदन ग्रहकर पीडित अनेक चेष्टाकर आशा रूप ईंधन कर प्रज्वलित जो कामरूप अग्नि उसकर उसका हृदय जरे और शरीर जले। कभी मनमें चितवे

कि मैं कौन अवस्थाकू प्राप्त भया जिसकर अपना शरीर भी नहीं धार सकू हूं। मैं अनेक गढ़ और सागरके मध्य तिष्ठे बड़े बड़े विद्याधर युद्धविषै हजारां जीते, और लोकविषै प्रसिद्ध जो इन्द्र नामा विद्याधर सो बंदीगृह विषै डारा, अनेक युद्धविषै जीते राजाओंके समूह। अब मोहकर उन्मत्त भया मैं प्रमादके वश प्रवर्ता हूं। गौतम स्वामी राजा श्रेणिकसे कहै हैं–हे राजन्! रावण तो कामके वश भया और विभीषण महाबुद्धिमान मंत्रविषै निपुण ने सबमंत्रियोंको इकट्ठाकर मंत्र विचारया। कैसा है विभीषण? रावणके राज्यका भार जिसके शिरपर पडया है, समस्त शास्त्रोंके ज्ञानरूप जलकर धोया है मन रूप मैल जिसनें, रावणके उस समान और हितू नहीं। विभीषणको सर्वथा रावणके हित हीका चितवन है। सो मंत्रियों से कहता भया अहो वृद्ध हो! राजाकी तो यह दशा, अब अपने ताईं क्या कर्त्तव्य? सो कहो। तब विभीषणके वचन सुन संभिन्नमति मंत्री कहता भया–हम क्या कहें? सर्वकार्य बिगड़ा। रावणकी दाहिनो भुजा खरदूषण था सो मुवा। और विराधित क्या पदार्थ? सो स्यालसे सिंह भया, लक्ष्मणके युद्धविषै सहाई भया और वानरवंशी जोरसै बस रहे हैं। इनका आकार तो कुछ औरही और इनके चित्तमें कछु और ही। जैसैं सर्प ऊपर तो नरम, मांहीं विष। और पवन का पुत्र जो हनुमान सो खरदूषणकी पुत्री अनंगकुसमाका पति सो सुग्रीवकी पुत्री परणा है। सुग्रीव की पक्ष विशेष है। यह वचन संभिन्नमतिके सुन पंचमुख मंत्री मुसकाय बोल्या–तुम खरदूषणके मरण कर सोच किया। सो शूरवीरनिकी यही रीति है संग्रामविषै शरीर तजैं। अर एक खरदूषणके मरण कर रावणका क्या घट गया? जैसैं पवनके योगसे समुद्रसे एक जलकी कणिका गई तो समुद्रका क्या न्यून भया? और तुम औरोंकी प्रशंसा करो हो सो मेरे चित्तमें लज्जा उपजै है। कहां रावण जगत का स्वामी और कहां वे बनवासी भूमिगोचरी? लक्ष्मणके साथ सूर्यहास खड्ग आया तो क्या और विराधित आय मिला तो क्या? जैसैं पहाड़ विषम है और सिंहकर संयुक्त है तो भी क्या दावानल न दहै? सर्वथा दहै। तब सहस्रमति मंत्री माथा हलाय कहता भया–कहां ये अर्थहीन बातैं कहो हो? ५३३

जिसमें स्वामीका हित हो सो करना। दूसरा स्वल्प है और हम बड़े हैं—यह विचार बुद्धिमानका नाहीं। समय पाय एक अग्निका किणका सकलमंडलको दहै। अर अश्वग्रीवके महासेना थी और सर्व पृथ्वी विषैं प्रसिद्ध हुवा था सो छोटे से त्रिपृष्ठने रणमें मार लिया। इसलिए और यत्न तज लंकाकी रक्षा का यत्न करो। नगरी परम दुर्गम करो, कोई प्रवेश न कर सकै, महाभयानक मायामई यंत्र सर्व दिशामें विस्तारो, और नगरमें परचक्रका मनुष्य न आवने पावै। अर लोकको धीर बंधाओ अर सर्व उपायकर रक्षा करो जिसकर रावण सुखकूं प्राप्त होय, और मधुर वचनकर नाना वस्तुओंको भेट कर सीताकूं प्रसन्न करो। जैसैं दुग्ध पायवेसैं नागनी प्रसन्न करिए। और वानर बंशी योधाओंकी नगरके बाहिर चौकी राखो। ऐसे किए कोऊ परचक्रका धनी न आय सकै और यहांकी बात परचक्र में न जाय। या भांति गढ़का यत्न कीये, तब कौन जाने सीता कौनने हरी और कहां है? सीता बिना राम निश्चय सेती प्राण तजेगा। जिसकी स्त्री जाय सो कैसे जीवै? अर राम मूवा तब अकेला लक्ष्मण क्या करेगा? अथवा रामके शोककर लक्ष्मण अवश्य मरै, न जीवै, जैसैं दीपकके गए प्रकाश न रहै। अर यह दोनों भाई मूए तब अपराधरूप समुद्रमें डूबा जो विराधित सो क्या करेगा? और सुग्रीवका रूपकर विद्याधर उसके घरमें आया सो रावण टार सुग्रीवका दुख कौन हरै? मायामई यंत्रको रखवारी सुग्रीवको सौंपी जिससे वह प्रसन्न होय। रावण इसके शत्रुका नाश करै। लंकाकी रक्षाका उपाय मायामई यंत्र कर करना। यह मंत्रकर हर्षित होय सब अपने अपने घर गए। विभीषिणने मायामई यंत्रकर लंकाका यत्न किया। अर अधः ऊर्ध तिर्यकसे कोऊ न आय सकै, नानाप्रकारकी विद्याकरि लंका अगम्य करी गौतम गणधर कहै हैं—हे श्रेणिक! संसारी जीव सर्व ही लौकिककार्यमें प्रवृत्ते हैं व्याकुलचित्त हैं, अर जे व्याकुलतारहित निर्मलचित्त हैं तिनकूं जिनवचनके अभ्यास टाल और कर्तव्य नाहीं। अर जो जिनेश्वरने भाषा है सो पुरुषार्थ बिना सिद्ध नाहीं। अर भले भवितव्यके बिना पुरुषार्थकी सिद्धि नाहीं। इसलिए जे भव्यजीव हैं वे सर्वथा संसारमें विरक्त होय मोक्षका यत्नकरो। नर

नारक देव तिर्यंच ये चार ही गति दुःखरूप हैं। अनादिकालसे ये प्राणी कर्मके उदयकर युक्त रागादि में प्रवर्त्ते हैं इसलिए इनके चित्तमें कल्यानरूप वचन न आवै। अशुभका उदय मेट शुभकी प्रवृत्ति करैं तब शोकरूप अग्निकर तप्तायमान न होय।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रंथ, ताकी भाषावचनिकाविषैं लंकाके मायामई कोटका वर्णन करनेवाला छियालीसवां पर्व पूर्ण भया ॥ ४६ ॥

अथानन्तर किहकंधापुरका स्वामी जो सुग्रीव, सो उसका रूप बनाय विद्याधर इसके पुरमें आया। और सुग्रीव कांताके विरहकर दुखी भ्रमता संता वहां आया जहां खरदूषणकी सेनाके सामंत मुए पड़े थे। बिखरे रथ, मूए हाथी, मूए घोड़े, छिन्न भिन्न होय रहे हैं शरीर जिनके, कईएक राजावों का दाह होय है, कईएक सुसके हैं, कईएकनिकी भुजा कटगई है, कईएकनिकी जंघा कटगई है, कईयोंकी आंत गिरपडी है, कईओंके मस्तक पड़े हैं। कईयोंको स्याल भखैं हैं, कईयोंको पक्षी चूथे हैं, कईयोंके परिवार रोवैं हैं, कईयकोंको टांगि राखे हैं। यह रणखेत का वृत्तांत देख सुग्रीव किसीकूं पूछता भया। तब उसने कही खरदूषण मारा गया। तब सुग्रीवने खरदूषणका मरण सुन अति दुःख किया। मनमें चिंतवे है बड़ा अनर्थ भया। वह महाबलवान था जिससे मेरा सर्वदुःख निवृत्त होता सो कालरूप दिग्गजने मेरा आशारूप वृक्ष तोडा। मैं हीन पुण्य, अब मेरा दुःख कैसे शांत होय? यद्यपि बिन उद्यम जीवकूं सुख नाहीं तातैं दुःख दूर करवेका उद्यम अंगीकार करूं। तब हनुमानपै गया। हनुमान दोनों
का समानरूप देख पीछे गया। तब सुग्रीवने विचारी कौन उपायकरूं जिससे चित्तकी प्रसन्नता होय, जैसे नवां चांद निरखे हर्ष होय। जो रावणके शरणे जाऊं तो रावण मेरा और शत्रुका एकरूप जान शायद मुझे ही मारे, अथवा दोनोंको मार स्त्री हर लेय। वह कामांध है। कामांधका विश्वास नाहीं। मंत्र, दोष, अपमान, दान–पुण्य, वित्त, शूरवीरता, कुशील, मनका दाह, यह सब कुमित्रकूं न कहिए, जो कहे

खता पावै। तातै संग्राममें खरदूषणकूं मारचा ताहीके शरणे जाऊं, यह मेरा दुःख हरे। और जिसपै दुःख पडा होय सो दुखीके दुःखको जानै। जिनकी तुल्य अवस्था होय तिनही विषै स्नेह होय। सीताके वियोगका सीतापतिहीको दुःख उपजा है। ऐसा विचारकर विराधितके निकट अति प्रीतिकर दूत पठाया। सो दूत जाय सुग्रीवके आगमका वृत्तांत विराधितसूं कहता भया। सो विराधित सुनकर मनमें हर्षित भया। विचारी बड़ा आश्चर्य है सुग्रीव जैसे महाराज मुझसूं प्रीति करवेकी इच्छा करें। सो बड़ोंके आश्रयसे क्या न होय? मैं श्रीराम लक्ष्मणका आश्रय किया। इसलिए सुग्रीवसे पुरुष मोसे दृष्ट किया चाहै है, सुग्रीव आया। मेघकी गाज समान वादित्रनिके शब्द होते आए। सो पाताललंकाके लोग सुनकर व्याकुल भए। तब लक्ष्मणने विराधितसूं पूछा—वादित्रनिका शब्द कौनका सुनिए है? तब अनुराधाका पुत्र विराधित कहता भया—हे नाथ! यह बानरवंशियोंका अधिपति प्रेमका भरा तिहारे निकट आया है। किहकंधापुरके राजा सूर्यरजके पुत्र पृथ्वी पर प्रसिद्ध, बड़ा बाली, छोटा सुग्रीव। सो बालीने तो रावणकूं सिर न नवाया, सुग्रीवकूं राज्य देय वैरागी भया। सब परिग्रह तज सुग्रीव निहकंटक राज्य करै। ताके सुतारा स्त्री। जैसे शची संयुक्त इन्द्र रमै तैसे सुग्रीव सुतारा सहित रमै। जिनके अंगद नामा पुत्र गुण रत्नों कर शोभायमान, जिसकी पृथ्वी पर कीर्ति फैलरही है। यह बात विराधित कहै है। अर सुग्रीव आया ही, राम और सुग्रीव मिले। रामकूं देख फूलगया है मुखकमल जाका, सुवर्णके आंगन में बैठे, अमृत समान वाणी कर योग्य संभाषण करते भए। सुग्रीवके संग जे वृद्ध विद्याधर हैं वे रामसूं कहते भए—हे देव! यह राजा सुग्रीव किहकंधापुरका पति, महाबली, गुणवान् पुरुषनिकूं प्रिय सो कोई एक दुष्ट विद्याधर माया कर इनका रूप बनाय इनकी स्त्री सुतारा और राज्य लेयवेका उद्यमी भया है। ये बचन सुन राम मनमें चितवते भए—यह कोई मुझसे अधिक दुखिया है, इसके बैठे ही दूजा पुरुष इसके घरमें आय धसा है। इसके राज्य विभव है, परन्तु कोई शत्रुको निवारिवे समर्थ नाहीं। लक्ष्मणने समस्त कारण सुग्रीवके मन्त्री जामवंतको पूछ्या। जामवंत सुग्रीवके मन तुल्य है। तब वह मुख्य मंत्री महा

विनय संयुक्त कहता भया—हे नाथ! कामकी फांसी कर बेढ्या वह पापी सुताराके रूपपर मोहित भया। मायामई सुग्रीवका रूप बनाय राजमंदिर आया, सो सुताराके महिल में गया। सुतारा महा सती अपने सेवकनिसूं कहती भई—यह कोई दुष्ट विद्याधर विद्यासे मेरे पतिका रूप बनाय आवै है, पाप कर पूर्ण, सो इसका आदर सत्कार कोई मत करो। वह पापी शंकारहित जायकर सुग्रीवके सिंहासनपर बैठ्या और ताही समय सुग्रीव भी आया। अर अपने लोकनिकूं चितावान देख तब विचारी मेरे घरमें काहेका विषाद है? लोक मलिन वदन, ठौर ठौर भेले होय रहे हैं। कदाचित् अंगद मेरुके चैत्यालयों की वन्दनाके अर्थ सुमेरु गया न आया होय, अथवा रानीने काहू पर रोष किया होय, अथवा जन्म जरा मरण कर भयभीत विभीषण वैराग्यकूं प्राप्त भया होय, उसका सोच होय। ऐसा विचारकर द्वारे आया। रत्नमई द्वार गीत गान रहित देख्या लोक संचित देखे। मनमें विचारी यह मनुष्य और ही होगये। मन्दिरके भीतर स्त्री जनोंके मध्य अपनासा रूप किए दुष्ट विद्याधर बैठ्या देखा। दिव्य हार पहिरे, सुन्दर वस्त्र, मुकुटकी कांतिमें प्रकाशरूप। तब सुग्रीव क्रोधकर गाजा जैसे वर्षा कालका मेघ गाजै, और नेत्रनिकी आरक्ततासूं दशोंदिशा आरक्त होय गई जैसै सांझफूलै। तब वह पापी कृत्रिम सुग्रीव भी गाजा। जैसे माता हाथी मदकर विह्वल होय तैसा काम कर विह्वल सुग्रीवसूं लडवेकूं उठ्या। दोऊ होंठ डसते भृकुटी चढ़ाय युद्धकूं उद्यमी भए। तब श्रीरामचन्द्रादि मन्त्रियोंने मनैकिए और सुतारा पटराणी प्रकट कहती भई—यह कोई दुष्ट विद्याधर मेरे पतिका रूप बनाय आया है, देह और बल और वचनोंकी कांति से तुल्य भया है, परन्तु मेरे भरतारमें महापुरुषोंके लक्षण हैं, सो इसमें नाहीं।
जैसै तुरंग और खरकी तुल्यता नाहीं तैसैं मेरे पतिकी और इसकी तुल्यता नाहीं। या भांति राणी सुताराके वचन सुनकर भी कईएक मंत्रीने न मानी, जैसे निर्धनका वचन धनवान न माने। सादृश्य-रूप देखकर हरागया है चित्त जिनका। सो सब मन्त्रियोंने भेले होय मन्त्रकिया—पंडितनिकूं इतनोंके वचनोंका विश्वास न करना—बालक, अतिवृद्ध, स्त्री, मद्यपायी, वेश्यासक्त इनके वचन प्रमाण नाहीं।

श्रौर स्त्रीनिकूं शीलकी शुद्धि राखनी। शीलकी शुद्धि बिना गोत्रकी शुद्धि नाहीं। स्त्रियोंको शील ही प्रयोजन है इसलिए राजलोकमें दोनों ही न जाने पावैं, बाहिर रहैं। तब इनका पुत्र अंगद तो माता के बचनसे इनकी पक्ष आया और जांबूनद कहै हैं—हम भी इन्हींके संग रहैं। अर इनका पुत्र, सो शत्रुमई। सुग्रीवकी पक्ष अंगद है और सात अक्षोहणी दल इनके हैं और सात उसपै हैं। नगरकी दक्षिणके ओर वह राखा, उत्तरकी ओर यह राखे। अर बालीकापुत्र चंद्ररश्मि उसने यह प्रतिज्ञाकरी जो सुताराके महिल आवैगा उसे खड्ग कर मारूंगा। तब यह सांचा सुग्रीव स्त्रीके विरह कर व्याकुल शोकके निवारवे निमित्त खरदूषण पै गया। सो खरदूषण तो लक्ष्मणके खड्गकर हता गया। फिर यह हनुमानपै गया, जाय प्रार्थना करी, मैं दुःख कर पीड़ित हूं मेरी सहाय करो। मेरा रूपकर कोई पापी मेरे घरमें बैठ्या है, सो मोहि महा बाधा है, जायकर उसे मारो। तब सुग्रीवके वचन सुन हनुमान बडवानल समान क्रोधकर प्रज्वलित होय अपने मंत्रियन सहित अप्रतीघात नामा विमानमें बैठ किहकंधापुर आया। सो हनुमानकूं आया सुन वह मायामई सुग्रीव हाथी चढ लडिवेकूं आया। सो हनुमान दोनोंका सादृश्य रूप देख आश्चर्यकूं प्राप्त भया। मनमें चितवता भया ये दोनों समानरूप सुग्रीव ही हैं। इनमेंसे कौनको मारूं, कछु विशेष जाना न पड़े। बिना जाने सुग्रीव ही को मारूं तो बड़ा अनर्थ होय। एक मुहूर्त अपने मंत्रिनिसूं विचारकर उदासीन होय हनुमान पीछा निजपुर गया। सो हनुमानकूं गए सुन सुग्रीव बहुत व्याकुल भया। मनमें विचारता भया—हजारां विद्या अर माया, तिनसे मंडित, महाबली महाप्रताप रूप वायु-पुत्र, सो भी सन्देहकूं प्राप्त भया सो बड़ा कष्ट। अब कौन सहाय करै? अतिव्याकुल होय, दुःख निवारवे अर्थ, स्त्रीके वियोगरूप दावानलकर तप्तायमान, आपके शरण आया है। आप शरणागत प्रतिपालक हैं। यह सुग्रीव अनेक गुणनिकर शोभित है। हे रघुनाथ! प्रसन्न होहु, याहि अपना करहु। तुमसारिखे पुरुषनिका शरीर परदुःखका नाशक है। ऐसे जांबूनदके वचन सुन राम, लक्ष्मण और विराधित कहते भए—धिक्कार होवे परदारा-रत पापी जीवनिकूं। रामने विचारी—मेरा और इसका

दुःखसमान है। सो यह मेरा मित्र होयगा। मैं इसका उपकार करूं अर यह पाछा मेरा उपकार करेगा। नहीं तो मैं निर्ग्रंथ मुनि होय मोक्षका साधन करूंगा। ऐसा बिचारकर राम सुग्रीवसूं कहते भए, हे सुग्रीव! मैं सर्वथा तुझे मित्र किया, जो तेरा स्वरूप बनाय आया है उसे जीत तेरा राज्य तुझे निह-कंटक कराय दूंगा, और तेरी स्त्री तोहि मिलाय दूंगा। अर तेरा काम होय पीछे तू सीता की सुध हमें आन देना कि कहां है। तब सुग्रीव कहता भया-हे प्रभो! मेरा कार्य भए पीछे जो सात दिनमें सीताकी सुध न लाऊं तो अग्निमें प्रवेश करूं यह बात सुन राम प्रसन्न भए, जैसे चन्द्रमाकी किरण करि कुमुद प्रफुल्लित होय। रामका मुखरूप कमल फूलगया। सुग्रीवके अमृतरूप वचन सुनिकर रोमांच खड़े होय आए। जिनराजके चैत्यालयमें दोनों धर्ममित्र भए। यह वचन किया परस्पर कोई द्रोह न करे। बहुरि राम लक्ष्मण रथ चढ़ अनेक सामन्तनि सहित सुग्रीवके साथ किहकंधापुर आए। नगरके समीप डेराकर सुग्रीवने मायामयी सुग्रीवपै दूत भेज्या। सो दूतकूं ताने खेद दिया, अर मायामई सुग्रीव रथमें बैठ बड़ी सेना सहित युद्धके निमित्त निकस्या। सो दोऊ सुग्रीव परस्पर लड़े। मायामई सुग्रीव और सांचे सुग्रीवके नानाप्रकारका युद्ध भया, अंधकार होय गया, दोऊ ही खेदकूं प्राप्तभए। घनी बेरमें मायामई सुग्रीवने सांचे सुग्रीवके गदाकी दीनी सो गिरपड्या। तब वह मायामई सुग्रीव इसकूं मूवा जान हर्षित होय नगरमें गया। अर सांचा सुग्रीव मूर्छित होय पर्या सो परिवारके लोक डेरामें लाये। तब सचेत होय रामसूं कहता भया, हे प्रभो! मेरा चोर हाथमें आया हुता सो नगरमें क्यों जाने दिया? जो रामचन्द्रकूं पायकर मेरा दुःख नाहीं मिटै तो या समान दुःख कहा? तब राम कही तेरा और उसका रूप देखकर हम भेद न जान्या। तातैं तेरा शत्रु न हन्या। कदाचित् विना जानें तेरा ही अगर नाश होय तो योग्य नाहीं। तू हमारा परम मित्र है। तेरे और हमारे जिनमन्दिरमें वचन हुवा है।

अथानन्तर रामने मायामई सुग्रीवकूं बहुरि युद्धके निमित्त बुलाया। सो वह बलवान क्रोधरूप अग्नि कर जलता आया। राम सन्मुख भए। वह समुद्रतुल्य अनेक शस्त्रोंके धारक सुभट, तेई भए

ग्राह, उनकर पूर्ण। ता समय लक्ष्मणने सांचा सुग्रीव पकड़ राख्या कि कभी स्त्रीके वैरसे शत्रुके सन्मुख न जाय। अर श्रीरामकूं देखकर मायामई सुग्रीवके शरीरमें जो वैताली विद्या हुती सो ताकूं पूछ कर ताके शरीरतैं निकसी। तब सुग्रीवका आकार मिट वह साहसगति विद्याधर इन्द्रनीलके पर्वत समान भासता भया। जैसे सांपकी कांचली दूर होय तैसे सुग्रीवका रूप दूर होगया। तब जो आधी सेना बानरवंशीनिकी यामें भेली भई थी, यातैं जुदा होय, युद्धकूं उद्यमी भई। सब बानरवंशी एक होय नानाप्रकारके आयुधनिकरि साहसगतिसूं युद्ध करते भए। सो साहसगति महा तेजस्वी, प्रबल शक्तिका स्वामी सब वानरवंशीनिकूं दशोंदिशाकूं भजाये, जैसैं पवन धूलकूं उडावै। बहुरि साहसगति धनुष बाण लेय रामपै आया। सो मेघमंडल समान बाणनिकी वर्षा करता भया। उद्धत है पराक्रम जाका। साहसगतिके और श्रीरामके महा युद्ध भया। प्रबल है पराक्रम जिनका ऐसे राम रणक्रीड़ामें प्रवीण, क्षुद्रबाणनिकरि साहसगतिका बक्तर छेद्या और तीक्ष्ण बाणनिकरि साहसगतिका शरीर चालिनी समान कर डारचा। सो प्राणरहित होय भूमिमें परचा। सबनि निरख निश्चय किया जो यह प्राणरहित है। तब सुग्रीव राम लक्ष्मणकी महास्तुति कर इनकूं नगरमें लाया, नगरकी शोभा करी, सुग्रीवको सुताराका संयोग भया सो भोगसागरमें मग्न होय गया। रात दिनकी सुध नाहीं, सुतारा बहुत दिननिमें देखी सो मोहित होय गया। अर नन्दनवनकी शोभाकूं उलंघे है ऐसा आनन्दनामा वन वहां श्रीरामकूं राखे। ता वनकी रमणीकताका वर्णन कौन कर सकै? जहां महा मनोग्य श्रीचन्द्रप्रभका चैत्यालय, वहाँ राम लक्ष्मण पूजा करी। अर विराधितकूं आदिदे सर्व कटक का डेरा वनमें गया, खेदरहित तिष्ठै। सुग्रीवकी तेरह पुत्री रामचन्द्रके गुण श्रवण करे? अति अनुराग भरी वरिवेकी बुद्धि करती भई। चन्द्रमा समान मुख जिनका तिनके नाम सुनो—चन्द्राभा, हृदयावली हृदयधर्म्मा, अनुधरी, श्रीकांता, सुन्दरी, सुरवती, देवांगना समान है विभ्रम जाका, मनोवाहिनी मनमें बसनहारी, चारुश्री, मदनोत्सवा, गुणवती अनेक गुणनिकरि शोभित, अर पद्मावती

फूले कमल समान है मुख जाका, तथा जिनपती सदा जिनपूजामें तत्पर। ये त्रयोदश कन्या लेकर सुग्रीव राम पै आया। नमस्कारकर कहता भया–हे नाथ! ये इच्छाकरि आपकू वरै हैं, हे लोकेश! इन कन्यानिके पति होवो। इनका चित्त जन्महीतैं यह भया जो हम विद्याधरनिकू न वरें। आपके गुण श्रवणकर अनुरागरूप भई हैं। यह कहकर रामको परणाई। ये कन्या अति लज्जाकी भरी नम्रीभूत हैं मुख जिनके, रामका आश्रय करती भई। महासुन्दर नवयौवन, जिनके गुण वर्णनमें न आवैं, विजुरी समान, सुवर्णसमान, कमल के गर्भ समान शरीरकी कांति जिनकी, ताकर आकाशविषै उद्योत भया। वे विनयरूप लावण्यताकर मंडित रामके समीप तिष्ठीं। सुन्दर है चेष्टा जिनकी। यह कथा गौतम स्वामी राजा श्रेणिकसू कहै हैं–हे मगधाधिपति पुरुषनिमें सूर्यसमान श्रीराम सारिखे पुरुष तिनका चित्त विषयवासनातैं विरक्त है, परन्तु पूर्व जन्मके सम्बन्धसू कईएक दिन विरक्तरूप गृहमें रह बहुरि त्याग करेंगे।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रंथ, ताकी भाषावचनिकाविषै सुग्रीवका व्याख्यान वर्णन करनेवाला सैंतालीसवां पर्व पूर्ण भया ॥ ४७ ॥

अथानन्तर ते सुग्रीवकी कन्या रामके मनमोहिवेके अर्थ अनेक प्रकारकी चेष्टा करती भई, मानों देवलोकहीतैं उतरी हैं। वीणादिकका बजावना, मनोहर गीतका गावना इत्यादि अनेक सुन्दर लीला करती भई तथापि रामचन्द्रका मन न मोहा। सर्व प्रकारके विस्तीर्ण विभव प्राप्त भए परन्तु रामने भोगनिविषै मन न किया। सीताविषै अत्यन्त दत्तचित्त, समस्त चेष्टारहित, महाआदरकरि सीताकू ध्यावते तिष्ठे, जैसे मुनिराज मुक्तिको ध्यावैं। वे विद्याधरकी पुत्री गान करैं, सो उनकी ध्वनि न सुनैं, अर देवांगना समान तिनका रूप सो न देखें। रामकू सर्व दिशा जानकी मई भासैं, अर कछू भासै नाहीं। और कथा न करैं। ए सुग्रीवकी पुत्री परणी, सो पास बैठीं। तिनकू हे जनकसुते! ऐसा कह बतलावैं।

काकसे प्रीतिकर पूछे—अरे काक! तू देश २ भ्रमण करै है तैंने जानकी हू देखी? अर सरोवरविषै कमल फूल रहे हैं, तिनकी मकरन्द कर जल सुगन्ध होय रहा है, तहां चकवा चकवीके युगल कलोल करते देख चितारें। सीता विन रामकूं सर्व शोभा फीकी लागै। सीताके शरीरके संयोगकी शंकाकरि पवनसूं आलिंगन कर, कदाचित् पवन सीताजीके निकटतैं आई होय, जा भूमिमें सीताजी तिष्ठे है ता भूमिकूं धन्य गिनै। अर सीता बिना चन्द्रमाकी चांदनीकूं अग्नि समान जाने। मनमें चितवैं कदाचित् सीता मेरे वियोगरूप अग्निकर भस्म भई होय। अर मंद मंद पवनकर लतानिकूं हालती देख जानैं हैं यह जानकी ही है। अर वेलपत्र हालते देख जानैं जानकीके वस्त्र फरहरै हैं। अर भ्रमरसंयुक्त फूल देख जानै ये जानकीके लोचन ही हैं। अर कोंपल देख जानै ये जानकीके करपल्लव ही हैं। अर श्वेत श्याम आरक्त तीनों जातिके कमल देख जानें सीताके नेत्र तीनरंगकूं धरै हैं। अर पुष्पनिके गुच्छे देख जानैं जानकीके शोभायमान स्तन ही हैं। अर कदलीके स्तंभविषै जंघानिकी शोभा जानैं, अर लाल कमलनिविषै चरणनिकी शोभा जानैं, सम्पूर्ण शोभा जानकीरूप ही जानै।

अथानन्तर सुग्रीव सुताराके महिलविषै ही रहा, रामपै आए बहुत दिन भए। तब रामने विचारी, ताने सीता न देखी। मेरे वियोगकर तप्तायमान भई वह शीलवंती मर गई। तातैं सुग्रीव मेरे पास नाहीं आवै? अथवा वह अपना राज्य पाय निश्चित भया, हमारा दुःख भूल गया। यह चितवनकरि रामकी आंखनितैं आंसू पड़े। तब लक्ष्मण रामकूं सचित देख कोपकर लाल भए हैं नेत्र जाके, आकुलित है मन जाका, नांगी तलवार हाथमें लेय सुग्रीव ऊपर चाल्या सो नगर कम्पायमान भया। सम्पूर्ण राज्यका अधिकारी तिनकूं उलंघ सुग्रीवके महलमें जाय ताकूं कहा रे पापी! अपने परमेश्वर राम तो स्त्रीके दुखकर दुखी अर तू दुर्बुद्धि स्त्रीसहित सुखसों राज्य करै? रे विद्याधरवायस विषयलुब्ध दुष्ट! जहां रघुनाथने तेरा शत्रु पठाया है तहां मैं तोहि पठाऊंगा। या भांति अनेक क्रोधके उग्रवचन लक्ष्मण कहे तब वह हाथ जोड़ नमस्कारकर लक्ष्मणका क्रोध शांत करता भया। सुग्रीव कहै है—हे देव! मेरी भूल

पद्म पुराण ५४३

माफ करहु, मैं करार भूल गया। हम सारिखे क्षुद्र मनुष्यनिके खोटी चेष्टा होय है। अर सुग्रीवकी सम्पूर्ण स्त्री कांपती हुई लक्ष्मणकूं अर्घदेय आरती करती भई। हाथ जोड नमस्कारकर पतिकी भिक्षा मांगती भई। तब आप उत्तमपुरुष तिनकूं दीन जान कृपा करते भए। यह महन्तपुरुष प्रणाम मात्र ही करि प्रसन्न होय, अर दुर्जन महादान लेकर हू प्रसन्न न होय। लक्ष्मणने सुग्रीवकूं प्रतिज्ञा चिताय उपकार किया, जैसें यक्षदत्तकूं माताका स्मरण कराय मुनि उपकार करते भए।

यह वार्ता सुन राजा श्रेणिक गौतम स्वामीसूं पूछे है–हे नाथ! यक्षदत्तका वृत्तांत मैं नीका जानना चाहूं हूं। तब गौतम स्वामी कहते भए–हे श्रेणिक! एक कौंचपुर नगर, तहां राजा यक्ष, राणी राजिलता, ताके पुत्र यक्षदत्त, सो एक दिन एक स्त्रीकूं नगरके बाहर कुटीमें तिष्ठती देख कामबाण कर पीड़ित भया। ताकी ओर चाल्या रात्रिविषै, तब ऐननामा मुनि याकूं मना करते भए। यह यक्षदत्त, खड्ग है जाके हाथमें सो विजुरीके उद्योतकरि मुनिकूं देखकर तिनके निकट जाय विनय संयुक्त पूछता भया–हे भगवन्! काहेको मोहि मने किया? तब मुनि कहा–जाको देख तू कामवश भया है सो स्त्री तेरी माता है। तातैं यद्यपि सूत्रमें रात्रिको बोलना उचित नाहीं तथापि करुणाकर अशुभ कार्यतैं मनै किया। तब यक्षदत्तने पूछा हे स्वामी! मेरी माता कैसे है? तब मुनि कही सुन–एक मृत्यकावती नगरी, तहां कणिक नामा वणिक, ताके धू नामा स्त्री, ताके बन्धुदत्त नामा पुत्र, ताकी स्त्री मित्रवती, लतादत्तकी पुत्री, सो स्त्रीकूं छाने गर्भ, राखि बंधुदत्त जहाज बैठि देशांतर गया। ताकूं गए पीछे याकी स्त्रीके गर्भ जान सासू सुसरने दुराचारणी जान घरसे निकाल दई। सो उत्पलका दासीको लार लेय बड़े सारथीकी लार पिताके घर चाली। सो उत्पलकाको सर्पने डसी, वनमें मुई। अर यह मित्रवती शीलमात्र ही है सहाय जाके सो कौंचपुरविषै आई। अर महाशोककी भरी–ताके उपवन विषै पुत्रका जन्म भया। तब यह तो सरोवरविषै वस्त्र धोयवे गई अर पुत्ररत्न कंबलमें बेढा सो कंबल संयुक्त पुत्रकूं स्वान लेय गया। सो काहूने छुडाया, राजा यक्षकूं दिया, ताके राणी राजिलता अपुत्र-

वती, सो राजाने पुत्र राणीको सौंप्या। ताका यक्षदत्त नाम धरया सो तू। अर यह तेरी माता वस्त्र धोय आई, सो ताहि न देखि विलाप करती भई। एक देवपुजारीने ताहि दया कर धैर्य बंधाया। तू मेरी बहिन है ऐसा कह राखी। सो यह मित्रवती सहायरहित लज्जाकर अकीर्तिके भय थकी बापके घर न गई। अत्यन्त शीलकी भरी जिनधर्मविषैं तत्पर, दरिद्रीकी कुटीविषै रहै। सो तैं भ्रमण करता देख कुभाव किया। अर ताका पति बंधुदत्त रत्नकंबल दे गया हुता, ताविषै ताहि लपेट सो सरोवर गई हुती, सो रत्नकंबल राजाके घरमें है अर वस बालक तू है। या भांति मुनि कही तब यह नमस्कार कर खड्ग हाथमें लेय राजा यक्षपै गया। अर कहता भया या खड्ग कर तेरा सिर काटूंगा। नातर मेरे जन्मका वृत्तांत कहो। तब राजा यक्ष यथावत् वृत्तांत कहा। अर वह रत्नकम्बल दिखाया, सो लेय कर यक्षदत्त अपनी माता कुटीमें तिष्ठे थी तासूं मिला। अर अपना बंधुदत्त पिता ताकूं बुलाया, महाउत्सव अर महा विभवकर मंडित माता पितासूं मिला, यह यक्षदत्तकी कथा गौतमस्वामी राजा श्रेणिकसूं कही–जैसे यक्षदत्तको मुनिने माताका वृत्तांत जनाया तैसैं लक्ष्मणने सुग्रीवको प्रतिज्ञा विस्मरण होय गया हुता सो जनाया। सुग्रीव लक्ष्मणके संग शीघ्र ही रामचन्द्रपै आया, नमस्कार किया, अर अपने सब विद्याधर सेवक महाकुलके उपजे बुलाए। वे या वृत्तांतको जानते हुते, अर स्वामी कार्य विषैं तत्पर, तिनकूं समझायकर कहा सो सर्व ही सुनो, रामने मेरा बड़ा उपकार किया। अब सीताके खबर इनकूं लाय दो। तातैं तुम दिशानिकूं जाओ। अर सीता कहां है यह खबर लावो, समस्त पृथ्वी-पर जल स्थल आकाशविषैं हेरो। जम्बूद्वीप, लवण समुद्र, धातकीखण्ड, कुलाचल, वन, सुमेरु, नाना-प्रकारके विद्याधरनिके नगर समस्त अस्थानक, सर्वदिशा ढूंढो।

अथानन्तर ये सब विद्याधर सुग्रीवकी आज्ञा सिर पर धारकर हर्षित भए, सब ही दिशानिकूं शीघ्र ही दौड़े। सब ही विचारे–हम पहिली सुध लावें तासों राजा अति प्रसन्न होय। अर भामण्डलकूं हू खबर पठाई जो सीता हरी गई ताकी सुध लेवो। तब भामण्डल बहिनके दुःखकर अतिही दुःखी भया।

हेरनेका उद्यम किया। अर सुग्रीव आपभी ढूंढनेकूं निकसा। सो ज्योतिषचक्रके ऊपर होय विमानमें बैठ्या देखता भया। दुष्ट विद्याधरनिके नगर सर्व देखे, सो समुद्रके मध्य जम्बूद्वीप देखा। वहां महेन्द्र पर्वतपर आकाशसे सुग्रीव उतरा। तहां रत्नजटी तिष्ठे था सो डरा, जैसे गरुडते सर्प डरै। बहुरि विमान नजीक आया तब रत्नजटी जाना कि यह सुग्रीव है, लंकापतिने क्रोधकर मोपर भेजा सो मोहि मारेगा। हाय मैं समुद्रमें क्यों न डूब मूया ?? अन्तर द्वीपविषै मारा जाऊंगा। विद्या तो रावण मेरी हर लेय गया अब प्राण हरने याहि पठाया। मेरी वांछा हुती जैसे तैसे भामण्डल पर पहुंचूं तो सर्व कार्य होय, सो न पहुंच सक्या। यह चितवन करै है इतनेमें ही सुग्रीव आया, मानो दूसरा सूर्य ही है, द्वीपका उद्योत करता आया। सो याको बनकी रजकर धूसरा देख दया कर पूछता भया, हे रत्नजटी! पहिले तू विद्या कर संयुक्त हुता। अब हे भाई! तेरी कहा अवस्था भई ? या भांति सुग्रीव दया कर पूछा सो रत्न-जटी अत्यन्त कम्पायमान कछु कह न सकै। तब सुग्रीव कही—भय मत कर, अपना वृत्तांत कह। बार-बार धैर्य बन्धाया। तब रत्नजटी नमस्कार कर कहता भया—रावण दुष्ट सीताकूं हरण कर ले जाता हुता, सो ताके अर मेरे परस्पर विरोध भया। मेरी विद्या छेद डारी। अब विद्यारहित जीवित विषै सन्देह चिन्तावान तिष्ठे था सो हे कपिवंशके तिलक! मेरे भागतैं तुम आए। ये वचन रत्नजटीके सुन सुग्रीव हर्षित होय ताहि संग लेय अपने नगरमें श्रीराम पै लाया। सो रत्नजटी रामलक्ष्मणसों सब के समीप हाथ जोड़ नमस्कार कर कहता भया। हे देव! सीता महासती है, ताकूं दुष्ट निर्दई लंकापति रावण हर ले गया। सो रुदन करती विलाप करती विमानमें बैठी मृगी समान व्याकुल मैं देखी। वह
बलवान बलात्कार लिए जाता हुता। सो मैंने क्रोधकर कहा—यह महासती मेरे स्वामी भामण्डलकी बहिन है, तू छोड दे। सो वाने कोपकर मेरी विद्या छेदी। वह महा प्रबल, जाने युद्धमें इन्द्रकूं जीता पकड़ लिया अर कैलाश उठाया, तीन खण्डका स्वामी, सागरांत पृथ्वी जाकी दासी, जो देवनिहूं करि न जीती जाय सो ताहि मैं कैसे जीतूं ? ताने मोहि विद्यारहित किया। यह सकल वृत्तांत राम देवने

सुनकर ताकूं उरसे लगाया अर बारम्बार ताहि पूछते भए। बहुरि राम पूछते भए–हे विद्याधरो! कहो लंका कितनी दूर है? तब वे विद्याधर निश्चल होय रहे, नीचा मुख किया, मुख की छाया और ही होयगई, कछु जुवाब न दिया। तब रामने उनका अभिप्राय जाना–जो यह हृदयविषै रावणतैं भय रूप हैं। मन्ददृष्टिकर तिनकी ओर निहारे। तब वे जानते भए हमकूं आप कायर जानो हो। लज्जा वान होय हाथ जोड सिर निवाय कहते भये–हे देव! जाके नाम सुनैं हमकूं भय उपजै है ताकी बात हम कैसैं कहें? कहां हम अल्प शक्तिके धनी अर कहां वह लंकाका ईश्वर? तातैं तुम यह हठ छोडो। अर वस्तु गई जानो। अथवा तुम सुनो हो तो हम सब वृत्तांत कहे सो नीके उरमें धारो। लवणसमुद्र विषैं राक्षसद्वीप प्रसिद्ध है, अद्भुत सम्पदाका भरा। सो सातसौ योजन चौडा है, अर प्रदक्षिणाकर किंचित् अधिक इक्कीस सौ योजन वाकी परिधि है। ताके मध्य सुमेरु तुल्य त्रिकूटाचल पर्वत है। सो नवयौवन ऊंचा, पचास योजनके विस्ताररूप, नानाप्रकारके मणि अर सुवर्ण कर मण्डित। आगैं मेघ-बाहनको राक्षसनिके इन्द्रने दिया हुता, ता त्रिकुटाचलके शिखरपर लंका नाम नगरी, शोभायमान, रत्नमई, जहां विमान समान घर, अर अनेक क्रीडा करनेके निवास, तीस योजन विस्तार लंकापुरी महाकोट खाईकर मण्डित, मानों दूजी वसुंधरा ही है। अर लंकाके चौगिरद बड़े बड़े रमणीक स्थानक हैं। अति मनोहर मणि सुवर्णमई जहां राक्षसनिके स्थानक हैं, तिनविषै रावणके बन्धुजन बसै हैं। संध्या-कार सुवेल कांचन ल्हादन पोधन हंस हर सागर घोष अर्धस्वर्ग इत्यादि मनोहर स्थानक वन उपवन आदिकरि शोभित देवलोक समान है। जिनविषैं भ्रात, पुत्र, मित्र, स्त्री, बांधव, सेवकजन सहित लंका-पति रमैं हैं। सो विद्याधरनि सहित क्रीड़ा करता देख लोकनिकूं ऐसी शंका उपजै है मानो देवनि सहित इन्द्र ही रमै है। जाका महाबली विभीषणसा भाई, औरनिकरि युद्धमें न जीता जाय, ता समान बुद्धि देवनिमें नाहीं, अर ता समान मनुष्य नाहीं। ताहिकरि रावणका राज्य पूर्ण है। अर रावणका भाई कुम्भकर्ण त्रिशूलका धारक, जाकी युद्धमें टेढी भौहैं देव भी देख सकें नाहीं तो मनुष्यनिकी कहा बात

अर रावणका पुत्र इन्द्रजीत पृथ्वीविषै प्रसिद्ध है। अर जाके बड़े २ सामन्त सेवक हैं। नानाप्रकार विद्या के धारक, शत्रुनिके जीतनहारे, अर जाका छत्र पूर्ण चन्द्रमा समान, जाहि देखकर बैरी गर्वकूं तजे हैं। तानें सदा रण संग्राममें जीतिही जीति सुभटपनेका विरद प्रकट किया है। सो रावणके छत्रकूं देख तिनका सर्व गर्व जाता रहै। अर रावणका चित्रपट देखे अथवा नाम सुने शत्रु भयकूं प्राप्त होय, जो ऐसा रावण तासों युद्ध कौन कर सकै? तातैं यह कथा ही न करना और बात करो। यह बात विद्याधरनिके मुखतैं सुनकर लक्ष्मण बोला, मानों मेघ गाजा—तुम एती प्रशंसा करो हो सो सब मिथ्या है। जो वह बलवान हुता तो अपना नाम छिपाय स्त्रीकूं चुराकर काहे लेगया? वह पाखण्डी, अतिकायर, अज्ञानी, पापी नीच, राक्षस। ताके रंच मात्र भी शूरवीरता नाहीं। अर राम कहते भए—बहुत कहने करि कहा? सीताकी सुध ही कठिन हुती। अब सुध आई तब सीता आय चुकी। अर तुम कही और बात करो और चिन्तवन करो सो हमारे और कछु बात नाहीं, और कछु चिंतवन नाहीं। सीताकूं लावना यही उपाय है। रामके वचन सुनकर वृद्ध विद्याधर क्षण एक विचारकर बोले, हे देव! शोक तजो, हमारे स्वामी होवो, अर अनेक विद्याधरनिकी पुत्री, गुणनिकरि देवांगना समान, तिनके भरतार होवो। अर समस्त दुःखकी बुद्धि छोडो। तब राम कहते भए—हमारे और स्त्रीनिका प्रयोजन नाहीं। जो शची समान स्त्री होय तो भी हमारे अभिलाषा नाहीं। जो तिहारी हममें प्रीति है तो सीता हमें शीघ्र ही दिखावो। जांबूनद कहता भया, हे प्रभो! या हठको तजो। एक क्षुद्र पुरुषने कृत्रिम मयूरका हठ किया ताकी न्याई स्त्रीका हठकर दुखी मत होवो। यह कथा सुनो—

एक वेणातटग्राम, तहां सर्वरुचि नामा गृहस्थी, ताके विनयदत्त नामा पुत्र, ताकी माता गुणपूर्णा। अर विनयदत्तका मित्र विशालभूत, सो पापी विनयदत्तकी स्त्रीसों आसक्त भया। स्त्रीके वचनकरि विनयदत्तकूं कपटकरि वनविषै लेगया, सो एक वृक्षके ऊपर बांध वह दुष्ट घर उठि आया। कोई विनयदत्तके समाचार पूछे तो ताहि कछु मिथ्या उत्तर देय सांचा होय रहै। जहां विनयदत्त

बांधा हुता तहां एक क्षुद्र नामा पुरुष आया, वृक्षके तले बैठा, वृक्ष महा सघन। विनयदत्त कुरलावता हुता, सो क्षुद्र देखे तो दृढबन्धनकर मनुष्य वृक्षकी शाखाके अग्रभाग बंधा है। तब क्षुद्र दयाकर ऊपर चढ़ा, विनयदत्ताको बंधनतैं निवृत किया। विनयदत्त द्रव्यवान, सो क्षुद्रकूं उपकारी जान अपने घर लेगया। भाईतैं हू अधिक हित राखे, विनयदत्ताके घर उत्साह भया, अर वह विशालभूत कुमित्र दूर भाग गया। क्षुद्र विनयदत्तका परम मित्र भया। सो क्षुद्रका एक रमने (खेलने) का पत्रमयी मयूर, सो पवनकर उड्या, राजपुत्रके घर जाय पड्या। सो ताने राख मेल्या, ताके निमित्त क्षुद्र महा शोककर मित्रकूं कहता भया—मोहि जीवता इच्छै है तो मेरा वही मयूर लाव। विनयदत्त कहा—मैं तोहि रत्नमई मयूर कराय दूं, अर सांचे मोर मंगाय दूं, वह पत्रमई मयूर पवनतैं उडगया सो राजपुत्रने राखा, मैं कैसे लाऊं? तब क्षुद्र कही मैं वही—लेऊं, रत्ननिके न लूं, न सांचे लूं। विनयदत्त कहे—जो चाहो सो लेहु, वह मेरे हाथ नाहीं। क्षुद्र बारम्बार वही मांगे। सो वह तो मूढ हुता, तुम पुरुषोत्तम होय ऐसे क्यों भूलो हो? वह पत्रनिका मयूर राजपुत्रके हाथ गया विनयदत्त कैसे लावै? तातैं अनेक विद्याधरनिकी पुत्री, सुवर्ण समान वर्ण जिनका, श्वेत श्याम आरक्त तीन वर्णकूं धारै हैं नेत्र कमल जिनके, सुन्दर पीवर हैं स्तन जिनके, कदली समान जंघा जिनकी, अर मुखकी कांतिकर शरदकी पूर्णमासीके चन्द्रमाकूं जीते, मनोहर गुणनिकी धरणहारी, तिनके पति होऊ। हे रघुनाथ! महाभाग्य! हमपर कृपा करहु। यह दुःखका बढावनहारा शोक संताप छोड़हु। तदि लक्ष्मण बोले—हे जाम्बूनद! तैं यह दृष्टांत यथार्थ न दिया। हम कहै हैं सो सुनहु—एक कुसुमपुर नामा नगर, तहां एक प्रभव नामा गृहस्थ, जाके यमुना नामा स्त्री, ताके धनपाल, बंधुपाल, गृहपाल, पशुपाल, क्षेत्रपाल ये पांच पुत्र। सो यह पांचों ही पुत्र यथार्थ गुणनिके धारक, धनके कमाऊ, कुटुम्बके पालिवेविषै उद्यमी। सदा लौकिक धन्धे करैं। क्षणमात्र आलस नाहीं। अर इन सबनितै छोटा आत्मश्रेय नामा कुमार सो पुण्यके योगकरि देवनि कैसे भोग भोगवै। सो याकों माता पिता अर बड़े भाई कटुक वचन कहैं। एक दिन यह

मानी नगर बाहिर भूमें था सो कोमल शरीर खेदकूं प्राप्त भया । उद्यम करवेकूं असमर्थ, सो आपका मरण बांछता हुता । ता समय याके पूर्व पुण्यकर्मके उदयकरि एक राजपुत्र याहि कहता भया—हे मनुष्य ! मैं पृथुस्थान नगरके राजाका पुत्र भानुकुमार हूं, सो देशांतर भ्रमणकूं गया हुता, सो अनेक देश देखे, पृथ्वीविषै भ्रमण करता दैवयोगतैं कर्मपुर गया, सो एक निमित्तज्ञानी पुरुषकी संगतिविषै रहा । ताने मोहि दुखी जान करुणाकर यह मंत्रमई लोहका कडा दिया अर कही—यह सब रोगका नाशक है, बुद्धिवर्द्धक है । ग्रह सर्प पिशाचादिकका वश करणहारा है, इत्यादि अनेक गुण हैं । सो तू राख, ऐसे कह मोहि दिया, अर अब मेरे राज्यका उदय आया । मैं राज्य करवेकूं अपने नगर जाऊं हूं, यह कड़ा मैं तोहि दूं हूं, तू मरे मत । जो वस्तु आपपै आई, अपना कार्य कर काहूकूं दे डारो तो यह महाफल है । सो लोकविषै ऐसे पुरुषनिकूं मनुष्य पूजै हैं । आत्मश्रेयको ऐसा कह राजकुमार अपना कड़ा देय, अपने नगर गया । अर यह कड़ा लेय अपने घर आया । ताही दिन ता नगरके राजाको राणीकूं सर्पने डसी हुती सो चेष्टा रहित होय गई । ताहि मृतक जान जरायवेकूं लाए हुते, सो आत्मश्रेयने मंगलमई लोहेके कड़ेके प्रसादकरि विषरहित करी । तब राजा अति दान देय बहुत सत्कार किया, आत्मश्रेयके कड़ेके प्रसादकरि महाभोग सामग्री भई । सब भाइनविषै यह मुख्य ठहरा । पुण्यकर्मके प्रभावकरि पृथ्वीविषै प्रसिद्ध भया । एक दिन कड़ेकूं वस्त्रविषै बांध सरोवर गया । सो गोह आय कड़ेकूं लेय, महावृक्षके तले ऊंडा बिल है ताविषैं पैठ गई । बिल शिलानिकरि आच्छादित । सो गोह बिल विषै बैठी भयानक शब्द करै । आत्मश्रेयने जाना कड़ेकूं गोह बिलविषै लेगई, गर्जना करै है । तब आत्मश्रेय वृक्ष जड़तै उखाड़, शिला दूर कर, गोहका बिल चूर कर डारा, अर बहुत धन लिया । सो राम तो आत्मश्रेय हैं, अर सीता कड़े समान है, लंका बिल समान है, रावण गोह समान है । तातैं हो विद्याधरो ! तुम निर्भय होवो । ये लक्ष्मणके वचन जांबूनदके वचननिकूं खंडन करनहारे सुनकर विद्याधर आश्चर्यकूं प्राप्त भए ।

अथानन्तर जांबूनद आदि सब रामसू कहते भए–हे देव ! अनन्तवीर्य योगींद्रकू रावणने नमस्कार कर अपने मृत्युका कारण पूछ्या । तब अनन्तवीर्यकी आज्ञा भई जो कोटिशिलाकू उठावेगा ताकरि तेरी मृत्यु है । तब ये सर्वज्ञके वचन सुन रावणने विचारी ऐसा कौन पुरुष है जो कोटिशिलाकू उठावै । ये वचन विद्याधरनिके सुन लक्ष्मण बोले मैं अबही यात्राकू वहां चालूंगा, तब सबही प्रमाद तज इनके लार भए । जांबूनद, महाबुद्धि, सुग्रीव, विराधित, अर्कमाली, नल, नील इत्यादि नामी पुरुष विमान विषै राम लक्ष्मणकू चढ़ाय कोटिशिलाकी ओर चाले । अंधेरी रात्रिविषै शीघ्र ही जाय पहुँचे, शिला के समीप उतरे । शिला महा मनोहर, सुर नर असुरनिकरि नमस्कार करने योग्य, ये सर्व दिशाविषै सामंतनिकूं रखवारे राख, शिलाकी यात्राकू गए । हाथ जोड़ सीस निवाय नमस्कार किया । सुगंध कमलनिकरि तथा अन्य पुष्पनिकरि शिलाकी अर्चा करी । चन्दनकर चरंची, सो शिला कैसी शोभती भई मानों साक्षात् शची ही है । ताविषै जे सिद्ध भए तिनकू नमस्कारकर, हाथ जोड, भक्तिकर शिला की तीन प्रदक्षिणा दई । सब विधिविषै प्रवीण लक्ष्मण कमर बांध, महा विनयकू धरता संता, नमोकारमंत्रमें तत्पर, महा भक्तिकरि स्तुति करवेकू उद्यमी भया । अर सुग्रीवादि वानरवंशी सबही जय जयकार शब्द कर महा स्तोत्र पढ़ते भए । एकाग्रचित्तकर सिद्धनिकी स्तुति करै हैं, जो भगवान सिद्ध त्रैलोक्यके शिखर महादैदीप्यमान हैं । अर वे सिद्ध स्वरूप मात्र सत्ताकर अविनश्वर हैं । तिनका बहुरि जन्म नाहीं । अनन्तवीर्यकर संयुक्त, अपने स्वभावमें लीन, महा समीचीनता युक्त, समस्त कर्मरहित, संसार समुद्रके पारगामी, कल्याणमूर्ति, आनन्द–पिंड, केवलज्ञान–केवलदर्शनके आधार, पुरुषाकार, परमसूक्ष्म, अमूर्ति, अगुरुलघु, असंख्यात–प्रदेशी, अनन्तगुणरूप, सर्वकू एकसमयमें जानैं, सब सिद्ध समान, कृतकृत्य, जिनके कोई कार्य करना रहा नाहीं । सर्वथा शुद्धभाव, सर्वद्रव्य, सर्वक्षेत्र, सर्वकाल, सर्वभावके ज्ञाता, निरंजन, आत्मज्ञानरूप, शुक्लध्यान अग्निकर अष्टकर्म वनके भस्म करणहारे, अर महाप्रकाशरूप प्रतापके पुंज, जिनकू इन्द्र धरणेंद्र चक्रवर्त्यादि पृथ्वीके नाथ सब ही सेवैं, महास्तुति

करैं, ते भगवान संसारके प्रपंचतैं रहित, अपने आनन्दस्वभाव तिनमई, अनन्त सिद्ध भए, अर अनंत होहिंगे। अढ़ाईद्वीपके विषै मोक्षका मार्ग प्रवृत्ते है। एकसौ साठ महाविदेह, अर पांच भरत, पांच ऐरावत, एकसौ सत्तर क्षेत्र, तिनके आर्यखंडविषै जे सिद्ध भए, अर होहिंगे, तिन सबनिकूं हमारा नमस्कार होहु। भरतक्षेत्रविषै यह कोटिशिला, यहांतैं सिद्धशिलाकूं प्राप्त भए ते हमकूं कल्याण के कर्त्ता होहु। जीवनिकूं महामंगलरूप। या भांति चिरकाल स्तुतिकर चित्तविषै सिद्धनिका ध्यान कर सब ही लक्ष्मणकूं आशीर्वाद देते भए।

या कोटिशिलातैं जे सिद्ध भए वे सर्व तिहारा विघ्न हरैं। अरहंत, सिद्ध, साधु, जिनशासन, ये सर्व तुमकूं मंगलके करता होहु। या भांति शब्द करते भए। अर लक्ष्मण सिद्धनिका ध्यान कर शिलाकूं गोडे प्रमाण उठावता भया। अनेक आभूषण पहिरे, भुज बंधन कर शोभायमान है भुजा जाकी, सो भुजानि-करि कोटिशिला उठाई। तब आकाशविषै देव जय जय शब्द करते भए। सुग्रीवादिक आश्चर्यकूं प्राप्त भए। कोटिशिलाकी यात्राकर बहुरि सम्मेदशिखर गए। अर कैलाशकी यात्रा कर भरतक्षेत्रके सर्व तीर्थ वंदे, प्रदक्षिणा करी। सांझ समय विमान बैठ जयजयकार करते संते राम लक्ष्मणके लार किह-कंधापुर आए। आप अपने अपने स्थानक सुखतैं शयन किया। बहुरि प्रभात भया। सब एकत्र होय परस्पर वार्ता करते भए। देखो अब थोड़ेही दिनमें इन दोऊ भाईनिका निष्कंटकराज्य होयगा, ये परम शक्तिकूं धरैं हैं। वह निर्वाणशिला इनने उठाई सो यह सामान्य मनुष्य नाहीं। यह लक्ष्मण रावणकूं निःसंदेह मारेगा। तब कईएक कहते भए रावणने कैलाश उठाया सो बाहुका पराक्रम घाट नाहीं। तब ५५१
और कहते भए ताने कैलाश विद्याके बलतैं उठाया सो आश्चर्य नाहीं। तब कईएक कहते भए—काहेकूं विवाद करौ, जगतके कल्याण अर्थ इनका उनकाहित कराय देवो। या समान और नाहीं। रावणतैं प्रार्थना कर सीता लाय रामकूं सौंपो। युद्धतैं कहा प्रयोजन है? आगे तारक, मेरुक बलवान भए सो संग्राम विषैं मारे गए। वे तीनखंडके अधिपति, महाभाग्य, महापराक्रमी हुते, अर और हू अनेक राजा रण

विषै हते गए। तातैं सास कहिए परस्पर मिलता श्रेष्ठ है। तब ये विद्याकी विधिमें प्रवीण परस्पर मंत्रकर श्रीरामपै आए। अति भक्तितैं रामके समीप नमस्कारकर बैठे। कैसे शोभते भए? जैसैं इन्द्र के समीप देव सोहैं। कैसे हैं राम? नेत्रनिकूं आनन्दके कारण, सो कहते भए–अब तुम काहे ढील करो हो, मो बिना जानकी लंकाविषैं महादुःखकरि तिष्ठै है। तातैं दीर्घ सोच छांडि अबार ही लंकाकी तरफ गमनका उद्यम करहु। तब जे सुग्रीवके जांबूनदादि मंत्री राजनीतिमैं प्रवीन हैं ते रामसूं विनती करते भए–हे देव! हमारे ढील नाहीं, परन्तु यह निश्चय कहो सीताके लायवे हीका प्रयोजन है, अक राक्षसनितैं युद्ध करना है? यह सामान्य युद्ध नाहीं, विजय पावना अति कठिन है। वह भरत क्षेत्रके तीन खंडका निष्कंटक राज करै है। द्वीप समुद्रनिकेविषै रावण प्रसिद्ध है, जासूं धातुकीखंड द्वीपके शंका मानै। जम्बूद्वीपविषै जाकी अधिक महिमा, अद्भुतकार्यका करणहारा, सबके उरका शल्य है, सो युद्ध योग्य नाहीं। तातैं रणकी बुद्धि छांडि हम जो कहैं सो करहु। हे देव! ताहि युद्ध सन्मुख करिवेमैं जगतकूं महाक्लेश उपजै है। प्राणीनिके समूहका विध्वंस होय है। समस्त उत्तमक्रिया जगततैं जाय है। तातैं विभीषण रावणका भाई, सो पापकर्म रहित श्रावकव्रतका धारक है, रावण ताके वचनकूं उलंघै नाहीं। तिन दोऊ भाईनिमैं अंतरायरहित परमप्रीति है। सो विभीषण चातुर्यतातैं समझावेगा अर रावणहू अपयशतैं शंकेगा। लज्जाकरि सीताकूं पठाय देगा। तातैं विचारकर रावणपै ऐसा पुरुष भेजना जो बातैं करनेमैं प्रवीण होय, अर राजनीतिमें कुशल होय, अनेक नय जाने, अर रावणका कृपापात्र हो, ऐसा हेरहु। तब महोदधि नामा विद्याधर कहता भया–तुम कछु सुनी है? लंकाकी चौगिरद मायामई यंत्र रचा है, सो आकाशके मार्गतैं कोऊ जाय सकै नाहीं, पृथ्वीके मार्गतैं जाय सकै नाहीं। लंका अगम्य है, महाभयानक देख्या न जाय ऐसा मायामई यंत्र बनाया है। सो इतने बैठे हैं तिनमैं तो ऐसा कोऊ नाहीं जो लंकाविषै प्रवेश करै। तातैं पवनंजयका पुत्र श्रीशैल जाहि हनुमान कहै हैं सो महा विद्याबलवान पराक्रमी प्रतापरूप हैं ताहि जांचो। वह रावणका परममित्र है, अर पुरुषोत्तम है,

सो रावणकूं समझाय विघ्न टारेगा। तब यह बात सबने प्रमाण करी। हनुमानके निकट श्रीभूत नामा दूत शीघ्र पठाया। गौतमस्वामी राजा श्रेणिकतैं कहै हैं-हे राजन्! महा बुद्धिमान होय, अर महाशक्तिकूं धरे होय, अर उपाय करैं, तो भी होनहार होय सो ही होय। जैसैं उदयकालमें सूर्यका उदय होय ही तैसैं जो होनहार सो होय ही।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रंथ, ताकी भाषावचनिकाविषैं कोटिशिला उठावनेका व्याख्यान वर्णन करनेवाला अडतालीसवां पर्व पूर्ण भया ॥ ४८ ॥

अथानन्तर श्रीभूतनामा दूत, पवनके वेगतैं शीघ्रही आकाशके मार्गसों लक्ष्मीका निवास जो श्रीपुर नगर अनेक जिन भवन तिनकरि शोभित, तहां गया। जहां मन्दिर सुवर्ण रत्नमई, सो तिनकी माला करि मण्डित कुन्दके पुष्प समान उज्ज्वल सुन्दर झरोखानिकरि शोभित, मनोहर उपवनकर रमणीक। सो दूत नगरकी शोभा अर नगरके अपूर्व लोग देख आश्चर्यकूं प्राप्त भया। बहुरि इन्द्रके महल समान राजमन्दिर, तहांकी अद्भुत रचना देख थकित होय रहा। हनुमान खरदूषणकी बेटी अनंगकुसुमा, रावणकी भानजी, ताके खरदूषणका शोक। कर्मके उदयकरि शुभ अशुभ फल पावै, ताहि कोई निवारिवे शक्त नाहीं। मनुष्यनिकी कहा शक्ति देवनहूकरि अन्यथा न होय। दूतने द्वारे आय अपने आगमनका वृत्तांत कहा। सो अनंगकुसुमाकी मर्यादा नामा द्वारपाली दूतकूं भीतर लेयगई। अनंगकुसुमाने सकल वृत्तांत पूछ्या सो श्रीभूतने नमस्कारकर विस्तारसूं कहा। दंडकवनमें श्रीराम लक्ष्मणका आवना, सम्बूकका बध, खरदूषणतैं युद्ध, बहुरि भले भले सुभटनिसहित खरदूषणका मरण। यह वार्ता सुन अनंगकुसुमा मूर्छाकूं प्राप्त भई। तब चन्दनके जलकरि सींच सचेत करी। अनंगकुसुमा अश्रुपात डारती विलाप करती भई-हाय पिता हाय भाई! तुम कहां गए? एकबार मोहि दर्शन देवो। वचनालाप करै-महा भयानक वनमें भूमिगोचरीनि तुमकूं कैसे हते? या भांति पिता अर भाईके दुःखकरि

चन्द्रनखाकी पुत्री दुखी भई। सो महा कष्टकरि सखिनिने शांतिताकूं प्राप्तकरी। अर जे प्रवीण उत्तम जन हुते तिन बहुत संबोधी। तब यह जिनमार्गविषैं प्रवीण, समस्त संसारके स्वरूपकूं जान, लोकाचारकी रीति प्रमाण पिताके मरणकी क्रिया करती भई। बहुरि दूतकूं हनुमान महाशोकके भरे सकल वृत्तांत पूछते भए। तब इनकूं सकल वृत्तांत कहा सो हनुमान खरदूषणके मरणकरि अति क्रोधकूं प्राप्त भया। भौंह टेढी होय गईं, मुख अर नेत्र आरक्त भए, तब दूतने कोप निवारिवेके निमित्त मधुर स्वरनिकरि विनती करी। हे देव! किहकंधापुरके स्वामी सुग्रीव तिनकूं दुख उपजा, सोतो आप जानो ही हो। साहसगति विद्याधर सुग्रीवका रूप बनाय आया। तातैं पीडित भया सुग्रीव श्रीरामके शरणे गया। सो राम सुग्रीवका दुख दूर करवे निमित्त किहकंधापुर आए। प्रथम तो सुग्रीव अर वाके युद्ध भया। सो सुग्रीवकरि वह जीता न गया। बहुरि श्रीरामके अर वाके युद्ध भया सो रामकूं देख बेताली विद्या भाग गई। तब वह साहसगति सुग्रीवके रूपरहित जैसा हुता तैसा होय गया। महायुद्धविषैं राम ने ताहि मारचा, सुग्रीवका दुःख दूर किया। यह बात सुन हनुमानका क्रोध दूर भया। मुखकमल फूला, हर्षित होय कहते भए—

अहो श्रीरामने हमारा बड़ा उपकार किया। सुग्रीवका कुल अकीर्तिरूप सागरमें डूबे था सो शीघ्र ही उधारा। सुवर्णकलश समान सुग्रीवका गोत्र सो अपयशरूप ऊंड़े कूपमें डूबता हुता। श्रीराम सन्मति के धारकनें गुणरूप हस्तकरि काढचा। या भांति हनुमान बहुत प्रशंसा करी अर सुख—सागरविषैं मग्न भए। हनुमानकी दूजी स्त्री सुग्रीवकी पुत्री पद्मरागा पिताके शोकका अभावसुन हर्षित भई। ताके बड़ा उत्साह भया। दान पूजा आदि अनेक शुभ कार्य किए। हनुमानके घरविषैं अनंगकुसुमाके घर खरदूषणका शोक भया अर पद्मरागाके सुग्रीवका हर्ष भया। या भांति विषमताकूं प्राप्त भए घरके लोग तिनको समाधानकर हनुमान किहकंधापुरकूं सन्मुख भए। महा ऋद्धिकर युक्त बड़ी सेना सूं हनुमान चाल्या। आकाशविषैं अधिक शोभा भई। महारत्नमई हनुमानका विमान ताकी किरणनि

निकरि सूर्यकी प्रभा मंद होय गई हनुमानकू चालता सुन अनेक राजा लार भए। जैसें इन्द्र की लार बड़े बड़े देव गमन करैं। आगैं पीछे दाहिनी बाईं ओर अनेक राजा चाले जाय है। विद्याधरनिके शब्द करि आकाश शब्दमई होयगया। आकाशगामी अश्व, अर गज, तिनके समूहकरि आकाश चित्रामरूप होय गया। महातुरंगनिकरि संयुक्त, ध्वजानि कर शोभित सुन्दर रथ, तिनकर आकाश शोभायमान भासता भया। अर उज्ज्वल छत्रनिके समूहकर शोभित आकाश ऐसा भासै मानो कुमुदनिका वन ही है। अर गम्भीर दुंदुभिनिके शब्दनिकरि दशोंदिशा ध्वनि रूप (प्रतिध्वनिरूप) होय गईं, मानों, मेघ गाजै है। अर अनेकवर्णके आभूषण तिनकी ज्योतिके समूहकरि आकाश नाना रंगरूप होय गया, मानों काहू चतुर रंगरेजाका रंगावस्त्र है। हनुमानके वादित्रनिका नाद सुन कपिवंशी हर्षित भए, जैसें मेघ की ध्वनि सुन मोर हर्षित होय। सुग्रीवने सब नगरकी शोभा कराई, हाट बाजार उजाले, मन्दिरनिपर ध्वजा चढाई, रत्ननिके तोरणनिकर द्वार शोभित किए, हनुमानके सब सन्मुख गए। सबका पूज्य देवनिकी न्याईं नगरविषैं प्रवेश किया। सुग्रीवके मन्दिर आए। सुग्रीवने बहुत आदर किया, अर श्रीराम का समस्त वृत्तांत कहा। तब ही सुग्रीवादिक हनुमान सहित परम हर्षकूं धरते श्रीरामके निकट आए। सो हनुमान रामकूं देखता भया—महासुन्दर, सूक्ष्म, स्निग्धश्याम, सुगन्ध, वक्र, लम्बे महामनोहर हैं केश जिनके, सो लक्ष्मीरूप बल इनकर मंडित महासुकुमार है अंग जिनका, सूर्य समान प्रतापी, चन्द्र-समान कांतिकारी, अपनी कांतिकर प्रकाशके करणहारे, नेत्रनिको आनन्दके कारण, महा मनोहर, अतिप्रवीण आश्चर्यके करणहारे, मानों स्वर्गलोकते देवही आए हैं। देदीप्यमान निर्मल स्वर्णके कमल
के गर्भ समान है प्रभा जिनकी, सुन्दर श्रवण, सुन्दर नासिका, सर्वांग सुन्दर, मानों साक्षात् कामदेव ही हैं। कमलनयन, नवयौवन, चढ़े धनुष समान भौंह जिनकी, पूर्णमासीके चन्द्रमा समान वदन, महा मनोहर मूंगा समान लाल होठ, कुन्दके पुष्प समान उज्ज्वल दन्त, शंख समान कंठ, मृगेन्द्र समान साहस, सुन्दरकटि, सुन्दर वक्षस्थल, महाबाहु, श्रीवत्सलक्षण दक्षिणावर्त गम्भीरनाभि, आरक्त कमल

समान कर चरण, महा कोमल गोल पुष्ट दोऊ जंघा, अर कछुवेकी पीठ समान चरणके अग्रभाग, महा कांतिकूं धरैं अरुण नख, अतुल बल, महायोधा, महागम्भीर, महाउदार, समचतुरस्रसंस्थान, वज्रवृषभनाराच संहनन, मानों सर्व जगत्रयकी सुन्दरता एकत्रकर बनाये हैं। महाप्रभाव संयुक्त, परंतु सीताके वियोगकरि व्याकुल चित्त, मानों शचीरहित इन्द्र विराजे है, अथवा रोहिणी रहित चन्द्रमा तिष्ठै है। रूप सौभाग्य कर मंडित, सर्व शास्त्रनिके वेत्ता, महाशूरवीर, जिनकी सर्वत्र कीर्ति फैल रही है, महा बुद्धिमान, गुणवान ऐसे श्रीराम तिनकूं देखकर हनुमान आश्चर्यकूं प्राप्त भया। तिनके शरीरकी कांति हनुमान पर जा पडी, प्रभाव देखकर वशीभूत भया। पवनका पुत्र मनमें विचारता भया—ये श्रीराम दशरथके पुत्र, भाई लक्ष्मण लोक श्रेष्ठ, याका आज्ञाकारी, संग्रामविषैं जाके चन्द्रमा समान उज्ज्वल छत्र देख साहसगतिकी विद्या वैताली ताके शरीरतैं निकस गई। अर इन्द्रहूकूं मैं देख्या है परन्तु इनकूं देखकर परम आनन्दसंयुक्त हृदय मेरा नम्रीभूत भया। या भांति आश्चर्यकूं प्राप्त भया। अंजनीका पुत्र, श्रीराम कमललोचन ताके दर्शनकूं आगे आया। अर लक्ष्मणने पहिले ही रामतै कह राखी हुती सो हनुमानकूं दूरहीतैं देख उठे, उरसे लगाय मिले, परस्पर अतिस्नेह भया। हनुमान अति विनयकर बैठा, आप श्रीराम सिंहासन पर विराजे, भुज बंधनकरि शोभित हैं भुजा जिनकी, महा निर्मल नीलाम्बर मंडित, राजनिके चूडामणि, महा सुन्दर हार पहिरे, ऐसे सोहैं मानों नक्षत्रनि सहित चन्द्रमा ही है। अर दिव्य पीताम्बर धारे हार कुण्डल कर्पूरादि संयुक्त सुमित्राके पुत्र श्रीलक्ष्मण कैसे सोहैं हैं? मानो बिजुरी सहित मेघ ही हैं। अर वानरवंशिनिका मुकुट, देवनिसमान पराक्रम जाका, राजा सुग्रीव कैसा सोहै? मानो लोकपाल ही है। अर लक्ष्मणके पीछे बैठा विराधित विद्याधर कैसा सोहै? मानों लक्ष्मण नरसिंहका चक्ररत्न ही है। रामके समीप हनुमान कैसा शोभता भया? जैसे पूर्ण चन्द्रके समीप बुध सोहै है। अर सुग्रीवके दोय पुत्र एक अंगज दूजा अंगद, सो सुगंध माला अर वस्त्र आभूषणादिकर मंडित ऐसे सोहैं मानो यह कुवेर ही है। अर नल नील अर सैकडों राजा श्रीरामकी सभाविषैं

ऐसे सोहैं जैसैं इन्द्रकी सभाविषै देव सोहै। अनेक प्रकार की सुगन्ध अर आभूषणनिका उद्योत ताकरि सभा ऐसी सोहै मानो इन्द्रकी सभा है। तब हनुमान आश्चर्यकूं पाय अतिप्रीतिकूं प्राप्त भया, श्रीराम को कहता भया–

हे देव! शास्त्रमें ऐसा कहा है प्रशंसा परोक्ष करिए, प्रत्यक्ष न करिए। परन्तु आपके गुणनिकरि यह मन वशीभूत भया प्रत्यक्ष स्तुति करै है! अर यह रीति है कि आप जिनके आश्रय होय तिनके गुण वर्णन करैं, सो जैसी महिमा आपकी हमने सुनी हुती तैसी प्रत्यक्ष देखी। आप जीवनिके दयालु, महा पराक्रमी, परम हितू, गुणनिके समूह, जिनके निर्मल यशकर जगत् शोभायमान है। हे नाथ! सीताके स्वयम्बर विधानविषै हजारों देव जाकी रक्षा करैं ऐसा वज्रावर्त धनुष आपने चढाया। सो वह हम सब पराक्रम सुने। जिनका पिता दशरथ, माता कौशल्या, भाई लक्ष्मण–भरत–शत्रुघन, स्त्रीका भाई भामंडल, सो राम जगत्पति तुम धन्य हो! तिहारी शक्ति धन्य। तिहारा रूप धन्य, सागरावर्त धनुषका धारक लक्ष्मण सो सदा आज्ञाकारी, धन्य यह धीर्य, धन्य यह त्याग, जो पिताके वचन पालिबे अर्थ राज्यका त्यागकर महा भयानक दंडकवनमें प्रवेश किया। अर आप हमारा जैसा उपकार किया तैसा इन्द्र हू न करै। सुग्रीवका रूपकर साहसगति आया हुता सुग्रीवके घरमें, सो आप कपिवंशका कलंक दूर किया। आपके दर्शनकर वैताली विद्या साहसगतिके शरीरतैं निकस गई। आप युद्धविषै ताहि हत्या सो आपने तो हमारा बडा उपकार किया। अब हम कहा सेवा करैं? शास्त्रकी यह आज्ञा है जो आपसों उपकार करै अर ताकी सेवा न करै ताके भावशुद्धता नाहीं। अर जो कृतघ्न उपकार भूले सो न्यायधर्मतैं बहिर्मुख है, पापीनिविषै महापापी है, अर पराधीनमें पारधी है, निर्दई है, सो वातैं सत्पुरुष संभाषण न करैं। तातैं हम अपना शरीरहू तजकर तिहारे कामकूं उद्यमी हैं। मैं जाय लंकापतिकूं समझाय तिहारी स्त्री तिहारे लाऊंगा। हे राघव! महाबाहु! सीताका मुखरूप कमल पूर्णमासीके चन्द्रमा समान कांतिका पुंज, आप निस्संदेह शीघ्र ही सीता देखोगे। तब जांबूनद मंत्री हनुमानकूं परम हित

के वचन कहता भया। हे वत्स वायुपुत्र ! हमारे सबनके एक तूही आश्रय है, सावधान लंकाकूं जाना अर काहूसों कदाचित् विरोध न करना। तब हनुमान कही आपकी आज्ञा प्रमाण ही होयगा।

अथानन्तर हनुमान लंका चलिबेकूं उद्यमी भया। तब राम अति प्रीतिकूं प्राप्त भए। एकांतमें कहते भए—हे वायुपुत्र ! सीताकूं ऐसें कहियो कि हे महासती ! तिहारे वियोगकरि रामका मन एक क्षण भी सातारूप नाहीं। अर रामने यों कही—ज्यों लग तुम पराए वश हो त्यों लग हम अपना पुरुषार्थ नाहीं जानें हैं। अर तुम महानिर्मल शील करि पूर्ण हो, अर हमारे वियोगकरि प्राण तजा चाहो हौ, सो प्राण तजो मति। अपना चित्त समाधान रूप राखहु। विवेकी जीवनिकूं आर्त रौद्रतें प्राण न तजने। मनुष्यदेह अति दुर्लभ है। ताविषैं जिनेन्द्रका धर्म दुर्लभ है। ताविषैं समाधिमरण दुर्लभ है। जो समाधिमरण न होय तो यह मनुष्य देह तुषवत् असार है। अर यह मेरे हाथकी मुद्रिका जाकर ताहि विश्वास उपजै सो लेजावहु। अर उनका चूडामणि महा प्रभावरूप हमपै ले आइयो। तब हनुमान कही जो आप आज्ञा करोगे सो ही होयगा। ऐसा कहकर हाथ जोड़ नमस्कार कर, बहुरि लक्ष्मणतैं नम्रीभूत होय बाहिर निकस्या। विभूतिकर परिपूर्ण, अपने तेजकरि सर्वदिशाकूं उद्योत करता, सुग्रीवके मंदिर आया। अर सुग्रीवसों कही—जौलग मेरा आवना न होय तौलग तुम बहुत सावधान यहां ही रहियो। या भांति कहकर सुन्दर हैं शिखर जाके ऐसा जो विमान तापर चढ्या। ऐसा शोभता भया जैसा सुमेरुके ऊपर जिनमंदिर शोभै। परमज्योति करि मंडित, उज्ज्वल छत्रकर शोभित, हंससमान उज्ज्वल चमर जापर ढुरै हैं, अर पवनसमान अश्व चालते, पर्वतसमान गज, अर देवनिकी सेना समान सेना ताकरि संयुक्त। या भांति महा विभूतिकरि युक्त आकाशविषैं गमन करता रामादिक सर्वने देख्या। गौतमस्वामी राजा श्रेणिकतैं कहै हैं—हे राजन् ! यह जगत् नानाप्रकारके जीवनिकरि भरया है, तिनमें जो कोई परमार्थके निमित्त उद्यम करै है सो प्रशंसायोग्य है, अर स्वार्थतैं जगतही भरा है। जे पराया उपकार करै ते कृतज्ञ हैं, प्रशंसायोग्य हैं। अर जे निःकारण उपकार करै हैं उनके

तुल्य इन्द्रचन्द्र कुवेर भी नाहीं । अर जे पापी कृतघ्नी पराया उपकार लोपैं हैं वे नरक निगोदके पात्र हैं अर लोक निंद्य हैं ।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रंथ, ताकी भाषावचनिकाविषैं हनुमानका लंकाको दिशा गमन वर्णन करनेवाला उनचालीसवां पर्व पूर्ण भया ॥ ४९ ॥

अथानन्तर अंजनीका पुत्र आकाशविषै गमन करता परम उदयकूं धरै कैसा शोभता भया ? मानों बहिन समान जानकी, ताहि लायवेकूं भाई भामंडल जाय है । कैसे हैं हनुमान ? श्रीरामकी आज्ञाविषै प्रवर्ते हैं, महा विनयरूप, ज्ञानवंत, शुद्धभाव, रामके कामका चित्तमें उत्साह । सो दिशा मंडल अवलोकते, लंकाके मार्गविषै राजा महेन्द्रका नगर देखते भये, मानों इन्द्रका नगर है । पर्वतके शिखरपर नगर बसै है । जहां चन्द्रमा समान उज्ज्वल मंदिर हैं । सो नगर दूरहीतै नजर आया । तब हनुमानने देखकरि मनमें चितया यह दुर्बुद्धि महेन्द्रका नगर है, वह यहां तिष्ठै है, मेरा काहेका नाना ? मेरी माताको जानै संताप उपजाया था । पिता होयकर पुत्रीका ऐसा अपमान करे, जो जानै नगरमें न राखी । तब माता बनमें गई जहां अनंतगति मुनि तिष्ठे हुते । तिनने अमृतरूप वचन कहकर समाधान करी, सो मेरा उद्यानविषै जन्म भया, जहां कोई बन्धु नाहीं । मेरी माता शरणे आवे अर यह न राखे, यह क्षत्रीका धर्म नाहीं । तातैं याका गर्व हरूं । तब क्रोधकर रणके नगारे बजाए अर ढोल बजाते भए, शंखनिकी ध्वनि भई, योधानिके आयुध झलकने लगे । राजा महेन्द्र परचक्र आया सुनकर सर्व सेना सहित बाहर निकस्या । दोऊ सेनाविषै महायुद्ध भया । महेन्द्र रथमें चढ़ा । माथे छत्र फिरता धनुष चढ़ाय हनुमानपर आया । सो हनुमानने तीन बाणनिकरि ताका धनुष छेद्या, जैसैं योगीश्वर तीन गुप्ति कर मानकूं छेदें । बहुरि महेन्द्रने दूजा धनुष लेवेका उद्यम किया ताके पहिलेही बाणनिकरि ताके घोड़े छुटाय दिए सो रथके समीप भ्रमैं, जैसे मनके प्रेरे इन्द्रिय विषयनिमें भ्रमैं । बहुरि

महेन्द्रका पुत्र विमानमें बैठ हनुमानपर आया। सो हनुमानके अर वाके बाण, चक्र, कनक इत्यादि अनेक आयुधनिकरि परस्पर महा युद्ध भया। हनुमानने अपनी विद्याकरि वाके शस्त्र निवारे, जैसैं योगीश्वर आत्मचिन्तवनकर परीषहके समूहकूं निवारें। ताने अनेक शस्त्र चलाये सो हनुमानके एकहू न लाग्या, जैसे मुनिको कामका एक भी बाण न लागै। जैसे तृणनिके समूह अग्निमें भस्म होय तैसें महेन्द्रके पुत्रके सर्व शस्त्र हनुमानपर विफल गए। अर हनुमानने ताहि पकड़ा, जैसे सर्पको गरुड़ पकड़े। तब राजा महेन्द्र महारथी पुत्रकूं पकड़ा देख महा क्रोधायमान भया, हनुमानपर आया, जैसे साहसगति रामपर आया हुता। हनुमानहू महा धनुषधारी, सूर्यके रथ समान रथपर चढ़ा, मनोहर है उरविषै हार जाके, शूरवीरनिमें महाशूरवीर, नानाके सन्मुख भया। सो दोऊनिमें करोत कुठार खड्ग बाण आदि अनेक शस्त्रनिकरि पवन अर मेघकी न्याईं महा युद्ध भया। दोऊ सिंह समान महा उद्धत, महाकोपके भरे, बलवंत, अग्निके कणसमान रक्तनेत्र, दोऊ अजगर समान भयानक शब्द करते परस्पर शस्त्र चलावते, गर्वहास संयुक्त प्रकट हैं शब्द जिनके, परस्पर ऐसे शब्द करैं हैं धिक्कार तेरे शूरपने को, तू कहा युद्ध कर जाने? इत्यादि वचन परस्पर कहते भए। दोऊ विद्याबलकरि युक्त, परम युद्ध करते बारम्बार अपने लोगनिकरि हाकार जय जयकारादिक शब्द करावते भए। राजा महेन्द्र महा विक्रिया शक्तिका धारक, क्रोधकर प्रज्वलित है शरीर जाका, सो हनुमानपर आयुधनिके समूह डारता भया। भुषुण्डी, फरसा, बाण, शतघ्नी, मुद्गर, गदा, पर्वतनिके शिखर, शालवृक्ष. बटवृक्ष इत्यादि अनेक आयुध हनुमानपर महेन्द्र चलाए, सो हनुमान व्यकुलताकूं प्राप्त न भया, जैसे गिरिराज महा मेघके समूहकरि कम्पायमान न होय। जेते महेन्द्रने बाण चलाए सो हनुमानने उनको विद्याके प्रभावकरि सब चूर डारे। बहुरि अपने रथतैं उछल महेन्द्रके रथमें जाय पड़े। दिग्गजकी सूंड समान अपने जे हाथ तिनकरि महेन्द्रकूं पकड़ लिया अर अपने रथमें आए। शूरवीरनिकरि पाया है जीतका शब्द जाने, सर्वही लोक प्रशंसा करते भए। राजा महेन्द्र हनुमानकूं महाबलवान परम उदयरूप देख महा सौम्य

वाणीकर प्रशंसा करता भया—हे पुत्र ! तेरी महिमा जो हमने सुनी हुती सो प्रत्यक्ष देखी। मेरा पुत्र प्रसन्नकीर्ति जो अब तक काहूने न जीता, रथनूपुरका स्वामी राजा इन्द्र ताकरि न जीता गया, विजियार्ध-गिरिके निवासी विद्याधर तिनमें महाप्रभाव संयुक्त, सदा महिमाकू धरै मेरा पुत्र सो तैंने जीता, अर पकड़ा। धन्य पराक्रम तेरा। महा धीर्यको धरे तेरे समान और पुरुष नाहीं। अर अनुपमरूप तेरा अर संग्राम विषै अद्भुत पराक्रम। हे पुत्र हनुमान ! तूने हमारे सब कुल उद्योत किये। तू चरमशरीरी अवश्य योगीश्वर होयगा। विनय आदि गुणनिकरि युक्त, परम तेजकी राशि, कल्याणमूर्ति कल्पवृक्ष प्रकट भया है। तू जगतविषै गुरुकुलका आश्रय, अर दुःखरूप सूर्यकर जे तप्तायमान हैं तिनकू मेघ समान। या भांति नाना महेन्द्रने अति प्रशंसा करी, अर आंख भर आई, अर रोमांच होय आए, मस्तक चूमा, छातीसे लगाया। तब हनुमान नमस्कार कर हाथ जोड़ अति विनयकर क्षमा करावते भए। एकक्षणमें और ही होय गए। हनुमान कहे हैं—हे नाथ ! मैं बाल बुद्धिकर जो तिहारा अविनय किया सो क्षमा करहु। अर श्रीरामका किहकंधापुर आवनेका सकल वृत्तांत कहा। आप लंकाकी ओर जावनेका वृत्तांत कहा। अर कही मैं लंका होय कार्यकर आऊं हूं। तुम किहकंधापुर जावो, रामकी सेवा करो। ऐसा कहिकर हनुमान आकाशके मार्ग लंकाकू चाले, जैसे स्वर्गलोकको देव जाय। अर राजा महेन्द्र राणी सहित तथा अपने प्रसन्नकीर्ति पुत्र सहित अंजनी पुत्रीके गया, अंजनीको माता पिता अर भाईका मिलाप भया सो अति हर्षित भई। बहुरि महेन्द्र किहकंधापुर आए सो राजा सुग्रीव विराधित आदि सन्मुख गए, श्रीरामके निकट लाए। राम बहुत आदरसे मिले। जे राम सारिखे महंत
पुरुष महातेज प्रतापरूप निर्मलचित्त हैं, अर जिनके पूर्वजन्म विषै दान व्रत तप आदि पुण्य उपार्जे हैं, तिनकी देव विद्याधर भूमिगोचरी सब ही सेवा करैं। जे महा गर्ववंत बलवंत पुरुष हैं, ते सब तिनके वश होवें तातें सर्व प्रकार अपने मनको जीत सत्कर्ममें यत्नकर। हे भव्यजीव हो ! ता सत्कर्मके फल-कर सूर्य समान दीप्तिकू प्राप्त होहु।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रंथ, ताकी भाषावचनिकाविषै महेन्द्रका अर अंजनीका मिलाप बहुरि श्रीरामके निकट लावनेका व्याख्यानवर्णन करनेवाला पचासवां पर्व पूर्ण भया ॥५०॥

अथानन्तर हनुमान आकाशविषै विमानमें बैठे जाय हैं, अर मार्गमें दधिमुख नामा द्वीप आया। तामें दधिमुख नामा नगर, जहां दधि समान उज्ज्वल मन्दिर, सुन्दर सुवरणके तोरण, कालो घटा समान सघन उद्यान, पुष्पनि करि युक्त स्फटिक मणि समान उज्ज्वल जलकी भरी वापिका, सोपानिनि कर शोभित, कमलादिक कर भरी। गौतमस्वामी राजा श्रेणिकसूं कहे हैं—हे राजन्! या नगरतैं दूर वन, तहां तृण बेल वृक्ष कांटनिके समूह, सूखे वृक्ष, दुष्ट सिंहादिक जीवनिके नाद, महाभयानक प्रचण्ड पवन, जाकरि वृक्ष गिरपड़े, सूख गये हैं सरोवर जहां, अर गृद्ध उल्लूक आदि दुष्ट पक्षी विचरैं, ता वनविषै दोय चारणमुनि अष्टदिनका कायोत्सर्ग धरे खड़े थे। अर तहांतै चारकोस तीन कन्या महामनोग्य नेत्र जिनके जटा धरैं, सफेद वस्त्र पहरे, विधिपूर्वक महा तपकर निर्मल चित्त जिनका। मानों कन्या तीन लोककी आभूषण ही हैं।

अथानन्तर बनमें अग्नि लागी। सो दोऊ मुनि धीर वीर वृक्षकी न्याईं खड़े। समस्त वन दावानल करि जरे। ते दोऊ निर्ग्रंथ योगयुक्त, मोक्षाभिलाषी, रागादिकके त्यागी, प्रशांतवदन, शान्तचित्त, निष्पाप, अवांछक, नासादृष्टि, लम्बी हैं भुजा जिनकी, कायोत्सर्ग धरे। जिनके जीवना मरना तुल्य, शत्रु मित्र समान, कांचन पाषाण समान। सो दोऊ मुनि जरते देख हनुमान कम्पायमान भया। वात्सल्य गुणकरि मंडित, महाभक्ति संयुक्त, वैयावृत करिवेको उद्यमी भया। समुद्रका जल लेयकर मूसलाधार मेह बरसाया। सो क्षणमात्रविषै पृथ्वी जलरूप होय गई। वह अग्नि ता जलकरि हनुमानने ऐसे बुझाई जैसे मुनि क्षमाभाव रूप जलकरि क्रोधरूप अग्निकूं बुझावैं। मुनिनका उपसर्ग दूर कर तिनकी पूजा करता भया। अर वे तीनों कन्या विद्या साधतीं हुतीं, सो दावानलके दाहकर व्याकुलताका कारण

भया हुता, सो हनुमानके मेघकर वनका उपद्रव मिटा, सो विद्या सिद्धि भई। सुमेरुकी तीन प्रदक्षिणा करि मुनिनके निकट आयकर नमस्कार करती भईं। अर हनुमानकी स्तुति करती भईं—अहो तात! धन्य तिहारी जिनेश्वरविषैं भक्ति! तुम काहू तरफ जाते हुते सो साधुनिकी रक्षा करी। हमारे कारण करि वनमें उपद्रव भया सो मुनि ध्यानारूढ़ ध्यानतैं न डिगे। तब हनुमानने पूछी तुम कौन अर निर्जन स्थानकमें कौन कारण रहो हो? तब सबनिमें बड़ी बहिन कहती भई—यह दधिमुख नामा नगर, जहां राजा गन्धर्व, ताकी हम तीन पुत्री—बड़ी चन्द्ररेखा, दूजी विद्युतप्रभा, तीजी तरंगमाला, सर्वगोत्रकूं वल्लभ। सो जेते विजयार्ध विद्याधर राजकुमार हैं वे सब हमारे विवाहके अर्थ हमारे पितासूं याचना करते भए। अर एक दुष्ट अंगारक सो अति अभिलाषी निरंतर कामके दाहकर आतापरूप तिष्ठै। एक दिन हमारे पिताने अष्टांग निमित्तके वेत्ता जे मुनि तिनकूं पूछी—हे भगवान! मेरी पुत्रिनिका वर कौन होयगा? तब मुनि कही जो रणसंग्रामविषैं साहसगतिकूं मारेगा, सो तेरी पुत्रिनिका वर होयगा। तब मुनिके अमोघ वचन सुनकर हमारे पिताने विचारी, विजयार्धकी उत्तर श्रेणीविषैं जो साहसगति ताहि कौन मार सकै। जो ताहि मारै सो मनुष्य या लोकविषैं इन्द्रके समान है। अर मुनिके वचन अन्यथा नाहीं। सो हमारे माता पिता अर सकल कुटुम्ब मुनिके वचनपर दृढ़ भए। अर अंगारक निरंतर हमारे पितासूं याचना करै सो पिता हमकूं न देय। तब वह अति चिंतावान दुःखरूप वैरकूं प्राप्त भया। अर हमारे यही मनोरथ उपजा जो वह दिन कब होय हम साहसगतिके हनिवेवारेकूं देखें। सो मनोनुगामिनी नाम विद्या साधिवेकूं या भयानक वनविषैं आईं। सो मनोनुगामिनी नामा विद्या साधतें हमकूं बारवां दिन है, अर मुनिनिको आठमा दिन है। आज अंगारकने हमको देख क्रोधकर वनविषै अग्नि लगाई। जो छहवर्ष कछु इक अधिक दिननिविषैं विद्या सिद्ध होय। हमको उपसर्गतैं भय न करवेकर बारह ही दिनविषैं विद्या सिद्ध भई। या आपदाविषैं हे महाभाग! जो तुम सहाय न करते तो हमारा अग्निकर नाश होता, अर मुनि भस्म होते। तातैं तुम धन्य हो। तब हनु-

मान कहते भए तिहारा उद्यम सफल भया। जिनके निश्चय होय तिनकूं सिद्ध होय ही। धन्य निर्मल बुद्धि, तिहारी बड़े स्थानकविषैं मनोरथ, धन्य तिहारा भाग्य। ऐसा कहकर श्रीरामके किहकंधापुर आवनेका सकल वृत्तांत कहा अर आपने रामकी आज्ञा प्रमाण लंका जायवेका वृत्तांत कहा। ताही समय वनके दाह शांति होयवेका अर मुनि उपसर्ग दूर होनेका वृत्तांत राजा गन्धर्व सुन हनुमानपै आया। विद्याधरनिके योगकरि वह वन नन्दनवन जैसा शोभता भया। अर राजा गन्धर्व हनुमानके मुखकरि श्रीरामका किहकंधापुर विराजनेका हाल सुन अपनी पुत्रीनिसहित श्रीरामके निकट आया। पुत्री महा विभूतिकर रामकूं परणाई। राम महा विवेकी, ये विद्याधरनिकी पुत्री, अर महाराज विभूति कर युक्त हैं तोहू सीता विना दशों दिशा शून्य देखते भए। समस्त पृथ्वी गुणवान जीवनितै शोभित होय है। अर गुणवंतनि विना नगर गहन वन तुल्य भासै है। कैसे हैं गुणवान जीव? महा मनोहर है चेष्टा जिनकी। अर अति सुन्दर हैं भाव जिनके। ये प्राणी पूर्वोपार्जित कर्मके फलकरि सुख दुख भोगवे हैं। तातैं जो सुखके अर्थी हैं वे जिनरूप सूर्यकरि प्रकाशित जो पवित्र जिनमार्ग ताविषैं प्रवृत्त हैं।

इति श्री विषेणाचार्यविरचित महा पद्मपुराण संस्कृतग्रन्थ, ताकी भाषावचनिकाविषैं रामको राजा गंधर्वकी कन्यानिका लाभ वर्णन करनेवाला बियालीसवां पर्व पूर्ण भया ॥ ४१ ॥

अथानन्तर महा प्रतापकर पूर्ण महाबली हनुमान जैसैं सुमेरुको सौम जाय तैसे त्रिकूटाचलको चला। सो आकाशविषैं जाती जो हनुमानकी सेना ताका महाधनुषके आकार मायामई यंत्रकर निरोध भया। तब हनुमान अपने समीपी लोकनितैं पूछी जो मेरी सेना कौन कारण आगे चल न सके। यहां गर्वका पर्वत असुरनिका नाथ चमरेन्द्र है अथवा इन्द्र है। तथा या पर्वतके शिखरविषैं जिनमंदिर है अथवा चरमशरीरी मुनि हैं। तब हनुमानके ये वचन सुनकर पृथुमति मंत्री कहता भया—हे देव! यह क्रूरतासंयुक्त मायामई यंत्र है। तब आप दृष्टिधर देखा कोटिविषैं प्रवेश कठिन जाना। मानो यह कोट विरक्त

स्त्रीके मन समान दुःप्रवेश है। अनेक आकारकू धरे, वक्रताकरि पूर्ण, महा भयानक, सर्वभक्षी, पूतली, जहां देव भी प्रवेश न कर सकै। जाज्वल्यमान तीक्ष्ण हैं अग्रभाग जिनके ऐसे करोतनिके समूहकर मण्डित, जिह्वाके अग्रभाग करि रुधिरकूं उगलते, ऐसे हजारां सर्प तिनकरि भयानक फण, ते विकराल शब्द करै हैं अर विषरूप अग्निके कण बरसे हैं, विषरूप धूमकरि अंधकार होय रहा है। जो कोई मूर्ख सामन्तपणाके मानकरि उद्धत भया प्रवेश करै ताहि मायामई सर्प ऐसे निगलै जैसे सर्प मेंढकको निगलैं। लंकाके कोटका मंडल जोतिष चक्रतैं हू ऊंचा, सर्व दिशानिविषै दुर्लंघ, अर देखा न जाय। प्रलयकालके मेघ समान भयानक शब्द कर संयुक्त, अर हिंसारूप ग्रन्थनिकी न्याईं अत्यन्त पाप कर्मनिकरि निरमापा। ताहि देख कर हनुमान विचारता भया—यह मायामई कोट राक्षसनिके नाथने रचा है सो अपनी विद्याकी चातुर्यता दिखाई है। अर अब मैं विद्याबलकरि याहि उपाडता संता राक्षसनिका मद हरूं, जैसे आत्मध्यानी मुनि मोह मदकूं हरै। तब हनुमान युद्धविषैं मन कर समुद्र समान जो अपनो सेना सो आकाशविषै राखी। अर आप विद्यामई बक्तर पहिन हाथविषैं गदा लेकर मायामई पूतलीके मुखविषैं प्रवेश किया। जैसे राहुके मुखविषै सूर्य प्रवेश करै। अर वा मायामई पूतलीकी कुक्षि सोई भई पर्वतकी गुफा, अंधकारकर भरी, सो आप नरसिंहरूप तीक्ष्ण नखनिकर बिदारी अर गदाके घातकरि कोट चूरण किया, जैसैं शुक्लध्यानी मुनि निर्मल भावनिकरि घातिया कर्मकी स्थिति चूरण करैं।

अथानन्तर यह विद्या महा भयंकर भंगकूं प्राप्त भई। तब मेघकी ध्वनि समान भई, विद्या भाग गई, कोट बिघट गया, जैसे जिनेन्द्रके स्तोत्रकरि पापकर्म बिघट जाय। तब प्रलयकालके मेघ समान भयंकर शब्द भया। मायामई कोट बिखरा देख कोटका अधिकारी वज्रमुख महा क्रोधायमान होय शीघ्र ही रथपर चढ़ हनुमान पर विना विचारे मारवेकूं दौड्या। जैसैं सिंह अग्निकी ओर दौड़े। जब वाहि आया देख पवनका पुत्र महा योधा युद्ध करिवेकूं उद्यमी भया। तब दोऊ सेनाके योधा प्रचण्ड नाना

प्रकारके वाहननिपर चढ़े, अनेक प्रकारके आयुध धरे परस्पर लडने लगे। बहुत कहने करि कहा ? स्वामी के कार्य ऐसा युद्ध भया जैसा मानके अर मार्दवके युद्ध होय। अपने २ स्वामीकी दृष्टिविषै योधा गाज गाज युद्ध करते भए, जीवनविषैं नाहीं है स्नेह जिनके। फिर हनुमानके सुभटनि कर वज्रमुखके योधा क्षणमात्रविषैं दशोदिशाकू भाजे। अर हनुमानने सूर्यहूते अधिक है ज्योति जाकी, ऐसे चक्र शस्त्रकरि वज्रमुखका सिर पृथ्वीपर डारा। यह सामान्य चक्र है। चक्री अर्धचक्रिनिके सुदर्शनचक्र होय है। युद्ध विषैं पिताका मरण देख, लंकासुन्दरी, वज्रमुखकी पुत्री पिताका जो शोक उपजा हुता ताहि कष्टतैं निवार, क्रोधरूप विषकी भरी, तेज तुरंग जुते हैं जाके, ऐसे रथपर चढ़ी। कुण्डलनिके उद्योतकरि प्रकाशरूप है मुख जाका, वक्र हैं भौंह जाकी, उल्कापातका स्वरूप, सूर्य मंडल समान तेजधारी, क्रोध के वश कर लाल हैं नेत्र जाके, क्रूरताकर डसे हैं किदूरी समान होंठ जाने, मानों क्रोधायमान शची ही है। सो हनुमानपर दौडी, अर कहती भई—रे दुष्ट ! मैं तोहि देखा, जो तोमैं शक्ति है तो मोतैं युद्धकर। जो क्रोधायमान भया रावण न करै सो मैं करूंगी। हे पापी ! तोहि यममन्दिर पठाऊंगी। तू दिशाकू भूल अर अनिष्ट स्थानकू प्राप्त भया। ऐसे शब्द कहती वह शीघ्रही आई। सो आवतीका हनुमानने छत्र उडाय दिया, तब वाने बाणनिकर इनका धनुष तोड़ डारा। अर वह शक्तिलेय चलावै ता पहिले हनुमान बीच ही शक्तिकू तोड डारी। तब वह विद्याबल कर गम्भीर, वज्रदंडसमान बाण, अर फरसी, बरछी, चक्र, शतघ्नी, मूसल, शिला इत्यादि वायुपुत्रके रथपर बरसावती भई, जैसे मेघमाला पर्वतपर जलकी धारा बरसावै। नानाप्रकारके आयुधनिके समूहकरि वाने हनुमानकू वेढ़ा जैसे मेघपटल सूर्यकू आच्छादै। तब हनुमान विद्याकी सब विधिविषैं प्रवीण महापराक्रमी, ताने शत्रुनिके समूह अपने शस्त्रनिकर आप तक न आवने दिये। तोमरादिके बाणनिकरि तोमरादिक बाण निवारे अर शक्तितैं शक्ति निवारी। या भांति परस्पर अतियुद्ध भया। याके बाण वाने निवारे, वाके बाण याने निवारे। बहुत देरतक युद्ध भया, कोई नाहीं हारे। सो गोतम स्वामी राजा श्रेणिकसूं कहे हैं—

हे राजन् ! हनुमानको लंकासुन्दरी बाणशक्ति इत्यादि अनेक आयुधनिकरि जीतती भई, अर कामके बाणनिकरि पीडित भई। कैसे हैं कामके बाण ? मर्मके विदारण हारे। कैसी है लंकासुन्दरी ? साक्षात् लक्ष्मीसमान रूपवंती, कमलोचन, सौभाग्य गुणनिकरि गर्वित, सो हनुमानके हृदयविषै प्रवेश करती भई। जाके कर्ण पर्यंत बाणरूप तीक्ष्ण कटाक्ष नेत्ररूप धनुष तैं चढ़े, ज्ञान धीर्यके हरणहारे, महा सुन्दर, दुद्धर मनके भेदनहारे, प्रवीण, अपनी लावण्यताकरि हरी है सुन्दरताई जिनने। तब हनुमान मोहित होय मनमें चितवता भया—जो यह मनोहर आकार, महाललित, बाहिर तो विद्याबाण अर सामान्य बाणतिनकरि मोहि भेदै है, और अभ्यंतर मेरे मनकूं कामके बाणकरि बींधै है। यह मोहि बाह्याभ्यंतर हणै है, तन मनको पीड़े है। या युद्धविषै याके बाणनिकरि मृत्यु होय तो भली परन्तु याके बिना स्वर्गविषै जीवना भला नाहीं। या भांति पवनपुत्र मोहित भया, अर वह लंकासुन्दरी याके रूपकूं देख मोहित भई। क्रूरतारहित करुणाविषै आया है चित्त जाका, तब जो हनुमानके मारिवेकूं शक्ति हाथमें लीनी हुती सो शीघ्रही हाथतैं भूमिमें डार दई, हनुमानपर न चलाई। कैसे हैं हनुमान ? प्रफुल्लित है तन अर मन जिनका, अर कमलदलसमान हैं नेत्र जिनके, अर पूर्णमासीके चन्द्रमा समान है मुख जिनका, नवयौवन, मुकुटविषै वानर का चिह्न, साक्षात् कामदेव हैं। लंकासुन्दरी मनमें चितवती भई—याने मेरा पिता मारचा, सो बड़ा अपराध किया। यद्यपि द्वेषी है तथापि अनुपम रूपकर मेरे मनकूं हरै है। जो या सहित कामभोग न सेऊं तो मेरा जन्म निष्फल है तब विह्वल होय एक पत्र तामें अपना नाम सो बाणकूं लगाय चलाया, तामैं ये समाचार हुते—हे नाथ ! देवनिके समूहकरि न जीती जाऊं ऐसी मैं, सो तुमने कामके बाणनिकरि जीती। यह पत्र बांच हनुमान प्रसन्न होय। रथतैं उतर जायकर तासूं मिले, जैसैं काम रतिसे मिलै। वह प्रशांतवैर भई संती आंसू ढारती तातके मारणकर शोकरत। तब हनुमान कहते भए—हे चन्द्रवदनी ! रुदन मत करै, तेरे शोककी निर्वृत्ति होहू। तेरे पिता परम क्षत्री, महा शूरवीर तिनकी यही रीति, जो स्वामीकार्यके अर्थ युद्धमें प्राण तजैं।

अर तुम शास्त्रविषै प्रवीण हो सो सब नीके जानै हो। या राज्यविषै यह प्राणी कर्मनिके उदयकर पिता पुत्र बांधवादिक सबको हणे है। तातैं तुम आर्तध्यान तजो। ए सकल प्राणी अपना उपार्जा कर्म भोगवै है। निश्चय मरणका कारण आयुका अन्त है अर परजीवनिमित्त मात्र हैं। इन वचननिकरि लंकासुन्दरी शोकरहित भई। या भांति या सहित कैसी सोहती भई? जैसैं पूर्णचन्द्रसे निशा सोहै। प्रेमके समूहकर पूर्ण दोऊ मिलकर संग्रामका खेद विस्मरण होय गए, दोऊनिका चित्त परस्पर प्रीतिरूप होय गया। तब आकाशविषै स्तम्भिनी विद्याकर कटक थांभा। अर सुन्दर मायामई नगर बसाया, जैसी सांझकी आरक्तता होय ता समान लाल, देवनके नगरसमान मनोहर, जामें राजमहल अत्यन्त सुन्दर, सो हाथी, घोड़े विमान रथोंपर चढे बड़े बड़े राजा नगरमें प्रवेश करते भए। नगर ध्वजानिकी पंक्ति-कर शोभित, सो यथायोग्य नगरमें तिष्ठै। महाउत्साहसैं संयुक्त रात्रिमें शूरवीरनिके युद्धका वर्णन जैसा भया तैसा सामंत करते भए। हनुमान लंकासुन्दरीके संग रमता भया।

अथानन्तर प्रभात ही हनुमान चलवेकूं उद्यमी भए। तब लंकासुन्दरी महाप्रेमकी भरी ऐसें कहती भई—हे कंत! तुम्हारे पराक्रम न सहे जांय ऐसे अनेक मनुष्योंके मुख रावणने सुने होवेंगे। सो सुनकर अतिखेदखिन्न भया होयगा। तातैं तुम लंका काहेको जावो। तब हनुमानने इसे सकल वृत्तांत कहा। जो रामने वानरवंशियोंका उपकार किया सो सबोंका प्रेरा रामके प्रति उपकार निमित्त जाऊं हूं। हे प्रिये! रामका सीतासे मिलाप कराऊ, राक्षसनिका इन्द्र अन्याय मार्गसे हर ले गया है, सो सर्वथा मैं लाऊंगा। तब ताने कहा—तुम्हारा और रावणका वह स्नेह नाहीं, स्नेह नष्ट भया। सो जैसैं स्नेह कहिए तैल ताके नष्ट होयवेकरि दीपककी शिखा नाहीं रहे है, तैसैं स्नेहके नष्ट होयवेकरि सम्बन्ध का व्यवहार नाहीं रहे है। अब तक तुम्हारा यह व्यवहार था—तुम जब लंका आवते तब नगर उछा-वतै गली गलीमें हर्ष होता, मन्दिर ध्वजानिकी पंक्तिसे शोभित होते, जैसैं स्वर्गमें देव प्रवेश करैं तैसैं तुम प्रवेश करते। अब रावण प्रचंड दशानन तुमविषै द्वेषरूप है सो निःसंदेह तुमकूं पकड़ेगा। तातैं

जब तिहारे उनके संधि होय तब मिलना योग्य है। तब हनुमान बोले हे विचक्षणे! जायकर ताका अभिप्राय जानना चाहूं हूं। और वह सीता सती जगत्में प्रसिद्ध है, अर रूपकर अद्वितीय है। जाहि देखकर रावणका सुमेरुसमान अचल मन चला है। वह महा पतिव्रता हमारे नाथकी स्त्री, हमारी माता समान ताका दर्शन किया चाहूं हूं। या भांति हनुमानने कही और सब सेना लंकासुन्दरीके समीप राखी और आप तो विवेकिनीसे विदा होयकर लंकाको सन्मुख भए। यह कथा गौतम स्वामी राजा श्रेणिकतैं कहैं हैं—हे राजन्! या लोकविषैं यह बड़ा आश्चर्य है जो यह प्राणी क्षणमात्रमें एक रसको छोडकर दूजे रसमें आ जाय। कभी विरसको छोडकर रसमें आ जाय, कबहूं रसको छोडकर विरसमें आ जाय। या जगतविषैं इन कर्मनिकी अद्भुत चेष्टा है। संसारी सर्व जीव कर्मोंके अधीन हैं। जैसैं सूर्य दक्षणायनसे उत्तरायण आवे तैसैं प्राणी एक अवस्थासें दूजी अवस्थामें आवैं।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रंथ, ताकी भाषावचनिकाविषैं हनुमान लंकासुन्दरीका लाभ वर्णन करनेवाला अडतालीसवां पर्व पूर्ण भया ॥ ५१ ॥

अथानन्तर गौतमस्वामी राजा श्रेणिकतैं कहैं हैं—हे श्रेणिक! यह पवनका पुत्र महाप्रभावके उदय कर सयुक्त, थोड़े ही सेवकनि सहित निःशंक लंकाविषैं प्रवेश करता भया। बहुरि प्रथमही विभीषण के मंदिरमें गया। विभीषणने बहुत सन्मान किया। फिर क्षणएक तिष्ठकर परस्पर वार्ता कर हनुमान कहता भया—जो रावण आधे भरतक्षेत्रका पति, सर्वका स्वामी, ताहि यह कहा उचित जो दरिद्र मनुष्य की न्याई चोरी कर परस्त्री लावे। जे राजा हैं सो मर्यादाके मूल हैं, जैसैं नदीका मूल पर्वत। राजा ही अनाचारी होय तो सर्वलोकमें अन्यायकी प्रवृत्ति होई। ऐसे चरित्र किए राजाकी सर्वलोकमें निंदा होय। तातैं जगत्के कल्याण निमित्त रावणकूं शीघ्रही कहो—न्यायको न उलंघे। यह कहो हे नाथ! जगतमें अपयशका कारण यह कर्म है। जिससे लोक नष्ट होय सो न करना। तुम्हारे कुल

का निर्मलचरित्र केवल पृथ्वीपर ही प्रशंसा योग्य नाहीं, स्वर्गमें भी देव हाथ जोड नमस्कारकर तिहारे बड़ोंकी प्रशंसा करैं हैं। तिहारा यश सर्वत्र प्रसिद्ध है। तब विभीषण कहता भया--मैं बहुत बार भाईकूं समझाया, परन्तु मानै नाहीं। अर जिस दिनसे सीता ले आया उस दिनसे हमसे बात भी न करै। तथापि तिहारे वचनसे भी बहुरि दबाय कर कहूंगा। परन्तु यह हठ उससे छूटना कठिन है। अर आज ग्यारवां दिन है, सीता निराहार है, जलहू नाहीं लेय है; तो भी रावणकूं दया नाहीं उपजी, या कामतैं विरक्त नाहीं होय है। ए बात सुन कर हनुमानकूं अति दया उपजी। प्रमद नामा उद्यान जहां सीता विराजै है, तहां हनुमान गया। ता वनकी सुन्दरता देखता भया। नवीन जे बेलनिके समूह तिनकरि पूर्ण, अर तिनके लाल पल्लव सोहैं, मानों सुन्दर स्त्रीके करपल्लव ही हैं। अर पुष्पनिके गुच्छों पर भ्रमर गुंजार करै हैं। और फलनिकरि शाखा नम्रीभूत होय रही हैं, अर पवनसे हालै हैं। कमलोंकर जहां सरोवर शोभित है, और देदीप्यमान बेलनिकरि वृक्ष वेष्टित हैं। मानों वह वन देववन समान है अथवा भोगभूमि समान है। पुष्पनिकी मकरन्दसे मंडित मानों साक्षात् नन्दनवन है। अनेक अद्भुतता-करि पूर्ण हनुमान कमललोचन वनकी लीला देखता संता सीताके दर्शन निमित्त आगे गया। चारों तरफ वनमें अवलोकन किया सो दूर होतैं सीताकूं देखा। सम्यक् दर्शन सहित महासती, ताहि देखकर हनुमान मनमें चितवता भया–यह रामदेवकी परम सुन्दरी महासती निर्धूम अग्नि समान असुवनसे भर रहे हैं नेत्र जाके, सोच सहित बैठी मुखसे हाथ लगाय, सिरके केश बिखर रहे हैं, कृश है शरीर जिसका। सो देखकर हनुमान विचारता भया। धन्य रूप या माताका लोकविषै, जीते हैं सर्वलोक जिसने, मानों यह कमलसे निकसी लक्ष्मी ही विराजै है। दुखके समुद्रमें डूब रही है तोहू या समान और कोई नारी नाहीं। मैं जैसे होय तैसे इसे श्रीरामसे मिलाऊं। इसके और रामके काज अपना तन दूं, याका और रामका विरह न देखूं। यह चितवनकर अपना रूप फेर, मंद मंद पांव धरता हनुमान आगे जाय श्रीरामकी मुद्रिका सीताके पास डारी। सो शीघ्रही उसे देख रोमांच होय आए

और कछुइक मुख हर्षित भया। सो समीप बैठी थी जो नारियां वे इसकी प्रसन्नताके समाचार जायकर
रावणकूं कहती भई। सो वह तुष्टायमान होय इनकूं वस्त्र रत्नादिक देता भया। और सीताकूं
प्रसन्नवदन जान कार्यकी सिद्धि चिंतता भया। सो मंदोदरीकूं सर्व अंतःपुरसहित सीतापैं पठाई। सो
अपने नाथके वचनसे सर्व अन्तःपुर सहित सीतापै आई। सो सीताकूं मन्दोदरी कहती भई—
हे बाले! आज तू प्रसन्न भई सुनी सो तैंने हमपर बड़ी कृपा करी। अब लोकका स्वामी रावण
उसे अंगीकार कर, जैसे देवलोककी लक्ष्मी इन्द्रकूं भजै। ये बचन सुन सीता कोपकर मन्दोदरीसे
कहती भई-हे खेचरी! आज मेरे पतिकी वार्ता आई है। मेरे पति आनन्दसे हैं इसलिये मोहि हर्ष उपजा
है। तब मन्दोदरीने जानी इसे अन्न जल किये ग्यारह दिन भए सो वायसे बकै है। तब सीता मुद्रिका
ल्यावनहारासूं कहती भई, हे भाई! मैं इस समुद्रके अन्तर्द्वीपविषैं भयानक वनमें पड़ी हूं सो कोऊ
उत्तम जीव मेरा भाई समान अतिवात्सल्य धारणहारा मेरे पतिकी मुद्रिका लेय आया है सो प्रकट
दर्शन देहु। तब हनुमान महा भव्य जीव सीताका अभिप्राय जान मनमें विचारता भया जो पहिले पराया
उपकार विचारे, बहुरि अतिकायर होय छिप रहे सो अधम पुरुष हैं। अर जे परजीवको आपदाविषैं खेद
खिन्न देख पराई सहाय करैं तिन दयावन्तोंका जन्म सफल है। तब समस्त रावणकी स्त्री मन्दोदरी
आदि देखे हैं। अर दूरहीसे सीताकूं देख हाथ जोड़ सीस निवाय नमस्कार करता भया। कैसा है हनु-
मान? महा निशंक, कांतिकर चन्द्रमासमान, दीप्तिकर सूर्यसमान, वस्त्र आभूषणकर मंडित, रूपकर
अतुल्य, मुकुटमें बानरका चिह्न, चन्दनकर चर्चित हैं सर्व अंग जाका, महा बलवान, वज्रवृषभनाराच-
संहनन, सुन्दर केश, रक्त होठ, कुण्डलके उद्योतकरि महा प्रकाशरूप मनोहर मुख, गुणवान, महाप्रताप
संयुक्त सीताके निकट आवता कैसा सोभता भया? मानों भामंडल भाई लेयवेकूं आया है। प्रथम ही
अपना कुल गोत्र माता पिताका नाम सुनायकर बहुरि अपना नाम कहा। बहुरि श्रीरामने जो कहा हुता
सो सर्व कहा। अर हाथ जोड बिनती करी—हे साध्वी! स्वर्गविमानसमान महलोंमें श्रीराम विराजे हैं।

परन्तु तिहारे विरहरूप समुद्रमें मग्न काहू ठौर रतिकूं नाहीं पावे है। समस्त भोगोपभोग तजे मौन धरे तिहारा ध्यान करै हैं जैसें मुनि शुद्धताकूं ध्यावें, एकाग्रचित्त तिष्ठै हैं। वे वीणाका नाद अर सुन्दर स्त्रियोंके गीत कदापि नाहीं सुनै हैं। अर सदा तिहारी ही कथा करै हैं। तिहारे देखवेके अर्थ केवल प्राणों को धरै हैं। यह वचन हनुमानके सुन सीता आनन्दकूं प्राप्त भई। बहुरि सजल नेत्र होय कहती भई (सीताके निकट हनुमान महा विनयवान हाथ जोड खडा हैं) जानकी बोली–

हे भाई! दुःखके सागरविषै पडी हू अशुभके उदयकरि। पतिके समाचार सुन तुष्टायमान भई। तोहि कहा दूं? तब हनुमान प्रणामकर कहता भया, हे जगतपूज्य! तिहारे दर्शन ही से मोहि महा लाभ भया। तब सीता मोती समान आंसूनिकी बूंद नाखती हनुमानसे पूछती भई–हे भाई! यह नगर ग्राह आदि अनेक जलचरोंकर भरा महा भयानक समुद्र ताहि उलंघकर तू कैसे आया? अर सांचे कहो मेरा प्राणनाथ तैंने कहां देख्या? अर लक्ष्मण युद्धविषै गया हुता सो कुशल क्षेमसूं है। अर मेरा नाथ कदाचित् तोहि यह संदेशा कहकर परलोक प्राप्त हुवा होय अथवा जिन मार्गविषै महा प्रवीण सकल परिग्रहका त्यागकर तप करता होय, अथवा मेरे वियोगतैं शरीर शिथिल होय गया, अर अंगरीतैं मुद्रिका गिर पडी होय, यह मेरे विकल्प है। अब तक मेरे प्रभुका तोसों परिचय न हुता सो कौन भांति मित्रता भई। सो सब मोसूं विशेषता कर कहो। तब हनुमान हाथ जोड़ सिर निवाय कहता भया–हे देवि! सूर्यहास खड्ग लक्ष्मणकूं सिद्ध भया अर चन्द्रनखाने धनीपै जाय धनीकूं क्रोध उपजाया। सो खरदूषण दंडकवनविषै युद्ध करवेकूं आया। अर लक्ष्मण उससे युद्ध करवेकूं गये। सो तो सब वृत्तांत तुम जानो हो? बहुरि रावण आया अर आप श्रीरामके पास विराजती हुतीं। सो रावण यद्यपि सर्व शास्त्रका वेत्ता हुता, अर धर्म अधर्मका स्वरूप जाने हुता, परन्तु आपकूं देखकर अविवेकी होय गया। समस्त नीति भूल गया, बुद्धि जाती रही, तिहारे हरिवेके कारण कपटकर सिंहनाद किया सो सुनकर राम लक्ष्मणपै गये। अर यह पापी तुमकूं हर ले आया। बहुरि लक्ष्मण रामसों कही–तुम क्यों आये,

शीघ्र जानकीपै जावहु। तब आप स्थानक आए। तुमकूं न देखकर महा खेदखिन्न भए। तिहारे ढूंढनेके कारण वनविषै बहुत भ्रमे। बहुरि जटायुको मरता देखा तब ताहि णमोकार मंत्र दिया। अर चार आराधना सुनाय सन्यास देय पक्षीका परलोक सुधारा। बहुरि तिहारे विरहकर महादुखी सोचमें पड़े। अर लक्ष्मण खरदूषणकूं हन रामपै आया, धीर्य बंधाया, अर चन्द्रोदयका पुत्र विराधित लक्ष्मण से युद्ध ही विषै आय मिला हुता। बहुरि सुग्रीव रामपै आया। अर साहसगति विद्याधर जो सुग्रीव का रूपकर सुग्रीवकी स्त्रीका अर्थी भया हुता सो रामकूं देख साहसगतिकी विद्या जाती रही। सुग्रीव का रूप मिट गया। अर साहसगति रामसूं लडा सो साहसगतिकूं रामने मारा। सुग्रीवका उपकार किया। तब सबने मोहि बुलाय रामसूं मिलाया। अब मैं श्रीरामका पठाया तिहारे छुडाइवे अर्थ यहां आया हूं। परस्पर युद्ध करना निःप्रयोजन है। कार्यकी सिद्धि सर्वथा नयकर करना। अर लंकापुरीका नाथ दयावान् है, विनयवान् है, धर्म अर्थ कामका वेत्ता है, कोमल हृदय है, सौम्य है, वक्रतारहित है, सत्यवादी महाधीरवीर है, सो मेरा वचन मानेगा। तोहि रामपै पठावेगा। याकी कीर्ति महा निर्मल पृथ्वीविषै प्रसिद्ध है, अर यह लोकापवादतैं डरै है। तब सीता हर्षित होय हनुमानसे कहती भई—हे कपिध्वज! तो सरीखे पराक्रमी धीरवीर विनयवान मेरे पतिके निकट केतेक हैं? तब मन्दोदरी कहती भई—हे जानकी! तैं यह कहा समझ कर कही। तू याहि न जानै है तातैं ऐसा पूछै है। या सरीखा भरतक्षेत्रमें कौनहै? या क्षेत्र में यह एक ही है। यह महा सुभट युद्धमें कई बार रावणका सहाई भया है। यह पवनका पुत्र अंजनी का सुत रावणका भानजा जमाई है। चन्द्रनखाकी पुत्री अनंगकुसुमा परणी है या एकने अनेक जीते ५७३
हैं। सदा लोक याके दर्शनकूं बांछै हैं। चन्द्रमाकी किरणवत् याकी कीर्ति जगत्में फैल रही है। लंका का धनी याहि भाईनितैं भी अधिक गिनै है। यह हनुमान पृथ्वीविषै प्रसिद्ध गुणनिकर पूर्ण है। परंतु यह बड़ा आश्चर्य है कि भूमिगोचरियोंका दूत होय आया है। तब हनुमान कही-तुम राजा मयकी पुत्री अर रावणकी पटराणी दूती होयकर आई हो। जापतिके प्रसादतैं देवनिकेसे सुख भोगे, ताहि अकार्यविषै प्रवर्तते

मनै नाहीं करो हो ? और ऐसे कार्यकी अनुमोदना करो हो ! अपना वल्लभ विषका भरा भोजन करै ताहि नाहीं निवारो हो । जो अपना भला बुरा न जानै ताकूं जीवन्ध्य पशु समान है । अर तिहारा सौभाग्यरूप सबतैं अधिक, अर पति परस्त्रीरत भया ताका दूतीपना करौ हो ! तुम सब बातनिविषै प्रवीण, परमबुद्धिमती हुती सो प्राकृत जीवनिसमान अविधि कार्य करो हो । तुम अर्धचक्रीकी महिषी कहिए पटराणी हो, सो अब से महिषी कहिए भैंस समान जानूं हूं । यह वचन हनुमानके मुखतैं सुन मंदोदरी क्रोधरूप होय बोली—अहो ! तू दोषरूप है, तेरा वाचालपना निरर्थक है । जो कदाचित् रावण यह बात जानै कि यह रामका दूत होय सीतापै आया है, तो जो काहूसे न करै ऐसी तोसों करै । अर जाने रावणका बहनेऊ चन्द्रनखाका पति मारा ताके सुग्रीवादिक सेवक भए, रावणकी सेवा छांडी सो ये मंदबुद्धि हैं रंक कहा करेंगे ? इनकी मृत्यु निकट आई है, तातैं भूमिगोचरीके सेवक भए हैं । ते अतिमूढ़, निर्लज्ज, तुच्छवृत्ति, कृतघ्नी, वृथा गर्वरूप होय मृत्युके समीप तिष्ठै हैं ।

ये वचन मंदोदरीके सुनकर सीता क्रोधरूप होय कहती भई–हे मंदोदरी ! तू मंदबुद्धि है जो वृथा ऐसे कहै है । तैं मेरा पति अद्भुत पराक्रमका धनी कहा नाहीं सुना है ? शूरवीर अर पंडितनिकी गोष्ठीविषै मेरा पति मुख्य गाइए है । जाके वज्रावर्त धनुषका शब्द रण संग्रामविषै सुनकर महा रण धीर योधा धीर्य नाहीं धारे हैं, भयसे कम्पायमान होयकर दूर भागै हैं । अर जाका लक्ष्मण छोटा भाई लक्ष्मीका निवास, शत्रुपक्षके क्षय करवेकूं समर्थ, जाके देखते ही शत्रु दूर भाग जावैं । बहुत कहिवे-करि कहा ? मेरा पति राम लक्ष्मणसहित समुद्र तरकर शीघ्र ही आवै है । सो युद्ध विषै थोड़े ही दिननिविषै तू अपने पतिकूं मूवा देखेगी । मेरा पति प्रबल पराक्रमका धारी है । तू पापी भरतारकी आज्ञारूप दूती होय आई है सो शिताब ही विधवा होयगी, अर बहुत रुदन करेगी ।

ये वचन सीताके मुखतैं सुनकर मन्दोदरी राजा मयकी पुत्री अतिक्रोधकूं प्राप्त भई । अठारा हजार राणी हाथोंकर सीताके मारवेकूं उद्यमी भईं और अति क्रूरवचन कहती सीता पर आईं । तब

हनुमान बीच आनकर तिनकूं थांभी जैसे पहाड़ नदीके प्रवाहकूं थांभे। ते सब सीताको दुखका कारण वेदनारूप होय हनिवेकूं उद्यमी भई थी सो हनुमानने वैद्यरूप होय निवारा। तब ये सब मन्दोदरी आदि
 रावणकी राणी मानभंग होय रावणपै गई। क्रूर हैं चित्त जिनके। तिनकूं गए पीछे हनुमान सीतासूं
 नमस्कार करि आहारके निमित्त विनती करता भया—हे देवि! यह सागरांत पृथ्वी श्रीरामचन्द्रकी है
 तातैं यहांका अन्न उनहीका है, वैरिनिका न जानो। या भांति हनुमानने सम्बोधी अर प्रतिज्ञा भी यही हुती कि जो पतिके समाचार सुनूं तब भोजन करूं। सो समाचार आए ही। तब सीता सब आचारमें विचक्षण, महा साध्वी, शीलवंती, दयावंती, देशकालकी जाननेवारी, आहार लेना अंगीकार करती भई। तब हनुमानने एक ईरा नामकी स्त्री कुलपालिकाकूं आज्ञा करी जो शीघ्र ही श्रेष्ठ अन्न लावो। अर हनुमान विभीषणके पास गया, ताहीके भोजन किया, अर तासूं कही सीताको भोजनकी तैयारी कराय आया हूं। अर ईरा जहां डेरे हुते वहां गई। सो चार मुहूर्तमें सर्व सामग्री लेकर आई। दर्पण समान पृथ्वीकूं चन्दनसूं लीपा और महा सुगन्ध विस्तीर्ण निर्मल सामग्री और सुवर्णादिकके भाजन में भोजन धराय लाई। कईएक पात्र घृतके भरे हैं, कईएक चावलनिकरि भरे हैं, चावल कुन्दके पुष्प समान उज्ज्वल, और कईएक पात्र दालसों भरे हैं। और अनेक रस नाना प्रकारके व्यंजन दूध दही महा स्वादरूप भांति भांतिका आहार। सो सीता बहुत क्रिया संयुक्त रसोई कर, ईरा आदि समीपवर्तियोंको यहां ही न्योते। हनुमानसे भाईका भाव कर अति वात्सल्य किया। महा श्रद्धासंयुक्त है अंतःकरण जाका ऐसी सीता महा पतिव्रता भगवानकूं नमस्कारकर अपना नियम समाप्तकर, त्रिविध पात्रनिकूं भोजन करावनेका अभिलाषकर महा सुन्दर श्रीराम तिनकूं हृदयविषै धार, पवित्र है अंग जाका, दिनविषै शुद्ध आहार करती भई। सूर्यका उद्योत होय तबही पवित्र मनोहर पुण्यका बढ़ावनहारा आहार योग्य है। रात्रिकूं योग्य नाहीं? सीता भोजन कर चुकी अर कछु इक विश्रामकूं प्राप्त भई, तब हनुमानने नमस्कारकर विनती करी—हे पतिव्रते! हे पवित्रे! हे गुणभूषणे! मेरे कांधे चढहु

अर समुद्र उलंघ क्षण मात्रमें रामके निकट ले जाऊं। तिहारे ध्यानमें तत्पर महाविभवसंयुक्त जे राम तिनकूं शीघ्र ही देखहु। तिहारे मिलापकर सबहीकूं आनन्द होई। तब सीता रुदन करती कहती भई—हे भाई! पतिकी आज्ञा विना मेरा गमन योग्य नाहीं। जो पूछी कि तू बिना बुलाए क्यों आई तो मैं कहा उत्तर दूंगी। तातैं रावणने उपद्रव तो सुना होयगा सो अब तुम जावो, तोहि यहां विलम्ब उचित नाहीं। मेरे प्राणनाथके समीप जाय मेरी तरफसे हाथ जोड नमस्कारकर मेरे मुखके वचन या भांति कहियो—हे देव! एक दिन मो सहित आपने चारण मुनिकी बन्दना करी; महा स्तुति करी, अर निर्मलजलकी भरी सरोवरी कमलनिकर शोभित जहां जलक्रीडा करी। ता समय महा भयंकर एक वनका हाथी आया सो वह हाथी महाप्रबल आपने क्षण मात्रमें वशकर सुन्दर क्रीडा करी। हाथी गर्वरहित निश्चल किया। अर एक दिन नन्दन वन समान वनविषै मैं वृक्षकी शाखाकूं नवाती क्रीडा करती हुती सो भ्रमर मेरे शरीरकूं आय लगे। सो आपने अति शीघ्रताकर मुझे भुजासे उठाय लई, अर आकुलता रहित करी। अर एक दिन सूर्य उद्योत समय आपके समीप सरोवरके तट तिष्ठती थी तब आप शिक्षा देयवेके काज कछू इक मिसकर कोमल कमल नालकी मेरे मधुरसी दीनी। अर एक दिन पर्वतपर अनेक जातिके वृक्ष देखे। मैं आपकूं पूछी—हे प्रभो! यह कौन जातिके वृक्ष हैं, महा मनोहर? तब आप प्रसन्न मुखकर कही—हे देवी! ये नन्दनी वृक्ष है। अर एक दिन करणकुण्डल नामा नदीके तीर आप विराजे हुते, अर मेह हुता, ता समय मध्याह्न समय चारण मुनि आए सो तुम उठ कर महा भक्तिकर मुनिकूं आहार दिया। तहां पंचाश्चर्य भए, रत्नवर्षा, कल्प वृक्षोंके पुष्पनिकी वर्षा, सुगन्धजलकी वर्षा, शीतल मन्द सुगन्ध पवन, दुन्दुभी बाजे, अर आकाशविषै देवनिने यह ध्वनि करी—धन्य ये पात्र, धन्य ये दाता, धन्य ये दान। ये सब रहस्यकी बातें कही अर चूडामणि सिरतैं उतार दिया जो याके दिखानेसे उनकूं विश्वास आवेगा। अर यह कहियो—मैं जानूं हूं आपकी कृपा मोपै अत्यन्त है तथापि तुम अपने प्राण यत्नसूं राखियो। तिहारेसे मेरा वियोग भया। अब तिहारे यत्न

पद्म पुराण ५७७

से मिलाप होयगा । ऐसा कह सीता रुदन करती भई। तब हनुमानने धीर्य बंधाया अर कही–हे माता! जो तुम आज्ञा करोगी सो ही होयगा और शीघ्र ही स्वामीसों मिलाप होयगा। यह कह हनुमान सीतासे विदा भया। अर सीताने पतिकी मुद्रिका अंगुरीमें पहिर ऐसा सुख माना मानों पतिका समागम भया।

अथानन्तर वनकी नारी हनुमानकूं देखकर आश्चर्यकूं प्राप्त भईं । अर परस्पर ऐसी बात करती भईं–यह कोई साक्षात् कामदेव है अथवा देव है सो वनकी शोभा देखवेकूं आया है ? तिनमें कोई एक काम कर व्याकुल होय बीन बजावती भईं, किन्नरी देवियोंकेसे हैं स्वर जिनके, कोई इक चन्द्र वदनी बामें हस्तविषै दर्पण राख अर याका प्रतिबिम्ब दर्पणमें देखती भई। देखकर आसक्त मन भई। या भांति समस्त स्त्रियोंको संभ्रम उपजाया, हार माला सुन्दर वस्त्र धरें, देदीप्यमान अग्निकुमार देववत् सोहता भया।

इनके वनविषै अनेक वार्ता रावणने सुनी । तब क्रोधरूप होय रावण महानिर्दयी किंकर युद्धविषै जे प्रवीण हुते, ते पठाए । अर तिनकूं यह आज्ञा करी कि मेरी क्रीडाका जो पुष्पोद्यान तहां मेरा कोई एक द्रोही आया है सो अवश्य मार डारियो । तब ये जायकर वनके रक्षकनिकूं कहते भए–हो वनके रक्षक हो ! तुम कहा प्रमादरूप होय रहे हो ? कोउ उद्यानविषै दुष्ट विद्याधर आया है सो शीघ्र ही मारना अथवा पकडना । वह महा अविनयी है । वह कौन है, कहां है ? ऐसे किंकरनिके मुखतैं ध्वनि निकसी सो हनुमानने सुनी । अर धनुषके धरणहारे, शक्तिके धरणहारे, गदाके धरणहारे, खड्गके बरछीके धरणहारे अनेक लोग आवते हनुमानने देखे । तब पवनका पूत सिंहहूतैं अधिक है पराक्रम ५७७
जाका मुकुटविषै रत्नजडित बानरका चिह्न, ताकर प्रकाश किया है आकाश जाने, आप उनकूं अपनारूप दिखाया, उगते सूर्य समान क्रोध होंठ डसता लाल नेत्र। तब याके भयकरि सब किंकर भागे, तब और क्रूर सुभट आए। शक्ति तोमर खड्ग चक्र गदा धनुष इत्यादि आयुध करविषै धरें अर अनेक शस्त्र चलावते आए। तब अंजनीका पुत्र शस्त्ररहित हुता सो वनके जे वृक्ष ऊंचे ऊंचे थे उनके समूह

उपाड़े अर पर्वतनिकी शिला उपाड़ी सो रावणके सुभटनिपर अपनी भुजानिकर वृक्ष अर शिला चलाईं, मानों काल ही है, सो बहुत सामंत मारे। कैसी है हनुमानकी भुजा ? महा भयंकर जो सर्प ताके फण समान है आकार जिनका ! शाल वृक्ष, पीपल, बड़, चम्पा, नीव, अशोक, कदम्ब, कुन्द, नाग अर्जुन, धव, आम, लोध, कटहल बड़े२ वृक्ष उपार२ अनेक योधा मारे। कईएक शिलावोंसे मारे, कई एक मुक्कों अर लातोंसे पीस डारे। समुद्रसमान रावणके सुभटोंकी सेना क्षणमात्रविषै बखेर डारी। कईएक मारे, कईएक भागे। हे श्रेणिक ! मृगनिके जीतवेकूं मृगराजका कौन सहाई होय अर शरीर बलहीन होय तो घनोंकी सहायकर कहा ? ता वनके सबही भवन अर वापिका अर विमान सारिखे उत्तम मंदिर सब चूर डारे। केवल भूमि रही गई। वनके मन्दिर अर वृक्ष विध्वंस किए, सो मार्ग होय गया जैसे समुद्र सूख जाय अर मार्ग होय जाय। फोरि डारी है हाटोंकी पंक्ति, अर मारे हैं अनेक किंकर, सो बाजार ऐसा होय गया मानों संग्राम की भूमि है। उत्तुंग जे तोरण सो पड़े, अर ध्वजावों की पंक्ति पड़ी, सो आकाशसे मानों इन्द्रधनुष पड़ा है। अर अपनी जंघातैं अनेक वर्णके रत्ननिके महिल ढाहे सो अनेक वर्णके रत्ननिकी रजकर मानों आकाशविषै हजारों इन्द्रधनुष चढ़े हैं। अर पायनिकी लातनकरि पर्वतसमान ऊंचे घर फोर डारे। तिनका भयानक शब्द होता भया। अर कई एक तो हाथनिसे मारे, अर पगोंसे मारे, अर छातोंसे अर कांधेसे। या भांति रावणके हजारों सुभट मारे। सो नगरविषै हाहाकार भया। अर रत्नोंके महिल गिर पड़े, तिनका शब्द भया। अर हाथिनिके थम्भ उपार डारे, अर घोड़े पवन मंडल, पानोंकी न्याईं उड़े२ फिरे हैं। अर वापी फोर डारीं। सो कीचड़ रह गया। समस्त लंका व्याकुल भई मानों चाक चढाई है। लंकारूप सरोवर राक्षसरूप मीनोंसे भरा, सो हनुमानरूप हाथीने गाह डारा। तब मेघवाहन बक्तर पहिर बड़ी फौज लेय आया अर ताके पीछे ही इन्द्रजीत आया सो हनुमान उनसे युद्ध करने लगा। लंकाकी बाह्यभूमिविषै महायुद्ध भया, जैसा खरदूषणके अर लक्ष्मणके युद्ध भया हुता। अर हनुमान चार घोड़ोंके रथपर चढ़ धनुषबाण

लेय राक्षसनिकी सेना पर दौडा।

तब इन्द्रजीतने बहुत बेर लग युद्धकर हनुमानकूं नागफांससे पकड्या अर नगरमें ले आया। सो याके आयबे पहिलेही रावणके निकट हनुमानकी पुकार होरही थी। अनेक लोग नानाप्रकारकरि पुकार कर रहे हुते कि सुग्रीव का बुलाया यह अपने नगरतैं किहकंधापुर आया, रामसों मिला अर तहांते या ओर आया सो महेन्द्रकूं जीता, अर साधवोंके उपसर्ग निवारे, दधिमुखकी कन्या रामपै पठाई, अर वज्रमई कोट विध्वंसा, वज्रमुखकूं मारा, अर ताकी पुत्री लंकासुन्दरी अभिलाषवंती भई सो परनी, अर ता संग रमा, अर पुष्पनामा वन विध्वंसा, वनपालक विह्वल करे, अर बहुत सुभट मारे, अर घटरूप जे स्तन तिनकर सींच २ मालियोंकी स्त्रियोंने पुत्रोंकी नाईं जे वृक्ष बढाए हुते ते उपार डारे, अर वृक्षोंसे बेल दूरकरी, सो विधवा स्त्रियोंकी न्याईं भूमि विषै पड़ी, तिनके पल्लव सूख गए, अर फल फूलोंसे नमीभूत नानाप्रकारके वृक्ष मसानकेसे वृक्ष करडारे। सो यह अपराध सुन रावणकूं अतिकोप भया हुता इतनेमें इन्द्रजीत हनुमानकूं लेकर आया। सो रावणने याकूं लोहकी सांकलनिकर बंधाया अर कहता भया—यह पापी निर्लज्ज दुराचारी है। अब याके देखवेकर कहा? यह नाना अपराधका करणहारा। ऐसे दुष्टको क्यों न मारिये? तब सभाके लोक सबही माथा धुनकर कहते भए—हे हनुमान! जाके प्रसाद तैं पृथ्वीविषै तू प्रभुताकूं प्राप्त भया, ऐसे स्वामीके प्रतिकूल होय भूमिगोचरीका दूत भया। रावण की ऐती कृपा पीठ पीछे डार दई। ऐसे स्वामीकूं तज, जे भिखारी निर्धन पृथ्वीमें भ्रमते फिरते दोनों वीर तिनका तू सेवक भया। अर रावणने कहा कि तू पवनका पुत्र नाहीं काहू औरकर उपजा है।
तेरी चेष्टा अकुलीनकी प्रत्यक्ष दीखै है। जे जार जात हैं तिनके चिह्न अंगमें नाहीं दीखै हैं, जब अनाचारको आचरैं तब जानिए। यह जारजात है। कहा केशरी सिंहका बालक स्यालका आश्रय करे? नीचका आश्रयकर कुलवंत पुरुष न जीवें। अब तू राजद्वारका द्रोही है, निग्रह करवे योग्य है। तब हनुमान यह वचन सुन हंसा अर कहता भया—न जानिए कौनका निग्रह होय। या दुर्बुद्धिकर तेरी

मृत्यु नजीक आई, कईएक दिनविषैं दृष्टि परैगी। लक्ष्मणसहित श्रीराम बड़ी सेनासे आवै है सो किसी से रोके न जांय जैसैं पर्वतनितैं मेघ न रुकैं। अर जैसैं कोऊ नानाप्रकारके अमृत समान आहार कर तृप्त न भया अर विषकी एक बून्द भखैं नाशकूं प्राप्त होय तैसैं हजारा स्त्रीनिकर तू तृप्तायमान न होय अर परस्त्रीकी तृष्णाकर नाशकूं प्राप्त होयगा। जो शुभ अर अशुभकर प्रेरी बुद्धि होनहार माफिक होय है सो इन्द्रादिकर भी अन्यथा न होय। दुर्बुद्धि विषैं सैकडा प्रियवचनकर उपदेश दीजिये तौहु न लगै, जैसा भवितव्य होय सोही होय। विनाशकाल आवै तब बुद्धिका नाश होय। जैसैं कोऊ प्रमादी विष का भरा सुगन्ध मधुरजल पीवै तो मरणकूं पावै तैसैं हे रावण! तू परस्त्रीका लोलुपी नाशकूं प्राप्त होयगा। तू गुरु परिजन वृद्ध मित्र प्रिय बांधव मंत्री सबनिके वचन उलंघकर पापकर्मविषैं प्रवृत्ते है, सो दुराचाररूप समुद्रविषैं कामरूप भ्रमरके मध्य आय नरकके दुख भोगेगा। हे रावण! तू रत्नश्रवा राजाके कुलक्षय नीचपुत्र भया। तोकर राक्षसवंशिनिका क्षय होयगा। आगैं तेरे वंशमें बड़े बड़े मर्यादा के पालनहारे, पृथ्वीविषैं पूज्य, मुक्तिके गमन करणहारे भए, अर तू उनके कुलविषैं पुलाक कहिए न्यून पुरुष भया। दुर्बुद्धि मित्रकूं कहता निरर्थक है। जब हनुमानने यह वचन कहे तब रावण क्रोधकर आरक्त होय दुर्वचन कहता भया—यह पापी मृत्युसे नाहीं डरै है, बाचाल है। तातैं शीघ्र ही याके हाथ पांव ग्रीवा सांकलनिसूं बांधकर अर कुवचन कहते ग्रामविषैं फेरो। क्रूर किंकर लार घर घर यह वचन कहो—भूमिगोचरियोंका दूत आया है याहि देखहु, अर श्वान बालक लार सो नगरकी लुगाई धिक्कार देवैं। अर बालक धूर उडावैं, अर स्वान भौंकैं। सर्व नगरी विषैं या भांति इसे फेरो, दुख देवो। तब वे रावणकी आज्ञाप्रमाण कुवचन बोलते ले निकसे। सो यह बन्धन तुडाय ऊंचा चल्या जैसैं यति मोहफांस तोड़ मोक्षपुरीकूं जांय। आकाशतैं उछल अपने पगोंकी लातोंकर लंकाका बड़ा द्वार ढाया तथा और एक छोटे दरवाजे ढाहे। इन्द्रके महिलके तुल्य रावणके महिल हनुमानके चरणनिके घातसे बिखर गए जिनके बड़े बड़े स्तम्भ हुते। अर महलके आस पास रत्न सुवर्णका कोट हुता सो चूर

डारा। जैसैं वज्रपातके मारे पर्वत चूर्ण होजांय तैसैं रावणके घर हनुमानरूप वज्रके मारें चूर्ण होय गए। यह हनुमानके पराक्रम सुन सीताने प्रमोद किया अर हनुमानकूं बंधा सुन विषाद कियो हुता तब वज्रोदरी पास बैठी हुती ताने कहा—हे देवी! वृथा काहेकूं रुदन करै? यह सांकल तुडाय आकाश में चला जाय है सो देख। तब सीता अति प्रसन्न भई। अर चित्तमें चितवती भई यह हनुमान मेरे समाचार पतिपै जाय कहेगा सो आसीस देती भई, अर पुष्पांजलि नाखती भई कि तू कल्याणसे पहुँचियो, समस्त ग्रह तुझे सुखदाई होय, तेरे विघ्न सकल नाशकूं प्राप्त होय, तू चिरंजीव हो। या भांति परोक्ष असीस देती भई। जे पुण्याधिकारी हनुमान सारिखे पुरुष हैं वे अद्भुत आश्चर्यकूं उपजावै हैं। कैसे हैं वे पुरुष? जिन्होंने पूर्वजन्ममें उत्कृष्ट तपव्रत आचरे हैं, अर सकलभवमें विस्तरे हैं ऐसी कीर्तिके धारक हैं, अर जो काम किसीसे न बनै सो करवे समर्थ हैं, अर चितवनमें न आवै ऐसा जो आश्चर्य उसे उपजावै हैं। इसलिए सर्व तजकर जे पंडितजन हैं वे धर्मकूं भजो। अर जे नीचकर्म हैं वे खोटेफलके दाता हैं, इसलिए अशुभकर्म तजो। अर परमसुखका आस्वाद तामें आसक्त जे प्राणी, सुन्दर लीलाके धारक वे सूर्यके तेजकूं जीतैं ऐसैं होय हैं।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रंथ, ताकी भाषावचनिकाविषै हनुमानका लंकासूं पाछा आवनेका वर्णन करनेवाला तिरपनवां पर्व पूर्ण भया ॥ ५३ ॥

अथानन्तर हनुमान अपने कटकमें आय, किहकन्धापुरकूं आया, लंकापुरीमें विघ्नकर आया, ध्वजा छत्रादि नगरीकी मनोग्यता हर आया। किहकन्धापुरके लोग हनुमानकूं आया जान बाहिर निकसे। नगरमें उत्साह भया, यह धीर उदार है पराक्रम जाका, नगरमें प्रवेश करता भया। सो नगरके नर नारियोंको याके देखवेका अतिसंभ्रम भया। अपना जहां निवास तहां जाय सेनाके यथायोग्य डेरे कराए। राजा सुग्रीवने सब वृत्तांत पूछा, सो ताहि कहा। बहुरि रामके समीप गए। राम यह चितवन

कर रहे हैं कि हनुमान आया है सो यह कहेगा कि तिहारी प्रिया सुखसू जीवै है। हनुमानने ताही समय आय रामकू देखा—महाक्षीण, वियोगरूप अग्निसे तप्तायमान, जैसे हाथी दावानल कर व्याकुल होय महाशोकरूप गर्तविषै पड़े। तिनकू नमस्कारकर हाथ जोड हर्षित वदन होय सीताकी वार्ता कहता भया। जेते रहस्यके समाचार कहे हुते ते सब वरणन किये, अर सिरका चूडामणि सौंप निश्चिंत भया। चिन्ता कर बदनकी और ही छाया होय रही है, आंसू पड़े हैं। सो राम याहि देखकर रुदन करने लग गए अर उठकर मिले। श्रीराम यों पूछे हैं—हे हनुमान! सत्य कहो, मेरी स्त्री जीवै है? तब हनुमान नमस्कार कर कहता भया। हे नाथ! जीवै है, आपका ध्यान करै है। हे पृथ्वीपते! आप सुखी होवो, आपके विरह कर वह सत्यवती निरंतर रुदन करै है, नेत्रनिके जलकर चतुरमास कर राखा है। गुणके समूहकी नदी सीता, ताके केश बिखर रहे हैं, अत्यन्त दुखी है, अर बारम्बार निश्वास नाखती चिताके सागरमें डूब रही है। स्वभावहीकरि दुर्बल शरीर है, अर विशेष दुर्बल होय गई है। रावणकी स्त्री आराधैं हैं परन्तु उनसे संभाषण करै नाहीं। निरंतर तिहारा ही ध्यान करै है। शरीर का संस्कार सब तज बैठी है। हे देव! तिहारी राणी बहुत दुःखसे जीवै है। अब तुमकू जो करना होय सो करो। ये हनुमानके वचन सुन श्रीराम चितावान भए। मुखकमल कुमलाय गया। दीर्घ निश्वास नाखते भए। अर अपने जीतव्यकू अनेक प्रकार निंदते भए। तब लक्ष्मणने धीर्य बंधाया। हे महाबुद्धि! कहा सोच करो हो? कर्तव्यविषै मन धरो। अर लक्ष्मण सुग्रीवसू कहता भया—हे किहकन्धाधिपते! तू दीर्घसूत्री है। अब सीताके भाई भामंडलकू शीघ्र ही बुलावहु। रावणकी नगरी हमकू अवश्य ही जाना है। कै तो जहाजनिकरि समुद्र तिरैं अथवा भुजानितैं। ये बात सुन सिंहनाद नामा विद्याधर बोला—आप चतुर महाप्रवीण होयकर ऐसी बात मत कहो। अर हम तो आपके संग हैं परन्तु ऐसा करना जाविषै सबका हित होय। हनुमानने जाय लंकाके वन विध्वंसे, अर लंका विषै उपद्रव किया सो रावणकू क्रोध भया है, सो हमारी तो मृत्यु आई है। तब जामवंत बोला तू

नाहर होयकर मृगकी न्याई कहा कायर होय है ? अब रावण हू भयरूप है अर वह अन्यायमार्गी है । वाकी मृत्यु निकट आई है । अर अपनी सेनामें भी बड़े बड़े योधा महारथी हैं, विद्या विभवकर
 पूर्ण हैं, हजारां आश्चर्यके कार्य जिन्होंने किये है, तिनके नाम धनगति, एकभूत, गजस्वन, क्रूरकेलि,
 किलभीम, कुण्ड, गोरति, अंगद, नल, नील, तडिद्वक्त्र, मन्दर, अशनी, अर्णव, चन्द्रज्योति, मृगेन्द्र,
 बज्रदृष्टि, दिवाकर, अर इल्काविद्या, लांगूलविद्या, दिव्यशस्त्र विषै प्रवीण, जिनके पुरुषार्थमें विघ्न नाहीं ऐसे हनुमान महाविद्यावान, अर भामंडल विद्याधरोंका ईश्वर, महेन्द्रकेतु अति उग्र है पराक्रम जाका, प्रसन्नकीर्ति उपवति, अर ताके पुत्र महा बलवान, तथा राजा सुग्रीवके अनेक सामंत महा बलवान हैं, परम तेजके धारक वरतैं हैं, अनेक कार्यके करणहारे, आज्ञाके पालनहारे । ये वचन सुनकर विद्याधर लक्ष्मणकी ओर देखते भए । अर श्रीरामकू देखा सो सौम्यतारहित महाविकरालरूप देखा अर भृकुटी चढ़ी महा भयंकर मानों कालके धनुष ही हैं । श्रीराम लक्ष्मण लंकाकी दिशा, क्रोधके भरे लाल नेत्रकर देखे मानों राक्षसनिके क्षय करनेके कारण ही हैं । बहुरि वही दृष्टि धनुषकी ओर धरी । अर दोनों भाईयोंका मुख महा क्रोधरूप हो गया । कोप कर मंडित भये, सिरके केश ढीले होय गये मानों कमलके स्वरूप ही हैं, जगतकू तामसरूप तमकर व्याप्त किया चाहे हैं—ऐसा दोऊनिका मुख ज्योतिके मंडल मध्य देख सब विद्याधर गमनकू उद्यमी भए । संभ्रमरूप है चित्त जिनका, राघवका अभिप्राय जानकर सुग्रीव हनुमानादि सर्व नानाप्रकारके आयुध अर सम्पदा कर मंडित चलवेकू उद्यमी
भए । राम लक्ष्मण दोनों भाईनिके प्रयाण होनेके वादित्रनिसे समूहके नादकर पूरित हैं दशोंदिशा, सो
मार्गसिर वदी पंचमीके दिन सूर्य उदयके समय महा उत्साह सहित भले २ शकुन भए । ता समय प्रयाण करते भए । कहा कहा शकुन भए कहिए हैं—निर्धूम अग्निकी ज्वाला दक्षिणावर्त देखी, अर मनोहर शब्द करते मोर, अर वस्त्राभूषण संयुक्त सौभाग्यवती नारी, सुगन्ध पवन, निर्ग्रंथ मुनि, छत्र, तुरंगोंका गम्भीर हींसना, घंटाका शब्द, दहीका भरा कलश, काग पांख फैलाए मधुर शब्द करता, भेरी अर शंख

का शब्द, अर तिहारी जय होवे, सिद्धि होवे, नन्दो बधो ऐसे बचन इत्यादि शुभ शकुन भए। राजा सुग्रीव श्रीरामके संग चलवेकूं उद्यमी भए। सुग्रीवके ठौर २ सुविद्याधरोंके समूह आए। कैसा है सुग्रीव ? शुक्ल पक्षके चन्द्रमा समान है प्रकाश जाका। नानाप्रकारके विमान, नानाप्रकारकी ध्वजा, नानाप्रकारके वाहन, नानाप्रकारके आयुध उन सहित बड़े २ विद्याधर आकाशविषै जाते शोभते भए। राजा सुग्रीव, हनुमान शल्य, दुर्मर्षण, नल, नील, काल, सुषेण, कुमुद इत्यादि अनेक राजा श्रीरामके लार भए। तिनके ध्वजावों पर देदीप्यमान रत्नमई वानरोंके चिह्न मानो आकाशके ग्रसवेकूं प्रवरते हैं। अर विराधितकी ध्वजापर नाहरका चिह्न नीझरने समान देदीप्यमान, अर जांबूकी ध्वजापर वृक्ष, अर सिंहरवकी ध्वजामें व्याघ्र, अर मेघकांतकी ध्वजामें हाथीका चिह्न इत्यादि राजानिकी ध्वजामें नानाप्रकारके चिह्न। इनमें भूतनाद महातेजस्वी लोकपाल समान सो फौजका अग्रसर भया। लोकपाल समान हनुमान भूतनादके पीछे, सामंतनिके चक्र सहित परम तेजकूं धरे लंकापर चढ़े। सो अति हर्षके भरे शोभते भए। जैसे पूर्व रावणके बड़े सुकेशीके पुत्र माली लंकापर चढ़े हुते, अर अमल किया हुता तैसे। श्रीरामके सन्मुख विराधित बैठा, अर पीछे जामवंत बैठा, बांई भुजा सुषेण बैठा, दाहिनी भुजा सुग्रीव बैठा, सो एक निमिषमें बेलंधरपुर पहुँचे। तहांका समुद्रनामा राजा सो उसके अर नलके परम युद्ध भया। सो समुद्रके बहुत लोक मारे गए। अर नलने समुद्रको बांधा बहुरि श्रीरामसे मिलाया। अर तहांही डेरा भए। श्रीरामने समुद्रपर कृपा करी, ताका राज्य ताको दिया। सो राजाने अति हर्षित होय अपनी कन्या सत्यश्री, कमला, गुणमाला, रत्नचूडा, स्त्रियोंके गुणकर मंडित देवांगना समान सो लक्ष्मणसे परणाई। तहां एकरात्रि रहे। बहुरि यहांसे प्रयाणकर सुवेल पर्वतपर सुवेल नगर गए। वहां राजा सुवेल नाम विद्याधर, ताकूं संग्राममें जीत रामके अनुचर विद्याधर क्रीडा करते भए, जैसें नन्दनवनविषै देव क्रीडा करें। तहां अक्षय नाम वनमें आनन्दसे रात्रि पूर्ण करी। बहुरि प्रयाणकर लंका जायवेकूं उद्यमी भए। कैसी है लंका ? ऊंचे कोटसे युक्त, सुवर्णके मन्दिरनिकर पूर्ण, कैलाशके

शिखर समान है आकार जिनके, अर नानाप्रकारके रत्ननिके उद्योतकर प्रकाशरूप, अर कमलनिके जे वन तिनसे युक्त, वापी कूप सरोवरादिक कर शोभित, नानाप्रकार रत्नोंके ऊंचे जे चैत्यालय तिनकर मण्डित महापवित्र इन्द्रकी नगरीसमान। ऐसी लंकाकूं दूरतैं देखकर समस्त विद्याधर रामके अनुचर आश्चर्यकूं प्राप्त भए, अर हंसद्वीपविषै डेरे किये। तहां हंसपुर नगर, राजा हंसरथ, ताहि युद्धविषै जीत, हंसपुरमें क्रीडा करते भए। तहांतैं भामण्डलपर बहुरि दूत भेजा, अर भामंडलके आयबेकी वांछा कर तहां निवास किया। जा जा देशमें पुण्याधिकारी गमन करैं तहां तहां शत्रुनिको जीत, महाभोग उपभोगको भजें। इन पुण्याधिकारी उद्यमवंतोंसे कोई परे नाहीं है। सब आज्ञाकारी हैं। जो जो उनके मनमें अभिलाषा होय सो सब इनकी मूठीमें है। तातैं सर्व उपायकर त्रैलोक्यमें सार ऐसा जो जिन-राजाका धर्म सो प्रशंसा योग्य है। जो कोई जगजीत भया चाहै वह जिनधर्मकूं आराधो। ये भोग क्षणभंगुर हैं। इनकी कहा बात ? यह वीतरागका धर्म निर्वाण देनेहारा है। अर कोई जन्म लेय तो इन्द्र चक्रवर्त्यादिक पदका देनहारा है। ता धर्मके प्रभावतैं ये भव्य जीव सूर्यसे अधिक प्रकाशको धरे हैं।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रंथ, ताकी भाषावचनिकाविषै राम लक्ष्मणका लंकागमन वर्णन करनेवाला चौवनवां पर्व पूर्ण भया ॥५४॥

अथानन्तर रामका कटक समीप आया जान प्रलयकालके तरंग समान लंका क्षोभकूं प्राप्त भई। अर रावण कोपरूप भया, अर सामन्त लोक रणकथा करते भए। जैसा समुद्रका शब्द होय तैसे वादित्रनिके नाद भए। सर्व दिशा शब्दायमान भई। अर रणभेरीके नादते सुभट महाहर्षकूं प्राप्त भए। सब साजबाज सज स्वामीके हित स्वामीके निकट आए। तिनके नाम मारीच, अमलचन्द, भास्कर, सिंहप्रभ(स्यन्दनविभु), हस्त, प्रहस्त इत्यादि अनेक योधानिकरि पूर्ण स्वामीके समीप आए।

अथानन्तर लंकापति महायोधा संग्रामके निमित्त उद्यमी भया। तब विभीषण रावणपै आए।

प्रणामकर शास्त्रमार्गके अनुसार अति प्रशंसायोग्य, सबकूं सुखदाई, आगामी कालमें कल्याणरूप, वर्तमान कल्याणरूप, ऐसे वचन विभीषण रावण से कहता भया। कैसा है विभीषण? शास्त्रविषै प्रवीण, महा चतुर, नय प्रमाणका वेत्ता, भाईको शान्त वचन कहता भया—हे प्रभो! तिहारी कीर्ति कुन्दके पुष्प समान उज्ज्वल, महाविस्तीर्ण, महाश्रेष्ठ, इन्द्र समान पृथ्वीपर विस्तार रही है, सो परस्त्रीके निमित्त यह कीर्ति क्षणमात्र में क्षय होयगी, जैसे सांझके बादलकी रेखा। तातैं हे स्वामी! हे परमेश्वर! हम पर प्रसन्न होवो। शीघ्र ही सीताकूं रामके समीप पठावो। यामें दोष नाहीं, केवल गुण ही है। सुखरूप समुद्रमें आप निश्चय तिष्ठो। हे विचक्षण! जे न्यायरूप! महाभोग हैं वे सब तुम्हारे स्वाधीन हैं। अर श्रीराम यहां आए हैं सो बड़े पुरुष हैं, तिहारे तुल्य हैं, सो जानकी तिनकूं पठाय देवहु। सर्व प्रकार अपनी वस्तु ही प्रशंसा योग्य है। परवस्तु प्रशंसा योग्य नाहीं। यह वचन विभीषणके सुन इन्द्रजीत रावणका पुत्र पिताके चित्तकी वृत्ति जान विभीषणकूं कहता भया। अत्यन्त मानका भरा, अर जिनशासनसे विमुख है। साधो! तुमकूं कौनने पूछा, अर कौनने अधिकार दिया जाकरि या भांति उन्मत्तकी नाईं वचन कहो हो? तुम अत्यन्त कायर हो, अर दीन लोकनिकी नाईं युद्धसे डरो हो, अपने घरके विवरमें बैठो? कहा ऐसी बातनिकर, ऐसा दुर्लभ स्त्रीरत्न पायकर मूढोंकी न्याईं कौन तजै? तुम काहेकूं वृथा वचन कहो? जा स्त्रीके अर्थ सुभट पुरुष संग्रामविषैं तीक्ष्ण खड्ग की धारा करि महाशत्रुनिकूं जीत कर वीर लक्ष्मी भुजानिकरि उपार्जे हैं तिनके कायरता कहा? कैसा है संग्राम? मानों हाथिनिके समूहसे जहां अंधकार होय रहा है। अर नानाप्रकारके शस्त्रनिके समूह चलैं हैं, जहां अति भयानक है। यह वचन इन्द्रजीतके सुनकर इन्द्रजीतकूं तिरस्कार करता संता विभीषण बोला—रे पापी! अन्यायमार्गी कहा तू पुत्रनामा शत्रु है? तोकूं शीत वायु उपजी है, अपना हित नाहीं जानै है, शीतवायुकी पीड़ा अर उपाय छांड़ शीतल जलविषैं प्रवेश करै तो अपने प्राण खोवे। अर घरविषैं आग लागै अर ता अग्निविषैं सूखे ईंधन डारे तो कुशल कहांसे होय? अहो! मोहरूप

ग्राहकर तू पीडित है। तेरी चेष्टा विपरीत है। यह स्वर्णमई लंका जहां देवविमानसे घर, लक्ष्मणके तीक्ष्ण बाणोंसे चूर्ण न होहि जाई, तापहिले जनकसुता पतिव्रताकूं रामपै पठाय देहु। सर्वलोकके कल्याण के अर्थ शीघ्र ही सीताको पठाना योग्य है। तेरे बाप कुबुद्धिने यह सीता नाहीं आनी है, राक्षसरूप सर्पोंका बिल जो यह लंका ताविषै विषनाशक जडी आनी है। सुमित्राका पुत्र लक्ष्मण सोई भया क्रोधायमान सिंह, ताहि तुम गज समान निवारवे समर्थ नाहीं। जाके हाथ सागरावर्त धनुष अर आदित्यमुख अमोघ-बाण अर जिनके भामंडलसा सहाई सो लोकोंसे कैसे जीता जाय? अर बड़े बड़े विद्याधरनिके अधिपति जिनसे जाय मिले, महेन्द्रमलय, हनुमान, सुग्रीव, त्रिपुर इत्यादि अनेक राजा और रत्नद्वीप का पति, वेलन्धरका पति, संध्या हर द्वीप, हैहयद्वीप, आकाशतिलक, केलोकिल, दधिवक्त्र अर महाबलवान विद्याके विभवकरि पूर्ण अनेक विद्याधर आय मिलें। या भांतिके कठोर वचन कहता जो विभीषण तापर महाक्रोधायमान होय खड्ग काढ रावण मारवेकूं उद्यमी भया। तब विभीषण भी महाक्रोधके वश होय रावणसूं युद्ध करवेकूं वज्रमई स्तम्भ उपारचा। ये दोनों भाई उग्रतेजके धारक युद्धकूं उद्यमी भए, सो मंत्रियोंने समझाय मने किए। विभीषण अपने घर गया, रावण महिल गया।

बहुरि रावणने कुम्भकरण इन्द्रजीतको कठोरचित्त होय कहा जो यह विभीषण मेरे अहितमें तत्पर है, अर दुरात्मा है, याहि मेरी नगरीसे निकासो। या अनर्थीके रहिवेकरि क्या? मेरा अंग ही मोसे प्रतिकूल होय तो मोहि न रुचै। जो यह लंकाविषै रहै अर मैं याहि न मारूं तो मेरा जीवना नाहीं। ऐसी वार्ता विभीशण सुनकर कही—मैं हू कहा रत्नश्रवाका पुत्र नाहीं? ऐसा कह लंकातें निकसा।
महासामंतनि सहित तीस अक्षौहिणी दल लेयकर रामपै चाल्या। (तीस अक्षौहिणी केतेक भए ताका वर्णन) छहलाख छप्पनहजार एकसौ हाथी, अर एते ही रथ, अर उगणीसलाख अडसठ हजार तीनसौ तुरंग, अर बत्तीसलाख अस्सीहजार पांचसौ पयादा। विद्युत्घन, इन्द्रवज्र, इन्द्रप्रचंड, चपल, उडत, एक अशनि, सम्पातकाल महाकाल ये विभीषण सम्बन्धी परम सामंत अपने कुटुम्ब अर सब समुदाय सहित,

नानाप्रकार शस्त्रनिकरि मंडित, रामकी सेनाकी तरफ चाले। नानाप्रकारके बाहनानिकर युक्त आकाशकूं आच्छादित कर सर्व परिवारसहित विभीषण हंसद्वीप आया। सो उस द्वीपके समीप मनोग्यस्थल देख जलके तीर सेनासहित तिष्ठा, जैसे नन्दीश्वर द्वीपकेविषै देव तिष्ठैं। विभीषणकूं आया सुन बानर-वंशिनिकी सेना कम्पायमान भई जैसैं शीतकालविषै दलिद्री कांपै। लक्ष्मणने सागरावर्त धनुष अर सूर्यहास खड्गकी तरफ दृष्टि धरी। अर रामने वज्रावर्त धनुष हाथ लिया। अर सब मंत्री भेले होय मंत्र करते भए। जैसे सिंहसे गज डरे तैसैं विभीषणसे बानरवंशी डरे। ताही समय विभीषणने श्रीराम के निकट विचक्षण द्वारपाल भेजा। सो रामपै आय नमस्कार कर मधुर वचन कहता भया—हे देव ! इन दोनों भाईनिविषै जबतै रावण सीता लाया तबहीसे विरोध पडा, अर आज सर्वथा बिगड गई। तातैं आपके पांयन आया है, आपके चरणारविंदकूं नमस्कारपूर्वक विनती करै है। कैसा है विभीषण ? धर्मकार्यविषै उद्यमी है। यह प्रार्थना करी है कि आप शरणागत प्रतिपाल हो, मैं तिहारा भक्त शरणे आया हूं, जो आज्ञा होय सोही करूं। आप कृपा करनेयोग्य हैं। यह द्वारपालके वचन सुन रामने मंत्रीनिसूं मंत्र किया। तब रामसे सुमतिकांत मंत्री कहता भया कदाचित् रावणने कपटकर भेजा होय तो याका विश्वास कहा ? राजानिकी अनेक चेष्टा हैं। अर कदाचित् कोई बातकर आपसमें कलुष होय बहुरि मिलि जांय। कुल अर जल इनके मिलनेका अचरज नाहीं। तब महाबुद्धिवान मतिसमुद्र बोला—इनमें विरोध तो भया, यह बात सबसे सुनिए है। अर विभीषण महा धर्मात्मा नीतिवान है, शास्त्ररूप जलकर धोया है चित्त जाका, महा दयावान है, दीन लोकनि पर अनुग्रह करै है, अर मित्र निमें दृढ है। अर भाईपनेकी बात कही सो भाईपनेका कारण नाहीं, कर्मका उदय जीवनिके जुदा जुदा होय है। इन कर्मनिके प्रभावकर या जगतविषै जीवनिकी विचित्रता है। या प्रस्तावविषै एक कथा है सो सुनहु—एक गिरि एक गोभूत ये दोऊ भाई ब्राह्मण हुते। सो एक राजा सूर्यमेघ हुता। ताके राणी मतिक्रिया, ताने दोनोंकूं पुण्यकी वांछाकर भातमें छिपाय सुवर्ण दिया। सो गिरिकपटीने भात-

विषै स्वर्ण जान गोभूतकू छलकर मारचा दोनोंका स्वर्ण हर लिया। सो लोभसे प्रीतिभंग होय है। और भी कथा सुनो–कौशांबी नगरीविषै एक बृहद्धन नामा गृहस्थी, ताके पुरविदा नामा स्त्री, ताके पुत्र अहिदेव महीदेव। सो इनका पिता मूवा तब ये दोऊ भाई धनके उपारजने निमित्त समुद्रमें जहाज में बैठ गए। सो सर्वद्रव्य देय एक रत्न मोल लिया। सो वह रत्नकू जो भाई हाथमें लेय ताके भाव होंय कि मैं दूजे भाईकू मारू। सो परस्पर दोऊ भाईनिके खोटे भाव भए। तब घर आये, वह रत्न माताकू सौंपा। सो माताके ये भाव भए कि दोऊ पुत्रनिकू विष देय मारू। तब माता अर दोनों भाइयों ने वा रत्नसे विरक्त होय कालिन्द्री नदीमें डारा। सो रत्नकू मछली निगल गई। सो मछलीकू धीवरने पकरी, अर अहिदेव महीदेवहीके बेची। सो अहिदेव महीदेवकी बहिन मछलीकू विदारती हुती सो रत्न निकस्या। याहूके भाव भए कि माताकू और दोऊ भाइनिकू मारू। तब याने सकल वृत्तांत कह्या कि या रत्नके योगसे मेरे ऐसे भाव होय हैं जो तुमकू मारू। तब रत्नकू चूर डारचा। माता बहिन अर दोऊ भाई संसारके भावसे विरक्त होय जिनदीक्षा धरते भए। तातैं द्रव्यके लोभकर भाइनिमें वैर होय है, अर ज्ञानके उदयकर वैर मिटै है। अर गिरिने तो लोभके उदयसे गोभूतकू मारचा। अर अहिदेवके महीदेवके वैर मिट गया। सो महाबुद्धि विभीषणका द्वारपाल आया है ताकू मधुर वचनकर विभीषणकू बुलाओ। तब द्वारपालसों स्नेह जताया अर विभीषणकू अति आदरसू बुलाया। विभीषण रामके समीप आया। सो राम विभीषणका अति आदरकर मिले। विभीषण बिनती करता भया–

हे देव! हे प्रभो! निश्चयकर मेरे इस जन्मविषै तुम ही प्रभु हो। श्रीजिननाथ तो या भव पर-भवके स्वामी, अर रघुनाथ या लोकके स्वामी। या भांति प्रतिज्ञा करी। तब श्रीराम कहते भये तुझे निःसंदेह लंकाका धनी करूंगा। सेनामें विभीषणके आवनेका उत्साह भया। अर ताही समय भामंडल भी आया। कैसा है भामण्डल? अनेक विद्या सिद्ध भई हैं जाकू। सब विजियार्धका अधिपति जब भामण्डल आया तब राम लक्ष्मण आदि सकल हर्षित भए। भामण्डलका अति सन्मान किया। आठ

दिन हंसद्वीपविषैं रहे। बहुरि लंकाकूं सन्मुख भए। नानाप्रकारके अनेक रथ, अर पवनसे भी अधिक तेजकूं धरे बहुत तुरंग, अर मेघमालासे गयंदोंके समूह, अर अनेक सुभटनि सहित श्रीरामने लंकाकूं पयान किया। समस्त विद्याधर सामंत आकाशकूं आच्छादते हुते रामके संग चाले। सबमें अग्रेसर वानरवंशी भए। जहां रणक्षेत्र थापा है तहां गए। संग्रामभूमि बीस योजन चौडी है, अर लम्बाईका विस्तार विशेष है। वह युद्धभूमि मानों मृत्युकी भूमि है। या सेनाके हाथी गाजे अर अश्व हींसे। अर विद्याधरनिके वाहन सिंह हैं तिनके शब्द हुए, अर वादित्र बाजे। तब सुनकर रावण अति हर्षकूं प्राप्त भया। मनविषै विचारी बहुत दिननिमें मेरे रणका उत्साह भया, समस्त सामन्तनिकूं आज्ञा दई जो युद्धके उद्यमी होवो। सो समस्त ही सामंत आज्ञा प्रमाण आनन्दकर युद्धकूं उद्यमी भए। कैसा है रावण? युद्धविषैं है हर्ष जाकूं, जाने कबहु सामंतनिकूं अप्रसन्न न किया, सदा प्रसन्न ही राखे। सो अब युद्धके समय सबही एकचित्त भए। भास्कर नामा पुर तथा पयोरपुर, कांचनपुर, व्योम, वल्लभपुर, गंधर्वगीतपुर, शिवमंदिर, कंपतपुर, सूर्योदयपुर, अमृतपुर, शोभासिंहपुर, सत्यगीतपुर, लक्ष्मीगतिपुर, किन्नरपुर, बहुनागपुर, महाशैलपुर, चक्रपुर, स्वर्णपुर, सीमंतपुर, मलयानन्दपुर, श्रीगृहपुर, श्रीमनोहरपुर, रिपुंजयपुर, शशिस्थानपुर, मार्तंडप्रभपुर, विशालपुर, ज्योतिदंडपुर, परिच्योधपुर, अश्वपुर, रत्नपुर इत्यादि अनेक नगरोंके स्वामी बड़े २ विद्याधर मंत्रिनिसहित महा प्रीतिके भरे रावणपै आए। सो रावण राजावोंका सम्मान करता भया, जैसे इन्द्र देवनिका करै है। शस्त्र वाहन बक्तर आदि युद्धकी सामग्री सब राजावोंकूं देता भया। चारहजार अक्षौहणी रावणके होती भई अर दो हजार अक्षौहणी रामके होती भई, सो कौन भांति? हजार अक्षौहणीदल तो भामंडलका अर हजार सुग्रीवादिका। या भांति सुग्रीव अर भामंडलका ये दोऊ मुख्य अपने मंत्रीनि सहित तिनसों मंत्रकर राम लक्ष्मण युद्धकूं उद्यमी भए। अनेक वंशके उपजे, अनेक आचरणके धरणहारे, नाना जातिनिसे युक्त, नाना प्रकार गुण क्रियासूं प्रसिद्ध, नाना प्रकार भाषाके बोलनहारे विद्याधर श्रीराम रावणपै भेले भए।

गौतमस्वामी राजा श्रेणिकसूं कहै हैं–हे राजन् ! पुण्यके प्रभावकरि मोटे पुरुषनिके बैरी भी अपने मित्र होय हैं, अर पुण्यहीनोंके चिरकालके सेवक अर अतिविश्वासके भाजन ते भी विनाशकालमें शत्रुरूप होय परणवे हैं। या असार संसारविषै जीवनिकी विचित्रगति जानकर यह चिंतवन करना है कि मेरे भाई सदा सुखदाई नाहीं, तथा मित्र बांधव सबही सुखदाई नाहीं। कबहु मित्र शत्रु होजाय, कबहु शत्रु मित्र हो जाय। ऐसे विवेकरूप सूर्यके उदयसे उरविषै प्रकाशकर बुद्धिवंतोंको सदा धर्महीं चिंतवना।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महा पद्मपुराण संस्कृतग्रन्थ, ताकी भाषावचनिकाविषै विभीषणका रामसूं मिलाप अर भामण्डलका आगमन वर्णन करनेवाला पचपनवां पर्व पूर्ण भया ॥ ५५ ॥

अथानन्तर राजा श्रेणिक गौतम स्वामीकूं पूछता भया–हे प्रभो ! अक्षौहिणीका परिमाण आप कहो। तब गौतमका दूजा नाम इन्द्रभूत है सो इन्द्रभूत कहते भए–हे मगधाधिपति। अक्षौहिणीका प्रमाण तोहि संक्षेपसे कहे हैं सुन। आगमविषै आठ भेद कहे हैं ते सुन। प्रथम भेद पत्ति, दूजा भेद सेना, तीजा भेद सेनामुख, चौथा गुल्म, पांचवां वाहिनी, छटा पृतना, सातवां चमू, आठवां अनीकिनी। सो अब इनके यथार्थ भेद सुन। एक रथ, एक गज, पांच पयादे, तीन तुरंग, इसका नाम पत्ति है। अर तीन रथ, तीन गज, पन्द्रह पयादे, नव तुरंग, याकूं सेना कहिए। अर नव रथ, नव गज, पैंतालीस पयादा, सत्ताइस तुरंग, याहि सेना मुख कहिए। अर सत्ताइस रथ, सत्ताइस गज, एकसौ पैंतिस पयादा, इक्कासी अश्व इसे गुल्म कहिए। अर इक्यासी रथ, इक्यासी गज, चारसै पांच पयादे, दोसौ तैंतालिस अश्व, इसे वाहिनी कहिए। अह दोयसै तियालिस रथ, दोयसौ तियालिस गज, बारासौ पन्द्रह पयादे, सात सौ उनतीस घोड़े, याहि पृतना कहिए। अर सातसौ गुणतीस रथ, सातसै गुणतीस गज, छत्तीससै पैंतालिस पयादे, इक्कीससौ सतासी तुरंग इसे चमू कहिए। अर इक्कीससै सतासी रथ, इक्कीससै सत्तासी गज, दशहजार नौसै पैंतीस पयादे अर पैंसठसौ इकसठ तुरंग, इसे अनीकिनी कहिए। सो

पत्तिसे लेय अक्षौहिणी तक आठ भेद भए। सो यहांलों तो तिगुने २ बढे। अर दश अनीकिनीकी एक अक्षौहिणी होय है, ताका वर्णन—रथ इक्कीसहजार आठसै सत्तर, अर गज इक्कीसहजार आठसै सत्तर, पयादे एक लाख नौ हजार तीनसै पचास, अर घोड़े पैंसठ हजार छहसौ दश, यह एक अक्षौहिणीका प्रमाण भया। ऐसी चार हजार अक्षौहिणी कर युक्त जो रावण, ताहि अति बलवान जानकर भी किहकन्धापुरके स्वामी सुग्रीवकी सेना श्रीरामके प्रसादसूं निर्भय रावणके सन्मुख होती भई। श्रीरामकी सेनाकूं अतिनिकट आए हुए, नानापक्षकूं धरैं जो लोक सो परस्पर या भांति वार्ता करते भए—देखो रावणरूप चन्द्रमा विमानरूप जे नक्षत्र तिनके समूहका स्वामी, अर शास्त्रमें प्रवीण, सो परस्त्रीकी इच्छा रूप जे बादल तिनसूं आच्छादित भया है। जिसके महाकांतिकी धरणहारी अठारह हजार राणी, तिनसे तो तृप्त न भया अर देखहु एक सीताके अर्थ शोककरि व्याप्त भया है। अब देखिये राक्षसवंशी अर वानरवंशी इनमें कौनका क्षय होय। रामकी सेनामें पवनका पुत्र हनुमान, महा भयंकर देदीप्यमान, जो शूरता सोई भई उष्णकिरण उनसे सूर्य तुल्य हैं। या भांति कईएक तो रामके पक्षके योधावोंके यश वर्णन करते भए। अर कईएक समुद्रसे भी अतिगम्भीर जो रावणकी सेना ताका वर्णन करते भये। अर कईएक जो दण्डकवनमें खरदूषणका अर लक्ष्मणका युद्ध भया था उसका वर्णन करते भये, अर कहते भए—चन्द्रोदयका पुत्र विराधित सो है शरीर तुल्य जिनके, ऐसे लक्ष्मण तिनने खरदूषण हत्या, अतिबलके स्वामी लक्ष्मण तिनका बल क्या तुमने न जान्या? कईएक ऐसे कहते भए। अर कईएक कहते भए कि राम लक्ष्मणकी क्या बात? वे तो बड़े पुरुष हैं। एक हनुमानने केते काम किए, मन्दोदरीका तिरस्कार कर सीताकूं धीर्य बंधाया, अर रावणकी सेना जीत लंकामें विघ्न किया, कोट दरवाजे ढाहे। या भांति नानाप्रकारके वचन कहते भए। तब एक सुवक्रनामा विद्याधर हँसकर कहता भया कि कहां समुद्र समान रावणकी सेना और कहां गायके खोज समान वानरवंशियोंका बल? जो रावण इन्द्रकूं पकड़ लाया और सबोंका जीतनहारा सो बानरवंशियों से कैसे जीता

जाय ? सर्व तेजस्वियोंके सिरपर तिष्ठे हैं, मनुष्यनिमें चक्रवर्तीके नामकूं सुनै कौन धीर्य धरै ? अर जिसके भाई कुम्भकरण महाबलवान त्रिशूलका धारक युद्धमें प्रलयकालकी अग्नि समान भासै है सो जगत्में प्रबल पराक्रमका धारक कौनकरि जीता जाय ? चन्द्रमासमान जाके छत्रकूं देखकर शत्रुओंका सेनारूप अंधकार नाशकूं प्राप्त होय है—सो उदार तेजका धनी उसके आगे कौन ठहर सकै। जो जीतव्यकी बांछा तजै सो ही उसके सन्मुख होय। या भांति अनेक प्रकारके रागद्वेषरूप वचन सेनाके लोग परस्पर कहते भए। दोनों सेनामें नानाप्रकारकी वार्ता लोकनिके मुख होती भई। जीवनिके भाव नानाप्रकारके हैं, रागद्वेषके प्रभावसे जीव निजकर्म उपार्जे हैं। सो जैसा उदय होय है तैसे ही कार्य में प्रवृत्ते हैं। जैसैं सूर्यका उदय उद्यमी जीवोंको नाना कार्यमें प्रवृतावै है तैसे कर्मका उदय जीवनिके नानाप्रकारके भाव उपजावे है।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रंथ, ताकी भाषावचनिकाविषै दोऊ कटकनिकी संख्याका प्रमाण वर्णन करनेवाला छप्पनवां पर्व पूर्ण भया ॥ ५६ ॥

अथानन्तर हर सेनाके समीपकूं न सह सकै ऐसे मनुष्य, वे शूरापनेके प्रकट होनेकरि अति प्रसन्न होय, लडवेकूं उद्यमी भए। योधा अपने घरोंसे विदा होय सिंह सारिखे लंकासे निकसे। कोईएक सुभटकी नारी रणसंग्रामका वृत्तांत जान अपने भरतारके उरसे लग ऐसे कहती भई—हे नाथ ! तिहारे कुलकी यही रीति है जो रणसंग्राममें पीछे न होय। अर जो कदाचित् तुम युद्धतैं पीछे होवोगे तो मैं सुनते ही प्राणत्याग करूंगी। योधाओंके किंकरोंकी स्त्रियें कायरोंकी स्त्रियोंको धिक्कार शब्द कहैं—या समान और कष्ट कहा। जो तुम छाती घाव खाय भले दिखाय पीछे आवोगे तो घाव ही आभूषण हैं। अर टूट गया है बक्तर, अर करैं हैं अनेक योधास्तुति, या भांति तुमकूं मैं देखूंगी तो अपना जन्म धन्य गिनूंगी। अर सुवर्णके कमलनिसों जिनेश्वरकी पूजा कराऊंगी। जे महायोधा रणमें सन्मुख ५९३

होय मरणकू प्राप्त होय तिनका ही मरण धन्य है। अर जे युद्धमें पराङ्मुख होय, धिक्कार शब्दसे मलिन भये जीवैं हैं, तिनके जीवनेसे क्या ? अर कोईयक सुभटानी पतिसे लिपट या भांति कहती भई जो तुम भले दिखाय कर आवोगे तो हमारे पति हो, अर भागकर आवोगे तो हमारे तुम्हारे सम्बन्ध नाहीं। अर कोईइक स्त्री पतिसू कहती भई—हे प्रभो ! तिहारे पुराने घाव अब विघट गए, इसलिए नवे घाव लगें शरीर अति शोभै। वह दिन होय जो तुम वीरलक्ष्मीको वर प्रफुल्लित वदन हमारे आवो, अर हम तुमकू हर्षसंयुक्त देखैं। तुम्हारी हार हम क्रीडामें भी न देख सकें तो युद्धमें हार कैसे देख सकें ? अर कोईयक कहती भई कि हे देव ! जैसे हम प्रेमकर तिहारा वदन कमल स्पर्श करें हैं तैसें वक्षस्थलमें लगे घाव हम देखें तब अति हर्ष पावैं ! और कईएक रोताणी अति नवोढा हैं परन्तु संग्राममें पतिकू उद्यमी देख प्रौढाके भावकू प्राप्त भई। अर कोईयक मानवती घने दिननिसू मान कर रही थीं सो पतिकू रणमें उद्यमी जान मान तज पतिके गले लागी, अर अति स्नेह जनाया, रण योग्य शिक्षा देती भई। और कोईयक कमलनयनी भरतारके वदनकू ऊंचाकर स्नेहकी दृष्टिकर देखती भई, अर युद्धमें दृढ़ करती भई। अर कईएक सामंतनी पतिके वक्षस्थलमें अपने नखका चिह्नकर होनहार शस्त्रोंके घावकू मानो स्थानक करती भई। या भांति उपजी है चेष्टा जिनके, ऐसे राणी रौताणी अपने प्रीतमोंसे नानाप्रकारके स्नेह कर वीररसमें दृढ़ करती भई। तब महासंग्रामके करणहारे योधा तिनसू कहते भए—हे प्राणवल्लभे ! नर वेई हैं जे रणमें प्रशंसा पावैं तथा युद्धके सन्मुख जीव तजैं तिनकी शत्रु कीर्ति करें। हाथिनिके दांतनिमें पग देय शत्रुवोंके घावकर तिनकी शत्रु कीर्ति करैं। पुण्यके उदयबिना ऐसा सुभटपना नाहीं। हाथियोंके कुम्भस्थल विदारणहारे नरसिंह तिनकू जो हर्ष होय है सो कहिवेकू कौन समर्थ है ? हे प्राणप्रिये क्षत्रीका यही धर्म हैं जो कायरनिकू न मारे, शरणागतकू न मारैं, न मारिवे देय, जो पीठ देय उसपर चोट न करैं, जिसपै आयुध न होय वासों युद्ध न करैं। सो बाल वृद्ध दीनकू तज हम योधाओंके मस्तकपर पड़ेंगे। तुम हर्षित रहियो। हम

युद्धमें विजयकर तुमसे आय मिलेंगे। या भांति अनेक वचन कर अपनी अपनी रौतणियोंको धीर्य बंधाय योधा संग्रामके उद्यमी घरसे रणभूमिकूं निकसे। कोई एक सुभटानी चलते पतिके कंठमें दोनों भुजासे लिपट गई अर हींदती भई, जैसे गजेन्द्रके कंठमें कमलनी लटके। अर कोईयक रौताणी बक्तर पहिरे पतिके अंगसे लग, अंगका स्पर्श न पाया सो खेद खिन्न होती भई। अर कोईयक अर्द्ध बाहुलिका कहिए पेटी, सो वल्लभके अंगसे लगी देख ईर्षाके रससे स्पर्श करती भई कि हम टार दूजी इनके उरसे कौन लगे। यह जान लोचन संकोचे। तब पति प्रियाकूं अप्रसन्न जान कहते भए–हे प्रिये! यह आधा वक्तर है स्त्री वाची शब्द नाहीं, तब पुरुषका शब्द सुन हर्षकूं प्राप्त भईं। कोईयक अपने पतिकूं ताम्बूल चबावती भईं, अर आप ताम्बूल चाबती भईं। कोईयक पतिने रुखसत करी तो भी केतीक दूर पतिके पीछे पीछे जाती भईं। पतिके रणकी अभिलाषा सो इनकी ओर निहारें नाहीं, अर रण की भेरी बाजी सो योधावोंका चित्त रणभूमिमें, अर स्त्रीनिसे विदा होना, सो दोनों कारण पाय योधावोंका चित्त मानों हिंडोले हींदता भया। रौतानियोंको तज रावत चले तिन रौतानियोंने आंसू न डारे। आंसू अमंगल हैं। अर कईयक योधा युद्धमें जायवेकी शीघ्रताकर वक्तरभी न पहिर सके। जो हथियार हाथ आया सो ही लेकर गर्वके भरे निकसे। रणभेरी सुन उपजा है हर्ष जिनकूं, शरीर पुष्ट होय गया सो वक्तर अंग में न आवे। अर कईयक योधावोंके रणभेरीका शब्द सुन हर्ष उपजा सो पुराने घाव फटगए तिनमें सूं रुधिर निकसता भया। अर किसीने नवा वक्तर बनाय पहिरा सो हर्षके होने सों टूट गया सो मानों नया वक्तर पुराने वक्तरके भावकूं प्राप्त भया। अर काहूके सिर का टोप ढीला होय गया सो प्राणवल्लभा दृढ कर देती भई। अर कोईयक सुभट संग्रामका लालसी उसके स्त्री सुगन्ध लगायबेकी अभिलाषा करती भई सो सुगन्धमें चित्त न दिया, युद्धकूं निकसा। अर वे स्त्रियां व्याकुलतारूप अपनी अपनी सेजपर पड रहीं। प्रथमही लंकासे हस्त प्रहस्त राजा युद्धकूं निकसे। कैसे हैं दोनों? सर्वमें मुख्य जो कीर्ति, सोई भया अमृत, उसके आस्वादमें लालसी और

हाथियोंके रथ पर चढ़े, नहीं सह सके हैं वैरियों का शब्द, अर महाप्रतापके धारक, शूरवीर सो रावणकूं विना पूछे ही निकसे। यद्यपि स्वामीकी आज्ञाकरी बिना कार्य करना दोष है तथापि धनीके कार्यकूं विना आज्ञा जाय तो दोष नाहीं, गुणके भावकूं भजै है। मारीच, सिंह जघन्य, स्वयंभू, शम्भू, प्रथम विस्तीर्ण बलसे मंडित शुक, अर सारस, चांद सूर्यसारिखे गज, अर बीभत्स तथा वज्राक्ष वज्रभूति गम्भीरनाद नक्र मकर वज्रघोष उग्रनाद सुन्द निकुम्भ कुम्भ संध्याक्ष विभ्रमक्रूर माल्यवान खर निश्चर जम्बूस्वामी शिखीवीर उर्द्धक महाबल यह सामन्त नाहरनिके रथ चढ़े निकसै। अर वज्रोदर शकप्रभ, कृतांत, विघटोधर, महामणि, असणिघोष, चन्द्र, चन्द्रनख, मृत्युभीषण, वज्रोदर, धूम्राक्ष, मुदित, विद्युज्जिह्व, महामारीच, कनक, क्रोधनु, क्षोभणद्धंध, उद्दाम, डिंडी डिंडम, डिंभव, प्रचण्ड डमर, चण्ड कुण्ड हलाहल इत्यादि अनेक राजा व्याघ्रोंके रथ चढ़े निकसे। वह कहे मैं आगे रहूं, वह कहे मैं आगे रहूं, शत्रुके विध्वंस करनेकूं है प्रवृत्त बुद्धि जिनकी। विद्या कौशिक, विद्याविख्यात, सर्पबाहू, महाद्युति, शंख, प्रशंख, राजभिन्न, अंजनप्रभ, पुष्पक्रूर, महारक्त घटाश्व, पुष्पखेचर, अनंगकुसुम, कामवर्त्त, स्मरायण, कामाग्नि, कामराशि, कनकप्रभ, शशिमुख, सौम्यवक्र, महाकाम, हैमगौर, यह पवन सारिखे तेज तुरंगनिके रथ चढ़े निकसे। अर कदम्ब विटप भीमनाद भयानाद भयानक शार्दूल सिंह बलांग विद्युदंग ल्हावन चपल चाल चंचल इत्यादि हाथीनिके रथ चढ़े निकसे। गौतमस्वामी राजा श्रेणिकसूं कहै हैं—हे मगधाधिपति! कहां लग सामंतोंके नाम कहें? सबमें अग्रेसर अढ़ाई कोडि निर्मलवंशके उपजे राक्षसनिके कुमार देवकुमार तुल्य पराक्रमी, प्रसिद्ध है यश जिनके, सकल गुणनिके मंडन, युद्धकूं निकसे। महा बलवान मेघवाहन कुमार इन्द्रके समान रावणका पुत्र अतिप्रिय इन्द्रजीत सो भी निकसा। जयंतसमान धीरबुद्धि कुम्भकर्ण सूर्यके विमान तुल्य ज्योतिप्रभव नामा विमान उसमें आरूढ त्रिशूलका आयुध धरे निकसा। अर रावण भी सुमेरुके शिखर तुल्य पुष्पकनाम अपने विमानपर चढ़े इन्द्रतुल्य पराक्रम जिसका, सेनाकर आकाश भूमिकूं आच्छादित करता हुवा, देदीप्यमान आयुधनिकूं धरे, सूर्यसमान

ज्योति जिसकी, सो भी अनेक सामंतनि सहित लंकासे बाहिर निकसा । वे सामंत शीघ्रगामी बहुरूप के धरणहारे वाहनोंपर चढ़े, कईएकनिके रथ, कईएकनिके तुरंग, कईएकनिके हाथी, कईएकनिके सिंह, तथा शूर सांभर बलध, भैंसा, उष्ट्र, मीढ़ा, मृग, अष्टापद इत्यादि स्थलके जीव, अर मगरमच्छ आदि अनेक जलके जीव, अर नानाप्रकारके पक्षी तिनका रूप धरे देवरूपी वाहन तिनपर चढ़े अनेक योधा रावणके साथी निकसे । भामंडल अर सुग्रीवपर रावणका अतिक्रोध सो राक्षसवंशी इससे युद्धकूं उद्यमी भए । रावणकूं पयान करते अनेक अपशकुन भए तिनका वर्णन सुनो । दाहिनी तरफ शल्यकी कहिए सेहु मंडलकूं बांधे भयानक शब्द करते प्रयाणका निवारण करें है । अर गृद्ध पक्षी भयंकर अपशब्द करते आकाशमें भ्रमते मानों रावणका क्षय ही कहे हैं । और अन्य भी अनेक अपशकुन भए। स्थलके जीव आकाशके जीव अति व्याकुल भए । क्रूरशब्द करते भए, रुदन करते भए । सो यद्यपि राक्षसनिके समूह में सबही पंडित हैं, शास्त्रका विचार जानै हैं तथापि शूरवीरताके गर्वसे मूढ़ भए, महा सेनासहित संग्रामके अर्थी निकसे । कर्मके उदयसे जीवनिका जब काल आवै है तब अवश्य ऐसाही कारण होय है । कालको इन्द्रके भी निवारिवे शक्ति नाहीं औरनिकी क्या बात ? वे राक्षसवंशी योधा, बड़े बड़े बलवान युद्धमें दिया है चित्त जिन्होंने, अनेक वाहनोंपर चढ़े, नानाप्रकारके आयुध धरैं, अनेक अपशकुन भए तो भी न गिने, निर्भय भए रामकी सेनाके सन्मुख आए ।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रंथ ताकी भाषावचनिकाविषै रावणकी सेना लंकातैं निकसि युद्धके अर्थ आवनेका व्याख्यान करनेवाला सत्तावनवां पर्व पूर्ण भया ॥ ५७ ॥

अथानन्तर समुद्रसमान रावणकी सेनाकूं देख नल नील हनुमान जाम्बवन्त आदि अनेक विद्याधर रामके हित, रामके कार्यकूं तत्पर, महा उदार, शूरवीर अनेक प्रकार हाथियोंके रथ चढ़े कटकसे निकसे । जामभित्र, चन्द्रप्रभ, रतिवर्द्धन, कुमुदावर्त, महेन्द्र, भानुमण्डल, अनुधर, दृढ़रथ, प्रीतिकंठ, महा

बल, समुन्नतबल, सर्वज्योति, सर्वप्रिय, बल, सर्वसार, सर्व शरभभर, अभृष्टि, निर्विष्ठ, संत्रास, विघ्न-सूदन, नाद, बरबरक, कलोट पाटन–मंडल, संग्राम–चपल, इत्यादि विद्याधर नाहरोंके रथ चढ़े निकसे। विस्तीर्ण है तेज जिनका, नानाप्रकारके आयुध धरे, अर महासामंतपनाका स्वरूप लिए, प्रस्तार, हिमवान, गंगप्रिय, लव इत्यादि सुभट हाथियोंके रथ चढ़े निकसे। दुप्रष्ट, पूर्णचन्द्र, विधिसागर, घोष, प्रियविग्रह, स्कंध, चंदन पादा, चन्द्रकिरण, अरप्रतिघात, महाभैरव, कीर्तन, दुष्ट, सिंहकटि, कुष्ट, समाधि, बहुल, हल, इन्द्रायुध, गतत्रास, संकट–प्रहार ये नाहरनिके रथ चढ़े निकसे। विद्युतकर्ण बलशील सुपक्षरचन, घन, सम्मेद, विचल, साल, काल, क्षत्रवर, अंगज, विकाल, लोलक, कालि, भंग, भंगोर्मि, उरचित, उतरंग, तिलक, कील, सुखेण, चरल करत बलि, भीमरव, धर्म, मनोहर मुख, सुख, प्रमत, मर्दक, मत्त, सार, रत्नजटी, शिवभूषण, दूषण, कौल, विघट, विराधित, मनू, रणखनि, शेम वेला, आक्षेपी, महाधर, नक्षत्र लुब्ध, संग्राम–विजय, जय, नक्षत्रमाल क्षोद, अतिविजय, इत्यादि घोड़ोंके रथ चढे निकसे। कैसे है रथ ? मनोहर समान शीघ्रवेगकूं धरै। अर विद्युतवाह मरुद्वाह, स्थाणु, मेघवाहन रथियाण, प्रचन्डालि इत्यादि नानाप्रकारके वाहनोंपर चढ़े, युद्धकी श्रद्धाकूं धरै हनुमानके संग निकसे। अर विभीषण रावणका भाई रत्नप्रभ नामा विमानपर चढा, श्रीरामका पक्षी अति शोभता भया। अर युधावर्त, वसंत, कान्त, कोमुदिनन्दन, भूरि, कोलाहल, हेड, भावित, साधुवत्सल, अर्धचन्द्र, जिनप्रेमा, सागर, सागरोपम, मनोज, जिन, जिनपति इत्यादि योधा नानावर्णके विमानोंपर चढे महाप्रबल सन्नाह कहिए बखतर पहिरे युद्धकों निकसे। राम लक्ष्मण सुग्रीव हनुमान ये हंस विमान चढ़े, और आकाशविषै शोभते भए। रामके सुभट महामेघमाला सारिखे नानाप्रकारके वाहनचढ़े लंकाके सुभटनिसूं लडवेकूं उद्यमी भए। प्रलयकालके मेघसमान भयंकर शब्द, शंख आदि वादित्रनिके शब्द होते भए। झंझा, भेरी, मृदंग, कम्पाल, धुन्धु मंडुक, आमलातक हक्कार दुंदु कान, उरवर, हेमगुंज, काहल वीणा, इत्यादि अनेक बाजे बाजते भए। अर सिंहके तथा हाथियों, घोड़ोंके, भैंसोंके, रथोंके, ऊंटों,

अर प्रधान पुरुषनिके सम्बन्ध बिना मंदताकूं भजे हैं जैसे राहुके योगसे सूर्यको आच्छादित भए किरणों का समूह मन्द होय है।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महा पद्मपुराण संस्कृतग्रन्थ, ताकी भाषावचनिकाविषैं हस्त प्रहस्तका मरण वर्णन करनेवाला अठावनवां पर्व पूर्ण भया ॥ ५८ ॥

अथानन्तर राजा श्रेणिक गौतम स्वामीसूं पूछता भया—हे प्रभो! हस्त प्रहस्त जैसे सामंत महा विद्यामें प्रवीण हुते, बड़ा आश्चर्य है नल नीलने कैसे मारे? इनके पूर्वभवका विरोध है कै याही भवका? तब गणधर देव कहते भए, हे राजन्! कर्मनिकर बंधे जीव तिनकी नानागति हैं। पूर्वकर्मके प्रभावकर जीवनिकी यही रीति है। जानै जाकूं मारा सो बहुरि ताकूं मारनहारा है, अर जाने जाकूं छुडाया सो ताका छुडावनहारा है। या लोकमें यही मर्यादा है। एक कुशस्थलनामा नगर वहां दोय भाई निर्धन, एक माताके पुत्र, इन्धक अर पल्लव ब्राह्मण खेतीका कर्म करैं, पुत्र स्त्री आदि जिनके कुटुम्ब बहुत, स्वभावहीसे दयावान, साधुनिकी निंदातैं पराङ्मुख। सो एक जैनी मित्रके प्रसंगतैं दानादि धर्मके धारक भए। अर एक दूजा निर्धन युगल सो महा निर्दई मिथ्यामार्गी हुते राजाने दान बांटा सो विप्रनिमें परस्पर कलह भया, सो इंधक पल्लवको इन दुष्टोंने मारा। सो दानके प्रसादतैं भोगभूमिमें उपजे, दोय पल्यकी आयु पाय मूए सो देव भए। अर वे क्रूर इनके मरणहारे अधर्म परिणामनिकर मूवे सो कालिंजर नामा वनमें सूस्या भए। मिथ्यादृष्टि साधुनिके निंदक पापी कपटी तिनकी यही गति है। बहुरि तिर्यंचगतिमें चिरकाल भ्रमण कर मनुष्य भए सो तापसी भए। बढ़ी है जटा जिनके, फल पत्रादिके आहारी, तीव्रतप कर शरीर कृश किया, कुज्ञानके अधिकारी, दोनों मूए सो विजयार्धकी दक्षिणश्रेणीमें अरिंजयपुर तहांका राजा अग्निकुमार, राणी अश्विनी, ताके ये दोय पुत्र, जगत प्रसिद्ध रावणके सेनापति भए। अर ते दोऊ भाई इन्धक अर पल्लव देवलोकतैं चयकर

मनुष्य भए। बहुरि श्रावकके व्रतपाल स्वर्गमें उत्तम देव भए। अर स्वर्गतैं चयकर किहकन्धापुरविषै नल नील दोनों भाई भए। पहिले हस्त प्रहस्तके जीवने नल नीलके जीव मारे हुते सो नल नीलने हस्त प्रहस्त मारे। जो पूर्वभवमें काहूकूं मारे हैं सो ताकर मारा जाय है अर जो काहूकूं पालै हैं सो ताकर पालिए हैं। अर जो जासूं उदासीन रहे है सो भी तासूं उदासीन रहे। जाहि देख निःकारण क्रोध उपजे सो जानिए परभवका शत्रु है, अर जाहि देख चित्त हर्षित होय सो निःसंदेह परभवका मित्र है। जो जलविषै जहाज फट जाय है अर मगर मच्छादि बाधा करै हैं, अर थलविषै म्लेच्छ बाधा करै है सो सब पापका फल है। पहाड़ समान माते हाथी अर नानाप्रकारके आयुध धरे अनेक योधा, अर महा तेजकूं धरे अनेक तुरंग, अर बक्तर पहिरे बड़े बड़े सामंत इत्यादि जो अपार सेनासूं युक्त जो राजा अर निःप्रमाद तो भी पुण्यके उदयविना युद्धमें शरीरकी रक्षा न होय सकै। अर जहां तहां तिष्ठता, अर जाके कोऊ सहाई नाहीं, ताकी तप अर दान रक्षा करे। न देव सहाई, न बांधव सहाई। अर प्रत्यक्ष देखिए है, धनवान् शूरवीर कुटुम्बका धनी सर्व कुटुम्बके मध्य मरण करे है कोऊ रक्षा करने समर्थ नाहीं। पात्रदानसे व्रत अर शील अर सम्यक्त्व अर जीवनिकी रक्षा होय है। दयादानसे जाने धर्म न उपार्जा अर बहुत काल जीया चाहे सो कैसे बनै? इन जीवनिके कर्म तप विना न विनशैं। ऐसा जानकर जो पंडित हैं तिनकूं वैरियों पर भी क्षमा करनी। क्षमा समान और तप नाहीं। जे विचक्षण पुरुष हैं वे ऐसी बुद्धि न करें कि यह दुष्ट बिगाड करै है। या जीवका उपकार अर बिगाड केवल कर्माधीन है, कर्म ही सुख दुःखका कारण है। ऐसा जानकर जे विचक्षण पुरुष हैं ते बाह्य सुख दुःखके निमित्त कारण अन्य पुरुषनि पर रागद्वेषभाव न धरैं। अन्धकारसे आच्छादित जो पंथ तामें नेत्रवान् पृथ्वीपर पड़े सर्प पर पग धरै अर सूर्यके प्रकाशसे मार्ग प्रकट होय तब नेत्रवान सुखसे गमन करै। तैसे जौलग मिथ्यारूप अन्धकारसे मार्ग नाहीं अवलोके तौलक नरकादि विवरमें पड़े, अर जब ज्ञान सूर्यका उद्योत होय तब सुखसे अविनाशपुर जाय पहुंचे।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रंथ, ताकी भाषावचनिकाविषै हस्त प्रहस्त नल नीलके पूर्वभवका वर्णन करनेवाला उनसठवां पर्व पूर्ण भया ॥५९॥

अथानन्तर हस्त प्रहस्त, नल नीलने हते सुन बहुत योधा क्रोधकर युद्धकूं उद्यमी भए। मारीच सिंह-जघन शम्भु स्वयंभू, ऊर्जित शुक सारण चन्द्र अर्क जगत्बीभत्स निस्वन ज्वर उग्र क्रमकर वज्राक्ष उद्दाम निष्ठुर गम्भीरनाद संनद संबृद्ध बाहू अनुसिदन इत्यादि राक्षस पक्षके योधा वानरवंशियोंकी सेनाकूं क्षोभ उपजावते भए। तिनकूं प्रबल जान वानरवंशियोंके योधा युद्धकूं उद्यमी भए। मदन मदनांकुर संताप प्रक्षित आक्रोश नन्दन दुरित अनघ पुष्पास्त्र विघ्न प्रियंकर इत्यादि अनेक वानरवंशी योधा राक्षसनिसे लडते भए। याने वाकूं ऊंचे स्वर से बुलाया, वाने याकूं बुलाया। इनके परस्पर संग्राम भया। नाना प्रकारके शस्त्रनिकरि आकाश व्याप्त होय गया। संताप तो मारीचसे लडता भया, अर अप्रथित सिंहजघनसे, अर विघ्न उद्दामसे, अर आक्रोश सारणसे, ज्वर नन्दनसे। इन समान योधावोंमें अद्भुत युद्ध भया। तब मारीचने संतापका निपात किया, अर नन्दनने ज्वरके वक्षस्थलमें बरछी दई, अर सिंहकटिने प्रथितके, अर उद्दामकीर्तिने विघ्नकूं हणा। ता समय सूर्य अस्त भया। अपने २ पतिकूं प्राणरहित भए सुन इनकी स्त्री शोकके सागरमें मग्न भईं, सो उनको रात्रि दीर्घ होती भई।

दूजे दिन महा क्रोधके भरे सामन्त युद्धकूं उद्यमी भए। वज्राक्ष अर क्षुभितार, मृगेन्द्रदमन अर विधि, शम्भू स्वयंभू, चन्द्रार्क अर वज्रोदर इत्यादि राक्षस पक्षके बड़े २ सामंत अर वानरवंशियों के सामंत परस्पर जन्मांतरके उपार्जित वैर तिनसे महा क्रोधरूप होय युद्ध करते भए। अपने जीवन में निस्पृह संक्रोधने महाक्रोधकर खिपितारिको महा ऊंचा स्वरकर बुलाया। अर बाहुबलीने मृगारिदमनकूं बुलाया। अर वितापीके विधिकूं बुलाया, इत्यादि अनेक योधा परस्पर युद्ध करते भए। अर योधा अनेक मूए। शार्दूलने वज्रोदरकूं घायल किया, अर खिपितार संक्रोधको मारता भया,

अर शम्भूने विशालद्युति मारा, अर स्वयम्भूने विजयकूं लोहयष्टिसे मारा, अर विधिने वितापीकूं गदासे मारया, बहुत कष्टसे। या भांति योधावोंने युद्धमें अनेक योधा हते सो बहुत बेर तक युद्ध भया।

राजा सुग्रीव अपनी सेनाकूं राक्षसनिकी सेनासे खेदखिन्न देख आप महा क्रोधका भरा युद्ध करवेकूं उद्यमी भया। तब अंजनीका पुत्र हनुमान हाथिनिके रथपर चढा राक्षसनिसूं युद्ध करता भया। सो राक्षसनिके सामंतनिके समूह पवनपुत्रकूं देखकर जैसे नाहरकूं देख गाय डरे तैसे डरते भए। अर राक्षस परस्पर बात करते भए कि यह हनुमान वानरध्वज आज घनोंकी स्त्रीनिकूं विधवा करेगा। तब याके सन्मुख माली आया। ताहि आया देख हनुमान धनुषविषैं बाण तान सन्मुख भए। तिनमें महायुद्ध भया। मंत्री मन्त्रीनिसे लड़ने लगे, रथी रथीनिसूं लगे, घोडानिके असवार घोडानिके असवारनिसूं लडते भए, हाथिनिके असवार हाथिनिके असवारनिसूं लडते भए। सो हनुमानकी शक्तिकरि माली पराङ्मुख भया तब वज्रोदर महा पराक्रमी हनुमानपर दौडा, युद्ध करता भया। चिरकाल युद्ध भया सो हनुमानने वज्रोदरकूं रथरहित किया। तब वह और दूजे रथपर चढ़ हनुमान पर दौड़ा। तब हनुमानने बहुरि ताकूं रथरहित किया। तब बहुरि पवनसे हू अधिक वेग है जाका ऐसे रथपर चढ हनुमानपर दौडा, तब हनुमानने ताहि हता सो प्राणरहित भया। तब हनुमानके सन्मुख महाबलवान रावणका पुत्र जम्बूमाली आया। सो आवते ही हनुमानकी ध्वजा छेद करता भया। तब हनुमानने क्रोधसे जम्बूमालीका बक्तर भेद्या, धनुष तोड़ डारया, जैसैं तृणको तोडैं। तब मंदोदरीका पुत्र नवा बक्तर पहिर हनुमानके वक्षस्थलविषैं तीक्ष्ण बाणनिसे घाव करता भया, सो हनुमानने ऐसा जाना मानो नवीनकमलकी नालिकाका स्पर्श भया। कैसा है हनुमान? पर्वत समान निश्चल है बुद्धि जाकी, बहुरि हनुमानने चन्द्रवक्र नामा बाण चलाया सो जम्बूमालीके रथके अनेक सिंह जुते सो छूट गए, तिनहीके कटक विषैं पड़े। तिनकी विकराल दाढ, विकराल बदन, भयंकर नेत्र, तिनकरि सकल सेना विह्वल भई। मानों सेनारूप समुद्रविषैं ते सिंह कल्लोलरूप भए उछलते फिरैं हैं, अथवा दुष्ट जलचर जीवनिसमान विचरैं

का भाई सुन्दर इसका नन्दन विरोधरूप है चित्त जिसका, सो इन्द्रजीतके पुत्र वज्रमालीपै आया, अर
कहा मेरा बाबा अर दादा दोनों लक्ष्मणने मारे सो मेरा रघुवंशिनिसूं बैर है। अर हमारा पाताल-
लंकाका राज्य खोस लिया, अर विराधितकूं दिया, अर वानरवंशियोंका शिरोमणि सुग्रीव स्वामीद्रोही
होय रामसूं मिला, सो राम समुद्र उल्लंघ लंका आए, राक्षसद्वीप उजाड्या। रामकूं सीताका अति

दुःख, सो लंका लेयवेका अभिलाषी भया। अर सिंहवाहिनी अर गरुड़वाहिनी दोय महाविद्या राम
लक्ष्मणकूं प्राप्त भई तिनकरि इन्द्रजीत कुम्भकर्ण बंदीमें किए। अर लक्ष्मणके चक्र हाथ आया।
उसकरि रावणकूं हत्या। अब कालचक्रकरि लक्ष्मण मूवा सो वानरवंशियोंकी पक्ष टूटी, वानरवंशी
लक्ष्मणकी भुजावोंके आश्रयसूं उन्मत्त होय रहे थे। अब क्या करेंगे, वे निरपक्ष भए। अर रामकूं
ग्यारह पक्ष हो चुके, बारहमां पक्ष लगा है, सो गहला होय रहा है। भाईके मृतक शरीरकूं लिए फिरै
है। ऐसा मोह कौनकूं होय? यद्यपि राम समान योधा पृथ्वीमें और नाहीं, वह हल मूसलका धरण-
हारा अद्वितीय मल्ल है, तथापि भाईके शोकरूप कीचमें फस्या निकसवे समर्थ नाहीं। सो अब रामसूं
वैर भाव लेनेका दाव है। जिसके भाईने हमारे वंशके बहुत मारे। शम्बूकके भाईके पुत्रने इन्द्रजीतके
बेटेकूं यह कह्या सो क्रोधकरि प्रज्वलित भया, मंत्रियोंकूं आज्ञा देय रणभेरी दिवाय सेना भेलीकर
शम्बूकके भाईके पुत्रसहित अयोध्याकी ओर चाल्या। सेनारूप समुद्रकूं लिए प्रथम तो सुग्रीवपर कोप
किया कि सुग्रीवकूं मार अथवा पकड़ उसके देश खोसलें। बहुरि रामसूं लड़ें। यह विचार इन्द्रजीत
के पुत्र वज्रमालीने किया। सुन्दरके पुत्र सहित चढ्या। तब ये समाचार सुनकरि सब विद्याधर जे
रामके सेवक थे वे रामचन्द्रके निकट अयोध्यामें आय भेले भए। जैसी भीड़ अयोध्यामें अंकुशके आयवे
के दिन भई थी तैसी भई। वैरियोंकी सेना अयोध्याके समीप आई सुनकरि रामचन्द्र लक्ष्मणकूं
कांधे लिए ही धनुष बाण हाथविषै सम्हारे, विद्याधरनिकूं संग लेय आप बाहिर निकसे। उस समय
कृतांतवक्रका जीव अर जटायु पक्षीका जीव चौथे स्वर्ग देव भए थे तिनके आसन कम्पायमान भए।

दर्शनके प्रकाशकूं रोकै तैसें कुम्भकरणकी विद्या वानरवंशिनिके नेत्रनिके प्रकाशकूं रोकती भई। सब ही कपिध्वज निद्रासे घूमने लगे अर तिनके हाथनिसे हथियार गिर पड़े। तब इन सबोंको निद्रावश
पद्म अचेतन समान देख सुग्रीवने प्रतिबोधिनी विद्या प्रकाशी। सो सब वानरवंशी प्रतिबोध भए, अर हनु-
पुराण मानादि युद्धकूं प्रवर्ते। वानरवंशीनिके बलमें उत्साह भया अर युद्धमें उद्यमी भए, अर राक्षसनिकी
६०५ सेना दबी। तब रावण आप युद्धकूं उद्यमी भए, तब बड़ा बेटा इन्द्रजीत हाथ जोड़ शिर निवाय विनती करता भया—हे तात! हे नाथ! यदि मेरे होते आप युद्धकूं प्रवर्ते तो हमारा जनम निष्फल है, जो तृण नखहीसे उपड़ आवे उसपर फरसी उठावना कहा? तातैं आप निश्चिन्त होवें, मैं आपकी आज्ञाप्रमाण करूंगा। ऐसा कहकर महाहर्षित भया पर्वतसमान त्रैलोक्यकंटक नामा गजेन्द्रपर चढ़ युद्धकूं उद्यमी भया। कैसा है गजेन्द्र? इन्द्रके गज समान अर इन्द्रजीतकूं अतिप्रिय, अपना सब साज लेय मंत्रीनिसहित ऋद्धिसे इन्द्र समान रावणका पुत्र कपिनपर क्रूर भया। सो महाबलका स्वामी मानो आवत प्रमाण ही वानर वंशीनिका बल अनेक प्रकारके आयुधनिकरि जो पूर्ण हुता सर्व विह्वल किया। सुग्रीवकी सेनामें ऐसा सुभट कोई न रहा जो इन्द्रजीतके बाणनिकरि घायल न भया। लोक जानते भए जो यह इन्द्रजीत कुमार नाहीं, अग्निकुमारोंका इन्द्र है अथवा सूर्य है। सुग्रीव अर भामं-डल ये दोऊ अपनी सेनाकूं इन्द्रजीत कर दबी देख युद्धकूं उद्यमी भए। इनके योधा इन्द्रजीतके योधानिसे अर ये दोनों इन्द्रजीतसे युद्ध करने लगे सो परस्पर योधा योधावोंको हंकार हंकार बुलावते भए। ६०५
शस्त्रोंसे आकाशमें अन्धकार होय गया, योधानिके जीवनेकी आशा नाहीं। गजसे गज, रथसे रथ, तुरंगसे तुरंग, सामंतोंसे सामंत उत्साहकर युद्ध करते भए। अपने अपने नाथके अनुरागविषै योधा परस्पर अनेक आयुधनिकर प्रहार करते भए। ताही समय इन्द्रजीत सुग्रीवकूं समीप आया देख ऊँचे स्वरकर अपूर्व शस्त्ररूप दुर्वचननिकर छेदता भया अरे वानरवंशी, पापी स्वामीद्रोह! रावण स्वामीको तज स्वामीके शत्रुका किंकर भया। अब मुझसे कहां जायगा तेरे शिरको तीक्ष्ण बाणनिकरि

तत्काल छेदूंगा। ये दोनों भाई भूमिगोचरी तेरे रक्षा करें। तब सुग्रीव कहता भया ऐसे वृथा गर्वके वचन कर कहा तू मानशिखर पर चढा है ? सो अबारही तेरा मानभंग करूंगा। जब ऐसा कहा तब इन्द्रजीतने कोपकर धनुष चढ़ाय बाण चलाया, अर सुग्रीवने इन्द्रजीत पर चलाया। दोनों महा योधा परस्पर बाणनिकर लडते भए। आकाश बाणनिसे आच्छादित होय गया। मेघवाहनने भामण्डलको हंकारा सो दोनों भिड़े। अर विराधित अर वज्रनक्र युद्ध करते भए। सो विराधितने वज्रनक्रके उर-स्थलमें चक्रनामा शस्त्रकी दई अर वज्रनक्रने विराधितके दई। शूरवीर घात पाय शत्रुके घाव न करैं तो लज्जा है, चक्रनिकरि बखतर पीसे गए तिनके अग्निकी कणका उछली सो मानों आकाशसे उलका-ओंके समूह पड़े हैं। लंकानाथके पुत्रने सुग्रीवपै अनेक शस्त्र चलाए। लंकेश्वरके पुत्र संग्राममें अटल हैं जा समान दूजा योधा नाहीं। तब सुग्रीवने वज्रदंडसे इन्द्रजीतके शस्त्र निराकरण किए जिनके पुण्य का उदय है तिनका घात न होय। फिर क्रोधकर इन्द्रजीत हाथीसे उतर सिंहके रथ चढा। समाधान रूप है बुद्धि जाकी, नानाप्रकारके दिव्य शस्त्र अर सामान्य शस्त्र इनमें प्रवीण। सुग्रीव पर मेघबाण चलाया, सो सम्पूर्ण दिशा जलरूप होय गई। तब सुग्रीवने पवनबाण चलाया, सो मेघबाण बिलाय गया। अर इन्द्रजीतका छत्र उडाया, अर ध्वजा उडाई। अर मेघवाहनने भामंडल पर अग्निबाण चलाया, सो भामंडलका धनुष भस्म होय गया अर सेनामें अग्नि प्रज्वलित भई। तब भामण्डलने मेघवाहनपर मेघ-बाण चलाया, सो अग्निबाण बिलाय गया अर अपनी सेनाकी बहुरि रक्षा करी। मेघवाहनने भामण्डलकूं रथ रहित किया तब भामण्डल दूजे रथ चढ युद्ध करने लगा। मेघवाहनने तामसबाण चलाया सो भामण्डलकी सेनामें अन्धकार होय गया, अपना पराया कुछ सूझे नाहीं, मानों मूर्छाकूं प्राप्त भए। तब मेघवाहनने भामण्डलकूं नागपाससे पकडा, मायामई सर्प सर्व अंगमें लिपट गए, जैसे चन्दनके वृक्षके नाग लिपट जावैं। कैसे हैं नाग ? भयंकर जे फण तिनकर महा बिकराल। भामण्डल पृथ्वीपर पडा अर याही भांति इन्द्रजीतने सुग्रीवको नागपाशकर पकड़ा सो धरतीपर पड़ा। तब बिभीषण जो विद्या

बलमें महाप्रवीण श्रीराम लक्ष्मणसूं दोऊ हाथ जोड सीस निवाय कहता भया–हे राम महाबाहु ! हे लक्ष्मण महावीर ! इन्द्रजीतके बाणनिसे व्याप्तभई सब दिशा देखहु । धरती अर आकाश बाणनिकर आच्छादित है । उल्कापातके स्वरूप नागबाण तिनकरि सुग्रीव अर भामण्डल दोऊ भूमिविषै बंधे पड़े हैं । मन्दोदरीके दोनों पुत्रोंने अपने दोनों महाभट पकडे, अपनी सेनाके जे दोनों मूल थे वे पकड़े गए । तब हमारे जीवनकरि कहा ? इन विना सेना शिथिल होय गई है । देखो दशों दिशाकूं लोक भागे हैं, अर कुम्भकरणने महायुद्धविषै हनुमानकूं पकडा है । कुम्भकरणके बाणनिकरि हनुमान जरजरे भए, छत्र उड गये, ध्वजा उडगई, धनुष टूटा, बक्तर टूटा । रावणके पुत्र इन्द्रजीत अर मेघवाहन युद्ध विषै लग रहे हैं । अब वे आयकर सुग्रीव भामंडलकूं ले जायंगे, सौ वे न ले जावें तो पहिले ही आप उनकूं ले आवें । वे दोनों चेष्टारहित हैं सो मैं उनके लेवेकूं जाऊं हूं । अर आप भामण्डल सुग्रीवकी सेना निर्नाथ होय सो उसे थांभहु । या भांति विभीषण राम लक्ष्मणसे कहे हैं ताही समय सुग्रीवका पुत्र अंगद छानेछाने कुम्भकरण पर गया, अर उसका उत्तरासनवस्त्र परे किया, सो लज्जाके भारकर व्याकुल भया । वस्त्रको थांभे तो लग, हनुमान इसकी भुजाफांससे निकस गया । जैसे नवा पकडा पक्षी पिंजरे से निकस जाय । हनुमान नवीन ज्योतिकूं धरे अर अंगद दोनों एक विमान बैठे ऐसे शोभते भए मानों देव ही हैं । अर अंगदका भाई अंग अर चंद्रोदयका पुत्र विराधित इन सहित लक्ष्मण सुग्रीवकी अर भामंडलकी सेनाकूं धैर्य बन्धाय थांभते भए । अर विभीषण इन्द्रजीत मेघवाहनपर गया सो विभीषणकूं आवता देख इन्द्रजीत मनमें विचारता भया–जो न्याय विचारिए तो हमारे पितामें अर यामें कहा भेद है ? तातैं याके सन्मुख लडना उचित नाहीं । सो याके सन्मुख खड़ा न रहना यही योग्य है । अर ये दोनो भामंडल सुग्रीव नागपाशमें बंधे सो निःसन्देह मृत्युकूं प्राप्त भए । अर काकातैं भाजिए तो दोष नाहीं । ऐसा विचार दोनों भाई महा अभिमानी, न्यायके वेत्ता विभीषणसे टरि गए । अर विभीषण त्रिशूलका है आयुध जाकै, रथसे उतर सुग्रीव भामंडलके समीप गया । सो दोनोंको नागपाशसे मूर्छित देख खेद-खिन्न

होता भया। तब लक्ष्मण रामसूं कही हे नाथ! ये दोनों विद्याधरनिके अधिपति, महासेनाके स्वामी, महा शक्तिके धनी, भामण्डल सुग्रीव रावणके पुत्रनि शस्त्र रहित कीए, मूर्छित होय पड़े हैं। सो इन बगैर आप रावणकूं कैसैं जीतेंगे। तब रामकूं पुण्यके उदयसे गरुड़ेन्द्रने वर दिया था सो चितार लक्ष्मणसे राम कहते भए–हे भाई! वंशस्थल गिरिपर देशभूषण कुलभूषण मुनिका उपसर्ग निवारा उस समय गरुड़ेन्द्रने वर दिया था–ऐसा कह महा लोचन रामने गरुड़ेन्द्रको चितारा, सो सुख अवस्था में तिष्ठै था। सिंहासन कम्पायमान भया। तब अवधि कर राम लक्ष्मणका काम जान चिंतावेग नामा देवकूं दोय विद्या देय पठाया, सो आयकर बहुत आदरसूं राम लक्ष्मणसे मिल्या। अर दोऊ विद्या तिनकूं दई। श्रीरामको सिंहवाहिनी विद्या दई, अर लक्ष्मणकूं गरुडवाहिनी विद्या दई। तब यह दोनों धीर विद्या लेय चिन्तावेगको बहुत सन्मान कर जिनेन्द्रकी पूजा करते भए अर गरुड़ेन्द्रकी बहुत प्रशंसा करी। वह देव इनको जलबाण, अग्निबाण, पवनबाण इत्यादि अनेक दिव्य शस्त्र देता भया। अर चांद सूर्य सारिखे दोनों भाइयोंको छत्र दिए, अर चमर दिए, नानाप्रकारके रत्न दिए, कांतिके समूह अर विद्युद्वक्र नाम गदा लक्ष्मणको दई, अर हल मूसल दुष्टोंको भयके कारण रामकूं दिए। या भांति वह देव इनको देवोपनीत शस्त्र देय अर सैकड़ों आशिष देय अपने स्थानक गया। यह सब धर्मका फल जानो जो समयमें योग्य वस्तुकी प्राप्ति होय, विधि पूर्वक निर्दोष धर्म आराधा होय, उसके ये अनुपम फल हैं। जिनकूं पाय करि दुःखकी निवृत्ति होय, महावीर्यके धनी आप कुशलरूप, अर औरनिकूं कुशल करैं। मनुष्यलोककी सम्पदाकी कहा बात, पुण्याधिकारियोंकूं देवलोककी वस्तु भी सुलभ होय है। तातैं निरंतर पुण्य करहु। अहो प्राणि हो! जो सुख चाहो तो प्राणियोंको सुख देवो। जिस धर्मके प्रसादसे सूर्य समान तेजके धारक होवो अर आश्चर्यकारी वस्तुनिका संयोग होय।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रन्थ ताकी भाषा वचनिकाविषैं राम लक्ष्मणकूं अनेक विद्याका लाभ वर्णन करनेवाला सांठवां पर्व पूर्ण भया ॥ ६० ॥

अथानन्तर राम लक्ष्मण दोऊ वीर, तेजके मंडलमें मध्यवर्ती, लक्ष्मीके निवास, श्रीवत्स लक्षण कूं धरे, महामनोज्ञ कवच पहिरे, सिंहवाहन गरुडवाहन पर चढ़े, महासुन्दर सेना सागरके मध्य, सिंह की अर गरुड़की ध्वजा धरें, परपक्षके क्षय करवेकूं उद्यमी, महासमर्थ सुभटोंके ईश्वर, संग्राम भूमि के मध्य प्रवेश करते भए। आगे आगे लक्ष्मण चला जाय है। दिव्य शस्त्रके तेजसे सूर्यके तेजकूं आच्छादित करता हुआ हनुमान आदि बड़े बड़े योधा वानरवंशी तिनकर मंडित। वर्णन में न आवे ऐसा देवोंका सा रूप धरे, बारह सूर्यकीसी ज्योतिलिये, लक्ष्मणको विभीषणने देखा। सो जगत्कूं आश्चर्य उपजावे ऐसे तेजकर मंडित, सो गरुडवाहनके प्रतापकर नागपासका बन्धन भामण्डल सुग्रीवका दूर भया। गरुड़ के पक्षोंकी पवन क्षीरसागरके जलकूं क्षोभ रूप करे, उससे वे सर्प विलाय गये जैसे साधुवोंके प्रतापसे कुभाव मिट जाय। पक्षनकी कांतिकर लोक ऐसे होय गए मानों सुवर्णके रस कर निरमापे हैं। तब भामण्डल सुग्रीव नागपाससे छूट विश्रामकूं प्राप्त भए, मानों सुख निद्रा लेय जाग अधिक शोभते भए। तब इनकूं देख श्रीवृक्ष प्रथादिक सब विद्याधर विस्मयकूं प्राप्त भए अर तब ही श्रीराम लक्ष्मणकी पूजाकर वीनती करते भए—हे नाथ! आजकीसी विभूति हम अब तक कभी न देखी—वाहन, वस्त्र, सम्पदा, छत्र ध्वजायें अद्भुत शोभा दीखे है। तब श्रीरामने जबसे अयोध्यासे चले तबसे लेय सर्व वृत्तांत कहा, कुलभूषण, देशभूषणका उपसर्ग दूर किया सो सर्व वृत्तांत कहा। तिन्होंको केवल उपजा अर कही—हमसे गरुडेन्द्र तुष्टायमान भया। सो अबार उसका चिन्तवन किया उससे यह विद्याकी प्राप्ति भई। तब वे यह कथा सुन परम हर्षकूं प्राप्त भए, अर कहते भए इस ही भव में साधु सेवासे परम यश पाइए है, अर अति उदार चेष्टा होय है, अर पुण्यकी विधि प्राप्ति होय है। अर जैसा साधु सेवा से कल्याण होय है वैसा न माता पिता, न मित्र, न भाई, कोई जीवोंको न करै। साधु या प्राणी सेवाकी प्रशंसामें लगाया है चित्त जिन्होंने, जिनेन्द्रके मार्गकी उन्नतिमें उपजी है श्रद्धा जिनके, वे राजा बलभद्र नारायणका आश्रयसे महा विभूतिसे शोभते भए। भव्यजीवरूप कमल तिनकूं प्रफुल्लित करन-

हारी यह पवित्र कथा, उसे सुनकर वे सर्व ही हर्षके समुद्रमें मग्न भए। अर श्रीराम लक्ष्मणकी सेवामें अति प्रीति करते भए। अर भामण्डल सुग्रीव, मूर्छा रूप निद्रासे रहित भए हैं नेत्र कमल जिनके श्री भगवानकी पूजा करते भए। वे विद्याधर श्रेष्ठ देवों सारिखे सर्वथा प्रकार धर्ममें श्रद्धा करते भए। जो पुण्याधिकारी जीव हैं सो इस लोकमें परम उत्सवके योगकूं प्राप्त होय हैं। यह प्राणी अपने स्वार्थसे संसारमें महिमा नाहीं पावै है, केवल परमार्थसे महिमा होय है। जैसा सूर्य पर पदार्थको प्रकाशै वैसे शोभा पावै है।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रंथ, ताकी भाषावचनिकाविषै सुग्रीव भामंडलका नाग पासतैं छूटना अर हनुमानकी कुम्भकरणकी भुजापासितैं छूटना राम लक्ष्मणकूं सिंहविमान गरुडविमानकी प्राप्ति निरूपण वर्णनकरनेवाला इकसठवां पर्व पूर्ण भया।६१।

अथानन्तर श्रीरामके पक्षके योधा महा पराक्रमी, रणरीतिके वेत्ता, शूरवीर, युद्धकूं उद्यमी भए। वानरवंशियों की सेनासे आकाश व्याप्त भया, अर शंख आदि वादित्रनिके शब्द अर गजोंकी गर्जना अर तुरंगनिके हींसिवेका शब्द सुनकर कैलाशका उठावनहारा जो रावण, अति प्रचंड है बुद्धि जाकी, महामानी, देवन सारिखी है विभूति जाके, महा प्रतापी, बलवान, सेनारूप समुद्रकर संयुक्त, शस्त्रनिके तेजकर पृथ्वीमें प्रकाश करता, पुत्र भ्रातादिक सहित लंकासे निकसा, युद्धकूं उद्यमी भया। दोनों सेनाके योधा बखतर पहिर संग्रामके अभिलाषी नानाप्रकार वाहननिविषै आरूढ, अनेक आयुधनिके धरणहारे, पूर्वोपाजित कर्मसे महाक्रोधरूप परस्पर युद्ध करते भए। चक्र, करोत, कुठार, धनुष बाण, खड्ग, लोहयष्टि, वज्र, मुद्गर, कनक, परिध इत्यादि अनेक आयुधनि से परस्पर युद्ध भया। घोड़के असवार घोड़के असवारों से लडने लगे, हाथियोंके असवार हाथियोंके असवारोंसे, रथोंके रथियोंसे महाधीर लड़ने लगे। सिंहों के असवार सिंहोंके असवारोंसे, पयादे पयादोंसे भिड़ते भए। बहुत देरमें कपिध्वजोंकी सेना राक्षसोंके योधावोंसे दबी। तब नल नील संग्राम करने लगे। सो इनके युद्धसे राक्षसोंकी सेना चिगी। तब लंकेश्वरके योधा समुद्रकी कल्लोल सारिखे चंचल, अपनी सेनाकूं कम्पायमान देख, विद्युद्वचन मारीच,

चन्द्रार्क, सुखसारण, कृतांतमृत्यु, भूतनाद, संक्रोधन इत्यादि महा सामन्त अपनी सेनाकू धीर्य बंधायकर कपिध्वजोंकी सेनाकूं दबावते भए। तब मर्कटवंशी योद्धा अपनी सेनाकूं चिगा जान हजारों युद्धको उठे। सो उठते ही नानाप्रकारके आयुधनिकरि राक्षसनिकी सेनाकूं हणते भए, अति उदार है चेष्टा जिनकी। तब रावण अपनी सेनारूप समुद्रकूं कपिध्वज रूप प्रलय कालकी अग्निसे सूखता देख आप कोपकर युद्ध करवेकूं उद्यमी भया। सो रावणरूप प्रलयकालकी पवनसें बानरवंशी सूखे पात उड़ने लगे। तब विभीषण महायोधा बानर वंशियोंकूं धीर्य बंधाय तिनकी रक्षा करवेकू आप रावणसे युद्धकूं सन्मुख भया। तब रावण लहुरे भाईकूं युद्धमें उद्यमी देख क्रोधकर निरादर वचन कहता भया, रे बालक! तू लघुभ्राता है, सो मारवे योग्य नाहीं। मेरे सन्मुखसे दूर हो। मैं तुझे देखे प्रसन्न नाहीं। तब विभीषणने रावणसे कही—कालके योगसे तू मेरी दृष्टि पड़ा। अब मोसें कहां जायगा। तब रावण अति क्रोधमें कहता भया—रे पुरुषत्वरहित क्लिष्ट धृष्ट पापिष्ट कुचेष्टि नरकाधिकार! तोकू तो सारिखे दीनकूं मारे मुझे हर्ष नाहीं। तू निर्बल रंक अवध्य है। अर तो सारिखा मूर्ख और कौन जो विद्याधरोंकी सन्तानोंमें होयकर भूमिगोचरियोंका आश्रय करै, जैसे कोई दुर्बुद्धि पाप कर्मके उदयसे जिनधर्मको तज मिथ्यात्वका सेवन करै। तब विभीषण बोला हे रावण! बहुत कहनेकरि कहा? तेरे कल्याणकी बात तुझे कहूं हूं सो सुन। एती भई तो भी कुछ बिगड़ा नाहीं। जो तू अपना कल्याण चाहै है तो रामसूं प्रीतिकर, सीता रामकूं सौंप, अर अभिमान तज रामकूं प्रसन्न कर। स्त्रीके निमित्त अपने कुलको कलंक मत लगावै। अथवा तू मेरे वचन नहीं मानै है सो जानिए है तेरी मृत्यु नजीक आई है। समस्त बलवन्तनिमें मोह महा बलवान है। तू मोहसे उन्मत्त भया है। ये वचन भाईके सुन कर रावण अति क्रोधरूप भया। तीक्ष्णबाण लेय विभीषणपर दौड्या। और भी रथ घोड़े हाथिनके असवार स्वामी भक्तिमें तत्पर महायुद्ध करते भए। विभीषणने भी रावणकूं आवता देख अर्धचन्द्र बाणसे रावणकी ध्वजा उड़ाई, अर रावणने क्रोधकर बाण चलाया सो विभीषणका धनुष तोड्या,

अर हाथसूं बाण गिरा। तब विभीषणने दूजा धनुष लेय बाण चलाया सो रावणका धनुष तोड्या। या भांति दोनों भाई महायोधा परस्पर जोरसूं युद्ध करते भए, अर अनेक सामंतनिका क्षय भया। तदि इन्द्रजीत महायोधा पिताभक्त पिताको पक्ष विभीषणपर आया। तब ताहि लक्ष्मणने रोक्या जैसें पर्वत सागरकूं रोकै। अर श्रीरामने कुम्भकरणकूं घेर्या, अर सिंहकटिसे नील, अर शम्भूसे नल अर स्वयंभूसे दुर्मती, अर घटोदरसे दुर्मुख, शक्रासनसे दुष्ट, चन्द्रनखसे काली, भिन्नाञ्जनसे स्कन्ध, विघ्नसे विराधित, अर मयसे अंगद, अर कुम्भकरणका पुत्र जो कुम्भ उससे हनुमानका पुत्र, अर सुमालीसे सुग्रीव, अर केतुसे भामण्डल, कामसे दृढरथ, क्षोभसे बुध इत्यादि बड़े बड़े राजा परस्पर युद्ध करते भए। अर समस्त ही योधा परस्पर रण रचते भए। वह वाहि बुलावै। बराबरके सुभट कोई कहै हैं—मेरा शस्त्र आवै है उसे झेल। कोई कहै है तू हमसे युद्ध योग्य नाहीं, बालक है, वृद्ध है, रोगी है, निर्बल है, तू जा। फलाने सुभट युद्ध योग्य है सो आवो। या भांतिके वचनालाप होय रहे हैं। कोई कहै हैं याही छेदो। कोई कहे हैं बाण चलाओ, कोई कहै है मार लेवो, पकड़ लेवो, बांध लेवो, ग्रहण करो, छोड़ो, चूर्ण करो, घाव लगे ताहि सहो, घाव देहु, आगे होवो, मूर्छित मत होवो,सावधान होवो, तू कहा डरै है ? मैं तुझे न मारूं, कायरनिकूं न मारना, भागोंको न मारना, पडेको न मारना, आयुध-रहितपर चोट न करनी, तथा रोगसे ग्रसा मूर्छित दीन बाल वृद्ध यति व्रती स्त्री शरणागत तपस्वी पागल पशु पक्षी इत्यादिकूं सुभट न मारैं। यह सामन्तनिकी वृत्ति है। कोई अपने वंशियोंको भागते देख धिक्कार शब्द कहै है और कहै हैं—तू कायर है, नष्ट है मति, कांपै कहां जाय है, धीरा रहो,अपने समूहमें खड़ा रहू, तोसूं क्या होय है, तोसूं कौन डरै, तू काहेका क्षत्री ? शूर और कायरनिके परखनेका यह समय है। मीठा मीठा अन्न तो बहुत खाते यथेष्ट भोजन करते अब युद्धमें पीछे क्यों होवो ? या भांति धीरोंकी गर्जना और वादित्रनिका बाजना तिनसूं दशों दिशा शब्दरूप भई। और तुरंगनिके खुरकी रजसे अंधकार होय गया। चक्र शक्ति गदा लोहयष्टि कनक इत्यादि शस्त्रनिसे युद्ध भया,

मानों ये शस्त्र कालकी डाढही हैं। लोग घायल भए। दोनों सेना ऐसी दीखैं मानों लाल अशोकका वन है, अथवा केसूका वन है, अर अथवा पारिभद्रजातिके वृक्षोंका वन है। कोई योधा अपने बखतर को टूटा देख दूजा बखतर पहरता भया, जैसे साधु व्रतमें दूषण उपजा देख फिर पीछे दोष स्थापना करै। और कोई दांतोंसे तरवार थाम्भ कमर गाढी कर फिर युद्धकूं प्रवृत्ता। कोई यक सामन्त माते हाथियोंके दांतोंके अग्रभागसे बिदारा गया है वक्षस्थल जाका, सो हाथीके चालते जे कान, वेई भए बीजना, उससे मानों हवासे सुख रूप कर रहे हैं। और कोईइक सुभट निराकुल बुद्धि हुआ, हाथीके दांतनिपर दोनों भुजा पसार सोवै है, मानों स्वामी कार्यरूप समुद्रसे उतरा। अर कईएक योधा युद्धसे रुधिरका नाला बहावते भए जैसैं पर्वतसें गेरुकी खानसे लाल नीझरने बहैं। अर कईएक योधा पृथ्वीमें साम्हने मुहसे पड़े होठ डसते, शस्त्र जिनके करमें, टेढी भौंह, विकराल वदन, इसरीतिसे प्राण तजे हैं! अर कईएक भव्यजीव महा संग्रामसूं अत्यन्त घायल होय, कषायका त्याग कर, संन्यास धर, अविनाशी पदका ध्यान करते देहकूं तज उत्तम लोककूं पावै हैं। कईएक धीरवीर हाथिनिके दांत निकूं हाथसे पकड़कर ही देह रुधिर की छटा शरीरसे पड़े हैं, शस्त्र हैं हाथनिमें जिनके, अर कईएक काम आय गए तिनके मस्तक गिर पड़े, अर सैकडों धड़ नाचे हैं। कईएक शस्त्ररहित भए अर घावोंसे जरजरे भये तृषातुर होय जल पीवनेको बैठे हैं, जीवनकी आशा नाहीं। ऐसे भयंकर संग्रामके होते परस्पर अनेक योधावोंका क्षय भया। इन्द्रजीत तीक्ष्ण बाणनिसे लक्ष्मणकूं आच्छादने लगा, अर लक्ष्मण उसको। सो इन्द्रजीतने लक्ष्मण पर तामस बाण चलाया सो अंधकार होय गया। तब लक्ष्मण ने सूर्यबाण चलाया उससे अंधकार दूर भया। फिर इन्द्रजीतने आशीविष जातिके नागबाण चलाये सो लक्ष्मण अर लक्ष्मणका रथ नागोंसे वेष्टित होने लगा। तब लक्ष्मणने गरुडबाणके योगसे नागबाण का निराकरण किया, जैसे योगी महातपसे पूर्वोपार्जित पापोंके समूहकूं निराकरण करै। अर लक्ष्मण-ने इन्द्रजीतकूं रथरहित किया। कैसा है इन्द्रजीत? मंत्रियोंके मध्य तिष्ठै है, अर हाथियोंकी घटावों-

से वेष्टित है। सो इन्द्रजीत दूजे रथ चढ़ि अपनी सेनाकू वचनकरि, क्रियाकरि रक्षा करता संता लक्ष्मण पर तप्त बाण चलावता भया। उसे लक्ष्मणने अपने विद्यासे निवार इन्द्रजीतपर आशीविष जातिका नागबाण चलाया, सो इन्द्रजीत नागवाणसे अचेत होय भूमिमें पडा, जैसे भामण्डल पड़ा था। और रामने कुम्भकरणकू रथरहित किया। बहुरि कुम्भकरणने सूर्यवाण रामपर चलाया सो रामने ताका बाण निराकरणकर नागवाणकर ताहि बेढा सो कुम्भकरण भी नागोंका बेढा थका धरती पर पड़ा।

यह कथा गौतमगणधर राजा श्रेणिकतैं कहै हैं—हे श्रेणिक ! बडा आश्चर्य है ते नागबाण धनुषके लगे उल्कापातस्वरूप होय जाय हैं, अर शत्रुओंके शरीरके लग नागरूप होय उसको बेढै हैं। यह दिव्य शस्त्र देवोपनीत है, मनवांछित रूप करै हैं, एक क्षणमें बाण एक क्षणमें दंड, क्षण एकमें पाश रूप होय परणवैं हैं। जैसैं कर्म—पाशकर जीव बंधे तैसैं नागपाश कर कुम्भकरण बन्धा ? सो रामकी आज्ञा पाय भामण्डलने अपने रथ में राखा। कुम्भकरणकू रामने भामंडलके हवाले किया अर इन्द्रजीतको लक्ष्मणने पकड़ा सो विराधितके हवाले किया। सो विराधितने अपने रथ में राखा, खेदखिन्न है शरीर जाका। ता समय युद्धमें रावण विभीषणको कहता भया जो यदि तू आपको योधा मानै है तो एक मेरा घाव सह, जाकरि रणकी खाज बुझे। यह रावणने कही। कैसा है विभीषण? क्रोधकर रावणके सन्मुख है, अर विकराल करी है रणक्रीडा जाने। रावणने कोपकर विभीषणपर त्रिशूल चलाया, कैसा है त्रिशूल ? प्रज्ज्वलित अग्निके स्फुलिंगोंकर प्रकाश किया है आकाशमें जाने, सो त्रिशूल लक्ष्मण ने विभीषणतक आवने न दिया, अपने बाणकर बीचहो भस्म किया। तब रावण अपने त्रिशूलको भस्म
किया देख अति क्रोधायमान भया, अर नागेन्द्रकी दई शक्ति महादारुण सो ग्रही। अर आगे देखे तो इन्दीवर कहिए नीलकमल ता समान श्याम सुन्दर, महा देदीप्यमान, पुरुषोत्तम, गरुडध्वज लक्ष्मण खड़े हैं। तब काली घटासमान गम्भीर उदार है शब्द जाका ऐसा दशमुख सो लक्ष्मणकू ऊंचे स्वरकर कहता भया—मानों ताडना ही करै हैं, तेरा बल कहां ? जो मृत्युके कारण मेरे शस्त्र तू झेलै। तू औरनिकी

तरह मोहि मत जाने। हे दुर्बुद्धि लक्ष्मण! जो तू मूवा चाहे है तो मेरा यह शस्त्र झेल। तब लक्ष्मण यद्यपि चिरकाल संग्रामकर अति खेदखिन्न भया है तथापि विभीषणको पीछेकर आप आगे होय रावण की तरफ दौड़े। तब रावणने महाक्रोध करि लक्ष्मणपर शक्ति चलाई। कैसी है शक्ति? निकसे हैं तारावोंके आकार स्फुलिंगनिके समूह जाविषैं। सो लक्ष्मणका वक्षस्थल महा पर्वतके तट समान ता शक्तिका विदारा गया। कैसी है शक्ति? महा दिव्य, अति देदीप्यमान, अमोघक्षेपा कहिए वृथा नाहीं है लगना जाका। सो शक्ति लक्ष्मणके अंगसों लगी। कैसी सोहती भई? मानों प्रेमकी भरी वधू ही है। सो लक्ष्मण शक्तिके प्रहारकर पराधीन भया है शरीर जाका सो भूमिपर पड़ा, जैसैं वज्रका मारा पहाड़ पड़े। सो ताहि भूमिपर पड़ा देख श्रीराम कमललोचन शोकको दबाय शत्रुके घात करिवेनिमित्त उद्यमी भए। सिंहोंके रथ चढ़े क्रोधके भरे शत्रुको तत्काल ही रथरहित किया। तब रावण और रथ चढ़ा। तब रामने रावणका धनुष तोड़ा। बहुरि रावण और धनुष लिया तितने रामने रावणका दूजा रथ भी तोड़ा। सो रामके बाणनिकर विह्वल रावण धनुषबाण लेयवे असमर्थ भया। तीव्र बाणनिकर राम रावणका रथ तोड़ डारे, वह बहुरि रथ चढ़े, सो अत्यन्त खेदखिन्न भया, छेदा है बक्तर जाका। सो छह बार रामने रथरहित किया तथापि रावण अद्भुतपराक्रमका धारी रामकर हता न गया। तब राम आश्चर्य पाय रावणसे कहते भए—तू अल्प आयु नाहीं, कोईयक दिन आयु बाकी है। तातैं मेरे बाणनिकर न मूवा। मेरी भुजाकर चलाए बाण महा तीक्ष्ण तिनकर पहाड भी भिद जाय, मनुष्यकी तो कहा बात? तथापि आयुकर्मने तोकूं बचाया। अब मैं तोहि कहूं सो सुन—हे विद्याधरोंके अधिपति!
मेरा भाई संग्राममें शक्तिकर तैनें हना, सो याकी मृत्युक्रिया कर मैं तोसों प्रभात ही युद्ध करूंगा। तब रावणने कही ऐसे ही करो। यह कह रावण इन्द्रतुल्य पराक्रमी लंकामें गया। कैसा है रावण? प्रार्थनाभंग करिवेकूं असमर्थ है। रावण मनमें विचारै है इन दोनों भाइयोंमें एक यह मेरा शत्रु अति प्रबल था। सो तो मैं हत्या। यह विचार कछुइक हर्षित होय महलविषै गया। कई एक जो योधा युद्ध

से जीवते आए तिनकूं देख हर्षित भया। कैसा है रावण ? योद्धाओं में है वात्सल्य जाके। बहुरि सुनी इन्द्रजीत मेघनाद पकड़े गए अर भाई कुम्भकरण पकड़ा गया सो या वृत्तांतकर रावण अति खेदखिन्न भया। तिनके जीवनेकी आशा नाहीं। यह कथा गौतमस्वामी राजा श्रेणिकसूं कहै हैं—हे भव्योत्तम ! अनेकरूप अपने उपार्जे कर्मोंके कारणसे जीवनिके नानाप्रकारकी साता असाता होय है। देख ! या जगत् विषै नानाप्रकारके कर्म तिनके उदयकर जीवनिके नानाप्रकारके शुभाशुभ होय हैं, अर नानाप्रकारके फल होय हैं। कईएक तो कर्मके उदयकर रणविषै नाशकूं प्राप्त होय है, अर कई एक बैरियोंको जीत अपने स्थानककूं प्राप्त होय हैं। अर काहूकी विस्तीर्ण शक्ति विफल होय जाय है, अर बन्धनकूं पावै है। सो जैसे सूर्य पदार्थोंके प्रकाशनमें प्रवीण है तैसे कर्म जीवनिको नानाप्रकारके फल देनेमें प्रवीण हैं।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महा पद्मपुराण संस्कृतग्रन्थ, ताकी भाषावचनिकाविषै लक्ष्मणके रावण के हाथकी शक्तिका लगना और भूमिविषै अचेत होय पड़ना वर्णन करनेवाला बासठवां पर्व पूर्ण भया ॥ ६२ ॥

अथानन्तर श्रीराम लक्ष्मणके शोककरि व्याकुल भए। जहां लक्ष्मण पड़ा हुता तहां आय पृथ्वी मण्डलका मंडन जो भाई ताहि चेष्टारहित शक्तिसे आलिंगित देख मूर्छित होय पडे। बहुरि घनी बेर में सचेत होयकर महाशोकसे संयुक्त, दुःखरूप अग्निसे प्रज्वलित, अत्यन्त विलाप करते भए—हा वत्स ! कर्मके योग कर तेरी यह दारुण अवस्था भई। आप दुर्लंघ्य समुद्र तर यहां आए, तू मेरी भक्तिमें सदा सावधान, मेरे कार्य निमित्त सदा उद्यमी, शीघ्र ही मेरेसे वचनालाप कर। कहा मौन धरे तिष्ठै है ? तू न जाने मैं तेरे वियोगकूं एक क्षणमात्र भी सहिवे सक्त नाहीं, उठ, मेरे उरसे लग। तेरा विनय कहां गया ? तेरे भुज गजके सूंड समान दीर्घ भुजबन्धननिकर शोभित सो ये क्रियारहित प्रयोजनरहित होय गए, भावमात्र ही रह गए। अर तू माता पिताने मोहि धरोहर सौंपा हुता सो अब मैं महानिर्लज्ज तिनकूं कहा उत्तर दूंगा ? अत्यन्त प्रेमके भरे अति अभिलाषी राम—हा लक्ष्मण ! हा

पद्म पुराण ६१७

लक्ष्मण ! ऐसा जगत्‌में हितु तो समान नाहीं, या भांतिके वचन कहते भए। लोक समस्त देखै हैं। अर महादीन भए भाईसूं कहै हैं, तू सुभटनिमें रत्न है, तो विना मैं कैसे जीऊंगा ? मैं अपना जीतव्य पुरुषार्थ तेरे विना विफल मानूं हूं। पापोंके उदयका चरित्र मैंने प्रत्यक्ष देखा। मोहि तेरे बिना सीता कर कहा ? अर अन्य पदार्थनिकर कहा ? जा सीताके निमित्त तेरे सारिखे भाईकूं निर्दय शक्तिकर पृथ्वीपर पड़ा देखूं हूं, सो तो समान भाई कहा ? काम अर्थ पुरुषोंको सब सुलभ है, अर और और सम्बन्धी पृथ्वीपर जहां जाइये वहां सब मिलें। परन्तु माता, पिता अर भाई न मिलें। हे सुग्रीव ! तैंने अपना मित्रपणा मुझे प्रति दिखाया। अब तुम अपने स्थानक जावो। अर हे भामण्डल ! तुम भी जावो। अब मैं सीताकी भी आशा तजी, अर जीवनेकी भी आशा तजी। अब मैं भाईके साथ निसंदेह अग्निमें प्रवेश करूंगा। हे विभीषण ! मोहि सीताका भी सोच नाहीं, अर भाईका सोच नाहीं, परन्तु तिहारा उपकार हमसे कछु न बना सो यह मेरे मनमें महा बाधा है। जे उत्तम पुरुष हैं ते पहिले ही उपकार करें। अर जे मध्यम पुरुष हैं ते उपकार पीछे उपकार करें। अर जो पीछे भी न करें वे अधम पुरुष हैं। सो तुम उत्तम पुरुष हो, हमारा प्रथम उपकार किया। ऐसे भाईसे विरोध कर हमपै आये। अर हमसे तिहारा कछु उपकार न बना। तातैं मैं अति आतापरूप हूं। हो भामंडल सुग्रीव चिता रचो, मैं भाईके साथ अग्निमें प्रवेश करूंगा। तुम जो योग्य हो सो करियो। यह कहकर लक्ष्मणकूं राम स्पर्शने लगे तब जांबूनद महा बुद्धिमान मना करता भया—हे देव ! यह दिव्यास्त्रसे मूर्छित भया है तिहारा भाई, सो स्पर्श मत करो। यह अच्छा हो जायगा। ऐसे होय है। तुम धीरताकूं धरो, कायरता तजो, आपदामें उपाय ही कार्यकारी है। यह बिलाप उपाय नाहीं, सुभट जन हो, तुमको विलाप उचित नाहीं। यह विलाप करना क्षुद्र लोगोंका काम है। तातैं अपना चित्त धीर करो, कोई यक उपाय अब ही बनै है। यह तिहारा भाई नारायण है सो अवश्य जीवेगा। अबार याकी मृत्यु नाहीं। यह कह सब विद्याधर विषादी भए, अर लक्ष्मणके अंगसे शक्ति निकसनेका उपाय अपने मन

में सब ही चितवते भए। यह दिव्य शक्ति है याहि औषधकर कोऊ निवारवे समर्थ नाहीं। अर कदापि सूर्य उगा तो लक्ष्मणका जीवना कठिन है। यह विद्याधर बारम्बार विचारते हुए उपजी है चिन्ता जिनके, कमरबंध आदि सब दूर कर, आध निमिषमें धरती शुद्धकर कपड़ेके डेरे खड़े किए। अर कटक की सात चौकी मेली। सो बड़े २ योधा बक्तर पहिरे, धनुष बाण धारे, बहुत सावधानीसे चौकी बैठे। प्रथम चौकी नील बैठे, धनुषबाण हाथमें धरे हैं। अर दूजी चौकी नल बैठे गदा करसें लिए। अर तीजी चौकी विभीषण बैठे महा उदार मन, त्रिशूल थांभे, अर कल्पवृक्षोंकी माला रत्ननिके आभूषण पहिरे ईशान-इन्द्र समान। अर चौथी चौकी तरकश बांधे कुमुद बैठे, महा साहस धरे। पांचवीं चौकी बरछी संभारे सुषेण बैठे, महा प्रतापी। अर छठी चौकी महा दृढ़भुज आप सुग्रीव इन्द्र सारिखा शोभायमान भिंडिमाल लिए बैठे। सातवीं चौकी महा शस्त्रका निकन्दक तलवार सम्हाले आप भामंडल बैठा। पूर्वके द्वार अष्टा-पदीकी है ध्वजा जाके सो शरभ ऐसा सोहता भया मानों महाबली अष्टापद ही है। अर पश्चिमके द्वार जाम्बुकुमार विराजता भया। अर उत्तरके द्वार मंत्रियोंके समूह सहित बालीका पुत्र महा बलवान चन्द्र-मरीच बैठा। या भांति विद्याधर चौकी बैठे। सो कैसे सोहते भए? जैसे आकाशमें नक्षत्रमण्डल भासे। अर वानरवंशी महाभट वे सब दक्षिण दिशाकी तरफ चौकी बैठे। या भांति चौकीका यत्नकर विद्याधर तिष्ठे। लक्ष्मणके जीनेमें है संदेह जिनके, प्रबल है शोक जिनका। जीवनिके कर्मरूप सूर्यके उदयकर फल का प्रकाश होय है ताहि न मनुष्य, न देव, न नाग, न असुर, कोई भी निवारवे समर्थ नाहीं। यह जीव अपना उपार्जा कर्म आपही भोगवै है।

इति श्रीरविषेणाचार्य विरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रंथ ताकी भाषावचनिकाविषै लक्ष्मणके शक्ति लगना अर रामका विलाप वर्णन करनेवाला त्रेसठवां पर्व पूर्ण भया ॥ ६३ ॥

अथानन्तर रावण लक्ष्मणका निश्चयसे मरण जान, अर अपने भाई दोऊ पुत्रनिको बुद्धिमें मरण रूप ही जान अत्यन्त दुःखी भया। रावण विलाप करै है—हाय भाई कुम्भकरण! परम उदार अत्यंत

हितु ! कहा ऐसी बन्धन अवस्थाकू प्राप्त भया ? हाय इन्द्रजीत, मेघनाद महा पराक्रमके धारी हो ! मेरी भुजा समान ! दृढ़कर्मके योगकर बन्धको प्राप्त भए। ऐसी अवस्था अबतक न भई। मैं शत्रुका भाई हना है सो न जानिए शत्रु व्याकुल भया कहा करै ? तुम सारिखे उत्तम पुरुष मेरे प्राणवल्लभ दुःख अवस्थाकू प्राप्त भए। या समान मोकों अति कष्ट कहा ? ऐसे रावण गोप्य भाई अर पुत्रनिका शोक करता भया। अर जानकी लक्ष्मणके शक्ति लगी सुन अति रुदन करती भई—हाय लक्ष्मण ! विनयवान गुणभूषण ! तू मो मंदभागिनीके निमित्त ऐसी अवस्थाकू प्राप्त भया। मैं तोहि ऐसी अवस्थाविषै हू देखा चाहू हू, सो दैवयोगसे देखने नाहीं पाऊं हू। तो सारिखे योधाको पापी शत्रुने हना सो कहा मेरे मरणका संदेह न किया ? तो समान पुरुष या संसारमें और नाहीं, जो बड़े भाईकी सेवामें आसक्त है चित्त जाका, समस्त कुटुम्बकू तज, भाईके साथ निकसा। अर समुद्र तिर यहां आया। ऐसी अवस्थाकू प्राप्त भया तोहि मैं कब देखू ? कैसा है तू ? बालक्रीडामें प्रवीण अर महा विनयवान, महा मिष्टवाक्य, वा अद्‌भुत कार्यका करणहारा। ऐसा दिन कब होयगा जो तुझे मैं देखू ? सर्व देव सर्वथा प्रकार तेरी सहाय करहु। हे सर्वलोकके मनके हरणहारे ! तू शक्तिको शल्यसे रहित होय। या भांति महा कष्टतैं शोकरूप जानकी विलाप करै। ताहि भावनिकरि अति प्रीतिरूप जो विद्याधरी तिनने धीर्य बंधाय शांतचित्त करी—हे देवि ! तेरे देवरके अबतक मरबेका निश्चय नाहीं, तातैं तू रुदन मत कर। अर महा धीर सामन्तोंकी यही गति है। अर या पृथ्वीविषै उपाय भी नाना प्रकारके हैं। ऐसे विद्याधरियोंके वचन सुन सीता किंचित् निराकुल भई। अब गौतमस्वामी राजा श्रेणिकतैं कहै हैं—हे राजन् ! अब जो लक्ष्मणका वृत्तांत भया सो सुन। एक योधा सुन्दर है मूर्ति जाकी, सो डेरोंके द्वारपर प्रवेश करता भामण्डलने देख्या, अर पूछा कि तू कौन, अर कहांसे आया, अर कौन अर्थ यहां प्रवेश करै है ? यहां ही रह, आगे मत जावो। तब वह कहता भया मोहि महीने ऊपर कई दिन गए हैं, मेरे अभिलाषा रामके दर्शनकी है, सो रामका दर्शन करूंगा। अर जो तुम

लक्ष्मणके जीवनेकी बांछा करो हो तो मैं जीवनेका उपाय कहूंगा। जब वाने ऐसा कहा तब भामंडल अति प्रसन्न होय, द्वार आप समान अन्य सुभट मेल, ताहि लार लेय, श्रीरामपं आया। सो विद्याधर श्रीरामसे नमस्कार कर कहता भया—हे देव! तुम खेद मत करो, लक्ष्मणकुमार निश्चयसेती जीवेगा। देवगीतनामा नगर, तहां राजा शशिमंडल, राणी सुप्रभा, तिनका पुत्र मैं चन्द्रप्रीतम। सो एक दिन आकाशविषै विचरता हुता। सो राजा वेलाध्यक्षका पुत्र सहस्रविजय, सो वासैं मेरा यह वैर कि मैं वाकी मांग परणी। सो वह मेरा शत्रु, ताके अर मेरे महा युद्ध भया। सो तानैं चण्डरवा नाम शक्ति मेरे लगाई। सो मैं आकाशसे अयोध्याके महेन्द्रनामा उद्यानमें पड़ा। सो मोहि पड़ता देख अयोध्याके धनी राजा भरत आय ठाढ़े भए। शक्तिसे विदारा मेरा वक्षस्थल देख, वे महा दयावान उत्तम पुरुष, जीवदाता मुझे चन्दनके जलकर छांटा। सो शक्ति निकल गई। मेरा जैसा रूप हुता वैसा होय गया। अर कुछ अधिक भया। वा नरेन्द्र भरतने मोहि नवा जन्म दिया जा कर तिहारा दर्शन भया।

यह वचन सुन श्रीरामचन्द्र पूछते भए कि वा गन्धोदककी उत्पत्ति तू जानै है। तब ताने कहा—हे देव! जानूं हूं, तुम सुनो। मैं राजा भरतको पूछी अर ताने मोहि कही—जो यह हमारा समस्त देश रोगनिकर पीडित भया। सो काहू इलाजसे अच्छा न होय। पृथ्वीविषै कौन-कौन रोग उपजे सो सुनो—उरोघात महादाहज्वर, लालपरिश्राव सर्वशूल, अर छर्दि, सोई, फोड़े इत्यादि अनेक रोग सर्वदेशके प्राणियोंको भए, मानों क्रोधकर रोगनिकी धाड ही देशविषै आई। अर राजा द्रोणमेघ प्रजासहित नीरोग। तब मैं ताको बुलाया अर कही—हे माम! तुम जैसे नीरोग हो तैसा शीघ्र मोहि अर मेरी प्रजाको करो। तब राजा द्रोणमेघने जाकी सुगन्धतासे दशोंदिशा सुगन्ध होय ता जलकर मोहि सींचा सो मैं चंगा भया। अर ता जलकर मेरा राजलोक भी चंगा अर नगर तथा देश चंगा भया, सर्व रोग-निवृत्त भए। सो हजारों रोगोंको करणहारी, अत्यन्त दुस्सह वायु, मर्मकी भेदनहारी ता जलसे जाती रही। तब मैंने द्रोणमेघको पूछा—यह जल कहांका है? जाकर सर्वरोगका विनाश होय। तब द्रोण-

मेघने कही—हे राजन् ! मेरे विशिल्यानामा पुत्री सर्वविद्याविषैं प्रवीण, महागुणवती । सो जब गर्भ विषै आई तब मेरे देशविषैं अनेक व्याधि हुतीं, सो पुत्रीके गर्भविषैं आवते ही सर्व रोग गए । पुत्री जिनशासनविषैं प्रवीण है, भगवानकी पूजाविषैं तत्पर है, सर्व कुटुम्बकी पूजनीक है । ताके स्नानका यह जल है । ताके शरीरकी सुगन्धतासे जल महा सुगन्ध है, क्षणमात्रविषैं सर्व रोगका विनाश करै है । ये वचन द्रोणमेघके सुनकर मैं अचिरजको प्राप्त भया । ताके नगरविषै जाय ताकी पुत्रीकी स्तुति करी । अर नगरीसे निकस सत्वरहित नामा मुनिको प्रणामकर पूछा—हे प्रभो ! द्रोणमेघकी पुत्री विशल्याका चरित्र कहो । तब चार ज्ञानके धारक मुनि महावात्सल्यके धरणहारे कहते भए—हे भरत ! महाविदेहक्षेत्रविषैं स्वर्गसमान पुण्डरीक देश, तहां त्रिभुवनानन्द नामा नगर, तहां चक्रधर नामा चक्रवर्ती राजा राज्य करै । ताके पुत्री अनंगशरा, गुण ही हैं आभूषण जाके, स्त्रीनिविषैं ता समान अद्भुत रूप औरका नाहीं । सो एक प्रतिष्ठितपुरका धनी राजा पुनर्वसु विद्याधर चक्रवर्तीका सामन्त, सो कन्याकूं देख कामबाणकर पीडित होय, विमानमें बैठाय लेय गया । सो चक्रवर्तीने क्रोधायमान होय किंकर भेजे सो तासूं युद्ध करते भए । ताका विमान चूर डारा । तब ताने व्याकुल होय कन्या आकाशतैं डारी सो शरदके चन्द्रमाकी ज्योति समान पुनर्वसुकी पर्ण लघुविद्याकर अटवीविषैं आय पड़ी । सो अटवी दुष्ट जीवनिकर महा भयानक, जाका नाम श्वापद रौरव, जहां विद्याधरोंका भी प्रवेश नाहीं, वृक्षनिके समूहकर महा अंधकाररूप, नाना प्रकारकी बेलनिकर बेढ़े नानाप्रकारके ऊंचे वृक्षनिको सघनतासे जहां सूर्यकी किरणका भी प्रवेश नाहीं, अर चीता, व्याघ्र, सिंह, अष्टापद, गैंडा, रीछ इत्यादि अनेक वनचर विचरैं । अर नीची ऊंची विषम भूमि, जहां बड़े-बड़े गर्त (गढ़े), सो यह चक्रवर्तीकी कन्या अनंगशरा बालिका अकेली ता वनमें महा भयंकर युक्त अति खेदखिन्न होती भई । नदी के तीर जाय दिशा अवलोकनकर माता पिताकूं चितार रुदन करती भई—हाय ! मैं चक्रवर्तीकी पुत्री, मेरा पिता इन्द्रसमान, ताके मैं अति लाडली, दैवयोगकर या अवस्थाकूं प्राप्त भई । अब कहा करूं ?

या बनका छोर नाहीं, यह बन देख दुःख उपजे। हाय पिता! महा पराक्रमी! सकल लोक प्रसिद्ध! मैं या वनमें असहाय पड़ी। मेरी दया कौन करे? हाय माता! ऐसे महादुःखकर मोहि गर्भमें राखी, अब काहेसे मेरी दया न करो। हाय परिवारके उत्तम मनुष्य हो! एक क्षणमात्र मोहि न छोड़ते सो अब क्यों तज दीनी। अर मैं होती ही क्यों न मर गई, काहेसे दुःखकी भूमिका भई। चाही मृत्यु भी न मिले, कहा करूं? कहां जाऊं? मैं पापिनी कैसे तिष्ठूं? यह स्वप्न है कि साक्षात् है। या भांति चिरकाल विलाप कर महा विह्वल भई। ऐसे बिलाप किए जिनकूं सुन महादुष्ट पशुका चित्त कोमल होय। यह दीनचित्त, क्षुधा तृषासे दग्ध, शोकके सागरमें मग्न, फल पत्रादिकसे कोनी है आजीविका जाने, कर्मके योग ता वनमें कई शीतकाल पूर्ण किए। कैसे हैं शीतकाल? कमलनिके वनकी शोभा का जो सर्वस्व ताके हरणहारे, अर जिनने अनेक ग्रीष्मके आताप सहे। कैसे हैं ग्रीष्म आताप? सूखे हैं जलोंके समूह, अर जले हैं दावानलोंसे अनेक वनवृक्ष, अर जरे हैं, मरे हैं अनेक जन्तु जहां, अर जाने ता वनमें वर्षाकाल भी बहुत व्यतीत किए। ता समय जलधाराके अन्धकारकर दब गई है सूर्यकी ज्योति, अर ताका शरीर वर्षाका धोया चित्रामके समान होय गया। कांतिरहित दुर्बल, बिखरे केश, मलयुक्त शरीर, लावण्यरहित ऐसा होय गया जैसे सूर्यके प्रकाशकर चन्द्रमाकी कलाका प्रकाश क्षीण होय जाय। कैथका वन फलनिकर नम्रीभूत वहां बैठी पिताको चितार या भांतिके वचन कहकर रुदन करै कि मैं जो चक्रवर्तीके सो जन्म पाया अर पूर्व जन्मके पापकर बनविषैं ऐसो दुःख अवस्थाको प्राप्त भई। या भांति आंसुओंकी वर्षा कर चातुर्मासिक क्रिया। अर जे वृक्षोंसे टूटे फल सूख जाँय तिनका भक्षण कर अर बेला तेला आदि अनेक उपवासनिकर क्षीण होय गया है शरीर जाका। सो केवल फल अर जल कर पारणा करती भई। अर एक ही बार जल ताही समय फल। वह चक्रवर्तीकी पुत्री पुष्पनिकी सेजपर सोवती अर अपने केश भी जाको चुभते सो विषम भूमिपर खेदसहित शयन करती भई। अर पिताके अनेक गुणीजन राग करते, तिनके शब्द सुन प्रबोधकूं पावती, सो अब स्याल आदि अनेक वनचरोंके भयानक शब्दनिकरि रात्रि व्यतीत करती

भई। या भांति तीन हजार वर्ष तप किया। सूखे फल तथा सूखे पत्र अर पवित्र जल आहार किए अर महा वैराग्यको प्राप्त होय खान पानका त्यागकर धीरता धर संलेखणा मरण आरम्भा। एक सौ हाथ भूमि पावोंसे परै न जाऊं—यह नियम धारे तिष्ठी! आयुमें छह दिन बाकी हुते। अर एक अरहदास नामा विद्याधर सुमेरु की वन्दना करके जावे था सो आय निकसा। सो चक्रवर्तीकी पुत्री को देख पिताके स्थानक ले जाना विचारा, संलेखणाके योगकर कन्याने मने किया।

तब अरहदास शीघ्र ही चक्रवर्तीपर जाय चक्रवर्तीको लेय कन्यापै आया। सो जा समय चक्रवर्ती आया ता समय एक सर्प कन्याको भखे था। सो कन्याने पिताको देख अजगरको अभयदान दिवाया। अर आप समाधि धारणकर शरीर तज तीजे स्वर्ग गई। पिता पुत्रीकी यह अवस्था देखकर बाईस हजार पुत्रनिसहित वैराग्यको प्राप्त होय मुनि भया। कन्याने अजगरसे क्षमा कर अजगरको पीडा न होने दई सो ऐसी दृढ़ता ताहीसूं बनै। अर वह पुनर्बसु विद्याधर अनंगशराको देखता भया सो न पाई। तब खेद खिन्न होय द्रुमसेन मुनिके निकट मुनि होय महातप किया। सो स्वर्गमें देव होय महासुन्दर लक्ष्मण भया। अर वह अनंगशरा चक्रवर्तीकी पुत्री स्वर्गलोकतैं चयकर द्रोणमेघके विशल्या भई। अर पुनर्वसुने ताके निमित्त निदान किया हुता सो अब लक्ष्मण याहि वरेगा। यह विशल्या या नगरविषै, या देशविषै तथा भरतक्षेत्रमें महागुणवंती है। पूर्वभवके तपके प्रभावकर महा पवित्र है। ताके स्नानका यह जल है सो सकल विकारको हरै है। याने उपसर्ग सहा, महा तप किया ताका फल है। याके स्नानके जलकर जो तेरे देशमें वायु विषम विकार उपजा हुता सो नाश भया। ये मुनिके वचन सुन भरतने मुनिसे पूछी—हे प्रभो! मेरे देशमें सर्व लोकोंको रोगविकार कौन कारणसे उपजा। तब मुनिने कहा—गजपुर नगरतैं एक व्यापारी, महा धनवन्त विन्ध्य नामा, सो रासभ (गधा) ऊंट, भैंसा लादे अयोध्यामें आया। अर ग्यारह महीना अयोध्यामें रहा। ताके एक भैंसा सो बहुत बोझके लगनेसे घायल हुआ, तीव्र रोगके भारसे पीडित या नगरमें मूवा। सो अकामनिर्जराके योगकर अश्वकेतुनामा वायुकुमार देव भया।

जाका विद्यावर्त नाम। सो अवधिज्ञानसे पूर्वभवको चितारा कि पूर्वभवविषै मैं भैंसा था, पीठ कट रही हुती, अर महा रोगोंकर पीड़ित मार्गविषै कीचमें पड़ा हुता सो लोक मेरे सिरपर पाव देय देय गए। यह लोक महा निर्दई। अब मैं देव भया सो मैं इनका निग्रह न करूं तो मैं देव काहेका? ऐसा विचार अयोध्या नगरविषै अर सुकौशल देशमें वायु रोग विस्तारा। सो समस्त रोग विशल्याके चरणोदकके प्रभावसे विलय गया। बलवानसे अधिक बलवान है। सो यह पूर्ण कथा मुनिने भरतसे कही, अर भरतने मोसै कही? सो मैं समस्त तुमको कही। विशल्याका स्नानजल शीघ्र ही मंगावो, लक्ष्मणके जीवनेका अन्य यत्न नाहीं। या भांति विद्याधरने श्रीरामसे कह्या सो सुनके प्रसन्न भये। गौतम स्वामी कहै हैं कि हे श्रेणिक! जे पुण्याधिकारी हैं तिनको पुण्यके उदय करि अनेक उपाय मिलै हैं। अहो महतजन हो! तिन्हैं आपदाविषै अनेक उपाय सिद्ध होय हैं।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रंथ, ताकी भाषावचनिकाविषै विशल्याका पूर्वभव वर्णनकरनेवाला चौसठवां पर्व पूर्ण भया ॥६४॥

अथानन्तर ये विद्याधरके वचन सुनकर रामने समस्त विद्याधरनिसहित ताकी अति प्रशंसा करी। अर हनुमान भामण्डल तथा अंगद इनकूं मंत्रकर अयोध्याकी तरफ विदा किए। ये क्षणमात्रमें गए जहां महाप्रतापी भरत विराजै हैं। सो भरत शयन करते हुते, तिनकूं रागकर जगावनेका उद्यम किया, सो भरत जागते भए। तब ये मिले। सीताका हरण, रावणसे युद्ध, अर लक्ष्मणके शक्तिका लगना ये समाचार सुन भरतको शोक अर क्रोध उपजा। अर ताहीं समय युद्ध भेरी दिवाई सो सम्पूर्ण अयोध्याके लोक व्याकुल भए। अर विचार करते भए यह राजमन्दिरमें कहा कलकलाट शब्द है? आधीरातके समय कहा अतिवीर्यका पुत्र आय पड्या? कोईयक सुभट अपनी स्त्रीसहित सोता हुता, ताहि तजकर अपने बक्तर पहिरे; अर खड्ग हाथमें सम्हारा। अर कोईएक मृगनैनी भोरे बालककी

गोद लेय अर कुचोंपर हाथ धर दिशावलोकन करती भई। अर कोईएक स्त्री निद्रारहित भई सोते कंतको जगावती भई। अर कोईएक भरतजीका सेवक जानकर अपनी स्त्रीको कहता भया–हे प्रिया! कहा सोवै है? आज अयोध्यामें कछु भला नाहीं, राजमंदिरमें प्रकाश होय रह्या है। अर रथ, हाथी घोड़े, प्यादे, राजद्वारकी तरफ जाय हैं। जो सयाने मनुष्य हुते ते सब सावधान होय उठ खड़े हुए। अर कईएक पुरुष स्त्रीसे कहते भए–ये सुवर्णकलश अर मणि रत्नोंके पिटारे तहखानोंमें, अर सुन्दर वस्त्रोंकी पेटी भूमिगृहमें धरो और भी द्रव्य ठिकाने धरो। अर शत्रुघन भाई निद्रा तज, हाथी चढ़ मंत्रियों सहित शस्त्रधारक योधावोंको लेय राजद्वार आया। और भी अनेक राजा राजद्वार आए। सो भरत सबकूं युद्धका आदेश देय उद्यमी भया। तब भामण्डल हनुमान अंगद भरतकूं नमस्कार कर कहते भए–हे देव! लंकापुरी यहांसे दूर है, अर बीच समुद्र है। तब भरतने कही कहा करना? तब उन्होंने विशल्याका वृत्तांत कहा–हे प्रभो! राजा द्रोणमेघकी पुत्री विशल्या ताके स्नानका उदक देवहु, शीघ्र ही कृपा करहु, जो हम ले जांय। सूर्यका उदय भए लक्ष्मणका जीवना कठिन है। तब भरतने कही ताके स्नानका जल क्या, वाही ले जावो। मोहि मुनिने कही हुती यह विशल्या लक्ष्मणकी स्त्री होयगी। तब द्रोणमेघके निकट एक निज मनुष्य ताही समय पठाया। सो द्रोणमेघने लक्ष्मणके शक्ति लगी सुन अति कोप किया अर युद्धकूं उद्यमी भया। अर ताके पुत्र मंत्रिनि सहित युद्धकूं उद्यमी भए। तब भरत अर माता केकईने आप द्रोणमेघको जायकर ताको समझाय विशल्याको पठावना ठहराया। तब भामण्डल, हनुमान, अंगद विशल्याकूं विमानमें बैठाय, एक हजार अधिक राजाकी कन्या साथ लेय
रामकटकमें आए। एक क्षणमात्रमें संग्रामभूमि आय पहुँचे। विमानसे कन्या उतरी। ऊपर चमर ढुरै हैं। कन्याके कमल सारिखे नेत्र। सो हाथी, घोड़े बड़े बड़े योधानिको देखती भई। ज्यों ज्यों विशल्या कटकमें प्रवेश करै त्यों त्यों लक्ष्मणके शरीरमें साता होती भई। वह शक्ति देवरूपिणी लक्ष्मणके अंग से निकसी, ज्योतिके समूहसे युक्त, मानों दुष्ट स्त्री घरसे निकसी। दैदीप्यमान अग्निके स्फुलिंगों

के समूह आकाशमें उछलते। सो वह शक्ति हनुमानने पकडी। दिव्य स्त्रीका रूपधर तब हनुमानको हाथ जोड़ कहती भई—हे नाथ! प्रसन्न होवो, मोहि छांड़ो। मेरा अपराध नाहीं। हमारी यही रीति है कि हमको जो साधे हम ताके वशीभूत हैं। मैं अमोघविजिया नामा शक्ति विद्या तीन लोकविषै प्रसिद्ध हूं। सो कैलाशपर्वतविषै बालमुनि प्रतिमा जोग धरि तिष्ठै हुते। अर रावणने भगवानके चैत्यालयमें गान किया। अर अपने हाथनिकी नस बजाई, अर जिनेन्द्रके चरित्र गाए। तब धरणेंद्रका आसन कम्पायमान भया। सो धरणेन्द्र परमहर्ष धर आए। रावणसूं अति प्रसन्न होय मोहि सौंपी। रावण याचनाविषै कायर मोहि न इच्छै। तब धरणेन्द्रने हठकर दई। सो मैं महाविकरालस्वरूप जाके लागूं ताके प्राण हरूं, कोई मोहि निवारवे समर्थ नाहीं। एक या विशल्या सुन्दरीको टार, मैं देवोंकी जीतनहारी, सो मैं याके दर्शनहीतैं भाग जाऊं। याके प्रभावकर मैं शक्तिरहित भई। तपका ऐसा प्रभाव है जो चाहे तो सूर्यको शीतल करै, अर चन्द्रमाको उष्ण करै। याने पूर्व जन्मविषै अति उग्र तप किए। सिरसनाके फूल समान याका सुकुमार शरीर सो यानें तपविषै लगाया। ऐसा उग्र तप किया जो मुनिहूतैं न बनै। मेरे मनमें संसारविषै यही भासै है—जो ऐसे तप प्राणी करै। वर्षा, शीतल, आताप, अर महा दुस्सह पवन, तिनसे यह सुमेरुकी चूलिका समान न कांपी। धन्य रूप याका, धन्य याका साहस, धन्य याका धर्मविषै दृढ मन। याकासा तप और स्त्रीजन करने समर्थ नाहीं। सर्वथा जिनेन्द्रचन्द्रके मतके अनुसार जे तपको धारण करै हैं ते तीनलोकको जीतैं हैं। अथवा या बातका कहा आश्चर्य? जो तप कर मोक्ष पाइए ताकर और कहा कठिन? मैं पराए आधीन जो मोहि चलावै ताके शत्रुका मैं नाश करूं। सो याने मोहि जीती। अब मैं अपने स्थानक जाऊं हूं। सो तुम तो मेरा अपराध क्षमा करहु।

या भांति शक्ति देवीने कहा तब तत्वका जाननहारा हनुमान ताहि विदाकर अपनी सेनामें आया। अर द्रोणमेघकी पुत्री विशल्या अति लज्जाकी भरी, रामके चरणारविंदकूं नमस्कारकर हाथ जोड़ ठाढ़ी भई। विद्याधर लोक प्रशंसा करते भए, अर नमस्कार करते भए, अर आशीर्वाद देते भए। जैसे

इन्द्रके समीप शची जाय तिष्ठै तैसैं वह विशल्या सुलक्षणा, महा भाग्यवती, सखियोंके वचनसे लक्ष्मण के समीप तिष्ठी। वह नव यौवन, जाके मृगीकेसे नेत्र, पूर्णमासीके चन्द्रमा समान मुख जाका, अर महा अनुरागकी भरी, उदार मन। पृथ्वीविषै सुखसे सूते जो लक्ष्मण जिनको एकांतविषै स्पर्श कर अर अपने सुकुमार करकमल सुन्दर तिनकर पतिके पांव पलोटने लगी। अर मलयागिरि चन्दनसे पतिका सर्व अंग लिप्त किया। अर याकी लार हजार कन्या आई थीं—तिनने याके करसे चन्दन लेय विद्याधर-निके शरीर छांटे। सो सब घायल आछे भए। अर इन्द्रजीत कुम्भकरण मेघनाद घायल भए हुते सो उनको हू चन्दनके लेपसे नीके किये। सो परम आनन्दको प्राप्त भए। जैसे कर्मरोगरहित सिद्धपरमेष्ठी परम आनन्दको पावैं। और भी जे योधा घायल भए हुते, हाथी, घोड़े, पियादे सो सब नीके भए, घावों की शल्य जाती रही। सब कटक अच्छा भया। अर लक्ष्मण जैसे सूता जागै तैसे वीणके नाद सुन अति प्रसन्न भए। अर लक्ष्मण मोहशय्या छोडते भए। स्वांस लिए, आंख उघड़ी। उठकर क्रोधके भरे दशों दिशा निरखि ऐसे वचन कहते भए—कहां गया रावण, कहां गया वो रावण? ये वचन सुन राम अति हर्षित भए। फूल गए हैं नेत्र कमल तिनके, महा आनन्दके भरे बड़े भाई, रोमांच होय गया है शरीरमें जिनके, अर अपनी भुजानिकर भाईसे मिलते भए, अर कहते भए—हे भाई! वह पापी तोहि शक्ति से अचेत कर आपको कृतार्थ मान घर गया। अर या राजकन्याके प्रसादतैं तू नीका भया। अर जामवंत को आदि देय सब विद्याधरनिने शक्तिके लागबे, ताहि निकसबे पर्यंत सर्व वृत्तांत कहा। अर लक्ष्मणने विशल्या अनुरागकी दृष्टिकरि देखी। कैसी है विशल्या? श्वेत श्याम आरक्त तीन वर्ण कमल तिन समान नेत्र जाके, अर शरदकी पूर्णिमाके चन्द्रसमान है मुख जाका, अर कोमल शरीर, क्षीण कटि, दिग्गजके कुम्भस्थल समान स्तन हैं जाके, नव यौवन, मानों साक्षात् मूर्तिवन्ती कामकी क्रीडा ही है, मानों तीन लोकको शोभा एकत्रकर नामकर्मने याहि रचा है। ताहि लक्ष्मण देख आश्चर्यको प्राप्त होय मनमें विचारता भया, यह लक्ष्मी है, अक इन्द्रकी इन्द्राणी है, अथवा चन्द्रकी कांति है। यह

विचार करै है। अर विशल्याकी नारकी स्त्री कहती भई–हे स्वामी! तिहारा यासूं विवाहका उत्सव हम चाहै हैं। तब लक्ष्मण मुलके, अर विशल्याका पाणिग्रहण किया, अर विशल्याकी सर्व जगतमें कीर्ति विस्तरी। या भांति जे उत्तम पुरुष हैं अर पूर्वजन्ममें महा शुभ चेष्टा करी है तिनको मनोग्य वस्तुका संबंध होय है। अर चांद सूर्यकोसी उनकी कांति होय है।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रन्थ ताकी भाषा वचनिकाविषै विशल्याका समागम वर्णन करनेवाला पैंसठवां पर्व पूर्ण भया ॥ ६५ ॥

अथानन्तर लक्ष्मणका विशल्यासूं विवाह, अर शक्तिका निकासना, यह सब समाचार रावणने हलकारनिके मुख सुने। अर सुनकर मुलकि कर मंदबुद्धि कर कहता भया–शक्ति निकसी तो कहा? अर विशल्या ब्याही तो कहा? तब मारीच आदि मंत्री मंत्रमें प्रवीण कहते भए–हे देव! तिहारे कल्याण की बात यथार्थ कहेंगे। तुम कोप करो अथवा प्रसन्न होवो। सिंहवाहनी, गरुड़वाहनी विद्या राम लक्ष्मणको यत्न विना सिद्ध भई, सो तुम देखी। अर तिहारे दोऊ पुत्र अर भाई कुम्भकरणको जिन्होंने बांध लिए सो तुम देखे। अर तिहारी दिव्य शक्ति सो निरर्थक भई। तिहारे शत्रु महाप्रबल हैं। उन कर जो कदाचित् तुम जीते भी तो भ्राता पुत्रोंका निश्चय नाश है। तातैं ऐसा जानकर हम पर कृपा करो। हमारी विनती अब तक आपने कदापि भंग न करी। तातैं सीताको तजो, अर जो तिहारे धर्म-
बुद्धि सदा रही है सो राखहु। सर्व लोककूं कुशल होय। राघवसे संधि करो। यह बात करनेमें दोष नाहीं। महागुण है। तुम ही कर सर्व लोकविषै मर्यादा चलै है। धर्मकी उत्पत्ति तुमसे है, जैसे समुद्र तैं रत्ननिकी उत्पत्ति होय। ऐसा कहकर बड़े मंत्री हाथ जोड़ नमस्कार करते भए, अर हाथ जोड़ विनती करते भए। सबसे यह मंत्र किया जो एक सामंत दूतविद्याविषै प्रवीण, संधिके अर्थि रामपै पठाइये। सो एकबुद्धिसे शुक्रसमान महा तेजस्वी, प्रतापवान, मिष्टवादी ताहि बुलाया। सो मंत्रिनिने

महासुन्दर महा अमृत औषधि समान वचन कहे। परन्तु रावणने नेत्रकी समस्या कर मंत्रिनिका अर्थ दूषित कर डाला। जैसैं कोई विषसे महा औषधिको विषरूप कर डारे। तैसे रावण संधिकी बात बिग्रह रूप जताई। सो दूत स्वामीको नमस्कारकर जायवेकूं उद्यमी भया। कैसा है दूत? बुद्धिके गर्वकर लोकको गोपद समान निरखै है। आकाशके मार्ग जाता रामके कटकको भयानक देख दूतको भय न उपजा। याके वादित्र सुन बानरवंशियोंकी सेना क्षोभको प्राप्त भई। रावणके आगमकी शंका करी। जब नजीक आया तब जानी यह रावण नाहीं, कोई और पुरुष है। तब बानरवंशियोंकी सेनाको विश्वास उपजा। दूत द्वारे आय पहुँचा। तब द्वारपालने भामण्डलसों कही। भामण्डलने रामसे बिनती कर कहा। केतेक लोकनि सहित निकट बुलाया अर ताकी सेना कटकमें उतरी।

रामसे नमस्कार कर दूत वचन कहता भया—हे रघुचन्द्र! मेरे वचननिकर मेरे स्वामीने तुमको कुछ कहा है सो चित्त लगाय सुनहु—युद्धकर कछु प्रयोजन नाहीं। आगे युद्धके अभिमानी बहुत नाशको प्राप्त भए। तातैं प्रीति ही योग्य है। युद्धकर लोकनिका क्षय होय है। अर महा दोष उपजै हैं, अपवाद होय है। आगे संग्रामकी रुचिकर राजा दुर्वर्तक, शंख, धवलांग, असुर, सम्बरादि अनेक राजा नाशको प्राप्त भए। तातैं मेरे सहित तुमको प्रीति ही योग्य है। और जैसे सिंह महा पर्वतकी गुफाको पायकर सुखी होय है तैसें अपने मिलापकर सुख होय है। मैं रावण जगत प्रसिद्ध कहा तुमने न सुना। जाने इन्द्रसे राजा बन्दीगृहविषै किए। जैसे कोई स्त्रीनिको अर सामन्यलोकोंको पकड़े तैसे इन्द्र पकड़ा। अर जाकी आज्ञा सुर असुरनिकर न रोकी जाय। न पातालविषै, न जलविषै, न आकाशविषै, आज्ञाको कोई न रोक सके। नाना प्रकारके अनेक युद्धोंका जीतनहारा, वीर लक्ष्मी जाको धरै, ऐसा मैं सो तुमको सागरांत पृथ्वी विद्याधरोंसे मंडित दूं हूं। अर लंकाके दोय भागकर बांट दूं हूं। भावार्थ समस्त राज्य अर आधी लंका दूं हूं। तुम मेरा भाई, अर दोनों पुत्र मोपै पठावो, अर सीता मोहि देवो जाकर सब कुशल होय। अर जो तुम यों न करोगे तो जो मेरे पुत्र भाई बन्धनमें हैं तिनको तो

बलात्कार छुटाय लूंगा अर तुमको कुशल नाहीं। तब राम बोले मोहि राज्यसे प्रयोजन नाहीं, अर और स्त्रियोंसे प्रयोजन नाहीं। सीता हमारे पठावो, हम तिहारे दोऊ पुत्र अर भाईको पठावें। अर तिहारी लंका तिहारे ही रहो। अर समस्त राज्य तुम ही करो। मैं सीतासहित दुष्ट जीवनि संयुक्त जो वन ताविषैं सुखसूं विचरूंगा। हे दूत! तू लंकाके धनीसे जाय कह–याही बातमें तिहारा कल्याण है, और भांति नाहीं। ऐसे श्रीरामके सर्व पूज्य वचन, सुख साताकर संयुक्त, तिनको सुनकर दूत कहता भया–हे नृपति! तुम राज काज विषैं समझते नाहीं, मैं तुमकूं बहुरि कल्याणकी बात कहूं हूं। निर्भय होय समुद्र उलंघ आए हो सो नीके न करी। अर यह जानकीकी आशा तुमको भली नाहीं। यदि लंकेश्वर कोप भया तब जानकीकी कहा बात? तिहारा जीवना भी कठिन है। अर राजनीति-विषै ऐसा कहा है जे बुद्धिवान हैं तिनको निरन्तर अपने शरीरकी रक्षा करनी, स्त्री अर धन इनपर दृष्टि न धरनी। अर जो गरुडेन्द्रने सिंहवाहन, गरुडवाहन तुमपै भेजे तो कहा? अर तुम छल छिद्र कर मेरे पुत्र अर सहोदर बांधे तो कहा? जोलग मैं जीवूं हूं तोलग इन बातोंका गर्व तुमको वृथा है। जो तुम युद्ध करोगे तो न जानकीका न तिहारा जीवन। तातैं दोऊ मत खोवहु, सीताका हठ छांडहू। अर रावण यह कही है जे बड़े बड़े राजा विद्याधर इन्द्रतुल्य पराक्रम तिनके, सो समस्त शास्त्रविषैं प्रवीण, अनेक युद्धनिके जीतनहारे, ते मैं नाशको प्राप्त किए हैं। तिनके कैलाशपर्वतके शिखर हाडनके समूह देखो। जब ऐसा दूतने कहा–तब भामण्डल क्रोधायमान भया, ज्वाला समान महा विकराल मुख, ताकी ज्योतिसे प्रकाश किया है आकाशविषै जानैं। भामण्डलने कही–रे पापी दूत! स्याल! चातुर्यता रहित। दुर्बुद्धि! वृथा शकारहित कहा भाषै है? सीताकी कहा वार्ता? सीता तो राम लेहींगे। यदि श्रीराम कोपे तब रावण राक्षस कुचेष्टि पशु कहा? ऐसा कह ताके मारवेकूं खड्ग सम्हारचा। तब लक्ष्मणने हाथ पकड़े अर मने किया। कैसे हैं लक्ष्मण? नीति ही हैं नेत्र जिनके, भामण्डलके क्रोधकर रक्त नेत्र होय गए, वक्र होय गये, जैसी सांझको लालकी होय तैसा लाल वदन होय गया। तब

मंत्रिनिने योग्य उपदेश कहे, समताकूं प्राप्त किया। जैसे विषका भरा सर्प मंत्रसे वश कीजिए है। हे नरेन्द्र! क्रोध तजो, यह दीन तिहारे योग्य नाहीं। यह तो पराया किंकर है जो वह कहावै सो कहै। याके मारवेकर कहा? स्त्री, बालक, दूत, पशु, पक्षी, वृद्ध, रोगी, सोता, आयुधरहित, शरणागत, तपस्वी, गाय ये सर्वथा अवध्य हैं। जैसे सिंह कारी घटा समान गाजते जे गज तिनका मर्दन करन-हारा सो मींडकनिपर कोप न करै तैसें तुमसे नृपति दूतपर कोप न करैं। यह तो वाके शब्दानुसार है। जैसे छायापुरुष है (छायापुरुषकी अनुगामिनी है) अर सूवाको ज्यों पढ़ावैं तैसें पढ़े, अर यंत्रको ज्यों बजावैं त्यों बजै, तैसें यह दीन वह बकावै त्यों बकै। ऐसे शब्द लक्ष्मणने कहे तब सीताका भाई भामन्डल शांतचित्त भया।

श्रीराम दूतको प्रकट कहते भए—रे मूढ़ दूत! तू शीघ्र ही जा अर रावणको ऐसे कहियो—तू ऐसे मूढ़ मंत्रियोंका बहकाया, खोटे उपायकर आपा ठगावेगा। तू अपनी बुद्धि कर विचार, किसी कुबुद्धिको पूछै मत, सीताका प्रसंग तज, सर्व पृथ्वीका इन्द्र हो पुष्पक विमानमें बैठा जैसैं भ्रमै था तैसैं विभव सहित भ्रम। यह मिथ्या हठ छोड दे, क्षुद्रनिकी बात मत सुनहु, करने योग्य कार्य विषैं चित्त धर जो सुखकी प्राप्ति होय। ये वचन कह श्रीराम तो चुप होय रहे अर और पुरुषनिने दूतको बहुरि बात न करने दई निकाल दिया। दूत रामके अनुचरनिने तीक्ष्ण बाणरूप वचननिकर बींधा अर अति निरादर किया। तब रावणके निकट गया, मनविषैं पीड़ा थका। सो जायकर रावणसूं कहता भया—हे नाथ! मैं तिहारे आदेश प्रमाण रामसों कही—जो या पृथ्वी नाना देशनिकर पूर्ण, समुद्रांत महा रत्ननिकी भरी, विद्याधरोंके समस्त पट्टनसहित मैं तुमको दूं हूं, अर बड़े-बड़े हाथी रथ तुरंग दूं हूं, अर यह पुष्पक विमान लेवहु जो देवोंसे न निवारा जाय याविषैं बैठ विचरो। अर तीन हजार कन्यायें अपने परवारकी तुमको परणाय दूं। अर सिंहासन सूर्य समान अर चन्द्रमा समान छत्र वे लेहु, अर निःकंटक राजकरो, एती बात मुझे प्रमाण है जो तिहारी आज्ञाकर सीता मोहि इच्छे। यह धन अर धरा लेवो, अर मैं अल्प

विभूति राखि बैतहीके सिंहासन पर रहूंगा। विचक्षण हो तो एक वचन मेरा मानहु—सीता मोहि देवहु। ए वचन मैं बार-बार कहे सो रघुनन्दन सीताका हठ न छोड़े। केवल वाके सीताका अनुराग है और वस्तुकी इच्छा नाहीं। हे देव! जैसे मुनि महा शांतचित्त अठाईस मूलगुणोंकी क्रिया न तजे, वह क्रिया मुनिव्रतका मूल है तैसें राम सीताकूं न तजैं। सीता ही रामके सर्वस्व है। कैसी है सीता? त्रैलोक्यविषैं ऐसी सुन्दरी नाहीं। अर रामने तुमसूं यह कही है कि—हे दशानन! ऐसे सर्वलोकनिंद्य वचन तुमसे पुरुषनिकूं कहना योग्य नाहीं। ऐसे वचन पापी कहे हैं। उनकी जीभके सौ टूक क्यों न होय? मेरे या सीता विना इन्द्रके भोगनिकर कार्य नाहीं। यह सर्व पृथ्वी तू भोग, मैं बनवास ही करूंगा। अर तू परदारा हरकर मरवेको उद्यमी भया है तो मैं अपनी स्त्रीके अर्थ क्यों न मारूंगा? अर मुझे तीन हजार कन्या देहै, सो मेरे अर्थ नाहीं। मैं वनके फल अर पत्रादिक ही भोजन करूंगा, अर सीता सहित वनमें विहार करूंगा। अर कपिध्वजोंका स्वामी सुग्रीव ताने हंसकर मोहि कही—जो कहा तेरा स्वामी आग्रहरूप ग्रहके वश भया है? कोऊ वायुका विकार उपजा है जो ऐसी विपरीति वार्त्ता रंक हूवा बकै है। अर कहा लंकामें कोऊ वैद्य नाहीं, अक मंत्रवादी नाहीं, वायके तैलादिककर यत्न क्यों न करै? नातर संग्राममविषै लक्ष्मण सर्वरोग निवारेगा। भावार्थ—मारेगा।

तब यह वचन सुन मैं क्रोधरूप अग्निकर प्रज्वलित भया अर सुग्रीवसूं कही—रे वानरध्वज! तू ऐसें बकै है जैसे गजके लार स्वान बकै। तू रामके गर्वकर मूवा चाहै है जो चक्रवर्तीकूं निन्दाके वचन कहै है। सो मेरे अर सुग्रीवके बहुत बात भई। अर रामसों कहा—हे राम! तुम महारणविषैं रावणका पराक्रम न देखा। कोऊ तिहारे पुण्यके योग कर वह वीर विकराल क्षमामें आया है। वह कैलाशका उठावनहारा, तीन जगतमें प्रसिद्ध प्रतापी, तुमसे हित किया चाहै है, अर राज्य देय है, ता समान और कहा? तुम अपनी भुजानिकर दशमुखरूपसमुद्रकूं कैसै तरौगे? कैसा है दशमुखरूपसमुद्र? प्रचण्ड सेना, सोई भई तरंगनिकी माला, तिनकर पूर्ण है, अर शस्त्ररूप जलचरनिके समूहकर भरा है। हे राम! तुम कैसे रावणरूप भयंकर

वनविषैं प्रवेश करोगे? कैसा है रावणरूप वन? दुर्गम कहिए जाविषैं प्रवेश करना कठिन है। अर व्याल कहिए दुष्ट गज, तेई भए नाग तिनकर पूर्ण है। अर सेनारूप वृक्षनिके समूह कर महा विषम है। हे राम! जैसे कमलपत्रकी पवनकर सुमेरु न डिगै, अर सूर्यकी किरण कर समुद्र न सूकै, अर बलद के सींगोंसे धरती न उठाई जाय, तैसैं तुम सारिखे नरनिकर नरपति दशानन जीता न जाय। ऐसे प्रचंड वचन मैं कहे तब भामण्डलने महाक्रोधरूप होय मोहि मारिवेकूं खड्ग काढ्या। तब लक्ष्मणने मनै किया जो दूतकूं मारना न्यायमें नहीं कहा। स्यालपर सिंह कोप न करै, जो सिंह गजेन्द्रके कुम्भस्थल अपने नखनिसे विदारै। तातैं हे भामण्डल! प्रसन्न होहु, क्रोध तजहु। जे शूरवीर नृपति हैं, महा तेजस्वी, ते दीननिपर प्रहार न करैं। जो भयंकर कम्पायमान होय ताहि न हनै, श्रमण कहिए मुनि, अर ब्राह्मण कहिए व्रतधारी गृहस्थी, अर शून्य कहिए सूना, अर स्त्री, बालक, वृद्ध, पशु, पक्षी, दूत ये अवध्य हैं। इनको शूरवीर सर्वथा न हनैं। इत्यादि वचननिके समूहकर लक्ष्मण महापंडित ताने समझाय भामंडलकूं प्रसन्न किया। अर कपिध्वजनिके कुमार महाक्रूर तिन वज्र समान वचननिकर मोहि बींधा। तब मैं उनके असार वचन सुन, आकाशमें गमनकर, आयु कर्मके योगसे आपके निकट आया हूं। हे देव! जो लक्ष्मण न होय तो आज मेरा मरण ही होता। जो शत्रुनिके अर मेरे विवाद भया सो मैं सब आपसूं कहा, मैं कछु शंका न राखी! अब आपके मनमें जो होय सो करो, हम सारिखे किंकर तो वचन करैं हैं जो कहो सो करैं। या भांति दूत दशमुखसे कहता भया। यह कथा गौतम गणधर श्रेणिकसे कहै हैं—हे श्रेणिक! जो अनेक शास्त्रनिके समूह जाने, अर अनेक नयविषैं प्रवीण होय, अर जाके मंत्री भी निपुण होय, अर सूर्य सारिखा तेजस्वी होय तथापि मोहरूप मेघपटलकर आच्छादित भया प्रकाशरहित होय है। यह मोह महा अज्ञानका मूल विवेकियोंको तजना योग्य है।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महा पद्मपुराण संस्कृतग्रन्थ, ताकी भाषावचनिकाविषैं रावण के दूतका आगमन बहुरि पाछा रावण पास गमन वर्णन करनेवाला छियासठवां पर्व पूर्ण भया ॥ ६६ ॥

अथानन्तर लंकेश्वर अपने दूतके वचन सुन, क्षण एक मंत्रके ज्ञाता मंत्रियोंसे मंत्रकर कपोलपर हाथ धर, अधोमुख होय कछुएक चितारूप तिष्ठा। अपने मनमें विचारै है जो शत्रुकूं युद्धविषै जीतूं हूं तो भ्राता पुत्रनिकी अकुशल दीखै है। अर जो कदाचित् वैरिनिके कटकमें मैं रतिहावकर कुमारनिकूं ले आऊं तो या शूरतामें न्यूनता है। रतिहाव क्षत्रियोंके योग्य नाहीं। कहा करूं? कैसे मोहि सुख होय? यह विचार करते रावणकूं यह बुद्धि उपजी जो मैं बहुरूपिणी विद्या साधूं। कैसी है बहुरूपिणी? जो कदाचित् देव युद्ध करैं तो भी न जीती जाय। ऐसा विचारकर सर्व सेवकनिकूं आज्ञा करी—श्रीशांतिनाथके मन्दिरमें समीचीन तोरणादिकनिकर अति शोभा करहु। सो सर्व चैत्यालयनिमें विशेष पूजा करहु। सर्व भार पूजा प्रभावनाका मंदोदरीके सिरपर धरया। गौतम गणधर कहे हैं—हे श्रेणिक! वह श्रीमुनिसुव्रतनाथ बीसमां तीर्थंकरका समय, ता समय या भरतक्षेत्रविषै सर्व ठौर जिनमन्दिर हुते। यह पृथ्वी जिनमंदिरनिकर मंडित हुती। चतुरविध संघकी विशेष प्रवृत्ति, राजा, श्रेष्ठि, ग्रामपति अर प्रजाकेलोग सकल जैनी हुते। सो महारमणीक जिनमन्दिर रचते। जिनमन्दिर जिनशासनके भक्त जो देव तिनसे शोभायमान। वे देव धर्मकी रक्षामें प्रवीण, शुभकार्यके करणहारे। ता समय पृथ्वी भव्यजीवनिकरि भरी ऐसी सोहती मानों स्वर्गविमान ही है। ठौर २ पूजा, ठौर २ प्रभावना, ठौर २ दान। हे मगधाधिपति! पर्वत पर्वतविषै, गांव गांवविषै, नगर नगरविषै, वन २ विषै, मन्दिर २ विषै, जिनमंदिर हुते। महा शोभाकर संयुक्त, शरदके पूनोंकी चन्द्रमासमान उज्ज्वल, गीतोंकी ध्वनिकर मनोहर, नानाप्रकारके वादित्रनिके शब्दकर मानों समुद्र गाजै है। अर तीनों संध्या वंदनाकूं लोग आवैं। सो साधुवोंके संगसे पूर्ण, नानाप्रकारके आश्चर्यकर संयुक्त, नानाप्रकारके चित्रामको धरें, अगर चंदनका धूप अर पुष्पनिकी सुगन्धताकर महा सुगन्धमई, महा विभूतिकरि युक्त, नानाप्रकारकर शोभित, महा विस्तीर्ण, महा उतंग, महा ध्वजानिकर विराजित, तिनमें रत्नमई तथा स्वर्णमई पंचवर्णकी प्रतिमा विराजैं। विद्याधरनिके स्थानविषै अति सुन्दर जिनमंदिरनिके शिखर तिनकर अति शोभा होय रही

है। ता समय नाना प्रकारके रत्नमई उपवनादिसे शोभित जे जिनभवन तिनकर यह जगत् व्याप्त। अर इन्द्रके नगर समान लंकाका अंतर बाहिर जिनेन्द्रके मंदिरनिकर मनोग्य था। सो रावणने विशेष शोभा कराई। अर आप रावण, अठारह हजार राणी, वेई भई कमलनिके वन, तिनको प्रफुल्लित कर्ता वर्षाके मेघ समान है स्वरूप जाका, सो महा नागसमान है भुजा जाकी, पूर्णमासीके चन्द्रमा समान वदन, सुन्दर केतकीके फूल समान लाल होंठ, विस्तीर्ण नेत्र, स्त्रीनिका मन हरणहारा, लक्ष्मण समान श्याम सुन्दर, दिव्यरूपका धरणहारा, सो अपने मंदिरनिविषै तथा सर्व क्षेत्रविषै जिनमंदिरनि कीशोभा करावता भया। कैसा है रावणका घर? लग रहे हैं लोगनिके नेत्र जहां, अर जिनमंदिरनि की पंक्तिकर मंडित, नानाप्रकारके रत्नमई मंदिरके मध्य उतंग श्रीशांतिनाथका चैत्यालय, जहां भगवान शांतिनाथजिन की प्रतिमा विराजै। जे भव्य जीव हैं तें सकल लोकचरित्रको असार अशास्वता जानकर धर्मविषै बुद्धि धरैं, जिनमंदिरनिकी महिमा करैं। कैसे हैं जिनमंदिर? जगतकर वंदनीक हैं, अर इन्द्रके मुकुटके शिखरविषै लगे जे रत्न तिनकी ज्योतिको अपने चरणनिके नखोंकी ज्योति कर बढ़ावनहारे हैं। धन पावनेका यही फल जो धर्म करिए सो गृहस्थका धर्म दान पूजारूप, अर यतिका धर्म शांतभावरूप। या जगतविषै यह जिनधर्म मनवांछित फलका देनहार है। जैसैं सूर्यके प्रकाशकर नेत्रनिके धारक पदार्थनिका अवलोकन करै हैं तैसैं जिनधर्मके प्रकाशकर भव्यजीव निज भावका अवलोकन करै हैं।

इति श्रीरविषेणाचार्य विरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रंथ ताकी भाषावचनिकाविषै श्रीशांतिनाथके चैत्यालयका वर्णन करनेवाला सरसठवां पर्व पूर्ण भया॥ ६७॥

अथानन्तर फाल्गुण सुदी अष्टमीसूं लेय पूर्णमासी पर्यंत सिद्धचक्रका व्रत है, जाहि अष्टाह्निका कहे हैं। सो इन आठ दिननिमें लंकाके लोग अर लशकरके लोग नियम ग्रहणको उद्यमी भए। सर्व सेनाके

उत्तम लोक मनमें यह धारणा करते भए जो यह आठ दिन धर्मके हैं सो इन दिननिमें न युद्ध करें, न और आरम्भ करें, यथाशक्ति कल्याणके अर्थ भगवानकी पूजा करेंगे, अर उपवासादि नियम करेंगे। इन दिननि विषै देव भी पूजा प्रभावनाविषै तत्पर होय हैं। क्षीरसागरके जे सुवर्णके कलश जलकर भरे तिनकर देव भगवानका अभिषेक करै हैं। कैसा है जल? सत्पुरुषनिके यशसमान उज्ज्वल। अरु और भी जे मनुष्यादिक हैं तिनकू भी अपनी शक्तिप्रमाण पूजा अभिषेक करना। इन्द्रादिक देव नन्दीश्वर द्वीप जायकर जिनेश्वरका अर्चन करै है, तो कहा ये मनुष्य अपनी शक्तिप्रमाण यहांके चैत्यालयनिका पूजन न करें? करैं ही करें। देव स्वर्णरत्ननिके कलशनिकरि अभिषेक करैं हैं अर मनुष्य अपनी सम्पदा प्रमाण करै। महा निर्धन मनुष्य होय तो पलाशपत्रनिके पुटहोंसे अभिषेक करैं। देव रत्न स्वर्णके कमलनिसे पूजा करैं हैं, निर्धन मनुष्य चित्तही रूप कमलनिसे पूजा करैं हैं। लंकाके लोक यह विचार कर भगवानके चैत्यालयनिकू उत्साहसहित ध्वजा पताकादिकर शोभित करते भए। वस्त्र स्वर्ण रत्नादि कर अति शोभा करी। रत्ननिकी रज अर कनकरज तिनके मंडल मांडे, अर देवालयनिके द्वार अति सिंगारें, अर मणि सुवर्णके कलश कमलनिसे ढके दधि दुग्ध घृतादिसे पूर्ण, मोतियोंकी माला है कंठमें जिनके, रत्ननिकी कांतिकर शोभित, जिनबिंबोंके अभिषेकके अर्थ भक्तिवंत लोक लाये। जहां भोगी पुरुषोंके घरमे सैकड़ों हजारों मणिसुवर्णोंके कलश हैं, नन्दनवनके पुष्प, अर लंकाके वननिके नानाप्रकार के पुष्प कर्णिकार अतिमुक्त कदम्ब सहकार चम्पक पारिजात मन्दार जिनकी सुगन्धताकर भ्रमरनिके समूह गुंजार करै हैं, अर मणि सुवर्णादिकके कमल तिनकर पूजा करते भए। अर ढोल, मृदंग, ताल, शंख इत्यादि अनेक वादित्रनिके नाद होते भए। लंकापुरके निवासी वैर तज आनन्दरूप होय आठ दिनमें भगवानकी अति महिमाकर पूजा करते भए। जैसैं नदीश्वर द्वीपविषै देव पूजाके उद्यमी होय तैसैं लंका के लोक लंकाविषे पूजाके उद्यमी भए। अर रावण विस्तीर्ण प्रतापका धारक श्रीशांतिनाथके मन्दिरविषै जाय पवित्र होय भक्तिकर महा मनोहर पूजा करता भया, जैसैं पहिले प्रतिवासुदेव करै। गौतमगण-

घर कहे हैं—हे श्रेणिक ! जे महा विभवकर युक्त भगवानके भक्त महाविभूतिवंत अति महिमाकर प्रभु का पूजन करैं हैं तिनिके पुण्यके समूहका व्याख्यान कौन कर सकै ? वे उत्तम पुरुष देवगतिके सुख भोगैं, बहुरि चक्रवर्तियोंके भोग पावैं, बहुरि राज्य तज जैनमतके व्रत धार महा तपकर परम मुक्ति पावैं। कैसा है तप ? सूर्यहूतैं अधिक है तेज जाका।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रंथ, ताकी भाषावचनिकाविषै श्रीशांतिनाथके चैत्यालयविषै अष्टाह्निकाका उत्सव वर्णन करने वाला अरसठवां पर्व पूर्ण भया ॥६८॥

अथानन्तर महाशांतिका कारण श्रीशांतिनाथका मन्दिर, कैलाशके शिखर अर शरदके मेघ समान उज्ज्वल महा देदीप्यमान मन्दिरोंकी पंक्तिकर मंडित जैसैं जम्बूद्वीपके मध्य महा उतंग सुमेरु पर्वत सोहै तैसैं रावणके मंदिरके मध्य जिनमंदिर सोहता भया। तहां रावण जाय विद्याके साधनमें आसक्त है चित्त जाका, अर स्थिर निश्चय जाका परम अद्भुत पूजा करता भया। भगवानका अभिषेक कर अनेक वादित्र बजावता अति मनोहर द्रव्यनिकर, महासुगन्ध धूपकर, नानाप्रकारकी सामग्री कर([1]अत्यन्त मनोहर मालाओं, धूपों, नैवेद्यों के उपहारों- और उत्तम वर्ण के विलेपनों से) शांतचित्त भया शांतिनाथकी पूजा करता भया, मानों दूजा इन्द्र ही है। शुक्ल वस्त्र पहिरे महासुन्दर जे भुजबंध तिनकर शोभित हैं भुजा जाकी, सिरके केश भली भांति बांध, तिनपर मुकुट धर, तापर चूड़ामणि लहलहाट करतो महाज्योतिकूं धरे, रावण दोनों हाथ जोड़ गोड़ोंसैं धरतीकूं स्पर्शता, मन वचन कायकर शांतिनाथकूं प्रणाम करता भया। श्रीशांतिनाथके सन्मुख निर्मल भूमिमें खड़ा अत्यन्त शोभता भया। कैसी है भूमि ? पद्मराग मणिकी है फर्श जाविषै। अर रावण स्फटिकमणिकी माला हाथविषै अर उरविषै धरे कैसा सोहता भया ? मानों बकपंक्तिकर संयुक्त कारी घटाका समूह ही है। वह राक्षसनिका अधिपति महा

१ अभिषेकैः सवादित्रैर्माल्यैरतिमनोहरैः। धूपैर्बल्युपहारैश्च, सद्वर्णैरनुलेपनैः ॥ ४ ॥
(पद्मपुराण तृतीय भाग, उनहत्तरवां पर्व। ज्ञानपीठ काशी से प्रकाशित)

धीर विद्याका साधन आरम्भता भया। जब शांतिनाथके चैत्यालय गया तो पहिले मंदोदरीको यह आज्ञा करी, जो तुम मंत्रिनिकूं अर कोटपालकूं बुलायकर यह घोषणा नगरमें फेरियो जो सर्वलोक दयाविषै तत्पर नियम धर्मके धारक होवैं। समस्त व्यापार तज जिनेन्द्रकी पूजा करहु। अर अर्थी लोगनिकूं मनवांछित धन देवहु, अहंकार तजहु। जौलग मेरा नियम न पूरा होय तौलग समस्त लोग श्रद्धाविषै तत्पर संयमरूप रहो। जो कदाचित् कोई बाधा करै तो निश्चयसेती सहियो। महाबलवान होय सो बलका गर्व न करियो। इन दिवसनिविषै जो कोऊ क्रोधकर विकार करेगा सो अवश्य सजा पावेगा। जो मेरे पितासमान पूज्य होय अर इन दिननिविषै कषाय करै, कलह करै ताहि मैं मारूं। जो पुरुष समाधिमरणकर युक्त न होय सो संसारसमुद्रको न तिरै। जैसैं अन्धपुरुष पदार्थनिकूं न परखे तैसैं अविवेकी धर्मकूं न निरखे। तातैं सब विवेकरूप रहियो, कोऊ पापक्रिया न करने पावे। यह आज्ञा मन्दोदरी मन्त्रियोंको अर यमदण्डनामा कोटपालकूं द्वारे बुलाय पतिकी आज्ञा प्रमाण आज्ञा करती भई। तब सबने कही जो आज्ञा होयगी सो ही करैंगे। यह कह आज्ञा सिरपर धर घर गए, अर संयमसहित नियम धर्मके उद्यमी होय नृपकी आज्ञा प्रमाण करते भए। समस्त प्रजाके लोग जिनपूजाविषै अनुरागी होते भए। अर समस्त कार्य तज सूर्यकी कांतितैं हू अधिक है कांति जिनकी ऐसे जे जिनमन्दिर तिनविषै तिष्ठे, निर्मल भावकर युक्त संयम नियमका साधन करते भये।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रन्थ, ताकी भाषावचनिकाविषै लंकाके लोगनिका अनेकानेक नियम धारण वर्णन करनेवाला उनत्तरवां पर्व पूर्ण भया॥ ६९॥

अथानन्तर श्रीरामके कटकमें हलकारोंके मुख यह समाचार आए कि रावण बहुरूपिणी विद्याके साधनको उद्यमी भया श्रीशांतिनाथके मंदिरमें विद्या साधै है। चौबीस दिनमें यह बहुरूपणी विद्या सिद्ध होयगी। यह विद्या ऐसी प्रबल है जो देवनिका मद हरै। सो समस्त कपिध्वजनिने यह विचार

किया कि जो वह नियममें बैठा विद्या साधै है सो ताको क्रोध उपजावें, जो ताकों यह विद्या सिद्ध न होय। तातैं रावणको कोप उपजावनेका यत्न करना, जो वाने विद्या सिद्ध कर पाई तो इन्द्रादिक देवनि करहू न जीता जाय, हम सारिखे रंकनिकी कहा बात ? तब विभीषण कही—जो कोप उपजावनेका उपाय करो शीघ्रही करो। तब सबनें मंत्र कर रामसूं कहा कि लंका लेनेका यह समय है। रावणके कार्यमें विघ्न करिए अर अपनेकूं जो करना होय सो करिए। तब कपिध्वजनिके यह वचन सुन श्री रामचन्द्र महाधीर महा पुरुषनिकी है चेष्टा जिनकी, सो कहते भए-हो विद्याधर हो ! तुम महामूढता के वचन कहो हो, क्षत्रिनिके कुलका यह धर्म नाहीं जो ऐसे कार्य करें। अपने कुलकी यह रीति है जो भयकर भाजे ताका वध न करना। तो जे नियमधारी जिनमन्दिरमें बैठे हैं तिनसे उपद्रव कैसे करिए ? यह नीचनिके कर्म हैं, सो कुलवंतनिको योग्य नाहीं। यह अन्याय प्रवृत्ति क्षत्रियनिकी नाहीं। कैसे हैं क्षत्री ? महामान्यभाव अर शस्त्रकर्मविषैं प्रवीण। यह वचन रामके सुन सबने विचारी जो हमारा प्रभु श्रीराम महा धर्मधारी हैं, उत्तम भावका धारक है सो इनको कदाचित् हू अधर्मविषैं प्रवृत्ति न होयगी। तब लक्ष्मणको जानभैं इन विद्याधरनिने अपने कुमार उपद्रवको विदा किए। अर सुग्रीवादिक बड़े बड़े पुरुष आठ दिनका नियम धर तिष्ठे। अर पूर्ण चन्द्रमा समान वदन जिनके, कमल समान नेत्र, नाना लक्षणके धरणहारे, सिंह, व्याघ्र, वराह, गज, अष्टापद इनकर युक्त जे रथ तिनविषैं बैठे, तथा विमाननिमें बैठे, परम आयुधनिको धरे, कपियोंके कुमार रावणको कोप उपजायवेके है अभिप्राय जिनके, मानों यह असुरकुमार देव ही हैं। प्रीतङ्कर दृढरथ, चन्द्राभ, रतिवर्धन, वातायन, गुरुभार
सूर्यज्योति, महारथ सामत बल, नन्दन, सर्वदृष्ट, सिंह, सर्वप्रिय, नल, नील, सागर घोष पुत्र सहित पूर्ण चन्द्रमा, स्कंध चन्द्र मारीच जावंत संकट समाधि बहुल सिंहकट चन्द्रासन इन्द्रमणि बल तुरग सब इत्यादि अनेक कुमार तुरंगनिके रथ चढ़े अर अन्य कईएक सिंह, वराह, गज, व्याघ्र इत्यादि मनहूतें चंचल जे वाहन तिनपर चढ़े, पयादनिके पटल तिनके मध्यमहातेजको धरे नानाप्रकारके चिह्न तिनकरि

युक्त हैं छत्र जिनके, अर नानाप्रकारकी ध्वजा फहरैं हैं जिनके, महा गम्भीर शब्द करते, दशोंदिशाको आच्छादित करते, लंकापुरीमें प्रवेश करते भए। मनविषै विचार करते भए बडा आश्चर्य है जो लंकाके लोक निश्चित तिष्ठै हैं। जानिये है कछू संग्रामका भय नाहीं! अहो। लंकेश्वरका बड़ा धीर्य महागम्भीरता देखहु जो कुम्भकरणसे भाई अर इन्द्रजीत मेघनादसे पुत्र पकड़े गए हैं तो हू चिंता नाहीं। अर अक्षादिक अनेक योधा युद्धविषै हते गए, हस्त प्रहस्त सेनापति मारे गए तथापि लंकापतिको शंका नाहीं। ऐसा चितवन करते परस्पर वार्तालाप करते नगरमें बैठे। तथा विभीषणका पुत्र सुभूषण कपि कुमारनिकूं कहता भया तुम निर्भय लंकामें प्रवेश करहु। बाल वृद्ध स्त्री इनसूं तो कछु न कहना, अर सबकूं व्याकुल करेंगे। तब याका वचन मान विद्याधर कुमार महा उद्धत, कलहप्रिय, आशीविष समान प्रचण्ड, व्रतरहित, चपल, चंचल, लंकाविषै उपद्रव करते भए। सो तिनके महा भयानक शब्द सुन लोक अति व्याकुल भए। अर रावणके महल हू में व्याकुलता भई। जैसैं तीव्र पवनकर समुद्र क्षोभकूं प्राप्त होय तैसैं लंका कपि कुमारनिसूं उद्वेगको प्राप्त भई। रावणके महिलविषै राजलोकनिकूं चिंता उपजी। कैसा है रावणका मन्दिर? रत्ननिकी कांतिकर देदीप्यमान है। अर जहां मृगादिकके मंगल शब्द होवै हैं, जहां निरन्तर स्त्रीजन नृत्य करैं हैं, अर जिनपूजाविषै उद्यमी राजकन्या धर्म मार्गविषै आरूढ़। सो शत्रुसेनाके क्रूर शब्द सुन आकुलता उपजी। स्त्रीनिके आभूषणनिके शब्द होते भए मानों बीणा बाजै हैं। सब मनमें विचारती भई—न जानिए कहा होय? या भांति समस्त नगरीके लोग व्याकुलताकूं प्राप्त होय विह्वल भए। तब मन्दोदरीका पिता राजा मय, विद्याधरनिविषै दैत्य कहावै सो सब सेनासहित बक्तर पहिर आयुध धार, महा पराक्रमी युद्धके अर्थ उद्यमी होय राजद्वार आया, जैसे इन्द्रके भवन हिरण्यकेशी देव आवै। तब मन्दोदरी पितासे कहती भई—हे तात! जा समय लंकेश्वर मन्दिर पधारे ता समय आज्ञा करी जो सब लोक सम्बररूप रहियो, कोई कषाय मत करियो। तातैं तुम कषाय मत करहु। ये दिन धर्मध्यानके हैं सो धर्म सेवो और भांति करोगे तो स्वामीकी आज्ञा

भंग होयगी, अर तुम भला फल न पावोगे। ये वचन पुत्रीके सुन राजा मय उद्धतता तज, महा शांत होय, शस्त्र डारते भए, जैसे अस्त समय सूर्य किरणोंको तजै। मणियोंके कुण्डलनि कर मण्डित अर हार कर शोभै है वक्षस्थल जाका, अपने जिनमन्दिरमें प्रवेश करता भया। अर ये वानरवंशी विद्याधरनिके कुमारननिने निज मर्यादा तज नगरका कोट भंग किया, वज्रके कपाट तोड़े, दरवाजे तोड़े।

अथानन्तर इनको देख नगरके वासियोंको अति भय उपज्या। घर घरमें ये बात होय हैं मजकर कहां जाइए। ये आए, बाहिर खड़े मत रहो, भीतर धसो, हाय मात यह कहा भया? हे तात! देखो, हे भ्रात हमारी रक्षा करो, हे आर्यपुत्र! महा भय उपजा है, ठिकाने रहो। या भांति नगरीके लोक व्याकुलताके वचन कहते भए। लोक भाग रावणके महलविषै आए। अपने वस्त्र हाथनिमें लिए अति विह्वल, बालकनिको गोदमें लिए स्त्रीजन कांपती भागी जाय हैं। कईयक गिर पड़ी, सो गोड़े फूट गए। कईएक चली जाय हैं, हार टूट गए सो बड़े बड़े मोती बिखरै हैं। जैसे मेघमाला शीघ्र जाय तैसे जाय है। त्रासको पाई जो हिरणी ता समान हैं नेत्र जिनके, अर ढीले होय गए हैं केशनिके बंधन जिनके, अर कोई भयकर प्रीतमके उरसे लिपट गईं। या भांति लोकनिको उद्वेगरूप महा भयभीत देख जिन शासनके देव, श्रीशांतिनाथके मन्दिरके सेवक, अपनी पक्षके पालनेको उद्यमी, करुणावंत जिनशासनके प्रभाव करनेकूं उद्यमी भए। महाभैरव आकार धरे शांतिनाथके मन्दिरसे निकसे, नानाभेष धरे, विकराल हैं दाढ जिनकी, भयंकर है मुख जिनका, मध्याह्नके सूर्य समान तेज हैं नेत्र जिनके, होंठ डसते, दीर्घ है काया जिनकी, नाना वर्ण, भयंकर शब्द, महा विषम भेषको धरे, विकराल स्वरूप, तिनकूं देख कर वानरवंशियोंके पुत्र महा भयंकर अत्यन्त विह्वल भए। वे देव क्षणविषै सिंह, क्षणविषै मेघ, क्षणविषै हाथी, क्षणविषै सर्प, क्षणविषै वायु, क्षणविषै वृक्ष, क्षणविषै पर्वत, सो इनकर कपिलकुमारनिको पीडित देख कटकके देव मदद करते भए। देवनिमें परस्पर युद्ध भया। लंकाके देव कटकके देवनिसे, अर कपिलकुमार लंकाके सन्मुख भए। तब यक्षनिके स्वामी पूर्णभद्र महाभद्र महा क्रोधकूं प्राप्त

भए। दोनों यक्षेश्वर परस्पर वार्ता करते भए, देखो ए निर्दई कपिनिके पुत्र महाविकारकूं प्राप्त भए। रावण तो निराहार होय देहविषैं निस्पृह सर्व जगतका कार्य तज पोसे बैठा है। सो ऐसे शांतिचित्तकूं यह छिद्र पाय पापी पीड़ा चाहे हैं, सो यह योधावोंकी चेष्टा नाहीं। यह वचन पूर्णभद्रके सुन मणिभद्र बोला—अहो पूर्णभद्र! रावणका इन्द्र भी पराभव करिवे समर्थ नाहीं, रावण सुन्दर लक्षणनिकर पूर्ण शांत स्वभाव है। तब पूर्णभद्रने कही—जो लंकाको विघ्न उपजा है सो आपां दूर करेंगे। यह वचन कह कर दोनों धीर सम्यक्दृष्टि जिनधर्मी यक्षनिके ईश्वर युद्धकूं उद्यमी भए। सो वानरवंशिनिके कुमार और उनके पक्षी देव सब भागे। वे दोनों यक्षेश्वर महावायु चलाय, पाषाण बरसावते भए, अर प्रलय कालके मेघ समान गाजते भए। तिनके जांघोंकी पवनकर कपिदल सूखे पानकी न्याईं उड़े, तत्काल भाग गए। तिनके लार ही ये दोनों यक्षेश्वर रामके निकट उलाहना देनेको आए। सो पूर्णभद्र सुबुद्धि रामकी स्तुति कर कहते भए—राजा दशरथ महाधर्मात्मा तिनके तुम पुत्र, अर अयोग्य कार्यके त्यागी, सदा योग्य कार्यनिके उद्यमी, शास्त्रसमुद्रके पारगामी, शुभ गुणनिकर सकलविषै ऊंचे, तिहारी सेना लंकाके लोकनिकूं उपद्रव करै यह कहांकी बात? जो जाका द्रव्य हरै सो ताका प्राण हरै है, यह धन जीवनिके बाह्य प्राण हैं। अमोलिक हीरे वैडूर्य मणि मूंगा मोती पद्मराग मणि इत्यादि अनेक रत्ननिकरि भरी लंका उद्वेगको प्राप्त करी। तब यह वचन पूर्णभद्रके सुन रामका सेवक गरुडकेतु कहिए लक्ष्मण नीलकमल समान, सो तेजसे विविधरूप वचन कहता भया। ये श्रीरघुचन्द तिनके राणी सीता प्राणहूतैं प्यारी। शीलरूप आभूषणकी धरणहारी, वह दुरात्मा रावण छलकर हर ले गया ताका पक्ष तुम कहा करो? हे यक्षेन्द्र! हमने तिहारा कहा अपराध किया? अर तानैं कहा किया जो तुम भृकुटी बांकी कर अर संध्याकी ललाई समान अरुण नेत्रकर उलहना देनेको आए। सो योग्य नाहीं। ऐती वार्ता लक्ष्मणने कही अर राजा सुग्रीव प्रति भयरूप होय पूर्णभद्रको अर्घ देय कहता भया—हे यक्षेन्द्र! क्रोध तजो, अर हम लंकाविषै कछु उपद्रव न करें। परन्तु यह वार्ता है रावण

बहुरूपिणी विद्या साधै है सो जो कदाचित् ताकूं विद्या सिद्ध होय तो वाके सन्मुख कोई ठहर न सकै, जैसैं जिनधर्मके पाठकके सन्मुख वादी न टिकैं। तातैं वह क्षमावंत होय विद्या साधै है, सो ताकूं क्रोध उपजावेंगे जो विद्या साध न सकै, जैसैं मिथ्यादृष्टि मोक्षकूं साध न सकै। तब पूर्णभद्र बोले—ऐसे ही करो, परन्तु लंकाके एक जीर्ण तृनकूं भी बाधा न कर सकोगे। अर तुम रावणके अंगको बाधा मत करो, अर अन्य बातनिकर क्रोध उपजावो। परन्तु रावण अति दृढ़ है ताहि क्रोध उपजना कठिन है। ऐसे कह वे दोनों यक्षेन्द्र भव्यजीवनिविषै है वात्सल्य जिनका, प्रसन्न हैं नेत्र जिनके, मुनिनिके समूहोंके भक्त, वैयावृतविषै उद्यमी, जिनधर्मी, अपने स्थानक गए। रामको उलहना देने आए थे सो लक्ष्मणके वचननि कर लज्जावान भए, समभावकर अपने स्थानक गए सो जाय तिष्ठे। गौतमस्वामी कहै हैं—हे श्रेणिक ! जौलग निर्दोषता होय तौलग परस्पर अति प्रीति होय, अर सदोषता भए प्रीतिभंग होय, जैसैं सूर्य उत्पात सहित होय तो नीका न लगै।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रन्थ ताकी भाषावचनिकाविषैं रावणका विद्या साधना अर कपिकुमारनिका लंका गमन, बहुरि पूर्णभद्र का कोप, क्रोधकी शांति वर्णन करनेवाला सत्तरवां पर्व पूर्ण भया ॥ ७० ॥

अथानन्तर पूर्णभद्र मणिभद्रकूं शांतभाव जान सुग्रीवका पुत्र अंगद तानै लंकाविषै प्रवेश किया। सो अंगद किहकंधनामा हाथी चढ्या, मोतिनिकी माला कर शोभित, उज्ज्वल चमरनिकर युक्त ऐसा सोहता भया जैसा मेघमालाविषै पूर्णमासीका चन्द्रमा सोहै। अति उदार, महा सामंत, तथा स्कंध इन्द्र नील आदि बड़ी ऋद्धिकर मंडित तुरंगनिपर चढ़े कुमार गमनको उद्यमी भए। अर अनेक पयादे चन्दन कर चर्चित हैं अंग जिनके, तांबूलनिकर लाल अधर, कांधे ऊपर खड्ग धरे, सुन्दर वस्त्र पहिरे, स्वर्णके आभूषणकर शोभित सुन्दर चेष्टा धरैं आगे पीछे अगल बगल पयादे चले जांय हैं। बीण बांसुरी मृदंगादि वादित्र बाजे हैं, नृत्य होता जाय है। कपिवंशियोंके कुमार लंकाविषै ऐसे पैठे जैसैं स्वर्गपुरीविषै असुरकुमार

प्रवेश करैं हैं। अंगदकूं लंकाविषै प्रवेश करता देख स्त्रीजन परस्पर वार्ता करती भईं—देखहु! यह अंगद रूप चन्द्रमा दशमुखकी नगरीविषै निर्भय चला जाय है याने कहा आरम्भा? आगे अब कहा होयगा? या भांति लोक बात करैं हैं। ए चले चले रावणके मंदिरविषै गए। सो मणियोंका चौक देख इन्होंने जानी ये सरोवर हैं। त्रासको प्राप्त भए। बहुरि निश्चय देख मणियोंका चौक जाना तब आगे गए। सुमेरुकी गुफा समान महारत्ननिकर निर्मापित मंदिरका द्वार देख्या। मणियोंके तोरणनिकर देदीप्यमान तहां अंजन पर्वत सारिखे इन्द्रनीलमणिनिके गज देखे। महास्कंध कुम्भस्थल, तिनके स्थूल दन्त अत्यन्त मनोज्ञ, अर तिनके मस्तकपर सिंहनिके चिह्न, जिनके सिरपर पूंछ, हाथिनिके कुम्भस्थलपर सिंह, विकराल वदन, तीक्ष्ण दाढ, डरावने केश, तिनको देख पयादे डरे। जानिए सांचे ही हाथी हैं। तब भयकर भागे अति विह्वल भए। अंगदने नीके समझाए तब आगे चले। रावणके महिलविषै कपिवंशी ऐसे जावैं जैसैं सिंहकी गुफाविषै मृग जांय। अनेक द्वार उलंघ आगे जायवेकूं समर्थ भए। घरनिकी रचना गहन सो ऐसैं भटकैं जैसैं जन्मका अंधा भ्रमैं। स्फटिकमणिके महिल, तहां आकाशकी आशंकाकर भ्रमकूं प्राप्त भए। अर इन्द्र नीलमणिकी भीति सो अंधकारस्वरूप भासै। मस्तकविषै शिलाकी लागी सो आकुल होय भूमिमें पड़े। वेदनाकर व्याकुल हैं नेत्र जिनके, काहूप्रकार मार्ग पाय आगे गए जहां स्फटिक मणिकी भीति। सो घननिके गोड़े फूटे, ललाट फूटे, दुखी भए। तब उलटे फिरे सो मार्ग न पावैं। आगे एक रत्नमई स्त्री देखी। साक्षात् स्त्री जान तासैं पूछते भए सो वह कहा कहै? तब महा शंकाके भरे आगे गए। विह्वल होय स्फटिकमणिकी भूमिमें पड़े। आगे शांतिनाथके मंदिरका शिखर नजर आया, परन्तु जाय सकैं नाहीं, स्फटिककी भीति आड़ी। तब वह स्त्री दृष्टि पड़ी थी त्यों एक रत्नमई द्वारपाल दृष्टि पर्या, हेमरूप बेंतकी छड़ी, जाके हाथमें। ताहि कही—श्री शांतिनाथके मंदिरका मार्ग बताओ। सो वह कहा बतावै? तब वाहि हाथसूं कूट्या, सो कूटनहारेकी अंगुरी चूर्ण होय गई। बहुरि आगे गए, जाना यह इन्द्रनीलमणिका द्वार है, शांतिनाथके चैत्यालयमें

जानेकी बुद्धि करी, कुटिल हैं भाव जिनके। आगे एक वचन बोलता मनुष्य देखा ताके केश पकड़े अर कहा तू हमारे आगे आगे चल। शांतिनाथका मंदिर दिखाय। जब वह अग्रगामी भया तब ए निराकुल भए। श्रीशांतिनाथके मंदिर जाय पहुँचे। पुष्पांजलि चढ़ाय जयजय शब्द किए, स्फटिकके थम्भनिके ऊपर बड़ा विस्तार देख्या सो अचरजकूं प्राप्त भए। मनमैं विचारते भए जैसें चक्रवर्तीके मंदिर में जिनमंदिर होय तैसें हैं। अंगद पहिले ही वाहनादिक तज भीतर गया। ललाट पर दोनों हाथ धर नमस्कार करि तीन प्रदक्षिणा देय स्तोत्र पाठ करता भया, सेना लार थी सो बाहिरले चौकविषै छांड़ी। कैसा है अंगद ? फूल रहे हैं नेत्र जाके, रत्ननिके चित्रामकर मंडल लिखा सोलह स्वप्नेका भाव देखकर नमस्कार किया, आदि मंडपकी भीतिविषै वह धीर भगवानको नमस्कार कर शांतिनाथके मंदिर विषै गया। अति हर्षका भरा भगवानकी वन्दना करता भया।

बहुरि देखै तो सन्मुख रावण पद्मासन धरै तिष्ठै है। इन्द्रनीलमणिकी किरणनिके समूह समान है प्रभा जाकी। भगवानके सन्मुख कैसा बैठा है जैसें सूर्यके सन्मुख राहु बैठा होय। विद्याको ध्यावै जैसें भरत जिनदीक्षाको ध्यावै। सो रावणसूं अंगद कहता भया—हे रावण ! कहो अब तेरी कहा वार्ता ? तोसूं ऐसी करूं जैसी यम न करै। तैंने कहा पाखण्ड रोप्या ? भगवानके सन्मुख यह पाखण्ड कहा ? धिक्कार तो पापकर्मीकूं वृथा शुभक्रियाका आरम्भ किया है। ऐसा कहकरि याका उत्तरासन उतारचा। अर याकी रानीनिकूं याके आगे कूटता भया। कठोर वचन कहता भया। अर रावणके पास पुष्प पड़े हुते सो उठाय लीए अर स्वर्णके कमलनिकर भगवानकी पूजा करी। बहुरि रावणसूं कुवचन कहता भया। अर रावणके हाथमें स्फटिककी माला छिनाय लई, सो मणियां बिखर गईं। बहुरि मणियें चुनि, माला पोय, रावणके हाथविषै दई, बहुरि छिनाय लई। बहुरि पोय गलेविषै डाली, बहुरि मस्तक पर मेली। बहुरि रावणका राजलोक, सोई भया कमलनिका वन, ताविषै ग्रीषमकर तप्तायमान जो वन का हाथी ताकी न्याईं प्रवेश किया। अर निःशंक भया राजलोकमें उपद्रव करता भया। जैसें चंचल

घोड़ा कूदता फिरै तैसें चपलता करि भ्रमण किया । काहूके कंठविषै कपड़ेका रस्सा बनाय बांध्या, अर काहूके कंठविषै उत्तरासन डार थम्भविषै बांध बहुरि छोड़ दिया । काहूको पकड़ अपने मनुष्यनिसे कही याहि बेच आवो । ताने हंसकर कही पांच दीनारनिको बेच आया । या भांति अनेक चेष्टा करीं । काहूके काननविषै घुंगुरू घालें, अर केशनिविषै कटिमेखला पहिराई, काहूके मस्तकका चूड़ामणि उतार चरणनिविषै पहिराया । अर काहूको परस्पर केशनिकर बांधी, अर काहूके मस्तकविषै शब्द करते मोर बैठाए । या भांति जैसें सांड गायनिके समूहविषै प्रवेश करै अर तिनकूं अति व्याकुल करै तैसें रावणके समीप सब राजलोकनिकूं क्लेश उपजाया । अर अंगद क्रोधकर रावणसुं कहता भया—हे अधम राक्षस ! तैंनें कपटकर सीता हरी, अब हम तेरी समस्त स्त्रीनिकूं हरैं हैं । तोमैं शक्ति होय तो यत्न कर । ऐसा कहकर याकै आगे मंदोदरीकूं पकड़ ल्याया जैसें मृगराज मृगीकूं पकड़ ल्यावै, कम्पायमान हैं नेत्र जाके । चोटी पकड़ रावणके निकट खींचता भया जैसें भरत राज्यलक्ष्मीको खींचै । अर रावणसूं कहता भया—देख ! यह पटरानी तेरे जीवहूतैं प्यारी मंदोदरी गुणवंती ताहि हम हर ले जाय हैं । यह सुग्रीवके चमरग्राहिणी चेरी होयगी । सो मंदोदरी आंखनितैं आंसू डारती भई अर विलाप करने लगी रावणके पायनविषै प्रवेश करै, कभी भुजानिविषै प्रवेश करै, अर भरतारसों कहती भई—हे नाथ ! मेरी रक्षा करहु । ऐसी दशा मेरी कहा न देखो हो, तुम क्या और ही होय गए ? तुम रावण हो अक और ही हो । अहो जैसी निरग्रंथ मुनिकी वीतरागता होय तैसी तुम वीतरागता पकड़ी । सो ऐसे दु:खमें यह अवस्था कहा ? धिक्कार तिहारे बलको, जो या पापीका सिर खड्गसों न काटो । तुम महा बलवान चांद सूर्य समान पुरुषोंका पराभव न सहो सो ऐसे रंकका कैसे सहो ? हे लंकेश्वर ! ध्यानविषै चित्त लगाया, न काहूको सुनो न देखो, अर्धपर्यंकासन धर बैठे, अहंकार तज दिया । जैसा सुमेरुका शिखर अचल होय, तैसें अचल होय तिष्ठे । सर्व इन्द्रियनिकी क्रिया तजी, विद्याके आराधनविषै तत्पर निश्चल शरीर महाधीर ऐसे तिष्ठे हो मानों काष्ठके अथवा चित्रामके हो ? जैसें राम सीता

को चितवें तैसै तुम विद्याको चितवो हो, स्थिरता कर सुमेरुके तुल्य भए हो । जब या भांति मंदोदरी रावणसे कहती भई ताही समय बहुरूपिणी विद्या दशोदिशाविषै उद्योत करती जय जयकारका शब्द

क्षय करूंगा। हे प्रिये! मेरी भौंह टेढी करनेहीमें शत्रु विलाय जांय। अर अब तो बहुरूपिणी महाविद्या सिद्ध भई मोसे शत्रु कहा जीवें। या भांति सब स्त्रीनिकूं महा धीर्य बंधाय मनमें जानता भया मैं शत्रु हते। भगवानके मंदिरसे बाहिर निकसा। नानाप्रकारके वादित्र बाजते भए, गीत नृत्य होते भए। रावणका अभिषेक भया। कामदेव समान है रूप जाका, स्वर्ण रत्ननिके कलशनिकर स्त्री स्नान करावती भईं। कैसी हैं स्त्री? कांतिरूप चांदनीसे मंडित है शरीर जिनका, चन्द्रमा समान वदन, अर सुफेद मणिनिके कलशनिकर स्नान करावें। सो अद्भुत ज्योति भासती भईं। अर कई स्त्री कमलसमान कांतिको धरे मानों सांझ फूल रही है। अर उगते सूर्य समान सुवर्णके कलशनिकर स्नान करावें सो मानों सांझही जल बरसै है। अर कई एक स्त्री हरितमणिके कलशनिकर स्नान करावती अति हर्षकी भरी शोभै हैं, मानों साक्षात् लक्ष्मी ही हैं, कमलपत्र हैं कलशनिके मुखपर। अर कईएक केलेके गर्भ समान कोमल महासुगन्ध शरीर जिनपर भ्रमर गुंजार करै है, वे नानाप्रकारके सुगन्ध उबटनाकरि रावणको नानाप्रकारके रत्नजडित सिंहासनविषै स्नान करावती भईं। सो रावणने स्नान कर आभूषण पहिरे, महा सावधान भावनिकर पूर्ण शांतिनाथके मंदिरमें गया। वहां अरहंतदेवकी पूजाकर स्तुति करता भया, बारंबार नमस्कार भया। बहुरि भोजनशालामें आया, चार प्रकारका उत्तम आहार किया—अशन पान खाद्य स्वाद्य। बहुरि भोजनकर विद्याकी परख निमित्त क्रीडा भूमिविषै गया, वहां विद्याकर अनेकरूप बनाय नानाप्रकारके अद्भुत कर्म विद्याधरनिसे न बनें सो बहुरूपिणी विद्यासे किए। अपने हाथको घातकरि भूकम्प किया। रामके कटकविषै कपियोंको ऐसा भय उपजा मानों मृत्यु ही आई। अर रावणकूं मंत्री कहते भए—हे नाथ! तुम टार राघवका जीतनहारा और नाहीं। राम महा योधा हैं और क्रोधवान होवैं तब कहा कहना? सो ताके सन्मुख तुम ही आवहु अर कोई रणविषै रामके सन्मुख आवनेको समर्थ नाहीं।

अथानन्तर रावणने बहुरूपिणी विद्यासे मायामई कटक बनाया। अर आप उद्यानविषै जहां सीता

तिष्ठे तहां गया। मंत्रिनिकरि मंडित जैसें देवनिकर संयुक्त इन्द्र होय, सो सूर्यसमान कांतिकरि युक्त आवता भया। तब ताकूं आवता देख विद्याधरी सीतासों कहती भई—हे शुभे! महाज्योतिवंत रावण पुष्पक विमानसे उतरकर आया। जैसें ग्रीष्म ऋतुविषै सूर्यकी किरणकरि आतापकूं पाता गजेन्द्र सरोवरीकी ओर आवै तैसें कामरूप अग्निसे तापरूप भया आवै है। यह प्रमदनामा उद्यान पुष्पनिकी शोभाकर शोभित, जहां भ्रमर गुंजार करै हैं। तब सीता बहुरूपिणी विद्याकर संयुक्त रावणकूं देख-कर भयभीत भई। मनमें विचारै है याके बलका पार नाहीं। सो राम लक्ष्मण हू याहि न जीतैंगे। मैं मंदभागिनी रामकूं अथवा लक्ष्मणकूं अथवा अपने भाई भामंडलकूं मत हना सुनूं। यह विचार कर व्याकुल है चित्त जाका, कांपती चिंतारूप तिष्ठै है। तहां रावण आया, सो कहता भया—हे देवी! मैं पापीने तुझे कपटकर हरी। सो यह बात क्षत्रीकुलविषै उत्पन्न भए हैं जे धीर अतिवीर तिनको सर्वथा उचित नाहीं। परन्तु कर्म की गति ऐसी है। मोहकर्म बलवान है। अर मैं पूर्व अनन्तवीर्य स्वामीके समीप व्रत लिया हुता जो परनारी मोहि न इच्छै ताहि मैं न ग्रहूं। उर्वसी, रंभा अथवा और मनोहर होय तो भी मेरे प्रयोजन नाहीं। यह प्रतिज्ञा पालतें संते मैं तेरी कृपा ही की अभिलाषा करी, परन्तु बलात्कार रमी नाहीं। हे जगतविषै उत्तम सुन्दरी! अब मेरी भुजानिकर चलाए जे बाण तिनसे तेरे अवलंबन राम लक्ष्मण भिदे ही जान। अर तू मेरे संग पुष्पक विमानमें बैठ आनन्दसे विहार कर। सुमेरुके शिखर, चैत्य वृक्ष, अनेक वन उपवन, नदी सरोवर अवलोकन करती विहार कर।

तब सीता दोऊ हाथ काननिपर धर गद्‌गद् वाणीसे दीन शब्द कहती भई—हे दशानन! तू बड़े कुल-विषै उपजा है तो यह करियो—जो कदाचित् संग्रामविषै तेरे अर मेरे वल्लभके शस्त्रप्रहार होय, तो पहले यह संदेशा कहे बगैर मेरे कंथकूं मत हतियो! यह कहियो—हे पद्म! भामंडलकी बहिनने तुमकूं यह कहा है—जो तिहारे वियोगकरि महाशोकके भारकरि महा दुखी हूं, मेरे प्राण तिहारे तक ही हैं, मेरी दशा यह भई है जैसें पवनकी हती दीपककी शिखा। हे राजा दशरथके पुत्र! जनककी पुत्रीने तुमकूं बारम्बार

स्तुतिकर यह कही है—तिहारे दर्शनकी अभिलाषाकर यह प्राण टिक रहे हैं। ऐसा कहकर मूर्छित होय भूमिमें पड़ी, जैसैं माते हाथीतैं भग्न करी कल्पवृक्षको बेल गिर पड़े। यह अवस्था महासतीकी देख रावण का मन कोमल भया, परम दुःखी भया, यह चिंता करता भया अहो कर्मनिके योगकर इनका निःसंदेह स्नेहका क्षय नाहीं। अर धिक्कार मोकूं मैं अति अयोग्य कार्य किया जो ऐसे स्नेहवान युगलका वियोग किया। पापाचारी महा नीच जन समान मैं निःकारण अपयशरूप मलसे लिप्त भया। शुद्ध चन्द्रमा समान गोत्र हमारा, मैं मलिन किया। मेरे समान दुरात्मा मेरे वंशमें न भया। ऐसा कार्य काहूने न किया। जे पुरुषोंमें इन्द्र हैं ते नारीको तुच्छ गिनै हैं। यह स्त्री साक्षात् विष तुल्य है, क्लेशकी उत्पत्तिका स्थानक सर्पके मस्तक की मणि समान, अर महा मोहका कारण। प्रथम तो स्त्रीमात्र ही निषिद्ध है। अर परस्त्रीकी कहा बात? सर्वथा त्याज्य ही है। परस्त्री नदी समान कुटिल, महा भयंकर, धर्म अर्थका नाश करणहारी, सदा संतों को त्याज्य ही है। मैं महा पापकी खान, अब तक यह सीता मुझे देवांगनाहूतैं अति प्रिय भासती भई? सो अब विष के कुम्भतुल्य भासै है। यह तो केवल रामसूं अनुरागिनी है। अब लग यह न इच्छती थी परन्तु मेरे अभिलाषा हुती। अब जीर्ण तृणवत् भासै है। यह तो केवल रामसे तन्मय है, मोसूं कदाचित् न मिलै। मेरा भाई महापंडित विभीषण सब जानता हुता सो मोहि बहुत समझाया। मेरा मन विकार कूं प्राप्त भया सो न मानी, तासूं द्वेष किया। जब विभीषणके वचननिकरि मैत्री भाव करता तो नीकै था। महा युद्ध भया, अनेक हते गए, अब कैसी मित्रता? यह मित्रता सुभटनिकूं योग्य नाहीं। अर युद्ध करके बहुरि दया पालनी यह बनै नाहीं। अहो? मैं सामान्य मनुष्यकी नाईं संकटमें पड़ा हूं। जो कदाचित् जानकी रामपै पठावै तौ लोग मोहि असमर्थ जानै। अर युद्ध करिए तो महा हिंसा होय। कोई ऐसे हैं जिनके दया नाहीं केवल क्रूरतारूप हैं, ते भी कालक्षेप करै हैं। अर कोईयक दयावान हैं, संसार कार्यसे रहित हैं ते सुखसे जीवै हैं। मैं मानी युद्धाभिलाषी, अर कछू करुणाभाव नाहीं, सो हम सारिखे महा दुखी हैं। अर रामके सिंहवाहन अर लक्ष्मणके गरुडवाहन विद्या सो इनकर महा उद्योत है। सो

इनकूं शस्त्ररहित करूं अर जीवते पकडूं। बहुरि बहुत धन दूं तो मेरी बड़ी कीर्ति होय। अर मोहि पाप न होय यह न्याय है। तातैं यही करूं। ऐसा मनमें धारे महा विभवसंयुक्त रावण राजलोकविषै गया जैसे माता हाथी कमलनिके वनविषै जाय। बहुरि विचारी अंगदने बहुत अनीति क्रोध किया अर लाल नेत्र होय आए। रावण होंठ डसता वचन कहता भया-वह पापी सुग्रीव नाहीं दुर्ग्रीव है। ताहि निग्रीव कहिए मस्तक रहित करूंगा। ताके पुत्र अंगद सहित चन्द्रहास खड्गकर दोयटूक करूंगा। अर तमोमंडल को लोक भामंडल कहै हैं सो वह महा दुष्ट है, ताहि दृढ़बन्धनसे बांधि लोहके मुगदरोंसे कूट मारूंगा। अर हनुमानकूं तीक्ष्ण करोतकी धारसे काठके युगलमें बान्ध बिहराऊंगा। वह महा अनीति है। एक राम न्यायमार्गी है ताहि छोड़ूंगा। अर समस्त अन्यायमार्गी हैं तिनकूं शस्त्रनिकर चूर डारूंगा। ऐसा विचारकर रावण तिष्ठा। अर उत्पात सैंकड़ों होने लगे, सूर्यका मण्डल आयुध समान तीक्ष्ण दृष्टि पड़ा। पूर्णमासीका चन्द्रमा अस्त होय गया। आसन पर भूकम्प भया। दशों दिशा कम्पायमान भई। उल्कापात भए। शृगाली (गीदड़ी) विरस शब्द बोलती भई। तुरंग नाड़ हिलाय विरस विरूप हींसते भए। हाथी रूक्ष शब्द करते भये, सूण्डसे धरती कूटते भए। यक्षनिकी मूर्तिके अश्रुपात पड़े। सूर्यके सन्मुख काग कटुक शब्द करते भए, ढीले पांख किए महा व्याकुल भए। सरोवर जलकरि भरे हुते ते शोषको प्राप्त भए। अर गिरियोंके शिखर गिर पड़े। अर रुधिरकी वर्षा भई। थोड़े ही दिनमें जानिए है लंकेश्वरकी मृत्यु होय। ऐसे अपशकुन और प्रकार नाहीं। जब पुण्य क्षीण होय तब इन्द्र भी न बचे। पुरुषमें पौरुष पुण्यके उदयकरि होय है। जो कछू प्राप्त होना होय सोई पाइए है, हीनाधिक नाहीं। प्राणियोंके शूरवीरता सुकृतके बलकर है।

देखहु रावण नीतिशास्त्रके विषै प्रवीण, समस्त लौकिक नीति रीति जाने, व्याकरणका पाठी, महा गुणनिकर मंडित, सो कर्मनिकर प्रेरा संता अनीतिमार्गकूं प्राप्त भया, मूढ़बुद्धि भया। लोकविषै

मरण उपरांत कोई दुःख नाहीं। सो याकूं अत्यन्त गर्वकर विचार नाहीं। नक्षत्रनिके बलकरि रहित अर ग्रह सर्व ही क्रूर आए। सो यह अविवेकी रणक्षेत्रका अभिलाषी होता भया। प्रतापके भंगका है भय जाकूं, अर महा शूरवीरताके रससे युक्त, यद्यपि अनेक शास्त्रनिका अभ्यास किया है तथापि युक्त अयुक्तकूं न देखै। गौतम स्वामी राजा श्रेणिकतैं कहै हैं—हे मगधाधिपति! रावण महामानी अपने मनविषैं विचारै है सो सुन—सुग्रीव भामण्डलादिक समस्तकूं जीति अर कुम्भकरण इन्द्रजीत मेघनादकूं छुड़ाय लंकामें लाऊंगा। बहुरि बानरवंशिनिका वंश नाश अर भामण्डलका पराभव करूंगा। अर भूमिगोचरिनिकूं भूमिविषैं न रहने दूंगा। अर शुद्ध विद्याधरनिकूं धराविषैं थापूंगा। तब तीन लोकके नाथ तीर्थङ्कर देव अर चक्रायुध बलभद्र नारायण हम सारिखे विद्याधर कुलहीविषैं उपजैंगे। ऐसा वृथा विचार करता भया। हे मगधेश्वर! जा मनुष्यने जैसे संचित कर्म किए होंय तैसा ही फल भोगवै। ऐसैं न होय तो शास्त्रोंके पाठी कैसैं भूलैं? शास्त्र हैं सो सूर्य समान हैं, ताके प्रकाश होते अन्धकार कैसे रहै। परन्तु जे घूघूसमान मनुष्य हैं तिनकूं प्रकाश न होय।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महा पद्मपुराण संस्कृतग्रन्थ, ताकी भाषावचनिकाविषै रावण के युद्धका निश्चय कथन वर्णन करनेवाला बहत्तरवां पर्व पूर्ण भया ॥ ७२ ॥

अथानन्तर दूजे दिन प्रभातही रावण महादेदीप्यमान आस्थान मंडपविषै तिष्ठ्या। सूर्यके उदय होते संते सभाविषैं कुवेर वरुण ईशान यम सोम समान जे बड़े बड़े राजा तिनकरि सेवनीक, जैसैं देवनिकर मंडित इन्द्र विराजे तैसैं राजानिकरि मंडित सिंहासन पर विराज्या। परम कांतिकूं धरैं, जैसैं ग्रह तारा नक्षत्रनिकर युक्त चन्द्रमा सोहै। अत्यन्त सुगन्ध, मनोग्य वस्त्र, पुष्पमाला, अर महामनोहर गजमोतिनिके हार तिनकरि शोभै है उरस्थल जाका, महा सौभाग्यरूप, सौम्यदर्शन, सभाकूं देखकर चिंता करता भया—जो भाई कुम्भकरण इन्द्रजीत मेघनाद यहां नाहीं दीखैं है सो उन बिना यह ६५२

सभा सोहै नाहीं। और पुरुष कुमुदरूप बहुत हैं, पर वे पुरुष कमलरूप नाहीं। सो यद्यपि रावण महारूप-वान सुन्दर वदन हुते, अर फूल रहे हैं नेत्र कमल जाके, महामनोग्य तथापि पुत्र भाईकी चितासे कुमलाया वदन नजर आवता भया। अर महा क्रोधरूप कुटिल हैं भृकुटी जाकी, मानों क्रोधका भरया आशीविष सर्प ही है। महा भयंकर होठ डसे। महा विकरालस्वरूप मंत्री देखकर डरे। आज ऐसा कौनसा कोप भया, यह व्याकुलता भई। तब हाथ जोड़ सीस भूमिमें लगाय राजा मय उग्र शुक लोकाक्ष सारण इत्यादि धरतीकी ओर निरखते चलायमान हैं कुण्डल जिनके विनती करते भए—हे नाथ! तिहारे निकटवर्ती योधा सबही यह प्रार्थना करें हैं प्रसन्न होहु। अर कैलाशके शिखरतुल्य ऊंचे महिल, जिनके मणियोंकी भीति, मणियोंके झरोखा, तिनमें तिष्ठती भ्रमररूप हैं नेत्र जिनके, ऐसी सब राणियों सहित मंदोदरी सो याहि देखती भई। कैसा देख्या? लाल हैं नेत्र जाके, प्रतापका भरा। ताहि देखकर मोहित भया है मन जाका। रावण उठकर आयुधशालामें गया। कैसी है आयुधशाला? अनेक दिव्य शस्त्र अर सामान्य शस्त्र तिनसे भरी, अमोघ बाण अर चक्रादिक अमोघ रत्ननिसूं भरी, जैसें वज्रशालामें इन्द्र जाय। जा समय रावण आयुधशालामें गया ता समय अपशकुन भए। प्रथम ही छींक भई सो शकुनशास्त्रविषै पूर्वदिशाकूं छींक होय तो मृत्यु, अर अग्निकोणविषै शोक, दक्षिणमें हानि, नैऋत्यमें शुभ, पश्चिमविषै मिष्ट आहार, वायुकोणमें सर्व सम्पदा, उत्तरविषै कलह, ईशानविषै धनागम, आकाशविषै सर्व सहार, पातालविषै सर्व सम्पदा ये दशों दिशाविषै छींकके फल कहे। सो रावणकूं मृत्युकी छींक भई। बहुरि आगे मार्ग रोके महा नाग निरख्या। अर हा शब्द, ही शब्द, धिक् शब्द, कहाँ जाय है—यह वचन होते भए। अर पवनकर छत्रके वैडूर्यमणिका दण्ड भग्न भया। अर उत्तरासन गिर पड्या। काग दाहिना बोला। इत्यादि और भी अपशकुन भए। ते युद्धतें निवारते भए, वचनकर कर्मकर निवारते भए। जे नानाप्रकारके शकुनशास्त्रविषै प्रवीण पुरुष हुते वे अत्यन्त आकुल भए। अर मंदोदरी शुक सारण इत्यादि बड़े बड़े मंत्रिनकूं बुलाय कहती भई—तुम स्वामीकूं कल्याण

की बात काहेकूं न कहो हो ? अब तक कहा अपनी अर उनकी चेष्टा न देखी ? कुम्भकरण इन्द्रजीत मेघनादसे बंधनविषै आए, वे लोकपाल समान महातेजके धारक अद्भुत कार्यके करणहारे। तब नमस्कारकर मंत्री मंदोदरीसे कहते भए—हे स्वामिनि ! रावण महामानी, यमराजसा क्रूर आप ही आप प्रधान है। ऐसा या लोकविषै कोई नाहीं जाके वचन रावण मानै। जो कुछ होनहार है ता प्रमाण बुद्धि उपजै है। बुद्धि कर्मानुसारिणी है। सो इन्द्रादिककर तथा देवनिके समूहकर और भांति न होय। सम्पूर्ण न्यायशास्त्र अर धर्मशास्त्र तिहारा पति सब जानै है परन्तु मोहकरि उन्मत्त भया है। हम बहुत प्रकार कह्या, सो काहूप्रकार मानै नाहीं। जो हठ पकड्या है सो छांड़े नाहीं। जैसैं वर्षाकालके समागमविषै महाप्रवाहकर संयुक्त जो नदी ताका तिरना कठिन है, तैसैं कर्मनिका प्रेरा जो जीव ताका सम्बोधना कठिन है। यद्यपि स्वामीका स्वभाव दुर्निवार है तथापि तिहारा कहा करै तो करै। तातैं तुम हितकी बात कहो, यामें दोष नाहीं।

यह मंत्रिनिने कही तब पटराणी साक्षात् लक्ष्मी समान निर्मल है चित्त जाका, सो कम्पायमान पतिके समीप जायवेकूं उद्यमी भई। महा निर्मल जलसमान वस्त्र पहिरे। जैसैं रति कामके समीप जाय तैसैं चाली। सिरपर छत्र फिरै है, अनेक सहेली चमर ढारै हैं। जैसैं अनेक देवनिकर इन्द्राणी इन्द्रपै जाय तैसैं यह सुन्दर वदनकी धरणहारी पतिपै गई। निश्वास नाखती, पांय डिगते, शिथिल होय गई है कटि मेखला जाकी, भरतारके कार्यविषै सावधान, अनुरागकी भरी, ताहि स्नेहकी दृष्टिकरि देखती भई। आपका चित्त शस्त्रनिविषै अर बक्तरविषै तिनकूं आदरसे स्पर्शै है सो मंदोदरीसे कहते भए—हे मनोहरे ! हंसनी समान चालकी चलनहारी हे देवी ! ऐसा कहा प्रयोजन है जो तुम शीघ्रतासे आवो हो। हे प्रिये ! मेरा मन काहेकूं हरो हो, जैसैं स्वप्नविषै निधान। तब वह पतिव्रता पूर्णचन्द्रसमान है वदन जाका, फूले कमलसमान नेत्र, स्वतः उत्तम चेष्टाकी धरणहारी, मनोहर जे कटाक्ष वेई भए बाण सो पतिकी ओर चलावनहारी, महाविचक्षण, मदनका निवास है अंग जाका, महा मधुर शब्दकी बोलनहारी, स्वर्णके

पद्म पुराण ६५५

कुम्भसमान हैं स्तन जाके, तिनके भारकर नय गया है उदर जाका, दाडिमके बीज समान दांत, मूंगासमान लाल अधर, अत्यन्त सुकुमार, अति सुन्दरी, भरतारकी कृपाभूमि, सो नायकूं प्रणाम कर कहती भई–हे देव ! मोहि भरतारकी भीख देओ । आप महादयावंत धर्मात्माओंसे अधिक स्नेहवंत, मैं तिहारे वियोगरूप नदीविषैं डूबूं हूं, सो महाराज मोहि निकासो । कैसी है नदी ? दुःखरूप जलकी भरी, संकल्प विकल्परूप लहरकर पूर्ण है । हे महाबुद्धे ! कुटुम्बरूप आकाशविषैं सूर्यसमान प्रकाशके कर्त्ता एक मेरी विनती सुनहु । तिहारा कुलरूप कमलोंका वन महा विस्तीर्ण प्रलय हुआ जाय है सो क्यों न राखहु । हे प्रभो ! तुम मोहि पटराणीका पद दिया हुता सो मेरे कठोर वचननिकूं क्षमा करो । जे अपने हितू हैं तिनका वचन औषध समान ग्राह्य है । परिणाम सुखदाई, विरोधरहित, स्वभावरूप आनन्दकारी है । मैं यह कहूं हूं तुम काहेकूं संदेहकी तुला चढ़ो हो ? यह तुला चढ़िवेको नाहीं, काहेकूं आप संताप करो हो, अर हम सबनिकूं संताप करो हो, अब हू कहा गया ? तिहारा सब राज, तुम सकल पृथ्वीके स्वामी, अर तिहारे भाई पुत्रनिकूं बुलाय लेहु । तुम अपना चित्त कुमार्गतैं निवारो, अपना मन वश करो । तिहारा मनोरथ अत्यन्त अकार्यविषै प्रवरता है सो इन्द्रियरूप तरल तुरंगोंको विवेकरूप दृढ़ लगामकर वश करो । इन्द्रियनिके अर्थ कुमार्गविषैं मनको कौन प्राप्त करै ? तुम अपवादका देनहारा जो उद्यम ताविषैं कहा प्रवर्तो हो ? जैसैं अष्टापद अपनी छाया कूपविषैं देख क्रोधकर कूपविषैं पड़े तैसैं तुम आपही क्लेश उपजाय आपदामें पड़ो हो । यह क्लेशका कारण जो अपयशरूप वृक्ष ताहि तजकर सुखसे तिष्ठो । केलिके थम्भसमान असार यह विषय ताहि कहा चाहो हो ? यह ६५५
तिहारा कुल समुद्र समान गम्भीर प्रशंसा योग्य, ताहि शोभित करो । यह भूमिगोचरोंकी स्त्री बड़े कुलवंतनिकूं अग्निकी शिखा समान है ताहि तजो । हे स्वामी ! जे सामंत सामंतसों युद्ध करैं है वे मनविषैं यह निश्चय करैं हैं हम मरैंगे । हे नाथ ! तुम कौन अर्थ मरो हो ? पराई नारी ताके अर्थ कहा मरणा ? या मरिवेविषैं यश नाहीं । अर उनकूं मारो, तिहारी जीत होय तोहू यश नाहीं । क्षत्री

मरे हैं यशके अर्थ । तातैं सीतासम्बन्धी हठको छांडो । अर जे बड़े बड़े व्रत हैं तिनकी महिमा तो कहा कही ? एक यह परदारपरित्याग ही पुरुषके होय तो दोऊ जन्म सुधरें । शीलवंत पुरुष भवसागर तिरें । जो सर्वथा स्त्रीका त्याग करै सो तो अति श्रेष्ठ ही है । काजल समान कालिमाकी उपजावनहारी यह परनारी, तिनविषैं जे लोलुपी, तिनविषैं मेरु समान गुण होय तोहू तृण समान लघु होय जांय । जो चक्रवर्तीका पुत्र होय अर देव जाका पक्ष होय अर परस्त्रीके संगरूप कीचविषै डूबै तो महा अपयशकूं प्राप्त होय । जो मूढमति परस्त्रीसे रति करै है सो पापी आशीविष भुजंगनीसे रमैं है । तिहारा कुल अत्यन्त निर्मल सो अपयशकर मलिन मत करो । दुर्बुद्धि तजो ! जे महाबलवान हुते अर दूसरोंको निर्बल जानते अर्ककीर्ति अशनघोषादिक अनेक नाशकूं प्राप्त हुए । सो हे सुमुख ! तुम कहा न सुने ?

ये वचन मंदोदरीके सुन रावण कमलनयन, कारी घटा समान है वर्ण जाका, मलयागिरिचन्दन कर लिप्त मंदोदरीसे कहता भया–हे कांते ! तू काहेकूं कायर भई । मैं अर्ककीर्ति नाहीं जो जयकुमार से हारा । अर मैं अशनघोष नाहीं जो अमिततेजसे हारा । अर और हू नाहीं, मैं दशमुख हूं, तू काहे कूं कायरताकी बात कहै है । मैं शत्रुरूप वृक्षनिके समूहकूं दावानलरूप हूं । सीता कदाचित् न दूं । हे मंदमानसे ! तू भय मत करै । या कथा कर तोहि कहा ? तोकों सीताकी रक्षा सौंपी है सो रक्षा भली भांति कर । अर जो रक्षा करिवेकूं समर्थ नाहीं तो शीघ्र मोहि सौंप देवो । तब मंदोदरी कहती भई–तुम उससे रतिसुख बांछो हो तातैं यह कहो हो–मोहि सोंप देवो । सो यह निर्लज्जताकी बात कुलवंतों को उचित नाहीं । बहुरि कहती भई–तुमने सीताका कहा माहात्म्य देखा जो ताहि बारम्बार बांछो हो । वह ऐसी गुणवंती नाहीं, ज्ञाता नाहीं, रूपवंतियोंका तिलक नाहीं, कलाविषैं प्रवीण नाहीं, मन–मोहनी नाहीं, पतिके छाने (आज्ञा बिना) चलनेवारी नाहीं । ता सहित रतिविषैं बुद्धि करो हो, सो हे कंत ! यह कहा वार्ता ? अपनी लघुता होय है सो तुम नाहीं जानो हो ? मैं अपने मुख अपनी प्रशंसा कहा करूं ? अपने मुख अपने गुण कहे गुणोंकी गौणता होय है । अर पराए मुख सुने प्रशंसा होय है । तातैं मैं कहा

कहूं तुम सब नीके जानो हो। विचारी सीता कहा ? लक्ष्मी भी मेरे तुल्य नाहीं। तातैं सीताकी अभिलाषा तजो। मेरा निरादरकर तुम भूमिगोचरिणीकूं इच्छो हो, सो मंदमति हो। जैसे बालबुद्धि वैडूर्य मणिको तज कांचको इच्छै। ताका कछू दिव्यरूप नाहीं, तिहारे मनविषै क्या रुची यह ग्राम्यजनकी नारी समान अल्पमति, ताकी कहा अभिलाषा ? अर मोहि आज्ञा देवो सोई रूप धरूं, तिहारे चित्तकी हरणहारी मैं लक्ष्मीरूप धरूं। अर आज्ञा करो तो शची इन्द्राणीका रूप धरूं। कहो तो रतिका रूप धरूं। हे देव ! तुम इच्छा करो सोई रूप धरूं। यह वार्ता मन्दोदरीकी सुन रावण ने नीचा मुख किया। अर लज्जावान भया। बहुरि मन्दोदरी कहती भई—तुम परस्त्री आसक्त होय अपनी आत्मा लघु किया। विषयरूप आमिषकी आसक्ती है जाके सो पापका भाजन है। धिक्कार है ऐसी क्षुद्र चेष्टाकूं।

यह वचन सुन रावण मंदोदरीसे कहता भया—हे चन्द्रवदनी ! कमललोचने ! तुम यह कही—जो कहो जैसा रूप बहुरि धरूं सो औरोंके रूपसे तिहारा रूप कहा घटती है ? तिहारा स्वतः ही रूप मोहि अति वल्लभ है। हे उत्तमे ! मेरे अन्य स्त्रीनि कर कहा ? तब हर्षितचित्त होय कहती भई—हे देव ! सूर्यको दीपका उद्योत कहा दिखाइये ? मैं जो हितके वचन आपको कहे सो औरोंसे पूछ देखो। मैं स्त्री हूं मेरेमें ऐसी बुद्धि नाहीं। शास्त्रमें कही है जो धनी सबही नय जानैं हैं परन्तु दैवयोग थकी प्रमादरूप भया होय तो जे हितु हैं ते समझावैं। जैसे विष्णुकुमार स्वामीको विक्रियाऋद्धिका विस्मरण भया तो औरोंके कहे कर जाना। यह पुरुष, यह स्त्री ऐसा विकल्प मंदबुद्धिनिके होय है। जे बुद्धिमान हैं हितकारी वचन सबहीका मान लेय। आपका कृपाभाव मो ऊपर है तो मैं कहूं हूं। तुम परस्त्रीका प्रेम तजो, मैं जानकीकूं लेकर राम पै जाऊं, अर रामकूं तिहारे पास ल्याऊं। अर कुम्भकरण, इन्द्रजीत, मेघनादकूं लाऊं। अनेक जीवनिकी हिंसा कर कहा ? ऐसे वचन मन्दोदरीने कहे तब रावण अति क्रोधकर कहता भया—शीघ्र ही जावो जावो, जहां तेरा मुख न देखूं तहां जावो। अहो तू आपको

वृथा पंडित माने है। आपकी ऊंचता तज परपक्षको प्रशंसामें प्रवरती। तू दीनचित्त है, योधावोंकी माता, तेरे इन्द्रजीत मेघनादसे पुत्र अर ऐसी पटराणी, राजा मनकी पुत्री। तोमें एती कायरता कहांसे आई? [illegible] नी [illegible] प्रिये! सुनो जो ज्ञानियोंके मुख बलभद्र नारायण प्रतिनारायणका जन्म सुनिये है। पहिला बलभद्र विजय नारायण त्रिपृष्ठ, प्रतिनारायण अश्वग्रीव। दूजा बलभद्र अचल, नारायण द्विपृष्ठ प्रतिहरि तारक इस भांति अबतक सात बलभद्र नारायण हो चुके। सो इनके शत्रु प्रतिनारायण इन्होंने हते। अब तुम्हारे समय यह बलभद्र नारायण भए हैं अर तुम प्रतिवासुदेव हो। आगे प्रतिवासुदेव हठ कर हते गए तैसें तुम नाशको इच्छो हो। जे बुद्धिमान हैं तिनको यही कार्य करना जो या लोक परलोकमें सुख होय। अर दुःखके अंकुरकी उत्पत्ति न होय सो करना। यह जीव चिरकाल विषयसे तृप्त न भया, तीन लोकविषैं ऐसा कौन है जो विषयोंसे तृप्त होय? तुम पापकर मोहित भए हो सो वृथा है। अर उचित तो यह है तुमने बहुकाल भोग किए, अब मुनिव्रत धरो अथवा श्रावकके व्रत धर दुःख नाश करो। अणुव्रतरूप खड्गकर दीप्त है अंग जाका नियम रूप छत्रकर शोभित, सम्यक्दर्शनरूप बक्तर पहिरे, शीलरूप ध्वजा कर शोभित, अनित्यादि बारह भावना तेई चन्दन तिनकर चर्चित है अंग जाका, अर ज्ञानरूप धनुषको धरे, वश किया है इन्द्रियनिका बल जानें, शुभ ध्यान अर प्रतापकर युक्त, मर्यादारूप अंकुशकर संयुक्त, निश्चलरूप हाथीपर चढ़ा, जिन भक्ति कोहै महाभक्ति जाके, दुर्गतिरूप कुनदी सो महा कुटिल पापरूप है वेग जाका, अतिदुःसह पंडितनिकर तिरिये है, ताहि तिरकर सुखी होवो। अर हिमवान सुमेरु पर्वतविषैं जिनालयको पूजते संते मेरे सहित ढाई ६५७
द्वीपमें विहार कर, अष्टापद सहस्त्रीनिके हस्तकमलपल्लव तिनकर लडाया संता सुमेरु पर्वतके वनविषैं क्रीड़ा कर, अर गंगाके तटपर क्रीड़ा कर, अर और भी मन वांछित प्रदेशनिविषैं रमणीक क्षेत्रनिविषैं हे नरेन्द्र! सुखसे विहार कर। या युद्धकर कछू प्रयोजन नाहीं, प्रसन्न होवहु। मेरा वचन सर्वथा सुख का कारण है। लोकापवाद मत करावहु। अपयशरूप समुद्रमें काहेकूं डूबो हो? यह अपवाद विषतुल्य

महानिन्द्य परम अनर्थका कारण भला नाहीं। दुर्जन लोक सहज ही परनिन्दा करैं सो ऐसी बात सुन कर तो करैं ही करैं। या भांतिके शुभ वचन कह कर यह महासती हाथ जोड पतिका परमहित बांछती पतिके पांयनि पड़ी।

तब रावण मन्दोदरीकू उठायकर कहता भया—तू निःकारण क्यों भयकू प्राप्त भई? सुन्दरवदनी! मोसे अधिक या संसारविषै कोई नाहीं। तू स्त्रीपर्यायके स्वभावकर वृथा काहेकू भय करै है! तैनें कही जो यह बलदव नारायण हैं सो नाम नारायण अर नाम बलदेव भया तो कहा? नाम भए कार्य की सिद्धि नाहीं। नाम नाहर भया तो कहा? नाहरके पराक्रम भए नाहर होय। कोई मनुष्य सिद्ध नाम कहाया तो कहा सिद्ध भया? हे कांते! तू कहा कायरताकी वार्ता करै? रथनूपुरका राजा इन्द्र कहावता सो कहा इन्द्र भया? तैसैं यह भी नारायण नाहीं। या भांति रावण प्रतिनारायण ऐसे प्रबल वचन स्त्रीको कह महा प्रतापी क्रीडा भवनविषै मन्दोदरी सहित गया, जैसैं इन्द्र इन्द्राणीसहित क्रीडा गृहविषै जाय। सांझके समय सांझ फूली, सूर्य अस्तसमय किरण संकोचने लगा, जैसैं संयमी कषायों को संकोचै। सूर्य आरक्त होय अस्तकू प्राप्त भया, कमल मुद्रित भए। चकवा चकवी वियोगके भय कर दीन वचन रटते भए, मानों सूर्यकू बुलावै हैं। अर सूर्यके अस्त होयवेकर ग्रह नक्षत्रनिकी सेना आकाशविषै बिस्तरी, मानों चन्द्रमाने पठाई। रात्रिके समय रत्नद्वीपोंका उद्योत भया। दीपोंकी प्रभा-कर लंका नगरी ऐसी शोभती भई मानों सुमेरुकी शिखा ही है। कोऊ वल्लभा वल्लभसे मिलकर ऐसे कहती भई एक रात्रि तो तुम सहित व्यतीत करैंगे बहुरि देखिए कहा होय? अर कोई एक प्रिया नानाप्रकारके पुष्पनिकी सुगन्धताके मकरंदकर उन्मत्त भई स्वामीके अंगविषै मानों महा कोमल पुष्प-निकी वृष्टि ही पड़ी। कोई नारी कमल तुल्य है चरण जाके, अर कठिन हैं कुच जाके, महा सुन्दर शरीरकी धरणहारी, सुन्दरपतिके समीप गई। अर कोई सुन्दरी आभूषणनिकू पहरती ऐसी शोभती भई मानों स्वर्ण रत्नोंकी कृतार्थ करै है। भावार्थ—ता समान ज्योति रत्न स्वर्णनिविषै नाहीं। रात्रि

समय विद्याकरि विद्याधर मनवांछित क्रीडा करते भए। घर घर विषै भोगभूमिकीसी रचना होती भई। महा सुन्दर गीत, अर बीण बांसुरियोंका शब्द तिनकर लंका हर्षित भई। मानों वचनालाप ही करै हैं। अर ताम्बूल सुगन्ध माल्यादिक भोग अर स्त्री आदि उपभोग सो भोगोपभोगनिकरि लोक देवनिकी न्याईं रमते भए। अर कईएक उन्मत्त भए स्त्रियोंको नानाप्रकार रमावते भए। अर कईएक नारी अपने वदनकी प्रतिबिम्ब रत्ननिकी भीतिविषै देखकर जानती भईं कि कोई दूजी स्त्री मन्दिरमें आई है,सो ईर्षाकर नीलकमलसे पतिकूं ताडना करती भई। स्त्रीनिके मुखकी सुगन्धताकर मदिरा सुगन्ध होय गई, अर मदिराके योगकर नारिनिके नेत्र लाल होय गए। अर कोईयक नायिका नवोढा हुती, अर प्रीतमनें मदिरा पिलाय उन्मत्त करी। सो मन्मथ कर्मविषै प्रवीण प्रौढाके भावकूं प्राप्त भई। लज्जारूप सखीकूं दूरकर उन्मत्ततारूप सखीने क्रीडाविषै अत्यन्त तत्पर करी। अर घूमैं हैं नेत्र जाके अर स्खलित हैं वचन जाके स्त्री पुरुषनिकी चेष्टा उन्मत्तताकर विकटरूप होती भई। नरनारिनिके अधर मूंगा समान शोभायमाद दीखते भए। नर नारी मदोन्मत्त भए सो न कहनेकी बात कहते भये, अर न करनेकी बात करते भये। लज्जा छूट गई, चन्द्रमाके उदयकर मदनकी वृद्धि भई। ऐसा ही तो इनका यौवन, ऐसे ही सुन्दर मंदिर, अर ऐसा ही अमलका जोर सूं सब ही उन्मत्त चेष्टाका कारण आय प्राप्त भया। ऐसी निशाविषै, प्रभातविषै होनहार हैं युद्ध जिनके सो संभोगका योग उत्सवरूप होता भया। अर राक्षसनिका इन्द्र सुन्दर है चेष्टा जाकी, सो समस्त ही राजलोककूं रमावता भया, बारम्बार मंदोदरीसूं स्नेह जनावता भया। याका वदनरूप चन्द्र निरखते रावणके लोचन तृप्त न भये। मंदोदरी रावणकूं कहती भई—मैं एक क्षणमात्र हू तुमको न तजूंगी। हे मनोहर! सदा तिहारे संग ही रहूंगी। जैसैं बेल बाहुबलिके सर्व अंगसूं लगी तैसैं रहूंगी। आप युद्धविषै विजयकर वेग ही आवो। मैं रत्ननिकूं चूर्णकर चौक पूरूंगी। अर तिहारे अर्घपाद्य करूंगी, प्रभुकी महामख पूजा कराऊंगी। प्रेमकर कायर है चित्त जाका, अत्यन्त प्रेमके वचन कहते निशा व्यतीत भई, अर कूकड़ा

बोलें, नक्षत्रनिकी ज्योति मिटी, संध्या लाल भई, अर भगवानके चैत्यालयनिविषै महा मनोहर गीतध्वनि होती भई। अर सूर्यलोकका लोचन उदयकूं सन्मुख भया, अपनी किरणनिकर सर्व दिशाविषै उद्योत करता संता प्रलयकालके अग्निमण्डल समान है आकार जाका प्रभात समय भया। तब सब राणी पतिकूं छोडती उदास भईं। तब रावणने सबकूं दिलासा करी। गम्भीर वादित्र बाजे, शंखों के शब्द भए। रावणकी आज्ञाकर जे युद्धविषै विचक्षण हैं महाभट, महा अहंकारकूं धरते परम उद्धत अतिहर्षके भरे नगरसे निकसे। तुरंग हस्ती रथोंपर चढ़े, खड्ग धनुष गदा बरछी इत्यादि अनेक आयुधनिकूं धरे, जिनपर चमर ढुरते, छत्र फिरते, महा शोभायमान देवनि जैसे स्वरूपवान्, महा प्रतापी विद्याधरनिके अधिपति योधा, शीघ्र कार्यके करणहारे, श्रेष्ठ ऋद्धिके धारक युद्धकूं उद्यमी भए। ता दिन नगरी स्त्री कमलनयनी करुणाभावकरि दुखरूप होती भईं। सो तिनकूं निरखे दुर्जनका चित्त भी दयाल होय। कोईयक सुभट घरसे युद्धकूं निकसा अर स्त्री लार लगी आवै है ताहि कहता भया—हे मुग्धे! घर जावो। हम सुखसूं जाय हैं। अर कोईयक स्त्री भरतार चलै हैं तिनको पीछेसूं जाय कहती भई—हे कंत! तिहारा उत्तरासन लेवो, तब पति सन्मुख होय लेते भए! कैसी है मृगनयनी? पतिके मुख देखवेकी है लालसा जाके। अर कोईयक प्राणवल्लभा पतिकूं दृष्टिसे अगोचर होते सखियोंसहित मूर्छा खाय पडी। अर कोईयक पतिसूं पाछी आय मौन गह, सेजपर परी, मानों काठकी पुतली ही है। अर कोईयक शूरवीर श्रावकके व्रतका धारक पीठपीछे अपनी स्त्रीकूं देखता भया अर आगैं देवांगनाओंकूं देखता भया। भावार्थ—जे सामंत अणुव्रत धारक हैं वे देवलोकके अधिकारी हैं। अर जे सामंत
पहिले पूर्णमासीके चन्द्रमा समान सौम्यवदन हुते वे युद्धके आगमनविषै कालसमान क्रूर आकार होय गए। सिरपर टोप धरे बक्तर पहिरे शस्त्र लीए तेज भासते भए।

अथानन्तर चतुरंग सेना संयुक्त धनुष छत्रादिककर पूर्ण मारीच महा तेजकूं धरे युद्धका अभिलाषी आय प्राप्त भया। फिर विमलचन्द्र आया महा धनुषधारी। अर सुनन्द आनन्द नन्द इत्यादि हजारों

राजा आए। सो विद्याकर निरमापित दिव्यरथ तिनपर चढ़े अग्नि कीसी प्रभाकूं धरे मानों अग्नि-कुमारदेव ही हैं। कईएक तीक्ष्ण शस्त्रोंकर सम्पूर्ण हिमवान पर्वतसमान जे हाथी उनपर सर्वदिशावोंकूं आच्छादते हुए आए, जैसैं विजुरीसे संयुक्त मेघमाला आवै। अर कईएक श्रेष्ठ तुरंगोंपर चढ़े पांचों हथियारोंकर संयुक्त शीघ्र ही ज्योतिष लोककूं उलंघ आवते भए। नाना प्रकारके बड़े बड़े वादित्र और तुरंगोंका हींसना। गजोंका गर्जना, पयादोंके शब्द, योधानिके सिंहनाद, बन्दीजनोंके जय जय शब्द, अर गुणीजनोंके गीत वीररसके भरे इत्यादि और भी अनेक शब्द भले भए। धरती आकाश शब्दा-यमान भए। जैसैं प्रलयकालके मेघपटल होवैं तैसैं निकसे। मनुष्य हाथी घोड़े रथ पियादे परस्पर अत्यन्त विभूतिकर देदीप्यमान, बड़ी भुजानिसे बखतर पहिर उतंग हैं उरस्थल जिनके, विजयके अभि-लाषी और पयादे खड्ग सम्भाले हैं महा चांचल आगे आगे चले जांय हैं, स्वामीके हर्ष उपजावनहारे तिनके समूहकर आकाश पृथ्वी और सर्व दिशा व्याप्त भई। ऐसे उपाय करते भी या जीवके पूर्व कर्मका जैसा उदय है तैसा ही होय है। यह प्राणी अनेक चेष्टा करै है परन्तु अन्यथा न होय, जैसा भवितव्य है तैसा ही होय। सूर्य हू और प्रकार करिवे समर्थ नाहीं।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रन्थ ताकी भाषावचनिकाविषैं रावणका युद्धविषैं उद्यमी होनेका वर्णन करनेवाला तेहत्तरवां पर्व पूर्ण भया ॥ ७३ ॥

अथानन्तर लंकेश्वर मंदोदरीसूं कहता भया—हे प्रिये! न जानिये बहुरि तिहारा दर्शन होय वा न होय। तब मंदोदरी कहती भई—हे नाथ! सदा वृद्धिकूं प्राप्त होवो, शत्रुवोंकूं जीत शीघ्र ही आय हमको देखोगे। अर संग्रामसे जीते आओगे। ऐसा कहा अर हजारों स्त्रियोंकर अवलोकता संता राक्षसों का नाथ मंदिरसे बाहिर गया। महा विकटताकूं धरे विद्याकर निरमाप्या ऐन्द्रनामा रथ ताहि देखता भया। जाके हजार हाथी जुपैं, मानों कारी घटाका मेघ ही है। हे नाथ! मन्दोन्मत्त झरे है मद

जिनके, मोतियोंकी माला तिनकरि पूर्ण, महा घटाके नादकर युक्त ऐरावत समान नानाप्रकारके रंगों से शोभित, जिनका जीतना कठिन, अर विनयके धाम, अत्यन्त गर्जनाकर शोभित ऐसे सोहते भए मानों कारी घटाके समूह ही हैं। मनोहर है प्रभा जिनकी ऐसे हाथियोंके रथ चढ्या रावण सोहता भया। भुज-बन्ध कर शोभायमान हैं भुजा जाकी, मानों साक्षात् इन्द्र ही है। विस्तीर्ण हैं नेत्र जाके, अनुपम है आकार जाका, अर तेज कर सकल लोकविषैं श्रेष्ठ १० हजार आप समान विद्याधर तिनके मंडलकर युक्त रणविषै आया, सो वे महा बलवान देवों सारिखे अभिप्रायके वेत्ता रावणकूं देखि सुग्रीव हनुमान क्रोधकूं प्राप्त भए। अर जब रावण चढ्या तब अत्यन्त अपशकुन भए। भयानक शब्द भए, अर आकाश विषैं गृध्र भ्रमते भए आच्छादित किया है सूर्यका प्रकाश जिन्होंने, सो ये क्षयके सूचक अपशकुन भए। परन्तु रावणके सुभट न मानते भए, युद्धकूं आए ही। अर श्रीरामचन्द्र अपनी सेनाविषैं तिष्ठते सो लोक-निसूं पूछते भए—हे लोको! या नगरीके समीप यह कौन पर्वत है? तब सुषेणादिक तो तत्कालही जवाब न देय सके अर जांबुवादिक कहते भए—यह बहुरूपिणी विद्यासे रचा पद्मनागनामा रथ है घनेनिकूं मृत्युका कारण। अंगदने नगरविषैं जायकर रावणकूं क्रोध उपजाया सो अब बहुरूपिणी विद्या सिद्ध भई हमसे महाशत्रुता लिए है। सो तिनके वचन सुनकर लक्ष्मण सारथीसे कहता भया मेरा रथ शीघ्र ही चलाय। तब सारथीने रथ चलाया अर जैसैं समुद्र गाजै ऐसे वादित्र बाजे। वादित्रोंके नाद सुनकर योधा विकट है चेष्टा जिनकी, लक्ष्मणके समीप आए। कोईयक रामके कटकका सुभट अपनी स्त्रीको कहता भया—हे प्रिये! तू शोक तज पाछी जावहु मैं लंकेश्वरकूं जीत तिहारे समीप आऊंगा, या भांति गर्वकर प्रचंड जे योधा वे अपनी स्त्रीनिकूं धीर्य बंधाय अन्तःपुरसे निकसे। परस्पर स्पर्धा करते प्रेरे हैं वाहन रथादिक जिन्होंने ऐसे महायोधा शस्त्रके धारक युद्धकूं [illegible] सेनाका अधिपति महा हाथियोंके रथ चढ़ा निकस्या, गम्भीर है शब्द [illegible] विद्याधरनिके अधिपति हर्ष सहित रामके सुभट क्रूर हैं आकार जिनके, क्रोधायमान होय रावणसे

योधानिसूं जैसा समुद्र गाजै तैसें गाजते, गंगाकी उतंग लहर समान उछलते, युद्धके अभिलाषी भए, अर राम लक्ष्मण डेरानिसूं निकसे। कैसे हैं दोऊ भाई? पृथ्वीविषै व्याप्त हैं अनेक यश जिनके, क्रूर आकार कूं धरे, सिंहनिके रथ चढ़े बखतर पहिरे। महा बलवान उगते सूर्यसमान श्रीराम शोभते भए। अर लक्ष्मण गरुड़की है ध्वजा जाके अर गरुड़के रथ चढ्या। कारी घटा समान है रंग जाका अपनी श्यामताकर श्याम करी हैं दशोंदिशा जाने, मुकुटकूं धरे कुण्डल पहिरे धनुष चढाय बखतर पहिरे बाण लिए जैसा सांझके समय अंजनगिर सोहै तैसें शोभता भया। गौतम स्वामी कहै हैं-हे श्रेणिक! बड़े २ विद्याधर नाना प्रकारके वाहन अर विमाननिपर चढे युद्ध करिवेकूं कटकसूं निकसे। जब श्रीराम चढ़े तब अनेक शुभ शकुन आनन्दके उपजावनहारे भए। रामको चढ्या जान रावण शीघ्र ही दावानल समान है आकार जाका युद्धकूं उद्यमी भया। दोनों ही कटकके योधा जे महा सामंत तिनपर आकाशसे गन्धर्व अर अप्सरा पुष्पवृष्टि करती भईं। अंजनगिरिसे हाथी महावतोंके प्रेरे मदोन्मत्त चले। पियादों कर बेढ़े,अर सूर्यके रथ समान रथ चंचल हैं तुरंग जिनके सारथीनिकर युक्त। जिनपर महा योधा चढ़े युद्धको प्रवर्ते। अर घोड़ों पर चढ़े सामंत गम्भीर हैं नाद जिनके परम तेजकूं धरे गाजते भए। अर अश्व हींसते भए। परम हर्षके भरे देदीप्यमान हैं आयुध जिनके अर पियादे गर्वके भरे पृथ्वीविषै उछलते भए। खड्ग खेट बरछी हैं हाथविषै जिनके,युद्धकी पृथ्वीविषै प्रवेश करते भये। परस्पर स्पर्धा करै हैं दौड़े है, योधानिविषै परस्पर अनेक आयुधनिकर तथा लाठी मूका लोहयष्टिनिकर युद्ध भया है, परस्पर केशग्रहण भया। खड्ग कर विदारा गया है। शरीर जिनका, कईएक बाणकर बींधे गए तथापि योधा युद्धके आगे ही भए, मारै हैं प्रहार करै हैं गाजै हैं घोड़े व्याकुल भए भ्रमै हैं, कईएक आसन खाली होय गए असवार मारे गए मुष्टियुद्ध गदायुद्ध भया, कईएक बाणनिकर बहुत मारे गए, कईएक खड्ग कर, कईएक सेलोंकर घाव खाए, बहुरि शत्रुकूं घायल करते भए, कईएक मनवांछित भोगनिकर इन्द्रियनिकूं रमावते सो युद्ध विषै इन्द्रियें इनको छोडती भई। जैसे कार्य परे कुमित्र तजै, कईएकके आंतनिके ढेर होय गए तथापि

खेद न मानते भए शत्रुनिपर जाय पड़े, अर शत्रुसहित आप प्राणांत भए, डसे हैं होंठ जिन्होंने। जे राज कुमार देवकुमार सारिखे सुकुमार रत्ननिके महिलोंके शिखरविषै क्रीडा करते,महा भोगी पुरुष स्त्रीनिके स्तन कर रमाये संते वे खड्ग चक्र कनक इत्यादि आयुधनिकर विदारे संते संग्रामकी भूमिविषै पड़े। विरूप आकार तिनको गृध्र पक्षी अर स्याल भखैं हैं। अर जैसैं रंगमहिलमें रंगकी रामा नखोंकर चिह्न करती अर निकट आवतीं, तैसैं स्यालनी नख दंतनिकर चिह्न करैं हैं, अर समीप आवैं हैं। बहुरि श्वासके प्रकाशकर जीवते जानि वे डर जांय हैं, जैसैं डाकनी मंत्रवादीसे दूर जांय। अर सामंतनिकूं जीवते जानि यक्षिणी डर कर उड जाती भई, जैसैं दुष्ट नारी, चलायमान हैं नेत्र जिसके, पतिके समीपसे जाती रहै। जीवोंके शुभाशुभ प्रकृतिका उदय युद्धविषै लखिए है। दोनों बराबर, अर कोईको हार होय कोईको जीत होय। अर कबहूं अल्प सेनाका स्वामी महा सेनाके स्वामीको जीते, अर कोईयक सुकृतके सामर्थ्यसे बहुतोंको जीते, अर कोई बहुत भी पापके उदयसे हार जाय। जिन जीवोंने पूर्व भवविषै तप किया वे राज्यके अधिकारी होय विजयको पावैं हैं। अर जिन्होंने तप न किया अथवा तप भंग किया तिनकी हार होय है। गौतमस्वामी राजा श्रेणिकसूं कहै हैं–हे श्रेणिक! यह धर्म मर्मकी रक्षा करै है, अर दुर्जयको जीतै है। धर्मही बड़ा सहाई है। बड़ा पक्ष धर्मका है। धर्म सब ठौर रक्षा करै है। घोड़ोंकर युक्त रथ, पर्वत समान हाथी, पवन समान तुरंग, असुर कुमारसे पयादे इत्यादि सामग्री पूर्ण है, परन्तु पूर्वपुण्यके उदय विना कोई राखिवे समर्थ नाहीं। एक पुण्याधिकारी ही शत्रुवोंको जीतै है। इन भांति राम रावणके युद्धकी प्रवृत्तिविषै योधावोंकर योधा हते गए, तिनकर रणक्षेत्र भर गया, अवकाश नाहीं। आयुधोंकर योधा उछलै हैं, परैं हैं सो आकाश ऐसा दृष्टि पड़ता भया मानों उत्पातके बादलोंकर मंडित है।

अथानन्तर मारीच, चन्द्रनिकर, वज्राक्ष, शुकसारण और भी राक्षसोंके अधीश तिन्होंने रामका कटक दबाया। तब हनुमान चन्द्र मारीच नील मुकुंद भूतस्वन इत्यादि रामपक्षके योधा तिन्होंने राक्षसनि-

की सेना दबाई। तब रावणके योधा कुंद, कुम्भ, निकुम्भ, विक्रम, क्रमाण, जम्बूमाली, काकबली सूर्यार, मकरध्वज, अशनिरथ इत्यादि राक्षसनिके बड़े बड़े राजा शीघ्रही युद्धकूं उठे। तब भूधर, अचल, सम्मेद, निकाल, कुटिल, अंगद, सुखेण, कालचन्द्र, उर्मितरंग इत्यादि बानरवंशी योधा तिनके सन्मुख भए। उनही समान ता समय कोई सुभट प्रतिपक्षी सुभट बिना दृष्टि न पड्या। भावार्थ—दोनों पक्षके योधा परस्पर महा युद्ध करते भए। अर अंजनीका पुत्र हाथिनिके रथपर चढ़कर रणमें क्रीड़ा करता भया, जैसें कमलनिकर भरे सरोवरमें महागज क्रीडा करै। गौतम गणधर कहै हैं—हे श्रेणिक! वा हनुमान शूरवीरने राक्षसनिकी बड़ी सेना चलायमान करी, उसे रुचा जो किया। तब राजा मय विद्याधर दैत्य-वंशी मंदोदरीका बाप, क्रोधके प्रसंगकर लाल हैं नेत्र जाके, सो हनुमानके सन्मुख आया। तब वह हनुमान कमल समान हैं नेत्र जाके बाणवृष्टि करता भया, सो मयका रथ चकचूर किया। तब वह दूजे रथ चढकर युद्धको उद्यमी भया तब हनुमानने बहुरि रथ तोड़ डाला। तब मयको विह्वल देख रावणने बहुरूपिणी विद्याकर प्रज्वलित उत्तम रथ शीघ्र ही भेजा। सो राजा मयने वा रथपर चढ़ कर हनुमानसे युद्ध किया अर हनुमानका रथ तोड़ा। तब हनुमानको दबा देख भामंडल मदद आया। सो मयने बाणवर्षाकर भामंडलका भी रथ तोड़ा। तब राजा सुग्रीव इनके मदद आए। सो मयने ताकूं शस्त्ररहित किया अर भूमिमें डारा। तब इनकी मदद विभीषण आया। तो विभीषणके अर मयके अत्यन्त युद्ध भया, परस्पर बाण चले। सो मयने विभीषणका बखतर तोड़ा। सो अशोकवृक्षके पुष्प समान लाल होय तैसी लालरूप रुधिरकी धारा विभीषणके पड़ी। तब वानरवंशियोंकी सेना चलायमान भई—अर राम युद्धकूं उद्यमी भए, विद्यामई सिंहनिके रथ चढ़े शीघ्र ही मय पर आए। अर बानरवंशीनिकूं कहते भए—तुम भय मत करहु। रावणकी सेना बिजुरी सहित कारी घटा समान तामें उगते सूर्य समान श्रीराम प्रवेश करते भए। अर परसेनाका विध्वंस करवेकूं उद्यमी भए। तब हनु-मान भामंडल सुग्रीव विभीषणकूं धीर्य उपजा अर बानरवंशिनिकी सेना युद्ध करवेकूं उद्यमी भई।

रामका बल पाय रामके सेवकनिका भय मिटा। परस्पर दोनों सेनाके योधानिविषैं शस्त्रोंका प्रहार भया, सो देख देख देव आश्चर्यकूं प्राप्त भए। अर दोनों सेनाविषैं अंधकार होय गया। प्रकाशरहित लोक दृष्टि न पड़े। श्रीराम राजा मयको बाणनिकर अत्यन्त आच्छादते भए। थोड़े ही खेद कर मय कूं विह्वल किया, जैसैं इन्द्र चमरेन्द्रकूं करैं। तब रामके बाणोंकर मयकूं विह्वल देख, रावण काल समान क्रोधकर राम पर आया। तब लक्ष्मण रामकी ओर रावणकूं आवता देख महातेज कर कहता भया—हो विद्याधर! तू किधर जाय है, मैं तोहि आज देख्या, खड़ा रहो। हे रंक! पापी, चोर, परस्त्रीरूप दीपकके पतंग, अधमपुरुष, दुराचारी! आज मैं तोसों ऐसी करूं जैसी काल न करै। हे कुमानुष! श्रीराघवदेव समस्त पृथ्वीके पति तिन्होंने मोहि आज्ञा करी है जो या चोरकूं सजा देहु। तब दशमुख महा क्रोध कर लक्ष्मणसूं कहता भया—रे मूढ! तैंने कहा लोकप्रसिद्ध मेरा प्रताप न सुना? या पृथ्वीविषैं जे सुखकारी सार वस्तु हैं सो सब मेरी ही हैं। मैं राजा पृथ्वीपति, जो उत्कृष्ट वस्तु सो मेरी। घन्टा गजके कंठविषैं सोहै, स्वानके न सोहै। तैसैं योग्य वस्तु मेरे घर सोहै औरके नाहीं। तू मनुष्यमात्र वृथा विलाप करै तेरी कहा शक्ति? तू दीन मेरे समान नाहीं। मैं रंकसे क्या युद्ध करूं? तू अशुभके उदयसे मोसे युद्ध किया चाहे है सो जीवनसे उदास भया है, मूवा चाहै है। तब लक्ष्मण बोले तू जैसा पृथ्वीपति है तैसा मैं नीके जानूं हूं। आज तेरा गाजना पूर्ण करूं हूं। जब ऐसा लक्ष्मण ने कहा तब रावणने अपने बाण लक्ष्मण पर चलाए, अर लक्ष्मणने रावण पर चलाए! जैसे वर्षाका मेघ जलवृष्टि कर गिरिकूं आच्छादित करै, तैसैं बाणवृष्टिकर वाने वाकूं बेध्या अर वाने वाकूं बेध्या। सो रावणके बाण लक्ष्मणने वज्रदंडकर बीचही तोड़ डारे, आप तक आवने न दिए, बाणोंके समूह छेद भेद तोड़े फोड़े चूर कर डारे। सो धरती आकाश बाणखंडनिकर भर गए। लक्ष्मणने रावण कूं सामान्य शस्त्रनिकर विह्वल किया। तऊ रावणने जानी यह सामान्य शस्त्रनिकर जीता न जाय, तब लक्ष्मण पर रावणने मेघबाण चलाया सो धरती आकाश जलरूप होय गए। तब लक्ष्मणने पवन

बाण चलाया, क्षणमात्रमें मेघबाण विलय किया। बहुरि दशमुखने अग्निबाण चलाया सो दशों दिशा प्रज्ज्वलित भई। तब लक्ष्मणने वरुणशस्त्र चलाया सो एक निमिषमें अग्निबाण नाशकूं प्राप्त भया। बहुरि लक्ष्मणने पापबाण चलाया सो धर्मबाणकर रावणने निवारचा। बहुरि लक्ष्मणने ईंधनबाण चलाया सो रावणने अग्निबाण कर भस्म किया। बहुरि लक्ष्मणने तिमिरबाण चलाया सो अंधकार होय गया, आकाश वृक्षनिके समूहकर आच्छादित भया। कैसे हैं वृक्ष? आसार फलनिकूं बरसावे हैं आसार पुष्पनिके पटल छाय गए। तब रावणने सूर्यबाण कर तिमिरबाण निवारचा अर लक्ष्मण पर नागबाण चलाया। अनेक नाग चले, विकराल हैं फण जिनके। तब लक्ष्मणने गरुडबाणकर नागबाण निवारचा। गरुडकी पांखोंकर आकाश स्वर्णकी प्रभारूप प्रतिभासता भया। बहुरि रामके भाईने रावण पर सर्पबाण चलाया। प्रलयकालके मेघ समान है शब्द जाका, अर विषरूप अग्निके कणनिकर महाविषम। तब रावणने मयूरबाणकर सर्पबाण निवारा, अर लक्ष्मणपर विघ्नबाण चलाया। सो विघ्नबाण दुर्निवार, ताका उपाय सिद्धबाण, सो लक्ष्मणकूं याद न आया। तब वज्रदंड आदि अनेक शस्त्र चलाए। रावण हू सामान्य शस्त्रनिकर युद्ध करता भया, दोनों योधानिमें समान युद्ध भया। जैसा त्रिपृष्ठ अर अश्वग्रीवके युद्ध भया हुता, तैसा लक्ष्मण रावणके भया। जैसा पूर्वोपार्जित कर्मका उदय होय तैसा ही फल होय। तैसी क्रिया कर जे महा क्रोधके वशमें हैं अर जो कार्य आरम्भा ताविषै उद्यमी हैं, ते नर तीव्र शस्त्रकूं न गिनैं, अर अग्निकूं न गिनै, सूर्यको न गिनैं, वायुकूं न गिने।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रंथ, ताकी भाषावचनिकाविषै रावण लक्ष्मणका युद्ध वर्णन करने वाला चौहत्तरवां पर्व पूर्ण भया॥७४॥

अथानन्तर गौतम स्वामी राजा श्रेणिकसूं कहै हैं—हे भव्योत्तम! दोनों ही सेनाविषै तृषावंतनिकूं शीतल मिष्ट जल प्याइये है, अर क्षुधावन्तोंको अमृत समान आहार दीजिए है, अर खेदवन्तोंकूं मलयागिरि

चन्दनसे छिडकिये हैं, ताडवृक्षके बीजनेसे पवन करिए हैं, बरफके वारिसे छांटिये हैं तथा और हू उपचार अनेक कीजिए हैं। अपना पराया कोई होऊ सबके यत्न कीजिए हैं। यही संग्रामकी रीति है। दश दिन युद्ध करते भए, दोऊ ही महाधीर अभंगचित्त। रावण लक्ष्मण दोनों समान, जैसा वह तैसा वह। सो यक्ष गंधर्व किन्नर अप्सरा आश्चर्यकूं प्राप्त भए। अर दोऊनिका यश करते भए, दोऊनिपर पुष्प वर्षा करी। अर एक चन्द्रवर्धन नामा विद्याधर ताकी आठ पुत्री, सो आकाशविषैं विमानविषै बैठी देख तिनकूं कौतूहलसे अप्सरा पूछती भईं–तुम देवियों सारिखी कौन हो ? तिहारी लक्ष्मणविषै विशेष भक्ति दीखै है, अर तुम सुन्दर सुकुमार शरीर हो। तब वे लज्जासहित कहती भईं–तुमको कौतूहल है तो सुनो–जब सीताका स्वयम्बर हुआ तब हमारा पिता हम सहित तहां आया था। तहां लक्ष्मणको देख हमकूं देनी करी अर हमारा भी मन लक्ष्मणविषै मोहित भया। सो अब यह संग्राम विषैं वर्ते है, न जानिए कहा होय ? यह मनुष्यनिविषैं चन्द्रमा समान प्राणनाथ हैं। जो याकी दशा सो हमारी। ऐसे इनके मनोहर शब्द सुनकर लक्ष्मण ऊपरकूं चौंके, तब वे आठों ही कन्या इनके देखवेकर परम हर्षकूं प्राप्त भईं–अर कहती भईं–हे नाथ ! सर्वथा तिहारा कार्य सिद्ध होहु। तब लक्ष्मणकूं विघ्नबाणका उपाय सिद्धबाण याद आया, अर प्रसन्न वदन भया। सिद्धबाण चलाय विघ्न बाण विलय किया। अर आप महाप्रतापरूप युद्धकूं उद्यमी भया। जो जो शस्त्र रावण चलावै सो रामका वीर महाधीर शस्त्रनिविषैं प्रवीण छेद डारे, अर आप बाणनिके समूहकर सर्व दिशा पूर्ण करी, जैसैं मेघपटलकर पर्वत आच्छादित होय। रावण बहुरूपिणी विद्याके बलकरि रणक्रीडा करता भया। लक्ष्मणने रावणका एक सीस छेदा, तब दोय सीस भए, दोय छेदे तब चार भए, अर दोय भुजा छेदी तब चार भईं, अर चार छेदी तब आठ भईं। या भांति ज्यों ज्यों छेदी, त्यों त्यों दुगुनी भईं। अर सीस दुगुणे भए। हजारों सिर अर हजारों भुजा भईं रावणके कर हाथीके सूण्ड समान भुजबन्धन कर शोभित, अर सिर मुकुटोंकर मंडित, तिनकर रणक्षेत्र पूर्ण किया। मानो रावणरूप समुद्र

महा भयंकर ताके हजारों सिर, वेई भए ग्राह, अर हजारों भुजा वेई भई तरंग तिनकर बढ़ता भया। अर रावणरूप मेघ, जाके बाहुरूप बिजुरी, अर प्रचंड है शब्द, अर सिर ही भए शिखर तिनकर सोहता भया। रावण अकेला ही महासेना समान भया। अनेक मस्तक तिनके समूह, जिनपर छत्र फिरैं, मानों यह विचार लक्ष्मणने याहि बहुरूप किया। जो आगे मैं अकेले अनेकनिसूं युद्ध किया अब या अकेले से कहा युद्ध करूं? तातें याहि बहुशरीर किया। रावण प्रज्वलित बनसमान भासता भया। रत्ननिके आभूषण अर शस्त्रनिकी किरणनिके समूहकर प्रदीप्त रावण लक्ष्मणकूं हजारों भुजानिकर, बाण शक्ति खड्ग बरछी सामान्य चक्र इत्यादि शस्त्रनिकी वर्षाकर आच्छादता भया। सो सब बाण लक्ष्मण छेदे अर महाक्रोधरूप होय सूर्य समान तेजरूप बाणनिकर रावणकूं आच्छादनेकूं उद्यमी भया। एक दोय तीन चार पांच छह दस बीस शत सहस्र मायामई रावणके सिर लक्ष्मणने छेदे। हजारों सिर भुजा भूमिविषै पड़े, सो रणभूमि उनकर आच्छादित भई। ऐसी सोहै मानों सर्पादिके फणनि सहित कमलनिके बन हैं। भुजोंसहित सिर पड़े वे उल्कापातसे भासे। जेते रावणके बहुरूपिणी विद्याकर सिर अर भुज भए तेते सब सुमित्राके पुत्र लक्ष्मणने छेदे, जैसे महामुनि कर्मनिके समूहको छेदै। रुधिरकी धारा निरन्तर पड़ी। तिनकर आकाशविषै मानों सांझ फूली। दोय भुजाका धारक लक्ष्मण ताने रावणकी असंख्यात भुजा विफल करीं। कैसे हैं लक्ष्मण? महा प्रभावकर युक्त हैं। रावण पसेवके समूह कर भर गया है अंग जाका, स्वास कर संयुक्त है मुख जाका, यद्यपि महाबलवान हुता तथापि व्याकुलचित भया। गौतमस्वामी कहै हैं—श्रेणिक! बहुरूपिणी विद्याके बलकर रावणने महा भयंकर युद्ध किया, पर लक्ष्मणके आगे बहुरूपिणी विद्याका बल न चला। तब रावण मायाचार तज सहज रूप होय क्रोधका भरा युद्ध करता भया। अनेक दिव्यशस्त्रनिकर अर सामान्य शस्त्रनिकर युद्ध किया, परंतु वासुदेवको जीत न सक्या। तब प्रलय कालके सूर्य समान है प्रभा जाकी, परपक्षका क्षय करण हारा जो चक्ररत्न ताहि चिन्तता भया। कैसा है चक्ररत्न? अप्रमाण प्रभावके समूहकूं धरे, मोतिनिकी

झालरियोंकर मंडित, महा देदीप्यमान, दिव्य, वज्रमई, महा अद्भुत, नाना प्रकारके रत्ननिकर मंडित है अंग जाका, दिव्यमाला अर सुगन्धकर लिप्त, अग्निके समूह तुल्य धारानिके समूहकर महा प्रकाशवन्त, वैडूर्य मणिके सहस्र आरे तिनकर युक्त, जिसका दर्शन सहा न जाय, सदा हजार यक्ष जाकी रक्षा करैं, महा क्रोधका भरा, जैसा कालका मुख होय ता समान वह चक्र चितवते ही कर विषै आया। जाकी ज्योतिकर ज्योतिष देवोंकी प्रभा मन्द होय गई, अर सूर्यकी कांति ऐसी होय गई मानों चित्राम का सूर्य है। अर अप्सरा विश्वावसु तुंबरु नारद इत्यादि गन्धर्वनिके भेद आकाशविषै रणका कौतुक देखते हुते सो भयकर परे भए। अर लक्ष्मण अत्यन्त धीर शत्रुको चक्र संयुक्त देख कहता भया—हे अधम नर! याहि कहा ले रहा है जैसे कृपण कौडीको ले रहै। तेरी शक्ति है तो प्रहार कर। ऐसा कह्या तबवह महा क्रोधायमान होय, दांतनिकर डसे हैं होंठ जाने, लाल हैं नेत्र जाके, चक्रकूं फेर लक्ष्मणपर चलाया। कैसा है चक्र? मेघमंडल समान है शब्द जाका, अर महा शीघ्रताकूं लिए प्रलयकालके सूर्य समान मनुष्यानकूं जीतव्यके संशयका कारण। ताहि सन्मुख आवता देख लक्ष्मण वज्रमई है मुख जिनका ऐसे बाणनिकर चक्रके निवारवेकूं उद्यमी भया। अर श्रीराम वज्रावर्त धनुष चढ़ाय अमोघ बाणनिकर चक्र के निवारवेकूं उद्यमी भए। अर हल मूशलनकूं भ्रमावते चक्रके सन्मुख भए। अर सुग्रीव गदाकूं फिराय चक्रके सन्मुख भए। अर भामंडल खड्गकूं लेकर निवारिवेकूं उद्यमी भए। अर विभीषण त्रिशूल ले ठाढे भए। अर हनुमान मुद्गर लांगूल कनकादि लेकर उद्यमी भए। अर अंगद पारण नामा शस्त्र लेकर ठाढे भए। अर अंगदका भाई अंगकुठार लेकर महा तेजरूप खडे भए। और हू दूसरे श्रेष्ठ विद्याधर अनेक ६७१ आयुधनिकर युक्त सब एक होयकर जीवनेकी आशा तज चक्रके निवारिवेकूं उद्यमी भए, परन्तु चक्र कूं निवार न सके। कैसा है चक्र? देव करैं हैं सेवा जाकी। ताने आयकर लक्ष्मणकूं तीन प्रदक्षिणा देय अपना स्वरूप कर लक्ष्मणके करविषै तिष्ठा, सुखदाई शान्त है आकार जाका। यह कथा गौतम स्वामी राजा श्रेणिककूं कहे हैं—हे मगधाधिपति! राम लक्ष्मणका महा ऋद्धिकूं धरें यह महात्म्य तोहि

संक्षेपसे कहा । कैसा है इनका माहात्म्य ? जाहि सुने परम आश्चर्य उपजै । अर लोकविषै श्रेष्ठ है। कईएकके पुण्यके उदयकर परम विभूति होय है। अर कईएक पुण्यके क्षयकर नाश होय हैं । जैसैं सूर्यका अस्त चन्द्रमाका उदय होय है तैसैं लक्ष्मणके पुण्यका उदय जानना ।

इति श्रीरविषेणाचार्य विरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रंथ ताकी भाषावचनिकाविषैलक्ष्मणके चक्ररत्नकी उत्पत्ति वर्णन करनेवाला पचहत्तरवां पर्व पूर्ण भया ॥ ७५ ॥

अथानन्तर लक्ष्मणके हाथविषै महासुन्दर चक्ररत्न आया देख सुग्रीव भामण्डलादि विद्याधरनिके अधिपति अति हर्षित भए, अर परस्पर कहते भए—आगै भगवान अनन्तवीर्य केवलीने आज्ञा करी जो लक्ष्मण आठवां वासुदेव है, अर राम आठवां बलदेव है,सो यह महाज्योति चक्रपाणि भया । अति उत्तम शरीरका धारक याके बलका कौन वर्णन कर सके । अर यह श्रीराम बलदेव जाके रथकूं महा तेजवंत सिंह चलावै, जाने राजा मयको पकड़ा, अर हल मूसल महारत्न देदीप्यमान जाके करविषै सोहै । ये बलभद्र नारायण दोऊ भाई पुरुषोत्तम प्रकट भए, पुण्यके प्रभावकर परमप्रेमके भरे । लक्ष्मण के हाथविषै सुदर्शन चक्रकूं देख राक्षसनिका अधिपति चित्तविषै चितारै है जो भगवान अनन्तवीर्यने आज्ञा करी हुती सोई भई । निश्चय सेती कर्मरूप पवनका प्रेरा यह समय आया । जाका छत्र देख विद्याधर डरते, अर परकी महासेना भाग जाती, परसेनाकी ध्वजा अर छत्र मेरे प्रतापसे बहे बहे फिरते, हिमाचल विंध्याचल हैं स्तन जाके, समुद्र है वस्त्र जाके, ऐसी यह पृथ्वी मेरी दासी समान आज्ञा-
कारिणी हुती, ऐसा मैं रावण सो रणविषै भूमिगोचरनिने जीत्या, यह अद्भुत बात है । कष्टकी अवस्था आय प्राप्त भई । धिक्कार या राज्यलक्ष्मीकूं । कुलटा स्त्रीसमान है चेष्टा जाकी । पूज्य पुरुष या पापिनीकूं तत्काल तजैं । यह इन्द्रियनिके भोग इन्द्रायणके फल समान, इनका परिपाक विरस है, अनन्त दुःख सम्बन्धके कारण साधुनिकर निंद्य हैं । पृथ्वीविषै उत्तम पुरुष भरत चक्रवर्त्यादि भए ते

धन्य हैं जिन्होंने निःकंटक छहखंड पृथ्वीका राज्य किया अर विषके मिले अन्नकी न्याई राज्यकू तज जिनेन्द्र व्रत धार रत्नत्रयकूं आराधनकर परमपदकूं प्राप्त भए हैं। मैं रंक विषयाभिलाषी, मोह बलवानने मोहि जीत्या। यह मोह संसारभ्रमणका कारण। धिक्कार मोहि जो मोहके वश होय ऐसी चेष्टा करी। रावण तो यह चिंतवन करै है। अर आया है चक्र जाके ऐसा जो लक्ष्मण महा तेजका धारक सो विभीषणकी ओर निरख रावणसे कहता भया—हे विद्याधर! अब हू कछू न गया है, जानकीकूं लाय श्रीरामदेवकूं सौंप दे। अर यह वचन कह कि श्रीरामके प्रसादकर जीवूं हूं। हमको तेरा कछु चाहिए नाहीं। तेरी राज्यलक्ष्मी तेरे ही रहो। तब रावण मंद हास्यकर कहता भया—हे रंक! तेरे वृथा गर्व उपजा है। अबार ही अपने पराक्रम तोहि दिखावूं हूं। हे अधमनर! मैं तोहि जो अवस्था दिखाऊं सो भोग। मैं रावण पृथ्वीपति, विद्याधर, तू भूमिगोचरी रंक। तब लक्ष्मण बोले—बहुत कहिवेकर कहा? नारायण सर्वथा तेरा मारणहारा उपजा। तब रावणने कहा इच्छामात्र ही नारायण हूजिए है तो जो तू चाहे सो न हो, इन्द्र हो, तू कुपुत्र पिताने देशसे बाहिर किया, महा दुखी दलिद्री बनचारी भिखारी निर्लज्ज तेरी वासुदेव पदवी हमने जानी। तेरे मनविषै मत्सर है सो मैं तेरे मनोरथ भंग करूंगा। यह घेघली समान चक्र है ताकर तू गर्वा है। सो रंकोंकी यही रीति है खलिका टूक पाय मनविषै उत्सव करैं। बहुत कहिवेकर कहा? ये पापी विद्याधर तोसूं मिले हैं तिनसहित अर या चक्रसहित वाहनसहित तेरा नाशकर तोहि पातालकूं प्राप्त कराऊंगा। ये रावणके वचन सुनकर लक्ष्मणने कोपकर चक्रको भ्रमाय रावण पर चलाया। वज्रपातके शब्दसमान भयंकर है शब्द जाका, अर प्रलय ६७२ कालके सूर्यसमान तेजकूं धरे चक्र रावणपर आया। तब रावण बाणनिकर चक्रके निवारवेकूं उद्यमी भया। बहुरि प्रचंड दंड अर शीघ्रगामी वज्रनागकर चक्रके निवारनेका यत्न किया तथापि रावणका पुण्य क्षीण भया सो चक्र न रुका, नजीक आया। तब रावण चन्द्रहास खड्ग लेकर चक्रके समीप आया। चक्रके खड्गकी दई सो अग्निके कणनिकर आकाश प्रज्ज्वलित भया। खड्गका जोर चक्रपर न चला।

सन्मुख तिष्ठता जो रावण महाशूरवीर, राक्षसनिका इन्द्र, ताका चक्रने उरस्थल भेदा सो पुण्य क्षयकर अंजनगिरिसमान रावण भूमिविषै परचा, मानों स्वर्गसे देव चया, अथवा रतिका पति पृथ्वीविषै परचा। ऐसा सोहता भया मानों वीररसका स्वरूप ही है—चढ़ रही है भौंह जाकी, डसे हैं होंठ जाने। स्वामीकूं पडा देख समुद्र समान था शब्द जाका ऐसी सेना भागिवेकूं उद्यमी भई। ध्वजा छत्र बहे बहे फिरे, समस्त लोक रावणके विह्वल भए, विलाप करते भागे जाय हैं। कोई कहै हैं रथकूं दूरकर मार्ग देहु, पीछेसूं हाथी आवै हैं। कोई कहे हैं विमानकूं एकतरफ कर, अर पृथ्वीका पति पड़ा, अनर्थ भया, महा भयंकर कम्पायमान। वह तापर पड़े, वह तापर पड़े। तब सबको शरणरहित देखि भामंडल सुग्रीव हनुमान रामकी आज्ञासे कहते भए—भय मत करो, भय मत करो! धीर्य बंधाया, अर वस्त्र फेरचा, काहूको भय नाहीं। तब अमृत समान कानोंको प्रिय ऐसे वचन सुन सेनाकूं विश्वास उपज्या। यह कथा गौतम गणधर राजा श्रेणिकसूं कहै हैं—हे राजन्! रावण ऐसी महा विभूतिकूं भोगि समुद्र पर्यन्त पृथ्वीका राज्यकरि, पुण्य पूर्ण भए अन्तदशाकूं प्राप्त भया। तातैं ऐसी लक्ष्मीकूं धिक्कार है। यह राजलक्ष्मी महा चंचल, पापका स्वरूप, सुकृतके समागमके आशाकर वर्जित। ऐसा मनविषै विचारकर हो बुद्धिजन हो! तप ही धन जिनके ऐसे मुनि होवो। कैसे हैं मुनि? तपोधन, सूर्यसे अधिक है तेज जिनका, मोह तिमिरकूं हरै हैं।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रन्थ, ताकी भाषावचनिकाविषै रावणकावध वर्णन करनेवाला छिहत्तरवां पर्व पूर्ण भया ॥ ७६ ॥

अथानन्तर विभीषणने बड़े भाईकूं पड़ा देख महा दुःखका भरचा अपने घातके अर्थ छुरी विषै हाथ लगाया। सो याकूं मरणकी हरणहारी मूर्छा आय गई। चेष्टाकर रहित शरीर हो गया। बहुरि सचेत होय महा दाहका भरचा मरनेकूं उद्यमी भया। तब श्रीरामने रथसे उतर हाथ पकड़कर उरसे

लगाया, धीर्य बंधाया। फिर मूर्छा खाय पड्या, अचेत होय गया। श्रीरामने सचेत किया। तब सचेत होय विलाप करता भया। जिसका विलाप सुन करुणा उपजे। हाय भाई, उदार क्रियावन्त सामंतों के पति, महाशूरवीर, रणधीर, शरणागतपालक, महा मनोहर, ऐसी अवस्थाकूं क्यों प्राप्त भए? मैं हित के वचन कहे सो क्यों न माने? यह क्या अवस्था भई जो मैं तुमकूं चक्रके विदारे पृथ्वीविषै पड़े देखूं हूं? हे देव विद्याधरोंके महेश्वर! हे लंकेश्वर! भोगोंके भोक्ता। पृथ्वीविषै कहा पौढ़े? महाभोगोंकर लडाया है शरीर जिनका, यह सेज आपके शयन करने योग्य नाहीं। हे नाथ! उठो, सुन्दर वचनके वक्ता। मैं तुम्हारा बालक, मुझे कृपाके वचन कहो। हे गुणाकर कृपाधार! मैं शोकके समुद्रविषै डूबूं हूं सो मुझे हस्तावलंबन कर क्यों न काढो? इस भांति विभीषण विलाप करै है। डार दिये हैं शस्त्र अर बक्तर भूमिविषै जाने।

अथानन्तर रावणके मरणके समाचार रणवासविषै पहुँचे सो राणियां सब अश्रुपातकी धाराकर पृथ्वी तलको सींचती भई। अर सर्व ही अन्तःपुर शोककर व्याकुल भया। सकल राणी रणभूमिविषै आई, गिरती पडती, गिरती पडती। डिगे हैं चरण जिनके। वे नारी पतिकूं चेतनारहित देख शीघ्रही पृथ्वी विषै पड़ी। कैसा है पति? पृथ्वीकी चूडामणि है। मन्दोदरी, रंभा, चन्द्रानना, चन्द्रमण्डला, प्रवरा, उर्वशी महादेवी, सुन्दरी, कमलानना, रूपिणी, रुक्मिणी, शीला, रत्नमाला, तनूदरी, श्रीकांता, श्रीमती, भद्रा कनकप्रभा, मृगावती, श्रीमाला, मानवी, लक्ष्मी, आनन्दा, अनंगसुन्दरी, वसुन्धरा, तडिन्माला, पद्मा, पद्मावती, सुखादेवी, कांति, प्रीति, संध्यावली, शुभा, प्रभावती, मनोवेगा, रतिकांता, मनोवती इत्यादि
अष्टादशसहस्र राणी अपने अपने परिवारसहित अर सखिनिसहित महा शोककी भरी रुदन करती भईं। कईएक मोहकी भरी मूर्छाकूं प्राप्त भईं सो चन्दनके जलकर छांटी। कुमलाई कमलिनी समान भासती भईं। कईएक पतिके अंगसे अत्यन्त लिपटकर परीं, अंजनगिरिसों लगी संध्याकी द्युतिको धरती भईं। कईएक मूर्छासे सचेत होय उरस्थल कूटती भई, पतिके समीप मानों मेघके निकट विजुरी ही चमकै

हैं। कईएक पतिका वदन अपने अंगविषै लेयकर विह्वल होय मूर्छाकूं प्राप्त भईं। कईएक विलाप करैं हैं–हाय नाथ ! मैं तिहारे विरहसे अतिकायर, मोहि तजकर तुम कहां गए ? तिहारे जन दुःखसागरविषै डूबे हैं सो क्यों न देखो ? तुम महाबली, महासुन्दर, परम ज्योतिके धारक, विभूतिकर इन्द्र समान, मानो भरतक्षेत्रके भूपति, पुरुषोत्तम, महाराजनिके राजा, मनोरम विद्याधरनिके महेश्वर, कौन अर्थ पृथ्वी में पौढ़े, उठो। हे कांत ! करुणानिधे ! स्वजनवत्सल ! एक अमृत समान वचन हमसे कहो। हे प्राणेश्वर ! प्राणवल्लभ ! हम अपराध रहित तुमसे अनुरक्त चित्त हमपर तुम क्यों कोप भए ? हमसे बोलो ही नाहीं। जैसे पहिले परिहास कथा करते तैसे क्यों न करो ? तिहारा मुखरूपी चन्द्र कांतिरूप चांदनी कर मनोहर, प्रसन्नतारूप जैसे पूर्व हमें दिखावते हुते तैसे हमें दिखावो। अर यह तिहारा वक्षस्थल स्त्रियोंकी क्रीड़ाका स्थानक, महासुन्दर, ताविषै चक्रकी धाराने कैसे पग धारा ? अर विद्रुम समान तिहारे ये लाल अधर अब क्रीडारूप उत्तरके देनेको क्यों न स्फुटायमान होय हैं ? अबतक बहुत देर लगाई। क्रोध कबहूं न किया, अब प्रसन्न होवो। हम मान करतीं तो आप प्रसन्न करते, मनावते। इन्द्रजीत मेघवाहन स्वर्गलोकसे चयकर तिहारे उपजे सो यहां भी स्वर्गलोककेसे भोग भोगे। अब दोऊ बन्धनविषै हैं, अर कुम्भकरण बंधनविषै है, सो महा पुण्याधिकारी सुभट महागुणवंत श्रीरामचन्द्र तिनसे प्रीतिकर भाई पुत्रको छुडावहु। हे प्राणवल्लभ ! प्राणनाथ ! उठो, हमसे हित की बात करो। हे देव ! बहुत देर सोवना कहा ? राजानिकूं राजनीतिविषै सावधान रहना, सो आप राज्य काजविषै प्रवर्तो। हे सुन्दर ! हे प्राणप्रिय ! हमारे अंग विरहरूप अग्निकर अत्यन्त जरे हैं सो स्नेहरूप जलकर बुझावो। हे स्नेहियोंके प्यारे ! तिहारा यह वदनकमल और ही अवस्थाकूं प्राप्त भया है। सो याहि देख हमारे हृदयके टूक क्यों न हो जावैं ? यह हमारा पापी हृदय वज्रका है, दुःखका भाजन जो तिहारी यह अवस्था जानकर विनस न जाय है। यह हृदय महा निर्दई है। हाय विधाता ! हम तेरा कहा बुरा किया जो तैनें निर्दई होयकर हमारे सिरपर ऐसा दुःख डारचा। हे

प्रीतम ! जब हम मान करतीं तब तुम उरसे लगाय हमारा मान दूर करते, अर वचनरूप अमृत हमको प्यावते, महा प्रेम जनावते। हमारा प्रेमरूप कोप ताके दूर करवेके अर्थ हमारे पायन पड़ते। सो हमारा हृदय वशीभूत होय जाता, अत्यन्त मनोहर क्रीड़ा करते,हे राजेश्वर! हमसे प्रीति करो। परम आनंद की करणहारी वे क्रीडा हमको याद आवैं हैं। सो हमारा हृदय अत्यन्त दाहको प्राप्त होय है। तातैं अब उठो, हम तिहारे पायनि पड़े हैं, नमस्कार करैं हैं। जे अपने प्रियजन होय तिनसे बहुत कोप न करिए। प्रीतिविषै कोप न सोहै। हे श्रेणि! या भांति रावणकी राणी ये विलाप करती भईं जिनका विलाप सुनकर कौनका हृदय द्रवीभूत न होय ?

अथानन्तर श्रीराम लक्ष्मण भामंडल सुग्रीवादिक सहित अति स्नेहके भरे विभीषणकूं उरसे लगाय आसूं डारते। महाकरुणावंत, धीर्य बंधावनेविषै प्रवीण, ऐसे वचन कहते भए–लोक वृत्तांतसे सहित हे राजन् ! बहुत रोयवे कर कहा ? अब विषाद तजहु। यह कर्मकी चेष्टा तुम कहा प्रत्यक्ष नाहीं जानो हो ? पूर्वकर्मके प्रभावकरि प्रमोदकूं धरते जे प्राणी तिनके अवश्य कष्टकी प्राप्ति होय है। ताका शोक कहा ? अर तुम्हारा भाई सदा जगतके हितविषै सावधान, परम प्रीतिका भाजन, समाधानरूप बुद्धि जिसकी, राजकार्यविषै प्रवीण, प्रजाका पालक, सर्वशास्त्रनिके अर्थकर धोया है चित्त जाने, सो बलवान मोहकर दारुण अवस्थाकूं प्राप्त भया अर विनाशकूं प्राप्त भया। जब जीवनिका विनाशकाल आवै तब बुद्धि अज्ञानरूप होय जाय है। ऐसे शुभ वचन श्रीरामने कहे। बहुरि भामंडल अति माधुर्यताकूं धरे वचन कहते भए। हे विभीषण महाराज! तिहारा भाई रावण महा उदारचित्तकर रणविषै युद्ध करता सन्ता वीर मरणकर परलोककूं प्राप्त भया। जाका नाम न गया ताका कछुही न गया। ते धन्य हैं जिन सुभटता कर प्राण तजे। ते महा पराक्रमके धारक वीर तिनका कहा शोक ? एक राजा अरिंदमकी कथा सुनो।

अक्षयकुमार नामा नगर, तहां राजा अरिंदम, जाके महाविभूति। सो एक दिन काहू तरफसे अपने

मन्दिर शीघ्र गामी घोड़े चढा अकस्मात् आया। सो राणीकूं शृंगाररूप देख अर महलकी अत्यन्त शोभा देखि राणीकूं पूछ्या—तुम हमारा आगम कैसे जाण्या ? तब राणीने कही कीर्तिधरनामा मुनि अवधिज्ञानी आज आहारको आए थे। तिनको मैंने पूछ्या राजा कब आवैंगे ? सो तिन्होंने कह्या राजा आज अचानक आवैंगे। यह बात सुन राजा मुनिपै गया अर ईर्ष्याकर पूछता भया—हे मुनि ! तुमकूं ज्ञान है तो कहो मेरे चित्तमें क्या है। तब मुनिने कहा तेरे चित्तमें यह है कि मैं कब मरूंगा ? सो तू आज से सातवें दिन वज्रपातसे मरेगा, अर विष्टामें कीट होगया। यह मुनिके वचन सुन राजा अरिंदम घर जाय अपने पुत्र प्रीतिंकरको कहता भया—मैं मरकर विष्टाके घरमें स्थूल कीट होऊंगा. ऐसा मेरा रंगरूप होयगा, सो तू तत्काल मार डारियो। ये वचन पुत्रकूं कह आप सातवें दिन मरकर विष्टामें कीडा भया। सो प्रीतिंकर कीटके हनिवेकूं गया सो कीट मरनेके भयकरि विष्टामें पैठि गया। तब प्रीतिंकर मुनिपै जाय पूछता भया, हे प्रभो ! मेरे पिताने कही थी जो मैं मलमें कीट होऊंगा सो तू हनियो। अब वह कीट मरवेसूं डरे है, अर भागै है। तब मुनिने कही तू विषाद मत कर, यह जीव जिस गतिमें जाय है वहां ही रम रहे हैं। इसलिए तू आत्मकल्याण कर, जाकरि पापोंसे छूटे। अर यह जीव सब ही अपने अपने कर्मका फल भोगवै हैं, कोई काहूका नाहीं। यह संसारका स्वरूप महा दुखका कारण जान प्रीतिंकर मुनि भया, सर्व बांछा तजी। तातैं हे विभीषण ! यह नानाप्रकार जगत् की अवस्था तुम कहा न जानो हो ? तिहारा भाई महा शूरवीर, दैवयोगसे नारायणने हता। संग्रामके सम्मुख महा प्रधान पुरुष ताका सोच क्या ? तुम अपना चित्त कल्याणमें लगावो। यह शोक दुखका कारण ताको तजहु। यह वचन अर प्रीतिंकरकी कथा भामंडलके मुखसे विभीषणने सुनी। कैसी है प्रीतिंकर मुनिकी कथा ? प्रतिबोध देनेमें प्रवीण, अर नाना स्वभावकर संयुक्त, अर उत्तम पुरुषोंकर कहिवे योग्य। सो सर्व विद्याधरनिने प्रशंसा करी,सुनकर विभीषणरूप सूर्य शोकरूप मेघ पटलसे रहित

भया, लोकोत्तर आचारका जाननेवाला ।

इति श्रीरविषेणाचार्य विरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रंथ ताकी भाषावचनिकाविषैं विभीषणका शोकनिवारण वर्णन करनेवाला सततरवां पर्व पूर्ण भया ॥ ७७ ॥

अथानन्तर श्रीरामचन्द्र भामण्डल, सुग्रीवादि सबनिसूं कहते भए—जो पंडितोंके वैर वैरीके मरण पर्यन्त ही है। अब लंकेश्वर परलोककूं प्राप्त भए, सो यह महा नर हुते, इनका उत्तम शरीर अग्नि-संस्कार करिए। तब सबनि प्रणाम करी। अर विभीषणसहित राम लक्ष्मण जहां मन्दोदरी आदि अठारह हजार राणीनि सहित जैसे कुरचि पुकारे तैसे विलाप करती हुती, सो वाहनसे उतर समस्त विद्याधरनि सहित दोऊ वीर तहां गए। सो वे राम लक्ष्मणकूं देखि अति विलाप करती भई, तोड़ डारे हैं सर्व आभूषण जिन्होंने, अर धूलकर धूसरा है अंग जिनका। तब श्रीराम महादयावन्त नानाप्रकार के शुभ वचननिकर सर्व राणीनिकों दिलासा करी, धीर्य बन्धाया। अर आप सब विद्याधरनिकूं लेकर रावणके लोकाचारकूं गए। कपूर अगर मलियागिरि चन्दन इत्यादि नानाप्रकारके सुगन्ध द्रव्यनिकर पद्मसरोवरपर प्रतिहरिका दाह भया। बहुरि सरोवरके तीर श्रीराम तिष्ठे, कैसे हैं राम? महा कृपालु है चित्त जिनका। गृहस्थाश्रमविषैं ऐसे परिणाम कोई विरलेके होय हैं। बहुरि आज्ञा करी कुम्भकर्ण इन्द्रजीत मेघनादकूं सब सामंतनिसहित छोडहु। तब कईएक विद्याधर कहते भए—वे महाक्रूरचित्त हैं, अर शत्रु हैं, छोडबे योग्य नाहीं, बन्धनहीविषैं मरें। तब श्रीराम कहते भए—यह क्षत्रियनिका धर्म नाहीं। जिनशासनविषैं क्षत्रीनिकी कथा कहा तुमने नाहीं सुनी है? सूतेको, बंधेको, डरतेको, शरणागतकूं, दंतविषै तृण लेतेको, भागेको, बाल, वृद्ध, स्त्रीनिकूं न हनें। यह क्षत्रीका धर्म शास्त्रनिमें प्रसिद्ध है। तब सबनि कही आप जो आज्ञा करी सो प्रमाण। रामकी आज्ञा प्रमाण लड़े बड़े योधा नानाप्रकारके आयुधनिकूं धरे तिनके ल्यायवेकूं गए। कुम्भकर्ण, इन्द्रजीत, मेघनाद, मारीच तथा मन्दोदरीका पिता

राजा मय इत्यादि पुरुषनिको स्थूल बन्धनसहित सावधान योधा लिए आवे हैं। सो माते हाथी समान चले आवे हैं। तिनकूं देख वानरवंशी योधा परस्पर बात करते भए—जो कदाचित् इन्द्रजीत, मेघनाद, कुम्भकर्ण, रावणकी चिता जरती देख क्रोध करे तो कपिवंशिनिमें इनके सन्मुख लड़नेकूं कोई समर्थ नाहीं। जो कपिवंशी जहां बैठा था तहांसे उठ न सका। अर भामंडलने अपने सब योधानिकूं कहा जो इन्द्रजीत, मेघनादकूं यहां तक बंधेही अति यत्नसे लाइयो। अबार विभीषणका भी विश्वास नाहीं है जो कदाचित् भाई भतीजेनिको निर्धन देख भाईके बैर चितारे, सो याकूं विकार उपजि आवे, भाईके दुख कर बहुत तप्तायमान है। यह विचार भामंडलादिक तिनकूं अति यत्नकर राम लक्ष्मणके निकट लाये। सो वे महाविरक्त, राग द्वेषरहित, जिनके मुनि होयवेके भाव, महा सौम्य दृष्टिकर भूमि निरखते आवैं, शुभ है आनन जिनके। वे महा धीर यह विचारे हैं कि या असार संसार सागरविषै कोई सार ताका लवलेश नाहीं। एक धर्मही सब जीवनका बांधव है, सोई सार है। ये मनमें विचारें हैं जो आज बंधनसूं छूटें तो दिगम्बर होय पाणिपात्र आहार करें। यह प्रतिज्ञा धरते रामके समीप आए। इन्द्रजीत, कुम्भकर्णादिक, विभीषणकी ओर आय तिष्ठे। यथायोग्य परस्पर संभाषण भया। बहुरि कुम्भकर्णादिक श्रीराम लक्ष्मणसूं कहते भए—अहो तिहारा परम धीर्य, परमगम्भीरता, अद्भुत चेष्टा, देवनिहू कर न जीता जाय ऐसा राक्षसनिका इन्द्र रावण, मृत्युकूं प्राप्त किया। पंडितनिके अति श्रेष्ठ गुणनिका धारक शत्रुहू प्रशंसा योग्य है। तब श्रीराम लक्ष्मण इनकूं बहुत साता उपजा अति मनोहर वचन कहते भए—तुम पहिले महा भोगरूप जैसे तिष्ठे तैसे तिष्ठो। तब वह महाविरक्त कहते भए—अब इन भोगनिसूं हमारे कछु प्रयोजन नाहीं। यह विषसमान महादारुण, महामोहके, कारण महाभयंकर, महा नरक निगोदादि दुखदाई जिनकरि कबहू जीवके साता नाहीं। विचक्षण हैं ते भोगसम्बन्धकूं कबहूं न बांछे। राम लक्ष्मणने घना ही कहा तथापि तिनका चित्त भोगासक्त न भया। जैसे रात्रिविषैं दृष्टि अन्धकार रूप होय अर सूर्यके प्रकाश कर वही दृष्टि प्रकाश रूप होय जाय तैसे ही कुम्भकर्णा-

दिककी दृष्टि पहिले भोगासक्त हुती सो ज्ञानके प्रकाशकर भोगनितैं विरक्त भई। श्रीरामने तिनके बंधन छुडाए, अर इन सबनिसहित पद्म सरोवरविषै स्नान किया। कैसा है सरोवर? सुगन्ध है जल जाका। ता सरोवर विषै स्नानकर कपि अर राक्षस सब अपने स्थानक गए।

अथानन्तर कईएक सरोवरके तीर बैठे विस्मयकर व्याप्त है चित्त जिनका, शूरवीरोंकी कथा करते भए। कईएक क्रूर कर्मको उलाहना देते भए। कईएक हथियार डारते भए। कईएक रावणके गुणों-कर पूर्ण है चित्त जिनका सो पुकारकर रुदन करते भए। कईएक कर्मनिकी विचित्रगतिका वर्णन करते भए। अर कईएक संसारवनकूं निंदते भए। कैसा है संसारवन? जाथकी निकसना अतिकठिन है। कईएक मार्गविषै अरुचिको प्राप्त भए राज्यलक्ष्मीकूं महाचंचल निरर्थक जानते भए। अर कई एक उत्तम बुद्धि अकार्यकी निंदा करते भए। कईएक रावणकी गर्वकी भरी कथा करते भए, श्री रामके गुण गावते भए। कईएक लक्ष्मणकी शक्तिका गुण वर्णन करते भए। कईएक सुकृतके फल की प्रशंसा करते भए, निर्मल है चित्त जिनका। घर घर मृतकोंकी क्रिया होती भई। बाल वृद्ध सब के मुख यही कथा। लंकाविषै सर्व लोक रावणके शोककरि अश्रुपात डारते चातुर्मास्य करते भए, शोककर द्रवीभूत भया है हृदय जिनका। सकल लोकनिके नेत्रनिसूं जलके प्रवाह बहे सो पृथ्वी जल रूप होयगई। अर तत्वोंकी गौणता दृष्टि पड़ी मानों नेत्रोंके जलके भयकर आताप घुसकर लोकोंके हृदय विषै पैठा। सर्व लोकोंके मुखसे यह शब्द निकसें धिक्कार धिक्कार! अहो बड़ा कष्ट भया, हाय हाय यह क्या अद्भुत भया! या भांति लोक विलाप करैं हैं, आंसू डारैं हैं। कईएक भूमि विषै शय्या करते भए, मौन धार मुख नीचा करते भये, निश्चल है शरीर जिनका मानों काष्ठके हैं। कईएक शस्त्रोंकूं तोड़ डारते भये। कईएकोंने आभूषण डार दिए, अर स्त्रीके मुखकमलसे दृष्टि संकोची। कईएक अति दीर्घ उष्ण निस्वास नाखे हैं सो कलुष होय गए अधर जिनके, मानों दुखके अंकुर हैं। अर कईएक संसारके भोगनिसे विरक्त होय मनविषै जिनदीक्षाका उद्यम करते भए।

अथानन्तर पिछले पहिर महासंघ सहित अनन्तवीर्य नामा मुनि लंकाके कुसुमायुध नामा वनविषै छप्पनहजार मुनिसहित आए। जैसैं तारनिकर मंडित चन्द्रमा सोहै तैसैं मुनिकर मंडित सोहते भये। जो ये मुनि रावणके जीवतें आते तो रावण मारा न जाता, लक्ष्मणके अर रावणके विशेष प्रीति होती। जहां ऋद्धिधारी मुनि तिष्ठे तहां सर्व मंगल होवैं। अर केवली विराजै वहां चारों ही दिशाओं में दोयसौ योजन पृथ्वी स्वर्ग तुल्य निरुपद्रव होय, अर जीवनके वैरभाव मिट जावैं। जैसैं आकाशविषैं अमूर्तत्व अवकाश प्रदानता, निर्लेपता; अर पवनविषैं सुवीर्यता, निसंगता, अग्निविषै उष्णता; जलविषैं निर्मलता; पृथ्वीविषैं सहनशीलता; तैसें स्वतः स्वभाव महामुनिके लोकक्ं आनन्द दायक होय है। अनेक अद्भुत गुणोंके धारक महामुनि तिनसहित स्वामी विराजे। गौतम स्वामी कहै हैं, हे श्रेणिक! तिनकैं गुण कौन वर्णन कर सकै? जैसैं स्वर्णका कुम्भ अमृतका भरया अति सोहै तैसैं महामुनि अनेक ऋद्धि के भरे सोहते भए। निर्जन्तु स्थानक वहां एक शिला, ताऊपर शुक्ल ध्यान धर तिष्ठे। सो ताही रात्रि विषैं केवलज्ञान उपज्या। जिनके परम अद्भुत गुण वर्णन किए पापनिका नाश होय। तब भवनवासी असुरकुमार, नागकुमार, गरुड़कुमार, विद्युतकुमार, अग्निकुमार, पवनकुमार, मेघकुमार, दिक्कुमार, दीपकुमार, उदधिकुमार, ये दशप्रकार तथा अष्ट प्रकार व्यंतर, किन्नर, किंपुरुष, महोरग, गंधर्व, यक्ष, राक्षस, भूत, पिशाच तथा पंच प्रकार ज्योतिषी चन्द्र सूर्य ग्रह तारा नक्षत्र, अर सोलह स्वर्गके सर्व ही स्वर्गवासी, ये चतुरनिकायके देव, सौधर्म, इन्द्रादिक सहित धातुकीखंडद्वीपकैंविषैं श्रीतीर्थंकर देवका जन्म भया हुता सो सुमेरु पर्वतविषैं क्षीरसागरके जलकरि स्नान कराए। जन्मकल्याणकका उत्सवकर प्रभुकूं माता पिताकूं सौंपि तहां उत्सवरहित तांडव नृत्यकर प्रभुकी बारबार स्तुति करते भए। कैसे हैं प्रभु? बाल अवस्थाकूं धरैं हैं, परन्तु बाल अवस्थाकी अज्ञान चेष्टासूं रहित हैं। तहां जन्मकल्याणक का समय साध कर सब देव लंकाविषैं अनन्तवीर्य केवलीके दर्शनकूं आए। कईएक विमान चढ़े आए, कईएक राजहंसनिपर चढ़े आए। अर कईएक अश्व सिंह व्याघ्रादिक अनेक वाहननिपर चढ़े आए,

ढोल, मृदंग, नगारे, बीण, बांसुरी, झांझ, मंजीरे, शंख इत्यादि नानाप्रकारके वादित्र बजावते, मनोहर गान करते, आकाशमंडलकूं आच्छादते, केवलीके निकट महाभक्तिरूप अर्ध रात्रिके समय आए। तिनके विमाननिकी ज्योतिकर प्रकाश होय गया, अर वादित्रनिके शब्दकर दशों दिशा व्याप्त होय गईं। राम लक्ष्मण यह वृत्तांत जान हर्षकूं प्राप्त भए। समस्त वानरवंशी अर राक्षसवंशी विद्याधर इन्द्रजीत कुम्भकर्ण मेघनाद आदि सब राम लक्ष्मणके संग केवलीके दर्शनके लिए जायवेकूं उद्यमी भए। श्रीराम लक्ष्मण हाथी चढ़े, अर कईएक राजा रथपर चढ़े, कईएक तुरंगनिपर चढ़े, छत्र चमर ध्वजाकरि शोभायमान, महा भक्तिकर संयुक्त, देवनि सारिखे महा सुगन्ध हैं शरीर जिनके, अति उदार, अपने वाहननितैं उतर महाभक्तिकर प्रणाम करते, स्तोत्र पाठ पढते केवलीके निकट आए। अष्टांग दण्डवतकर भूमिविषै तिष्ठे, धर्म श्रवणकी है अभिलाषा जिनके, केवलीके मुखतैं धर्म श्रवण करते भए।

दिव्यध्वनिमें यह व्याख्यान भया जो ये प्राणी अष्टकर्मसे बंधे महा दुखके कर्मपर चढ़े चतुर्गतिविषै भ्रमण करै हैं। आर्त्त रौद्र ध्यानकर युक्त, नाना प्रकारके शुभाशुभ कर्मनिकूं करै हैं। महा मोहिनीकर्मने ये जीव बुद्धिरहित किये तातैं सदा हिंसा करै हैं। असत्य वचन कहै हैं, पराए मर्म भेदका वचन कहै हैं, परनिंदा करै हैं, पर द्रव्य हरै हैं, परस्त्रीका सेवन करै हैं, प्रमाणरहित परिग्रहकूं अंगीकार करै हैं, बढ्या है महा लोभ जिनके। वे कैसे हैं? महा निंद्यकर्म कर शरीर तज, अधोलोकविषै जाय हैं। तहां महा दुखके कारण सप्त नरक तिनके नाम—रत्नप्रभा, शर्करा, बालुका, पंकप्रभा, धूमप्रभा, तम, महातम। सदा महा दुःखके कारण सप्त नरक अंधकारकर युक्त, दुर्गंध सूंघा न जाय, देख्या न जाय, स्पर्शा न जाय, महा भयंकर, महा विकराल है भूमि जिनकी, सदा दुर्वचन त्रास, नाना प्रकारके छेदन भेदन तिनकर सदा पीडित। नारकी खोटे कर्मनितैं पापबन्धकर बहुत काल सागरनि पर्यंत महा तीव्र दुःख भोगवै हैं। ऐसा जानि पंडित विवेकी पापबंधतैं रहित होय धर्मविषै चित्त धरहु। कैसे हैं विवेकी? व्रत नियमके धरणहारे, निःकपट स्वभाव, अनेक गुणनिकर मंडित वे नानाप्रकारके

तपकर स्वर्गलोककूं प्राप्त होय हैं। बहुरि मनुष्यदेह पाय मोक्ष प्राप्त होय हैं। अर जे धर्मकी अभिलाषासे रहित हैं ते कल्याणके मार्गतैं रहित बारम्बार जन्म मरण करते महादुखी संसारविषै भ्रमण करै हैं। जे भव्यजीव सर्वज्ञ वीतरागके वचनकर धर्मविषै तिष्ठै हैं ते मोक्षमार्गी, शील सत्य शौच सम्यग्दर्शन ज्ञान चारित्रकर जबलग अष्टकर्मका नाश न करै, तबलग इन्द्र अहमिंद्र पदके उत्तम सुख को भोगवे हैं। नानाप्रकारके अद्भुत सुख भोग, वहांसे चयकर महाराजाधिराज होय, बहुरि ज्ञान पाय, जिनमुद्रा धर, महा तपकर, केवलज्ञान उपाय, अष्टकर्म रहित सिद्ध होय हैं। अनन्त अविनाशी आत्मिक स्वभावमयी परम आनन्द भोगवे हैं।

यह व्याख्यान सुन इन्द्रजीत, मेघनाद अपने पूर्वभव पूछते भये। सो केवली कहै हैं—एक कौशांबी नामा नगरी, तहां दो भाई दलिद्री, एकका नाम प्रथम, दूजेका नाम पश्चिम। एक दिन विहार करते भवदत्तनामा मुनि वहां आए। सो ये दोनों भाई धर्म श्रवणकर ग्यारमी प्रतिमाके धारक क्षुल्लक श्रावक भए। सो मुनिके दर्शनकूं कौशांबी नगरीका इन्द्र नामा राजा आया। सो मुनि महाज्ञानी राजाकूं देख जान्या याके मिथ्यादर्शन दुर्निवार है। अर ताही समय नन्दीनामा श्रेष्ठी महाजिनभक्त मुनिके दर्शनकूं आया। ताका राजाने आदर किया। ताकूं देख प्रथम अर पश्चिम दोऊ भाईनिमें से छोटे भाई पश्चिमने निदान किया जो मैं या धर्मके प्रसादकरि नन्दी सेठके पुत्र होऊं। सो बड़े भाई ने अर गुरुने बहुत संबोध्या जो जिनशासनविषै निदान महानिंद्य है। सो यह न समझा। कुबुद्धि निदान कर दुखित भया। मरण कर नन्दीके इन्दुमुखी नामा स्त्री ताके गर्भविषै आया। सो गर्भविषै आवते ही बड़े बड़े राजानिके स्थानकनिविषै कोटका निपात, दरवाजेनिका निपात इत्यादि नानाप्रकारके चिह्न होते भए। तब बड़े बड़े राजा याकूं नानाप्रकारके निमित्त कर महानर जान जन्महीसे अति आदर संयुक्त दूत भेज भेज कर द्रव्य पठाय सेवते भए। यह बड़ा भया। याका नाम रतिवर्धन, सो सब राजा याकूं सेवैं। कौशांबी नगरीका राजा इन्दु भी सेवा करै। नित्य आय प्रणाम करै। या भांति यह रति- ६८४

वर्धन महाविभूति कर संयुक्त भया। अर बड़ा भाई प्रथम मरकर स्वर्गलोक गया, सो छोटे भाईके जीवकूं संबोधवेके अर्थ क्षुल्लकका स्वरूप धर आया। सो यह मदोन्मत्त राजा मदकर अंधा होय रह्या। सो क्षुल्लककूं दुष्ट लोकनिकर द्वारविषै पैठने न दिया। तब देवने क्षुल्लकका रूप दूरकर रतिवर्धनका रूप किया। तत्काल ताका नगर उजाड़ उद्यान कर दिया, अर कहता भया अब तेरी कहा वार्ता? तब वह पांयनि परि स्तुति करता भया तब ताकूं सकल वृत्तांत कह्या जो आपां दोऊ भाई हुते। मैं बड़ा, तू छोटा। सो क्षुल्लकके व्रत धारे सो तैं नन्दीसेठकूं देख निदान किया सो मरि नन्दीके घर उपज्या, राजविभूति पाई। अर मैं स्वर्गविषै देव भया। यह सब वार्ता सुनि रतिवर्धनकूं सम्यक्त्व उपजा, मुनि भया, अर नन्दीकूं आदि दे अनेक राजा रतिवर्धनके संग मुनि भए। रतिवर्धन, तपकरि जहां भाईका जीव देव हुता तहां ही देव भया। बहुरि दोऊ भाई स्वर्गतैं चयकर राजकुमार भए। एकका नाम उर्व, दूजेका नाम उर्वस, राजा नरेन्द्र राणी विजयाके पुत्र। बहुरि जिनधर्मका आराधनकरि स्वर्गविषै देव भए। वहांतै चयकरि तुम दोऊ भाई रावणके राणी मंदोदरी ताके इन्द्रजीत मेघनाद पुत्र भए। अर नन्दीसेठकै इन्द्रमुखी रतिवर्धनकी माता सो जन्मांतरविषै मंदोदरी भई। पूर्व जन्मविषै स्नेह हुता सो अब हू माताका पुत्रसे अतिस्नेह भया। कैसी है मंदोदरी? जिनधर्मविषै आसक्त है चित्त जाका यह अपने पूर्व भव सुन दोऊ भाई संसारकी मायातैं विरक्त भए। उपजा है महावैराग्य जिनकूं, जैनेश्वरी दीक्षा आदरी। अर कुम्भकरण, मारीच, राजा मय और हू बड़े बड़े राजा संसारतैं महाविरक्त होय मुनि भए, तजे हैं विषय कषाय जिन्होंने। विद्याधर राजकी विभूति तृणवत् तजी। महा योगीश्वर होय अनेक ऋद्धिके धारक भए, पृथ्वीविषै विहार करते भव्यनिकूं प्रतिबोधते भए।

श्रीमुनिसुव्रतनाथके मुक्ति गए पीछे तिनके तीर्थविषै यह बड़े बड़े महापुरुष भए, परम तपके धारक अनेक ऋद्धिसयुक्त, ते भव्यजीवनिकूं बारम्बार वंदिवेयोग्य हैं। अर मंदोदरी पति अर पुत्र दोऊनिके विरहकरि अतिव्याकुल भई महा शोककर मूर्छाकूं प्राप्त भई। बहुरि सचेत होय कुरचिकी न्याईं

बिलाप करती भई। दुखरूप समुद्रविषै मग्न होय, हाय पुत्र, इन्द्रजीत मेघनाद! यह कहा उद्यम किया, मैं तिहारी माता अतिदीन ताहि क्यों तजी? यह तुमको कहा योग्य जो दुखकरि तप्तायमान माता ताका समाधान किए बगैर चले गये। हाय पुत्र हो! तुम कैसैं मुनिव्रत धारोगे? तुम देवनि-सारिखे महा भोगी, शरीरकूं लड़ावनहारे, कठोर भूमिपर कैसैं शयन करोगे? समस्त विभव तजा, समस्त विद्या तजी, केवल अध्यात्मविद्याविषैं तत्पर भए। अर राजा मय मुनि भया—ताका शोक करै है—हाय पिता! यह कहा किया? जगत् तजि मुनिव्रत धारचा। तुम मोतैं तत्काल ऐसा स्नेह क्यों तज्या? मैं तिहारी बालिका, मोतैं दया क्यों न करी? बाल्यावस्थाविषै मोपर तिहारी अतिकृपा हुती, मैं पिता अर पुत्र अर पति सबसे रहित भई, स्त्रीके यही रक्षक हैं। अब मैं कौनके शरण जाऊं? मैं पुण्यहीन महा दुखकूं प्राप्त भई। या भांति मंदोदरी रुदन करै। ताका रुदन सुन सबहीकूं दया उपजै। अश्रुपातकरि चातुर्मास कीया। ताहि शशिकांता आर्यिका उत्तम वचनकरि उपदेश देती भई—हे मूर्खणी! कहा रोवै? या संसारचक्रविषैं जीवनिने अनन्त भव धारे। तिनमें नारकी अर देवनिके तो संतान नाहीं। अर मनुष्य अर तिर्यंचनिके हैं, सो तैं चतुरगति भ्रमण करते मनुष्य तिर्यंचनिके भी अनन्त जन्म धारे। तिनविषै तेरे अनेक पिता पुत्र बांधव भए। तिनकूं जन्म जन्ममें रुदन किया। अब कहा विलाप करै है? निश्चलता भज। यह संसार असार है, एक जिनधर्म ही सार है। तू जिन-धर्मका आराधन कर, दुखसे निवृत्त होहु। ऐसे प्रतिबोधके कारण आर्यिकाके मनोहर वचन सुन मंदो-दरी महा विरक्त भई। उत्तम हैं गुण जाविषैं, समस्त परिग्रह तजकरि, एक शुक्ल वस्त्र धारि आर्यिका भई। कैसी है मंदोदरी? मनवचनकायकरि निर्मल जो जिनशासन, ताविषैं अनुरागिणी है। अर चंद्र-नखा रावणकी बहिन हू याही आर्यिकाके निकट दीक्षा धरि आर्यिका भई। जा दिन मन्दोदरी आर्यिका भई ता दिन अड़तालीस हजार आर्यिका भईं।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रंथ, ताकी भाषावचनिकाविषैं इन्द्रजीत मेघनाद कुम्भकर्णका वैराग्य अर मंदोदरी आदि रानीनिका वैराग्य वर्णन करने वाला अठत्तरवां पर्व पूर्ण भया ॥७८॥

पद्म
पुराण
६८७

अथानन्तर गौतमस्वामी राजा श्रेणिकसूं कहै हैं—हे राजन्! अब श्रीराम लक्ष्मणका महाविभूतिसों लंकाविषै प्रवेश भया सो सुन। महा विमाननिके समूह, अर हाथीनिकी घटा, अर श्रेष्ठ तुरंगनिके समूह, अर मंदिर समान रथ, अर विद्याधरनिके समूह, अर हजारां देव तिनकरि युक्त दोऊ भाई महाज्योति कूं धरे लंकामें प्रवेश करते भए। तिनकूं लोक देखि अति हर्षित भए, जन्मान्तरके धर्मके फल प्रत्यक्ष देखते भए। राजमार्गकेविषै जाते श्रीराम लक्ष्मण तिनकूं देख नगरके नर अर नारिनिको अपूर्व आनन्द भया। फूलि रहे हैं मुख जिनके, स्त्री झरोखानिविषै बैठी जालीनिमें होय देखै हैं। कमल समान हैं मुख जिनके, महा कौतुककरि युक्त परस्पर वार्ता करै हैं—हे सखी! देखहु! यह राम राजा दशरथका पुत्र, गुणरूप रत्ननिकी राशि, पूर्णमासीके चन्द्रमा समान है वदन जाका, कमल समान हैं नेत्र जाके, अद्भुत पुण्यकर यह पद पाया है, अतिप्रशंसा योग्य है आकार जाका। धन्य हैं वह कन्या जिन्होंने ऐसे वर पाए। जानैं यह वर पाए तानैं कीर्तिका थम्भ लोकविषै थाप्या। जानैं जन्मांतरविषै धर्म आचरचा होय सो ऐसा नाथ पावैं। ता समान अन्य नारी कौन? राजा जनककी पुत्री महा कल्याणरूपिणी जन्मांतरविषै महापुण्य उपार्जे हैं,तातैं ऐसे पति याहि मिले। जैसें शची इन्द्रके तैसे सीता रामके। अर यह लक्ष्मण वासुदेव चक्रपाणि शोभै है, जाने असुरेन्द्रसमान रावण रणविषै हता, नील-कमलसमान कांति जाकी। अर गौर कांतिकर संयुक्त जो बलदेव श्रीरामचन्द्र तिनसहित ऐसे सोहै जैसें प्रयागविषै गंगा यमुनाके प्रवाहका मिलाप सोहै। अर यह राजा चन्द्रोदयका पुत्र विराधित है जानैं लक्ष्मणसूं प्रथम मिलापकर विस्तीर्ण विभूति पाई। अर यह राजा सुग्रीव किहकंधापुरका धनी, महा पराक्रमी जानैं श्रीरामदेवसूं परम प्रीति जनाई। अर यह सीताका भाई भामंडल, राजा जनकका पुत्र चंद्र-गति विद्याधरनैं पाल्या सो विद्याधरनिका इन्द्र है। अर यह अंगदकुमार राजा सुग्रीवका पुत्र जो रावणकूं बहुरूपिणी विद्या साधते विघ्नकूं उद्यमी भया। अर हे सखी! यह हनुमान महासुन्दर उतंग हाथनिके रथ चढ्या पवनकरि हाले है वानरके चिह्नकी ध्वजा जाके, ताहि देखि रणभूमिविषै शत्रु पलाय जांय।

सो राजा पवनका पुत्र अंजनीके उदरविषै उपज्या, जानैं लंकाके कोट दरवाजे ढाहे। ऐसी वार्ता परस्पर स्त्रीजन करैं हैं। तिनके वचनरूप पुष्पनिकी मालानिकरि पूजित जो राम सो राजमार्ग होय आगे आए। एक चमर ढारती जो स्त्री ताहि पूछ्या—हमारे विरहके दुःखकरि तप्तायमान जो भामंडलकी बहिन सो कहां तिष्ठै है? तब वह रत्ननिके चूड़ाकी ज्योति करि प्रकाशरूप है भुजा जाकी सो आंगुरी की समस्याकरि स्थानक दिखावती भई। हे देव! यह पुष्पप्रकीर्णनामा गिरि नीझरनानिके जलकरि मानों हास्यही करै है, तहां नन्दनवन समान महा मनोहर वन, ताविषै राजा जनककी पुत्री कीर्ति शील है परिवार जाके, सो तिष्ठै है।

या भांति रामजीसे चमर ढारती स्त्री कहती भई। अर सीताके समीप जो उर्मिका नाम सखी सब सखिनिविषै प्रीतिकी भजनहारी सो अंगुरी पसार सीताकूं कहती भई—हे देवि! चन्द्रमा समान है छत्र जाका, अर चांद सूर्य समान हैं कुण्डल जाके, अर शरदके नीझरने समान है हार जाकैं, सो पुरुषोत्तम श्रीरामचन्द्र तिहारे बल्लभ आए। तिहारे वियोगकरि मुखविषै अत्यन्त खेदकूं धरैं, हे कमलनेत्रे! जैसे दिग्गज आवै तैसैं आवैं हैं। यह वार्ता सुनि सीताने प्रथम तो स्वप्न समान वृत्तांत जाण्या। बहुरि आप अति आनन्दको धरैं, जैसैं मेघपटलसे चन्द्र निकसै तैसैं हाथीतैं उतरि आए, जैसैं रोहिणीके निकट चन्द्रमा आवै तैसैं आए। तब सीता नाथकूं निकट आया जान अति हर्षकी भरी उठकरि सन्मुख आई। कैसी है सीता? धूरकरि धूसर है अंग, अर केश बिखर रहे हैं, श्याम परि गए हैं होंठ जाके, स्वभाव ही करि कृश हुती अर पतिके वियोगकरि अत्यन्त कृश भई। अब पतिके दर्शनकरि उपज्या है अति हर्ष जाकूं प्राणकी आश बंधी, मानों स्नेहकी भरी शरीरकी कांतिकरि पतिसूं मिलाप ही करै है। अर मानों नेत्रनिकी ज्योतिरूप जलकरि पतिकूं स्नान ही करावै है। अर क्षणमात्रविषै बढ गई है शरीरकी लावण्यतारूप सम्पदा, अर हर्षके भरे जे निश्वास तिनकरि मानों अनुरागका बीज बोवै है। कैसी है सीता? रामके नेत्रनिकूं विश्रामकी भूमि, अर पल्लव समान जे हस्त तिनकरि जीते हैं लक्ष्मी

के करकमल जानै, सौभाग्यरूप रत्ननिकी खान, सम्पूर्ण चन्द्रमा समान है वदन जाका, चन्द्र कलंकी यह निःकलंक, विजुरी समान है कांति जाकी, वह चंचल यह निश्चल, प्रफुल्लित कमल समान है नेत्र जाके, मुखरूप चन्द्रकी चंद्रिकाकरि अति शोभाकूं प्राप्त भई है। यह अद्भुत वार्ता है कि कमल तो चन्द्रकी ज्योतिकरि मुद्रित होय है अर याके नेत्रकमल मुखचन्द्रकी ज्योतिकरि प्रकाशरूप हैं। कलुषता रहित उन्नत हैं स्तन जाके, मानों कामके कलश ही हैं। सरल है चित्त जाका। सो कौशल्याका पुत्र राणी विदेहाकी पुत्रीकूं निकट आवती देखी, कथनविषै न आवै ऐसे हर्षकूं प्राप्त भया। अर यह रतिसमान सुन्दरी रमणकूं आवता देखि विनयकरि हाथ जोड़ खड़ी अश्रुपातकरि भरे हैं नेत्र जाके। जैसें शची इन्द्रके निकट आवै, रति कामके निकट आवै, दया जिनधर्मके निकट आवै, सुभद्रा भरतके निकट आवै, तैसें ही सीता सती रामके समीप आई। सो घने दिननिका वियोग, ताकरि खेदखिन्न रामने मनोरथके सैकड़ानिकर पाया है नवीन संगम जाने, सो महाज्योतिका धरणहारा, सजल हैं नेत्र जाके, भुजबंधनकरि शोभित जे भुजा, तिनकरि प्राणप्रियासूं मिलता भया। ताहि उरसूं लगाय सुखके सागरविषै मग्न भया। उरसूं जुदी न कर सकैं, मानों विरहसे डरै है। अर वह निर्मल चित्तकी धरणहारी पतिके कंठविषै अपनी भुजपांसि डारि ऐसी सोहती भई जैसें कल्पवृक्षनिसूं लिपटि कल्पवेलि सोहै, भया है रोमांच दोउनिके अंगविषै, परस्पर मिलापकरि दोऊ ही अति सोहते भये। ते देवनिके युगल समान हैं। जैसें देव देवांगना सोहैं तैसें सोहते भये। सीता अर रामका समागम देखि देव प्रसन्न भये। सो आकाशतैं दोनोंनिपर पुष्पनिकी वर्षा करते भए, सुगन्ध जलकी वर्षा करते भए अर ऐसे वचन मुखतैं उचारते भए—अहो! अनुपम है शील सीताका, शुभ है चित्त, सीता धन्य है, याकी अचलता गंभीरता धन्य है, व्रत शीलकी मनोग्यता भी धन्य है, निर्मलपन जाका धन्य है; सतीनिविषै उत्कृष्टता जाके, जानै मनहूकरि द्वितीय पुरुष न इच्छ्या, शुद्ध है नियम व्रत जाका। या भांति देवनि प्रशंसा करी। ताही समय अतिभक्तिका भरचा लक्ष्मण आय सीताके पांयनि परचा। विनयकरि संयुक्त सीता अश्रुपात डारती ताहि उरसूं लगाय कहती

भई—हे वत्स ! महाज्ञानी मुनि कहते जो यह वासुदेव पदका धारक है सो प्रकट भया । अर अर्धचक्री पदका राज तेरे आया । निर्ग्रंथके वचन अन्यथा न होंय । अर यह तेरे बड़े भाई बलदेव पुरुषोत्तम जिन्होंने विरहरूप अग्निविषै जरती जो मैं सो निकासी । बहुरि चन्द्रमा समान है ज्योति जाकी, ऐसा भाई भामंडल बहिनके समीप आया । ताहि देखि अति मोहकरि मिली । कैसा है भाई ? महा विनयवान है, अर रणमें भला दिखाया है । अर सुग्रीव वा हनुमान, नल, नील, अंगद, विराधित, चन्द्र, सुषेण, जांबद इत्यादिक बड़े बड़े विद्याधर अपना नाम सुनाय वन्दना अर स्तुति करते भये । नाना प्रकारके वस्त्र आभूषण कल्पवृक्षनिके पुष्पनिकी माला सीताके चरणके समीप स्वर्णके पात्रविषै मेल भेंट करते भए । अर स्तुति करते भए—हे देवि ! तुम तीन लोकविषै प्रसिद्ध हो, महा उदारताकूं धरौ हो, गुण सम्पदाकर सबनिमें बड़ी हो, देवनिकरि स्तुति करने योग्य हो, अर मंगलरूप है दर्शन तिहारा, जैसें सूर्यकी प्रभा सूर्यसहित प्रकाश करै तैसें तुम श्री रामचन्द्र सहित जयवंत होहु ।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रन्थ, ताकी भाषावचनिकाविषै राम और सीताका मिलाप होनेका वर्णन करनेवाला उन्यासीवां पर्व पूर्ण भया ॥ ७९ ॥

अथानन्तर सीताके मिलापरूप सूर्यके उदयकरि फूल गया है मुख कमल जाका ऐसे जो राम सो अपने हाथकरि सीताका हाथ गह उठे, ऐरावत गजसमान जो गज तापर सीतासहित आरोहण किया । मेघ समान वह गज ताकी पीठपर जानकीरूप रोहिणीकरि युक्त रामरूप चन्द्रमा सोहते भए, समाधानरूप है बुद्धि जिनकी । दोऊ अति प्रीतिके भरे, प्राणिनिके समूहकूं आनन्दके करता, बड़े बड़े अनुरागी विद्याधर लार, स्वर्ग विमान तुल्य रावणका महल, तहां श्रीराम पधारे । रावणके महिलके मध्य श्रीशांतिनाथका मंदिर अति सुन्दर, तहां स्वर्णके हजारों थम्भ, नानाप्रकारके रत्नोंकरि मंडित मंदिर की मनोहर भीति, जैसें महाविदेहके मध्य सुमेरु गिरि सोहै तैसें रावणके मंदिरविषै श्रीशांतिनाथका

मन्दिर सोहै । जाहि देखे नेत्र मोहित होय जांय । तहां घन्टा बाजै है, ध्वजा फहरै हैं । महा मनोहर वह शांतिनाथका मन्दिर वर्णनविषै न आवै । श्रीराम हाथीतैं उतरे । नागेन्द्र समान है पराक्रम जाका, प्रसन्न नेत्र, महालक्ष्मीवान, जानकीसहित किंचित् काल कायोत्सर्गको प्रतिज्ञा करी । प्रलंबित हैं भुजा, महा प्रशांत हृदय, सामायिककूं अंगीकार करि हाथ जोड़ि शांतिनाथस्वामीका स्तोत्र, समस्त अशुभ कर्मका नाशक पढ़ते भए–हे प्रभो ! तिहारे गर्भावतारविषै शांति भई, महा कांतिकी करणहारी, सर्व रोगकी हरणहारी, अर सकल जीवनकूं आनन्द उपजै, अर तिहारे जन्मकल्याणकविषै इन्द्रादिक देव महाहर्षित होय आए । क्षीरसागरके जलकरि सुमेरुके पर्वतपर तिहारा जन्माभिषेक भया,अर तुमने चक्रवर्ती पद धर जगत्का राज्य किया । बाह्य शत्रु बाह्यचक्रसे जीते, अर मुनि होय माहिले मोह रागादिक शत्रु ध्यानकरि जीते । केवलबोध लह्या, जन्म जरा मरणसे रहित जो शिवपुर कहिए मोक्ष ताका तुम अविनाशी राज्य लिया । कर्मरूप वैरी ज्ञान शस्त्रतैं निराकरण किए । कैसे हैं कर्मशत्रु ? सदा भवभ्रमणके कारण, अर जन्म जरा मरण भयरूप आयुधनिकर युक्त, सदा शिवपुर पंथके निरोधक । कैसा है वह शिवपुर ? उपमारहित, नित्य, शुद्ध, जहां परभवका आश्रय नाहीं, केवल जिन भावका आश्रय है, अत्यन्त दुर्लभ, सो तुम आप निर्वाणरूप, औरनिकूं निर्वाणपद सुलभ करोहो, सर्व जगतकूं शांतिके कारण हो । हे श्रीशांतिनाथ ! मन वचन कायकरि नमस्कार तुमकूं । हे जिनेश ! हे महेश ! अत्यंत शांत दशाकूं प्राप्त भए हो, स्थावर जंगम सर्व जीवनिके नाथ हो । जो तिहारे शरण आवै तिनके रक्षक हो । समाधि बोधके देनहारे तुम एक परमेश्वर सर्वके गुरु, सबके बांधव हो । मोक्ष मार्गके प्ररूपणहारे, सर्व इन्द्रादिक देवनिकर पूज्य, धर्मतीर्थके कर्ता हो । तिहारे प्रसाद करि सर्व दुखसे रहित जो परम स्थानक ताहि मुनिराज पावै हैं । हे देवाधिदेव ! नमस्कार है तुमकूं । सर्व कर्म विलय किया है । हे कृतकृत्य ! नमस्कार तुमकूं । पाया है परम शांतिपद जिन्होंने, तीनलोककूं शांतिके कारण, सकल स्थावर जंगम जीवनिके नाथ, शरणागतपालक, समाधि बोधके दाता, महा कांतिके धारक हे प्रभो !

६९१

तुम ही गुरु, तुमही बांधव, तुमही मोक्षमार्गके नियंता परमेश्वर, इन्द्रादिक देवनिकरि पूज्य, धर्मतीर्थके कर्ता जिनकरि भव्य जीवनिकूं सुख होय, सर्व दुखके हरणहारे, कर्मनिके अंतक ! नमस्कार तुमकूं । हे लब्धलभ्य ! नमस्कार तुमकूं । लब्धलभ्य कहिए पाया है, पायवे योग्य पद जिन्होंने, महाशांत स्वभावविषै विराजमान, सर्व दोष रहित हे भगवान ! कृपा करहु । वह अखंड अविनाशी पद हमें देवहु । इत्यादि महास्तोत्र पढते कमल-नयन श्रीराम प्रदक्षिणा देकर बंदना करते भए, महा विवेकी, पुण्यकर्मविषै सदा प्रवीण । अर रामके पीछे नम्रीभूत है अंग जाका, दोऊ कर जोड़, महासमाधानरूप जानकी स्तुति करती भई । श्रीरामके शब्द महा दुंदुभी समान अर जानकी महा मिष्ट कोमल वीणा समान बोलती भई । अर विशल्या सहित लक्ष्मण स्तुति करते भए । अर भामंडल, सुग्रीव तथा हनुमान मंगल स्तोत्र पढ़ते भए। जोड़े हैं कर कमल, अर जिनराजविषैं पूर्ण है भक्ति जिनकी, महा गान करते, मृदंगादि बजावते महा ध्वनि करते भए । सो मयूर मेघकी ध्वनि जानि नृत्य करते भए। बारम्बार स्तुति प्रणाम करि जिनमन्दिरविषै यथायोग्य तिष्ठे । ता समय राजा विभीषण अपने दादा सुमाली, अर तिनके लघुवीर सुमाल्यवान, अर सुमालीके पुत्र रत्नश्रवा रावणके पिता तिनकूं आदि दे अपने बड़े तिनका समाधान करता भया । कैसा है विभीषण ? संसारकी अनित्यताके उपदेशविषैं अत्यन्त प्रवीण । सो बडनिसूं कहता भया-हे तात ! ए सकल जीव अपनें उपार्जे कर्मनिकूं भोगवैं है । तातैं शोक करना वृथा है । अर अपना चित्त समाधान करहु । आप जिन आगमके वेत्ता, महा शांत चित्त, अर विचक्षण हो, औरनिकूं उपदेश देयवे योग्य आपकूं हम कहा कहैं ? जो प्राणी उपज्या है सो अवश्य मरणकूं प्राप्त होय है । अर यौवन पुष्पनिकी सुगन्धता समान क्षणमात्रविषैं और रूप होय है । अर लक्ष्मी पल्लवनिकी शोभासमान शीघ्र ही और रूप होय है । अर बिजुरीके चमत्कार समान यह जीतव्य है । अर पानीके बुदबुदासमान बंधुनिका समागम है । अर सांझके बादरके रंग समान यह भोग हैं । अर यह जगतकी करणी स्वप्नकी क्रिया समान है । जो ये जीव पर्यायार्थिक नयकरि मरण न करैं तो हम

भवांतरतैं तिहारे वंशविषै कैसे आवते ? हे तात ! अपना ही शरीर विनाशीक है तो हितूजनका अत्यन्त शोक काहेकूं करिए ? शोक करना मूढ़ता है। सत्पुरुषनिको शोकके दूर करिवे अर्थि संसार का स्वरूप विचारणा योग्य है। देखे, सुने, अनुभवे जे पदार्थ वे उत्तम पुरुषनिकूं शोक उपजावै हैं। परन्तु विशेष शोक न करना, क्षणमात्र भया तो भया। शोककरि बांधवका मिलाप नाहीं, बुद्धिभ्रष्ट होय है। तातैं शोक न करना। यह विचारणा—या संसार असारविषै कौन कौन सम्बन्ध भए, या जीव के कौन कौन बांधव भए—ऐसा जानि शोक तजना। अपनी शक्ति प्रमाण जिनधर्मका सेवन करना। यह वीतरागका मार्ग संसार सागरका पार करणहारा है। सो जिनशासनविषै चित्त धरि आत्मकल्याण करना। इत्यादि मनोहर मधुर वचनिकरि विभीषण अपने बड़ेनिका समाधान किया।

बहुरि अपने निवास गया। अर अपनी विदग्धनामा पटराणी, समस्त व्यवहारविषै प्रवीण हजारां राणीनिमें मुख्य, ताहि श्रीरामके नौतिवेकूं भेज्या। सो आयकरि सीतासहित रामकूं अर लक्ष्मणकूं नमस्कारकरि कहती भई—हे देव ! मेरे पतिका घर आपके चरणारविन्दके प्रसंगकरि पवित्र करहु, आप अनुग्रह करिवे योग्य हो। या भांति राणी वीनती करी तब ही विभीषण आया, अति आदरतैं कहता भया—हे देव ! उठिये, मेरा घर पवित्र करिए। तब आप याके लार ही याके घर जायवेकूं उद्यमी भए। नानाप्रकारके वाहन, कारी घटा समान वाजे, अति उत्तंग अर पवन समान चंचल तुरंग, अर मन्दिरसमान रथ इत्यादि नानाप्रकारके जे वाहन तिनपर आरूढ़ अनेक राजा तिन सहित विभीषण के घर पधारे। समस्त राजमार्ग सामंतनिकरि आच्छादित भया। विभीषणने नगर उछाला, मेघकी ध्वनि समान वादित्र बाजते भए। शंखनिके शब्दकरि गिरिकी गुफा नाद करती भईं। झंझा भेरी मृदंग ढोल हजारों बाजते भए। लंपाक काहला धुंधु अनेक बाजे अर दुंदुभी बाजे, दशों दिशा वादित्रनिके नादकरि पूरी गईं। ऐसे ही तो वादित्रनिके शब्द, अर ऐसे ही नानाप्रकारके वाहननिके शब्द, ऐसे ही सामंतनिके अट्टहास, तिनकर दशों दिशा पूरित भईं। कईएक सिंह शार्दूल पर चढ़े हैं, कई

६६३

एक हाथीनपर, कईएक तुरंगनिपर चढ़े हैं। नानाप्रकारके विद्यामई तथा सामान्य बाहन तिनपर चढ़े चाले। नृत्यकारणी नृत्य करैं हैं, नट भाट अनेक कला अनेक चेष्टा करैं हैं। अति सुन्दर नृत्य होय हैं। बंदीजन विरद बखानें हैं। ऊंचे स्वरसे स्तुति करैं हैं। अर शरदकी पूर्णमासीके चन्द्रमा समान उज्ज्वल छत्रनिके मंडल करि अम्बर छाय रहा है। नाना प्रकारके आयुधनिकी कांति करि सूर्यकी कांति दबि गई है। नगरके सकल नर नारीरूप कमलनिके वनकूं आनंद उपजावते, भानुसमान श्रीराम विभीषणके घर आए। गौतमस्वामी कहे हैं—हे श्रेणिक! ता समयकी विभूति कही न जाय। महा शुभ लक्षण, जैसी देवनिकैं शोभा होय तैसी भई। विभीषणने अर्घपाद्य किए, अति शोभा करी। श्रीशांतिनाथके मंदिर तैं लेय अपने महिलतक महा मनोज्ञ तांडव किए। आप श्रीराम हाथीसे उतर सीता अर लक्ष्मण सहित विभीषणके घरमें प्रवेश करते भए। विभीषणके महिलके मध्य पद्मप्रभु जिनेन्द्रका मन्दिर रत्ननिके तोरणनिकरि मंडित, कनक मई, ताके चौगिर्द अनेक जिनमन्दिर। जैसे पर्वतनिकैं मध्य सुमेरु सोहै तैसैं पद्मप्रभुका मन्दिर सोहै। सुवर्णके हजारां थम्भ, तिनके ऊपर अति ऊंचे दैदीप्यमान अति विस्तार संयुक्त जिनमंदिर सोहैं। नानाप्रकारके मणिनिके समूहकरि मंडित अनेक रचनाकूं धरैं। अति सुन्दर पद्मराग मणिमई पद्मप्रभु जिनेन्द्रकी प्रतिमा, अति अनुपम विराजै जाकी कान्तिकरि मणिनिकी भूमिविषै मानों कमलनिकर वन फूल रहे हैं। सो राम लक्ष्मण सीतासहित वंदनाकरि स्तुतिकरि यथायोग्य तिष्ठे।

अथानन्तर विद्याधरनिकी स्त्री राम लक्ष्मण सीताके स्नानकी तैयारी करावती भई। अनेक प्रकारके सुगन्ध तेल तिनके उबटना किए। नासिकाकूं सुगन्ध, अर देहकूं अनुकूल पूर्व दिशाकूं मुखकर स्नानकी चौकी पर विराजे, घणी ऋद्धिकर स्नानकूं प्रवरते। सुवर्णके, मरकत मणिके, हीरानिके, स्फटिक मणिके, इन्द्रनीलमणिके कलश सुगन्ध जलके भरे तिनकर स्नान भया। नानाप्रकारके वादित्र बाजे। गीत गान भए। जब स्नान होय चुका तब महापवित्र वस्त्र आभूषण पहिरे। बहुरि पद्मप्रभु

के चैत्यालय जाय वंदना करी। विभीषणने रामकी मिजमानी करी, ताके विस्तार कहांलग कहिए– दुग्ध, दही, घी, शर्बतकी बावडी भरवाई। पकवान अर अन्नके पर्वत किए। अर जे अद्भुत वस्तु नन्दनादि वन विषै पाइए ते मंगाई। मनकूं आनन्दकारी, नासिकाकूं सुगन्ध, नेत्रोंकूं प्रिय, अति स्वादकूं धरे जिह्वाकूं वल्लभ, षट्रस सहित भोजनकी तैयारी करी। सामग्री तो सर्व सुन्दर ही हुती अर सीताके मिलापकर रामकूं अति प्रिय लागी। रामके चित्तकी प्रसन्नता कथनविषै न आवै। जब इष्टका संयोग होय तब पांचों इन्द्रियनिके सर्व ही भोग प्यारे लागे, नातर नाहीं। जब अपने प्रीतमका संयोग होय तब भोजन भली भांति रुचै, सुन्दर रुचै, सुन्दर वस्त्रका देखना रुचै, रागका सुनना रुचै, कोमल स्पर्श रुचै, मित्रके संयोगकर सर्व मनोहर लगै, अर जब मित्रका वियोग होय तब स्वर्ग तुल्य भी नरक तुल्य भासै। अर प्रियके समागमविषै महा विषम वन स्वर्ग तुल्य भासै। महा सुन्दर अमृतसारिखे रस, अर अनेक वर्णके अद्भुत भक्ष्य तिनकर राम लक्ष्मण सीताकूं तृप्त किए। अद्भुत भोजन क्रिया भई। भूमिगोचरी विद्याधर परिवारसहित अति सन्मानकर जिमाए। चन्दनादि सुगन्धके लेप किए, तिनपर भ्रमर गुंजार करै हैं, अर भद्रसाल नन्दनादिक बनके पुष्पनिसे शोभित किये। अर महा सुन्दर कोमल महीन वस्त्र पहिराए। नानाप्रकारके रत्ननिके आभूषण दिए। कैसे हैं आभूषण? जिनके रत्ननिकी ज्योतिके समूहकरि दशोंदिशाविषै प्रकाश होय रहा है। जेते रामकी सेनाके लोक हुते ते सब विभीषणने सन्मान कर प्रसन्न किये, सबके मनोरथ पूर्ण किये। रात्रि अर दिवस सब विभीषण हीका यश करै। अहो! यह विभीषण राक्षसवंशका आभूषण है, जाने राम लक्ष्मण की बड़ी सेवा करी। यह महा प्रशंसा योग्य हैं, मोटा पुरुष है, यह प्रभावका धारक जगतविषै उतंगता कूं प्राप्त भया– जाके मन्दिरविषै श्रीराम लक्ष्मण पधारे। या भांति विभीषणके गुणग्रहणविषै तत्पर विद्याधर होते भए। सर्व लोक सुखसूं तिष्ठे। राम लक्ष्मण सीता अर विभीषणकी कथा पृथ्वीविषै प्रवरती।

अथानन्तर विभीषणादिके सकल विद्याधर राम लक्ष्मणका अभिषेक करनेकूं विनयकर उद्यमी भए। तब श्रीराम लक्ष्मणने कहा–अयोध्याविषैं हमारे पिताने भाई भरतकूं अभिषेक कराया सो भरत ही हमारे प्रभु हैं। तब सबने कही आपकूं यही योग्य है, परन्तु अब आप त्रिखंडी भए तो यह मंगल स्नान योग्य ही है, यामें कहा दोष है? अर ऐसी सुननेविषैं आवै है–भरत महा धीर हैं, अर मनवचन कायकरि आपकी सेवाविषैं प्रवर्तें हैं, विक्रियाकूं नाहीं प्राप्त होय हैं। ऐसा कह सबने राम लक्ष्मणका अभिषेक किया। जगतविषैं बलभद्र नारायणकी अति प्रशंसा भई। जैसें स्वर्गविषैं इन्द्र प्रतिइन्द्रकी महिमा होय तैसें लंकाविषैं राम लक्ष्मणकी महिमा भई। इन्द्रके नगर समान वह नगर महा भोगनिकर पूर्ण, तहां राम लक्ष्मणकी आज्ञासूं विभीषण राज्य करै है। नदी सरोवरनिके तीर अर देश, पुर, ग्रामादिविषैं विद्याधर राम लक्ष्मणही का यश गावते भए। विद्याकरयुक्त अद्भुत आभूषण पहिरे सुन्दर वस्त्र, मनोहर हार, सुगन्धादिकके विलेपन उनकर युक्त क्रीडा करते भए, जैसें स्वर्गविषैं देव क्रीडा करैं। अर श्रीरामचन्द्र सीताका मुख देखते तृप्तिकूं न प्राप्त भए। कैसा है सीताका मुख? सूर्यके किरणकरि प्रफुल्लित भया जो कमल ता समान है प्रभा जाकी। अत्यन्त मनकी हरणहारी जो सीता ता सहित राम निरन्तर रमणीय भूमिविषैं रमते भए। अर लक्ष्मण विशल्या सहित रतिकूं प्राप्त भए। मनवांछित सकल वस्तुका है समागम जिनके। उन दोऊ भाईनिके बहुत दिन भोगोपभोगयुक्त सुखसे एक दिवस समान गए।

एक दिन लक्ष्मण सुन्दर लक्षणनिका धरणहारा विराधितकूं अपनी जे स्त्री तिनके लेयवे अर्थ
पत्र लिख बड़ी ऋद्धिसे पठावता भया। सो जायकर कन्यानिके पितानिकूं पत्र देता भया। माता पितानिने बहुत हर्षित होय कन्यानिकूं पठाईं। सो बड़ी विभूतिसूं आईं। देशांग नगरके स्वामी वज्रकर्णकी पुत्री रूपवती महारूपकी धरणहारी, अर कूबर स्थानके नाथ बालखिल्यकी पुत्री कल्याणमाला परम सुन्दरी, अर पृथ्वीपुर नगरके राजा पृथ्वीधरकी पुत्री बनमाला, गुणरूपकर प्रसिद्ध, अर खेमांजलके

पद्म पुराण ६९७

राजा जितशत्रुकी पुत्री जितपद्मा, अर उज्जैन नगरीके राजा सिंहोदरकी पुत्री। यह सब लक्ष्मण के समीप आईं। विराधित ले आया। जन्मांतरके पूर्व पुण्य, दया, मन इन्द्रियोंको वश करना, शील-संयम, गुरुभक्ति, महा उत्तम तप, इन शुभ कर्मनिकर लक्ष्मणसा पति पाइए। इन पतिव्रतानिनैं पूर्व महा तप किए हुते। रात्रिभोजन तज्या, चतुर्विधसंघकी सेवा करी, तातैं वासुदेव पति पाए। उनको लक्ष्मणही वर योग्य, अर लक्ष्मणके ऐसे ही स्त्री योग्य। तिनकरि लक्ष्मणकूं, अर लक्ष्मणकर तिनकूं अति सुख होता भया। परस्पर सुखी भए। गौतम स्वामी राजा श्रेणिकसूं कहै हैं–हे श्रेणिक! जगत विषै ऐसी सम्पदा नाहीं, ऐसी शोभा नाहीं, ऐसी लीला नाहीं, ऐसी कला नाहीं जो इनके न भई। राम लक्ष्मण अर इनकी राणी तिनकी कथा कहां लग कहैं? अर कहां कमल कहां चन्द्र इनके मुख की उपमा पावैं? अर कहां लक्ष्मी अर कहां रति इनकी राणियोंकी उपमा पावैं? राम लक्ष्मणकी ऐसी सम्पदा देख विद्याधरनिके समूहकूं परम आश्चर्य होता भया। चन्द्रवर्धनकी पुत्री अर अनेक राजानिकी कन्या तिनसूं श्रीराम लक्ष्मणका अति उत्सवसे विवाह होता भया। सर्व लोककूं आनन्द के करणहारे वे दोऊ भाई महाभोगनिके भोक्ता, मनवांछित सुख भोगते भए। इन्द्र प्रत्येन्द्र समान आनन्दकरि पूर्ण लंकाविषै रमते भए। सीताविषै है अत्यन्तराग जिनका ऐसे श्रीराम तिन्होंने छह वर्ष लंकाविषै व्यतीत किए। सुखके सागरविषै मग्न, सुन्दर चेष्टाके धरणहारे रामचन्द्र सकल दुःख भूल गए।

अथानन्तर इन्द्रजीतमुनि सर्व पापनिके हरनहारे अनेक ऋद्धिसहित विराजमान पृथ्वीविषै विहार करते भए। वैराग्यरूप पवनकरि प्रेरी ध्यानरूप अग्निकरि कर्मरूप भस्म किए। कैसी है ध्यानरूप अग्नि? क्षायिक सम्यक्त्वरूप अरण्यकी लकड़ी, ताकरि करी है। अर मेघवाहन मुनि भी विषयरूप ईंधनको अग्निसमान आत्मध्यानकर भस्म करते भए,केवलज्ञानकूं प्राप्त भए। केवलज्ञान जीवका निज-स्वभाव है। अर कुम्भकर्णमुनि सम्यग्दर्शन ज्ञान चारित्रके धारक, शुक्ल लेश्याकरि निर्मल जो शुक्लध्यान

ताके प्रभावकरि केवलज्ञानकूं प्राप्त भए। लोक अर अलोक इनकूं अवलोकन करते, मोहरजरहित इन्द्रजीत, कुम्भकर्ण केवली आयु पूर्णकरि अनेक मुनिन सहित नर्मदाके तीर सिद्धपदकूं प्राप्त भए। सुर असुर मनुष्यनिके अधिपतिकरि गाइए है उत्तमकीर्ति जिनकी, शुद्ध शीलके धरणहारे, महादेदीप्यमान, जगतबन्धु, समस्त, ज्ञेयके ज्ञाता, जिनके ज्ञानसमुद्रविषै लोकालोक गायके खुरसमान भासै, संसारका क्लेश महाविषम ताके जलसे निकसे, जा स्थानक गए बहुरि यत्न नाहीं—तहां प्राप्त भए, उपमारहित निर्विघ्न अखंड सुखकूं प्राप्त भए। जे कुम्भकर्णादिक अनेक सिद्ध भए ते जिनशासनके श्रोतावोंकूं आरोग्य पद देवें। नाश किए हैं कर्मशत्रु जिन्होंने, ते जिनस्थानकोंसे सिद्ध भए हैं मैं वे स्थानक अद्यापि देखिये हैं। वे तीर्थ भव्यनिकरि वंदवे योग्य हैं। विंध्याचलकी वनीविषै इन्द्रजीत मेघनाद तिष्ठे सो तीर्थ मेघरव कहावै है। अर जाम्बुमाली महा बलवान तूणीमंतनामा पर्वतविषै अहमिंद्र पदकूं प्राप्त भए सो पर्वत नानाप्रकारके वृक्ष अर लतानिकरि मंडित, अनेक पक्षिनिके समूहकरि तथा नानाप्रकारके वचननिकर भरया। अहो भव्यजीव हो! जीवदया आदि अनेक गुणनिकर पूर्ण ऐसा जो जिनधर्म ताके सेवनसे कछु दुर्लभ नाहीं, जैनधर्मके प्रसादसे सिद्ध पद, अहमिंद्र पद इत्यादिके पद सर्व ही सुलभ हैं। जम्बूमालीका जीव अहमिंद्र पदसे ऐरावतक्षेत्रविषै मनुष्य होय, केवल उपाय, सिद्धपदकूं प्राप्त होवेंगे। अर मंदोदरीका पिता चारण मुनि होय महा ज्योतिकूं धरे अढाईद्वीपविषै कैलाश आदि निर्वाण क्षेत्रनिकी अर चैत्यालयनिकी वंदना करते भए। देवनिका है आगमन जहां। सो मय महामुनि, रत्नत्रयरूप आभूषण करि मंडित, महाधीर्यधारी पृथ्वीविषै विहार करै। अर मारीच मंत्री महामुनि स्वर्गविषै बड़ी ऋद्धिके धारी देव भये। जिनका जैसा तप तैसा फल पाया सीताके दृढ़ व्रतकरि पतिका मिलाप भया, जाकूं रावण डिगाय सक्या नाहीं। सीताका अतुल धीर्य अद्भुत रूप, महानिर्मल बुद्धि, भरतारविषै अधिक स्नेह, जो कहनेविषै न आवै। सीता महा गुणनिकरि पूर्ण, शीलके प्रसादतै जगतविषै प्रशंसा योग्य भई। कैसी है सीता? एक निजपतिविषै है संतोष

जाके, भवसागरकी तरणहारी, परम्पराय मोक्षकी पात्र जाकी साधु प्रशंसा करैं। गौतम स्वामी कहैं हैं–हे श्रेणिक! जो स्त्री विवाहही नहीं करै, बालब्रह्मचर्य धारै, सो तो महाभाग्य ही है, अर पतिव्रतका व्रत आदरे, मनवचनकायकरि पर पुरुषका त्याग करै, तो यह व्रत भी परम रत्न है। स्त्रीकूं स्वर्ग अर परम्पराय मोक्ष देवनेकूं समर्थ है। शीलवृत समान और व्रत नाहीं। शील भवसागरकी नाव है। राजा मय मंदोदरीका पिता राज्य अवस्थाविषै मायाचारी हुता, अर कठोर परिणामी हुता तथापि जिनधर्मके प्रसादकरि रागद्वेष रहित हो अनेक ऋद्धिका धारक मुनि भया।

यह कथा सुन राजा श्रेणिक गौतमस्वामीकूं पूछते भए–हे नाथ! मैं इन्द्रजीतादिकका माहात्म्य सब सुन्या। अब राजा मयका माहात्म्य सुना चाहूं हूं। अर हे प्रभो! जो या पृथ्वीविषै पतिव्रता शीलवंती हैं, निज भरतारविषै अनुरक्त हैं, वे निश्चयसे स्वर्ग मोक्षकी अधिकारिणी हैं, तिनकी महिमा मोहि विस्तारसूं कहो। तब गणधर कहते भए–जे निश्चयकरि सीता समान पतिव्रता शीलकूं धारण करै हैं ते अल्प भवनमें मोक्ष होय हैं। पतिव्रता स्वर्गही जांय परम्पराय मोक्ष पावैं,अनेक गुणनिकर पूर्ण। हे राजन्! जे मनवचनकायकरि शीलवंती हैं,चित्तकी वृत्ति जिन्होंने रोकी है,ते धन्य हैं। घोड़ेनिमें, हाथीनिमें लोहेनिविषै, पाषाणविषै, वस्त्रनिविषै, जलविषै, वृक्षनिविषै, बेलनिविषै, स्त्रीनिविषै, पुरुषनिविषै बड़ा अन्तर है। सभी बेलनिमें न ककड़ी फले न कुम्हडा। वैसे ही सबही नारियोंमें पतिव्रता न पाइए,अर सबही पुरुषनिमें विवेकी नाहीं। जे शीलरूप अंकुशकरि मनरूप माते हाथीकूं वश करैं ते पतिव्रता,सबही कुलविषै होय हैं। अर वृथा पतिव्रताका अभिमान किया तो कहा? जे जिनधर्मसे बहिर्मुख हैं ते मानरूप माते हाथीकूं वश करिवे समर्थ नाहीं। वीतरागकी वाणीकरि निर्मल भया है चित्त जिनका ते ही मनरूप हस्तीकूं विवेकरूप अंकुशकरि वशीभूत करि, दया शीलके मार्गविषै चलायवे समर्थ हैं। हे श्रेणिक! एक अभिमाना नामा स्त्री ताकी संक्षेपसे कथा कहिए है–सो सुन, यह प्राचीन कथा प्रसिद्ध है। एक धान्यग्रामनामा ग्राम, तहां नोदन नामा ब्राह्मण, ताके अभिमानानामा स्त्री, सो अग्निनामा ब्राह्मणकी पुत्री, मानसी

नामा माताके उदरविषै उपजी, सो अति अभिमानकी धरहणहारी। सो नोदन नामा ब्राह्मण क्षुधाकर पीडित होय अभिमानाकूं तज दई, सो गजवनविषै करूरुह नाम राजाकूं प्राप्त भई। वह राजा पुष्पप्रकीर्ण नगरका स्वामी, लंपट, सो ब्राह्मणीकूं रूपवती जान ले गया, स्नेहकर घरविषै राखी। एक समय रातिविषै तानैं राजाके मस्तकविषै चरणकी लात दई। प्रातःसमय सभाविषैं राजाने पंडितनिकूं पूछ्या–जानैं मेरा सिर पांव कर हता होय ताका कहा करना? तब मूर्ख पंडित कहते भए–हे देव! ताका पांव छेदना अथवा प्राण हरना। ता समय एक हेमांक नामा ब्राह्मण राजाके अभिप्रायका वेत्ता कहता भया–ताके पांवकी आभूषणादिकरि पूजा करनी। तब राजाने हेमांककूं पूछी–हे पंडित! तुमने रहस्य कैसैं जाना? तब तानैं कही–स्त्रीके दंतनिके तिहारे अधरनिविषै चिह्न दीखे, तातैं यह जानी स्त्रीके पांवकी लागी। तब राजाने हेमांकको अभिप्रायका वेत्ता जान अपना निकट कृपापात्र किया, बड़ी ऋद्धि दई। सो हेमांकके घरके पास एक मित्रयशानामा विधवा ब्राह्मणी महा दुःखी अमोघसर नाम ब्राह्मणकी स्त्री है सो रहै। सो अपने पुत्रकूं शिक्षा देती भई। भरतारके गुण चितार चितार कहती भई–हे पुत्र! बालअवस्थाविषै जो विद्याका अभ्यास करैं सो हेमांककी न्याईं महाविभूतिकूं प्राप्त होय। या हेमांकने बालअवस्थाविषै विद्याका अभ्यास किया सो अब याकी कीर्ति देख। अर तेरा बाप धनुषबाण विद्याविषै अति प्रवीण हुता ताके तुम सुपुत्र भए। आंसू डार माताने ए कहे। ताके वचन सुन माताकूं धीर्य बंधाया, महा अभिमानका धारक यह श्रीवर्धित नामा पुत्र, विद्या सीखनेके अर्थ व्याघ्रपुर नगर गया। सो गुरुके निकट शस्त्र शास्त्र सर्व विद्या सीख्या। अर या नगरके राजा सुकांतकी शीला नामा पुत्री ताहि ले निकस्या। तब कन्याका भाई सिंहचन्द्र या ऊपर चढ्या सो या अकेलेने शस्त्रविद्याके प्रभावकरि सिंहचन्द्रकूं जीत्या अर स्त्रीसहित माताके निकट आया। माताकूं हर्ष उपजाया। शस्त्रकलाकरि याकी पृथ्वीविषै प्रसिद्ध कीर्ति भई। सो शस्त्रके बलकरि पोदनापुरके राजा करूरुहकूं जीत्या अर व्याघ्रपुरका राजा शीलाका पिता मरणकूं प्राप्त भया। ताका पुत्र सिंह-

चन्द्र शत्रुनिने दबाया । सो सुरंगके मार्ग होय अपनी रानीकू ले निकस्या, राज्यभ्रष्ट भया । पोदनापुरविषै अपनी बहिनका निवास जान तम्बोलीके लार पाननिकी झोली सिरपर धरे स्त्री सहित पोदनापुरके समीप आया । रात्रिकू पोदनापुरके बनविषै रह्या । ताकी स्त्री सर्पने डसी । तब यह ताहि कांधे धर[1] जहां मय महा मुनि विराजे हुते—वे वज्रके थम्भ समान महा निश्चल कायोत्सर्ग धरैं, अनेक ऋद्धिके धारक, तिनकू भी सर्व औषधि ऋद्धि उपजी हुती, सो तिनके चरणारविंदके समीप सिंहचन्द्रने अपनी राणी डारी । सो तिनके ऋद्धिके प्रभावकरि राणी निर्विष भई । स्त्रीसहित मुनिके समीप तिष्ठै था, ता मुनिके दर्शनकू विनयदत्त नाम श्रावक आया ताहि सिंहचन्द्र मिल्या, अर अपना सर्व वृत्तांत कह्या । तब तानैं जायकरि पोदनापुरके राजा श्रीवर्धितकू कह्या जो तिहारा स्त्रीका भाई सिंहचन्द्र आया है । तब वह शत्रु जान युद्धकू उद्यमी भया । तब विनयदत्तने यथाथत् वृत्तांत कह्या जो तिहारे शरण आया है तब ताहि बहुत प्रीति ऊपजी अर महाविभूतिसू सिंहचन्द्रके सन्मुख आया, दोऊ मिले, अति हर्ष उपज्या । बहुरि श्रीवर्धित मय मुनिकू पूछता भया—हे भगवान ! मैं मेरे अपने स्वजनोंके पूर्वभव सुना चाहूं हूं । तब मुनि कहते भए—एक शोभापुरनामा नगर वहां भद्राचार्य दिगम्बरने चौमासेविषै निवास किया सो अमलनामा नगरका राजा निरन्तर आचार्यके दर्शनको आवै । सो एक दिवस एक कोढिनी स्त्री, ताकी दुर्गन्ध आई । सो राजा पांव पयादा ही भाग अपने घर गया, ताकी दुर्गन्ध सह न सका । अर वह कोढिनी चैत्यालय दर्शनकरि भद्राचार्यके समीप श्राविकाके व्रत धारे, समाधिमरणकरि देवलोक गई । वहांते चयकर तेरी स्त्री शीला भई । अर वह राजा अमल

---

१. ज्ञानपीठ काशी द्वारा प्रकाशित पद्मपुराणमें स्त्री को सर्प द्वारा डसनेके बजाय राजा सिंहेन्द्र को सर्प ने डसा—ऐसा संस्कृत और हिन्दीमें वर्णन है । रानी ने कंधेपर लाकर मुनिराज के चरणों में राजा को लिटाया तथा मुनिराज के चरणों का स्पर्शकर पतिके शरीरका स्पर्श किया जिससे वह पुनः जीवित हो गया । श्लोक निम्नप्रकार है—

१. महोरगेण सन्दष्टस्तं देवी परिदेविनी । कृत्वा स्कन्धे परिप्राप्ता देशं यत्र मयः स्थितः ॥ १८० ॥ [पर्व ८०]

२. पादौ मुनेः परामृष्य पत्युर्गात्रं समास्पृशत् । देवी ततः परिप्राप्तः सिंहेन्दुर्जीवितं पुनः ॥१८२॥ [पर्व ८०.

अपने पुत्रकू राज्यभार सोंप आप श्रावकके व्रत धारे, आठ ग्राम पुत्र पै ले संतोष धरचा, शरीर तज देवलोक गया । वहांसे चयकरि तू श्रीवर्धित भया ।

अब तेरी माताके भव सुन—एक विदेशी क्षुधाकरि पीड़ित ग्रामविषै आय भोजन मांगता भया । सो जब भोजन न मिला तब महा कोपकरि कहता भया कि मैं तिहारा ग्राम बालूंगा । ऐसे कटुक शब्द कह निकस्या । दैवयोगसे ग्रामविषैं आग लगी सो ग्रामके लोगनिने जानी ताने लगाई । तब क्रोधायमान होय दौड़े अर ताहि ल्याय अग्निविषैं जराया सो महादुखकरि राजाकी रसोवणि भई । मरकरि नरकविषै घोर वेदना पाई । तहांसे निकसि तेरी माता मित्रयशा भई । अर पोदनापुरविषै एक गोवाणिज गृहस्थ मरकरि तेरी स्त्रीका भाई सिंहचन्द्र भया । अर वह भुजपत्रा ताकी स्त्री रतिवर्धना भई । पूर्व भवविषैं पशुओंपर बोझ लादे थे सो या भवविषैं भार वहै । ये सबके पूर्व जन्म कह करि मय महा मुनि आकाश मार्ग विहारकर गए अर पोदनापुरका राजा श्रीवर्धित सिंहचन्द्रसहित नगरविषै गया । गौतम स्वामी कहै हैं—हे श्रेणिक ! यह संसारकी विचित्र गति है । कोईयक तो निर्धन से राजा होजाय अर कोईयक राजासे निर्धन हो जाय है । श्रीवर्धित ब्राह्मणका पुत्र सो राज्यभ्रष्ट होय राजा होय गया । सिंहचन्द्र राजाका पुत्र सो श्रीवर्धितके समीप आया । एक गुरुके निकट प्राणी धर्मका श्रवण करैं, तिनविषै कोई समाधि मरणकरि सुगति पावैं, कोई कुमरण करि दुर्गति पावै । कोई रत्ननिके भरे जहाज सहित समुद्र उलंघ सुखसे स्थानक पहुंचे, कोउ समुद्रविषै डूबै, कोउकूं चोर लूट लेय जावे । ऐसा जगत्‌का स्वरूप विचित्र गति जान जे विवेकी हैं ते दया, दान, विनय, वैराग्य, जप, तप, इन्द्रियोंका निरोध, शांतता, आत्म—ध्यान तथा शास्त्राध्ययनकरि आत्म—कल्याण करैं । ऐसें मय मुनिके वचन सुन राजा श्रीवर्धित अर पोदनापुरके बहुतलोक शांतचित्त होय जिनधर्मका आराधन करते भए । यह मय मुनिका माहात्म्य जे चित्त लगाय पढ़ैं, सुनैं तिनकूं बैरियोंकी पीड़ा न होय, सिंह

व्याघ्रादि न हतैं, सर्पादि न डसैं ।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महा पद्मपुराण संस्कृतग्रन्थ, ताकी भाषावचनिकाविषैं मयमुनिका माहात्म्य वर्णन करनेवाला अस्सीवां पर्व पूर्ण भया ।। ८० ।।

अथानन्तर लक्ष्मणके बड़े भाई श्रीरामचन्द्र सर्वलोक समान लक्ष्मीकूं मध्यलोकविषै भोगते भए, चन्द्र सूर्य समान है कांति जिनकी । अर इनकी माता कौशिल्या भरतार अर पुत्रके वियोगरूप अग्नि की ज्वालाकर शोककूं प्राप्त भया है शरीर जाका । महिलके सातवें खण बैठी, सखियोंकरि मंडित अतिउदास आंसुनिकर पूर्ण है नेत्र जाके । जैसे गायको बच्चेका वियोग होय अर वह व्याकुल होय ता समान पुत्रके स्नेहविषै तत्पर, तीव्र शोकके सागरविषै मग्न, दशोंदिशाको ओर देखे । महिलके शिखरविषै तिष्ठता जो काग ताहि कहै—हे वायस ! मेरा पुत्र राम आवै तो तोहि खीरका भोजन दूं । ऐसे वचन कहकर विलाप करै । अश्रुपात करि किया है चातुर्मास जिसने । हाय वत्स ! तू कहां गया ? मैं तुझे निरंतर सुखसे लडाया था, तेरे विदेश भ्रमणकी प्रीति कहांसे उपजी ? कहा पल्लव समान तेरे चरण कोमल कठोर पंथविषै पीड़ा न पावैं ? महा गहन वनविषै कौन वृक्षके तले विश्राम करता होयगा ? मैं मन्द भागिनी अत्यन्त दुखी, मुझे तजकर तू भाई लक्ष्मण सहित किस दिशाको गया ? या भांति माता बिलाप करै ता समय नारद ऋषि आकाश मार्ग विषै आए । पृथ्वीमें प्रसिद्ध, सदा अढ़ाई द्वीप विषै भ्रमते ही रहैं, सिरपर जटा, शुक्ल वस्त्र पहिरे । ताकूं समीप आवता जान कौशिल्याने उठकर सन्मुख जाय नारदकूं आदरसहित सिंहासन बिछाय सन्मान किया । तब नारद उसे अश्रुपात सहित शोकवन्ती देख पूछते भए—हे कल्याणरूपिणी ! तुम ऐसी दुःखरूप क्यों ? तुमकूं दुःखका कारण कहा ? सुकौशल महाराजकी पुत्री, लोकविषै प्रसिद्ध राजा दशरथकी राणी, प्रशंसा योग्य श्रीरामचन्द्र मनुष्यनिविषै रत्न तिनकी माता, महासुन्दर लक्षणकी धरणहारी, तुमकूं कौनने रुसाई ? जो तिहारी आज्ञा

न माने सो दुरात्मा है। अबार ही ताका राजा दशरथ निग्रह करें। तब नारदकू माता कहती भई–हे देवर्षि ! तुम हमारे घरका वृत्तांत नहीं जानो हो तातें कहो हो। अर तिहारा जैसा वात्सल्य या घरसू था सो तुम विस्मरण किया, कठोर चित्त होय गए। अब यहां आवना ही तज्या, अब तुम बात ही न बूझो। हे भ्रमणप्रिय ! बहुत दिननिविषै आए। तब नारदने कहा–हे माता ! धातुकीखंड द्वीपविषै पूर्व विदेहक्षेत्र, वहां सुरेन्द्ररमण नामा नगर, वहां भगवान तीर्थङ्कर देवका जन्मकल्याण भया सो इन्द्रादिक देव आए। भगवानको सुमेरुगिरि लेगए, अद्भुत विभूतिकर जन्माभिषेक किया। सो देवाधिदेव सर्व पापके नाशनहारे. तिनका अभिषेक मैं देख्या, जाहि देख धर्मकी बढ़वारी होय। वहां देवनिने आनन्दसू नृत्य किया। श्रीजिनेन्द्रके दर्शनविषै अनुरागरूप है बुद्धि मेरी, सो महामनोहर धातकी खण्डविषै तेईस वर्ष मैंने सुखसे व्यतीत किये। तुम मेरी मातासमान सो तुमकूं चितार या जम्बूद्वीपके भरतक्षेत्रविषै आया। अब कईएक दिन इस मंडलहीविषै रहूंगा। अब मोहि सब वृत्तांत कहो। तिहारे दर्शनकू आया हू। तब कौशल्याने सर्व वृत्तांत कहा। भामंडलका यहां आवना, अर विद्याधरनिका यहां आवना, अर भामंडलकू विद्याधरनिका राज्य, अर राजा दशरथका अनेक राजानि सहित वैराग्य, अर रामचन्द्रका सीता सहित अर लक्ष्मणके लार विदेशको गमन, बहुरि सीताका वियोग, सुग्रीवादिकका रामसू मिलाप, रावणसे युद्ध, लंकेशकी शक्तिका लक्ष्मणके लगना, बहुरि द्रोणमेघकी कन्याका तहां गमन–ऐती खबर हमकू है। बहुरि क्या भया सो खबर नाहीं। ऐसा कह महादुःखित होय अश्रुपात डारती भई, अर विलाप किया–हाय हाय ! पुत्र तू कहां गया ? शीघ्र अब मोसे वचन कह, मैं शोकके सागरविषै मग्न ताहि निकास। मैं पुण्यहीन तेरे मुख देखे बिना महा दुःखरूप अग्निसे दाहकू प्राप्त भई। मोहि साता देवो। अर सीता बालक, पापी रावण तोहि बंदीगृहविषै डारी, महा दुखसे तिष्ठती होयगी। निर्दई रावणने लक्ष्मणके शक्ति लगाई सो न जानिए जीवे है कै नाहीं ? हाय ! दोनों दुर्लभ पुत्र हो, हाय सीता ! तू पतिव्रता काहे दुःखकूं प्राप्त भई ?

यह वृत्तांत कौशल्याके मुख सुन नारद अति खेदखिन्न भया। वीण धरतीविषैं डार दई, अर अचेत होय गया। बहुरि सचेत होय कहता भया–हे माता! तुम शोक तजहु, मैं शीघ्रही तिहारे पुत्रनिकी वार्ता क्षेम कुशलकी लाऊं हूं। मेरे सब बातविषैं सामर्थ्य है। यह प्रतिज्ञाकर नारद वीणाकूं उठाय कांधे धरी, आकाश मार्ग गमन किया। पवन समान है वेग जाका। अनेक देश देखता लंकाकी ओर चाल्या। सो लंकाके समीप जाय विचारा–राम लक्ष्मणकी वार्ता कौन भांति जानिवेविषै आवै? जो राम लक्ष्मणकी वार्ता पूछिए तो रावणके लोकनिसे विरोध होय। तातैं रावणकी वार्ता पूछिए तो योग्य है। रावणकी वार्ता कर उनकी वार्ता जानी जायगी। यह विचार नारद पद्म सरोवर गया। तहां अन्तःपुर सहित अंगद क्रीड़ा करता हुता। ताके सेवकनिको रावणकी कुशल पूछी। वे किंकर सुनकर क्रोधरूप होय कहते भए यह दुष्टतापस रावणका मिलापी है। याकूं अंगदके समीप ले गए जो रावणकी कुशल पूछै है। नारदने कहा मेरा रावणसे कछु प्रयोजन नाहीं। तब किंकरनिने कही तेरा कछु प्रयोजन नाहीं तो रावणकी कुशल क्यों पूछै था? तब अंगदने हँसकर कहा इस तापसकूं पद्मनाभिके निकट ले जावो। सो नारदको खींचकर लेचले। नारद विचारै है न जानिए कौन पद्मनाभि है? कौशल्याका पुत्र होय तो मोसे ऐसी क्यों होय? ये मोहि कहां लेजाय हैं, मैं संशयविषै पड़ा हूं, जिनशासनके भक्त देव मेरी सहाय करो। अंगदके किंकर याहि विभीषणके मन्दिर श्रीराम विराजे हुते तहां ले गए। श्रीराम दूरसे देख याहि नारद जान सिंहासनसे उठे अति आदर किया। किंकरनिसे कहा इनसे दूर जावो। नारद श्रीराम लक्ष्मणकूं देख अति हर्षित भया। आशीर्वाद देकर इनके समीप बैठा। तब राम बोले अहो क्षुल्लक! कहांसे आए? बहुत दिननिविषैं आए हो, नीके हो? तब नारदने कहा तिहारी माता कष्टके सागरविषैं मग्न है। सो वार्ता कहिवेकूं तिहारे निकट शीघ्र ही आया हूं। कौशल्या माता महासती, जिनमती, निरन्तर अश्रुपात डारै है। अर तुम विना महा दुखी है। जैसे सिंही अपने बालकविना व्याकुल होय तैसैं अति व्याकुल भई विलाप करै है। जाका विलाप

सुन पाषाण भी द्रवीभूत होय। तुमसे पुत्र माताके आज्ञाकारी, अर तुम होते माता ऐसी कष्टरूप रहैं—यह आश्चर्यकी बात! वह महागुणवंती सांझ सकारेविषै प्राणरहित होयगी। जो तुम ताहि न देखोगे तो तिहारे वियोगरूपसूर्यकर सूख जायगी। तातैं मोपै कृपा कर उठहु, ताहि शीघ्र ही देखहु। या संसारविषै माता समान पदार्थ नाहीं। तिहारी दोनों मातानिके दुख करके कैकई सुप्रभा सबही दुखी हैं। कौशल्या सुमित्रा दोनों मरणतुल्य होय रही हैं। आहार नींद सब गई। रातदिन आंसू डारै हैं। तिनकी स्थिरता तिहारे दर्शन हीसूं होय। जैसैं कुरुचि विलाप करैं तैसैं विलाप करैं हैं। अर सिर अर उर हाथोंसे कूटैं हैं। दोनों ही माता तिहारे वियोगरूप अग्निकी ज्वाला कर जरैं हैं। तिहारे दर्शनरूप अमृत की धारकर उनका आताप निवारो। नारदके वचन सुन दोनों भाई मातानिके दुखकर अति दुखी भए। शस्त्र डार दिए, अर रुदन करने लगे। तब सकल विद्याधरनिने धीर्य बंधाया। राम लक्ष्मण नारदसूं कहते भए—अहो नारद! तुमने हमारा बड़ा उपकार किया। हम दुराचारी माताकूं भूल गए, सो तुम स्मरण कराया। तुम समान हमारे और वल्लभ नाहीं। वही मनुष्य महा पुण्यवान है जो माताके विनयविषै तिष्ठै हैं, दास भए माताकी सेवा करैं। जे माताका उपकार विस्मरण करैं हैं वे महा कृतघ्न हैं। या भांति माताके स्नेहकरि व्याकुल भया है चित्त जिनका, दोनों भाई नारदकी अति प्रशंसा करते भए।

अथानन्तर श्रीराम लक्ष्मणने ताही समय अति विभ्रम चित्त होय विभीषणकूं बुलाया। अर भामण्डल सुग्रीवादि पास बैठे हैं। दोऊ भाई विभीषणसूं कहते भए—हे राजन्! इन्द्रके भवन समान तेरा भवन। तहां हम दिन जाते न जाने। अब हमारे माताके दर्शनकी अति वांछा है, हमारे अंग अति तापरूप हैं, सो माताके दर्शनरूप अमृतकर शांतताकूं प्राप्त होवैं। अब अयोध्या नगरीके देखिवेकूं हमारा चित्त प्रवरत्या है। वह अयोध्या भी हमारी दूजी माता है। तब विभीषण कहता भया—हे स्वामिन्! जो आज्ञा करोगे सो ही होयगा। अबारही अयोध्याकूं दूत पठावैं जो तिहारी शुभवार्ता मातानिसूं कहे अर तिहारे आगमकी वार्ता कहे जो माताओंके सुख होय अर तुम कृपाकर षोडश दिन

यहां ही विराजो। हे शरणागत प्रतिपालक! मोसे कृपा करो, ऐसा कह अपना मस्तक रामके चरण तले धरया। तब राम लक्ष्मणने प्रमाण करी।

अथानन्तर भले भले विद्याधर अयोध्याकूं पठाए। सो दोनों माता महिलपर चढ़ीं दक्षिण दिशा की ओर देख रही हुतीं। सो दूरसे विद्याधरनिकूं देख कौशल्या सुमित्रासे कहती भई–हे सुमित्रा! देख, दोय यह विद्याधर पवनके प्रेरे मेघ तुल्य शीघ्र आवै हैं। सो ये श्रावक! अवश्य कल्याणकी वार्ता कहेंगे। यह दोनों भाइयोंके भेजे आवै हैं। तब सुमित्राने कहा तुम जो कहो हो सो ही होय। यह वार्ता दोऊ मातानिमें होय है तब ही विद्याधर पुष्पनिकी वर्षा करते आकाशसे उतरे, अतिहर्षके भरे भरत के निकट आए। राजा भरत अति प्रमोदका भरया इनका बहुत सन्मान करता भया, अर यह प्रणाम कर अपने योग्य आसनपर बैठे, अति सुन्दर है चित्त जिनका यथावत् वृत्तांत कहते भए।

हे प्रभु! राम लक्ष्मणने रावणकूं हता, विभीषणकूं लंकाका राज्य दीया, श्रीरामकूं बलभद्रपद अर लक्ष्मणकूं नारायणपद प्राप्त भया, चक्ररत्न हाथमें आया। तिन दोऊ भाइयोंके तीन खंडका परम उत्कृष्ट स्वामित्व भया। रावणके पुत्र इन्द्रजीत मेघनाद, भाई कुम्भकर्ण जो बंदीगृहमें थे सो श्री रामने छोड़े। तिन्होंने जिनदीक्षा धर निर्वाण पद पाया। अर गरुडेन्द्र श्रीराम लक्ष्मणसे देशभूषण, कुलभूषण मुनिके उपसर्ग निवारिवेकरि प्रसन्न भए थे सो जब रावणतैं युद्ध भया उसही समय सिंह-बाण अर गरुडबाण दिये। इस भांति राम लक्ष्मणके प्रतापके समाचार सुन भरत भूप अति प्रसन्न भए, ताम्बूल सुगन्धादिक तिनको दिये अर तिनकूं लेकर दोनों माताओंके समीप भरत गया। राम लक्ष्मण ७० की माता पुत्रोंकी विभूतिकी वार्ता विद्याधरोंके मुखसे सुनि आनन्दकूं प्राप्त भई। ताही समय आकाशके मार्ग हजारों वाहन विद्यामई स्वर्ण रत्नादिकके भरे आए। अर मेघमालाके समान विद्याधरनिके समूह अयोध्यामें आये, जैसे देवनिके समूह आवे। ते आकाशविषै तिष्ठे नगरविषै नाना रत्नमई वृष्टि करते भए। रत्ननिके उद्योत कर दशों दिशाविषै प्रकाश भया। अयोध्याविषै एक एक गृहस्थके घर पर्वत

समान सुवर्ण रत्ननिकी राशि करी। अयोध्याके निवासी समस्त लोक ऐसे अति लक्ष्मीवान किए मानों स्वर्गके देव ही हैं। अर नगर विषै यह घोषणा फेरी कि जाके जिस वस्तुकी इच्छा हो सो लेवो। तब सब लोक आय कर कहते भए—हमारे घरमें अटूट भण्डार भरे हैं, किसी वस्तुकी बांछा नाहीं। अयोध्याविषै दरिद्रताका नाश भया। राम लक्ष्मणके प्रतापरूप सूर्य करि फूल गए हैं मुख कमल जिनके, ऐसे अयोध्याके नर नारी प्रशंसा करते भए। अर अनेक सिलावट विद्याधर महा चतुर आयकर रत्न स्वर्णमई मन्दिर बनावते भए। अर भगवान्के चैत्यालय महामनोग्य अनेक बनाये मानों विंध्याचलके शिखर ही हैं। हजारनि स्तम्भनिकर मंडित नाना प्रकारके मंडप रचे, अर रत्ननिकरि जडित तिनके द्वार रचे। तिन मंदिरनि पर ध्वजानिकी पंक्ति फरहरे हैं। तोरणनिके समूह तिन कर शोभायमान जिन मंदिर रचे गिरिनिके शिखर समान ऊंचे, तिनविषै महा उत्सव होते भए। अनेक आश्चर्य कर भरी अयोध्या होती भई, लंकाकी शोभाकूं जीतनहारी। संगीतकी ध्वनि कर दशों दिशा शब्दायमान भई, कारी घटा समान वन उपवन सोहते भए। तिनविषै नाना प्रकारके फल फूल, तिन पर भ्रमर गुंजार करै हैं। समस्त दिशानिविषै वन उपवन ऐसे सोहते भए मानों नन्दनवन ही हैं। अयोध्या नगरी बारह योजन लम्बी, नव योजन चौडी अतिशोभायमान भासती भई। सोलह दिनमें विद्याधर शिलावटनिने ऐसी बनाई जाका सौ वर्ष तक वर्णन भी न किया जाय। तहां वापीनिके रत्नस्वर्णके सिवान, अर सरोवरनिके रत्नके तट, तिनविषै कमल फूल रहे हैं, ग्रीष्मविषै सदा भरपूरही रहैं। तिनके तट, भगवानके मंदिर, अर वृक्षनिकी पंक्ति शोभाकू धरैं; स्वर्गपुरी समान नगरी निरमापी। सो बलभद्र नारायण लंकासूं अयोध्याकी ओर गमनकूं उद्यमी भए। गौतमस्वामी कहै हैं—हे श्रेणिक! जिस दिनसे नारदके मुखसे राम लक्ष्मणने मातानिकी वार्ता सुनी ताही दिनसे सब बात भूल गए। दोनों मातानिहीका ध्यान करते भए। पूर्व जन्मके पुण्य करि ऐसे पुत्र पाइये। पुण्यके प्रभाव करि सर्व स्तुतिकी सिद्धि होवै है। पुण्य कर क्या न होय? इसलिए हे प्राणी हो! पुण्यविषै तत्पर होहु, जाकरि

शोकरूप सूर्यका आताप न होय।

इति श्रीरविषेणाचार्य विरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रंथ ताकी भाषावचनिकाविषै अयोध्या नगरीका वर्णन करनेवाला इक्यासीवां पर्व पूर्ण भया ॥ ८१ ॥

अथानन्तर सूर्य उदय होते ही बलभद्र नारायण पुष्पकनामा विमानविषै चढ़कर अयोध्याकू गमन करते भए। नानाप्रकारके वाहननिपर आरूढ़ विद्याधरनिके अधिपति, राम लक्ष्मणकी सेवाविषै तत्पर, परिवार सहित संग चाले। छत्र अर ध्वजानिकरि रोकी है सूर्यकी प्रभा जिन्होंनें, आकाशमें गमन करते दूरसे पृथ्वीकूं देखते जाय हैं। पृथ्वी गिरि नगर बन उपवनादि कर शोभित लवण समुद्र कूं उलंघनकरि विद्याधर हर्षके भरे लीला सहित गमन करते आगे आए। कैसा है लवण समुद्र ? नाना प्रकारके जलचरजीवनिके समूहकरि भरचा है। रामके समीप सीता सती अनेक गुणनिकरि पूर्ण मानों साक्षात् लक्ष्मी ही है सो सुमेरु पर्वतकूं देखकरि रामकूं पूछती भई–हे नाथ ! यह जम्बूद्वीपके मध्य अत्यन्त मनोज्ञ स्वर्ण कमल समान कहा दीखै है ? तब राम कहते भए हे देवी ! यह सुमेरु पर्वत है। जहां देवाधिदेव श्रीमुनिसुव्रतनाथका जन्माभिषेक इन्द्रादिक देवनिने किया। कैसे हैं देव ? भगवानके पांचों कल्याणकविषै जिनके अति हर्ष है। यह सुमेरु रत्नमई ऊंचे शिखरनिकरि शोभित जगतविषै प्रसिद्ध है। अर बहुरि आगे आयकर कहते भए यह दंडकबन है जहां लंकापतिने तुमकूं हरी अर अपना अकाज किया। या वन विषैं चारण मुनिकूं हमने पारणा कराया था। याके मध्य यह सुन्दर नदी है। अर हे सुलोचने ! यह वंशस्थल पर्वत जहां देशभूषण कुलभूषणका दर्शन किया, ताही समय मुनिन-कूं केवल उपज्या। अर हे सौभाग्यवती ! कल्याणरूपिणी ! यह बालखिल्यका नगर जहां लक्ष्मणने कल्याणमाला पाई। अर यह दशांग नगर जहां रूपवतीका पिता वज्रकर्ण परम श्रावक राज्य करे।
बहुरि जानकी पृथ्वीपतिकूं पूछती भई–हे कांत ! यह नगरी कौन जहां विमान समान घर इन्द्रपुरी

से अधिक शोभै है ? अबतक यह पुरी मैंने कबहू न देखी। ऐसे जानकीके वचन सुन जानकीनाथ अवलोकनकरि कहते भए–हे प्रिये ! यह अयोध्यापुरी विद्याधर सिलावटोंने बनाई है लंकापुरीकी ज्योतिकी जीतनहारी ।

बहुरि आगे आए। तब रामका विमान सूर्यके विमान समान देख,भरत महा हस्ती पर चढ़े,अति आनंद के भरे, इन्द्र समान विभूतिकरि युक्त, सन्मुख आए। सर्वदिशा विमाननिकर आच्छादित देखी। भरत कूं आवता देख राम लक्ष्मणने पुष्पक विमान भूमिविषै उतारा। भरत गजसे उतर निकट आया, स्नेहका भरा दोऊ भाईनिकूं प्रणाम करि अर्घपाद्य करता भया। अर ये दोनों भाई विमानसे उतरि भरतसूं मिले, उरसे लगाय लिया, परस्पर कुशल वार्ता पूछी। बहुरि भरतकूं पुष्पक विमानविषै चढ़ाय लीया, अर अयोध्याविषै प्रवेश किया। अयोध्या रामके आगमनकरि अति सिंगारी है, अर नाना प्रकारकी ध्वजा फरहरे हैं। नानाप्रकारके विमान अर नानाप्रकारके रथ, अनेक हाथी, अनेक घोड़े तिनकरि मार्गमें अवकाश नाहीं। अनेक प्रकार वादित्रनिके समूह बाजते भए, शंख, झांझ, भेरी, ढोल, धूकल, इत्यादि वादित्रोंका कहां लग वर्णन करिए,महा मधुर शब्द होते भए। ऐसे ही वादित्रोंके शब्द, ऐसी ही तुरंगोंकी हींस, ऐसी ही गजोंकी गर्जना, सामन्तोंके अट्टहास, मायामई सिंह व्याघ्रादिकके शब्द,ऐसे ही वीणा बांसुरीनिके शब्द तिनकर दशोंदिशा व्याप्त भई। बन्दीजन विरद बखाने हैं, नृत्यकारिणी नृत्य करै है, भांड नकल करै हैं,नट कला करै हैं। सूर्यके रथ समान रथ तिनके चित्राकार विद्याधर मनुष्य पशुनिके नाना शब्द, सो कहां लग वर्णन एरिए ? विद्याधरनिके अधिपतिनिने परम शोभा करी।
दोनों भाई महा मनोहर अयोध्याविषै प्रवेश करते भए। अयोध्या नगरी स्वर्गपुरी समान, राम लक्ष्मण इन्द्र प्रतीन्द्र समान, समस्त विद्याधर देव समान, तिनका कहां लग वर्णन करिए। श्रीरामचन्द्रकूं देख प्रजारूप समुद्रविषै आनन्दकी ध्वनि बढ़ती भई। भले २ पुरुष अर्घ्यपाद्य करते भए, सोई तरंग भई। पैंड पैंडविषै जगतकरि पूज्यमान दोनों वीर महाधीर तिनको समस्त जन आशीर्वाद देते भए–

है देव ! जयवंत होवो, वृद्धिकू प्राप्त होवहु, चिरंजीव होवहु । नांदो, विरधो । या भांति आसीस देते भए । अर अति ऊँचे विमान समान मन्दिर तिनके शिखरविषै तिष्ठती सुन्दरी, फूल गए हैं नेत्रकमल जिनके, वे मोतिनिके अक्षत डारती भई । सम्पूर्ण पूर्णमासीके चन्द्रमासमान राम कमलनेत्र, अर वर्षाकी घटा समान लक्ष्मण, शुभ लक्षण तिनके देखिवेकू नर नारी अनुरागी भए । अर समस्त कार्य तजि झरोखोंविषै बैठी नारीजन निरखे हैं सो मानों कमलोंके वन फूल रहे हैं । अर स्त्रीनिके परस्पर संघट्टकर मोतिनके हार टूटे, सो मानों मोतिनकी वर्षा होय है । स्त्रीनिके मुखसे ऐसी ध्वनि निकसै–ये श्रीराम जाके समीप राजा जनककी पुत्री सीता बैठी, जाकी माता राणी विदेहा हैं, अर श्रीरामने साहसगति विद्याधर मारा–वह सुग्रीवका आकार धर आया हुता, विद्याधरनिविषै दैत्य कहावै । अर यह लक्ष्मण रामका लघुवीर, इन्द्र तुल्य पराक्रम, जानें लंकेश्वरकू चक्रकर हता । अर यह सुग्रीव जाने रामसूं मित्रता करी । अर भामंडल सीताका भाई जिसको जन्मसू ही देव हर लेगया हुता, बहुरि दयाकर छांड्या सो राजा चन्द्रगतिके पल्या, आकाशसू वनविषै गिरा, राजाने लेकर राणी पुष्पवती कू सौंप्या । देवोंने काननविषै कुण्डल पहिराकर आकाशसे डाल्या सो कुण्डलकी ज्योतिकर चंद्रसमान भास्या, तातैं भामण्डल नाम धरचा । अर राजा चन्द्रोदयका पुत्र विराधित, अर यह पवनका पुत्र हनुमान कपिध्वज । या भांति आश्चर्यकर युक्त नगरकी नारी वार्ता करती भई ।

अथानन्तर राम लक्ष्मण राजमहिलविषै पधारे । मन्दिरके शिखर तिष्ठती दोनों माता पुत्रनिके स्नेहविषै तत्पर, जिनके स्तनसे दुग्ध झरे, महा गुणनिकी धरणहारी कौशिल्या, सुमित्रा अर केकई, सुप्रभा चारों माता मंगलविषै उद्यमी पुत्रोंके समीप आईं । राम लक्ष्मण पुष्पक विमानसे उतरि मातानि-सूं मिलें । माताओंकू देख हर्षकू प्राप्त भए, कमल समान नेत्र दोनों भाई लोकपालसमान हाथ जोड़, नम्रीभूत होय, अपनी स्त्रियोंसहित मातानिकू प्रणाम करते भए । वे चारों ही माता अनेक प्रकार आसीस देती भईं । तिनकी असीस कल्याणकी करणहारी है । अर चारोंही माता राम लक्ष्मण

को उरसे लगाय परम सुखकूं प्राप्त भई। उनका सुख वे ही जाने, कहिवेविषै न आवे। बारम्बार उरसे लगाय सिरपर हाथ धरती भई। आनन्दके अश्रुपात करि पूर्ण हैं नेत्र जिनके, परस्पर माता पुत्र कुशलक्षेम सुख दुखकी वार्ता पूछि परम संतोषकूं प्राप्त भए। माता मनोरथ करतीं हुतीं। सो हे श्रेणिक! बांछासे अधिक मनोरथ पूर्ण भए। वे माता योधावोंकी जननहारी, साधुओंकी भक्त, जिनधर्म विषै अनुरक्त, सुन्दरचित्त, बेटावोंकी बहू सैकड़ों तिनको देखि चारों ही अति हर्षित भई। अपने योधा पुत्र तिनके प्रभाव करि पूर्व पुण्यके उदयकरि अति महिमा संयुक्त जगतविषैं पूज्य भईं। राम लक्ष्मणका सागरांपर्यंत कंटक रहित पृथ्वीविषैं एक छत्र राज्य भया। सबपर यथेष्ट आज्ञा करते भए। राम लक्ष्मणका अयोध्याविषैं आगमन अर माताओंसे तथा भाइयोंसे मिलाप–यह अध्याय जो पढ़े, सुनै, शुद्ध है बुद्धि जाकी, सो पुरुष मनवांछित सम्पदाकूं पावै, पूर्ण पुण्य उपार्जे। शुभमति एक ही नियम दृढ़ होय भावनकी शुद्धतासे करे तो अतिप्रतापको प्राप्त होय, पृथ्वीमें सूर्य समान प्रकाशकूं करै। तातैं अव्रत तज नियमादिक धारण करो।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रन्थ ताकी भाषावचनिकाविषैं अयोध्या विषैं राम लक्ष्मण का आगमन वर्णन करनेवाला बियासीवां पर्व पूर्ण भया॥ ८२॥

अथानन्तर राजा श्रेणिक नमस्कार कर गौतम गणधरकूं पूछता भया, हे देव! श्रीराम लक्ष्मण की लक्ष्मीका विस्तार सुननेकी मेरे अभिलाषा है। तब गौतमस्वामी कहते भए–हे श्रेणिक! राम लक्ष्मण भरत शत्रुघन इनका वर्णन कौन करि सके? तथापि संक्षेपसे कहे हैं। राम लक्ष्मणके विभव का वर्णन–हाथी घरके बियालीस लाख, अर रथ एते ही, घोड़े नौ कोटि, प्यादे ब्यालीस कोटि, अर तीन खण्डके देव विद्याधर सेवक, रामके रत्न चार–हल, मूशल, रत्नमाला गदा, अर लक्ष्मणके सात संख, चक्र, गदा, खड्ग, दण्ड, नागशय्या, कौस्तुभमणि। राम लक्ष्मण दोनों ही वीर महाधीर धनुष

धारी, अर तिनका घर लक्ष्मीका निवास, इन्द्रके भवन तुल्य ऊंचे दरवाजे, अर चतुश्शाल नामा कोट,
महा पर्वतके शिखर समान ऊंचा, अर वैजयन्ती नामा सभा महामनोज्ञ, अर प्रसावहनामा अत्यन्त
उत्तंग दशों दिशाका अवलोकनका गृह, अर विंध्याचलपर्वत सारिखा वर्धमानक नामा नृत्य देखिवेका
गृह, अर अनेक सामग्रीसहित कार्य करनेका गृह, अर कूकड़ेके अंडे समान महा अद्भुत शीतकालविषै
सोवनेका गर्भगृह, अर ग्रीष्मविषै दुपहरीके विराजनेका धारा मंडपगृह, इकथम्भा, महामनोहर, अर
राणियोंके घर रत्नमई, महा सुन्दर, दोनों भाइयोंकी सोयवेकी शय्या, जिनके सिंहोंके आकार पाए,
पद्मरागमणिके अति सुन्दर। अम्भोदकांड नामा विजुरीकासा चमत्कार धरे वर्षा ऋतुविषै पौढवेका
महिल, अर महाश्रेष्ठ उगते सूर्य समान सिंहासन, अर चन्द्रमा तुल्य उज्ज्वल चमर, अर निशाकर
समान उज्ज्वल छत्र, अर महा सुन्दर विषमोचक नाम पावड़ी तिनके प्रभावसे सुखसे आकाशविषै गमन
करें, अर अमोलिक वस्त्र, अर महा दिव्य आभरण, अभेद्य बक्तर, महामनोहर मणियोंके कुण्डल,
अर अमोघ, गदा, खड्ग, कनक बाण अनेक शस्त्र, महासुन्दर महारणके जीतनहारे, अर पचास लाख
हल, कोटिसे अधिक गाय, अक्षय भण्डार, अर अयोध्या आदि अनेक नगर, जिनविषै न्यायकी प्रवृत्ति,
प्रजा सब सुखी, सम्पदाकर पूर्ण, अर महा मनोहर वन उपवन नानाप्रकार फल पुष्पोंकर शोभित,
अर महा सुन्दर स्वर्ण रत्नमई सिवाणोंकर शोभित क्रीडा करिवे योग्य वापिका, अर पुर तथा ग्रामों
विषै लोक अति सुखी, जहां महिल अति सुन्दर। अर किसाणोंको किसी भांतिका दुख नाहीं, जिनके
गाय, भैंसोंके समूह, सब भांतिके सुख। अर लोकपालों जैसे सामंत अर इन्द्रतुल्य विभवके धरणहारे
महातेजवंत अनेक राजा सेवक। अर रामके स्त्री आठहजार, अर लक्ष्मणके स्त्री देवांगना समान
सोलह हजार, जिनके समस्त सामग्री समस्त उपकरण मनवांछित सुखके देनेहारे। श्रीरामने भगवान
के हजारों चैत्यालय कराए जैसे हरिषेण चक्रवर्तीने कराए थे। वे भव्यजीव सदापूजित महाऋद्धिके
निवास देश ग्राम नगर वन गृह गली सर्व ठौर ठौर जिनमन्दिर करावते भए, सदा सर्वत्र धर्मकी कथा,

लोक अतिसुखी, सुकोशल देशके मध्य इन्द्रपुरी तुल्य अयोध्या, जहां अति उतंग जिनमंदिर जिनका वर्णन किया न जाय। अर क्रीडा करवेके पर्वत मानों देवोंके क्रीडा करिवेके पर्वत हैं,प्रकाशकर मंडित मानों शरदके बादर ही हैं। अयोध्याका कोट अति उतंग,समुद्रकी वेदिकातुल्य, महा शिखरकर शोभित, स्वर्णरत्नोंका समूह अपनी किरणोंकर प्रकाश किया है आकाशविषै जिसने, जिसकी शोभा मनसे भी अगोचर, निश्चयसेती यह अयोध्या नगरी पवित्र मनुष्योंकरि भरी सदा ही मनोग्य हुती। अब श्री रामचन्द्रने अति शोभित करी। जैसैं कोई स्वर्ग सुनिये है जहां महा सम्पदा है, मानों राम लक्ष्मण स्वर्गसे आए। सो मानों सर्व सम्पदा ले आए। आगे अयोध्या हुती तातैं रामके पधारैं अति शोभाय-मान भई। पुण्यहीन जीवोंको जहांका निवास दुर्लभ, अपने शरीरकर, तथा शुभ लोकोंकर, तथा स्त्री धनादि कर रामचन्द्रने स्वर्ग तुल्य करी। गावँ ठौर रामका यश, परन्तु सीताके पूर्व कर्मके दोषकर मूढ़ लोग यह अपवाद करैं—देखो विद्याधरोंका नाथ रावण उसने सीता हरी—सो राम बहुरि ल्याये; अर गृहविषै राखी। यह कहा योग्य ? राम महा ज्ञानी, बड़े कुलीन, चक्री, महा शूरवीर, तिनके घर विषै जो यह रीति तो और लोकोंकी क्या बात ? इस भांति सब जन वार्ता करैं।

अथानन्तर स्वर्ग लोककूं लज्जा उपजावे ऐसी अयोध्यापुरी तहां भरत इन्द्रसमान भोगनिकर भी रति न मानते भए। अनेक स्त्रीनिके प्राणवल्लभ सो निरन्तर राज्य लक्ष्मीसे उदास, सदा भोगोंकी निंदा ही करैं। भरतका मन्दिर अनेक मन्दिरनिकर मण्डित, नानाप्रकारके रत्ननिकर निर्मापित, मोतिनिकी मालाकर शोभित, फूल रहे हैं वृक्ष जहां, अनेक आश्चर्यका भरा, सब ऋतुके विलासकर युक्त, जहां वीण मृदंगादिक अनेक वादित्र बाजैं, देवांगना समान अतिसुन्दर स्त्रीजनोंकर पूर्ण, जाके चौगिरद मदोन्मत्त हाथी गाजैं, श्रेष्ठ तुरंग हींसैं, गीत नृत्य वादित्रनिकरि महामनोहर, रत्नोंके उद्योत करि प्रकाशरूप, महारमणीक क्रीड़ाका स्थानक, जहां देवोंको रुचि उपजै, परन्तु भरत संसारसे भय-भीत, अति उदास, उसे तहां रुचि नाहीं—जैसे पारधीकर भयभीत जो मृग सो किसी ठौर विश्राम न

लहैं। भरत ऐसा विचार करै कि मैं यह मनुष्य देह महा कष्टसे पाई सो पानीके बुदबुदावत् क्षणभंगुर, अर यह यौवन झागोंके पुंज समान अति असार दोषोंका भरा, अर ये भोग अति विरस। इनविषै सुख नाहीं। यह जीतव्य स्वप्न समान, अर कुटुम्बका सम्बन्ध जैसें वृक्षनिपर पक्षियोंका मिलाप रात्रि कूं होय प्रभात ही दशों दिशाकूं उड़ जावें ऐसा जान जो मोक्षका कारण धर्म न करै सो जराकर जर्जरा होय शोकरूप अग्निकर जरै। यह नव यौवन मूढ़ोंकूं वल्लभ, याविषै कौन विवेकी राग करे? कदाचित न करै। यह अपवादके समूहका निवास, संध्याके उद्योत समान विनश्वर, अर यह शरीररूपी यन्त्र नाना व्याधिके समूहका घर पिताके वीर्य माताके रुधिरसे उपजा, याविषै कहा रति? जैसे ईंधनकर अग्नि तृप्त न होय, अर समुद्र जलसे तृप्त न होय तैसें इन्द्रियनिके विषयनिकर तृप्ति न होय। यह विषय अनादिसे अनन्तकाल सेये परन्तु तृप्तिकारी नाहीं। यह मूढ़ जीव कामविषै आसक्त भला बुरा न जानै, पतंग समान विषयरूप अग्निविषै पड़े, पापी महा भयंकर दुःखकूं प्राप्त होय। यह स्त्रीनिके कुच मांसके पिण्ड, महाबीभत्स गलगंड समान तिनविषै कहा रति? अर स्त्रीनिका मुखरूप बिल, दंतरूप कीड़ोंकर भरा, ताम्बूलके रसकरि लाल छुरीके घाव समान, ताविषै कहा शोभा? अर स्त्रीनिकी चेष्टा वायु विकार समान विरूप, उन्मादकर उपजी, उसविषै कहा प्रीति? अर भोग रोग समान हैं, महा खेदरूप दुःखके निवास, इनविषै कहा विलास? अर यह गीत वादित्रोंके नाद रुदन समान, तिनविषै कहा प्रीति? रुदनकर भी महल गुमट अर गानकर भी गाजें। नारियोंका शरीर मल मूत्रादिककरि पूर्ण, चर्मकर वेष्टित। याके सेवनविषै कहा सुख होय? विष्टाके कुम्भ तिनका संयोग अतिबीभत्स अति लज्जाकारी। महा दुःखरूप नारियोंके भोग उनविषै मूढ़ सुख मानै। देवनिके भोग इच्छा उत्पन्न होते ही पूर्ण होय तिनकरि भी जीव तृप्त न भया तो मनुष्योंके भोगोंकरि कहा तृप्त होय? जैसैं दूभकी अणीपर जो ओसकी बूंद ताकर कहा तृष्णा बुझै? अर जैसे ईंधनका बेचनहारा सिरपर भार लाय दुखी होय तैसे राज्यके भारका धरणहारा दुखी होय। हमारे बड़ेनिविषै एक

राजा सौदास उत्तम भोजनकर तृप्त न भया। अर पापी अभक्ष्यका आहारकरि राज्यभ्रष्ट भया। जैसे गंगाके प्रवाहविषै मांसका लोभी काग मृतक हाथीके शरीर चूसता तृप्त न भया, समुद्रविषै डूब मुवा, तैसे यह विषयाभिलाषी भवसमुद्रविषै डूबे हैं। यह लोक मींडक समान मोहरूप कीचविषै मग्न, लोभरूप सर्पके ग्रसे नरकविषै पड़े हैं। ऐसे चिन्तवन करते शांतचित्त भरतको कईएक दिवस अति विरससे बीते। जैसे सिंह महा समर्थ पींजरेविषै पड़ा खेदखिन्न रहे, ताके वनविषै जायवेकी इच्छा, तैसें भरत महाराजके महाव्रत धारिवेकी इच्छा। सो घरविषै सदा उदास ही रहै। महाव्रत सर्व दुःख का नाशक। एक दिवस वह शांतचित्त घर तजिवेको उद्यमी भया। तब केकईके कहेसे राम लक्ष्मण ने थाम्भा, अर महा स्नेहकर कहते भए, हे भाई! पिता वैराग्यकूं प्राप्त भए, तब तोहि पृथ्वीका राज्य दिया, सिंहासन पर बैठाया, सो तू हमारा सर्व रघुवंशियोंका स्वामी है, लोकका पालन कर। यह सुदर्शनचक्र, यह देव अर विद्याधर तेरी आज्ञाविषै हैं। या धराको नारी समान भोग। मैं तेरे सिर पर चन्द्रमा समान उज्ज्वल छत्र लिये खड़ा रहूं। अर भाई शत्रुघ्न चमर ढारे, अर लक्ष्मण सा सुन्दर तेरे मंत्री, अर तू हमारा वचन न मानेगा तो मैं बहुरि विदेश उठ जाऊंगा, मृगोंकी न्याईं वन उपवनविषै रहूंगा। मैं तो राक्षसोंका तिलक जो रावण ताहि जीत तेरे दर्शनके अर्थ आया। अब तू निष्कंटक राज्य कर। पीछे तेरे साथ मैं भी मुनिव्रत आदरूंगा। इस भांति महा शुभचित्त श्रीराम भाई भरतसूं कहते भए।

तब भरत महानिस्पृह विषयरूप विषसे अतिविरक्त कहता भया—हे देव! मैं राज्य सम्पदा तुरंत ही तजा चाहूं हूं, जिसको तजकरि शूरवीर पुरुष मोक्ष प्राप्त भए। हे नरेन्द्र! अर्थ काम महा दुःख के कारण, जीवोंके शत्रु, महापुरुष करि निंद्य हैं, तिनको मूढ़ जन सेवै हैं। हे हलायुध! यह क्षणभंगुर भोग तिनमें मेरी तृष्णा नाहीं। यद्यपि स्वर्ग लोक समान भोग तुम्हारे प्रसाद करि अपने घरमें हैं, तथापि मुझे रुचि नाहीं। यह संसार सागर महा भयानक है, जहां मृत्युरूप पातालकुण्ड महा विषम है,

अर जन्मरूप कल्लोल उठे हैं, अर राग द्वेषरूप नाना प्रकारके भयंकर जलचर हैं, अर रति अरतिरूप क्षार जलकर पूर्ण हैं। जहां शुभ अशुभ रूप चोर विचरें हैं। सो मैं मुनिव्रतरूप जहाजविषै बैठकरि संसारसमुद्रकू तिरा चाहूं हूं। हे राजेन्द्र ! मैं नानाप्रकार योनिविषै अनन्त काल जन्म मरण किए, नरक निगोदविषै अनन्त कष्ट सहे, गर्भ वासादिविषै खेदखिन्न भया। यह वचन भरतके सुन बड़े बड़े राजा आंखनिविषै आंसू डारते भए। महा आश्चर्यकू प्राप्त होय गद्‌गद वाणीसे कहते भए–हे महाराज ! पिताके वचन पालो, कईयक दिन राज्य करो। अर तुम इस राजलक्ष्मीकू चंचल जान उदास भए हो तो कईएक दिन पीछे मुनि हूजियो। अबार तो तुम्हारे बड़े भाई आए हैं तिनको साता देहु। तब भरतने कही मैं तो पिताके वचन प्रमाण बहुत दिन राज्यसम्पदा भोगी, प्रजाके दुख हरे, पुत्रकी न्याईं प्रजाका पालन किया, दान पूजा आदि गृहस्थके धर्म आदरे, साधुवोंकी सेवा करी। अब जो पिता ने किया सो मैं किया चाहूं हूं। अब तुम इस वस्तुको अनुमोदना क्यों न करो ? प्रशंसायोग्य वस्तुविष कहा विवाद ? हे श्रीराम ! हे लक्ष्मण ! तुमने महा भयंकर युद्धमें शत्रुवोंको जीत अगले बलभद्र वासुदेवकी न्याईं लक्ष्मी उपार्जी, सो तुम्हारे लक्ष्मी और मनुष्योंकैसी नाहीं। तथापि राजलक्ष्मी मुझे न रुचै, तृप्ति न करे, जैसे गंगादि नदियां समुद्रकू तृप्त न करैं। इसलिए मैं तत्वज्ञानके मार्गविषै प्रवर्तूंगा। ऐसा कहकरि अत्यन्त विरक्त होय राम लक्ष्मणकू बिना पूछे ही वैराग्यकूं उठ्या जैसैं आगे भरत चक्रवर्ती उठे। यह मनोहर चालका चलनहारा मुनिराजके निकट जायवेकूं उद्यमी भया। तब अति स्नेहकरि लक्ष्मणने थांभा, भरतके करपल्लव ग्रहे। लक्ष्मण खड़ा, ताही समय माता केकई आंसू डारती आई अर रामकी आज्ञासे दोऊ भाईनिकी राणी सबही आई। लक्ष्मी समान है रूप जिनके, अर पवन कर चंचल जो कमल ता सामन हैं नेत्र जिनके, आय भरतको थांभती भईं तिनके नाम–

सीता, उर्वी, भानुमती, विशल्या, सुन्दरी ऐन्द्री, रत्नवती, लक्ष्मी, गुणमती, कांता, बंधुमती, भद्रा, कुबेरा, नलकूवरा, कल्याणमाला, चन्द्रकूणी, मदनोत्सवा, मनोरमा, प्रियनन्दा, चन्द्रकांता, कलावती,

रत्नस्थली, सरस्वती, श्रीकांता, गुणसागरा, पद्मावती, इत्यादि सब आईं, जिनके रूप गुणका वर्णन किया न जाय, मनको हरें आकार जिनके, दिव्य वस्त्र, अर आभूषण पहिरे, बड़े कुलविषैं उपजीं, सत्यवादनी, शीलवन्ती, पुण्यकी भूमिका, समस्त कालविषैं निपुण, सो भरतके चौगिर्द खड़ीं मानों चारों ओर कमलनिका वन ही फूल रहा है। भरतका चित्त राजसम्पदाविषैं लगायवेकूं उद्यमी अति आदर करि भरतकूं मनोहर वचन कहती भईं कि–हे देवर! हमारा कहा मानो, कृपा करहु, आज सरोवरनिविषैं जलक्रीडा करहु, अर चिंता तजहु। जा बातकरि तिहारे भाईयोंकूं खेद न होय सो करहु। अर तिहारी माताके खेद न होय सो करहु। अर हम तिहारी भावज हैं सो हमारी विनती अवश्य मानिये। तुम विवेकी विनयवान हो। ऐसा कहि भरतकूं सरोवर पर ले गईं। भरतका चित्त जलक्रीडासे विरक्त यह सब सरोवरविषैं पैठीं। वह विनयकरिसंयुक्त सरोवरके तीर ऊभा ऐसा सोहै मानों गिरिराज ही है। अर वे स्निग्ध सुगन्ध सुन्दर वस्तुनिकरि याके शरीरका विलेपन करती भईं। अर नानाप्रकार जलकेलि करती भईं। यह उत्तम चेष्टाका धारक काहूपर जल न डारता भया। बहुरि निर्मल जलसे स्नानकरि सरोवरके तीराजे जिनमंदिर वहां भगवानकी पूजा करता भया। उस समय त्रैलोक्यमण्डन हाथी, कारी घटा समान है आकार जाका, सो गजबंधन तुड़ाय भयंकर शब्द करता निज आवासथकी निकसा, अपने मद झरिवेकरि चौमासे कासा दिन करता संता। मेघ गर्जना समान ताका गाज सुनकर अयोध्यापुरीके लोग भयकरि कम्पायमान भए। अर अन्य हाथियोंके महावत अपने २ हाथीको ले दूर भागे। अर त्रैलोक्यमंडन गिरिसमान नगरका दरवाजा भंग कर जहां भरत पूजा करते थे वहां आया। तब राम लक्ष्मणकी समस्त राणियें भयकरि कम्पायमान होय भरतके शरण आईं, अर हाथी भरतके नजीक आया तब समस्त लोक हाहाकार करते भए। अर इनकी माता अति विह्वल भईं, विलाप करती भईं, पुत्रके स्नेहविषैं तत्पर महा शंकावान भईं। अर राम लक्ष्मण गजबन्धनविषैं प्रवीण गजके पकड़नेकूं उद्यमी भए। गजराज महा प्रबल सामान्य जनोंसे देखा न जाय, महा भयंकर शब्द करता अति तेजवान

नागफांसि कर भी रोका न जाय। अर महा शोभायमान, कमल नयन भरत निर्भय स्त्रियोंके आगे तिनके बचायवेकूं खड़े। सो हाथी भरतकूं देखकर पूर्वभव चितार शांतचित्त भया। अपनी सूण्ड शिथिल कर महा विनयवान भया। भरतके आगे ऊभा। भरत याकूं मधुरवाणी कर कहते भए अहो गज! तू कौन कारणकरि क्रोधकूं प्राप्त भया? ऐसे भरतके वचन सुन अत्यन्त शांतचित्त, निश्चल भया। सौम्य है मुख जाका, ऊभा भरतकी ओर देखे है। भरत महाशूरवीर शरणागतप्रतिपालक ऐसे सोहैं जैसे स्वर्गविषै देव सोहैं। हाथीकूं जन्मांतरका ज्ञान भया सो समस्त विकारसे रहित होय गया। दीर्घ निश्वास डारे। हाथी मनविषै विचारै है—यह भरत मेरा परममित्र है, छठे स्वर्गविषै हम दोनों एकत्र थे। यह तो पुण्यके प्रसाद करि वहांसे चयकर उत्तम पुरुष भया, अर मैंने कर्मके योगसे तिर्यंचकी योनि पाई। कार्य अकार्यके विवेकसे रहित महानिंद्य पशुका जन्म है। 'मैं कौन योगसे हाथी भया, धिक्कार इस जन्मको। अब वृथा क्या शोच? ऐसा उपाय करूं जिससे आत्मकल्याण होय अर बहुरि संसार भ्रमण न करूं। शोच कीए कहा? अब सर्व प्रकार उद्यमी होय भवदुखसे छूटिवेका उपाय करूं। चितारे हैं पूर्वभव जाने, गजेन्द्र अत्यन्त विरक्त पापचेष्टासे पराङ्गमुख होय पुण्यके उपार्जनविषै एकाग्रचित्त भया। यह कथा गौतमस्वामी राजा श्रेणिकसूं कहे हैं—हे राजन्! पूर्व जीवने अशुभ कर्म किए वे संतापकूं उपजावैं। तातैं हे प्राणी हो! अशुभ कर्मको तजि दुर्गतिके गमनसे छूटहु। जैसे सूर्य होते नेत्रवान मार्गविषै न अटके तैसे जिनधर्मके होते विवेकी कुमार्गविषै न पड़े, प्रथम अधर्मको तज धर्मको
आदरैं, बहुरि शुभ अशुभसे निवृत्त होय आत्म धर्मसे निर्वाणकूं प्राप्त होवैं।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महा पद्मपुराण संस्कृतग्रन्थ, ताकी भाषावचनिकाविषै त्रैलोक्यमंडन हाथीकूं जातिस्मरण होय उपशांत वर्णन करनेवाला तिरासीवां पर्व पूर्ण भया॥ ८३॥

अथानन्तर वह गजराज महा विनयवान धर्मध्यानका चितवन करता राम लक्ष्मणने देखा, अर

धीरे धीरे इसके समीप आए, कारी घटा समान है आकार जाका। सो मिष्ट वचन बोल पकड्या अर निकटवर्ती लोकनिकूं आज्ञा करि गजकूं सर्व आभूषण पहिराए। हाथी शांतचित्त भया। तब नगरके लोगोंकी आकुलता मिटी। हाथी ऐसा प्रबल जाको प्रचण्ड गति विद्याधरोंके अधिपतिसे न रुके। समस्त नगरविषै लोक हाथीकी वार्ता करैं हैं। यह त्रैलोक्यमंडन रावणका पाट हस्ती है। याके बल समान और नाहीं। राम लक्ष्मणने पकड़ा। विकार चेष्टाकूं प्राप्त भया था अब शांतचित भया। सो लोकोंके महा पुण्यका उदय है। अर घने जीवोंकी दीर्घ आयु। भरत अर सीता विशल्या हाथी पर चढ़े बड़ी विभूतिसे नगरविषै आये। अर अद्भुत वस्त्राभरणसे शोभित समस्त राणी नानाप्रकार वाहनों पर चढ़ी भरतको ले नगरविषै आईं। अर शत्रुघ्न भाई अश्व रथ पर आरूढ़, महा विभूति सहित महा तेजस्वी, भरतके हाथीके आगे आगे चला। नानाप्रकारके वादित्रनिके शब्द होते नन्दनवन समान वनसे वे सब नगरविषै आए, जैसे देव सुरपुरविषै आवैं। भरत हाथीसूं उतरि भोजनशालाविषै गए। साधुवोंकूं भोजन देय मित्र बांधवादि सहित भोजन किया, अर भावजोंकूं भोजन कराया। फिर लोक अपने अपने स्थानकूं गए। समस्त लोक आश्चर्यकूं प्राप्त भए। हाथी रूठा, फिर भरतके समीप खड़ा होय रह्या–सो सबोंको आश्चर्य उपजा। गौतम गणधर राजा श्रेणिकसे कहे हैं कि हे राजन्! हाथीके समस्त महावत राम लक्ष्मणपै आय प्रणामकरि कहते भए–कि हे देव! आज गजराजको चौथा दिन है कछू खाय न पीवे न निद्रा करै। सर्व चेष्टा तजि निश्चल ऊभा है। जिसदिन क्रोध किया था अर शांत भया। उसही दिनसे ध्यानारूढ़ निश्चल वरतै है। हम नानाप्रकारके स्तोत्रों कर स्तुति करैं हैं, अनेक प्रिय वचन कहैं हैं, तथापि आहार पाणी न लेय है। हमारे वचन कान न धरे। अपनी सूण्डको दांतोंविषै लिये मुद्रित लोचन ऊभा है, मानों चित्रामका गज है, जिसे देख लोकोंको ऐसा भ्रम होय है कि यह कृत्रिम गज है अथवा सांचा गज है। हम प्रिय वचन कहकर आहार दिया चाहे हैं सो न लेय। नानाप्रकारके गजोंके योग्य सुन्दर आहार उसे न रुचे। चिन्तावान सा ऊभा है, निश्वास डारे है, समस्त

शत्रुवोंके वेत्ता महा पंडित प्रसिद्ध गजवैद्योंके हाथ भी हाथीका रोग न आया। गंधर्व नानाप्रकारके गीत गावे हैं सो न सुने। अर नृत्यकारिणी नृत्य करैं हैं सो न देखे। पहिले नृत्य देखे था, गीत सुने था, अनेक चेष्टा करे था, सो सब तज्या। नानाप्रकारके कौतुक होय हैं सो दृष्टि न धरैं। मंत्रविद्या, औषधादिक अनेक उपाय किए सो न लगे। आहार विहार निद्रा जलपानादिक सब तजे, हम अति बिनती करे हैं सो न माने। जैसे रूठे मित्रको अनेक प्रकार मनाइये सो न माने। न जानिए इस हाथीके चित्तविषैं कहा है? काहू वस्तुसे काहू प्रकार रीझै नाहीं, काहू वस्तुपर लुभावे नाहीं। खिजाया संता क्रोध न करै, चित्राम कासा खड़ा है। यह त्रैलोक्यमंडन हाथी समस्त सेनाका शृंगार है, जो आपकूं उपाय करना होय सो करो। हम हाथीका सब वृत्तांत आपसे निवेदन किया। तब राम लक्ष्मण गजराजकी चेष्टा सुन अति चिंतावान भए। मनमें विचारैं हैं यह गजबन्धन तुडाय निसरा कौन प्रकारसे क्षमाकूं प्राप्त भया। अर आहार पानी क्यों न लेय? दोनों भाई हाथीका शोच करते भए।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रन्थ, ताकी भाषावचनिकाविषैं त्रिलोक्यमंडन हाथी का कथन वर्णन करनेवाला चौरासीवां पर्व पूर्ण भया॥ ८४॥

अथानन्तर गौतमस्वामी राजा श्रेणिकसूं कहै हैं—हे नराधिपति! ताही समय अनेक मुनिनि सहित देशभूषण कुलभूषण केवली, जिनका वंशस्थल गिरि ऊपर राम लक्ष्मणने उपसर्ग निवारा हुता, अर जिनकी सेवा करनेकरि गरुडेन्द्रने राम लक्ष्मणसे प्रसन्न होय उनको अनेक दिव्यशस्त्र दिए, जिनकर युद्धमें विजय पाई। ते भगवान केवली, सुर असुरनिकर पूज्य, लोक प्रसिद्ध अयोध्याके नन्दनवन समान महेन्द्रोदय नामा वनविषैं महा संघ सहित आय विराजे। तब राम लक्ष्मण भरत शत्रुघ्न दर्शनके अर्थ प्रभात ही हाथिनि पर चढ़ि जायवेकूं उद्यमी भए। अर उपजा है जातिस्मरण जाको ऐसा जो त्रैलोक्य मण्डन हाथी सो आगे आगे चला जाय है। जहां वे दोनों केवली कल्याणके पर्वत तिष्ठै हैं तहां देवनि

समान शुभचित्त नरोत्तम गये, अर कौशिल्या सुमित्रा कैकई सुप्रभा यह चारों ही माता साधु भक्ति विषै तत्पर, जिनशासनकी सेवक, स्वर्गनिवासिनी देविनि समान सैकड़ां राणीनिसे युक्त चलीं। अर सुग्रीवादि समस्त विद्याधर महाविभूति संयुक्त चले। केवलीके स्थानक दूरहीतैं देख रामादिक हाथीतैं उतर आगे गए। दोनों हाथ जोड़ प्रणामकर पूजा करी। आप योग्य भूमिविषै विनयतै बैठे, तिनके वचन समाधान चित्त होय सुनते भए। ते वचन वैराग्यके मूल रागादिक नाशक क्योंकि रागादिक संसारके कारण अर सम्यग्दर्शन ज्ञान चारित्र मोक्षका कारण है। केवलीकी दिव्यध्वनिविषै यह व्याख्यान भया—अणुव्रतरूप श्रावकका धर्म अर महाव्रत यतिका धर्म यह दोनोंही कल्याणके कारण हैं। यतिका धर्म साक्षात् निर्वाणका कारण अर श्रावकका धर्म परम्पराय मोक्षका कारण है। गृहस्थका धर्म अल्पारम्भ अल्प परिग्रहको लीए कछु सुगम है अर यतिका धर्म निरारम्भ निपरिग्रह अति कठिन, महा शूरवीरनिहीतैं सधै हैं। यह लोक अनादिनिधन जाका आदिअन्त नाहीं, ताविषै यह प्राणी लोभ कर मोहित नानाप्रकार कुयोनिविषै महादुःखकूं पावै है। संसारका तारक धर्म ही है। यह धर्म नामा परम मित्र जीवोंका महा हितु है। जिस धर्मका मूल जीवदयाकी महिमा कहिवेविषै न आवे ताके प्रसादसे प्राणी मनवांछित सुख पावै हैं। धर्म हीं पूज्य है। जे धर्मका साधन करें ते ही पंडित हैं। यह दयामूल धर्म कल्याणका कारण, जिनशासन बिना अन्यत्र नाहीं। जे प्राणी जिनप्रणीत धर्ममें लगैं ते त्रैलोक्यके अग्र जो परम धाम हैं वहां प्राप्त भये। यह जिनधर्म परम दुर्लभ है, या धर्मका मुख्यफल तो मोक्षही हैं, अर गौण फल स्वर्गविषै इन्द्रपद, अर पाताल विषै नागेन्द्रपद, पृथ्वीविषै चक्रवर्त्यादि नरेन्द्रपद यह फल है। इस भांति केवलीने धर्मका निरूपण किया। तब प्रस्ताव पाय लक्ष्मण पूछते भए, हे प्रभो! त्रैलोक्यमण्डन हाथी गज बन्धन उपाडि क्रोधकूं प्राप्त भया, बहुरि तत्काल शांत भाव कूं प्राप्त भया। सो कौन कारण? तब केवली देशभूषण कहते भए प्रथम तो यह लोकनिकी भीड़ देख मदोन्मत्तता थकी क्षोभकूं प्राप्त भया। बहुरि भरतकूं देख पूर्वभव चितार शांत भावकूं प्राप्त

भया। चतुर्थ कालके आदि या अयोध्याविषै नाभिराजाके मरु देवीके गर्भविषै भगवान ऋषभ उपजे। पूर्वभवविषै षोडश कारण भावना भाय त्रैलोक्यकूं आनन्दका कारण तीर्थंकर पद उपार्ज्या। पृथ्वी विषै प्रकट भए, इन्द्रादिक देवनिने जिनके गर्भ अर जन्मकल्याणक कीए। सो भगवान पुरुषोत्तम तीन लोक करि नमस्कार करिवे योग्य, पृथ्वीरूप पत्नीके पति भए। कैसी है पृथ्वी रूप पत्नी? विन्ध्याचल गिरि वेई हैं स्तन जाके, अर समुद्र है कटिमेखला जाकी। सो बहुत दिन पृथ्वीका राज्य कीया तिनके गुण केवली विना और कोई जानवे समर्थ नाहीं। जिनका ऐश्वर्य देख इन्द्रादिक देव आश्चर्यकूं प्राप्त भए।

एक समय नीलांजना नामा अप्सरा नृत्य करती हुती सो विलाय गई, ताहि देख प्रतिबुद्ध भए। ते भगवान स्वयं बुद्ध महामहेश्वर तिनकी लौकांतिक देवनिने स्तुति करी। ते जगत् गुरु भरत पुत्रकूं राज्य देय वैरागी भए। इन्द्रादिकदेवनिने तप कल्याणक किया, तिलक नामा उद्यानविषै महाव्रत धरे तबसे यह स्थान प्रयाग कहाया। भगवानने एक हजार वर्ष तप किया। सुमेरु समान अचल सर्वपरिग्रहके त्यागी, महातप करते भए। तिनके संग चार हजार राजा निकसे ते परीषह न सह सकनेकरि व्रत—भ्रष्ट भए, स्वेच्छाविहारी होय वन फलादिक भखते भए। तिनके मध्य मारीच दण्डीका भेष धरता भया। ताके प्रसंगसे सूर्योदय चन्द्रोदय राजा सुप्रभाके पुत्र राणी प्रल्हादनाकी कुक्षीविषै उपजे ते भी चारित्र भ्रष्ट भए। मारीचके मार्ग लागे कुधर्मके आचरणसूं चतुर्गति संसारमें भ्रमैं अनेक भवोंविषै जन्म मरण किया। बहुरि चन्द्रोदयका जीव कर्मके उदयसूं नागपुरनामा नगरविषै राजा हरिपतिके राणी मनोलताके गर्भविषै उपज्या, कुलंकर नामा कहाया। बहुरि राज्य पाया। अर सूर्योदयका जीव अनेक भव भ्रमण कर उसही नगरविषै विश्वनामा ब्राह्मण जिसके अग्निकुण्ड नामा स्त्री, उसके श्रुतिरति नामा पुत्र भया। सो पुरोहित पूर्व जन्मके स्नेहसे राजा कुलंकरको अतिप्रिय भया। एक दिन राजा कुलंकर तापसियोंके समीप जाय था सो मार्गविषै अभिनन्दन नामा मुनिका दर्शन भया। वे मुनि अवधिज्ञानी, सर्व लोकके हितू, तिन्होंने राजासे कही-तेरा दादा सर्प भया, सो तपस्वियोंके काष्ठ

मध्य तिष्ठे हैं । सो तापसी काष्ठ विदारेंगे सो तू रक्षा करियो । तब यह तहां गया जो मुनिने कही थी त्योंही दृष्टि पडी । इसने सर्प बचाया अर तापसियोंका मार्ग हिंसारूप जाण्या, तिनसे उदास भया, मुनि व्रत धारिवेकूं उद्यम किया । तब श्रुतिरति पुरोहित पापकर्मीने कही–हे राजन् ! तिहारे कुलविषैं वेदोक्त धर्म चला आया है, अर तापसही तिहारे गुरु हैं । तातैं तू राजा हरिपतिका पुत्र है तो वेद मार्गका ही आचरण कर, जिनमार्ग मत आचरै । पुत्रकूं राज देय वेदोक्त विधि कर तू तापसका व्रत धर, मैं तेरे साथ तप धरूंगा । या भांति पापी पुरोहित मूढ़मतिने कुलंकरका मन जिनशासनसे फेरचा, अर कुलंकर की स्त्री श्रीदामा, सो पापिनी परपुरुषासक्ता । उसने विचारी कि मेरी कुक्रिया राजाने जानी इसलिए तप धारै है, सो न जानिए तपधरै कै न धरै, कदाचित् मोहि मारे । तातैं मैं ही उसे मारूं । तब उसने विष देयकर राजा अर पुरोहित दोनों मारे । सो मरकर निकुंजिया नामा वनमें पशुघातक पाप से दोनों सुआ भए । बहुरि मींढक भए, मूसा भए, मोर भए, सर्प भए, कूकर भए, कर्मरूप पवनके प्रेरे तिर्यंच योनिविषैं भ्रमैं । बहुरि पुरोहित श्रुतिरतिका जीव हस्ती भया अर राजा कुलंकरका जीव मींढ़क भया । सो हाथीके पगतले दब कर मुवा । बहुरि मींढ़क भया सो सूखे सरोवरविषै कागने भख्या सो कूकड़ा भया, हाथी मर कर मार्जार भया । उसने कुक्कुट भखा, कुलंकरका जीव तीन जन्म कूकड़ा भया, सो पुरोहितके जीव मार्जारने भख्या । बहुरि ये दोनों मूसा, मार्जार, मच्छ भए सो धीवरने जालविषै पकड़ कुहाडनिसे काटे सो मुवे । दोनों मरकर राजगृही नगरविषै बव्हासनामा ब्राह्मण उसकी उल्का नामा स्त्रीके पुत्र भए । पुरोहितके जीवका नाम विनोद, राजा कुलंकरके जीवका नाम रमण । सो महा दरिद्री अर विद्यारहित । तब रमणने विचारी देशांतर जाय विद्या पढूं, तब घरसे निकसा, पृथ्वीविषै भ्रमता चारों वेद अर वेदोंके अंग पढ़े । बहुरि राजगृही नगरी आय पहुंचा । भाईके दर्शन की अभिलाषा, सो नगरके बाहिर सूर्य अस्त होय गया, आकाशविषै मेघपटलके योगसे अति अन्धकार भया, सो जीर्ण उद्यानके मध्य एक यक्षका मन्दिर तहां बैठा । अर याके भाई विनोदकी समिधा नामा

स्त्री सो महा कुशीला, एक अशोकदत्त नामा पुरुषसे आसक्त। सो तासे यक्षके मन्दिरका संकेत किया हुता सो अशोकदत्तकूं तो मार्गविषै कोटपालके किंकरने पकड्या अर विनोद खड्ग हाथविषै लिए अशोकदत्तके मारवेकूं यक्षके मन्दिर आया। सो जार समझि खड्गसे भाई रमणकूं मारा, अन्धकार विषै दृष्टि न पड्या सो रमण मुवा, विनोद घर गया। बहुरि विनोद भी मुवा सो दोनों अनेक भव धारते भए।

बहुरि विनोदका जीव तो सालवनविषैं आरण भैंसा भया अर रमणका जीव अंधा रीछ भया। सो दोनों दावानलविषै जरैं, मरकर गिरिवनविषै भील भए। बहुरि मरकर हिरण भए। सो भीलने जीवते पकड़े, दोनों अति सुन्दर सो तीसरा नारायण स्वयंभूति श्रीविमलनाथजीके दर्शनकूं जायकर पीछा आवे था उसने दोनों हिरण लिए अर जिनमन्दिरके समीप राखे। सो राजद्वारसे इनकूं मनवांछित आहार मिलै। अर मुनिनिके दर्शन करैं, जिनवाणीका श्रवण करैं। तिनविषै रमणका जीव जो मृग हुता सो समाधि मरणकर स्वर्गलोक गया अर विनोदका जीव जो मृग हुता वह आर्तध्यानसे तिर्यंचगतिविषै भ्रम्या। बहुरि जम्बूद्वीपके भरतक्षेत्रविषै कम्पिल्यानगर तहां धनदत्त नामा वणिक बाईस कोटि दीनारका स्वामी भया। चार टांक स्वर्णकी एक दीनार होय है। ता वणिकके वारुणी नामा स्त्री उसके गर्भविषै दूजे भाई रमणका जीव मृग पर्यायसे देव भया था सो भूषण नाम पुत्र भया। निमित्तज्ञानीने इसके पितासे कहा कि यह सर्वथा जिनदीक्षा धरेगा। सुनकर पिता चिंतावान भया। पिताका पुत्रसे अधिक प्रेम, इसको घरहीविषै राखै, बाहिर निकसने न देय, सब सामग्री वाके घर विषै विद्यमान। यह भूषण सुन्दर स्त्रीनिकर सेव्यमान वस्त्र आहार सुगन्धादि विलेपन कर घरविषै सुखसे रहे। याकूं सूर्यके उदय अस्तकी गम्य नाहीं, याके पिताने सैकड़ों मनोरथकर यह पुत्र पाया, अर एकही पुत्र, सो पूर्व जन्मके स्नेहसे पिताकूं प्राणसे भी प्यारा। पिता तो विनोदका जीव अर पुत्र रमणका जीव आगे दोनों भाई हुते सो या जन्मविषै पिता पुत्र भए।

संसारकी विचित्रगति है ये प्राणी नटवत् नृत्य करै हैं। संसारका चरित्र स्वप्नके राज्य समान असार है। एक समय यह धनदत्तका पुत्र भूषण प्रभात समय दुंदुभी शब्द आकाशविषै देवनिका आगमन देख प्रतिबुद्ध भया। यह स्वभावहीसे कोमलचित्त, धर्मके आचार विषै तत्पर, महाहर्षका भरया दोनों हाथ जोड़ नमस्कार करता, श्रीधर केवलीकी वन्दनाकूं शीघ्र ही जाय था सो सिवाणसे उतरते सर्पने डसा। देह तज महेन्द्र नाम जो चौथा स्वर्ग तहां देव भया। तहांतैं चयकर पहुकर द्वीपविषै चन्द्रादित्य नामा नगर तहां राजा प्रकाशयश ताके राणी माधवी ताके जगद्युत नामा पुत्र भया। यौवनके उदयविषै राज्यलक्ष्मी पाई, परन्तु संसारसे अति उदास, राजविषै चित्त नाहीं। सो याके वृद्ध मंत्रिनिने कही यह राज तिहारे कुलक्रमसे चला आवै है सो पालहु। तिहारे राज्यसे प्रजा सुख रूप होयगी। सो मंत्रिनिके हठसे यह राज्य करै। राज्यविषैं तिष्ठता यह साधूनिकी सेवा करै। सो मुनि दानके प्रभावसे देवकुरु भोगभूमि गया, तहांसे ईशान नाम दूजा स्वर्ग तहाँ देव भया। चार सागर दोय पल्य देवलोकके सुख भोग देवांगनानिकर मंडित नानाप्रकार भोग भोगि, तहांसे चया सो जम्बूद्वीपके पश्चिम विदेह मध्य अचल नामा चक्रवर्तीके रत्नानामा राणीके अभिराम नामा पुत्र भया, सो महागुणनिका समूह, अति सुन्दर, जाहि देखि सर्व लोककूं आनन्द होय। सो बाल अवस्थाहीसे अति-विरक्त जिनदीक्षा धारचा चाहै, अर पिता चाहै यह घरविषै रहै, तीन हजार राणी इसे परणाईं, सो वे नानाप्रकारके चरित्रकरैं, परन्तु यह विषय सुखकूं विषसमान गिनै। केवल मुनि होयवेकी इच्छा, अति शांतचित्त, परन्तु पिता घरसे निकसने न देय। यह महा भाग्य महाशीलवान महागुणवान महा त्यागी, स्त्रियोंका अनुराग नहीं याकूं, ते स्त्री भांति भांतिके वचनकर अनुराग उपजावैं, अतियत्नकर सेवा करैं, परन्तु याकूं संसारकी माया गर्तरूप भासै। जैसैं गर्तमैं पड्या ताके पकडनहारे मनुष्य नाना भांति ललचावैं तथापि गजको गर्त न रुचै ऐसे याहि जगत्की माया न रुचै। यह शांत चित्त पिताके निरोधसे अति उदास भया घरविषै रहै। तिन स्त्रीनिके मध्य प्राप्त हुवा तीव्र असिधारा व्रतपालै।

स्त्रीनिके मध्य रहना अर शील पालना, तिनसे संसर्ग न करना ताका नाम असिधारा व्रत कहिए। मोतिनके हार बाजूबंद मुकुटादि अनेक आभूषण पहिरे तथापि आभूषणसू अनुराग नाहीं। यह महा

भाग्य सिंहासनपर बैठा निरन्तर स्त्रीनिको जिनधर्मको प्रशंसाका उपदेश देय। त्रैलोक्यविषै जिनधर्म समान और धर्म नाहीं। ये जीव अनादिकालसे संसार बनविषै भ्रमण करै हैं सो कोई पुण्य कर्मके योग से जीवोंकू मनुष्यदेहको प्राप्ति होय है। यह बात जानता संता कौन मनुष्य संसार कूपविषै पड़ै, अथवा कौन विवेकी विषकू पीवै, अथवा गिरिके शिखरपर कौन बुद्धिमान निद्रा करै, अथवा मणिकी वांछाकर कौन तडित नागका मस्तक हाथसे स्पर्शे, विनाशीक ये काम भोग तिनविषै ज्ञानीकू कैसे अनुराग उपजे? एक जिनधर्मका अनुराग ही महा प्रशंसा योग्य मोक्षके सुखका कारण है। यह जीवों का जीतव्य अत्यन्त चंचल, याविषै स्थिरता कहां? जो अवांछक निस्पृह चित्त वश हैं तिनके राज्यकाज अर इन्द्रियोंके भोगोंसे कौन काम? इत्यादिक परमार्थके उपदेशरूप याकी वाणी सुनकर स्त्रियें भी शांतचित्त भईं, नानाप्रकारके नियम धारती भईं। यह शीलवान तिनकू भी शीलविषै दृढ़चित्त करता भया। यह राजकुमार अपने शरीरविषै भी रागरहित एकांतर उपवास अथवा बेला तेला आदि अनेक उपवासोंकर कर्म कलंक खिपावता भया, नाना प्रकारके तपकर शरीरकू शोखता भया, जैसैं ग्रीषम का सूर्य जलकू शोखै। समाधान रूप है मन जाका, मन इन्द्रियनिके जीतवेकू समर्थ यह सम्यक्दृष्टि निश्चल चित्त महाधीर वीर चौसठ हजार वर्षलग दुर्धर तप करता भया। बहुरि समाधिमरण कर पंचनमोकार स्मरण करता देह त्यागकर छठा जो ब्रह्मोत्तर स्वर्ग तहां महा ऋद्धिका धारक देव भया। अर जो भूषणके भवविषै याका पिता धनदत्त सेठ था, विनोद ब्राह्मणका जीव सो मोहके योगतैं अनेक कुयोनिविषै भ्रमणकरि जम्बूद्वीप भरत क्षेत्र, तहां वादम नाम नगर, ताविषै अग्निमुख नामा ब्राह्मण, ताके शकुना नाम स्त्री, मृदुमतिनामा पुत्र भया। सो नामा तो मृदुमति परन्तु कठोर चित्त, अति दुष्ट महाजुवारी अविनयी अनेक अपराधोंका भरा दुराचारी। सो लोकोंके उराहनेसे माता पिता

ने घरसे निकास्या सो पृथ्वीविषै परिभ्रमण करता पोदनापुर गया। किसीके घर तृषातुर पानी पीवने को पैंठा सो एक ब्राह्मणी आंसू डारती हुई इसे शीतल जल प्यावती भई। यह शीतल मिष्टजलसे तृप्त हो ब्राह्मणीकूं पूछता भया तू कौन कारण रुदन करै है ? तब ताने कही तेरे आकार एक मेरा पुत्र था सो मैं कठोरचित्त होय क्रोधकर घरसे निकास्या। सो तैंने भ्रमण करते कहूं देख्या होय तो कह। नील कमल समान तो सारिखा ही है। तब यह आंसू डार कहता भया—हे माता ! तू रुदन तज, वह मैं ही हूं, तोहि देखे बहुत दिन भए तात मोहि नाहीं पहिचाने है। तू विश्वास गह मैं तेरा पुत्र हूं। तब वह पुत्र जान राखती भई, अर मोहके योगतैं ताके स्तनोंसे दुग्ध झरा। यह मृदुमति तेजस्वी रूपवान् स्त्रीनिके मनका हरणहारा, धूर्तोंका शिरोमणि, जुवाविषै सदा जीते, बहुत चतुर, अनेक कला जाने, काम भोगविषै आसक्त। एक वसंतमाला नामा वेश्या सो ताके अति वल्लभ, अर याके माता पिताने यह काढ़ा हुता सो इनके पीछे वे अति लक्ष्मीकूं प्राप्त भए। पिता कुण्डलादिक अनेक भूषण करि मण्डित, अर माता कांचीदामादिक अनेक आभरणोंकर शोभित सुखसूं तिष्ठै। अर एक दिन यह मृदुमति ससाक नगरविषै राजमन्दिरविषै चोरीकूं गया सो राजा नन्दीवर्धन शशांक मुख स्वामीके मुख धर्मोपदेश सुन विरक्त चित्त भया था सो अपनी राणीसूं कहै था कि हे देवी ! मैं मोक्ष सुखका देने हारा मुनिके मुख परम धर्म सुना। ये इन्द्रियनिके विषय विषसमान दारुण हैं, इनके फल नरक निगोद हैं, मैं जैनेश्वरी दीक्षा धरूंगा, तुम शोक मत करियो। या भांति स्त्रीकूं शिक्षा देता हुता, सो मृदुमति चोरने यह वचन सुन अपने मनविषै विचारचा देखो यह राजऋद्धि तज मुनिव्रत धारे है अर मैं पापी चोरीकर पराया द्रव्य हरूं हूं, धिक्कार मोकूं। ऐसे विचारकर निर्मलचित्तहोय सांसारिक विषय भोगोंसे उदासचित्त भया, स्वामी चन्द्रमुखके समीप सर्व परिग्रहका त्यागकर जिनदीक्षा आदरी, शास्त्रोक्त महादुर्धर तप करता महाक्षमावान् महाप्रासुक आहार लेता भया।

अथानन्तर दुर्गनाम गिरिके शिखर एक गुणनिधि नाम मुनि चार महीनेके उपवास धर तिष्ठे थे।

वे सुर असुर मनुष्यनिकर स्तुति करिवे योग्य महा ऋद्धिधारी चारण मुनि थे। सो चौमासेका नियम पूर्णकर आकाशके मार्ग होय किसी तरफ चले गए, अर यह मृदुमति मुनि आहारके निमित्त दुर्गनामा गिरिके समीप आलोक नाम नगर वहां आहारकू आया। जूड़ाप्रमाण पृथ्वीकू निरखता जाय था। सो नगरके लोकोंने जानी यह वे ही मुनि हैं जो चारमहीना गिरिके शिखर रहे। यह जानकर अति भक्तिकर पूजाकरी, अर इसे अतिमनोहर आहार दिया। नगरके लोकोंने बहुत स्तुति करी। इसने जानी गिरिपर चार महीना रहे जिनके भरोसे मेरी अधिक प्रशंसा होय है। सो मानका भरचा मौन पकड़ रहा, लोकोंसे यह न कही कि मैं और ही हूं। अर वे मुनि और थे और गुरुके निकट माया शल्य दूर न करी, प्रायश्चित्त न लिया। तातैं तिर्यंचगतिका कारण भया। तप बहुत किए सो पर्याय पूरी कर छठे देव लोक जहां अभिरामका जीव देव भया था वहां ही यह गया। पूर्व जन्मके स्नेहकर उसके याके अति स्नेह भया। दोनों ही समान ऋद्धिके धारक अनेक देवांगनावोंकर मंडित, सुखके सागरविषैं मग्न, दोनों ही सागरों पर्यंत सुखसू रमे। सो अभिरामका जीव तो भरत भया। अर यह मृदुमतिका जीव स्वर्गसे चय मायाचारके दोषसे इस जम्बूद्वीपके भरतक्षेत्रविषैं, उतंग है शिखर जिसके ऐसा जो निकुंज नामा गिरि, उस विषैं महागहन शल्लकी नामा वन, वहां मेघकी घटा समान श्याम अति सुन्दर गज-राज भया, समुद्रकी गाज समान है गर्जना जिसकी, अर पवन समान है शीघ्र गमन जिसका, महा भयंकर आकारकू धरे, अति मदोन्मत्त, चन्द्रमा समान उज्ज्वल हैं दांत जिसके, गजराजोंके गुणोंकरि मंडित, विजयादिक महाहस्ती तिनके वंशविषैं उपज्या। महा कांतिका धारक, ऐरावत समान अति स्वच्छंद सिंह व्याघ्रादिकका हननहारा, महा वृक्षोंका उपारनहारा, पर्वतोंके शिखरका ढाहनहारा, विद्याधरोंकर न ग्रहा जाय तो भूमिगोचरियोंकी क्या बात, जाके निवाससे सिंहादिक निवास तजि भाग जावें। ऐसा प्रबल गजराज गिरिके वनविषैं नानाप्रकार पल्लवका आहार करता मानसरोवरविषैं क्रीडा करता, अनेक गजोंसहित विचरै। कभी कैलाशविषैं विलास करै कभी गंगाके मनोहरद्रहोंविषैं क्रीडा करै, अर अनेक

७२९

वन गिरि नदी सरोवरविषै सुन्दर क्रीडा करै, अर हजारों हथनीनि सहित रमै। अनेक हाथियोंके समूह का शिरोमणि यथेष्ट विचरता ऐसा सोहै जैसा पक्षियोंके समूहकर गरुड सोहै। मेघसमान गर्जता मद नीझरने तिनके झरनेका पर्वत, सो एक दिन लंकेश्वरने देखा, सो विद्याके पराक्रमकर महाउग्र उसमे यह नीठि नीठि वश किया। इसका त्रैलोक्यमण्डन नाम धरचा, सुन्दर हैं लक्षण जिसके। जैसे स्वर्गविषै चिरकाल अनेक अप्सरावों सहित क्रीडा करी तैसैं हाथियोंकी पर्यायविषै हजारों हथिनियोंसे क्रीड़ा करता भया। यह कथा देशभूषण केवली राम लक्ष्मणसूं कहे हैं कि ये जीव सर्व योनिविषैं रति मान लेय है निश्चय विचारिए तो सर्वही गति दुखरूप हैं। अभिरामका जीव भरत अर मृदुमतिका जीव गजसूर्योदय चन्द्रोदयके जन्मसे लेकर अनेक भवके मिलापी हैं तातैं भरतकूं देखि पूर्व भव चितारि गज उपशांत चित्त भया। अर भरत भोगोंसे पराङ्मुख, दूर भया है मोह जिसका, अब मुनिपद लिया चाहै है इस ही भवसूं निर्वाण प्राप्त होवेंगे, बहुरि भव न धरेंगे। श्री ऋषभदेवके समय यह दोनों सूर्योदय चन्द्रोदय नामा भाई थे। मारीचके भरमाए मिथ्यात्वका सेवन कर बहुतकाल संसारविषैं भ्रमण किया, त्रस स्थावर योनिविषै भ्रमें। चन्द्रोदयका जीव कईएकभव पीछे राजा कुलंकर। बहुरि कईएक भवपीछे रमण ब्राह्मण, बहुरि कईएक भव धर समाधिमरण करणहारा मृग भया, बहुरि स्वर्गविषै देव, बहुरि भूषण नामा वैश्यका पुत्र, बहुरि स्वर्ग, बहुरि जगद्युति नाम राजा, वहांसे भोगभूमि, बहुरि दूजे स्वर्ग देव, वहांसे चयकर महाविदेह क्षेत्रविषैं चक्रवर्तीका पुत्र अभिराम भए, वहांसे छठे स्वर्ग देव, देवसे भरत नरेन्द्र सो चरमशरीरी है, बहुरि देह न धारेंगे। अर सूर्योदयका जीव बहुत काल भ्रमण कर राजा कुलंकरका श्रुति नामा पुरोहित भया। बहुरि अनेक जन्म लेय विनोदनामा विप्र भया, बहुरि अनेक जन्म लेय आर्तध्यानसे मरणहारा मृग भया, बहुरि अनेक जन्म भ्रमणकर भूषणका पिता धनदत्त नामा वणिक, बहुरि अनेक जन्म धर मृदुमति नामा मुनि, उसने अपनी प्रशंसा सुन राग किया, मायाचारसे शल्य दूर न करी, तपके प्रभावसे छठे स्वर्ग देव भया। वहांसे चयकरि त्रैलोक्यमण्डन हाथी,

अब श्रावकके व्रत धर देव होयगा ये भी निकट भव्य है। या भांति जीवोंकी गति आगति जान अर इन्द्रियोंके सुख विनाशीक जान या विषम वनकूं तजकर ज्ञानी जीव धर्मविषै रमहु, जे प्राणी मनुष्य देह पाय जिन भाषित धर्म नाहीं करै हैं वे अनन्त काल संसार भ्रमण करैंगे। आत्मकल्याणसे दूर हैं तातैं जिनवरके मुखतैं निकस्या दयामई धर्म मोक्ष प्राप्त करनेकूं समर्थ, याके तुल्य और नाहीं, मोह-तिमिरका दूर करणहारा, जीती है सूर्यकी कांति जानै सो मनवचन कायकर अंगीकार करो जातैं निर्मल पद पावो।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महा पद्मपुराण संस्कृतग्रन्थ, ताकी भाषावचनिकाविषै भरतके अर हाथीके पूर्वभव वर्णन करनेवाला पच्चासीवां पर्व पूर्ण भया ॥ ८५ ॥

अथानन्तर श्रीदेशभूषण केवलीके वचन महा पवित्र, मोह अन्धकारके हरणहारे, संसार सागरके तारणहारे, नानाप्रकारके दुखके नाशक, उनविषैं भरत अर हाथीके अनेक भवका वर्णन सुनकर राम लक्ष्मण आदि सकल भव्यजन आश्चर्यकूं प्राप्त भए, सकल सभा चेष्टारहित चित्राम कैसी होय गई। अर भरत नरेन्द्र, देवेन्द्र समान है प्रभा जाकी, अविनाशी पदके अर्थि मुनि होयवेकी है इच्छा जिसके, गुरुवोंके चरणविषै नम्रीभूत है सीस जिसका, महा शांतचित्त परम वैराग्यकूं प्राप्त हुवा। तत्काल उठ करि हाथ जोड़ केवलीकूं प्रणामकरि महा मनोहर वचन कहता भया—हे नाथ! मैं संसारविषैं अनन्त काल भ्रमण करता नानाप्रकार कुयोनियों के विषैं संकट सहता दुखी भया। अब मैं संसार भ्रमण से थका। मुझे मुक्तिका कारण तिहारी दिगम्बरी दीक्षा देवहु। यह आकाशरूप नदी मरणरूप उग्ररूप तरंगकूं धरे उसविषैं मैं डूबूं हूं, सो मुझे हस्तावलम्बन दे निकासो। ऐसा कहकर केवलीकी आज्ञा प्रमाण तज्या है समस्त परिग्रह जिसने, अपने हाथोंसे शिरके केश लोंच किये, परम सम्यक्ती महाव्रतकूं अंगीकार कर जिनदीक्षा धर दिगम्बर भया। तब आकाशविषै देव धन्य धन्य कहते भए अर कल्पवृक्षके

भई बहुत विचारकर कहा ? शांतिकर्म करो, जिनेन्द्रका अभिषेक अर पूजा करावो, अर किमिइच्छक दान देवो । जाकी जो इच्छा होय सो ले जावो । दान पूजाकर अशुभका निवारण होय है । तातैं शुभ कार्यकर अशुभकूं निवारो । या भांति इन्होंने कही तब सीता प्रसन्न भई अर कही–योग्य है, दान पूजा अभिषेक अर तप ये अशुभके नाशक हैं । दान धर्म विघ्नका नाशक, वैरका नाशक है पुण्यका अर जशका मूल कारण है । यह विचारकर भद्रकलश नामा भंडारीकूं बुलायकर कही–मेरे प्रसूति होय तौलग किमिच्छा दान निरन्तर देवो । तब भद्रकलशने कही जो आप आज्ञा करोगी सो ही होयगा । यह कहकर भंडारी गया अर जिनपूजादि शुभक्रियाविषै प्रवर्ता । जितने भगवानके चैत्यालय हैं तिन-विषै नाना प्रकारके उपकरण चढाये । अर सब चैत्यालयनिविषै अनेक प्रकारके वादित्र बजवाए । मानों मेघ ही गाजे हैं । अर भगवानके चरित्र पुराण आदि ग्रंथ जिनमन्दिरनिविषै पधराए । अर दूध दही घृत जल मिष्टान्नके भरे कलश अभिषेककूं पठाए । अर खोजाओविषै प्रधान जो खोजा सो वस्त्रा-भूषण पहरे हाथी चढा नगरविषै घोषणा फेरै–जाकूं जो इच्छा होय सो ही लेवो । या भांति विधि पूर्वक दान पूजा उत्सव कराए । लोक पूजा दान तप आदिविषै प्रवर्ते, पापबुद्धिरहित समाधानके प्राप्त भए । सीता शांतिचित्त धर्मविषै अनुरक्त भई, अर श्रीरामचन्द्र मण्डपविषै आय तिष्ठे । द्वारपालने जे नगरीके लोक आए हुते ते रामसे मिलाए । स्वर्ण रत्नकर निर्मापित अद्भुत सभाकूं देख प्रजाके लोक चकित होय गए । हृदयकूं आनन्दके उपजावनहारे राम तिनकूं देखकर नेत्र प्रसन्न भए । प्रजाके लोक हाथ जोड़ नमस्कार करते भए । कांपै है तन जिनका, अर डरै है मन जिनका । तब राम कहते भए,हे लोको ! तिहारे आगमनका कारण कहो । तब विजय, सुराजी, मधुमानव, सुलोधर, काश्यप, पिंगल, कालोप इत्यादि नगरके मुखिया मनुष्य निश्चल होय चरणनिकी तरफ चोंके । गल गया है गर्व जिनका राजतेजके प्रतापकरि कछु कह न सके । यद्यपि चिरकालमें सोच सोच कहा चाहैं तथापि इनके मुखरूप मंदिरसे वाणीरूप वधू न निकसे । तब रामने बहुत दिलासा कर कही तुम कौन अर्थ आए हो सो

वस्तुका अवलोकन करै ही करै।

इति श्रीरविषेणाचार्य विरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रंथ ताकी भाषावचनिकाविषै भरत अर कैकईका वैराग्य वर्णन करनेवाला छिआसीवां पर्व पूर्ण भया ॥ ८६ ॥

अथानन्तर त्रैलोक्यमंडन हाथी अति प्रशांतचित्त केवलीके निकट श्रावकके व्रत धारता भया। सम्यक्दर्शन संयुक्त, महाज्ञानी, शुभक्रियाविषै उद्यमी हाथी धर्मविषै तत्पर होता भया। पन्द्रह दिनके उपवास तथा मासोपवास करता भया, सूखे पत्रनिकर पारणा करता भया। हाथी संसारसूं भयभीत, उत्तम चेष्टाविषै परायण, लोकनिकर पूज्य, महाविशुद्धताकूं धरे, पृथ्वीविषै विहार करता भया। कभी मासोपवासके पारणा ग्रामादिकविषैं जाय तो श्रावक ताहि अति भक्तिकर शुद्ध अन्न शुद्धजलकर पारणा करावते भए। क्षीण होय गया है शरीर जाका, वैराग्यरूप खूंटेसे बन्धा, महा उग्र तप करता भया। यम नियमरूप है अंकुश जाके। बहुरि महा उग्रतपका करणहारा गज शनैः शनैः आहारका त्याग कर अंत संलेखणा धर; शरीर तज छठे स्वर्ग देव होता भया। अनेक देवांगनाकरि युक्त हारकुण्डलादिक आभूषणनिकरि मंडित पुण्यके प्रभावतैं देवगतिके सुख भोगता भया। छठे स्वर्गहीतैं आया हुता अर छठे ही स्वर्ग गया, परम्पराय मोक्ष पावेगा। अर भरत महामुनि महातपके धारक, पृथ्वीके गुरु निर्ग्रंथ, जाके शरीरका भी ममत्व नाहीं, वे महा धीर जहां पिछिला दिन रहै तहां ही बैठ रहैं, जिनकूं एक स्थान न रहना, पवन सारिखे असंगी, पृथ्वीसमान क्षमाकूं धरे, जलसमान निर्मल, अग्नि समान कर्म काष्ठके भस्म करनहारे, अर आकाश समान अलेप, चार आराधनाविषै उद्यमी, तेरह प्रकार चारित्र पालते विहार करते भए। निर्ममत्व, स्नेहके बंधनतैं रहित, मृगेन्द्र सारिखे निर्भय, समुद्र समान गम्भीर, सुमेरु समान निश्चल, यथाजात रूपके धारक, सत्यका वस्त्र पहिरे, क्षमारूप खडगकूं धरे, बाईस परीषहके जीतनेहारे, महातपस्वी, समान है शत्रु मित्र जिनके, अर समान है सुख दुख जिनके, अर समान है

तृण रत्न जिनके, महा उत्कृष्ट मुनि शास्त्रोक्त मार्ग चलते भए। तपके प्रभावकरि अनेक ऋद्धि उपजी। सूई समान तीक्ष्ण तृणकी सली पावोंमें चुभैं हैं परन्तु ताको कछु सुध नाहीं। अर शत्रुनिके स्थानक
पद्म पुराण ७३५ विषै उपसर्ग सहिवे निमित्त विहार करते भए। तपके संयमके प्रभावकरि शुक्लध्यान उपजा। शुक्लध्यानके बलकर मोहका नाशकर ज्ञानावरण, दर्शनावरण, अंतराय कर्म हर, लोकालोकक् प्रकाश करणहारा केवलज्ञान प्रकट भया। बहुरि अघातिया कर्म भी दूरकर सिद्धपदकू प्राप्त भए, जहांतैं बहुरि संसार विषै भ्रमण नाहीं। यह केकईके पुत्र भरतका चरित्र जो भक्ति कर पढ़ै, सुनै सो सब क्लेशसे रहित होय यश कीर्ति बल विभूति आरोग्यताकू पावै, अर स्वर्ग मोक्ष पावै। यह परम चरित्र महा उज्ज्वल श्रेष्ठ गुणनिकर युक्त, भव्यजीव सुनो, जातैं शीघ्र ही सूर्यसे अधिक तेजके धारक होहु।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रन्थ, ताकी भाषावचनिकाविषैं भरतका निर्वाण गमन वर्णन करनेवाला सत्यासीवां पर्व पूर्ण भया ॥ ८७ ॥

अथानन्तर भरतके साथ जे राजा महाधीर वीर अपने शरीरविषै भी जिनका अनुराग नाहीं, घरतैं निकसि जैनेश्वरी दीक्षा धरि दुर्लभ वस्तुकू प्राप्त भए, तिनविषै कईएकनिके नाम कहिए हैं–हे श्रेणिक! तू सुन–सिद्धार्थ, रति वर्धन, मेघरथ, जांबू, नन्द, शल्य, शशांक, निरसनन्दन, नन्द, आनन्द, सुमति, सदाश्रय, महाबुद्धि, सूर्य, इन्द्रध्वज, जनवल्लभ, श्रुतिधर, सुचन्द्र, पृथ्वीधर, अलंक, सुमति, अक्रोध, कुंडर, सत्यवाहन, हरि, वासुमित्र, धर्ममित्र, पूर्णचन्द्र, प्रभाकर, नघोष, सुनन्द, शांति, प्रियधर्मा इत्यादि ७३५
एक हजारतैं अधिक राजा वैराग्य धारते भए। विशुद्धकुल विषैं उपजे, सदा आचारविषैं तत्पर, पृथ्वी विषै प्रसिद्ध हैं शुभ चेष्टा जिनकी, ये महाभाग्य हाथी घोड़े रथ पयादे स्वर्ण रत्न रणवास सर्व तजकरि पंच महाव्रत धारते भए। राज्यकू जिनने तृणवत् तज्या, महाशांत, नानाप्रकार योगीश्वर ऋद्धि के धारक भए। सो आत्मध्यान के ध्याता कईएक तो मोक्ष गए, कईएक अहमिंद्र भए, कईएक उत्कृष्ट देव भए।

अथानन्तर भरत चक्रवर्ती सारिखे दशरथके पुत्र भरत तिनकूं घरसे निकसे पीछे लक्ष्मण तिनके गुण चितार चितार अतिशोकवंत भया। अपना राज्य शून्य गिनता भया, शोककरि व्याकुल है चित्त जाका, अति दीर्घ आंसू डारता भया, दीर्घ निश्वास नाखता भया, नील कमल समान हैं कांति जाकी सो कुमलाय गया। विराधितकी भुजानिपर हाथ धरे ताके सहारे बैठ्या मंद मंद वचन कहै, वे भरत महाराज, गुणही हैं आभूषण जिनके सो कहां गए? जिन तरुण अवस्था विषै शरीरसूं प्रीति छांड़ी, इन्द्र समान राजा अर हम सब उनके सेवक वे रघुवंशके तिलक समस्त विभूति तजकरि मोक्षके अर्थी, महादुर्द्धर मुनिका धर्म धारते भए। शरीर तो अति कोमल, कैसे परीषह सहेंगे? धन्य वे। श्रीराम महा ज्ञानवान कहते भए—भरतकी महिमा कही न जाय, जिनका चित्त कभी संसारविषै न रच्या, जो शुद्ध बुद्धि है तो उनको ही है, अर जन्म कृतार्थ है तो उनका ही है, जे विषके भरे अन्नकी न्याईं राज्य कूं तज करि जिनदीक्षा धरत भए। वे पूज्य, प्रशंसा योग्य, परम योगी, उनका वर्णन देवेन्द्र भी न कर सके तो औरनिकी कहा शक्ति जो करै? वे राजा दशरथके पुत्र, केकईके नन्दन तिनकी महिमा हमतें न कही जाय। या भरतके गुण गाते एक मुहूर्त सभाविषै तिष्ठे, समस्त राजा भरत ही के गुण गाया करें। बहुरि श्रीराम लक्ष्मण दोऊ भाई भरतके अनुरागकरि अति उद्वेगरूप उठे। सब राजा अपने २ स्थानकूं गए। घर २ भरतकी चर्चा। सब ही लोक आश्चर्यकूं प्राप्त भए। यह तो उनकी यौवन अवस्था, अर यह राज्य, ऐसे भाई, सब सामग्री पूर्ण। ऐसे ही पुरुष तजे सोई परमपदकूं प्राप्त होवैं। या भांति सब ही प्रशंसा करते भए।

बहुरि दूजे दिन सब राजा मंत्रकर रामपै आए। नमस्कारकरि अति प्रीतिसे वचन कहते भए। हे नाथ! जो हम असमझ हैं तो आपके, अर बुद्धिवंत हैं तो आपके। हमपर कृपाकर एक विनती सुनो—हे प्रभो! हम सब भूमिगोचरी अर विद्याधर आपका राज्याभिषेक करैं जैसे स्वर्ग विषै इन्द्रका होय। हमारे नेत्र अर हृदय सफल होवैं। तिहारे अभिषेकके सुखकरि पृथ्वी सुखरूप होय। तब राम कहते

भए-तुम लक्ष्मणका राज्याभिषेक करो। वह पृथ्वीका स्तम्भ भूधर है, राजनिका गुरु, वासुदेव, राजानिका राजा, सर्व गुण ऐश्वर्यका स्वामी, सदा मेरे चरणनिकूं नमै। या उपरांत मेरे राज्य कहां ?

तब वे समस्त श्रीरामकी अतिप्रशंसा कर जय जयकार शब्द कर लक्ष्मणपै गए अर सब वृत्तांत कह्या। तब लक्ष्मण सबनिकूं साथ लेय रामपै आया, अर हाथ जोड नमस्कार कर कहता भया—हे वीर ! या राज्य के स्वामी आप ही हो। मैं तो आपका आज्ञाकारी अनुचर हूं। तब रामने कह्या, हे वत्स ! तुम चक्र के धारी नारायण हो तातैं राज्याभिषेक तुम्हारा ही योग्य है। सो इत्यादि वार्तालाप से दोनों का राज्याभिषेक ठहरा। बहुरि जैसी मेघ की ध्वनि होय तैसी वादित्रनिकी ध्वनि होती भई। दुंदुभी बाजे, नगारे, ढोल, मृदंग, वीण, तमूरे, झालर, झांझ, मजीरे, बांसुरी, शंख इत्यादि वादित्र बाजे, अर नानाप्रकारके मंगल गीत नृत्य होते भए। याचकनिकूं मनवांछित दान दीये, सबनिकूं अति हर्ष भया दोऊ भाई एक सिंहासन पर विराजे। स्वर्ण रत्नके कलश जिनके मुख कमल से ढके, पवित्र जलसे भरे, तिनकर विधिपूर्वक अभिषेक भया। दोऊ भाई मुकुट भुजबन्ध हार केयूर कुण्डलादिककर मंडित मनोग्य वस्त्र पहिरे, सुगन्धकरि चर्चित तिष्ठे। विद्याधर भूमिगोचरी तथा तीन खंडके देव जय जय शब्द कहते भए। यह बलभद्र श्रीराम हल मूसलके धारक, अर यह वासुदेव श्री लक्ष्मण चक्रका धारक जयवंत होहु। दोऊ राजेन्द्रनिका अभिषेककरि विद्याधर बड़े उत्साहसे सीता अर विशिल्याका अभिषेक करावते भए। सीता रामकी राणी अर विशल्याका लक्ष्मणकी, तिनका अभिषेक विधिपूर्वक होता भया।

अथानन्तर विभीषणको लंका दई, सुग्रीवकूं किहकंधापुर, हनुमानकूं श्रीनगर अर हनूरुह द्वीप दिया। विराधितकूं नागलोक समान अलंकापुर दिया। नल नीलकूं किहकंधूपुर दिया, समुद्रकी लहरोंके समूहकरि महाकौतुकरूप। अर भामण्डलकूं वैताड्यकी दक्षिण श्रेणिविषै रथनूपुर दिया, समस्त विद्याधरनिका अधिपति किया। अर रत्नजटीकूं देवोपनीत नगर दिया, और भी यथायोग्य सबनिकूं स्थान

लिए। अपने पुण्यके उदय योग्य सबही राम लक्ष्मणके प्रतापतैं राज्य पावते भए। रामकी आज्ञाकरि यथायोग्य स्थानमें तिष्ठे। जे भव्यजीव पुण्यके प्रभावका जगतविषै प्रसिद्ध फल जान धर्मविषै रति करैं हैं वे मनुष्य सूर्यसे अधिक ज्योति पावैं हैं।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रन्थ ताकी भाषावचनिकाविषै राम लक्ष्मणका राज्याभिषेक वर्णन करनेवाला अठासीवां पर्व पूर्ण भया ॥ ८८ ॥

अथानन्तर राम लक्ष्मण महा प्रीतिकरि भाई शत्रुघ्नसू कहते भए, जो तुमको रुचै सो देश लेवहु। जो तुम आधी अयोध्या चाहो तो आधी अयोध्या लेवहु अथवा राजगृह अथवा पोदनापुर अथवा पौंड्र सुन्दर इत्यादि सैकड़ों राजधानी हैं। तिनविषै जो नीकी सो तिहारी। तब शत्रुघ्न कहता भया—मोहि मथुराका राज्य देवो। तब राम बोले—रे भ्रात! वहां राजा मधुका राज्य है अर वह रावणका जमाई है अनेक युद्धनिका जीतनहारा ताकू चमरेन्द्रने त्रिशूल रत्न दिया है। ज्येष्ठके सूर्य समान दुस्सह है, अर देवनिसे दुर्निवार है। ताकी चिंता हमारे भी निरन्तर रहै है, वह राजा मधु हरिवंशियोंके कुलरूप आकाशविषै सूर्य समान प्रतापी है जाने वंशविषै उद्योत किया है, अर जाका लवणार्णव नामा पुत्र विद्याधरनिहू कर असाध्य है। पिता पुत्र दोऊ महाशूरवीर हैं। तातैं मथुरा टार और राज्य चाहो सोही लेवहु। तब शत्रुघ्न कहता भया बहुत कहिवेकरि कहा? मोहि मथुरा ही देवहु जो मैं मधुके छातेकी न्याईं, मधुकू रणसंग्रामविषै न तोड़ लू तो दशरथका पुत्र शत्रुघ्न नाहीं। जैसैं सिंहनिके समूहकू अष्टापद तोड़ डारै तैसैं ताके कटकसहित ताहि न चूर डारू तो मैं तिहारा भाई नाहीं। जो मधुकू मृत्यु प्राप्त न करू तो मैं सुप्रभाकी कुक्षिविषै उपजा ही नाहीं। या भांति प्रचंड तेजका धरणहारा शत्रुघ्न कहता भया। तब समस्त विद्याधरनिके अधिपति आश्चर्यकू प्राप्त भए, अर शत्रुघ्नकी बहुत प्रशंसा करते भए। शत्रुघ्न मथुरा जायवेकू उद्यमी भया। तब श्रीराम कहते भए, हे भाई! मैं एक याचना

करू हूं । सो मोहि दक्षिणा देहु । तब शत्रुघ्न कहता भया—सबके दाता आप हो, सब आपके याचक हैं आप याचहु सो वस्तु कहा ? मेरे प्राणहीके नाथ आप हो तो और वस्तुकी कहा बात ? एक मधुसे युद्ध तो मैं न तजूं, अर कहो सोही करूं । तब श्रीरामने कही—हे वत्स ! तू मधुसे युद्ध करै तो जा समय वाके हाथ त्रिशूलरत्न न होय ता समय करियो । तब शत्रुघ्नने कही जो आप आज्ञा करोगे सोही होयगा । ऐसा कह भगवानकी पूजाकर, नमोकार मंत्र जप, सिद्धनिकूं नमस्कारकरि, भोजनशालाविषैं जाय भोजनकरि माताके निकट आय आज्ञा मांगी । तब वे माता अतिस्नेहतैं याके मस्तकपर हाथ धर कहती भई—हे वत्स ! तू तीक्ष्ण बाणनिकर शत्रुनिके समूहकूं जीत । वह योधाकी माता अपने योधापुत्रसे कहती भई—हे पुत्र ! अब तक संग्रामविषैं शत्रुनिने तेरी पीठ नाहीं देखी है अर अबहु न देखेंगे, तू रण जीत आवेगा, तब मैं स्वर्णके कमलनिकर श्रीजिनेन्द्रकी पूजा कराऊंगी । वे भगवान त्रैलोक्य मंगलके कर्ता, आप महामंगलरूप, सुर असुरनिकर नमस्कार करिवे योग्य, रागादिकके जीतनहारे तोहि मंगल करैं । वे परमेश्वर पुरुषोत्तम अरहंत भगवंत अत्यन्त दुर्जय मोहरिपु जीता वे तोहि कल्याणके दायक होहु । सर्वज्ञ त्रिकालदर्शी स्वयंबुद्ध तिनके प्रसादतैं तेरी विजय होहु । जे केवलज्ञानकरि लोकालोककूं हथेलीविषैं आंवलाकी न्याई देखैं हैं ते तोहि मंगलरूप होहु । हे वत्स ! वे सिद्धपरमेष्ठी अष्टकर्मकर रहित, अष्टगुण आदि अनन्त गुणनिकर विराजमान, लोकके शिखर तिष्ठे, ते सिद्ध तोहि सिद्धिके कर्ता होहु । अर आचार्य भव्यजीवनिके परम आधार तेरे विघ्न हरैं, जे कमल समान अलिप्त, सूर्यसमान तिमिर हर्ता, अर चन्द्रमा समान आल्हादके कर्त्ता, भूमिसमान क्षमावान, सुमेरु समान अचल, समुद्र समान गम्भीर, आकाश समान अखंड इत्यादि अनेक गुणनिकर मंडित हैं । अर उपाध्याय जिनशासनके पारगामी तोहि कल्याणके कर्ता होहु । अर कर्म शत्रुनिके जीतवेकूं महा शूरवीर बारह प्रकार तपकरि जे निर्वाणको साधैं हैं ते साधु तोहि महावीर्यके दाता होहु । या भांति विघ्नकी हरणहारी,मंगलकी करणहारी माता आशीस देतीभई सो शत्रुघ्न माथे चढ़ाय माताकूं प्रणामकरि बाहिर निकस्या ।

स्वर्णकी सांकलनिकर मंडित जो गज तापर चढ्या। सो ऐसा सोहता भया जैसैं मेघमालाके ऊपर चंद्रमा सोहै, अर नाना प्रकारके बाहनिपर आरूढ़ अनेक राजा संग चाले सो तिनकरि ऐसा सोहता भया–जैसा देवनिकर मंडित देवेन्द्र सोहै। राम लक्ष्मणको भाईसूं अधिक प्रीति सो तीन मंजिल भाईके संग गये तब भाई कहता भया–हे पूज्य पुरुषोत्तम! पीछे अयोध्या जावहु। मेरी चिंता न करो। मैं आपके प्रसादतैं शत्रुनिको निरसंदेह जीतूंगा। तब लक्ष्मणने समुद्रावर्त नामा धनुष दिया। प्रज्वलित हैं मुख जिनके, पवन सारिखे वेगकू धरे ऐसे बाण दिए। अर कृतांतवक्रकू लार दिया। अर लक्ष्मण सहित राम पीछे अयोध्या आए, परन्तु भाईकी चिंता विशेष।

अथानन्तर शत्रुघ्न महा धीरवीर बड़ी सेना कर संयुक्त मथुराकी तरफ गया। अनुक्रमसे यमुना नदीके तीर जाय डेरे दिये। जहां मंत्री महासूक्ष्मबुद्धि मंत्र करते भये। देखो, इस बालक शत्रुघ्नकी बुद्धि जो मधुकू जीतवेकी बांछा करी है। यह नयवर्जित केवल अभिमान कर प्रवर्त्या है, जा मधुने पूर्व राजा मांधाता रणविषैं जीत्या, सो मधु देवनिकर विद्याधरनिकर न जीत्या जाय, ताहि यह कैसैं जीतेगा? राजा मधु सागर समान है, उछलत पियादे तेई भये उतंग लहर, अर शत्रुनिके समूह तेई भये ग्रह तिनकर पूर्ण ऐसे मधुसमुद्रकू शत्रुघ्न भुजानिकर तिरचा चाहै है। सो कैसे तिरेगा? तथा मधुभूपति भयानक वन समान है ताविषै प्रवेशकर कौन जीवता निसरै? कैसा है राजा मधुरूप वन? पयादेके समूह तेई हैं वृक्ष जहां, अर माते हाथिनिकर महा भयंकर, अर घोड़निके समूह तेई हैं मृग जहां। ये वचन मंत्रिनिके सुन कृतांतवक्र कहता भया–तुम साहस छोड़ ऐसे कायरताके वचन क्यों कहो हो? यद्यपि वह राजा मधु चमरेन्द्र कर दिया जो अमोघ त्रिशूल ताकर अति गर्वित है तथापि ता मधुको शत्रुघ्न सुन्दर जीतेगा। जैसे हाथी महाबलवान है अर सूण्डकर वृक्षनिकू उपाड़े है, मद झरै है तथापि ताहि सिंह जीतै है। यह शत्रुघ्न लक्ष्मी अर प्रतापकरि मंडित है, महाबलवान है, शूरवीर है, महा पंडित प्रवीण है, अर याके सहाई श्रीलक्ष्मण हैं। अर आप सबही भले मनुष्य याके संग हैं, तातैं यह शत्रुघ्न

७३६

अवश्य शत्रुकूं जीतेगा। जब ऐसे वचन कृतांतवक्रने कही तब सबही प्रसन्न भए, अर पहिलेही मंत्रीजननिने जो मथुरामें हलकारे पठाये हुते ते आयकर सर्व वृत्तांत शत्रुघ्नसूं कहते भए। हे देव! मथुरा नगरीकी पूर्व दिशाकी ओर अत्यन्त मनोग्य उपवन है तहां रणवास सहित राजा मधु रमै है। राजाके जयन्ती नाम पटराणी है ता सहित वनक्रीड़ा करै है जैसे स्पर्श इन्द्रियके वश भया गजराज बन्धन विषै पड़े है, तैसैं राजा मोहित भया विषयनिके बन्धन विषै पड्या है, महा कामी। आज छठा दिन है कि सर्व राज्य काज तज प्रमादके वश भया वनविषै तिष्ठै है। कामान्ध मूर्ख तिहारे आगमकूं नाहीं जाने है, अर तुम ताके जीतवेकूं वांछा करी है ताकी ताहि सुध नाहीं। अर मंत्रिनिने बहुत समझाया सो काहूकी बात धारे नाहीं, जैसे मूढ़ रोगी वैद्यकी औषध न धारै। इस समय मथुरा हाथ आवे तो आवे। अर कदाचित् मधु पुरीविषै धसा तो समुद्रसमान अथाह है। यह वचन हलकारोंके मुखसे शत्रुघ्न सुनकर कार्यविषै प्रवीण ताही समय बलवान योधानिके सहित दौड़कर मथुरा गया, अर्धरात्रिके समय सर्व लोक प्रमादी हुते, अर नगरी राजा रहित हुती, सो शत्रुघ्न नगरविषै जाय पैठा। जैसैं योगी कर्म नाश कर सिद्धपुरीविषै प्रवेश करै, तैसैं शत्रुघ्न द्वारकूं चूरकर मथुराविषै प्रवेश करता भया। मथुरा महामनोग्य है। तब बन्दीजननिके शब्द होते भये जो राजा दशरथका पुत्र शत्रुघ्न जयवंत होहु। ये शब्द सुनके नगरीके लोक परचक्रका आगम न जान अति व्याकुल भए। जैसैं लंका अंगदके प्रवेशकर अति व्याकुल हुती तैसैं मथुराविषैं व्याकुलता भई। कईएक कायर हृदयकी धरनहारी स्त्री हुतीं तिनके भय कर गर्भपात होय गये, अर कईएक महाशूरवीर कलकलाट शब्द सुन तत्काल सिंहकी न्याई उठे, शत्रुघ्न राजमन्दिर गया, आयुधशाला अपने हाथ कर लीनी अर स्त्री बालक आदि जे नगरीके लोक अति त्रासकूं प्राप्त भए तिनकूं महामधुर वचनकर धीर्य बन्धाया जो यह श्रीरामका राज्य है यहां काहूकूं दुख नाहीं। तब नगरीके लोक त्रासरहित भए अर शत्रुघ्नको मथुराविषै आया सुन राजा मधु महाकोपकर उपवनतैं नगरकूं आया, सो मथुराविषै शत्रुघ्नके सुभटोंकी रक्षाके कारण प्रवेश न कर-

सक्या जैसें मुनिके हृदयविषै मोह प्रवेश न कर सके। नानाप्रकारके उपायकर प्रवेश न पाया, अर त्रिशूलहू ते रहित भया तथापि महाभिमानी मधुने शत्रुघ्नसे संधि न करी, युद्ध हीकूं उद्यमी भया। तब शत्रुघ्न के योधा युद्धकूं निकसे। दोनों सेना समुद्रसमान, तिनविषै परस्पर युद्ध भया। रथनिके तथा हाथिनके तथा घोड़निके असवार परस्पर युद्ध करते भए। पयादे भिड़े। नानाप्रकारके आयुधनिके धारक, महा समर्थ नाना प्रकार आयुधनि कर युद्ध करते भये। ता समय परसेनाके गर्वकूं न सहता संता कृतांत वक्र सेनापति परसेनाविषै प्रवेश करता भया, नाहीं निवारी जाय है गति जाकी, तहाँ रणक्रीड़ा करै है जैसें स्वयंभूरमण उद्यानविषै इन्द्र क्रीडा करै। तब मधुका पुत्र लवणार्णवकुमार याहि देख युद्धके अर्थि आया। अपने बाणनिरूप मेघकर कृतांतवक्ररूप पर्वतकूं आच्छादित करता भया, अर कृतांत-वक्र भी आशीविष तुल्य बाणनिकर ताके बाण छेदता भया अर धरती आकाशकूं अपने बाणनिकर व्याप्त करता भया। दोऊ महायोधा सिंह समान बलवान, गजनिपर चढ़े, क्रोधसहित युद्ध करते भए। वानें वाकूं रथरहित किया अर वाने वाकूं। बहुरि कृतांतवक्रने लवणार्णवके वक्षस्थलविषै बाण लगाया अर ताका बख्तर भेदा। तब लवणार्णव कृतांतवक्र ऊपर तोमर जातिका शस्त्र चलावता भया, क्रोधकर लाल हैं नेत्र जाके। दोनों घायल भए, रुधिर कर रंग रहे हैं वस्त्र जिनके। महा सुभटता के स्वरूप दोनों क्रोध कर उद्धत फूले टेसूके वृक्ष समान सोहते भए। गदा खड्ग चक्र इत्यादि अनेक आयुधनिकर परस्पर दोऊ महा भयंकर युद्ध करते भए। बल उन्माद विषादके भरे बहुत वेर लग युद्ध भया। कृतांतवक्रने लवणार्णवके वक्षस्थलविषै घाव किया, सो पृथ्वीविषै पड्या। जैसे पुण्यके क्षयतैं
स्वर्गवासी देव मध्य लोकविषै आय पड़े। लवणार्णव प्राणान्त भया। तब पुत्रकूं पड़ा देख मधु कृतान्तवक्र पर दौड़ा तब शत्रुघ्नने मधुकूं रोक्या, जैसें नदीके प्रवाहकूं पर्वत रोके। मधु महा दुस्सह शोक अर कोपका भरा युद्ध करता भया। सो आशीविषकी दृष्टि समान मधुकी दृष्टि शत्रुघ्नकी सेना के लोक न संहार सकते भए। जैसें उग्र पवनके योगतें पत्रनिके समूह चलायमान होय तैसें लोक

चलायमान भए। बहुरि शत्रुघ्नकूं मधुके सन्मुख जाता देख धीर्यकूं प्राप्त भए। शत्रुके भयकर लोक तबलग ही डरैं जबलग अपने स्वमीकूं प्रबल न देखैं, अर स्वामीकूं प्रसन्नवदन देख धीर्यकूं प्राप्त होय।

शत्रुघ्न उत्तम रथपर आरूढ, मनोग्य धनुष हाथविषै, सुन्दर हारकर शोभै है वक्षस्थल जाका, सिरपर मुकुट धरे, मनोहर कुण्डल पहिरे, शरदके सूर्य समान महातेजस्वी, अखण्डित है गति जाकी शत्रुके सन्मुख जाता अति सोहता भया, जैसैं गजराजपर जाता मृगराज सोहै। अर अग्नि सूखे पत्रनिको जलावै तैसैं मधुके अनेक योधा क्षणमात्रविषै विध्वंश किए। शत्रुघ्नके सन्मुख मधुका कोई योधा न ठहर सका, जैसैं जिनशासनके पंडित स्याद्वादी तिनके सन्मुख एकांतवादी न ठहर सकैं। जो मनुष्य शत्रुघ्नसूं युद्ध किया चाहे सो तत्काल विनाशकूं पावै, जैसैं सिंहके आगैं मृग। मधुकी समस्त सेनाके लोग अति व्याकुल होय मधुके शरण आये। सो मधु महा सुभट शत्रुघ्नकूं सन्मुख आवता देख शत्रुघ्न की ध्वजा छेदी अर शत्रुघ्नने बाणनिकर ताके रथके अश्व हते। तब मधु पर्वत समान जो वरुणेन्द्र गज तापर चढ्या, क्रोधकर प्रज्वलित है शरीर जाका शत्रुघ्नकूं निरन्तर बाणनिकर आच्छादने लगा, जैसैं महामेघ सूर्यकूं आच्छादै। सो शत्रुघ्न महा शूरवीरने ताके बाण छेद डारे, मधुका बखतर भेदा। जैसैं अपने घर कोई पाहुना आवै अर ताकी भले मनुष्य भलीभांति पाहुनगति करैं तैसैं शत्रुघ्न मधुकी रणविषै शस्त्रनिकर पाहुनगति करता भया।

अथानन्तर मधु महा विवेकी शत्रुघ्नकूं दुर्जय जान, आपकूं त्रिशूल आयुधसे रहित जान, पुत्रकी मृत्यु देख, अर अपनी आयु हू अल्प जान मुनिका वचन चितारता भया—अहो जगतका समस्तही आरम्भ महा हिंसारूप दुखका देनहारा सर्वथा त्याज्य है। यह क्षणभंगुर संसारका चरित्र, तामैं मूढ़ जन राचे। या संसारविषै धर्म ही प्रशंसा योग्य है, अर अधर्मका कारण अशुभ कर्म प्रशंसा योग्य नाहीं। यह प्राप्तकर्म नरक निगोदका कारण है। जो दुर्लभ मनुष्य देहकूं पाय धर्मविषै बुद्धि नहीं धरे है सो प्राणी मोह कर्मकरि ठग्या अनन्त भव भ्रमण करै है। पापीने संसार असारकूं सार, शरीरकूं ध्रुव जाना,

आत्महित न किया। प्रमादविषै प्रवरता, रोग समान ये इन्द्रियनिके भोग भले जान भोगे, जब
मैं स्वाधीन हुता तब मोहि सुबुद्धि न आई, अब अन्तकाल आया अब कहा करूं ? घरमें आग लागी
 ता समय तालाब खुदवाना कौन अर्थ ? अर सर्पने डसा ता समय देशांतरसे मंत्राधीश बुलवाने अर
 दूरदेशसे मणि औषधि मंगवाना कौन अर्थ ? तातैं अब सब चिंता तज निराकुल होय, अपना मन
 समाधानविषै ल्याऊं। यह विचार वह धीरवीर घावकर पूर्ण हाथी चढ्या ही भाव मुनि होता भया।
अरहंत सिद्ध आचार्य उपाध्याय साधुनिकूं मनकरि वचनकरि कायकरि बारम्बार नमस्कार कर अर
अरहंत सिद्ध साधु तथा केवली प्रणीत धर्म यही मंगल है, यही उत्तम है इनहींका मेरे शरण है। अढाई
द्वीपविषै पंद्रह कर्मभूमि तिनविषै भगवान अरहंत देव होय हैं वे त्रैलोक्यनाथ मेरे हृदयविषै तिष्ठो। मैं
बारम्बार नमस्कार करू हूं। अब मैं यावज्जीव सब पाप योग तजे,चारों आहार तजे। जे पूर्व पाप उपार्जे
हुते तिनकी निन्दा करू हूं अर सकल वस्तुका प्रत्याख्यान करू हूं। अनादि कालतैं या संसार वनविषै
जो कर्म उपार्जे हुते ते मेरे दुःकृत मिथ्या होहु। भावार्थ-मुझे फल मत देहु, अब मैं तत्व ज्ञानविषै
तिष्ठा, तजिवे योग्य जो रागादिक तिनकूं तजू हूं अर लेयवे योग्य जो निजभाव तिनकूं लेऊं हूं।
ज्ञान दर्शन मेरे स्वभाव ही हैं, सो मोसे अभेद्य हैं। अर जे शरीरादिके समस्त परपदार्थ कर्म के संयोग
कर उपजे, ये मोसे न्यारे हैं। देह त्यागके समय संसारी लोक भूमिका तथा तृणका सांथरा करे हैं सो
सांथरा नाहीं। यह जीव ही पाप बुद्धिरहित होय तब अपना आप ही सांथरा है। ऐसा विचारकर
राजा मधुने दोनों प्रकारके परिग्रह भावोंसे तजे अर हाथीकी पीठ पर बैठा ही सिरके केशलोंच करता
भया, शरीर घावनिकर अतिव्याप्त है तथापि महा दुर्धर धीर्यकूं धर करि अध्यात्मयोगविषै आरूढ़
होय कायाका ममत्व तजता भया, विशुद्ध है बुद्धि जाकी। तब शत्रुघ्न मधुकी परम शांत दशा देखि
नमस्कार करता भया अर कहता भया-हे साधो! मो अपराधीके अपराध क्षमा करहु। देवनिकी
अप्सरा मधुका संग्राम देखनेकूं आई हुतीं, आकाशसे कल्पवृक्षनिके पुष्पोंकी वर्षा करती भईं। मधुका

वीररस शांतरस देख देव भी आश्चर्यकूं प्राप्त भए। बहुरि मधु महा धीर एक क्षणमात्रविषैं समाधि मरण कर महासुखके सागरविषैं तीजे सनतकुमार स्वर्गविषैं उत्कृष्ट देव भया। अर शत्रुघ्न मधुकी स्तुति करता महा विवेकी मथुराविषैं प्रवेश करता भया। जैसे हस्तिनापुरविषैं जयकुमार प्रवेश करता सोहता भया तैसा शत्रुघ्न मधुपुरीविषैं प्रवेश करता सोहता भया। गौतमस्वामी राजा श्रेणिकसूं कहैं हैं हे नराधिपति श्रेणिक! प्राणियोंके या संसारविषैं कर्मोंके प्रसंगकरि नाना अवस्था होय हैं तातैं उत्तमजन सदा अशुभ कर्म तजकरि शुभकर्म करो, जाके प्रभाव करि सूर्य समान कांतिकूं प्राप्त होहु।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महा पद्मपुराण संस्कृतग्रन्थ, ताकी भाषावचनिकाविषैं मधुकायुद्ध अर वैराग्य अर लवणार्णवका मरण वर्णन करनेवाला नवासीवां पर्व पूर्ण भया॥ ८९॥

अथानन्तर असुरकुमारोंके इन्द्र जो चमरेन्द्र महाप्रचंड तिनका दिया जो त्रिशूलरत्न मधुके हुता ताके अधिष्ठाता देव त्रिशूलकूं लेकर चमरेन्द्रके पास गए। अतिखेद खिन्न महा लज्जावान होय मधुके मरणका वृत्तांत असुरेन्द्रसूं कहते भए। तिनकी मधुसूं अतिमित्रता सो पातालसे निकसकरि महाक्रोध के भरे मथुरा आयवेकूं उद्यमी भए। ता समय गरुडेन्द्र असुरेन्द्रके निकट आये अर पूछते भए—हे दैत्येंद्र! कौन तरफ गमनकूं उद्यमी भए हो? तब चमरेन्द्रने कही—जाने मेरा मित्र मधु मार्‍या है ताहि कष्ट देवेकूं उद्यमी भया हूं। तब गरुडेन्द्रने कही कहा विशिल्याका माहात्म्य तुमने न सुन्या है? तब चमरेन्द्रने कही वह अद्भुत अवस्था विशिल्याकी कुमार अवस्थाविषैं ही हुती अर अब तो निर्विष भुजंगी समान है। जौलग विशिल्याने वासुदेवका आश्रय न किया हुता तौलग ब्रह्मचर्यके प्रसादतैं असाधारण शक्ति हुती, अब वह शक्ति विशिल्याविषैं नाहीं। जे निरतिचार बालब्रह्मचर्य धारैं तिनके गुणनिकी महिमा कहिवेविषैं न आवै। शीलके प्रसादकरि सुर असुर पिशाचादि सब डरैं। जौलग शीलरूप खड्गकूं धारैं तौलग सबकर जीत्या न जाय, महादुर्जय है। अब विशल्या पतिव्रता है, व्यभिचारिणी ७४४

नाहीं तातैं वह शक्ति नाहीं। मद्य मांस मैथुन यह महापाप हैं। इनके सेवनसे शक्तिका नाश होय है। जिनका व्रतशील नियमरूप कोट भग्न न भया तिनकूं कोई विघ्न करवे समर्थ नाहीं। एक कालाग्नि नाम रुद्र महा भयंकर भया सो हे गरुडेन्द्र ! तुम सुना ही होयगा। बहुरि वह स्त्रीसूं आसक्त होय नाशकूं प्राप्त भया। तातैं विषयका सेवन विषसे भी विषम है। परम आश्चर्यका कारण एक अखंड ब्रह्मचर्य है। अब मैं मित्रके शत्रुपै जाऊंगा, तुम तिहारे स्थानक जावहु। ऐसा गरुडेन्द्रसूं कहकर चमरेन्द्र मथुरा आए, मित्रके मरणकरि कोपरूप मथुराविषै वही उत्सव देख्या जो मधुके समय हुता। तब असुरेन्द्रने विचारी—ये लोक महादुष्ट कृतघ्न हैं, देशका धनी पुत्र सहित मरगया है, अर अन्य आय बैठ्या है, इनकूं शोक चाहिए कि हर्ष ? जाके भुजाकी छाया पाय बहुतकाल सुखसूं बसे ता मधुकी मृत्युका दुख इनकूं क्यों न भया ? ये महा कृतघ्न हैं, सो कृतघ्नका मुख न देखिये। लोकनिकरि शूरवीर सेवायोग्य, शूरवीरनिकर पण्डित सेवा योग्य हैं। सो पण्डित कौन ? जो पराया गुण जानैं। सो ये कृतघ्न महामूर्ख हैं। ऐसा विचारकर मथुराके लोकनिपर चमरेन्द्र कोप्या, इन लोकोंका नाश करूं। यह मथुरापुरी या देशसहित क्षय करूं। महाक्रोधके वश होय असुरेन्द्र लोकनिकूं दुस्सह उपसर्ग करता भया, अनेक रोग लोगनिकूं लगाए। प्रलयकालकी अग्नि समान निर्दई होय लोकरूप वनकूं भस्म करवेकूं उद्यमी भया। जो जहां ऊभा हुता सो वहां ही मर गया, अर बैठ्या हुता सो बैठा ही रह गया। सूता था सो सूता ही रहगया। मरी पड़ी, लोककूं उपसर्ग देख, मित्र देव देवताके भयसे शत्रुघ्न अयोध्या आया। सो जीतकर महाशूरवीर भाई आया बलभद्र नारायण अति हर्षित भए, अर शत्रुघ्नकी माता सुप्रभा भगवानकी अद्भुत पूजा करावती भई। अर दुखी जीवनिकूं करुणाकर, अर धर्मात्मा जीवनिकूं अति विनयकर अनेक प्रकार दान देती भई। यद्यपि अयोध्या महा सुंदर है, स्वर्णरत्ननिके मंदिरनिकर मंडित है, कामधेनु समान सर्व कामना पूरणहारी देवपुरीसमान पुरी है तथापि शत्रुघ्नका जीव मथुरासूं अति आसक्त, सो अयोध्याविषैं अनुरागी न होता भया। जैसैं कईएक दिन सीता विना राम

उदास रहे तैसैं शत्रुघ्न मथुरा बिना अयोध्याविषैं उदास रहै। जीवोंकूं सुन्दर वस्तुका संयोग स्वप्न समान क्षण भंगुर है, परम दाहकूं उपजावै है, ज्येष्ठके सूर्यसे हू अधिक आतापकारी है।

इति श्रीरविषेणाचार्य विरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रंथ ताकी भाषावचनिकाविषैं मथुराके लोकनिकूं असुरेन्द्रकृत उपसर्ग का वर्णन करनेवाला नव्वेवां पर्व पूर्ण भया ॥ ९० ॥

अथानन्तर राजा श्रेणिक गौतम स्वामीसूं पूछता भया—हे भगवन्! कौन कारण कर शत्रुघ्न मथुरा हीकूं याचता भया। अयोध्याहूतैं ताहि मथुराका निवास अधिक क्यों रुचा? अनेक राजधानी स्वर्गलोक समान सो न वांछी अर मथुरा ही वांछी, ऐसी मथुरासूं कहा प्रीति? तब गौतमस्वामी ज्ञानके समुद्र, सकल सभारूप नक्षत्रनिके चन्द्रमा, कहते भये—हे श्रेणिक! इस शत्रुघ्नके अनेक भव मथुराविषैं भए तातैं याकूं मधुपुरीसूं अधिक स्नेह भया। यह जीव कर्मनिके सम्बन्धतैं अनादिकालका संसार सागर विषैं बसै है सो अनन्त भव धरे। यह शत्रुघ्नका जीव अनन्त भव भ्रमणकरि मथुराविषै एक यमनदेव नामा मनुष्य भया। महा क्रूर, धर्मसे विमुख सो मरकरि शूकर खर काग ये जन्म धरि अज—पुत्र भया सो अग्नि विषैं जल मूवा। भैंसा जलके लादनेका भया सो छै बार भैंसा होय दुखसूं मूवा। नीचकुलविषैं निर्धन मनुष्य भया। हे श्रेणिक! महा पापी तो नरककूं प्राप्त होय है अर पुण्यवान जीव स्वर्ग विषैं देव होय है, अर शुभाशुभमिश्रित करि मनुष्य होय है। बहुरि यह कुलन्धरनामा ब्राह्मण भया, रूपवान अर शील रहित। सो एक समय नगरका स्वामी दिग्विजयनिमित्त देशांतर गया ताकी ललिता नाम राणी महलके झरोखा विषैं तिष्ठे हुती सो पापिनी इस दुराचारी विप्रकूं देख कामबाणकर वेधी गई। सो याहि महलविषैं बुलाया। एक आसनपर राणी अर यह रहे। ताही समय राजा दूरका चल्या अचानक आया अर याहि महलविषैं देख्या सो राणी मायाचारकर कही—जो यह बंदीजन है, भिक्षुक है तथापि राजाने न मानी। राजाके किंकर ताहि पकड़कर नृपकी आज्ञातैं आठों अंग दूर करवे के अर्थ

नगरके बाहिर ले जाते हुते। सो कल्याणनामा साधुने देख कही जो तू मुनि होय तो तोहि छुड़ावैं। तब यानैं मुनि होना कबूल किया। तब किंकरनिसे छुड़ाया सो मुनि होय महातपकरि स्वर्गविषैं ऋजु विमानका स्वामी देव भया। हे श्रेणिक! धर्मसे कहा न होय?

अथानन्तर मथुराविषैं चन्द्रभद्र राजा, ताके राणी धारा, ताके भाई सूर्यदेव, अग्निदेव, यमुना देव। अर आठपुत्र, तिनके नाम श्रीमुख, संमुख, सुमुख, इन्द्रमुख, प्रमुख, उग्रमुख, अर्कमुख, परमुख। अर राजा चन्द्रभद्रके दूजी राणी कनकप्रभा ताकूं वह कुलन्धर नामा ब्राह्मणका जीव स्वर्गविषैं देव होय तहांतैं चयकर अचल नाम पुत्र भया सो कलावान अर गुणनिकर पूर्ण, सर्व लोकके मनका हरण-हारा, देव कुमार तुल्य क्रीडाविषैं उद्यमी होता भया।

अथानन्तर एक अंकनामा मनुष्य धर्मकी अनुमोदनाकर श्रावस्ती नगरीविषैं एक कम्पनाम पुरुष ताके अंगिका नामा स्त्री उसके अप नामा पुत्र भया सो अविनयी, तब कम्पने अपकूं घरसे निकास दिया सो महादुखी भूमिविषैं भ्रमण करै। अर अचलनामा कुमार पिताकूं अतिवल्लभ, सो अचल कुमारकी बड़ी माता धरा उसके तीन भाई अर आठ पुत्र तिन्होंने एकांतमें अचलके मारणेका मन्त्र किया सो यह वार्ता अचलकुमारकी माताने जानी। तब पुत्रकूं भगाय दिया। सो तिलकवनविषैं उसके पांवविषैं कांटा लाग्या सो कम्पका पुत्र अप काष्ठका भार लेकर आवे सो अचल कुमारकूं कांटेके दुखसूं करुणावंत देख्या। तब अपने काष्ठका भार मेल छुरीसे कुमारका कांटा काढ़ कुमारकूं दिखाया सो कुमार अति प्रसन्न भया अर अपकूं कहा—तू मेरा अचलकुमार नाम याद रखियो। अर मोहि भूपति सुने वहां मेरे निकट आइयो। इस भांति कह अपकूं विदा किया सो अप गया। अर राजपुत्र महादुखी कौशांबी नगरीके विषैं आया, महापराक्रमी सो बाण विद्याका गुरु जो विशिषाचार्य उसे जीतकर प्रतिष्ठा पाई हुती सो राजाने अचल कुमारकूं नगरविषैं ल्यायकर अपनी इन्द्रदत्ता नामा पुत्री परणाई। अनुक्रमकरि पुण्यके प्रभावसे राज पाया, सो अंगदेश आदि अनेक देशनिकूं जीतकर

महा प्रतापी मथुरा आया, नगरके बाहिर डेरा दिया, सेना साथ। सब सामन्तोंने सुना कि यह राजा चन्द्रभद्रका पुत्र अचलकुमार है सो सब आय मिले। राजा चन्द्रभद्र अकेला रहगया। तब राणी धराके भाई सूर्यदेव अग्निदेव यमुनादेव इनकूं संधि करने ताइँ भेजे सो ये जायकर कुमारकूं देख बिलखे होय भागे, अर धराके आठ पुत्र हू भाग गए। अचलकुमारकी माता आय पुत्रकूं लेगई, पितासूं मिलाया, पिताने याकूं राज्य दिया। एक दिन राजा अचल कुमार नटोंका नृत्य देखे था ताही समय अप आया, जाने इसका वनविषै कांटा काढा था। सो ताहि दरवान धक्का देय काढ़े हुते तो राजाने मने किए, अर अपकूं बुलाया, बहुत कृपा करी अर जो वाकी जन्मभूमि श्रावस्ती नगरी हुती सो ताहि दई। अर ये दोनों परममित्र भेले ही रहैं। एक दिवस महासंपदाके भरे उद्यानविषै क्रीड़ाकूं गये सो यशसमुद्र आचार्यको देखकरि दोनों मित्र मुनि भये। सम्यक्दृष्टि परम संयमकूं आराध, समाधिमरण कर स्वर्गविषै उत्कृष्ट देव भये। तहांसे चयकर अचलकुमारका जीव राजा दशरथके यह शत्रुघ्न पुत्र भया। कनेक भवके सम्बन्धसूं याकी मथुरासूं अधिक प्रीति भई। गौतम स्वामी कहै हैं—हे श्रेणिक! वृक्षकी छाया जो प्राणी बैठचा होय तो ता वृक्षसूं प्रीति होय है। जहां अनेक भव धरै तहांकी कहा बात? संसारी जीवनिकी ऐसी अवस्था है। अर वह अपका जीव स्वर्गतैं चयकर कृतांतवक्र सेनापति भया। या भांति धर्मके प्रसादतैं ये दोनों मित्र सम्पदाकूं प्राप्त भये। अर जे धर्मसे रहित हैं तिनके कबहूं सुख नाहीं। अनेक भवके उपार्जे दुखरूप मल तिनके धोयवेकूं धर्मका सेवन ही योग्य है, अर जलके तीर्थनिविषै मनका मैल नाहीं धुवै है। धर्मके प्रसादतैं शत्रुघ्नका जीव सुखी भया। ऐसा जानकर विवेकी जीव धर्मविषै उद्यमी होवो। धर्मकूं सुनकर जिनको आत्मकल्याणविषै प्रीति नाहीं होय है तिनका श्रवण वृथा है, जैसैं जो नेत्रवान सूर्यके उदयविषै पड़े तो ताके नेत्र वृथा हैं।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रन्थ, ताकी भाषावचनिकाविषै शत्रुघ्नके पूर्वभवका
वर्णन करनेवाला इक्याणवां पर्व पूर्ण भया ।।९१।।

अथानन्तर आकाशविषैं गमन करणहारे सप्तचारण ऋषि सप्त सूर्य समान है कांति जिनकी सो विहार करते निर्ग्रंथ मुनीन्द्र मथुरापुरी आये। तिनके नाम सुरमन्यु, श्रीमन्यु, श्रीनिचय, सर्वसुन्दर, जयवान, विनयलाल, सजलमित्र। ये सबही महाचारित्रके पात्र, अति सुन्दर, राजा श्रीनन्दन, राणी धरणी सुन्दरीके पुत्र, पृथ्वीविषै प्रसिद्ध। पिता सहित प्रीतंकर स्वामीका केवलज्ञान देख प्रतिबोधकूं प्राप्त भये थे। पिता अर प्रीतंकर केवलीके निकट मुनि भये अर एक महिनेका बालक तुंवरुनामा पुत्र ताकूं राज्य दिया। पिता श्रीनन्दन तो केवली भया अर ये सातों महामुनि चारण ऋद्धि आदि अनेक ऋद्धिके धारक श्रुतकेवली भये। सो चातुर्मासिक विषैं मथुराके वनविषै बटके वृक्ष तलै आय विराजे। तिनके तपके प्रभावकरि चमरेन्द्रकी प्रेरी मरी दूर भई, जैसे श्वसुरकूं देखकर व्यभिचारिणी नारी दूर भागै। मथुराका समस्त मण्डल सुखरूप भया, बिना बाहे धान्य सहजही उगे, समस्त रोगनिसूं रहित मथुरापुरी ऐसी शोभती भई जैसे नई वधू पतिकूं देखकर प्रसन्न होय। वह महामुनि रसपरित्यागादि तप अर बेला तेला पक्षोपवासादि अनेक तपके धारक, जिनकूं चार महीना चौमासे रहना तो मथुराके वनविषैं, अर चारणऋद्धिके प्रभावतैं चाहे जहां आहार कर आवें। सो एक निमिष मात्रविषैं आकाशके मार्ग होय पोदनापुर पारणा कर आवैं, बहुरि विजयपुर कर आवै। उत्तम श्रावकके घर पात्र भोजन कर संयम निमित्त शरीरकूं राखें। कर्मके खिपायवेकूं उद्यमी। एक दिन वे धीर वीर महा शान्त भावके धारक जूडा प्रमाण धरती देख विहार कर ईर्या समितिके पालनहारे आहारके समय अयोध्या आये। शुद्ध भिक्षाके लेनहारे, प्रलंबित हैं महा भुजा जिनकी, अर्हद्दत्त सेठके घर आय प्राप्त भए। तब अर्हद्दत्तने विचारी
वर्षाकालविषैं मुनिका विहार नाहीं, ये चौमासा पहिले तो यहां आये नाहीं। अर मैं यहां जे जे साधु विराजे हैं, गुफामें, नदीके तीर, वृक्षतलै, शून्य स्थानकविषैं, वनके चैत्यालयनिविषैं, जहां २ चौमासा साधु तिष्ठे हैं, वे मैं सर्व बंदे। यह तो अब तक देखे नाहीं। ये आचारांग सूत्रकी आज्ञासे पराङ्मुख इच्छाविहारी हैं, वर्षाकालविषैं भी भ्रमते फिरैं हैं, जिन आज्ञा पराङ्मुख, ज्ञानरहित, निराचारी, आचार्यकी आम्नाय

से रहित हैं। जिन आज्ञा पालक होय तो वर्षाविषैं विहार क्यों करें ? सो यह तो उठ गया, अर याके पुत्रकी बधूने अति भक्ति कर प्रासुक आहार दिया। सो मुनि आहार लेय भगवानके चैत्यालय आय जहां द्युतिभट्टारक विराजते हुते ये सप्तर्षि ऋद्धिके प्रभावकर धरतीसे चार अंगुल अलिप्त चले आए अर चैत्यालयविषैं धरतीपर पग धरते आए। आचार्य उठ खड़े भए,अति आदरसे इनकूं नमस्कार किया। अर जे द्युतिभट्टारकके शिष्य हुते तिन सबनै नमस्कार किया। बहुरि ये सप्त तो जिन बन्दनाकरि आकाशके मार्ग मथुरा गए। इनके गए पीछे अर्हद्दत्त सेठ चैत्यालयविषैं आया। तब द्युतिभट्टारकने कही सप्तमहर्षि महायोगीश्वर चारणमुनि यहां आए हुते, तुमने हू वह बंदे हैं ? वे महा पुरुष महातपके धारक हैं, चार महिने मथुरा निवास किया है,अर चाहें जहां आहार ले जांय। आज अयोध्याविषैं आहार लिया, चैत्यालय दर्शन कर गए,हमसे धर्मचर्चा करी, वे महा तपोधन नगरगामी शुभ चेष्टाके धरणहारे,परम उदार,ते मुनि बन्दिवे योग्य हैं। तब वह श्रावकनिविषैं अग्रणी आचार्यके मुखसूं चारण मुनिनिकी महिमा सुनकर खेदखिन्न होय पश्चाताप करता भया। धिक्कार मोहि मैं सम्यक्दर्शन रहित वस्तुका स्वरूप न पिछान्या मैं अत्याचारी मिथ्यादृष्टि, मो समान और अधर्मी कौन ? वे महामुनि मेरे मन्दिर आहारकूं आए अर मैं नवधा भक्तिकर आहार न दिया। जो साधुकूं देख सन्मान न करै अर भक्तिकर अन्नजल न देय सो मिथ्यादृष्टि है। मैं पापी पापात्मा, पापका भाजन, महा निंद्य, मो समान और अज्ञानी कौन ? मैं जिनवाणीसे विमुख। अब मैं जौलग उनका दर्शन न करूं तौलग मेरे मनका दाह न मिटै। चारण मुनिनिकी तो यही रीति है-चौमासे निवास तो एक स्थान करैं अर आहार अनेक नगरीविषै कर आवैं। चारण ऋद्धिके प्रभावकरि उनके अंगसे जीवनिकूं बाधा न होय। ७५०

अथानन्तर कार्त्तिककी पूनों नजीक जान सेठ अर्हद्दत्त महासम्यक्दृष्टि नृपतुल्य विभूति जाके, अयोध्यातैं मथुराकूं सर्वकुटुम्ब सहित सप्तऋषिके पूजन निमित्त चाल्या। जाना है मुनिनिका महात्म्य जाने, अर अपनी बारम्बार निन्दा करै है। रथ हाथी पियादे तुरंगनिके असवार इत्यादि बड़ी सेना

सहित योगीश्वरनिकी पूजाकूं शीघ्रही चाल्या। बड़ी विभूति कर युक्त शुभ ध्यानविषैं तत्पर कार्तिक सुदी सप्तमीके दिन मुनिनिके चरणनिविषैं आय पहुँचा। वह उत्तम सम्यक्त्वका धारक विधिपूर्वक मुनि बन्दनाकर मथुराविषै अति शोभा करावता भया। मथुरा स्वर्ग समान सोहती भई। यह वृत्तांत सुन शत्रुघ्न शीघ्रही महा तुरंग चढ्या सप्तऋषिनिके निकट आया अर शत्रुघ्नकी माता सुप्रभा भी मुनिनिकी भक्ति कर पुत्रके पीछे ही आई। अर शत्रुघ्न नमस्कार कर मुनिनिके मुख धर्म श्रवण करता भया। मुनि कहते भए, हे नृप ! यह संसार असार है, वीतरागका मार्ग सार है, जहां श्रावकके बारह व्रत कहे, मुनिके अठाईस मूल गुण कहे। मुनीनिकूं निर्दोष आहार लेना। अकृत अकारित राग रहित प्रासुक आहार विधिपूर्वक लीये योगीश्वरोंके तपकी बढवारी होय। तब वह शत्रुघ्न कहता भया—हे देव ! आपके आये या नगरतैं मरी गई, रोग गए, दुर्भिक्ष गया, सब विघ्न गए, सुभिक्ष भया, सब साता भई, प्रजाके दुख गए, सब समृद्धि भई, जैसे सूर्यके उदयतैं कमलनी फूलै, कईएक दिन आप यहां ही तिष्ठो।

तब मुनि कहते भए—हे शत्रुघ्न ! जिन आज्ञा सिवाय अधिक रहना उचित नाहीं। यह चतुर्थकाल धर्मके उद्योतका कारण है। याविषैं मुनीन्द्रका धर्म भव्य जीव धारै हैं, जिन आज्ञा पाले हैं, महामुनिके केवलज्ञान प्रकट होय है। मुनिसुव्रतनाथ तो मुक्त भए, अब नमि, नेमि,पार्श्व, महावीर चार तीर्थंकर और होवेंगे। बहुरि पंचमकाल जाहि दुखमाकाल कहिये सो धर्मकी न्यूनतारूप प्रवरतेगा। ता समय पाखंडी जीवनिकर जिनशासन अति ऊंचा है तोहू आच्छादित होयगा, जैसैं रजकर सूर्यका बिंब आच्छादित होय। पाखंडी निर्दई दया धर्मकूं लोपकर हिंसाका मार्ग प्रवर्तन करेंगे। ता समय मसान समान ग्राम, अर प्रेत समान लोक, कुचेष्टाके करणहारे होवेंगे, महाकुधर्मविषैं प्रवीण क्रूर चोर पाखण्डी, दुष्ट जीव तिनकर पृथ्वी पीड़ित होयगी। किसान दुखी होवेंगे, प्रजा निर्धन होयगी, महा हिंसक जीव परजीवन के घातक होवेंगे, निरन्तर हिंसाकी बढ़वारी होयगी, पुत्र माता पिताकी आज्ञा से विमुख

होवेंगे, अर माता पिता हू स्नेह रहित होवेंगे। अर कलिकालविषै राजा लूटेरे होवेंगे, कोई सुखी नजर न आवेगा। कहिवेके सुखी वे पापचित्त दुर्गतिकी दायक, कुकथा कर परस्पर पाप उपजावेंगे। हे शत्रुघ्न ! कलिकालविषै कषायकी बहुलता होवेगी, अर अतिशय समस्त विलय जावेंगे। चारण मुनि देव विद्याधरनिका आवना न होयगा। अज्ञानी लोक नग्नमुद्रा के धारक मुनिनकू देख निन्दा करेंगे, मलिनचित्त मूढ़ जन अयोग्य को योग्य जानेंगे। जैसे पतंग दीपककी शिखाविषै पड़े तैसे अज्ञानी पापपंथविषै पड़ दुर्गतिके दुख भोगेंगे। अर जे महा शान्त स्वभाव तिनकी दुष्ट निन्दा करेंगे विषयी जीवनिकू भक्तिकर पूजेंगे। दीन अनाथ जीवनिकू दया भावकर कोई न देवेगा, सो वृथा जायगा। जैसे शिलाविषै बीज बोय निरन्तर सींचे तो हू कुछ कार्यकारी नाहीं, तैसे कुशील पुरुषनिकू विनय भक्तिकर दीया कल्याणकारी नहीं। जो कोई मुनिनकी अवज्ञा करे है अर मिथ्या मार्गियोंकू भक्तिकर पूजे है सो मलयागिरिचन्दनकूं तजकर कंटकवृक्षकू अंगीकार करे है। ऐसा जानकर हे वत्स ! तू दान पूजाकरि जन्म कृतार्थकर, गृहस्थीकूं दान पूजा ही कल्याणकारी है, अर समस्त मथुराके लोक धर्मविषै तत्पर होवो, दया पालो, साधर्मियोंसे वात्सल्य धारो, जिनशासनकी प्रभावना करहु, घर-घर जिनबिंब थापहु, पूजा अभिषेककी प्रवृत्ति करहु, जाकरि सब शांत हो, जो जिन धर्मका आराधन न करेगा अर जाके घरविषै जिन पूजा न होयगी, दान न होवेगा ताहि आपदा पीड़ेगी। जैसे मृगकू व्याघ्री भखै तैसे धर्म रहितकूं मरी भखैगी। अंगुष्ठ प्रमाण हू जिनेन्द्रकी प्रतिमा जिसके विराजेगी उसके घरविषै मरी यूं भाजेगी जैसे गरुडके भयसे नागिनी भागे। ये वचन मुनिनिके सुन शत्रुघ्नने कही—हे प्रभो ! जो आप आज्ञा करी त्यों ही लोक धर्मविषै प्रवर्तेंगे। ७५२

अथानन्तर मुनि आकाश मार्ग विहार कर अनेक निर्वाण भूमि वंदकरि सीताके घर आहारकूं आये। कैसे हैं मुनि ? तपही है धन जिनके। सीता महा हर्षकूं प्राप्त होय श्रद्धा आदि गुणोंकरि मंडित परम अन्नकर विधिपूर्वक पारणा करावती भई। मुनि आहार लेय आकाशके मार्ग विहार कर गए

शत्रुघ्नने नगरीके बाहिर अर भीतर अनेक जिनमन्दिर कराए। घर घर जिनप्रतिमा पधराईं, नगरी सब उपद्रवरहित भई। बन उपवन फल पुष्पादिक कर शोभित भए, वापिका सरोवरी कमलों कर मंडित सोहती भई, पक्षी शब्द करते भए, कैलाशके तटसमान उज्ज्वल मन्दिर नेत्रोंकूं आनन्दकारी विमान तुल्य सोहते भए, अर सर्व किसान लोक सम्पदाकर भरे सुखसूं निवास करते भए। गिरिके शिखर समान ऊंचे अनाजोंके ढेर गावोंविषै सोहते भए। स्वर्ण रत्नादिककी पृथ्वीविषै विस्तीर्णता होती भई। सकल लोक सुखी, रामके राज्यविषै देवों समान अतुल विभूतिके धारक, धर्म अर्थ कामविषै तत्पर होते भए। शत्रुघ्न मथुराविषै राज्य करै। रामके प्रतापसे अनेक राजावोंपर आज्ञा करता सोहै, जैसे देवोंविषै वरुण सोहै। या भांति मथुरापुरीका ऋद्धिके धारी मुनिनके प्रतापकरि उपद्रव दूर होता भया। जो यह अध्याय बांचे सुने सो पुरुष शुभनाम शुभगोत्र शुभ साता वेदनीयका बंध करै। जो साधुवोंकी भक्तिविषै अनुरागी होय अर साधुवोंका समागम चाहे वह मनवांछित फलकूं प्राप्त होय। या साधुवोंके संगकूं पायकरि धर्मकूं आराधकर प्राणी सूर्यसे भी अधिक दीप्तिकूं प्राप्त होहु॥

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रन्थ ताकी भाषावचनिकाविषै मथुरा का उपसर्ग निवारण वर्णन करनेवाला बानवेंवां पर्व पूर्ण भया॥ ९२ ॥

अथानन्तर विजयार्धका दक्षिण श्रेणिविषै रत्नपुर नामा नगर, वहां राजा रत्नरथ, उसकी राणी पूर्णचन्द्रानना, उसके पुत्री मनोरमा महा रूपवती। उसे यौवनवती देख राजा वर ढूंढवेकी बुद्धिकर व्याकुल भया। मंत्रियोंसूं मंत्र किया कि यह कुमारी कौनकूं परणाऊं? या भांति राजा चिंतायुक्त। कई एक दिन गए एक दिन राजाकी सभाविषै नारद आया। राजाने बहुत सन्मान किया। नारद सब ही लौकिक रीतियोंविषैं प्रवीण, उसे राजाने पुत्रीके विवाहनेका वृत्तांत पूछ्या। तब नारदने कही रामका भाई लक्ष्मण महा सुन्दर है, जगतविषै मुख्य है, चक्रके प्रभावकर नवाए हैं समस्त नरेन्द्र जिसने, ऐसी

कन्या उसके हृदयविषै आनन्ददायिनी होवे, जैसे कुमुदनीके वनकूं चांदनी आनन्दायिनी होय। जब या भांति नारदने कही तब रत्नरथके पुत्र हरिवेग मनोवेग वायुवेगादि महामानी स्वजनोंके घातकर उपज्या है वैर जिनके, प्रलयकालकी अग्नि समान प्रज्ज्वलित होय कहते भए—जो हमारा शत्रु जिसे हम मारा चाहैं उसे कन्या कैसैं देवैं ? यह नारद दुराचारी है, इसे यहांसे काढहु। ऐसे वचन राजपुत्रोंके सुनकिकर नारद पर दौड़े तब नारद आकाशमार्ग विहारकर शीघ्र ही अयोध्या लक्ष्मणपै आया। अनेक देशांतरकी वार्ता कह रत्नरथकी पुत्री मनोरमाका चित्राम दिखाया, सो वह कन्या तीनलोककी सुन्दरियोंका रूप एकत्र कर मानों बनाई है। सो लक्ष्मण चित्रपट देख अति मोहित होय कामके वश भया। यद्यपि महा धीर वीर है तथापि वशीभूत होय गया। मनविषै विचारता भया जो यह स्त्रीरत्न मुझे न प्राप्त होय तो मेरा राज्य निष्फल अर जीतव्य वृथा। लक्ष्मण नारदसूं कहता भया—हे भगवन्! आपने मेरे गुणकीर्तन किये, अर उन दुष्टोंने आपसूं विरोध किया, सो वे पापी प्रचण्ड मानी, महा क्षुद्र, दुरात्मा, कार्यके विचारसूं रहित हैं, उनका मान मैं दूर करूंगा। आप समाधानविषै चित्त लावो। तिहारे चरण मेरे सिर पर हैं अर उन दुष्टनिकूं तिहारे पायन पाड़ूंगा। ऐसा कहकर विराधित विद्याधरकूं बुलाया अर कही रत्नपुर ऊपर हमारी शीघ्र ही तैयारी हो। तातैं पत्र लिख सर्व विद्याधरनिकूं बुलावो, रणका सरंजाम करावो।

तब विराधितने सबनिकूं पत्र पठाये। वे महासेना सहित शीघ्र ही आए। लक्ष्मण राम सहित सर्व नृपोंकूं लेकर रत्नपुरकी तरफ चाले, जैसे लोकपालों सहित इन्द्र चाले। जीत जिसके सन्मुख है, नानाप्रकारके शस्त्रोंके समूहकर आच्छादित करी हैं सूर्यकी किरण जानें, सो रत्नपुर जाय पहुँचे, उज्ज्वल छत्रकर शोभित। तब राजा रत्नरथ परचक्र आया जान अपनी समस्त सेना सहित युद्धकूं निकस्या महातेजकर, सो चक्र करोत कुठार बाण खड्ग बरछी पाश गदादि आयुधनिकर तिनके परस्पर महा युद्ध भया। अप्सराओंके समूह युद्ध देख योधावों पर पुष्पवृष्टि करते भए। लक्ष्मण परसेना-

रूप समुद्रके सोखिवेकूं बड़वानल समान आप युद्ध करनेकूं उद्यमी भया। परचक्रके योधारूप जलचरों के क्षयका कारण, सो लक्ष्मणके भयकर रथोंके, तुरंगोंके, हाथियोंके, असवार सब दशों दिशाओंकू भागे, अर इन्द्रसमान है शक्ति जिनकी, ऐसे श्रीराम अर सुग्रीव हनुमान इत्यादि सब ही युद्धकूं प्रवरते। इन योधाओं कर विद्याधरोंकी सेना ऐसे भागी जैसे पवनकर मेघ पटल विलाय जावैं। तब रत्नरथके पुत्रोंकू भागते देख नारदने परम हर्षित होय ताली देय हंसकर कहा अरे रत्नरथके पुत्र हो! तुम महा चपल, दुराचारी, मंदबुद्धि, लक्ष्मणके गुणोंकी उच्चता न सह सके तो अब अपमानकूं पाय क्यों भागो हो? तब उन्होंनें कुछ जवाब नहीं दिया। उसी समय मनोरमा कन्या अनेक सखियों सहित रथपर चढ़कर महा प्रेमकी भरी लक्ष्मणके समीप आई जैसें इन्द्राणी इन्द्रके समीप आवै। उसे देख कर लक्ष्मण क्रोधरहित भए, भृकुटी चढ़ रही थी सो शीतल वदन भए। कन्या आनन्दकी उपजावन-हारी। तब राजा रत्नरथ अपने पुत्रों सहित मान तज नानाप्रकारकी भेंट लेकर श्रीराम लक्ष्मणके समीप आया। राजा देश कालकी विधिकूं जानै है अर देखा है अपना अर इनका पुरुषार्थ जिसने। तब नारद सबके बीच रत्नरथकूं कहते भए। हे रत्नरथ! अब तेरी कहा वार्ता तू रत्नरथ है कि रजरथ है? वृथा मान करै हुता सो नारायण बलदेवोंसे मानकर कहा? अर ताली बजाय रत्नरथके पुत्रोंसे हंसकर कहता भया—हो रत्नरथके पुत्र हो? यह वासुदेव जिनकूं तुम अपने घरविषै उद्धत चेष्टा रूप होय मनविषै आया सो ही कहो, अब पायन क्यों पडो हो? तब वे कहते भए—हे नारद! तिहारा कोप भी गुण करै, जो तुम हमसे कोप किया तो बड़े पुरुषोंका सम्बन्ध भया। इनका सम्बन्ध दुर्लभ है। या भांति क्षणमात्र वार्ता करि सब नगरविषै गए। श्रीरामकूं श्रीदामा परणाई, रति समान है रूप जाका। उसे पायकर राम आनन्दसे रमते भए। अर मनोरमा लक्ष्मणकूं परणाई सो साक्षात् मनोरमा ही है। या भांति पुण्यके प्रभावकरि अद्भुत वस्तुकी प्राप्ति होय है। तातैं भव्यजीव सूर्यसे अधिक प्रकाशरूप जो

वीतरागका मार्ग उसे जानकर दया धर्मकी आराधना करहु।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रंथ, ताकी भाषावचनिकाविषै रामकूं श्रीदामाका लाभ अर लक्ष्मणकूं मनोरमाका लाभ वर्णन करने वाला तिराणवेवां पर्व पूर्ण भया ॥९३॥

अथानन्तर और भी विजयार्धके दक्षिण श्रेणीविषै विद्याधर हुते वे सब लक्ष्मणने युद्धकर जीते। कैसा है युद्ध ? जहां नानाप्रकारके शस्त्रोंके प्रहारकरि, अर सेनाके संघट्टकर अंधकार होय रहा है। गौतमस्वामी कहै हैं–हे श्रेणिक ! वे विद्याधर अत्यन्त दुस्सह महा विषधर समान हुते सो सब राम लक्ष्मणके प्रतापकर मानरूप विषसे रहित होय गए, इनके सेवक भए। तिनकी राजधानी देवोंकी पुरी समान, तिनके नाम कईएक तुझे कहूं हूं–रविप्रभ, घनप्रभ, कांचनप्रभ, मेघप्रभ, शिवमन्दिर, गंधर्वगीत, अमृतपुर, लक्ष्मीधर, किन्नरपुर, मेघकूट, मर्त्यगति, चक्रपुर, रथनूपुर, बहुरव, श्रीमलय, श्रीगृह, अरिंजय, भास्करप्रभ, ज्योतिपुर, चन्द्रपुर, गंधार, मलय, सिंहपुर, श्रीविजयपुर, भद्रपुर, यक्षपुर, तिलक, स्थानक इत्यादि बड़े बड़े नगर सो सब राम लक्ष्मणने वशमें किए। सब पृथ्वीकूं जीत सप्त रत्नकर सहित लक्ष्मण नारायणके पदका भोक्ता होता भया। सप्तरत्नोंके नाम चक्र, शंख, धनुष, शक्ति, गदा, खड्ग, कौस्तुभमणि। अर रामके चार हल, मूसल, रत्नमाला, गदा। या भांति दोनों भाई अभेदभाव पृथ्वीका राज्य करैं। तब श्रेणिक गौतम स्वामीकूं पूछता भया–हे भगवन् ! तिहारे प्रसाद से मैं राम लक्ष्मणका माहात्म्य विधिपूर्वक सुन्या। अब लवण अंकुशकी उत्पत्ति अर लक्ष्मणके पुत्रों का वर्णन सुना चाहूं हूं, सो आप कहो। तब गौतम गणधर कहते भए–हे राजन् ! मैं कहूं हूं सुन–राम लक्ष्मण जगतविषै प्रधान पुरुष निःकंटक राज्य भोगते भए। तिनके दिन, पक्ष, मास वर्ष महा सुखसे व्यतीत होंय। जिनके बड़े कुलकी उपजी देवांगना समान स्त्री, लक्ष्मणके सोलह हजार, तिनविषै आठ पटराणी, कीर्तिसमान, लक्ष्मीसमान, रति समान गुणवती, शीलवन्ती, अनेक कलाविषै निपुण,

महा-सौम्य, सुन्दराकार तिनके नाम-प्रथम पटराणी राजा द्रोणमेघकी पुत्री विशल्या, दूजी रूपवती जिससमान और रूपवान नाहीं, तीजी वनमाला, चौथी कल्याणमाला, पांचमी रतिमाला, छठी जिन पद्मा जिसने अपने मुखकी शोभाकर कमल जीते, सातमी भगवती, आठमी मनोरमा। अर रामके राणी आठ हजार देवांगना समान तिनविषैं चार पटराणी जगतविषै प्रसिद्ध है कीर्ति जिनकी। जिनविषैं प्रथम जानकी, दूजी प्रभावती, तीजी रतिप्रभा, चौथी श्रीदामा। इन सबोंके मध्य सीता सुन्दर लक्षण ऐसी सोहै ज्यों तारानिविषैं चंद्रकला। अर लक्ष्मणके पुत्र अढ़ाईसै तिनविषै कईयकोंके नाम कहूं हूं सो सुनो-

वृषभ, धरण, चन्द्र, शरभ, मकरध्वज, हरिनाग, श्रीधर, मदन। वह महाप्रसिद्ध, सुन्दर चेष्टाके धारक जिनके गुणनिकर सब लोकनिके मन अनुरागी अर विशल्याका पुत्र श्रीधर अयोध्यामें ऐसा सोहै जैसा आकाशविषैं चन्द्रमा अर रूपवतीका पुत्र पृथ्वीतिलक, सो पृथ्वीविषै प्रसिद्ध, अर कल्याण मालाका पुत्र महाकल्याणका भाजन मंगल, अर पद्मावतीका पुत्र विमलप्रभ, अर वनमालाका पुत्र अर्जुनवृक्ष, अर अतिवीर्यकी पुत्रीका पुत्र श्रीकेशी, अर भगवतीकापुत्र सत्यकेशी, अर मनोरमाका पुत्र सुपार्श्वकीर्ति, ये सब ही महा बलवान पराक्रमके धारक, शस्त्र शास्त्र विद्यामें प्रवीण। इन सब भाईनिमें परस्पर अधिक प्रीति। जैसैं नख मांसमें दृढ़, कभी भी जुदे न होवें, तैसैं भाई जुदे नाहीं। योग्य है चेष्टा जिनकी, परस्पर प्रेमके भरे, वह उसके हृदयमें तिष्ठै, वह वाके हृदयमें तिष्ठै। जैसैं स्वर्गविषै देव रमैं तैसैं ये कुमार अयोध्यापुरीमें रमते भए। जे प्राणी पुण्याधिकारी हैं, पूर्व पुण्य उपार्जे हैं, महा शुभ चित्त हैं, तिनके जन्मसे लेकर सकल मनोहर वस्तु ही आय मिलै हैं। रघुवंशिनिके साढ़े चार-कोटि कुमार महामनोज्ञ चेष्टाके धारक, नगरके वन उपवनादिमें महामनोग्य चेष्टासहित देवनिसमान रमते भए। अर राम लक्ष्मणके सोलह हजार मुकुटबन्ध राजा सूर्यहू तैं अधिक तेजके धारक सेवक होते भए।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रन्थ ताकी भाषावचनिकाविषैं राम लक्ष्मणकी ऋद्धि वर्णन करनेवाला चौरानवेवां पर्व पूर्ण भया ॥ ९४ ॥

अथानन्तर राम लक्ष्मणके दिन अति आनन्दसूं व्यतीत होय हैं। धर्म अर्थ काम ये तीनों इनके अविरुद्ध होते भए। एक समय सीता सुखसूं विमान समान जो महिल ताविषै शरदके मेघ समान उज्ज्वल सेजपर सोवती थी। सो पिछले पहिर वह कमलनयनी दोय स्वप्न देखती भई। बहुरि दिव्य वादित्रनिके नाद सुन प्रतिबोधकूं प्राप्त भई। निर्मल प्रभात भए स्नानादि देहक्रियाकर सखिनसहित स्वामीपै गई। जायकर पूछती भई-हे नाथ! मैं आज रात्रिविषै स्वप्न देखे तिनका फल कहो। दोय उत्कृष्ट अष्टापद, शरदके चन्द्रमासमान उज्ज्वल, अर क्षोभकूं प्राप्त भया जो समुद्र ताके शब्दसमान जिनके शब्द, कैलाशके शिखर समान सुन्दर, सर्व आभरणनिकरि मंडित, महामनोहर हैं केश जिनके, अर उज्ज्वल हैं दाढ जिनकी, सो मेरे मुखमें पैठे। अर पुष्पक विमानके शिखरसे प्रबल पवनके झकोर करि मैं पृथ्वीविषै पड़ी। तब श्रीरामचन्द्र कहते भए—हे सुन्दरी! दोय अष्टापद, मुखमें पैठे देखे ताके फलकर तेरे दोय पुत्र होयेंगे। अर पुष्पक विमानसे पृथ्वीविषै पड़ना प्रशस्त नाहीं सो कछु चिंता न करो, दानके प्रभावसे क्रूर ग्रह शांत होवेंगे।

अथानन्तर बसन्तसमयरूपी राजा आया, तिलक जातिके वृक्ष फूले, सोई उसके बखतर, अर नीम जातिके वृक्ष फूले वेई गजराज तिनपर आरूढ़, अर आम मौर आये सो मानों बसंतका धनुष, अर कमल फूले सो बसन्तके बाण, अर केसरी फूले, वेई रतिराजके तरकश, अर भ्रमर गुंजार करे हैं सो मानों निर्मल श्लोकोंकर बसंत नृपका यश गावै हैं। अर कदम्ब फूले, तिनकी सुगन्ध पवन आवै है, सोई मानों बसंत नृपके निवास भये। अर मालतीके फूल फूले, सो मानों बसंत शीतकालादिक अपने शत्रुनिको हंसै है, अर कोयल मिष्ट बाणी बोलै है सो मानों बसंत राजाके वचन हैं। या भांति बसंत समय नृपतिकीसी लीला धरे आया। बसंतकी लीला लोकनिकूं कामका उद्वेग उपजावनहारी है। बहुरि यह बसंत मानों सिंह ही है। अंकोट जाति वृक्षादिक, के फूल वेई हैं नख जाके, अर कुरवक जातिके वृक्षनिके फूल आए तेई भए दाढ़ जाके, अर महारक्त अशोकके पुष्प वेई हैं नेत्र जाके, अर चंचल

पल्लव बेई हैं जिह्वा जिनकी, ऐसा बसंत केसरी आय प्राप्त भया। लोकोंके मनकी वृत्ति, सोई भई गुफा, तिनमें पैठा। महेन्द्र नामा उद्यान नन्दनवन समान सदा ही सुन्दर है। सो बसंत समय अतिसुंदर होता भया। नानाप्रकारके पुष्पनिकी पांखडी अर नानाप्रकारकी कूपल दक्षिणदिशिकी पवनकर हालती भई। सो मानों उन्मत्त भई घूमैं हैं। अर वापिका कमलादिककरि आच्छादित अर पक्षिनिके समूह नाद करैं हैं। अर लोक सिवाणोंपर तथा तीर पर बैठे हैं। अर हंस सारस चकवा क्रौंच मनोहर शब्द करैं हैं अर कारंड बोल रहे हैं। इत्यादि मनोहर पक्षिनिके मनोहर शब्दकरि रागी पुरुषनिकू राग उपजावै हैं। पक्षी जलविषै पड़े हैं, अर उठै हैं, तिनकर निर्मल जल कलोलरूप होय रह्या है। जल तो कमलादिक कर भरया है, अर स्थल जो है सो स्थल पद्मादिक पुष्पनिकर भरे हैं। अर आकाश पुष्पनिकी मकरंदकरि मंडित होय रह्या है। फूलनिके गुच्छे अर लता वृक्ष अनेक प्रकारके फूल रहे हैं। वनस्पतिकी परमशोभा होय रही है। ता समय सीता कछु गर्भके भारकर दुर्बल शरीर भई। तब राम पूछते भए—हे कांते! तेरे जो अभिलाषा होय सो पूर्ण करू। तब सीता कहती भई—हे नाथ! अनेक चैत्यालयनिक दर्शन करिवेकी मेरे वांछा है। भगवानके प्रतिबिंब पांचों वर्णके लोकविषै मंगलरूप तिनकू नमस्कार करिवेकू मेरा मनोरथ है। स्वर्ण रत्नमई पुष्पनिकर जिनेन्द्रकू पूजू—यह मेरे महा श्रद्धा है। अर कहा वांछू? ये सीताके वचन सुनकर राम हर्षित भये, फूल गया है मुख कमल जिनका, राजलोक विषै विराजते हुते सो द्वारपालोको बुलाय आज्ञा करी कि हे भद्र! मंत्रिनिकू आज्ञा पहुँचावो जो समस्त चैत्यालयनिविषै प्रभावना करैं। अर महेन्द्रोदयनामा उद्यानविषै जे चैत्यालय हैं तिनकी शोभा करावैं। अर सर्व लोककू आज्ञा पहुँचावो कि जिनमन्दिरविषै पूजा प्रभावना आदि अति उत्सव करैं। अर तोरण ध्वजा घंटा झालरी चन्दोवा सायवान महामनोहर वस्त्रनिके बनावैं, तथा सुन्दर समस्त उपकरण देहुरा चढ़ावैं, लोक समस्त पृथ्वीविषै जिनपूजा करैं। अर कैलाश सम्मेदशिखर पावापुर चम्पापुर गिरनार शत्रुंजय मांगीतुंगी आदि निर्वाण क्षेत्रनिविषै विशेष शोभा करावो। कल्याणरूप दोहुला सीता

कू उपज्या है सो पृथ्वीविषै जिनपूजाकी प्रवृत्ति करहु । हम सीतासहित धर्मक्षेत्रनिविषै विहार करेंगे ।

यह रामकी आज्ञा सुन वह द्वारपाली अपने ठौर अन्यकूं राखकर जाय मंत्रिनिकूं आज्ञा पहुँचावती भई । अर वे स्वामीकी आज्ञा प्रमाण अपने किंकरनिकूं आज्ञा करते भए । सर्व चैत्यालयनिविषै शोभा कराई, अर महा पर्वतोंकी गुफाके द्वार पूर्ण कलश थापे, मोतिनिके हारनिकर शोभित, अर विशाल स्वर्णकी भीतिविषै मणिनिके चित्राम रचे । महेन्द्रोदय नाम उद्यानकी शोभा नन्दन वनकी शोभा समानकर अत्यन्त निर्मल शुद्धमणिनिके दर्पण थम्भविषै थापे, अर झरोखनिके मुखविषै निर्मल मोतिनिके हार लटकाये । सो जल नीझरना समान सोहैं । अर पांच प्रकारके रत्ननिकी चूर्णकरि भूमि मंडित करी । अर सहस्रदल कमल तथा नानाप्रकारके कमल तिनकर शोभा करी । अर पांच वर्णके मणिनिके दंड तिनविषै महा सुन्दर वस्त्रनिके ध्वजा लगाय मन्दिरनिके शिखर पर चढाई । अर नाना प्रकारके पुष्पनिकी माला जिनपर भ्रमर गुंजार करैं, ठौर ठौर लुम्बाई हैं, अर विशाल वादित्रशाला नाट्यशाला अनेक रची हैं तिनकर वन अति शोभै है, मानों नन्दन वन ही है । तब श्री रामचन्द्र इन्द्रसमान सब नगरके लोकनिकर युक्त समस्त राजलोकनिसहित वनविषै पधारे । सीता अर आप गजपर आरूढ कैसै सोहैं जैसे शची सहित इन्द्र ऐरावत गजपर चढे सोहै । अर लक्ष्मण भी परम ऋद्धिकूं धरे वनविषै जाते भए । अर और हू सब लोक आनन्दसूं वनविषै गये । अर सबनिकूं अन्नपान वनहीविषै भया, जहां महा मनोग्य लतानिकूं मंडप अर केलिके वृक्ष तहां राणी तिष्ठी, अर और हू लोक यथायोग्य वनविषै तिष्ठे । राम हाथीतैं उतरकर निर्मल जलका भरा जो सरोवर, नाना प्रकारके कमलनिकर संयुक्त उसविषै रमते भए, जैसैं इन्द्र क्षीरसागरविषै रमैं । तहां क्रीड़ाकर जलतैं बाहिर आये । दिव्य सामग्रीकर विधिपूर्वक सीता सहित जिनेन्द्रकी पूजा करते भए । राम महा सुन्दर, अर वनलक्ष्मी समान जे वल्लभा, तिनकर मंडित ऐसे सोहते भये मानों मूर्तिवन्त वसन्त ही है । आठ हजार राणी देवांगना समान तिनके सहित राम ऐसे सोहैं मानों ये तारानिकर मण्डित चन्द्र ही हैं ।

अमृतका आहार, अर सुगन्धका विलेपन, मनोहर सेज, मनोहर आसन, नानाप्रकारके सुगन्ध माल्यादिक स्पर्श रस गन्धरूप शब्द पांचों इन्द्रियनिके विषय अति मनोहर रामकूं प्राप्त भए। जिनमन्दिरविषै भलीविधिसे नृत्य पूजा करी। पूजा प्रभवानाविषै रामके अति अनुराग होता भया। सूर्यहूतैं अधिक तेजके धारक राम देवांगना समान सुन्दर जे दारा तिनसहित कईएक दिन सुखसे वनविषै तिष्ठे।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महा पद्मपुराण संस्कृतग्रन्थ, ताकी भाषावचनिकाविषै जिनेन्द्रपूजाकी सीताकूं अभिलाषा गर्भका प्रादुर्भाव वर्णन करनेवाला पिचानवेवां पर्व पूर्ण भया ॥ ९५ ॥

अथानन्तर प्रजाके लोक रामके दर्शनकी अभिलाषा कर वनहीविषै आए, जैसैं तिसाए पुरुष सरोवरविषै आवैं। तब बाहिरले दरवानने लोकोंके आवनेका वृत्तांत द्वारपालियोंसूं कह्या। वे द्वारपाली भीतर राजलोकमें रामसूं जायकर कहती भई कि–हे प्रभो! प्रजाके लोक आपके दर्शनकूं आए हैं, अर सीताके दाहिनी आंख फुरकी। तब सीता विचारती भई यह आंख मुझे क्या कहै है, कछू दुखका आगमन बतावै है। आगे अशुभके उदयकरि समुद्रके मध्यविषै दुख पाए तौ हू दुष्ट कर्म संतुष्ट न भया। क्या और भी दुख दिया चाहै है। जो इस जीवने रागद्वेषके योगकर कर्म उपार्जे हैं तिनका फल ए प्राणी अवश्य पावैं हैं, काहूकर निवारा न जाय? सब सीता चिंतावती होय और राणीनिसूं कहती भई–मेरी दाहिनी आंख फरकनेका फल कहो। तब एक अनुमतिनामा राणी महा प्रवीण कहती भई–हे देवि! या जीवने जे कर्म शुभ अथवा अशुभ उपार्जे हैं वे या जीवके भले बुरे फलके दाता हैं। ७६१
कर्महीकूं काल कहिए, अर विधि कहिए, अर दैव कहिए, ईश्वर भी कहिए। सब संसारी जीव कर्मनिके आधीन हैं। सिद्ध परमेष्ठी कर्मनिसूं रहित हैं।

बहुरि गुण दोषकी ज्ञाता राणी गुणमाला सीताकूं रुदन करती देख धीर्य बंधाय कहती भई–हे देवी! तुम पतिके सबनिविषै श्रेष्ठ हो, तुमकूं काहू प्रकारका दुःख नाहीं। अर और राणी कहती

कहो। या भांति कही तो भी वे चित्राम कैसे होय रहे, कछु न कहैं। लज्जारूप फांसकर बंधा है कंठ जिनका, अर चलायमान हैं नेत्र जिनके, जैसे हिरणके बालककूं व्याकुल चित्त तैसे देखे। तब तिनविषै मुख्य विजयनाम पुरुष, चलायमान है शब्द जिसका, सो कहता भया, हे देव! अभयदानका प्रसाद होय। तब रामने कही तुम काहू बातका भय मत करहु, तिहारे चित्तविषै जो होय सो कहो। तिहारा दुःख दूरकर तुमको साता उपजाऊंगा, तिहारे औगुन न लूंगा, गुण ही लूंगा। जैसे मिले हुए दूध जल तिनमें जलकूं टार हंस दूध ही पीवैं हैं। श्रीरामने अभयदान दिया तो भी अतिकष्टसे विचार २ धीरे स्वरकर विजय हाथजोड़ सिर निवाय कहता भया कि—हे नाथ नरोत्तम! एक विनती सुनो। अब सकल प्रजा मर्यादा रहित प्रवर्ते है। यह लोक स्वभाव ही से कुटिल है। अर एक दृष्टांत प्रकट पावैं तब इनकूं अकार्य करनविषै कहा भय?

जैसे बानर सहज ही चपल है अर महाचपल जो यन्त्र-पिंजरा उसपर चढ़ा तब कहा कहना? निर्बलों की यौवनवंती स्त्री पापी बलवंत छिद्र पाय बलात्कार हरैं हैं। अर कोईएक शीलवंती विरहकर पराये घर अत्यन्त दुखी होय है तिनकूं कईएक सहाय पाय अपने घर ले आवै हैं। सो धर्मकी मर्यादा जाय है, यह न जाय सो यत्न करहु। प्रजाके हितकी वांछा करहु। जिस विधि प्रजाका दुख टरै सो करहु। या मनुष्य लोकविषै तुम बड़े राजा हो। तुम समान अर कौन? तुम ही जो प्रजाकी रक्षा न करोगे तो कौन करेगा? नदियोंके तट, तथा वन उपवन कूप वापिका सरोवरके तीर, ग्राम ग्रामवषै, घर घरविषै, सभाविषै, एक यही अपवादकी कथा है और नाहीं कि श्रीराम राजा दशरथके पुत्र, सर्व शास्त्रविषै प्रवीण। सो रावण सीताकूं हर लेगया, ताहि घरविषै लेआये, तब औरनिकूं कहा दोष है? जो बड़े पुरुष करै सो सब जगत्कूं प्रमाण। जिस रीति राजा प्रवर्तै उसी रीति प्रजा प्रवर्तै। "यथा राजा तथा प्रजा" यह वचन है। या भांति दुष्टचित्त निरंकुश भए पृथ्वीविषै अपवाद करैं हैं तिनका निग्रह करहु। हे देव! आप मर्यादाके प्रवर्तक पुरुषोत्तम हो। एक यही अपवाद तिहारे राज्यविषै न होता तो तिहारा यह

राज्य इन्द्रसे भी अधिक है। यह वचन विजयके सुनकर क्षणएक रामचन्द्र विषादरूप मुद्गर के मारे चलायमान चित्त होय गए। चित्तविषै चितवते भए यह कौन कष्ट उपज्या ? मेरा यशरूप कमलोंका वन अपयशरूपी अग्निकर जलने लाग्या है। जिस सीताके निमित्त मैं विरहका कष्ट सहा सो मेरे कुलरूप चन्द्रमाकूं मलिन करै है! अयोध्याविषै मैं सुखके निमित्त आया। अर सुग्रीव हनुमानादिकसे मेरे सुभट सो मेरे गोत्ररूप कुमुदिनीकूं यह सीता मलिन करै है। जिसके निमित्त मैंने समुद्र तिरि रण-संग्रामकर रिपुकूं जीत्या सो जानकी मेरे कुलरूप दर्पणको कलुषित करै है। अर लोक कहै सो सांच है। दुष्ट पुरुषके घरविषै तिष्ठी सीता मैं क्यों लाया ? अर सीतासे मेरा अति प्रेम, जिसे क्षणमात्र न देखूं तो विरहकर आकुलता लहूं, अर वह पतिव्रता मोसै अनुरक्त, उसे कैसैं तजूं ? जो सदा मेरे नेत्र अर उरविषै बसै, महागुणवती निर्दोष सीता सती, उसे कैसे तजूं ? अथवा स्त्रियोंके चित्तकी चेष्टा कौन जाने, जिनविषै सब दोषोंका नायक मनमथ बसै है। धिक्कार स्त्रीके जन्मकूं। सर्वदोषों की खान, आतापका कारण, निर्मल कुलविषै उपजे पुरुषोंकूं कर्दम समान मलिनताका कारण है, अर जैसे कीचविषै फंसा मनुष्य तथा पशु निकल न सकै स्त्रीके रागरूप पंकविषै फंसा प्राणी निकस न सकै। यह स्त्री समस्त बलका नाश करणहारी है, अर रागका आश्रय है, अर बुद्धिकूं भ्रष्ट करै है, अर सत्यतैं पटवेकूं खाई समान है, निर्वाण सुखकी विघ्न करणहारी, ज्ञानकी उत्पत्तिकूं निवारणहारी, भवभ्रमणका कारण है, भस्मसे दबी अग्निके समान दाहक है, डाभकी सुई समान तीक्ष्ण है, देखवे-मात्र मनोग्य परन्तु अपवादका कारण। ऐसी सीता उसे मैं दुख दूर करिवेनिमित्त तजूं, जैसैं सर्प कांचिलीकूं तजै। फिर जिसकर मेरा हृदय तीव्रस्नेहके बन्धनकर वशीभूत सो कैसे तजी जाय, यद्यपि मैं स्थिर हूं, तथापि यह जानकी निकटवर्तिनी अग्निकी ज्वाला समान मेरे मनकूं आताप उपजावै है। अर यह दूर रही भी मेरे मनकूं मोह उपजावै, जैसैं चन्द्ररेखा दूरही से कुमुदिनीकूं विकसित करै। एक ओर लोकापवादका भय, अर एक ओर सीताके दुर्निवार स्नेहका भय। अर रागकर विकल्पके सागर

विषै पड्या हूं । अर सीता सर्व प्रकार देवांगनासे भी श्रेष्ठ महापतिव्रता, सती शीलरूपिणी मोसूं सदा एकचित्त, उसे कैसैं तजूं अर जो न तजूं तो अपकीर्ति प्रकट होय है । इस पृथ्वीविषै मोसमान और दीन नाहीं । स्नेह अर अपवादका भय उसविषै लाग्या है मन जिसका, दोनोंकी मित्रताका तीव्र विस्तार वेगकर वशीभूत जो राम सो अपवादरूप तीव्र कष्टकूं प्राप्त भए । सिंहकी है ध्वजा जिसके ऐसे राम तिनकूं दोनों बातोंकी अति आकुलतारूप चिंता असाताका कारण दुस्सह आताप उपजावती भई, जैसैं जेष्ठके मध्याह्नका सूर्य दुस्सह दाह उपजावै ।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रन्थ, ताकी भाषावचनिकाविषै रामकूं लोकापवादकी चिन्ताका वर्णन करनेवाला छियानवां पर्व पूर्ण भया ॥ ९६ ॥

अथानन्तर श्रीराम एकाग्र चित्त कर द्वारपालकूं लक्ष्मणके बुलावनेकी आज्ञा करते भये । सो द्वारपाल लक्ष्मणपै गया, आज्ञा प्रमाण तिनकूं कही । लक्ष्मण द्वारपालके वचन सुनकर तत्काल तेज तुरंगपर चढि रामके निकट आया । हाथ जोड़ नमस्कारकर सिंहासनके नीचे पृथ्वीपर बैठा, रामके चरणोंकी ओर है दृष्टि जाकी । राम उठकर आधे सिंहासन पर ले बैठे, शत्रुघ्न आदि सब ही राजा, अर विराधित आदि सब ही विद्याधर, यथायोग्य बैठे । पुरोहित श्रेष्ठी मन्त्री सेनापति सब ही सभा में तिष्ठै । तब क्षणएक विश्रामकर रामचन्द्रने लक्ष्मणसूं लोकापवादका वृत्तांत कहा । सुनकर लक्ष्मण क्रोधकर लालनेत्र भए अर योधावोंकूं आज्ञा करी—अबार मैं उन दुर्जनोंके अंत करिवेकूं जाऊंगा, पृथ्वीकूं मृषावादरहित करूंगा । जे मिथ्या वचन कहै हैं तिनकी जिह्वा छेद करूंगा । उपमा रहित जो शीलव्रतकी धारणहारी सीता वाकी जे निन्दा करै हैं तिनका क्षय करूंगा । या भांति लक्ष्मण महा क्रोधरूप भए, नेत्र अरुण होय गए । तब श्रीराम इन वचनोंसे शांत करते भए कि—हे सौम्य ! यह पृथ्वी सागर पर्यन्त ताकी श्रीऋषभदेवने रक्षा करी । बहुरि भरतने प्रतिपालना करी । अर इक्ष्वाकु-वंशके तिलक बड़े बड़े राजा भए, जिनकी पीठ रणमें रिपुओंने न देखी, जिनकी कीर्तिरूप चान्दनी ७६५

से यह जगत् शोभित है, सो अपने वंशविषै अनेक यशके उपजावनहारे भए। अब मैं क्षणभंगुर पापरूप रागके निमित्त यशकू कैसे मलिन करूं ? अल्प भी अकीर्ति जो न टारिए तो वृद्धिकूं प्राप्त होय, अर उन नीतिवान् पुरुषोंकी कीर्ति इन्द्रादिक देवोंसूं गाइए है। ये भोग विनाशीक तिनसे क्या ? जिनसे अकीर्तिरूप अग्निकीर्ति वनकूं बाले। यद्यपि सीता सती शीलवंती निर्मल चित्त है तथापि इसको घरविषै राखें मेरा अपवाद न मिटै। यह अपवाव शस्त्रादिकसे हता न जाय। यद्यपि सूर्य कमलोंके वनका प्रफुल्लित करणहारा है, अति तिमिरका हरणहारा है तथापि रात्रिके होते सूर्य अस्त होय है। तैसैं अपवादरूप रज महा विस्तारकूं प्राप्त भई तेजस्वी पुरुषोंकी कांतिकी हानि करै है। सो यह रज निवारनी चाहिए। हे भ्रात ! चन्द्रमा समान निर्मल गोत्र हमारा अकीर्तिरूप मेघमालासूं आच्छादा जाय है, सो न आच्छादा जाय—यही मेरे यत्न है। जैसैं सूखे इन्धनके समूहविषै लगी आग जलसूं बुझाए बिना वृद्धिकूं प्राप्त होय है तैसे अकीर्तिरूप अग्नि पृथ्वीविषै विस्तरै है सो निवारे बिना न मिटै। यह तीर्थंकर देवोंका कुल महा उज्ज्वल प्रकाशरूप है याकूं कलंक न लगे। सो उपाय करहु। यद्यपि सीता महा निर्दोष शीलवंती है तथापि मैं तजूंगा, अपनी कीर्ति मलिन न करूंगा। तब लक्ष्मण कहता भया। कैसा है लक्ष्मण ? रामके स्नेहविषै तत्पर है बुद्धि जाकी। हे देव ! सीताकूं शोक उपजावना योग्य नाहीं। लोकतो मुनियोंका भी अपवाद करै हैं, जिनधर्मका अपवाद करै हैं। तो क्या लोकापवादसे धर्म तजिए है ? तैसैं लोकापवादमात्रसूं जानकी कैसे तजिए, जो सब सतियोंके सीस विराजै है, काहू प्रकार निंदा के योग्य नाहीं। अर पापी जीव शीलवंत प्राणियोंकी निन्दा करै हैं। क्या तिनके वचनसे शीलवंतोंकूं दोष लागै है ? वे निर्दोष ही हैं। ये लोक अविवेकी है। इनके वचनविषै परमार्थ नाहीं। विषकर दूषित है नेत्र जिनके, वे चन्द्रमाकूं श्यामरूप देखै हैं, परन्तु चन्द्रमा श्वेत ही है, श्याम नाहीं। तैसैं लोकोंके कहे निकलंकियोंकूं कलंक नाहीं लागे है। जे शीलसे पूर्ण हैं तिनकूं अपना आत्मा ही साक्षी है, परजीवनिका प्रयोजन नाहीं। नीच जीवनिके अपवादकरि पण्डित विवेकी क्रोधकूं न प्राप्त होय, जैसे

श्वानके भोंकनेतैं गजेन्द्र नाहीं कोप करै हैं। ये लोक विचित्रगति हैं, तरंग समान है चेष्टा जिनकी, परदोषकथिवे विषै आसक्त। सो इन दुष्टोंका स्वयमेव ही निग्रह होयगा। जैसे कोई अज्ञानी शिलाकूं उपाडकर चन्द्रमाकी ओर बगाय (फेंककरि) बहुरि मारा चाहे सो सहज ही आप निःसंदेह नाशकूं प्राप्त होय है। जो दुष्ट पराए गुणनिकूं न सहि सकै अर सदा पराई निन्दा करै है सो पापकर्मी निश्चयसेती दुर्गतिकूं प्राप्त होय है।

जब ऐसे वचन लक्ष्मणने कहे तब श्रीरामचन्द्र कहते भये–हे लक्ष्मण! तू कहै है सो सब सत्य है। तेरी बुद्धि रागद्वेषरहित, अति मध्यस्थ, महा शोभायमान है, परन्तु जे शुद्ध न्यायमार्गी मनुष्य हैं वे लोकविरुद्ध कार्यकूं तजै है। जाकी दशों दिशामें अकीर्तिरूप दावानलकी ज्वाला प्रज्वलित है ताकूं जगतमें कहा सुख अर कहा ताका जीतव्य? अनर्थका करणहारा जो अर्थ ताकरि कहा, अर विषकर संयुक्त जो औषधि ताकरि कहा? अर बलवान् होय जीवनिकी रक्षा न करै, शरणागतपालक न होय, ताके बलकर कहा? अर जाकर आत्मकल्याण न होय ता आचरणकर कहा? चारित्र सोई जो आत्महित करै। अर जो अध्यात्मगोचर आत्माकूं न जानै ताके ज्ञानकर कहा? अर जाकी कीर्तिरूप वधू अपवादरूप बलवान हरै ताका जन्म प्रशस्त नाहीं, ऐसे जीवनतैं मरण भला। लोकापवादकी बात दूर ही रहो, मोहि यह महा दोष है जो परपुरुषने हरी सीता मैं बहुरि घरमें ल्याया। राक्षसके भवनमें उद्यान तहां यह बहुत दिन रही, अर ताने दूती पठाय मनवांछित प्रार्थना करी, अर समीप आय दुष्ट दृष्टिकरि देखी, अर मनमें आए सो वचन कहे। ऐसी सीता मैं घरमें ल्याया। या समान अर लज्जा कहा? सो मूढ़ोंसे कहा न होय? या संसारकी मायाविषै मैं हू मूढ़ भया। या भांति कहकर आज्ञा करी जो शीघ्र ही कृतांतवक्र सेनापतिकूं बुलावो। यद्यपि दो बालकनिके गर्भसहित सीता है तौ हू याहि तत्काल मेरे घरतैं निकासो, यह आज्ञा करी। तब लक्ष्मण हाथ जोड़ नमस्कारकर कहता भया–हे देव! सीताकूं तजना योग्य नाहीं। यह राजा जनककी पुत्री, महा शीलवती, जिनधर्मिणी, कोमल चरणकमल

जाके, महा सुकुमार, भोरी, सदा सुखिया, अकेली कहां जायगी ? गर्भके भारकर संयुक्त परम खेदकू धरे यह राजपुत्री तिहारे तजे कौनके शरण जायगी ? अर आपने देखवेकी कही सो देखवेकर कहा दोष भला ? जैसैं जिनराजके निकट चढ़ाया द्रव्य निर्माल्य होय है, ताहि देखिए है, परन्तु दोष नाहीं। अयोग्य अभक्ष्य वस्तु आंखिनिसू देखिय है परन्तु देखे दोष नाहीं, अंगीकार कीये दोष है। तातैं हे नाथ ! मोपर प्रसन्न होहु, मेरी विनती सुनहु, महा निर्दोष सीता सती, तुमविषैं एकाग्र है चित्त जाका, ताहि न तजो' तब राम अत्यन्त विरक्त होय क्रोधमें आए गए अर अप्रसन्न होय कही–लक्ष्मण ! अब कछू न कहना। मैं यह अवश्य निश्चय किया, शुभ होवै अथवा अशुभ होवै, निमानुषवन जहां मनुष्यका नाम नाहीं सुनिए वहां द्वितीय सहायरहित अकेली सीताकू तजहु। अपने कर्मके योगकरि जीवो अथवा मरो। एक क्षणमात्र हू मेरे देशविषै, अथवा नगरविषै, काहूके मन्दिरविषै मत रहो। वह मेरी अपकीर्तिकी करणहारी है। कृतांतवक्रकूं बुलाया। सो चार घोड़का रथ चढा बड़ी सेनासहित जाका बंदीजन विरद बखानैं हैं, लोक जय जयकार करैं हैं सो राजमार्ग होय आया। जापर छत्र फिरता अर धनुष चढाय बखतर पहिरे कुण्डल पहिरें ताहि या विधि आवता देख नगरके नर नारी अनेक विकल्प की वार्ता करते भये। आज यह सेनापति शीघ्र दौड़ा जाय है कौन पर विदा होयगा ? आप कौन पर कोप भए हैं ? आज काहूका कछू बिगाड़ है ? ज्येष्ठके सूर्य समान ज्योति जाकी, काल समान भयंकर शस्त्रनिके समूहके मध्य चला जाय है सो आज न जानिए कौन पर कोप है ? या भांति नगरके नर नारी वार्ता करैं हैं। अर सेनापति रामदेव समीप आया। स्वामीकू सीस निवाय नमस्कार कर कहता भया–हे देव ! जो आज्ञा होय सो ही करू।

तब रामने कही, शीघ्रही सीताकू ले जावो। अर मार्गविषै जिनमन्दिरनिका दर्शन कराय सम्मेदशिखर अर निर्वाणभूमि तथा मार्गके चैत्यालय तहां दर्शन कराय वांकी आशा पूर्णकर, अर सिंहनाद नामा अटवी जहां मनुष्यका नाम नाहीं तहां अकेली मेल, उठ आवो। तब ताने कही जो आज्ञा होयगी

सोही होयगा, कछू वितर्क न करहु। अर जानकीपै जाय कही—हे माता! उठो रथविषै चढो, चैत्यालयनिकी वांछा है सो करो। या भांति सेनापतिने मधुरस्वरकर हर्ष उपजाया। तब सीता रथ चढ़ी, चढ़ते समय भगवानकूं नमस्कार किया अर यह शब्द कहा जो चतुर्विध संघ जयवंत होवें। श्रीरामचन्द्र महाजिनधर्मी उत्तम आचरणविषै तत्पर सो जयवंत होहु। अर मेरे प्रसादसे असुन्दर चेष्टा भई होय सो जिनधर्मके अधिष्ठाता देव क्षमा करहु। अर सखीजन लार भए तिनसूं कही तुम सुखसे तिष्ठो, मैं शीघ्र ही जिनचैत्यालयनिके दर्शनकर आऊं हूं, या भांति तिनसे कही। अर सिद्धनिकूं नमस्कारकर सीता आनन्दसे रथ चढ़ी। सो रत्न स्वर्णका रथ तापर चढ़ी ऐसी सोहती भई जैसी विमान चढ़ी देवांगना सोहै। वह रथ कृतांतवक्रने चलाया सो ऐसा शीघ्र चलाया जैसा भरत चक्रवर्तीका चलाया बाण चले। सो चलते समय सीताकूं अपशकुन भए, सूखे वृक्षपर काग बैठा, विरस शब्द करता भया, अर माथा धुनता भया। अर सन्मुख स्त्री महा शोककी भरी, शिरके बाल बखेरे रुदन करती भई। इत्यादि अनेक अपशकुन भए तो पुणि सीता जिनभक्तिविषै अनुरागिणी निश्चलचित्त चली गई, अपशकुन न गिने। पहाडनिके शिखर कन्दरा अनेक वन उपवन उलंघकर शीघ्र ही रथ दूर गया। गरुड़ समान वेग जाका ऐसे अश्वनिकर युक्त सफेद ध्वजाकर विराजित सूर्यके रथ समान रथ शीघ्र चला। मनोरथ समान वह रथ तापर चढ़ी रामकी राणी इन्द्राणीसमान सो अति सोहती भई। कृतांतवक्र सारथीने मार्गविषै सीताकूं नानाप्रकारकी भूमि दिखाई, ग्राम नगर वन अर कमलसे फूल रहे हैं सरोवर, नानाप्रकारके वृक्ष, कहूं सघन वृक्षनिकर वन अन्धकाररूप है, जैसैं अंधेरी रात्रि मेघमालाकर मंडित महा अंधकाररूप भासै, कछू नजर न आवै। अर कहूं विरले वृक्ष हैं सघनता नाहीं, तहां कैसा भासै है? जैसा पंचमकालमें भरत ऐरावत क्षेत्रनिकी पृथ्वी विरले सत्पुरुषनिकरि सोहै। अर कहूं वनी पतझर होय गई है सो पत्ररहित, पुष्प फलादिरहित छायारहित दीखै जैसैं बड़े कुलकी स्त्री विधवा। भावार्थ—विधवा हू पुत्ररूपी पुष्प फलादि रहित हैं अर आभरण तथा सुन्दर वस्त्रादिरहित, अर कांतिरहित है, शोभा

पद्म पुराण ७७०

रहित है, सो तैसी वनी दीखै है। अर कहूंइक वनविषै सुन्दर माधुरीलता आम्रके वृक्षसे लगी ऐसी सोहै है जैसी चपल वेश्या, आम्रसू लगि अशोककी वांछा करै है। अर कईएक दावानलकर वृक्ष जर गए हैं सो नाहीं सोहै हैं, जैसैं हृदय क्रोधरूप दावानलकरि जरा न सोहै। अर कहूंइक सुन्दर पल्लवनिके समूह मंद पवनकर हालते सोहै है, मानों वसंतराजके आयवेकर वनपंक्तिरूप नारी आनन्दसे नृत्य ही करै है। अर कहूंइक भीलनिके समूह तिनके जे कलकलाट शब्दकर मृग दूर भाग गए हैं, अर पक्षी उड़ गए हैं। अर कहूंइक वनी, अल्प है जल जिनमें ऐसी नदी तिनकर कैसी भासै है? जैसी संतापकी भरी विरहिनी नायिका असुवनकर भरे नेत्र संयुक्त भासै। अर कहूंइक वनी नाना पक्षिनिके नादकर मनोहर शब्द करै है। अर कहूंइक नीझरनावोंके नादकरि शब्द करती तीव्र हास्य करै है। अर कहूंइक मकरंदमें अति लुब्ध जे भ्रमर तिनके गुंजारकरि मानों वनी वसंत नृपकी स्तुति ही करै है। अर कहूंइक वनी फूलनिकर नम्रीभूत भई शोभाकूं धरै है, जैसैं सफल पुरुष दातार नम्रीभूत भए सोहै है। कहूंइक वायुकर हालते जे वृक्ष तिनकी शाखा हालै हैं अर पल्लव हालै हैं अर पुष्प पड़े हैं सो मानों पुष्पवृष्टिही करै हैं। इत्यादि रीतिकू धरै वनी अनेक क्रूर जीवनिकर भरी ताहि देखती सीता चली जाय है, रामविषै है चित्त जाका, मधुर शब्द सुनकर विचारती भई मानों रामके दुंदुभी बाजे बाजै हैं। या भांति चितवती सीता आगैं गंगाको देखती भई। कैसी है गंगा? अति सुंदर है शब्द जाके, अर जाके मध्य अनेक जलचर जीव मीन मकर ग्राहादिक विचरैं हैं, तिनके विचरिवेकरि उद्धत लहर उठै हैं, तातैं कम्पायमान भए हैं कमल जाविषैं, अर मूलसे उपाड़े हैं तीरके उतंग वृक्ष जाने, अर उखाड़े हैं पर्वतनिके पाषाणोंके समूह जाने, समुद्रकी ओर चली जाय है, अति गम्भीर है, उज्ज्वल फूलोंकर शोभै है, झागोंके समूह उठै हैं, अर भ्रमते जे भंवर तिनकर महा भयानक है। अर दोनों ढाहावोंपर बैठे पक्षी शब्द करै हैं सो परमतेजके धारक रथके तुरंग ता नदीको तिर पार भए, पवन समान है वेग जिनका, जैसे साधु संसार समुद्रके पार होय।

नदीके पार जाय सेनापति यद्यपि मेरुसमान अचलचित्त हुता तथापि दयाके योगकर अति विषाद कूं प्राप्त भया। महा दुखका भरया कछू न कहि सके, आंखनितैं आंसू निकल आए। रथकूं थांभ ऊंचे स्वरकर रुदन करने लगा। ढीला होय गया है अंग जाका, जाती रही है कांति जाकी। तब सीता सती कहती भई—हे कृतांतवक्र! तू काहेकूं महादुखीकी न्याईं होवे है? आज जिनवन्दनाके उत्सव का दिन, तू हर्षमें विषाद क्यों करे है? या निर्जन वनमें क्यों रोवे है? तब वह अति रुदनकर वृत्तांत कहता भया। जो वचन विषसमान अग्नि समान शस्त्र समान है। हे मात! दुर्जननिके वचनतैं राम अकीर्तिके भयसे जो न तजा जाय तिहारा स्नेह ताहि तजकर चैत्यालयनिकें दर्शनकी तिहारे अभिलाषा उपजी हुती सो तुमकू चैत्यालयोंके अर निर्वाणक्षेत्रोंके दर्शन कराय भयानक वनविषै तजी है। हे देवी! जैसैं यति रागपरणतिकूं तजैं तैसैं रामने तुमकूं तजी हैं। अर लक्ष्मणने जो कहिवेकी हद थी सो कही, कछू कमी न राखी। तिहारे अर्थि अनेक न्यायके वचन कहे, परन्तु रामने हठ न छोडी। हे स्वामिनि! राम तुमसे निराग भए। अब तुमकू धर्म ही शरण है। सो या संसारविषै न माता, न पिता, न भ्राता, न कुटुम्ब एक धर्म ही जीवका सहाई है। अब तुमकूं यह मृगोंका भरा वन ही आश्रय है। ये वचन सीता सुनकर वज्रपातकी मारी जैसी होय गई। हृदयविषै दुखके भारकर मूर्छाकूं प्राप्त भई। बहुरि सचेत होय गद्गद वाणीसूं कहती भई—शीघ्र ही मोहि प्राणनाथसूं मिलाओ। तब वाने कही—हे माता! नगरी दूर रही, अर रामका दर्शन दूर। तब अश्रुपातरूप जलकी धारासूं मुखकमल प्रक्षालती हुई कहती भई कि हे सेनापति! तू मेरे वचन रामसूं कहियो कि मेरे त्यागका विषाद आप न करणा, परम ७७ धीर्यकूं अवलम्बनकर सदा प्रजाकी रक्षा करियो, जैसे पिता पुत्रकी रक्षा करै। आप महान्यायवंत हो अर समस्त कलाके पारगामी हो, राजाकूं प्रजा ही आनन्दका कारण है। राजा वही जाहि प्रजा शरदकी पूनोंके चन्द्रमाकी न्याईं चाहे। अर यह संसार असार है, महा भयंकर दुखरूप है। जा सम्यग् दर्शनकर भव्यजीव संसारसूं मुक्त होवे हैं सो तिहारे आराधिवे योग्य है। तुम राजतैं सम्यग्दर्शनकूं विशेष

भला जानियो । यह राज्य तो विनाशीक है अर सम्यग्दर्शन अविनाशी सुखका दाताहै सो अभव्य जीव निंदा करैं तो उनकी निंदाके भयसे हे पुरुषोत्तम ! सम्यग्दर्शनकूं कदाचित् न तजना । यह अत्यन्त दुर्लभ है । जैसैं हाथविषै आया रत्न समुद्रविषैं डालिए तौ बहुरि कौन उपायसूं हाथ आवै । अर अमृतफल अंधकूपमें डारचा बहुरि कैसैं मिले ? जैसैं अमृतफलकूं डाल बालक पश्चात्ताप करै तैसैं सम्यग्दर्शनसे रहित हुवा जीव विषाद करै है । यह जगत दुर्निवार है, जगतका मुख बन्द करवेकूं कौन समर्थ है ? जाके मुखमें जो आवै सो ही कहै । तातैं जगतकी बात सुनकर जो योग्य होय सो करियो । लोक गडरिया प्रवाह हैं सो अपने हृदयविषै हे गुणभूषण ! लौकिक वार्ता न धरणी, अर दानकरि, प्रीतिके योगकरि जनोंकूं प्रसन्न राखना । अर विमल स्वभावकर मित्रोंकूं वश करना अर साधु तथा आर्यिका आहारकूं आवैं तिनकूं प्रासुक अन्नसूं अति भक्तिकर निरंतर आहार देना । अर चतुर्विध संघकी सेवा करनी । मन वचन कायकरि मुनिकूं प्रणाम पूजन अर्चनादिकरि शुभ कर्म उपार्जना करना । अर क्रोधकूं क्षमाकरि, मानकूं निगर्वता करि, मायाकूं निष्कपटताकरि, लोभकूं संतोषकरि जीतना । आप सर्व शास्त्रविषैं प्रवीण हो सो हम तुमकूं उपदेश देनेकूं समर्थ नाहीं, क्योंकि हम स्त्रीजन हैं । आपकी कृपाके योगकरि कभी कोई परिहास्यकरि अविनय भरा वचन कहा हो तो क्षमा करियो । ऐसा कहकर रथसूं उतरी अर तृण पाषाणकरि भरी जो पृथ्वी उसमें अचेत होय मूर्छा खाय पड़ी । सो जानकी भूमिविषैं पड़ी ऐसी सोहती भई मानो रत्नोंकी राशिही पड़ी है ।

कृतांतवक्र सीताकूं चेष्टारहित मूर्च्छित देख महा दुखी भया, अर चित्तविषैं चितवता भया--
हाय ! यह महा भयानक वन अनेक दुष्ट जीवोंकरि भरचा, जहां जे महा धीर शूरवीर होंय तिनके भी जीवनेकी आशा नाहीं तो यह कैसे जीवेगी ? इसके प्राण बचना कठिन हैं । इस महासती माताकूं मैं अकेली वनविषैं तजकर जाऊं हूं सो मुझ समान निर्दई कौन ? मुझे किसी प्रकार भी किसी ठौर शांति नाहीं । एक तरफ स्वामीकी आज्ञा, अर एक तरफ ऐसी निर्दयता ! मैं पापी दुखके भंवर

विषै पड़ा हूं। धिक्कार पराई सेवाकूं, जगतविषै निंद्य पराधीनता, जो स्वामी कहे सो ही करना, जैसे यंत्रकूं यंत्री बजावै त्योंही बाजै। सो पराया सेवक यंत्र तुल्य है। अर चाकरसूं कूकर भला जो स्वाधीन आजीवका पूर्ण करै है। जैसैं पिशाचके वश पुरुष ज्यों वह बकावै त्यों बकै, तैसैं नरेन्द्रके वश नर, वह जो आज्ञा करै सो करै। चाकर क्या न करै अर क्या न कहै? अर जैसैं चित्रामका धनुष निष्प्रयोजन गुण कहिये फिणचकूं धरै है, सदा नम्रीभूत है, तैसैं परकिंकर निःप्रयोजन गुणकूं धरे है, सदा नम्रीभूत है। धिक्कार किंकरका जीवना। पराई सेवा करना तेजरहित होना है। जैसे निर्माल्य वस्तु निंद्य है, तैसे परकिंकरता निंद्य है। धिग् २ पराधीनके प्राण धारणकूं। यह पराधीन पराया किंकर टीकली समान है। जैसैं टीकली परतंत्र होय कूपका जीव कहिए जल हरै है तैसैं यह परतंत्र होय पराए प्राण हरै है। कभी भी चाकरका जन्म मत होवे। पराया चाकर काठकी पूतली समान है। ज्यों स्वामी नचावै त्यों नाचै। उच्चता, उज्ज्वलता, लज्जा, अर कांति, तिनसे परकिंकर रहित है। जैसैं विमान पराये आधीन है, चलाया चाले, थमाया थमें, ऊंचा चढ़ावे तो ऊंचा चढ़े, नीचा उतारे तो नीचा उतरे। धिक्कार पराधीनके जीतव्यकूं जो निर्बल, अपने मांसकूं बेचनहारा, महालघु, अपने अधीन नहीं, सदा परतंत्र, धिक्कार किंकरके प्राण धारणकूं। मैं पराई चाकरी करी, अर परवश भया, तो ऐसे पाप कर्मकूं करूं हूं, जो इस निर्दोष महासतीकूं अकेली भयानक वनविषै तजकर जाऊं हूं। हे श्रेणिक! जैसे कोई धर्मकी बुद्धिकूं तजै तैसैं वह सीताकूं वनविषै तजकर अयोध्याकूं सन्मुख भया। अतिलज्जावान् होयकर चाल्या। सीता याके गए पाछे केतीक बारमें मूर्च्छासे सचेत होय महा दुखकी भरी यूथभ्रष्ट मृगीकी न्याईं विलाप करती भई। सो याके रुदनकर मानों सबही वनस्पति रुदन करै हैं। वृक्षनिके पुष्प पड़े हैं सोई मानों आंसू भए। स्वतः स्वभाव महारमणीक याके स्वर तिनकर विलाप करती भई। महा शोककी भरी हाय कमलनयन राम! नरोत्तम! मेरी रक्षा करहु, मोसैं वचनालाप करहु। अर तुम तो निरन्तर उत्तम चेष्टाके धारक हो, महागुणवंत शांतचित्त हो, तिहारा लेशमात्र हू दोष नाहीं।

तुम तो पुरुषोत्तम हो, मैं पूर्वभवविषै जो अशुभकर्म कीए थे तिनके फल पाये। जैसा करना तैसा भोगना। कहा करे भर्तार अर कहा करे पुत्र ? तथा माता पिता बांधव कहा करे ? अपना कर्म अपने उदय आवै सो अवश्य भोगना। मैं मन्दभागिनी पूर्व जन्मविषै अशुभ कर्म कीये ताके फलतैं या निर्जन वनविषै दुखकूं प्राप्त भई। मैं पूर्व भवविषै काहूका अपवाद किया, परनिंदा करी होगी ताके पापकरि यह कष्ट पाया। तथा पूर्वभवविषै गुरुनिके समीप व्रत लेकर भग्न कीया ताका यह फल पाया। अथवा विषफल समान जो दुर्वचन तिनकर काहूकूं अपमान कीया तातैं यह फल पाये। अथवा मैं परभवविषै कमलनिके बनविषै तिष्ठता चकवा चकवीका युगल बिछोया तातैं मोहि स्वामीका वियोग भया। अथवा मैं परभवविषै कुचेष्टाकर हंस हंसिनीका युगल बिछोहा, जे कमलनिकर मंडित सरोवर में निवास करणहारे, अर बड़े बड़े पुरुषनिकूं जिनकी चालकी उपमा दीजै, अर जिनके वचन अति सुन्दर, जिनके चरण, चोंच, लोचन, कमल समान अरुण, सो मैं बिछोहे, तिनके दोषकरि ऐसी दुख अवस्थाकूं प्राप्त भई। अथवा मैं पापिनी कबूतर कबूतरीके युगल बिछोहे हैं, जिनके लाल नेत्र आधी चिरम समान, अर परस्पर जिनविषै अतिस्नेह, अर कृष्णागुरु समान जिनका अंग अथवा श्याम घटा समान अथवा धूम समान धूसरे, आरंभी हैं सुखसे क्रीडा जिन्होंने, अर कंठविषै तिष्ठै हैं मनोहर शब्द जिनके सो मैं पापिनी जुदे कीए, अथवा भले स्थानसूं बुरे स्थानमें मेले अथवा बांधे, मारे, ताके पापकरि असंभाव्य दुःख मोहि प्राप्त भया। अथवा बसंतके समय फूले वृक्ष तिनविषै केलि करते कोकिल कोकिली के युगल महामिष्ट शब्दके करनहारे परस्पर भिन्न भिन्न कीये, ताका यह फल है। अथवा ज्ञानी जीवनि के बंदिवे योग्य महाव्रती जितेन्द्रिय महा मुनि तिनकी निंदा करी। अथवा पूजा दानविषै विघ्न किया, अर परोपकारविषै अन्तराय कीए, हिंसादिक पाप किए, ग्रामदाह, बनदाह, स्त्री बालक पशुइत्यादि पाप कीए तिनके यह फल हैं। अनछाना पानी पिया, रात्रीकूं भोजन किया, बीधा अन्न भखा, अभक्ष्य वस्तुका भक्षण किया, न करिवे योग्य काम किए, तिनका यह फल है। मैं बलभद्रकी पटराणी, स्वर्ग

समान महिलकी निवासिनी, हजारां सहेली मेरी सेवाकी करनहारी, सो अब पापके उदयकरि निर्जन वनविषै दुखके सागरविषै डूबी कैसे तिष्ठूं ? रत्ननिके मन्दिरविषै महा रमणीक वस्त्र तिनकर शोभित सुन्दर सेजपर शयन करणहारी मैं कहां पड़ी हूं ? सब सामग्रीकरि पूर्ण महा रमणीक महिलविषै रहणहारी मैं अब कैसे अकेली वनका निवास करूंगी ? महा मनोहर बीण, बांसुरी, मृदंगादिकके मधुर स्वर तिनकर सुख निद्राकी लेनहारी मैं कैसे भयंकर शब्दकर भयानक वनविषै अकेली तिष्ठूंगी ? रामदेवकी पटराणी, अपयशरूपी दावानल कर जरी, महा दुःखिनी, एकाकिनी पापिनी कष्टका कारण जो वन, जहां अनेक जातिके कीट, अर करकश डाभकी अणी, अर कांकरनिसे भरी पृथ्वी, ताविषै कैसे शयन करूंगी ? ऐसी अवस्था भी पायकर मेरे प्राण न जांय तो ये प्राण ही वज्रके हैं। अहा ऐसी अवस्था पायकरि मेरे हृदयके सौ टूक न होय हैं सो यह वज्रका हृदय है। कहा करूं ? कहां जाऊं ? कौनसूं कहा कहूं ? कौनके आश्रय तिष्ठूं ? हाय गुणसमुद्र राम ! मोहि क्यों तजी ? हे महा भक्त लक्ष्मण ! मेरी क्यों न सहाय करी ? हाय पिता जनक ! हाय माता विदेही ! यह कहा भया ? अहो विद्याधरनिके स्वामी भामण्डल ! मैं दुखके भँवरविषै पड़ी कैसे तिष्ठूं ? मैं ऐसी पापिनी जो मोसहित पतिने परम संपदाकर जिनेन्द्रका दर्शन अर्चन चितया था सो मोहि इस वनीविषै डारी।

हे श्रेणिक ! या भांति सीता सती विलाप करै है। अर राजा वज्रजंघ पुण्डरीकपुरका स्वामी, हाथी पकड़िवे निमित्त वनमें आया था सो हाथी पकड़ बड़ी विभूतिसे पाछे जाय था। सो ताकी सेना के प्यादे शूरवीर कटारी आदि नाना प्रकारके शस्त्र धरे कमर बांधे आय निकसे। सो याके रुदनके मनोहर शब्द सुनकर संशयकूं अर भयकूं प्राप्त भए,एक पैंड भी न जाय सके। अर तुरंगनिके सवार हू ताका रुदन सुन खड़े होय रहे। उनको यह आशंका उपजी जो या वनविषै अनेक दुष्ट जीव तहां यह सुन्दर स्त्रीके रुदनका नाद कहां होय है ? मृग, सुसा, रोझ, सांप, रीछ, ल्याली, बघेरा, आरणे भैंसे, चीता, गैंडा, शार्दूल, अष्टापद, वनशूकर, गज तिनकर विकराल यह वन ताविषै यह चन्द्रकला

समान महामनोग्य कौन रोवै है ? यह कोई देवांगना सौधर्म स्वर्गसे पृथ्वीविषै आई है। यह विचारकर सेनाके लोक आश्चर्यकूं प्राप्त होय खड़े रहे। अर वह सेना समुद्र समान, जिसमें तुरंग ही मगर, अर पयादे मीन, अर हाथी ग्राह हैं। समुद्र भी गाजे, अर सेना भी गाजे है। अर समुद्रमें लहर उठै है, सेनामें सूर्यकी किरणकरि शस्त्रोंकी जोति उठै है। समुद्र भी भयंकर है, सेना भयंकर है। सो सकल सेना निश्चल होय रही।

इति श्रीरविषेणाचार्य विरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रंथ ताकी भाषावचनिकाविषै सीताका वनविषै विलाप अर वज्रजंघका आगमन वर्णन करनेवाला सत्तानवेवां पर्व पूर्ण भया ॥ ९७ ॥

अथानन्तर जैसे महाविद्याकी थांभी गंगा थंभी रहै तैसे सेनाकूं थंभा देख राजा वज्रजंघ निकटवर्ती पुरुषोंकूं पूछता भया कि सेनाके थंभनेका कारण क्या है ? तब वह निश्चयकर राजपुत्रीके समाचार कहते भये। उससे पहिले राजाने भी रुदनके शब्द सुने, सुनकर कहता भया—जिसका यह मनोहर रुदनका शब्द सुनिये सो कहो कौन है ? तब कई एक अग्रेसर होय जायकर पूछते भये—हे देवि ! तू कौन है ? अर इस निर्जन वनविषै क्यों रुदन करै है ? तो समान कोऊ और नाहीं। तू देवी है अक नागकुमारी है, अक कोई उत्तम नारी है। तू महा कल्याणरूपिणी उत्तम शरीरकी धारणहारी, तोहि यह शोक कहां ? हमकूं यह बड़ा कौतुक है। तब यह शस्त्रधारक पुरुषकूं देख भयकूं प्राप्त भई, कांपै है शरीर जाका, सो भयकरि उनको अपने अपने आभरण उतारकरि देने लगी। तब वे स्वामीके भयकरि यह कहते भये—हे देवी ! तू क्यों डरै है, शोककूं तज, धीरता भज। आभूषण हमकूं काहेकूं देवै है ? तेरे ये आभूषण तेरे ही रहो, ये तोहि योग्य हैं। हे माता ! तू विह्वल क्यों होय है ? विश्वास गहु, यह राजा वज्रजंघ पृथ्वीविषै प्रसिद्ध, महा नरोत्तम, राजनीतिकर युक्त है, अर सम्यग्दर्शनरूप रत्न भूषणकरि शोभित है। कैसा है सम्यग्दर्शन ? जिस समान और रत्न नाहीं। अविनाशी है, अमोलिक है,

काहूसे हरया न जाय, महा सुखका दायक, शंकादिक मल रहित, सुमेरु सारिखा निश्चल है। हे माता! जाके सम्यग्दर्शन होवे उसके गुण हम कहां लग वर्णन करें? यह राजा जिनमार्गके रहस्यका ज्ञाता शरणागतप्रतिपालक है। परोपकारमें प्रवीण, महा दयावान, महा निर्मल, पवित्रात्मा, निंद्यकर्मसूं निवृत्त, लोकोंका पिता समान रक्षक, महा दातार, जीवोंकी रक्षाविषै सावधान, दीन अनाथ दुर्बल देहधारियोंकूं माता समान पालै है, सिद्धि कार्यका करणहारा, शत्रुरूप पर्वतनिकूं वज्रसमान है। शास्त्रविद्याका अभ्यासी, परधनका त्यागी, परस्त्रीकूं माता बहिन बेटीके समान मानै है। अन्यायमार्गकूं अजगर सहित अन्धकूप समान जानै है। धर्मविषै तत्पर, अनुरागी, संसारके भ्रमणसे भयभीत, सत्यवादी, जितेन्द्रिय है। याके समस्त गुण जो मुखसूं कहा चाहै सो भुजानिकर समुद्रकूं तिरा चाहै है। ये बात वज्रजंघके सेवक कहै हैं। इतनेविषै ही राजा आप आया। हाथीसे उतरि बहुत विनय करि सहज ही है सुन्दर दृष्टि जाकी, सो सीतातैं कहता भया—हे बहिन! वह वज्रसमान कठोर महा असमझ है, जो तोहि ऐसे बनमें तजै, अर तोहि तजतैं जाका हृदय न फट जाय। हे पुण्यरूपिणी! अपनी अवस्थाका कारण कहि, विश्वासकूं भजि, भय मत कर, अर गर्भका खेद मत कर। तब यह शोककरि पीडित-चित्त बहुरि रुदन करती भई। राजाने बहुत धीर्य बंधाया। तब यह हंसकी न्याईं आंसू डार गद्‌गद वाणीतैं कहती भई—हे राजन्! मो मन्दभागिनीको कथा अत्यन्त दीर्घ है। यदि तुम सुना चाहो हो तो चित्त लगाय सुनो। मैं राजा जनककी पुत्री, भामण्डलकी बहिन, राजा दशरथके पुत्रकी वधू, सीता मेरा नाम, रामकी राणी। राजा दशरथने केकईकूं बरदान दिया हुता सो भरतकूं राज्य देकर राजा
वैरागी भए। अर राम लक्ष्मण वनकूं गए सो मैं पतिके संग वनमें रही। रावण कपटसे मोहि हर ले गया। ग्यारहवें दिन मैंने पतिकी वार्ता सुन भोजन किया। पति सुग्रीवके घर रहे। बहुरि अनेक विद्याधरनिकूं एकत्रकर आकाशके मार्ग होय समुद्रकूं उलंघ लंका गये, रावणकूं जीत मोहि ल्याये। बहुरि राजरूप कीचकूं तज भरत तो वैरागी भये। कैसे है भरत? जैसे ऋषभदेवके भरत चक्रवर्ती

तिन समान हैं उपमा जिनको। सो भरत तो कर्मकलंक रहित परमधामकूं प्राप्त भये। अर केकई शोकरूप अग्निकर आतापकूं प्राप्त भई। बहुरि वीतरागका मार्ग सार जानकर आर्यिका होय महा तपसे स्त्रीलिंग छेद स्वर्गविषै देव भई, मनुष्य होय मोक्ष पावेगी। राम लक्ष्मण अयोध्याविषै इन्द्र समान राज्य करैं। सो लोक दुष्टचित्त निश्शंक होय अपवाद करते भए कि रावण हरकर सीताकूं ले गया, बहुरि राम ल्याय घरमें राखी। सो राम महा विवेकी, धर्मशास्त्रके वेत्ता न्यायवन्त, ऐसी रीति क्यों आचरैं? जिस रीति राजा प्रवर्तै उसी रीति प्रजा प्रवर्तै। सो लोक मर्यादारहित होने लगे, कहैं रामहीके घर यह रीति तो हमकूं कहा दोष? अर मैं गर्भसहित दुर्बल शरीर यह चितवन करती हुती कि जिनेन्द्रके चैत्यालयोंकी अर्चना करूंगी। अर भरतार भी मुझ सहित जिनेन्द्रके निर्वाण स्थानक अर अतिशय स्थानक तिनकूं वंदना करनेकूं भावसहित उद्यमी भए हुते। अर मोहि ऐसे कहते थे कि प्रथम तो हम कैलाश जाय श्री ऋषभदेवके निर्वाण क्षेत्र वंदेंगे। बहुरि और निर्वाणक्षेत्रकूं वंदकरि अयोध्याविषै ऋषभ आदि तीर्थंकर देवनिका जन्मकल्याणक है सो अयोध्याकी यात्रा करैंगे। जेते भगवानके चैत्यालय हैं तिनका दर्शन करैंगे। कम्पिल्या नगरीविषै विमलनाथका दर्शन करैंगे। अर रत्नपुर में धर्मनाथका दर्शन करैंगे। कैसे हैं धर्मनाथ? धर्मका स्वरूप जीवनिकूं यथार्थ उपदेशैं हैं। बहुरि श्रावस्ती नगरी संभवनाथका दर्शन करैंगे। अर चम्पापुरमें वासुपूज्यका, अर काकंदीपुरमें पुष्पदंतका, चन्द्रपुरीविषै चन्द्रप्रभका, कौशांबीपुरीमें पद्मप्रभका, भद्रलपुरमें शीतलनाथका, अर मिथिलापुरीमें मल्लिनाथ स्वामीका दर्शन करैंगे। अर बाणारसीमें सुपार्श्वनाथ स्वामीका दर्शन करैंगे। अर सिंहपुरीमें श्रेयांसनाथका अर हस्तनागपुरमें शांति कुंथु अरहनाथका पूजन करैंगे। अर हे देवि! कुशाग्रनगरमें श्रीमुनिसुव्रतनाथका दर्शन करैंगे। जिनका धर्मचक्र अब प्रवर्तै है, अर और हू जे भगवानके अतिशय स्थानक महापवित्र हैं, पृथ्वीमें प्रसिद्ध है, तहां पूजा करैंगे। भगवानके चैत्यालय, अर सुर असुर अर गंधर्वनिकर स्तुति करिवे योग्य हैं, नमस्कार योग्य हैं तिन सबनिकी वंदना हम करैंगे। अर

पुष्पक विमानविषै चढ़ सुमेरुके शिखरपर जे चैत्यालय हैं तिनका दर्शनकरि भद्रशाल वन, नन्दन वन सोमनस वन, तहां जिनेन्द्रकी अर्चाकरि अर कृत्रिम अकृत्रिम अढ़ाई द्वीपविषै जेते चैत्यालय हैं तिनकी बंदनाकरि हम अयोध्याकू आवेंगे।

हे प्रिये ! भावसहित एक बार हू नमस्कार श्रीअरहंतदेवकू करैं तो अनेक जन्मके पापनिसे छूटै हैं। हे कांते ! धन्य तेरा भाग्य जो गर्भके प्रादुर्भावविषै तेरे जिन बन्दनाकी बांछा उपजी। मेरे हू मन में यही है तो सहित महापवित्र जिनमन्दिरनिका दर्शन करूं। हे प्रिये ! पहिले भोगभूमिविषै धर्मकी प्रवृत्ति न हुती, लोक असमझ थे। सो भगवान ऋषभदेवने भव्योंकू मोक्षमार्गका उपदेश दिया। जिनकू संसारभ्रमणका भय होय तिनको भव्य कहिये। कैसे हैं भगवान् ऋषभ ? प्रजाके पति, जगतविषै श्रेष्ठ, त्रैलोक्यकरि बंदिबे योग्य, नानाप्रकार अतिशयकर संयुक्त, सुर नर असुरनिकू आश्चर्यकारी, ते भगवान भव्यनिकू जीवादिक तत्वोंका उपदेश देय अनेकनिकू तारि निर्वाण पधारे, सम्यक्त्वादि अष्ट गुणमंडित सिद्ध भए। जिनका चैत्यालय सर्व रत्नमई भरत चक्रवर्तीने कैलाश पर कराया। अर पांचसे धनुषकी रत्नमई प्रतिमा,सूर्यहूतें अधिक तेजकू धरे मन्दिरविषै पधराई सो विराजै है। जाकी अबहु देव विद्याधर गन्धर्व किन्नर नाग दैत्य पूजा करैं हैं जहां अप्सरा नृत्य करैं हैं। जो प्रभु स्वयंभू सर्वगति निर्मल त्रैलोक्यपूज्य जाका अन्त नाहीं, अनन्तरूप अनन्त ज्ञान विराजमान, परमात्मा सिद्ध शिव आदिनाम ऋषभ तिनकी कैलाश पर्वत पर हम चलकर पूजा कर स्तुति करेंगे ? वह दिन कब होयगा, या भांति मोसू कृपा कर वार्ता करते थे। अर ताही समय नगरके लोक भेले होय आय लोकापवादकी दावानलसे दुस्सह वार्ता रामसू कही। सो राम बड़े विचारके कर्ता चित्तमें यह चिताई यह लोक स्वभावही कर वक्र हैं। सो और भांति अपवाद न मिटै या लोकापवादसे प्रिय जनकू तजना भला अथवा मरणा भला, लोकापवादतैं यशका नाश होय, कल्पांतकाल पर्यंत अपयश जगतमें रहै सो भला नाहीं। ऐसा विचार महाप्रवीण मेरा पति ताने लोकापवादके भयतैं मोहि महा अरण्यवनमें

तजा। मैं दोषरहित सो पति नीके जाने, अर लक्ष्मणने बहुत कहा सो न माना। मेरे ऐसा ही कर्मका उदय जे विशुद्ध कुलमें उपजे क्षत्री शुभचित्त, सर्व शास्त्रनिके ज्ञाता, तिनकी यही रीति है। अर काहूसे न डरें, एक लोकापवादसे डरें। यह अपने निकासनेका वृत्तांत कह बहुरि रुदन करने लगी, शोकरूप अग्निकरि तप्तायमान है चित्त जाका। सो याकूं रुदन करती अर रजकर धूसरा है अंग जाका, महा दीन दुखी देख राजा वज्रजंघ उत्तम धर्मका धरणहारा अति उद्वेगकूं प्राप्त भया। अर याकूं जनककी पुत्री जान समीप आय बहुत आदरसें धीर्य बंधाया। अर कहता भया—हे शुभमते! तू जिनशासनमें प्रवीण है। शोक कर रुदन मत करै। यह आर्तध्यान दुखका बढावनहारा है। हे जानकी! या लोककी स्थिति तू जाने है। तू महा सुज्ञान अनित्य अशरण एकत्व अन्यत्व इत्यादि द्वादश अनुप्रेक्षावोंकी चितवन करणहारी, तेरा पति सम्यग्दृष्टि, अर तू सम्यक्त्वसहित विवेकवन्ती है, मिथ्यादृष्टि जीवनिकी न्याईं कहा बारम्बार शोक करै? तू जिनवाणीकी श्रोता, अनेक बार महा मुनिनिके मुख श्रुतिके अर्थ सुने, निरंतर ज्ञान भावकूं धरणहारी, तोहि शोक उचित नाहीं। अहो या संसारमें भ्रमता यह मूढ़ प्राणी वाने मोक्षमार्गकूं न जाना, यातैं कहा कहा दुख न पाये। याकूं अनिष्टसंयोग इष्टवियोग अनेकबार भये। यह अनादिकालसूं भवसागरके मध्य क्लेशरूप भंवरमें पड़ा है। या जीवने तिर्यंच योनिविषै जलचर नभचरके शरीर धर वर्षा शीत आताप आदि अनेक दुख पाये। अर मनुष्य देहविषै अपवाद बिरह रुदन क्लेशादि अनेक दुख भोगे। अर नरकविषै शीत उष्ण छेदन भेदन शूलारोहण, परस्पर घात, महा दुर्गंध, क्षीरकुण्डविषै निपात, अनेक रोग, अनेक दुख लहे। अर कबहूं अज्ञान तपकरि अल्प ऋद्धिका धारक देव हू भया, तहां हू उत्कृष्ट ऋद्धिके धारक देवनिकूं देख दुखी भया। अर मरण समय महा दुखी होय विलापकर मूवा। अर कबहूं महा तपकर इन्द्रतुल्य उत्कृष्ट देव भया, तोहू विषयानुरागकरि दुखी ही भया। या भांति चतुर्गतिविषै भ्रमण करते या जीवने भववनविषै आधि व्याधि संयोग वियोग रोग शोक जन्म मृत्यु दुख दाह दरिद्र हीनता नानाप्रकारकी वांछा, विकल्पताकर शोच

संतापरूप होय अनन्त दुख पाये। अधोलोक मध्यलोक ऊर्ध्वलोकविषै ऐसा स्थानक नाहीं जहां या जीवने जन्म मरण न किये। अपने कर्मरूप पवनके प्रसंगकर भवसागरविषै भ्रमण करता जो यह जीव ताने मनुष्य देहविषै स्त्रीका शरीर पाया। तहां अनेक दुख भोगे। तेरे शुभ कर्मके उदयकरि राम सारिखे सुन्दर पति भये, जिनके सदा शुभका उपार्जन सो पुण्यके उदयकरि पति सहित महा सुख भोगे। अर अशुभके उदयतैं दुस्सह दुखकू प्राप्त भई। लंकाद्वीपविषै रावण हर कर ले गया तहां पतिकी वार्ता न सुन ग्यारह दिनतक भोजन विना रही। अर जबतक पतिका दर्शन न भया तब तक आभूषण सुगन्ध लेपनादि रहित रही। बहुरि शत्रुको हत पति ले आये तब पुण्यके उदयतें सुखकू प्राप्त भई। बहुरि अशुभका उदय आया तब विना दोष गर्भवतीकू पतिने लोकापवादके भयतैं घरतैं निकासी। लोकापवादरूप सर्पके डसिवेकर पति अचेत चित्त भया। सो विना समझे भयंकर वनमें तजी। उत्तम प्राणी पुण्यरूप पुष्पनिका घर ताहि जो पापी दुर्वचनरूप अग्निकर बाले हैं सो आपही दोषरूप दहन करि दाहकू प्राप्त होय। हे देवि! तू परम उत्कृष्ट पतिव्रता महासती है, प्रशंसायोग्य है चेष्टा जाकी। जाके गर्भाधानविषै चैत्यालयनिके दर्शनकी वांछा उपजी अबहू तेरे पुण्यहीका उदय है। तू महा शीलवती जिनमती है। तेरे शीलके प्रसाद करि या निर्जन वनविषै हाथीके निमित्त मेरा आवना भया। मैं वज्रजंघ पुण्डरीकपुरका अधिपति राजा द्विरदवाह सोमवंशी, महाशुभ आचरणके धारक, तिनके सुबंधु, महिषी नामा राणी, ताका मैं पुत्र। तू मेरे धर्मके विधानकर बड़ी बहिन है। पुण्डरीकपुर चालहु। शोक तज। हे बहिन! शोकसे कछू कार्यसिद्धि नाहीं। वहां पुण्डरीकपुरसें राम तोहि ढूंढ कृपाकर बुलावेंगे। राम हू तेरे वियोगसू पश्चात्तापकरि अति व्याकुल हैं। अपने प्रमादकरि अमोलिक महा गुणवान रत्न नष्ट भया, ताहि विवेकी महा आदरसे ढूंढे हो। तातैं हे पतिव्रते! निसंदेह राम तुझे आदरसू बुलावेंगे। या भांति वा धर्मात्माने सीताकू शांतता उपजाई। तब सीता धीर्यकू प्राप्त भई। मानों भाई भामण्डल ही मिला। तब वाकी अति प्रशंसा करती भई। तू मेरा अति उत्कृष्ट

भाई है। महा यशवंत, शूरवीर, बुद्धिमान, शांतचित्त, साधर्मिनिपर वात्सल्यका करणहारा, उत्तम जीव है। गौतम स्वामी कहे हैं—हे श्रेणिक! राजा वज्रजंघ अधिगमसम्यग्दृष्टि, अधिगम कहिए गुरु-उपदेशकरि पाया है सम्यक्त जाने, अर ज्ञानी है, परम तत्वका स्वरूप जाननहारा, पवित्र है आत्मा जाकी, साधु समान है, जाके व्रत गुण शीलकर संयुक्त मोक्षमार्गका उद्यमी सो ऐसे सत्पुरुषनिके चरित्र दोषरहित पर—उपकारकरयुक्त कौनका शोक न निवारैं? कैसे हैं सत्पुरुष? जिनमतविषै अति निश्चल है चित्त जिनका। सीता कहै है—हे वज्रजंघ! तू मेरे पूर्वभवका सहोदर है सो जो या भवविषै तैनैं सांचा भाईपना जनाया। मेरा शोक संतापरूप तिमिर हरा सूर्यसमान तू पवित्र आत्मा है।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महा पद्मपुराण संस्कृतग्रन्थ, ताकी भाषावचनिकाविषै सीताकूं वज्रजंघका धीर्य बंधावनेका वर्णन करनेवाला अठानवेवां पर्व पूर्ण भया ॥ ९८ ॥

अथानन्तर वज्रजंघने सीताके चढ़िवेकूं क्षणमात्रविषै अद्भुत पालकी मंगाई। सो सीता तापर आरूढ़ भई। पालकी विमान समान महा मनोग्य समीचीन प्रमाणकर युक्त, सुन्दर हैं थंभ जाके, श्रेष्ठ दर्पण थंभोंविषै जड़े हैं। अर मोतिनिकी झालरीकरि पालकी मंडित है। अर चन्द्रमा समान उज्ज्वल चमर तिनकर शोभित है, मोतिनके हार जलके बुदबुदे समान शोभैं हैं, अर विचित्र जे वस्त्र तिनकर मंडित चित्रामकर शोभित हैं, सुन्दर हैं, झरोखा जाविषैं। ऐसी सुखपालकी पर चढ़ परम ऋद्धि कर युक्त बड़ी सेना मध्य सीता चली जाय है, आश्चर्यकूं प्राप्त भई कर्मोंकी विचित्रताकं चितवे है। तीन दिनविषैं भयंकर वनकूं उलंघ पुण्डरीक देशविषै आई। उत्तम है चेष्टा जाकी, सर्व देशके लोक माताकूं आय मिले ग्राम ग्रामविषैं भेंट करैं। कैसा है वज्रजंघका देश? समस्त जातिके अन्नकर जहां समस्त पृथ्वी आच्छादित होय रही है। अर कूकड़ाउड़ान नजीक हैं ग्राम जहां, रत्ननिकी खान, स्वर्ण रूपादिककी खान, सुरपुर जैसे पुर, सो देखती थकी सीता हर्षकूं प्राप्त भई। वन उपवनकी शोभा ७८२

देखती चली जाय है। ग्रामके महंत भेंटकर नानाप्रकार स्तुति करैं हैं। हे भगवती! हे माता! आपके दर्शनकर हम पापरहित भए, कृतार्थ भए। अर बारम्बार बन्दना करते भए, अर्घपाद्य किए। अर अनेक राजा देवनि समान आय मिले सो नानाप्रकार भेंट करते भए अर बारम्बार बंदना करते भए। या भांति सीता सती पैंड २ पर राजा प्रजादिकर पूजी संती चली जाय है। वज्रजंघका देश अतिसुखी ठौर ठौर बन उपवनादिकरि शोभित, ठौर ठौर चैत्यालय देख अति हर्षित भई। मन विषै विचारै है जहां राजा धर्मात्मा होय वहां प्रजा सुखी होय ही। अनुक्रमकर पुण्डरीकपुरके समीप आए सो राजाकी आज्ञातैं सीताका आगमन सुन नगरके सब लोक सन्मुख आए अर भेंट करते भए। नगरकी अति शोभा करी। सुगन्धकर पृथ्वी छांटी, गली बाजार सब सिंगारे, अर इन्द्रधनुष समान तोरण चढ़ाए, अर द्वारनिविषै पूर्ण कलश थापे, जिनके मुख सुन्दर पल्लवयुक्त हैं अर मंदिरनिपर ध्वजा चढ़ी, अर घर घर मंगल गावैं हैं। मानों वह नगर आनन्दकर नृत्य ही करै है। नगरके दरवाजेपर तथा कोटके कंगूरनिपर लोक खड़े देखै हैं। हर्षकी वृद्धि होय रही है! नगरके बाहिर अर भीतर राजद्वारतक सीताके दर्शनकूं लोक खड़े हैं। चलायमान जे लोकनिके समूह तिनकर नगर यद्यपि स्थावर है तथापि जानिए जंगम होय रह्या है। नानाप्रकारके वादित्र बाजै हैं। तिनके नादकर दशों दिशा शब्दायमान होय रही हैं, शंख बाजै हैं, बंदीजन विरद बखानै हैं। समस्त नगरके लोक आश्चर्यकूं प्राप्त भए देखै हैं। अर सीताने नगरविषै प्रवेश किया, जैसैं लक्ष्मी देवलोकविषै प्रवेश करै। वज्रजंघके मंदिरविषै अति सुन्दर जिन मन्दिर हैं। सर्व राजलोककी स्त्रीजन सीताके सन्मुख आईं। सीता पालकीसूं उतर जिनमन्दिरविषै गई। कैसा है जिनमन्दिर? महा सुन्दर उपवनकर वेष्टित है, अर वापिका सरोवरी तिनकर शोभित है, सुमेरु शिखर समान सुन्दर स्वर्णमई है। जैसैं भाई भामण्डल सीताका सन्मान करै तैसैं वज्रजंघ आदर करता भया। वज्रजंघके समस्त परिवारके लोक अर राजलोककी समस्त राणी सीताकी सेवा करैं। अर ऐसे मनोहर शब्द निरन्तर कहै हैं, हे देवते! हे पूज्ये! हे स्वामिनी! हे ईशानने! सदा जयवंत

होहु, बहुत दिन जीवो, आनन्दकूं प्राप्त होहु, वृद्धिको प्राप्त होहु, आज्ञा करहु। या भांति स्तुति करैं। अर जो आज्ञा करैं सो सीस चढ़ावैं। अति हर्षसूं दौडकर सेवा करैं। अर हाथ जोड़ सीस निवाय नमस्कार करैं। वहां सीता अति आनन्दतैं जिनधर्मकी कथा करती तिष्ठै। अर जो सामंतनिकी भेंट आवैं अर राजा भेंट करे सो आनकी धर्मकार्यविषै लगावै। यह तो यहां धर्मकी आराधना करै है।

अर वह कृतान्तवक्र सेनापति तप्तायमान है चित्त जाका, रथके तुरंग खेदकूं प्राप्त भए हुते, तिनकूं खेदरहित करता हुआ श्रीरामचन्द्रके समीप आया। याकूं आवता सुन अनेक राजा सन्मुख आये। सो कृतान्तवक्र आयकर श्रीरामचन्द्रजीके चरणनिकूं नमस्कार कर कहता भया—हे प्रभो! मैं आज्ञाप्रमाण सीताकूं भयानक वनविषै मेलकर आया हूं। वाके गर्भमात्र ही सहाई है। हे देव! वह बन नाना प्रकारके भयंकर जीवनिकरि अति घोर शब्दकर महा भयकारी है। अर जैसा बेताल कहिये प्रेतनिका बन, ताका आकार देखा न जाय तैसैं सघन वृक्षनिके समूह कर अंधकाररूप है। जहां स्वतः स्वभाव आरणे भैंसे अर सिंह द्वेषकर सदा युद्ध करै हैं। अर जहां घूघू बसै है सो विरूप शब्द करै है। अर गुफानिविषै सिंह गुंजार करैं हैं सो गुफा गुंजार रही है। अर महाभयंकर अजगर शब्द करै हैं, अर चीतानिकर हते गये हैं मृग जहां, कालकूं भी विकराल ऐसा वन ताविषै। हे प्रभो! सीता अश्रुपात करती महा दीनवदन आपकूं जो शब्द कहती भई सो सुनो—आप आत्मकल्याण चाहो हो तो जैसे मोहि तजी तैसैं जिनेन्द्रकी भक्ति न तजनी। जैसैं लोकनिके अपवादकर मोसैं अति अनुराग हुता तोहू तजी, तैसैं काहूके कहिवेतैं जिनशासनकी श्रद्धा न तजनी। लोक विना विचारे निर्दोषनिकूं दोष लगावैं हैं, जैसैं मोहि लगाया। सो आप न्याय करो, सो अपनी बुद्धिसे विचार यथार्थ करना, काहूके कहेतैं काहूकूं झूठा दोष न लगावना। अर सम्यग्दर्शनतैं विमुख मिथ्यादृष्टि जिनधर्मरूप रत्नका अपवाद करैं हैं सो उनके अपवादके भयतैं सम्यक्दर्शनकी शुद्धता न तजनी। वीतरागका मार्ग उरविषै दृढ़ धारणा। मेरे तजनेका या भवविषै किंचित्मात्र दुख है अर सम्यग्दर्शनकी हानितैं जन्म जन्मविषै दुख है। या जीवकूं लोकविषै निधि

रत्न स्त्री वाहन राज्य सबही सुलभ हैं एक सम्यग्दर्शन रत्न ही महा दुर्लभ है। राजविषै पापकर नरकविषै पड़ना है, एक ऊर्ध्वगमन सम्यक्दर्शनके प्रतापहीसे होय। जाने अपना आत्मा सम्यग्दर्शन-रूप आभूषणकर मंडित किया सो कृतार्थ भया। ये शब्द जानकीने कहे हैं जिनकूं सुनकर कौनके धर्म बुद्धि न उपजै ? हे देव ! एक तो वह सीता स्वभावहीं कर कायर, अर महा भयंकर वनके दुष्ट जीवनितैं कैसैं जीवैगी ? जहां महा भयानक सर्पनिके समूह अर अल्पजल ऐसे सरोवर तिनविषैं माते हाथी कर्दम करैं हैं, अर जहां मृगनिके समूह मृगतृष्णाविषैं जल जानि वृथा दौड़ व्याकुल होय हैं, जैसैं संसार की मायाविषैं रागकर रागी जीव दुखी होय। अर जहां कौंछिकी रजके संगकर मर्कट अति चंचल होय रहे हैं अर जहां तृष्णासूं सिंह व्याघ्र ल्यालियोंके समूह तिनकी रसनारूप पल्लव लहलहाट करैं हैं। अर चिरमसमान लालनेत्र जिनके ऐसे क्रोधायमान भुजंग फुंकार करैं हैं। अर जहां तीव्र पवनके संचारकर क्षणमात्रविषैं वृक्षनिके पत्रोंके ढेर होय हैं। अर महा अजगर तिनकी विषरूप अग्निकर अनेक वृक्ष भस्म होय गये हैं। अर माते हाथिनिकी महा भयंकर गर्जना ताकर वह वन अति विकराल है। अर वनके शूकरनिकी सेनाकर सरोवर मलिनजल होय रहे हैं। अर जहां ठौर ठौर भूमि-कांटे अर सांठे अर सांपोंकी बामी अर कंकर पत्थर तिनकर भूमि महा संकटरूप है। अर डाभकी अणी सूईतैंहू अति पैनी है, अर सूखे पान फूल पवनकर उड़े उड़े फिरैं हैं। ऐसे महा अरण्यविषैं, हे देव ! जानकी कैसैं जीवैगी ? मैं ऐसा जानूं हूं क्षणमात्र हू वह प्राण रखिवेको समर्थ नाहीं।

हे श्रेणिक ! सेनापतिके यह वचन सुन श्रीराम अति विषादकूं प्राप्त भए। कैसे हैं वचन ? जिनकर निर्दईका भी मन द्रवीभूत होय। श्रीरामचन्द्र चितवते भए, देखो मो मूढचित्तने दुष्टनिके वचननिकरि अत्यन्त निंद्यकार्य किया। कहां वह राजपुत्री अर कहां वह भयंकर वन ? यह विचारकर मूर्छाकूं प्राप्त भये। बहुरि शीतोपचारकरि सचेत होय विलाप करते भए। सीताविषै है चित्त जिनका, हाय श्वेत श्याम रक्त तीन वर्णके कमल समान नेत्रनिकी धरणहारी ! हाय निर्मल गुणनिकी खान ! मुखकर

७८५

भोला है अथवा जाने, कमलकी किरण समान कोमल, हाय! जानकी मोसूं वचनालाप कर। तू जाने ही है कि मेरा चित्त तो बिना अति कायर है। हे उपमारहित शीलरूपकी आभूषहारी! मेरे मनकी हरणहारी! हितकारी है आलाप जिसको, हे पापवर्जिते, निरपराध, मेरे मनकी निवासिनी! तू कौन अवस्थाकूं प्राप्त भई होयगी? हे देवी! वह महा भयंकर वन क्रूर जीवोंकर भरया, उसविषैं सर्वसामग्री रहित कैसैं तिष्ठेगी? हे मोविषैं आसक्त चकोरनेत्र लावण्यरूप जलकी सरोवरी, महालज्जावती, विनयवती! तू कहां गई? तेरे श्वासकी सुगन्धकर मुख पर गुंजार करते जे भ्रमर तिनकूं हस्तकमल कर निवारती अति खेदकूं प्राप्त होयगी। तू यूथसे बिछुरी मृगीकी न्यांई अकेली भयंकर वनविषै कहां जायगी? जो वन चितवन करते भी दुस्सह, उसविषै तू अकेली कैसैं तिष्ठैगी? कमलके गर्भ समान कोमल तेरे चरण महासुन्दर लक्षणके धारणहारे, कर्कश भूमिका स्पर्श कैसे सहैंगे? अर वनके भील महा म्लेच्छ कृत्य अकृत्यके भेदसे रहित है मन जिनका, सो तुझे पाकर भयंकर पल्लीविषै ले गये होवेंगे। सो पहिले दुखसे भी यह अत्यन्त दुख है। तू भयानक वनविषै मो बिना महा दुःखकूं प्राप्त भई होयगी, अथवा तू खेदखिन्न महा अंधेरी रात्रिविषै वनकी रजकर मंडित कहीं पड़ी होयगी। सो कदाचित् तुझे हाथियोंने दाबी होयगी। तो इस समान और अनर्थ कहा? अर गृध, रीछ, सिंह, व्याघ्र, अष्टापद इत्यादि दुष्ट जीवोंकर भरया जो वन ताविषै कैसैं निवास करेगी? जहां मार्ग नाहीं, विकराल दाढके धरणहारे व्याघ्र महा क्षुधातुर तिनकैसी अवस्थाकूं प्राप्त करी होयगी जो कहिवेविषै न आवै। अथवा अग्निकी ज्वालाके समूहकर जलता जो वन उसविषै अशुभ अवस्थानककूं प्राप्त भई होयगी, अथवा सूर्यकी अत्यन्त दुस्सह किरण तिनके आतापकर लाखकी न्याईं पिघल गई होयगी, छाया विषै जायवेकी नाहीं शक्ति जाकी अथवा शोभायमान शीलकी धरणहारी मो निर्दईविषै मनकर हृदय फटकर मृत्युकूं प्राप्त भई होयगी। पहिले जैसैं रत्नजटीने मोहि सीताके कुशलकी वार्ता आय कही थी तैसैं कोई अब भी कहै। हाय प्रिये! पतिव्रते विवेकवती, सुखरूपिणी, तू कहां गई? कहां तिष्ठेगी

क्या करैगी ? अहो कृतांतवक्र ! कहु, क्या तैनैं सचमुच वनहीविषैं डारी ? जो कहूं शुभ ठौर मेली होय तो तेरे मुखरूप चन्द्रसे अमृतरूप वचन खिरैं। जब ऐसा कहा तब सेनापतिने लज्जाके भारकर नीचा मुख किया, प्रभारहित होय गया, कछु कह न सक्या, अति व्याकुल भया, मौन गह रह्या। तब रामने जानी अहो प्रभु सीताकूं भयंकर वनविषैं डार आया। तब मूर्च्छाकूं प्राप्त होय राम गिरे। बहुरि बहुत बेर विषैं नीठि नीठि सचेत भए तब लक्ष्मण आए। अन्तःकरणविषैं सोचकूं धरे कहते भए—हे देव ! क्यों व्याकुल भए हो, धीर्यको अंगीकार करहु। जो पूर्वकर्म उपार्ज्या है उसका फल आय प्राप्त भया, अर सकल लोककूं अशुभके उदयकर दुःख प्राप्त भया। केवल सीताहीकूं दुःख न भया।

सुख अथवा दुख जो प्राप्त होना होय सो स्वयमेव ही किसी निमित्तसूं आय प्राप्त होय है, हे प्रभो ! जो कोई किसीकूं आकाशविषैं ले जाय अथवा क्रूर जीवोंके भरे वनविषैं डारे अथवा गिरिके शिखिर धरे तो भी पूर्व पुण्यकर प्राणीकी रक्षा होय है। सब ही प्रजा दुखकर तप्तायमान है, आंसुओंके प्रवाहकर मानों हृदय गल गया है सोई झरै है। यह वचन कह लक्ष्मण भी अत्यन्त व्याकुल होय रुदन करने लगा। जैसा दाहका मार्‌या कमल होय तैसा होय गया है मुखकमल जाका। हाय माता ! तू कहां गई ! दुष्टजनोंके वचनरूप अग्निकर प्रज्वलित है शरीर जिनका, हे गुणरूप धान्यके उपजावनेकी भूमि ? बारह अनुप्रेक्षाके चितवनकी करणहारी है, शीलरूप पर्वतकी पृथ्वी है, सीते ! सौम्य स्वभावकी धारक है। विवेकिनी, दुष्टोंके वचन सोई भए तुषार तिनकर दाहा गया है हृदय कमल जाका, राजहंस श्रीराम तिनके प्रसन्न करिवेकूं मानसरोवर समान, सुभद्रा सारिखी कल्याणरूप, सर्व आचारविषैं प्रवीण, लोककूं मूर्तिवन्त सुखकी आशिखा, हे श्रेष्ठे ! तू कहां गई ? जैसैं सूर्य विना आकाशकी शोभा कहां अर चन्द्रमा विना निशाकी शोभा कहां ? तैसैं हे माता ! तो विना अयोध्याकी शोभा कहां ? इस भांति लक्ष्मण विलाप कर रामसूं कहे है—हे देव ! समस्त नगर बीण बांसुरी मृदंगादिकी ध्वनिकर रहित भया है, अहनिश रुदनकी ध्वनि कर पूर्ण है। गली गलीविषैं, वन उपवनविषैं, नदियों

के तटविषै चौहटेविषै, हाट हाटविषै, घर घरविषै, समस्त लोक रुदन करै हैं। तिनके अश्रुपातकी धारा कर कीच होय रही है। मानों अयोध्याविषै वर्षाकालही फिर आया है। समस्त लोक आंसू डारते गद्‌गद वाणीकर कण्ठसूं वचन उचारते, जानकी प्रत्यक्षनहीं है परोक्ष ही है, तो भी एकाग्रचित्त भए गुण कीर्तिरूप पुष्पोंके समूह कर पूजैं हैं। वह सीता पतिव्रता समस्त सतियोंके सिरपर विराजे है, गुणोंकर महा उज्ज्वल। उसके यहां आवने की अभिलाषा सबकूं है। यह सर्व लोक माता ने ऐसे पाले है जैसे जननी पुत्रकूं पाले। सो सब ही महा शोककर गुण चितार चितार रुदन करे हैं। ऐसा कौन है जाके जानकीका शोक न होय, तातें हे प्रभो! तुम सब बातोंविषै प्रवीण हो अब पश्चाताप तजहु। पश्चातापसूं कछु कार्यकी सिद्धि नाहीं, जो आपका चित्त प्रसन्न है तो सीताकूं हेरकर बुलाय लेंगे। अर उनकूं पुण्यके प्रभावकर कोई विघ्न नहीं। आप धीर्य अवलम्बन करिवे योग्य हो। या भांति लक्ष्मणके वचनकर रामचन्द्र प्रसन्न भए। कछु एक शोक तज कर्तव्यविषै मन धरचा। भद्र कलश भण्डारीकूं बुलाय कर कही—तुम सीताकी आज्ञा सूं जिस विधि किमिच्छा दान करते थे तैसे ही किया करो। सीताके नामसूं दान बटे। तब भंडारीने कही जो आप आज्ञा करोगे सो ही होयगा। नव महीने अर्थियोंकूं किमिच्छा दान बटिवो किया। रामके आठ हजार स्त्री तिनकर सेवमान तौ भी एक क्षणमात्र भी मनकर सीताकूं न विसारता भया। सीता सीता यह आलाप सदा होता भया। सीताके गुणोंकर मोहचा है मन जाका, सर्वदिशा सीतामई देखता भया। स्वप्नविषै सीताकूं या भांति देखै—पर्वतकी गुफाविषै पड़ी है, पृथ्वीकी रजकरि मंडित है, अर नेत्रनिके अश्रुपात कर चौमासा कर राख्या है, महाशोककर व्याप्त है। या भांति स्वप्नविषै अवलोकन करता भया। सीताका शब्द करता राम ऐसा चितवन करै है—देखो, सीता सुन्दर चेष्टाकी धरणहारी, दूर देशान्तरविषै है तौ भी मेरे चित्तसूं दूर न होय है। वह माधवी शीलवती मेरे हितविषै सदा उद्यमी। या भांति सदा चितारवो करै। अर लक्ष्मणके उपदेश कर, अर सूत्र सिद्धांतके श्रवण कर कछूइक रामकूं शोक क्षीण भया,

धीर्यकूं धरि धर्मध्यानविषै तत्पर भया। यह कथा गौतम स्वामी राजा श्रेणिकसूं कहै है। वे दोनों भाई महा न्यायवंत, अखण्ड प्रीतिके धारक, प्रशंसा योग्य गुणोंके समूह, रामके हल मूसलका आयुध, लक्ष्मण के चक्रायुध, समुद्र पर्यंत पृथ्वीकूं भली भांति पालते सन्ते, सौधर्म ईशान इन्द्र सारिखे शोभते भए। वे दोनों धीरवीर स्वर्ग समान जो अयोध्या ताविषै देवों समान ऋद्धि भोगते, महा कांतिके धारक, पुरुषोत्तम पुरुषोंके इन्द्र देवेन्द्र समान राज्य करते भए। सुकृतके उदयसूं सकल प्राणियोंकूं आनन्द देयवेविषै चतुर, सुन्दर चरित्र जिनके, सुख सागरविषै मग्न, सूर्य समान तेजस्वी, पृथ्वीविषै प्रकाश करते भए।

इति श्रीरविषेणाचार्य विरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रंथ ताकी भाषावचनिकाविषै रामकूं सीताका शोक वर्णन करनेवाला निन्यानवेवां पर्व पूर्ण भया ॥ ९९ ॥

अथानन्तर गौतमस्वामी कहै हैं—हे नराधिप! राम लक्ष्मण तो अयोध्याविषै तिष्ठै हैं अर अब लवणांकुशका वृतांत कहै हैं सो सुनो। अयोध्याके सबही लोक सीताके शोकसूं पांडुताकूं प्राप्त भये, अर दुर्बल होय गये। अर पुण्डरीकपुरविषै सीता गर्भके भारकर कछूएक पांडुताकूं प्राप्त भई, अर दुर्बल भई। मानूं सकल प्रजा महा पवित्र उज्ज्वल इसके गुण वर्णन करै है, सो गुणोंकी उज्ज्वलता कर श्वेत होय गई है। अर कुचोंकी बीटली श्यामताकूं प्राप्त भई, सो मानूं माताके कुच पुत्रोंके पान करिवेके पयके घट हैं सो मुद्रित कर राखे हैं। अर दृष्टि क्षीरसागर समान उज्ज्वल अत्यन्त मधुरताकूं प्राप्त भई। अर सर्वमंगलके समूहका आधार जिनका शरीर, सर्वमंगलका स्थानक जो निर्मल रत्नमई आंगण ताविषै मंद मंद विचरे सो चरणोंके प्रतिबिंब ऐसे भासैं मानूं पृथ्वी कमलनिसूं सीताकी सेवा ही करै है। अर रात्रिविषै चन्द्रमा याके मन्दिर ऊपर आय निकसै सो ऐसा भासै मानूं सफेद छत्र ही है। अर सुगन्धके महिलविषै सुन्दर सेज ऊपर सूती ऐसा स्वप्न देखती भई कि महागजेन्द्र कमलोंके पुटविषै जल भरकर अभिषेक करावै हैं, अर बारम्बार सखीजनोंके मुख जय जयकार शब्द सुनकर

जाग्रत होय है, परिवारके लोक समस्त आज्ञारूप प्रवर्तें हैं। क्रीड़ाविषै भी यह आज्ञा भंग न सह सकैं। सब आज्ञाकारी भए, शीघ्रही आज्ञाप्रमाण करैं हैं तो भी सबों पर तेज करैं हैं, काहेसू ? कि तेजस्वी पुत्र गर्भविषै तिष्ठे हैं। अर मणियोंके दर्पण निकट है तौ भी खड्गविषै मुख देखै हैं। अर बीणा, बांसुरी, मृदंगादि अनेक वादित्रोंके नाद होय हैं, सो न रुचे, अर धनुषके चढ़ायवेकी ध्वनि रुचै है। अर सिंहोंके पिंजरे देख जिनके नेत्र प्रसन्न होय अर जिनका मस्तक जिनेन्द्र टार औरकू न नमैं।

अथानन्तर नव महीना पूर्ण भये श्रावण सुदी पूर्णमासीके दिन, श्रवण नक्षत्रके विषै वह मंगलरूपिणी सर्व लक्षण पूर्ण शरदकी पूनोंके चन्द्रमा समान है वदन जिनका सुखसू पुत्रयुगल जनती भई। सो पुत्रोंके जन्मविषै पुण्डरीकपुरकी सकल प्रजा अति हर्षित भई। मानू नगरी नाच उठी, ढोल नगारे आदि अनेक प्रकारके वादित्र बाजने लगे, शंखोंके शब्द भये। राजा वज्रजंघने अति उत्साह किया, बहुत सम्पदा याचकनिकू दई। अर एक का नाम अनंगलवण दूजे का नाम मदनांकुश ये यथार्थ नाम धरे। फिर ये बालक वृद्धिकू प्राप्त भए। माताके हृदयकू अति आनन्दके उपजावनहारे महा धीर शूरवीर ताके अंकुर उपजे। सरसूंके दाणे इनकी रक्षाके निमित्त इनके मस्तक डारे सो ऐसे सोहते भए मानू प्रतापरूप अग्नि के कण ही हैं। जिनका शरीर ताये सुवर्ण समान अति देदीप्यमान, सहज स्वभाव तेजकर अति सोहता भया। अर जिनके नख दर्पणसमान भासते भए। प्रथम बालअवस्थाविषै अव्यक्त शब्द बोले सो सर्वलोकके मनकू हरैं। अर इनकी मंद मुसकान महामनोग्य पुष्पोंके विकसने समान लोकनके हृदयकू मोहती भई। अर जैसैं पुष्पनिकी सुगन्धता भ्रमरोंके समूहकू अनुरागी करै तैसैं इनकी वासना सबके मनकू अनुरागरूप करती भई। यह दोनों माताका दूध पान कर पुष्ट भए। अर जिनका मुख महासुंदर सुफेद दांतों कर अति सोहता भया। मानू यह दांत दुग्ध समान उज्ज्वल हास्यरस समान शोभायमान दीखै हैं। धायकी आंगरी पकड़ आगनविषै पांव धरते कौनका मन न हरते भए ? जानकी ऐसे सुन्दर क्रीड़ाके करणहारे कुमारोंकूं देखकर समस्त दुःख भूलि गई। बालक

बड़े भए। अति मनोहर, सहज ही सुन्दर हैं नेत्र जिनके, विद्याके पढ़ने योग्य भए। तब इनके पुण्यके
योगकर एक सिद्धार्थनामा क्षुल्लक शुद्धात्मा पृथ्वीविषै प्रसिद्ध वज्रजंघके मन्दिर आया। सो महाविद्या
के प्रभाव कर त्रिकाल संध्याविषै सुमेरुगिरिके चैत्यालय वंदि आवे। प्रशांतवदन, साधु समान है भावना
जाके, अर खंडितवस्त्र मात्र है परिग्रह जाके, उत्तम अणुव्रतका धारक, नानाप्रकारके गुणनिकर
शोभायमान, जिनशासनके रहस्यका वेत्ता, समस्त कलारूप समुद्रका पारगामी, तपकरि मंडित अति
सोहै। सो आहारके निमित्त भ्रमता संता जहां जानकी तिष्ठै हुती वहां आया। सीता महासती मानों
जिनशासनकी देवी पद्मावती ही है। सो क्षुल्लककूं देख अति आदरसे उठकर सन्मुख जाय इच्छा-
कार करती भई, अर उत्तम अन्नपानसे तृप्त किया। सीता जिनधर्मियोंकूं अपने भाई समान जानै है।
सो क्षुल्लक अष्टांग निमित्तज्ञानका वेत्ता दोनों कुमारनिकूं देखकर अति संतुष्ट होयकर सीतासे कहता
भया—हे देवि! तुम सोच न करो, जिनके ऐसे देवकुमार समान प्रशस्त पुत्र उसे कहा चिंता?

अथानन्तर यद्यपि क्षुल्लक महा विरक्तचित्त है तथापि दोनों कुमारनिके अनुरागसे कईएक दिन
तिनके निकट रहा। थोड़े दिनोंमें कुमारनिकूं शस्त्रविद्याविषै निपुण किया। सो कुमार ज्ञान विज्ञान
विषै पूर्ण, सर्व कलाके धारक, गुणनिके समूह, दिव्यास्त्रके चलायवे अर शत्रुओंके दिव्यास्त्र आवैं
तिनके निराकरण करिवेकी विद्याविषै प्रवीण होते भए। महापुण्यके प्रभावसूं परम शोभाकूं धारे,
महालक्ष्मीवान, दूर भए हैं मति श्रुति आवरण जिनके, मानों उघड़े निधिके कलश ही हैं। शिष्य बुद्धि-
मान होय तब गुरुकूं पढ़ायवेका कछू खेद नाहीं। जैसे मंत्री बुद्धिमान होय तब राजाकूं राज्यकार्य
अर कछु खेद नाहीं अर जैसे नेत्रवान पुरुषनिकूं सूर्यके प्रकाशकर घटपटादिक पदार्थ सुखसूं भासैं, तैसे
गुरुके प्रभावकर बुद्धिवंतकूं शब्द अर्थ सुखसूं भासैं। जैसे हंसनिकूं मानसरोवरविषै आवते कछु खेद
नाहीं तैसे विवेकवान विनयवान बुद्धिमानकूं गुरुभक्तिसे अथाह ज्ञान आवते परिश्रम नाहीं। सुखसूं
अति गुणनिकी वृद्धि होय है। अर बुद्धिमान् शिष्यनिकूं उपदेश देय गुरु कृतार्थ होय हैं। अर कुबुद्धि-

कूं उपदेश देना वृथा है, जैसें सूर्यका उद्योत घूघूओंकूं वृथा है। यह दोनों भाई देदीप्यमान है यश जिनका अति सुन्दर, महाप्रतापी सूर्यकी न्याई जिनकी ओर कोऊ विलोक न सके, दोऊ भाई चन्द्र सूर्य समान, दोनोंविषै अग्नि अर पवन समान प्रीति, मानूं वह दोनों ही हिमाचल विंध्याचल समान हैं, वज्रवृषभनाराचसंहनन है जिनके, सर्व तेजस्वीनिके जीतिवेकूं समर्थ, सब राजावोंका उदय अर अस्त जिनके आधीन होयगा, महाधर्मात्मा, धर्मके धारी, अत्यन्त रमणीक, जगत्कूं सुखके कारण, सब जिनकी आज्ञाविषै। राजा ही आज्ञाकारी तो औरनिकी कहा बात? काहूकूं आज्ञारहित न देख सक्या। अपने पांवनिके नखनिविषै अपनाही प्रतिबिम्ब देख न सकें तो और कौनसे नम्रीभूत होंय? अर जिनकूं अपने नख अर केशोंका भंग न रुचै तो अपनी आज्ञाका भंग कैसें रुचै? अर अपने सिर पर चूडामणि धरिये अर सिरपर छत्र फिरै अर सूर्य ऊपर होय आय निकसे तो भी न संहार सकें तो औरनिकी ऊंचता कैसें संहारैं? मेघका धनुष चढ़ा देख कोप करैं तो शत्रुके धनुषकी प्रबलता कैसें देख सकैं? चित्रामके नृप न नमैं तो भी संहार न सकैं तो साक्षात् नृपोंका गर्व कब देख सकैं? अर सूर्य नित्य उदय अस्त होय उसे अल्प तेजस्वी गिनैं। अर पवन महा बलवान है परन्तु चंचल सो उसे बलवान न गिनैं, जो चलायमान सो बलवान काहेका? जो स्थिरभूत अचल सो बलवान्। अर हिमवान पर्वत उच्च है स्थिरीभूत है, परन्तु जड़ अर कठोर कंटक सहित है तातैं प्रशंसा योग्य न गिनैं। अर समुद्र गम्भीर है, रत्नोंकी खान है परन्तु क्षार अर जलचर जीवोंको धरैं, अर शंखोंकर युक्त तातैं समुद्र कूं तुच्छ गिनैं। महा गुणनिके निवास, अति अनुपम जेते प्रबल राजा हुते तेज रहित होय उनकी सेवा करते भये। ये महाराजाओंके राजा सदा प्रसन्नवदन मुखसूं अमृत बचन बोलैं, सबनिकर सेवने योग्य जे दूरवर्ती दुष्ट भूपाल हुते ते अपने तेजकर मलिन वदन किए सब मुरझाय गए। इनका तेज ये जब जन्मे तबसे इनके साथ ही उपज्या है। शस्त्रनिके धारणकर जिनके कर अर उदर श्यामताकूं धरैं हैं, अर मानूं अनेक राजावोंके प्रतापरूप अग्निके बुझावनेसूं श्याम हैं। समस्त दिशारूप स्त्री वशीभूत कर देनेवाली

भई, महा धीर धनुषके धारक तिनके सब आज्ञाकारी भए। जैसा लवण तैसा ही अंकुश। दोनों भाइनिविषै कोई कमी नहीं। ऐसा शब्द पृथ्वीविषै सबके मुख। ये दोनों नवयौवन, महा सुन्दर, अद्भुत चेष्टाके धरणहारे, पृथ्वीविषै प्रसिद्ध, समस्त लोकनिकर स्तुति करिवे योग्य, जिनके देखिवेकी सबके अभिलाषा, पुण्य परमाणुनिकर रचा है पिंड जिनका, सुखका कारण है दर्शन जिनका स्त्रियोंके मुखरूप कुमुद तिनके प्रफुल्लित करनेको शरदकी पूर्णमासीके चन्द्रमा समान सोहते भए। माताके हृदयकूं आनन्दके चलते फिरते सुमेरु ही ये कुमार सूर्यसमान कमल नेत्र,देवकुमार सारिखे, श्रीवत्स लक्षणकर मंडित है वक्षस्थल जिनका अनंत पराक्रमके धारक, संसार समुद्रके तट आए, चरम शरीर, परस्पर महाप्रेम के पात्र, सदा धर्मके मार्गमें तिष्ठै हैं, देवनिका अर मनुष्यनिका मन हरै हैं।

भावार्थ—जो धर्मात्मा होय सो काहूका कुछ न हरै। ये धर्मात्मा परधन परस्त्री तो न हरैं परन्तु पराया मन हरैं। इनकूं देख सबनिका मन प्रसन्न होय। ये गुणनिकी हदकूं प्राप्त भए हैं। गुण नाम डोरेका भी है, सो हदपर गांठकूं प्राप्त होय हैं। अर इनके उरविषैं गांठ नाहीं, महानिष्कपट हैं। अपने तेजकर सूर्यकूं जीतै हैं, अर कांतिकर चन्द्रमाकूं जीतै हैं। अर पराक्रमकर इन्द्रकूं, अर गम्भीरता कर समुद्रकूं, स्थिरताकर सुमेरुकूं, अर क्षमाकर पृथ्वीकूं, अर शूरवीरताकर सिंहकूं, चालकर हंसकूं जीतै हैं। अर महा जलविषै मकर ग्राह नक्रादिक जलचरनिसूं क्रीड़ा करै हैं। अर माते हाथियोंसूं तथा सिंह अष्टापदोंसूं क्रीडा करते खेद न गिनैं। अर महा सम्यक्दृष्टि, उत्तम स्वभाव, अति उदार उज्ज्वलभाव, जिनसूं कोई युद्ध न कर सकै, महायुद्धविषै उद्यमी जे कुमार सारिखे, मधुकैटभ सारिखे, ७६३
इन्द्रजीत मेघनाद सारिखे योधा, जिनमार्गी, गुरुसेवाविषै तत्पर, जिनेश्वरकी कथाविषै रत, जिनका नाम सुन शत्रुवोंको त्रास उपजै। यह कथा गौतम स्वामी राजा श्रेणिकसूं कहते भए—हे राजन्! ते दोनों वीर महाधीर गुणरूप रत्नके पर्वत महा ज्ञानवान, लक्ष्मीवान, शोभा कांति कीर्तिके निवास, चित्तरूप माते हाथीके वश करिवेकूं अंकुश, महाराजरूप मन्दिरके दृढ स्तम्भ, पृथ्वीके सूर्य, उत्तम आच-

रणके धारक. लवण अंकुश नरपति विचित्र कार्यके करणहारे, पुण्डरीकनगरविषै यथेष्ट देवनिकी न्याई रमैं। महा उत्तम पुरुष जिनके निकट, जिनका तेज लख सूर्य भी लज्जावान होय। जैसे बलभद्र नारायण अयोध्याविषै रमैं तैसैं यह पुण्डरीकपुरविषै रमैं हैं।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रन्थ, ताकी भाषावचनिकाविषै लवणांकुशका पराक्रम वर्णन करनेवाला एकसौवां पर्व पूर्ण भया ॥ १०० ॥

अथानन्तर अति उदार क्रियाविषै योग्य, अति सुन्दर तिनकूं देख वज्रजंध इनके परणायवेविषै उद्यमी भया। तब अपनी शशिचूला नामा पुत्री लक्ष्मीराणीके उदरविषै उपजी बत्तीस कन्या सहित लवणकुमारकूं देनी विचारी! अर अंकुशकुमारका भी विवाह लारही करना, सो अंकुशयोग्य कन्या ढूं ढिवेकूं चिंतावान भया। फिर मनविषै विचारी पृथ्वीपुर नगरका राजा पृथु ताकी राणी अमृतवती, ताकी पुत्री कनकमाला, चन्द्रमाकी किरण समान निर्मल, अपने रूपकर लक्ष्मीकूं जीते है। वह मेरी पुत्री शशिचूला समान है। यह विचार तापै दूत भेज्या। सो दूत विचक्षण पृथ्वीपुर जाय पृथुसूं कही। जौं लग दूतने कन्यायाचनके शब्द न कहे तौंलग उसका अति सन्मान किया। अर जब याने याचनेका वृत्तांत कहा तब वह क्रोधायमान भया अर कहता भया—तू पराधीन है, अर पराई कहाई कहै है। तुम दूत लोग जलके धारा समान हो, जा दिशा चलावे वाही दिश चालो। तुमविषै तेज नाहीं, बुद्धि नाहीं। जो ऐसे पापके वचन कहै ताकूं निग्रह करूं। पर तू पराया प्रेरा यन्त्र समान है, यन्त्री यन्त्र बजावे है त्यों बाजै, तातैं तू हनिवे योग्य नाहीं। हे दूत! १ कुल, २ शील, ३ धन, ४ रूप ५ समानता, ६ बल, ७ वय, ८ देश, ९ विद्या ये नव गुण वरके कहे हैं। तिनविषै कुल मुख्य है, सो जिनका कुल ही न जानिये, तिनकूं कन्या कैसै दीजिए? तातैं ऐसी निर्लज्ज बात कहै है सो राजा नीतिसूं प्रतिकूल है। सो कुमारी तो मैं न द्यूं अर कु कहिए खोटी मारी कहिये मृत्यु सो द्यूं। या भांति दूतकूं विदा किया। सो दूतने आयकर वज्रजंघकूं व्योरा कह्या। सो वज्रजंघ आपही चढ़कर ७९४

आधी दूर आय डेरा किये । अर बड़े पुरुषनिकूं भेज बहुरि पृथुसूं कन्या याची । ताने न दई । तब राजा वज्रजंघ पृथुका देश उजाड़ने लगा, अर देशका रक्षक राजा व्याघ्ररथ ताहि युद्धविषै जीति बांध लिया । तब राजा पृथुने सुना कि व्याघ्ररथकूं राजा वज्रजंघ बांधा अर मेरा देश उजाड़े है तब पृथुने अपना परम मित्र पोदनापुरका पति परम सेनासूं बुलाया । तब वज्रजंघने पुण्डरीकपुरसूं अपने पुत्र बुलाए । तब पिताकी आज्ञा पाय पुत्र शीघ्र ही चलिवे कूं उद्यमी हुए । नगरविषै राजपुत्रनिके कूचका नगारा बाजा । तब सामन्त बखतर पहिरे आयुध सजकर युद्धके चलिवेकूं उद्यमी भए । नगरविषै अति कोलाहल भया, पुण्डरीकपुरविषै जैसा समुद्र गाजै ऐसा शब्द भया । तब सामन्तनिके शब्द सुन लवण अर अंकुश निकटवर्तीनिकूं पूछते भए यह कोलाहल शब्द काहेका है ? तब काहूने कही अंकुशकुमार के परणायवे निमित्त वज्रजंघ राजाने पृथुकी पुत्री याची हुती, सो ताने न दई । तब राजा युद्धकूं चढ़े । अर राजा अपनी सहायताके अर्थ अपने पुत्रनिकूं बुलाया है, अर सेना बुलाई है सो यह सेना का शब्द है । यह समाचार सुन कर दोऊ भाई आप युद्धके अर्थ अति शीघ्रही जायवेकूं उद्यमी भए । कैसे हैं कुमार ? आज्ञाभंगकूं नाहीं सह सकै हैं । तब राजा वज्रजंघके पुत्र इनकूं मनैं करते भए, अर सर्व राजलोक मनैं करते भए, तौ हू इन न मानी । तब सीता पुत्रनिके स्नेहकर द्रवीभूत हुवा है मन जाका सौ पुत्रनिकूं कहती भई–तुम बालक हो, तिहारा युद्धका समय नाहीं । तब कुमार कहते भए–हे माता ! तू यह कहा कहो ? बडा भया अर कायर भया तो कहा ? यह पृथ्वी योधानिकर भोगवे योग्य है । अर अग्निका कण छोटा ही होय है अर महा बनकूं भस्म करै है । या भांति कुमारने कही । तब माता इनकूं सुभट जान आंखोसे हर्ष अर शोकके किंचित्मात्र अश्रुपात करती भई । ये दोऊ वीर महाधीर स्नान भोजन कर आभूषण पहिरे, मन वचन काय कर सिद्धनिकूं नमस्कारकर बहुरि माताकूं प्रणामकर, समस्त विधिविषै प्रवीण घरतैं बाहिर आए । तब भले भले शकुन भए । दोऊ रथ चढ़ सम्पूर्ण शस्त्रनिकर युक्त शीघ्रगामी तुरंग जोड़ पृथुपर चाले । महा सेनाकर मंडित,

धनुषबाण ही हैं सहाय जिनके, महा पराक्रमी, परम उदारचित्त, संग्रामके अग्रेसर, पांच दिवसमें वज्रजंघपै जाय पहुँचे। तब राजा पृथु शत्रुनिकी बड़ी सेना आई सुन आप भी बड़ी सेनासहित नगर से निकस्या। जाके भाई, मित्र, पुत्र, मामाके पुत्र, सबही परम प्रीतिपात्र, अर अंगदेश, बंगदेश, मगध देश आदि अनेक देशनिके बड़े बड़े राजा तिन सहित, रथ तुरंग हाथी पयादे बड़े कटक सहित, वज्रजंघके सामंत परसेनाके शब्द सुन युद्धकू उद्यमी भए। दोऊ सेना समीप भई। तब दोऊ भाई लवणांकुश महा उत्साहरूप परसेनाविषैं प्रवेश करते भए। वे दोऊ योधा महा कोपकू प्राप्त भए, अति शीघ्र है परावर्त्त जिनका, परसेनारूप समुद्रविषैं क्रीड़ा करते सब ओर परसेनाका निपात करते भए। जैसे बिजलीका चमत्कार जिस ओर चमके उस ओर चमक उठै, तैसैं सब ओर मार मार करते भए। शत्रुनितैं न सहा जाय पराक्रम जिनका, धनुष पकड़ते बाण चलाते दृष्टि न पड़े, अर बाणनि कर हते अनेक दृष्टि पड़ें। नाना प्रकारके क्रूर बाण तिनकरि वाहनसहित परसेनाके अनेक घोड़ा पीड़े पृथ्वी दुर्गम्य होय गई। एक निमिषमें पृथुकी सेना भागी, जैसैं सिंहके त्राससू मदोन्मत्त गजनिके समूह भागैं। एक क्षणमात्रमें पृथुकी सेनारूप नदी, लवणांकुशरूप सूर्य, तिनके बाणरूप किरणनिकरि शोककू प्राप्त भई। कईएक मारे पड़े, कईएक भयतैं पीड़ित होय भागे, जैसैं आकके फूल उड़े उड़े फिरे। राजा पृथु सहायरहित खिन्न होय भागवेकू उद्यमी भया। तब दोऊ भाई कहते भए—हे पृथु! हम अज्ञात-कुल शील, हमारा कुल कोऊ जाने नाहीं, तिनपैं भागता तू लज्जावान् न होय है? तू खड़ा रह, हमारा कुल शील तोहि बाणनिकर बतावें। तब पृथु भागता हुता सो पीछा फिर हाथ जोड़ नमस्कारकर स्तुति करता भया। तुम महा धीर वीर हो। मेरा अज्ञानताजनित दोष क्षमा करहु। मैं मूर्ख तिहारा माहात्म्य अब तक न जाना हुता। महा धीरवीरनिका कुल या सामंतताही तैं जान्या जाय है। कछु वाणीके कहे न जान्या जाय है। सो अब मैं निःसंदेह भया। वनके दाहकू समर्थ जो अग्नि सो तेज ही तैं जानी जाय है। सो आप परम धीर महाकुलविषैं उपजे हमारे स्वामी हो। महा भाग्यके योग्य तिहारा

दर्शन भया। तुम सबकूं मनवांछित सुखके दाता हो या भांति पृथुने प्रशंसा करी।

तब दोऊ भाई नीचे होय गए, अर क्रोध मिट गया, शांत मन अर शांत सुख होय गए। वज्रजंघ कुमारनिके समीप आया, अर सब राजा आए। कुमारनिके अर पृथुके प्रीति भई। जे उत्तम पुरुष हैं वे प्रणाममात्र ही करि प्रसन्नताकूं प्राप्त होय हैं। जैसे नदीका प्रवाह नम्रीभूत जे बेल तिनकूं न उपाड़े, अर जे महा वृक्ष नम्रीभूत नाहीं तिनकूं उपाड़े। फिर राजा वज्रजंधकूं अर दोऊ कुमारनिकूं पृथु नगरविषै ले गया। दोऊ कुमार आनन्दके कारण। मदनांकुशकूं अपनी कन्या कनकमाला महाविभूति सहित पृथुने परणाई। एक रात्रि यहां रहे। फिर ये दोऊ भाई विचक्षण दिग्विजय करिवेकूं निकसे। सुहृचदेश, मगधदेश, अंगदेश, बंगदेश जीति पोदनापुरके राजाकूं आदि दे अनेक राजा संग ले लोकाक्ष नगर गए। वा तरफके बहुत देश जीते। कुबेरकांत नामा राजा अतिमानी ताहि ऐसा वश किया जैसे गरुड़ नागकूं जीतै। सत्यार्थपनेतैं दिन दिन इनकी सेना बढ़ी, हजारों राजा वश भए, अर सेवा करने लगे। फिर लंपाक देश गए। वहां करण नामा राजा अति प्रबल, ताहि जीतकर विजयस्थलकूं गए। वहांके राजा सौ भाई, तिनकूं अवलोकनमात्रतैं ही जीति गंगा उतर कैलाश की उत्तर दिश गए। वहांके राजा नाना प्रकारकी भेंट ले आय मिले। भ्रष कुंतल नामा देश तथा सालार्य नन्दि नन्दन स्यंघल शलभ अनल चल भीम भूतरव इत्यादि अनेक देशाधिपतिनिकूं वशकर सिंधु नदीके पार गये। समुद्रके तटके राजा अनेकनिकूं नमाये। अनेक नगर, अनेक खेट, अनेक मटम्ब, अनेक देश, वश कीये। भीरुदेश, यवन, कच्छ, चारव, त्रजट, नट, मक्र, केरल, नेपाल, मालव, अरल, सर्बर, त्रिशिर पार, शैल, गोशाल, कुसीनर, सूरपाक, सनर्त विधि शूरसैन, बाह्लीक, उलूक, कोशल, गांधार, सौवीर अन्ध्र काल, कलिंग इत्यादि अनेक देश वश किये। कैसे हैं देश? जिनविषै नानाप्रकारकी भाषा अर वस्त्रनिका भिन्न भिन्न पहराव, अर जुदे जुदे गुण, नाना प्रकारके रत्न अनेक जातिके वृक्ष जिनविषै अर नानाप्रकार स्वर्ण आदि धनके भरे।

कईएक देशनिके राजा प्रताप होते आय मिले। कईएक युद्धविषै जीति वश किये, कईएक भाग गये। बड़े बड़े राजा देशपति अति अनुरागी होय लवणांकुशके आज्ञाकारी होते भये। इनकी आज्ञा प्रमाण पृथ्वीविषै विचरें। वे दोनों भाई पुरुषोत्तम पृथ्वीकूं जीत हजारों राजनिके शिरोमणि होते भए। सबनिकूं वशकर लार लिए, नानाप्रकारकी सुन्दर कथा करते, सबका मन हरते पुण्डरीकपुरकूं उद्यमी भए। वज्रजंघ लार ही है। अति हर्षके भरे अनेक राजनिकी अनेक प्रकार भेंट आई सो महाविभूतिकूं लिए अतिसेना कर मण्डित पुण्डरीकपुरके समीप आए। सीता सतखणे महिल चढ़ी देखै है, राजलोककी अनेक राणी समीप हैं अर उत्तम सिंहासनपर तिष्ठे हैं। दूरसे अति सेनाकी रजके पटल उठे देख सखीजनकूं पूछती भई–यह दिशाविषै रजका उड़ाव कैसा है। तब तिन कही–हे देवी! सेनाकी रज है जैसैं जलविषै मकर किलोल करैं तैसैं सेनाविषै अश्व उछलते आवैं हैं। हे स्वामिनि! ये दोनों कुमार पृथ्वी वशकर आए। या भांति सखीजन कहे हैं, अर बधाई देनहारे आए, नगरकी अति शोभा भई, लोकनिकूं अति आनन्द भया, निर्मल ध्वजा चढ़ाई, समस्त नगर सुगन्धकर छांटा, अर वस्त्र आभूषणनिकर शोभित किया, दरवाजेपर कलश थापैं, सो कलश पल्लवनिकरि ढके, अर ठौर ठौर बन्दनमाला शोभायमान दिखती भई, अर हाट बाजार पाटंबरादि वस्त्रकर शोभित भए। जैसी श्रीराम लक्ष्मणके आए अयोध्याकी शोभा भई हुती तैसैं ही पुण्डरीकपुरकी शोभा कुमारनिके आएसूं भई। जादिन महाविभूतिसूं प्रवेश किया तादिन नगरके लोगनिकूं जो हर्ष भया सो कहिवेविषै न आवै। दोऊ पुत्र कृतकृत्य, तिनकूं देखकर सीता आनन्दके सागरविषै मग्न भई। दोऊ वीर महाधीर आयकर हाथ जोड़ माताकूं नमस्कार करते भए। सेनाकी रजकरि धूसरा है अंग जिनका। सीताने पुत्रनिकूं उरसूं लगाय माथे हाथ धरा। माताकूं अति आनन्द उपजाय दोऊ कुमार चांद सूर्यकी न्याईं लोकविषै प्रकाश करते भये।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रन्थ ताकी भाषावचनिकाविषै लवणांकुश दिग्विजय वर्णन करनेवाला एकसौएकवां पर्व पूर्ण भया ॥ १०१ ॥

अथानन्तर ये उत्तम मानव परम ऐश्वर्य धारक प्रबल राजानिपर आज्ञा करते सुखसूं तिष्ठैं। एक दिन नारदने कृतांतवक्रकूं पूछी कि तू सीताकूं कहां मेल आया। तब ताने कही कि सिंहनाद अटवीविषै मे.ी। सो यह सुनकर अति व्याकुल होय ढूंढता फिरै हुता सो दोऊ कुमार वनक्रीडा करते देखे। तब नारद इनके समीप आया। कुमार उठकर सन्मान करते भए। नारद इनकूं विनयवान देख बहुत हर्षित भया अर असीस दई जैसे राम लक्ष्मण नरनाथके लक्ष्मी है तैसी तुम्हारे होहु। तब ये पूछते भए कि देव! राम लक्ष्मण कौन हैं, अर कौन कुलविषै उपजे हैं, अर कहा उनविषै गुण हैं, अर कैसा तिनका आचरण है? तब नारद क्षण एक मौन पकड़ कहते भए, हे दोऊ कुमारो! कोई मनुष्य भुजानिकर पर्वतकूं उखाड़े अथवा समुद्रकूं तिरै तौहू राम लक्ष्मणके गुण न कहि सकै। अनेक वदनानकर दीर्घ कालतक तिनके गुण वर्णन करैं तौ भी राम लक्ष्मणके गुण कह न सकै, तथापि मैं तिहारे वचनसूं किंचित्मात्र वर्णन करूं हूं, तिनके गुण पुण्यके बढ़ावनहारे हैं।

पद्म पुराण ७९६

अयोध्यापुरीविषै राजा दशरथ होते भए। दुराचाररूप ईंधनके भस्म करिवेकूं अग्नि समान, अर इक्ष्वाकुवंशरूप आकाशविषै चन्द्रमा, महा तेजोमय सूर्य समान, सकल पृथ्वीविषै प्रकाश करते अयोध्याविषै तिष्ठैं। वे पुरुषरूप पर्वत तिनकरि कीर्तिरूप नदी निकसी, सो सकल जगतकूं आनन्द उपजावती समुद्र पर्यन्त विस्तारकूं धरती भई। ता दशरथ भूपतिके राज्यभारके धुरन्धरही चार पुत्र महा गुणवान भए, एक राम, दूजा लक्ष्मण, तीजा भरत, चौथा शत्रुघ्न। तिनविषैं राम अति मनोहर, सर्वशस्त्रके ज्ञाता पृथ्वीविषै प्रसिद्ध। सो छोटे भाई लक्ष्मण सहित अर जनककी पुत्री जो सीता ता सहित पिताकी आज्ञा पालिवे निमित्त अयोध्याकूं तज पृथ्वीविषैं विहार करते दंडकवनविषै प्रवेश करते भए। ७९६
सो स्थानक महाविषम, जहां विद्याधरनिके गम्यता नहीं, खरदूषणतैं संग्राम भया। रावणने सिंहनाद किया। ताहि सुनकर लक्ष्मणकी सहाय करिवेकूं राम गया। पीछेसूं सीताकूं रावण हर ले गया। तब रामसूं सुग्रीव हनुमान विराधित आदि अनेक विद्याधर मेले भये, रामके गुणनिके अनुरागकरि वशीभूत है हृदय जिनका। सो विद्याधरनिकूं लेयकरि राम लंकाकूं गए। रावणकूं जीत, सीताकूं लेय अयोध्या

आए। स्वर्गपुरी समान अयोध्या विद्याधरनिने बनाई। तहां राम लक्ष्मण पुरुषोत्तम नागेन्द्र समान सुखसू राज्य करैं। रामकू तुम अब तक कैसे न जाना, जाके लक्ष्मणसा भाई, ताके हाथ सुदर्शन चक्र सो आयुध, जाके एक एक रत्नकी हजार हजार देव सेवा करैं। सात रत्न लक्ष्मणके, अर चार रत्न रामके जाने। प्रजाके हितनिमित्त जानकी तजी। ता रामकू सकल लोक जानैं। ऐसा कोई पृथ्वी-विषै नाहीं जो रामकू न जाने। या पृथ्वीकी कहा बात, स्वर्गविषै देवनिके समूह रामके गुण वर्णन करे हैं।

तब अंकुशने कही—हे प्रभो! रामने जानकी काहे तजी सो वृत्तांत मैं सुना चाहूं। तब सीताके गुणनिकर धर्मानुरागमें है चित्त जाका ऐसा नारद सो आंसू डार कहता भया—हे कुमार हो! वह सीता सती महा कुलविषै उपजी शीलवती, गुणवती, पतिव्रता, श्रावकके आचारविषै प्रवीण, रामकी आठ हजार राणी तिनकी शिरोमणि, लक्ष्मी कीर्ति धृति लज्जा तिनकू अपनी पवित्रतातैं जीत कर साक्षात् जिनवाणीतुल्य। सो कोई पूर्वोपार्जित पापके प्रभावकर मूढ़ लोक अपवाद करते भए। तातैं रामने दुखित होय निर्जन वनविषै तजी। खोटे लोक तिनकी वाणी सोई भई जेठके सूर्यकी किरण, ताकर तप्तायमान वह सती कष्टकू प्राप्त भई। महा सुकुमार, जाविषै अल्प भी खेद न सहारा पड़े। मालतीकी माला दीपके आतापकरि मुरझाय सो दावानलका दाह कैसैं सहार सकै? महा भीम बन जाविषै अनेक दुष्ट जीव तहां सीता कैसैं प्राणनिकू धरै? दुष्ट जीवनिकी जिह्वा भुजंग समान निरपराध प्राणिनिकूं क्यों डसै? शुभ जीवनिकी निन्दा करते दुष्टनिके जीभके सौ टूक क्यों न होवै? वह महा सती, पतिव्रतानिकी शिरोमणि पटुता आदि अनेक गुणनिकर प्रशंसा योग्य, अत्यंत निर्मल, महा सती, ताकी जो निंदा करैं सो या भव अर परभवविषै दुखकूं प्राप्त होय। ऐसा कहकरि शोकके भारकर मौन गहि रहा, विशेष कछू न कहा सक्या। सुनकर अंकुश बोले—हे स्वामी! भयंकर वनविषै रामने सीताकू तजते भला न किया। यह कुलवंतोंकी रीति नाहीं है। लोकापवाद निवारिवेके

और अनेक उपाय हैं, ऐसा अविवेकका कार्य ज्ञानवंत क्यों करैं ? अंकुशनैं तो यही कही अर अंनगलवण बोल्या यहांसू अयोध्या केतीक दूर है ?

तब नारद कही—यहांसे एकसौ साठ योजन है जहां राम विराजे हैं । तब दोऊ कुमार बोले—हम राम लक्ष्मणपर जावेंगे । या पृथ्वीविषैं ऐसा कौन जाकी हम आगे प्रबलता ? नारदसू यह कही अर वज्रजंघसू कही—हे मामा ! सूह्मदेश, सिंधदेश, कलिंगदेश इत्यादि देशनिके राजानिकू आज्ञापत्र पठा-

वहु जो संग्रामका सब सरंजाम लेकर शीघ्र ही आवैं । हमारा अयोध्याकी तरफ कूच है । अर हाथी सम्हारो, मदोन्मत्त केते अर निर्मद केते ? अर घोड़े वायु समान हैं वेग जिनका सो संग लेकर अर जे योधा रणसंग्रामविषैं विख्यात कभी पीठ न दिखावैं तिनकू लार लेवहु । सब शस्त्र सम्हारो, बक्तरनिकी मरम्मत करावहु । अर युद्धके नगाड़े दिवावहु, ढोल बजावहु, शंखनिके शब्द करावहु । सब सामंतनिकू युद्धका विचार प्रगट करहु । यह आज्ञाकर दोऊ वीर मनविषैं युद्धका निश्चयकरि तिष्ठे, मानों दोऊ भाई इन्द्र ही हैं । देवनि समान जे देशपति राजा तिनकू एकत्र करिवेकू उद्यमी भए । तब राम लक्ष्मणपर कुमारनिकी असवारी सुनि सीता रुदन करती भई । अर सीताके समीप नारदकू सिद्धार्थ कहता भया यह अशोभन कार्य तुम कहा आरम्भा ? रणविषैं उद्यम करिवेका है उत्साह जिनके ऐसे तुम, सो पिता अर पुत्रनिविषैं क्यों विरोधका उद्यम किया ? अब काहू भांति यह विरोध निवारो, कुटुम्बभेद करना उचित नाहीं । तब नारद कही मैं तो ऐसा कछू जान्या नाहीं । इन विनय किया मैं आशीस दई कि तुम राम लक्ष्मणसे होवहु । इनने सुनकर पूछी राम लक्ष्मण कौन हैं ? मैं सब वृत्तांत कह्या । अब भी तुम भय न करहु सब नीके ही होयगा । अपना मन निश्चल करहु । कुमारनिने सुनी कि माता रुदन करै है । तब दोऊ पुत्र माताके पास आय कहते भए, हे मात ! तुम रुदन क्यों करो हो ? सो कारण कहहु । तिहारी आज्ञाकू कौन लोपै ? असुन्दर वचन कौन कहै ता दुष्टके प्राण हरैं । ऐसा कौन है जो सर्पकी जीभतैं क्रीड़ा करै ? ऐसा कौन मनुष्य अर देव जो तुमकू असाता उपजावै ? हे

मात ! तुम कौनपर कोप किया है ? जापर तुम कोप करहु ताकूं जानिए आयुका अन्त आया है । हमपर कृपाकर कोपका कारण कहहु । या भांति पुत्रनि विनती करी तब माता आंसू डार कहती भई । हे पुत्र ! मैं काहूपर कोप न किया, न मुझे काहूने असाता दई । तिहारा पितासूं युद्धका आरम्भ सुनि मैं दुखित भई रुदन करूं हूं । गौतम स्वामी कहै हैं । हे श्रेणिक ! तब पुत्र मातासूं पूछते भए, हे माता ! हमारा पिता कौन ? तब सीता आदिसूं लेय सब वृत्तांत कह्या । रामका वंश, अर अपना वंश, विवाहका वृत्तांत, अर वनका गमन, अपना रावणकर हरण अर आगमन, जो नारदने वृत्तांत कह्या हुता सो सब विस्तारसूं कह्या, कछु छिपाय न राख्या । अर कही तुम गर्भविषैं आए तब ही तिहारे पिताने लोकापवादका भयकर सिंहनाद अटवीविषैं तजी । तहां मैं रुदन करती हुती, सो राजा वज्रजंघ हाथी पकड़ने गया हुता, सो हाथी पकड बाहुड़े था, मोहि रुदन करती देखी सो यह महा धर्मात्मा शीलवंत श्रावक मोहि महा आदरसूं ल्याय बडी बहिनका आदर जनाया अर सत् सन्मानतैं यहां राखी । मैं भाई भामंडल समान याका घर जान्या । तिहारा यहां सन्मान भया । तुम श्रीरामके पुत्र हो । राम महाराजाधिराज हिमाचल पर्वतसूं लेय समुद्रांत पृथ्वीका राज्य करैं हैं । जिनके लक्ष्मण-सा भाई महा बलवान संग्रामविषैं निपुण है । न जानिए नाथकी अशुभ वार्ता सूनूं, अक तिहारी अथवा देवरकी । तातैं आर्तचित्त भई रुदन करूं हूं । अर कोऊ कारण नाहीं । तब सुनकर पुत्र प्रसन्न-वदन भए अर मातासूं कहते भये, हे माता ! हमारा पिता महा धनुषधारी लोकविषैं श्रेष्ठ लक्ष्मीवान विशालकीर्तिका धारक है अर अनेक अद्भुत कार्य किए हैं, परन्तु तुमकूं वनविषैं तजी सो भला न किया । तातैं हम शीघ्र ही राम लक्ष्मणका मानभंग करेंगे । तुम विषाद मत करहु । तब सीता कहती भई, हे पुत्र हो ! वे तिहारे गुरुजन हैं, उनसूं विरोध योग्य नाहीं, तुम चित्त सौम्य करहु । महा विनयवन्त होय जाकर पिताकूं प्रणाम करहु । यह ही नीतिका मार्ग है ।

तब पुत्र कहते भए, हे माता ! हमारा पिता शत्रुभावकूं प्राप्त भया । कैसैं जाय प्रणाम करें

८०२

अर दीनताके वचन कैसे कहैं ? हम तो माता तिहारे पुत्र हैं तातैं रणसंग्रामविषै हमारा मरण होय तो होवो परन्तु योधानिसे निन्द्य कायर वचन तो हम न कहैं। यह वचन पुत्रनिके सुन सीता मौन पकड़ रही, परन्तु चित्तमें अति चिन्ता है। दोऊ कुमार स्नानकर भगवानकी पूजाकरि मंगलपाठ पढ़, सिद्धनिकू नमस्कारकरि माताकू धीर्य बन्धाय प्रणामकरि दोऊ महा मंगलरूप हाथीपर चढ़े, मानू चांद सूर्य गिरिके शिखर तिष्ठे हैं। अयोध्या ऊपर युद्धकू उद्यमी भए, जैसें राम लक्ष्मण लंका ऊपर उद्यमी भए हुते। इनका कूच सुन हजारों योधा पुण्डरीकपुरसू निकसे, सब ही योधा अपना अपना हल्ला देते भए। वह जाने मेरी सेना अच्छी दीखै है वह जाने मेरी। महाकटक संयुक्त नित्य एक योजन कूच करैं सो पृथ्वीकी रक्षा करते चले जाय हैं, किसीका कुछ उजाड़े नाहीं। पृथ्वी नानाप्रकारके धान्यकरि शोभायमान है। कुमारनिका प्रताप आगे आगे बढ़ता जाय है। मार्गके राजा भेंट दे मिलैं हैं। दस हजार बेलदार कुदाल लिए आगे आगे चले जांय हैं, अर धरती ऊंची नीचीकू सम करैं हैं। अर कुल्हाड़े हैं हाथविषै जिनके वे भी आगे आगे चले जाय हैं। अर हाथी, ऊंट, भैंसा, बलद, खच्चर खजानेके लदे जाय हैं। मंत्री आगे आगे चले जाय हैं। अर प्यादे हिरणकी न्याई उछलते जाय हैं। अर तुरंगनिके असवार अति तेजीसे चले जाय हैं। तुरंगनिकी हींस होय रही है। अर गजराज चले जाय हैं जिनके स्वर्णकी सांकल, अर महा घण्टानिका शब्द होय है, अर जिनके कानोंपर चमर शोभै है। अर शंखनिकी ध्वनि होय रही है। अर मोतिनिकी झालरी पानीके बुदबुदा समान अत्यंत सोहै हैं। अर सुन्दर हैं आभूषण जिनके, महा उद्धत, जिनके उज्ज्वल दांतनिके स्वर्ण आदिक बन्ध बन्धे हैं, अर रत्न स्वर्ण आदिककी माला तिनकरि शोभायमान, चलते पर्वत समान नानाप्रकारके रंगसू रंगे, अर जिनके मद झरै है अर कारी घटा समान श्याम प्रचंड वेगकू धरैं जिनपर पाखर परी हैं नानाप्रकारके शस्त्रनिकरि शोभित है अर गर्जना करै हैं, अर जिनपर महायोधितके धारक सामन्त लोक चढ़े हैं, अर महावतनिने अति शिखाये हैं, अपनी सेनाका अर परसेनाका शब्द पिछाने हैं, सुन्दर है चेष्टा

जिनकी। अर घोडानिके असवार बखतर पहिरे खेट नामा आयुधनिकूं धरे, बरछी हैं जिनके हाथविषैं, घोडानिके समूह तिनके खुरनिके घातकर उठी जो रज ताकरि आकाश व्याप्त होय रह्या है, ऐसा सोहै है मानों सुफेद बादलनिसूं मंडित है। अर पियादे शस्त्रनिके समूहकरि शोभित अनेक चेष्टा करते गर्वसे चले जाय हैं। वह जाने मैं आगें चलूं, वह जाने मैं। अर शयन आसन तांबूल सुगन्ध माला महामनोहर वस्त्र आहार विलेपन नानाप्रकारकी सामग्री बटती जाय है, ताकरि सबही सेनाके लोक सुखरूप हैं। काहूकूं काहू प्रकारका खेद नाहीं। अर मंजल मंजलतैं कुमारनिकी आज्ञाकरि भले भले मनुष्यनिकूं लोक नानाप्रकारकी वस्तु देवैं हैं। उनकूं यही कार्य सौंप्या है सो बहुत सावधान है। नानाप्रकारके अन्न जल मिष्टान्न लवण घृत, दुग्ध, दही, अनेक रस भांति भांति खानेकी वस्तु आदरसूं देवैं हैं। समस्त सेनाविषैं कोई दीन बुभुक्षित तृषातुर कुवस्त्र मलिन चिन्तावान दृष्टि नाहीं पड़े है। सेनारूप समुद्रमें नर नारी नानाप्रकारके आभरण पहिरे सुन्दर वस्त्रनिकर शोभायमान महा रूपवान अति हर्षित दीखैं। या भांति महा विभूति कर मण्डित सीताके पुत्र चले चले अयोध्याके देशविषैं आये, मानों स्वर्गलोकविषैं इन्द्र आए। जा देशविषैं यव गेहूं चावल आदि अनेक धान्य फल रहे हैं, अर पौंड़े सांठेनिके बाड़े ठौर ठौर शोभैं हैं। पृथ्वी अन्न जल तृण कर पूर्ण है। अर जहां नदीनिके तीर हू मुनिके समूह क्रीडा करैं हैं, अर सरोवर कमलनिके शोभायमान हैं अर पर्वत नानाप्रकारके पुष्पनिकर सुगन्धित होय रहे हैं, अर गीतनिकी ध्वनि ठौर ठौर होय रही है, अर गाय, भैंस, बलधनिके समूह विचर रहे हैं। अर ग्वालणी बिलोवणा बिलोवै हैं, जहां नगरनि सारिखे नजीक नजीक ग्राम हैं, अर नगर ऐसे शोभैं हैं मानों सुरपुर ही हैं। महा तेजकरि युक्त लवणांकुश देशकी शोभा देखते अति नीतिसे आये। काहूकूं काहूही प्रकारका खेद न भया। हाथिनिके मद झरिवेकरि पंथविषै रज दब गई, कीच होय गयी। अर चंचल घोडनिके खुरनिके घातकरि पृथ्वी जर्जरी होय गई। चले चले अयोध्याके समीप आए। दूरसे संध्याके बादलनिके रंग समान अति सुन्दर अयोध्या देख वज्रजंघकूं पूछी—हे माम! यह महा ज्योति

रूप कौनसी नगरी है ? तब वज्रजंघने निश्चयकर कही, हे देव ! यह अयोध्या नगरी है। जाके स्वर्ण-मई कोट तिनकी यह ज्योति भासै है। या नगरीविषै तिहारा पिता बलदेव स्वामी विराजै है, जाके लक्ष्मण नर शत्रुघन भाई। या भांति वज्रजंघने कही। अर दोऊ कुमार शूरवीरताकी कथा करते हुए सुखसूं आय पहुंचे। कटकके अर अयोध्याके बीच सरयू नदी रही। दोऊ भाईनिके यह इच्छा कि शीघ्र ही नदीको उतर नगरी लेवैं। जैसैं कोई मुनि शीघ्र ही मुक्त हुवा चाहे, ताहि मोक्षकी आशारूप नदी यथाख्यातचारित्र होने न देय, आशारूप नदीकूं तिरैं तब मुनि मुक्त होय। तैसैं सरयू नदीके योगसे शीघ्र ही नदीतै पार उतरि नगरीविषै न पहुंच सके। तब जैसैं नन्दन वनविषै देवनिकी सेना उतरैं तैसें नदीके उपवनादिविषै ही कटकके डेरा कराए।

अथानन्तर परसेना निकट आई सुन राम लक्ष्मण आश्चर्यकूं प्राप्त भए। अर दोनों भाई परस्पर बतलावैं ये कोई युद्धके अर्थ हमारे निकट आए हैं सो मूवा चाहे हैं। वासदेवने विराधितकूं आज्ञाकरी युद्धके निमित्त शीघ्र ही सेना भेली करो, ढील न होय। जिन विद्याधरनिके कपियोंकी ध्वजा, अर हाथिनिकी ध्वजा, अर बैलनिकी ध्वजा, सिंहनिकी ध्वजा इत्यादि अनेक भांतिकी ध्वजा तिनकूं वेग बुलाओ। सो विराधितने कही जो आज्ञा होयगी सोई होयगा। उसही समय सुग्रीवादिक अनेक राजावोंपर दूत पठाए सो दूतके देखिवेमात्र ही सर्व विद्याधर बड़ी सेनासूं अयोध्या आए। भामंडल भी आया। सो भामण्डलकूं अत्यन्त आकुलता देख शीघ्र ही सिद्धार्थ अर नारद जायकर कहते भए—यह सीताके पुत्र हैं। सीता पुण्डरीकपुरविषै है। तब यह बात सुनकर बहुत दुखित भया अर कुमारोंके अयोध्या आयवेपर आश्चर्यकूं प्राप्त भया, अर इनका प्रताप सुन हर्षित भया। मनके वेग समान जो विमान, उसपर चढ़कर परिवारसहित पुण्डरीकपुर गया, बहिनसूं मिला। सीता भामंडलकूं देख अति मोहित भई, आंसू नाखती संती विलाप करती भई। अर अपने ताईं घरसूं काढ़नेका अर पुण्डरीकपुर आयवेका सर्व वृत्तांत कह्या। तब भामण्डल बहिनको धीर्य बंधाय कहता भया—हे बहिन !

तेरे पुण्यके प्रभावसूं सब भला होयगा। अर कुमार अयोध्या गए सो भला न कीया, जायकर बलभद्र नारायणकूं क्रोध उपजाया। राम लक्ष्मण दोनों भाई पुरुषोत्तम देवोंसे भी न जीते जांय, महा योधा हैं। अर कुमारोंके अर उनके युद्ध न होय सो ऐसा उपाय करें इसलिए तुमहू चलो।

तब सीता पुत्रोंकी बधूसंयुक्त भामण्डलके विमानविषै बैठि चाली। राम लक्ष्मण महा क्रोधकर रथ घोटक गज पियादे देव विद्याधर तिनकर मंडित समुद्रसमान सेना लेय बाहिर निकसे। अर घोड़ानिके रथ चढ़ा शत्रुघ्न, महा प्रतापी, मोतिनके हारकर शोभायमान है वक्षस्थल जाका सो रामके संग भया। अर कृतांतवक्र सब सेनाका अग्रेसर भया, जैसैं इन्द्रकी सेनाका अग्रगामी हृदयकेशी नामा देव होय। उसका रथ अत्यन्त सोहता भया। देवनिके विमान समान जिसका रथ सो सेनापति चतुरंग सेना लिए अतुलवली, अतिप्रतापी महा ज्योतिकूं धरे धनुष चढ़ाय बाण लिए चला जाय है, जिसकी श्याम ध्वजा शत्रुवोंसे देखी न जाय। उसके पीछे त्रिमूर्धन विह्नण शिखीसिंहविक्रम दीर्घभुज सिंहोदर सुमेरु बालखिल्य रौद्रभूत जिसके अष्टापदोंके रथ, वज्रकर्ण पृथु मारदमन मृगेन्द्रदहव इत्यादि पांचहजार नृपति कृतांतवक्रके संग अग्रगामी भए। बन्दीजन बखानैं हैं विरद जिनके, अर अनेक रघुवंशी कुमार देखे हैं अनेक रण जिन्होंने, शस्त्रोंपर है दृष्टि जिनकी, युद्धका है उत्साह जिनके, स्वामिभक्तिविषै तत्पर, महाबलवान, धरतीकूं कम्पाते शीघ्रही निकसे। कईएक नानाप्रकारके रथोंपर चढ़े, कईएक पर्वत समान ऊंचे कारी घटा समान हाथिनिपर चढ़े कईएक समुद्रकी तरंग समान चंचल तुरंग तिनपर चढ़े इत्यादि अनेक वाहनोंपर चढ़े युद्धकूं निकसे। वादित्रोंके शब्दोंकर करी है व्याप्त दशों दिशा जिन्होंने। बखतर पहिरे, टोप धरे, क्रोधकर संयुक्त है चित्त जिनका। तब लव अंकुश परसेनाका शब्द सुन युद्धकूं उद्यमी भए। वज्रजंघकूं आज्ञा करी। कुमारकी सेनाके लोक युद्धके उद्यमी हुते ही। प्रलयकालकी अग्निसमान महाप्रचंड अंगदेश, बंगदेश, नेपाल, वर्बर पौंड मागध पारसेल स्यंघल कालिंग इत्यादि अनेक देशनिके राजा रत्नांककूं आदि दे महा बलवंत ग्यारह हजार राजा उत्तम तेजके धारक युद्धके उद्यमी

भए। दोनों सेनानिका संघट्ट भया। दोनों सेनानिके संगमविषै देवनिकूं असुरनिकूं आश्चर्य उपजै ऐसा महा भयंकर शब्द भया, जैसा प्रलयकालका समुद्र गाजै। परस्पर यह शब्द होते भए—क्या देख रहया है प्रथम प्रहार क्यों न करै? मेरा मन तोपर प्रथम प्रहार करिवेपर नाहीं, तातैं तू ही प्रथम प्रहारकर। अर कोई कहै है एक डिग आगे होवो जो शस्त्र चलाऊं। कोई अत्यन्त समीप होय गए तब कहै है खञ्जर तथा कटारी हाथ लेवो, निपट नजीक भए बाणका अवसर नाहीं। कोई कायरकूं देख कहै है तू क्यों कांपै है, मैं कायरकूं न मारूं तू परे हो, आगे महायोधा खड़ा है उससे युद्ध करने दे। कोई वृथा गाजै है उसे सामंत कहै है—हे क्षुद्र! कहा वृथा गाजै है, गाजनेविषै सामंतपना नाहीं। जो तोविषै सामर्थ्य है तो आगै आव, तेरी रणकी भूख भगाऊं। इस भांति योधानिविषै परस्पर वचनालाप होय रहे हैं, तरवार बहै है, भूमिगोचरी विद्याधर सब ही आए हैं। भामण्डल पवनवेग वीर मृगांक विद्युत्प्रभ इत्यादि बड़े २ राजा विद्याधर बड़ी सेनाकरि युक्त महा रणविषै प्रवीण सो लवण अंकुशके समाचार सुन युद्धसे पराङ्मुख शिथिल होय गए, अर सब बातोंविषै प्रवीण हनुमान सो भी सीताके पुत्र जान युद्धसूं शिथिल होय रहया। विमानके शिखरविषै आरूढ़ जानकीकूं देख सब ही विद्याधर हाथ जोड़ शीस निवाय प्रणामकर मध्यस्थ होय रहे। सीता दोनों सेना देख रोमांच होय आई कांपै है अंग जाका। लवण अंकुश लहलहाट करै है ध्वजा जिनकी। राम लक्ष्मणसूं युद्धकूं उद्यमी भए। रामके सिंहकी ध्वजा, लक्ष्मणके गरुडकी, सो दोनों कुमार महायोधा राम लक्ष्मणसूं युद्ध करते भए। लवण तो रामसे लड़े अर अंकुश लक्ष्मणसे लड़ै, सो लवने आवते ही श्रीरामकी ध्वजा छेदी अर धनुष तोड़ा। तब राम हंसकर और धनुष लेयवेकूं उद्यमी भए। इतनेविषै लवने रामका रथ तोड़ा। तब राम और रथ चढ़े। प्रचण्ड है पराक्रम जिसका क्रोधकर भृकुटी चढ़ाय ग्रीष्मके सूर्य समान तेजस्वी जैसे चमरेन्द्रपर इन्द्र जाय तैसे गया। तब जानकीका नन्दन लवण युद्धकी पाहुनिगति करनेकूं रामके सम्मुख आया। रामके अर लवके परस्पर महा युद्ध भया। वाने वाके शस्त्र छेदे वाने वाके। जैसा युद्ध राम

अर लवका भया तैसा ही अंकुश अर लक्ष्मणका भया। या भांति परस्पर दोनों युगल बल तेड़। योधा भी परस्पर लड़े। घोड़ोंके समूह रणरूप समुद्रकी तरंग समान उछलते भए। कोईएक योधा प्रतिपक्षीकू टूटे बखतर देख दयाकर मौन गह रह्या। अर कईएक योधा मने करते परसेनाविषै पैठे सो स्वामीका नाम उचारते परचक्रसे लड़ते भए। कईएक महाभट माते हाथियोंसे भिड़ते भए। कईएक हाथियोंके दांतरूप सेजपर रणनिद्रा सुखसूं लेते भए। काहू एक महाभटका तुरंग काम आया सो पियादा ही लड़ने लगा। काहूके शस्त्र टूट गए तो भी पीछे न होता भया, हाथोंसे मुष्टिप्रहार करता भया। अर कोईक सामंत बाण बाहने चूक गया उसे प्रतिपक्षी कहता भया, बहुरि चलाय, सो लज्जाकर न चलावता भया। अर कोईएक निर्भयचित्त प्रतिपक्षीकूं शस्त्ररहित देख आप भी शस्त्र तज भुजाओंसे युद्ध करता भया। ते योधा बड़े दाता रणसंग्रामविषै प्राण देते भए परन्तु पीठ न देते भए। जहां रुधिरकी कीच होय रही है सो रथोंके पहिए डूब गए हैं, सारथी शीघ्र ही नहीं चला सकै है। परस्पर शास्त्रोंके सम्पातकर अग्नि पड रही है अर हाथियोंकी सूण्डके छांटे उछले हैं। अर सामन्तोंने हाथियोंके कुम्भस्थल विदारे हैं, अर सामंतनिके उरस्थल विदारे हैं। हाथी काम आय गए हैं तिनकर मार्ग रुक रह्या है। अर हाथियोंके मोती बिखर रहे हैं। वह युद्ध महा भयंकर होता भया। जहां सामंत अपना सिर देयकर यशरूप रत्न खरीदते भए, जहां मूर्छितपर कोई घात नहीं करै अर निर्बल पर घात न करे, सामंतोंका है युद्ध जहां महायुद्धके करणहारे योधा जिनके जीवनेकी आशा नहीं, क्षोभकू प्राप्त भया समुद्र गाजै तैसा होय रह्या है शब्दजहां, सो वह संग्राम समरस कहिए समान रस होता भया।

भावार्थ—न वह सेना हटी न वह सेना हटी, योधानिविषै न्यूनाधिकता परस्पर दृष्टि न पडी। कैसे हैं योधा ? स्वामीविषै है परमभक्ति जिनकी। अर स्वामीने आजीविका दई थी उसके बदले यह जीव दिया चाहे हैं। प्रचण्ड रणकी है खाज जिनके, सूर्य समान तेजकू धरे संग्रामके धुरंधर होते भए।

८०८

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रन्थ, ताकी भाषावचनिकाविषै लवणांकुशका राम लक्ष्मणसे युद्ध वर्णन करनेवाला एकसौदोवां पर्व पूर्ण भया ।। १०२ ।।

अथानन्तर गौतम स्वामी कहै हैं- हे श्रेणिक ! अब जो वृत्तांत भया सो सुनो । अनंगलवणके तो सारथी राजा वज्रजंघ अर मदनांकुशके राजा पृथु, अर लक्ष्मणके विराधित, अर रामके कृतांतवक्र । तब श्रीराम वज्रावर्त धनुषकूं चढ़ायकर कृतांतवक्रसूं कहते भए—अब तुम शीघ्रही शत्रुवों पर रथ चलावो, ढील न करो । तब वह कहता भया, हे देव ! देखो यह घोड़े नरवोंके बाणनिकर जरजरे होय रहे हैं, इनविषै तेज नाहीं, मानूं निद्राकूं प्राप्त भए हैं । यह तुरंग लोहूकी धाराकर धरतीकूं रंगै हैं, मानूं अपना अनुराग प्रभुकूं दिखावै हैं । अर मेरी भुजा इसके बाणनिकर भेदी गई है, बक्तर टूट गया है । तब श्रीराम कहते भए मेरा भी धनुष युद्धकर्मरहित ऐसा होय गया है मानूं चित्रामका धनुष है, अर यह मूसल भी कार्यरहित होय गया है, अर दुर्निवार जे शत्रुरूप गजराज तिनकूं अंकुश समान यह हल सो भी शिथिलताकूं भजै है । शत्रुके पक्षकूं भयकर मेरे अमोघशस्त्र जिनकी सहस्र यक्ष रक्षा करै वे शिथिल होय गए हैं । शस्त्रोंकी सामर्थ्य नाहीं जो शत्रुपर चलै । गौतमस्वामी कहै हैं- हे श्रेणिक ! जैसैं अनंगलवण आगे रामके शस्त्र निरर्थक होय गये तैसैं ही मदनांकुशके आगे लक्ष्मणके शस्त्र कार्यरहित होय गए । वे दोनों भाई तो जानें कि ये राम लक्ष्मण तो हमारे पिता अर पितृव्य (चचा) हैं सो वे तो इनका अंग बचाय शर चलावैं । अर ये उनको जानें नाहीं सो शत्रु जानकर शर चलावैं । लक्ष्मण दिव्यास्त्रकी सामर्थ्य उनपर चलिवे की न जान शर शेल सामान्यचक्र खड्ग अंकुश चलावता भया । सो अंकुशने वज्रदण्डकर लक्ष्मणके आयुध निराकरण किए । अर रामके चलाए आयुध लवणने निराकरण किए । फिर लवणने रामकी ओर शेल चलाया अर अंकुशने लक्ष्मणपर चलाया सो ऐसी निपुणतासे दोनोंके मर्मकी ठौर न लागे, सामान्य चोट लगी । सो लक्ष्मणके नेत्र घूमने लगे । विराधितने अयोध्याकी ओर रथ फेरा । तब लक्ष्मण सचेत होय कोपकर विराधितसूं कहता

भया--हे विराधित ! तैंने क्या किया ? मेरा रथ फेरचा । अब पीछे बाहुरि शत्रुका सन्मुख लेवो, रणविषैं पीठ न दीजिये । जे शूरवीर हैं तिनकूं शत्रुके सन्मुख मरण भला, परन्तु यह पीठ देना महा निन्द्यकर्म शूरवीरोंकूं योग्य नाहीं । कैसे हैं शूरवीर ? युद्धविषैं बाणनिकरि पूरित हैं अंग जिनके, जे देव मनुष्यनिकर प्रशंसाके योग्य वे कायरता कैसे भजैं ? मैं दशरथका पुत्र, रामका भाई वासुदेव पृथ्वीविषैं प्रसिद्ध सो संग्राममें पीठ कैसे देऊं ? यह वचन लक्ष्मणने कहे तब विराधितने रथकूं युद्धके सन्मुख किया । सो लक्ष्मणके अर मदनांकुशके महा युद्ध भया । लक्ष्मणने क्रोधकर महाभयंकर चक्र हाथविषैं लिया । महाज्वालारूप देख्या न जाय, ग्रीष्मके सूर्य समान । सो अंकुश पर चलाया सो अंकुशके समीप जाय प्रभावरहित होय गया अर उलटा लक्ष्मणके हाथविषैं आया । बहुरि लक्ष्मणने चक्र चलाया सो पीछे आया । या भांति बारबार पाछे आया । बहुरि अंकुशने धनुष हाथविषैं गह्या, तब अंकुशकूं महातेजरूप देख लक्ष्मणके पक्षके सब सामन्त आश्चर्यकूं प्राप्त भए । तिनकूं यह बुद्धि उपजी यह महापराक्रमी अर्धचक्री उपज्या, लक्ष्मणने कोटि शिला उठाई, अर मुनिके वचन जिनशासनका कथन और भांति कैसे होय ? अर लक्ष्मण भी मनविषैं जानता भया कि ये बलभद्र नारायण उपजे । आप अति लज्जावान होय युद्धकी क्रियासे शिथिल भया ।

पद्म
पुराण
८१०

अथानन्तर लक्ष्मणकूं शिथिल देख, सिद्धार्थ नारदके कहेसूं लक्ष्मणके समीप आय कहता भया--वासुदेव तुम ही हो । जिनशासनके वचन सुमेरुसूं अति निश्चल हैं । यह कुमार जानकीके पुत्र हैं, गर्भविषैं थे तब जानकीकूं वनविषैं तजी । यह तिहारे अंग हैं । तातैं इनपर चक्रादिक शस्त्र न चलैं । ८१०
तब लक्ष्मणने दोनो कुमारोंका वृत्तांत सुनि हर्षित होय, हाथसे हथियार डार दिए, बक्तर दूर किया । सीताके दुःखकर अश्रुपात डारने लगा । अर नेत्र घूमने लगे । राम शस्त्र डार बक्तर उतार मोहकर मूर्छित भए, चन्दनसे छांटि सचेत किये । तब स्नेहके भरे पुत्रनिके समीप चाले । पुत्र रथसे उतर हाथ जोड़ सीस निवाय पिताके पायन पड़े । श्रीराम स्नेहकर द्रवीभूत भया है मन जिनका, पुत्रोंकूं उरसे

लगाय विलाप करते भए। आंसुनि कर मेघकासा दिन किया। राम कहै हैं हाय पुत्र हो! मैं मन्द-बुद्धि गर्भविषै तिष्ठते तुमकूं सीता सहित भयंकर वनविषै तजे। तिहारी माता निर्दोष। हाय पुत्र हो! मैं कोई विस्तीर्ण पुण्यकरि तुम सारिखे पुत्र पाए, सो उदरविषै तिष्ठते तुम भयंकर वनविषै कष्टकूं प्राप्त भए। हाय वत्स! जो यह वज्रजंघ वनविषै न आवता तो तिहारा मुखरूप चन्द्रमा मैं कैसे देखता? हाय बालक हो! इन अमोघ दिव्यास्त्रोंकर तुम न हते गए सो पुण्यके उदयकर देवोंने सहाय करी। हाय मेरे अंगज हो! मेरे बाणोंनिकर बींधे तुम रणक्षेत्रविषै पड़ते तो न जानूं जानकी क्या करती। सब दुखोंविषै घरसे काढ़नेका बड़ा दुःख है। सो तिहारी माता महा गुणवन्ती, व्रतवन्ती पतिव्रता मैं वनविषै तजी। अर तुमसे पुत्र गर्भविषै, सो मैं यह काम बहुत विना समझे किया अर जो कदाचित् तिहारा युद्धविषै अन्यथा भाव भया होता तो मैं निश्चयसे जानूं हूं शोकसे विह्वल जानकी न जीवती। या भांति रामने विलाप किया। बहुरि कुमार विनय कर लक्ष्मणकूं प्रणाम करते भए। लक्ष्मण सीताके शोकसे विह्वल, आंसू डारता स्नेहका भरया, दोनों कुमारनिकूं उरसे लगावता भया। शत्रुघ्न आदि यह वृत्तांत सुन वहां आए। कुमार यथायोग्य विनय करते भये, ये उरसूं लगाय मिले। परस्पर अति प्रीति उपजी। दोनों सेनाके लोक अतिहित कर परस्पर मिले, क्योंकि जब स्वामीकूं स्नेह होय तब सेवकनिके भी होय। सीता पुत्रोंका माहात्म्य देख अति हर्षित होय, विमानके मार्ग होय पीछे पुण्डरीकपुरविषै गई। अर भामंडल विमानसे उतर स्नेहका भरया आंसू डारता भानजोंसे मिला, अति हर्षित भया। अर प्रीतिका भरया हनुमान उरसूं लगाय मिल्या। अर बारम्बार कहता भया—भली भई, भली भई। अर विभीषण सुग्रीव विराधित सब ही कुमारनिसूं मिले। परस्पर हित-संभाषण भया। भूमिगोचरी विद्याधर सबही मिले। अर देवनिका आगमन भया। सबोंकूं आनन्द उपज्या, राम पुत्रनिकूं पायकर अति आनन्दकूं प्राप्त भए। सकल पृथ्वीके राज्यसे पुत्रनिका लाभ अधिक मानते भए। जो रामके हर्ष भया सो कहिवेविषै न आवै। अर विद्याधरी आकाशविषै

आनन्दसूं नृत्य करती भई। अर भूमिगोचरिनिकी स्त्री पृथ्वीविषै नृत्य करती भई। अर लक्ष्मण आपकूं कृतार्थ मानता भया, मानों सर्व लोक जीत्या, हर्षसूं फूल गए हैं लोचन जिनके। अर राम मनविषै जानता भया मैं सगर चक्रवर्ती समान हूं अर कुमार दोनों भीम अर भागीरथ समान हैं। राम वज्रजंघसे अति प्रीति करता भया जो तुम मेरे भामंडल समान हो। अयोध्यापुरी तो पहले ही स्वर्गपुरी समान थी तो बहुरि कुमारनिके आयवेकरि अति शोभायमान भई, जैसैं सुन्दर स्त्री सहज ही शोभायमान होय अर शृंगारकरि अति शोभाकूं पावै। श्रीराम लक्ष्मणसहित अर दोऊ पुत्रों सहित सूर्यकी ज्योति समान जो पुष्पक विमान उसविषै विराजे, सूर्यसमान हैं ज्योति जिनकी। राम लक्ष्मण अर दोऊ कुमार अद्भुत आभूषण पहिरे सो कैसी शोभा बनी है मानूं सुमेरुके शिखरपर महामेघ बिजुरीके चमत्कार सहित तिष्ठा है।

भावार्थ—विमान तो सुमेरुका शिखर भया, अर लक्ष्मण महामेघका स्वरूप भया, अर राम तथा रामके पुत्र विद्युत् समान भए, सो ए चढ़कर नगरके बाह्य उद्यानविषैं जिनमन्दिर हैं तिनके दर्शनकूं चाले। सो नगरके कोटपर ठौर ठौर ध्वजा चढ़ी हैं, तिनकूं देखते धीरे धीरे जाय हैं। लार अनेक राजा कई हाथियोंपर चढ़े, कई घोड़ों पर, कई रथोंपर चढ़े जाए हैं, अर पियादोंके समूह जाय हैं। धनुष बाण इत्यादि अनेक आयुध अर ध्वजा छत्रनिकर सूर्यकी किरण नजर नाहीं पड़े है। अर स्त्रीनि-के समूह झरोखनिविषैं बैठे देखैं हैं। लव अंकुशके देखिवेका सबनिकूं बहुत कौतूहल है। नेत्ररूप अंजुलिनि-कर लवणांकुशके सुन्दरतारूप अमृतके पान करैं हैं सो तृप्त नाहीं होय है। एकाग्रचित्त भई उनकूं देखैं हैं। अर नगरविषैं नर नारीनिकी ऐसी भीड़ भई कि काहूके हार कुण्डलकी गम्य नाहीं। अर नारी-जन परस्पर वार्ता करैं हैं। कोई कहै है—हे माता! टुक मुख इधर कर मोहि कुमारनिके देखिवेका कौतुक है। हे अखण्डकौतुक! तूने तो घनी बार लगि देखे अब हमें देखने देवो, अपना सिर नीचा कर ज्यों हमकूं दीखैं, कहा ऊंचा सिर कर रही है। कोई कहै है—हे सखि! तेरे सिरके केश बिखर रहे हैं, ८१२

सो नीके सम्हार। अर कोई कहै है–हे क्षिप्तमानसे कहिये एक ठौर नाहीं चित्त जाका सो तू कहा हमारे प्राणनिकूं पीड़े है ? तू न देखै, यह गर्भवती स्त्री खड़ी है, पीड़ित है। कोऊ कहे टुक परे होहु कहा अचेतन होय रही है। कुमारनिकूं न देखने दे है,यह दोनों रामदेवके कुमार रामदेवके समीप बैठे अष्टमीके चन्द्रमा समान है ललाट जिनका। कोई पूछे है इनविषै लवण कौन अर अंकुश कौन ? यह तो दोनों तुल्यरूप भासैं हैं। तब कोई कहै है यह लाल वस्त्र पहिरे लवण हैं अर यह हरे वस्त्र पहिरे अंकुश है। अहो धन्य सीता महापुण्यवती जिनने ऐसे पुत्र जने। अर कोई कहे है धन्य है वह स्त्री जिसने ऐसे वर पाए हैं। एकाग्रचित्त भई स्त्री इत्यादि वार्ता करती भईं, इनके देखिवेविषै है चित्त जिनका, अति भीड़ भई। सो भीड़विषै कर्णाभरणरूप सर्पकी डाढ़कर डसे गए है कपोल जिनके सो न जानती भई, तद्गत है चित्त जिनका। काहूकी कांचीदाम जाती रही सो वाहि खबर नहीं। काहूके मोतिनके हार टूटे सो मोती बिखर रहे हैं। मानूं कुमार आये सो ये पुष्पांजली बरसैं हैं। अर कईएकोंकूं नेत्रोंकी पलक नाहीं लगै हैं असवारी दूर गई है तो भी उसी ओर देखै हैं। नगरकी उत्तम स्त्री वेई भई वेल सो पुष्पवृष्टि करती भईं सो पुष्पनिकी मकरंदकर मार्ग सुगन्ध होय रह्या है। श्रीराम अति शोभाकूं प्राप्त भए पुत्रनि सहित वनके चैत्यालयनिके दर्शनकर अपने मन्दिर आए। कैसा है मन्दिर ? महा मंगलकर पूर्ण है ऐसे अपने प्यारे जनोंके आगमका उत्साह सुखरूप, ताकूं वर्णन कहां लग कहिए। पुण्यरूपी सूर्यका प्रकाश कर फूल्या है मनकमल जिनका ऐसे मनुष्य वेई अद्भुत सुखकूं पावै हैं।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृतग्रन्थ ताकी भाषावचनिकाविषै राम लक्ष्मणसूं लवणांकुश मिलाप वर्णन करनवाला एकसौ तीन वां पर्व पूर्ण भया ॥ १०३ ॥

अथानन्तर विभीषण, सुग्रीव, हनुमान मिलकर रामसे विनती करते भये, हे नाथ ! हमपर कृपा करहु, हमारी विनती मानो, जानकी दुखसूं तिष्ठै है। इसलिए यहां लायवेकी आज्ञा करहु। तब राम दीर्घ उष्ण निश्वास नाख क्षणएक विचारकर बोले, मैं सीताकूं शील दोषरहित जानूं हूं, वह उत्तम

चित्त है। परन्तु लोकापवादकर घरसे काढी है। अब कैसे बुलाऊं? इसलिये लोकनिकूं प्रतीति उपजाय-कर जानकी आवै तब हमारा उसका सहवास होय, अन्यथा कैसे होय। इसलिये सब देशनिके राजानिकूं बुलावो समस्त विद्याधर अर भूमिगोचरी आवें, सबनिके देखते सीता दिव्य लेकर शुद्ध होय मेरे घरविषै प्रवेश करै। जैसे शची इन्द्रके घरविषै प्रवेश करै। तब सबने कही जो आप आज्ञा करोगे सोही होयगा। तब सब देशनिके राजा बुलाये सो बाल वृद्ध स्त्री परिवार सहित अयोध्या नगरी आए। जे सूर्यकूं भी न देखैं, घर ही विषै रहैं, वे नारी भी आईं और लोकनिकी कहा बात? जे वृद्ध बहुत वृत्तांतके जाननहारे देशविषै मुखिया, सब देशनिसूं आए। कईएक तुरगनिपर चढ़े, कईएक रथनि-पर चढ़े तथा पालकी अर अनेक प्रकार असवारिनिपर चढ़े बड़ी विभूतिसूं आए। विद्याधर आकाशके मार्ग होय विमान बैठे आए अर भूमिगोचरी भूमिके मार्ग आए। मानों जगत् जंगम होय गया। रामकी आज्ञासे जे अधिकारी हुते तिन्होंने नगरके बाहिर लोकनिके रहनेके लिए डेरे खड़े कराए। अर महा विस्तीर्ण अनेक महिल बनाए तिनके दृढ़ स्तम्भके ऊंचे मंडप, उदार झरोखे, सुन्दर जाली, तिन-विषै स्त्रियें भेली अर पुरुष भेले भए। पुरुष यथायोग्य बैठे दिव्यकूं देखिवेकी है अभिलाषा जिनके ऐसे मनुष्य आए तिनकी सर्व भांति पाहुनगति राजद्वारके अधिकारियोंने करी। सबनिकूं शय्या आसन भोजन तांबूल वस्त्र सुगन्ध मालादिक समस्त सामग्री राजद्वारसे पहुँची। सबनिकी स्थिरता करी। अर रामकी आज्ञासूं भामण्डल, विभीषण, हनुमान, सुग्रीव विराधित रत्नजटी यह बड़े २ राजा आकाशके मार्ग क्षणमात्रविषै पुण्डरीकपुर गए। सो सब सेना नगरके बाहिर राखि अपने समीप लोगनि सहित जहां जानकी थी वहां आए, जय जय शब्दकर पुष्पांजलि चढ़ाय पायनकूं प्रणामकर अति विनयसंयुक्त आंगणाविषै बैठे। तब सीता आंसू डारती अपनी निंदा करती भई—दुर्जनोंके वचन-रूप दावानलकरि दग्ध भए हैं अंग मेरे सो क्षीरसागरके जलकर भी सींचे शीतल न होय। तब वे कहते भए—हे देवि भगवति सौम्य उत्तमे! अब शोक तजो, अर अपना मन समाधानविषै लावो। या ८१४

पृथ्वीविषै ऐसा कौन प्राणी है जो तुम्हारा अपवाद करै ? ऐसा कौन जो पृथ्वीकूं चलायमान करै अर अग्निकी शिखाकूं पीवै, अर सुमेरु के उठायवेका उद्यम करै, अर जीभकर चांद सूर्यकूं चाटै ? ऐसा कोई नाहीं । तुम्हारा गुणरूप रत्नोंका पर्वत कोई चलाय न सकै । अर जो तुम सारखी महासतियों का अपवाद करै तिनकी जीभके हजार टूक क्यों न होवैं ? हम सेवकोंके समूहकूं भेजकर जो कोई भरतक्षेत्रविषै अपवाद करैंगे उन दुष्टोंका निपात करैंगे । अर जो विनयवान तुम्हारे गुणगायवेविषै अनुरागी हैं उनके गृहविषै रत्नवृष्टि करैंगे । यह पुष्पक विमान श्रीरामचन्द्रने भेज्या है उसविषै आनन्दरूप हो अयोध्याकी अरफ गमन करहु । सब देश अर नगर अर श्रीरामका घर तुम बिना न सोहै, जैसै चन्द्रकला बिना आकाश न सोहै, अर दीपक बिना मन्दिर न सोहै, अर शाखाबिना वृक्ष न सोहै । हे राजा जनककी पुत्री ! आज रामका मुखचन्द्र देखो । हे पंडिते पतिव्रते ! तुमकूं अवश्य पतिका वचन मानना । जब ऐसा कहा तब सीता मुख्य सहेलियोंको लेकर पुष्पकविमानविषै आरूढ़ होय शीघ्र ही संध्याके समय अयोध्या आई । सूर्य अस्त होय गया सो महेन्द्रोदय नामा उद्यानविषै रात्रि पूर्ण करी । आगे रामसहित यहां आवती हुती सो वन अति मनोहर देखती हुती सो अब राम बिना रमणीक न भासा ।

अथानन्तर सूर्य उदय भया कमल प्रफुल्लित भए । जैसै राजाके किंकर पृथ्वीविषै विचरैं तैसैं सूर्यकी किरणें पृथ्वीविषै विस्तरीं । जैसैं दिव्यकर अपवाद नश जाय तैसैं सूर्यके प्रतापकर अंधकार दूर भया । तब सीता उत्तम नारियोंकर युक्त रामके समीप चाली, हथिनीपर चढ़ी । मनको उदासीनता कर हती गई है प्रभा जाकी तो भी भद्र परिणामकी धरणहारी अत्यन्त सोहती भई । जैसे चन्द्रमाकी कला ताराओंकर मंडित सोहै तैसै सीता सखियोंकरि मंडित सोहै । सब सभा विनय संयुक्त सीताकूं देख वंदना करती भई । यह पापरहित धीरताकी धरणहारी रामकी राजसभाविषै आई । राम समुद्र समान क्षोभकूं प्राप्त भए । लोक सीताके जायवेकर विषादके भरे थे, अर कुमारोंका प्रताप देख

आश्चर्य भरे भए, अब सीताके आयवेकर हर्षके भरे ऐसे शब्द करते भए—हे माता! सदा जयवंत होवो, नन्दो, वरधो, फूलो, फलो। धन्य यह रूप, धन्य यह धीर्य, धन्य यह सत्य, धन्य यह ज्योति, धन्य यह भावुकता, धन्य यह गम्भीरता, धन्य निर्मलता। ऐसे वचन समस्त ही नर नारीनिके मुखसे निकसे। आकाशविषै विद्याधर भूमिगोचरी महा कौतुक भरे पलक रहित सीताके दर्शन करते भए। अर परस्पर कहते भए—पृथ्वीके पुण्यके उदयसे जनकसुता पीछे आई। कईएक तो वहां श्रीरामकी ओर निरखैं हैं जैसैं इन्द्रको ओर देव निरखे। कईएक रामके समीप बैठे लव अर अंकुश तिनकूं देख परस्पर कहैं हैं ये कुमार रामके सदृश ही हैं। अर कईएक लक्ष्मणकी ओर देखैं हैं। कैसे हैं लक्ष्मण? शत्रुओंके पक्षके क्षय करिवेकूं समर्थ। अर केई शत्रुघ्नकी ओर, केईएक भामंडलकी ओर, केईएक हनुमानकी ओर, केईएक विभीषणकी ओर, केईएक विराधितकी ओर, अर केईएक सुग्रीवकी ओर निरखे हैं अर केईएक आश्चर्यकूं प्राप्त भए सीताकी ओर देखैं हैं।

अथानन्तर जानकी जायकर रामकूं देख आपकूं वियोग सागरके अन्तकूं प्राप्त भई मानती भई। जब सीता सभाविषै आई तब लक्ष्मण अर्घ देय नमस्कार करता भया, अर सब राजा प्रणाम करते भए। सीता शीघ्रताकर निकट आवने लगी तब राघव यद्यपि क्षोभित हैं, तथापि सकोप होय मनमें विचारते भये इसे विषम वनविषै मेली थी सो मेरे मनकी हरणहारी फिर आई। देखो यह महा ढीठ है। मैं तजी तो भी मोसे अनुराग नाहीं छांड़े है। यह रामकी चेष्टा जान महासती उदासचित्त होय विचारती भई—मेरे वियोगका अन्त नहीं आया, मेरा मनरूप जहाज विरहरूप समुद्रके तीर आय फटा चाहै है। ऐसी चितासे व्याकुलचित्त भई, पगके अंगूठेसूं पृथ्वी कुचरती भई, बलदेवके समीप भामण्डलकी बहिन कैसी सोहै है जैसी इन्द्रके आगे सम्पदा सोहै। तब राम बोले—हे सीते! मेरे आगे कहा तिष्ठै है? तू परे जा, मैं तेरे देखिवेका अनुरागी नाहीं। मेरी आंख मध्याह्नके सूर्य अर आशीविषसर्प तिनकूं देख सकैं परन्तु तेरे तनकूं न देख सकैं हैं। तू बहुत मास दशमुखके मन्दिरविषै रही

अब तोहि घरविषै राखना मोहि कहा उचित ? तब जानकी बोली—तुम महा निर्दईचित्त हो, तुमने महा पंडित होयकर भी मूढलोकनिकी न्याईं मेरा तिरस्कार किया सो कहा उचित ? मुझे गर्भवती कूं जिनदर्शनका अभिलाष उपजा हुता सो तुम कुटिलतासूं यात्राका नाम लेय विषम वनविषै डारी, यह कहां उचित ? मेरा कुमरण होता अर कुगति जाती ताविषै तुमकूं कहा सिद्ध होता ? जो तिहारे मनविषै तजिवेकी हुती तो आर्यिकावोंके समीप मेली होती। जे अनाथ दीन दरिद्री, कुटुम्ब रहित महादुखी तिनकूं दुख हरिवेका उपाय जिनशासनका शरण है, या समान और उत्कृष्ट नाहीं। हे पद्मनाभ ! तुम करिवेविषै तो कछू कमी न करी, अब प्रसन्न होवो, आज्ञा करो सो करूं। यह कह कर दुखकी भरी रुदन करती भई। तब राम बोले—मैं जानूं हूं। तिहारा निर्दोष शील है, अर तुम निष्पाप अणुव्रतकी धरणहारी मेरी आज्ञाकारिणी हो, तिहारे भावनकी शुद्धता मैं भली भांति जानूं हूं, परन्तु ये जगतके लोक कुटिलस्वभाव हैं। इन्होंने वृथा तेरा अपवाद उठाया सो इनकूं संदेह मिटै, अर इनकूं यथावत् प्रतीत आवै, सो करहु। तब सीताने कहा आप आज्ञा करो सो ही प्रमाण। जगत विषै जेते प्रकारके दिव्य हैं सो सब करके पृथ्वीका संदेह हरूं। हे नाथ ! विषोंविषै महा विष कालकूट है, जिसे सूंघकर आशाविष सर्प भी भस्म होय जाय, सो मैं पीऊं। अर अग्निकी विषम ज्वालाविषै प्रवेश करूं। अर जो आप आज्ञा करो सो करूं। तब क्षण एक विचारकर राम बोले अग्नि कुण्डविषै प्रवेश करो। सीता महाहर्षकी भरी कहती भई—यही प्रमाण। तब नारद मनविषै विचारते भए यह तो महासती है, परन्तु अग्निका कहा विश्वास ? याने मृत्यु आदरी। अर भामण्डल हनुमानादिक महाकोपसे पीड़ित भए, अर लव अंकुश माताका अग्नि विषै प्रवेश करिवेका निश्चय जान अति व्याकुल भये। अर सिद्धार्थ दोनों भुजा ऊंचीकर कहता भया, हे राम ! देवोंसे भी सीताके शीलकी महिमा न कही जाय तो मनुष्य कहा कहै ? कदाचित् सुमेरु पातालविषै प्रवेश करै, अर समस्त समुद्र सूख जाय, तो भी सीताका शीलव्रत चलायमान न होय। जो कदाचित् चन्द्रकिरण उष्ण होय, अर

सूर्यकिरण शीतल होय तो भी सीताकूं दूषण न लगे। मैं विद्याके बलसे पंच सुमेरुविषै तथा जे और अकृत्रिम चैत्यालय शास्वते वहां जिनवन्दना करी-हे पद्मनाभ! सीताके व्रतकी महिमा मैं ठौर २ मुनियोंके मुखसे सुनी है। तातैं तुम महा विचक्षण हो, महा सतीकूं अग्निप्रवेशकी आज्ञा न करो। अर आकाशविषै विद्याधर और पृथ्वीविषै भूमिगोचरी सब यही कहते भए-हे देव! प्रसन्न होय सौम्यता भजहु। हे नाथ! अग्नि समान कठोर चित्त न करो, सीता सती है, सीता अन्यथा नाहीं। अन्यथा जे महा पुरुषोंकी राणी होवे कदे ही विकार रूप न होवै। सब प्रजाके लोक यही वचन कहते भए, अर व्याकुल भए मोटी मोटी आंसुओंकी बूंद डारते भए।

पद्म पुराण ८१८

तब रामने कही-तुम ऐसे दयावान् हो तो पहिले अपवाद क्यों उठाया? रामने किंकरोंकूं आज्ञा करी-एक तीनसै हाथ चौखटिया वापी खोदहु, अर सूखे ईंधन चन्दन अर कृष्णागुरु तिनकर भरहु, अर अग्नि कर जाज्वल्यमान करहु, साक्षात् मृत्युका स्वरूप करहु। तब किंकरनिने आज्ञा प्रमाण कुदालनिसे खोद अग्निवापिका बनायी। अर ताही रात्रिकूं महेन्द्रोदय नामा उद्यानविषै सकल भूषण मुनिकूं पूर्व वैरके योगकर महा रौद्र विद्युद्वक्रनामा राक्षसीने अत्यन्त उपसर्ग किया सो मुनि अत्यन्त उपसर्गकूं जीति केवलज्ञानकूं प्राप्त भये। यह कथा सुनि गौतमस्वामीसूं श्रेणिकने पूछी, हे प्रभो! राक्षसीके अर मुनिके पूर्व वैर कहा? तब गौतमस्वामी कहते भये-हे श्रेणिक! सुनो-विजियार्द्धगिरि की उत्तर श्रेणीविषै महा शोभायमान गुंजनामा नगर, तहां सिंहविक्रमराजा ताके श्रीराणी ताके पुत्र सकलभूषण, ताके स्त्री आठसै, तिनविषै मुख्य किरणमण्डला। सो एक दिन उसने अपनी सौतिनके कहेसूं अपने मामाके पुत्र हेमशिखका रूप चित्रपटविषै लिखा। सो सकलभूषणने देख कोप किया। तब सब स्त्रीनिने कही यह हमने लिखवाया है इसका कोई दोष नाहीं। तब सकलभूषण कोप तजि प्रसन्न भया। एक दिन यह किरणमण्डला पतिव्रता पतिसहित सूती थी। सो प्रमादथकी बरडिकर हेमशिख ऐसा नाम कहा, सो यह तो निर्दोष, याके हेमशिखसे भाईकी बुद्धि, अर सकलभूषणने कछू और भाव विचारा। राणी ८१८

सूं कोपकरि वैराग्यकूं प्राप्त भए। अर राणी किरणमंडला भी आर्यिका भई, परन्तु धनीसूं द्वेषभाव, जो याने मोहि झूठा दोष लगाया। सो मरकर विद्युद्वक्त्र नामा राक्षसी भई। सो पूर्व वैर थकी सकल भूषण स्वामी आहारकूं जांय तब यह अन्तराय करै, कभी मातें हाथियोंके बन्धन तुडाय देय, हाथी ग्राममें उपद्रव करें इनकूं अन्तराय होय। कभी यह आहारकूं जांय तब अग्नि लगाय देय। कभी यह रजोवृष्टि करै, इत्यादि नाना प्रकारके अन्तराय करै। कभी अश्वका, कभी वृषभका रूपकरि इनके सन्मुख आवै। कभी मार्गमें कांटे बखेरै। या भांति यह पापिनी कुचेष्टा करै। एक दिन स्वामी कायोत्सर्ग धर तिष्ठे थे अर इसने शोर किया--यह चोर है सो इसका शोर सुनकर दुष्टोंनें पकड़ अपमान किया। बहुरि उत्तम पुरुषोंने छुड़ाय दिये। एक दिन यह आहार लेकर जाते थे सो पापिनी राक्षसीने काहू स्त्रीका हार लेकर इनके गलेमें डार दिया अर शोर किया कि यह चोर है, हार लिये जाय हैं। तब लोग आय पहुँचे इनको पीड़ा करी, हार लिया, भले पुरुषोंनें छुडाय दिये। या भांति यह क्रूर-चित्त दयारहित पूर्व वैर विरोधसे मुनिकूं उपद्रव करै। गई रात्रिकूं प्रतिमायोग धर महेन्द्रोदय नामा उद्यानविषै विराजे हुते सो राक्षसीने रौद्र उपसर्ग किया, वितर दिखाये अर हस्ती सिंह, व्याघ्र, सर्प दिखाये अर रूप गुणमण्डित नानाप्रकारकी नारी दिखाई, भांति भांतिके उपद्रव किये, परन्तु मुनिका मन न डिगा। तब केवलज्ञान उपजा। सो केवलकी महिमाकर दर्शनकूं इन्द्रादिक देव कल्पवासी, भवनवासी, व्यन्तर, जोतिषी कईएक हाथिनिपर चढ़े, कईएक सिंहनिपर चढ़े, कईएक ऊंट, खच्चर, मींढ़ा, बघेरा, अष्टापद इनपर चढ़े, कईएक पक्षियोंपर चढ़े, कईएक विमान बैठे, कईएक रथनिपर पालकी चढ़े इत्यादि मनोहर वाहनोंपर चढे आए। देवोंकी असवारीके तिर्यंच नाहीं,देवों ही की माया है। देव ही विक्रियाकरि तिर्यंचका रूप धरै हैं। आकाशके मार्ग होय महाविभूति सहित सर्व दिशाविषै उद्योत करते आये। मुकुट धरे हार कुण्डल पहिरे अनेक आभूषणनिकर शोभित सकलभूषण केवलीके दर्शनकूं आये। पवनसे चंचल है ध्वजा जिनकी। अप्सरानिके समूह अयोध्याकी ओर आए। महेन्द्रोदय

उद्यानविषै विराजे हैं तिनके चरणारविंदविषै है मन जिनका, पृथ्वीकी शोभा देखते, आकाशसे नीचे उतरे। अर सीताके विषयकू अग्निकुण्ड तैयार होय रहा हुता सो देखकर एक मेघकेतु नामा देव इन्द्र से कहता भया—हे देवेन्द्र! हे नाथ! सीता महा सतीकूं उपसर्ग आय प्राप्त भया है। यह महा श्राविका पतिव्रता शीलवंती अति निर्मल चित्त है। इसे ऐसा उपद्रव क्यों होय? तब इन्द्रने आज्ञा करी है मेघ-केतु! मैं सकलभूषण केवलीके दर्शनकूं जाऊं हूं, अर तू महासतीका उपसर्ग दूर करियो। या भांति आज्ञाकर इन्द्र तो महेन्द्रोदय नामा उद्यानविषै केवलीके दर्शनकूं गया, अर मेघकेतु सीताके अग्निकुण्ड के ऊपर आय आकाशविषै विमानविषै तिष्ठा। कैसा है विमान? सुमेरुके शिखर समान है शोभा जाकी। वह देव आकाशविषै सूर्य सरीखा देदीप्यमान श्रीरामकी ओर देखै, राम महासुन्दर सब जीवनि के मनकूं हरै हैं।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रन्थ, ताकी भाषा वचनिकाविषै सकलभूषणकेवलीके दर्शनकूं देवनिका आगमन वर्णन करनेवाला एकसौदोयवां पर्व पूर्ण भया ॥ १०२ ॥

अथानन्तर श्रीराम उस अग्निवापिकाकूं निरखकरि व्याकुलमन भया विचारै है—अब इस कांताकूं कहां देखूंगा? यह गुणनिकी खान, महा लावण्यताकरि युक्त, कांतिकी धरणहारी, शीलरूप वस्त्रकरि मण्डित, मालतीकी माला समान सुगन्ध, सुकुमार शरीर, अग्निके स्पर्शही सौं भस्म होय जायगी। जो यह राजा जनकके घर न उपजती तो भला था। यह लोकापवाद, अग्निविषै मरण तो न होता। इस बिना मुझे क्षणमात्र भी सुख नाहीं। इस सहित वनविषै वास भला अर या बिना स्वर्गका वास भी भला नाहीं। यह शीलवंती परम श्राविका है, इसे मरणका भय नाहीं, इहलोक, परलोक, मरण, वेदना, अकस्मात्, असहायता, चार यह सप्त भय तिनकर रहित, सम्यक्दर्शन इसके दृढ़ है, यह अग्निविषै प्रवेश करेगी। अर मैं रोकूं तो लोकनिविषै लज्जा उपजै। अर यह लोक सब मोहि कह रहे यह

महा सती है याहि अग्निकुण्डविषै प्रवेश न करावो, सो मैं न मानी । अर सिद्धार्थ हाथ ऊंचो कर कर पुकारा सो मैं न मानी, सो वह भी चुप होय रहा । अब कौन मिसकर इसे अग्निकुण्डविषै प्रवेश न कराऊं ? अथवा जिसके जिस भांति मरण उदय होय है उसी भांति होय है, टारा टरे नाहीं । तथापि इसका वियोग मुझसे सहा न जाय । या भांति राम चिंता करे हैं। अर वापीविषै अग्नि प्रज्ज्वलित भई, समस्त नर नारियोंके आंसुवोंके प्रवाह चले, धूमकरि अन्धकार होय गया । मानों मेघमाला आकाशविषै

पद्म पुराण ८२१ फैल गई । आकाश भ्रमर समान श्याम होय गया अथवा कोकिलस्वरूप होय गया । अग्निके धूमकर सूर्य आच्छादित हुवा, मानों सीताका उपसर्ग देख न सक्या सो दयाकर छिप गया । ऐसी अग्नि प्रज्वली जिसकी दूरतक ज्वाला विस्तरी, मानों अनेक सूर्य ऊगे, अथवा आकाशविषै प्रलयकालकी सांझ फूली, जानिये दशों दिशा स्वर्णमयी होय गई हैं मानों जगत् विजुरीमय होय गया । अथवा सुमेरुके जीतिवेकू दूजा जंगम सुमेरु और प्रकटा । तब सीता उठी, अत्यन्त निश्चलचित्त होय कायोत्सर्गकरि अपने हृदयविषै श्रीऋषभादि तीर्थंकरदेव विराजे हैं तिनकी स्तुतिकर, सिद्धनिकूं, साधुनिकूं नमस्कारकरि श्रीमुनिसुव्रतनाथ हरिवंशके तिलक बीसवां तीर्थंकर जिसके तीर्थविषै ये उपजे हैं तिनका ध्यानकरि सर्व प्राणियोंके हितू आचार्य तिनकूं प्रणामकरि, सर्व जीवनिसूं क्षमाभावकरि जानकी कहती भई मनकरि वचनकरि कायकरि स्वप्नविषै भी राम बिना और पुरुष मैं न जाना । जो मैं झूठ कहती हूं तो यह अग्निकी ज्वाला क्षणमात्रविषै मुझे भस्म करियो । जो मेरे पतिव्रता भावविषै अशुद्धता होय राम सिवाय और नर मनसे भी अभिलाषा होय तो हे वैश्वानर ! मुझे भस्म करियो। जो मैं मिथ्या- ८२१
दर्शिनी, पापिनी, व्यभिचारिणी हूं तो इस अग्निसे मेरी देह दाहकूं प्राप्त होवै। अर जो मैं महा सती पतिव्रता अणुव्रतधारिणी श्राविका हूं तो मुझे भस्म न करियो, ऐसा कहकर नमोकार मंत्र जप सीता सती अग्निवापिकामें प्रवेश करती भई। सो याके शीलके प्रभावसे अग्नि थी सो स्फटिक मणि सारिखा निर्मल शीतल जल होय गया । मानों धरतीको भेदकर यह वापिका पातालसे निकसी । जलविषै कमल

फूल रहे हैं, भ्रमर गुंजार करैं हैं, अग्निकी सामग्री सब विलाय गई, न ईंधन, न अंगार। जलके झाग उठने लगे, अर अति गोल गम्भीर महा भयंकर भ्रमर उठने लगे। जैसी मृदंगकी ध्वनि होय तैसैं शब्द जलविषैं होते भए, जैसा क्षोभकूं प्राप्त भया समुद्र गाजै वैसा शब्द वापीविषै होता भया। अर जल उछला, पहले गोडों तक आया, बहुरि कमर तक आया, फिर निमिषमात्रविषै छाती तक आया। तब भूमिगोचरी डरे, अर आकाशविषै जे विद्याधर हुते तिनकूं भी विकल्प उपजा न जानिए क्या होय? बहुरि वह जल लोगोंके कंठतक आया तब अति भय उपजा। सिर ऊपर पानी चला तब लोग अति भयकूं प्राप्त भए। ऊंची भुजाकर वस्त्र अर बालकोंको उठाय पुकार करते भए-हे देवि! हे लक्ष्मी! हे सरस्वती! हे कल्याणरूपिणी! हे धर्मधुरंधरे! हे मान्य! हे प्राणीदयारूपिणी! हमारी रक्षा करो! हे महा साध्वी! मुनिसमान निर्मल मनकी धरणहारी! दया करो। हे माता! बचावो, बचावो, प्रसन्न होवो। जब ऐसे वचन विह्वल जो लोक तिनके मुखसे निकसे तब माताकी दयासे जल थम्भा, लोक बचे, जलविषै नानाजातिके ठौर ठौर कमल फूले, जल साम्यताकूं प्राप्त भया। जे भंवर उठे थे सो मिटे, अर भयंकर शब्द मिटे। वह जल जो उछला था मानों वापीरूप वधू अपने तरंगरूप हस्तोंकर माताके चरणयुगल स्पर्शती हुती। कैसे हैं चरणयुगल? कमलके गर्भसे हू अति कोमल हैं, अर नखों की ज्योतिकर देदीप्यमान हैं। जलविषै कमल फूले, तिनकी सुगन्धताकरि भ्रमर गुंजार करैं हैं सो मानों संगीत करैं हैं। अर क्रौंच चकवा हंस तिनके समूह शब्द करैं हैं। अति शोभा होय रही है। अर मणि स्वर्णके सिवाण बन गए तिनकूं जलके तरंगोंके समूह स्पर्शैं हैं, अर जिसके तट मरकत मणिकर निर्मापे अति सोहे हैं।

ऐसे सरोवरके मध्य एक सहस्रदलका कमल कोमल, विमल, विस्तीर्ण, प्रफुल्लित, महाशुभ, उसके मध्य देवनिने सिंहासन रचा, रत्ननिकी किरणनिकर मंडित, चन्द्रमंडल तुल्य निर्मल। उसमें देवांगनाओंने सीताकूं पधराई, अर सेवा करती भई। सो सीता सिंहासनविषै तिष्ठी, अति अद्भुत है

उदय जाका, शची तुल्य सोहती भई। अनेक देव चरणनिके तल पुष्पांजली चढ़ाय धन्य धन्य शब्द कहते भए। आकाशविषै कल्पवृक्षनिके पुष्पनिकी वृष्टि करते भए। अर नानाप्रकारके दुन्दुभी बाजे तिनके शब्दकर सब दिशा शब्दरूप होती भई। गुंज जातिके वादित्र महामधुर गुंजार करते भये। अर मृदंग बाजते भए। ढोल दमामा बाजे, नन्दी जातिके वादित्र बाजे, अर कोलाहल जातिके वादित्र बाजे, अर तुरही करनाल अनेक वादित्र बाजे, शंखके समूह शब्द करते भए। अर बीणा बाजा, ताल, झांझ, मजीर, झालरी इत्यादि अनेक वादित्र बाजे। विद्याधरनिके समूह नाचते भए अर देवनिके यह शब्द भए—श्रीमत् जनक राजाकी पुत्री, परम उदयकी धरणहारी, श्रीमत् रामकी राणी अत्यन्त जयवंत होवे, अहो निर्मल शील जाका आश्चर्यकारी। ऐसे शब्द सब दिशाविषै देवनिके होते भये। तब दोनों पुत्र लवण अंकुश अकृत्रिम है मातासूं हित जिनका, सो जल तिरकर अतिहर्षके भरे माताके समीप गए। दोनों पुत्र दोनों तरफ जाय ठाढ़े भए। माताकूं नमस्कार किया। सो माताने दोनोंके शिर हाथ धरा। रामचन्द्र मिथिलापुरीके राजाकी पुत्री मैथिली कहिए सीता उसे कमलवासिनी लक्ष्मी समान देख महा अनुरागके भरे समीप गए। कैसी है सीता? मानो स्वर्णकी मूर्ति अग्निविषै शुद्ध भई है, अति उत्तम ज्योतिके समूहकर मंडित है शरीर जाका। राम कहै हैं, हे देवि! कल्याणरूपिणी, उत्तम जीवनिकर पूज्य, महा अद्भुत चेष्टाकी धरणहारी, शरदकी पूर्णमासीके चन्द्रमा समान है मुख जाका, ऐसी तुम सो हमपर प्रसन्न होहु। अब मैं कभी ऐसा दोष न करूंगा जिसमें तुमकूं दुःख होय। हे शीलरूपिणी! ८२३
मेरा अपराध क्षमा करहु। मेरे आठ हजार स्त्री हैं तिनकी सिरताज तुम हो, मोकूं आज्ञा करहु सो करूं। हे महासती! मैं लोकापवादके भयसे अज्ञानी होयकरि तुमकूं कष्ट उपजाया सो क्षमा करहु। अर हे प्रिये! पृथ्वीविषै मो सहित यथेष्ट विहार करहु। यह पृथ्वी अनेक वन उपवन गिरियों कर मंडित है, देव विद्याधरनिकर संयुक्त है, समस्त जगतकर आदरसों पूजी थकी मोसहित लोकविषै स्वर्ग समान भोग भोगि, उगते सूर्यसमान यह पुष्पकविमान ताविषै मेरे सहित आरूढ़ होय, सुमेरु

पर्वतके वनविषै जिनमन्दिर हैं तिनका दर्शनकर अर जिनजिन स्थाननिविषै तेरी इच्छा होय वहां क्रीड़ा कर। हे कांते! तू जो कहै सो ही मैं करूं, तेरा वचन कदाचित् न उलंघू, देवांगनासमान वह विद्याधरी तिनकर मंडित है बुद्धिवंती! तू ऐश्वर्यकूं भज, जो तेरी अभिलाषा होयगी सो तत्काल सिद्ध होयगी। मैं विवेकरहित दोषके सागरविषै मग्न तेरे समीप आया हूं सो साध्वी अब प्रसन्न होहु।

अथानन्तर जानकी बोली—हे राजन्! तिहारा कुछ दोष नाहीं, अर लोकनिका दोष नाहीं। मेरे पूर्वोपार्जित अशुभ कर्मके उदय से यह दुःख भया, मेरा काहूपर कोप नाहीं। तुम क्यों विषादकूं प्राप्त भए? हे बलदेव! तिहारे प्रसादसे स्वर्ग समान भोग भोगे। अब यह इच्छा है ऐसा उपाय करूं जिस कर स्त्रीलिंगका अभाव होय। यह महा क्षुद्र विनश्वर भयंकर इन्द्रियनिके भोग मूढजनोंकरि सेव्य तिनकर कहा प्रयोजन? मैं अनन्त जन्म चौरासी लक्ष योनिविषै खेद पाया। अब समस्त दुःखके निवृत्तिके अर्थ जिनेश्वरी दीक्षा धरूंगी। ऐसा कहकर नवीन अशोक वृक्षके पल्लव समान अपने जे कर तिनकर सिरके केश उपाड़ रामके समीप डारे। सो इन्द्रनीलमणि समान श्याम, सचिक्कण, पातरे, सुगन्ध, वक्र, लंबायमान, महामृदु, महा मनोहर, ऐसे केशनिकूं देख राम मोहित होय मूर्छा खाय धापिविषै पड़े। सो जौंलग इसकूं सचेत करैं तौंलग सीता पृथ्वीमती आर्यिकापै जायकर दीक्षा धरती भई। एक वस्त्रमात्र है परिग्रह जाके। सब परिग्रह तजकर आर्यिकाके व्रत धरे। महा पवित्रता परम वैराग्यकर दीक्षा धरती भई। व्रतकर शोभायमान जगतके वंदिवे योग्य होती भई। अर राम अचेत भए थे सो मुक्ताफल अर मलयागिरि चन्दनके छांटिवेकरि तथा ताडके बीजनोंकी पवनकरि सचेत भए। तब दशों दिशाकी ओर देखैं तो सीताकूं न देखकरि चित्त शून्य होय गया। शोककरि कषाय करि युक्त महा गजराजपर चढ़े, सीताकी ओर चाले। सिरपर छत्र फिरैं हैं, चमर ढुरैं हैं, जैसे देवनि कर मंडित इन्द्र चालै तैसैं नरेन्द्रनिकरि युक्त राम चाले। कमलसारिखे हैं नेत्र जिनके, कषायके वचन कहते भए, अपने प्यारे जनका मरण भला परन्तु विरह भला नाहीं। देवनिने सीताका प्रातिहार्य

किया सो भला किया पर उसने हमकूं तजना विचारा सो भला न किया। अब मेरी राणी जो यह देव न दें तो मेरे अर देवनिके युद्ध होयगा। यह देव न्यायवान् होयकरि मेरी स्त्रीकूं हरैं ऐसे अविचार के वचन कहे। लक्ष्मण समझावै सो समाधान न भया। अर क्रोध संयुक्त श्रीरामचन्द्र सकलभूषण केवलीकी गंधकुटीकूं चाले। सो दूरसे सकलभूषण केवलीकी गन्धकुटी देखी। केवली महाधीर सिंहासन पर विराजमान, अनेक सूर्यकी दीप्ति धरैं, केवली ऋद्धिकर युक्त, पापोंके भस्म करिवेकूं साक्षात् अग्निरूप जैसैं मेघपटल रहित सूर्यका बिंब सोहै तैसैं कर्मपटलरहित केवलज्ञानके तेजकर परम ज्योतिरूप भासैं हैं। इन्द्रादिक समस्त देव सेवा करैं हैं, दिव्यध्वनि खिरै है, धर्मका उपदेश होय है। सो श्रीराम गन्धकुटीकूं देखकरि शांतचित्त होय हाथीतैं उतरि प्रभुके समीप गए। तीन प्रदक्षिणा देय हाथ जोड़ नमस्कार किया। केवलीके शरीरकी ज्योतिकी छटा राम पर आय पड़ी सो अति प्रकाशरूप होय गए। भाव सहित नमस्कारकरि मनुष्यनिकी सभाविषैं बैठे। अर चतुरनिकायके देवनिकी सभा नानाप्रकारके आभूषण पहिरे ऐसी भासै मानों केवलीरूप जे रवि तिनकी किरण ही है। अर राजानिके राजा श्रीरामचन्द्र केवलीके निकट ऐसे सोहैं मानों सुमेरुके शिखरके निकट कल्पवृक्ष ही हैं। अर लक्ष्मण नरेन्द्र मुकुट कुण्डल हारादिकर शोभित ऐसे सोहैं मानों विजुरीसहित श्याम घटा ही है। अर शत्रुघ्न शत्रुनिके जीतनहारे ऐसे सोहैं मानों दूसरे कुबेर ही हैं। अर लव अंकुश दोऊ वीर, महा धीर, महासुन्दर, गुण सौभाग्यके स्थानक, चांद सूर्यसे सोहैं। अर सीता आर्यिका आभूषणादि रहित एक वस्त्रमात्र परिग्रह ऐसी सोहै मानों सूर्यकी मूर्ति शांतताकूं प्राप्त भई है। मनुष्य अर देव सब ही विनय संयुक्त भूमिविषैं बैठे। धर्म श्रवणकी है अभिलाषा जिनके। तहां एक अभयघोष नामा मुनि सब मुनिन विषैं श्रेष्ठ, संदेहरूप आतापकी शांतिके अर्थ केवलीकूं पूछते भए—हे सर्वोत्कृष्ट सर्वज्ञदेव ! ज्ञानरूप शुद्ध आत्मतत्वका स्वरूप नीके जाननेसे मुनिनिकूं केवलबोध होय उसका निर्णय करो। तब सकलभूषण केवली, योगीश्वरोंके ईश्वर, कर्मोंके क्षयका कारण तत्वका उपदेश दिव्यध्वनिकर कहते भए।

हे श्रेणिक ! केवलीने जो उपदेश दिया ताका रहस्य मैं तुमकूं कहूं हूं । जैसे समुद्रमेंसे एक बूंद कोई लेय तैसें केवलीकी वाणी अति अथाह उसके अनुसार संक्षेप व्याख्यान करूं हूं, सो सुनो।

हो भव्य जीव हो ! आत्मतत्व जो अपना स्वरूप सो सम्यक्दर्शन ज्ञान आनन्दरूप, अर अमूर्तीक, चिद्रूप, लोकप्रमाण, असंख्य प्रदेशी, अतींद्रिय अखंड अव्याबाध निराकार निर्मल निरंजन, परवस्तुसे रहित, निज गुण पर्याय स्वद्रव्य स्वक्षेत्र स्वकाल स्वभावकर अस्तित्वरूप है, जिसका ज्ञान निकट भव्यकूं होय । शरीरादिक परवस्तु असार हैं, आत्मतत्व सार है सो अध्यात्म विद्याकरि पाइये है। वह सबका देखनहारा जाननहारा अनुभवदृष्टिकर देखिये, आत्मज्ञानकरि जानिये । अर जड़ पदार्थ पुद्गल धर्म अधर्म काल आकाश ज्ञेयरूप हैं, ज्ञाता नाहीं । अर यह लोक अनन्त अलोकाकाशके मध्य अनंतवें भागविषै तिष्ठै हैं । अधोलोक, मध्यलोक, ऊर्ध्वलोक ये तीनलोक । तिनविषै सुमेरु पर्वतकी जड़ हजार योजन उसके तले पाताल लोक है । उसविषै सूक्ष्म स्थावर तो सर्वत्र है, अर बादर स्थावर आधारविषै हैं । विकलत्रय अर पंचेन्द्रिय तिर्यंच नाहीं, मनुष्य नाहीं । खर भाग, पंकभागविषै भवन वासी देव तथा व्यंतरदेवनिके निवास हैं । तिनके तले सात नरक हैं । तिनके नाम—रत्नप्रभा १, शर्कराप्रभा २, बालुका प्रभा ३, पंकप्रभा ४, धूमप्रभा ५, तम:प्रभा ६, महातम:प्रभा ७ । सो सात ही नरककी धरा, महा दुखकी देनहारी, सदा अन्धकाररूप है । चार नरकनिविषै तो उष्णकी बाधा है अर पांचवें नरकमें ऊपरले तीन भाग उष्ण, अर नीचला चोथा भाग शीत । अर छठा नरक शीत ही है । अर सातवां महाशीत । ऊपरले नरकविषै उष्णता है, सो महा विषम । अर नीचले नरकविषै शीत सो अति विषम । नरककी भूमि महा दुस्सह और परम दुर्गम है, जहां राधि रुधिरका कीच है महा दुर्गंध है, श्वान, सर्प मार्जार मनुष्य, खर, तुरंग, ऊंट इनका मृतक शरीर सड जाय, उसकी दुर्गंधसे असंख्यात गुणी दुर्गंध है । नाना प्रकार दुखनिके सर्व कारण हैं । अर पवन महा प्रचण्ड विकराल चलै है, जाकरि भयंकर शब्द होय रह्या है । जे जीव विषय कषाय संयुक्त है, कामी हैं, क्रोधी हैं, पंच इन्द्रियोंके लोलुपी हैं, जैसें लोह

का गोला जलविषै डूबै तैसें नरकविषै डूबै हैं। जे जीवनिकी हिंसा करैं, मृषावाणी बोलैं, परधन हरैं, परस्त्री सेवैं, महा आरम्भी, परिग्रही, ते पापके भारकर नरकविषै पडे हैं। मनुष्य देह पाय जे निरंतर भोगासक्त भए हैं जिनके जीभ वश नाहीं, मन चंचल, ते प्रचंड कर्मके करणहारे नरक जाय हैं। जे पाप करैं करावैं पापकी अनुमोदना करैं, ते आर्त रौद्रध्यानी नरकके पात्र हैं। वह वज्राग्निके कुण्डमें डारिए हैं, वज्राग्निके दाहकर जलते थके पुकारैं हैं। अग्निकुण्डसे छूटैं हैं तब वैतरणी नदीकी ओर शीतल जलकी वांछाकर जाय हैं। वहां जल महाक्षार, दुर्गंध, उसके स्पर्शसे ही शरीर गल जाय हैं। दुखका भाजन वैक्रियिक शरीर, ताकर आयुपर्यंत नानाप्रकार दुख भोगवे हैं। पहिले नरक आयु उत्कृष्ट सागर १, दूजे ३, तीजे ७, चौथे १३, पांचवें १७, छठे २२, सातमें ३३, सो पूर्णकर मरै हैं मारेसे मरै नाहीं। वैतरणीके दुखसे डरे छायाके अर्थ असिपत्र वनमें जाय हैं, तहां खड्ग बाण बरछी कटारी सभी पत्र असराल पवनकर पड़े हैं, तिनकर तिनका शरीर विदारा जाय है, पछाड़ खाय भूमिमें पड़े हैं, अर तिनकूं कभी कुंभीपाकमें पकावे हैं, कभी नीचा माथा ऊंचा पगकर लटकावे हैं, मुद्गरनिसूं मारिए हैं, कुहाड़ोंसे काटिवे हैं, करोतनसे विदारिए हैं, घानीमें पेलिए हैं, नानाप्रकारके छेदन भेदन है। यह नारकी जीव महा दीन महा तृषाकरि, तृषित, पीनेका पानी मांगे हैं तब तांबादिक गाल प्यावै हैं। ते कहै हैं हमको यहां तृषा नाहीं, हमारा पीछा छोड़ दो, तब बलात्कार तिनकूं पछाड़ संडासियोंसे मुख फार मार मार प्यावै हैं। कंठ हृदय विदीर्ण होय जाय हैं, उदर फट जाय है। तीजे नरकतक तो परस्पर ही दुःख हैं, अर असुरकुमारिनकी प्रेरणासे भी दुःख हैं। अर चौथेसे लेय सातवें तक असुरकुमारिनका गमन नाहीं, परस्पर ही पीड़ा उपजावे हैं। नरकविषै नीचलेसे नीचलेमें, बढ़ता दुख है। सातवां नरक सबनिमें महा दुखरूप है। नारकियोंकूं पहिला भव याद आवै है, अर दूसरे नारकी तथा तीजे लग असुरकुमार पूर्वलेकर्म याद करावैं हैं। तुम भले गुरुनिके वचन उलंघ कुगुरुकुशास्त्रके बलकर मांसकूं निर्दोष कहते हुते, नानाप्रकारके मांसकर, अर मधुकर, अर मदिराकरि कुदेवनि

का आराधन करते हुते, सो मांसके दोषतें नरकविषै पड़े हो। ऐसा कहकरि इनहीका शरीर काट काट इनके मुखविषै देय हैं। अर लोहेके तथा ताम्बेके गोला बलते पछाड़ पछाड़ संडासियोंसे मुख फाड़ फाड़ छातीपर पांव देय देय तिनके मुखविषै घालै हैं। अर मुद्गरोंसे मारै हैं। अर मद्यपायीकूं मार मार ताता तांबा शीशा प्यावैं हैं। अर परदारारत पापिनकूं वज्राग्निकर तप्तायमान लोहेकी जे पूतली तिनसूं लिपटावैं हैं। अर जे परदारारत फूलनिके सेज सूते हैं तिनकूं सूलनिके सेज ऊपर सुवावै हैं। अर स्वप्नकी माया समान असार जो राज्य उसे पायकर जे गर्व हैं, अनीति करैं हैं, तिनकूं लोहेके कीलोंपर बैठाय मुद्गरोंसे मारैं हैं,सो महा विलाप करैं हैं। इत्यादि पापी जीवनिकूं नरकके दुख होय हैं। सो कहां लग कहैं। एक निमिषमात्र भी नरकमें विश्राम नाहीं। आयुपर्यंत तिलमात्र आहार नाहीं, अर बूंदमात्र जलपान नाहीं, केवल मारहीका आहार है।

तातैं यह दुस्सह दुःख अधर्मके फल जान अधर्मकूं तजहु। ते अधर्म मधुमांसादिक अभक्ष्य भक्षण,अन्याय वचन, दुराचार, रात्रि आहार, वेश्यासेवन, परदारागमन, स्वामिद्रोह, मित्रद्रोह, विश्वासघात, कृतघ्नता लंपटता, ग्रामदाह, वनदाह, परधनहरण, अमार्गसेवन, परनिंदा, परद्रोह, प्राणघात, बहुआरम्भ, बहु-परिग्रह, निर्दयता, खोटी लेश्या, रौद्रध्यान, मृषावाद, कृपणता, कठोरता, दुर्जनता, मायाचार, निर्माल्यका अंगीकार, माता पिता गुरुओंकी अवज्ञा, बाल वृद्ध स्त्री दीन अनाथनिका पीडन इत्यादि दुष्ट कर्म नरकके कारण हैं। वे तज शांतभाव धर जिनशासनकूं सेवहु, जाकर कल्याण होय। जीव छै कायके हैं—पृथ्वीकाय, अप (जल) काय, तेज (अग्नि) काय, वायुकाय, वनस्पतिकाय, त्रसकाय तिनकी दया पालहु। अर जीव पुद्गल धर्म अधर्म आकाश काल छै द्रव्य हैं, अर सात तत्व, नव पदार्थ, पंचास्ति-काय तिनकी श्रद्धा करहु। अर चतुर्दश गुणस्थानस्वरूप अर सप्तभंगी वाणीका स्वरूप भली भांति केवलीकी आज्ञा प्रमाण उरविषै धारो। स्यात् अस्ति, स्यान्नास्ति,स्यात्अस्तिनास्ति, स्यादवक्तव्य, स्यात् अस्ति अवक्तव्य, स्यान्नास्ति अवक्तव्य, स्यात् अस्तिनास्ति अवक्तव्य, ये सप्तभंग कहे। अर प्रमाण

कहिए वस्तुका सर्वांग कथन, अर नय कहिए वस्तु का एकअंग कथन, अर निक्षेप कहिए नाम स्थापना द्रव्य भाव ये चार, अर जीवनिविषै एकेंद्रीके दोय भेद सूक्ष्म बादर, अर पंचेंद्रीके दोय भेद सैनी असैनी-अर बेइन्द्री तेइन्द्री चौइन्द्री ये सात भेद जीवोंके हैं, सो पर्याप्त अपर्याप्तकर चौदह भेद जीवसमास होय है। अर जीवके दोय भेद एक संसारी एक सिद्ध। जिसमें संसारीके दोय भेद—एक भव्य दूसरा अभव्य। जो मुक्ति होने योग्य सो भव्य, अर मुक्ति न होने योग्य सो अभव्य। अर जीवका निज-लक्षण उपयोग है ताके दोय भेद, एक ज्ञान एक दर्शन। ज्ञान समस्त पदार्थकूं जानैं, दर्शन समस्त पदार्थकूं देखै। सो ज्ञानके आठ भेद मति, श्रुति, अवधि, मनःपर्यय, केवल, कुमति, कुश्रुत, कुअवधि, अर दर्शनके चार भेद—चक्षु, अचक्षु, अवधि, केवल। अर जिनके एक स्पर्शन इन्द्री होय सो स्थावर कहिये, तिनके भेद पांच—पृथ्वी अप तेज वायु वनस्पति। अर त्रसके भेद चार—बेइन्द्री, तेइन्द्री, चौइन्द्री, पंचेन्द्री। जिनके स्पर्श अर रसना वे द्वीइन्द्री, जिनके स्पर्श रसना नासिका सो तेइन्द्री, जिनके स्पर्श रसना नासिका चक्षु वे चौइन्द्री, जिनके स्पर्श रसना नासिका चक्षु श्रोत्र वे पंचेन्द्री। चौइन्द्री तक तो सब सम्मूर्छन अर असैनी हैं, अर पंचेन्द्रीविषै कई सम्मूर्छन, कई गर्भज। तिनविषैं कई सैनी कई असैनी। जिनके मन वे सैनी, अर जिनके मन नाहीं वे असैनी। अर जे गर्भसे उपजें वे गर्भज अर जे गर्भविना उपजें स्वतः स्वभाव उपजैं वे सम्मूर्छन। गर्भजके भेद तीन—जरायुज अंडज पोतज। जे जराकर मंडित गर्भते निकसे मनुष्य घोटका-दिक वे जरायुज, अर जे बिना जेरके सिंहादिक सो पोतज, अर जे अंडावोंसे उपजे पक्षी आदिक वे अंडज। अर देव नारकियोंका उपपाद जन्म है, माता पिताके संयोग बिनाही पुण्य पापके उदयसे उपजैं हैं। देव तो उत्पादकशय्याविषैं उपजैं हैं, अर नारकी बिलोंमें उपजें हैं। देवयोनि पुण्यके उदयसे है अर नारकयोनि पापके उदयसे है। अर मनुष्य जन्म पुण्य पापकी मिश्रतासे है, अर तिर्यंच गति मायाचार के योगसें है। देव नारकी मनुष्य इन बिना सब तिर्यंच जानने। जीवोंकी चौरासी लाख योनियें हैं, उनके भेद सुनो—पृथ्वीकाय, जलकाय, अग्निकाय, वायुकाय, नित्य निगोद, इतरनिगोद वे तो सात सात

लाख योनि हैं, सो बयालीस लाख योनि भई। अर प्रत्येक वनस्पति दस लाख ये बावन लाख भेद स्थावरके भये। अर बेइन्द्री, तेइन्द्री, चौइन्द्री ये दोय दोय लाख योनि, उसके छै लाख योनि भेद विकलत्रयके भए, अर पंचेन्द्री तिर्यंचके भेद चार लाख योनियें, सब तिर्यंच योनिके बासठ लाख भेद भए, अर देवयोनिके भेद चार लाख, नरकयोनिके भेद चार लाख, अर मनुष्य योनिके चौदह लाख। ये सब चौरासी लाख योनि महा दुखरूप हैं। इनसे रहित सिद्धपद ही अविनाशी सुखरूप है। संसारी जीव सब ही देहधारी हैं, अर सिद्ध परमेष्ठी देहरहित निराकार हैं। शरीरके भेद पांच—औदारिक वैक्रियक, आहारक, तैजस, कार्माण। तिनविषै तैजस कार्माण तो अनादिकालसे सब जीवनकूं लगि रहे हैं, तिनका अंतकरि महामुनि सिद्ध पद पावै हैं। औदारिकसे असंख्यात गुणी अधिक वर्गणा वैक्रियकके हैं अर वैक्रियकतैं असंख्यातगुणी आहारकके हैं,अर आहारकतैं अनंतगुणी तैजसकी है, अर तैजसतैं अनन्त-गुणी कार्माण हैं। जा समय संसारी जीव देहकूं तजकर दूसरी गतिकूं जाय है ता समय अनाहार कहिए। जितनी देर एक गतिसे दूसरी गतिविषै जाते हु जीवको लगै हैं उस अवस्थामें जीवकूं अना-हारी कहिए। अर जितना वक्त एक गतिसे दूसरी गतिमें जानेमें लगे सो वह एक समय तथा दो समय, अधिकतैं अधिक तीन समय लगै है। सो ता समय जीवके तैजस अर कार्माण ये दो ही शरीर पाइये हैं। बगैर शरीरके यह जीव सिवा सिद्ध अवस्थाके अर काहू अवस्थामें काहू समय नाहीं होता। या जीवके हर वक्त अर हर गतिमें जन्मते मरते साथ ही रहते हैं। जा समय यह जीव घातिया अघातिया दोऊ प्रकारके कर्म क्षय करके सिद्ध अवस्थाकूं जाता है ता समय तैजस अर कार्माणका क्षय होता है। अर ८३० जीवनिके शरीरके परमाणुनिकी सूक्ष्मता या प्रकार है—औदारिकतैं वैक्रियक सूक्ष्म, अर वैक्रियकतैं आहारक सूक्ष्म, आहारकतैं तैजस सूक्ष्म, अर तैजसतैं कार्माण सूक्ष्म है। सो मनुष्य अर तिर्यंचनिके तो औदारिक शरीर है, अर देव नारकिनिके वैक्रियक है। अर आहारक ऋद्धिधारी मुनिनिके संदेह निवारिवेके अर्थ दसमें द्वारसे निकसे सो केवलीके निकट जाय संदेह निवारि पीछा आय दशमें द्वार

में प्रवेश करें हैं। ये पांच प्रकारके शरीर कहे, तिनमें एक काल एक जीवके कबहू चार शरीर हू पाइए ताका भेद सुनहु—तीन तो सबही जीवनिकै पाईए—नर अर तिर्यंचके औदारिक, अर देव नारकिनिके वैक्रियक, अर तैजस कार्माण सबके हैं। तिनमें कार्माण तो दृष्टिगोचर नाहीं, अर तैजस काहू मुनि के प्रकट होय है। ताके भेद दोय हैं—एक शुभ तैजस एक अशुभ तैजस। सो शुभ तैजस तो लोकनि-
 कूं दुखी देख दाहिनी भुजातैं निकसि लोकनिका दुख निवारै है, अर अशुभ तैजस क्रोधके योगकर
 वामभुजातैं निकसि प्रजाकूं भस्म करै है, अर मुनिकूं हूं भस्म करै हैं। अर काहू मुनिके विक्रियाऋद्धि
 प्रकट होय है तब शरीरकूं सूक्ष्म तथा स्थूल करैं हैं सो मुनिके चार शरीर हू काहू समय पाइए एक काल पांचों शरीर काहू जीवके न होय।

अथानन्तर मध्यलोकमें जम्बूद्वीप आदि असंख्यात द्वीप, अर लवण समुद्र आदि असंख्यात समुद्र है। शुभ हैं नाम जिनके सो द्विगुण द्विगुण विस्तारकूं लिए वलयाकार तिष्ठै हैं। सबके मध्य जम्बूद्वीप है, ताके मध्य सुमेरुपर्वत तिष्ठै है। सो लाख योजन ऊंचा है। अर जे द्वीप समुद्र कहे तिनमें जम्बूद्वीप लाख योजनके विस्तार है, अर प्रदक्षिणा तिगुणीसे कछु इक अधिक है। जम्बूद्वीपविषै देवारण्य अर भूतारण्य दो बन हैं। तिनविषै देवनिके निवास हैं। अर षट कुलाचल हैं, पूर्व समुद्रसूं पश्चिमके समुद्रतक लांबे पड़े हैं। तिनके नाम हिमवान्, महाहिमवान्, निषध, नील, रुक्मी, शिखरी। समुद्रके जल का है स्पर्श जिनके, तिनमें ह्रद, अर ह्रदनिमें कमल, तिनमें षट्कुमारिका देवी हैं—श्री ह्री धृति कीर्ति बुद्धि लक्ष्मी। अर जम्बूद्वीपमें सात क्षेत्र हैं—भरत, हैमवत, हरि, विदेह रम्यक, हैरण्यवत, ऐरावत।
अर षट्कुलाचलनिसूं गंगादिक चौदह नदी निकसी है, आदिकेसे तीन अर अंतकसे तीन अर मध्यके चारोंसे दोय २ यह चौदह हैं। अर दूजा द्वीप धातकीखण्ड सो लवणसमुद्रतैं दूना है। ताविषै दोय सुमेरुपर्वत हैं, अर बारह कुलाचल अर चौदह क्षेत्र। यहां एक भरत वहां दोय, यहां एक हिमवान् वहां दोय, याही भांति सर्व दूगुणे जानने। अर तीजा द्वीप पुष्कर ताके अर्ध भागविषै मानुषोत्तर पर्वत है, सो अढ़ाई द्वीप ही

विषै मनुष्य पाईये हैं आगे नाहीं। आधे पुष्करविषै दोय दोय मेरु, बारह कुलाचल चौदह क्षेत्र, धातकी खंड द्वीप समान तहां जानने। अढ़ाई द्वीपविषै पांच सुमेरु, तीस कुलाचल, पांच भरत, पांच ऐरावत, पांच महाविदेह, तिनमें एक सौ साठ विजय, समस्त कर्मभूमिके क्षेत्र एक सौ सत्तर, एक एक क्षेत्रमें छह छह खण्ड, तिनमें पांच पांच म्लेच्छखण्ड, एक एक आर्यखण्ड। आर्यखण्डमें धर्मकी प्रवृत्ति, विदेहक्षेत्र अर भरत ऐरावत इनविषै कर्मभूमि, तिनमें विदेहमें तो शाश्वती कर्मभूमि अर भरत ऐरावतमें अठारा कोडाकोडी सागर भोगभूमि, दोय दोय कोडाकोडी सागर कर्मभूमि। अर देवकुरु उत्तर कुरु यह शाश्वती उत्कृष्ट भोगभूमि। तिनमें तीन तीन पल्य की आयु, अर तीन तीन कोसकी काय, अर तीन तीन दिन पीछे अल्प आहार। सो पांच मेरु सम्बन्धी पांच देवकुरु, पांच उत्तरकुरु, अर हरि, अर रम्यक, यह मध्य भोगभूमि तिनविषै दोय पल्यकी आयु, अर दोय कोसकी काय, दो दिन गए आहार। या भांति पांच मेरु सम्बन्धी पांच हरि, पांच रम्यक यह दश मध्य भोगभूमि। अर हैमवत हैरण्यवत यह जघन्य भोगभूमि, तिनमें एक पल्यकी आयु अर एक कोसकी काय, एक दिनके आंतरे आहार, सो पांच मेरु संबंधी पांच हैमवत, पांच हैरण्यत, जघन्य भोगभूमि दश या भांति तीस भोगभूमि अढ़ाई द्वीपमें जाननी। अर पंच महा विदेह, पंच भरत, पंच ऐरावत यह पन्द्रह कर्मभूमि हैं तिनमें मोक्षमार्ग प्रवर्तै है।

अढ़ाईद्वीपके आगे मानुषोत्तरकेपर नाहीं, देव अर तिर्यंच ही हैं। तिनविषै जलचर तो तीन ही समुद्रविषै हैं—लवणोदधि, कालोदधि तथा अंतका स्वयंभूरमण। इन तीन बिना और समुद्रनिविषै जलचर नाहीं। अर विकलत्रय जीव अढ़ाईद्वीपविषै हैं। अर स्वयंभूरमण द्वीप ताके अर्ध भागविषै नागेन्द्र पर्वत हैं। ताके परे आधे स्वयंभूरमण द्वीपविषै अर सारे स्वयंरभमण समुद्रविषै विकलत्रय है। मानुषोत्तरसूं लेय नागेन्द्र पर्वत पर्यंत जघन्य भोगभूमिकी रीति है। वहां तिर्यंचनिकी एक पल्यकी आयु है। अर सूक्ष्म स्थावर तो सर्वत्र तीन लोकमें हैं अर बादर स्थावर आधारविषै सर्वत्र नाहीं।

एकराजूविषै समस्त मध्य लोक है। मध्य लोकमें अष्टप्रकार व्यंतर अर दशप्रकार भवनपतिनिके निवास हैं। अर ऊपर ज्योतिषी देवनिके विमान हैं। तिनके पांच भेद—चन्द्रमा सूर्य ग्रह तारा नक्षत्र, सो अढ़ाई द्वीपविषै ज्योतिषी चर हू हैं अर स्थिर हू हैं। आगे असंख्यात द्वीपनिमें ज्योतिषी देवनिके विमान स्थिर ही हैं। बहुरि सुमेरुके ऊपर स्वर्गलोक है। तहाँ सोलह स्वर्ग तिनके नाम, सौधर्म, ईशान, सनत्कुमार, माहेन्द्र, ब्रह्म, ब्रह्मोत्तर, लांतव, कापिष्ठ, शुक्र, महाशुक्र, शतार, सहस्रार, आनत, प्राणत, आरण, अच्युत, यह सोलह स्वर्ग, तिनमें कल्पवासी देव देवी हैं। अर सोलह स्वर्गनिके ऊपर नवग्रीव, तिनके ऊपर नव अनुत्तर, तिनके ऊपर पंचोत्तर विजय वैजयंत जयंत अपराजित सर्वार्थसिद्धि। यह अहमिंद्रनिके स्थानक हैं। जहां देवांगना नाहीं, अर स्वामी सेवक नाहीं, और ठौर गमन नाहीं। अर पांचवां स्वर्ग ब्रह्म ताके अन्तमें लोकांतिक देव हैं, तिनके देवांगना नाहीं, वे देवर्षि हैं। भगवानके तपकल्याणमें ही आवैं। ऊर्ध्वलोकमें देव ही हैं अथवा पंच स्थावर ही हैं। हे श्रेणिक ! यह तीन लोकका व्याख्यान जो केवलीने कह्या ताका संक्षेपरूप जानना। विस्तारसूं त्रिलोकसारसूं जानना। तीनलोकके शिखर सिद्धलोक है। ता समान दैदीप्यमान और क्षेत्र नाहीं, जहां कर्मबन्धनसे रहित अनन्त सिद्ध विराजे हैं; मानों वह मोक्ष स्थानक तीन भुवनका उज्ज्वल छत्र ही है। वह मोक्ष स्थानक अष्टमी धरा है। ये अष्ट पृथ्वीके नाम, नारक १, भवनवासी २, मानुष ३, ज्योतिषी ४, स्वर्गवासी ५, ग्रीव, ६, अर अनुत्तर विमान ७, मोक्ष ८, ये आठ पृथ्वी हैं सो शुद्धोपयोगके प्रसादकरि जे सिद्ध भए हैं तिनकी महिमा कही न जाय। तिनका मरण नाहीं। बहुरि जन्म नाहीं, महा सुखरूप हैं, अनेक शक्तिके
धारक समस्त दुखरहित महा निश्चल सर्वके ज्ञाता दृष्टा हैं।

यह कथन सुन रामचन्द्र सकलभूषण केवलीसूं पूछते भए—प्रभो ! अष्टकर्मरहित अष्टगुण आदि अनन्तगुण सहित सिद्ध परमेष्ठी संसारके भावनसे रहित हैं सो दुख तो उनको काहू प्रकारका नाहीं अर सुख कैसा ? तब केवली दिव्यध्वनिकर कहते भए—इस तीन लोकविषै सुख नाहीं, दुख ही है,

अज्ञानसे वृथा सुख मान रहे हैं। संसारका इन्द्रियजनित सुख बाधासंयुक्त क्षणभंगुर है। अष्टकर्म करि बंधे, सदा पराधीन ये जबतक जीव तिनके तुच्छ मात्राहू सुख नाहीं। जैसे स्वर्णका पिंड लोह-करि संयुक्त होय तब स्वर्णकी कांति दब जाय है तैसें जीवकी शक्ति कर्मनिकरि दब रही है सो सुख-रूप दुख ही भोगवे है। यह प्राणी जन्म मरण रोग शोक जे अनन्त उपाधी तिनकरि महा पीडित है। तिनका अर मनका दुख मनुष्य तिर्यंच नारकीनिकूं है। अर देवनिकूं दुख मनहीका है सो मनका महा दुख है ताकर पीडित हैं। या संसारविषै सुख काहेका? ये इन्द्रियजनित विषयके सुख इन्द्र धरणींद्र चक्रवर्तीनिकूं शहदकी लपेटी खड्गकी धारा समान है, अर विषमिश्रित अन्न समान हैं। अर सिद्धनि-के मन इन्द्री नाहीं, शरीर नाहीं, केवल स्वाभाविक अविनाशी उत्कृष्ट निराबाध निरुपम सुख है। ताकी उपमा नाहीं। जैसैं निद्रारहित पुरुषकूं सोयवेकरि कहा अर निरोगनिकूं औषधिकर कहा? तैसैं सर्वज्ञ वीतराग कृतार्थ सिद्ध भगवान तिनकूं इन्द्रीनिके विषयनिकर कहा? दीपककूं सूर्य चन्द्रादिक कर कहा? जे निर्भय, जिनके शत्रु नाहीं, तिनके आयुधनिकरि कहा? जे सबके अंतर्यामी सबकूं देखैं, जानैं, जिनके सकल अर्थ सिद्ध भए, कछु करना नाहीं, वांछा काहू वस्तुकी नाहीं, ते सुखके सागर हैं। इच्छा मनसूं होय है, सो मन नाहीं, परम आनन्द स्वरूप क्षुधा तृषादि बाधारहित हैं। तीर्थंकर देव जा सुखकी इच्छा करैं ताकी महिमा कहांलग कहिए। अहमिंद्र इन्द्र नागेन्द्र नरेन्द्र चक्रवर्त्यादिक निरंतर ताही पदका ध्यान करैं हैं। अर लोकांतिक देव ताही सुखके अभिलाषी हैं ताकी उपमा कहांलग करें। यद्यपि सिद्धपदका सुख उपमारहित केवली गम्य है, तथापि प्रतिबोधके अर्थ तुमकूं सिद्धनिके सुख का कछु इक वर्णन करे हैं।

अतीत अनागत वर्तमान तीन कालके तीर्थंकर चक्रवर्त्यादिक सर्व उत्कृष्ट भूमिके मनुष्यनिका सुख, अर तीन कालका भोगभूमिका सुख, अर इन्द्र अहमिंद्र आदि समस्त देवनिका सुख, भूत भवि-ष्यत् वर्त्तमानकालका सकल एकत्र करिए, अर ताहि अनन्त गुणा फलाइए, सो सिद्धनिके एक समय

के सुख तुल्य नाहीं। काहेसे ? जो सिद्धनिका सुख निराकुल निर्मल अव्याबाध अखण्ड अतींद्रिय अविनाशी है। अर देव .नुष्यनिका सुख उपाधिसंयुक्त, बाधासहित, विकल्परूप व्याकुलताकरि भरचा विनाशीक है। अर एक दृष्टांत और सुनहु—मनुष्यनितैं राजा सुखी, राजानितैं चक्रवर्ती सुखी, अर चक्रवर्तीनितैं व्यंतरदेव सुखी, अर व्यन्तरनितैं ज्योतिषी देव सुखी, तिनमें भवनवासी अधिक सुखी, अर भवनवासीनितैं कल्पवासी सुखी, अर कल्पवासीनितैं नवग्रीवके सुखी, नवग्रीवतैं नव अनुत्तरके सुखी, अर तिनतैं पंचोत्तरके सुखी, पंचोत्तर सर्वार्थसिद्धि समान और सुखी नाहीं। सो सर्वार्थसिद्धिके अहमिंद्रनितैं अनन्तानन्तगुणा सुख सिद्धपदमें है, सुखकी हद्द सिद्धपदका सुख है, अनन्तदर्शन, अनन्तज्ञान, अनन्तसुख, अनन्तवीर्य्य यह आत्माका निज स्वरूप सिद्धनिमें प्रवर्तै है। अर संसारी जीवनिके दर्शन ज्ञान सुख वीर्य कर्मनिके क्षयोपशमसे बाह्य वस्तुके निमित्त थकी विचित्रतालिए अल्परूप प्रवरतै है। यह रूपादिक विषय सुख व्याधिरूप विकल्परूप मोहके कारण इनमें सुख नाहीं। जैसैं फोड़ा राध रुधिरकरि भरचा फूलै ताहि सुख कहा ? तैसैं विकल्परूप फोड़ा महा व्याकुलतारूप राधका भरचा जिनके हैं तिनके सुख कहां ? सिद्ध भगवान गतागतरहित समस्त लोकके शिखर विराजै हैं। तिनके सुख समान दूजा सुख नाहीं। जिनके दर्शन ज्ञान लोकालोककूं देखैं, जानैं, तिनसमान सूर्य कहां ? सूर्य तो उदय अस्तकूं धरै है सकल प्रकाशक नाहीं। वह भगवान सिद्ध परमेष्ठी हथेलीविषै आंवलेकी नाईं सकल वस्तुकूं देखै जानै। छद्मस्थ पुरुषका ज्ञान उस समान नाहीं। यद्यपि अवधिज्ञान महा पर्ययज्ञानी मुनि अविभागी परमाणु पर्यन्त देखै है, अर जीवनिके असंख्यात जन्म जानै है तथापि अरूपी पदार्थनिकूं न जानै है अर अनन्तकालको न जानै, केवली ही जानै। केवलज्ञान केवलदर्शनकरि युक्त तिन समान और नाहीं। सिद्धनिके ज्ञान अनन्त, दर्शन अनन्त अर संसारी जीवनिके अल्पज्ञान अल्प दर्शन, सिद्धनिके अनन्त सुख अनन्त वीर्य अर संसारनिके अल्पसुख अल्पवीर्य। यह निश्चय जानो। सिद्धनिके सुखकी महिमा केवलज्ञानी ही जानैं, अर चार ज्ञानके धारकहू पूर्ण न जानै। यह सिद्धपद

अभव्योंकू अप्राप्य है। इस पदकू निकट भव्य ही पावैं, अभव्य अनन्त कालहू काय क्लेशकरि अनेक यत्न करैं तौहू न पावैं। अनादि कालकी लगी जो अविद्यारूप स्त्री ताका विरह अभव्यनिके न होय। सदा विद्याकूं लिये भवबनविषै शयन करैं। अर मुक्तिरूप स्त्रीके मिलापकी बांछाविषै तत्पर जे भव्य जीव ते कईएक दिन संसारविषै रहे हैं, सो संसारमें राजी नाहीं, तपविषै तिष्ठते मोक्ष होके अभिलाषी हैं। जिनविषै सिद्ध होनेकी शक्ति नाहीं उन्हें अभव्य कहिये। अर जे सिद्ध होनहार हैं उन्हें भव्य कहिए। केवली कहे हैं हे रघुनन्दन! जिनशासन बिना और कोई मोक्षका उपाय नाहीं। बिना सम्यक्त कर्मनिका क्षय न होय। अज्ञानी जीव कोटि भवविषै जे कर्म न खिपाय सकै सो ज्ञानी तीन गुप्तिकू धरे एक मुहूर्तविषै खिपावै। सिद्ध भगवान परमात्मा प्रसिद्ध हैं. सर्व जगतके लोग उनकू जानैं हैं कि वे भगवान हैं। केवली बिना उनकू कोई प्रत्यक्ष देख न जान सकै। केवलज्ञानी ही सिद्धनिकू देखैं जानै हैं। मिथ्यात्वका मार्ग संसारका कारण या जीवने अनन्त भवविषै धारचा। तुम निकटभव्य हो, परमार्थकी प्राप्तिके अर्थ जिनशासनकी अखण्ड श्रद्धा धारहु।

हे श्रेणिक! यह वचन सकलभूषण केवलीके सुनि श्रीरामचन्द्र प्रणामकरि कहते भये–हे नाथ! या संसार समुद्रतैं मोहि तारहु, हे भगवन्! यह प्राणी कौन उपायकरि संसारके वासतैं छूटै है। तब केवली भगवान कहते भए–हे राम! सम्यक्दर्शन ज्ञान चारित्र मोक्षका मार्ग है, जिनशासनविषै यह कहा है। तत्वका जो श्रद्धान ताहि सम्यग्दर्शन कहिए, अनन्तगुणपर्यायरूप है ताके दोय भेद हैं–एक चेतन दूसरा अचेतन। सो जीव चेतन है, अर सर्व अचेतन हैं। अर दर्शन दोय प्रकारतैं उपजै हैं एक निसर्ग एक अधिगम। जो स्वतःस्वभाव उपजे सो निसर्गज, अर गुरुके उपदेशतैं उपजे सो अधिगमज। सम्यक्दृष्टि जीव जिनधर्मविषै रत हैं। सम्यक्त्वके अतीचार पांच हैं–शंका कहिये जिनधर्मविषै संदेह, अर कांक्षा कहिये भोगनिकी अभिलाषा, अर विचिकित्सा कहिए महामुनिकू देख ग्लानि करनी, अर अन्यदृष्टि प्रशंसा कहिये मिथ्यादृष्टिकू मनविषै भला जानना, अर संस्तव कहिये वचनकरि मिथ्या-

दृष्टिकी स्तुति करना, इनकरि सम्यक्तविषै दूषण उपजै है। अर मैत्री प्रमोद करुणा माध्यस्थ ये चार भावना अथवा अनित्यादि बारह भावना, अथवा प्रशम संवेग अनुकम्पा आस्तिक्य अर शंकादि दोष रहितपना, जिनप्रतिमा जिनमन्दिर जिनशास्त्र मुनिराजनिकी भक्ति इनकरि सम्यग्दर्शन निर्मल होय है। अर सर्वज्ञके वचन प्रमाण वस्तुका जानना सो ज्ञानकी निर्मलताका कारण है। अर जो काहूतैं न सधै ऐसी दुर्धरक्रिया आचरणी ताहि चारित्र कहिए। पांचों इन्द्रियनिका निरोध मन का निरोध, वचनका निरोध, सर्व पापक्रियानिका त्याग सो चारित्र कहिए। त्रस स्थावर सर्व जीवकी दया, सब कूं आप समान जाने सो चारित्र कहिए। अर सुननेवालेके मन अर काननिकूं आनन्दकारी स्निग्ध मधुर अर्थसयुक्त कल्याणकारी वचन बोलना सो चारित्र कहिए। अर मन वचन कायकरि परधनका त्याग करना, किसीका बिना दीया कछू न लेना, अर दीया हुआ आहारमात्र लेना, सो चारित्र कहिए। अर जो देवनिकरि पूज्य महादुर्धर ब्रह्मचर्यव्रतका धारण सो चारित्र कहिए। अर शिवमार्ग कहिए निर्वाणका मार्ग ताहि विघ्नकरणहारी मूर्छा कहिए मनकी अभिलाषा ताका त्याग सोई परिग्रहका त्याग, सो हू चारित्र कहिए है। ये मुनिनिके धर्म कहे। अर जो अणुव्रती श्रावक मुनिनिकूं श्रद्धा आदि गुणनिकरि युक्त नवधा भक्तिकर आहार देना सो एकदेशचारित्र कहिए। अर परदारा—परधनका परिहार, परपीडाका निवारण, दयाधर्मका अंगीकार, दानशील पूजा प्रभावना, पर्वोपवासादिक सो ये देशचारित्र कहिए, अर यम कहिए। यावज्जीव पापका परिहार नियम कहिए, मर्यादारूप व्रत तपका अंगीकार, वैराग्य, विनय विवेक, ज्ञान, मन—इन्द्रियोंका निरोध ध्यान इत्यादि धर्मका आचरण सो एकदेश चारित्र कहिए। यह अनेक गुणकरि युक्त, जिनभासित चारित्र परम धामका कारण कल्याणकी प्राप्तिके अर्थ सेवने योग्य है। जो सम्यकदृष्टि जीव [illegible] त्यागी अपनी अशुभ क्रियाका निंदक जगत से न सधै ऐसे दुर्द्धर तपका धारक [illegible] सो ही दुर्लभ चारित्र धारिवेकूं समर्थ होय। अर जहां दया आदि समीचीन गुण नाहीं, अर चारित्र

बिना संसारसूं निवृत्ति नाहीं। जहां दया क्षमा ज्ञान वैराग्य तप संयम नाहीं तहां धर्म नाहीं। विषय कषायका त्याग सोई धर्म है। शम कहिए समता भाव, परम शांत, दम कहिये मन इन्द्रियोंका निरोध, संवर कहिए नवीन कर्मका निरोध, जहां ये नाहीं तहां चारित्र नाहीं। जे पापी जीव हिंसा करें हैं झूठ बोले हैं चोरी करें हैं परस्त्री सेवन करें हैं महा आरम्भी हैं, परिग्रही हैं तिनके धर्म नाहीं। जे धर्मके निमित्त हिंसा करें हैं ते अधर्मी अधमगतिके पात्र हैं। जो मूढ़ जिनदीक्षा लेकर आरम्भ करैं हैं सो यति नाहीं। यतिका धर्म आरम्भ परिग्रहसूं रहित है। परिग्रह धारियोंकूं मुक्ति नाहीं। जे हिंसा में धर्म जान षट्कायिक जीवोंकी हिंसा करैं हैं ते पापी हैं। हिंसाविषै धर्म नाहीं, हिंसकोंकूं या भव पर भवके सुख नाहीं, शिव कहिए मोक्ष नाहीं। जे सुखके अर्थ धर्मके अर्थ जीवघात करैं हैं सो वृथा है। जे ग्राम क्षेत्रादिकविषै आसक्त हैं, गाय, भैंस राखैं हैं, मारैं हैं, बांधैं हैं, तोड़ैं हैं, दाहैं हैं, उनके वैराग्य कहां? जे क्रय विक्रय करैं हैं, रसोई परहैंडा आदि आरम्भ राखैं हैं, सुवर्णादिक राखैं हैं तिनकूं मुक्ति नाहीं। जिनदीक्षा निरारम्भ है अतिदुर्लभ है। जे जिनदीक्षा धारि जगतका धंधा करैं हैं वे दीर्घ संसारी हैं। जे साधु होय तैलादिकका मर्दन करैं हैं शरीरका संस्कार करैं हैं। पुष्पादिककूं सूंघैं हैं सुगन्ध लगावैं हैं, दीपकका उद्योत करैं हैं, धूप खेवैं हैं, सो साधु नाहीं, मोक्षमार्गसूं परांगमुख हैं। अपनी बुद्धिकरि जे कहैं हैं—हिंसाविषै दोष नाहीं वे मूर्ख हैं। तिनकूं शास्त्रका ज्ञान नाहीं, चारित्र नाहीं।

जे मिथ्यादृष्टि तप करैं हैं, ग्रामविषै एक रात्रि बसैं हैं, नगरविषै पांच रात्रि, अर सदा ऊर्ध्व-बाहु राखैं हैं, मास मासोपवास करैं हैं, अर वनविषै विचरैं हैं, मौनी हैं, निपरिग्रही हैं, तथापि ८३८
दयावान नाहीं, दुष्ट हैं हृदय जिनका, सम्यक्त्व बीज बिना धर्मरूप वृक्षकूं न उपाय सकैं। अनेक कष्ट करैं तौ भी शिवालय कहिए मुक्ति उसे न लहैं। जे धर्मकी बुद्धिकर पर्वतसूं पड़ें, अग्निविषै जरैं, जल विषै डूबैं, धरतीविषै गढ़ैं, वे कुमरणकर कुगतिकूं जावैं हैं। जे पापकर्मी कामना परायण, आर्त रौद्र ध्यानी, विपरीत उपाय करैं वे नरक निगोद लहैं। मिथ्यादृष्टि जो कदाचित् दान दे तप करैं, सो

पुण्यके उदयकरि मनुष्य अर देव गतिके सुख भोगै हैं, परन्तु श्रेष्ठ मनुष्य न होय, सम्यग्दृष्टियोंके फलके असंख्यातवें भाग भी फल नाहीं। सम्यग्दृष्टि चौथे गुणठाणे अव्रती हैं—तौ हू नियमविषै हैं प्रेम जिनके सो सम्यकदर्शनके प्रसादसू देवलोकविषै उत्तम देव होवैं, अर मिथ्यादृष्टि कुलिंगी महा तप भी करैं तो देवनिके किंकर हीनदेव होय, बहुरि संसारभ्रमण करै। अर सम्यक्दृष्टि भाव धरैं तो उत्तम मनुष्य होय, तिनमें देवनके भव सात, मनुष्यनिके भव आठ या भांति पन्द्रह भवविषै पंचम

गति पावैं। वीतराग सर्वज्ञदेवने मोक्षका मार्ग प्रकट दिखाया है, परन्तु यह विषयी जीव अंगीकार न करै है। आशारूपी फांसीसे बन्धे मोहके वश पड़े तृष्णाके भरे पापरूप जंजीरसे जकड़े, कुगतिरूप बन्दीगृहविषै पड़े हैं, स्पर्श अर रसना आदि इन्द्रियोंके लोलुपी दुःखहीकू सुख मानै हैं। यह जगतके जीव एक जिनधर्मके शरण बिना क्लेश भोगै हैं, इन्द्रियोंके सुख चाहैं सो मिलै नाहीं अर मृत्युसू डरैं सो मृत्यु छोड़े नाहीं विफल कामना अर विफल भयके वश भए जीव केवल तापहीकू प्राप्त होय हैं। तापके हरिवेका उपाय और नाहीं, आशा अर शंका तजना यही सुखका उपाय है। यह जीव आशाकरि भरया भोगनिका भोग किया चाहै है, अर धर्मविषै धीर्य नाहीं धरै है। क्लेशरूप अग्नि- कर उष्ण महा आरंभविषै उद्यमी कछु भी अर्थ नाहीं पावै है उलटा गांठका खोवै है। यह प्राणी पाप के उदयसू मनवांछित अर्थकू नाहीं पावै हैं, उलटा अनर्थ होय है सो अनर्थ अतिदुर्जय है, यह मैं किया यह मैं करू हू, यह करूगा, ऐसा विचार करते ही मरकर कुगति जाय है। ये चारों ही गति कुगति हैं। एक पंचमगति निर्वाण सोई सुगति है। जहांसे बहुरि आवना नाहीं, अर जगतविषै मृत्यु ऐसी नाहीं देखै
है, जो याने यह किया, यह न किया, बाल अवस्था आदिसे सर्व अवस्थाविषै आय दावै है, जैसे सिंह मृगकू सब अवस्थाविषै आय दाबै। अहो! यह अज्ञानी जीव अहितविषै हितकी वांछा धरै है, अर दुखविषै सुखकी आशा करै है। अनित्यकू नित्य जानै है, भयविषै शरण मानै है। इनके विपरीतबुद्धि है। यह सब मिथ्यात्वका दोष है। यह मनुष्यरूप माता हाथी मायारूप गर्तविषै पड्या अनेक दुख

रूप बन्धनकरि बन्धे हैं, विषयरूप मांसका लोभी मत्स्यकी नाईं विकल्परूपी जालमें पड़े है। यह प्राणी दुर्बल बलदकी न्याईं कुटुम्बरूप कीचमें फंसा खेदखिन्न होय है। जैसें बैरियोंसे बंध्या अर अंधकूपमें पड्या उसका निकसना अति कठिन तैसे स्नेहरूप फांसीकरि बंध्या संसाररूप अंधकूपविषै पड़ा, अज्ञानी जीव उसका निकसना अति कठिन है। कोई निकटभव्य जिनवाणीरूप रस्तेकूं गहै अर श्रीगुरु निकासनेवाले होय तो निकसे। अर अभव्य जीव जैनेन्द्री आज्ञारूप अति दुर्लभ आनन्दका कारण जो आत्मज्ञान उसे पायवे समर्थ नाहीं। जिनराजका निश्चय मार्ग निकटभव्य ही पावै अर अभव्य सदा कर्मनिकरि कलंकी भए अति क्लेशरूप संसार चक्रविषै भ्रमै हैं। हे श्रेणिक! यह वचन श्री भगवान सकलभूषण केवलीने कहे। तब श्रीरामचन्द्र हाथ जोड़ सीस निवाय कहते भए—हे भगवान्! मैं कौन उपायकरि भवभ्रमणसूं छूटूं? मैं सकल राणी अर पृथ्वीका राज्य तजिवे समर्थ हूं, परन्तु भाई लक्ष्मणका स्नेह तजिवे समर्थ नाहीं। स्नेह समुद्रकी तरंगनिविषै डूबूं हूं। आप धर्मोपदेशरूप हस्तावलबन कर काढहु। हे करुणानिधान! मेरी रक्षा करहु। तब भगवान कहते भए—हे राम! शोक न कर, तू बलदेव है। कईयक दिन वासुदेव सहित इन्द्रकी न्याईं या पृथ्वीका राज्य कर जिनेश्वरका व्रतधरि केवलज्ञान पावेगा। ये केवलीके वचन सुनि श्रीरामचन्द्र हर्षकरि रोमांचित भए, नयनकमल फूलि गए, वदनकमल विकसित भया, परम धीर्य युक्त होते भए। अर रामकूं केवलीके मुखसे चरमशरीरी जान सुर नर असुर सबही प्रशंसाकरि अति प्रीति करते भए।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृतग्रन्थ ताकी भाषावचनिकाविषै रामकूं केवलीके मुख धर्मश्रवण वर्णन करनवाला एकसौ पांचवां पर्व पूर्ण भया ॥ १०५ ॥

———

अथानन्तर विद्याधरनिविषै श्रेष्ठ राजा विभीषण रावणका भाई, सुन्दर शरीरका धारक, रामकी भक्ति ही है आभूषण जाके सो दोऊ कर जोड़ि प्रणामकरि केवलीकूं पूछता भया, हे देवाधिदेव!

श्रीरामचन्द्रने पूर्व भवविषै कहा सुकृत किया जाकरि ऐसी महिमा पाई अर इनकी स्त्री सीता दण्डक वनतैं कौन प्रसंगकरि रावण हर ले गया। धर्म अर्थ काम मोक्ष चारों पुरुषार्थका वेत्ता अनेक शास्त्र का पाठी, कृत्य अकृत्यकू जानें, धर्म अधर्मकू पिछाने, प्रधानगुण सम्पन्न, सो काहेसू मोहके वश होय परस्त्रीकी अभिलाषारूप अग्निविषै पतंगके भावकू प्राप्त भया? अर लक्ष्मणने उसे संग्रामविषै हत्या। रावण ऐसा बलवान विद्याधरनिका महेश्वर अनेक अद्भुत कार्यनिका करणहारा कैसैं ऐसे मरणकू प्राप्त भया? तब केवली अनेक जन्मकी कथा विभीषणकू कहते भए—हे लंकेश्वर! राम लक्ष्मण दोनों अनेकभवके भाई हैं अर रावणके जीवसू लक्ष्मणके जीवका बहुत भवसे बैर है सो सुन। जम्बूद्वीपके भरतक्षेत्रविषैं एक नगर, वहां नयदत्तनामा वणिक अल्प धनका धनी, उसकी सुनन्दा स्त्री, उसके धनदत्तनामा पुत्र, सो रामका जीव अर दूजा वसुदत्त सो लक्ष्मणका जीव, अर एक यज्ञवलिनामा विप्र वसुदत्तका मित्र सो तेरा जीव। अर उस ही नगरविषै एक और वणिक सागरदत्त, जिसके स्त्री रत्नप्रभा, पुत्री गुणवती सो सीताका जीव, अर गुणवतीका छोटा भाई जिसका नाम गुणवान सो भामंडल का जीव, अर गुणवतीका रूप यौवन कला कांति लावण्यताकरि मण्डित, सो पिताका अभिप्राय जान धनदत्तसू बहिनकी सगाई गुणवानने करी। अर उसही नगरमें एक महा धनवान वणिक श्रीकांत सो रावणका जीव जो निरंतर गुणवतीके परिणवेकी अभिलाषा राखै, अर गुणवतीके रूपकर हरा गया है मन जाका सो गुणवतीका भाई लोभी धनदत्तकू अल्प धनवंत जान, श्रीकान्तकू महाधनवंत देख परणायवेकू उद्यमी भया।

सो यह वृत्तांत यज्ञवलि ब्राह्मणने वसुदत्तसू कहा। तेरे बड़े भाईकी मांग कन्याका बड़ा भाई श्रीकांतकू धनवान जान परणाया चाहै है। तब वसुदत्त यह समाचार सुन श्रीकांतके मारिवेकू उद्यमी भया, खड्ग पैनाय अंधेरी रात्रिविषैं श्याम वस्त्र पहिर शब्दरहित धीरा धीरा पग धरता जाय—श्रीकांतके घरविषै गया सो वह असावधान बैठा हुता सो खड्गसू मारया। तब पड़ते पड़ते श्रीकांतने भी वसुदत्त

कूं खड्गसूं मारया सो दोऊ मरे सो बिंध्याचलके वनमें हिरण भए। अर नगरके दुर्जन लोक हुते तिन्होंने गुणवती धनदत्तकूं न परणायवे दीनी कि इसके भाईने अपराध कीया। दुर्जन लोक बिना अपराध कोप करैं सो यह तो एक बहाना पाया तब धनदत्त अपने भाईका मरण अर अपना अपमान तथा मांगका अलाभ जान महा दुखी होय घरसूं निकस विदेश गमन करता भया अर वह कन्या धनदत्तकी अप्राप्तिकरि अति दुखी भई और भी किसीकूं न परणती भई, अर कन्या मुनिनिकी निंदा अर जिनमार्गकी अश्रद्धा मिथ्यात्वके अनुरागकरि पाप उपार्जे, काल पाय आर्तध्यानकरि मूई सो जिस वनविषैं दोनों मृग भए हुते तिस वनविषैं यह मृगी भई। सो पूर्वले विरोधकरि इसीके अर्थतैं दोनों मृग परस्पर लडकरि मूए, सो वन सूकर भए बहुरि हाथी, भैंसा, बैल, वानर, गैंडा, ल्याली, मींढ़ा इत्यादि अनेकजन्म धरते भए। अर यह वाही जातिकी तिर्यंचनी होती भई। सो याके निमित्त परस्पर लडकर मूए। जलके जीव थलके जीव होय प्राण तजते भए। अर धनदत्त मार्गके खेदकरि अति दुखी एक दिन सूर्यके अस्त समय मुनिनके आश्रय गया। भोला कछू जानैं नाहीं, साधुनिसूं कहता भया मैं तृषाकरि पीड़ित हूं मुझे जल पिलावहु, तुम धर्मात्मा हो। तब मुनि तो न बोले अर कोई जिनधर्मी मधुर वचनकरि इसे संतोष उपजायकरि कहता भया, हे मित्र! रात्रिकूं अमृत भी न पीवना, जलकी कहां बात? जिससमय आंखनिकर कछू सूझै नाहीं। सूक्ष्म जीव दृष्टि न पड़े ता समय, हे वत्स! यदि तू अति आतुर भी होय तो भी खानपान न करना। रात्रि आहारविषैं मांसका दोष लागै है इसलिये तू न कर जाकरि भवसागरविषैं डूबिये। यह उपदेश सुन धनदत्त शांतचित्त भया, शक्ति अल्प थी इसलिए यति न होय सका। दयाकरि युक्त है चित्त जाका सो अणुव्रती श्रावक भया, बहुरि काल पाय समाधिमरण करि सौधर्म स्वर्गविषैं बड़ी ऋद्धिका धारक देव भया, मुकुट हार भुजबंधादिककरि शोभित पूर्व पुण्यके उदयसूं देवांगनादिक सुख भोगे। बहुरि स्वर्गसूं चयकरि महापुरनामा नगरविषैं मेरु नामा श्रेष्ठी ताकी धारिणी स्त्रीके पद्मरुचि नामा पुत्र भया। अर ताही नगरविषैं राजा छत्रछाय, राणी

श्रीदत्ता, गुणनिकी मंजूषा हुती सो एक दिन सेठका पुत्र पद्मरुचि अपने गोकुलविषैं अश्व चढ़ा आया सो एक वृद्धिगति बलदकूं कंठगत प्राण देख्या। तब इस सुगन्ध वस्त्र मालाके धारकने तुरंगतैं उतरि अति दयाकरि बैलके कानविषैं नमोकार मंत्र दिया। सो बलदने चित्त लगाय सुन्या, अर प्राण तजि राणी श्रीदत्ताके गर्भविषैं आय उपज्या। राजा छत्रछायके पुत्र न था सो पुत्रके जन्मविषैं अतिहर्षित भया, नगरकी अतिशोभा करी, बहुत द्रव्य खरच्या, बड़ा उत्सव कीया। वादित्रोंके शब्दकरि दशों दिशा शब्दायमान भईं। यह बालक पुण्यकर्मके प्रभावकरि पूर्व जन्म जानता भया। सो बलदके भवका शीत आताप आदि महादुख, अर मरणसमय नमोकार मंत्र सुन्या ताके प्रभावकरि राजकुमार भया, सो पूर्वअवस्था यादकरि बालक अवस्थाविषैं ही महाविवेकी होता भया। जब तरुण अवस्था भई, तब एक दिन विहार करता बलदके मरणके स्थानक गया, अपना पूर्व चरित चितार यह वृषभध्वजकुमार हाथीसूं उतर पूर्वजन्मकी मरणभूमि देख दुखित भया। अपने मरणका सुधारणहारा, नमोकारमंत्रका देनहारा उसके जानिवेके अर्थ एक कैलाशके शिखर समान ऊंचा चैत्यालय बनाया। अर चैत्यालयके द्वारविषैं एक बैलकी मूर्ति जिसके निकट बैठा एक पुरुष नमोकार मंत्र सुनावै है ऐसा एक चित्रपट लिखाय मेल्या अर उसके समीप समझनेके मनुष्य मेले। दर्शन करिवेकूं सेठ श्रेष्ठी का पुत्र पद्मरुचि आया, सो देख अतिहर्षित भया। अर भगवानका दर्शनकरि पीछे आय बैलके चित्रपटकी ओर निरखकरि मनविषैं विचारै है बैलकूं नमोकार मंत्र मैंने सुनाया था। सो खड़ा खड़ा देखै। जे पुरुष रखवारे थे तिन जाय राजकुमारकूं कही। सो सुनते ही बड़ी ऋद्धिसूं युक्त हाथी चढ्या शीघ्र ही अपने परम मित्रसूं मिलने आया। हाथीसूं उतरि जिनमन्दिरविषैं गया, बहुरि बाहिर आया। पद्मरुचिकूं बैलकी ओर निहारता देख्या। राजकुमारने श्रेष्ठीके पुत्रकूं पूछी तुम बैलके चित्रपटकी ओर कहा निरखो हो? तब पद्मरुचिने कही एक मरते बैलको मैंने नमोकार मंत्र दिया था सो कहा उपज्या है यह जानिवेकी इच्छा है। तब वृषभध्वज बोले वह मैं हूं। ऐसा कह पायन

पड्या, अर पद्मरुचिकी स्तुति करी, जैसे गुरुकी शिष्य करे, अर कहता भया मैं पशु महा अविवेकी मृत्युके कष्टकरि दुखी था सो तुम मेरे महामित्र नमोकारमंत्रके दाता समाधिमरणके कारण होते भए। तुम दयालु पर भवके सुधारणहारेने महा मंत्र मुझे दिया उससे मैं राजकुमार भया। जैसा उपकार राजा, देव, माता, सहोदर, मित्र, कुटुम्ब कोई न करै तैसा तुमने किया। अहो! जो तुम

पद्म नमोकार मंत्र दिया उस समान पदार्थ त्रैलोक्यमें नाहीं। ताका बदला मैं क्या दूं। तुमसे उऋण

पुराण नाहीं, तथापि तुमविषै मेरी भक्ति अधिक उपजी है जो आज्ञा देवो सो करूं। हे पुरुषोत्तम! तुम

८४४ आज्ञा दानकरि मोकूं भक्त करो। यह सकल राज्य लेहु, मैं तुम्हारा दास, यह मेरा शरीर उसकरि इच्छा होय सो सेवा करावो। या भांति वृषभध्वजने कही तब पद्मरुचिके अर याके अति प्रीति बढ़ी। दोनों सम्यक्दृष्टि राजविषै श्रावकके व्रत पालते भए। ठौर ठौर भगवानके बड़े २ चैत्यालय कराए तिनमें जिन बिंब पधराए। यह पृथ्वी तिनकरि शोभायमान होती भई। बहुरि समाधि मरण करि वृषभध्वज पुण्यकर्मके प्रसादकरि दूजे स्वर्गविषै देव भया, देवांगनानिके नेत्ररूप कमल तिनके प्रफुल्लित करनेकूं सूर्य समान होता भया, तहां मन वांछित क्रीडा करता भया। अर पद्मरुचि सेठ भी समाधि मरण करि दूजे ही स्वर्ग देव भया। दोऊ वहां परम मित्र भए। वहांसे चयकरि पद्मरुचिका जीव पश्चिम विदेहविषै विजयार्धगिरि जहां नंद्यावर्त नगर वहां राजा नंदीश्वर उसकी राणी कनकप्रभा उसके नयनानन्द नामा पुत्र भया। सो विद्याधरनिके चक्रपदकी सम्पदा भोगी बहुरि महा मुनिकी अवस्था धारि विषम तप किया। समाधि मरणकरि चौथे स्वर्ग देव भया। वहां पुण्य रूप बलके सुख रूप फल महा मनोग्य भोगे। बहुरि वहांसे चयकरि सुमेरु पर्वतके पूर्व दिशाकी ओर विदेह, वहां क्षेमपुरी नगरी, राजा विपुलवाहन, राणी पद्मावती तिनके श्रीचन्द्र नामा पुत्र भया। वहां स्वर्ग समान सुख भोगे। तिनके पुण्यके प्रभावसूं दिन दिन राजाकी वृद्धि भई, अटूट भंडार भया, समुद्रांत पृथ्वी एक ग्रामकी न्याईं वश करी। अर जिसके स्त्री इन्द्राणी समान, सो इन्द्रकेसे सुख भोगे, हजारों वर्ष सुखसूं राज्य

किया। एक दिन महा संघ सहित तीन गुप्तिके धारक समाधिगुप्ति योगीश्वर नगरके बाहिर आय विराजे। तिनकूं उद्यानविषै आया जान नगरके लोक वन्दनाकूं चले। सो महा स्तुति करते वादित्र बजावते हर्षसे जाय हैं। श्रीचन्द्र समीपके लोकनिकूं पूछता भया, यह हर्षका नाद जैसा समुद्र गाजै तैसा होय है सो कौन कारण है ? तब मंत्रियनिने किंकर दौडाए, निश्चय किया जो मुनि आए हैं तिनके दर्शनकूं लोक जाय हैं। यह समाचार सुनकरि राजा फूले कमल समान भए हैं नेत्र जाके, अर शरीरविषै हर्षकरि रोमांच होय आये। राजा समस्त लोक अर परिवारसहित मुनिके दर्शनकूं गया, प्रसन्न है मुख जिनका, ऐसे मुनिराज तिनकूं राजा देखि प्रणामकरि महा विनयसंयुक्त पृथ्वीविषै बैठा। भव्यजीव रूप कमल तिनके प्रफुल्लित करिवेकूं सूर्य समान ऋषिनाथ तिनके दर्शनकूं राजाकूं अति धर्म-स्नेह उपज्या। वे महा तपोधर, धर्म शास्त्रके वेत्ता, परम गम्भीर, लोकनिकूं तत्त्व ज्ञानका उपदेश देते भए। यतिका धर्म अर श्रावकका धर्म, संसार समुद्रका तारणहारा अनेक भेद संयुक्त कह्या। अर प्रथमानुयोग, करणानुयोग, चरणानुयोग द्रव्यानुयोगका स्वरूप कह्या। प्रथमानुयोग कहिए उत्तम पुरुषनिका कथन, अर करणानुयोग कहिए तीन लोकका कथन, चरणानुयोग कहिए मुनि श्रावकका धर्म, अर द्रव्यानुयोग कहिए षटद्रव्य सप्त तत्त्व नव पदार्थ पंचास्तिकायका निर्णय। कैसे हैं मुनिराज ? वक्तानिविषै श्रेष्ठ हैं। अर आक्षेपणी कहिए जिनमार्ग उद्योतनी, अर विक्षेपणी कहिए मिथ्यात्वखंडनी, अर संवेगिनी कहिए धर्मानुरागणी, अर निर्वेदिनी कहिए वैराग्यकारिणी यह चार प्रकार कथा कहते भए। इस संसार असारविषै कर्मके योगसूं भ्रमता जो यह प्राणी सो महा कष्टसूं मोक्षमार्गकूं प्राप्त होय है। संसारके ठाठ विनाशीक हैं। जैसा सन्ध्या समयका वर्ण, अर जलका बुदबुदा, तथा जलके झाग अर लहर, अर बिजुरीका चमत्कार, इन्द्र धनुष क्षण भंगुर हैं, असार हैं, ऐसा जगतका चरित्र क्षण भंगुर जानना। यामें सार नाहीं। नरक तिर्यंचगति तो दुःखरूप ही हैं, अर देव मनुष्यगतिविषै यह प्राणी सुख जाने है सो सुख नाहीं, दुःख ही है। जिससे तृप्ति नाहीं सो ही दुःख। जो महा स्वर्गके

भोगनिकरि तृप्त नाहीं भया, सो मनुष्यभवके तुच्छ भोगनिकरि कैसैं तृप्त होय ? यह मनुष्यभव भोग योग्य नाहीं, वैराग्य योग्य है। काहु एक प्रकारसूं दुर्लभ मनुष्य देह पाया, जैसे दरिद्री निधान पावै, सो विषयरसका लोभी होय वृथा खोय, मोहकूं प्राप्त भया। जैसे सूखे ईंधनसूं अग्निकूं कहां तृप्ति, अर नदीनिके जलकरि समुद्रकूं कहां तृप्ति ? तैसैं विषयसुखसूं जीवनकूं तृप्ति न होय। चतुर भी विषयरूप मदकरि मोहित भया मदताकूं प्राप्त होय है। अज्ञानरूप तिमिरसूं मंद भया है मन जाका सो, जलविषैं डूबता खेदखिन्न होय त्यों खेदखिन्न है। परन्तु अविवेकी तो विषय ही कूं भला जानै है। सूर्य तो दिनकूं ताप उपजावै है, अर काम रात्रिदिन आताप उपजावै। सूर्यके आताप निवारिवे के अनेक उपाय हैं, अर कामके निवारिवेका उपाय एक विवेक ही है। जन्म जरा मरणका दुःख संसार-विषैं भयंकर है जिसका चिंतवन किए कष्ट उपजे। यह कर्म जनित जगतका ठाठ अरहटके यंत्रकी घड़ी समान है, रीता भर जाय है भरा रीता होय है, नीचला ऊपर, ऊपरला नीचे। अर यह शरीर दुर्गन्ध है, यंत्र समान चलाया चलै है, विनाशीक है, मोह कर्मके योगसूं जीवका कायासूं स्नेह है। जलके बुदबुदा समान मनुष्य भवके उपजे सुख असार जानि बड़े कुलके उपजे पुरुष विरक्त होय जिन राजका भाषा मार्ग अंगीकार करे हैं। उत्साहरूप बखतर पहिरैं निश्चय रूप तुरंगके असवार, ध्यान-रूप खड्गके धारक, धीर कर्मरूप शत्रुकूं विनाशि निर्वाणरूप नगर लेय हैं। यह शरीर भिन्न अर मैं भिन्न, ऐसा चिंतवन करि शरीरका स्नेह तजे हैं। हे मनुष्यों ! धर्मकूं करो। धर्म समान और नाहीं। अर धर्मनिमें मुनिका धर्म श्रेष्ठ है। जिन महामुनियोंके सुख दुःख दोनों तुल्य अपना अर पराया तुल्य। जे राग द्वेष रहित महापुरुष हैं वे परम उत्कृष्ट शुक्ल ध्यानरूप अग्निसूं कर्मरूप वनी दुःखरूप दुष्टोंसे भरी भस्म करैं हैं।

ये मुनिके वचन राजा श्रीचन्द्र सुन बोधकूं प्राप्त भया। विषयानुभव सुखतैं वैराग्य होय अपने ध्वजकांतिनामा पुत्रकूं राज्य देय समाधिगुप्त नामा मुनिके समीप मुनि भया। विरक्त है मन जाका,

सम्यक्‌की भावनाकरि तीनों योग मन वचन काय तिनकी शुद्धता धरता संता, पांच समिति, तीन गुप्तिसूं मंडित, राग द्वेषसूं परांगमुख, रत्नत्रयरूप आभूषणनिका धारक, उत्तम क्षमा आदि दशलक्षण धर्मकरि मंडित, जिनशासनका अनुरागी, समस्त अंग पूर्वांगका पाठक, समाधानरूप पंच महाव्रतका धारक, जीवनिका दयालु, सप्त भयरहित, परमधीर्यका धारक, बाईस परीषहका सहनहारा, बेला तेला पक्ष मासादिक अनेक उपवासका करणहारा, शुद्ध आहारका लेनहारा, ध्यानाध्ययनमें तत्पर, निर्ममत्व, अतींद्रिय भोगनिकी बांछाका त्यागी, निदान बंधनरहित, महाशांत, जिनशासनमें है वात्सल्य जाको, यतिके आचारमें संघके अनुग्रहविषै तत्पर, बालके अग्रभागके कोटिमें भागहू नाहीं है परिग्रह जाके, स्नानका त्यागी, दिगम्बर, संसारके प्रबंधतैं रहित, ग्रामके वनविषै एक रात्रि अर नगरके वनविषै पांच रात्रि रहनहारा, गिरिशिखर नदीके पुलिन उद्यान इत्यादि प्रशस्त स्थानविषै निवास करणहारा, कायोत्सर्गका धारक, देहसैं हू निर्ममत्व, निश्चल, मौनी, पंडित, महातपस्वी इत्यादि गुणनिकार पूर्ण कर्म पिंजरकूं जर्जराकरि काल पाय श्रीचन्द्रमुनि रामचन्द्रका जीव पांचवें स्वर्ग इन्द्र भया। तहां लक्ष्मी कीर्ति कांति प्रतापका धारक, देवनिका चूडामणि, तीन लोकविषै प्रसिद्ध, परम ऋद्धिकरयुक्त, महा सुख भोगता भया। नन्दनादिक वनविषै सौधर्मादिक इन्द्र याकी सम्पदाकूं देख रहे हैं। याके अवलोकनकी बांछा रहै। महा सुन्दर विमान मणि हेममई मोतिनिकी झालरिनिका मण्डित, तामें बैठा विहार करै। दिव्य स्त्रीनिके नेत्रोंकूं उत्सवस्वरूप महासुखतै काल व्यतीत करता भया। श्रीचन्द्रका जीव ब्रह्मेंद्र ताको महिमा, हे विभीषण! वचन कर न कही जाय, केवलज्ञानगम्य है। यह जिनशासन अमोलिक परमरत्न उपमारहित त्रैलोक्यविषै प्रकट है तथापि मूढ न जानैं। श्रीजिनेन्द्र मुनीन्द्र अर जिनधर्म इनको महिमा जानकर हू मूर्ख मिथ्या अभिमानकरि गर्वित भए, धर्मसे परांगमुख रहैं। जो अज्ञानी या लोकके सुखविषै अनुरागी भया है, सो बालक समान अविवेकी है। जैसे बालक विना समझे अभक्ष्य का भक्षण करै है, विषपान करै है, तैसे मूढ अयोग्यका आचरण करै है। जे विषयके अनुरागी हैं

सो अपना बुरा करै हैं। जीवोंके कर्म बन्धकी विचित्रता है। इसलिए सब ही ज्ञानके अधिकारी नाहीं। कईएक महाभाग्य ज्ञानकूं पावै हैं, अर कईएक ज्ञानकूं पाय और वस्तुकी वांछाकरि अज्ञान दशाकू प्राप्त होय हैं। अर कईएक महानिंद्य जो यह संसारी जीवनिके मार्ग तिनमें रुचि करै हैं। ते मार्ग महादोषके भरे हैं जिनमें विषय कषायकी बहुलता है। जिनशासनसूं और कोई दुखतैं छुड़ायवेका मार्ग नाहीं, तातैं हे विभीषण ! तुम आनन्द चित्त होयकर जिनेश्वर देवका अर्चन करहु। इस भांति धनदत्तका जीव मनुष्यसे देव, देवसे मनुष्य होयकर नवमें भव रामचन्द्र भया, उसकी विगत पहले भव धनदत्त १, दूजे भव पहले स्वर्ग देव २, तीजे भव पद्मरुचि सेठ ३, चौथे भव दूजे स्वर्ग देव ४, पांचवें भव नयनानन्दराजा ५, छठे भव चौथे स्वर्ग देव ६, सातवें भव श्रीचन्द ७, आठवें भव पांचवें स्वर्ग ८, नवमें भव रामचन्द्र ९, आगे मोक्ष। यह तो रामके भव कहे, अब हे लंकेश्वर ! वसुदत्तादिकका वृत्तांत सुन—कर्मनिकी विचित्रता, ताके योगकरि मृणालकुण्ड नामा नगर, तहां राजा विजयसेन, राणी रत्नचूला, उसके वज्रकंबुनामा पुत्र, उसके हेमवती राणी, उसके शंभु नामा पुत्र पृथ्वीमें प्रसिद्ध, सो यह श्रीकांतका जीव रावण होनहार सो पृथ्वीमें प्रसिद्ध. अर वसुदत्तका जीव राजा का पुरोहित उसका नाम श्रीभूति सो लक्ष्मण होनहार, महा जिनधर्मी सम्यग्दृष्टि। उसके स्त्री सरस्वती उसके वेदवती नामा पुत्री भई। सो गुणवतीका जीव सीता होनहार गुणवतीके भवसूं पूर्व सम्यक्त विना अनेक तिर्यंच योनिविषै भ्रमणकरि साधुनिकी निंदाके दोषकरि गंगाके तट मरकर हथिनी भई। एक दिन कीचमें फंसी, पराधीन होय गया है शरीर जाका, नेत्र तिरमिराट अर मंद मंद सांस लेय, सो एक तरंगवेग नामा विद्याधर महादयावान, उसने हथिनीके कानमें नमोकार मंत्र दिया। सो नमोकार मंत्रके प्रभाव करि मंद कषाय भई। अर विद्याधरने व्रत भी दिए। सो जिनधर्मके प्रसादसे श्रीभूति पुरोहितके वेदवती पुत्री भई। एक दिन मुनि आहारकूं आए सो यह हंसने लगी। तब पिताने निवारी सो यह शांतचित्त होय श्राविका भई। अर यह कन्या परमरूपवती सो अनेक राजानिके पुत्र

याके परिणवेकूं अभिलाषी भए। अर यह राजा विजयसेनका पोता शंभु जो रावण होनहार है सो विशेष अनुरागी भया। अर यह पुरोहित श्रीभूति महा जिनधर्मी, सो उसने जो मिथ्यादृष्टि कुबेर समान धनवान होय तो हू मैं पुत्री न दूं, यह मेरे प्रतिज्ञा है। तब शंभुकुमारने रात्रिविषै पुरोहितकूं मारचा सो पुरोहित जिनधर्मके प्रसादतैं स्वर्गलोकविषै देव भया। अर शभुकुमार पापी वेदवती साक्षात् देवी समान उसे न इच्छतीकूं बलात्कार परणिवेकूं उद्यमी भया। वेदवतीके सर्वथा अभिलाषा नाहीं तब कामकरि प्रज्वलित इस पापीने जोरावरी कन्याकूं आलिंगनकरि मुख चुम्ब मैथुन किया। तब कन्या विरक्त हृदय, कांपे शरीर जाका, अग्निकी शिखा समान प्रज्ज्वलित अपने शील घातकरि, अर पिताके घातकरि, परम दुखकूं धरती, लाल नेत्र होय महा कोपकरि कहती भई—अरे पापी! तैंने मेरे पिताकूं मारा, मो कुमारीसूं बलात्कार विषयसेवन किया, सो नीच! मैं तेरे नाशका कारण होऊंगी। मेरा पिता तैंने मारा सो बड़ा अनर्थ किया। मैं पिताका मनोरथ कभी भी न उलंघू। मिथ्या-दृष्टि सेवनसूं मरण भला। ऐसा कह वेदवती श्रीभूति पुरोहितकी कन्या हरिकांता आर्यिकाके समीप जाय आर्यिकाके व्रत लेय परम दुर्धर तप करती भई। केशलुंच किए, महा तपकरि रुधिर मांस सुखाय दिए। प्रकट दीखैं हैं अस्थि अर नसाँ जिसके, तपकर सुखाय दिया है देह जिसने, समाधिमरणकरि पांचवे स्वर्ग गई। पुण्यके उदयकरि स्वर्गके सुख भोगे। अर शंभु संसारविषै अनीतिके योगकर अति निंदनीक भया। कुटुम्ब, सेवक अर धनसे रहित भया। उन्मत्त होय गया, अर जिनधर्म परांगमुख भया। साधुनिकूं देख हंसै, निंदा करै, मद्य मांस शहदका आहारी, पापक्रियाविषै उद्यमी, अशुभ उदयकरि नरक तिर्यंचविषै महा दुख भोगता भया।

अथानन्तर कछु इक पापकर्मके उपशमसे कुशध्वज नामा ब्राह्मण, ताके सावित्री नामा स्त्रीके प्रभासकुंद नामा पुत्र भया। सो दुर्लभ जिनधर्मका उपदेश पाय विचित्रमुनिके निकट मुनि भया। काम क्रोध मद मत्सर हरे, आरम्भरहित भया, निर्विकार तपकरि दयावान, निस्पृही, जितेन्द्री, पक्ष

मास उपवास करै। जहां सूर्य अस्त हो तहां शून्य वनविषै बैठ रहै। मूलगुण उत्तरगुणका धारक, बाईस परीषहका सहनहारा, ग्रीष्मविषै गिरिके शिखर रहै, वर्षामें वृक्षतले बसै, अर शीतकालविषै नदी सरोवरीके तट निवास करै। या भांति उत्तम क्रियाकर युक्त श्री सम्मेदशिखरकी वन्दनाकू गया। वह निर्वाण क्षेत्र कल्याणका मन्दिर, जाका चितवन किये पापनिका नाश होय। तहां कनक प्रभ नामा विद्याधरकी विभूति आकाशविषै देख मूर्खने निदान किया जो जिनधर्मके तपका माहात्म्य सत्य है तो ऐसी विभूतिमैं हूं पाऊं। यह कथा भगवान केवलीने विभीषणकू कही–देखो जीवनिकी मूढ़ता, तीनलोक जाका मोल नाहीं, ऐसा अमोलिक तपरूप रत्न, भोगरूपी मूठी सागके अर्थ बेच्या। कर्मके प्रभावकरि जीवनकी विपर्यय बुद्धि होय है। निदानकरि दुःखित विषम तपकरि वह तीजे स्वर्ग देव भया। तहांतै चयकरि भोगनिविषै है चित्त जाका, सो राजा रत्नश्रवाके राणी केकसी, ताके रावण नामा पुत्र भया। लंकामें महा विभूति पाई, अनेक है आश्चर्यकारी बात जाकी, प्रतापी पृथ्वी में प्रसिद्ध। अर धनदत्तका जीव रात्रि भोजनके त्यागकरि सुर नर गतिके सुख भोग श्रीचन्द्र राजा होय, पंचम स्वर्ग दश सागर सुख भोगि, बलदेव भया। रूपकरि बलकरि विभूतिकरि जा समान जगत-विषै और दुर्लभ है। महामनोहर, चन्द्रमासमान उज्ज्वल यशका धारक। अर वसुदत्तका जीव अनु-क्रमसे लक्ष्मीरूप लताके लिपटानेका वृक्ष वसुदेव भया। ताके भव सुनो–वसुदत्त १, मृग २, सूकर ३, हस्ती ४, महिष ५, वृषभ ६, बानर ७, चीता ८, स्याली ६, मींढ़ा १०, अर जलचर स्थलचरके अनेक भव ११, श्रीभूति पुरोहित १२, देवराजा १३, पुनर्वसु विद्याधर १४, तीजे स्वर्गदेव १५, वासुदेव १६
मेघा १७, कुटुम्बीका पुत्र १८, देव १६, वणिक् २०, भोगभूमि २१, देव २२, चक्रवर्तीका पुत्र २३। बहुरि कईएक उत्तमभव धर पुष्कराद्धके विदेहविषै तीर्थंकर अर चक्रवर्ती दोय पदका धारी होय मोक्ष पावेगा। अर दशाननके भव श्रीकांत १, मृग २, सूकर ३, गज ४, महिष ५, वृषभ ६, बानर ७, चीता ८, स्याली ९, मींढ़ा १०, अर जलचर थलचरके अनेक भव ११, शम्भु १२, प्रभासकुन्द १३,

तीजे स्वर्ग १४, दशमुख १५, बालुका १६, कुटुम्बी पुत्र १७, देव १८, बणिक १९, भोगभूमि २०, देव २१, चक्रीपुत्र २२, बहुरि कईएक उत्तम भव धरि भरतक्षेत्रविषै जिनराज होय मोक्ष पावेगा, बहुरि जगत जालविषै नाहीं। अर जानकीके भव गुणवती १, मृगी २, शूकरी ३, हथिनी ४, महिषी ५, गो ६, बानरी ७, चीती ८, स्याली ९, गाडर १०, जलचर स्थलचरके अनेक भव ११; चित्तोत्सवा १२, पुरोहितकी पुत्री वेदवती १३, पांचवें स्वर्ग देवी अमृतवती १४, बलदेवकी पटराणी १५, सोलहवें स्वर्ग प्रतेन्द्र १६, चक्रवर्ती १७, अहमिंद्र १८, रावणका जीव तीर्थंकर होयगा। ताके प्रथम गणधर देव होय मोक्ष प्राप्त होयगा। भगवान सकलभूषण विभीषणसूं कहै हैं—श्रीकांतका जीव कईएक भवमें शम्भु प्रभासकुन्द होय अनुक्रमसूं रावण भया, जाने अर्द्ध भरतक्षेत्रमें सकल पृथ्वी वश करी, एक अंगुल आज्ञा सिवाय न रही। अर गुणवतीका जीव श्रीभूतिकी पुत्री होय अनुक्रमकरि सीता भई, राजा जनककी पुत्री, श्रीरामचन्द्रकी पटराणी, विनयवती, शीलवती, पतिव्रतानिमें अग्रेसर भई। जैसैं इन्द्रके शची, चन्द्रके रोहिणी, रविके रेणा, चक्रवर्तीके सुभद्रा, तैसैं रामके सीता, सुन्दर है चेष्टा जाकी। अर जो गुणवतीका भाई गुणवान सो भामण्डल भया। श्रीरामका मित्र जनक राजाकी राणी विदेहाके गर्भविषै युगल बालक भए, भामण्डल भाई सीता बहिन, दोनों महा मनोहर। अर यज्ञबलि ब्राह्मणका जीव विभीषण भया अर बैलका जीव जो नमोकारमन्त्रके प्रभावतैं स्वर्गगति नरकगतिके सुख भोगे यह सुग्रीव कपिध्वज भया। भामण्डल, सुग्रीव अर तू पूर्व भवकी प्रीतिकर तथा पुण्यके प्रभावकरि महा पुण्याधिकारी श्रीराम ताके अनुरागी भए। यह कथा सुन विभीषण बालि के भव पूछता भया सो केवली कहै हैं—हे विभीषण! तू सुन! राग द्वेषादि दुखनिके समूहकरि भरा यह संसार सागर चतुर्गतिमई, ताविषै वृन्दावनविषै एक कालेरा मृग, सो साधु स्वाध्याय करते हुते तिनका शब्द अंतकालमें सुनकरि ऐरावत क्षेत्रविषै दित नामा नगर तहां विहित नामा मनुष्य, सम्यग्दृष्टि सुन्दर चेष्टाका धारक, ताकी स्त्री शिवमति, ताके मेघदत्त नामा पुत्र भया सो जिन पूजाविषै उद्यमी, भग-

८५१

वानका भक्त, अणुव्रतधारक, समाधिमरणकरि दूजे स्वर्गदेव भया। वहांसे चयकरि जम्बूद्वीपविषै पूर्व विदेह, विजयावतीपुरी, ताके समीप महाउत्साहका भरचा एक मत्तकोकिला नामा ग्राम ताका स्वामी कांतिशोक, ताकी स्त्री रत्नांगिनी, ताके स्वप्रभ नामा पुत्र भया, महासुन्दर, जाकूं शुभ आचार भावै। सो जिनधर्मविषै निपुण संयतनामा मुनि होय हजारों वर्ष विधिपूर्वक बहुत भांतिके महातप किए। निर्मल है मन जाका सो तपके प्रभावकरि अनेक ऋद्धि उपजी, तथापि अति निर्गर्व संयोग संबंधविषै ममताकूं तजि, उपशमश्रेणी धार शुक्लध्यानके पहिले पायेके प्रभावतैं सर्वार्थसिद्धि गया, सो तेतीस सागर अहमिंद्र पदके सुख भोगि राजा सूर्यरज ताके बालि नामा पुत्र भया विद्याधरनिका अधिपति, किहकन्धपुरका धनी, जिसका भाई सुग्रीव सो महा गुणवान। सो जब रावण चढ़ आया तब जीव-दयाके अर्थ बालीने युद्ध न किया, सुग्रीवकूं राज्य देय दिगम्बर भया। सो जब कैलाशविषै तिष्ठै था अर रावण आय निकस्या। क्रोधकरि कैलाशके उठायवेकूं उद्यमी भया, सो बाली मुनि चैत्यालयकी भक्तिसूं ढीला सो अंगुष्ठे दाब्या, सो रावण दबने लगा। तब राणीने साधुकी स्तुति करि अभयदान दिवाया। रावण अपने स्थानक गया। अर बाली महामुनि गुरुकें निकट प्रायश्चित्तनामा तप लेय दोष निराकरणकरि क्षपकश्रेणी चढ़ कर्म दग्ध किए, लोकके शिखर सिद्धक्षेत्र है वहां गए, जीवका निज स्वभाव प्राप्त भया। अर वसुदत्तके अर श्रीकांतके गुणवतीके कारण महा बैर उपज्या था सो अनेक भवविषै दोऊ परस्पर लड लड मूवे। अर गुणवतीसूं तथा वेदवतीसूं रावणके जीवके अभि-लाषा उपजी हुती, उस कारणकरि रावणने सीता हरी। अर वेदवतीका पिता श्रीभूति सम्यग्दृष्टि उत्तम ब्राह्मण सो वेदवतीके अर्थ शम्भुने हता, सो स्वर्ग जाय वहांसे चयकर प्रतिष्ठित नाम नगरविषै पुनर्वसु नाम विद्याधर भया। सो निदान सहित तपकर तीजे स्वर्ग जाय रामका लघु भ्राता महा स्नेहवंत लक्ष्मण भया। अर पूर्वले वैरके योगसूं रावणकूं मारचा। अर वेदवतीसूं शम्भुने विपर्यय करी तातैं सीता रावणके नाशका कारण भई, जो जाकूं हतै सो ताकरि हत्या जाय। तीन खण्डको

लक्ष्मी सोई भई रात्रि, ताका चन्द्रमा रावण, ताहि हतकरि लक्ष्मण सागरांत पृथ्वीका अधिपति भया। रावणसा शूरवीर पराक्रमी या भांति मारचा जाय यह कर्मनिका दोष है। दुर्बलसे सबल होय, सबलसे दुर्बल होय, घातक है सो हता जाय अर हता होय सो घातक होय जाय। संसारके जीवनि-की यही गति है। कर्मकी चेष्टाकरि कभी स्वर्गके सुख पावै, कभी नरकके दुःख पावै। अर जैसे काहू महा स्वादरूप परम अन्नविषै विष मिलाय दूजित करै तैसे मूढ़ जीव उग्र तपकूं भोगविलास करि दूषित
 करै है। जैसे कोई कल्पवृक्षकूं काटि कोदूंकी बाढ़ करै, अर विषके वृक्षकूं अमृत रसकरि सींचे, अर
 भस्मके निमित्त रत्ननिकी राशिकूं जलावै, अर कोयलनिके निमित्त मलयागिरि चन्दनकूं दग्ध करै, तैसे निदान बंधकर तपकूं यह अज्ञानी दूषित करै। या संसारविषै सब दोषकी खान स्त्री है। ताके अर्थ कहा कुकर्म अज्ञानी न करै? जो या जीवनतैं कर्म उपार्जे हैं सो अवश्य फल देय हैं, कोऊ अन्यथा करिवे समर्थ नाहीं। जे धर्मविषै प्रीति करै बहुरि अधर्म उपार्जै वे कुगतिकूं प्राप्त होय हैं। तिनकी भूल कहा कहिए? जे साधु होयकर मदमत्सर धरै हैं तिनकूं उग्र तपकरि मुक्ति नाहीं। अर जाके शांति भाव नाहीं संयम नाहीं, तप नाहीं, उसे दुर्जन मिथ्यादृष्टिके संसार सागरके तिरवेका उपाय कहा? अर जैसे असराल पवनकरि मदोन्मत्त गजेंद्र उड़े तो सुसाके उडिवेका कहा आश्चर्य? तैसे संसारकी झूठी मायाविषै चक्रवर्त्यादिक बड़े पुरुष भूलें तो छोटे मनुष्यनिकी कहा बात? या जगत विषै परम दुःखका कारण वैर भाव है सो विवेकी न करै, आत्म कल्याणकी है भावना जिनके पाप की करणहारी वाणी कदापि न बोले। गुणवतीके भवविषै मुनिका अपवाद किया था अर वेदवतीके
भवमें एक मंडलकानामा ग्राम वहां सुदर्शननामा मुनि बनमें आये। लोक वंदना कर पीछे गए, अर मुनिकी बहिन सुदर्शना नामा आर्यिका सो मुनिके निकट बैठी धर्म श्रवण करै थी। सो वेदवतीने देखकर ग्रामके लोकनिके निकट मुनिकी निंदा करी कि मैं मुनिकूं अकेली स्त्रीके समीप बैठा देख्या। तब कईएकनिने बात मानी, अर कईएक बुद्धिवंतनिने न मानी, परन्तु ग्राममें मुनिका अपवाद भया।

तब मुनिने नियम किया कि यह झूठा अपवाद दूर होय तो आहारकूं उतरना अन्यथा नाहीं। तब नगरके देवताने वेदवतीके मुखकरि समस्त ग्रामके लोकनिकूं कहाई कि मैं झूठा अपवाद किया। यह बहिन भाई हैं, अर मुनिके निकट आय वेदवतीने क्षमा कराई कि हे प्रभो ! मैं पापिनीने मिथ्यावचन कहे सो क्षमा करहु। या भांति मुनिकी निंदाकरि सीताका झूठा अपवाद भया, अर मुनिसूं क्षमा कराई, उसकरि अपवाद दूर भया। तातैं जे जिनमार्गी हैं वे कभी भी परनिंदा न करैं। किसीमें सांचा दोष है तौहू ज्ञानी न कहैं। अर कोऊ कहता होय ताहि मनै करैं। सर्वथा प्रकार पराया दोष ढाकैं। जे कोई परनिंदा करै हैं सो अनन्तकाल संसार वनविषै दुख भोगवे हैं। सम्यक्दर्शन रूप जो रत्न ताका बड़ा गुण यही है जो पराया अवगुण सर्वथा ढाकैं। जो सांचा भी दोष पराया कहै सो अपराधी है। अर जो अज्ञानसूं मत्सर भावसे पराया झूठा दोष प्रकाशै उस समान और पापी नाहीं। अपने दोष गुरुके निकट प्रकाशने अर पराए दोष सर्वथा ढाकने। जो पराई निन्दा करै सो जिनमार्गसे परांगमुख है।

यह केवलीके परम अद्भुत वचन सुनकरि सुर असुर नर सब ही आनन्दकूं प्राप्त भए। वैरभावके दोष सुन सब सभाके लोग महादुखके भयकरि कम्पायमान भए। मुनि तो सर्व जीवनिसूं निर्वैर हैं अधिकशुद्ध भाव धारते भए। अर चतुर्निकायके सर्व ही देव क्षमाकूं प्राप्त होय वैरभाव तजते भए। अर अनेक राजा प्रतिबुद्ध होय शांतिभाव धार, गर्वका भार तजि मुनि अर श्रावक भए। अर जे मिथ्यावादी थे वह हू सम्यक्तकूं प्राप्त भए। सब ही कर्मनिकी विचित्रता जान निश्वास नाखते भए। धिक्कार या जगत्की मायाकूं, या भांति सब ही कहते भए। अर हाथ जोड़ सीस निवाय केवलीकूं प्रणामकरि सुर असुर मनुष्य विभीषणकी प्रशंसा करते भए जो तिहारे आश्रयसूं हमने केवलीके मुख उत्तम पुरुषनिके चरित्र सुने। तुम धन्य हो। बहुरि देवेन्द्र, नरेन्द्र, नागेन्द्र सबही आनन्दके भरे अपने परिवारवर्ग सहित सर्वज्ञ देवकी स्तुति करते भए। हे भगवान पुरुषोत्तम ! यह त्रैलोक्य सकल तुमकरि शोभै है। तातैं तिहारा सकलभूषण नाम सत्यार्थ है। तिहारी केवलदर्शन केवलज्ञानमई निज विभूति सर्व जगत

की विभूतिकूं जीतकरि शोभै है। यह अनन्त चतुष्टय लक्ष्मी सर्व लोकका तिलक है। यह जगतके जीव अनादि कालके कर्मवश होय रहे हैं, महा दुखके सागरमें पडे हैं, तुम दीननिके नाथ दीनबन्धु करुणानिधान जीवनिकूं जिनराजपद देहु। हे केवलिन्! हम भव वनके मृग, जन्म जरा मरण रोग शोक वियोग व्याधि अनेक प्रकारके दुख भोक्ता, अशुभ कर्मरूप जाल विषै पड़े हैं तातैं छूटना अति कठिन है, सो तुम ही छुडायवे समर्थ हो। हमकूं निज बोध देवहु जाकरि कर्मका क्षय होय। हे नाथ! यह विषय, वासनारूप गहन वन, तामें हम निजपुरीका मार्ग भूल रहे हैं, सो तुम जगतके दीपक हमकूं शिवपुरीका पंथ दरसावो। अर जे आत्मबोधरूप शांतरसके तिसाए तिनकूं तुम तृषाके हरणहारे महासरोवर हो, अर कर्म भर्मरूप वनके भस्म करिवेकूं साक्षात् दावानल रूप हो, अर जे विकल्पजाल नाना प्रकारके तेई भए बरफ ताकरि कम्पायमान जगत्के जीव तिनकी शीत व्यथा हरिवेकूं तुम साक्षात् सूर्य हो। हे सर्वेश्वर! सर्व भूतेश्वर! जिनेश्वर! तिहारी स्तुति करिवेकूं चारज्ञानके धारक गणधरदेव हू समर्थ नाहीं तो और कौन? हे प्रभो! तुमकूं हम बारम्बार नमस्कार करैं हैं।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रन्थ, ताकी भाषा वचनिकाविषै राम लक्ष्मण विभीषण सुग्रीव सीता भामण्डलके वर्णन करनेवाला एकसौ छहवां पर्व पूर्ण भया ॥ १०६ ॥

अथानन्तर केवलीके वचन सुन संसार भ्रमणका जो महा दुःख ताकरि खेदखिन्न होय जिनदीक्षाकी है अभिलाषा जाके, ऐसा रामका सेनापति कृतांतवक्र रामसूं कहता भया—हे देव! मैं या संसार असारविषै अनादिकालका मिथ्या मार्गकर भ्रमता हुवा दुःखित भया। अब मेरे मुनिव्रत धरिवेकी इच्छा है। तब श्रीराम कहते भए—जिनदीक्षा अति दुर्धर है, तू जगतका स्नेह तजि कैसे धारेगा? महा तीव्र शीत उष्ण आदि बाईस परीषह कैसें सहेगा? अर दुर्जन जननिके दुष्ट वचन कंटक तुल्य कैसैं सहेगा? अर अब तक तैंनैं कभी भी दुख सहे नाहीं, कमलकी कर्णिका समान शरीर तेरा सो

कैसैं विषमभूमिके दुख सहेगा ? गहन वनविषैं कैसैं रात्रि पूरी करेगा ? अर प्रकट दृष्टि पड़े हैं शरीर के हाड अर नसाजाल जहां, ऐसे उग्रतप कैसैं करेगा ? अर पक्ष मास उपवास, दोषटाल परघर नीरस भोजन कैसैं करेगा ? तू महा तेजस्वी, शत्रुवोंकी सेनाके शब्द न सहि सकै, सो कैसैं नीच लोकनिके किए उपसर्ग सहेगा ? तब कृतांतवक्र बोला—हे देव ! जब मैं तिहारे स्नेहरूप अमृतकू ही तजवेकू समर्थ भया तो मुझे कहा विषम है। जब तक मृत्युरूप वज्रकरि यह देहरूप स्तंभ न चिगै ता पहिले मैं महादुःखरूप यह भववन अंधकारमई वाससू निकस्या चाहूं हूं। जो बलते घरमेंसे निकसै उसे दयावान न रोकै। यह संसार असार महानिंद्य है, इसे तजकरि आत्महित करू। अवश्य इष्टका वियोग होयगा या शरीरके योगकरि सर्व दुख हैं सो हमारे शरीर बहुरि उदय न आवै या उपायविषैं बुद्धि उद्यमी भई है। ये वचन कृतांतवक्रके सुन श्रीरामके आंसू आए अर नीठे नीठे मोहकू दाबि कहते भए-मेरीसी विभूतिकू तज तू तपके सन्मुख भया है सो धन्य है। जो कदाचित् या जन्मविषैं मोक्ष न होय अर देव होय तो संकटविषैं आय मोहि संबोधियो। हे मित्र ! जो तू मेरा उपकार जानै है तो देवगतिमें विस्मरण मत करियो।

तब कृतांतवक्रने नमस्कारकर कही, हे देव ! जो आप आज्ञा करोगे सोही होयगा। ऐसा कह सर्व आभूषण उतारे अर सकलभूषण केवलीकू प्रणामकरि अंतर बाहिरके परिग्रह तजे। कृतांतवक्र था सो सौम्यवक्र हो गया। सुन्दर है चेष्टा जाकी, इसको आदि दे अनेक महाराजा वैरागी भए। उपजी है जिनधर्मकी रुचि जिनके निर्ग्रंथव्रत धारते भए। अर कईएक श्रावक व्रतकू प्राप्त भए, अर कईएक सम्यक्त्वकू धारते भए। वह सभा, हर्षित होय रत्नत्रय आभूषणकरि शोभित भई। समस्त सुर असुर नर सकलभूषण स्वामीकू नमस्कारकरि अपने अपने स्थानक गए। अर कमलसमान हैं नेत्र जिनके, ऐसे श्रीराम सकलभूषण स्वामीकू अर समस्त साधुनिकू प्रणामकरि महा विनयरूपी सीताके समीप आए। कैसी है सीता ? महा निर्मल तपकरि तेज धरे। जैसी घृतकी आहूतिकरि अग्निकी शिखा

प्रज्वलित होय तैसी पापोंके भस्म करिवेकूं साक्षात् अग्निरूप तिष्ठी है। आर्यिकानिके मध्य तिष्ठती देखी, देदीप्यमान हैं किरणनिका समूह जाके, मानों अपूर्व चन्द्रकांति तारानिके मध्य तिष्ठी है, आर्यिकानिके व्रत धरे। अत्यन्त निश्चल है। तजे हैं आभूषण जाने, तथापि श्री ह्री धृति कीर्ति बुद्धि लक्ष्मी लज्जा इनकी शिरोमणि सोहै है। श्वेत वस्त्रकूं धरे कैसी सोहै है? मानों मंद पवनकर चलायमान है फेन कहिए झाग जाकैं, ऐसी पवित्र नदी ही है, अर मानों निर्मल शरद पूनोंकी चांदनी समान

शोभाकूं धरे समस्त आर्यिकारूप कुमुदनियोंकूं प्रफुल्लित करणहारी भासै है। महा वैराग्यकूं धरैं मूर्तिवंती जिनशासनकी देवता ही है। सो ऐसी सीताकूं देख आश्चर्यकूं प्राप्त भया है मन जिनका, ऐसे श्रीराम कल्पवृक्ष समान क्षणएक निश्चल होय रहे। स्थिर हैं नेत्र भृकुटी जिनकी, जैसे शरदकी मेघमालाके समीप कंचनगिरि सोहै तैसे श्रीराम आर्यिकानिके समीप भासते भए। श्रीराम चित्तविषै चितवते हैं यह साक्षात् चन्द्रकिरण भव्यजन कुमुदनीकूं प्रफुल्लित करणहारी सोहै है। बड़ा आश्चर्य है—यह कायर स्वभाव मेघके शब्दसे डरती सो अब महा तपस्विनी भयंकर वनविषै कैसे भयकूं न प्राप्त होयगी? नितम्बहीके भारसूं आलस्यरूप गमन करणहारी महा कोमलशरीर तपसूं विलाय जायगी। कहां यह कोमल शरीर, अर कहां यह दुर्धर जिनराजका तप? सो अति कठिन है। जो दाह बड़े २ वृक्षनिकूं दाहे, ताकरि कमलिनीकी कहा बात? यह सदा मनवांछित मनोहर आहारकी करणहारी, अब कैसैं यथालाभ भिक्षाकरि कालक्षेप करेगी? यह पुण्याधिकारिणी रात्रिविषैं स्वर्गके विमान समान सुन्दर महिलमें मनोहर सेजपर पौढ़ती, अर बीण, बांसुरी, मृदंगादि मंगल शब्दकरि निद्रा लेती,
सो अब भयंकर वनविषै कैसे रात्रि पूर्ण करैगी? वन तो डाभकी तीक्ष्ण अणियोंकर विषम अर सिंह व्याघ्रादिकके शब्दकरि डरावना। देखहु मेरी भूल जो मूढ़ लोकनिके अपवादसूं मैं महा सती पतिव्रता शीलवती सुन्दरी मधुर भाषिणी घरसे निकासी। या भांति चिंताके भारकरि पीड़ित श्रीराम पवन करि कम्पायमान कमल समान कम्पायमान होते भए। फिर केवलीके वचन चितार धीर्य धरि, आंसू

पीछे, शोकरहित होय महा विनयकरि सीताकूं नमस्कार किया। लक्ष्मण भी सौम्य है चित्त जाका, हाथ जोड़ि नमस्कारकरि राम सहित स्तुति करता भया। हे भगवती! धन्य, तू सती वदनीक है, सुन्दर है चेष्टा जाकी। जैसे धरा सुमेरुकूं धारै तैसे तू जिनराजका धर्म धारै है। तैनें जिनवचनरूप अमृत पीया उसकरि भवरोग निवारेगी, सम्यक्त ज्ञानरूप जहाजकरि संसार समुद्रकूं तिरैगी। जे पतिव्रता निर्मलचित्तकी धरणहारी हैं तिनकी यही गति है—अपनी आत्मा सुधारें, अर दोऊ लोक अर दोऊ कुल सुधारें। पवित्र चित्तकरि ऐसी क्रिया आदरी। हे उत्तम नियमकी धरणहारी! हम जो कोई अपराध किया होय सो क्षमा करियो। संसारी जीवनिके भाव अविवेकरूप होय हैं सो तू जिनमार्गविषै प्रवर्ती संसारकी माया अनित्य जानी, अर परम आनन्दरूप यह दशा जीवनिकूं दुर्लभ है। या भांति दोऊ भाई जानकीकी स्तुतिकरि लव अंकुशकूं आगे धरें। अनेक विद्याधर महीपाल तिनसहित अयोध्यामें प्रवेश करते भए, जैसे देवनिसहित इन्द्र अमरावतीमें प्रवेश करै। अर समस्त राणी नानाप्रकारके वाहन-निपर चढ़ी परिवारसहित नगरमें प्रवेश करती भई। सो रामकूं नगरमें प्रवेश करता देख मन्दिर ऊपर बैठी स्त्री परस्पर वार्ता करैं हैं यह श्रीरामचन्द्र महा शूरवीर, शुद्ध है अंतःकरण जिनका, महा विवेकी, मूढ़ लोकनिके अपवादसूं ऐसी पतिव्रता नारी खोई। तब कईयक कहती भई जे निर्मल कुलके जन्मे शूरवीर क्षत्री हैं तिनकी यही रीति है—किसी प्रकार कुलकूं कलंक न लगावें। लोकनिके संदेह दूर करिवे निमित्त रामने उसकूं दिव्य दई। वह निर्मल आत्मा दिव्यमें सांची होय लोकनिके संदेह मेटि जिनदीक्षा धारती भई। अर कोई कहै—हे सखी! जानकी विना राम कैसे दीखें हैं जैसे विना चांदनी चांद, अर दीप्ति विना सूर्य। तब कोई कहती भई यह आप ही महा कांतिधारी है इनकी कांति पराधीन नाहीं। अर कोई कहती भई सीताका वज्रचित्त है जो ऐसे पुरुषोत्तम पतिकूं छोड़ि जिन-दीक्षा धारी। तब कोई कहती भई धन्य है सीता जो अनर्थरूप गृहवासकूं तजि आत्मकल्याण किया। अर कोई कहती भई ऐसे सुकुमार दोऊ कुमार महा धीर लव अंकुश कैसे तजे गए? स्त्रीका प्रेम पति ८५८

सूं छूटैं, परन्तु अपने जाए पुत्रनिसूं न छूटैं। तब कोई कहती भई ये दोऊ पुत्र परम प्रतापी हैं इनका माता क्या करैगी ? इनका सहाई पुण्य ही है। अर सब ही जीव अपने अपने कर्मके आधीन हैं। या भांति नगरकी नारी वचनालाप करै हैं। जानकीकी कथा कौनकूं आनन्दकारिणी न होय, अर यह सबही रामके दर्शनकी अभिलाषिनी रामकूं देखती २ तृप्त न भई, जैसे भ्रमर कमलके मकरंदसूं तृप्त न होय। अर कईएक लक्ष्मणकी ओर देख कहती भई ये नरोत्तम नारायण लक्ष्मीवान अपने प्रतापकरि वश करी है पृथ्वी जिन्होंने, चक्रके धारक, उत्तम राज्य लक्ष्मीके स्वामी, वैरनिकी स्त्रीनिकूं विधवा करणहारे, रामके आज्ञाकारी हैं। या भांति दोनों भाई लोककरि प्रशंसा योग्य अपने मंदिरमें प्रवेश करते भए। जैसे देवेन्द्र देवलोकमें करैं। यह श्रीरामका चारित्र जो निरंतर धारण करैं सो अविनाशी लक्ष्मीकूं पावैं।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृतग्रन्थ ताकी भाषावचनिकाविषै कृतांतवक्रके वैराग्य वर्णन करनवाला एकसौ सातवां पर्व पूर्ण भया ॥१०७॥

अथानन्तर राजा श्रेणिक गौतम स्वामीके मुख श्रीरामका चरित्र सुन मनविषै विचारता भया कि सीताने लव अंकुश पुत्रनिसूं मोह तज्या सो वह सुकुमार मृगनेत्र निरंतर सुखके भोक्ता कैसै माताका वियोग सहि सकै ? ऐसे पराक्रमके धारक उदारचित्त तिनकूं भी इष्ट वियोग अनिष्ट संयोग होय है तो औरकी कहा बात ? यह विचार करि गणधर देवसूं पूछ्या, हे प्रभो ! मैं तिहारे प्रसादकरि राम लक्ष्मणका चरित्र सुण्या, अब बाकी लव अंकुशका सुण्या चाहूं हूं। तब इन्द्रभूति कहिए,
गौतम स्वामी कहते भए—हे राजन् ! काकंदी नाम नगरी, तामें राजा रतिवर्द्धन, राणी सुदर्शना, ताके पुत्र दोय एक प्रियंकर, दूजा हितंकर। अर मंत्री सर्वगुप्त राज्यलक्ष्मीका धुरंधर सो स्वामीद्रोही, राजाके मारिवेका उपाय चितवै। अर सर्वगुप्तकी विजयावती सो पापिनी राजासूं भोग किया चाहै। अर राजा शीलवान परदारापरांगमुख याकी मायाविषै न आया। तब याने राजासूं कही—मंत्री तुम

कू मारचा चाहे है सो राजाने याकी बात न मानी । तब यह पतिकू भरमावती भई—जो राजा तोहि
मार मोहि लिया चाहे है । तब मंत्री दुष्टने सब सामंत राजासू फोरे, अर राजाका जो सोवनेका
महिल तहां रात्रिकू अग्नि लगाई । सो राजा सदा सावधान हुता अर महिलविषै गोप्य सुरंग रखाई थी
सो सुरंगके मार्ग होय दोऊ पुत्र अर स्त्रीकू लेय राजा निकस्या । सो काशीका धनी राजा कश्यप
महा न्यायवान, उग्रवंशी राजा रतिवर्धनका सेवक था, ताके नगरकू राजा गोप्य चाल्या । अर सर्व-
गुप्त रतिवर्धनके सिंहासनपर बैठ्या । सबकू आज्ञाकारी किए । अर राजा कश्यपकू भी पत्र लिख
दूत पठाया कि तुम भी आय मोहि प्रणामकरि सेवाकरो । तब कश्यपने कही, हे दूत ! सर्वगुप्त स्वामी-
द्रोही है, सो दुर्गतिके दुःख भोगेगा, स्वामीद्रोहीका नाम न लीजे, मुख न देखिये, सो सेवा कैसे कीजे ?
ताने राजाकू दोऊ पुत्र अर स्त्री सहित अग्निमें जलाया सो स्वामिघात, स्त्रीघात, अर बालघात यह
महादोष उसने उपार्जे । तातैं ऐसे पापीका सेवन कैसे करिये ? जाका मुख न देखना । सो सर्व लोकनि-
के देखते उसका शिर काटि धनीका वैर लूंगा । तब यह वचन कहि दूत फेर दिया । दूतने जाय सर्व-
गुप्तकू सर्व वृत्तांत कहा । सो अनेक राजानिकरियुक्त महासेनासहित कश्यप ऊपर आया । सो आय-
करि कश्यपका देश घेरा, काशीके चौगिर्द सेना पडी तथापि कश्यपके सुलहकी इच्छा नाहीं, युद्धहीका
निश्चय । अर राजा रतिवर्धन रात्रिकेविषै काशीके वनविषै आया । अर एक द्वारपाल तरुण कश्यप
पर भेजा सो जाय कश्यपसू राजाके आवनेका वृत्तांत कहता भया । सो कश्यप अतिप्रसन्न भया अर
कहां महाराज ! कहां महाराज ! ऐसे वचन बारम्बार कहता भया । तब द्वारपालने कह्या, महाराज ८६०
वनविषै तिष्ठे हैं । तब यह धर्मी स्वामिभक्त अतिहर्षित होय परिवार सहित राजापै गया अर उसकी
आरती करी, अर पाव पडकरि जय जयकार करता नगरमें लाया, नगर उछाला । अर यह ध्वनि
नगरविषै विस्तरी कि जो काहूसू न जीत्या जाय ऐसा रतिवर्धन राजेन्द्र जयवंत होहू । राजा कश्यपने
धनीके आवनेका अति उत्सव किया । अर सब सेनाके सामंतनिकू कहाय भेज्या जो स्वामी तो विद्य-

मान तिष्ठै है अर तुम स्वामीद्रोहीके साथ होय स्वामीसूं लडोगे, कहा यह तुमकूं उचित है ?

तब वह सकल सामंत सर्वगुप्तकूं छोडि स्वामीपै आए। अर युद्धविषैं सर्वगुप्तकूं जीवता पकडि काकंदी नगरीका राज्य रतिवर्धनके हाथविषैं आया। राजा जीवता बच्या सो बहुरि जन्मोत्सव किया, महा दान किए, सामंतनिके सन्मान किए, भगवान्की विशेष पूजा करी, कश्यपका बहुत सन्मान किया, अति बधाया, अर घरकूं विदा किया। सो कश्यप काशीकेविषैं लोकपालनिकी नाईं रमै। अर सर्वगुप्त सर्वलोकनिंद्य मृतकके तुल्य भया कोई भोटै नाहीं, मुख देखे नाहीं। तब सर्वगुप्तने अपने स्त्री विजयावतीका दोष सर्वत्र प्रकाशा, जो यानैं राजाबीच अर मो बीच अन्तर डाह्या। यह वृत्तांत सुन विजयावती अति द्वेषकूं प्राप्त भई—जो मैं न राजाकी भई, न धनीकी भई। सो मिथ्या तपकरि राक्षसी भई, अर राजा रतिवर्धनने भोगनितैं उदास होय सुभानुस्वामीके निकट मुनिव्रत धरे। सो राक्षसीने रतिवर्धन मुनिकूं अत्यन्त उपसर्ग किए। मुनि शुद्धोपयोगके प्रसादतैं केवली भए। प्रियंकर हितंकर दोनों कुमार पहिले याही नगरविषैं वामदेव नामा विप्रके श्यामली स्त्रीके सुदेव वसुदेव नामा पुत्र हुते। सो वसुदेवकी स्त्री विश्वा अर सुदेवकी स्त्री प्रियंगु। इनका गृहस्थ पद प्रशंसा योग्य हुता। इन श्रीतिलकनामा मुनिकूं आहारदान दिया सो दानके प्रभावकरि दोनों भाई स्त्रीसहित उत्तरकुरु भोगभूमिविषैं उपजे, तीनपल्यकी आयु भई। साधुका जो दान सोई भया वृक्ष, ताके महाफल भोगभूमिविषैं भोगि दूजे स्वर्ग देव भए। वहां सुख भोगि चये सो सम्यग्ज्ञानरूप लक्ष्मी करि मंडित पाप कर्मके क्षय करणहारे प्रियंकर हितंकर भये। मुनि होय ग्रैवेयक गये। तहांतैं चयकरि लवणांकुश भये, महाभव्य, तद्भव मोक्षगामी। अर राजा रतिवर्धनकी राणी सुदर्शना प्रियंकर हितंकरकी माता पुत्रनिसे जाका अत्यन्त अनुराग था सो भरतार अर पुत्रनिके वियोगतैं अत्यन्त आर्तरूप होय नाना योनिमें भ्रमणकरि किसी एक जन्मविषैं पुण्य उपार्ज, यह सिद्धार्थ भया, धर्मविषैं अनुरागी, सर्वविद्याविषैं निपुण। सो पूर्व भवके स्नेहसूं लव अंकुशकूं पढाए। ऐसे निपुण किए जो देवनिकरि भी न जीते ८६१

जांय। यह कथा गौतम स्वामीने राजा श्रेणिकसूं कही। अर आज्ञाकारी हे नृप! यह संसार असार है। अर इस जीवके कौन कौन माता पिता न भये? जगतके सबही सम्बन्ध झूठे हैं एक धर्म हीका सम्बन्ध सत्य है। इसलिये विवेकिनिकूं धर्महीका यत्न करना, जिसकरि संसारके दुखनिसूं छूटैं। समस्त कर्म महानिंद्य, दुःखकी वृद्धिके कारण, तिनकूं तजकरि जैनका भाष्या तपकरि अनेक सूर्यकी कांतिकूं जीत साधु शिवपुर कहिये मुक्ति तहां जाय हैं।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रन्थ, ताकी भाषा वचनिकाविषैं लवणांकुशके पूर्व भवका वर्णन करनेवाला एकसौ आठवां पर्व पूर्ण भया ।। १०८ ।।

अथानन्तर सीता पति अर पुत्रनिकूं तजकरि कहां कहां तप करती भई सो सुनहु—कैसी है सीता? लोकविषैं प्रसिद्ध है यश जाका। जिस समय सीता भई वह श्रीमुनिसुव्रतनाथजीका समय था। तेबीसवें भगवान् महा शोभायमान, भवभ्रमके निवारणहारे, जैसा अरहनाथ अर मल्लिनाथका समय तैसा मुनिसुव्रतनाथका समय, ताविषैं श्रीसकल भूषण केवली केवलज्ञानकरि लोकालोकके ज्ञाता विहार करैं हैं। अनेक जीव महाव्रत किए, सकल अयोध्याके लोक जिनधर्मविषैं निपुण विधिपूर्वक गृहस्थका धर्म आराधैं। सकल प्रजा भगवान् श्रीसकलभूषणके वचनविषैं श्रद्धावान। जैसैं चक्रवर्तीकी आज्ञाकूं पालैं तैसैं भगवान धर्मचक्री तिनकी आज्ञा भव्य जीव पालैं। रामका राज्य महाधर्मका उद्योतरूप जा समय घनैं लोक विवेकी साधुसेवाविषैं तत्पर। देखहु जो सीता अपनी मनोग्यताकरि देवांगनानिकी शोभाकूं जीतती हुती सो तपकरि ऐसी होय गई मानों दग्ध भई माधुरी लता ही है। महा वैराग्यकरि मंडित अशुभ भावकरि रहित, स्त्री पर्यायकूं अतिनिन्दती, महातप करती भई। धूरकर धूसर होय रहे हैं केश जाके, अर स्नानरहित, शरीरके संस्काररहित, पसेवकरि युक्त गात्र, जाविषैं रज आय पड़े सो शरीर मलिन होय रहा है। बेला तेला पक्ष उपवासकरि तनु क्षीण किया, दोष टारि शास्त्रोक्त पारणा

करैं। शीलव्रत गुणनिविषै अनुरागिणी, अध्यात्मके विचारकरि अत्यन्त शांत होय गया है चित्त जाका वश किये हैं इन्द्रिय जानैं, औरनितैं न बनै ऐसा उग्रतप करती भई। मांस अर रुधिरकरि वर्जित भया है सब अंग जाका, प्रकट नजर आवे है अस्थि अर नशाजाल जाके, मानों काठकी पुतली ही है। सूखी नदी समान भासती भई। बैठ गये हैं कपोल जाके, जूड़ा प्रमाण धरती देखती चलै, महा दयावन्ती, सौम्य है दृष्टि जाकी, तपका कारण देह ताके समाधानके अर्थि विधिपूर्वक भिक्षावृत्तिकरि आहार करैं। ऐसा तप किया कि शरीर और ही होय गया। अपना पराया कोई न जानैं जो यह सीता है। इसे ऐसा तप करती देख सकल आर्या याहीकी कथा करैं, याहीकी रीति देखि और हू आदरैं, सबनि-विषै मुख्य भई। या भांति बासठ वर्ष महा तप कीए। अर तेतीस दिन आयुके बाकी रहे तब अनशन व्रत धार परम आराधना आराधि, जैसैं पुष्पादिक उच्छिष्ट साथरेकूं तजिये तैसे शरीरकूं तजकरि अच्युतस्वर्गविषै प्रतीन्द्र भई।

गौतम स्वामी कहे हैं, हे श्रेणिक! जिनधर्मका महात्म्य देखो जो यह प्राणी स्त्री पर्यायविषैं उपजी हुती सो तप के प्रभावकरि देवोंका प्रभु होय सीता अच्युतस्वर्गविषै प्रतीन्द्र भई। वहां मणिनिकी कांतिकरि उद्योत किया है आकाशविषैं जाने ऐसे विमानविषै उपजी, मणि कांचनादि महाद्रव्यनिकरि मंडित, विचित्रता धरे, परम अद्‌भुत सुमेरुके शिखर समान ऊंचा है, वहां परम ईश्वरताकरि, संपन्न प्रतेन्द्र भया। हजारों देवांगना तिनके नेत्रोंका आश्रय, जैसा तारावोंकरि मंडित चन्द्रमा सोहे तैसा सोहता भया। अर भगवानकी पूजा करता भया। मध्यलोकमें आय तीर्थोंकी यात्रा, साधुवोंकी सेवा करता भया अर तीर्थंकरोंके समोसरणमें गणधरोंके मुखसूं धर्म श्रवण करता भया। यह कथा सुनि गौतमस्वामीसूं राजा श्रेणिक पूछी—हे प्रभो! सीताका जीव सोलहवें स्वर्ग प्रतेन्द्र भया उस समय वहां इन्द्र कौन था? तब गौतमस्वामी ने कही उस समय वहां राजा मधुका जीव इन्द्र था। उसके निकट यह आया, सो वह मधुका जीव नेमिनाथ स्वामीके समय अच्युतेन्द्रपदसूं चयकरि वासुदेवकी रुक्मणी

राणी ताके प्रद्युम्न पुत्र भया अर उसका भाई कैटभ जाम्बुवतीके शम्भु नामा पुत्र भया। तब श्रेणिकने गौतम स्वामीसूं विनती करी हे प्रभो! मैं तुम्हारे वचनरूप अमृत पीवता पीवता तृप्त नाहीं, जैसे लोभी जीव धनसूं तृप्त नाहीं। इसलिए मुझे मधुका अर उसके भाई कैटभका चरित्र कहो। तब गणधर कहते भए–एक मगधनामा देश सर्व धान्यकरि पूर्ण, जहाँ चारों वर्ण हर्षसूं बसें, धर्म काम अर्थ मोक्षके साधन अनेक पुरुष पाइए, अर भगवानके सुन्दर चैत्यालय, अर अनेक नगर ग्राम तिनकरि वह देश शोभित, जहां नदियोंके तट गिरियोंके शिखर वनमें ठौर ठौर साधुवोंके संघ विराजे हैं। राजा नित्योदित राज्य करै। उस देशमें एक शालि नाम ग्राम, नगर सारिखा शोभित, वहां एक ब्राह्मण सोमदेव, उसके स्त्री अग्निला, पुत्र अग्निभूत वायुभूत सो वे दोनों भाई लौकिक शास्त्रमें प्रवीण अर पठन पाठन दान प्रतिग्रहमें निपुण, अर कुलके तथा विद्याके गर्वकरि गर्वित, मनविषै ऐसा जानें-हमतें अधिक कोई नाहीं। जिनधर्मतें परांगमुख, रोग समान इन्द्रिनिके भोग तिनहीकूं भले जानैं। एक दिन स्वामी नन्दीवर्धन अनेक मुनिनिसहित वनविषै आय विराजे, बड़े आचार्य अवधिज्ञानकरि समस्त मूर्तिक पदार्थनिकूं जानैं। सो मुनिनिका आगमन सुनि ग्रामके लोक सब दर्शनकूं आए हुते अर अग्निभूत वायुभूतने काहूसूं पूछी जो यह लोक कहां जाय हैं? तब वाने कही नन्दीवर्धन मुनि आए हैं तिनके दर्शनकूं जाय हैं। तब सुनकरि दोऊ भाई क्रोधायमान भए जो हम वादकरि साधुनिकूं जीतेंगे। तब इनकूं माता पिताने मना किया जो तुम साधुनितैं वाद न करो, तथापि इन्होंने न मानी। वादकूं गए। तब इनकूं आचार्यके निकट जाते देखि एक सात्विकनामा मुनि अवधिज्ञानी इनकूं पूछते भए–तुम कहां जावो हो? तब इन्होंने कही तुमविषै श्रेष्ठ तुम्हारा गुरु है, उसकूं वादकरि जीतवे जाय हैं। तब सात्विक मुनिने कही हमसूं चर्चा करो। तब यह क्रोधकरि मुनिके समीप बैठे अर कही तू कहांतैं आया है। तब मुनिने कही तुम कहांतैं आए? तब वह क्रोधकरि कहते भए यह तैं कहा पूछी? हम ग्रामतैं आए हैं। कोई शास्त्रकी चर्चा करहु। तब मुनिने कही यह तो हम जानैं हैं तुम शालिग्रामसूं आए

है अर तिहारे बापका नाम सोमदेव, माताका नाम अग्निला, अर तिहारे नाम अग्निभूत वायुभूत। तुम विप्रकुल हो, सो यह तो प्रकट है परन्तु हम तुमसूं यह पूछै हैं–अनादिकालके भववनविषै भ्रमण करो हो सो या जन्मविषै कौन जन्मसूं आए हो ? तब इनने कही यह जन्मांतरकी बात हमकूं पूछो सो और कोई जानै है ? तब मुनिने कही हम जानै हैं, तुम सुनो। पूर्वभवविषै तुम दोऊ भाई या ग्रामके वनविषै परस्पर स्नेह के धारक स्याल हुते, विरूपमुख। अर याही ग्रामविषै एक बहुत दिनका वासी पामर नामा पितहड ब्राह्मण, सो वह खेतविषै सूर्य अस्त समय क्षुधाकरि पीडित नाडी आदि उपकरण तजकरि आया। अर अंजनगिरि तुल्य मेघ माला उठी। सात दिन अहो रात्रका झड भया। सो पामर तो घर से आय न सक्या। अर वे दोऊ स्याल अति क्षुधातुर अंधेरी रात्रिविषै आहारकूं निकसे। सो पामरके खेतविषै भीजी नाडी कर्दमकरि लिप्त पडी हुती सो उन भक्षण करी। उसकरि विकराल उदर वेदना उपजी, स्याल मूवे, अकाम निर्जराकरि तुम सोमदेवके पुत्र भए। अर वह पामर सात दिन पीछे खेत में आया सो दोऊ स्याल मूए देखि अर नाडी कटी देखि स्यालनिकी चर्म ले भाथडी करी सो अबतक पामरके घरविषै टंगी है। अर पामर मरकरि पुत्रके घर पुत्र भया सो जातिस्मरण होय मौन पकड्या जो मैं कहा कहों ? पिता तो मेरा पूर्वभवका पुत्र अर माता पूर्व भवकी पुत्रकी वधू तातैं न बोलना ही भला। सो यह पामरका जीव मौनो यहां ही बैठा है। ऐसा कहि मुनि पामरकेजीवसूं बोले–अहो तू पुत्रके पुत्र भया सो यह आश्चर्य नाहीं, संसारका ऐसा ही चरित्र है। जैसैं नृत्यके अखाड़ेमें बहुरूपिया अनेक रूप बनाय नाचै, तैसैं यह जीव नाना पर्यायरूप भेष धर नाचै है, राजातैं रंक होय, रंकसूं राजा होय, स्वामीसूं सेवक, सेवकसूं स्वामी, पितासूं पुत्र, पुत्रसूं पिता, मातासूं भार्या, भार्यासूं माता। यह संसार अरहटकी घड़ी है। ऊपरली नीचे, नीचली ऊपर, ऐसा संसारका स्वरूप जान, हे वत्स ! अब तू गूंगापन तजि वचनालाप करहु। या जन्मका पिता है तासे पिता कहि, मातासूं माता कहि। पूर्वभवका कहा व्यवहार रहा ? यह वचन सुन वह विप्र हर्षकरि रोमांच होय फूल गए हैं नेत्र

जाके मुनिकूं तीन प्रदक्षिणा देय नमस्कारकरि जैसैं वृक्षकी जड उखड़ जाय अर गिर पड़े तैसैं पायन पड्या। अर मुनिकूं कहता भया–हे प्रभो! तुम सर्वज्ञ हो, सकल लोककी व्यवस्था जानो हो या भयानक संसार सागरविषैं मैं डूबूं था सो तुम दयाकरि निकास्या, आत्मबोध दिया। मेरे मनकी सब जानी। अब मोहि दीक्षा देवहु ऐसा कहकरि समस्त कुटुम्बका त्यागकरि मुनि भया।

यह पामरका चरित्र सुन अनेक लोक मुनि भए, अनेक श्रावक भए, अर इन दोनों भाईनिकी पूर्वभवकी खाल लोक ले आए सो इननने देखी, लोकोंने हास्य करी जो यह मांसके भक्षक स्याल थे सो यह दोऊ भाई द्विज बड़े मूर्ख जो मुनिनिसूं वाद करने आए। ये महामुनि तपोधन, शुद्धभाव, सबके गुरु, अहिंसा महाव्रतके धारक, इन समान और नाहीं, यह महामुनि महाव्रतरूप शिक्षाके धारक, क्षमारूप यज्ञोपवीत धरें, ध्यानरूप अग्निहोत्रके कर्ता महाशांत मुक्तिके साधनविषैं तत्पर। अर जे सर्व आरम्भविषैं प्रवरतैं ब्रह्मचर्यरहित वे मुखसूं कहैं हैं कि हम द्विज हैं परन्तु क्रिया करे नाहीं। जैसे कोई मनुष्य या लोकमें सिंह कहावै, देव कहावै, परन्तु वह सिंह देव नाहीं, तैसे यह नाममात्र ब्राह्मण कहावैं परन्तु इनमें ब्रह्मत्व नाहीं। अर मुनिराज धन्य हैं परम संयमी महा क्षमावान् तपस्वी जितेन्द्री निश्चय थकी ये ही ब्राह्मण हैं। ये साधु महाभद्रपरणामी भगवतके भक्त, महा तपस्वी, यति, धीर, वीर, मूलगुण उत्तरगुणके पालक, इन समान और कोऊ नाहीं। यह अलौकिक गुण लिए हैं। अर इनहीकूं परिव्राजक कहिए, काहेतैं? जो वह संसारकूं तजि मुक्तिकूं प्राप्त होय ये निर्ग्रंथ, अज्ञान, तिमिरके हर्ता तपकरि कर्मनिकी निर्जरा करैं हैं। क्षीण किए हैं रागादिक जिन्होंने महाक्षमावान पापनिके नाशक
तातैं इनकूं क्षपणक हू कहिए। यह संयमी कषायरहित शरीरतैं निर्मोह दिगम्बर योगीश्वर ध्यानी ज्ञानी पंडित निस्पृह सो ही सदा वंदिवे योग्य हैं। ए निर्वाणकूं साधैं तातैं ये साधु कहिए। अर पंच आचारकूं आप आचरैं औरनिकूं आचरावैं तातैं आचार्य कहिए। आगार कहिए घर ताके त्यागी, तातैं अनगार कहिए। शुद्ध भिक्षाके ग्राहक तातैं भिक्षुक कहिए। अति कायक्लेशकरि अशुभकर्मके

त्यागी, उज्ज्वल क्रियाके कर्ता, तप करते खेद न मानैं तातैं श्रमण कहिए। आत्मस्वरूपकूं प्रत्यक्ष अनुभवै तातैं मुनि कहिए। रागादिक रोगोंके हरिवेका यत्न करैं तातैं यति कहिए। या भांति लोकनिने साधकी स्तुति करी अर इन दोनों भाईनिकी निंदा करी। तब यह मानरहित बिलखे होय घर गए रात्रिकेविषै पापी मुनिके मारिवेकूं आए। अर वे सात्विक मुनि अपरिग्रही संघकूं तजि अकेले मसान भूमिविषै अस्थ्यादिकसूं दूर एकांत पवित्र भूमिमें विराजे थे। कैसी है वह भूमि? जहां रीछ व्याघ्र आदि दुष्ट जीवोंका नाद होय रहा है। अर राक्षस भूत पिशाचोंकरि भरचा है, नागोंका निवास है, अंधकाररूप भयंकर। तहां शुद्ध शिला जीव जन्तुरहित उसपर कायोत्सर्ग धरि खड़े थे। सो उन पापियों ने देखे। दोनों भाई खड्ग काढि क्रोधायमान होय कहते भए जब तो तोहि लोकोंने बचाया अब कौन बचावेगा? हम पंडित पृथ्वीविषै श्रेष्ठ, प्रत्यक्ष देवता, तू निर्लज्ज हमकूं स्याल कहै। यह शब्द कहि दोनों अत्यन्त प्रचंड होठ डसते लाल नेत्र दयारहित मुनिके मारिवेकूं उद्यमी भए। तब वनका रक्षक यक्ष उसने देखे, मनविषैं चितवता भया--देखो ऐसैं निर्दोष साधु ध्यानी कायासूं निर्ममत्व तिनके मारिवेकूं उद्यमी भए। तब यक्षने इन दोनों भाईकूं कीले, सो हलचल सकैं नाहीं, दोनों पसवारे खड़े। प्रभात भया, सकल लोक आए, देखें तो यह दोनों मुनिके पसवारे कीले खड़े हैं। अर इनके हाथविषै नंगी तलवार है। तब इनकूं सब लोक धिक्कार धिक्कार कहते भए। यह दुराचारी पापी अन्याई ऐसा कर्म करनेकूं उद्यमी भए इन समान अर पापी नाहीं। और यह दोनों चित्तविषै चितवते भए जो यह धर्म का प्रभाव है हम पापी थे सो बलात्कार कीले, स्थावरसम करि डारे। अब या अवस्थासूं जीवते बचें तो श्रावकके व्रत आदरें। अर उस ही समय इनके माता पिता आए बारम्बार मुनिकूं प्रणामकरि विनती करते भए-हे देव! यह कपूत पुत्र हैं। इन्होंने बहुत बुरी करी। आप दयालु हो, जीवदान देवो। तब साधु बोले हमारे काहूसूं कोप नाहीं, हमारे सब मित्र बांधव हैं। तब यक्ष लाल नेत्रकरि अति गुंजारसूं बोल्या अर सबोंके समीप सर्व वृत्तांत कह्या कि जो प्राणी साधुवोंकी निंदा करें सो

अनर्थकूं प्राप्त होवें। जैसे निर्मल कांचविषैं बाका मुखकरि निरखैं तो बांका ही दीखै, तैसे जो साधुवों कूं जैसा भावकरि देखैं तैसा ही फल पावै। जो मुनियोंकी हास्य करै सो बहुत दिन रुदन करै। अर कठोर वचन कहै सो क्लेश भोगवै, अर मुनिका वध करै जो अनेक कुमरण पावै, द्वेष करै सो पाप उपार्जे, भव भव दुख भोगवै। अर जैसा करै तैसा फल पावै यक्ष कहै है, हे विप्र! तेरे पुत्रोंके दोषकरि मैं कीले हैं, विद्याके मानकरि गर्वित मायाचारी दुराचारी संयमियोंके घातक हैं। ऐसे वचन यक्षने कहे। तब सोमदेव विप्र हाथ जोड़ि साधुकी स्तुति करता भया, अर रुदन करता भया। आपकूं निंदता छाती कूटता, ऊर्ध्व भुजाकरि स्त्रीसहित विलाप करता भया। तब मुनि परम दयालु यक्षकूं कहते भए-हे सुन्दर! हे कमल नेत्र! यह बालवुद्धि है, इनका अपराध तुम क्षमा करो। तुम जिनशासनके सेवक हो, सदा जिनशासनकी प्रभावना करो हो, तातैं मेरे कहेसूं इनकूं क्षमा करो। तब यक्षने कही आप कही सो ही प्रमाण। वे दोनों भाई छोड़े। तब यह दोनों भाई मुनिकूं प्रदक्षिणा देय नमस्कारकार साधुका व्रत धरिवेकूं असमर्थ, तातैं सम्यक्सहित श्रावकके व्रत आदरते भए। जिनधर्मकी श्रद्धा के धारक भए। अर इनके माता पिता व्रत ले छोडते भए सो वे तो अव्रतके योगसूं पहिले नरक गये अर यह दोनों विप्रपुत्र निसंदेह जिनशासन रूप अमृतका पानकरि हिंसाका मार्ग विषवत् तजते भए। समाधिमरणकरि पहिलेस्वर्ग उत्कृष्ट देव भए। वहांसूं चयकरि अयोध्याविषैं समुद्र सेठ, उसके धारणी स्त्री, उसकी कुक्षिविषैं उपजे, नेत्रनिकूं आनन्दकारी, एकका नाम पूर्णभद्र, दूजेका नाम कांचनभद्र। सो श्रावकके व्रत धारि पहिले स्वर्ग गए। अर ब्राह्मण के भवके इनके पिता माता पापके योगसूं नरक गए हुते वे नरकसूं निकसि चांडाल अर कूकरी भए वे पूर्णभद्र अर कांचनभद्रके उपदेशसूं जिनधर्मका आराधन करते भए, समाधिमरणकरि सोमदेव द्विजका जीव चांडालसूं नन्दीश्वर द्वीपका अधिपति देव भया, अर अग्निला ब्राह्मणीका जीव कूकरीसूं अयोध्याके राजाकी पुत्री होय उस देवके उपदेशसूं विवाहका त्यागकरि आर्यिका होय उत्तम गति गई। वे दोनों परम्पराय मोक्ष पावेंगे।

अर पूर्णभद्र कांचनभद्रका जीव प्रथम स्वर्गसूं चयकरि अयोध्याका राजा हेम, राणी अमरावती, तिसके मधु कैटभ नामा पुत्र जगत् विख्यात भए। जिनकूं कोई जीत न सकै, महा प्रबल, महा रूपवान, जिन्होंने यह समस्त पृथ्वी वश करी। सब राजा तिनके आधीन भए। भीम नाम राजा गढ़के बलकरि इनकी आज्ञा न मानैं। जैसैं चमरेन्द्र असुर कुमारनिका इन्द्र नन्दनवनकूं पाय प्रफुल्लित होय है तैसैं वह अपने स्थानके बलकरि प्रफुल्लित रहै। अर एक वीरसेन नाम राजा वटपुरका धनी, मधु कैटभका सेवक, उसने मधु कैटभकूं विनती पत्र लिख्या—हे प्रभो! भीमरूप अग्निने मेरा देशरूप वन भस्म किया। तब मधु क्रोधकरि बडी सेनासूं भीम ऊपरि चढ्या, सो मार्गविषै वटपुर जाय डेरा किए। वीरसेनने सम्मुख जाय अति भक्तिकरि मिहमानी करी। उसके स्त्री चन्द्रमा समान है वदन जाका, सो वीरसेन मूर्खने उसके हाथ मधुका आरत्या कराया, अर उसहीके हाथ जिमाया। चन्द्राभाने पतिसूं घनी ही कही जो अपने घरविषै सुन्दर वस्तु होय सो राजाकूं न दिखाइए, पतिने न मानी। राजा मधु चन्द्राभाकूं देखि मोहित भया। मनविषै विचारी इस सहित विंध्याचलके वनका वास भला अर या बिना सब भूमिका राज्य भी भला नाहीं। सो राजा अन्याय ऊपर आया। तब मंत्रीने समझाया—अबार यह बात करोगे तो कार्य सिद्ध न होयगा, अर राज्य भ्रष्ट होयगा। तब राजा मंत्रियोंके कहेसूं राजा वीरसेनकूं लार लेय भीमपै गया। उसे युद्धविषै जीत वशीभूत किया अर और सब राजा वश किए। बहुरि अयोध्या आय चन्द्राभाके लेयवेका उपाय चिंतया। सर्व राजा वसंतकी क्रीडाके अर्थ स्त्रीसहित बुलाये। अर ८६
वीरसेनकूं चन्द्राभासहित बुलाया, तब हू चन्द्राभाने कही कि मुझे मत ले चलो, सो न मानी, ले ही आया। राजाने मासपर्यंत वनविषै क्रीड़ा करी। अर राजा आए थे तिनकूं दान सन्मानकरि स्त्रियों सहित विदा किए। अर वीरसेनकूं कैयक दिन राख्या अर वीरसेनकूं भी अतिदान सन्मानकरि विदा किया। अर चन्द्राभाके निमित्त कही इनके निमित्त अद्भुत आभूषण बनवाए हैं सो अभी बन नहीं चुके हैं। तातैं इनकूं तिहारे पीछे विदा करेंगे। सो वह भोला कुछ समझे नाहीं, घर गया। वाके गए

पीछे मधुने चन्द्राभाकूं महलविषै बुलाया। अभिषेककरि पटराणीपद दिया, सब राणियोंके ऊपर करी। भोगकरि अंध भया है मन जिसका, इसे राखि आपकूं इन्द्र समान मानता भया। अर वीरसेन ने सुना कि चन्द्राभा मधुने राखी तब पागल होय कैयक दिनविषै मंडवनामा तापसका शिष्य होय पंचाग्नि तप करता भया। अर एक दिन राजा मधु न्यायके आसन बैठ्या सो एक परदारारतका न्याय आया। सो राजा न्यायविषै बहुत देरतक बैठे रहे। बहुरि मन्दिरविषै गए, तब चन्द्राभाने हंसकरि कही महाराज! आज घनी देर क्यों लागी? हम क्षुधाकरि खेदखिन्न भईं। आप भोजन करो तो पीछे भोजन करूं। तब राजा मधुने कही आज एक परनारीरतका न्याय आय पड्या, तातैं देर लागी। तब चन्द्राभाने हंसकरि कही जो परस्त्रीरत होय उसकी बहुत मानता करनी। तब राजाने क्रोधकरि कह्या तुम यह क्या कही जे दुष्ट? व्यभिचारी हैं तिनका निग्रह करना। जे परस्त्रीका स्पर्श करैं ते पापी हैं। सेवन करैं तिनकी कहा बात? ऐसे कर्म करैं तिनकूं महादण्ड दे नगरसूं काढने। जे अन्याय मार्गी हैं वे महा पापी नरकविषै पड़ै हैं। अर राजाओंके दंड योग्य हैं तिनका मान कहा? तब राणी चन्द्राभा राजाकूं कहती भई–हे नृप! यह परदारा सेवन महा दोष है तो तुम आपकूं दंड क्यों न देवो? तुमही परदाररत हो तो औरोंकूं कहा दोष? जैसा राजा तैसी प्रजा। जहां राजा हिंसक होय अर व्यभिचारी होय तहां न्याय कैसा? तातैं चुप होय रहो। जिस जलकरि बीज उगै अर जगत् जीवै, सो जलही जो जलाय मारे तो और शीतल करणहारा कौन? ऐसे उलाहनाके वचन चन्द्राभाके सुन राजा कहता भया–हे देवी! तुम कहो हो सो ही सत्य। बारम्बार इसकी प्रशंसा करी, अर कहा मैं पापी लक्ष्मीरूप पाशकरि बेढ्या विषयरूप कीचविषै फंस्या, अब इस दोषसूं कैसे छूटूं? राजा ऐसा विचार करै है। अर अयोध्याके सहश्रीनामा वनविषै महासंघसहित सिंहपाद नामा मुनि आए। राजा सुनकरि रणवाससहित अर लोकूंसहित मुनिके दर्शनकूं गया। विधिपूर्वक तीन प्रदक्षिणा देय प्रणामकरि भूमिविषै बैठ्या, जिनेंद्रका धर्म श्रवणकरि भोगोंसूं विरक्त होय मुनि भया। अर राणी चन्द्राभा बड़े राजाकी बेटी रूपकरि

अतुल्य, सो राज विभूति तजि आर्यिका भई। दुर्गतिकी वेदनाका है अधिक भय जिसकूं। अर मधुका भाई कैंटभ राजकूं विनाशीक जान महा व्रतधरि मुनि भया। दोऊ भाई महा तपस्वी पृथ्वीविषै विहार करते भए अर सकल स्वजन परजनके नेत्रनिकूं आनन्दका कारण मधुका पुत्र कुलवर्धन अयोध्याका राज्य करता भया, अर मधु सैकड़ों बरस व्रत पाल दर्शन ज्ञान चारित्र तप यही चार आराधना आराधि समाधिमरणकरि सोलहवां अच्युतनामा स्वर्ग वहां अच्युतेन्द्र भया। अर कैंटभ पन्द्रहवां आरण नामा स्वर्ग वहां आरणेन्द्र भया। गौतम स्वामी कहैं हैं—हे श्रेणिक! यह जिनशासनका प्रभाव जानो जो ऐसे अनाचारी भी अनाचारका त्यागकरि अच्युतेन्द्र पद पावैं अथवा इन्द्र पदका कहा आश्चर्य? जिनधर्मके प्रसादसूं मोक्ष पावैं। मधुका जीव अच्युतेन्द्र था उसके समीप सीताका जीव प्रतेन्द्र भया, अर मधुका जीव स्वर्गसूं चयकरि श्रीकृष्णकी रुक्मिणी राणीके प्रद्युम्न नामा पुत्र कामदेव होय, मोक्ष लहो अर कैंटभका जीव कृष्णकी जाम्बवंती राणीके शम्भुकुमारनामा पुत्र होय परम धामकूं प्राप्त भया। यह मधुका व्याख्यान तुझे कह्या। अब हे श्रेणिक! बुद्धिवंतोंके मनकूं प्रिय ऐसे लक्ष्मणके अष्ट पुत्र महा धीर वीर तिनका चरित्र पापोंका नाश करणहारा चित्त लगाय सुनहु।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रन्थ, ताकी भाषा वचनिकाविषै राजा मधुका वैराग्य वर्णन करनेवाला एकसौ नौवां पर्व पूर्ण भया ॥ १०९ ॥

अथानन्तर कांचन स्थान नामा नगर, वहां राजा कांचनरथ, उसकी राणी शतह्रदा, ताके पुत्री दोय, अति रूपवती, रूपके गर्वकरि महा गर्वित, तिनके स्वयंबरके अर्थ अनेक राजा भूचर खेचर तिनके पुत्र कन्याके पिताने पत्र लिख दूत भेजि शीघ्र बुलाए। सो दूत प्रथम ही अयोध्या पठाया। अर पत्रविषै लिख्या मेरी पुत्रियोंका स्वयंबर है सो आप कृपाकरि कुमारोंकूं शीघ्र पठावो। तब राम लक्ष्मणने प्रसन्न होय परम ऋद्धियुक्त सर्व सुत पठाए। दोनों भाइयोंके सकल कुमार लव अंकुशकूं अग्रेसर-

करि परस्पर महा प्रेमके भरे कांचनस्थानपुरकूं चाले। सैकड़ों विमानविषै बैठे अनेक विद्याधर लार, रूपकरि लक्ष्मीकरि देवनि सारिखे आकाशके मार्ग गमन करते भये सो बड़ी सेना सहित आकाशसूं पृथ्वीकूं देखते जावें, कांचनस्थानपुर पहुंचे। वहां दोनों श्रेणियोंके विद्याधर राजकुमार आये थे सो यथायोग्य तिष्ठे। जैसें इन्द्रकी सभाविषै नानाप्रकारके आभूषण पहिरे देव तिष्ठैं, अर नन्दनवनविषै देव नानाप्रकारकी चेष्टा करें, चेष्टा तैसे करते थे। अर वे दोनों कन्या मन्दाकनी अर चन्द्रवक्रा मंगल स्नानकरि सर्व आभूषण पहिरे। निज वाससूं रथ चढ़ी निकसी, मानों साक्षात् लक्ष्मी अर लज्जा ही हैं। महा गुणोंकरि पूर्ण तिनके खोजा लार था, सो राजकुमारोंके देश कुल सम्पत्ति गुण नाम चेष्टा सब कहता भया। अर कही ए आए हैं तिनविषै कई वानरध्वज, कई सिंहध्वज, कई वृषभध्वज, कई गजध्वज इत्यादि अनेक भांतिकी ध्वजाकूं धरे महा पराक्रमी हैं। इनविषै इच्छा होय ताहि वरहु। तब वह सबनिकूं देखती भई अर वह सब राजकुमार उनकूं देखि सदेहकी तुला विषै आरूढ़ भए कि यह रूप गर्वित है न जानिए कौनकूं वरें। ऐसी रूपवती हम देखी नाहीं। मानो ये दोनों समस्त देवियोंका रूप एकत्रकरि बनाई हैं। यह कामकी पताका लोकनिकूं उन्मादका कारण। इस भांति सब राजकुमार अपने अपने मनविषै अभिलाषारूप भए। दोनों उत्तमकन्या लव अंकुशकूं देखि कामबाणकरि बेधी गई। उनमें मंदाकिनी नामा जो कन्या उसने लवके कंठविषै वरमाला डारी। अर दूजी कन्या चन्द्रवक्राने अंकुशके कंठ विषै वरमाला डारी। तब समस्त राजकुमारोंके मनरूप पक्षी तनुरूप पिंजरेसूं उड गए। अर जे उत्तम जन हुते तिन्होंने प्रशंसा करी कि इन दोनों कन्याओंने रामके दोनों पुत्र वरे सो नीके करी। ए कन्या इनही योग्य हैं। इस भांति सज्जनोंके मुखसूं वाणी निकसी। जे भले पुरुष हैं तिनका चित्त योग्य सम्बन्धसूं आनन्दकूं प्राप्त होय।

अथानन्तर लक्ष्मणकी विशल्यादि आठ पटरानी तिनके पुत्र आठ महा सुन्दर उदार चित्त शूरवीर पृथ्वीविषै प्रसिद्ध इन्द्रसमान सो अपने अढ़ाईसै भाइयोंसहित महाप्रीति युक्त तिष्ठते थे। जैसे

तारावोंमें ग्रह तिष्ठे। सो आठ कुमारनि विना और सब ही भाई रामके पुत्रनिपर क्रोधित भए। जो हम नारायणके पुत्र कांतिधारी कलाधारी नवयौवन लक्ष्मीवान बलवान सेनावान कौन गुणकरि हीन जो इन कन्यानिने हमकूं न वरचा अर सीताके पुत्र वरे। ऐसा विचारकरि कोपित भए। तब बड़े भाई आठने इनकूं शांतचित्त किए, जैसे मंत्रकरि सर्पकूं वश करिए। तिनके समझावेतैं सब ही भाई लव अंकुशसूं शांतचित्त भए अर मनविषै विचारते भए जो इन कन्यानिने हमारे बाबाके बेटे बड़े भाई वरे तब ए हमारे भावज सो माता समान हैं, अर स्त्री पर्याय महा निंद्य है। स्त्रीनिकी अभिलाषा अविवेकी करें। स्त्रियें स्वभाव ही तैं कुटिल हैं इनके अर्थ विवेकी विकारकूं न भजें। जिनकूं आत्मकल्याण करना होय सो स्त्रीनितैं अपना मन फेरैं। या भांति विचार, सबही भाई शांतचित्त भए। पहिले सब ही युद्धकूं उद्यमी भए हुते, रणके वादित्रनिका कोलाहल शंख झंझा भेरी झंझार इत्यादि अनेक जातिके वादित्र बाजने लगे, अर जैसे इन्द्रकी विभूति देख छोटे देव अभिलाषी होय तैसे ये सब स्वयंबरविषै कन्यानिके अभिलाषी भए हुते। सो बड़े भाईनिके उपदेशतैं विवेकी भये, अर उन आठों बड़े भाईनिकूं वैराग्य उपज्या। सो विचारैं हैं यह स्थावर जंगमरूप जगतके जीव कर्मनिकी विचित्रताके योगकरि नानारूप हैं, विनश्वर हैं। जैसा जीवनिके होनहार है तैसा ही होय है। जाके जो प्राप्ति होनी है सो अवश्य होय है, और भांति नाहीं। अर लक्ष्मणकी राणीका पुत्र हंसकर कहता भया-हे भ्रात हो! स्त्री कहा पदार्थ है? स्त्रीनितैं प्रेम करना महा मूढ़ता है। विवेकिनकूं हांसी आवै है जो यह कामी कहा जानि अनुराग करै है। इन दोऊ भाईनिने ये दोनों राणी पाई तौ कहा बड़ी वस्तु पाई। जे जिनेश्वरी दीक्षा धरैं वे धन्य हैं। केलाके स्तम्भ समान असार काम भोग आत्माके शत्रु, तिनके वश होय रति अरति मानना महा मूढ़ता है, विवेकिनकूं शोक हू न करना, अर हास्य हू न करना। ए सब ही संसारी जीव कर्मके वश भ्रमजालविषै पड़े हैं। ऐसा नाहीं करैं हैं जाकर कर्मोंका नाश होय, कोई विवेकी करै सोई सिद्धपदकूं प्राप्त होय, या गहन संसार वनविषै ये प्राणी निज पुरका मार्ग

भूल रहे हैं, ऐसा करहु जातै भवदुख निवृत्ति होय। हे भाई हो! यह कर्मभूमि, आर्यक्षेत्र, मनुष्य देह उत्तम कुल हमने पाया सो एते दिन योंही खोये। अब वीतरागका धर्म आराधि मनुष्य देह सफल करो। एक दिन मैं बालक अवस्थाविषै पिताकी गोदविषै बैठा हुता सो वे पुरुषोत्तम समस्त राजानिकूं उपदेश देते थे। वे वस्तुका स्वरूप सुन्दर स्वरसूं कहते भए। सो मैं रुचिसूं सुण्या—चारोंगतिविषै मनुष्यगति दुर्लभ है। जो मनुष्यभव पाय आत्महित न करै हैं सो ठगाए गए जानो। दानकरि तो मिथ्यादृष्टि भोगभूमि जावैं, अर सम्यग्दृष्टि दानकरि तपकरि स्वर्ग जाय, परम्पराय मोक्ष जावैं। अर शुद्धोपयोग रूप आत्मज्ञानकरि यह जीव याही भव मोक्ष पावै। अर हिंसादिक पापनिकरि दुर्गति लहै। जो तप न करै सो भव वनविषै भटकै, बारम्बार दुर्गतिके दुःख संकट पावै, या भांति विचार वे अष्ट कुमार शूरवीर प्रतिबोधकूं प्राप्त भए। संसार सागरके दुःखरूप भवनिसूं डरे, शीघ्र ही पितापै गए, प्रणामकरि विनयसूं खडे रहे, अर महा मधुर वचन हाथ जोड़ कहते भए—हे तात! हमारी विनती सुनहु। हम जैनेश्वरी दीक्षा अंगीकार किया चाहै हैं, तुम आज्ञा देवहु। यह संसार विजुरीके चमत्कार समान अस्थिर है, केलाके स्तम्भ समान असार है हमकूं अविनाशीपुरके पंथ चलते विघ्न न करहु। तुम दयालु हो, कोई महाभाग्यके उदयतै हमकूं जिनमार्गका ज्ञान भया, अब ऐसा करैं जाकरि भवसागरके पार पहुंचे। ये काम भोग आशीविष सर्पके फण समान भयंकर है, परम दुःखके कारण हम दूर हीतै छोडया चाहै हैं। या जीवके कोई माता पिता पुत्र बांधव नाहीं, कोई याका सहाई नाहीं, यह सदा कर्मके आधीन भववनविषै भ्रमण करै हैं। याके कौन कौन जीव कौन सम्बन्धी न भए। हे तात! हमसूं तिहारा अत्यन्त वात्सल्य है अर माताओंका है, सो ये ही बन्धन है। हमने तिहारे प्रसाद तैं बहुत दिन नानाप्रकार संसारके सुख भोगे। निदान एक दिन हमारा तिहारा वियोग होयगा, यामें संदेह नाहीं। या जीवने अनेक भोग किए परन्तु तृप्त न भया। ये भोग रोग समान हैं। इनविषै अज्ञानी राचैं। अर यह देह कुमित्र समान है, जैसे कुमित्रकूं नानाप्रकारकरि पोषिये परन्तु वह अपना

नाहीं, तैसे यह देह अपना नाहीं। याके अर्थ आत्माका कार्य न करना यह विवेकिनका काम नाहीं। यह देह तो हमकूं तजैगी हम इनसूं प्रीति क्यों न तजैं।

यह वचन पुत्रनिके सुन लक्ष्मण परम स्नेह करि विह्वल हो गए। इनकूं उरसूं लगाय मस्तक चूम्ब बारम्बार इनकी ओर देखते भए, अर गदगद वाणीकरि कहते भए, हे पुत्र हो! ये कैलाशके शिखर समान हजारां कनकके स्तंभ तिनविषै निवास करहु। नानाप्रकार रत्नोंसे निरमाए हैं आंगन जिनके, महा सुन्दर, सर्व उपकरणोंकरि मण्डित, मलयागिरि चन्दनकी आवै है सुगन्ध जहां, उसकरि भंवर गुंजार करै हैं, अर स्नानादिककी विधि जहां ऐसी मंजनशाला, अर सब सम्पत्तिसूं भरे निर्मल है भूमि जिनकी, इन महिलोंविषै देवो समान क्रीड़ा करहु। अर तिहारे सुन्दर स्त्री देवांगना समान दिव्यरूपकूं धरैं शरदके पूनोंके चन्द्रमा समान प्रभा जिनकी, अनेक गुणनिकरि मंडित वीण बांसुरी मृदंगादि अनेक वादित्र बजायवेविषै निपुण, महा सुकण्ठ, सुन्दर गीत गायवेविषै निपुण, नृत्यकी करण-हारी, जिनेन्द्रकी कथाविषै अनुरागिणी, महापतिवृता पवित्र तिनसहित वन उपवन तथा गिरि नदियोंके तट निज भवनके उपवन तहां नाना विधि क्रीड़ा करते देवोंकी न्याईं रमो। हे वत्स! ऐसे मनोहर सुखोंकूं तजकरि जिनदीक्षा धरि कैसे विषम वन अर गिरिके शिखर कैसे रहोगे? मैं स्नेहका भरचा अर तिहारी माता तिहारे शोककरि तप्तायमान तिनकूं तजकरि जाना तुमकूं योग्य नाहीं। कैयक दिन पृथ्वीका राज्य करहु। तब वे कुमार स्नेहकी वासनासे रहित भया है चित्त जिनका, संसारसे भयभीत, इन्द्रियोंके सुखसूं पराङ्मुख, महा उदार, महाशूरवीर, कुमारश्रेष्ठ, आत्मतत्त्वविषै लाग्या है चित्त जिनका, क्षणएक विचारकर कहते भए–हे पिता! इस संसारविषै हमारे माता पिता अनन्त भए। यह स्नेहका बन्धन नरकका कारण है। यह घर रूप पिंजरा पापारम्भका अर दुःखका बढावन-हारा है। उसमें मूर्ख रति माने हैं, ज्ञानी न मानैं। अब कबहूं देह सम्बन्धी तथा मन संबंधी दुख हमकूं न होय निश्चयसे ऐसा ही उपाय करेंगे। जो आत्मकल्याण न करै सो आत्मघाती है। कदाचित्

घर न तजे अर मनविषै ऐसा जाने मैं निर्दोष हूं, मुझे पाप नाहीं तो वह मलिन है, पापी है। जैसे सुफेद वस्त्र अंगके संयोगसे मलिन होय तैसे घरके संयोगसे गृहस्थी मलिन होय है। जे गृहस्थाश्रमविषै निवास करैं हैं तिनके निरन्तर हिंसा आरम्भकर राग उपजै। तातैं सत्पुरुषोंने गृहस्थाश्रम तजे। अर तुम हमसूं कही कईएक दिन राज्य भोगो सो तुम ज्ञानवान् होयकर हमकूं अंधकूपविषै डारो हो? जैसे तृषाकर आतुर मृग जल पीवैं अर उसे पारधी मारैं तैसैं भोगनिकर अतृप्त जो पुरुष उसे मृत्यु मारे है। जगत्के जीव विषयकी अभिलाषा कर सदा आर्त्तध्यानरूप पराधीन हैं। ज काम सेवे हैं, वे अज्ञानी विषहरणहारी जड़ी विना आशीविष सर्पसे क्रीड़ा करैं हैं, सो कैसे जीवैं? यह प्राणी मीन समान गृहरूप तालावविषै बसते, विषयरूप मांसके अभिलाषी, रोगरूप लोहेके आंकड़ेके योगकर कालरूप धीवरके जालविषै पड़े हैं। भगवान श्रीतीर्थंकर देव, तीन लोकके ईश्वर, सुर नर विद्याधरनिकर वंदित, यह ही उपदेश देते भये कि यह जगतके जीव अपने अपने उपार्जे कर्मोंके वश हैं। अर या जगतकूं तजैं सो कर्मोंकूं हते। तातैं हे तात! हमारे इष्टसंयोगके लोभकर पूर्णता न होवे। यह संयोग सम्बन्ध बिजुरीके चमत्कारवत् चंचल है। जे विचक्षण जन हैं वे इनसे अनुराग न करैं, अर निश्चय सेती इस तनुसे अर तनुके सम्बन्धियोंसूं वियोग होयगा। इनविषै कहा प्रीति! अर महाक्लेशरूप यह संसार वन उसविषै कहा निवास? अर यह मेरा प्यारा ऐसी बुद्धि जीवोंके अज्ञानसे है। यह जीव सदा अकेला भवविषै भटके है, गति गतिविषै गमन करता महा दुखी है।

हे पिता! हम संसारसागरविषै झकोला खाते अति खेदखिन्न भए। कैसा है संसार सागर? मिथ्या शास्त्ररूप है दुखदाई द्वीप जिसविषै, अर मोहरूप है मगर जिसमें, अर शोक संतापरूप सिवानकर संयुक्त सो, अर दुर्जयरूप नदियोंकर पूरित है, अर भ्रमणरूप भंवरके समूहकरि भयंकर है, अर अनेक आधिव्याधि उपाधिरूप कलोलोंकर युक्त है, अर कुभावरूप पाताल कुण्डोंकर अगम है, अर क्रोधादिकर भावरूप जलचरोंके समूहसे भरा है, अर वृथा बकवादरूप होय है शब्द जहां, अर ममत्वरूप पवनकर उठे है विकल्प

रूपतरंग जहाँ, अर दुर्गतिरूप क्षार जलकर भरा है, अर महादुस्सह इष्ट वियोग अनिष्ट संयोगरूप आताप सोई हैं बडवानल जहां, ऐसे भवसागरविषै हम अनादिकालके खेदखिन्न पड़े हैं। नाना योनिविषै भ्रमण करते अतिकष्टसूं मनुष्यदेह उत्तम कुल पाया है सो अब ऐसा करेंगे बहुरि भवभ्रमण न होय। सो सबसे मोह छुडाय आठों कुमार महाशूरवीर घररूप बन्दीखानेसे निकसे। उन महाभाग्यों के ऐसी वैराग्य बुद्धि उपजी जो तीनखंडका ईश्वरपणा जीर्ण तृणवत् तजा। ते विवेकी महेन्द्रोदय नामा उद्यानविषै जायकर महाबल नामा मुनिके निकट दिगम्बर भए। सर्व आरम्भरहित अन्तर्बाह्य परिग्रहके त्यागी, विधिपूर्वक ईर्यासमिति पालते, विहार करते भए। महा क्षमावान इन्द्रियोंके वश करणहारे, विकल्परहित, निस्पृही, परम योगी, महाध्यानी, बारहप्रकारके तपकर कर्मोंकूं भस्मकर अध्यात्मयोगसे शुभाशुभ भावोंका निराकरण कर क्षीणकषाय होय, केवलज्ञान लह अत्यन्त सुखरूप सिद्धपदकूं प्राप्त भए। जगतके प्रपंचसे छूटे। गौतम गणधर राजा श्रेणिकसूं कहे हैं—हे नृप! यह अष्ट कुमारों का मंगलरूप चरित्र जो विनयवान भक्तिकर पढ़े सुने उसके समस्त पाप क्षय जावें जैसे सूर्यकी प्रभाकर तिमिर विलाय जाय।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रन्थ, ताकी भाषा वचनिकाविषै लक्ष्मणके आठ कुमारोंका वैराग्य वर्णन करनेवाला एकसौ दशवां पर्व पूर्ण भया ॥ ११० ॥

अथानन्तर महावीर जिनेन्द्रके प्रथम गणधर मुनियोंविषै मुख्य गौतमऋषि श्रेणिकसूं भामंडलका चरित्र कहते भए—हे श्रेणिक! विद्याधरनिकी जो ईश्वरता सोई भई कुटिला स्त्री, उसका विषयवासनारूप मिथ्या सुख सोई भया पुष्प, उसके अनुरागरूप मकरंदविषै भामण्डलरूप भ्रमर आसक्त होता भया। चित्तमें यह चितवै जो मैं जिनेन्द्रीदीक्षा धरूंगा तो मेरी स्त्रियोंका सौभाग्यरूप कमलनिका वन सूख जायगा। ये मेरेसे आसक्त चित्त हैं, अर इनके विरह कर मेरे प्राणनिका वियोग होयगा।

मैं यह प्राण सुखसूं पाले हैं, इसलिए कईयक दिन राज्यके सुख भोग कल्याणका कारण जो तप सो करूंगा। यह कामभोग दुर्निवार हैं। अर इनकर पाप उपजेगा सो ध्यानरूप अग्निकर क्षणमात्र विषै भस्म करूंगा। केईयक दिन राज्य करूं। बड़ी सेना राख जे मेरे शत्रु हैं तिनकूं राज्य रहित करूंगा। वे खड्गके धारी बड़े सामंत मुझसे परांगमुख, ते भए खड्गी कहिए गैंडा, तिनके मानरूप खड्गकूं भंग करूंगा। अर दक्षिणश्रेणी उत्तरश्रेणी विषै अपनी आज्ञा मनाऊं, अर सुमेरु पर्वत आदि पर्वतों-विषै मरकत मणि आदि नानाजातिके रत्ननिकी निर्मलशिला तिनविषै स्त्रियोंसहित क्रीडा करूंगा। इत्यादि मनके मनोरथ करता हुवा भामंडल सैकडों वर्ष एक मुहूर्तकी न्याई व्यतीत करता भया। यह किया, यह करूं, यह करूंगा, ऐसा चितवन करता आयुका अन्त न जानता भया। एक दिन सतखणे महिलके ऊपर सुन्दर सेजपर पौढ़ा हुता सो बिजुरी पडी अर तत्काल कालकूं प्राप्त भया।

दीर्घसूत्री मनुष्य अनेक विकल्प करे, परन्तु आत्माके उद्धारका उपाय न करैं। तृष्णाकर हता क्षणमात्रमें साता न पावे, मृत्यु सिरपर फिरै ताकी सुध नाहीं। क्षणभंगुर सुखके निमित्त दुर्बुद्धि आत्महित न करै। विषय वासनाकर लब्ध भया अनेक भांति विकल्प करता रहै। सो विकल्प कर्म-बंधके कारण हैं। धन योवन जीतव्य सब अस्थिर हैं। जो इनकूं अस्थिर जान सर्व परिग्रहका त्याग कर आत्मकल्याण करैं सो भवसागर न डूबें। अर विषयाभिलाषी जीव भवविषैं कष्ट सहैं, हजारों शास्त्र पढ़े, अर शांतता न उपजी तो क्या ? अर एक ही पदकर शांतदशा होय तो प्रशंसा योग्य है। धर्म करिवेकी इच्छा तो सदा करबहु करे, अर करे नाहीं, सो कल्याणकूं न प्राप्त होय। जैसैं कटी पक्षका काग उड़कर आकाशविषैं पहुंचा चाहै पर जाय न सकै। जो निर्वाणके उद्यमकर रहित है सो निर्वाण न पावै। जो निरुद्यमी सिद्धपद पावै, तो कौन काहेकूं मुनिव्रत आदरै ? जो गुरुके उत्तम वचन उरविषैं धार धर्मकूं उद्यमी होय सो कभी खेदखिन्न न होय। जो गृहस्थ द्वारे आया साधु उसकी भक्ति न करै, आहारादिक न दे सो अविवेकी है अर गुरुके वचन सुन धर्मकूं न आदरै सो भव-

भ्रमणसे न छूटे। जो घने प्रमादी हैं अर नानाप्रकारके अशुभ उद्यम कर व्याकुल हैं, उनकी आयु वृथा जाय है, जैसें हथेलीमें आया रत्न जाता रहे। ऐसा जान, समस्त लौकिक कार्यकूं निरर्थक मान, दुःखरूप इन्द्रियोंके सुख तिनकूं तजकर परलोक सुधारिवेके अर्थ जिनशासनविषै श्रद्धा करहु। भामंडल मरकर पात्रदानके प्रभावसूं उत्तम भोगभूमि गया।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृतग्रन्थ ताकी भाषावचनिकाविषै भामंडलका मरण वर्णन करनेवाला एकसौ ग्यारहवां पर्व पूर्ण भया ॥१११॥

अथानन्तर राम लक्ष्मण परस्पर महा स्नेहके भरे प्रजाके पिता समान परम हितकारी तिनका राज्यविषै सुखसूं समय व्यतीत होता भया। परम ईश्वरतारूप अति सुन्दर राज्य सोई भया कमलोंका वन, उसविषै क्रीडा करते वे पुरुषोत्तम पृथ्वीकूं प्रमोद उपजावते भए। इनके सुखका वर्णन कहां तक करें? ऋतुराज कहिए वसंतऋतु उसमें सुगन्ध वायु बहै, कोयल बोलै, भ्रमर गुंजार करें, समस्त वनस्पति फूलै, मदोन्मत्त होय समस्तलोक हर्षके भरे श्रृंगार क्रीडा करें। मुनिराज विषम वनविषै विराजैं आत्मस्वरूपका ध्यान करें। उस ऋतुविषै राम लक्ष्मण रणवाससहित अर समस्त लोकनिसहित रमणीक वनविषै तथा उपवनविषै नानाप्रकारके रंग–क्रीडा, रागक्रीडा, जलक्रीडा, वनक्रीडा करते भए। अर ग्रीष्मऋतुविषै नदी सूखे दावानल समान ज्वाला बरसै महामुनि गिरिके शिखर सूर्यके सन्मुख कायोत्सर्ग धर तिष्ठे। उस ऋतुविषै राम लक्ष्मण धारामंडप महलविषै, अथवा महारमणीक वनविषै, जहां अनेक जलयन्त्र चन्दन कपूर आदि शीतल सुगन्ध सामग्री वहां सुखसूं विराजे हैं, चमर ढुरे हैं, ताड़के बीजना फिरे हैं, निर्मल स्फटिककी शिलापर तिष्ठे हैं, अगुरु चन्दन कर चर्चे जलकर तर ऐसे कमलदल तथा पुष्पोंके सांथरे पर तिष्ठे, महामनोहर निर्मल शीतल जल, जिसविषै लवंग इलायची कपूर अनेक सुगन्धद्रव्य उनकर महासुगन्ध उनका पान करते, लतावोंके मंडपविषै विराजते

नानाप्रकारकी सुन्दर कथा करते, सारंग आदि अनेक राग सुनते, सुन्दर स्त्रीनि सहित उष्ण ऋतुकू बलात्कार शीतकाल सम करते, सुखसू पूर्ण करते भए। अर वर्षाऋतु विषै योगीश्वर तरु तले तिष्ठते महातपकर अशुभ कर्मका क्षयकरैं हैं। विजुरी चमकै है, मेघकर अंधकार होयरहा है, मयूर बोले हैं ढाहा उपाडती महाशब्द करती नदी बहे हैं, उस ऋतुविषै दोनों भाई सुमेरुके शिखर समान ऊंचे, नाना मणिमई, जे महिल तिनविषै महा श्रेष्ठ रंगीले वस्त्र पहिरे, केसरके रंगकर लिप्त हैं अंग जिनका, अर कृष्णागरुका धूप खेए रहे हैं महासुन्दर स्त्रियोंके नेत्ररूप भ्रमरोंके कमल सारिखे इन्द्र समान क्रीडा करते सुखसू तिष्ठे। अर शरदऋतुविषै आकाश निर्मल होय, चन्द्रमाकी किरण उज्ज्वल होय, कमल फूले हंस मनोहर शब्द करैं, मुनिराज वन पर्वत सरोवर नदीके तीर बैठे चिद्रूपका ध्यान करैं। उस ऋतुविषै राम लक्ष्मण राजलोकों सहित चांदनीके वस्त्र आभरण पहिरे सरिता सरोवरके तीर नाना विधि क्रीडा करते भए। अर शीतऋतुविषै योगीश्वर धर्मध्यानको ध्यावते रात्रिविषै नदी तालावोंके तटपै जहां अति शीत पड़े, बर्फ वरसै, महाठण्डी पवन वाजे, तहां निश्चल तिष्ठे हैं। महाप्रचण्ड शीत पवन कर वृक्ष दाहे मारे हैं। अर सूर्यका तेज मन्द होय गया है। ऐसी ऋतुविषै राम लक्ष्मण महिलनिके भीतरसे चौवारोंविषै तिष्ठते मन वांछित विलास करते, सुन्दर स्त्रीनिके समूह सहित, वीण, मृदंग, बांसुरी आदि अनेक वादित्रनिके शब्द कानोंको अमृत समान श्रवणकर मनकू आल्हाद उपजावते, दोनों वीर महाधीर, देवां समान, अर जिनके स्त्री देवांगना समान, वीणाकर जीती है वीणाकी ध्वनि जिन्होंने महापतिव्रता, तिनकर आदरते सन्ते पुण्यके प्रभावते सुखसू शीतकाल व्यतीत करते भए। अद्भुत भोगोंकी सम्पदाकर मण्डित वे पुरुषोत्तम प्रजाकू आनन्दकारी दोनों भाई सुखसू तिष्ठे हैं।

अथानन्तर गौतमस्वामी कहे हैं-हे श्रेणिक! अब तू हनुमानका वृत्तांत सुन। हनुमान पवनका पुत्र कर्णकुण्डल नगरविषै पुण्यके प्रभावसू देवनिके सुख भोगवै, जिसकी हजारां विद्याधर सेवा करैं। अर उत्तम क्रियाका धारक स्त्रियोंसहित परिवारसहित अपनी इच्छाकरि पृथ्वीमें विहार करै। श्रेष्ठ

विमानविषै आरूढ़ परम ऋद्धिकर मंडित महा शोभायमान सुन्दर वनोंमें देवनि समान क्रीडा करै। सो वसंतका समय आया। कामी जीवनकूं उन्मादका कारण, अर समस्त वृक्षोंकूं प्रफुल्लित करण-हारा, प्रिया अर प्रीतमके प्रेमका बढावनहारा, सुगन्ध चले है पवन जिसमें, ऐसे समयमें अंजनीका पुत्र जिनेन्द्रकी भक्तिमें आरूढ़चित्त, अति हर्ष कर पूर्ण हजारां स्त्रीनिसहित सुमेरु पर्वतकी ओर चल्या। हजारां विद्याधर हैं संग जिसके, श्रेष्ठ विमानविषै चढ़े, परम ऋद्धिकरि संयुक्त मार्गविषै वनविषै क्रीडा

करते भए। कैसे हैं वन? शीतल मंद सुगन्ध चले हैं पवन जहां, नानाप्रकारके पुष्प अर फलों करि शोभित वृक्ष हैं, जहां देवांगना रमे है, अर कुलाचलोंकेविषै सुन्दर सरोवरों करि युक्त अनेक मनोहर वन जिनविषै भ्रमर गुंजार करै हैं, अर कोयल बोल रही हैं, अर नाना प्रकारके पशु पक्षियोंके युगल विचरै हैं जहां सर्व जातिके पत्र पुष्प फल शोभे हैं, अर रत्ननिकी ज्योतिकरि उद्योतरूप है पर्वत जहां, अर नदी निर्मल जलकी भरी सुन्दर हैं तट जिनके, अर सरोवर अति रमणीक नाना प्रकारके कमलों के मकरंदकरि रंग रूप होय रहा है सुगन्ध जल जिनका, अर वापिका अति मनोहर जिनके रत्नोंके सिवान अर तटोंके निकट बड़े बड़े वृक्ष हैं, अर नदीमें तरंग उठे हैं, झागोंके समूहसहित महा शब्द करती बहै हैं, जिनमें मगरमच्छ आदि जलचर क्रीडा करैं, अर दोनों तटविषै लहलहाट करते अनेक वन उपवन महा मनोहर विचित्रगति लिये शोभैं हैं, जिनमें क्रीड़ा करिवेके सुन्दर महिल अर नाना प्रकार रत्ननिकरि निर्मापे जिनेश्वरके मन्दिर पापोंके हरणहारे अनेक हैं। पवनपुत्र सुन्दर स्त्रियोंकरि सेवित, परम उदयकरि युक्त अनेक गिरियोंविषै अकृत्रिम चैत्यालयोंका दर्शनकरि विमानविषै चढ्या
स्त्रियोंकूं पृथ्वीकी शोभा दिखावता, अति प्रसन्नतासूं स्त्रियोंसूं कहै हैं-हे प्रिये! सुमेरुविषै अति रम-णीक जिनमन्दिर स्वर्णमयी भासे हैं। अर इनके शिखर सूर्य समान देदीप्यमान महामनोहर भासै हैं। अर गिरिकी गुफा तिनके मनोहर द्वार रत्नजडित शोभा नाना रंगकी ज्योति परस्पर मिल रही हैं। वहां अरति उपजे नाहीं, सुमेरुकी भूमितलविषै अतिरमणीक भद्रशालवन है अर सुमेरुकी कटिमेखला

विषै विस्तीर्ण नन्दनवन अर सुमेरुके वक्षस्थलविषै सौमनसवन है, जहां कल्पवृक्ष कल्पलताओंसे बेढे सोहै हैं, अर नानाप्रकार रत्नोंकी शिला शोभित हैं। अर सुमेरुके शिखरमें पांडुक वन है जहां जिनेश्वर देव का जन्मोत्सव होय है। इन चारों ही वनविषै चार चार चैत्यालय हैं, जहां निरंतर देव देवियोंका आगम है। यक्ष किन्नर गन्धर्वोंके संगीतकरि नाद होय रहा है। अप्सरा नृत्य करै हैं। कल्पवृक्षोंके पुष्प मनोहर हैं। नानाप्रकारके मंगल द्रव्यकरि पूर्ण यह भगवान्‌के अकृत्रिम चैत्यालय अनादिनिधन हैं। हे प्रिये! पांडुक वनविषै परम अद्‌भुत जिन मंदिर सोहै हैं, जिनकों देखे मन हरा जाय, महाप्रज्वलित निर्धूम अग्नि समान संध्याके बादरोंके रंग समान उगते सूर्य समान स्वर्णमई शोभै हैं, समस्त उत्तम रत्ननिकरि शोभित सुन्दराकार हजारों मोतियोंकी माला, तिनकरि मंडित महामनोहर हैं। मालावों के मोती कैसे सोहैं हैं मानों जलके बुदबुदाही हैं। अर घण्टा, झांझ, मजीरा, मृदंग, चमर तिनकरि शोभित हैं। चौगिरद कोट ऊंचे दरवाजे इत्यादि परम विभूति करि विराजमान हैं। नाना रंगकी फह-राती हुई ध्वजा स्वर्णके स्तंभनि करि देदीप्यमान। इन अकृत्रिम चैत्यालयोंकी शोभा कहां लग कहैं जिनका सम्पूर्ण वर्णन इन्द्रादिक देव भी न कर सकें। हे कांते! पाण्डुकवनके चैत्यालय मानों सुमेरुके मुकुट ही हैं, अति रमणीक हैं।

या भांति महाराणी पटराणियोंसे हनुमान बात करते, जिनमन्दिरकी प्रशंसा करते मंदिरके समीप आए। विमानसूं उतरि महा हर्षित होय प्रदक्षिणा दई। वहां श्रीभगवानके अकृत्रिम प्रतिबिंब सर्व अतिशय विराजमान महा ऐश्वर्यकरि मंडित, महा तेज पुंज देदीप्यमान शरदके उज्ज्वल बादर तिनमें जैसे चन्द्रमा सोहै तैसे सर्व लक्षणमंडित हनुमान हाथ जोड रणवास सहित नमस्कार करता भया। कैसा है हनुमान? जैसे ग्रह तारावोंके मध्य चन्द्रमा सोहै तैसे राजा लोकके मध्य सोहै है। जिनेन्द्रके दर्शन करि उपज्या है अतिहर्ष जिसकूं सो सम्पूर्ण स्त्रीजन अति आनन्दकूं प्राप्त भई। रोमांच होय आए, नेत्र प्रफुल्लित भए। विद्याधरी परम भक्तिकरि युक्त सर्व उपकरणों सहित परम चेष्टाकी

धरणहारी, महापवित्र कुलविषै उपजी देवांगनाओंकी न्याईं अति अनुरागसे देवाधिदेवकी विधिपूर्वक पूजा करती भईं। महा पवित्र पद्‌मह्रद आदिका जल अर महा सुगन्ध चन्दन मुक्ताफलनिके अक्षत, स्वर्णमई कमल तथा पद्‌मराग मणिमई तथा चन्द्रकांति मणिमई तिनकर पूजा करती भईं। अर कल्पवृक्षनिके पुष्प अर अमृतरूप नैवेद्य अर महा ज्योतिरूप रत्नोंके दीप चढ़ाए, अर मलयागिरि चंदन आदि महासुगन्ध जिनकरि दशोंदिशा सुगन्धमई होय रही हैं, अर परम उज्ज्वल महाशीतल जल,

अर अगुरु आदि महापवित्र द्रव्योंकरि उपज्या जो धूप, सो खेवती भईं। अर महा पवित्र अमृत फल चढ़ावती भईं। अर रत्नोंके चूर्णकरि मांडला मांडती भईं। महा मनोहर अष्ट द्रव्योंसे पति सहित पूजा करती भईं। हनुमान राणिनि सहित भगवानकी पूजा करता कैसे सोहै है जैसा सौधर्म इन्द्र पूजा करता सोहै। कैसा है हनुमान ? जनेऊ पहिरे, सर्व आभूषण पहरे, महीन वस्त्र पहिरे, महा पवित्र पापरहित, बानरके चिह्नका है देदीप्यमान रत्नमई मुकुट जिसके, महा प्रमोदका भरचा, फूल रहे हैं नेत्रकमल जिसके, सुन्दर है बदन जिसका, पूजाकरि पापनिके नाश करणहारे स्तोत्र तिनकरि सुर असुरोंके गुरु जिनेश्वर तिनके प्रतिबिंबकी स्तुति करता भया। सो पूजा करता अर स्तुति करता इन्द्रकी अप्सरावोंने देख्या सो अति प्रशंसा करती भईं। अर यह प्रवीण बीण लेयकरि जिनेन्द्रचन्द्र के यश गावता भया। जे शुद्ध चित्त जिनेन्द्रकी पूजाविषै अनुरागी हैं सर्व कल्याण तिनके समीप हैं, तिनकूं कुछ दुर्लभ नाहीं। तिनका दर्शन मंगलरूप है। उन जीवोंने अपना जन्म सुफल किया जिन्होंने उत्तम मनुष्य देह पाय श्रावकके व्रतधरि जिनवरविषै दृढ़ भक्ति धारी। अपने करविषै कल्याण ८८३

कूं धरै है, जन्मका फल तिनही पाया। हनुमानने पूजा स्तुति वन्दना करि बीण बजाय अनेक राग गाय अद्‌भुत स्तुतिकरी। यद्यपि भगवानके दर्शनसे बिछुरनेका नहीं है मन जिसका तथापि चैत्यालय विषै अधिक न रहहु, मति कोऊ आच्छादनालागै, तातैं जिनराजके चरण उर विषै धरि मन्दिरसूं बाहिर निकस्या। विमानोंमें चढ़े। हजारों स्त्रियोंकरि संयुक्त सुमेरुकी प्रदक्षिणा दी। जैसे सूर्य देय

तैसे श्रीशैल कहिए हनुमान सुन्दर है क्रिया जिसकी, सो शैलराज कहिए सुमेरु उसकी प्रदक्षिणा देय, समस्त चैत्यालयोंविषै दर्शन करि भरतक्षेत्रकी ओर सन्मुख भया। सो मार्ग विषै सूर्य अस्त होय गया। अर संध्या भी सूर्यके पीछे विलय गई। कृष्णपक्षकी रात्रि सो तारारूप बंधुओंकर मंडित चन्द्रमा रूप पति विना न सोहती भई। हनुमानने तले उतर एक सुरदुन्दुभी नामा पर्वत वहां सेना सहित रात्रि

व्यतीत करी। कमल आदि अनेक सुगन्ध पुष्पोंसे स्पर्श पवन आई, उसकरि सेनाके लोक सुखसूं रहे। जिनेश्वर देव की कथा करतो किए। रात्रिकूं आकाशसूं देदीप्यमान एक तारा टूटचा सो हनुमानने देखकरि मनविषै विचारी—हाय हाय! इस संसार असार वनविषै देव भी कालवश हैं। ऐसा कोई नाहीं जो कालसूं बचै। बिजुरीका चमत्कार अर जलकी तरंग जैसे क्षण भंगुर है तैसे शरीर विनश्वर है। इस संसारविषै इस जीवने अनन्त भवविषै दुख ही भोगे। यह जीव विषयके सुखकूं सुख मानै है सो सुख नाहीं, दुख ही है। विषम क्षणभंगुर संसारविषै दुःख ही है, सुख नाहीं होय है। मोहका माहात्म्य है जो अनन्तकाल जीव दुख भोगता भ्रमण करै है। अनन्तावसर्पणी काल भ्रमणकरि मनुष्य देह कभी कोई पावै है, सो पायकरि धर्मके साधन वृथा खोवै है। यह विनाशीक सुखविषै आसक्त होय महासंकट पावे है। यह जीव रागादिकके वश भया वीतराग भावकूं नाहीं जाने है। यह इन्द्रिय जैन-मार्गके आश्रय विना न जीती जांय। ये इन्द्री चंचल कुमार्गविषै लगायकरि इस जीवकूं इस भव पर भवविषै दुःखदायी हैं। जैसे मृग, मीन अर पक्षी लोभके वशसूं बधिकके जालमें पड़े हैं तैसे यह कामी क्रोधी लोभी जीव जिनमार्गकूं पाए विना अज्ञानके वशसूं प्रपंचरूप पारधीके बिछाए विषयरूप जाल
विषै पड़े हैं। जो जीव आशीविष सर्प समान यह मन इन्द्री तिनके विषयोंमें रमै हैं सो मूढ दुःखरूप अग्निविषै जरै हैं। जैसे कोई एक दिन राज्यकरि वर्ष दिन त्रास भोगवे तैसे यह मूढ जीव अल्पदिन विषयोंके सुख भोगि अनन्तकाल पर्यंत निगोदके दुख भोगवे है। जो विषयके सुखका अभि-लाषी है सो दुखोंका अधिकारी है। नरक निगोदके मूल यह विषय तिनकूं ज्ञानी न चाहैं। मोहरूप

ठगका ठग जो आत्मकल्याण न करै सो महा कष्टकू पावै। जो पूर्व भवविषै धर्म उपार्जे, मनुष्यदेह पाय धर्म का आदर न करै सो जैसे धन ठगाय कोई दुखी होय तैसैं दुखी होय है। अर देवोंके भी भोग भोगि यह जीव मरकरि देवसू एकेन्द्री होय है। इस जीवके पाप शत्रु हैं, अर यह भोग ही पाप के मूल हैं। इनसू तृप्ति न होय। यह महा भयंकर हैं। अर इनका वियोग निश्चय होगा। यह रहनेके नाहीं। जो मैं इस राज्यकू अर यह जो प्रियजन हैं तिनकू तजकरि तप न करू तो अतृप्त भया सुभूमि चक्रवर्तीकी नाईं मरकर दुर्गतिको जाऊंगा। अर यह मेरे स्त्री शोभायमान, मृगनयनी, सर्व मनोरथकी पूर्णहारी, पतिव्रता, स्त्रियोंके गुणनिकर मण्डित, नवयौवन है सो अबतक मैं अज्ञानसू तज न सका। सो मैं अपनी भूलको कहांतक उराहना दू। देखो! मैं सागर पर्यंत स्वर्गविषै अनेक देवांगना सहित रम्या। अर देवसू मनुष्य होय इस क्षेत्रविषै भया। सुन्दर स्त्रियों सहित रम्या, परन्तु तृप्त न भया। जैसे ईंधनसू अग्नि तृप्त न होय अर नदियोंसू समुद्र तृप्त न होय तैसे यह प्राणी नानाप्रकारके विषयसुख तिनकरि तृप्त न होय। मैं नानाप्रकारके जन्म तिनविषै भ्रमणकरि खेदखिन्न भया। रे मन! अब तू शांतताकू प्राप्त होहु। कहा व्याकुल होय रहा है। क्या तैंने भयंकर नरकोंके दुःख न सुने। जहां रौद्रध्यान हिंसक जीव जाय हैं, जिन नरकनिविषै महा तीव्र वेदना, असिपत्र बन वैतरणी नदी, संकटरूप है सकल भूमि जहाँ। रे मन तू नरकसू न डरै है। राग द्वेष करि उपजे जे कर्म—कलंक तिनकू तपकरि नाहिं खिपावै है। तेरे एते दिन यों ही वृथा गए, विषय सुखरूप कूपविषै पड़ा अपने आत्माकू भवपिंजरसू निकास। पाया है जिन मार्गविषै बुद्धिका प्रकाश तैंने, तू अनादिकालका संसार भ्रमणसू खेदखिन्न भया। अब अनादिके बंधे आत्माकू छुडाय। हनुमान ऐसा निश्चयकरि संसार शरीर भोगोंसू उदास भया। जाना है यथार्थ जिनशासनका रहस्य जिसनें। जैसे सूर्य मेघरूप पटलसे रहित महा तेजरूप भासै तैसैं मोह पटलसू रहित भासता भया। जिस मार्ग होय जिनवर सिद्ध पदकू सिधारे उस मार्गविषै चलिवेकू उद्यमी भया।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृतग्रन्थ ताकी भाषावचनिकाविषै हनुमानका वैराग्य चितवन वर्णन करनवाला एकसौ बारहवां पर्व पूर्ण भया ॥११२॥

अथानन्तर रात्रि व्यतीत भई, सोला बानीके स्वर्ण समान सूर्य अपनी दीप्तिकरि जगतविषै उद्योत करता भया, जैसे साधु मोक्षमार्गका उद्योत करे। नक्षत्रोंके गण अस्त भए, अर सूर्यके उदय करि कमल फूले जैसे जिनराजके उद्योतकरि भव्य जीवरूप कमल फूले। हनुमान महा वैराग्यका भरया, जगतके भोगोंसूं विरक्त मंत्रियोंसूं कहता भया- जैसे भरत चक्रवर्ती पूर्व तपोवनकूं गए तैसे हम जावेंगे। तब मंत्री प्रेमके भरे परम उद्वेगकूं प्राप्त होय नाथसूं बिनती करते भए, हे देव! हमकूं अनाथ न करो प्रसन्न होवो, हम तिहारे भक्त हैं, हमारा प्रतिपालन करो, तब हनुमानने कही तुम यद्यपि निश्चयकर मेरे आज्ञाकारी हो तथापि अनर्थके कारण हो, हितके कारण नाहीं। जो संसार समुद्रसूं उतरै अर उसे पीछे सागरमें डारैं ते हितू कैसे? निश्चय थकी उनकूं शत्रु ही कहिए। जब या जीवने नरकके निवास-विषै महादुःख भोगे तब माता, पिता, मित्र, भाई, कोई ही सहाई न भया। यह दुर्लभ मनुष्यदेह अर जिनशासनका ज्ञान पाय बुद्धिमानोंकूं प्रमाद करना उचित नाहीं। अर जैसे राज्यके भोगसूं मेरे अप्रीति भई तैसे तुमसूं भी भई। यह कर्मजनित ठाठ सर्व विनाशीक हैं। निसंदेह हमारा तिहारा वियोग होयगा। जहां संयोग है तहां वियोग है। सुर नर अर इनके अधिपति इन्द्र नरेन्द्र यह सब ही अपने अपने कर्मोंके आधीन हैं। कालरूप दावानल करि कौन २ भस्म न भए? मैं सागरां पर्यंत अनेक भव देवोंके सुख भोगे, परन्तु तृप्त न भया, जैसे सूखे ईंधनकरि अग्नि तृप्त न होय। गति जाति शरीर इनका कारण नाम कर्म है, जाकरि ये जीव गति गतिविषै भ्रमण करै है। सो मोहका बल महाबलवान है, जाके उदयकरि यह शरीर उपज्या है, सो न रहैगा। यह संसार बन महाविषम है, जाविषै ये प्राणी मोहकूं प्राप्त भए भवसंकट भोगै है। उसे उलंघकरि मैं जन्म जरा मृत्यु रहित जो पद तहां

गया चाहूं हूं। यह बात हनुमान मंत्रियोंसूं कही सो रणवासकी स्त्रियोंने सुनी, उसकरि खेदखिन्न होय महारुदन करती भईं। जे समझानेविषै समर्थ ते उनकूं शांतचित्त करी। कैसैं हैं समझावन हारे? नाना प्रकारके वृत्तांतविषै प्रवीण। अर हनुमान निश्चल है चित्त जाका सो अपने बड़े पुत्रकूं राज्य देय अर सबनिकूं यथायोग्य विभूति देय रत्नोंके समूहकरि युक्त देवोंके विमान समान जो अपना मंदिर उसे तजकरि निकस्या। स्वर्ण रत्नमई दैदीप्यमान जो पालकी तापर चढ़ि चैत्यवान नामा वन तहां गया। सो नगरके लोक हनुमानकी पालकी देख सजल नेत्र भये। पालिकीपर ध्वजा फरहरै हैं, चमरोंकरि शोभित है, मोतियोंकी झालरियोंकरि मनोहर हैं। हनुमान वनविषै आया सो वन नाना प्रकारके वृक्षोंकरि मंडित। अर जहां सूवा, मैना, मयूर, हंस, कोयल, भ्रमर सुन्दर शब्द करैं हैं, अर नानाप्रकारके पुष्पोंकरि सुगन्ध है, वहां स्वामी धर्मरत्न, संयमी, धर्मरूप रत्नकी राशि, योगीश्वर, जिनके दर्शनसूं पाप विलाय जावै ऐसे सन्त चारण मुनि अनेक चारण मुनियोंकरि मंडित तिष्ठते थे। आकाशविषै है गमन जिनका। सो दूरसूं उनकूं देखि हनुमान पालकीसूं उतरचा। महा भक्तिकर युक्त नमस्कारकरि हाथ जोडि कहता भया—हे नाथ! मैं शरीरादिक परद्रव्योंसूं निर्ममत्व भया। यह परमेश्वरी दीक्षा आप मुझे कृपाकर देवहु। तब मुनि कहते भए—अहो भव्य! तैंने भली विचारी। तू उत्तम जन है, जिनदीक्षा लेहु। यह जगत असार है, शरीर विनश्वर हैं। शीघ्र आत्मकल्याण करो। अविनश्वर पद लेवेकी परमकल्याणकारणी बुद्धि तुम्हारे उपजी है। यह बुद्धि विवेकी जीवके ही उपजै है। ऐसी मुनिकी आज्ञा पाय मुनिकूं प्रणामकरि पद्मासन धर तिष्ठा। मुकुट, कुण्डल, हार आदि सर्व आभूषण डारे। जगतसूं मनका राग निवारचा, स्त्रीरूप बंधन तुड़ाय, ममता मोह मिटाय, आपकूं स्नेहरूप पाशसे छुडाय, विष समान विषय सुख तजकरि, वैराग्यरूप दीपकी शिखाकरि राग-रूप अंधकार निवारकरि, शरीर अर संसारकूं असार जान, कमलोंकूं जीतैं, ऐसे सुकुमार जे कर तिन-करि सिरके केश लौंच करता भया। समस्त परिग्रहसूं रहित होय मोक्षलक्ष्मीकूं उद्यमी भया, महा-

व्रत धरे, असंयम परिहरे। हनुमानकी लार साढ़े सातसौ बड़े राजा विद्याधर, शुद्ध चित्त विद्युद्गतिकूं आदि दे, हनुमानके परम मित्र, अपने पुत्रोंकूं राज्य देय, अठाईस मूलगुण धार योगीन्द्र भए। अर हनुमानकी रानी अर इन राजावोंकी राणी प्रथम तो वियोगरूप अग्निकरि तप्तायमान विलाप करती भईं फिर वैराग्यकूं प्राप्त होय बंधुमति नामा आर्यिकाके समीप जाय, महा भक्तिकरि संयुक्त नमस्कार करि आर्यिकाके व्रत धारती भईं। वे महाबुद्धिवंती शीलवंती भवभ्रमणके भयसूं आभूषण डार एक सफेद वस्त्र राखती भईं। शील ही है आभूषण जिनके तिनकूं राज्यविभूति जीर्ण तृण समान भासती भईं। अर हनुमान महाबुद्धिमान महातपोधन महापुरुष संसारसूं अत्यन्त विरक्त, पंच महाव्रत, पंच समिति, तीन गुप्ति धार शैल कहिए पर्वत उससे भी अधिक श्रीशैल कहिए हनुमान राजा पवनके पुत्र चारित्रविषै अचल होते भए। तिनका यश निर्मलइन्द्रादिक देव गावैं, बारम्बार वन्दना करैं अर बड़े २ कीर्ति करैं। निर्मल है आचरण जिनका, ऐसा सर्वज्ञ वीतराग देवका भाषा निर्मल धर्म आचरचा सो भवसागरके पार भया। वे हनुमान महामुनि पुरुषोंविषै सूर्य समान तेजस्वी जिनेन्द्रदेवका धर्म आराधि ध्यान अग्निकरि अष्ट कर्मकी समस्त प्रकृति ईंधनरूप तिनकूं भस्मकरि तुंगी गिरिके शिखरसूं सिद्ध भए। केवलज्ञान केवलदर्शन आदि अनन्त गुणमई सदा सिद्ध लोकविषै रहैंगे।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महा पद्मपुराण संस्कृत ग्रन्थ, ताकी भाषा वचनिकाविषै हनुमानका निर्वाण गमन वर्णन करनेवाला एकसौ तेरहवां पर्व पूर्ण भया ॥ ११३ ॥

अथानन्तर राम सिंहासनपर विराजे थे। लक्ष्मणके आठों पुत्रोंका अर हनुमानका मुनि होना मनुष्योंके मुखसूं सुनकरि हंसे, अर कहते भए—इन्होंने मनुष्य भवके क्या सुख भोगे? यह छोटी अवस्थामें ऐसे भोग तजकरि योग धारण करैं हैं सो बड़ा आश्चर्य है? यह हठरूप ग्राहकरि ग्रहे हैं। देखो! ऐसे मनोहर काम भोग तजि विरक्त होय बैठे हैं। या भांति कही। यद्यपि श्रीराम सम्यग्दृष्टि ज्ञानी हैं

तथापि चारित्रमोहके वश कईएक दिन लोकोंकी न्याई जगतविषैं रहते भये। संसारके अल्पसुख तिन विषैं राम लक्ष्मण न्याय सहित राज्य करते भए। एक दिन महाज्योतिका धारक सौधर्म इन्द्र परम ऋद्धिकरि युक्त महाधीर्य अर गम्भीरताकरि मंडित, नाना अलंकार धरे सामान्य जातिके देव जे गुरुजन तुल्य, अर लोकपाल जातिके देव देशपाल तुल्य, अर त्रायस्त्रिशत् जातिके देव मंत्री समान तिनकरि मंडित, तथा अन्य सकल देव सहित इन्द्रासनविषैं बैठे कैसे सोहैं जैसे सुमेरु पर्वत और पर्वतोंके मध्य सोहैं। महातेज पुंज अद्भुत रत्नोंका सिंहासन, उसपर सुखसूं विराजता ऐसा भासै जैसे सुमेरुके ऊपर जिनराज भासैं। चन्द्रमा अर सूर्यकी ज्योतिकूं जीतैं ऐसे रत्नोंके आभूषण पहिरे। सुन्दर शरीर मनोहर रूप नेत्रोंकूं आनन्दकारी जैसी जलकी तरंग निर्मल तैसी प्रभाकर युक्त हार पहिरे ऐसा सोहै मानों शीतोदा नदीके प्रवाहकरि युक्त निषधाचल पर्वत ही है। मुकट कंठाभरण कुण्डल केयूर आदि उत्तम आभूषण पहिरे देवोंकरि मंडित जैसा नक्षत्रोंकरि चन्द्रमा सोहै तैसा सोहै है। अपने मनुष्य लोकविषैं चन्द्रमा नक्षत्र ही भासैं तातैं चन्द्रमा नक्षत्रोंका दृष्टांत दिया है। चन्द्रमा नक्षत्र जोतिषी देव हैं तिनसूं स्वर्गवासी देवोंकी अति अधिक ज्योति है। अर सब देवोंसूं इन्द्रकी ही अधिक है। अपने तेजकरि दशों दिशाविषैं उद्योत करता सिंहासनविषैं तिष्ठता जैसा जिनेश्वर भासे तैसा भासे। इन्द्रके इन्द्रासनका अर सभाका जो समस्त मनुष्य जिह्वाकरि सैकडों वर्ष लग वर्णन करैं तौभी न कर सकैं। सभाविषैं इन्द्रके निकट लोकपाल सब देवनिविषैं मुख्य हैं। सुन्दर हैं चित्त जिनके स्वर्गसूं चयकरि मनुष्य होय मुक्ति जावैं हैं। सोलह स्वर्गके बारह इन्द्र हैं। एक एक इन्द्रके चार चार लोकपाल एक भवधारी हैं। ८८६
अर इन्द्रनिविषैं सौधर्म सनत्कुमार महेन्द्र, लांतवेन्द्र, शतारेन्द्र, आरणेन्द्र यह षट एक भवधारी हैं। अर शची इन्द्राणी लोकांतिक देव, पंचम स्वर्गके तथा सर्वार्थसिद्धिके अहमिंद्र मनुष्य होय मोक्ष जावे हैं। सो सौधर्म इन्द्र अपनी सभाविषैं अपने समस्त देवनिकरि युक्त बैठे, लोकपालादिक अपने अपने स्थानक बैठे। सो इन्द्र शास्त्रका व्याख्यान करते भए। वहाँ प्रसंग पाय यह कथन किया अहो देवो! तुम अपने

भावरूप पुष्प निरन्तर महा भक्तिकरि अर्हंत देवकूं चढावो। अर्हंतदेव जगत्‌का नाथ है। समस्त दोषरूप वनके भस्म करिवेकूं दावानल समान है, जिसने संसारका कारण मोहरूप महा असुर अत्यन्त दुर्जन ज्ञानकरि मारा, वह असुर जीवोंका बड़ा बैरी निर्विकल्प सुखका नाशक है। अर भगवान् वीतराग भव्य जीवोंकूं संसार समुद्रसे तारिवे समर्थ हैं। संसार समुद्र कषायरूप उग्र तरंगकरि व्याकुल है। काम रूपग्राहकरि चंचलतारूप, मोहरूप मगरकरि मृत्युरूप है ऐसे भवसागरसूं भगवान् बिना कोई तारिवे

समर्थ नाहीं। कैसे हैं भगवान्? जिनकूं जन्म कल्याणकविषै इन्द्रादिक देव सुमेरुगिरि ऊपर क्षीरसागर के जलकरि अभिषेक करावे हैं। अर महा भक्तिकरि एकाग्रचित्त होय परिवार सहित पूजा करैं हैं। अर धर्म अर्थ अर काम मोक्ष यह चारों पुरुषार्थ हैं तिनविषै लगा है चित्त जिनका। जिनेन्द्रदेव पृथ्वीरूप स्त्रीकूं तजकरि सिद्धरूप वनिताकूं वरते भए। कैसी है पृथ्वीरूप स्त्री? विंध्याचल अर कैलाश हैं कुच जिसके, अर समुद्रकी तरंग हैं कटिमेखला जिसके। ये जीव अनाथ महा मोहरूप अंधकार कर आच्छादित तिनकूं वे प्रभु स्वर्गलोकसे मनुष्यलोकविषै जन्म धरि भवसागरसूं पार करते भए। अपने अद्‌भुत-अनन्तवीर्य कर आठों कर्मरूप वैरी क्षणमात्रविषै खिपाए। जैसे सिंह मदोन्मत्त हस्तियोंकूं नसावै। भग-वान सर्वज्ञदेवकूं अनेक नामकरि भव्य जीव गावैं हैं जिनेन्द्र भगवान अर्हंत स्वयंभू शम्भु स्वयंप्रभु

८९०

सुगत शिवस्थान महादेव कालंजर हिरण्यगर्भ देवाधिदेव ईश्वर महेश्वर ब्रह्मा विष्णु बुद्ध वीतराग विमल विपुल प्रबल धर्मचक्री प्रभु विभु परमेश्वर परमज्योति परमात्मा तीर्थंकर कृतकृत्य कृपालु संसारसूदन सुर ज्ञानचक्षु भवांतक इत्यादि अपार नाम योगीश्वर गावैं हैं, अर इन्द्र धरणींद्र चक्रवर्ती भक्तिकरि स्तुति करैं हैं जो गोप्य हैं अर प्रकट हैं जिनके नाम सकल अर्थ संयुक्त हैं जिसके प्रसादकरि यह जीव कर्मसे छूटकरि परम धामकूं प्राप्त होय है जैसा जीवका स्वभाव है तैसा वहां रहै हैं। जो स्मरण करै उसके पाप विलाय जांय। वह भगवान पुराण पुरुषोत्तम परम उत्कृष्ट आनन्दकी उत्पत्ति का कारण महा कल्याणका मूल देवनिके देव उसके तुम भक्त होवो। अपना कल्याण चाहो हो तो

अपने हृदय कमलविषै जिनराजकूं पधरावो। यह जीव अनादि निधन है, कर्मोंका प्रेरचा भव वनविषै भटकै है। सर्व जन्मविषै मनुष्य भव दुर्लभ है। सो मनुष्यजन्म पायकर जे भूले हैं तिनकूं धिक्कार है। चतुर्गतिरूप है भ्रमण जिसविषै ऐसा संसाररूप समुद्र उसमें बहुरि कब बोध पावोगे। जे अरहंतका ध्यान नाहीं करै हैं, अहो! धिक्कार उनकूं जे मनुष्यदेह पायकर जिनेन्द्रकूं न जपै हैं। जिनेन्द्र कर्मरूप वैरीका नाश करणहारा उसे भूल पापी नाना योनिविषै भ्रमण करै हैं। कभी मिथ्या तपकरि

क्षुद्र देव होय है। बहुरि मरकरि स्थावर योनिविषै जाय महा कष्ट भोगै हैं। यह जीव कुमार्गके आश्रयकरि महा मोहके वश भए इन्द्रोंका इन्द्र जो जिनेन्द्र उसे नाहीं ध्यावै है। देखो मनुष्य होयकरि मूर्ख विषयरूप मांसके लोभी मोहिनी कर्मके योगकरि अहंकार ममकारकूं प्राप्त होय हैं, जिनदीक्षा नाहीं धरै हैं। मंदभागियोंके जिनदीक्षा दुर्लभ है। कभी कुतपकरि मिथ्यादृष्टि स्वर्गसूं आन उपजे हैं। सो हीन देव होय पश्चात्ताप करै है कि हम मध्यलोक रत्न द्वीपविषै मनुष्य भए थे, सो अरहंत का मार्ग न जान्या, अपना कल्याण न किया, मिथ्या तपकरि कुदेव भए। हाय हाय! धिक्कार उन पापियोंकूं जो कुशास्त्रकी प्ररूपणाकरि मिथ्या उपदेश देय महा मानके भरे जीवोंकूं कुमार्गविषै डारै हैं। मूढ़ोंकूं जिनधर्म दुर्लभ है तातैं भव भवविषै दुखी होय हैं। अर नारकी तिर्यंच तो दुखी ही हैं, अर हीन देव भी दुखी ही हैं। अर बड़ी ऋद्धिके धारी देव भी स्वर्गसूं चये हैं सो मरणका बड़ा दुख है, अर इष्ट वियोगका बड़ा दुःख है। बड़े देवोंकी भी यह दशा तो और क्षुद्रोंकी क्या बात? जो मनुष्य देहविषै ज्ञान पाय आत्मकल्याण करै हैं सो धन्य हैं। इन्द्र या भांति कहकर बहुरि कहता
भया—ऐसा दिन कब होय जो मेरी स्वर्गलोकविषै स्थिति पूर्ण होय अर मैं मनुष्यदेह पाय, विषयरूप वैरियोंकूं जीत, कर्मोंका नाशकरि तपके प्रभावसूं मुक्ति पाऊं। तब एक देव कहता भया यहां स्वर्गविषै तो अपनी यही बुद्धि होय है परन्तु मनुष्य देह पाय भूल जाय हैं। जो कदाचित् मेरे कहेकी प्रतीति न करो तो पंचम स्वर्गका ब्रह्मेंद्रनामा इन्द्र अब रामचन्द्र भया है। सो यहां तो यों ही कहते

थे अर अब वैराग्यका विचार ही नाहीं। तब शचीका पति सौधर्म इन्द्र कहता भया सब बंधनमें स्नेहका बड़ा बंधन है। जो हाथ, पग, कंठ आदि अंग अंग बंधा होय सो तो छूटै, परन्तु स्नेहरूप बंधनकरि बंध्या कैसे छूटे ? स्नेहका बंध्या एक अंगुल न जाय सके। रामचन्द्रके लक्ष्मणसूं अति अनुराग है। लक्ष्मणके देखे विना तृप्ति नाहीं। अपने जीवसूं भी उसे अधिक जानै है। एक निमिषमात्र भी लक्ष्मणकूं न देखै तो रामका मन विकल होय जाय। सो लक्ष्मणकूं तजकरि कैसें वैराग्यकूं प्राप्त होय ? कर्मोंकी ऐसी ही चेष्टा है जो बुद्धिमान भी मूर्ख होय जाय है। देखो सुने हैं अपने सर्व भव जिसने ऐसा विवेकी राम भी आत्महित न करै। अहो देव हो! जीवोंके स्नेहका बड़ा बंधन है, या समान और नाहीं तातैं सुबुद्धियोंकूं स्नेह तजि संसार सागर तरिवेका यत्न करना चाहिए। या भांति इन्द्रके मुखका उपदेश तत्वज्ञानरूप अर जिनवरके गुणोंके अनुरागसूं अत्यन्त पवित्र उसे सुनकर देव चित्तकी विशुद्धताकूं पाय जन्म जरा मरणके भयसूं कम्पायमान भए, मनुष्य होय मुक्ति पायवेकी अभिलाषा करते भए।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रन्थ, ताकी भाषा वचनिकाविषै इन्द्रका देवनिकूं उपदेश वर्णन करनेवाला एकसौ चौदहवां पर्व पूर्ण भया ॥ ११४ ॥

अथानन्तर इन्द्र सभासे उठे। तब सुर कहिए कल्पवासी देव अर असुर कहिए भवनवासी वितर ज्योतिषी देव इन्द्रकूं नमस्कारकरि उत्तम भावधरि अपने अपने स्थानक गए। पहिले दूजे स्वर्ग लग भवनवासी वितर ज्योतिषीदेव कल्पवासी देवोंकरि ले गए जाय हैं। सो सभामेंके दो स्वर्गवासी देव रत्नचूल अर मृगचूल बलभद्र नारायणके स्नेह परखिवेकूं उद्यमी भए। मनविषै यह धारणा करी-ते दोनों भाई परस्पर प्रेमके भरे कहिये हैं, देखें उन दोनोंकी प्रीति ? रामके लक्ष्मणसूं एता स्नेह है जाके देखे विना न रहैं। सो रामका मरण सुनि लक्ष्मणकी क्या चेष्टा होय ? लक्ष्मण शोककरि विह्वल

भया क्या चेष्टा करै ? सो क्षण एक देखकरि आवैंगे। शोककरि लक्ष्मणका कैसा मुख हो जाय, कौन सूं कोप करै, क्या कहे, ऐसो धारणाकरि दोनों दुराचारी देव अयोध्या आए। सो रामके महिलविषै विक्रियाकरि समस्त अन्तःपुरकी स्त्रीनिका रुदन शब्द कराया। अर ऐसी विक्रिया करी—द्वारपाल उमराव मंत्री पुरोहित आदि नीचा मुखकरि लक्ष्मणपै आए। अर रामका मरण कहते भए, कि हे नाथ! राम परलोक पधारे। ऐसे वचन सुनकरि लक्ष्मणने मंद पवनकरि चपल जो नील कमल ता समान सुन्दर हैं नेत्र जाके सो हाय! यह शब्द हू आधासा कह तत्काल ही प्राण तजे, सिंहासन ऊपर बैठ्या हुता सो वचनरूप वज्रपातका मारया जीवरहित होय गया। आंखकी पलक ज्यों थी त्योंही रह गई। जीव जाता रह्या। शरीर अचेतन रह गया। लक्ष्मणकूं भ्राताकी मिथ्या मृत्युके वचन रूप अग्निकरि जरा देखि दोनों देव व्याकुल भए। लक्ष्मणके जियायवेकूं असमर्थ। तब विचारी याकी मृत्यु इस ही विधि कही हुती, मनविषै अति पछताए। विषाद अर आश्चर्यके भरे अपने स्थानक गए। शोकरूप अग्निकरि तप्तायमान है चित्त जिनका। लक्ष्मणकी वह मनोहर मूर्ति मृतक भई देव देखि न सके। तहां खड़े न रहे, निंद्य है उद्यम जिनका। गौतम स्वामी राजा श्रेणिकसूं कहैं हैं—हे राजन्! विना विचारे जे पापी कार्य करैं तिनकूं पश्चात्ताप ही होय। देवता गए। अर लक्ष्मणकी स्त्री पतिकूं अचेतनरूप देखि प्रसन्न करनेकूं उद्यमी भईं। कहैं हैं, हे नाथ! किस अविवेकिनी सौभाग्यके गर्वकरि गर्वितने आपका मान न किया, सो उचित न करी। हे देव! आप प्रसन्न होवहु। तिहारी अप्रसन्नता हमकूं दुखका कारण है। ऐसा कहकरि वे परम प्रेमकी भरी लक्ष्मणके अंगसूं आलिंगनकरि पायन पड़ी। वे राणी चतुराईके वचन कहिवेविषै तत्पर कोईएक तो वीण लेय बजावती भई, कोई मृदंग बजावती भई, पतिके गुण अत्यन्त मधुर स्वरसूं गावती भई। पतिके प्रसन्न करिवेविषै उद्यमी हैं चित्त जिनका। कोई एक पतिका मुख देखै है अर पतिके सुनिवेकी है अभिलाषा जिनके। कोई एक निर्मलस्नेहकी धरणहारी पतिके तनसूं लिपटकरि कुण्डलकरि मंडित महासुन्दर कांतिके कपोलोंकूं

८९३

स्पर्शती भई। अर कोईएक मधुरभाषिणी पतिके चरणकमल अपने सिरपर मेलती भई। अर कोई मृगनयनी उन्मादकी भरी विभ्रमकरि कटाक्षरूप जे कमल पुष्प तिनका सेहरा रचती भई, जम्भाई लेती पति का वदन निरखि अनेक चेष्टा करती भई।

या भांति ये उत्तम स्त्रियें पतिके प्रसन्न करिवेकूं अनेक यत्न करें हैं, परन्तु उनके शरीरविषै निरर्थक भए। वे समस्त राणी लक्ष्मणकी स्त्री ऐसे कम्पायमान हैं जैसे कमलोंका वन पवनकरि कम्पायमान होय। नाथकी यह दशा होते संते स्त्रियोंका मन अतिव्याकुल भया। संशयकूं प्राप्त भईं कि क्षणमात्रमें यह क्या भया? चितवनमें न आवै अर कथनमें न आवे ऐसा खेदका कारण शोक, उसे मनमें धरकरि वे मुग्धा, मोहकी मारी पसर गईं। इन्द्रकी इन्द्राणी समान है चेष्टा जिनकी, ऐसी वे राणी तापकरि तप्तायमान सूख गईं। न जानिए तिनकी सुन्दरता कहां जाती रही? यह वृत्तांत भीतरके लोकोंके मुखसूं सुनि श्रीरामचन्द्र मंत्रियोंकरि मंडित महा संभ्रमके भरे भाईपै आए। भीतर राजलोक में गए। लक्ष्मणका मुख प्रभातके चन्द्रमा समान मंदकांति देख्या। जैसा तत्कालका वृक्ष मूलसूं उखड़ पड़ा होय तैसा भाईको देख्या। मनमें चितवते भये बिनाकारण भाई आज मोसूं रूस्या है। यह सदा आनन्द रूप आज क्यों विषादरूप होय रहा है? स्नेहके भरे शीघ्र ही भाईके निकट जाय ताकूं उठाय उरसूं लगाय मस्तक चूमते भए। दाहका मारया जो वृक्ष उस समान हरिकूं निरखि हलधर अंगसे लिपट गया। यद्यपि जीतव्यताके चिह्न रहित लक्ष्मणकूं देख्या तथापि स्नेहके भरे राम उसे मूवा न जानते भए। वक्र होय गई है ग्रीवा जिसकी, शीतल होय गया है अंग जिसका, जगतकी आगल ऐसी भुजा सो शिथिल होय गई, सांसोस्वास नाहीं, नेत्रोंकी पलक लगे न विघटै। लक्ष्मणकी यह अवस्था देखि राम खेदखिन्न होयकरि पसेवसूं भर गए। यह दीनोंके नाथ राम दीन होय गए; बारम्बार मूर्छा खाय पड़े। आंसुवोंकरि भर गए हैं नेत्र जिनके, भाईके अंग निरखे। इसके एक नखकी भी रेखा न आई कि ऐसा यह महाबली कौन कारणकरि ऐसी अवस्थाकूं प्राप्त भया? यह विचार करते संते

भया है कम्पायमान शरीर जिनका, यद्यपि आप सर्व विद्याके निधान, तथापि भाईके मोहकरि विद्या बिसर गई। मूर्छाका यत्न जानैं ऐसे वैद्य बुलाए। मंत्र औषधिविषै प्रवीण, कलाके पारगामी ऐसे वैद्य आए सो जीवना होय तो कछु यत्न करें। वे माथा धुन नीचे होय रहे। तब राम निराश होय मूर्छा खाय पड़े। जैसे वृक्षकी जड़ उखड़ जाय अर वृक्ष गिर पड़े तैसें आप पड़े। मोतियोंके हार चंदनकरि मिश्रित जल ताडके बीजनावोंकी पवनकरि रामकूं सचेत किया। तब महाविह्वल होय विलाप करते भए—शोक अर विषादकरि महापीडित राम आंसुवोंके प्रवाहकरि अपना मुख आच्छादित करते भए। आंसुवोंकरि आच्छादित रामका मुख ऐसा भासै जैसा जलधाराकरि चन्द्रमा भासै। अत्यन्त विह्वल रामकूं देखि सर्वराजलोकरूप समुद्रसूं रुदनरूप ध्वनि होती भई। दुखरूप सागरविषै मग्न सकल स्त्रीजन अत्यर्थपणे रुदन करती भईं। तिनके शब्दकरि दशोंदिशा पूर्ण भईं। कैसैं विलाप करैं हैं? हाय नाथ! पृथ्वीकूं आनन्दके कारण सर्व सुन्दर हमकूं वचनरूप दान देवहु। तुमने विना अर्थ क्यों मौन पकड़ी? हमारा अपराध क्या? विना अपराध हमकूं क्यों तजो हो? तुम तो ऐसे दयालु हो जो अनेक चूक पड़े तो क्षमा करो।

अथानन्तर इस प्रसंगविषै लव अंकुश परमविषादकूं प्राप्त होय विचारते भए कि धिक्कार इस संसार असारकूं। अर इस शरीर समान और क्षणभंगुर कौन? जो एक निमिष मात्रमें मरणकूं प्राप्त होय। जो वासुदेव विद्याधरोंकरि न जीत्या जाय सो भी कालके जालमें आय पड्या। इसलिए यह विनश्वर शरीर, यह विनश्वर राज्य सम्पदा उसकरि हमारे क्या सिद्धि? यह विचार सीताके पुत्र फिर गर्भमें आयवेका है भय जिनकूं, पिताके चरणारविंदकूं नमस्कारकरि महेन्द्रोदयनामा उद्यान विषै जाय अमृतेश्वर मुनिकी शरण लेय दोनों भाई महाभाग्य मुनि भए। जब इन दोनों भाइयोंने दीक्षा धरी तब लोक अतिव्याकुल भए कि हमारा रक्षक कौन? रामकूं भाई के मरणका बड़ा दुःख सो शोकरूप भंवरमें पड़े। जिनकूं पुत्र निकसनेकी कुछ सुधि नाहीं। रामकूं राज्यसूं पुत्रोंसूं प्रियाओंसूं

अपने प्राणसू लक्ष्मण अतिप्यारा। यह कर्मोंकी विचित्रता जिसकर ऐसे जीवोंकी ऐसी अशुभ अवस्था होय। ऐसा संसार का चरित्र देखि ज्ञानी जीव वैराग्यकू प्राप्त होय हैं। जे उत्तम जन हैं तिनके कछु इक निमित्त मात्र बाह्य कारण देखि अन्तरंग के विकारभाव दूर होय ज्ञानरूप सूर्यका उदय होय हैं। पूर्वोपार्जित कर्मोंका क्षयोपशम होय तब वैराग्य उपजै है।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृतग्रन्थ ताकी भाषावचनिकाविषै लक्ष्मणका मरण अर लवणांकुशका वैराग्य वर्णन करनेवाला एकसौ पन्द्रहवां पर्व पूर्ण भया ॥११५॥

———

अथानन्तर गौतम स्वामी राजा श्रेणिकसू कहै हैं—हे भव्योत्तम! लक्ष्मणके काल प्राप्त भए। समस्त लोक व्याकुल भए। अर युगप्रधान जे राम सो अति व्याकुल होय सब बातोंसू रहित भए। कछु सुध नाहीं। लक्ष्मणका शरीर स्वभाव ही करि महासुरूप कोमल सुगन्ध मृतक भया तो जैसेका तैसा। सो श्रीराम लक्ष्मणकू एक क्षण न तजैं। कबहू उरसें लगाय लेय, कभी पपोलें, कभी चूमें, कबहू इसे लेकर आप बैठ जावैं, कभी लेकर उठ चलें, एकक्षण काहूका विश्वास न करैं, एकक्षण न तजै। जैसे बालकके हाथ अमृत आवै अर वह गाढा २ गहै तैसे राम महाप्रिय जो लक्ष्मण उसकू गाढ़ा २ गहैं। अर दीनोंकी नाईं विलाप करैं। हाय भाई! यह तोहि कहा योग्य जो मुझे तजकरि तैंने अकेले भाजिवेकी बुद्धि करी। मैं तेरा विरह एकक्षण सहारिवैं समर्थ नाहीं। यह बात तू कहा न जानै है? तू तो सब बातोंविषैं प्रवीण है। अब मोहि दुःखके सागरविषैं डारकरि ऐसी चेष्टा करै है। हाय भ्रात! यह क्या क्रूर उद्यम किया जो मेरे बिना जाने, मेरे बिना पूछे कूचका नगारा बजाय दिया। हे वत्स! हे बालक! एक बार मुझे वचनरूप अमृत प्याय। तू जो अति विनयवान हुता, बिना अपराध मोसू क्यों कोप किया? हे मनोहर! अब तक कभी मोसू ऐसा मान न किया, अब कछु और ही होय गया। कहु मैं क्या किया, जो तू रूसा। तू सदा ऐसा विनय करता मुझे दूरसूं देखि

उठ खड़ा होय, सन्मुख आवता, मोहि सिंहासन ऊपर बैठावता, आप भूमिमें बैठता। अब कहा दशा भई? मैं अपना सिर तेरे पायनमें दूं तो भी नहीं बोलै है। तेरे चरणकमल चन्द्रकांत मणिसू अधिक ज्योतिकू धरे जे नखोंकरि शोभित देव विद्याधर सेवैं हैं। हे देव! अब शीघ्र ही उठो। मेरे पुत्र वनकू गये, सो दूर न गये हैं, तिनकू हम तुरत ही उलटा लावें। अर तुम बिना यह तिहारी राणी आर्तध्यानकी भरी कुरचीकी नाईं कलकलाट करैं हैं, तुम्हारे गुणरूप पाशसू बन्धी पृथ्वीमें लोटी फिरैं हैं। तिनके हार बिखर गये हैं, अर शीशफूल चूडामणि कटिमेखला कर्णाभरण बिखरे फिरैं हैं। यह महा विलापकरि रुदन करैं हैं, अति आकुल हैं। इनकू रुदनसू क्यों न निवारो? अब मैं तुम बिना कहा करू कहां जाऊं? ऐसा स्थानक नाहीं जहां मोहि विश्राम उपजे। अर यह तिहारा चक्र तुमसू अनुरक्त इसे तजना तुमकू कहा उचित? अर तिहारे वियोगमें मोहि अकेला जानि यह शोकरूप शत्रु दबावै हैं, अब मैं हीनपुण्य कहा करू? मोहि अग्नि ऐसे न दहै अर ऐसा विष कंठकू न सोखै जैसा तिहारा विरह सोखै है अहो लक्ष्मीधर! क्रोध तजि, घनी बेर भई। अर तुम ऐसे धर्मात्मा त्रिकालसामायिकके करणहारे, जिनराज की पूजामें निपुण, सो सामायिकका समय टल पूजा का समय टल्या। अब मुनिनिके आहार देयनेकी बेला है सो उठो। तुम सदा साधुनिके सेवक ऐसा प्रमाद क्यों करो हो? अब यह सूर्य भी पश्चिम दिशाकू आया। कमल सरोवरमें मुद्रित होय गये तैसे तिहारे दर्शन बिना लोकोंके मन मुद्रित होय गये। या प्रकार विलाप करते २ दिन व्यतीत भया, निशा भई। तब राम सुन्दर सेज बिछाय भाईकू भुजावोंमें लेय सूते, किसी का विश्वास नाहीं। राम ने सब उद्यम तजि एक लक्ष्मणमें जीव, रात्रिकू कानोंविषै कहै हैं—हे देव! अब तो मैं अकेला हूं, तिहारे जीवकी बात मोहि कहो। तुम कौन कारण ऐसी अवस्थाकू प्राप्त भये हो, तिहारा वदन चन्द्रमाहूतैं अतिमनोहर अब कांतिरहित क्यों भासै है? अर तिहारे नेत्र मंद पवनकरि चचल जो नील कमल उस समान अब और रूप क्यों भासैं हैं? अहो तुमकू कहा चाहिए सो ल्याऊं। हे लक्ष्मण!

८९७

ऐसी चेष्टा करनी तुमकूं सोहै नाहीं, जो मनविषै होय सो मुखकरि आज्ञा करो। अथवा सीता तुमकूं याद आई होय वह पतिव्रता अपने दुखविषै सहाय थी सो तो अब परलोक गई, तुमकूं खेद करना नाहीं। हे धीर! विषाद तजो। विद्याधर अपने शत्रु हैं सो छिद्र देख आए। अब अयोध्या लुटेगी तातैं यत्न करना होय सो करो। अर हे मनोहर! तुम काहूसूं क्रोध ही करते तब भी ऐसे अप्रसन्न देखे नाहीं, अब ऐसे अप्रसन्न क्यों भासो हो। हे वत्स! अब ये चेष्टा तजो, प्रसन्न होवो। मैं तिहारे पायन परूं हूं, नमस्कार करूं हूं। तुम तो महा विनयवंत हो। सकल पृथ्वीविषै यह बात प्रसिद्ध है कि लक्ष्मण रामका आज्ञाकारी है, सदा सन्मुख है, कभी पराङ्मुख नाहीं। तुम अतुल प्रकाश जगतके दीपक हो, मत कभी ऐसा होवै जो कालरूप वायुकरि बुझ जावो। हे राजनिके राजन्! तुमने या लोककूं अति आनन्दरूप किया। तिहारे राज्यमें अचैन किसीने न पाया। या भरतक्षेत्रके तुम नाथ हो। अब लोकनिकूं अनाथकरि गमन करना उचित नाहीं। तुमने चक्रकरि शत्रुनिके सकल चक्र जीते अब काल-चक्रका पराभव कैसे सहो हो? तिहारा यह सुन्दर शरीर राज्यलक्ष्मीकरि जैसा सोहता था, वैसा ही मूर्छित भया सोहै है। हे राजेन्द्र! अब रात्रि भी पूर्ण भई, संध्या फूली, सूर्य उदय होय गया। अब तुम निद्रा तजो। तुम जैसे ज्ञाता श्रीमुनिसुव्रतनाथके भक्त प्रभातका समय क्यों चूको हो। जो भग-वान वीतरागदेव मोहरूप रात्रिकूं हर लोकालोकका प्रकट करणहारा केवलज्ञानरूप प्रताप करते भए, वे त्रैलोक्यके सूर्य भव्य जीवरूप कमलोंकूं प्रकट करणहारे तिनका शरण क्यों न सेवो? अर यद्यपि प्रभात समय भया परन्तु मुझे अंधकार ही भासै है। क्योंकि मैं तिहारा मुख प्रसन्न नाहीं देखूं। तातैं हे विचक्षण! अब निद्रा तजो, जिनपूजाकरि सभाविषै तिष्ठो, सब सामंत तिहारे दर्शनकूं खड़े हैं। बड़ा आश्चर्य है! सरोवरविषै कमल फूले, तिहारा वदनकमल मैं फूला नाहीं देखूं हूं। ऐसी विपरीत चेष्टा तुमने अब तक कभी भी नहीं करी। उठो, राज्यकार्यविषै चित्त लगावो। हे भ्रात! तिहारी दीर्घ निद्रासूं जिनमन्दिरोंकी सेवाविषै कमी पड़े है, सम्पूर्ण नगरविषै मंगल शब्द मिट गए, गीत

नृत्यवादित्रादि बन्द हो गये हैं। औरोंकी कहा बात ? जे महाविरक्त मुनिराज हैं तिनकूं भी तिहारी यह दशा सुनि उद्वेग उपजै है। तुम जिनधर्मके धारी हो, सब ही साधर्मीजन तिहारी शुभदशा चाहैं हैं। बीण, बांसुरी, मृदंगादिकके शब्दरहित यह नगरी तिहारे वियोगकरि व्याकुल भई नहीं सोहै है। कोई अगिले भवमें महाअशुभ कर्म उपार्जे तिनके उदयकरि तुम सारिखे भाईकी अप्रसन्नतासूं महाकष्टकूं प्राप्त भया हूं। हे मनुष्योंके सूर्य ! जैसें युद्धविषै शक्तिके घावकरि अचेत होय गए थे अर आनन्दसूं उठे, मेरा दुख दूर किया, तैसें ही उठकरि मेरा खेद निवारो।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महा पद्मपुराण संस्कृत ग्रन्थ, ताकी भाषा वचनिकाविषै रामदेवका विलाप वर्णन करनेवाला एकसौ सोलहवां पर्व पूर्ण भया ॥ ११६ ॥

अथानन्तर यह वृत्तांत सुन विभीषण अपने पुत्रनिसहित अर विराधित सकल परिवार सहित अर सुग्रीव आदि विद्याधरनिके अधिपति अपनी स्त्रियोंसहित शीघ्र अयोध्यापुरी आए। आंसुनिकरि भरे हैं नेत्र जिनके, हाथ जोड़ि सीस निवाय रामके समीप आए। महा शोकरूप हैं चित्त जिनके, अति विषादके भरे रामकूं प्रणामकरि भूमिविषै बैठे, क्षण एक तिष्ठकरि मंद २ वाणीकरि विनती करते भए–हे देव ! यद्यपि यह शोक दुर्निवार है तथापि आप जिनवाणीके ज्ञाता हो, सकल संसारका स्वरूप जानो हो, तातैं आप शोक तजिवे योग्य हो। ऐसा कहि सबही चुप होय रहे। बहुरि विभीषण सब बातविषैं महा विचक्षण सो कहता भया–हे महाराज ! यह अनादि कालकी रीति है कि जो जन्मा सो मूवा। सब संसारविषैं यही रीति है, इनहीकूं नाहीं भई। जन्मका साथी मरण है। मृत्यु अवश्य है, काहूसूं न टरी अर न काहूसूं टरै। या संसार पिंजरेविषै पड़े यह जीवरूप पक्षी सबही दुखी हैं, कालके वश हैं। मृत्युका उपाय नाहीं अर सबके उपाय हैं। यह देह निःसंदेह विनाशीक है। तातैं शोक करना वृथा है। जे प्रवीण पुरुष हैं वे आत्मकल्याणका उपाय करैं हैं। रुदन किएसूं मरा न जीवै अर न

वचनालाप करै। तातैं हे नाथ! शोक न करो। यह मनुष्यनिके शरीर तो स्त्री पुरुषनिके संयोगसूं उपजे हैं, सो पानीके बुदबुदावत् विलाय जांय। इसका आश्चर्य कहा? अहमिंद्र इन्द्र लोकपाल आदि देव आयुके अन्तभए स्वर्गसूं चये हैं। जिनकी सागरोंकी आयु अर किसीके मारे न मरें वे भी काल पाय मरें, मनुष्यनिकी कहा बात? यह तो गर्भ के खेदकरि पीडित अर रोगनिकरि पूर्ण, डाभकी अणी के ऊपर जो ओसकी बूंद आय पड़े, उस समान पडनेकूं सन्मुख हैं, महा मलिन हाडोंके पिंजरे ऐसे शरीर के रहिवेकी कहा आशा? आप यह प्राणी अपने सुजनोंका सोच करै सो आप क्या अजर अमर है? आप ही कालकी दाढमें बैठे हैं उसका सोच क्यों न करैं? जो इनहीकी मृत्यु आई होय, अर और अमर हैं तो रुदन करना। जब सबकी यही दशा है तो रुदन काहेका? जेते देहधारी हैं तेते सब कालके आधीन हैं। सिद्ध भगवानके देह नाहीं तातैं मरण नाहीं। यह देह जिस दिन उपज्या उसही दिनसूं काल इसके लेयवेके उद्यमरूं है। यह सब संसारी जीवोंकी रीति है। तातैं संतोष अंगीकार करो। इष्टके वियोगसूं शोक करै सो वृथा है। शोककरि मरै तो भी वह वस्तु पीछी न आवै। तातैं शोक क्यों करिये। देखो काल तो वज्रदण्ड लिए सिरपर खडा है, अर संसारी जीव निर्भय भये तिष्ठै हैं। जैसे सिंह तो शिर पर खड्या है अर हिरण हरा तृण चरै है। त्रैलोक्यनाथ परमेष्ठी, अर सिद्ध परमेश्वर तिन सिवाय कोई तीन लोकविषै मृत्युसूं बच्या सुण्या नाहीं। वे ही अमर हैं, अर सब जन्म मरण करै हैं। यह संसार विंध्याचलके वन समान कालरूप दावानल समान बलै है। सो तुम क्या न देखो हो? यह जीव संसार वनमें भ्रमणकरि अति कष्टसूं मनुष्य देह पावै है सो वृथा खोवै है, काम भोगके अभिलाषी होय माते हाथीकी न्याई बंधनविषै पड़े हैं, नरक निगोदके दुख भोगवे है। कभीयक व्यवहार धर्मकरि स्वर्गविषै देव भी होय हैं, आयुके अन्तमें वहांसूं पड़े हैं। जैसे नदीके ढाहेका वृक्ष कभी उखड़े ही तैसें चारोंगतिके शरीर मृत्युरूप नदीके ढाहेके वृक्ष हैं। इनके उखड़िवेका क्या आश्चर्य है? इन्द्र, धरणेंद्र, चक्रवर्ती आदि अनन्तनाशकूं प्राप्त भए। जैसे मेघकरि दावानल बुझै तैसे शांतिरूप मेघकरि

कालरूप दावानल बुझै, और उपाय नाहीं। पातालविषै, भूतलविषै अर स्वर्गविषै ऐसा कोई स्थान नाहीं जहां कालसूं बचैं। अर छठे कालके अन्त इस भरतक्षेत्रमें प्रलय होयगी, पहाड विलय हो जावेंगे तो मनुष्यनिकी कहा बात ? जे भगवान तीर्थंकर देव, वज्रवृषभ नाराचसंहननके धारक, जिनके समचतुरस्रसंस्थानक, सुर असुर नरोंकरि पूज्य, जो किसी कर जीते न जाय, तिनका भी शरीर अनित्य, वे भी देह तजि सिद्धलोकविषै निज भावरूप रहैं तो औरोंकी देह कैसैं नित्य होय ? सुर, नर, नारक तिर्यंचोंका शरीर केलेके गर्भ समान असार है। जीव तो देहका यत्न करै है, अर काल प्राण हरै है। जैसी बिलके भीतरसूं गरुड़ सर्पकूं ले जाय तैसी देहके भीतरसूं काल ले जाय है। यह प्राणी अनेक मूवोंकूं रोवै है—हाय भाई ! हाय पुत्र ! हाय मित्र ! या भांति शोक करै है। अर कालरूप सर्प सबोंकूं निगलै हैं। जैसे सर्प मींडककूं निगलै। यह मूढ़ बुद्धि झूठे विकल्प करे है—यह मैं किया, यह मैं करूं हूं, यह करूंगा। सो ऐसे विकल्प करता कालके मुखविषै जाय हैं, जैसें टूटा जहाज समुद्रके तले जाये। परलोककूं गया जो सज्जन उसके लार कोई जाय सकै तो इष्टका वियोग कभी न होय। जो शरीरादिक पर वस्तुसूं स्नेह करें हैं सो क्लेशरूप अग्निविषै प्रवेश करें हैं। अर इन जीवोंके इस संसारविषै एते स्वजनोंके समूह भए जिसकी संख्या नाहीं, जे समुद्रकी रेणुकाके कण तिनसूं भी अपार हैं। अर निश्चयकरि देखिये तो या जीवके न कोई शत्रु है, न कोई मित्र है। शत्रु तो रागादिक हैं, अर मित्र ज्ञानादिक हैं। जिनकूं अनेक प्रकारकरि लडाईये, अर निज जानिए सो भी वैरकूं प्राप्त भया मगर महा रोषकरि हणे, जिसके स्तनोंका दुग्ध पाया, जिसकरि शरीर वृद्ध भया, ऐसी माताकूं भी हनै है। धिक्कार है इस संसारकी चेष्टाकूं जो पहिले स्वामी था, अर बार बार नमस्कार करावता सो भी दास होय जाय है, तब पावोंकी लातोंसूं मारिये है। हे प्रभो ! मोहकी शक्ति देखो इसके वश भया यह जीव आपकूं नहीं जानै है, परकूं आप मानै है। जैसे कोई हाथकरि कारे नागकूं गहै तैसे कनक कामिनीकूं गहैं हैं। इस लोकाकाशविषै ऐसा तिलमात्र क्षेत्र नाहीं जहां जीवने जन्म मरण न किए। ६०

अर नरकविषै इसकूं प्रज्ज्वलित ताम्बा प्याया। अर एतीबार यह नरककूं गया जो उसका प्रज्ज्वलित ताम्रपान जोड़िये तो समुद्रके जलसूं अधिक होय। अर सूकर कूकर गर्दभ होय इस जीवने एता मलका आहार किया जो अनन्त जन्मका जोड़िये तो हजारां विंध्याचलकी राशिसूं अधिक होय। अर या अज्ञानी जीवने क्रोधके वशसूं एते पराए शिर छेदे अर उन्होंने इसके छेदे जो एकत्र करिए तो ज्योतिषचक्रकूं उलंघकरि अधिक होवें। जीव नरक प्राप्त भया वहां अधिक दुख पाय निगोद गया। वहां अनन्तकाल जन्म मरण किए। यह कथा सुनकरि कौन मित्रसूं मोह मानै? एक निमिषमात्र विषयका सुख उसके अर्थ कौन अपार दुःख सहै? यह जीव मोहरूप पिशाचके वश पड्या संसार वनविषै भटकै है। हे श्रेणिक! विभीषण रामसूं कहै है हे प्रभो! यह लक्ष्मणका मृतक शरीर तजिवे योग्य है, अर शोक करना योग्य नाहीं। यह कलेवर उरसूं लगाये रहना योग्य नाहीं। या भांति विद्याधरनिका सूर्य जो विभीषण उसने श्रीरामसूं विनती करी अर राम महाविवेकी, जिनसूं और प्रतिबुद्ध होय, तथापि मोहके योगसूं लक्ष्मणकी मूर्तिकूं न तजी। जैसे विनयवान गुरुकी आज्ञा न तजै।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महा पद्मपुराण संस्कृत ग्रन्थ, ताकी भाषा वचनिकाविषै लक्ष्मणका वियोग, रामका विलाप अर विभीषणका संसारस्वरूप वर्णन करनेवाला एकसौ सत्रहवां पर्व पूर्ण भया ॥ ११७॥

अथानन्तर सुग्रीवादिक सब राजा रामचन्द्रसूं विनती करते भए—अब वासुदेवकी दग्ध क्रिया करो। तब श्रीरामकूं यह वचन अतिअनिष्ट लगा अर क्रोधकरि कहते भए—तुम अपने माता पिता पुत्र, पौत्र सबों की दग्धक्रिया करो, मेरे भाई की दग्धक्रिया क्यों होय? जो तुम्हारा पापियोंका मित्र बंधु कुटुम्ब सो सब नाशकूं प्राप्त होय। मेरा भाई क्यों मरै? उठो लक्ष्मण! इन दुष्टनिके संयोगतैं और ठौर चलैं, जहां इन पापीनिके कटुवचन न सुनिये। ऐसा कहि भाईकूं उरसूं लगाय कांधे धरि, उठ चले। विभीषण सुग्रीवादिक अनेक राजा इनकी लार पीछे २ चले आवैं। राम काहूका विश्वास न करै। भाईकूं कांधे

६०२

धरे फिरें। जैसैं बालकके हाथ विषफल आया अर हितू छुडाया चाहे, वह न छोडे, तैसैं राम लक्ष्मण के शरीरकूं न छोडे। आंसुनिकरि भीज रहे हैं नेत्र जिनके, भाईसूं कहते भए हे भ्राता! अब उठो, बहुत वेर भई, ऐसे कहा सोवो हो? अब स्नानकी बेला भई। स्नानके सिंहासन विराजो। ऐसा कहि मृतक शरीरकूं स्नानके सिंहासन पर बैठाया। अर मोहका भरचा राम मणि स्वर्णके कलशोंसूं स्नान करावता भया। अर मुकुट आदि सर्व आभूषण पहिराये। अर भोजनकी तयारी कराई सेवकोंकूं कही

नानाप्रकार रत्न स्वर्णके भाजनमें नानाप्रकारका भोजन ल्यावो, उसकरि भाईका शरीर पुष्ट होय। सुन्दर भात, दाल, फुलका नानाप्रकारके व्यंजन नाना प्रकारके रस शीघ्रही ल्यावो। यह आज्ञा पाय सेवक सब सामग्रीकरि ल्याये, नाथके आज्ञाकारी। तब आप रघुनाथ लक्ष्मणके मुखमें ग्रास देवें सो न ग्रसै, जैसे अभव्य जिनराजका उपदेश न ग्रहैं। तब आप कहते भए जो तैंने मोसूं कोप किया तो आहारसूं कहा कोप? आहार तो करो, मोसूं मति बोलो। जैसैं जिनवाणी अमृतरूप है, परन्तु दीर्घ संसारीकूं न रुचै, तैसे वह अमृतमई आहार लक्ष्मणके मृतक शरीरकूं न रुच्या। बहुरि रामचन्द्र कहै हैं—हे लक्ष्मीधर! यह नानाप्रकारकी दुग्धादि पीवने योग्य वस्तु सो पीवो। ऐसा कहकरि भाईकूं दुग्धादि प्याया चाहें सो कहा पीवे? यह कथा गौतमस्वामी श्रेणिकसूं कहै हैं। वह विवेकी राम स्नेह-करि जीवतेको सेवा करिये तैसैं मृतक भाईकी करता भया। अर नानाप्रकारके मनोहर गीत, बीण, बांसुरी आदि नानाप्रकारके नाद करता भया। सो मृतककूं कहा रुचै? मानों मरा हुवा लक्ष्मण राम का संग न तजता भया। भाईकूं चन्दनसूं चर्चा भुजावोंसूं उठाय लेय, उरसूं लगाय लेय, सिर चूम्बै, मुख चूम्बै, हाथ चूम्बै, अर कहै हैं—हे लक्ष्मण! यह क्या भया? तू तो ऐसा कभी न सोवता, अब तो विशेष सोवने लगा। अब निद्रा तजो। या भांति स्नेहरूप ग्रहका ग्रह्या बलदेव नानाप्रकारकी चेष्टा करें। यह वृत्तांत सब पृथ्वीमें प्रकट भया कि लक्ष्मण मूवा, लव अंकुश मुनि भये, अर राम मोहका मारचा मूढ होय रहा है। तब बैरी क्षोभकूं प्राप्त भए, जैसैं वर्षाऋतुका समय पाय मेघ गाजें। शंबूक

का भाई सुन्दर इसका नन्दन विरोधरूप है चित्त जिसका, सो इन्द्रजीतके पुत्र वज्रमालीपै आया, अर कहा मेरा बाबा अर दादा दोनों लक्ष्मणने मारे सो मेरा रघुवंशिनिसूं वैर है। अर हमारा पाताल-लंकाका राज्य खोस लिया, अर विराधितकूं दिया, अर वानरवंशियोंका शिरोमणि सुग्रीव स्वामीद्रोही होय रामसूं मिला, सो राम समुद्र उल्लंघ लंका आए, राक्षसद्वीप उजाड्या। रामकूं सीताका अति दुःख, सो लंका लेयवेका अभिलाषी भया। अर सिंहवाहिनी अर गरुड़वाहिनी दोय महाविद्या राम लक्ष्मणकूं प्राप्त भई तिनकरि इन्द्रजीत कुम्भकर्ण बंदीमें किए। अर लक्ष्मणके चक्र हाथ आया। उसकरि रावणकूं हत्या। अब कालचक्रकरि लक्ष्मण मूवा सो वानरवंशियोंकी पक्ष टूटी, वानरवंशी लक्ष्मणकी भुजावोंके आश्रयसूं उन्मत्त होय रहे थे। अब क्या करेंगे, वे निरपक्ष भए। अर रामकूं ग्यारह पक्ष हो चुके, बारहमां पक्ष लगा है, सो गहला होय रहा है। भाईके मृतक शरीरकूं लिए फिरै है। ऐसा मोह कौनकूं होय? यद्यपि राम समान योधा पृथ्वीमें और नाहीं, वह हल मूसलका धरण-हारा अद्वितीय मल्ल है, तथापि भाईके शोकरूप कीचमें फंस्या निकसवे समर्थ नाहीं। सो अब रामसूं वैर भाव लेनेका दाव है। जिसके भाईने हमारे वंशके बहुत मारे। शम्बूकके भाईके पुत्रने इन्द्रजीतके बेटेकूं यह कह्या सो क्रोधकरि प्रज्वलित भया, मंत्रियोंकूं आज्ञा देय रणभेरी दिवाय सेना भेलीकर शम्बूकके भाईके पुत्रसहित अयोध्याकी ओर चाल्या। सेनारूप समुद्रकूं लिए प्रथम तो सुग्रीवपर कोप किया कि सुग्रीवकूं मार अथवा पकड़ उसके देश खोसलें। बहुरि रामसूं लड़ें। यह विचार इन्द्रजीतके पुत्र वज्रमालीने किया। सुन्दरके पुत्र सहित चढ्या। तब ये समाचार सुनकरि सब विद्याधर जे रामके सेवक थे वे रामचन्द्रके निकट अयोध्यामें आय भेले भए। जैसी भीड़ अयोध्यामें अंकुशके आयवेके दिन भई थी तैसी भई। वैरियोंकी सेना अयोध्याके समीप आई सुनकरि रामचन्द्र लक्ष्मणकूं कांधे लिए ही धनुष बाण हाथविषै सम्हारे, विद्याधरनिकूं संग लेय आप बाहिर निकसे। उस समय कृतांतवक्रका जीव अर जटायु पक्षीका जीव चौथे स्वर्ग देव भए थे तिनके आसन कम्पायमान भए।

६०४

कृतांतवक्रका जीव स्वामी, अर जटायु पक्षी का जीव सेवक । सो कृतांतवक्रका जीव जटायु के जीवसूं कहता भया—हे मित्र ! आज तुम क्रोधरूप क्यों भए हो ? तब वह कहता भया—जब मैं गृधपक्षी था तो रामने मुझे प्यारे पुत्रकी न्याईं पाल्या, अर जिनधर्म का उपदेश दिया । मरणसमय नमोकार मंत्र दिया । उसकरि मैं देव भया । अब वह तो भाईके शोककरि तप्तायमान है अर शत्रु की सेना उस पर आई है । तब कृतांतवक्र का जीव जो देव था उसने अवधि जोडकरि कही—हे मित्र ! मेरा वह स्वामी था । मैं उसका सेनापति था । मुझे बहुत लडाया, भ्रात पुत्रोंसूं भी अधिक गिण्या,अर मेरे उनके वचन हैं,जब तुमकूं खेद उपजेगा तब तिहारे पास मैं आऊंगा । सो ऐसा परस्पर कहकरि वे दोनों देव चौथे स्वर्गके वासी सुन्दर आभूषण पहिरे, मनोहर हैं केश जिनके, सो अयोध्याकी ओर आए । दोनों विचक्षण, परस्पर दोनों बतलाए । कृतांतवक्रके जीवने जटायुके जीवसूं कहा—तुम तो शत्रुओं की सेना की ओर जावो, उनकी बुद्धि हरो । अर मैं रघुनाथके समीप जाऊं हूं । तब जटायुका जीव शत्रुओं की ओर गया । कामदेव का रूपकरि उनकूं मोहित किया । अर उनकूं ऐसी माया दिखाई जो अयोध्या के आगे अर पीछे दुर्गम पहाड़ पड़े हैं, अर अयोध्या काहूसूं जीती न जाय । यह कौशलीपुरी सुभटों करि भरी है । कोट आकाश लग रहे हैं । अर नगर के बाहिर भीतर देव विद्याधर भरे हैं । हमने न जानी जो यह नगरी महा विषम है । धरतीविषै देखिए तो आकाशमें देखिए तो देव विद्याधर भर रहे हैं । अब कौन प्रकार हमारे प्राण बचें ? कैसे जीवते घर जावें ? जहां श्रीरामदेव विराजे सो नगरी हमसूं कैसे लई जाय ? ऐसी विक्रियाशक्ति विद्याधरनिविषै कहां ? हम बिना विचारे ये काम किया । जो पटबीजना सूर्यसूं वैर विचारै तो क्या कर सकै । अब जो भागो तो कौन राह होयकरि भागो, मार्ग नाहीं । या भांति परस्पर वार्ता करि कांपने लगे । समस्त शत्रुओंकी सेना विह्वल भई । तब जटायुके जीवने देव विक्रियाकी क्रीड़ा कर उनकूं दक्षिणकी ओर भागनेका मार्ग दिया । वे सब प्राण रहित होय कांपते भागे जैसे सिचान आगे परेवे भागें । आगे जायकरि इन्द्रजीतके पुत्रने विचारी जो

हम विभीषणकूं कहा उत्तर देंगे। अर लोकोंकूं क्या मुख दिखावेंगे? ऐसा विचार लज्जावान् होय सुन्दरके पुत्र चारों रत्नसहित अर विद्याधरनि सहित इन्द्रजीतके पुत्र वज्रमाली रतिवेग नामा मुनि के निकट मुनि भए, तब यह जटायुका जीव देव उन साधुओंका दर्शनकरि अपना सकल वृत्तांत कहि क्षमा कराय अयोध्या आया, जहां राम भाईके शोककरि बालककीसी चेष्टा कर रहे हैं। तिनके संबोधिवेके अर्थ वे दोनों देव चेष्टा करते भए। कृतांतवक्रका जीव तो सूखे वृक्षकूं सींचने लगा, अर जटायु

का जीव मृतक बैल युगल तिनकरि हल बाहवेका उद्यमी भया, अर शिला ऊपर बीज बोने लगा। सो ये भी दृष्टान्त रामके मनमें न आया। बहुरि कृतांतवक्रका जीव रामके आगे जलकूं घृत के अर्थ विलोवता भया अर जटायुका जीव बालू रेतकूं घानीमें तेलके निमित्त पेलता भया। सो इन दृष्टांतनिकरि रामकूं प्रतिबोध न भया। और भी अनेक कार्य इसी भांति देवोंने किए। तब रामने पूछी तुम बड़े मूढ़ हो, सूखा वृक्ष सींचा सो कहा? अर मूवे बैलोंसूं हल बाहना करो सो कहा। अर शिला ऊपर बीज बोवना सो कहा। अर जलका विलोवना अर बालूका पेलना इत्यादि कार्य तुम किए सो कौन अर्थ? तब वे दोनों कहते भए तुम भाईके मृतक शरीरकूं वृथा लिए फिरोहो उसविषै क्या? यह वचन सुनकरि लक्ष्मणकूं गाढ़ा उरसूं लगाय पृथ्वी का पति जो राम सो क्रोधकरि उनसूं कहता भया—हे कुबुद्धि हो। मेरा भाई पुरुषोत्तम उसे अमंगल के शब्द क्यों कहो हो? ऐसे शब्द बोलते तुमकूं दोष उपजेगा। या भांति कृतांतवक्रके जीवके और रामके विवाद होय है। उसही समय जटायु का जीव मूवे मनुष्यका कलेवर लेय रामके आगे आया। उसे देख राम बोले मरेका कलेवर काहेकूं कांधे लिए फिरोहो? तब उसने कही तुम प्रवीण होय प्राणरहित लक्ष्मणके शरीरकूं क्यों लिए फिरो हो? पराया अणुमात्र भी दोष देखो हो, अर अपना मेरु प्रमाण दोष नाहीं देखो हो। सारिखेकी सारिखेसूं प्रीति होय है। सो तुमकूं मूढ़ देखि हमारे अधिक प्रीति उपजी है। हम वृथा कार्यके करणहारे तिनविषै तुम मुख्य हो। हम उन्मत्तताकी ध्वजा लिए फिरे हैं, सो तुमकूं अति उन्मत्त देखि तुम्हारे

निकट आए हैं।

या भांति उन दोनों मित्रोंके वचन सुनि राम मोहरहित भया। शास्त्रनिके वचन चितार सचेत भए जैसे सूर्य मेघपटलसूं निकसि अपनी किरणकरि देदीप्यमान भासै, तैसे भरतक्षेत्रका पति राम सोई भया भानु, सो मोहरूप मेघपटलसूं निकसि, ज्ञानरूप किरणनिकरि भासता भया, जैसे शरद्ऋतुमें कारी घटासूं रहित आकाश निर्मल सोहै तैसैं रामका मन शोकरूप कर्दमसूं रहित निर्मल भासता भया। राम समस्त शास्त्रनिमें प्रवीण, अमृत समान जिनवचन चितार खेदरहित भए। धीरता के अवलंबनकरि ऐसे सोहै जैसा भगवान्का जन्माभिषेकविषैं सुमेरु सोहै। जैसे महा दाह की शीतल पवन के स्पर्शसूं रहित कमलोंका वन सोहै, अर फूलैं तैसैं शोकरूप कलुषतारहित रामका चित्त विकसता भया। जैसे कोई रात्रिके अन्धकारमें मार्गभूल गया था अर सूर्यके उदयके भए मार्ग पाय प्रसन्न होय महाक्षुधाकरि पीडित मन वांछित भोजन खाय अत्यन्त आनन्दकूं प्राप्त होय, अर जैसे कोई समुद्रके तिरिवेका अभिलाषी जहाजकूं पाय हर्षरूप होय, अर वनमें मार्ग भूल नगरका मार्ग पाय खुशी होय, अर तृषाकरि पीड़ित महा सरोवरकूं पाय सुखी होय, रोगकरि पीडित रोग हरण औषधकूं पाय अत्यन्त आनन्दकूं पावै, अर अपने देश गया चाहे अर साथी देखि प्रसन्न होय, अर बंदीगृहसूं छूटया चाहै, अर बेड़ी कटैं जैसे हर्षित होय तैसे रामचन्द्र प्रतिबोधकूं पाय प्रसन्न भए। प्रफुल्लित भया है हृदयकमल जिनका, परम कांतिकूं धारते, आपकूं संसार अंधकूपसूं निकस्या मानते भए। मनमें जानी मैं नया जन्म पाया। श्रीराम विचारै है अहो डाभकी अणीपर पड़ी ओसकी बूंद ता समान चंचल मनुष्य का जीतव्य एक क्षणमात्रमें नाशकूं प्राप्त होय है। चतुर्गति संसारमें भ्रमण करते मैंने अत्यन्त कष्टसूं मनुष्य शरीरकूं पाया सो वृथा खोया। कौनके पुत्र, कौन का परिवार, कौनका धन, कौनकी स्त्री ? या संसारमें या जीवने अनन्त सम्बन्धी पाये। एक ज्ञान दुर्लभ है। या भांति श्रीराम प्रतिबुद्ध भए। तब वे दोनों देव अपनी माया दूरकरि लोकोंकूं आश्चर्यकी करणहारी स्वर्ग की विभूति प्रकट दिखा-

वते भए। शीतलमंद सुगन्धपवन बाजी अर आकाशमें देवोंके विमानही विमान होय गए,अर देवांगना गावती भईं, बीण, बांसुरी, मृदंगादि बाजते भए। वे दोनों देव रामसूं पूछते भए—आप इतने दिवस राज्य किया सो सुख पाया ? तब राम कहते भए, राज्यविषै काहेका सुख ? जहां अनेक व्याधि हैं। जो याहि तजि मुनि भए वे सुखी। अर मैं तुमकूं पूछूं हूं तुम महा सौम्य वदन कौन हो, अर कौन कारण करि मोसूं इतना हित जनाया। तब जटायुका जीव कहता भया—हे प्रभो ! मैं वह गृद्ध पक्षी हूं। आप मुनिनकूं आहार दिया वहां मैं प्रतिबुद्ध भया। अर आप मोहि निकट राख्या, पुत्रकी न्याईं पाल्या अर लक्ष्मण सीता मोसूं अधिक कृपा करते। सीता हरी गई तादिन मैं रावणसूं युद्धकरि कण्ठगत प्राण भया। आपने आय मोहि पंचनमोकारमंत्र दिया,सो मैं तिहारे प्रसादकरि चौथे स्वर्ग देव भया। स्वर्गके सुखकरि मोहित भया, अबतक आपके निकट न आया। अब अवधिज्ञानकरि तुमकूं लक्ष्मण के शोककरि व्याकुल जान तिहारे निकट आया हूं। अर कृतांतवक्रके जीवने कही—हे नाथ ! मैं कृतांतवक्र आपका सेनापति हुता। आप मोहि भ्रात पुत्रनितैं अधिक जान्या। अर वैराग्य होते मोहि आप आज्ञा करीहुती जो देव होवो तो हमकूं कबहूं चिन्ता उपजै तब चितारियो। सो आपके लक्ष्मणके मरण की चिन्ता जानि हम तुमपै आए। तब राम दोनों देवनिसूं कहते भए—तुम मेरे परममित्र हो। महा प्रभावके धारक चौथे स्वर्गके महाऋद्धिधारी देव मेरे संबोधिवेकूं आए। तुमकूं यही योग्य। ऐसा कहकरि रामने लक्ष्मणके शोकसूं रहित होय लक्ष्मणके शरीरकूं सरयू नदीके ढाहे दग्ध किया। श्री राम आत्मभावके ज्ञाता धर्मकी मर्यादा पालनेके अर्थ शत्रुघ्न भाईकूं कहते भए—हे शत्रुघ्न ! मैं मुनिके व्रतधारि सिद्धपदकूं प्राप्त हुआ चाहूं हूं। तू पृथ्वी का राज्य करि। तब शत्रुघ्न कहते भए हे देव ! मैं भोगनिका लोभी नाहीं जाके राग होय सो राज्य करै। मैं तिहारे संग जिनराजके व्रत धारूंगा, अन्य अभिलाषा नाहीं है। मनुष्यनिके शत्रु ये काम भोग मित्र बांधव जीतव्य इनसूं कौन तृप्त भया ? कोई ही तृप्त न भया। तातैं इन सबनिका त्याग ही जीवकूं कल्याणकारी है।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रन्थ, ताकी भाषावचनिकाविषै लक्ष्मणकी दग्धक्रिया अर मित्रदेवनिका आगमन वर्णन करने वाला एकसौ अठारहवां पर्व पूर्ण भया ॥ ११८ ॥

अथानन्तर श्रीरामचन्द्र ने शत्रुघ्न के वैराग्यरूप वचन सुनि ताहि निश्चयसूं राज्यसूं परांगमुख जानि क्षणएक बिचारि अनंग लवणके पुत्रकूं राज्य दिया। सो पिता तुल्य गुणनिकी खानि, कुलकी धुराका धरणहारा, नमस्कार करैं हैं समस्त सामंत जाकूं, सो राज्यविषै तिष्ठया। प्रजा का अति अनुराग है जासूं। महा प्रतापी पृथ्वीविषै आज्ञा प्रवर्तावता भया। अर विभीषण लंकाका राज्य अपने पुत्र सुभूषणकूं देय वैराग्यकूं उद्यमी भया। अर सुग्रीवहू अपना राज्य अंगदकूं देयकरि संसार शरीर भोगसूं उदास भया। ये सब राम के मित्र रामकी लार भवसागर तरिवेकूं उद्यमी भए। राजा दशरथका पुत्र राम भरतचक्रवर्तीकी न्याईं राज्यका भार तजता भया। कैसा है राम? विषसहित अन्न समान जानै विषय सुख जाने, अर कुलटा स्त्री समान जानी है समस्त विभूति जाने। एक कल्याण का कारण मुनिनिके सेयवे योग्य, सुर असुरोंकरि पूज्य श्री मुनिसुव्रतनाथका भाख्या मार्ग ताहि उरविषै धारता भया। जन्म मरणके भयसूं कम्पायमान भया है हृदय जाका, ढीले किए हैं कर्मबंध जानै, धोय डाले हैं रागादिक कलंक जाने, महावैराग्यरूप चित्त है जाका। क्लेशभावसूं निवृत्त जैसा मेघपटलसूं रहित भानु भासै तैसा भासता भया। मुनिव्रत धारिवेका है अभिप्राय जाके। ता समय अरहदास सेठ आया। तब ताहि श्रीराम चतुर्विधसंघकी कुशल पूछते भए। तब वह कहता भया—हे देव! तिहारे कष्टकरि मुनिनकाहू मन अनिष्ट संयोगकूं प्राप्त भया। ये बात करैं हैं अर खबर आई है कि मुनिसुव्रतनाथके वंश में उपजे चार ऋद्धिके धारक स्वामी सुव्रत, महाव्रतके धारक, कामक्रोध के नाशक आए हैं। यह वार्ता सुनकरि महाआनन्दके भरे राम, रोमांच होयगया है शरीर जिनका, फूल गए हैं नेत्रकमल जिनके, अनेक भूचर खेचर नृपनिसहित जैसैं प्रथम बलभद्र विजय स्वर्णकुम्भ स्वामी

के समीप जाय मुनि भए हुते तैसैं मुनि होनेकूं सुव्रतमुनि के निकट गये। ते महा श्रेष्ठगुणों के धारक, हजारों मुनि मानैं हैं आज्ञा जिनकी, तिनपै जाय प्रदक्षिणा देय हाथ जोडि सिरनवाय नमस्कार किया। साक्षात् मुक्तिके कारण महामुनि तिनका दर्शन करि अमृतके सागरविषैं मग्न भए। परमश्रद्धाकरि मुनिराजतैं रामचन्द्रने जिनचन्द्रकी दीक्षा धारिवेकी विनती करी। हे योगीश्वरनिके इन्द्र! मैं भव प्रपचसूं विरक्त भया तिहारी शरण ग्रहा चाहूं हूं। तिहारे प्रसादसूं योगीश्वरनिके मार्गविषै विहार करूं। या भांति रामने प्रार्थना करी। कैसे हैं राम? धोये हैं समस्त रागद्वेषादिक कलंक जिन्होंने। तब मुनींद्र कहते भए—हे नरेन्द्र! तुम या बात के योग्य ही हो, यह ससार कहा पदार्थ है? यह तज-करि तुम जिनधर्म रूप समुद्रका अवगाह करो। यह मार्ग अनादिसिद्ध बाधारहित अविनाशी सुख का देनहारा तुमसे बुद्धिमान ही आदरैं। ऐसा मुनिने कहा तब राम संसारसूं विरक्त महा प्रवीण, जैसैं सूर्य सुमेरुकी प्रदक्षिणा करैं तैसैं मुनीन्द्रकी प्रदक्षिणा करते भए। उपज्या है महाज्ञान जिनकूं, वैराग्य रूप वस्त्र पहिरे, बांधी है कर्मोंके नाशकूं कमर जिन्होंने, आशारूप पाश तोडि, स्नेहका पींजरा दग्ध-करि, स्त्रीरूप बंधनसूं छूटि, मोह का मान मारि,हार कुण्डल मुकुट केयूर कटिमेखलादि सर्व आभूषण डारि, तत्काल वस्त्र तजे। परम तत्वविषै लगाहै मन जिनका,वस्त्राभरण यूं तजे ज्यों शरीर तजिए। महासुकुमार अपने कर तिनकरि केशलोंच किए। पद्मासन धरि विराजे। शीलके मन्दिर अष्टम बल-भद्र समस्त परिग्रहकूं तजकरि ऐसे सोहते भए जैसा राहुसूं रहित सूर्य सोहै। पंचमहाव्रत आदरे। पंचसमिति अंगीकार करि तीन गुप्तिरूप गढ़विषै विराजे। मनोदण्ड, वचनदण्ड, कायदण्डके दूर करण-हारे, षटकायके मित्र, सप्त भयरहित, आठ कर्मोंके रिपु,नवधा ब्रह्मचर्यके धारक,श्रीवत्स लक्षणकरि शोभित है उरस्थल जिनका, गुणभूषण, सकलदूषणरहित, तत्त्वज्ञानविषैं दृढ़, रामचन्द्र महामुनि भए। देवनिने पंचाश्चर्य किए। सुन्दर दुंदुभी बाजे। अर दोनों देव कृतांतवक्रका जीव अर एक जटायुका जीव तिनने परम उत्साह किए। जब पृथ्वीका पति राम पृथ्वीकूं तजि निकस्या तब भूमिगोचरी विद्या-

धर सब ही राजा आश्चर्यकूं प्राप्त भए। अर विचारते भए जो ऐसी विभूति, ऐसे रत्न, यह प्रताप तजकरि रामदेव मुनि भए तो और हमारे कहा परिग्रह, जाके लोभतैं घरमें तिष्ठैं। वृत विना हम एते दिन योंही खोए। ऐसा विचारकरि अनेक राजा गृहबंधनसूं निकसे। अर रागमई पाशी काटि द्वेषरूप वैरीकूं विनाशि सर्व परिग्रहका त्यागकरि भाई शत्रुघ्न मुनि भए। अर विभीषण, सुग्रीव, नील, नल,चन्द्रनख, विराधित इत्यादि अनेक राजा मुनि भए। विद्याधर सर्व विद्याका त्यागकरि ब्रह्म-विद्याकूं प्राप्त भए। कई एकनिकूं चारणऋद्धि उपजी। या भांति रामके वैराग्य भए सोलह हजार कछु अधिक महीपति मुनि भए। अर सत्ताईस हजार राणी श्रीमती आर्यिकाके समीप आर्यिका भईं।

अथानन्तर श्रीराम गुरुकी आज्ञा लेय एकविहारी भए। तजे हैं समस्त विकल्प जिन्होंने गिरिनि-की गुफा अर गिरिनिके शिखर अर विषम वन जिनविषै दुष्टजीव विचरैं वहां श्रीराम जिनकल्पी होय ध्यान धरते भए। अवधिज्ञान उपज्या। जाकरि परमाणुपर्यंत देखते भए। अर जगतके पदार्थ सकल भासे। लक्ष्मणके अनेक भव जाने, मोह का सम्बन्ध नाहीं, तातैं मन ममत्वकूं न प्राप्त होता भया। अब रामकी आयुका व्याख्यान सुनो। कौमार कालवर्ष सौ १००, मंडलीक पद वर्ष तीन सौ ३००, दिग्विजय वर्ष चालीस ४०, अर ग्यारह हजार पांच सौ साठ वर्ष ११५६० तीन खंडका राज्यकरि बहुरि मुनि भए। लक्ष्मणका मरण याही भांति था। देवनिका दोष नाहीं। अर भाईके मरण निमित्ततैं रामके वैराग्य का उदय था। अवधिज्ञानके प्रतापकरि रामने अपने अनेक भव जाने। महा धीर्यकूं धरे वृत शीलके पहाड, शुक्ल लेश्याकरि युक्त, महा गम्भीर गुणनि के सागर, समाधान चित्त, मोक्ष लक्ष्मीविषै तत्पर, शुद्धोपयोगके मार्गविषै प्रवरते। सो गौतमस्वामी राजा श्रेणिक आदि सकल श्रोताओं सूं कहे हैं जैसे रामचन्द्र जिनेन्द्रके मार्गविषै प्रवर्ते तैसें तुमहूं प्रवरतो,अपनी शक्ति प्रमाण महा भक्ति-करि जिनशासनविषै तत्पर होवो। जिन नामके अक्षर महारत्नोंकूं पायकरि हो प्राणी हो! खोटा आच-रण तजहु। दुराचार महादुःख का दाता है, खोटे ग्रंथनिकरि मोहित है आत्मा जिनका, अर पाखण्ड

९११

क्रियाकरि मलिन है चित्त जिनका, वे कल्याणके मार्गकूं तजि जन्मके आंधे की न्याईं खोटे पन्थ में प्रवरते हैं। कईएक मूर्ख साधुका धर्म नहीं जानें हैं अर नाना प्रकार के उपकरण साधु के बतावे हैं। अर निर्दोष जान ग्रहै हैं वे वाचाल हैं। जे कुलिंग कहिये खोटे भेष मूढ़निने आचरे हैं वे वृथा हैं। तिनसूं मोक्ष नाहीं। जैसे कोई मूर्ख मृतकके भारकूं वहै है सोवृथा खेद करै है। जिनके परिग्रह नाहीं अर काहूसूं याचना नाहीं, वे ऋषि हैं, निर्ग्रन्थ, उत्तम गुणनिकरि मंडित पंडितोंकरि सेयवे योग्य हैं। यह महाबली बलदेव के वैराग्य का वर्णन सुनि संसारसूं विरक्त होवो, जाकरि भवतापरूप सूर्य का आताप न पावो।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रन्थ ताकी भाषावचनिकाविषै श्रीराम का वैराग्य वर्णन करनेवाला एकसौ उन्नीसवां पर्व पूर्ण भया ॥ ११९ ॥

अथानन्तर गौतमस्वामी राजा श्रेणिकसूं कहै हैं-हे भव्योत्तम! रामचन्द्रके अनेक गुण धरणींद्र हू अनेक जीभकरि गायवे समर्थ नाहीं, वे महामुनीश्वर जगतके त्यागी, महाधीर, पंचोपवासकी है प्रतिज्ञा जिनके, सो ईर्यासमिति पालते नन्दस्थलीनामा नगरी, तहां पारणाके अर्थ गए। उगते सूर्य समान है दीप्ति जिनकी, मानों चालते पहाड़ ही हैं। महा स्फटिकमणि समान शुद्ध हृदय जिनका, वे पुरुषोत्तम मानों मूर्तिवंत धर्म ही मानों तीन लोकका आनन्द एकत्र होय रामकी मूर्ति निपजी है। महा कांतिके प्रवाहकरि पृथ्वीकूं पवित्र करते मानों आकाशविषै अनेक रंगकरि कमलोंका वन लगवाते नगरविषै प्रवेश करते भए। तिनके रूपकूं देखि नगरके सब लोक क्षोभकूं प्राप्त भए। लोक परस्पर बतलावे हैं-अहो देखो! यह अद्भुतरूप, ऐसा आकार, जगतविषै दुर्लभ, कबहु देखिवेविषै न आवे, यह कोई महापुरुष महासुन्दर शोभायमान, अपूर्व नर दोनों बाहु लम्बाये आवैं हैं। धन्य यह धीर्य! धन्य यह

पराक्रम ! धन्य यह रूप ! धन्य यह कांति ! धन्य यह दीप्ति ! धन्य यह शांति ! धन्य यह निर्ममत्वता ! यह कोई मनोहर पुराण पुरुष है ऐसा और नाहीं। जूड़े प्रमाण धरती देखता, जीवदया पालता, शान्ति-दृष्टि, समाधानचित्त जैनका यति चाल्या आवै है। ऐसा कौनका भाग्य जाके घर यह पुण्याधिकारी आहारकरि कौनकूं पवित्र करै ? ताके बड़े भाग्य जाके घर यह आहार लेय। यह इन्द्र समान रघुकुल का तिलक, अक्षोभ पराक्रमी, शील का पहाड़ रामचन्द्र पुरुषोत्तम है। याके दर्शनकरि नेत्र सफल होय मन निर्मल होय, जन्म सफल होय, देही पाये का यह फल जो चारित्र पालिए। या भांति नगर के लोक राम के दर्शनकरि आश्चर्यकूं प्राप्त भए, नगर में रमणीक ध्वनि भई। श्रीराम नगरविषै पैठे, अर समस्त गली अर मार्ग स्त्री पुरुषनिके समूहकरि भरि गया। नरनारी नानाप्रकारके भोजन हैं घरविषै जिनके, प्रासुक जलकी झारी भरे द्वारे पेखन करै हैं, निर्मल जल दिखावते पवित्र धोवती पहिरे नमस्कार करै हैं। हे स्वामी ! अत्र तिष्ठो, अन्न जल शुद्ध है या भांतिके शब्द करै हैं। नाहीं समावै हैं हृदयविषै हर्ष जिनके हे मुनीन्द्र ! जयवंत होवो, हे पुण्यके पहाड़ ! नादो विरदो। इन वचनोंकरि दशोंदिशा पूरित भईं, घर घरविषै लोग परस्पर बात करै हैं। स्वर्णके भाजनमें दुग्ध दधि घृत ईखरस दाल भात क्षीर शीघ्र ही तैयार करि राखो, मिश्री मोदक कपूरकरि युक्त शीतल जल। सुन्दर पूरी शिखरणी भलीभांति विधि से राखो। या भांति नर नारिनिके वचनालाप तिनकरि समस्त नगर शब्दरूप होय गया। महासंभ्रमके भरे जन अपने बालकोंको न विलोकते भए। मार्गमें लोक दौड़े सो काहूके धक्केसूं कोई गिर पड़े। या भांति लोकनिके कोलाहल करि हाथी खूंटा उपाड़ते भए, अर ग्रामविषै दौड़ते भए, तिनके कपोलोंसूं मद झरिबेकरि मार्गविषै जलका प्रवाह होय गया। हाथिनिके भयसूं घोड़े घास तजि तजि बन्धन तुड़ाय तुड़ाय भाजे, अर हींसते भए, सो हाथी घोडनिकी घमसाणकरि लोक व्याकुल भए। तब दान-विषै तत्पर राजा कोलाहल शब्द सुनि मंदिरके ऊपर आय खड्या रह्या। दूरसूं मुनिका रूप देखि मोहित भया। राजाके मुनिसूं राग विशेष, परन्तु विवेक नाहीं। सो अनेक सामंत दौड़ाए अर आज्ञा

करी–स्वामी पधारे हैं,सो तुम जाय प्रणाम करि बहुत भक्ति विनती करि यहां आहारकूं ल्यावो। सो सामंत भी मूर्ख, जाय पायनपर पडि कहते भये–हे प्रभो! राजाके घर भोजन करहु। वहां महा पवित्र सुन्दर भोजन हैं। अर सामान्य लोकनिके घर आहार विरस आपके लेयवे योग्य नाहीं। अर लोकोंकूं मने किए कि तुम कहा दे जानो हो? यह वचन सुनकरि महामुनि आपकूं अन्तराय जानि नगरसूं पीछे चाल्ये। तब सब लोग व्याकुल भए। वे महापुरुष जिन आज्ञाके प्रतिपालक, आचारांग सूत्रप्रमाण है आचरण जिनका, आहारके निमित्त नगरविषै विहारकरि अन्तराय जानि नगरसूं पीछे वनविषै गए। चिद्रूपध्यानविषै मग्न कायोत्सर्ग धरि तिष्ठे। वे अद्‌भुत अद्वितीय सूर्य, मन अर नेत्रकूं प्यारा लागे रूप जिनका, नगरसूं विना आहार गए,तब सब ही खेदखिन्न भए।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महा पद्मपुराण संस्कृत ग्रन्थ, ताकी भाषा वचनिकाविषै राम मुनि का आहार के अर्थि नगर में आगमन बहुरि लोकनिके कोलाहलतैं अन्तराय,पाछा वनमें आना वर्णन करने वाला एकसौ बीसवां पर्व पूर्ण भया॥ १२०॥

अथानन्तर राम मुनियों में श्रेष्ठ, बहुरि पंचोपवासका प्रत्याख्यान करि यह अवग्रह धारते भये कि वनविषै कोई श्रावक शुद्ध आहार देय तो लेना, नगर में न जाना। या भांति कांतारचर्या की प्रतिज्ञा करी। सो एक राजा प्रतिनन्द वाकूं दुष्ट तुरंग लेय भागा। सो लोकनिकी दृष्टिसूं दूर गया। तब राजाकी पटराणी प्रभवा अति चिंतातुर शीघ्रगामी तुरंग पर आरूढ़ राजा के पीछे ही सुभटनि के समूह करि चाली। अर राजाकूं तुरंग हर ले गया था सो वनके सरोवरनिविषै कीचमें फंस गया। उतने ही में पटराणी जाय पहुंची। राजा राणीपै आया। तब राणी राजासूं हास्य के वचन कहती भई-हे महाराज! जो यह अश्व आपकूं न हरता तो यह नन्दनवनसा वन अर मानसरोवरसा सर कैसे

देखते ! राजाने कही हे राणी ! वनयात्रा अब सुफल भई जो तिहारा दर्शन भया । या भांति दम्पति परस्पर प्रीतिकी बातकरि सखीजन सहित सरोवरके तीर बैठि नानाप्रकार जल क्रीडा करि दोनों भोजनके अर्थ उद्यमी भए । ता समय श्रीराम मुनि कांतारचर्याके करणहारे या तरफ आहारकूं आए। यह साधु की क्रिया में प्रवीण, तिनकूं देखि राजा हर्षकरि रोमांच भया, राणी सहित सम्मुख जाय नमस्कारकरि ऐसे शब्द कहता भया—हे भगवान ! यहां तिष्ठो, अन्न जल पवित्र है । प्रासुक जलकरि राजाने मुनिके पग धोए। नवधा भक्ति करि सप्तगुण सहित मुनिकूं महापवित्र क्षीर आहार दिया। स्वर्णके पात्रमें लेयकरि महापात्र जे मुनि तिनके करपात्रमें पवित्र अन्न देता भया । निरंतराय आहार भया । तब देव हर्षित होय पंचाश्चर्य करते भए । अर आप अक्षीण महा ऋद्धिके धारक सो वा दिन रसोईका अन्न अटूट होय गया । पंचाश्चर्यके नाम—पंच वर्ण रत्नोंकी वर्षा, अर महा सुगन्ध कल्पवृक्षों के पुष्पकी वर्षा, शीतल मंद सुगंध पवन, दुंदुभी नाद, जय जय शब्द । धन्य यह दान, धन्य यह पात्र, धन्य यह विधि, धन्य यह दाता नीके करी नीके करी नादो विरधो फूलो । या भांति के शब्द आकाश में देव करते भए । अथवा नवधा भक्तिके नाम मुनिको पडगाहनो, ऊंचे स्थानक राखना, चरणारविंद धोवने, चरणोदक माथे चढ़ावना, पूजा करनी, मन शुद्ध, वचन शुद्ध, काय शुद्ध, आहार शुद्ध, यह नवधा भक्ति । अर श्रद्धा शक्ति, निर्लोभता, दया, क्षमा, अदेयसापणी नहीं, हर्ष संयुक्त यह दाताके सात गुण । वह राजा प्रतिनन्दी मुनिदानसूं देवोंकरि पूज्य भया, अर श्रावक के व्रत धारे । निर्मल है सम्यक्त जाके, पृथ्वी में प्रसिद्ध होता भया । बहुत महिमा पाई । अर पंचाश्चर्यमें नानाप्रकारके रत्न स्वर्ण की वर्षा भई, सो दशों दिशा में उद्योत भया अर पृथ्वी का दरिद्र गया । राजा राणी सहित महाविनयवान भक्तिकरि नम्रीभूत महामुनिकूं विधिपूर्वक निरन्तराय आहार देय प्रबोधकूं प्राप्त भया, अपना मनुष्य जन्म सफल जानता भया । अर राम महामुनि तप के अर्थ एकान्त रहें । बारह प्रकार तप के करणहारे, तप ऋद्धिकरि अद्वितीय, पृथ्वी में अद्वितीय सूर्य विहार करते भए ।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रन्थ, ताकी भाषावचनिकाविषै राम मुनिकूं निरन्तराय आहार वर्णन करने वाला एकसो इक्कीसवां पर्व पूर्ण भया ।। १२१ ।।

अथानन्तर गौतमस्वामी राजा श्रेणिकसूं कहै हैं–हे श्रेणिक ! वह आत्माराम महामुनि बलदेव स्वामी–शान्त किए हैं राग-द्वेष जानै, जो और मनुष्योंसूं न बन आवे ऐसा तप करते भए। महा वन-विषै विहार करते पंचमहाव्रत, पंच समिति, तीन गुप्ति पालते शास्त्रके वेत्ता, जितेन्द्री, जिनधर्म में है अनुराग जिनका, स्वाध्याय ध्यान में सावधान, अनेक ऋद्धि उपजी, परन्तु ऋद्धिनि की खबर नाहीं। महाविरक्त,निर्विकार,बाईस परीषह के जीतनहारे,तिनके तप के प्रभाव तैं वन के सिंह व्याघ्र मृगादिक के समूह निकट आय बैठे जीवों का जाति विरोध मिट गया। राम का शान्त रूप निरखि शांतरूप भए। श्रीराम महाव्रती, चिदानन्दविषै है चित्त जिनका, परवस्तु की बांछारहित, विरक्त, कर्मकलंक हरिवेकूं है यत्न जिनका, निर्मल शिला पर तिष्ठते, पद्मासन धरे आत्मध्यानविषै प्रवेश करते भए। जैसे रवि मेघमालाविषै प्रवेश करै। वे प्रभु सुमेरु सारिखे, अचल है चित्त जिनका, पवित्र स्थानविषै कायोत्सर्ग धरे निज स्वरूप का ध्यान करते भए। कबहुंक विहार करैं सो ईर्यासमिति पालते जूड़ा प्रमाण पृथ्वी निरखते, महा शांत जीवदया प्रतिपालक देव देवांगनादिक करि पूजित भए। वे आत्म-ज्ञानी जिन आज्ञा के पालक जैन के योगी ऐसा तप करते भए जो पंचम कालविषैं काहू के चितवन विषै न आवै। एक दिन विहार करते कोटिशिला आए जो लक्ष्मण ने नमोकार मंत्र जप कर उठाई हुती। सो आप कोटि शिला पर ध्यान धरि तिष्ठे। कर्मों के खिपायवेविषै उद्यमी क्षपकश्रेणि चढ़िवे का है मन जिनका।

अथानन्तर अच्युत स्वर्ग का प्रतीन्द्र सीता का जीव स्वयंप्रभ नामा, अवधिकरि विचारता भया–

राम का अर आपका परम स्नेह, अपने अनेक भव, अर जिन शासन का माहात्म्य, अर राम का मुनि होना अर कोटिशिला पर ध्यान धरि तिष्ठना । बहुरि मन विषैं बिचारी वे मनुष्यनि के इन्द्र, पृथ्वी के आभूषण मनुष्यलोकविषैं पति हुते, मैं उनकी स्त्री सीता हुती । देखो कर्म की विचित्रता, मैं तो व्रत के प्रभावतैं स्वर्गलोक पाया, अर लक्ष्मण राम का भाई प्राणहूतैं प्रिय सो परलोक गया, राम अकेले रह गये । जगत के आश्चर्य के करणहारे दोनों भाई बलभद्र नारायण कर्म के उदयतैं बिछुरे । श्रीराम कमल सारिखे नेत्र जिनके, शोभायमान हल मूसल के धारक बलदेव, महाबली सो वासुदेव के वियोगकरि जिनदेव की दीक्षा अंगीकार करते भए । राज अवस्था विषैं तो शस्त्रोंकरि सर्व शत्रु जीते, बहुरि मुनि होय मन इन्द्रिय जीते । अब शुक्लध्यान धार करि कर्म शत्रुकूं जीत्या चाहैं हैं । ऐसा होय जो मेरी देव मायाकरि कछुइक इनका मन मोहमें आवै । वह शुद्धोपयोगसूं च्युत होय शुभोपयोगविषैं आय यहां अच्युत स्वर्गविषैं आवैं । मेरे इनके महाप्रीति है । मैं अर वे मेरु नन्दीश्वरादिक की यात्रा करें, अर बाईस सागर पर्यन्त भेले रहैं । मित्रता बढावें अर दोनों मिल लक्ष्मणकूं देखें । यह विचारकरि सीता का जीव प्रतीन्द्र जहां राम ध्यानारूढ़ थे तहां आया । इनको ध्यानसूं च्युत करवे अर्थ देवमाया रची । वसन्त ऋतु वनविषैं प्रकट करी । नाना प्रकारके फूल फूले । अर सुगन्ध वायु बाजनें लगी, पक्षी मनोहर शब्द करने लगे, अर भ्रमर गुंजार करैं हैं, कोयल बोले हैं, मैना, सुवा नाना प्रकार की ध्वनि कर रहे हैं, आम्र मौर आये, भ्रमरोंकरि मण्डित सोहैं हैं । काम के बाण जे पुष्प तिनकी सुगन्धता फैल रही है । अर कर्णकार जाति के वृक्ष फूले हैं तिनकरि वन पीत हो रहा है, सो मानों वसन्तरूप राजा पीताम्बरकरि क्रीडा कर रहा है । अर मौलश्री की वर्षा होय रही है । ऐसी वसन्त की लीलाकरि आप वह प्रतीन्द्र जानकी का रूप धरि राम के समीप आया । वह मनोहर वन जहां अर कोई जन नाहीं, अर नाना प्रकार के वृक्ष, सब ऋतु के फूल रहे हैं । ता समय राम के समीप सीता सुन्दरी कहती भई—हे नाथ ! पृथ्वीविषैं भ्रमण करते कोई पुण्य के योगतैं

तुमकूं देखे। वियोगरूप लहर का भरया जो स्नेह रूप समुद्र ताविषैं मैं डूबूं हूं। सो मोहि थांभो। अनेक प्रकार राग के वचन कहे, परन्तु मुनि अकम्प। सो वह सीता का जीव मोह के उदयकरि कभी दाहिने कभी बांये भ्रमै, कामरूप ज्वर के योगकरि कम्पित है शरीर, अर महा सुन्दर अरुण हैं अधर जाके, या भांति कहती भई–हे देव! मैं बिना बिचारे तिहारी आज्ञा बिना दीक्षा लीनी। मोहि विद्याधरनि ने बहकाया। अब मेरा मन तुमविषैं है। या दीक्षाकरि पूर्णता होवै। यह दीक्षा अत्यन्त वृद्धनिकूं योग्य है। कहां यह यौवन अवस्था अर कहां यह दुर्द्धर व्रत? महा कोमल फूल दावानल की ज्वाला कैसे सहार सकै? अर हजारां विद्याधरनि की कन्या और हू तुमकूं वरया चाहैं हैं मोहि आगे धार ल्याई हैं कहै हैं—तिहारे आश्रय हम बलदेवकूं वरें। यह कहै हैं। अर हजारां दिव्य कन्या नाना प्रकार के आभूषण पहरे राजहंसनी समान है चाल जिनकी, सो प्रतीन्द्र की विक्रियाकरि मुनीन्द्र के समीप आई। कोयलतैं हूं अधिक मधुर बोलैं-ऐसी सोहैं मानों साक्षात् लक्ष्मी ही है, मन कूं आह्लाद उपजावे, कानोंकूं अमृत समान ऐसा दिव्य गीत गावती भईं। अर बीण, बांसुरी, मृदंग बजावती भईं। भ्रमर सारिखे श्याम केश बिजुरी समान चमत्कार, महासुकुमार पातरी कटि, कठोर अति उन्नत हैं कुच जिनके, सुन्दर शृंगार करे, नाना वर्ण के वस्त्र पहिरे, हाव भाव विलास विभ्रम कूं धरती मुलकती अपनी कांति करि व्याप्त किया है आकाश जिन्होंने, मुनि के चोगिर्द बैठी प्रार्थना करती भईं–हे देव! हमारी रक्षा करो। अर कोई एक पूछती भई–हे देव! यह कौन वनस्पति है? अर कोई एक माधवी लता के पुष्प के ग्रहण के मिस बाहु ऊंची करती अपना अंग दिखावती भई, अर कई एक भेली होयकरि ताली देती रासमण्डल रचती भईं। पल्लव समान हैं कर जिनके, अर कोई परस्पर जलकेलि करती भईं। या प्रकार नाना भांति की क्रीडा करि मुनिके मन डिगायवे का उद्यम करती भईं। सो हे श्रेणिक! जैसैं पवनकरि सुमेरु न डिगै तैसैं श्रीरामचन्द्र मुनि का मन न डिगै। आत्मस्वरूप के अनुभवी रामदेव, सरल है दृष्टि जिनकी, विशुद्ध है आत्मा जिनका, परीषहरूप

वज्रपातसूं न डिगै। क्षपकश्रेणी चढ़े शुक्लध्यान के प्रथम पाएविषें प्रवेश किया। रामचन्द्र का भाव आत्माविषै लगि अत्यन्त निर्मल भया। सो उनका जोर न पहुंच्या। मूढजन अनेक उपाय करें परन्तु ज्ञानी पुरुषनि का चित्त न चलें। वे आत्मस्वरूपविषै ऐसे दृढ़ भए जो काहू प्रकार न डिगे। प्रतीन्द्र देव ने मायाकरि राम का ध्यान डिगायवेकूं अनेक यत्न किए परन्तु कछु ही उपाय न चल्या। वे भगवान पुरुषोत्तम अनादि काल के कर्मों की वर्गणा के दग्ध करिवेकूं उद्यमी भए। पहिले पाए के प्रसादसूं मोह का नाशकरि बारहवें गुणस्थान चढ़े। तहां शुक्लध्यान के दूजे पाए के प्रसाद तैं ज्ञानावरण दर्शनावरण अन्तराय का अन्त किया। माघ शुक्लद्वादशी की पिछली रात्रि केवलज्ञानकूं प्राप्त भए। केवलज्ञान विषै सर्व द्रव्य समस्त पर्याय प्रतिभासूं ज्ञानरूप दर्पण में लोकालोक सब भासे। तब इन्द्रादिक देवनिके आसन कम्पायमान भए। अवधिज्ञानकरि भगवान रामकूं केवल उपज्या जानकरि केवलकल्याणक की पूजाकूं आए। महा विभूति संयुक्त देवनि के समूह सहित बड़े श्रद्धावान सब ही इन्द्र आए। घातिया कर्म के नाशक अरहन्त परमेष्ठी तिनकूं चारणमुनि अर चतुरनिकाय के देव सब ही प्रणाम करते भए। वे भगवान छत्र चमर सिंहासन आदिकर शोभित त्रैलोक्यकरि वन्दिवे योग्य सयोगकेवली, तिनकी गंधकुटी देव रचते भए दिव्यध्वनि खिरती भई। सब ही श्रवण करते भए। अर बारम्बार स्तुति करते भए। सीता का जीव स्वयंप्रभ नामा प्रतीन्द्र केवली की पूजा करि तीन प्रदक्षिणा देय बारम्बार क्षमा करावता भया। हे भगवन् ! मैं दुर्बुद्धि ने जो दोष किए सो क्षमा करहु। गौतम स्वामी कहे हैं–हे श्रेणिक ! वे भगवान् बलदेव अनन्त लक्ष्मी कांतिकरि संयुक्त आनन्द मूर्ति, केवली तिनकी इन्द्रादिक देव महा हर्ष के भरे अनादि रीति प्रमाण पूजा स्तुति कर विनती करते भए। केवली विहार किया तब देवहू विहार करते भए।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रन्थ, ताकी भाषावचनिकाविषै रामकूं केवलज्ञान की उत्पत्ति वर्णन करने वाला एकसौ बाईसवां पर्व पूर्ण भया ॥ १२२ ॥

अथानन्तर सीता का जीव प्रतीन्द्र लक्ष्मण के गुण चितारि लक्ष्मण का जीव जहां हुता, अर खरदूषणका पुत्र शम्बूक असुरकुमार जातिका देव हुता तहां जायकरि ताकूं सम्यग्ज्ञान का ग्रहणकराया। सो तीजे नरक नारकिनकूं बाधा करावैं। हिंसानन्द रौद्रध्यानविषै तत्पर, पापी नारकीनिकूं परस्पर लड़ावैं। पाप के उदयकरि जीव अधोगति जाय। सो तीजे तक तो असुर कुमारहू लडावैं आगे असुर कुमार न जाय। नारकी ही परस्पर लड़ैं। जहां कईएकनि कूं अग्निकुण्डविषै डारैं हैं सो पुकारैं हैं। कई एकनिकूं कांटनिकर युक्त शाल्मली वृक्ष तिन पर चढाय घसीटे हैं। कई एकनिकूं लोहमई मुद्गरनि करि कूटे हैं। अर जे मांस आहारी पापी तिनकूं उनही का मांस काटि खवावे हैं। अर प्रज्ज्वलित लोहके गोला तिनकूं मुखमें मारि २ दहैं। अर कइएक मार के मारे भूमिविषै लोटैं हैं अर मायामयी श्वान, मार्जार, सिंह, व्याघ्र दुष्ट पक्षी भखैं हैं। तहां तिर्यंच नाहीं नर्क की विक्रिया है। कई एकनिकूं सूली चढावैं है अर वज्र के मुद्गरनितैं मारैं हैं। कई एकनिकूं ताता ताम्बा गालि २ प्यावे हैं अर कहैं हैं ये मदिरापान के फल हैं। कई एकों को काठ में बांधकरि करोंतासूं चीरैं हैं। अर कई एकों को कुठारनिसूं काटैं हैं। कई एकों को घानी में पेले हैं। कईयों की आंख काढ़े हैं। कईयों की जीभ काढ़े हैं। वह क्रूर कई एकोंके दांत तोड़े हैं। इत्यादि नारकीनिकूं अनेक दुख हैं सो अवधि ज्ञानकरि प्रतीन्द्र नारकीनिकी पीड़ा देखि शम्बूक के समझायबेकूं तीजी भूमि गया। सो असुरकुमार जाति के देव क्रीडा करते हुते वे तो इनके तेजसूं डर गए। अर शम्बूककूं प्रतीन्द्र कहते भए—अरे पापी निर्दई तैंने यह क्या आरम्भा जो जीवोंकूं दुख देवै है। हे नीच देव! क्रूर कर्म तजि क्षमा पकड़। यह अनर्थ के कारण कर्म तिनकरि कहा? अर यह नरक के दुःख सुनकरि भय उपजै है। तू प्रत्यक्ष नारकीनिकूं पीडा करै हैं, करावै है सो तुझे त्रास नाहीं। यह वचन प्रतीन्द्र के सुन शंबूक प्रशांत भया। दूसरे नारकी तेज न सह सके, रोवते भए, अर भागते भए। तब प्रतीन्द्र ने कही हो नारकी हो। मुझसूं मत डरहु, जिन पापनिकरि नरक में आए हो तिनसूं डरो। जब या भांति प्रतीन्द्र ने कही तब उनमें

कईएक मनमें विचारते भए जो हम हिंसा, मृषावाद, परधन हरण, परनारि रमण, बहु आरंभ, बहु परिग्रह में प्रवर्ते, रौद्र ध्यानी भए, उसका यह फल है। भोगनिविषै आसक्त भए, क्रोधादिककी तीव्रता भई, खोटे कर्म कीए, उससूं दुख पाया। देखहु यह स्वर्गलोकके देव पुण्य के उदयसूं नानाप्रकार के विलास करै हैं, रमणीक विमान चढ़े जहां इच्छा होय वहां ही जांय। या भांति नारकी विचारते भए। अर शंबूकका जीव जो असुरकुमार उसकूं ज्ञानउपज्या। फिर रावणके जीवने प्रतींद्रकूं पूछा—तुम कौन हो ? तब वाने सकल वृत्तांत कहा। मैं सीता का जीव तप के प्रभावकरि सोलहवें स्वर्ग में प्रतींद्र भया। अर श्रीरामचन्द्र महा मुनीन्द्र होय ज्ञानावरण दर्शनावरण मोहनीय अन्तरायन का नाशकरि केवली भए। सो धर्मोपदेश देते जगतकूं तारते भरतक्षेत्रविषै तिष्ठै हैं। नाम गोत्र वेदनी आयु का अन्तकरि परमधाम पधारेंगे। अर तू विषयवासना करि विषम भूमिविषै पड्या। अब भी चेत ज्यूं कृतार्थ होय। तब रावण का जीव प्रतिबोधकूं प्राप्त भया। अपने स्वरूप का ज्ञान उपज्या, अशुभ कर्म बुरे जाने। मन में विचारता भया मैं मनुष्य भव पाय अणुव्रत महाव्रत न आराधे तातैं इस अवस्थाकूं प्राप्त भया। हाय हाय! मैं कहा किया जो आपकूं दुख समुद्र में डारया। यह मोह का माहात्म्य है जो जीव आत्महित न कर सके। रावण प्रतीन्द्रकूं कहै है—हे देव तुम धन्य हो! विषय की वासना तजो, जिनवचन रूप अमृतकूं पीकर देवों के नाथ भए। तब प्रतीन्द्र ने दयालु होयकर कही तुम भय मत करो, चलो हमारे स्थानकूं चलो। ऐसा कहि याके उठायवेकूं उद्यमी भया। तब रावण के जीव के शरीर की परमाणु बिखर गई। जैसैं अग्निकरि माखन पिघल जाय। काहू उपाय करि याहि लेजायवे समर्थ न भया। जैसे दर्पण में तिष्ठती छाया न ग्रही जाय। तब रावण का जीव कहता भया—हे प्रभो! तुम दयालु हो, सो तुमकूं दया उपजे ही, परन्तु इन जीवनिने पूर्वे जे कर्म उपार्जे हैं तिनका फल अवश्य भोगै है। विषयरूप मांस का लोभी दुर्गति की आयु बांधै है सो आयु पर्यन्त दुख भोगवे है। यह जीव कर्मो के आधीन, इसका देव क्या करें ? हमने अज्ञान के योगसूं अशुभ कर्म

९२१

उपार्जे हैं, इनका फल अवश्य भोगेंगे। आप छुडायबे समर्थ नाहीं। तिससूं कृपा करि वह उपदेश कहो जिसकरि फिर दुर्गति के दुख न पावैं। हे दयानिधे! तुम परम उपकारी हो। तब देव ने कही—परम कल्याण का मूल सम्यग्ज्ञान है, सो जिन शासन का रहस्य है, अविवेकियोंकूं अगम्य है, तीन लोक में प्रसिद्ध है, आत्मा अमूर्तिक सिद्ध समान उसे समस्त परद्रव्योंसूं जुदा जानें। जिनधर्म का निश्चयकरि यह सम्यग्दर्शन कर्मों का नाशक शुद्ध पवित्र परमार्थ का मूल जीवों ने न पाया। तातैं अनन्त भव ग्रहे। यह सम्यग्दर्शन अभव्योंकूं अप्राप्य है, अर कल्याण रूप है, जगत में दुर्लभ है, सकल में श्रेष्ठ है। सो जो तू आत्मकल्याण चाहै है तो उसे अंगीकार करहु, जिसकरि मोक्ष पावै। उससूं श्रेष्ठ और नाहीं, न हुआ, न होयगा। याहीकरि सिद्ध भए हैं, अर होयेंगे। जे अरहन्त भगवान ने जीवादिक नव पदार्थ भासे हैं तिनकी दृढ श्रद्धा करनी उसे सम्यग्दर्शन कहिए। इत्यादि वचनोंकरि रावण के जीव कूं सुरेन्द्र ने सम्यक्त्व ग्रहण कराया। अर याकी दशा देखि विचारता भया जो देखो रावण के भव में याकी कहा कांति थी, महासुन्दर लावण्यरूप शरीर था, सो अब ऐसा होय गया जैसा नवीन वन अग्निकरि दग्ध हो जाय। जिसे देखि सकल लोक आश्चर्यकूं प्राप्त होते सो ज्योति कहां गई? बहुरि ताहि कहता भया कर्मभूमि में तुम मनुष्य भए थे सो इन्द्रियोंके क्षुद्र सुख के कारण दुराचारकरि ऐसे दुःख रूप समुद्र में डूबे।

इत्यादि प्रतीन्द्र ने उपदेश के वचन कहे। तिनकूं सुनकरि उसके सम्यग्दर्शन दृढ़ भया। अर मन में विचारता भया कर्मों के उदयकरि दुर्गति के दुख प्राप्त भए, तिनकूं भोगि, यहां से छूट मनुष्यदेह पाय, जिनराज का शरण गहूंगा। प्रतीन्द्रसूं कही—अहो देव! तुम मेरा बड़ा हित किया जो सम्यग्दर्शन में मोहि लगाया। हे प्रतीन्द्र महाभाग्य! अब तुम जावो। वहां अच्युत स्वर्ग में धर्म के फलसूं सुख भोगि मनुष्य होय शिवपुरकूं प्राप्त होवो। जब ऐसा कह्या तब प्रतीन्द्र उसे समाधानरूपकरि कर्मों के उदय कूं सोचते संते सम्यग्दृष्टि वहांसूं ऊपर आया। संसार की मायासूं शंकित है आत्मा

जाका। अरहन्त सिद्ध साधु जिनधर्म के शरणविषै तत्पर है मन जाका, तीन बेर पंचमेरु की प्रदक्षिणाकरि चैत्यालयों का दर्शनकरि, नारकीनि के दुःखसूं कम्पायमान है चित्त जाका, स्वर्गलोक में हू भोगाभिलाषी न भया। मानों नारकीनिकी ध्वनि सुनैं है। सोलहवें स्वर्ग के देव कूं छठे नरक लग अवधिज्ञानकरि दीखै है। तीजे नरक के विषै रावण के जीवकूं अर शंबूक का जीव जो असुरकुमार देव था ताहि संबोधि सम्यक्त्व प्राप्त किया। हे श्रेणिक! उत्तम जीवोंसूं पर उपकार बनै। बहुरि स्वर्गलोकसूं भरतक्षेत्र में श्रीराम के दर्शन कूं आए। पवनसूं हू शीघ्रगामी जो विमान तामें आरूढ़, अनेक देवनिजूं संग लिए, नानाप्रकार के वस्त्र पहिरे, हार माला मुकुटादिककरि मंडित, शक्ति गदा खड्ग धनुष बरछी शतघ्नी इत्यादि अनेक आयुधोंकूं धरे, गज तुरंग सिंह इत्यादि अनेक वाहनोंपर चढ़े मृदंग, बांसुरी, बीण इत्यादि अनेक वादत्रनि के शब्द तिनकरि दशों दिशा पूर्ण करते, केवली के निकट आए। देवों के वाहन गज तुरंग सिंहादिक तिर्यंच नाहीं देवों की विक्रिया है। श्रीरामकूं हाथ जोडि सीस नवाय बारम्बार प्रणामकरि सीता का जीव प्रतीन्द्र स्तुति करता भया—हे संसारसागर के तारक! तुमने ध्यानरूप पवनकरि ज्ञान रूप अग्नि दीप्त करी, संसाररूप बन भस्म किया अर शुद्ध लेश्यारूप त्रिशूलकरि मोहरिपु हता, वैराग्य रूप वज्रकरि दृढ़ स्नेहरूप पिंजरा चूर्ण किया। हे नाथ! हे मुनीन्द्र! हे भवसूदन संसाररूप वनसूं जे डरै हैं तिनकूं तुम शरण हो। हे सर्वज्ञ कृतकृत्य! जगत गुरु! पाया है पाइवे योग्य पद जिन्होंने, हे प्रभो! मेरी रक्षा करो। संसारके भ्रमणसूं अति व्याकुल है मन मेरा, तुम अनादिनिधन जिन शासन का रहस्य जानि प्रबल तप करि संसारसागरसूं पार भए। देवाधिदेव! यह तुमकूं कहा युक्त—जो मुझे भववन में तजि आप अकेले विमल पद कूं पधारे। तब भगवान कहते भए—हे प्रतीन्द्र! तू राग तजि जे वैराग्य में तत्पर हैं तिनहीकूं मुक्ति है। रागी जीव संसार में डूबे हैं। जैसे कोई शिलाकूं कंठ में बांधि भुजावों करि नदीकूं नहीं तिर सकै तैसैं रागादिक के भारकरि चतुर्गतिरूप नदी न तिरी जाय। जे ज्ञान वैराग्य शील संतोष के धारक हैं तेई

संसारकूं तिरें हैं। जे श्रीगुरु के वचनकरि आत्मानुभव के लगे वेई भव भ्रमणसूं छूटें, और उपाय नाहीं। काहू का भी लें जाया लोकशिखर न जाय, एक वीतराग भावहीसूं जाय। इस भांति श्रीराम भगवान सीता के जीवकूं कहते भए। सो यह वार्ता गौतमस्वामी ने राजा श्रेणिकसूं कही। बहुरि कहते भए—हे नृप! सीता के जीव प्रतींद्र ने जो केवली सूं पूछी अर इनने कहा सो सुन। प्रतीन्द्र ने पूछी—हे नाथ! दशरथादिक कहां गए, अर लव अंकुश कहां जावेंगे? तब भगवान ने कही दशरथ कौशल्या सुमित्रा केकई सुप्रभा अर जनक अर जनक का भाई कनक यह सब तप के प्रभावकरि तेरहवें देवलोक गए हैं। यह सबही समान ऋद्धिके धारी देव हैं। अर लव अंकुश महा भाग्य कर्मरूप रजसूं रहित होय विमलपदकूं इसही जन्मसूं पावेंगे। इस भांति केवली की ध्वनि सुनि भामण्डलकी गति पूछी। हे प्रभो! भामंडल गहां गया? तब आप कहते भए—हे प्रतींद्र! तेरा भाई राणी सुन्दर मालिनी सहित मुनिदान के प्रभावकरि देवकुरु भोगभूमि में तीनपल्यकी आयुके भोक्ता भोगभूमिया भए। तिनके दानको वार्ता सुनि—अयोध्यामें एक बहुकोटि धनका धनी सेठ कुलपति, उसके मकरा-नामा स्त्री, जिसके पुत्र राजावोंके तुल्य पराक्रमी, सो कुलपतिने सुनी सीताकूं वनमें निकासी। तब उसने विचारी वह महागुणवती शीलवती सुकुमारअंग निर्जन वनमें कैसैं अकेली रहेगी। धिक्कार है संसारकी चेष्टाकूं। यह विचारि दयालुचित्त होय द्युति भट्टारकके समीप मुनि भया। अर उसके दोय पुत्र एक अशोक दूजा तिलक। यह दोनों मुनि भए। सो द्युति भट्टारक तो समाधिमरणकरि नवम-ग्रैवेयकमें अहमिंद्र भए अर यह पिता पुत्र तीनों मुनि ताम्रचूर्णनामा नगर वहां केवलीकी वंदनाकूं गए। ६२४
सो मार्गमें पचास योजनकी एक अटवी वहां चातुर्मासिक आय पड्या। तब एक वृक्षके तले तीनों साधु विराजे मानो साक्षात् रत्नत्रय ही हैं। वहां भामंडल आय निकस्या। अयोध्या आवै था सो विषमवन में मुनिनकूं देखि विचार किया,यह महापुरुष जिनसूत्रकी आज्ञा प्रमाण निर्जनवनमें विराजे, चौमासे मुनियोंका गमन नाहीं। अब यह आहार कैसैं करें? तब विद्याकी प्रबल शक्तिकरि निकट एक नगर

बसाया, जहां सब सामग्री पूर्ण, बाहिर नानाप्रकार के उपवन,सरोवर, अर धानके क्षेत्र, अर नगर के भीतर बड़ी बस्ती, महासम्पत्ति, चारमहीना आप भी परिवारसहित उस नगर में रह्या अर मुनियों के वैयावृत किये। वह वन ऐसा था जिसमें जल नाहीं,सो अद्भुत नगर बसाया,जहां अन्नजलकी बाहुल्यता। सो नगरमें मुनिश्रोंका आहार भया,अर और भी दुःखित भुखित जीवोंकू भांति भांति के दान दिए अर सुन्दरमालिनी राणीसहित आप मुनियोंकू अनेकबार निरंतराय आहार दीया। चतुर्मास पूर्ण भए मुनि विहार करते भए। अर भामण्डल अयोध्या आय फिर अपने स्थानक गया। एक दिन सुन्दर-मालिनी राणीसहित सुखसू शयन करे था सो महलपर बिजुरी पड़ी। राजा राणी दोनों मरकरि मुनिदानके प्रभावसू सुमेरुपर्वत की दाहिनी ओर देवकुरु भोगभूमि,वहां तीन पल्यके आयुके भोक्ता-युगल उपजे। सो दानके प्रभावसू सुख भोगवें है। सम्यक्तरहित हैं,अर दान करे हैं,सो सुपात्रदानके प्रभावसू उत्तमगति के सुख पावें हैं। सो यह पात्रदान महासुख का दाता है। यह बात सुनि फिर प्रतींद्र ने पूछी हे नाथ! रावण तीजी भूमिसू निकसि कहां उपजेगा, अर मैं स्वर्गसू चयकरि कहां उपजूंगा मेरे अर लक्ष्मण के अर रावण के केते भव बाकी हैं सो कहो।

तब सर्वज्ञदेव ने कही—हे प्रतींद्र सुन! वे दोनों विजयावती नगरी में सुनन्दनामा कुटुम्बी सम्यक्-दृष्टि उसके रोहिणीनामा भार्या, उसके गर्भविषै अरहदास ऋषिदास नामा पुत्र होवेंगे, महा गुणवान निर्मलचित्त दोनों भाई उत्तम क्रिया के पालक, श्रावक के व्रत आराधि समाधि मरणकरि जिनराज का ध्यान धरि स्वर्गविषै देव होवेंगे। तहां सागरांत पर्यंत सुख भोगि स्वर्गसू चयकरि बहुरि वाही नगरी विषै बड़े कुलविषै उपजेंगे। सो मुनिनिकू दान देकर हरिक्षेत्र जो मध्यम भोगभूमि वहां युगलिया होय, दोय पल्य की आयु भोगि, स्वर्ग जावेंगे। बहुरि उसही नगरीविषै राजा कुमारकीति, राणी लक्ष्मी, तिनके महा योद्धा जयकांत जयप्रभ नामा पुत्र होवेंगे। बहुरि तपकरि सातवें स्वर्ग उत्कृष्ट देव होवेंगे देवलोक के महासुख भोगेंगे। अर तू सोलहवां अच्युत स्वर्ग वहां सूं चयकरि या भरतक्षेत्रविषै रत्न-

स्थलपुरनामा नगर वहां चौदह रत्न का स्वामी षट्खण्ड पृथ्वी का धनी चक्रनामा चक्रवर्ती होयगा। तब वे सातवें स्वर्गसूं चयकरि तेरे पुत्र होवेंगे। रावण के जीव का नाम जो इन्द्ररथ, अर वसुदेव के जीव का नाम मेघरथ, दोनों महा धर्मात्मा होवेंगे। परस्पर उनमें अति स्नेह होयगा। अर तेरा उन सूं अति स्नेह होयगा। जिस रावण ने नीतिसूं तीन खण्ड पृथ्वी का अखण्ड राज्य कीया अर ये प्रतिज्ञा जन्म पर्यन्त निभाही जो पर स्त्री मोहि न इच्छे ताहि मैं न सेऊं, सो रावण का जीव इन्द्ररथ धर्मात्मा कई एक श्रेष्ठ भवधरि तीर्थंकर देव होयगा, तीन लोक उसकूं पूजेंगे। अर तू चक्रवर्ती राज्यपद तजि मुनिव्रत धारी होय, पंचोत्तरोंविषै वैजयंतनामा विमान, तहां तप के प्रभावसूं अहमिन्द्र होवेगा। तहाँ सूं चयकरि रावण का जीव तीर्थंकर, उसके प्रथम गणधर होय निर्वाण पद पावेगा। यह कथा श्री भगवान राम केवली तिनके मुख प्रतींद्र सुनकरि अति हर्षित भया! बहुरि सर्वज्ञ देव ने कही–हे प्रतींद्र! तेरा चक्रवर्ती पद का दूजा पुत्र मेघरथ सो कई एक महा उत्तम भवधरि धर्मात्मा पुष्कर द्वीप के महा विदेह क्षेत्र विषै शतपत्रनामा नगर तहां पंच कल्याणक का धारक तीर्थंकर देव चक्रवर्ती पद कूं धरे होयगा–संसार का त्यागकरि केवल उपाय अनेकों कूं तारेगा। अर आप परमधाम पधारेगा। ये वासुदेव के भव तोहि कहे। अर मैं अब सात वर्ष विषै आयु पूर्णकरि लोक शिखर जाऊंगा। जहासूं बहुरि आना नाहीं। अर जहां अनन्त तीर्थंकर गए अर जावेंगे, अनन्त केवली तहां पहुंचे, जहां ऋषभादि भरतादि विराजे हैं, अविनाशीपुर त्रैलोक्यके शिखर हैं। जहां अनन्तसिद्ध हैं,वहां मैं तिष्ठूंगा। वे वचन सुनि प्रतींद्र पद्मनाभ जे श्रीरामचन्द्र सर्वज्ञ वीतराग तिनकूं बार बार नमस्कार करता भया। अर मध्यलोकके सर्व तीर्थ वंदे, भगवानके कृत्रिम अकृत्रिम चैत्यालय अर निर्वाणक्षेत्र वहां सर्वत्र पूजाकरि अर नन्दीश्वरद्वीपविषै अंजनगिरि दधिमुख रतिकर तहां बड़े विधानसूं अष्टाह्निका की पूजा करी। देवाधिदेव जे अरहन्त सिद्ध तिनका ध्यान करता भया। अर केवली के वचन सुन ऐसा निश्चय भया जो मैं केवली होय चुका अल्प भव हैं, अर भाई के स्नेहसूं भोगभूमिविषै जहां भामण्डल का जीव है

तहां उसे देखा अर उसकूं कल्याणका उपदेश दीया अर बहुरि अपना स्थान सोलहवां स्वर्ग वहां गया,
जाके हजारों देवांगना तिनसहित मानसिक भोग भोगता भया। श्रीरामचन्द्र का सत्रह हजार वर्ष की
आयु, सोलह धनुष की ऊंची काया, कईएक जन्मके पापोंसे रहित होय सिद्ध भये। वे प्रभु भव्यजीवों
का कल्याण करो। जन्म जरा मरण महारिपु जीते। परमात्मा भये जिनशासनविषैं प्रकट है महिमा
जिनकी, जन्मजरा मरणका विच्छेदकरि अखण्ड अविनाशी परम अतीन्द्रिय सुख पाया। सुर असुर
मुनिवर तिनके जे अधिपति तिनकर सेयवे योग्य, नमस्कार करवे योग्य, दोषों के विनाशक, पच्चीस
वर्ष तपकरि मुनिव्रत पालि केवली भये। सो आयु पर्यंत केवलीदशाविषैं भव्योंकूं धर्मोपदेश देय तीन
भवन का शिखर जो सिद्धपद वहां सिधारे।

सिद्धपद सकल जीवोंका तिलक है। राम सिद्ध भए। तुम रामकूं सीस निवाय नमस्कार करो। राम
सुरनर मुनियोंकरि आराधिवे योग्य है। शुद्ध हैं भाव जिनके,संसारके कारण जे रागद्वेष मोहादिक तिनसूं
रहित हैं। परम समाधि के कारण हैं। अर महामनोहर हैं। प्रतापकरि जीत्या है तरुण सूर्य का तेज
जिनने,अर उन जैसी शरद की पूर्णमासी के चन्द्रमा में कांति नाहीं। सर्व उपमारहित अनुपम वस्तु
हैं। अर स्वरूप जो आत्मरूप उसमें आरूढ हैं, श्रेष्ठ है चरित्र जिनके, श्रीराम यतीश्वरों के ईश्वर
देवों के अधिपति,प्रतींद्र की मायासूं मोहित न भए। जीवोंके हितू परम ऋद्धिकरि युक्त अष्टम बलदेव
पवित्र शरीर शोभायमान अनन्त वीर्यके धारी, अतुल महिमाकरि मंडित, निर्विकार, अठारह दोषकरि
रहित, अष्टादशसहस्र शीलके भेद तिनकरि पूर्ण,अति उदार, अति गम्भीर ज्ञानके दीपक, तीनलोक
में प्रकट है प्रकाश जिनका,अष्टकर्मके दग्ध करणहारे, गुणोंके सागर, क्षोभरहित सुमेरुसे अचल, धर्म के
मूल कषायरूप रिपुके नाशक,समस्त विकल्परहित महानिर्द्वन्द्व,जिनेन्द्रके शासन का रहस्य पाय अंतरात्मा-
सूं परमात्मा भए। उनने त्रैलोक्यपूज्य परमेश्वरपद पाया, तिनकूं तुम पूजो। धोय डारे हैं कर्मरूप
मल जिनने, केवल दर्शनमई। योगीश्वरोंके नाथ, सर्व दुःखके दूर करणहारे, मन्मथके मथनहारे तिनकूं

प्रणाम करो । यह श्रीबलदेवका चरित्र महामनोज्ञ जो भावधर निरन्तर बांचै, सुनै, पढ़ै, पढ़ावै, शंका रहित होय महाहर्षका भरा रामकी कथाका अभ्यास करै, तिसके पुण्यकी वृद्धि होय । अर बैरी खड्ग हाथमें लिए मारिवेकूं आया होय सो शांत होय जाय । या ग्रन्थके श्रवणसूं धर्म के अर्थी इष्टधर्मकूं लहै, यशका अर्थी यशकूं पावै, राज्यभ्रष्ट हुआ अर राज्य कामना होय तो राज्य पावै, यामें सन्देह नाहीं । इष्ट संयोगका अर्थी इष्टसंयोग लहै, धनका अर्थी धन पावै, जीतका अर्थी जीत पावै, स्त्री का अर्थी सुन्दर स्त्री पावै, लाभ का अर्थी लाभ पावै, सुख का अर्थी सुख पावै, अर काहूका कोई वल्लभ विदेश गया होय अर उसके आयवेकी आकुलता होय सो वह सुखसूं घर आवै, जो मनविषै अभिलाषा होय सो ही सिद्ध होय । सर्व व्याधि शांत होय,ग्रामके नगरके वनके देव जलके देव प्रसन्न होय । अर नवग्रहों की बाधा न होय, क्रूर ग्रह सौम्य होय जांय, अर जे पाप चिंतवनमें न आवें वे विलाय जांय, अर सकल अकल्याण राम कथाकरि क्षय होय जांय अर जितने मनोरथ हैं वे सब रामकथाके प्रसादतैं पावैं, अर वीतराग भाव दृढ़ होय उसकरि हजाराभवके उपार्जे पापोंकूं प्राणी दूर करै । कष्टरूप समुद्र कूं तिर सिद्धपद शीघ्रही पावै । यह ग्रन्थ महापवित्र है, जीवको समाधि उपजावनेका कारण है । नाना जन्ममें जीवने पाप उपार्जे, महाक्लेशके कारण तिनका नाशक है अर नाना प्रकार के व्याख्यान तिन-करि संयुक्त है । जिसमें बड़े बड़े पुरुषोंकी कथा भव्यजीवरूप कमलोंको प्रफुल्लित करणहारी है । सकल लोककरि नमस्कार करिवे योग्य श्रीवर्धमान भगवान उनने गौतमसूं कहा अर गौतमने श्रेणिकसूं कहा । ९२८
याही भांति केवली श्रुतकेवली कहते भए । रामचन्द्रका चरित्र साधुओंकी समाधिकी वृद्धि का कारण, सर्वोत्तम महामंगलरूप सो मुनिनिकी परिपाटीकरि प्रकट होता भया । सुन्दर है वचन जिसमें, समी-चीन अर्थकूं धरै, अति अद्भुत इन्द्रगुरुनामा मुनि तिनके शिष्य दिवाकरसेन,तिनके शिष्य लक्ष्मणसेन, तिनके शिष्य रविषेण, तिन जिन आज्ञा अनुसार कहा । यह रामका पुराण सम्यग्दर्शन की सिद्धिका कारण, महाकल्याणका कर्ता, निर्मल ज्ञानका दायक, विचक्षण जीवोंके निरंतर सुनिवे योग्य है, अतुल

पराक्रमी, अद्भुत आचरण के धारक, महासुकृती जे दशरथके नन्दन तिनकी महिमा कहां लग कहूं। इस ग्रन्थमें बलभद्र, नारायण, प्रतिनारायण, तिनका विस्ताररूप चरित्र है। जो यामें बुद्धि लगावे तो अकल्याणरूप पापोंकूं तजकरि शिव कहिये मुक्ति उसे अपनी करै। जीव विषय की वांछाकरि अकल्याणको प्राप्त होय हैं। विषयाभिलाष कदाचित् शांतिके अर्थ नाहीं। देखो विद्याधरनिका अधिपति रावण परस्त्रीकी अभिलाषाकरि कष्टकूं प्राप्त भया, कामके रोगकरि हृता गया। ऐसे पुरुषों की यह दशा है तो और प्राणी विषय वासनाकरि कैसे सुख पावैं? रावण हजारां स्त्रियोंकरि मण्डित निरन्तर सुख सेवै था, तृप्त न भया, परदाराकी कामनाकर विनाशकूं प्राप्त भया। इन व्यसनोंकरि जीव कैसे सुखी होय। जो पापी परदाराका सेवन करै सो कष्टके सागरमें पड़े। अर श्रीरामचन्द्र महा शीलवान, परदारा पराङ्मुख, जिनशासनके भक्त, धर्मानुरागी वे बहुतकाल राज्य भोग संसारकूं असार जानि वीतरागके मार्गमें प्रवर्त परमपदकूं प्राप्त भए। और भी जे वीतरागके मार्गमें प्रवर्तेंगे वे शिवपुर पहुंचेंगे। इसलिए जे भव्य जीव हैं वे जिनमार्गकी दृढ़प्रीति कर अपनी शक्ति प्रमाण व्रतका आचरण करो जो पूर्णशक्ति होय तो मुनि होवो अर न्यून शक्ति होय तो अणुव्रतके धारक श्रावक होवो। यह प्राणी धर्मके फलकरि स्वर्ग मोक्षके सुख पावैं हैं, अर पापके फलसूं नरक निगोदके फल पावैं हैं। यह निसंदेह जानो। अनादिकालकी यही रीति है धर्म सुखदाई। पाप किसे कहिये अर पुण्य किसे कहिए सो उरविषै धारो। जेते धर्मके भेद हैं तिनविषै सम्यक्त्व मुख्य है। अर जितने पापके भेद हैं तिनमें मिथ्यात्व मुख्य है। सो मिथ्यात्व कहा? अतत्त्वकी श्रद्धा, अर कुगुरु कुदेव कुधर्मका आराधन, परजीवकूं पीड़ा उपजावना, अर क्रोध मान माया लोभकी तीव्रता, अर पांच इन्द्रियोंके विषय सप्तव्यसनका सेवन, अर मित्रद्रोह, कृतघ्न, विश्वासघात, अभक्ष्य का भक्षण, अगम्यविषै गमन, मर्मका छेदक वचन, दुर्जनता इत्यादि पापके अनेक भेद हैं वे सब तजने। अर दया पालनी, सत्य बोलना, चोरी न करनी, शीलपालना, तृष्णा तजनी, कामलोभ तजने, शास्त्र पढ़ना, काहूकूं कुवचन न कहना, गर्व न करना,

प्रपंच न करना, अदेखसका न होना, शांतभाव धरना, परउपकार करना, परदारा–परधन परद्रोह तजना, परपीड़ाका वचन न कहना, बहु आरंभ बहु परिग्रहका त्याग करना, दान देना, तप करना, परदुःखहरन इत्यादि जो अनेक भेद पुण्यके हैं वे अंगीकार करने। अहो प्राणी हो! सुखदाता शुभ है अर दुखदाता अशुभ है। दारिद्र दुःख रोग पीड़ा अपमान दुर्गति यह सब अशुभके उदयसूं होय हैं। अर सुख सम्पत्ति सुगति यह सब शुभके उदयसूं होय हैं। शुभ अशुभ ही सुख दुःखके कारण हैं। अर कोई देव दानव मानव सुख दुखका दाता नाहीं। अपने अपने उपजे कर्मका फल सब भोगवे हैं। सब जीवोंसूं मित्रता करना, किसी से वैर न करना, किसीको दुख न देना, सब ही सुखी हो, यह भावना मनमें धरनी, प्रथम अशुभको तज शुभमें आवना, बहुरि शुभाशुभतें रहित होय शुद्ध पदकूं प्राप्त होना। बहुत कहिवे कर क्या? इस पुराणके श्रवणकर एक शुद्ध सिद्धपद में आरूढ़ होना, उनके भेद कर्मनिका विलयकरि आनन्दरूप रहना। हो पंडित हो! परम पदके उपाय निश्चय थकी जिनशासनमें कहे हैं वे अपनी शक्ति प्रमाण धारण करो, जिसकरि भवसागरसे पार होवो। यह शास्त्र अति मनोहर, जीवोंको शुद्धताका देनहारा, रविसमान सकल वस्तुका प्रकाशक है सो सुनकर परमानन्द स्वरूप मग्न होवो। संसार असार है, जिन धर्म सार है, जाकरि सिद्धपदको पाइये है। सिद्धपद समान और पदार्थ नाहीं। जब श्रीभगवान त्रैलोक्यके सूर्य वर्द्धमान देवाधिदेव सिद्धलोक को सिधारे तब चतुर्थ काल के तीन वर्ष साढ़े आठ महीना शेष थे। सो भगवान को मुक्त भए पीछे पंचमकालमें तीन केवली, अर पांच श्रुतकेवली भए। सो वहां लग तो पुराण पूर्ण रह्या। जैसे भगवान ने गौतम गणधरसूं कहा अर गौतमने श्रेणिकसूं कहा वैसा श्रुतकेवलीनिने कहा। श्रीमहावीर पीछे बासठवर्ष लग केवलज्ञान रहा। अर केवली पीछे सौ वर्ष तक श्रुतकेवली रहे। पंचम श्रुतकेवली श्रीभद्रबाहुस्वामी, तिनके पीछे काल के दोषसूं ज्ञान घटता गया। तब पुराणका विस्तारका न्यून होता भया। श्री भगवान महावीरकूं मुक्ति पधारें बारह सौ साढ़े तीन वर्ष भये तब रविषेणाचार्यने अठारह हजार अनुष्टुप श्लोकों में

९३०

व्याख्यान किया। यह राम का चरित्र सम्यक्त्वचारित्र का कारण केवली, श्रुतकेवली प्रणीत सदा पृथ्वी में प्रकाश करो। जिनशासन के सेवक देव, जिनभक्तिविषै परायण, जिनधर्मी जीवों की सेवा करें हैं। जे जिन मार्ग के भक्त हैं उनके सभी सम्यक्दृष्टि देव श्रावैं हैं, नानाविधि सेवा करे हैं, महा आदर संयुक्त सर्व उपाय कर आपदा में सहाय करैं हैं। अनादिकालसूं सम्यक्दृष्टि देवों की ऐसी रीति है। जैनशास्त्र अनादि हैं, काहूका किया नाहीं, व्यंजन स्वर यह सब अनादि सिद्ध रविषेणाचार्य कहे हैं। मैं कुछ नाहीं किया, शब्द अर्थ अकृत्रिम हैं। अलंकार छन्द आगम निर्मलचित्त होय नीके जानने। या ग्रन्थविषै धर्म अर्थ काम मोक्ष सर्व हैं। अठारह हजार तेईस श्लोक का प्रमाण पद्मपुराण संस्कृत ग्रन्थ है। इस पर यह भाषा भई सो जयवंत होवै, जिनधर्म की वृद्धि होवै, राजा प्रजा सुखी होवें।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण संस्कृत ग्रन्थ ताकी भाषावचनिकाविषै मोक्षप्राप्तिका वर्णन करनेवाला एकसौतेईसवां पर्व पूर्ण भया ॥ १२३ ॥

———

भाषाकार का परिचय

चौपाई—जम्बूद्वीप सदा शुभथान। भरतक्षेत्र ता माहिं प्रमाण। उसमें आरजखण्ड पुनीत। बसैं ताहिमें लोक विनीत ॥१॥ तिनके मध्य ढुंढार जु देश। निवसैं जैनी लोक विशेष। नगर सवाई जयपुर महा। तासकी उपमा जाय न कहा ॥२॥ राज्य करै माधव नृप जहां। कामदार जैनी जन तहां। ठौर ठौर जिन मन्दिर बने। पूजैं तिनकूं भविजन घने ॥३॥ बसैं महाजन नाना जाति। सेवैं जिनमारग बहुन्याति ॥ रायमल्ल साधर्मी एक। जाके घटमें स्वपर विवेक ॥४॥ दयावंत गुणवंत सुजान। पर उपकारी परम निधान ॥ दौलतराम सु ताको मित्र। तासों भाष्यो वचन पवित्र ॥५॥ पद्मपुराण महाशुभ ग्रन्थ। तामें लोकशिखरको पन्थ। भाषारूप होय जो येह। बहुजन बांच करैं अति नेह ॥६॥ ताके वचन हियेमें धार। भाषा कीनी मति अनुसार॥ रविषेणाचारज कृतसार। जाहि पढ़े बुधजन गुणधार ॥ ७ ॥ जिनधर्मिनकी आज्ञा लेय। जिनशासनमाहीं चित्त देय ॥ आनन्दसुतने भाषा करी। नन्दो विरदो अति रस भरी ॥८॥ सुखी होहु राजा अर लोक। मिटो सबनिके दुख अरु शोक। वरतो सदा मंगलाचार। उतरो बहुजन भवजल पार ॥९॥ सम्वत अष्टादश शत जान। ता ऊपर तेईस बखान (१८२३)। शुक्लपक्ष नवमी शनिवार। माघमास रोहिणि ऋख सार ॥१०॥

दोहा—ता दिन सम्पूरण भयो, यहै ग्रन्थ सुखदाय। चतुरसंघ मंगल करो, बढ़ै धर्म जिनराय।
या श्रीरामपुराणके छन्द अनूपम जान। सहस बीस द्वय पांचसौ भाषा ग्रन्थ प्रमान ॥

इति श्रीपद्मपुराणजी भाषा समाप्त